Dr. D. N. Sharma
M. D., P.M.S. I,
Medical Superintendent
&
Additional Civil Surgeon.

SEAL

BALRAMPUR HOSPITAL
LUCKNOW

Dated : December 16, 1959.

I have gone through this book "Pashchatya Dravayagun Vigyan." Dr. Ram Sushil Singh Shastri has made a valuable contribution in bringing out this translations of modern materia medica in Hindi. It is a very good attempt and I am sure students of both modern medicine and Ayurveda will derive benefit out of this.

I congratulate the author.

Sd./ D. N. SHARMA
Deputy Director
Medical & Health Services (U.P.)
&
Principal cum. Superintendent
State Ayurvedic College and Hospital
LUCKNOW

लेखक की प्रस्तावना

यह ग्रन्थ मेरे लिखे पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान के पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध भाग १ का द्वितीय भाग है। इसके प्रथम भाग में नियमानुसार अपने परमादरणीय गुरुवर श्रीमान् डॉक्टर भास्कर गोविंद घाणेकर महोदय की प्रस्तावना के साथ लेखक की प्रस्तावना संक्षेप में दी गई है। अस्तु, उसी ग्रन्थ के इस दूसरे भाग के लिये भी प्रस्तावना लिखी जाय, यद्यपि इस बात की आवश्यकता नहीं थी, तथापि इस भागके प्रकाशन में आवश्यकता से इतना अधिक विलम्ब हो चुका है कि पाठकों को उसके कारण जानने की जिज्ञासा होनी स्वाभाविक है। इसी हेतु इस भाग के लिये अलग से प्रस्तावना स्वरूप दो शब्द लिखना पड़ा तथा श्रीमान् डॉ० डी० एन्० शर्मा एम्० डी० महोदय लिखित प्रस्तावना देनी पड़ी।

इस ग्रन्थ के प्रथम खंड के प्रकाशित एवं प्रसिद्ध होते ही तथा आयुर्वेद के पत्र-पत्रिकाओं में इसकी अनुकूल एवं प्रशंसनात्मक समालोचनाएँ निकलते ही देश के विद्वान् डॉक्टर, वैद्य-हकीम तथा चिकित्सानुरागी अन्य जनताजनार्दन एवं आयुर्वेदाध्ययन करनेवाले छात्रों ने जिस उत्साह एवं मुग्धहृदय से इसका स्वागत किया, उससे किस विद्वान् लेखक का हृदय प्रफुल्लित एवं आह्लादित न हो उठेगा। यह स्वागत था भी आशा के अनुरूप ही! उसी समय से भारत के कोने-कोने से इसके द्वितीय भाग की माँग के पत्र बराबर आते रहे हैं। एक आयुर्वेदविद्यालय के किसी छात्रने तो कई पत्र इस आशय का लिखकर उत्तर की याचना की थी कि यदि इसका द्वितीय भाग प्रकाशित हो तो हम अपने साथियों के लिये इसकी एक सौ प्रतियाँ एक साथ खरीदने को तैयार हैं। इस बात से यह ज्ञात होता है कि उनको एक ऐसे ग्रन्थकी कितनी आवश्यकता है और ऐसा कोई ग्रन्थ अभी तक विद्यमान नहीं है।

यह सब होते हुए, इच्छा रहने पर, कारणवश हजार प्रयत्न करने पर भी आज से पूर्व इस चिरप्रतीक्षित एवं परमोपयोगी, ग्रन्थके लेखन-प्रकाशन में मैं असमर्थ रहा, जिसका मुझे हार्दिक खेद है। परन्तु किया क्या जाय, इससे पूर्व ईश्वर को यह मंजूर न था कि मेरे द्वारा पाठकों की जिज्ञासा पूर्ण हो। ईश्वर की अनुकम्पा से अब वह समय आया है जब कि मैं अपनी इस तुच्छ कृति को अपने पाठकों के समक्ष रखने में समर्थ हुआ हूँ। इसके लिए जगन्नियता परमपिता परमेश्वर को कोटि-कोटि धन्यवाद है कि उसने मुझे वह शक्ति प्रदान की जिससे मैं अपने उक्त कार्य में समर्थ हुआ। यह प्रसन्नता का विषय है। आशा है पाठकगण भी इसके प्रकाशित एवं प्रसिद्ध होने का सुसमाचार पाकर प्रसन्न होंगे और इसे मँगाकर अपनी चिरप्रतीक्षित एवं मनचाही निधिको प्राप्त कर अपनी जिज्ञासा की पूर्ति करेंगे और लेखक को आशीर्वाद देंगे।

ग्रन्थके संबंध में मुझे कुछ अधिक लिखना नहीं है, क्योंकि जो कुछ लिखना था, वह इसके प्रथम खंडकी प्रस्तावना में लिखा जा चुका है। इस भाग के सम्बन्ध में इतना ही लिखना है कि इसके प्रथम भाग में तो केवल द्रव्यगुणके सिद्धांत और भैषज्यकल्पना आदि अर्थात् द्रव्य-गुणके आधारभूत विषयों का ही समावेश हो पाया है। द्रव्य-गुण-प्रयोग का जो थोड़ा-सा अंश (थोड़े द्रव्यों का वर्णन) उसमें समाविष्ट हो पाया है, वह तो नमूना के तौर पर ही हुआ है। उसके देखने से इस बात का अनुमान सहज में हो सकता है कि उक्त ग्रन्थ में द्रव्यवर्णन की शैली क्या है। इस विषय का मुख्य एवं विशेष भाग तो यह दूसरा खंड है जिसमें अधिक से अधिक द्रव्यों का विस्तृत, सचित्र, तुलनात्मक एवं सभी दृष्टि से, ऐसा सर्वाङ्गीण हृदयग्राही एवं उद्बोधक संपूर्ण विवरण किया गया है, जो अंगरेजी या किसी अन्य भाषा में अबतक के लिखे किसी एक ही मेटीरिया मेडिका (निघंटु) ग्रन्थ में उपलब्ध होना दुष्कर है।

केवल वैद्य-हकीम एवं अन्य चिकित्साप्रेमी जनता के लिये ही नहीं, अपितु अंगरेजी माध्यम से अध्ययन-अध्यापन करनेवाले मेडिकल कालेजों के छात्रों एवं शिक्षकों तथा चिकित्सा-व्यवसाय करनेवाले स्नातकों एवं डाक्टरों को भी यह समानरूप से उपयोगी सिद्ध हो सकता है। कारण इसमें द्रव्य-वर्णनप्रसंग में प्रत्येक द्रव्य के यथासंभव आयुर्वेद-यूनानी ग्रन्थों में प्रयुक्त द्रव्यनामों के साथ उक्त पद्धति के विद्वानों में प्रचलित एवं प्रसिद्ध संस्कृत-अरबी तथा हिन्दी-उर्दू एवं अन्य प्रान्तीय प्रसिद्ध सही नाम नागरी लिपि में दे दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त इसमें प्रत्येक द्रव्य का पूरा सचित्र वर्णन, शब्दों की व्युत्पत्ति, एवं अर्थ आयुर्वेद तथा यूनानी से तुलना, उसका रासायनिक संगठन, द्रव्य का इतिहास, उक्त द्रव्य घटित ऑफिशल-नॉट आफिशल योग, अन्य उपयोगी नुस्खे (योग) एवं व्यावसायिक योगों के साथ यथास्थान आयुर्वेद-यूनानी योग भी दिये गये हैं, जिससे यह डॉक्टरों के अतिरिक्त वैद्य-हकीमों तथा अन्य चिकित्साप्रेमी जनता के लिये भी उपयोगी हो गया है। ग्रंथ के प्रारम्भ में संक्षिप्त विषयानुक्रमणिका और अन्त में विषयों की विस्तृत हिन्दी वर्णानुक्रमणिका देने का अभिप्राय भी इसे सभी दृष्टियों से उपादेय बनाना ही है। सारांश कि इस ग्रन्थ को सभी दृष्टियों से उपादेय एवं सर्वाङ्गीण बनाने में कोई बात उठा नहीं रखी गई है। फिर भी इसकी उपादेयता एवं उपयोगिता तो तभी प्रमाणित हो सकेगी, जब यह सुहृदय पाठकों के करकमलों में पहुँचेगा और वे इसे पढ़कर अपनी जिज्ञासा की पूर्ति एवं चिकित्सा-व्यवसाय में सहायता का अनुभव करेंगे।

इतना लिखने के पश्चात् यहाँ पर मैं अपने पितृतुल्य वरिष्ठ भ्राता आदरणीय वैद्यराज हकीम दलजीतसिंह के प्रति कृतज्ञता प्रकाश करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ, जिनके द्वारा इसी ग्रंथ के लिए नहीं; अपितु अब तक के लिखे और आगे लिखे जानेवाले सभी ग्रंथों के लिखने की सतत् प्रेरणा एवं सभी संभव सहायता मिली है और मिलती रहती है। ये ग्रन्थ उन्हीं के मानसपटल पर अंकित विचारों के प्रतमूर्ति प्रतीक स्वरूप हैं अथवा मेरे द्वारा अपने अध्ययन एवं विवर्धित ज्ञान की सहायता के फलस्वरूप ग्रंथनिर्माणरूप में उनकी सफलमूर्ति हो रही है, यदि ऐसा कहें तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

अंत में मैं अपने आयुर्वेदिक स्टेट—कालेज लखनऊ के वर्तमान प्रिंसिपल श्रीमान् डाक्टर डी० एन्० शर्मा एम्० डी० महोदय को हृदय से धन्यवाद देता तथा उनका आभार मानता हूँ, जिन्होंने मेरी प्रार्थना पर आद्योपान्त ग्रंथावलोकनोपरान्त इस ग्रंथ के लिए प्रस्तावना लिखने की कृपा की एवं कष्ट सहन किया।

सर्वान्तमें मैं उन सभी विद्वानों एवं ग्रन्थ लेखकों का आभार मानता एवं कृतज्ञता प्रकाश करता हूँ, जिनसे या जिनके ग्रन्थों से इस ग्रंथ के लिखने में मुझे यत्किंचित् भी सहायता प्राप्त हुई है।

ग्रन्थ के प्रकाशक श्रीमान् मोतीलाल बनारसीदासजी मेरे लिये कम धन्यवाद के पात्र नहीं हैं, जिन्होंने इस महघता के समय में इतने विशाल ग्रन्थ को इतना शीघ्र एवं अत्युत्तम रूप में प्रकाशित करने का सत्प्रयत्न एवं कष्ट किया।

अंत में मैं इस ग्रंथ के पाठकों से प्रार्थना करता हूँ कि यदि प्रमादवश या दृष्टिदोष अथवा मुद्रण संबंधी दोष के कारण यदि इस ग्रंथ में कहीं कुछ दोष दृष्टि में आवे तो उसके लिये मुझे क्षमा करें और उसकी सूचना देने की कृपा एवं कष्ट करें, जिसमें आगे होने वाले संस्करण में उन त्रुटियों का परिहार किया जा सके, क्योंकि मनुष्य होने के नाते ऐसी त्रुटियों का इस ग्रंथ में होना असंभवित नहीं है।

विदुषां विनयावनत—

किमधिकम्—

डॉ० रामसुशील सिंह

पाश्चात्य द्रव्यगुण विज्ञान

आधारभूत प्रधान ग्रन्थ ।

अँगरेजी डॉक्टरी ग्रन्थ

1. British Pharmacopoeia. 1948.
2. The British Pharmacopoeia.
   Indian and Colonial Addendum.
3. Pharmacopedia (White and Humphry).
4. Squire's Companion to the British Pharmacopoeia.
5. British Pharmaceutical Codex.
6. The Extra Pharmacopoeia Martindale.
7. The pharmacopoeia of India, Waring.
8. Materia Medica (Hale White).
9. Materia Medica and Therapeutics (Bruce).
10. Pharmacy, Materia Medica and Therapeutic, Whitlaw.
11. A treatise on Materia Medica (Ghosh).
12. Pharmacology, Materia Medica and Therapeutics (Ghosh).
13. Sonthall's Organic Materia medica, Barcle.
14. Materia Medica (Greenish).
15. Hindu Materia Medica (O. C. Dutt.).
16. Pharmacology and Therapeutics (Cushny).
17. Lectures on the Action of Medicines (Brunton).
18. Practical Pharmacy Lucas.
19. The Book of Prescription (Lucas).
20. Pocket Medical Formularly (Sander's).
21. Pharmacographia Eluckiger and Hanbury.
22. Pharmacographia Indica (Dymock), 3 Parts.
23. A Dictionary of the Economic Products of India (Watt).
24. Indian Medicinal Plants (B. D. Basu).
25. Indigenous drugs of India (R. N. Chopra).
26. Materia Indica (Ainslie).
27. Supplement to the Pharmacographia of India.
28. Indian Materia Medica (Nadkarni).
29. A text book of Pharmacognosy (Henry G. Greenish).
30. A text-book of Pharmaceutics by Arthur owen Bentley.
31. A text-book of Pharmacognosy by T. C. Denston.
32. A text-book of Pharmacognosy by George Edward Trease.

33. Dispensing for Pharmaceutical Students By John W. Cooper Ph. C. & Frederick; J. Dyer Ph. D., B. Sc., Ph. C., A. R. I. C.
34. Practical Pharmacognosy by T. E. Wallis B. Sc., F. I. C., Ph. C.
35. Solutions and Dosage by Sara jamison, R. N.
36. The Plant Alkaloids by Thomas Anderson Henry D. Sc. (London).
37. The Vegetable Alkaloids with particular reference to their Chemical Constitution by Dr. Ame Pictet, Professor in the University of Geneva.
38. Vegetable gums and resin by F. N. Howes D. Sc.
39. Glossary of Indian medicinal Plants by R. N. Chopra.
40. Potter's New cyclopoedia of Botanical drugs & preparations by R. C. Wren F. L. S
41. Indian Pharmacopoea.
42. Indian Pharmacopoeal Codex.

आयुर्वेदीय ग्रन्थ

(संस्कृत और हिन्दी)	संकेत
चरकसंहिता	च०
सुश्रुतसंहिता	सु०
अष्टांगसंग्रह	अ० सं०
अष्टांगहृदय	अ० हृ०
काश्यपसंहिता	का० सं०
भावप्रकाश	भा०
शार्ङ्गधरसंहिता	शा०
धन्वन्तरीयनिघण्टु	ध० नि०
राजनिघण्टु	रा० नि०
मदनपाल निघण्टु	म० पा०
वृहन्निघण्टुरत्नाकर	वृ० नि० र०
कैयदेवनिघण्टु	कै०
द्रव्यगुणविज्ञानम् (पूर्वार्ध, उत्तरार्ध)	द्र० वि०
शालिग्राम निघण्टु भूषण	शा० नि० भू०
अनुभूत चिकित्सा सागर	अनु०
वनौषधिविज्ञान	व० वि०
आयुर्वेदीय द्रव्यगुणविज्ञान (वैद्यराज हकीम दलजीत सिंह) हस्तलिखित।	आ० द्र० गु०
रसामृत (वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य लिखित)।	र०

अन्यान्य भाषाके निघण्टु विषयक आधुनिक ग्रन्थ

बंगला

वनौषधि दर्पण

मेटीरिया मेडिका (स्वर्गीय डा० राधागोविंदकर एल० आर० सी० पी०)

भारतीय वनौषधि

मराठी

वनस्पति गुणादर्श

औपधि संग्रह (डॉ० वामन गणेश देसाई)

भारतीय रसायनशास्त्र (,,)

गुजराती

निघण्टु-आदर्श बापालाल गड़बड़शाह वैद्य भड़ौच लिखित—

यूनानी वैद्यकीय निघण्टु-ग्रन्थ

अरबी

१—उम्दतुल् मोहताज (सैय्यद अहमद आफन्दीउर्शीदी)

२—अल्किताबुल् जामेइल् इब्नुल्बेतार

३—तज्किरतुश्शैख दाऊदुज्जरीरुल् अंताकी

४—मुफरदात क़ानून (शैख बुअलीसीना)

५—नफीसीफनेसानी इल्मुल् अद्विया (मुल्ला नफीस)

६—मेअ्रत मसीही (अबुसहल मसीही)

फारसी

७—तोह्फतुल् मोमिनीन (हकीम मोहम्मद मोमिन)

८—इख्तियारात वदीई (हाजी जीनुल् अत्तार)

९—मख्जनुल् अद्विया (मीर मोहम्मद हुसेन)

१०—तालीफ शरीफी (हकीम मोहम्मद शरीफ खाँ)

११—मुफरदात नासिरी (हकीम मोहम्मद नासिर अली)

१२—नासिरुल् मोआलजीन

१३—मुहीत आजम (हकीम मोहम्मद आजम खाँ)

१४—पिजिश्कीनामा (मीरजा अली अकबर खाँ हकीम बाशी)

१५—गंजबादावर्द (खाँने ज़मा फिरोजजंग)

उर्दू

१६—बुस्तानुल् मुफरदात

१७—मख्जन मुफरदात व मुरक्कबात अर्थात् खवासुल् अद्विया (मुन्शी गुलाब नबी साहब)

१८—मख्जनुल् मुफरदात (मौलवी हकीम मोहम्मद फजलुल्ला साहब)

१९—मख्जनुल् अद्विया डॉक्टरी (हकीम व डॉक्टर गुलाम जीलानी खाँ साहब) २ भाग।

२०—खजाइनुल् अद्विया (हकीम मौलवी नज्मुलगनी साहब रामपुरी) ८ भाग।

२१—किताबुल् अद्विया (हकीम मोहम्मद कबीरुद्दीन साहब)

२२—कुल्लियात अद्विया (,,)

२३—यूनानी द्रव्यगुणविज्ञान—हिन्दी (वैद्यराज हकीम ठा० दलजीत सिंह साहब, रायपुरी, चुनार, जि० मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश)।

———

पाश्चात्य-द्रव्यगुणविज्ञान—ग्रंथके संबंधमें देशके गण्यमान आयुर्वेदज्ञों, डॉक्टरों तथा विषयसे संबंधित अन्य विषयके विद्वानों एवं आयुर्वेदिक पत्रों की अब तक की प्राप्त सम्मतियों में से कुछ थोड़ी सी सम्मतियों का सार।

⊙

परम आदरणीय श्रीयुत् वैद्य यादवजी त्रिकम जी आचार्य बंबई से लिखते हैं—

"श्रीयुत् वैद्य रामसुशील सिंह जी आयुर्वेदाचार्य द्वारा लिखित आधुनिक द्रव्यगुणविज्ञान (मेटीरिया मेडिका) के कुछ छपे हुए फारम मैंने देखे। आधुनिक द्रव्यगुणविज्ञानको हिन्दी भाषा द्वारा समझनेके लिये जिज्ञासुओंको यह ग्रन्थ उपयुक्त होगा ऐसा मेरा मत है।"

बंबई
ता० २१-२-५३

यादवजी आचार्य

भूतपूर्व अध्यक्ष तथा अधुना ऑनरेरी प्रोफेर ऑव आयुर्वेद काशी हिन्दू विश्वविद्यालय श्रीमान् परम आदरणीय सत्यनारायणजी शास्त्री लिखते हैं—

रामसुशीलसिंह शास्त्री, ए० एम० एस० जी द्वारा निर्मित 'पाश्चात्यद्रव्यगुणविज्ञान' नामक मेटीरिया मेडिकाका हिन्दी संस्करण राष्ट्रभाषाके लिए एक नूतन ग्रन्थ है। इसका संग्रह परमोत्तमरूपसे हुआ है। आधुनिक अध्ययनक्रमके छात्रोंके लिए यह परमोपयोगी ग्रन्थ होगा तथा प्राचीनक्रमके आयुर्वेदिक द्रव्यगुणका तत्तत्स्थलोंमें जो निवेश किया है, इससे प्राच्य-पाश्चात्य उभय चिकित्साक्रमके अध्ययनाध्यापनमें तथा चिकित्सामें यह अप्रतिम ग्रन्थ होगा। अतः हृदय से प्रेमपूर्वक आशीर्वाद देता हूँ कि भगवान् इसी प्रकार सद्बुद्धि दें कि इसी प्रकारके अन्य ग्रन्थोंका भी निर्माण करें और कीर्तिभाजन हों।

अगस्त्य कुण्ड,
काशी।
दिनांक १५-१-५३

सत्यनारायण

आयुर्वेद शास्त्राचार्य, आयुर्वेदवृहस्पति (D.Sc.,A.), डीन आयुर्वेदविद्यालय हिं० वि० वि० काशीके श्रीयुत् पं० राजेश्वरदत्त जी शास्त्री लिखते हैं—

श्री ग्रा० रामसुशीलसिंह जी की लिखी हुई पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान नामक पुस्तक देखा। वस्तुतः लेखकने बहुत परिश्रम किया है। पता चलता है कि पाश्चात्य विषयमें एक आयुर्वेदज्ञका कितना ज्ञान है। भाषा सरल और सुबोध है। इससे आयुर्वेदके विद्यार्थियों या प्रेमियोंको पाश्चात्य द्रव्यगुणका सम्यक् ज्ञान प्राप्त होगा ऐसा मुझे विश्वास है। इस कार्यके लिए लेखकको मैं सहर्ष धन्यवाद देता हूँ।

सञ्जीवन औषधालय,
अस्सी, वाराणसी।
दिनांक २०–२–५३ ई०

राजेश्वरदत्त शास्त्री

हिन्दू विश्वविद्यालय काशीमें भेषजी (Pharmacy) के प्रोफेसर श्रीयुत् डा० गोरख प्रसाद जी श्रीवास्तव एम० एस० सी० लिखते हैं—

आयुर्वेदाचार्य श्री रामसुशीलसिंहकृत "पाश्चात्य द्रव्य-गुण-विज्ञान" नामक यह प्रस्तुत ग्रन्थ वर्तमान हिन्दी वाङ्मयकी अर्वाचीन भैषजिकविज्ञान संबन्धी अभावकी पूर्तिमें एक बड़ा महत्त्वपूर्ण पद है। भाई रामसुशीलजी ने अपनी पुस्तकके पूर्वार्धकी पाण्डुलिपि देखनेका भी मुझे सुअवसर दिया था। मुझे हर्ष है कि लेखकने भैषजिकी अर्थात् फार्मास्युटिक्स जैसे क्लिष्ट एवं प्रौद्योगिक विषयका प्रतिपादन बड़े ही बोधगम्य और सरल भाषामें करने का सफल प्रयत्न किया है। पारिभाषिक शब्दावली सम्बन्धी वर्तमान विवादको देखते हुए उन्होंने जो मध्यम मार्ग अपनाया है वह संक्रमण कालके लिए उत्तम तथा आवश्यक भी है। इस पुस्तकमें भैषजिकविज्ञान यानी फार्मास्युटिकल साइन्सके लगभग सभी अंगोंकी अच्छी व्याख्या की गई है तथा विविध भैषजिक योगोंके भेषजक्रियाज्ञान अर्थात् फार्माकॉलोजी की भी सुन्दर विवेचना इसमें समाविष्ट है। इसलिए प्रस्तुत पुस्तक न केवल आयुर्वेद अथवा मेडिकल महाविद्यालयोंके विद्यार्थियोंके लिए उपयोगी होगी वरन् मेरा विचार है कि भैषजिक शिक्षार्थियोंके लिए भी परम लाभदायक सिद्ध होगी।

भैषजिकी (फार्मास्युटिक्स) विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
दिनांक १५–२–५३

गोरखप्रसाद श्रीवास्तव

हिन्दू विश्वविद्यालय काशीमें भेषजन्यकिविज्ञान (Pharmacognosy) के रीडर श्रीयुत डॉ० संकठा प्रसाद जी एम० एस-सी०, पी० एच० डी०, डी० एस०-सी० लिखते हैं—

पाश्चात्य-द्रव्यगुणविज्ञान :—लेखक—रामसुशीलसिंह ए० एम० एस०, शास्त्री, मुंशी, मौलवी, विशारद, रिसर्च स्कॉलर—आयुर्वेदकालेज, काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय।

This Hindi edition of Materia Medica by Shri Ram Sushil Singh ji, has successfully met the longfelt need of such a book particularly for Ayurvedic students. The work has been carefully planned and embodies in this volume a comprehensive survey of the science of pharmacy including pharmacology and pharmacognosy. This is the first attempt of its kind in Hindi in this field and the author deserves our congratulations for this pains-taking work which will prove of great use to all Hindi speaking public in general and medical students taught in Hindi medium in particular.

Department of Pharmaceutics.
B. H. U.
Date 15/2/1953

S. PRASAD.

आयुर्वेद शास्त्राचार्य श्रीयुत् पं० विश्वनाथ द्विवेदी, आयुर्वेदबृहस्पति (D. Sc., A.) बी० ए० लिखते हैं—

पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान (एलोपैथिक मैटेरियामेडिका) का हिन्दी संस्करण देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। इसके लेखक श्री रामसुशीलसिंह ए० एम० एस०, एम० एस० सी० ने इसमें केवल द्रव्यगुणविज्ञानके प्रत्येक विभागका सुन्दर व विशद विवरण दिया है। यह सिद्ध-हस्त लेखक व रिसर्चस्कालर हैं। अतः छात्र व चिकित्सकोपयोगी प्रत्येक अंशको स्पष्टरूपमें लिखनेमें समर्थ हुये हैं। हिन्दीमें पाश्चात्य मैटेरिया मेडिका अबतक कोई प्रामाणिक ग्रन्थ न था। लेखकने इस ग्रन्थ द्वारा हिन्दी-साहित्य व आयुर्वेदिक साहित्य की एक मौलिक सहायता की है। मैं इसके लिए इन्हें हृदयसे धन्यवाद देता हूँ और आशीर्वाद भी देता हूँ कि यह और भी सुन्दर साहित्य प्रस्तुत करनेमें समर्थ हो सकें। पुस्तक उपादेय और छात्रजनोपयोगी है।

Reader in Indian Medicine
Pharmacology Dept.
K. G. Medical College, Lucknow
24/12/52

विश्वनाथ द्विवेदी

आयुर्वेदबृहस्पति (D. Sc., A.) पं० सोमदेवशर्मा सारस्वत, साहित्यायुर्वेदाचार्य, ए० एम० एस० लिखते हैं—

मुझे श्री रामसुशीलसिंह शास्त्री, ए० एम० एस० द्वारा लिखित पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान (Materia medica) का अवलोकन कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। हिन्दी भाषामें पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञानपर इस प्रकारकी यह प्रथम प्रामाणिक पुस्तक है। लेखक महोदय हिन्दी, संस्कृत, अँग्रेजीके साथ ही फारसी और अरबी भाषाके भी विद्वान् हैं। इसलिए उन्होंने आयुर्वेद तथा एलोपैथीके ज्ञातव्य विषयके साथ यूनानीद्रव्यगुणविज्ञानकी आवश्यक ज्ञातव्य बातोंका भी समावेश इस ग्रन्थमें कर इसकी उपयोगितामें चार चाँद लगा दिये हैं। इसलिए आयुर्वेद कालेजके विद्यार्थीवर्गकी भांति यूनानी तथा तिब्बी कालेजके विद्यार्थीवर्ग और वैद्यबन्धुओंके लिए यह पुस्तक अत्यन उपादेय होगी। हम ऐसी उत्तम पुस्तक लिखकर प्रकाशित करनेके लिए लेखक महोदयको वैद्य-बन्धुओंकी ओरसे बधाई देते हैं। आशा है विद्यार्थीवर्ग तथा वैद्य-वृन्द इस पाश्चात्यद्रव्यगुणको अपनाकर अपनी गुणग्राहकताका परिचय देंगे।

फारमॉकोलाजी डिपार्टमेण्ट
मेडीकल कालिज लखनऊ
ता० २४-१२-५२

सोमदेव शर्मा सारस्वत
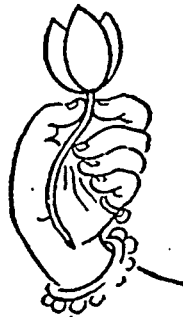
श्रीयुत् कविराज महेन्द्र कुमार शास्त्री, बी० ए०, बी० एम० एस० वैद्यवाचस्पति, आयुर्वेदाचार्य, पोद्दार मेडिकल कालेज (आयु०) के प्रिंसिपल एवं सुपरिन्टेण्डेण्ट, वोर्ली, वम्बई से लिखते हैं—

पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान की प्रति देखकर अत्यन्त आह्लाद हुआ। लेखन शैली, छपाई-सफाई इत्यादि अत्यन्त आकर्षक है। वर्तमान समय में आयुर्वेद-चिकित्सकों को ऐसी पुस्तक की अत्यन्त आवश्यकता है। पुस्तक उचित समय पर प्रकाशित हुई है। हिन्दी भारती का भाण्डार भरने के साथ-साथ आयुर्वेदिक साहित्य में स्थायी सामग्री का इतने उत्तम तथा सारगर्भित प्रकाशन के लिये कृपया मेरी बधाई स्वीकार करें। लेखक श्री रामसुशील सिंह आयुर्वेदाचार्य की लेखनी से आयुर्वेद तथा हिन्दी वाङ्मय को अनेक आशाएँ हैं।

'आयुर्वेद विज्ञान' के संपादक श्रीमान् स्वामी हरिशरणानन्द जी इसके संबंध में लिखते हैं—

यह ग्रन्थ आयुर्वेदीय अनुसन्धान ग्रन्थमाला का ९ वां पुष्परत्न है, जिसकी भूमिका आयुर्वेदाचार्य डाक्टर भास्कर गोविन्द घाणेकर जी ने लिखी है। जिस तरह हमारे यहां निघण्टु होते हैं उसी तरह से एलोपैथी में मेटीरिया मेडिका है। निघण्टु में तो खाली औषधियों के गुण-धर्म का ही वर्णन होता है, किन्तु एलोपैथी मेंऔषध गुण-धर्म के साथ भैषज्यसंहिता भी मिली होती है, जिसके द्वारा औषध-निर्माण प्रक्रिया को बतलाने का पूरा २ विधान दिया होता है। औषध के गुण-कर्म को जान कर उसको बनाने का ज्ञान भिन्न ग्रन्थ द्वारा करना, भिन्न विषय के रूप में करना असंगत सी बात है। इसीलिये एलोपैथी में उसका समावेश औषध-गुण-धर्म को जानने के साथ ही एक वैद्य को होना आवश्यक है। ऐसा देख कर ही प्रत्येक देश की मेटीरिया मेडिका में वह इसके साथ ही आरम्भ में दिया जाता है। यह मेटीरिया मेडिका वह अधिकृत ग्रन्थ है कि प्रत्येक देश की सरकार द्वारा इसे अधिकृत प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है और इसमें दी हुई विधियों के अनुसार ही प्रत्येक एलोपैथी औषध निर्मित होती है। हम अंगरेजों के गुलाम रह चुके हैं, इसलिये हमारे देश में अभी तक बृटिश फार्माकोपिया की ही औषधों को मान्यता मिली हुई है, इसीलिये प्रत्येक औषध के लेबिल पर बी० पी० शब्द अंकित रहता है, अर्थात् वह लेबिल यह सूचित करता है कि यह औषध इंग्लैंड की अधिकृत भैषजसंहिता की विश्वसनीय औषध है।

हमारे देश में एलोपैथी की जो शिक्षा दी जाती है, उस शिक्षा-क्रम में यह ग्रन्थ एक अत्यावश्यक विषय है और अभी तक हमारे यहां डाक्टरी की शिक्षा अंगरेजी के माध्यम से ही होती है; किन्तु हमारी सरकार ने यह स्वीकार कर लिया है कि आज से १० वर्ष बाद प्रत्येक विषय हिन्दी के माध्यम से पढ़ाये जायँ। किन्तु जब तक हिन्दी में प्रत्येक विषय के ग्रन्थ न हों तब तक इस विषय का पढ़ाया जाना कठिन ही नहीं, असम्भव है। इसी न्यूनता को दूर करने के लिये इस ग्रन्थरत्न की रचना हुई है। विद्वान् लेखक ने इस ग्रन्थ को लिखते समय किसी एक भैषजसंहिता को सामने रख करके उसका अनुवाद नहीं किया है, प्रत्युत उन्होंने ३७ अंगरेजी के बड़े-बड़े ग्रन्थ बृटिश फार्माकोपिया से लेकर वनस्पतिशास्त्र के मान्य ग्रन्थ कर्नल चोपड़ा व घोष आदि के ग्रन्थों का अनुशीलन करके तथा आयुर्वेद के समस्त निघण्टु व संहितायें सामने रख कर और यूनानी के इसी तरह २३ ग्रन्थों को देखकरके तत्सम्बन्धी विषय को संग्रह करके इस ग्रन्थरत्न की रचना की है। यह ग्रन्थ पाठ्यग्रन्थों में तो स्थान प्राप्त करेगा ही इसमें तो कोई संशय नहीं, किन्तु इसकी उपयोगिता वैद्यों के लिये भी कम न होगी। इस ग्रन्थ की सहायता से

प्रत्येक वैद्य यह देखने व समझने में समर्थ हो सकेंगे कि आयुर्वेद से इतर जो चिकित्साशास्त्र है उसमें औषध-गुण-कर्म की व्याख्या कैसे की गई। आयुर्वेदीय मतसे जो हम औषधियों के रस, वीर्य, विपाक प्रभाव को मानते हैं इसमें और विद्यमान वैज्ञानिक मान्यता में कितना अन्तर है, इस विषय को समझाने में यह ग्रन्थ महान सहायक सिद्ध होगा। वास्तव में आयुर्वेदज्ञों के लिये तो यह ग्रन्थ बिलकुल ही एक नई विद्या है और विद्यमान वैज्ञानिक जगत् की भैषजसंहिता सम्बन्धी उनके सामने नया ही दृष्टि-कोण रख रही है।

पारिभाषिक शब्दों को यदि ग्रन्थकार विज्ञानपरिषद् द्वारा परिभाषित शब्दों का व्यवहार करता तो उसका यह ग्रन्थ वैद्यों को समझने में और भी सरल तथा सुविधाजनक होता। क्योंकि डॉक्टर रघुवीर की परिभाषित शब्दावली से विज्ञानपरिषद् की शब्दावली सरल है।

फिर भी आपने ग्रन्थ को सरल, सुबोध बनाने के लिये एक-एक अंगरेजी व वैज्ञानिक शब्दों के साथ संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी, अरबी आदि के अनुवादित नाम दे दिये हैं। उससे यह नया विषय भी इतना सुगम हो गया है कि वैद्यों की समझ में आसानी से आ सकता है। हम प्रत्येक वैद्य से अनुरोध करेंगे कि ऐसे उपयोगी ग्रन्थ को पढ़करके अपने ज्ञान विज्ञान को बढ़ाने का प्रयत्न करें और इसे पढ़ कर देखें कि आयुर्वेद में दिये निघण्टु सम्बन्धी ज्ञान से यह कितना भिन्न है और भैषज सम्बन्धी विषय को संसार कितना अधिक जानता है और वह इससे कितना लाभ उठा रहा है। हम ऐसे उत्तम ग्रन्थ के प्रकाशन पर वैद्यराज दलजीत सिंह जी को बहुत-बहुत बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि वह इसके अगले खंड भी शीघ्र प्रकाशित करके अपने मातृ-भाषा ग्रन्थ-भण्डार की पूर्ति में अग्रणीय रहेंगे।

प्राणाचार्य, विजयगढ़, अलीगढ़, इस ग्रन्थ के संबंध में अपना उद्गार निम्न-शब्दों में प्रगट करता है—

चिकित्साकाल में सहयोग देनेवाले निदान, चिकित्सा एवं द्रव्यगुण यही तीन अंग मुख्य हैं। इनमें से निदान एवं चिकित्सा के एलोपैथी पर अनेक उच्चकोटि के ग्रंथ उपलब्ध है किन्तु द्रव्यगुण पर कोई उत्तम कहने योग्य ग्रन्थ अब तक न था। प्रस्तुत पुस्तक ने आज वह अभाव दूर कर दिया है।

लेखक ने पुस्तक के विषय को जहाँ तक हो सका है सरल एवं बोधगम्य बनाने का यत्न किया है। स्थान-स्थान पर तालिका देकर ग्रन्थ का महत्व और भी उच्च कर दिया है। साथ ही साथ अनेक विषयों पर आयुर्वेदीय मत भी टिप्पणी के रूप में दे दिया है। जिससे ग्रन्थ आयुर्वेदाचार्यों के योग्य भी बना है। द्रव्यों के गुणों को जहाँ तक हो सका है विस्तृत किया गया है। इसी प्रकार भेषजकल्पना, औषधि-प्रभाव, विषतन्त्र, द्रव्य गुण-कर्म, द्रव्य संग्रह आदि-आदि के विषयों को भी अति विस्तार से लिख डाला है।

इन सबसे पुस्तक प्रत्येक के समझ में आने लायक बनाने का यत्न सफल ही हुआ है।

'होमियोपैथी अग्रदूत' लिखता है—

प्रस्तुत पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ने का शुभ अवसर मिला। लेखक ने पुस्तक को हिंदी भाषा में प्रकाशित कर चिकित्साजगत में क्रान्ति पैदा कर दी है। यद्यपि इस विषय पर अंग्रेजी लेखकों द्वारा अन्यान्य पुस्तकें प्राप्त थीं, परन्तु सर्वसुलभ नहीं थीं। इस पुस्तक में लेखक ने पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान के संपूर्ण विषयों के विस्तृत विवरण के अलावे स्थान-स्थान पर आयुर्वेद तथा यूनानी की तुलनात्मक टिप्पणी दी है।

इस पुस्तक से नवीन चिकित्सक विद्यार्थी ही नहीं, बल्कि अनुभवी चिकित्सक भी समय-समय पर लाभ उठा सकते हैं।

इत्यादि। इत्यादि॥

पाश्चात्य द्रव्यगुणविज्ञान

उत्तरार्ध भाग २ की

अध्याय एवं संक्षिप्त विषयानुक्रमणिका

अध्याय	प्रकरण	विषय	पृष्ठ
७		सामान्यविज्ञानीय परिच्छेद १	
	१	आमाशयान्त्रप्रणाली पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	१–१५
	२	यकृत पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	१५–१६
	३	कृमिघ्न या कृमिहर औषधियाँ— शीतग्राही औषधियाँ	१६–२१
	४	रक्त पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	२२–३०
		द्रव्यगुणकर्मविज्ञानीय परिच्छेद २	
	१	वानस्पतिक तिक्तौषधियाँ (१) कलम्बा, (२) क्वाशिया, (३) क्वाशिया भारतीय, (४) जन्शिआना, (५) जन्शिआना भारतीय, (६) ऑरन्शियाइ कॉर्टेक्स सिक्केटस, (७) चिराटा, (८) कालमेघ, (९) टॅरेक्सेकम्, (१०) एल्सटोनिआ, (११) टिनोस्पोरा और (१२) पिक्रोरहाइजा।	३०–५१
	२	पाचक किण्व (१) पेप्सिनम्, (२) पेंक्रियाटिनम्, (३) पपेनम् और (४) एक्स्ट्रक्टम् माल्टी (यव्य सत्व)।	५२–५९
	३	वमनघ्न द्रव्य (१) एसिडम् हाइड्रोसायनिकम् डायल्यूटम्, (२) क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड।	६०–६३
	४	अधिशोषक द्रव्य (१) कार्बोलिग्नाइ एक्टिवेटस और (२) पेक्टिनम्।	६४–६६
	५	आंत्रपर कार्यकर औषधियाँ लवणविरेचन—(१) पोटासियाइ टारट्रास एसिडम्, (२) सोडियाइ एट पोटासियाइ टारट्रास,	६७–१२०

अध्याय	प्रकरण	विषय	पृष्ठ
	९	बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्तक्षय पर कार्यकर औषधियाँ	१५६–१९२
		(१) एक्स्ट्रक्टम् हिपेटिस लिक्विडम् (लिक्विड एक्स्ट्रक्ट ऑव लिवर, (२) एसिडम् फोलिकम् (फोलिक एसिड), (३) फोलिनिक एसिड, (४) सायनो-कोबालामिनम्, (५) फेराइसल्फास (कसीस), (६)फेराइ-ग्लुकोनास, (७) फेराइ कार्बोनास सेकेरेटस, (८) लाइकर फेराइ परक्लोराइड, (९) फेराइ एट क्विनीनी साइट्रास; रक्तस्कन्दक औषधियाँ—अन्य रक्तस्तम्भक यौगिक ।	
८		परिच्छेद १ (पोषक द्रव्य)	
	१	जीवतिक्तियाँ (विटामिन्स)	१९३–२२७
	२	सुक्रोजम् (रिफाइन्ड सूगर — शर्करा)	२२८–२३४
		परिच्छेद २	२३५–२४५
		यूरिक एसिड डायथिसिस अर्थात् मिहिकाम्लप्रवृत्तिमें कार्यकर औषधियाँ	२३५–२४५
		परिच्छेद ३	२४६–२७२
		शरीरसमवर्तक्रिया पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	२४६–२७२
		परिच्छेद ४	२७३–२९४
		वेदनास्थापक एवं ज्वरहर या संतापहर तथा आम-वातनाशक एवं संतापहर तथा वेदनानाशक एवं एन्टीसेप्टिक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ	२७३–२९४
९		सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १	२९५–३०६
		(१) रक्तवह-संस्थान पर कार्य करनेवाली औषधियाँ ।	
		(२) हृदय पर कार्य करनेवाली औषधियाँ ।	
		गुणकर्मादिविवेचनीय परिच्छेद २	३०७–३७८
	१	(१) हृद्य औषधियाँ	३०७–३३३
		(२) हृदयावसादक औषधियाँ	३३३–३५१
		(३) सिम्पैथोमाइमेटिक द्रव्य	३५१–३६८
		(४) रक्तचापह्रासक औषधियाँ	३६९–३७८
१०		सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १	३७९–४०१
	१	श्वसनसंस्थान पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	३७९–३८५
	२	वृक्कों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	३८६–३९०
	३	प्रजननावयवों पर कार्य ,, ,,	३९१–३९६
	४	त्वचा पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	३९६–४०१

अध्याय	प्रकरण	विषय	पृष्ठ
		गुणकर्म विज्ञानीय परिच्छेद २	**४०२–५००**
	१	श्वसन पर प्रभाव करनेवाली औषधियाँ	४०२–४३१
	२	वृक्कों पर कार्य करनेवाली ,,	४३१
		(१) जॅथीन समुदायकी मूत्रल ,,	४३१–४३६
		(२) लवणक्रिया के द्वारा मूत्रल प्रभाव करनेवाली औषधियाँ	४४०–४४१
		(३) पारद के मूत्रल यौगिक	४४१–४६४
		प्रजननावयों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ	४६४–४८६
		प्रजननग्रन्थिपोष यौगिक	४८६–४६६
		अण्डकोष के अन्तःस्राव के यौगिक	४६६–४६६
		गर्भाशयपर संशामक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ	४६६–५००
		परिच्छेद ३	**५०१–५२१**
	३	मलहर के आधार द्रव्य	५२२–५३६
	४	तैल एवं वातानुलोमन सुगन्धद्रव्य	५३७–५६२
		रामबाण औषधियाँ या रसऔषधियाँ (क्रिया-सफल औषधियाँ)	५६३
११		**सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १**	**५६३–६०३**
	१	... .	५६३–५६६
	२	मलेरिया या विषमज्वरनाशक औषधियाँ	५६७–५६८
	३	मीशनीयतानाशक औषधियाँ	५६६–६००
	४	फिरंगनाशक औषधियाँ	६०१–६०२
	५	अमीबिक उपसर्गमें प्रयुक्त औषधियाँ	६०३
		द्रव्यगुणकर्मविज्ञानीय परिच्छेद २	**६०४–६६५**
	१	विषमज्वरनाशक औषधियाँ	६०४–६३१
	२	लीशमनीयतानाशक औषधियाँ (गुरुधात्वीय-यौगिक)	६३२–६४४
	३	निद्राज्वर में प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ	६४५–६४६
	४	फिरंगनाशक औषधियाँ	६४७–६८४
	५	आमप्रवाहिका या अमीबिकप्रवाहिका में कार्य-करनेवाली औषधियाँ	६८५–६६५
		परिच्छेद ३	**६६६–८५२**
		शुल्वौषधियाँ (Sulpha drugs), एन्टिबायोटिक्स एवं राजयक्ष्मा तथा कुष्ठ में प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ	६६६–६६७
	१	शुल्वौषधियाँ	६६८–७१८
		एन्टीबायोटिक्स (पेनिसिलिन, क्लोरोमाइसेटिन, ऑरियोमाइसिन, टेरामाइसिन, एक्रोमाइसिन आदि)	७१८–८५२

अध्याय	प्रकरण	विषय	पृष्ठ
	३	अम्लसाही जीवाणुओं पर कार्यकर औषधियाँ	७५३–७७६
		(१) यक्ष्मानाशक औषधियाँ	७५३–७६६
		यक्ष्मानाशक स्वर्णयौगिक	७६६–७७३
		(२) वानस्पतिक कुष्ठहरऔषधियाँ	७७३–७७६
१२		जीवाणु वृद्धिरोधक (एन्टिसेप्टिक), जीवाणुनाशक (डिसइन्फेक्टेन्ट्स) एवं पराश्रयी कीटनाशक द्रव्य	७८०
		सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १	**७८०–७८३**
	१		७८०–७८१
	२	स्थानिक एन्टिसेप्टिक एवं जीवाणुनाशक द्रव्य	७८२–७८३
		द्रव्यविज्ञानीय परिच्छेद २	**७८४–८४२**
		(१)	
		(१) बैक्टेरियानाशक द्रव्य।	७८४–७८५
		(२) आक्सीडायजिंग एजेन्ट्स	७८६–७८८
		(३) हेलोजन्स तथा उनके यौगिक	७८८–८०७
		(४) कोलताररंजक यौगिक अथवा संश्लिष्ट कृत्रिम रंजक यौगिक	८०७–८१३
		(५) अल्कोहल्स एण्ड एल्डिहाइड्स	८१३–८१५
		(६) त्वचाविशोधक यौगिक	८१५–८१८
		(७) एसिड्स एवं क्षार	८१८–८२१
		(८) बैक्टीरियानाशक अन्य यौगिक	८२१–८२३
		(२)	
		प्रतिपारश्रयी द्रव्य एवं छत्राणुनाशक द्रव्य	८२३–८४२
३१		**वैक्सीन एवं सीरमचिकित्सा**	
		परिच्छेद १	**८४३–८५८**
		विभिन्न मसूरी या वैक्सीन्स, लसिका या सीरम तथा प्रतिविष एवं टाक्सायड्स आदि का विवेचन	८५३–८५७
		बाह्य-प्रोटीन चिकित्सा	८५७–८५८
		जीवाणुभक्ष या बैक्टीरियो-फेज-चिकित्सा	८५८
		परिच्छेद २	
		तृणाण्वीय उपसर्ग-प्रतिरोधक मसूरी या वैक्सीन	**८५९–८८३**
		परिच्छेद १	**८८४–८९७**
१४		क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त द्रव्य	८८४–८९७
		परिच्छेद २	**८९८–९१३**
	१	औषधियोंको सुस्वादु बनाने के लिए प्रयुक्त द्रव्य	८९८–९००
	२	रुचिकारक द्रव्य	९०१
	३	दवाइयों को रंगीन एवं आकर्षक बनाने के लिए प्रयुक्त द्रव्य	९०२–९०६
१५		विकिरण-चिकित्सा (Radiation Therapy) क्ष-किरण (x' ray's)	९०७–९१३

अध्याय ७

इस अध्याय में निम्न समुदाय की औषधियों का वर्णन किया जायगा :—

(१) आमाशयान्त्र–प्रणाली अर्थात् मुख, आमाशय एवं आंतों पर कार्य करने वाली औषधियाँ ;

(२) यकृत पर कार्य करने वाली औषधियाँ ;

(३) कृमिघ्न औषधियाँ (Anthelmintics);

(४) शीत-ग्राही औषधियाँ (Astringents);

तथा (५) रक्तपर कार्यकरने वाली औषधियाँ।

सामान्यविज्ञानीय परिच्छेद १

प्रकरण १

आमाशयान्त्र-प्रणाली पर कार्य करने वाली औषधियाँ।

(Drugs acting on the Gastro-Intestinal Tract)

मुख (Mouth)—साधारणतया मुख में अनेकों दण्डाणु (Bacteria) रहते हैं, जिनमें अधिकांश यद्यपि मृताश्रयी (Saprophytes) होते हैं और कोई विकार पैदा नहीं करते तथापि अनुकूल परिस्थिति में ये ही नाना प्रकार के विकार भी पैदा करने की क्षमता रखते हैं। अनेकों विकृतियाँ मुख-दोष (Oral sepsis) से उत्पन्न होती हैं। दन्तपूय (Pyorrhoea alveolaris), दूषित-टांसिल तथा कतिपय प्रकार के आमाशय-शोथ (Stomatitis) के कारण शरीर के अन्य दूरवर्ती अंगों में भी उपद्रव-स्वरूप व्याधियाँ उत्पन्न होती देखी जाती हैं। आन्त्रिक ज्वर, न्युमोनिया तथा मस्तिष्कगत रक्तस्राव (Apoplexy) आदि व्याधियों में अनेक उपद्रव मुख दूषित होने के कारण उत्पन्न हो जाते हैं। अतएव मुखशुद्धि का चिकित्सा की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। यद्यपि मुख को निरन्तर विशुद्ध रखना एक समस्या है, तथापि मुख-प्रयुक्त जीवाणुनाशक कल्पों के व्यवहार से इस लक्ष्य की बहुत कुछ सिद्धि हो जाती है। एतदर्थ जीवाणुनाशक दंतमंजन (Dentifrices)—पेस्ट (Paste) अथवा पाउडर (Tooth powder) के रूप में, मुख-धावन, गण्डूष (Gargle) तथा मुख-चक्रिका (Lozenges) का प्रयोग किया जाता है। जिन अवस्थाओं में दातून का प्रयोग निषिद्ध हो, उनमें पोटासियम् पर-

मैंगनेट के घोल का कवल-ग्रह या गण्डूष करना चाहिए। दूषित (Septic) अवस्था में मुखधावन के लिए हाइड्रोजन परॉक्साइड एक उत्तम औषधि है। एतदर्थ आयोडीन सॉल्यूशन को गरम जल में मिलाकर गण्डूष के रूप में प्रयुक्त करना चाहिए अथवा उक्त सॉल्यूशन का पेंट (Paint) दंतवेष्टों (Gums) पर करना चाहिए। मुख में साधारणतया पाये जानेवाले प्रायः सभी विकारी-जीवाणु पेनिसिलिन के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं। अतएव इस कार्य के लिए पेनिसिलिन चक्रिकाओं (Penicillin Lozenges) का प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। चक्रिका को मुख में रखकर धीरे-धीरे चूसना चाहिए।

दंत-मंजन (Dentifrices)—उन योगों को कहते हैं, जिनका प्रयोग दाँतों को साफ करने के लिए किया जाता है। इनका प्रयोग पेस्ट तथा पाउडर (चूर्ण) दोनों रूपों में किया जाता है। दंतमंजनों में फिनोल, नीम आदि जीवाणुनाशक द्रव्यों की प्रधानता होती है अथवा कषायरसवाले (Astringent) द्रव्यों की प्रधानता होती है। यदि दाँत हिलते हों अथवा मसूढ़ों से खून आता हो तो ग्राही दंतमंजनों का प्रयोग विशेष लाभकारी होता है। ग्राही टूथ-पाउडर बनाने के लिए मौलसिरी (Mimusops elengi Linn) एक उत्तम औषधि है।

जीवाणुनाशक मुखधावन (Antiseptic mouth-washes) के लिए बोरिक एसिड, फिनोल, पोटासियम परमैंगनेट, पोटासियम क्लोरेट, लिस्टरिन (Listerine) आदि औषधियों का प्रयोग किया जाता है।

बालकों में, दाँतों की स्वच्छता के प्रति लापरवाही होने के कारण अथवा शरीर में कैल्सियम् का अभाव होने से कृमिदंत (Caries of the teeth) रोग प्रायः पाया जाता है। कैल्सियम् की कमी के कारण होनेवाले कृमिदंत रोग में कॉडलिवर ऑयल (मछली का तेल), मक्खन तथा विटामिन 'डी' बहुल आहार का सेवन कराना चाहिए। यदि उचित मात्रा में दूध का सेवन हो तो कैल्सियम् तथा विटामिन 'डी' दोनों की पूर्ति हो जाती है। अन्यथा विटामिन 'डी' के लिए कैल्सिफेरॉल का भी प्रयोग कर सकते हैं।

लालास्राव (Salivary Secretion)—लालास्राव (Saliva) मुख्यतः दो कार्य करता है—(१) आहार पाचन तथा निगरण (Deglutition) में सहायक होता तथा (२) मुख का शोधन करता है। लालास्रावी ग्रंथियों का नियन्त्रण दो प्रकार की नाड़ियों से होता है, स्वतन्त्र (Sympathetic)— जिसकी उत्तेजना (Stimulation) से ग्रंथिगत वाहिनियाँ संकुचित होतीं तथा स्रावकम और सान्द्र (गाढ़ा) हो जाता है; (२) परिस्वतंत्र (Parasympathetic) — जिसकी उत्तेजना से वाहिनियाँ विस्फारित हो जातीं तथा स्रावाधिक्य होता है।

लालास्राव में निम्न कारणों से वृद्धि होती है—

(१) मानसिक प्रभाव द्वारा (Psychic reflex), चाट आहार को देखने या उसकी सुगन्ध से होता है; (२) स्वादग्राही नाड्यङ्कुरों के रासायनिक उत्तेजन (Chemical stimulation) अथवा चर्वण द्वारा तथा (३) यांत्रिक उत्तेजन (Mechanical stimulation) द्वारा भी लालास्राव में वृद्धि होती है। इन दोनों प्रक्रियाओं का विशेष प्रभाव कर्णमूलिक ग्रंथि (Parotid gland) पर होता है। इनके अतिरिक्त रक्तगत जलीयांश पर भी लालास्राव

बहुत कुछ निर्भर करता है, यथा अत्यधिक स्वेदोत्सर्ग तथा जलीय विरेचन होने पर रक्तगत जलीयांश कम हो जाने के कारण मुख में शुष्कता (Dryness) का अनुभव होने लगता है। ऐसी परिस्थिति में लालास्रावी औषधियों के प्रयोग से भी विशेष लालास्राव होने की सम्भावना नहीं रहती।

जो औषधियाँ लालास्राव में वृद्धि करती हैं, उनको **लालास्रावी**[1] (सायलेगॉग Sialagogue) औषधियाँ कहते हैं। ये निम्न प्रकार से कार्य करती हैं :—

(१) केन्द्रगानाड़ियों (Afferent nerves) के परिसरीयभागों (Periphery) की उत्तेजना द्वारा—यथा, अम्ल तथा आम्लिकलवण, तीक्ष्ण द्रव्य (Pungents), सौगन्धिक द्रव्य (Aromatics), उत्पत् तैल, तिक्त औषधियाँ, अल्कोहल्, ईथर तथा क्लारोफॉर्म। मुख में इन औषधियों का प्रभाव होने से प्रत्याक्षिप्त क्रिया (Reflex action) द्वारा लाला का स्राव होता है। इपेकाक्वाना तथा टारटार इमेटिक आदि उत्क्लेशकारक औषधियों (Nauseants) द्वारा लालास्राव, आमाशयस्थ प्राणदा नाड़ी--अग्रों की उत्तेजना के कारण होता है।

(२) परिस्वतंत्रनाड्यग्रों की उत्तेजना द्वारा—पिलोकार्पीन, एसेटिलकोलीन, कारबेकॉल (Carbachol), फिजॉस्टिग्मीन (Physostigmine) तथा मुस्केरीन (Muscarine) आदि इसी प्रकार से लालास्राव कराती हैं। इनको **विशिष्ट लालास्रावी** (Specific Sialagogues) औषधियाँ भी कहते हैं।

(३) स्वतंत्रनाड़ीमण्डल की कन्दिकाओं (Ganglia) की उत्तेजना द्वारा—निकोटीन वर्ग की औषधियाँ इसी प्रकार कार्य करती हैं।

(४) स्वतन्त्र नाड्यग्रों (Sympathetic Nerve-endings) की उत्तेजना द्वारा—एड्रिनेलीन तथा इफेड्रीन इस वर्ग में आते हैं।

पारद तथा पोटासियम् आयोडाइड जैसी कुछ औषधियाँ ऐसी हैं, जो लालास्राव के साथ उत्सर्गित होतीं तथा साथ ही स्राव को अधिक करती हैं। इसका परिहार अट्रोपीन के प्रयोग द्वारा किया जा सकता है।

लालास्राव-निरोधी (एन्टीसायलेगॉग Antisialagogue) औषधियाँ—जो औषधियाँ लालास्राव को कम करती हैं, उनको **लालास्राव-निरोधी**[2] (Antisialagogue) कहते हैं। ये निम्न प्रकार से कार्य करती हैं :—

(१) मुखस्थक्षोभ का शमन करके (By allaying irritation of the mouth)—पोटासियम् क्लोरेट, टंकण (Borax) तथा ग्राही गण्डूष (Astringent gargles) आदि इसी प्रकार कार्य करते हैं।

---

१. इसको "लालाप्रसेक जनन" वा "लालास्राव जनक" भी कहते हैं। यूनानी वैद्यक में इसे "मुदिर्रलोआब दहन" कहते हैं।

२. इसको "लालाप्रसेकापनयन" भी कहते हैं। यूनानी वैद्यक में इसे "मानेआत लोआब-दहन" कहते हैं।

(२) परिस्वतन्त्रनाड्यग्रों (Parasympathetic endings) को निष्क्रिय (Paralyse) करके—यथा अट्रोपीन।

अफीम तथा मॉर्फीन भी स्रावी नाड़ी-केन्द्रों की उत्तेजनशीलता (Excitability) को कम करने के कारण लालास्राव निरोधक प्रभाव करते हैं।

आमाशय पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

(Drugs acting on the Stomach)

खाया हुआ भोजन कण्ठ एवं अन्नमार्ग (Oesophagus) से होता हुआ आमाशय में पहुँचता है। वहाँ यह कई घण्टे तक ठहरता है, तथा आमाशय के पाचक रसों की क्रिया एवं इसकी आकुञ्चनगति से यह तरल या अर्ध-तरल (Semi-liquid) रूप में परिणत किया जाता है। जब तक आहार आमाशय में रहता है, इसकी पेशियों में समय-समय पर आकुञ्चन होता रहता है, जिससे आहार में परस्पर यांत्रिक रगड़ होने से घन भाग क्रमशः पिसकर द्रवीभूत होता रहता है। इसी बीच में मुद्रिका द्वार (Pyloric orifice) भी कभी-कभी खुलता रहता है, जिससे आमाशयस्थ द्रवांश ग्रहणी में पहुँचता रहता है। निश्चित कालान्तर से मुद्रिका द्वार पूर्णतः शिथिल होकर खुल जाता है, जिससे आमाशयस्थ सम्पूर्ण आहार-रस ग्रहणी में पहुँच जाता है। इसके बाद इस आमाशय-मुद्रिका द्वार के सूत्रों में तीव्र आकुञ्चन होकर यह पूर्णतः बन्द हो जाता है, जिससे ग्रहणी एवं आमाशय में कोई आदान-प्रदान नहीं हो सकता। इस द्वार के कारण आमाशय से केवल द्रवांश ही ग्रहणी में पहुँचता है और घन अंश नहीं पहुँचने पाते। प्रत्याक्षिप्त क्रिया (Reflex action) द्वारा इस द्वार का नियंत्रण होता है। जब आहार का पाचन एक निश्चित अंश तक आमाशय में हो जाता है, तो प्रत्याक्षिप्त प्रभाव से मुद्रिका द्वार पूर्णतः खुल जाता है। इस द्वारजन्य अवरोध से एक लाभ और होता है, कि आहार रस का पर्याप्त द्रवीभवन हो जाता तथा यह ग्रहणी में जाने के योग्य हो जाता है।

आमाशय की गति का नियंत्रण भी परिस्वतन्त्र (Parasympathetic) एवं स्वतन्त्र (Sympathetic) नाड़ियों द्वारा होता है। इसकी परिस्वतन्त्र नाड़ी दशमी मूर्धजा नाड़ी अर्थात् प्राणदा (Vagus) है, जो आमाशय की प्रचेष्टनी (Augmentor) नाड़ी है। स्वतन्त्रनाड़ी आशयिक नाड़ियों (Splanchnics) की शाखायें होती हैं, जो मुद्रिकाद्वार को छोड़कर आमाशय की गति-निरोधक (Inhibitor) नाड़ी है। अतएव इसकी उत्तेजना से आमाशय की गति का निरोध होता है, जिससे यह शिथिल हो जाता है। किन्तु मुद्रिका द्वार की यह गति-प्रवर्तक नाड़ी है। उपरोक्त वर्णन से यह सारांश निकला कि समस्त परिस्वतन्त्रनाड्योत्तेजक द्रव्य (Parasympathetic stimulants) आमाशय की गति में तीव्रता तथा इसके विपरीत एड्रिनेलीन आदि स्वतन्त्रनाड्योत्तेजक द्रव्य (Sympathetic stimulants) आमाशय के गति का निरोध करते हैं। इसके अतिरिक्त आमाशय की क्रिया बहुत कुछ स्वयम्भू (Autonomic) स्वरूप की भी है, जिससे बाह्य नाड़ियों का विच्छेद हो जाने पर भी रसस्राव तथा आकुंचन आदि आमाशय के आवश्यक गुण-कर्म होते देखे जाते हैं।

१—आमाशयिक रस के स्राव में वृद्धि करनेवाली (आमाशयरसवर्धक) औषधियाँ—(अ) रसनेन्द्रिय की रसग्राहा नाड़ियों पर उत्तेजक प्रभाव करने से प्रत्याक्षिप्तरूपेण

आमाशयिक रस के स्राव में वृद्धि करनेवाली औषधियाँ—इस प्रकार स्राववृद्धि होती है, उसे **मानसिक उद्रेचन** (Psychic Secretion) कहते हैं। जो द्रव्य जिह्वा के रसाङ्कुरों (Gastatory endings) पर उत्तेजक प्रभाव करते हैं, जिससे आहार में रुचि पैदा होती है, वे आमाशयिक रस के स्राव में भी उत्तेजक प्रभाव करते हैं। स्वादिष्ट भोजन, मसाले (Condiments) तथा मद्यादि इसी प्रकार के द्रव्य हैं। भोजन के पूर्व तिक्त (Bitters) तथा सौगन्धिक द्रव्यों (Aromatics) से भी इसी प्रकार आमाशयिक रस का मानसिक उद्रेचन होता है। (२) **आमाशयस्थ प्राणदा नाड्यग्रों की उत्तेजना से**—पाइलोकार्पाइन, एसेटिल कोलीन तथा मुस्करीन आदि; किन्तु चिकित्सार्थ प्रायः इनका व्यवहार नहीं होता। (३) **आमाशय गात्र (Fundus) की श्लैष्मिक कला पर प्रत्यक्ष उत्तेजक प्रभाव पड़ने से**—पेय आहारद्रव्य में अल्कोहल का सन्केन्द्रण ५ प्रतिशत से अधिक होने पर आमाशय गात्र की श्लैष्मिक कला पर प्रत्यक्ष उत्तेजक प्रभाव पड़ने से आमाशयिक रस का स्राव अधिक होता है। (४) **मुद्रिका द्वार (Pylorus) की उत्तेजना द्वारा**—अन्तः स्रावों के द्वारा कतिपय रासायनिक द्रव्यों के द्वारा मुद्रिका द्वार पर उत्तेजक प्रभाव पड़ने से भी आमाशयिक रस में वृद्धि होती है। (५) **क्षार**—आहार के पूर्व क्षारों का सेवन करने से भी आमाशयिक रस के स्राव में अधिकता हो जाती है।

(२) **आमाशयिक रस-ह्रासक (आमाशयरसापनयन) द्रव्य**—कभी-कभी आमाशयिक रस का उद्रेचन आवश्यकता से अधिक मात्रा में होता है, अथवा उसमें हाइड्रोक्लोरिक एसिड असाधारण मात्रा में (Hyperchlorhydria) वर्तमान होता है। दोनों स्थितियाँ वैकृतिक अतएव अभीष्ट नहीं। ऐसी परिस्थिति में इनको कम करना पड़ता है। निम्न द्रव्य आमाशयिक रसोद्रेचन में कमी करते हैं, यथा (१) **ग्राही द्रव्य (Astringents)**—जैसे **धात्वीय लवण, अहिफेन** तथा टैनिन (Tannin) युक्त पदार्थ। ये आमाशयिक रक्तसंचार में कमी करते हैं, जिससे आमाशयिक रस में भी कमी हो जाती है। (२) **अट्रोपीन**—यह आमाशयस्थ स्रावी प्राणदा-नाड्यग्रों को निष्क्रिय करने के कारण आमाशयिक रसोद्रेचन पर भी अवरोधक प्रभाव करता है; (३) **स्थिर तैल तथा वसा**; (४) **क्षार (Alkalies)**—कतिपय प्रकार के अग्निमांद्य (Dyspepsia) में लेक्टिक एसिड (दुग्धाम्ल) एवं मेदसाम्लों (Fatty acids) द्वारा अम्लताधिक्य (Excessive acidity) के निवारण के लिए **क्षारों का प्रयोग** बहुत अधिक किया जाता है; (५) आमाशयगात्र (Fundus) पर प्रत्यक्षक्रिया- आमाशयगात्र पर क्षोभक प्रभाव पड़ने से पहले तो आमाशयिक रस में वृद्धि होती है किन्तु बाद में कमी हो जाती है। इसके अतिरिक्त अत्यधिक मानसिक उत्तेजनशीलता (Excitement), उग्र मनोवेग (Violent emotion) तथा चिन्ता से भी आमशायिक रस की कमी हो जाती है। चिन्ताग्रस्त व्यक्तियों में पाचन की गड़बड़ी एवं तत्परिणाम स्वरूप शारीरिक क्षीणता प्रायः व्यवहार में देखने में आती है। अधिक बर्फ के पानी से सेवन से भी आमाशयिक स्राव में कमी हो जाती है। अतएत भोजन के ठीक पूर्व या भोजन करते समय अत्यधिक बर्फ का पानी पीना स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है।

३—**आमाशयिकरस (जाठरिक रस) के संगठन या संघटन (Composition) मेंरूपान्तर करने वाली औषधियाँ**—जाठरिक रस के परिमाणगत रूपान्तर की मुख्य मुख्य

को कम करते हैं। कोकेन, हायड्रोसायनिक एसिड एवं क्लोरेटोन तथा क्लोरोफार्म आमाशय में पहुँचकर सांवेदनिक नाड्यग्रों (Sensory endings) पर अवसादक प्रभाव करते हैं और परिणामतः प्रत्याक्षिप्तजनित अत्यधिक आमाशयिक गति का संशमन करते हैं।

आमाशय में क्षोभक द्रव्यों के विलयन (Irritant Solutions) की क्रिया से आमाशय का मुद्रिका द्वार (Pylorus) बन्द होता जाता है। वामक द्रव्यों (Emetics) के प्रयोग में इसी प्रकार वमन की क्रिया होती है। क्षोभक आहार द्रव्यों के सेवन में भी ऐसी ही स्थिति होती है। क्योंकि ऐसी स्थिति में शरीर द्वारा ऐसे हानिकारक आहार के उत्सर्गित करने की नैसर्गिक प्रतिक्रिया आमाशय द्वारा होती है। ग्रहणी में अम्ल की उपस्थिति होने पर प्रत्याक्षिप्तरूपेण मुद्रिका द्वार बन्द हो जाता है और जब तक ग्रहणीगत आहार रस की प्रतिक्रिया क्षारीय नहीं हो जाती, ऐसी ही स्थिति बनी रहती है।

५—वातानुलोमन द्रव्य (Carminatives)—इस प्रकार के द्रव्यों की क्रिया निम्न प्रकार से होती है :—(१) अन्न की पुरस्सरणगति में उत्तेजक प्रभाव करने के कारण; (२) आमाशय के हार्दिक द्वार (Cardiac Sphincter) या मुद्रिका द्वार (Pyloric Sphincter) का विस्फारण करने से तथा पेशियों एवं नाड़िसूत्रों की उत्तेजना के कारण। सभी उत्पत् तैल (Volatile Oils) उत्तम वातानुलोमन होते हैं। सौगन्धिक द्रव्य (Aromatics) तथा सौगन्धिक तिक्तद्रव्य (Aromatic bitters), कपूर, पिपरमिंट मेंथाल तथा प्रासवों (Spirits) का भी प्रयोग वातानुलोमन के रूप में किया जाता है।

वामक औषधियाँ (Emetics)।

वमन एक जटिल क्रिया है, जिसके उत्पादन में अनेक अंगों को कार्य करना पड़ता है। इनमें प्रधान दो वस्तुयें हैं। एक तो वमनकेन्द्र (Vomiting centre) जो सुषुम्नाशीर्ष में स्थित है, दूसरे बहिर्जनित विभिन्न आवेग (Stimuli) जो केन्द्र को पहुँचते हैं। मस्तिष्कगत रक्तपरिभ्रमण में विकृति होने से (रक्ताल्पता होने से), अथवा यान्त्रिक (Mechanical) एवं रासायनिक आवेगों (Chemical stimuli) -- यथा अर्बुद, मस्तिष्कावरणशोथ एवं मूत्रविषमयता (Uraemia) आदि से दबाव पड़ना—से वमन केन्द्र प्रत्यक्षतया (Directly) उत्तेजित हो सकता है। प्रत्यक्ष कारणों के अतिरिक्त अनेकानेक कारणों से अप्रत्यक्षतया भी केन्द्र उत्तेजित हो सकता है, यथा विभिन्न अरुचिकर संवेदनायें (Unpleasant sensations), मनोव्यावृत्ति जनक दृश्य (Repulsive sight), दुर्गन्धि, तीव्रवेदना, (यथा वृक्क-शूल आदि), (सामुद्रिकउत्क्लेश) तथा कतिपय औषधियाँ एवं विष आदि।

जो औषधियाँ वमन कराती हैं, उन्हें वामक या इमेटिक द्रव्य[1] (Emetic) कहते हैं। वमन के साथ साथ एक लक्षणसमूह पूर्वरूप के रूप में अथवा वमन के समय प्रगट होते हैं, यथा उत्क्लेश (Nausea), लालाप्रसेक (Salivation), प्रस्वेद तथा वायुमार्ग एवं अन्ननलिका (Oesophagus) से श्लेष्मप्रसेक होना। नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है तथा श्वसन भी अनियमित रूप से चलने लगता है। वमन के समय आमाशय का हार्दिक द्वार

---

१. आर्यवैद्यक (आयुर्वेद) में ऐसे द्रव्य को "वमन", "ऊर्ध्वभागहर", "छर्दनीय", "वमनकर (कारक) आदि कहते हैं। यूनानी वैद्यक में इसे "मुक़ई" कहते हैं।

(Central) सामुद्रिक उत्क्लेश (Sea-sickness), गर्भावस्था का वमन, तथा मूत्राश्मरी एवं पित्ताश्मरी के पुरस्सरणगति के कारण उत्पन्न वमन केन्द्रीय प्रभाव द्वारा होते हैं। केन्द्रीय प्रभाव द्वारा वमन का निवारण अपेक्षाकृत कष्टसाध्य होता है। ऐसी अवस्था में वही औषधियाँ कार्य करती हैं, जो वमन केन्द्र पर अपना प्रभाव करती हैं। अट्रोपीन, ब्रोमाइड्स तथा क्लोरल-हाइड्रेट एवं क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine) इसी प्रकार कार्य करते हैं। एमिल नाइट्राइट तथा नाइट्रोग्लिसिरिन भी कभी कभी वमन-निवारण में सहायक होते हैं। अल्प मात्रा में एड्रीनेलीन, अल्कोहल, कैलोमेल, बिन्दु मात्रा (Drop doses) में टिंचर आयोडीन तथा टिंचर इपेकाक, हायड्रोसायनिक एसिड डायल्यूट, कार्बोनिक एसिड, सीरियम आक्जलेट (Cerium oxalate), कोकेन, क्लारब्यूटोल, क्रियाजोट, बरफ तथा उष्णजल वमननिवारक द्रव्य हैं। बिस्मथ तथा केओलीन भी वमन निवारक प्रभाव करते हैं, किन्तु इनका कार्य यान्त्रिक रूप से होता है। ये आमाशय की श्लैष्मिक कला पर आवरण सा बना देते हैं। पेरीडॉक्सीन हायड्रोक्लोराइड (Peridoxine hydrochloride) का प्रयोग गर्भवती के वमन (Vomiting of Pregnancy) में बहुत उपयोगी होता है। विकिरण-चिकित्साजन्य वमन (Radiation sickness) में भी यह उपयोगी पाया जाता है। हायोसीन एवं डाइमेन-हाइड्रिनेट (Dimenhydrinate) सामुद्रिक उल्लास तथा वमन (Sea sickness) एवं हवाई-उत्क्लेश (हवाई जहाज पर होने वाले वमन Air sickness) में विशिष्ट रूप से उपयोगी सिद्ध होते हैं।

आन्त्र पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।
(Drugs acting on the Intestine)

आमाशय में अन्न का पाचन हो चुकने पर अन्नरस (Chyme) जो कि प्रतिक्रिया में अम्ल होता है, बूंद-बूंद करके ग्रहणी में प्रविष्ट होता है। ग्रहणी में इसकी उपस्थिति होने पर एक अन्तःस्राव (Hormone) की उत्पत्ति होती है, जो पित्ताशय पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे पित्ताशय संकुचित होता तथा पित्त का ग्रहणी में उत्सर्ग होता है। पित्त अम्लों का पुनः शोषण होकर उनके प्रभाव से सुस्रावी या उदासर्गी (सिक्रेटिन Secretin) नामक अन्तःस्राव की उत्पत्ति होती है, जिससे पित्त एवं अग्न्याशयिकरस दोनों के उत्सर्ग में उत्तेजना प्राप्त होती है। इस प्रकार आँतों में अन्नरस पित्त, अग्न्याशयिक रस एवं आंत्रिकरस आदि पाचकस्रावों द्वारा पुनः और भी पाचित किया जाता है। इस प्रकार पाचित एवं द्रवीभूत अन्नरस से जलविलेय पोषकांश पयस्विनियों (Lacteals) एवं प्रतिहारिणी महाशिरा की सूक्ष्म प्रशाखाओं द्वारा शोषित होता रहता तथा शेषांश आंतों में पुरस्सरण गति द्वारा अग्रसर होता जाता है।

आंतों में ४ प्रकार की गतियाँ यथा दोलायमान (Pendulum), तालबद्ध (Rhythmic), विखण्डन (Segmentation) तथा पुरस्सरण (Peristaltic) और कृमि-सम या सरीसृप-सम (Vermiform) होती हैं। दोलायमान गति (Pendulum movement) का तात्पर्य आंत्रभित्तिगत अनुलम्ब (Longitudinal) पेशियों के तालबद्ध एवं स्वजनित (Spontaneous) आकुञ्चन (Contraction) एवं शिथिलीभवन (Relaxation) गति से है। इससे आहारद्रव्य की गति क्रमशः पुरः पश्चिम को होती है, अर्थात् एक

कर यह आगे की ओर धकेला जाता है तथा बाद में पीछे की ओर। तालबद्धविखण्डन गति से आहार के सूक्ष्मकण एवं रसपाचन मिश्रण में सहायता मिलती है। यह आन्त्रभित्ति मंडलाकार पेशी सूत्रों (Circular muscle) जनित स्थानिक गतियाँ होती हैं, जो तालबद्धता के साथ प्रायः उन-उन स्थानों में होती हैं, जहाँ आहार के टुकड़े अंशों में रुक जाते हैं, तथा उनके दबाव के कारण उस स्थान में आन्त्रनलिका कुछ विस्तारित (Distended) हो जाती है। इस गति के द्वारा आहार स्थानिक स्रवण से पाचक रस अच्छी तरह मिल जाता एवं द्रवीभूत होकर पुरःसरण गति द्वारा अग्रसर होने के योग्य हो जाता है। पुरःसरणगति का प्रत्येक ३–४ मिनट के बाद दौरा सा होता है, जिसकी लहर आन्त्र के एक छोर से दूसरे छोर तक चली जाती है। इस गति के द्वारा आहार रस पुरःसरण करता हुआ मलाशय (Rectum) तक पहुँचाया जाता है, जहाँ यह संचित होता रहता है और मलोत्सर्ग क्रिया के समय उत्सर्गित किया जाता है। इस क्रिया का नियंत्रण स्वतंत्र नाड़ीमण्डल के नाड़ीजालकों द्वारा होता है, जो आन्त्र भित्तियों में फैले रहते हैं। इनके प्रभाव से आंत्रभित्ति के कुण्डलाकारसूत्र, जहाँ आहार होता है, उसके नीचे तो विस्फारित तथा ऊपर संकुचित होते हैं। इस प्रकार आहार स्वभावतः उत्पन्न पुरःसरणगति द्वारा आगे बढ़ता जाता है। प्रत्यावर्तनस्पंदन, दबाव होने पर तथा रासायनिक उत्तेजनाओं (Chemical Stimuli) द्वारा इन वलयाकार सूत्रों की गति पर उत्तेजक प्रभाव होता है। कृमिसमगति (Vermiform movement) अनियमित रूप से होती है। यह गति विशेषतः बृहदंत्र (Colon) में पाई जाती है।

आंतों में प्रचूषण (Absorption) का कार्य आस्तृति (Osmosis) एवं प्रसृति (Diffusion) की भौतिक प्रक्रियाओं द्वारा सम्पन्न होता है। इसी प्रकार निस्सरण (Excretion) कुछ तो आस्तृति के द्वारा तथा कुछ आंत्रिक ग्रंथियों के द्वारा होता है, जो आंत्रिक रस (Succus entericus) का परिस्रवण करती हैं। उक्त आस्तृतीय एवं प्रसृतीय के परिणामस्वरूप आंतों में द्रवत्व का उत्सर्ग अधिक मात्रा में होता है, जिससे प्रचूषण (Absorption) की क्रिया रुक जाती है; और फलतः ग्रहणी एवं अंत्रगत आहार द्रव के रूप में बना रहता है।

आंतों में प्रचूषण (Absorption) की क्रिया भी भिन्न भिन्न गति से होती है। [illegible] एवं मेदगर्भित (Lipoids) में विलेय नहीं होता, उनका शोषण [illegible] नहीं होता। [illegible] शीघ्रतापूर्वक प्रचूषित हो जाते हैं, यद्यपि मेदगर्भ-विलेयांश, [illegible] की अपेक्षा [illegible] से शोषित होते हैं। प्रचूषण का कार्य प्रधानतः क्षुद्रांत्र में होता है। [illegible] (Water-Soluble substances) की शोषणगति प्रसृति की [illegible] पर निर्भर करती है, [illegible] अणुओं (Molecules) के आकार-प्रकार पर निर्भर होती है। [illegible] (Colloidal) स्वरूप के द्रव्यों तथा प्रोटीन तथा स्टार्च आदि का [illegible], किन्तु [illegible] द्रव्य एवं क्षारोद (Alkaloids) जो कि अर्ध-[illegible] हैं, शीघ्रतापूर्वक प्रचूषित हो जाते हैं।

[illegible] में प्रचूषण की शक्ति क्षुद्रांत्र की अपेक्षा बहुत कम होती है। केवल शर्करा तथा लवणों (Salts) का शोषण बृहदंत्र में सुगमतापूर्वक हो सकता है। यद्यपि जिन औषधियों का [illegible] है, गुदमार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर बृहदंत्र द्वारा भी हो सकता है,

किन्तु अपेक्षाकृत बहुत मन्दगति से होता है। किन्तु जिन द्रव्यों के शोषण के लिए आन्त्रगत विभिन्न पाचकरसों की क्रिया की अपेक्षा होती है, उनका प्रचूषण गुदद्वारा प्रयुक्त होने पर बृहदंत्र द्वारा नहीं हो सकता। फिर भी अनेक औषधियाँ ऐसी हैं, जिनका प्रभाव गुदमार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर क्षिप्रता एवं तीव्रता के साथ प्रगट होता है।

अन्त्र के पेशीसूत्रों की क्रिया का नियन्त्रण दो प्रकार की नाड़ियों, यथा स्वतन्त्र(Sympathetic) एवं परिस्वतन्त्र (parasympathetic) के द्वारा होता है। इनमें दोनों की क्रिया एक दूसरे के प्रत्यनीक होती है। स्वतन्त्र नाड़ी प्रशाखायें आशयिक नाड़ियों (Splanchnic nerves) द्वारा तथा परिस्वतंत्र प्रशाखायें प्राणदा नाड़ी (Vagus) द्वारा प्राप्त होती है। इसमें स्वतन्त्र नाड़ी की उत्तेजना (Stimulation) से क्षुद्रांत्र-उण्डुक द्वार (Ileocaecal valve) अन्तः गुद द्वार एवं अन्त्र भित्ति के पेशीसूत्रों (Muscularis mucosae) को छोड़कर शेषांश पर अवरोधक प्रभाव होता है। प्राणदा की शाखा प्रशाखायें आन्त्रों की गति प्रवर्त्तक नाड़ियाँ हैं। इसकी उत्तेजना से अन्त्र की क्रिया में शक्ति मिलतीहै तथा इसकी गतियाँ प्रवृद्ध हो जाती हैं, किन्तु विभिन्न द्वारों (Sphincters) पर शैथिल्यजनक प्रभाव होता है। अन्त्र पुरःसरण गति पर प्रायः नाड़ी-आवेगों का विशेष नियन्त्रण नहीं होता। यह एक प्रकार से स्वयम् गति है। ऑरबेक्स प्लेक्सस जो कि आन्त्रभित्ति में दोनों स्तरों के (अनुलम्ब एवं वृत्ताकार पेशी सूत्रों के) अन्तरमध्य फैले हुए हैं, आन्त्रों के उत्तेजक नाड़ी कन्दाणु इन्हीं में स्थित होते हैं। यह परिस्वतन्त्र नाड़ी मण्डल का ही एक भाग है। प्राणदा की शाखायें प्रायः सम्पूर्ण क्षुद्रांत्र एवं बृहदन्त्र के उर्ध्वभाग का तथा कटीय नाड़ियों (Pelvic nerve) की प्रशाखायें गुदतक शेष सभी बृहदंत्र का नियंत्रण करती हैं। यह अधः परिस्वतंत्र मण्डल (Lower or Sacral Parasympathetic system) से सम्बन्धित होती हैं।

आन्त्र की गतियों पर विभिन्न औषधियों का प्रभाव नाड़ियों द्वारा अथवा श्लैष्मिक कला पर क्षोभक प्रभाव करने के कारण होता है, यथा क्षोभक रेचन (Irritant purgatives)।

(१) **आंत्रगतिवर्धक प्रक्रियायें**– (१) परिस्वतन्त्र नाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने से, यथा **पाइलोकार्पीन, फिजियॉ स्टिग्मीन, नियॉस्टिग्मीन, कार्बेकोल** तथा **एसेटिलकोलीन** आदि। (२) आन्त्रपेशियों पर प्रत्यक्ष प्रभाव द्वारा कार्य करने वाली औषधियाँ यथा, **पिच्युट्रीन, सीस, बेरियम लवण** तथा **हिस्टामीन**। **स्ट्रिक्नीन** भी पेशियोपरिप्र भाव द्वारा आन्त्र की गति में वृद्धि करता है, किंतु इसकी क्रिया सरणि किंचित् भिन्न है। यह प्रत्याक्षिप्तरूपेण ऑरबेक्स प्लेक्सस की उत्तेजनशीलता में वृद्धि करके आन्त्रपेशियों पर उत्तेजक प्रभाव करता है।

(२) **आंत्रगति निरोधक अवस्थायें**–निम्न औषधियाँ आंत्रगतिपर अवसादक एवं निरोधक प्रभाव करती हैं ; (१) **निकोटीन**–यह स्वतन्त्र नाड़ी कन्दिकाओं को उत्तेजित करता है ; (२) एड्रीनेलीन तथा इफेड्रीन–ये स्वतन्त्र नाड्यग्रों को अवसादित करते हैं ; (३) **एट्रोपीन** तथा **हायोसीन** ये परिस्वतन्त्र नाड्यग्रों को अवसादित करते हैं ; (४) पेपेवरीन, बेंजिलबेंजोएट, पेथीडीन, नाइट्राइट्स, उत्पत् तैल क्लोरोफार्म– ये पेशियों पर स्थानिक प्रभाव द्वारा अपना कार्य करती हैं ; (५) बिस्मथ के लवण तथा कैलसियम् एवं केओलिन–ये यान्त्रिक रूप से रक्षक का कार्य करते हैं। इन्हे **आन्त्रोद्वेष्ठहर** (Intestinal antispasmodic) भी कहते हैं।

आन्त्रशूल (Colic) में आन्त्र की गति अत्यंत तीव्रतापूर्वक एवं अनियमित रूप से

होने लगती है। बेलाडोना, ओपियम् तथा पेथीडीन इसका निवारण करते हैं। बेलाडोना को बहुधा रेचक औषधियों के साथ मिलाकर प्रयुक्त करते हैं; इससे आन्त्र की अनियमित गति एवं मरोड़ का निवारण होता है। संज्ञाहर द्रव्यों के प्रभाव से एवं स्वतन्त्रनाड़ियों के प्रत्याक्षिप्त प्रभाव से भी आंत्रगति का निरोध होता है। उदर में शस्त्र कर्म (Abdominal operation) करने पर भी थोड़े समय के लिए आंतें निष्क्रियसी (Intestinal paresis) हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में पिच्युटरी एक्स्ट्रैक्ट, नियोस्टिग्मीन तथा फिजियॉस्टिग्मीन आदि औषधियों का प्रयोग उपयोगी होता है।

आँतों में जीवाणुवृद्धिरोधक प्रभाव करने वाले द्रव्य (Intestinal Antiseptics) विकारी-जीवाणुओं द्वारा महास्रोतस् के आक्रांत होनेपर इनका अधिकतम प्रभाव क्षुद्रांत्र के अन्तिम भाग तथा बृहदन्त्र पर होता है। अतएव आंत्रों को विशोधन (Disinfection) में विशेषतः उक्तभागों का विशोधन ही लक्ष्यभूत होता है। उपसर्ग (Infection) का प्रभाव या तो अंत्र की भित्तियों में होता है, अथवा अंत्रगत आहारद्रव्य में हो सकता है। एक उत्तम एवं ग्राह्य अंत्रविशोधक (Intestinal disinfectant) द्रव्य में निम्न गुण होने चाहिए—(१) आंतों द्वारा प्रचूषित हो जाने पर भी कम से कम विषाक्त प्रभाव करने वाला होना चाहिए; (२) क्षारीय माध्यम (Alkaline medium) एवं सेन्द्रिय द्रव्यों (Organic matter) की उपस्थिति में कार्य कर होना चाहिए; (३) आमाशय एवं अंत्र के ऊर्ध्वभाग में नष्ट नहीं होना चाहिए तथा अंत्र की श्लैष्मिक कला पर विनाशक प्रभाव नहीं करने वाला होना चाहिए तथा जो (४) अंत्र की श्लैष्मिक कला में जो नैसर्गिक जीवाणुनाशक गुण है, उसको विकृत न करता हो। अंत्र विशोधक के रूप में सेलिसिलिक एसिड, मेन्थॉल, थाइमोल तथा नेफ्थॉल आदि उत्तम द्रव्य समझे जाते हैं। इसके अतिरिक्त केलोमल का भी प्रयोग इस रूप में किया जाता है। जीवाणु-वृद्धि रोधक के साथ-साथ जो द्रव्य आंतों में अधिशोषण कार्य भी करते हैं, ऐसे द्रव्य अधिक उपयुक्त एवं उपयोगी समझे जाते हैं, यथा केओलिन, एलुमिनम् हाइड्रॉक्साइड, चारकोल (Charcoal) एवं मैगनेसियम् ट्राइसिलिकेट आदि। विसूचिका (कालरा-हैजा) में उक्त जीवाणु वृद्धिरोधक अधिशोषक द्रव्यों का प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। बृहदन्त्र के विशोधन के लिए एन्टिसेप्टिक द्रव्यों के विलयन से धावन (Irrigation) करने से बहुत लाभ होता है।

आजकल महास्रोतस् के विशोधन का कार्य मुख्यतः सल्फाग्विनीडीन, सल्फाथेलिडीन एवं सल्फाथायजॉल आदि सल्फा-औषधियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है। अधुना बाजार में एतदर्थ अनेक संश्लिष्ट योग उपलब्ध हैं।

मुख द्वारा अथवा इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर स्ट्रेप्टोमाइसिन, टेट्रासाइक्लिन्स, क्लोरोमाइसेटिन तथा नियोमाइसिटिन आदि एन्टिबायोटिक समुदाय की औषधियाँ भी आँतों में जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) तथा जीवाणुनाशक प्रभाव करती हैं।

रेचन (Purgatives)[1]

परगेटिव्ज (Purgatives), कैथारटिक्स (Cathartics), इवेकुएन्ट्स

[1] आयुर्वेद में इसे "रेचन" "विरेचन" "अधोभागहरम्" और "अनुलोमनीयम्" कहते हैं। यूनानी वैद्यक में इसे "मुसहिल" या "जुल्लाब" कहते हैं।

(Evacuants) या एपीरिएन्ट्स (Aperients) उन औषधियों को कहते हैं, जिनका प्रयोग आंतों से मल विशोधन के लिए किया जाता है। मलोत्सर्ग की क्रिया में निम्न प्रक्रियायें होती हैं, यथा पुरःसरणगति में तीव्रता तथा मलाशय में संकोच होता है। परिणामतः अन्तः गुद द्वार खुल जाता है। रेचक औषधियाँ प्रायः निम्न प्रकार से कार्य करती हैं: (१) अप्रचूष्य (Non-absorbable) द्रव्यों की अधिकता होने से; (२) आंत्रों से जलीयांश का शोषण कम होने से; (३) क्षुद्र एवं बृहदन्त्र पर क्षोभक प्रभाव करने से, क्योंकि इससे प्रत्याक्षित रूपेण अन्त्र की पुरःसरण गति में तीव्रता पैदा हो जाती है; (४) आन्त्रस्थ पेशीसूत्रों एवं आंत्र सम्बन्धी नाड़ियों पर प्रत्यक्ष प्रभाव करने से। अतएव जो औषधी आन्त्र की पुरःसरण गति में तीव्रता पैदा करती है, उससे जलीय विरेचन होता है। क्योंकि इससे मल शीघ्रतापूर्वक मलाशय में पहुँच जाता है तथा द्रवांश का शोषण सम्यग्रूपेण न होने से वह गाढ़ा नहीं होने पाता। दूसरे आन्त्रों में अत्यधिक द्रवांश एकत्रित होने से प्रत्याक्षित रूपेण आन्त्र की पुरःसरण गति तीव्र हो जाती है।

एक उत्तम रेचक औषधि में यह गुण होना चाहिए कि आन्त्रों पर यह अत्यधिक क्षोभक प्रभाव न करे, तथा इसका प्रभाव आंन्त्रों के अतिरिक्त महास्रोत के अन्य अंगों यथा आमाशय आदि पर न पड़े क्योंकि यह अभीष्ट नहीं है। दूसरे इसका शोषण भी अधिक न होने पावे अथवा अत्यन्त मन्द गति से इसका शोषण न हो, ताकि यह सम्पूर्ण आन्त्रों पर अपना प्रभाव पैदा करे। कतिपय रेचक औषधियाँ केवल अपनी स्थिति के कारण यान्त्रिक रूप से (Mechanically) अर्थात् अत्यधिक मात्रा में उपस्थित होने के कारण, रेचक प्रभाव करती हैं। क्योंकि आन्त्र भित्तियों पर दबाव पड़ने से प्रत्याक्षित रूपेण नैसर्गिक रूप से इनके उत्सर्ग की चेष्टा होती है। ऐसी रेचक औषधियाँ आंत्रो में क्षोभक प्रभाव भी नहीं करतीं तथा ये निरुपद्रव होती हैं। अतएव इनका प्रयोग अधिक काल तक भी किया जा सकता है। आदती मलबन्ध (Habitual constipation) की अवस्था में ये विशेष रूप से उपयोगी होती हैं। **अगर-अगर, लिक्विड पाराफिन** इसी प्रकार के रेचक द्रव्य हैं।

तैलीय विरेचन यथा **एरण्ड तैल** (Castor oil) भिन्न प्रकार से अपना कार्य करते हैं। आन्त्रों में पहुंचने पर जब इनके मेदसाम्ल (Fatty acids) वियोजित होकर स्वतन्त्र हो जाते हैं, तब ये क्रियाशील होते हैं। इसी प्रकार **एन्थ्रासीन परगेटिव्ज** इनके मधुमेय-यौगिकों (Glycosidal compounds) के विच्छिन्न होने पर कार्य करते हैं। रालीय रेचक रालों के वियोजित तथा क्षारों एवं पित्त द्वारा विलेय हो जाने पर अपना प्रभाव करते हैं। अतएव **पोडोफिइलम तथा जलापा** आदि रालीय विरेचकों के प्रभाव के लिए नितान्त आवश्यक है।

भिन्न भिन्न रेचक द्रव्य आन्त्र के भिन्न भिन्न अङ्गों पर कार्य करते हैं। **एरण्डतैल क्षुद्रान्त्र पर अपना प्रभाव करता है।** इसी प्रकार **एलुआ** (Aloes) तथा **सनाय** (Senna) **आदि एन्थ्रासीन रेचक औषधियां बृहदन्त्र पर कार्य करती हैं** तथा क्षुद्रान्त्र पर इनका कोई प्रभाव नहीं होता। अतएव इनका प्रभाव विलम्बसे लक्षित होता है। **तीव्रविरेचन** (Drastic purgatives) **क्षुद्रान्त्र एवं बृहदन्त्र दोनों की गति को तीव्र करते हैं।** **मैगनीसियम सल्फेट** के द्वारा क्षुद्रान्त्र से अन्नरस अति शीघ्रता से बृहदन्त्र में पहुँचाया जाता है। कैलोमेल भी क्षुद्रान्त्र एवं बृहदन्त्र दोनों की गति को तीव्र करता है।

कभी-कभी रेचन के प्रयोग के पश्चात्काल में आन्त्रों की क्षणिक दुर्बलता के कारण पुनः विबन्ध हो जाता है एरण्ड तैल तथा रेवन्द चीनी (Rhubarb) में यह उपद्रव विशेष रूप से लक्षित होता है।

कतिपय रेचक औषधियाँ अधस्त्वग् मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर भी रेचक प्रभाव करती हैं। सनाय, एलुआ तथा इन्द्रायण (Colocynth) इसी प्रकार के द्रव्य हैं। यह रेचक प्रभाव विशेषतः इनके आन्त्र में उत्सर्गित होने के कारण होता है। कतिपय द्रव्य अधस्त्वग् मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर आन्त्र सम्बन्धिनी नाड़ियों एवं आन्त्र के पेशी सूत्रों पर विशिष्ट प्रभाव करने के कारण रेचन करते हैं, यथा पिलोकार्पाइन, एसेटिलकोलीन, नियोस्टिग्मीन कारवेकॉल तथा फिजियोस्टिग्मीन आदि। इनकी रेचक क्रिया प्राणदानाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण होती है। इसी प्रकार एपोकोडीन (½ ग्रेन) तथा अर्गोटामाइन आशयिकनाड्यग्रों (स्वतन्त्र नाड्यग्रों) पर अवसादक प्रभाव करने के कारण कभी कभी रेचन भी करते हैं। पिच्युटरी एक्स्ट्रक्ट आन्त्र पेशी सूत्रों पर प्रत्यक्ष प्रभाव करता है। किन्तु ये औषधियाँ व्यवहार में नहीं आतीं।

आमयिक प्रयोग—रेचक औषधियों का प्रयोग निम्नावस्थाओं में किया जाता है—(१) विबन्ध (Constipation) की अवस्था में मलसंचय का शोधन करने के लिए; (२) हृदय, वृक्क एवं यकृत विकार जन्य सर्वाङ्गशोफ (Dropsies) में धातुओं से द्रवांश के अपकर्षण के लिए; (३) ज्वरावस्था में तापक्रम को कम करने के लिए; (४) मस्तिष्कगत रक्तस्राव (Apoplexy) एवं रक्ताधिक्य (Congestion) की अवस्था में रक्तभार को कम करने के लिए; (५) रक्तगत त्याज्य पदार्थों के उत्सर्ग के लिए तथा (६) आहार विषाक्तता (Food poisoning), अन्त्रस्थपूतिभवन एवं अतिसारादि में आन्त्रस्थ प्रकोपक एवं अन्य किसी हानिकर पदार्थ के उत्सर्ग के लिए।

निषिद्धप्रयोगावस्थायें—निम्न अवस्थाओं में रेचक औषधियों का प्रयोग यथासम्भव नहीं करना चाहिए और यदि करे भी तो सतर्कता के साथ :—

(१) औदरिक अङ्गों की शोथावस्था में, यथा उदर्याकला शोथ (Peritonitis) तथा आन्त्रप्रदाह (Enteritis) आदि।

(२) गर्भावस्था एवं मासिकधर्म (Menstruation) के समय, क्योंकि ऐसी अवस्था में गर्भस्राव एवं गर्भपात तथा प्रदर आदि उपद्रवों के उत्पन्न होने की आशङ्का हो सकती है। कम से कम तीव्र विरेचन कदापि न प्रयुक्त करें।

(३) आन्त्रगत रक्तस्राव, अवसन्नता तथा निपात (Collapse) की अवस्थाओं में

(४) आन्त्रावरोध (Intestinal Obstruction) तथा आन्त्रान्त्रप्रवेश (Intussusception) आदि अन्य व्याधियों में।

रेचक औषधियों का वर्गीकरण :—

(अ) आन्त्र में अप्रचूष्य-द्रव्यों की मात्रा बढ़ाकर रेचन कराने वाली औषधियाँ—

(१) लवण-विरेचन (Saline Purgatives)—यह द्रवांश का शोषण नहीं होने देतीं—सोडियम् सल्फेट, सोडियम् फास्फेट, एसिड पोटासियम् टार्ट्रेट, सोडियम् पोटासियम् टार्ट्रेट, मैगनीसियम् सल्फेट मैगनीसियम कार्बोनेट तथा ऑक्साइड।

(२) मृदुसारक (Laxatives)–चोकर युक्त रोटी (Wholemeal Bread), फल, अगर (Agar), इसबगोल (Isuphagul), बेल, ट्रागाकाथ तथा मेथिलसेलिलोज आदि ।

(ब) मार्दवकर रेचक द्रव्य (Emollient Cathartics) जैतून का तेल (Olive Oil), लिक्विड पाराफिन ।

(स) आंतों में क्षोभकप्रभाव करके रेचन कराने वाले या क्षोभक-रेचक द्रव्य (Irritant Cathartics):—

(१) क्षोभक रेचकतेल (Irritant Oil Purgatives)–एरण्ड-तेल (कास्टर-ऑयल), जयपाल का तेल (Croton Oil) ।

(२) एन्थ्रासीन या इमोडिन-रेचक औषधियाँ (Emodin Purgatives)–मुसब्बर(Aloes), रुह्वर्ब (Rhubarb), सनाय (सेन्ना Senna) तथा कास्करासगरेडा (Cascara) आदि ।

(३) रालीय रेचक औषधियाँ (Resinons Purgatives)–सकमुनिया (Ipomoea), जलापा (Jalap), पोडोफिलम् (गिरिपर्पट), इन्द्रायण (Colocynth), कालादाना (Kaladana), एवं त्रिवृत् (Turpeth) आदि ।

(४) अन्य रेचक द्रव्य— पारद के रेचक यौगिक (Mercurials), फिनोलेफ्थलीन, सल्फर (गंधक) ।

(द) अधस्त्वग्मार्ग द्वारा (Hypodermically) प्रयुक्त होने पर रेचक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ :—

पाइलोकार्पीन (Pilocarpine), फिजॉस्टिग्मीन (Physostigmine), नियोस्टिग्मीन (Neostigmine) एवं कार्बेकोल आदि । चिकित्सा व्यवहार में इनका प्रयोग शल्यकर्मोत्तर आंन्त्र-क्रियाघात (Post-operative paralysis of the gut) के निवारण के लिए किया जाता है ।

प्रकरण २

यकृत्पर कार्य करनेवाली औषधियाँ ।

यकृत शरीर में सबसे बड़ी तथा क्रिया की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व की ग्रंथि है । सामान्यकायिक समवर्त्त क्रिया (General metabolism) में यह अनेक महत्त्व की क्रियाओं का सम्पादन करता है । इसकी क्रिया में विकृति होने से शरीरसमवर्त्त-क्रिया का संतुलन भी विकृत हो जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप अनेक शारीरिक विकृतियाँ प्रगट होती हैं । यकृत् सार्वदैहिक रक्तपरिभ्रमण का द्वारपाल है, जो प्रतिदिन सेवन किए हुए अन्न के पाचन एवं प्रचूषण से उत्पन्न हुए नवागत रक्तरस के ऊपर शरीर-हिताहित की दृष्टि से ध्यान देकर आवश्यक संस्कारों के द्वारा उसको शरीर के लिए हितकर बनाता है । यकृत के विविध कार्य होते हैं, जिनका उल्लेख नीचे किया जाता है :—

(१) पित्तोत्पत्ति (Formation of bile)— यकृत का यह कार्य अंशतः स्रावात्मक (Secretory) तथा अंशतः उत्सर्गात्मक (Excretory) है । शरीर में आयुक्षीण होने से अथवा अन्य किसी कारण से नष्ट हुए लालकणों से जो शोणवर्तुलि (Haemoglo-

bin) प्राप्त होती है, उससे यकृत पित्तरागकों (Bile pigments) यथा पित्तरक्ति (Bilirubin) का निर्माण करता तथा अपने बहुकोणीय कोशाओं द्वारा संस्कारित करके इनको स्फटिकाभ (Crystalloid) रूप में परिवर्तित कर देता है। यह उत्सर्गात्मक प्रक्रिया है। यह पित्तरक्ति पित्त के साथ आन्त्रों से उत्सर्गित होता है, किन्तु आहार पाचन में यह विशेष भाग नहीं लेता। जब यकृत इस कार्य का सम्पादन सम्यग्रूपेण नहीं करता तो कामला (Jaundice) रोग प्रगट होता है। यकृत द्वारा पित्ताम्लों का उत्सर्ग, यह यकृत का स्रावात्मक कार्य है। इसका उत्सर्ग पित्त के साथ आंतों में होता है, और प्रधानतः यही आहारपाचन में उपयोगी होता है। आहारगत स्नेहांशों के पाचन एवं प्रचूषण में यह नितान्त आवश्यक होता है। इन अम्लों एवं इनके वियोजित यौगिकों का अंशतः पुनः आंतों द्वारा प्रचूषण होकर यकृत में पहुँचते तथा पुनः पित्त के साथ आंतो में उत्सर्गित होते हैं। यकृत में ये इसके स्रावी कोशाओं पर उत्तेजक प्रभाव करते हैं, अतएव इस प्रकार ये **स्वाभाविक पित्तविरेचक** (Natural Cholagogue) का कार्य करते हैं।

(२) **रक्तसम्बन्धी कार्य**—सेन्द्रिय लौह का संग्रह तथा उससे पुनः शोणवर्तुलि का निर्माण करता तथा इस प्रकार लौहसंवर्त (Iron metabolism) में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। आहारगत बहिर्द्रव्य (Extrinsic factor) तथा आमाशयिकरसगत अन्तर्द्रव्य (Intrinsic factor) की परस्पर क्रिया के परिणाम स्वरूप शोणितिक द्रव्य (Antianaemic factor) उत्पन्न होता है। किन्तु इसका संग्रह यकृत में होता है और रक्तकणों के परिपाक हेतु प्रयुक्त होता है। इस प्रकार यकृत का सम्बन्ध रक्तकणों की उत्पत्ति से भी है। क्योंकि अस्थिमज्जा में उत्पन्न होने पर भी बिना परिपक्व हुए शारीरिक क्रिया की दृष्टि से ये बेकार होते हैं। **तन्त्विजन (Fibrinogen) की उत्पत्ति में सहायक होने के कारण रक्तस्कन्दन (Blood coagulation) से भी इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है।** (३) **कर्बोज संवर्त (Carbohydrate Metabolism) का नियासन**—रक्तपरिभ्रमण से शर्करा की अनावश्यक मात्रा को पृथक करके अपने अन्दर मधुजन (Glycogen) के रूप में संचित करता और इस प्रकार रक्तगत शर्करा के मापदण्ड के अभीष्ट स्तरपर बनाये रखने में सहायता करता है। यद्यपि इस क्रिया के सम्पादन में अग्न्याशयिक, उपवृक्कीय एवं चुल्लिका (Thyroid) एवं पीयूषग्रंथि (Pituitary gland) के अन्तः स्रावों का भी सहयोग होता है। (४) **प्रोभुजिन संवर्त (Protein Metabolism) का नियमन**—आहारगत प्रोभुजिन का पाचन होकर आन्त्रों से जब तिक्तीअम्ल (Amino-acids) प्रचूपित होकर यकृत में पहुँचते हैं तो यकृत उनका वियोजन करके उपयोगी अंश को संग्रह करता तथा त्याज्य अंश को निर्विषैले यौगिक के रूप में परिवर्तित करके रक्त में छोड़ देता है। (५) **निर्विषीकरण क्रिया** (Detoxicating functions)— अन्त्रों से प्रचूपित होकर आये हुए अथवा शरीर समवर्त क्रिया के परिणामस्वरूप उत्पन्न विषैले द्रव्यों एवं यौगिकों को रक्तपरिभ्रमण से पृथक करके पुनः उत्सर्गित करता अथवा विषैले यौगिकों को निर्विषैले यौगिक के रूप में परिवर्तित कर देता है। (६) **वसा-समवर्त (Fat Metabolism) नियन्त्रण**—वसाजातीय द्रव्यों के पाचन एवं शोषण में पित्त (Bile) की उपस्थिति बहुत सहायक होती है। इस प्रकार प्रचूपित वसा को लेसिथिन (Lecithin) के रूप में परिवर्तित करता है, जो शारीरिक धातुओं के निर्माण में प्रयुक्त होता है।

पित्तस्राव पर कार्य करनेवाली औषधियाँ—पित्त का स्राव निरन्तर यकृत में हुआ करता है, तथा वहाँ से आकर पित्ताशय में संचित होता रहता है। आहार-पाचन के समय पित्ताशय से बराबर उत्सर्गित होकर ग्रहणी में पहुंचता रहता है। पित्ताशय का संकोच एक तो नाड़ीजन्य, दूसरे अन्तःस्राव (Hormone) जन्य होता है। प्राणदा नाड़ी (परिस्वतंत्र) की उत्तेजना होने से पित्ताशय संकुचित होता तथा पित्तनलिका का ग्रहणीगत द्वार खुल जाता है। इसके विपरीत पित्ताशय सम्बन्धी स्वतंत्रनाड़ियों की उत्तेजना से इसके प्रत्यनीक प्रभाव होता है। आमाशय से जब अम्लप्रतिक्रियायुक्त अन्नरस (Chyme) ग्रहणी में आता है, तो इसके प्रभाव से ग्रहणी में कोलेसिस्टोकिनिन (Cholecystokinin) नामक अन्तःस्राव की उत्पत्ति होती है, जिसके प्रभाव से पित्ताशय संकुचित होता है। अन्त्रों में सिक्रेटिन (Secretin) की उत्पत्ति भी पित्ताशयसंकोच तथा पित्तोत्पत्ति दोनों क्रियाओं पर उत्तेजक प्रभाव करता है। लंघन एवं प्रांगोदेयप्रधान आहार का सेवन करने से पित्तलवणों (Bile salts) का उत्सर्ग अल्प मात्रा में होता है, तथा प्रोभुजिन्प्रधान आहार के सेवन से इसमें वृद्धि हो जाती है। अतएव स्पष्ट है, कि **औषधियों का पित्तविरेचक प्रभाव** अनेक प्रकार से होता है। मल में अधिक मात्रा में पित्त की उपस्थिति मात्र इस बात का द्योतक नहीं है, कि पित्त का स्राव अधिक मात्रा में हो रहा है। पित्ताशय एवं पित्तनलिका से संचित पित्त का उत्सर्ग यकायक अधिक हो जाने तथा आहार के समुचित काल तक ग्रहणी में न रुकने से उसका पुनःशोषण न हो सकने के कारण से भी मल में पित्त की उपस्थिति अधिक मात्रा में हो सकती है। अतएव पित्तविरेचक (Cholagogues) औषधियों का विचार पृथक् २ शीर्षक में करना अधिक उपयुक्त होगा, यथा :—

(१) ऐसी औषधियाँ जो वास्तव में यकृत में पित्त के स्राव में वृद्धि करती हैं, उनको **पित्तजनक** या **पित्तल औषधि** (कोलेरेटिक Choleretic) कहते हैं। वास्तव में पित्त एवं इसमें पाये जानेवाले अम्ल स्वयं उत्तम पित्तविरेचक होते हैं, यथा टॉरोकोलिक (Taurocholic) एवं ग्लाइकोकोलिक (Glycocholic) एसिड, पित्त के योग, डिसॉक्सीकोलिक तथा डिहाइड्रोकोलिक एसिड एवं उनके लवण। इन सबसे पित्त की सकल मात्रा एवं पित्तलवणों के संकेन्द्रण दोनों में वृद्धि होती है। सेलिसिलेट्स भी पित्तजनक होते हैं, किन्तु इनसे मात्रा में तो अवश्य वृद्धि होती है, परन्तु घनघटक, सोप एवं डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड की सकल मात्रा में कमी हो जाती है। पोटासियम् के लवण भी पित्तल (कोलेरेटिक) होते हैं। प्रोभुजिन् प्रधान आहार भी पित्तस्राव में वृद्धि करते हैं। इसके विपरीत प्रांगोदेयप्रधान आहार, अल्कोहल् तथा प्रमीलक द्रव्यों से पित्तस्राव में कमी हो जाती है।

पित्तजनक औषधियों का प्रयोग पित्तस्राव पर उत्तेजक प्रभाव करने के लिए किया जाता है। जब आहार पाचन एवं शोषण में सुधार करना अभीष्ट हो (वसा, स्टेरोल एवं वसाविलेय विटामिन आदि का पाचन एवं शोषण अधिकाधिक मात्रा में हो) तो पित्तलवण का प्रयोग होना चाहिए।

(२) दूसरे वर्ग में वे औषधियाँ आती हैं, जो वास्तव में शुद्ध **पित्तविरेचक, पित्तस्रावी** वा **पित्तसारक या पित्तनिःसारक** (Cholagogue) होती हैं। ये पित्तस्राव में तो वृद्धि नहीं करतीं, अपितु पित्ताशय एवं पित्तनलिका से आंतों में अधिकाधिक मात्रा में पित्त का उत्सर्ग करती हैं। ये अपना कार्य केवल पित्ताशय संकोच पर उत्तेजक प्रभाव करके सम्पादित करती हैं। वसा (Fats),

अंडे की जर्दी, जैतून का तैल तथा एरण्ड तैल पित्ताशयस्थ पित्त के उत्सर्ग में सहायक होते हैं। इसी प्रकार मैगनीसियम् सल्फेट का अतिवल विलयन (३३ प्र० श०) पित्त के निस्सरण में सहायक होता है। गिरिपर्पट (Podophyllum), यूऑनीमस (Euonymus), आईरिडिन, इपेकाकाना, पारद-यौगिक, रेवन्दचीनी, ॲमोनियम् क्लोराइड तथा हिस्टामिन प्रसिद्ध पित्तविरेचक औषधियाँ हैं। भय एवं हर्ष के समय भी मानसिक प्रभाव द्वारा पित्तोद्रेक अधिक होता है।

पित्ताश्मरीघ्न औषधियाँ (Biliary lithontriptics)— जो औषधियाँ पित्ताश्मरी का विलीनीकरण करतीं अथवा उसमें सहायक होतीं हैं, उनको बिलियरी लिथान्ट्रिप्टिक्स (पित्ताश्मरीघ्न) कहते हैं। बैक्टीरियम कोलाई (Bac. Coli), स्ट्रेप्टोकोकस, आन्त्रिक ज्वर का दण्डाणु (Bact. Typhosus) अथवा पाराटायफायड के दण्डाणुओं (Bact. para-typhosus) का उपसर्ग होने से प्रायः पित्ताशयप्रदाह (Cholecystitis) हो जाया करता है। ग्रहणी प्रदाह के पित्तप्रणाली द्वारा ऊपर बढ़ने से भी यह विकार हो सकता है। ऐसी स्थिति में पित्ताश्मरी (Biliary stones) का निर्माण हो जाता है, क्योंकि ऐसी स्थिति में पित्तलवणों की मात्रा में न्यूनता आजाती है, तथा इनके अभाव के कारण पैत्तव (Cholesterol) के यतस्ततः प्रक्षिप्त होने की सम्भावना अधिक रहती है। पित्तलवणों के रहने से यह विलयन के रूप में रहता है। अतएव शोथ के कारण कुछ तो पित्ताशय की दुर्बलता से दूसरे वेदनाजनक प्रत्याक्षिप्त उद्वेष्ट के कारण पित्तोत्सर्ग समुचित रूप से नहीं होता। अतएव पित्तस्तम्भ (Biliary stasis) की स्थिति पित्ताश्मरी के निर्माण में सहायक एवं अनुकूल होती है। ऐसी अवस्था में संशामक (Sedative) औषधियों का प्रयोग होना चाहिए। इस कार्य के लिए वेलाडोना एक उत्तम औषधि है। पित्ताशयप्रदाह में मिथेनामीन (Methenamine) भी एक परमोपयोगी औषधि है। पित्ताश्मरी के द्रावण एवं उत्सर्ग के लिए सोडियम् सेलिसिलेट, एस्पिरिन तथा ऑलिव ऑयल (Olive oil) आदि द्रव्य प्रयुक्त होते हैं।

मधुजन या ग्लाइकोजन पर कार्यकर औषधियाँ (Drugs which influence glycogenolytic function)— निम्न औषधियाँ मधुजनांशनोत्कर्ष (glycolysis) उत्पन्न करने में सहायक होती हैं, यथा एड्रिनेलीन, एफेड्रीन, थायरॉक्सीन (अवटुका ग्रंथिसत्व) तथा ईथर एवं क्लोरोफार्म। उक्त औषधियों के प्रभाव से यकृत में संचित ग्लाइकोजन (मधुजन) वहां से स्थानान्तरित होकर अधिकाधिक मात्रा में रक्त परिभ्रमण में आता है और शर्करामेह की स्थिति उत्पन्न कर देता है। इसके विपरीत इन्सुलिन एवं अंशतः ओपियम् एवं कोडीन आदि शर्करामेह का निवारण करते हैं।

यकृत कोशाओं पर कार्य करने वाली औषधियाँ—कतिपय आहार द्रव्य भी यकृत पर विभिन्न प्रभाव करते हैं, यथा ग्लूकोज, कार्बन टेट्राक्लोराइड के विषाक्त प्रभाव से यकृत की रक्षा करता है। इसी प्रकार प्रांगोदेय प्रधान आहार का सेवन करने से यकृत पर क्लोरोफार्म विषमयता नहीं होती।

यकृत पर विपाक्त प्रभाव करनेवाली औषधियाँ—जैसा पहले वर्णन हो चुका है, कि यकृत का एक कार्य निर्विषीकरण (Detoxication) भी है, और इस गुण के कारण यह द्वारपाल का कार्य करता है। इस प्रकार अन्त्रों से प्रचूषित होकर आये हुए विषाक्त द्रव्यों का पुनः

सामान्यकायिक रक्त परिभ्रमण में जाने के पूर्व यकृत में विभिन्न प्रकार से निर्विषीकरण हो जाता है। इस प्रकार आये हुए विषाक्त द्रव्यों का कभी तो प्रत्यक्ष निर्विषीकरण हो जाता है अथवा कभी कभी संश्लेषण (Synthesis) द्वारा निर्विष यौगिकों में परिणत कर दिया जाता है, अथवा कभी यह वियोजित तथा कभी उत्सर्गित कर दिया जाता है। कभी कभी यकृत इनको ग्रहण करके अपने अन्दर संचित कर लेता है, किन्तु यकृत पर उनका प्रभाव तो पड़ता ही है जिससे कभी कभी नाना प्रकार की विकृतियाँ पैदा हो जाती हैं। सेन्द्रिय (Organic) सोमल के प्रयोग से विषाक्त कामला (Toxic Jaundice) इसी प्रकार पैदा होती है। निम्न द्रव्य यकृत पर विषाक्त प्रभाव करते हैं, यथा गुरु धातु, सोमल, एण्टीमनी, फास्फोरस, सिंकोफेन, कार्बन टेट्राक्लोराइड तथा क्लोरोफार्म, एथिलक्लोराइड, ब्रोमेथॉल आदि संज्ञाहर औषधियाँ (Anaesthetics)।

प्रकरण ३

कृमिघ्न या कृमिहर औषधियाँ (Anthelmintics)—

कभी-कभी मनुष्यों एवं पशुओं में नाना प्रकार के विकारी कृमियों (Worms) का उपसर्ग हो जाता है, जो शरीर में नाना प्रकार की व्याधियों का कारण होता है। जिन औष-धियों का प्रयोग इनको मारने या शरीर से इनका उत्सर्ग करने के लिए किया जाता है, उनको **ऍन्थेल्मिंटिक्स** (Anthelmintics) या **कृमिघ्न**[1]**औषधियाँ** कहते हैं। इनमें कतिपय कृमि आन्त्रप्रणाली में निवास करते, तथा अन्य प्रकार के कृमि शरीरगत धातुओं में अवस्थान करते और सामान्यकायिक उपसर्ग (Somatic infection) पैदा करते हैं। जो औषधियाँ कृमियों पर घातक प्रभाव तो करती हैं, किन्तु उनके उत्सर्ग में विशेष सहायक नहीं होतीं, उनको **कृमिनाशक** (Vermicide) कहते हैं, तथा जो केवल इनका उत्सर्ग करती हैं, चाहे कृमियों पर घातक प्रभाव करें या न करें, उनको **कृमिनिस्सारक** (Vermifuge) कहते हैं। आन्त्रों की तीव्राकुञ्चन गति से भी कृमियों के उत्सर्ग में सहायता मिलती है। अतएव तीव्र विरेचनों (Drastic purgatives) का प्रयोग भी इस कार्य के लिए कभी-कभी विशेष उपयोगी होता है। प्रायः ये कृमि अपने अंकुश (Hooks), चूषक (Suckers) तथा कर्कचाकार किनारों (Serrated margins) के द्वारा आन्त्रों में दृढ़तापूर्वक स्थिर रहते हैं, अतएव उत्सर्ग करने के पूर्व उनको शिथिल करने के लिए कृमिनाशक अथवा उनको संज्ञाहीन करने वाली औषधियों का प्रयोग किया जाता है।

उत्तम कृमिघ्न औषधि में यह गुण होना चाहिए कि, यह आन्त्रस्थ कृमियों पर तो घातक प्रभाव करे, किन्तु उस प्राणी पर कोई विकारी प्रभाव न करे। चूंकि इन औषधियों का प्रयोग कृमियों पर कार्य करने के लक्ष्य से ही किया जाता है। अतएव ये ऐसी होनी चाहिए कि अधि-काधिक मात्रा में इनका प्रयोग सुरक्षितरूपेण किया जासके; अर्थात् विषाक्त प्रभाव न हो। साधारण मात्रा में ये कृमिघ्न प्रभाव करने में अक्षम होती हैं, तथा केवल उनको शिथिल या

---

१. आयुर्वेदमें इन्हें "कृमिप्रशमन" "कृमिसूदन" तथा "कृमिहर" और यूनानी वैद्यकमें "मुखरिजदीदान" तथा "कातिल दीदान" कहते हैं।

चेतनाहीन कर सकती हैं, जिससे किंचित् काल तक रहने पर ये कृमि पुनः जाग्रत हो सकते हैं। इसी कारण से प्रायः कृमिघ्न औषधियाँ प्रयोग करने के पश्चात् रेचन का प्रयोग किया जाता है। इससे औषधियों के शोषण का भी निवारण होता है, जिससे उनके विषाक्तप्रभाव भी नहीं होने पाते। कभी-कभी कृमिघ्न औषधि के प्रयोग के पूर्वदिन भी मृदुरेचन का प्रयोग किया जाता है। कृमिघ्न औषधियों के साथ प्रयुक्त करने के लिए सर्वसाधारणतः मैगनीसियम् सल्फेट एक उत्तम रेचन है। मेलफर्न, थायमोल तथा कार्बन टेट्राक्लोराइड आदि कृमिघ्न औषधियों के साथ तैल विरेचनों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। क्योंकि विरेचक तैल औषधियों के शोषण में सहायक होते हैं, जो अभीष्ट नहीं है। किन्तु ऑयल आव चिनोपोडियम् के साथ विरेचनार्थ एरण्डतैल (Castor Oil) का प्रयोग कर सकते हैं, क्योंकि यह चिनोपोडियम् तैल द्वारा आन्त्रों पर होनेवाले विकारी प्रभाव (Paralysing effect) का निवारण भी करता है। विरेचनार्थ कभी कैलोमल का भी प्रयोग करते हैं, किंतु उसके पश्चात् मैगसल्फ का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर प्रायः सभी कृमिघ्न औषधियाँ आमाशयान्त्र प्रणाली पर क्षोभक (Irritant) प्रभाव करती हैं।

स्फीतकृमि (Tape worm) तथा अंकुशमुखकृमि (Hook worm) के उपसर्ग में औषधिप्रयोग के पूर्वदिन प्रायः लङ्घन कराया जाता है, ताकि अन्त्रों में मलाभाव होने से सम्पूर्ण कृमि सरलता से औषधि के प्रत्यक्ष संसर्ग में आ जाते हैं। किन्तु यह एक तो दुर्बल रोगियों के लिए हानिप्रद है, दूसरे आन्त्रों के रिक्त होने से औषधि के शोषण की भी सम्भावना अधिक रहती है। इसकी उत्तमविधि यह है, कि औषधिप्रयोग के पूर्व दिन सायंकाल लघु आहार (खिचड़ी आदि) तथा रात्रि में विरेचन की एक मात्रा सोते समय दें। प्रातः काल सर्व प्रथम कृमिघ्न औषधि का प्रयोग करें। इसके लिए आवश्यकतानुसार औषधि एक ही मात्रा में, अथवा २–३ मात्राओं में विभक्त करके १–१ घंटे के अन्तर से दी जाती है। अन्तिम मात्रा के २ घंटे के पश्चात् पुनः रेचन की एक मात्रा दी जाती है। सायंकाल विरेचन देने से आन्त्र स्वच्छ हो जाती है, जिससे औषधि का प्रत्यक्ष संसर्ग अधिकाधिक कृमियों से सरलतापूर्वक हो जाता है। रेचनार्थ, मैगनिसियम् सल्फेट, सोडियम् सल्फेट अथवा दोनों का प्रयोग होता है। सेन्टोनिन (Santonin) का प्रभाव नेत्र के दृष्टिपटल (Retina) पर भी पड़ता है, अतएव इसका प्रयोग प्रायः रात्रिमें सोते समय किया जाता है।

अन्यवर्ग में भी तारपीन का तेल, सत अजवायन (Thymol) आदि कतिपय औषधियाँ होती हैं, जो अपने विशिष्ट गुण-कर्म के अतिरिक्त उत्तम कृमिघ्न औषधि भी हैं।

कृमिघ्न औषधियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :—

वर्ग अ—आंत्रिक कृमियों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

१—वृत्तिकाकृमि (नेमाटोड्स Nematodes) पर कार्यकर औषधियाँ :—

(क) गण्डूमुखकृमि या केंचुए (Round-worm) पर कार्य करने वाली औषधियाँ —सेन्टोनिन, ऑयल ऑव चेनोपोडियम्, टेट्राक्लोरेथेलीन, पलाशबीज (Butea seeds), हेक्सीरिसॉर्सिनॉल (Hexylresorcinol) एवं पिपराजीन (Piperazine)

(ख) सूत्रकृमि या चूर्णकृमि (Thread worm) नाशक औषधियाँ :— डायफेनन, क्रिस्टल वायोलेट (Crystal violet), हेक्सीरिसॉर्सिनॉल (Hexylre-

sorcinol), पिपराजीन, तथा फेनोथायजीन आदि। इनका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। एतदर्थ कतिपय औषधियाँ स्थानिक प्रभाव के लिए वस्ति के रूप (Rectal enema) में भी प्रयुक्त होती हैं. यथा कँलम्बा तथा कासिया आदि तिक्त औषधियों (Bitters) का तीव्रबल फाण्ट (Strong infusion), परमबल लवणजल (Hypertonic salt-solution) तथा फेरिकक्लोराइड, टैनिन एवं साबुन तथा तारपीन के तेल का विलयन।

(ग) अंकुशमुख कृमि (Hook-worm : Ancylostoma duodenale तथा Necator Americanus) नाशक औषधियाँ—सत अजवाइन (थायमल Thymol), कार्बनटेट्राक्लोराइड (Carbon tetrachloride), ऑयल ऑव चेनोपोडियम् (चेनोपोडियम या सुगन्धवास्तुक का तैल), टेट्राक्लोरोथेलीन (Tetra-Chloroethylene), हेक्सीरिसार्सिनाल तथा बिटा-नेफ्थॉल (Beta-naphthol)।

(घ) प्रतोदकृमि (Whipworm : Trichuris) नाशक औषधियाँ—हेक्सीरिसॉर्सिनॉल, टेट्राक्लोरोथेलीन एवं ऑयल ऑव चेनोपोडियम् (चेनोपोडियम का तैल) आदि।

(च) स्ट्रांगिल्वायडीज (Strongiloides) नाशक औषधियाँ—क्रिस्टल वायलेट (Crystal violet)।

२—ब्रध्नकृमियों (सेस्टोड्स Cestodes) पर कार्यकर कृमिघ्न द्रव्य :—

स्फीतकृमि (Tape-worm) नाशक औषधियाँ:—मेलफर्न (Male Fern), पेल्लिटिरीन (Pelletierine) टैनेट, काशीफल बीज (Melon pumpkin seeds), कार्बन टेट्राक्लोराइड तथा टेट्राक्लोरोथेलीन।

वर्ग ब : उपसर्गाक्रान्त व्यक्ति के धातुगत कृमियों पर कार्यकर औषधियाँ (Drugs acting on parasites which infest the tissues of the host)—

१—पर्णकृमि (Trematodes) अथवा फ्लूक्स (Flukes) पर क्रियाशील कृमिघ्न द्रव्य :—

(क) बिल्हारजिएसिस (Bilharziasis) में प्रयुक्त औषधियाँ—एन्टीमनी टार्ट्रेट, फोआडीन (Fouadin) एवं इमेटीन।

(ख) फेसिओलोप्सिस बस्काइ (Fasciolopsis buskii) नाशक द्रव्य—थायमोल, बेटानेफ्थॉल, कार्बन टेट्राक्लोराइड।

(ग) यकृतकृमि (Liver fluke : Fasciola hepatica) नाशक औषधियाँ—इमेटीन।

(घ) क्लोनॉर्किस साइनेन्सिस (Chlonorchis Sinensis) नाशक द्रव्य—क्रिस्टल वायोलेट। उक्त कृमि का उपसर्ग प्रायः पित्ताशय एवं पित्तप्रणाली में होता है।

(च) फुफ्फुस-कृमि (Lung fluke : Paragonimus westermanii) नाशक द्रव्य—इमेटीन (Emetine) तथा टारटार इमेटिक (Tartar emetic)।

२—धातुगत वृत्तिकाकृमि (Nematodes) हर द्रव्य—श्लीपदकृमि-उपसर्ग (Filariasis) में प्रयुक्त औषधियाँ—सोडियम् एन्टीमनी टार्ट्रेट, स्टिबोफन फोआदिन (Stibophen : Fouadin), आर्सेनिक, हेट्राजन (Hetrazan) एवं बेनोसाइड (Benocide) डाइ-एथिलकार्बेमेजीन आदि।

प्रकरण ४

रक्त पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

रक्त शरीर का एक परम महत्त्वपूर्ण धातु है। इसके भिन्न-भिन्न घटक (Constituents) शरीर के अनेकानेक महत्त्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करते हैं, जो जीवन-धारण के लिए नितान्त आवश्यक होते हैं। अतएव रक्त-राशि अथवा इसके घटकों की रचना एवं गुणकर्म में विषमता उत्पन्न होने पर तत्काल चिकित्सा की अपेक्षा होती है।

रक्त के लालकण—रक्त के अन्य घटकों की अपेक्षा लालकण विशेष महत्त्व के हैं। इनकी लालिमा शोणवर्तुलि (Haemoglobin) नामक घटक के कारण होती है। शोणवर्तुलि के संगठन में मुख्य उपादान लौह (Iron) होता है। शरीर में सामान्यतः लौह ३–४ ग्राम की मात्रा में पाया जाता है, जिसका लगभग दो-तृतीयांश शोणवर्तुलि के रूप में पाया जाता है। शेष एक तृतीयांश यकृत, प्लीहा तथा शरीर के अन्य धातुओं में स्थित जालकान्तस्तरीय कोशाओं (Reticulo-endothelial cells) द्वारा संग्रहीत किया जाता है। सामान्यतः लालकणों की औसत आयु १२० दिनों की होती है। अतएव प्रतिदिन असंख्य लालकण नष्ट होते रहते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप हमें प्रतिदिन लगभग १०० मिलिग्राम लौह शरीर से ही प्राप्त होता रहता है। यह लौह शरीर के जालकान्तस्तरीय संस्थान की कोशाओं में शोणायस्वि-कणों (Haemosiderin granules) के रूप में संग्रहीत होता है, जो पुनः नये लालकणों की उत्पत्ति में काम आता है। शरीर के ये लालकण हीमोग्लोबिन की मध्यस्थता से जारक या प्राणवायु–संवाहक (Oxygen-carrier) का काम करते हैं अर्थात् शरीर की प्रत्येक धातु एवं कोशा को प्राणवायु पहुँचाते तथा उनके द्वारा मल-स्वरूप परित्यक्त कार्बन–द्विजारेय (CO_2) को शरीर से बाहर फेंकने के लिए फुफ्फुसों में पहुंचाते हैं। इस प्रकार हमने देखा कि लालकण एक परम महत्त्वपूर्ण जैविक-क्रिया (Vital process) का सम्पादन करते हैं। इसी कारण शरीर में इनकी इतनी अधिक संख्या (पुरुष में औसत संख्या प्रति घनमिलिमिटर (c. mm.) ४५–५० लाख तथा स्त्रियों में अपेक्षाकृत कुछ कम) होती है।

लालकणों की संख्या एवं शोणवर्तुलि की मात्रा में कमी होने पर रक्ताल्पता (Anaemia) नामक वैकृतावस्था उत्पन्न होती है। इसी प्रकार कभी-कभी लालकणों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि भी हो जाती है, जिसे बहुकायाणुमयता (Polycythaemia) कहते हैं। कभी-कभी तो यह स्थिति क्षणिक (Temporary) परिस्थिति परिवर्तन के कारण होती है, किन्तु कभी-कभी यह विकृति जनक (Pathogenic) होती तथा तत्काल चिकित्सा अपेक्षित होती है। बहुकायाणुमयता की स्थिति में लालकणों की संख्या ४५–५० लाख से बढ़कर ८० लाख से लेकर १½ करोड़ तक हो जाती है। किन्तु लालकणों के आकारादि में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई देता। लालकणों की यह विकृतिजनक अत्यधिक अभिवृद्धि अस्थि की लालमज्जा (Red bone-marrow) के आक्रान्त होने से होती है। रोगी को दुर्बलता एवं कमजोरी की अनुभूति होती तथा शिरोभ्रम, किसी काम में मन न लगना एवं श्यावोत्कर्ष (Cyanosis) आदि लक्षण प्रगट होते हैं। ऐसी स्थिति में फेनिलहाइड्रेजिन हाइड्रोक्लोराइड (Phenyl hy-

drazine hydrochloride) तथा रेडिओ–एक्टिव फास्फोरस (Radio-active phosphorus) का प्रयोग किया जाता है।

व्यवहार में प्रायः पहली विकृति (अर्थात् लालकणों की संख्या एवं शोणवर्तुलि की मात्रा में कमी) ही बहुधा मिलती है। अतएव चिकित्सा की दृष्टि से विशेष महत्त्व की है। इस रोग (रक्ताल्पता Anaemia) में शोणितवर्द्धक औषधियों (Haematinics) का प्रयोग किया जाता है।

जो औषधियाँ रक्ताल्पता की स्थिति में सुधार करती अर्थात् लालकणों की संख्या एवं शोणवर्तुलि की मात्रा में अभिवृद्धि कर उनको सामान्यावस्था में लाने में सहायता होती हैं, उनको **शोणितक, शोणितवर्द्धक या रक्तवर्द्धक औषधियाँ** (Haematinics) कहते हैं। किन्तु यह स्मरण रहे कि सामान्यावस्था के रक्त में इन रक्तवर्धक औषधियों के प्रयोग से न तो लालकणों की संख्या में ही और न तो शोणवर्तुलि की मात्रा में ही कोई अन्तर पड़ता है। किन्तु चिकित्सा में उक्त सूत्र मात्र से ही शोणितवृद्धि की समस्या हल नहीं होती। इसके लिए रक्त-कणों के उत्पत्ति-चक्र की विभिन्न प्रक्रिया को भली भाँति समझने पर ही शोणितवर्धक औषधियों का समुचित एवं सम्यग्रूपेण प्रयोग सम्भव है।

रक्त के लाल कणों (R. B. C.) की उत्पत्ति अस्थियों की लाल मज्जा में होती है जो सर्व प्रथम बृहदुत्स्फोट (Megaloblast) के रूप में होता तथा तदनु प्रगल्भता की विभिन्न अवस्थाओं से होता हुआ अन्ततः रुधिरकायाणु (Erythrocyte) का रूप प्राप्त कर रक्तपरिभ्रमण में संचार करता है। अपने कार्य के सम्पादन की क्षमता केवल इसी परिपाकावस्था को प्राप्त लालकणों में ही होता है। विटामिन B_{12} जिसे शोणितक (Haematinic) या रक्तक्षयान्तक तत्त्व (Anti-anaemic principle) भी कहते हैं, बृहदुत्स्फोट (Megaloblast) से लेकर रुधिरोत्स्फोट (Erythroblast) तक के रूपान्तर में सहायक होता है। परिपाक की अन्तिम रूपान्तर में **लौह** (Iron) की परम आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त रक्तकणोत्पत्ति में अल्प मात्रा में **ताम्र, थाइरॉक्सीन** (Thyroxine) तथा **विटामिन B** और **विटामिन C** की आवश्यकता होती है। **संखिया** (Arsenic), **यकृतसत्व** (Liver extract), **आमाशय सत्व** तथा **लौह एवं लौह के लवण**—ये सब शोणित-वर्धक द्रव्य (Haematinics) हैं।

चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य अंग की विकृति को दूर कर साम्यावस्था में लाना होता है। इस प्रकार रक्तक्षय के विभिन्न प्रकारों को विकृति की दृष्टि से विवेचना करने पर ही किस अवस्था में किस औषधिका सेवन करना चाहिए इसकी विवेचना की जा सकती है। इस आधार पर रक्तक्षय के निम्न वर्गीकरण को ध्यान में रखें :—

(१) इस प्रकार के रक्तक्षयों में रक्तकण प्राकृत आकार से प्रायः बड़े होते हैं और हिमोग्लोबिन का ह्रास अपेक्षाकृत कम होता है। अतएव रक्तकणों की संख्या में कमी होने पर भी **रंगदेशना** (Colour Index) परमवर्णिक (Hyperchromic) होता है। इन्हें **बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्तक्षय** (Macrocytic Hyperchromic Anaemia) कहते हैं। इसका प्रधान कारण **शोणितिक द्रव्य** (Anti-anaemic principle) की कमी होती है। यह आमाशय में, एक ओर आहार के प्रोटीन जातीय घटकगत

तथा विटामिन 'वी कम्प्लेक्स' जिसे केसिल का वहिर्द्रव्य (Extrinsic factor) तथा दूसरी ओर आमाशयिक रस में पाये जाने वाले किण्व (Enzyme) विशेष जिसे केसिल का अन्तर्द्रव्य (Intrinsic factor of Castle) कहते हैं, की परस्पर क्रिया से उत्पन्न होकर आन्त्रों द्वारा प्रचूषित होकर यकृत में संग्रहीत होता है और लाल कणों के परिपक्व होने (Maturation) में सहायक होता है। वैनाशिक रक्तक्षय (Pernicious Anaemia) इसी प्रकार का रक्तक्षय है।

उक्त शृंखला की किसी भी कड़ी के खण्डित होने पर इस प्रकार का रक्तक्षय हो सकता है। आमाशय गत अन्तर्द्रव्य की कमी से भी एक प्रकार का परमवर्णिक रक्तक्षय होता है, जिसे जाठरिक या एडीसन का रक्तक्षय (Addisonian Pernicious Anaemia) कहते है। इसी प्रकार आहार में प्रोटीन जातीय खाद्यों की कमी के कारण वहिर्द्रव्य का अभाव होने से भी वृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्तक्षय होता है। भारतवर्ष जैसे गरीब देश में इस प्रकार के पाण्डु की सम्भावना अधिक है। स्त्रियों की उपेक्षात्मक वृत्ति के कारण भारतवर्ष में गर्भवती स्त्रियों में पोषणाभाव-जन्य रक्तक्षय अधिक देखने को मिलता है। वहिः तथा अन्तर्द्रव्य-दोनों के रहते हुए भी आन्त्र की श्लैष्मिककला के विकृत होने के कारण इन तत्वों का शोषण न होने से भी इस प्रकार का रक्तक्षय हो सकता है। उष्णकटिबन्धिक संग्रहणी (Tropical Sprue) में यह सभी विकृतियाँ पाई जाती हैं।

इस प्रकार के रक्तक्षय में यकृतसत्व (Liver Extract) का सेवन बहुत उपयोगी है। इसका सेवन मुख तथा सूचिकाभरण दोनों मार्गों द्वारा कर सकते हैं। आन्त्र की श्लैष्मिक कला विकृत हो तो मौखिक प्रयोग व्यर्थ है। इसके अतिरिक्त आमाशय सत्व, हाइड्रोक्लोरिक एसिड, फोलिक एसिड (Folic acid) तथा विटामिन 'वी कम्प्लेक्स' का भी सेवन करना चाहिए।

(२) दूसरे प्रकार का रक्तक्षय वह है जिसमें प्रधान कारण लौह की कमी होता है। इसे उपवर्णिक सूक्ष्म कायाण्विक रक्तक्षय (Microcytic Hypochromic Anaemia) कहते हैं। चूंकि इसका प्रधान कारण लौह का अभाव होता है, अतएव इसे लौहाभावज रक्तक्षय (Iron Deficiency Anaemia) भी कहते हैं। इस प्रकार के रक्तक्षय में रक्तकणों की संख्या में उतनी कमी नहीं होती, जितनी कि हिमोग्लोबिन की मात्रा में होती है। यह निम्न अवस्थाओं में हो सकता है—आहार में लौह की कमी यथा शिशुओं का पोषणाभाविक रक्तक्षय (Nutritional anaemia of infants), जब आन्त्र की श्लैष्मिक कला की विकृति के कारण लौह का प्रचूषण न होता हो, अथवा लौह की बुभुक्षा (Excessive demand) हो जैसा कि गर्भवती स्त्रियों में तथा रक्त प्रदर एवं कालाजार, मलेरिया आदि रोगों में होता है। इस प्रकार के रक्त क्षय में प्रधानतः लौह के योगों का प्रयोग होना चाहिए। साथ ही अल्प मात्रा में ताम्र तथा विटामिन 'सी' का भी प्रयोग होना चाहिए।

अत्यधिक रक्तस्राव होने पर एक प्रकार का रक्त क्षय होता है, जिसमें रक्तकण एवं हीमोग्लोबिन दोनों की कमी समान अनुपात में होती है (Normocytic Anaemia) किन्तु इसकी चिकित्सा भी लौह के अभाव से होने वाले रक्तक्षय की ही भांति होती है।

(३) अचयिक रक्तक्षय (Aplastic Anaemia)—इसमें मज्जा में रक्तजनन का कार्य अंशतः या पूर्णतः बन्द हो जाता है। कभी-कभी सीस, पारद तथा बेंजीन आदि विषाक्त औषधियोंके प्रभाव से भी इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसमें आर्सेनिक का सेवन तथा रक्त-संक्रमण ((Blood transfusion) उपयोगी होता है।

श्वेतकण—लाल-कणों की अपेक्षा श्वेतकण संख्या में कम होते हैं। सामान्यावस्था में युवा पुरुष में इनकी संख्या प्रति घन मिलिमिटर में ६००० से ८००० होती है। बाल्यावस्था में यह संख्या अपेक्षाकृत कुछ अधिक हो सकती है। श्वेतकणों में शोणवर्तुलि नहीं पाई जाती तथा इनमें न्यष्ठीला (Nucleus) पाई जाती है। सामान्यतः यह रक्तकणों की अपेक्षा आकारमें बड़े होते हैं। इनका प्रधान कार्य विकारी-जीवाणुओं से शरीर की रक्षा करना होता है। इनकी संख्या में न्यूनाधिक्य होने से भी अनेक विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं।

श्वेतकायाणूत्कर्ष (Leucocytosis)—जब रक्त परिभ्रमण में प्रतिघन मिलिमिटर श्वेत कायाणुओं की संख्या बढ़कर १०,००० या इससे अधिक हो जाती है तो इस अवस्था को श्वेतकायाणूत्कर्ष कहते हैं। साधारणतया इस क्रिया में क्लीवप्रिय श्वेतकायाणुओं (Neutrophils) की संख्या में ही वृद्धि होती है। पूयोत्पादक जीवाणुओं के उपसर्ग (Infection) तथा न्यूमोनिया, कुकुर खांसी (Whooping Cough) एवं अन्य औपसर्गिक ज्वरों में इसी प्रकार की श्वेतकायाणुमयता (Leucocytosis) होती है। उपर्युक्त अवस्थाओं की श्वेतकायाणुमयता शरीररक्षा की दृष्टि से अभीष्ट होती है और प्रायः इसके लिए चिकित्सा की अपेक्षा नहीं होती।

श्वेतमयता (Leukaemia)—नामक रक्त रोग में श्वेतकायाणुओं की संख्या में भीषण वृद्धि होती है। यहां तक कि यह संख्या प्रति घन मिलिमिटर में १,०००,००० तक पहुँच जाती है। रक्तकणों की संख्या घट जाती है। जब उक्त विकृति अस्थिमज्जा में होती है तो उसे मज्जाभ श्वेतमयता (Myeloid Leukaemia) और लसधातुओं की विकृति होने पर लसात्मक श्वेतमयता (Lymphatic Leukaemia) कहते हैं। यह एक घातक व्याधि है और इनमें श्वेतकणों की संख्यावृद्धि भयंकरता का द्योतक होती है। इस विकृति को नष्ट करनेवाली विश्वसनीय औषधियों का अभीतक पता नहीं चल सका है, तथापि रेडियोएक्टिव फॉस्फोरस (Radio-active phosphorus), संखिया, यूरिथेन एवं..........नाइट्रोजन मस्टर्ड.... ....का प्रयोग उपयोगी सिद्ध हुआ है।

जब रक्तसंवहन में श्वेतकणों की संख्या घटकर प्रतिघन मि०मि० ५००० हो जाती है, तो इसे श्वेतापकर्ष (Leucopenia) कहते हैं। इसमें भी ह्रास का प्रभाव प्रायः क्लीवप्रिय प्रकार के श्वेतकायाणुओं पर ही होता है। अस्थि-मज्जा की क्रिया शीलता पर अवसादक प्रभाव करने के कारण बेंजोल (Benzol) का सेवन श्वेतापकर्ष (Leucopoenia) उत्पन्न करता है।

अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis)—उस विकृतावस्था को कहते हैं, जिसमें कणिककायाणुओं (Granulocytes) की संख्या में ह्रास होने से श्वेतापकर्ष (Leucopenia) की स्थिति उत्पन्न होती है। इसे कणिककायाणुअपकर्ष (Granulo-

cytopenia) भी कहते हैं। यह स्थिति विकारीजीवाणुओं अथवा रासायनिक द्रव्यों के कुप्रभाव के परिणामस्वरूप उत्पन्न अस्थिमज्जा-क्रियावसाद के कारण उत्पन्न होती है। इसमें या तो मज्जा में कणिक–कायाणुओं की उत्पत्ति ही नहीं होती अथवा यदि होती है तो वे प्रगल्भ (Mature) नहीं हो पाते हैं। कभी-कभी यह विकृति कतिपय औषधियों के प्रभाव से, (जिनके प्रति प्राणी में असह्यता हो) होती है। एमिडोपायरीन, सल्फानीलेमाइड, स्वर्ण के लवण तथा आर्सेनिक के कार्बनिक यौगिकों (Organic arsenicals) के प्रभाव से भी यह स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर औषधि का सेवन बन्द कर देना चाहिए तथा पेंटोज न्युक्लियोटाइड (Pentose nucleotide) का प्रयोग इन्जेक्शिओ न्युक्लियोटाइडाइ (Inj. Nucleotidi) के रूप में करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पाइरिडॉक्सीन हाइड्रोक्लोराइड (Pyridoxine hydrochloride), फोलिकएसिड (Folic acid), यकृतसत्व (Liver extract) तथा पेनिसिलिन का प्रयोग भी उपयोगी होता है। यदि आवश्यक हो तो रक्तसंक्रमण (Blood Transfusion) भी कर सकते हैं।

रक्तरस (The plasma)—रक्त के द्रव-भाग को रक्त-रस (Plasma or Liquor Sanguinis) कहते हैं। इसमें ९०% जल एवं १०% शरीर-समवर्त जनित अनेक रासायनिकपदार्थ होते हैं। शरीर के धातुओं एवं कोशाओं को पोषक-तत्त्व, अन्तःस्राव (Hormones) तथा शोषणोपरान्त रक्त में पहुँची हुई औषधियाँ इसी रक्तरस द्वारा ही पहुंचाई जाती हैं। शरीर-समवर्त (Metabolism) के परिणामस्वरूप कोशाओं में उत्पन्न त्याज्य-पदार्थ (Excretory products) भी शरीर के बाहर उत्सर्गित होने के लिए मलोत्सर्गी संस्थान के अंगों—यथा वृक्क, फुफ्फुस एवं त्वचा आदि को पहुँचाये जाते हैं। धातुओं एवं रक्त के अन्तर्मध्य ग्राह्य एवं त्याज्यतत्त्वों का जो आदान-प्रदान होता है, उसका सम्पादन आस्रुतीय निपीड़न (Osmotic pressure) की भौतिक प्रक्रिया (Physical-process) द्वारा होता है। अतएव इस प्रक्रिया का नियंत्रण रक्तरस की मात्रा द्वारा होना स्वाभाविक है। इसी प्रकार वृक्कों की गुच्छिकाओं (Glomeruli) द्वारा यूरिया, यूरिकएसिड आदि तथा उत्सर्गित होनेवाली औषधियों के छनने (Filtration) एवं फुफ्फुसों की केशिकाओं (Capillaries) द्वारा ऑक्सीजन एवं कार्बन-डॉइ-ऑक्साइड का आदान-प्रदान इसी प्रक्रिया द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त रक्तस्राव के समय रक्तस्कन्दन-क्रिया (Blood-Coagulation) में तन्त्विजन (Fibrinogen) का तन्त्वि (Fibrin) में रूपान्तर—जो उक्त क्रिया का प्रधानतम परिवर्तन है—इसी रक्तरस की सहायता से ही होता है। व्याधितावस्था में भी व्याधि का सामना करने के लिए जो प्रतियोगी–द्रव्य (Antibodies) उत्पन्न होते हैं वह इसी रक्त-रस में ही उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार हमने देखा कि स्वस्थ एवं व्याधित दोनों अवस्थाओं में रक्तरस अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करता है।

रक्त की राशि (Blood Volume) में परिवर्तन करनेवाली औषधियाँ एवं प्रक्रियायें—

१—(अ) रक्तराशि को कम करने वाली औषधियाँ—हिस्टामीन इसी प्रकार की औषधि है। यह केशिकाओं पर सामान्यकायिक निष्क्रियकारक प्रभाव (General paralysing effect) करती है, जिससे आस्रुतीय-निपीड़न का नियंत्रण शिथिल होने से रक्त से रक्तरस अत्यधिक मात्रा में छनकर केशिकाओं में पहुँच जाता है।

१—(ब) रक्तराशि को कम करनेवाली अवस्थायें—शरीर से किसी भी प्रकार द्रव का अत्यधिक अपहरण होने से इसका प्रभाव रक्तरस पर भी पड़ता है और रक्तराशि कम हो जाती है। रक्तस्राव (Haemorrhage), तीव्र विरेचन, अत्यधिक वमन तथा प्रस्वेद (Profuse sweating) में शरीर से जलांश का अत्यधिक अपहरण होने से यही अवस्था उत्पन्न होती है। स्तब्धता (Shock) में भी यही स्थिति (रक्तराशि की कमी) उत्पन्न होती है।

स्तब्धता (Shock)—चिकित्सा में इस भयंकर आकस्मिक स्थिति का सामना प्रायशः करना पड़ता है, और तत्काल समुचित उपचार न होने से देखते-देखते रोगी प्राण खो बैठता है। इसमें रक्तरस अत्यधिक मात्रा में केशिकाओं में पहुँच कर वहीं स्तब्ध हो जाता है, जिससे शिरागत रक्तानुधावन (Venous circulation) के स्थगित होने से सामान्य कायिक रक्तपरिभ्रमण बन्द हो जाता है। विभिन्न अवस्थाओं में उत्पन्न स्तब्धता निम्नकारणों में से किसी न किसी कारण से होती है :—(१) सहसा अति प्रबल संविदनिक उत्तेजना के कारण केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान के क्रिया-शैथिल्य (Exhaustion) के कारण; (२) शरीराघात (जलना-चोट लगना) आदि में धातु-आघात के कारण हिस्टामनि-सम तत्त्व का उत्सर्ग होने से; (३) शरीर से अत्यधिक द्रवांश एवं लवण (सोडियम् क्लोराइड) का अपहरण होने से; (४) उपवृक्क के बहिस्तरीय स्राव (Cortical secretion) की कमी के कारण उसकी क्रिया समुचित रूप से न होने से।

प्राथमिक-स्तब्धता (Primary Shock)—जब यह साधारण स्वरूप का होता है, तो इसमें मनोद्वेग अथवा धातु आघात के कारण प्राणदानाड़ीजन्य हृन्मन्दता के कारण मूर्छा (Fainting) होती है। सम्भवतः यह मूर्छा मस्तिष्क में कम रक्त पहुँचने के कारण होती है, अतएव रोगी के शिर को नीचा करने से अथवा ठंडे पानी का मुँहपर छींटा मारने से इस प्रकार की साधारण स्तब्धता का निवारण हो जाता है कभी कभी चोट या धातु आघात अधिक (Severe injuries) होने पर अथवा बड़े शल्यकर्मों में अपेक्षाकृत अधिक भयंकर स्वरूप की स्तब्धता उत्पन्न होती है। इसके लिए शरीर में गर्मी पहुंचाने से अथवा शामक औषधियों (Sedatives) के प्रयोग से शान्ति हो जाती है।

आनुषंगिक स्तब्धता (Secondary Shock)–इस प्रकार की स्तब्धता प्रायः आघात (Injury) के पश्चात् उत्पन्न होती है। और यदि इसकी समुचित चिकित्सा न की जाय तो घातक (Fatal) सिद्ध होती है। इसमें केशिकाओं की निष्क्रियता के कारण रक्तपरिभ्रमणगत रक्तराशिमें कमी हो जाती तथा रक्तभार गिर जाता है। आघात के परिणामस्वरूप अधिक रक्तस्राव होने अथवा विकारी जीवाणुओं का उपसर्ग होने पर रक्तपरिभ्रमण में उनका विषसंचार होने पर यह स्थिति और भी गम्भीर हो जाती है।

२—रक्तराशि में वृद्धि करनेवाली औषधियाँ—इसके लिए लवणद्रव-संक्रम (Tansfusion of Saline) किया जाता है। कभी-कभी उक्त लवण-द्रव में द्राक्ष-शर्करा (Glucose) अथवा बबूल का गोंद (Gum) भी मिला दिया जाता है। आजकल इस कार्य के लिए दूसरे व्यक्ति का रक्त (Whole blood) अथवा रक्तरस (Blood Plasma) या लसिका (Serum) भी प्रयुक्तहोने लगा है।

लवणद्रव (Saline)—(इसका विस्तृत वर्णन देखें पाश्चात्य-द्रव्यगुणविज्ञान पूर्वार्ध) ।

रक्तान्तःक्षेपण या रक्त-संक्रम (Blood-transfusion)—आनुषंगिक स्तब्धता उग्र रक्त-स्राव (Severe haemorrhage) विस्तृत एवं उग्र रूप की दग्धता (Severe-burn), रक्तगत तीव्र उपसर्ग (Severe infection) तथा कतिपय रक्तांशनजनक व्याधियों (Haemolytic Conditions) एवं रक्तगत प्रोटीनाल्पता (Hypoproteinaemia) की अन्य अवस्थाओं में रक्तान्तःक्षेपण (Blood-transfusion) से बहुत लाभ होता है। स्तब्धता (Shock) एवं निपात(Collapse) की अवस्था में आत्ययिक चिकित्सा के हेतु रक्तान्तः क्षेपण करना पड़ता है। आत्यधिक अवस्थाओं में जीवरक्षणार्थ तथा चिकित्सार्थ किए गए रक्त-संक्रम से चमत्कारिलाभ होता है किन्तु यह प्रक्रिया थोड़ी जटिल है और सर्वसामान्य चिकित्सक के लिए सुलभ भी नहीं है। रक्त-संक्रम करने के पूर्व यह देखलेना पड़ता है कि दाता (Donor—दूसरे के शरीर में देने के लिए जिसका रक्त लिया जाता है) एवं ग्रहीता (Recipient—जिसके शरीर में रक्त पहुँचाया जाता है) के रक्तों में मेल (Matching) खाता है या नहीं। अन्यथा रक्त में कुछ ऐसे घटक भी होते हैं, जो ग्रहीता के शरीर में पहुँचने पर रक्तकणों का अभिश्लेषण (Agglutination) कर उनको गला देते (Haemolysis) है और इस प्रकार लेने के देने की भयंकर स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसके निवारण के लिए आजकल स्थान-स्थान पर रक्तसंग्रहालय (Blood-Banks) स्थापित किए गये हैं, जहाँ पर विशेषज्ञों द्वारा उपयुक्त दाताओं के रक्त का संग्रह रहता है और आवश्यकता पड़ने पर उसका उपयोग उपयुक्त ग्रहीताओं के शरीर में पहुँचाने के लिए किया जाता है। इस प्रकार ग्रहीत रक्त में कुछ दोष भी हैं। एक तो निश्चित अवधि (प्रायः ३ सप्ताह) के पश्चात यह प्रयोगोपयुक्त नहीं रहता, दूसरे यह एक स्थान से दूसरे स्थान को प्रेषित नहीं किया जा सकता, क्योंकि इसमें रुधिरांशन (Haemolysis) की आशंका बहुत रहती है। अतएव यह सुविधा सर्वसुलभ नहीं हो सकी है।

एतदर्थ रक्त का प्रयोग निम्न रूपों में किया जाता है—

(१) पूर्ण-मानवरक्त (Whole Human Blood)—इसका संग्रह प्रायः ऐसे स्वस्थव्यक्तियों से किया जाता है, जिनको संग्रहकाल के ६ महीनेपूर्व तक फिरंग आदि वंशानुगत व्याधियाँ (Hereditary diseases) या कामला (Jaundice) एवं विषमज्वर (मलेरिया) आदि व्याधियाँ—जिनमें रक्तकण अधिक भंगुर (Fragile) हो जाते हैं—न हुई हों तथा रक्तगत हिमोग्लोबिन (शोणवर्तुलि) की प्रतिशतक मात्रा कम से कम ८५% होनी चाहिए। इसप्रकार प्राप्त रक्त का संग्रह विशोधित पात्रों में किया जाता है, और उसमें कोई उपयुक्त प्रतिस्कन्दि (Anti-coagulent) द्रव्य (अर्थात् रक्त को जमने से रोकनेवाला द्रव्य) मिला दिया जाता है। एतदर्थ सामान्यतया निम्नयोग प्रयुक्त किए जाते हैं—(१) १·७ से २% सोडियम एसिड सायट्रेट तथा २·५% डेक्स्ट्रोज का विशोधितजल (Water for injection) में बनाया विलयन; (२) सोडियम् सायट्रेट १·६ ग्राम, सायट्रिक एसिड ०·५६ ग्राम तथा डेक्स्ट्रोज १½ ग्राम का ७५ सी० सी० विशोधित जल में बनाया हुआ विलयन, जो ५०० सी० सी० रक्त के लिए पर्याप्त होता है। प्रथम के १२० सी० सी० (मि० लि०) की मात्रा से लगभग ४२० सी० सी० रक्त सुरक्षित किया जा सकता है। इस प्रकार संस्कारित रक्त प्रायः ३ सप्ताह तक प्रयोग के

योग्य रहता है संग्रह के लिए पात्रों का मुख अच्छी तरह बन्द करके प्रशीतकयंत्रों (Refrigerators) में रखा जाता है।

वक्तव्य—रखने के बाद रक्त के लालकण तलस्थित हो जाते हैं और लसिका ऊपर स्वच्छ द्रव के रूप में होती है। यदि उक्त लसिका लाल रंग की हो गई होतो उक्त रक्त अप्रयोज्य होता है।

पूर्णरक्त का अन्तःक्षेपण ग्रहीता (Racipient) की शरीर में रक्तराशि को बढ़ाने के साथ साथ रक्त में पाये जाने वाले उपादानों की कमी की भी पूर्ति करता है।

प्लाज्मा ह्युमेनम् नार्मल साइट्रेटम् Plasma Humanum Normale Citratum (Plas. Human. Norm. Cit.), I. P.–ले॰; साइट्रेटेड नार्मल ह्युमन प्लाज्मा Citrated Normal Human Plasma—अं॰; नैसर्गिक मानवी रक्त रस—हिं॰।

यह अनेक स्वस्थ व्यक्तियों के ग्रहीत पूर्ण रक्त (Citrated Whole Blood) के द्रवांश को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है। इसके बाद इसको नीललोहितातीत किरणों की क्रिया (Ultra-violet irradiation) द्वारा विशोधित करके पूर्वतः विशोधित पात्रों में अच्छी तरह बन्द करके संग्रह कर लिया जाता है। इसके लिए पहले उपयुक्त मानवीय शरीर से पूर्ण रक्त लेकर केंद्रापसारि यंत्र (Centrifugal machine) द्वारा रक्त रस (Plasma) को पृथक कर लिया जाता है। इस प्रकार प्राप्त प्लाज्मा को कम से कम ७२ घंटे तक तथा अधिक से अधिक १२० घंटे तक ४ से ६ तापक्रम पर रखना चाहिए। इसके बाद भिन्न-भिन्न रक्तों से प्राप्त स्वच्छ रक्त रस को परस्पर मिलाकर औषधीय रक्त रस तैयार किया जाता है। जिस नमूने में रुधिरांशन (Haemolysis) के लक्षण पाये जायँ उसको ग्रहण नहीं किया जाता। औषधीय प्रयोजन के लिए मानवीय रक्त रस (साइट्रेटेड नार्मल ह्यूमन प्लाज्मा) दो रूपों में प्राप्त होता है—(१) द्रव रूप (Liquid Plasma) एवं (२) शुष्क रूप (Dry Plasma)। मात्रा–सिरागत सूचिका भरण द्वारा ३० फ्लुइड औंस (५०० मि॰ लि॰)।

(३) सीरम ह्युमेनम् नार्मल Serum Humanum Normale (Ser. Human. Norm.), I. P.—ले॰; नार्मल ह्युमन सीरम Normal Human Serum अं॰; नैसर्गिक मानवीय लसिका—हिं॰।

यह विशोधित मानवीय रक्त लसिका होती है, जो अनेक स्वस्थ मनुष्यों के रक्त से प्राप्त लसीका को परस्पर मिलाकर प्राप्त की जाती है। एतदर्थ विभिन्न स्वस्थ एवं उपयुक्त मनुष्यों से प्राप्त रक्त को स्कन्दित (Coagulated) होने दिया जाता है। और लसिका पृथक हो जाने पर उसको लेकर फिल्ट्रेशन (Filtration) द्वारा उसको विशोधित करके परस्पर मिलाकर रक्तरस के वर्णन के साथ उल्लिखित पद्धतियों द्वारा विशोधित एवं संग्रहीत करते हैं। औषधीय प्रयोग के लिए रक्तरस की भांति यह भी (१) द्रव (Liquid Serum) एवं (२) शुष्क (Dry Serum) दोनों ही रूपों में प्राप्त होता है। मात्रा–शिरागत सूचिका-भरण द्वारा २० फ्लुइड औंस (५०० मि॰ लि॰)।

वक्तव्य—रक्तरस (Plasma) के प्रयोग के लिए रक्तगण परीक्षण (ग्रूपिंग Grouping) की आवश्यकता नहीं होती। अतएव आत्ययिक (Emergency) अवस्थाओं में जब रक्तान्तःक्षेपण की आवश्यकता हो तो इसके लिए प्लाज्मान्तः क्षेपण (Trans-

fusion of plasma) एक परमोपयुक्त स्थानापन्न प्रक्रिया है। बाजार में नार्मल ह्युमन प्लाज्मा की ५० सी० सी० एवं ५०० सी० सी० की शीशियाँ लायोवेक (Lyovac) के नाम से मिलती है।

रक्तके स्थानापन्न द्रव्य (Blood-Substitutes)—रक्तरस की उपलब्धि साधन एवं व्यय साध्य होने के कारण आजकल कतिपय ऐसे द्रव्यों की उपलब्धि की गई है, जो बहुत कुछ वही कार्य करते हैं, जो नैसर्गिक रक्तरस से निकलता है। समबल लवणजल (Isotonic Saline Solution), ग्लूकोज सॉल्यूशन (Glucose Solution) तथा डेक्स्ट्रन इसी प्रकार के द्रव्य हैं। इन्ट्राडेक्स (Intradex) नाम से बाजार में डेक्स्ट्रन के अन्तःक्षेपणोपयुक्त २० फ्लुइड औंस (१ पाइन्ट) के बोतल (Transfusion bottle) मिलते हैं। मात्रा—प्रतिसेर (per. kg.) शरीरभार के लिए २० मि० ग्राम।

द्रव्यगुणकर्मविज्ञानीय परिच्छेद २

प्रकरण १

वानस्पतिक तिक्तौषधियाँ (Vegetable bitters)।

वानस्पतिक औषधियों में अनेक औषधियाँ ऐसी हैं, जो स्वाद में तो तिक्त अवश्य हैं, किन्तु साथ उनमें अनेक विशेष महत्व के गुण-कर्म हैं। इन गुणों के कारण तिक्त स्वाद के होते हुए भी ये अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई हैं। कुचिला तथा क्विनीन इसी प्रकार की औषधि हैं। इस समुदाय की औषधियों के गुण-कर्म का सम्पादन भी इसी तिक्तता पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अतः इनका विचार एक स्वतंत्र समुदाय में किया जायगा। अधिकांश तिक्तौषधियाँ दीपन या अग्निवर्द्धक (Stomachic) भी होती हैं। तिक्तौषधियों को २ समुदायों में विभक्त किया जा सकता है :—

(१) साधारण तिक्तौषधियाँ (Simple bitters) यथा, कलम्बा, कासिया, जेनशियन तथा चिरायता आदि। (२) सुरभित (सौगन्धिक) तिक्तौषधियाँ (Aromatic bitters) यथा नारंगी का छिलका (Aurantii Cortex)। इनमें उड़नशील तैल का अंश पाया जाता है। जिससे इनमें विशेष सुगन्धि पाई जाती है तथा इसी के कारण इनमें कुछ उत्तेजक (Stimulating) प्रभाव भी पाया जाता है।

(नॉट-ऑफिशल)

कॅलम्बा (Calumba), B. P. C.

Family : Menispermaceae (गुडूच्यादि-कुल)

नाम—कलम्बा, कलम्बा की जड़–हिं०; कलम्बकचरी–बम्बई; कलुम्बो गु०; राअ्युल् हमाम, साकुल् हमाम—अ०; गावमुशंग–फा०; कैलम्बारूट Columba Root, कोलम्बोरूट Colombo Root—अं०; कॅलम्बा Calumba, B.P. ; कॅलम्बी रैडिक्स Calumbae Radix—ले०।

प्राप्ति-साधन—यह जेटिओरहाइजा पामेटा Jateorhiza palmata (Lam.) (Miers) की जड़ के आड़े (Transverse) या वक्राकार (Oblique) काटे टुकड़े (Slices) होते हैं, जिनको शुष्क करके रखलिया जाता है।

वक्तव्य—इस वनस्पति का जातीय नाम (Generic name) यूनानी से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है "हीलिंग रूट healing root अर्थात् व्याधिहर जड़।" इस लता की पत्तियाँ करतलाकार खण्डित (Palmately lobed) होती हैं, अतएव इसे "पामेटा Palmata" कहा गया है। इसका अंगरेजी नाम "Calumba" सम्भवतः इसके स्थानीय अफ्रिकन नाम 'कलम्ब Kalumb' के आधार पर रखा गया प्रतीत होता है। इसके नाम करण के विषय में पहले लोगों की धारणा थी कि इसका नाम 'Calumba' सम्भवतः लंका के कोलम्बो (Colombo) नगर के नाम पर रखा गया था, जैसा कि इसके एक पर्याय 'कोलम्बो रूट' से प्रगट होता है। किन्तु पीछे यह भ्रम सिद्ध हुआ और इसका नाम अफ्रिकन कलँम्ब के आधार पर है यह सिद्ध हुआ।

इस औषधि का यूनानी नाम 'कलस्तारियून' है, जिसे मुहीत आज़म आदि यूनानी निघण्टु-ग्रंथों में 'फ़ारिस्तारियून' लिखा है। चूंकि कबूतर इस वनस्पति पर निवास (बसेरा) करना बहुत पसन्द करता है, इसलिए इसे 'राअ्युल् हमाम' कहते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—पूर्वी अफ्रीका। मोजम्बीक, जंबेसी और मेडागास्कर प्रदेश में यह वेल प्रचुरता से स्वयंजात पाई जाती है। भारतवर्ष में आजकल कहीं-कहीं इसकी खेती की जाती है।
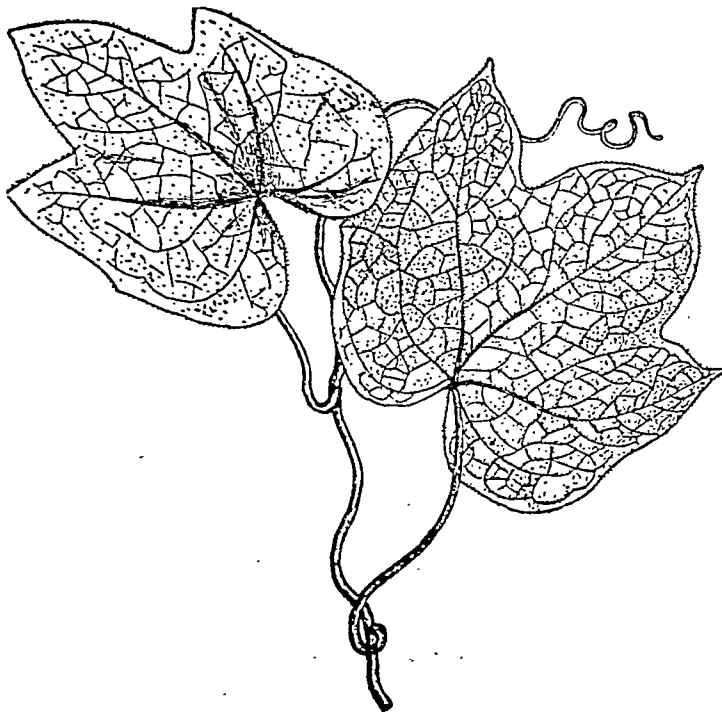
चित्र नं० १—इस चित्र में कॅलम्बा की लता का कुछ भाग दिखाया गया है, जिसमें आश्रयभूत वृक्ष पर आरोहण हेतु निकले सूत्र विशेष द्रष्टव्य हैं।

वक्तव्य—अफ्रीका एवं अरब निवासी इस औषधि का प्रयोग अतिप्राचीन काल से करते आ रहे हैं। वहीं से इसका प्रवेश भारतवर्ष में हुआ। यह भारतीय बाजारों में अफ्रीका से बिकने आती है। बम्बई प्रान्त के वैद्य कलम्बा का प्रयोग चिरकाल से करते हैं। यूरोप में इस औषधि का प्रचार सीधे अफ्रीका से न होकर भारतवर्ष से हुआ ऐसा ऐतिहासिक परम्परा से ज्ञात होता है।

वर्णन। (१) वनस्पति–जेटियोर्‌हाइजा पामेटा (कलॅम्बा) के बहुवर्षायु शाकजातीय पौधे होते हैं, जो जंगली वृक्षों का आश्रय पाकर लता की भाँति काफी ऊँचाई तक चढ़ जाते हैं। इसमें अद्विधैकलिंग (Dioecious) पुष्प पाये जाते हैं अर्थात् पुष्प एक लिंगक (Unisexual) होते हैं और नरपुष्प (Male flower) तथा नारीपुष्प (Female Flowers) पृथक–पृथक पौधोंपर पाये जाते हैं। (२) जड़—बाजार में कलम्बा वृत्ताकार (Circular) अथवा वक्राकार (Oblique) कतरेदार टुकड़ों (Slices) के रूप में प्राप्त होता है (चित्र

चित्र नं० २–कलम्बा की जड़ का अनुप्रस्थ-व्यच्छेद (Transverse section)।

नं० २)। इन टुकड़ोंका व्यास ३ से ८ सेंटीमीटर तथा मोटाई ६–१२ मिलिमिटर होती है। बाह्यत्वचा (Cork) खाकस्तरी–भूरेरंग (Greyish-brown) अथवा लाली लिए भूरे रंग की (Reddish-brown) होती है। इसमें अनुलम्ब दिशा में झुर्रियाँ पड़ी होती (Longitudinally wrinkled) हैं। ये टुकड़े केन्द्र की ओर अन्दर को दबे होते हैं, जो इनका विशिष्ट स्थूल विभेदक लक्षण है। टुकड़ों में काष्ठ भाग को त्वचा भाग से पृथक करनेवाली एधा-रेखा (Cambium line) अत्यंत स्पष्ट दिखाई देती है। टुकड़ों के आभ्यन्तर-भाग (Wood) में पहिये

के अरों की भाँति पीताभ ऊर्ध्ववाहिनियों की रेखायें (Radiating lines of yellowish xylem vessels) होती हैं। तोड़ने पर कलम्बामूल खट से टूटता (Short fracture) है और टूटे हुए टुकड़ों का आभ्यन्तर गूदेदार (Starchy) प्रतीत होता है। स्वाद में कलम्बा की जड़ अत्यन्त तिक्त होती है और इसमें भुकड़ी लगे की भाँति हल्की गन्ध (Slight musty odour) आती है।

रासायनिक संघटन—(१) इसमें १ प्रतिशत की मात्रा में जेटियोर्हाइज़ीन (Jateorhizine), कलम्बामीन (Calumbamine) एवं पमेटीन (Palmatine) नामक पीतवर्ण के मणिभीय (Crystalline) क्षाराभ सत्व (Alkaloids) पाये जाते हैं जो स्वरूपतः एवं क्रिया में बर्बेरीन (Berberine) नामक तिक्त सत्व से मिलते-जुलते हैं। (२) कॅलम्बिन (Calumbin) एवं चस्मन्थिन (Chasmanthin) नामक रंगहीन, जल-विलेय एवं मणिभीय तिक्त सत्व (Bitter Substances); इसके अतिरिक्त (३) पीतवर्ण का एक विरूपिक (Amorphous) तत्व कलम्बिक एसिड (Calumbic acid), (४) स्टार्च ३०% से ३५% तथा (५) म्यूसिलेज (Mucilage) भी पाया जाता है। किन्तु इसमें शल्कि या कषायिन (Tannin) नहीं होता। अतएव लौह के योगों के साथ भी इसको दिया जा सकता है।

प्रतिनिधि द्रव्य एवं मिलावट (Substitutes and Adulterants)—

(१) भारतवर्ष एवं लंका में इसी कुल की एक लता पाई जाती है, जिसे संस्कृत में 'कलम्बक' या "कालीयक" तथा लेटिन में कोसीनियम् फेनिस्ट्रेटम् Coscinium fenestratum, Colebrooke (Family : Menispermaceae गुडूच्यादि कुल) कहते हैं। दक्षिण में इसे "झाड़की हल्दी", जिसको संस्कृत में "लतादार्वी" कहा जाता है, भी कहते हैं। इसका स्वरूप एवं गुण बहुत-कुछ विलायती कॅलम्बा से मिलता-जुलता है, अतएव यह उसकी एक उत्तम प्रतिनिधि औषधि (Substitute) है। इसके काण्ड (Stem) का औषध्यर्थ व्यवहार) होता है और व्यवसाय में यह 'सिलोन कलम्बा Ceylon Calumba' के नाम से मिलती है।

इसके अतिरिक्त निम्न अपद्रव्यों का मिलावट कलम्बा रूट के लिए की जाता है—(२) असली कलम्बा के भौमिक-काण्ड (Rhizomes) ; (३) फ्रेसेरा केरोलिनेन्सिस (Frasera Carolinensis, Walter (Family : Gentianaceae किराततिक्तादि कुल) जो 'अमेरिकन कॅलम्बा American calumba) के नाम से चलती है एवं (४) टिनोस्पोरा बेकिस (Tinospora bakis नामक एक अफ्रिकन लता की जड़ का भी कलम्बा रूट में मिलावट किया जाता है।

कलम्बी पल्विस Calumbae Pulvis (Calumb. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड-कलम्बा Powdered Calumba—अं०; कलम्बाचूर्ण—हिं०।

यह पीताभ-खाकस्तरी (Yellowish-grey) रंग का चूर्ण होता है।

(नान्-ऑफिशल या अनधिकृत योग)

१—इंफ्युजम् कॅलम्बी Infusum Calumbae (Inf. Calumb.)—ले०; इंफ्युजन ऑव कलम्बा Infusion of Calumba—अं०; कलम्बा-फाण्ट—सं०, हिं०।

मात्रा—१५ से ३० मि० लि० (½ से १ फ्लुइड औंस) या १। तोला से २½ तोला।

२—इंफ्युजम् कलम्बी रिसेन्स Infusum Calumbae Recens (Inf. Calumb. Rec.)—ले०; फ्रेश इंफ्युजन ऑव कलम्बा Fresh Infusion of Calumba—अं०; कलम्बा का अभिनव फांड—सं०, हिं०।

मात्रा—½ से १ फ्लुइड औंस (१५ से ३० मि०लि०)।

३—इन्फ्युजम् कॅलम्बी कन्सन्ट्रेटम् Infusum Calumbae Concentratum (Inf. Calumb. Conc.)—ले०; कन्सट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव कलम्बा Concentrated Infusion of Calumba—अं०; कलम्बा का सान्द्र फाण्ट—सं०।

मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम्)।

४—टिंक्चुरा कॅलम्बी Tinctura Calumbae (Tinct. Calumb.)—ले०; टिंक्चर ऑव कलम्बा Tincture of Calumba—अं०। टिंक्चर कलम्बा—हिं०।

मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूँद)।

क्वाशिया Quassia(Quass.), I.P., B.P. Family:Simarubaceae(इंगुद्यादि-कुल)

नाम—क्वाशिआई लिग्नम् Quassiae Lignum—ले०; क्वाशिया वुड Quassia

Wood, जमेका क्वाशिया Jamaica Quassia—अं०; क्वाशिया Quassia, B.P.; खश्बुल् मुर्र—अ०; चोबे काशिया—फा०।

प्राप्ति-साधन—ब्रिटिश फॉर्माकोपिया (B. P.) में वर्णित क्वाशिया काष्ठ, पिक्रीना एक्सेल्सा (Picraena excelsa (Sw.) Lindl. (Picrasma excelsa (Sw.) Planchon.) नामक वृक्ष का काण्ड-काष्ठ (Stem wood) होता है, जिसका व्यावसायिक नाम जमेका क्वाशिया (Jamaica Quassia) है, किन्तु अनेक देशों की फॉर्माकोपिया में क्वाशिया काष्ठ के नाम से एक दूसरे वृक्ष, जिसका वानस्पतिक नाम क्वाशिया अमारा (Quassia amara, Linn.) है, के काण्ड-काष्ठ का भी समावेश है, जिसका व्यावसायिक नाम सुरीनम् क्वाशिया (Surinam Quassia) है।

वक्तव्य—जमेका क्वाशिया के वृक्ष का जातीय नाम 'पिक्रेज्मा Picrasma' यूनानी शब्द है, जिसका अर्थ होता है 'बिटर Bitter अर्थात् तिक्त।' सुरीनम् क्वाशिया के वृक्ष का प्रजातिक (Specific) नाम 'अमारा Amara' लेटिन शब्द है, जिसका अर्थ भी 'बिटर bitter या तिक्त' ही होता है। अत्यन्त तिक्त होने के कारण ही मिस्री चिकित्सकों ने इसका नाम खश्बुल् मुर्र' अर्थात् 'तिक्त-काष्ठ' रखा था। 'एक्सेल्सा Excelsa' शब्द लेटिनसे व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है, 'Surpassing अर्थात् सबसे ऊँचा।' इस जाति (Genus) का सब से ऊँचा वृक्ष होने से यह नामकरण हुआ है।

चित्र ३—पिक्रीना एक्सेल्सा (जमेका क्वाशिया) की शाख

क्वाशी (Quassi) नामक एक हबशी गुलाम था, जिसने सर्व प्रथम इसका औषधीय प्रयोग किया था। उसी के नाम पर इस औषधि का भी नाम क्वाशिया रखा गया।

उत्पत्ति-स्थान-(१) जमेका क्वाशिया-पश्चिमी द्वीप-समूह (West Indies); (२) सुरीनम् क्वाशिया–दक्षिणी अमरीका के गायना, ब्रेजिल तथा डच गायना के सुरीनम् आदि प्रांत।

वर्णन—पिक्रीना एक्सेल्सा के ५०–६५ फुट ऊँचे वृक्ष होते हैं जो मैदानों में तथा पहाड़ों के ढालों पर बहुतायत मात्रा में स्वयंजात रूप से होते हैं। इसका मुख्य तना (Trunk) सीधा एवं उसकी मोटाई का व्यास लगभग २ फुट होता है। क्वासिया अमारा के गुल्म (Shrub) या छोटे-छोटे वृक्ष होते हैं, जिनकी अधिकतम ऊँचाई २५ फुट होती है और इनके तने का अधिकतम व्यास १५ से ३० सेंटीमीटर (६ से १२ इञ्च होता है।)

काष्ठ—इसके पीताभ-श्वेतवर्ण के, चिमड़े (Tough), सघन काष्ठमय लम्बगोल (लट्ठानुमा) काष्ठखण्ड (Logs) या यह छोटे-छोटे चिरे हुए टुकड़ों (चप्पड़ों-Chips) या छिले हुए टुकड़ों अर्थात् चैले (Raspings) के रूप में उपलब्ध होता है। औषधि में इन्हीं का प्रयोग होता है। इन टुकड़ों में कोई गंध नहीं पाई जाती, किन्तु स्वाद में ये अत्यंत तिक्त होते हैं।

रासायनिक संघटन—(१) क्वासिन (Quassin)—जो पिक्रेस्मिन (Picrasmin) एवं नियोक्वासिन (Neoquassin) नामक तत्वों का मिश्रण होता है। क्वासिया काष्ठ में टैनिन (Tannin) नहीं पाया जाता, अतएव इसका प्रयोग लौहके यौगिक के साथ, भी किया जा सकता है।

क्वासिई पल्विस Quassiae Pulvis (Quass. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड क्वासिया Powdered Quassia—अं०; क्वासिया का चूर्ण–हिं०। यह हल्के मटमैले रंग का होता है।

(ऑफिशल या अधिकृत योग)

१—इन्फ्युजम् क्वासिई Infusum Quassiae (Inf,Quass.) B. P.–ले०; इन्फ्युजन ऑव क्वासिया Infusion of Quassia—अं०, क्वासिया फाण्ट–सं०, हिं०। मात्रा—१५ से ३० मि० लि० (½ से १ फ्लुइड औंस)। वक्तव्य—इसको बनाने के बाद १२ घंटे के अन्दर ही इसका प्रयोग हो जाना चाहिए। इसके बाद भी रखा रहने से यह प्रयोग के योग्य नहीं होता। यदि 'इन्फ्युजन ऑव क्वासिया की माँग की गई हो, तो 'फ्रेश इन्फ्युजन ऑव क्वासिया भी दे सकते हैं।

२—इन्फ्युजम् क्वासिई रिसेन्स Infusum Quassiae Recens (Inf. Quass. Rec.) B. P.-ले०; फ्रेश इन्फ्युजन ऑव क्वासिया Fresh Infusion of Quassia—अं०; क्वासिया का अभिनव फाण्ट--हिं०। निर्माणविधि—क्वासिया के छोटे-छोटे टुकड़े १० ग्राम, डिस्टिल्ड वाटर १००० मि० लि०। एक बर्तन में ढक्कन बंद करके १५ मिनट तक उबालकर छान लें। मात्रा १५ मि० लि० से ३० मि० लि० (½ से १ फ्लुइड औंस)। वक्तव्य—निर्माण के १२ घन्टे के अन्दर ही इसका प्रयोग हो जाना चाहिए।

३—इन्फ्युजम् क्वासिई कन्सन्ट्रेटम् Infusum Quassiae Concentratum (Inf. Quass. Conc.) B. P.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव क्वासिया –अं०। मात्रा २से४ मि० लि० (३० से ६० मिनम या बूंद)।

(ऑफिशल इन इन्डियन फॉर्माकोपिआ, (I. P.) इन्डियन फॉर्माकोपिअल लिस्ट (I.P. L.) एवं इन्डियन फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स (I. P. C.)।

इन्डियन क्वाशिया (I. P.)
Quassia (Quass.)
Family : Simarubaceae (इङ्गुद्यादि-कुल)

पर्याय— भारंगो (Bhurangi), बंगाली भारंगी ? —हिं०; तिथू—पं०; करुई, तिथाई—जौनसार।

प्राप्तिसाधन—भारतीय क्वाशिया, पिक्रीना क्वाशिवायडीस (Picraena quassioides Benth.) अथवा पिक्रीना की अन्य प्रजातिओं (Other species of Picraena) के काण्ड का काष्ठीय भाग (Stem-Wood) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—उक्त वनस्पति हिमालय की बाहरी श्रेणियों (Outer Himalayas) में पश्चिम में चेनाव से लेकर पूर्व में नागा एवं खसिया की पहाड़ियों तक स्वयंजात पाई जाती है। चम्बा, कुलु (Kùlu), बशहर तथा युक्तप्रांत में उत्तरी गढ़वाल एवं नेपाल-भूटान (३०००-८००० फुट की ऊँचाई तक) में तथा नागा और खसिया की पहाड़ियों पर इसके पौधे बहुतायत से पाये जाते हैं।

वर्णन। वनस्पति—भारंगी के पतझड़ करनेवाली ऊँची झाड़ियाँ (Deciduous shrubs) अथवा छोटे वृक्ष होते हैं, जिनका काण्ड-स्कन्ध ३ फुट तक मोटा तथा वृक्ष ३०-३५ फुट तक ऊँचा होता है। शाखाओं पर चित्तियाँ होती (Spotted branches) हैं, और छाल अत्यन्त तीती होती है। पुष्प हरिताभ श्वेतवर्ण के तथा पत्तियों के कोणों में मञ्जरियों (Axillary panicles) में निकले होते हैं। पुष्पागम-काल—अप्रैल–जून तक। फलागम—जुलाई–सितम्बर तक। काष्ठ—(Wood) इसका काण्ड-काष्ठ (जो कि औषध्यर्थ प्रयुक्त होता है) छोटे चप्पड़ या चैली (Chips), या छिलके (Raspings) अथवा टुकड़ों (Logs) के रूप में होता है। रंग में ये पीताभ श्वेतवर्ण (Yellowish-White) या चमकीले पीतवर्ण (Bright Yellow) के होते हैं। मज्जक (Pith) का भाग अल्प होता है और मज्जक किरण (Medullary rays) स्पष्ट होते हैं। इसमें केल्सियम् ऑक्जलेट क्रिस्टल्स नहीं होते हैं। इसमें कोई गंध नहीं होती तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है।

रासायनिक संघटन--(१) क्वाशिन (Quassin) नामक एक तिक्त सत्व (Bitter Principle); (२)०'०५ प्रतिशत एक अल्कलायड पाया जाता है, जो रासायनिक दृष्टि से पिक्रेस्मिन (Picrasmin) से बहुत मिलता–जुलता है तथा (३) ०'१५ प्रतिशत एक अन्य तिक्त सत्व जो क्लोरोफॉर्म में घुलनशील होता है।

मात्रा (I.P.L. Dose)— २ से ८ ग्रेन (०'१२ से ०'५ ग्राम) या १ से ४ रत्ती।

(ऑफिशल योग)

१—इंफ्युजम् क्वाशिई Infusum Quassiae (Inf. Quass.), I. P.—ले०; इन्फ्युजन ऑव क्वाशिया Infusion of Quassia—अं०; भारंगी फाण्ट–सं०। मात्रा—½ से १ औंस (१५ से ३० मि० लि०) या १। से २॥ तो०।

२—टिंक्चुरा क्वाशिई Tinctura Quassiae (Tinct. Quass.), I. P. & I. P. L.—ले०; टिंक्चर ऑव क्वाशिया Tincture of Quassia—अं०; भारंगी का निष्कर्ष—सं०। मात्रा—३० से ६० बून्द या मिनम् (२ से ४ मि० लि०) या ½ से १ ड्राम।

३—इंफ्युजम् क्वाशिई कंसन्ट्रेटम Infusion Quassiae Concentratum (Inf. Quass. Conc.) I. P. L.—ले०; कान्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव क्वाशिया Concentrated Infusion of Quassia—अं०। मात्रा—३० से ६० बून्द या मिनम्।

४—इन्फ्युजम् क्वाशिई रिसेन्स Infusum Quassiae Recens I. P. C.—ले०; फ्रेश इन्फ्युजन ऑव क्वाशिया Fresh Infusion of Quassia—अं०; भारंगी का अभिनव फाण्ट। मात्रा—½ से १ औंस।

जॅन्शिआना (जॅन्शन), B. P.

Gentiana (Gentian.)—ले० ।

Family : Gentianaceae (किराततिक्तादि-कुल)

नाम—जॅन्शिआनी रेडिक्स Gentianae Radix-ले०; जन्शिअन (जंशन) रूट Gentian Root—अं०; जंशन मूल या जंसन की जड़—हिं०,जिन्तियाना—अ०, फा० ।

प्राप्ति-साधन—यह जॅन्शिआना लूटिआ (Gentiana lutea Linn.) नाम वनस्पति की शुष्क की हुई एवं फर्मेण्टेड (Fermented) पाताली धड़ (Rhizone) एवं जड़ (Root) होती है ।

वक्तव्य—यूनान में एलीरिया (Allyria) के एक बादशाह का नाम जन्तीयूस था । उसने सर्वप्रथम इस औषधि के बल्य (Tonic) प्रभावों का पता लगाया था । उसी के नाम पर उसका नामकरण 'जन्शन' किया गया । 'लूटिआ' का अर्थ 'यलो Yellow अर्थात् पीतवर्ण' होता है । चूँकि इस वनस्पति में पीतवर्ण के पुष्प आते हैं, अतएव इसका ऐसा नाम धारण किया गया ।
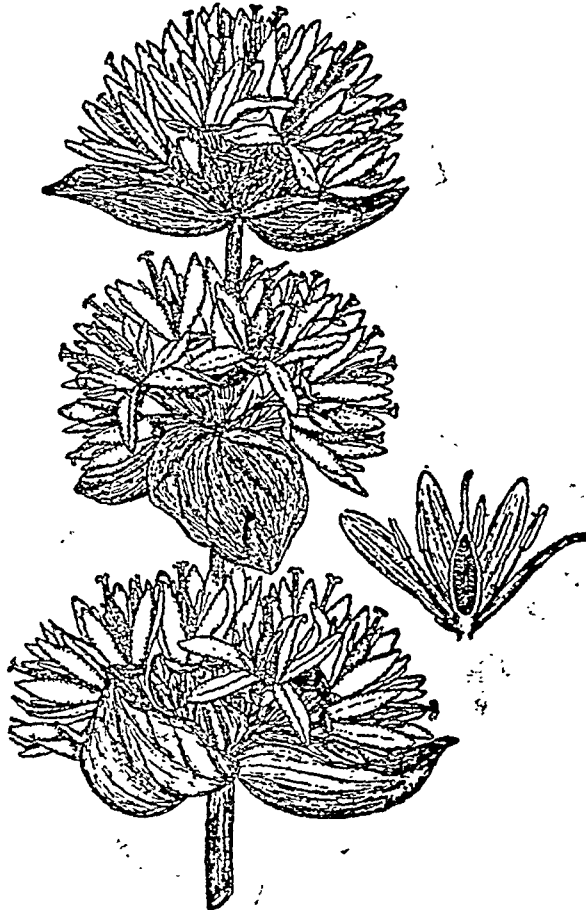
चित्र ३—जॅन्शिआना लूटिआ का पुष्पिताग्र (Flowering head) एवं पृथक् एक पुष्पका विच्छेद करके (Dissected flower) दिखाया गया है ।

इतिहास—हकीम 'दीसक़ूरीदूस यूनानी' एवं हकीम 'प्लाइनी (Pliny) रूमी' को इस औषधि का ज्ञान था। उन्होंने 'जिन्तिआना' के नाम से इसका वर्णन किया है। मध्यकालीन युग में यूरोप में यह औषधि सांप के विष के अगद (Antidote) के रूप में प्रसिद्ध थी। इसी से अरबी में इसका एक नाम 'दवाउल् हय्य' (अर्थात्) हय्या (सांप) की दवा भी है।

उत्पत्ति-स्थान—मध्य और दक्षिण यूरप के पर्वतीय प्रान्त तथा एशियामाइनर। स्पेन से काफी मात्रा में यह औषधि विदेशों को भेजी जाती है।

वर्णन—जन्शन के पौधे प्रायः गज-सवागज ऊँचे होते हैं, जो मध्य एवं दक्षिणी यूरोप तथा एशियामाइनर आदि के पर्वतीय प्रांतों में जंगली रूप से पाये जाते हैं। प्रायः ४–५ वर्ष पुराने पौधों की जड़ों एवं राइजोम को खोदकर निकाल लेते एवं शुष्क कर लेते हैं। यह संग्रह का कार्य प्रायः मई से अक्टूबर मास तक करते हैं। ताजी जड़ें अन्दर से सफेद रंग की एवं गन्धहीन होती हैं। इसे ह्वाइट White या अनफर्मेंएटेड जेन्शन (Unfermented Gentian) कहते हैं। व्यवसाय में उक्त सफेद जन्शन (White Gentian) की माँग बहुत कम होती है। सफेद जन्शन के शुष्कीकरण में इसका रंग धीरे धीरे बदल कर सफेद से पीताभ-भूरा (Yellowish brown) हो जाता है, और उसमें एक विशिष्ट गंध भी उत्पन्न हो जाती है। इसका व्यावसायिक नाम "लालजन्शन Red Gentian" या "फर्मेंएटेड जन्शन"Fermented Gentian" है। यह गाढ़े रंग का होता है एवं तिक्तता सफेद की अपेक्षया कम होती है, किन्तु एक विशिष्ट गंध पाई जाती है जो प्रायः ताजे या सफेद किंवा अनफर्मेंएटेड जन्शन में नहीं पाई जाती।
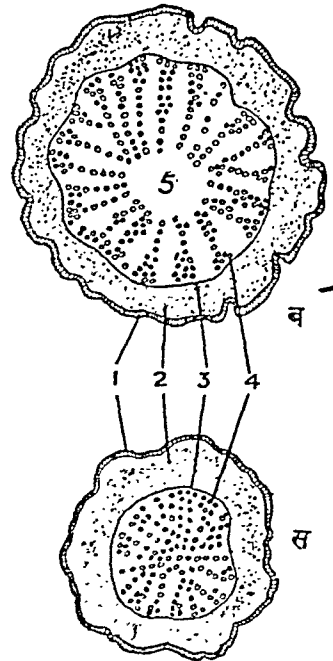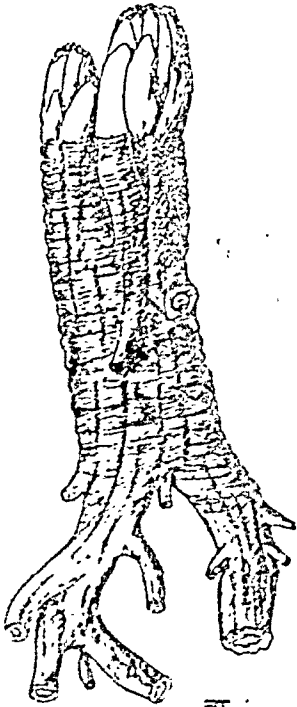
चित्र ४—(अ) जँशन का मूल (Root) एवं मूलस्तम्भ (Rootstock)।

(१) त्वचा (Cork)
(२) त्वक् (Bark)

(ब) मूलस्तम्भ का अनुप्रस्थ विच्छेद ।
(स) मूल या जड़ का अनुप्रस्थ विच्छेद ।

(३) एधा (Cambium)
(४) काष्ठ (Wood)
(५) मज्जक (Pith)

जन्शन में वेलनाकार भौमिक काण्ड पाये जाते हैं, जिनकी मोटाई की परिधि कभी कभी ४ सेंटीमीटर तक होती है। इसी राइजोम से जड़ें निकलती हैं, जिनमें कोई कोई १ गज से भी लम्बी होती हैं। राइजोम के अग्र-सिरे (Crown) १-४ वायव्य तने निकले होते हैं। राइजोम जड़ों की अपेक्षा मोटा होता है और उसमें १ या अधिक अग्र्य कलिकायें होती हैं। शुष्क होने पर राइज़ोम पर अनुप्रस्थ झुर्रियाँ पड़ती हैं। किन्तु जड़ों पर यह झुर्रियाँ अनुलम्ब दिशा में होती हैं। पूर्णतः शुष्क होने पर यह जड़भङ्गुर (Brittle) होती हैं, किन्तु आर्द्र वायुमंडल में रहने पर यह आर्द्रता को ग्रहणकर चिमड़ी (Tough) हो जाती हैं । जन्शन में एक विशिष्ट गंध पाई जाती है, और स्वाद में प्रारम्भ में मधुर, तदनु अत्यन्त तिक्त होता है।

रासायनिक संघटन—इसमें जन्शिइन (Gentiin) नामक एक ग्लाइकोसाइड (Glycoside) तथा (२) जन्शिआमरिन (Gontiamarin), (३) जंशिआनिक एसिड (Gentianic Acid), (४) जन्शिओनोज नामक एक त्रि-शर्करेय (Trisaccharide), (५) पेक्टिन (Pectin) तथा एक उत्पत् तैल पाया जाता है।

असंयोज्यपदार्थ (Incompatibles)—लौह एवं सीस के लवण तथा सिल्वर नाइट्रेट।

जंशिआनी पल्विस Gentianae Pulvis (Gentian. Pulv.)—ले०; **पाउडर्ड जंशिअन Powdered Gentian**—अं०; जंशन चूर्ण—हिं०। जंशन का चूर्ण हल्के भूरे रंग का अथवा पीलापन लिए भूरे रंग का होता है।

(ऑफिशल योग : British Pharmacopoeial (B. P.) Preparation)—

१—इन्फ्युजम् जेन्शिआनी कम्पोजिटम् Infusum Gentianae Compositum (Inf. Gent. Co·)—ले०; कम्पाउण्ड इन्फ्युजन ऑव जेन्शन Compound Infusion of Gentian—अं०। निर्माण—कन्सन्ट्रेटेड कम्पाउण्ड इन्फ्युजन ऑव जेन्शन १२५ मि० लि० (सी० सी०), परिस्रुत जल (Distilled water) इतना मिलायें कि तैयार औषधि १००० मिलिलिटर हो जाय। मात्रा- ½ से १ फ्लुइड औंस (१५ से ३० मि० लि०) या १। से २॥ तोला। वक्तव्य—औषधि तैयार करने के बाद १२ घंटे के अन्दर ही इसका उपयोग करें, क्योंकि इसके बाद खराब हो जाने का डर है।

२—इन्फ्युजम् जंशिआनी कम्पोजिटम् कन्सेन्ट्रेटम् Infusum Gentianae Compositum Concentratum (Inf. Gent, Co. Conc.)—ले०; कन्सन्ट्रेटेड कम्पाउण्ड इन्फ्युजन ऑव जेन्शन Concentrated Compound Infusion of Gentian—अं० । मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

३—टिंक्चुरा जेंशियानी कम्पोजिटा Tinctura Gentianae Composita (Tinct. Gent. Co.)—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव जेन्शन Compound Tincture of Gentian—अं०। मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

जंशिआना लूटिया की भारतीय प्रतिनिधि औषधिः—

इन्डियन जंशिअन (I. P. C.)

(Indian : Gentian Root), I. P. C.

Family Gentianaceae (किराततिक्तादि-कुल)

नाम—जंशिआनी इन्डिकी राइजोमा Gentianae Indicae Rhizoma, जंशिआना Gentiana (Gentian.)—ले० ; इंण्डियन जंशनरूट Indian Gentian Root—अं० ।

प्राप्ति-साधन—इन्डियन जंशन, जेन्शिआना-कुरो Gentiana Kurroo Royle नामक वनस्पति का सुखाया हुआ भौमिक काण्ड (Rhizoma) एवं मूल (Root) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—यह वनस्पति काश्मीर एवं उत्तर-पश्चिम हिमालय प्रदेश में ५,०००–११,००० फुट की ऊँचाई पर पुष्कल पाई जाती है, जहाँ पहाड़ी ढालों पर इसके स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं।

वक्तव्य—वस्तुतः उक्त वनस्पति फारस में पाई जाने वाली-हकीमों की प्रसिद्ध बूटी 'गाफिस' की भारतीय उपजाति है। अतः इसको देशी गाफिस कहा जा सकता है। काश्मीर में इसका स्थानिक नाम 'त्रामाण' है। किसी-किसी के मत से यह आयुर्वेदोक्त 'त्रायमाण' है। इस नाम से यह पंजाब के बाजारों में मिलती भी है। तजकिरतुल् हिन्द एवं मुहीत आजम में भी गाफिस को ही त्रायमाण स्वीकार किया है।

वर्णनपौधा—इसके बहुवर्षायु छोटे-छोटे पौधे (Perennial herbs) होते हैं, जिनमें मोटा मूलस्तम्भ (Root-stock) होता है। इसकी पत्तियाँ कम चौड़ी एवं आयताकार (Narrowly oblong) अथवा रेखाकार (Linear) होती हैं। जड़ के पास की पत्तियाँ (Radical leaves) काण्डपत्रों (Stem leaves) की अपेक्षा बड़ी होती हैं। इसमें नीले रंग के खूबसूरत फूल लगते हैं, जिन पर सफेद चित्तियाँ या बिन्दु पाये जाते हैं। फल सामान्यस्फोटी प्रकार के (Capsules) होते हैं, जो १८ मिलिमिटर लम्बे तथा ५ मिलिमिटर चौड़े होते हैं। बीजों की लम्बाई चौड़ाई की अपेक्षा दुगुनी होती है। राइजोम एवं मूल—राइजोम प्रायः रम्भाकार या बेलनाकार (Cylindrical) होते हैं, जिनकी गोलाई का व्यास २ से २½ सेंटीमीटर होता है। राइजोम के अग्र पर वलयाकार रेखायें (Annulate) होती हैं। जड़ पर तथा राइजोम के अग्रिम सिरे को छोड़कर शेष भाग पर लम्बाई की दिशा में झुर्रीदार रेखायें (Longitudinally Wrinkled) होती हैं। बाह्यतः उक्त भौमिककाण्ड एवं मूल हल्के भूरे रंग से लेकर गाढ़े भूरे रंग के होते हैं। मात्रा—१० से ३० ग्रेन (५ रत्ती से लगभग २ माशा तक) या ०·६ से २ ग्राम।

योग (I. P. C. Prepariton)।

१—एक्स्ट्रैक्टम् जंशिआनी इंडिकी Extractum Gentianae Indicae (Ext.Gent. Ind.)—ले०; एक्स्ट्रेक्ट ऑव इन्डियन जंशन Extract of Indian Gentian—अं०, देशी गाफिस का घनसत्व—हिं०। मात्रा—२ से ८ ग्रेन (१ से ४ रत्ती) या ०·१२ से ०.५ ग्राम। वक्तव्य—इसके संग्रह में इसको नमी से बचाना चाहिए तथा ठंढे स्थान में रखना चाहिए।

२—इन्फ्युजम् जंशिआनी कम्पोजिटम् Infusum Gentianae Compositum (Inf. Gent. Co)-ले०; कम्पाउण्ड इन्फ्युजन ऑव जंशिअन Compound Infusion of Gentian--अं० ।

३—इन्फ्युजम् जंशिआनी कम्पोजिटम् कन्सन्ट्रेटम् Infusum Gentianae Compositum Concentratum (Inf. Gent. Co. Conc.)--ले०; कन्सन्ट्रेटेड कम्पाउण्ड इन्फ्युजन ऑव जंशिअन Concentrated Compound Infusion of Gentian—अं० । मात्रा--३० से ६० मिनम् (बूंद) या २ से ४ मि० लि० ।

३ टिंक्चुरा जंशिआनी कम्पोजिटा Tinctura Gentianae Composita (Tinct. Gent. Co.) ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव इन्डियन जंशन Compound Tincture of Indian Gentian-- अं० । मात्रा—३० से ६० मिनम् या (२ से ४ मि० लि) ।

ऑरन्शियाइ कॉरटेक्स सिक्केटस् (I. P., B. P.)
Family : Rutaceae (जम्बीर-कुल)

नाम—ऑरन्शियाइ कॉरटेक्स सिक्केटस् Aurantii cortex Siccatus (Aurant. Cort. Sicc.), I. P. , लाइमोनिस कॉरटेक्स सिक्केटस् Limonis Cortex Siccatus (Limon. Cort. Sicc.), B. P.—ले०; ड्राइड ऑरेन्ज पील (Dried Orange Peel), I. P. , ड्राइड लेमन पील (Dried Lemon Peel), B. P.— अं०; कड़वी नारंगी का सुखाया छिलका ।

प्राप्ति-साधन—यह साइट्रस् क्राइसोकार्पा Citrus Chrysocarpa Lush. (Citrus aurantium Linn, var.), I. P. अथवा साइट्रस् लाइमन Citrus limon Burm. (B. P.) के पक्व अथवा लगभग पके फलों की फलभित्ति (Pericarp) का सुखाया हुआ बाह्य छिलका होता है ।

आरन्शियाइ कॉरटेक्स रिसेन्स Aurantii Cortex Recens (Aurant. Cort. Rec.), I. P., लाइमोनिस कॉरटेक्स रिसेन्स Limonis Cortex Recens (Limon. Cort. Rec.), B. P.—ले०; फ्रेश ऑरेन्ज पील (Fresh Orange Peel), फ्रेश लेमन पील (Fresh Lemon Peel)—अं० । अभिनव नारंग वल्कल— सं०, कड़वी नारंगी का ताजा छिलका—हिं० ।

उत्पत्ति स्थान—सिसिली, माल्टा तथा दक्षिणी स्पेन आदि भूमध्यसागरीय प्रान्त एवं भारतवर्ष ।

ऑरन्शियाइ डल्सिस कॉरटेक्स Aurantii Dulcis Cortex (Aurant. Dul. Cort.), I.P.L.—ले० ; स्वीट-ऑरेंज पील-Sweet Orange-Peel-अं०; मीठी नारंगी का छिलका—हिं० ।

प्राप्तिसाधन—यह साइट्रस ऑरेन्शियम् के साइनेन्सिस भेद (Citrus aurantium linn. var. sinensis Linn.) पक्व अथवा लगभग पक्व फलों की फलभित्ति का ताजा या सुखाया हुआ बाहरी छिल्का होता है ।

(ताजे छिलके के ऑफिशल योग)

१—टिंक्चुरा ऑरन्शियाई Tinctura Aurantii (Tinct. Aurant.), I. P; टिंक्चुरा लाइमोनिश Tinctura Limonis (Tinct. Limon), B. P.—ले०; टिंक्चर ऑव आरेन्ज Tincture of Ora-

nge (I. P.), टिंक्चर ऑव लेमन Tincture of Lemon (B. P.)—अं० । मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद)।

२—सिरपस् ऑरेन्शियाई Syrupus Aurantii (Syr. Aurant.) I. P.; सिरपस् लाइमोनिस् Syrupus Limonis (Syr. Limon.) B. P.—ले०; सिरप ऑव आरेंज Syrup of orange (I. P.), सिरप ऑव लेमन Syrup of Lemon (B. P.)—अं० । शर्वत नारंगी, नारंगी का शर्वत। मात्रा—२ से ८ मि० लि० (३० से १२० मिनम् या बूंद) अर्थात् ½ से २ ड्राम।

(नारंगी के पुष्प के योग)

१—एक्वा आरेंशियाई फ्लोरिस Aqua Aurantii Floris (Aqua Aurant. Flor.) I. P. L. ले०; आरेंज फ्लावर वाटर Orange Flower Water—अं०, नारंग पुष्पार्क—सं०, हिं० । यह ताजे फूलों से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

कड़वी नारंगी के छिलके का उपयोग निम्न योगों के निर्माण में किया जाता है:—

१—इन्फ्युजम् जंशियानी कम्पोजिटम् कंसण्ट्रेटम् (Official in B. P.)

२—टिंक्चुरा जंशियानी कम्पोजिटम् (B. P.)

३—टिंक्चुरा पिक्रोरहाइजी कम्पोजिटा Tintct. Picrorrh. Co. (Official in I. P.)

चिराटा (ता) (चिरायता), I. P., I. P. L.

Chirata (Chirat.) Chirayata.

Family : Gentianaceae (किराततिक्तादि-कुल)

प्राप्ति-साधन—चिरायता, स्वर्शिआ चिरेटा Swertia chirata Buch.—Ham. नामक शाकजातीय वनस्पति (Herb) का पञ्चाङ्ग (Whole plant) होता है, जिसको पुष्प आने एवं फल लगने पर संग्रहकर सुखा लेते हैं।

नाम—चिरायता-हिं०; भूनिम्ब, किराततिक्त, किरात—सं०; चिराता, चिरेता Chireta —बं०; किराईत—म०; करियातुं—गु०; स्वर्शिआचिरेटा Swertia chirata, Buch.—Ham.—ले०।

वक्तव्य—उक्त वनस्पति का जातीय नाम (Generic name) 'स्वर्शिआ Swertia' इमेनुएल स्वर्ट Emanuel Swert नामक एक वनस्पति-विशेषज्ञ के नाम पर रखा गया है। उपर्युक्त पर्यायों को देखने से ज्ञात होता है कि, इसका संस्कृत नाम 'किरात या किराततिक्त विशेष महत्त्व का है, क्योंकि इसके अन्य सभी पर्याय बहुत-कुछ इसी के अपभ्रंश मालूम होते हैं। किराततिक्त का अर्थ है 'किरातों की तिक्त औषधि'। किरात भारतवर्ष की एक जंगली जाति का नाम है। 'किरातार्जुनीयम्' नामक संस्कृत महाकाव्य अतिप्रसिद्ध है, जिसमें किरात वेषधारि भगवान शिव एवं अर्जुन के युद्ध का वर्णन है। भगवान शिव अर्जुन की बहादुरी से प्रसन्न हो अनेक अमोघअस्त्र उनको प्रदान किये थे। यह जाति मुख्यतः हिमालय के पहाड़ी प्रदेशों में निवास करती थी। चूँकि उक्त जाति के लोग पहले से औषधि के तिक्त प्रभावों (Bitter properties) से परिचित और औषधि के रूप में इसका व्यवहार करते थे, अतएव इसका ऐसा प्राचीन नामकरण किया गया प्रतीत होता है। चिरायते का उल्लेख चरक—सुश्रुतादि प्राचीन संहिताओं में भी मिलता है। इसके अतिरिक्त धन्वन्तरि निघण्टु तथा भावप्रकाशादि प्रायः सभी निघण्टुओं में इसका वर्णन मिलता है।

वर्णन—चिरायते के लगभग १½ फुट से ४॥—५ फुट ऊँचे एकवर्षायु शाकजातीय पौधे (Annual herb) होते हैं। शाखायें ऊर्ध्वगामी(Erect) होती हैं। काण्ड का अधःभाग प्रायः लम्बगोल किंतु ऊपर की ओर चौपहल होता है। पत्तियाँ विपरीत (Opposite), चौड़ी-भालाकार, ४ इञ्च लम्बी एवं १॥ इञ्च चौड़ी तथा नोकदार (Acute) होती हैं। पुटचक्र (Calyx) एवं दलचक्र (Corolla) दोनों ही चार-चार विच्छेदयुक्त होते हैं। दलपत्र रंग में प्रायः हरित-पीत (Green-yellow) कभी-कभी बैंगनी रङ्ग की छायायुक्त (Tinged with purple) होते हैं। प्रत्येक विच्छेद पर दो-दो हरिताभ और रोमश ग्रंथियाँ होती हैं। फल सामान्य स्फोटी (Capsule) लगभग ५ मिलिमिटर लम्बे तथा अण्डाकार (Ovoid) होते हैं। बीज लगभग ½ मिलिमिटर लम्बे और बहुकोणीय (Polyhedral) होते हैं। बाजार में औषधीय चिरायते में अधिकांश भाग तने ही का होता है। काण्ड के अन्दर कोमल मज्जक(Pith) होता है, जो आसानी से काण्ड से पृथक हो जाता है। बाह्यतः काण्ड बैंगनी आभा लिए भूरे या पीले रंग का होता है। औषधि गन्धरहित एवं स्वाद में अत्यन्त तिक्त होती है।

रासायनिक संघटन—(१) चिरेटिन (Chiratin) नामक विरूपीय (Amorphous) अत्यन्त तिक्त ग्लुकोसाइड (Glucoside), जो इसका प्रधान एवं सक्रिय घटक होता है; (२) ओफेलिक एसिड (Ophelic acid)। इसमें प्रायः टैनिन नहीं पाया जाता।

मात्रा—१० से ३० ग्रेन (५ रत्ती से २ माशा)।

चिरायते के योग (I. P., I. P. L., & I. P. C. Preparations):—

१—इन्फ्युजम् चिरेटी कम्पोजिटम् कन्सन्ट्रेटम् Infusum Chiratae Compositum Concentratum, I. P. L. (Inf. Chirat. Co. Conc.)—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव चिरेटा Concentrated Infusion of Chirata—अं०; चिरायता का गाढ़ा फाण्ट—हिं०। मात्रा— ३० से ६० मिनम् या २ से ४ मि० लि०।

२—टिंक्चुरा चिरेटी कम्पोजिटा Tinctura Chiratae Composita, I. P. L. (Tr. Chirat. Co.) ले०; कम्पाउन्ड टिंक्चर ऑव चिरेता Compound Tincture of Chirata—अं०। मात्रा—३० से ६० मिनम् या २ से ४ मि० लि०।

३—इन्फ्युजम् चिरेटी रिसेन्स Infusum Chiratae Recens (Inf. Chirat. Rec.) I. P. C.—ले०; फ्रेश इन्फ्युजन ऑव चिरेटा Fresh Infusion of Chirata.—अं; चिरायते का अभिनव फाण्ट (अभिनव ताजा) चिराता फाण्ट—हिं०। निर्माणविधि—जवकुट चिरायता २॥ तो०, उबलता हुआ परिस्रुत जल (Boiling Distilled Water.) आधा पाव (१० फ्लुइड औंस)। जब पानी उबलने लगे चाय की तरह चिरायते को डालकर ढक्कन बन्द कर दें। १५ मिनट के बाद छान लें। मात्रा—१५ मि० लि० से ३० मि० लि० (½ से १ औंस = १। तोला से २॥ तोला)। वक्तव्य—औषधि-योजना (Dispensing Purposes.) में उक्त प्रकारसे बनाया हुआ चिरायते का अभिनव फाण्ट १२ घंटे तक प्रयोग के योग्य रहता है। यदि 'फ्रेश इन्फ्युजन ऑव चिरेटा' का विशिष्ट निर्देश न हो और केवल 'इन्फ्युजन चिरेटी' लिखा हो तो, इन्फ्युजम् चिरेटी रिसेन्स देना चाहिए या इन्फ्युजम चिरेटी कन्सन्ट्रेटम् में ७ गुना परिस्रुत जल मिलाकर काम में लाना चाहिए।

१—इन्फ्युजम् चिरेटी कन्सन्ट्रेटम् Infusum Chiratae Concentratum (Inf. Chirat. Conc.) I. P. C.—लै०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव चिरेटा Concentrated Infusion of Chirata—अं० ।

मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०) ।

कालमेघ (यवतिक्ता), I. P., I. P. L. Kalmegh (Kalm.)

Family : Acanthaceae (वासक-कुल)

नाम—कल्पनाथ, कालमेघ—हिं०; यवतिक्ता ?—सं०; कालमेघ—बं०; पालेकिराईत—म०; लीलु करियातुं—गु०; एन्ड्रोग्रेफिस पेनिक्युलेटा Andrographis paniculata, Nees.–लै०; एन्ड्रोग्रेफिस Andrographis, किरयात Kiryat, क्रियेत Creat—अं० ।

औषध्यर्थ प्रयुक्त कालमेघ उपर्युक्त औषधि के जड़ को छोड़कर सुखाया हुआ या ताजा शेष भाग (Aerial parts) या पञ्चाङ्ग (Whole plant) होता है ।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष में इसके स्वयंजात एवं लगाये हुए पौधे मिलते हैं ।

वर्णन—कालमेघ के १ फुट से ३ फुट ऊँचे बहुशाखीय एकवर्षायु छोटे-छोटे पौधे (An erect branched annual) होते हैं । काण्ड चौपहल (Quadrangnlar) होता है । ऊर्ध्वभाग में तथा कोमल शाखाओं पर धारायें अधिक स्पष्ट होने से काण्ड गाढ़े प्रायः सपक्ष (Winged) मालूम पड़ता है । काण्ड गाढ़े हरे रंगका तथा व्यास में २ से ६ मिलिमिटर होता है । पर्वों पर काण्ड शेष भाग की अपेक्षा अधिक स्थूल तथा पर्वान्तरिक भाग में अनुलम्ब खात युक्त (With longitudinal fissures) होता है । पत्तियाँ आकार में भालाकार, २–३॥ इंच तक लम्बी तथा १ इंच तक चौड़ी, मसृण तथा अखण्ड-तट (Entire margin) वाली होती हैं । ये पत्तियाँ काण्ड पर चतुर्पंक्तिक अभिमुख क्रम से स्थित होती (Decussate) हैं । पर्णवृन्त (Petiole) बहुत छोटे (०·६ मिलिमिटर) होते हैं । पुष्पव्यूह सवृन्त कण्डज (Receme) होता है, जो पत्तियों के कोणों से निकलता (Axillary) है अथवा शाखाओं पर स्थित होता है । सम्पूर्ण पुष्प-व्यूहों की रूपरेखा पिरामिडाकार मंजरी-सम (Pyramidal paniculate) होता है । पुष्प आकार में छोटे तथा दलचक्र (Corolla) रंग में पाटल सम (Rose coloured) तथा वासक-कुल के विशिष्ट लक्षणानुसार द्वि-ओष्ठी (Bi-labiate) होता है । ऊर्ध्वोष्ठ (Upper lip) दो खण्डोंवाला तथा अधःओष्ठ (Lower lip) तीन खण्डोंवाला होता है । उक्त अभ्यन्तर कोश (Corolla) सूक्ष्म ग्रंथि-रोमश (Glandular pubescent) होता है । फल सामान्य कटोटी प्रकार का (Capsule) तथा द्वि-कोष्ठी (२-celled) होता है । प्रत्येक में अनेक बीज होते हैं । कालमेघ के फल बाह्यतः देखने पर 'जौ' की तरह लगते हैं । इसी आधार पर बंगाल के वैद्य इसको यवतिक्ता कहने लगे । पौधे में कोई गंध नहीं होता किन्तु स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है । मात्रा—(१) चूर्ण १० से २० ग्रेन या ५ से १० रत्ती; **स्वरस** २–४ माशा; क्वाथ २ से ४ तो० ।

रासायनिक संघटन—(१) पीतवर्ण के २ मणिमीय तिक्तसत्व (Crystalline bitters) जिनका रासायनिक सूत्र क्रमशः $C_{१९}H_{२८}O_{५}$ तथा $C_{१९}H_{३१}O_{५}$ (कालमेघिन Kalmeghin) है; (२) एन्ड्रोग्रेफोलिड Andrographolid ($C_{२०}H_{३०}O_{५}$) तथा एन्ड्रोग्रेफाइड ($C_{१५}H_{२७}O_{४}$); (३) अल्प मात्रा में टैनिन, उत्पत् तैल एवं सोडियम् क्लोराइड।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रक्टम् कालमेघी लिक्विडम् Extractum Kalmeghi Liquidum, I. P. L. (Ext. Kalm. Liq.)—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रक्ट ऑव कालमेघ Liquid Extract of Kalmegh—अं०; कालमेघ का प्रवाही घनसत्व—हिं० । मात्रा—८ से १५ बूंद ।

(नॉट-ऑफिशल)

टॅरेक्सेकम् (दुग्धफेनी), I. P. C.

Taraxacum (Tarax.)

Family : Compositae (मुण्डी-कुल)

टॅरेक्सेकम्, टॅरेक्सेकम् ऑफिशिनेलिस (Taraxacum officinalis, Weber.) नामक क्षुद्र वनस्पति की ताजी या सुखाई हुई जड़ होती है।

नाम। पौधा—जंगली कासनी, दुधल, कानफूल, बरन—हिं०; दुग्धफेनी, कर्णफूल (राजनिघण्टु)—सं०; दूदल (-ली), दुधली, दूधवत्थल—पं०; कासनी दश्ती, कासनी सहराई—फा०; हिंदबाऽब्बर्री, बक़ले यहूदिया—अ०; टॅरेक्सेकम् ऑफिशिनेलिस Taraxacum officinalis Weber.—ले०; डंडेलिअन् Dandelion—अं० । जड़—टरेक्सेसाइ रॅडिक्स Taraxaci Radix—ले०; टॅरेक्सेकम् रूट Taraxacum Root, डंडेलिअन् रूट (Dandelion Root), ह्वाइट वाइल्ड एन्डिह्व रूट (White Wild Endive Root) –अं०; तरख़श्क़ून, बीख़ कासनी (ए) दश्ती–फा०; अस्लुल्हिंदुबा एलबर्री;—अ०; दुग्धफेनी मूल–सं०; जंगली कासनी या दुधलकी जड़–हिं० ।

वक्तव्य—(१) (Taraxacum) शब्द सम्भवतः यूनानी (Greek) भाषा के शब्द 'Taraxis' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है 'नेत्राभिष्यन्द (Inflammation of the eye)।' प्राचीन काल में नेत्रशोथ के लिए इस औषधि का स्वरस प्रयुक्त होता था। इसी लिए सम्भवतः ऐसा नामकरण किया गया प्रतीत होता हैं।

(२) इस वनस्पति के पत्तों के गम्भीर दंदाने सिंह के दाँतों के समान होते हैं, इसलिए अंगरेजी में इसको डॅंडिलाइन (Dandelion सिंहदंत) कहते हैं।

(३) अरबी शब्द 'हिन्दुबा' व्युत्पन्न है रूमी शब्द 'इन्टुबा' से जो बहुवचन है शब्द 'इन्टुबम्' का।

(४) यह औषधि सन् १९१४ के फॉर्माकोपिया (B. P.) में ऑफिशल औषधि थी। यद्यपि साम्प्रतं उससे निकल गई है, किन्तु फिर भी भारतीय चिकित्सकों की दृष्टि से यह महत्व की औषधि है और यकृत व्याधियों में परमोपयोगी है।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त हिमालय, नीलगिरि पर्वत, पश्चिम तिब्बत एवं मिष्मी पर्वत आदि स्थानों में तथा यूरोप और उत्तरी अमरीका में होती है।

वर्णन—इसके बहुवर्षायु छोटे-छोटे पौधे (Perennial herb) होते हैं, जो कासनी या वनगोभी से बहुत-कुछ मिलते-जुलते हैं। पत्तियाँ विनाल (Sessile) तथा जड़ से निकली (Radical) होती हैं। आकार में कुछ-कुछ आयताकार परन्तु परिवर्तनशील तथा २ से ८ इंच लम्बी एवं अनियमित रूप से खंडित होती हैं। खण्ड, रेखाकार (Linear) या त्रिभुजाकार, तीक्ष्णाग्र-दन्तुर (Acute Toothed) तथा दन्ताग्र अधोमुख (Pointing downwards) होते हैं। उक्त खण्ड कभी-कभी भालाकार एवं सरलधार भी हो सकते हैं। पुष्प-व्यूह मुण्डक की भाँति होता है जिनमें जिह्वाकार (Ligulate) पीतवर्ण के पुष्प होते हैं। उक्त पुष्प-व्यूह मूल से निकलने वाले पोले एवं पत्र रहित एकाकी पुष्प-दण्डों पर धारण किए जाते हैं। पुष्प-व्यूह के नीचे बाह्य-आभ्यन्तर रूप से दो पंक्तियों में स्थित अधःपत्रावलि (Involucre) होती है। इसमें चर्मफल या सुतोत्फल (Achenes) लगते हैं, जो चपटे तथा मूल (आधार) की ओर पतले तथा ऊपरी सिरे की ओर भी क्रमशः सकरे होकर चोंच जैसी रचना में अन्त होते हैं, जिस पर रोमकण्टक (Pappus) होता है। वनस्पति के सर्वाङ्ग से एक प्रकार

चित्र ६—दुग्धफेनी (Taraxacum officinalis) का पौधा।

अ– पुष्प (Floret with ligulate corolla)। ब–फल (Fruit withpappus)।
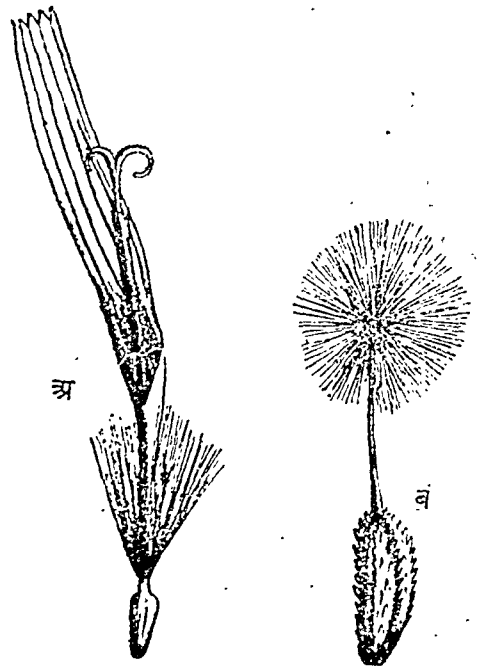
का गंधरहित कड़ुवा दूध सदृश चिकना पदार्थ निकलता है। औषधि में इसके मूल का व्यवहार होता है। **मूल (Root)**—दुग्धफेनी की जड़ रम्भाकार (Cylindrical) या कुछ-कुछ चपटी तथा नीचे की ओर मूली की भाँति उत्तरोत्तर पतली होती है। वाह्यतः रंग में पीताभ-भूरे रंगसे लेकर (ऊदी रंग) भूरापन लिए काले रंग की होती है। जड़पर अनुलम्ब
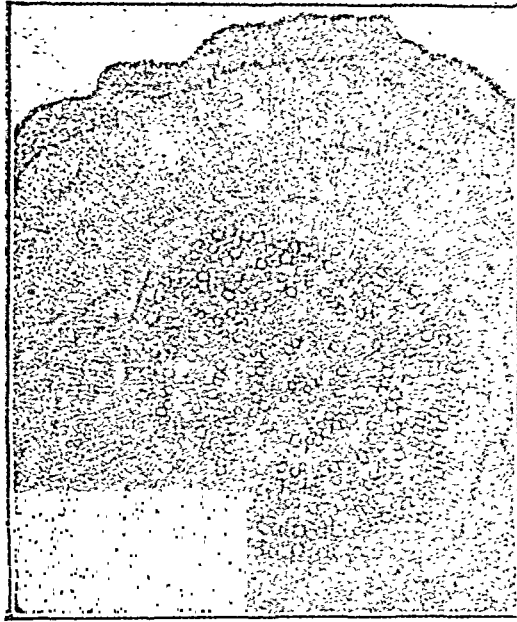
चित्र ७—टॅरेक्सेकम् ऑफिशिनेलिस की जड़का अनुप्रस्थ विच्छेद (Transverse section) जिसमें आक्षीर-वाहिनियों (Latex-vessels) के एक केन्द्रिक चक्र (Concentric rings) दिखाये गये हैं।

दिशा में अनेक झुर्रियाँ पड़ी हुई होती हैं तथा टूटी हुई अनेक जड़ों के चिह्न (Scars) होते हैं। सूखी जड़ तोड़ने पर खट से टूटती है (Fracture short and horny) किन्तु नम होने पर लचीली (Tough) हो जाती है। अनुप्रस्थ विच्छेद में वार्क का अन्तः भाग हल्के भूरे रंग का होता है, तथा इसमें आक्षीर-वाहिनियों के अनेक एक केन्द्रिक चक्र होते हैं। काष्ठ भाग (Wood) पीत वर्ण का तथा मोटाई में १--४ मिलिमिटर होता है। जड़ में एक हल्की गंध होती है तथा स्वाद में अत्यंत तिक्त होती है।

टॅरेक्सेकम् के योग (I. P. C. Preparations)

१—डिकॉक्टम् टॅरेक्सेसाइ Decoctum Taraxaci (Dec. Tarax.)—ले०; डिकॉक्शन ऑव टॅरेक्सेकम् Decoction of Taraxacum—अं०; दुग्धफेनी क्वाथ—सं०, हिं० । निर्माण-विधि—दुग्धफेनी की जड़ का जवकुट चूर्ण २॥ तोला (१ औंस), परिस्नुत जल १ सेर (२० औंस)।

२४ औंस (१२ छटांक) जल में दुग्धफेनी की जड़ के चूर्ण को १५ मिनट तक उबालकर छान लें और आवश्यकतानुसार परिस्रुत जल मिलाकर क्वाथ का अभीष्ट परिमाण करलें।

मात्रा—½ से १ औंस (१। तोला से २॥ तोला)।

वक्तव्य—आयुर्वेदिक क्वाथ कल्पना के अनुसार भी इसका निर्माण कर सकते हैं।

२—एक्स्ट्रॅक्टम् टॅरॅक्सेसाइ Extractum Taraxaci (Ext. Tarax.)—लॅ०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव टॅरॅक्सेकम् Extract of Taraxacum—अं०; दुग्धफेनी घनसत्व—सं०, हिं०। मात्रा—५ से १५ ग्रेन (२ रत्ती से १ माशा तक)।

३—एक्स्ट्रॅक्टम् टॅरॅक्सेसाइ लिक्विडम् Extractum Taraxaci Liquidum (Ext. Tarax. Liq.)—लॅ०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव टॅरॅक्सेकम् Liquid Extract of Taraxacum—अं०; दुग्धफेनी का प्रवाही घनसत्व—सं०, हिं०। मात्रा—½ से १ फ्लुइड औंस (१। रुपया भर—२॥ रुपया भर)।

४—सक्कस टॅरॅक्सेसाइ Succus Taraxaci (Succ. Tarax.)—लॅ०; जूस ऑव टॅरॅक्सेकम् Juice of Taraxacum—अं०; दुग्धफेनी स्वरस—सं०, हिं०।

निर्माण-विधि—दुग्धफेनी की जड़ को कूचकर रस निकाल लें और उसमें अल्कोहल् (९०%) मिलाकर ७ दिन तक रखा रहने दें। बाद में छान लें। मात्रा—१ से २ फ्लुइड ड्राम।

एरिस्टोलोकिआ (ईश्वर मूल), I. P., I. P. L

Aristolochia (Aristoloch.)

Family : Aristolochiaceae (ईश्वरमूलादि-कुल)

पर्याय—इन्डियन बर्थवर्ट Indian Birthwort.

प्राप्ति साधन—यह एरिस्टोलोकिआ इन्डिका (Aristolochia indica Linn.) नामक लता के सुखाये हुए काण्ड एवं मूल होते हैं, जो औषध्यर्थ प्रयुक्त होते हैं।

नाम—ईश्वरमूल, इसरमूल, इसरौल—हिं०; नाकुली, ईश्वरी—सं०; सापसण—म०।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष के मैदानों तथा निचले पहाड़ी प्रदेशों में इसकी लता पाई जाती है।

रासायनिक संघटन—इसमें ३ सक्रिय क्षाराद पाये जाते हैं, जिनको (१) एरिस्टोलोकीन (Aristolochine) नाम दिया गया है। इसके अतिरिक्त (२) एक उत्पत् तैल तथा (३) तीन नाइट्रोजेनस एसिड्स (Aristinic, aristidine and aristolic acids) भी इसमें पाये जाते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—टिंक्चुरा एरिस्टोलोकिई (Tinctura Aristolochiae (Tinc. Aristoloch.), I. P.& I. P. L.—लॅ०; टिंक्चर एरिस्टोलोकिआ Tincture Aristolochia—अं०। मात्रा—३० से ६० मिनम् (बून्द) या २ से ४ मि० लि०।

I.P.L. अर्थात् इन्डियन फॉर्माकोपिअल लिस्ट (Indian Pharmacopoeial List)।

एल्सटोनिआ (सप्तपर्ण)

(Alstonia: Alston.), I. P.

Family: Apocynaceae (करवीरादि-कुल)

पर्याय—एल्सटोनिआ कॉर्टेक्स Alstonia Cortex; डिटाबार्क Dita Bark

प्राप्ति-साधन—यह एल्सटोनिआ स्कोलेरिस Alstonia scholaris (Linn.) R. Br. नामक वृक्ष के काण्ड की छाल (Bark) होती है, जो औषध्यर्थ प्रयुक्त की जाती है। उक्त छाल में कोई विशिष्ट गंध नहीं पाई जाती, किन्तु इसमें स्थाई रूप से अत्यन्त तिक्त स्वाद होता है।

नाम—सतौना, छतिवन—हिं०; सप्तपर्ण—सं०; सतौना—पं०; छातिम—बं०; सातवीण म०; सातवण-गु० ।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष में उष्ण एवं समशीतोष्णकटिबन्धीय प्रान्तों में जहाँ वृष्टि काफी होती है इसके वृक्ष पाये जाते हैं। स्थान-स्थान पर बगीचों में इसके लगाए हुए वृक्ष भी देखे जाते हैं।

रासायनिक संघटन—(१)डिटामीन (Ditamine $C_{16}H_{19}O_{2}N.$), एकिटेनीन (Echitenine $C_{20}H_{27}O_{4}N.$), एकिटामीन (Echitamine $C_{22}H_{28}O_{4}N_{2}$) नामक क्षारोद; (२) एकिसेरिन (Echicerin), एकिटिन (Echitin) एवं एकिटिन (Echitein) ।

मात्रा—६० से १२० ग्रेन (४ से ८ ग्राम)।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् एल्स्टोनिई लिक्विडम् Extractum Alstoniae Liquidum (Ext. Alston. Liq.), I. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रक्ट ऑव एल्सटोनिआ Liquid Extract of Alstonia—अं० । मात्रा—४ से ८ मि० लि० (या १ से २ ड्राम) ।

२—टिंक्चुरा एलस्टोनिई Tinctura Alstoniae (Tinct. Alston), I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव एल्सटोनिआ Tincture of Alstonia—अं० । मात्रा—३० से ६० मिनम् (बूंद) या २ से ४ मि० लि० (½ से १ ड्राम)।

३—इन्फ्युजम् एल्सटोनिई Infusum Alstoniae (Inf. Alston.), I. P. C.—ले०; इन्फ्युजन ऑव एल्सटोनिआ Infusion of Alstonia—अं० । मात्रा—½ से १ फ्लुइड औंस । वक्तव्य—निर्माण के १२ घन्टे बाद यह प्रयोग के योग्य नहीं रहता ।

टिनोस्पोरा Tinospora, I. P. L.

(गुडूची या गुर्च)

Family: Menispermaceae (गुडूच्यादि-कुल)

प्राप्ति-साधन—यह टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिआ (Tinospora Cordifolia Miers.) नामक प्रसिद्ध आरोही लता के शुष्क किए हुए काण्ड होते हैं, जिसका छिलका नहीं उतारा जाता।

I. P. (The Pharmacopoeia of India) ।

नाम—गुर्च, गिलोय—हि०; गुडूची, अमृता, छिन्नरुहा, वत्सादनी, कुण्डलिनी, चक्रलक्षणा, छिन्नोद्भवा-सं०; गुलंच Gulanch—बं०; गुलवेल—म०; गलो—गु०; गिलोर—सि०; गडू—कच्छ; अमर दवलिल—क०; चिट्टामृतम्, पैय्यमृतम्—मल०।

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष के समस्त उष्णकटिबन्धीय प्रदेश, लंका, वर्मा तथा अंडमानद्वीप समूह में गुर्च की लता स्वयंजात रूप से पुष्कल रूप से पाई जाती है। यह आयुर्वेद की एक प्रसिद्ध एवं सर्वसाधारण में प्रचलित औषधि है। बागों एवं गृहसमीपवर्ती निम्ब के वृक्षों पर चढ़ी हुई इसकी लगाई हुई लतायें बहुतायत से देखने को मिलती हैं।

रासायनिक-संघटन—(१) तीन मणिमीय तिक्तसत्व—गिलोइन (Giloin), गिलोइनिन (Giloinin) एवं गिलॉस्टेरॉल (Gilosterol); (२) बर्बेरीन (Berberine) तथा एक मोमजातीय (Waxy) तत्व।

योग (Preparations)।

१—टिंक्चुरा टिनोस्पोरा Tinctura Tinospora (Tinct. Tinosp.), I. P. L.—ले०; टिंक्चर ऑव टिनोस्पोरा (Tincture of Tinospora)—अं०। मात्रा—३० से ६० मिनम् (बून्द) या २ से ४ मि० लि०।

पिक्रोर्‌हाइजा (कुटकी) I. P., & I. P. L.

Picrorhiza (Picrorh.)

Family : Scrophulariaceae (कटुका-कुल)

प्राप्ति-साधन—यह पिक्रोर्‌हाइजा कुरो (Picrorhiza kurrooa Royle ex Benth.) नामक क्षुद्र वनस्पति (Herb) के सुखाये हुए भौमिककाण्ड (राइजोम) के टुकड़े होते हैं, जिनसे लगी हुई सूत्राकार जड़ें काटकर अलग कर दी जाती हैं।

नाम—कुटकी—हि०; कटुका, कटुकी, तिक्ता, कटुरोहिणी—सं०; कौड़ पं०; कट्की—बं०; कालीकुटकी, बालकडू म०; कडू—गु०; खरबके हिन्दी अ०, फा०।

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय प्रदेश में काश्मीर से सिक्कम तक ६,००० से १५,००० फुट की ऊँचाई पर इसके स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं।

रसायनिक-संघटन—(१) पिक्रोर्‌हाजिन (Picrorhizin २६·६%) नामक मणिमीय स्वरूप का ग्लाइकोसाइड जो स्वाद में अत्यन्त तिक्त (Bitter) होता है। जलांशन (Hydrolysis) से वियोजित (decomposed) होने पर यह पिक्रोर्‌हाइजेटिन (Picrorhizetin) एवं डेक्स्ट्रोज (Dextrose) में विच्छिन्न होता है। उक्त ग्लाइकोसाइड जल, अल्कोहल् (९०%) एसिटोन एवं एथिल एसिटेट में तो सुविलेय होता है, किन्तु क्लोरोफार्म, तथा बेंजीन ईथर में नहीं घुलता। मात्रा। ज्वरघ्न मात्रा (Antiperiodic dose)—४५ से ६० ग्रेन या ३ से ४ ग्राम (३ से ४ माशा)।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रैक्टम् पिक्रोर्‌हाइजी लिक्विडम् Extractum Picrorhizae Liquidum (Ext. Picrorh Liq.), I. P & I. P. L. ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव पिक्रोर्‌हाइजा Liquid Extract of Picrorhiza—अं०। मात्रा १५ से ६० मिनम् (बून्द) या १ से ४ मि० लि० (¼ से १ ड्राम)।

२—टिंक्चुरा पिक्रोर्हाइजी कम्पोजिटा Tinctura Picrorhizae Composita (Tinct. Picrorh. Co.) I. P, & I. P. L. —ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव पिक्रोर्हाइजा Compound Tincture of Picrorhiza—अं० । मात्रा–३० से ६० मिनम् (बून्द) या। २ से ४ मि० लि० ।

कटुपौष्टिक या तिक्तौषधियों के गुण-कर्म
(Pharmacology of Bitters)

तिक्तौषधियाँ रसनेन्द्रिय पर उत्तेजक प्रभाव करके प्रत्याक्षिप्त क्रिया द्वारा (Reflexly) लाला एवं आमाशयिक स्राव में वृद्धि करती हैं। आमाशय पर इनका कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं होता। वास्तव में तिक्तस्वाद का स्वादांकुरों पर उत्तेजक प्रभाव होता है, जिससे अप्रत्यक्षतया आमाशयस्थ रसस्रावी ग्रंथियाँ भी प्रभावित होती हैं। परिणामतः क्षुधावृद्धि तथा पाचन क्रिया में सहायता होती है। आमाशयिक किण्वों की उत्पत्ति पर कोई प्रभाव नहीं होता; यद्यपि आमाशयिक रस की वृद्धि होने से अग्न्याशयिक रस की उत्पत्ति में उत्तेजना अवश्य मिलती है। अतएव तिक्तौषधियों का प्रयोग अग्निदीपन (Stomachic) तथा क्षुधावर्धन प्रभाव के लिए किया जाता है। इनके साथ सुरभित औषधियों (Aromatics) तथा अलकोहल के यौगिकों (Alcoholic preparations) का संयोग कर देने से इनकी क्रियाशीलता तीव्रतर हो जाती है। किन्तु, अधिक मात्रा अथवा अधिक काल पर्यन्त इनके सेवन से उलटा परिणाम होने की आशंका रहती है, जिससे आमाशयिक रस में न्यूनता तथा पाचन सम्बन्धी विकृतियाँ हो सकती हैं। सुरभित तिक्तौषधियाँ (Aromatic bitters), उत्पत् तैल की उपस्थिति के कारण विशेषतः वातानुलोमन (Carminative) प्रभाव भी करती हैं। इसके अतिरिक्त आन्त्र की पुरःसरण गति (Peristalsis) में भी ये वृद्धि करती हैं।

अधिकांश तिक्तौषधियाँ (जैसे उत्पत् तैल) रक्त में श्वेतकायाणूत्कर्ष (Leucocytosis) पैदा करती हैं।

आमयिक प्रयोग (थेराप्यूटिक्स)

लङ्घन अथवा आहारातियोग के कारण आमाशय की पाचन शक्ति दुर्बल हो जाने पर क्षुधावर्धन तथा पाचन में सुधार करने के हेतु तिक्तौषधियों का प्रयोग विशेष लाभकारी है। तीव्र व्याधियों (Acute diseases) से मुक्त होने पर रोगोत्तर काल (Convalescence) में इनका प्रयोग विशेष उपयोगी होता है, किन्तु शूल, वमन, शोथ एवं व्रण युक्त सभी आमाशय व्याधियों, यथा आमाशय प्रदाह, आमाशयशूल (Gastrodynia) आमाशयिक व्रण (Gastric uleer), आमाशयिक कर्कटार्बुद (Gastric Cancer) में इनका प्रयोग निषिद्ध है। सूत्र (चूर्ण) कृमिहरण के लिए इनके फाण्ट का उपयोग गुदमार्ग द्वारा किया किया जाता है। एतदर्थ प्रायः क्वासिया के फाण्ट की १० से १५ औंस (सवा पाव से आधा सेर) मात्रा का प्रयोग वस्ति (Rectal injection) के रूप में किया जाता है। आमाशयान्त्र की पुरस्सरण गति को बढ़ाने के कारण ये वातानुलोमन (Carminative) भी होते हैं। एतदर्थ इनको अन्य वातानुलोमन द्रव्यों के साथ मिलाकर प्रयुक्त कहते हैं। गर्भिणी की अरोचकता (Anorexia) में जंशिअन इन्फ्युजन को डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड के साथ प्रयुक्त करने से रोग के निवारण में बहुत सहायता मिलती है।

चिरायता—इन्फ्युजन चिराता का प्रयोग रोगोत्तरकालिक दौर्बल्य के निवारण के लिए किया जाता है। इससे भूख बढ़ती है और आहार का पाक ठीक तरह से (दीपन-पाचन) होता है। भारतीय चिकित्सकों में चिरायता एक उत्तम मलेरियानाशक औषधि के रूप में प्रसिद्ध है। वैद्य-हकीम द्वारा प्रयुक्त मलेरियानाशक (विषमज्वरघ्न) योगों का यह एक प्रधान घटक होता है। एतदर्थ डाक्टर लोग मिक्सचर में मिलाने के लिए इसके अतिरिक्त अन्य तिक्तद्रव्यों की भांति यह भी रक्तशोधक होता है। एतदर्थ इसके हिम या फाण्ट (Infusion) का व्यवहार होता है।

कालमेघ—बच्चों की यकृतविकृतियों में यह एक प्रसिद्ध एवं उत्तम औषधि है। यकृन्मन्दता (Sluggish Liver) जन्य अग्निमांद्य एवं क्षुधानाश में इसके सेवन से बहुत लाभ होता है। तिक्तबल्य (Bitter tonic) होने के साथ-साथ कुछ सारक (Laxative) भी होता है।

दुग्धफेनी (टैरेक्सेकम्)—दुग्धफेनी की ताजी जड़ का स्वरस या फाण्ट कलम्बा की भांति आमाशयबलप्रद होता है। यह कुछ-कुछ सारक (Laxative) भी होता है। इसके अतिरिक्त यह पित्तरेचक (Cholagogue) एवं मूत्रल (Diuretic) होता है। अतएव कामला आदि में इसके प्रयोग से बहुत लाभ होता है। यकृत की अनेक अन्य बिमारियों में टैरेक्सकम् का प्रयोग बहुत गुणकारी है।

कुटकी (पिक्रोरहाइजा) यह तिक्तबल्य एवं क्षुधावर्धक तथा भेदन होती है। अधिक मात्रा में देने से यह विषमज्वरनाशक (Antimalarial) होती है।

गुड़ूची (टिनोस्पोरा)—यह भी तिक्तबल्य एवं ज्वरनाशक तथा रक्तशोधक होती है। रोगोत्तरकालिक दौर्बल्य निवारण के लिए गुड़ूचीसत्व का प्रयोग सितोपलादि चूर्ण के साथ मिलाकर किया जाता है। विषमज्वर के निवृत्तिकाल (Convalescent period) में अन्य ज्वरों से मुक्त होने के बाद यदि कुछ हल्की हरारत वगैरह बनी हो, भूख न लगती हो तो अमृतारिष्ट (२ तो० बराबर जल के साथ भोजन के बाद) का प्रयोग बहुत गुणकारी है। भारतीय चिकित्सक गुड़ूची के स्वरस (Fresh juice) अथवा तद्घटित योगों का प्रयोग वातरक्त (Gout) में बहुत करते हैं। उक्त रोग में गुड़ूची से बहुत कुछ लाभ होते देखा गया है।

वक्तव्य—औषधि के लिए प्रायः नीम पर चढ़ी हुई गुड़ूची को ग्रहण करना चाहिए।

तिक्तबल्य औषधियों (Bitter tonics) के उपयोगी नुस्खे :—

(१) टिंक्चुरा क्वासिई (Tinct. Quass.) १० बूंद
एसिड नाइट्रो–हाइड्रोक्लोरिक डिल० ८ बूंद
सिरपस ऑरन्शाइ (नारंगी का शरबत) १ ड्राम
एक्वा डेस्टिलेटा (परिस्रुतजल) १ औंस

ऐसी एक-एक मात्रा दिन में २ बार या आवश्यकतानुसार ३ बार दें। बिमारी से उठने के बाद कमजोरी एवं भूख की कमी आदि में बहुत गुणकारी है।

(२) एसिड हाइड्रोक्लोरिक डिल० ८ बूंद
टिंक्चुरा फेराइ परक्लोर० १५,,
ग्लिसरीन ½ ड्राम
इन्फ्युजन ऑव कासिया १ औंस

ऐसी १–१ खुराक सुबह–शाम भोजनोत्तर दें। कमजोरी में वल्य के रूप में उत्तम योग है।

(३) सोडाबाई कार्ब० १५ ग्रेन
टिंक्चरन्युकिसवॉमिकी १० बूंद
टिंक्चुरा जिंजिबेरिस मिटिस २० बूंद
स्पिरिट० क्लोरोफॉर्म० १५ बूंद
इन्फ्युजम् जॅन्शिआनी को० (Inf. Gent. Co.) १ औंस (फ्लुइड)

ऐसी १ खुराक भोजन के ½ घण्टे पूर्व दें। चिरका लानुबन्धि अरोचकता में उपयोगी है।

(४) एक्स्ट्रॅक्टम् टरेक्सेसाइ १० ग्रेन
मैगनेसियाइ सल्फास० १ ड्राम
टिंक्चुरा रिहाइ कम्पोजिटा १ ड्राम
सिरपस जिंजिबेरिस ३० बूंद (आधा ड्राम)
एक्वा डिस्टिलेटा इतना मिलायें कि सब मिलकर १ औंस हो जाय।

ऐसी एक-एक खुराक प्रातः सायं दें। यह मृदुसारक एवं जाठर्य (दीपन-पाचन) प्रभाव करता है।

(५) एक्स्ट्रॅक्टम् टरेक्सिसाइ लिक्विडम् १ ड्राम
एसिड नाइट्रोहाइड्रोक्लोरिक डिल० १० बूंद
टिंक्चुरा क्लोरोफॉर्माई कम्पोजिटस १५ बूंद
इन्फ्युजम् जॅन्शिआनी को०—इतना मिलायें कि सब मिलकर १ औंस हो जाय।

ऐसी एक-एक खुराक दिन में ३ वार (सुबह-दोपहर-शाम) दें। यकृन्मन्दता (Torpid or Sluggishliver) जन्यविकृतियों से बहुत लाभप्रद होता है।

(६) एक्सट्रॅक्टम्टरेक्सिसाइ २४ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् एलोज २४ ग्रेन
पिल्यूला हाइड्रार्जिराइ २४ ग्रेन
पोडोफिलाई रेजिनी ६ ग्रेन
क्विनीनी सल्फास० १२ ग्रेन

सबको मिलाकर २४ गोलियाँ बनायें। ऐसी १–१ गोली प्रातः–सायं दें। कामला (Jaundice) में बहुत उपयोगी हैं।
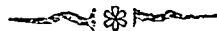
प्रकरण २

पाचक-किण्व (Digestive Ferments)

१ प्रोभुजिनंशिक किण्व (Proteolytic Ferments)

पेप्सिनम् (I. P., B. P.)

नाम—पेप्सिनम् Pepsinum—ले०; पेप्सिन Pepsin—अं०; पाचिसं—० ।

वर्णन—इसकी अंगरेजी एवं लेटिन संज्ञा 'पेप्सिन' व्युत्पन्न है यूनानी शब्द 'पेप्टो' से जिसका अर्थ है 'पाचन करना'। यह आमाशयिक रस में पाया जाने वाला तथा प्रोटीन का पाचन करने वाला एक किण्व या खमीर है, जो सूअर, बछड़े एवं भेड़ आदि भोज्य जन्तुओं के स्वस्थ आमाशयिक श्लैष्मिक कला से प्राप्त किया जाता है। यह अपने से २५०० गुना भार के बराबर स्कन्दित अंडशुक्लि (Coagulated egg albumin) का पाचन कर सकता है।

वक्तव्य—जो पेप्सिन सूअर के आमाशय से प्राप्त किया जाता है, उसकी पाचनशक्ति बछड़े आदि की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। अतएव यूरोप में प्रायः इसी प्रकार की पेप्सिन बनाई जाती है।

स्वरूप—यह रंगहीन अथवा पीताभ-भूरेरंग (Buff-coloured) के अनिश्चितरूपीय चूर्ण या पारभासी पर्त (Scales) के रूप में होता है; स्वाद में किंचित् अम्ल एवं लवण तथा इसमें मांस के समान (Meaty) हल्की गंध आती है। विलेयता—यह साधारण जल में तो कम (१०० भाग जल में १ भाग) किन्तु हाइड्रोक्लोरिक एसिड मिश्रित जल में अधिक विलेय होता है। जल के साथ मिलाने से धुंधला (Opalescent) विलयन बनता है। अल्कोहल् (९० %) तथा सालवेंट ईथर में यह विलेय नहीं होता।

असंयोज्य पदार्थ—अल्कोहल, टैनिन एवं क्षारीय कार्बोनेट्स।

मात्रा (B. P. & I. P. Dose)—५ से १५ ग्रेन (०.३ से १ ग्राम)

(ऑफिशल योग—I. P. Preparations)

१—ग्लिसेरिनम् पेप्सिनाइ Glycerinum Pepsini (Glycer. Pepsin)—ले०; ग्लिसरीन ऑव पेप्सिन Glycerin of Pepsin—अं०। मात्रा २० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

(नॉट-ऑफिशल)

१—मिस्चुरा बिस्मथाइ कम्पोजिटा कम् पेप्सिनो Mistura Bismuthi Composita cum Pepsino (Mist. Bismuth Co. c̄ Pepsin.), B. P. C—ले०; कम्पाउन्ड मिक्सचर ऑव बिस्मथ एण्ड पेप्सिन Compound Mixture of Bismuth and Pepsin—अं०। १ ड्राम मिक्सचर में बिस्मथ का कन्सन्ट्रेटेड सॉल्यूशन ½ ड्राम, पेप्सिन १ ग्रेन, टिंक्चर ऑव नक्स वॉमिका

७½ बूंद डायल्यूट हाइड्रोसायनिक एसिड २ बूंद तथा क्लोरोफॉर्म, सॉल्यूशन ऑव बोर्डो (Bordeaux) एवं जल आदि होते हैं। मात्रा—½ से १ ड्राम या २ से ४ मि० लि० (३० से १२० बूंद, ।

२—मिस्चुरा बिस्मथाइ कम्पोजिटा कम् पेप्सिनो एट मॉर्फिना Mistura Bismuthi Composita cum Pepsino et Morphina. B. P. C। १ ड्राम मिक्सचर में १/४० ग्रेन मॉर्फीन हाइड्रोक्लोर० होता है। मात्रा—½ से १ ड्राम या २ से ४ मि० लि।

३—पेप्टोन (Peptone)—यह श्वेतवर्ण या पीताभ भूरे रंग के गंधहीन एवं विरूपिक चूर्ण (Amorphous powder) के रूप में प्राप्त होता है; अथवा पपड़ीदार चूर्ण (Scales) के रूप में होता है। मात्रा—(१) मुख द्वारा (Orally) ५ से १५ ग्रेन अथवा २½ रत्ती से १ माशा। (२) सूचिकाभरण (इंजेक्शन) द्वारा—½ से १½ ग्रेन।

४—सेरिपेरियम् (Seriparium), B. P. C.। पर्याय—रेनिन (Renin), रेनेट (Rennet)। यह टिकिया (Tablet) या ईसेन्स अर्थात् रूह (Essence) के रूप में प्राप्त होता है और दूध जमाने के काम में आता है। १ पाइन्ट दूध के लिए इसकी १-२ ड्राम मात्रा पर्याप्त होती है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—औषधीय पेप्सिन शरीर के बाहर उष्णता, आर्द्रता एवं अम्लता की उपस्थिति में प्रोभुजिन्-जातिय पदार्थों (यथा अल्व्युमिन, फाइब्रिन आदि) का पाचन कर पेप्टोन्स (Peptones) में परिणित कर देता है। पेप्सिन की इस क्षमता का उपयोग आहार को पूर्व-पाचित करने के लिए किया जाता है। जिन रोगियों में अग्निमांद्य एवं पाचन-दौर्बल्य हो तथा आमाशयिक रस का स्राव समुचित ढंग से न होता हो, तो उसको इस प्रकार पूर्व-पाचित (Predigested) आहार देने की आवश्यकता होती है। किन्तु यह पूर्वपाचित आहार स्वाद में अरुचिकारक होने से, बहुत से रोगी इसको मुख द्वारा सेवन करना पसन्द नहीं करते। ऐसी स्थिति में इसका प्रयोग पोषक-वस्ति (Nutrien tenemā) के रूप में भी कर सकते हैं।

आभ्यन्तर—बाहर की भाँति ही पेप्सिन की क्रिया—आमाशय में भी होती है। अतएव जिन लोगों में आमाशयिक रस (Gastric juice) का उद्रेचन ठीक प्रकार से न होता हो, तो उनमें मुख द्वारा पेप्सिन का सेवन कराने से इस अभाव की पूर्ति हो जाती है। बच्चों के अतिसार में तथा अजीर्ण के कारण होने वाले कतिपय प्रकार के वमन (Vomiting) में इसका प्रयोग उपयोगी होता है। पेप्सिन के प्रयोग के सम्बन्ध में २ बातें विशेष ध्यान देने योग्य हैं। एक तो यह कि इसका वसा जातीय एवं कर्वोजजातीय (Carbohydrates) आहार द्रव्यों पर विशेष प्रभाव नहीं होता, दूसरे आमाशयिक रस में पेप्सिन की क्रिया केवल हाइड्रोक्लोरिक एसिड (लवणाम्ल) की उपस्थिति में ही होती है। अतएव एक तो इसका प्रयोग निरन्तर दीर्घकाल तक नहीं करना चाहिए, दूसरे कभी ऐसा भी होता है कि आमाशयिक रस में पेप्सिन होते हुए भी, वास्तव में हाइड्रोक्लोरिक एसिड की अनुपस्थिति के कारण उसकी क्रिया नहीं होती। ऐसी स्थिति में केवल डायल्यूट हाईड्रोक्लोरिक एसिड सेवन करने से ही काम चल जाता है।

पेप्टोन (Peptone) का प्रयोग अनेक अनूर्जिक अवस्थाओं (Allergic Conditions) में उपयोगी होता है। इसके अतिरिक्त पाचन की विकृति से होने वाले शीतपित्त (पित्ती) एवं अर्धावभेद (Migraine) में भोजन करने के १ घंटे पूर्व ४ रत्ती की मात्रा में कैचेट में रखकर इसका सेवन कराया जाता है। दमा (Asthma), विचर्चिका, कण्डू एवं तृणज्वर (Hay fever) आदि रोगों में भी इसका सेवन उपयोगी समझा जाता है। एतदर्थ सप्ताह में १ या दो बार पेप्टोन का शिरामार्ग द्वारा अथवा पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण किया जाता है। शिरागत इन्जेक्शन के लिए ५ प्रतिशत विलयन की ५ बूंद मात्रा प्रारम्भ करके प्रति मात्रा २½ बूंद बढ़ाते जाना चाहिए। पेश्यन्तरिक मार्ग के लिए ७½ प्रतिशत बल का विलयन प्रयुक्त करते हैं।

प्रयोग-विधि—पेप्सिन का प्रयोग चूर्ण, गुटिका, कैचेट, टिकिया अथवा कैप्स्यूल के रूप में किया जा सकता है। इसके अनेक बाजारू योग व्यर्थ-से होते हैं। ग्लिसेरिनम् पेप्सिनाई (Glycerinum pepsini) एक उत्तम योग है। इसका सेवन भोजन के साथ-साथ अथवा ठीक भोजन के बाद करना चाहिए। इसमें हाइड्रोक्लोरिक एसिड डायल्यूट मिला दिया जाता है, अथवा पेप्सिन का सेवन अलग और हाइड्रोक्लोरिक एसिड की एक ही मात्रा ऊपर से दे दी जाती है।

पेंक्रियाटिनम् Pancreatinum (Pancreatin) I. P., B. P.

यह सूअर, बछड़ा तथा भेड़ आदि के ताजे अग्न्याशय (Pancreas) से प्राप्त किया जाता है। इसमें अग्न्याशय में पाये जाने वाले अभिपाची (Trypsin), मण्डेद (Amylase) तथा विमेदेद (Lipase) आदि सभी किण्व पाये जाते हैं।

स्वरूप—यह वर्ण रहित अथवा पीताभ भूरे रंग का अनिश्चितरूपीय चूर्ण होता है, जिससे मांस की भाँति गन्ध आती है। विलेयता—जलमें विलेय होता है, जिसके साथ मिलाने से गंदले स्वरूप का विलयन बनता है। अलकोहल (९०%) तथा सॉलवेंट ईथर में अविलेय होता है। इसको मजबूत डाट-बन्द शीशियों में ठंढी जगह में रखना चाहिए। मात्रा—(B. P. Dose) ८ से १५ ग्रेन या ०.५ से १ ग्राम।

गुण—कर्म तथा प्रयोग।

अग्न्याशय-सत्व (पेंक्रियाटिन Pancreatin) तथा पल्विस पेंक्रियाटिनाइ को० में अग्न्याशयिकरस में पाये जाने वाले पूर्ववर्णित ३ किण्व पाये जाते हैं। इसका प्रयोग **अग्निमांद्य, अतिसार, एवं आमाशय की विकृतियों** से पीड़ित व्यक्तियों के द्रव—आहारों को सुपाच्य बनाने या पूर्व-पाचित करने (Predigesting) के लिए किया जाता है। इस प्रकार पचा-पचाया आहार देने से एक तो रोगी की शक्ति का संरक्षण होता रहता है दूसरे, पाचन सम्बंधी अंगों को आराम मिलता है, जिससे कालान्तर से उनमें पुनः पूर्ववत् कार्य करने की क्षमता आ जाती है। पाचन सम्बन्धी विकृतियों के कारण क्षीण बालकों में अग्न्याशयसत्व—पाचित आहार देना चाहिए। उक्त ट्रिप्सिन एवं अग्न्याशयसत्व की गोलियों को शृंग्यावृत (Keratin-coated) करके भोजन के २ घंटे पश्चात् २० ग्रेन सोडियम्बाई—कार्बोनेट के साथ दिया जाता है। केराटिन-कोटिंग के कारण इन गोलियों पर आमाशयिक अम्ल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता और

यह उसी रूप में अपने अभीष्ट क्रिया-क्षेत्र (अर्थात् अंत्रों) में पहुँच जाती हैं। क्षयकारक व्याधियों में बल्यप्रभाव के लिए कॉड-लिवर ऑयल के साथ पेंक्रियाटिक इमल्सन का प्रयोग किया जाता है।

(नॉन् आफिशियलयोग)

१—पल्विस पेंक्रियाटिनाइ कम्पोजिटस Pulvis Pancreatini Compositus, B. P. C.—इसे पेपटोनाइजिंग पाउडर Peptonising powder भी कहते हैं। इसमें १ भाग पेंक्रियाटीन ५ भाग सोडाबाइकार्ब के साथ संयुक्त होता है। बाजार में इसकी २५-२५ ग्रेन की ट्यूब्स (नलिकाकार शीशियाँ) आती हैं। प्रत्येक शीशी १ पाइंट दूध को पेप्टोनाइज करने के लिए पर्याप्त होती है।

२—लाइकर पेंक्रियाटिनाइ Liquor Pancreatini (Pancreatis) B. P. C.—ले०; पेंक्रियाटिक साल्यूशन Pancreatic Solution—अं०। इसका दूसरा नाम लाइकर पैंक्रियाटिस (Liquor Pancreatis) भी है। इसमें ग्लिसरिन ऑव पेंक्रियाटिन ६ भाग में १ भाग, सोडियम् बाई-कार्बोनेट, ग्लिसरिन, अल्कोहल् (९०%) तक जल होता है। मात्रा—३० बूंद से १२० बूंद या ½ से २ ड्राम।

३—ट्रिप्सिन Trypsin—यह अग्न्याशय (पेंक्रियाज) में पाया जाने वाला प्रोभुजिनंशिक (Proteolytic) पाचक किण्व है, जो क्षारीय प्रतिक्रिया (Alkaline medium) में प्रोटीन को पेप्टोन्स में परिणित करता है। यह दूध को सुपाक्य बनाने (Peptonising milk) के लिए तथा मधुमेह (Diabetes) में व्यवहृत होता है। मात्रा—३ से १० ग्रेन। इसको शृंग्यावृत याकेराटिन-कोटेड (Keratin-Coated) गोलियों के रूप में व्यवहृत करते हैं।

(नॉट-आफिशल)

Family : Caricaceae or Papaw Family (एरण्डकर्कट्यादि-कुल)

नाम—एरण्डकर्कटी, मधुकर्कटी—सं०; अरंड खरबूजा (-ककड़ी), रेंडखरबूजा, पपीता, पपैया, पपय्या—हिं; पेंपे—बं०; पपाया—म०; म्हाडचीभडुं, पोपैयुं—गु०; शज्रतुल् बित्तीख—अ०; दरख्तखुरपज़ा (-खर्बुजा)—फा०; पपाव(या)ट्री Papaw, Papaya tree, मेलन ट्री Melon tree—अं०; केरिका पपाया Carica papaya, Linn.—ले०।

टिप्पणी—स्पेन की भाषा में पपीता शब्द का प्रयोग कुचिला वर्ग की स्ट्रिक्नोस इग्नेशिआई (Strychnos ignatii) नामक विषैली औषधि के अर्थ में भी होता है। (उसका विवरण देखें—यूनानी-द्रव्यगुण विज्ञान उत्तरार्ध पृ० २११)

वक्तव्य—दक्षिणी अमरीका के 'ब्रेजिल' देश के निवासियों को इस औषधि का ज्ञान अतिप्राचीन काल से था। पश्चिमी द्वीपसमूह के निवासियों को भी इसके मांस-पाचक प्रभाव का ज्ञान था। तदनु इसका प्रचार यूरोप में हुआ। भारतवर्ष में पपीते का प्रवेश पुर्तगालियों द्वारा हुआ और तभी से यहां के लोग भी इसके मांस पाचक प्रभाव को जानते हैं। मांस को गलाने के लिये कच्चे पपीते का दूध उस पर मलते हैं अथवा मांस के साथ कच्चे पपीते को मिलाकर पकाते हैं। मख्ज़नुल् अद्विया एवं मुहीत आज़म नामक यूनानी निघण्टुओं में भी पपीते के इस प्रभाव का वर्णन मिलता है। सम्प्रति समस्त भारतवर्ष में पपीते की खेती होती तथा कच्चे-पक्के पपीते का पुष्कल व्यवहार होता है। कच्चे पपीते का अचार भी बनाया जाता है। इसके दूध का व्यवहार औषधि में किया जाता है।

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी, दक्षिणी अमरीका, यूरोप तथा भारतवर्ष आदि। भारतवर्ष में सर्वत्र इसकी खेती होती है।

वर्णन—पपीते के छोटे कद के वृक्ष होते हैं, जिसका तना एवं डालियाँ कोमल (Soft wooded) होती हैं। वृक्ष होते हुए भी यह अल्पायु होता हैं और इसके सक्रिय जीवन-काल की अवधि केवल ४–५ वर्षों की होती है। अर्थात् इसमें फल-फूल केवल उक्त अवधि तक ही आते हैं और इस जीवन को समाप्त करने के बाद वृक्ष नष्ट हो जाते हैं। इसकी पत्तियाँ चौड़ी-चौड़ी, चमकीली, अर्धानुत्तर–पाणिका खण्डित (Palmatifid) तथा पाणिवत् नाड़ी विन्यासयुक्त (Palminerved) होती हैं। ये पत्तियाँ केवल वृक्ष के शिखर पर छत्रवत समूहबद्ध (Tuft) स्थित होती हैं। पर्णवृन्त (Petiole) एरण्ड की भांति लम्बे-लम्बे तथा खोखले होते हैं। इसमें हल्के पीले रंग के सुगंधित पुष्प आते हैं, जो प्रायः अद्विलिंगी (Dioecious) होते हैं, अर्थात् नरपुष्प एवं नारीपुष्प पृथक २ वृक्षों पर आते हैं। नर पुष्प लम्बी मञ्जरियों में आते हैं, जो नीचे को लटकी रहती (Drooping panicles) हैं। नारी पुष्प व्यूहवाहक दण्ड छोटा होता है। अतएव यह गुच्छकों में दिखाई देते हैं। फल कच्चे होने पर हरे रंग के तथा पकने पर पीले हो जाते हैं पतले छिलके के नीचे मोटा गूदेदार भाग (Sarcocarp) होता है। फल के अन्दर एक गुदा होती है जिसमें बीज भरे होते हैं। कच्चे फलों पर चीरा लगाने से दूध निकलता है। चिकित्सा की दृष्टि से यही महत्त्व का है। इस दूध (Latex) को संग्रह करने के लिए सप्ताह में एक दिन के हिसाब से कच्चे फलों पर चारों ओर हल्के हाथ चीरा लगा दिया जाता है। चीरा लगाते ही दूध निकलने लगता है और कतिपय सेकंड के बाद स्वयं रुक जाता है। इसी दूध को संग्रह कर लिया जाता है।

रासायनिक संघटन—इसके दुधिया रस में एक प्रकार का सत्व होता है, जो दूध को जमा देता है। इसे पपेन (Papain) या पपायोटिन (Papayotin) कहते हैं। ताजे फल में शर्करा, पेक्टिन, जम्बीराम्ल (Citric acid), तिन्तिड़ीकाम्ल (Tartaric acid), सेवाम्ल (Malic acid) एवं द्राक्षशर्करा प्रभृति पदार्थ पाये जाते हैं। बीजों में एक प्रकार का कुस्वाद और अप्रिय गंधी तैल होता है जिसे पपैया का तैल (Papaya oil) कहते हैं। पत्तों में कारपेन (Carpaine) नामक एक अलकलायड पाया जाता है, जिससे कारपेन हाइड्रोक्लोराइड बनाया जाता है। यह डिजिटेलिस के स्थान में हृद्यौषधि के रूप में व्यवहृत किया जाता है।

(इन्डियन फॉर्माकोपिआ, इन्डियन फॉर्माकोपिअल लिस्ट तथा कोडेक्स में ऑफिशल)

पपेनम् Papainum (Papain)—ले०, पपेन Papain—अं०।

पर्याय—पपेयोटिन Papayotin; पपायड Papoid; करायड Caroid।

प्राप्ति-साधन—पपेन एक प्रोटीन-पाचक किण्व (Proteolytic enzyme) या अनेक किण्वों का मिश्रण होता है, जो पपीते के ताजे दूध (Freshly drawn juice) को अल्कोहल् में घोलकर प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—पपेन सफेद या हल्के भूरे रंग के किंचित् दानेदार चूर्ण (Granular powder) के रूप में होता है प्रायः गंधहीन होता है और स्वाद में कुछ-कुछ खट्टा तथा नमकीन होता है। पपीते के दूध (Papaya latex) से पद्धतिविशेष द्वारा क्रिस्टेलाइन पपेन (Crystalline Papain) भी प्राप्त किया जाता है। मात्रा—(I. P. Dose)—२ से १० ग्रेन (०·१२ से ०·६ ग्राम)।

आमयिक प्रयोग ।

पपेन की क्रिया पेप्सिन की भांति होती है, और कतिपय दृष्टिकोणों से यह पेप्सिन की अपेक्षा श्रेष्ठतर है। अतएव मांसजातीय आहार के पाचन के लिए पेप्सिन के स्थानापन्न के रूप में इसका प्रयोग किया जा सकता है। केंचुए (Round worm) पर कृमिघ्न (Anthelmintic) प्रभाव करने के कारण यह उक्त कृमि के उपसर्ग में प्रयुक्त किया जा सकता है। पाश्चात्य वैद्यक में इसके चूर्ण रूप अथवा ग्लिसेरिनम् पपेनी का व्यवहार करते हैं। पक्के पपीते को खाद्य के रूप में व्यवहृत करते हैं। पपीता खाने से आमाशय बलवान होता, खूब भूख लगती और अपान वायु खुलती है। घातक पाण्डुरोग के रोगियों में आहारगत मांसजातीय पदार्थों का पाचन ठीक प्रकार से न होने से वहिर्द्रव्य (Extrinsic factor) की कमी हो जाती है। इन रोगियों में पपीते का सेवन (कच्चे पपीते का शाक या पका पपीता) पथ्य के रूप में बहुत उपयोगी है। आमाशय के जीर्णशोथ (Chronic gastritis), आमाशयिक व्रण (Gastric ulcer) एवं अम्लपित्त तथा पाचन दौर्बल्य (बदहज्मी) में इसके दूध का प्रयोग उपयोगी होता है। यकृत् वृद्धि एवं प्लीहोदर (Hepatic and Splenic enlargement) में इसका दूध (३ से ६ माशा) ३ माशा चीनी के साथ मिलाकर देने से लाभ होता है। बच्चों में उक्त दूध (२–१० बून्द) बतासे में रखकर देना चाहिए। पपीते का दूध मूत्रल एवं अश्मरीघ्न भी होता है। पपीते की पत्तियाँ हृद्य (Cardiac tonic) होने से हृदयरोगों में इसका फाण्ट दिया जाता है।

(ऑफिशल योग—I. P., I. P. L. & I. P. C. Preparations)

ग्लिसेरिनम् पपेनी Glycerinum Papaini I. P. L.—इसमें पपेन ११ ग्राम, डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड ८ मिलिमिटर (सी० सी०), सिम्पुल एलिक्जिर ५ मि० लि०, ग्लिसेरिन आवश्यकतानुसार १०० मि० लि० के लिए। मात्रा—२० से ६० बूंद।

२—एलिक्जिर पपेनी Elixir Papaini I. P. C.—पपेन ५ भाग, अल्कोहल् १५ भाग, परिस्नुत जल ४५ भाग, एरोमेटिक एलिक्जिर आवश्यकतानुसार १०० भाग के लिए। मात्रा—३० से ६० बूंद (मिनम्)।

उपयोगी नुस्खे :—

(१) पपीते का दूध	१ तोला
शहद	१ तोला
गरम जल	२ तोला

इन सबकी १ मात्रा बनाकर किंचित् ठंडा होने पर पिलावें। २ घंटे के बाद एरण्ड तेल का रेचन दें। केंचुए रोग (Round worms) में यह उपयोगी है।

(२) ग्लिसेरिनम् पेप्सिनाइ Glycer. Pepsin.	६० बूंद
टिंक्चुरा न्युकिस वॉमिकी Tinct. Nucis. Vom.	१० बूंद

स्पिरिटस वाइनाइ गैलिसाइ Sp. Vini Gallici — २० बूंद

टिंक्चुरा कारडेमोमाइ को० Tinct. Cardam. Co. — १५ बूंद

एक्वा क्लोरोफॉर्म— — १ औंस

रोगोत्तरकाल (Convalescence) में भूख बढाने के लिए इसका प्रयोग उपयोगी है। ऐसी १ मात्रा भोजन करने के ½ घंटे बाद देनी चाहिए।

(३) ग्लिसेरिनम् पेप्सिनाई — ६० बूंद

एलिक्जिर लेक्टोपेप्टिन — ३० बूंद

टिंक्चर कार्ड० को० Tinct. Card. Co — २० बूंद

टिंक्चुरा ओपियाइकम्फोरेटा

Tinct. Opii. Comph. — २० बूंद

एक्वा क्लोरोफॉर्म— — १ औंस

सब मिलाकर १ मात्रा।

ऐसी एक मात्रा भोजन के ½ घंटे बाद लेने से चिरकालानुवन्धि अजीर्ण (Chronic in digestion) में बहुत लाभ होता है।

(३) पेप्टोनाइजिंग पाउडर (Peptonising Powder) या बेंजर्स फूड (Benger's food)—इसमें २० भाग पेंक्रियाटिन (Pancreatin) तथा ८० भाग सोडा-बाईकार्ब (Soda. Bi Carb.) होता है। उक्त चूर्ण की २० ग्रेन (१० रत्ती) मात्रा १ पाइन्ट (२० औंस या ½ सेर) दूध के पाचन के लिए पर्याप्त है।

(२) कार्बोज जातीय पदार्थों के पाचक किण्व (Amylolytic Ferments)।

एक्स्ट्रॅक्टम् माल्टी (यव्यसत्व), B. P. Extractum Malti (Ext. Malt.) —ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव माल्ट Extract of malt—अं०।

प्राप्ति-साधन—यव्यसत्व (एक्स्ट्रॅक्ट ऑव माल्ट) जव (यव) की विभिन्न उपजातियों (होर्डिअम् डिस्टिकॅन Hordeum distichon Linn., होर्डिअम् वल्गेयर H. vulgare Linn) के अंकुरित बीजों (Malted grain) से बनाया जाता है। कभी-कभी जव के साथ गेहूँ (Triticum Sativum Linn.) के बीज भी मिलाये (किन्तु उक्त मिश्रण में गेहुँ के बीज ३३% से अधिक नहीं होने चाहिए) जाते हैं।

स्वरूप—यह अम्बरीरंग (amber-coloured) या पीताभ--भूरेरंग का सान्द्र (गाढ़ा) द्रव (Viscous liquid) होता है, जो स्वाद में मधुर होता है तथा इसमें एक विशिष्ट प्रकार की रुचिकारक गंध होती है। जल में किसी भी मात्रा में मिलन-शील (Miscible) होता है और जल के साथ मिलने पर धुन्धला विलयन (Translucent Solution) बनाता है। मात्रा—६० मिनम् या बून्द (१ ड्राम) से १ औंस तक या ४ से ३० मि० लि०। इसको कई मात्राओं में विभक्त करके थोड़ा-थोड़ा दिन में कई बार देना चाहिए। यह 'एक्स्ट्रॅक्ट ऑव माल्ट विद कॉडलिवर ऑयल' नामक योग में पड़ता है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—डायस्टेज (Diastase, B. P. C.) | पर्याय—एमाइलेज (Amylase)। यह कार्बोज-विघटक या पाचक (Amylolytic) अनेक खमीर या किण्वों (Enrzymes) का मिश्रण होता है, जो माल्ट के इन्फ्युजन से प्राप्त किया जाता है। यह पीताभ-श्वेतवर्ण के विरूपीय (Amorphous) चूर्ण या पारभासी पपड़ियों (Translucent Scales) के रूप में होता हैं, जो प्रायः गंध एवं स्वाद रहित है। अपने तौल से ५० गुने तौल के आलू के श्वेतसार (Potato Starch) को शर्करा में परिवर्तित करता है। मात्रा—१ से ५ ग्रेन (½ से २ रत्ती) या ०'०६ से ०'३ ग्राम।

गुण-कर्म एवं प्रयोग।

यह एक उत्तम सुपाच्य (Assimilable) एवं सुस्वादु (Palatable) कर्बोजजातीय आहार (Carbohydrate food) है, और क्षयकारक व्याधियों—यथा राजयक्ष्मा आदि में एक उत्तम पोषक आहार है। इसके अतिरिक्त यह साथ में खाये हुए और कार्बोहाइड्रेट जातीय आहार को पचाने में भी सहायता (Digestive agent) करता है। सुस्वादु होने के कारण इसको अकेले या कॉड-लिवर-ऑयल्ज़ के साथ दे सकते हैं। माल्ट में पर्याप्त मात्रा में Vitamin B. पाया जाता है। इसका सेवन दूध या बीयर (Beer एक प्रकार की शराब) के साथ भी किया जाता है। चूंकि डायस्टेज की सक्रियता क्षारीय माध्यम (Alkaline medium) में अधिक होती है। अतएव आहार करने के २ घंटे बाद इसका सेवन अधिक उपयुक्त होता है।

टाका डायस्टेज Taka Diastase (नॉन्-ऑफिशल)—यह पीताभ श्वेतवर्ण का चूर्ण होता है जो थोड़े ही समय में अपने से १०० गुना भार के स्टार्च को माल्टोज़ (Maltose) में परिवर्तित कर देता है। मात्रा—१ से ५ ग्रेन।

प्रयोग—मण्डमय पदार्थों के लिए अग्निमन्दता की सभी अवस्थाओं (Starchy dyspepsia) में यह एक परमोपयुक्त औषधि है। साथ में यदि पेट में अम्लता अधिक (Hyperacidity) हो तो यह और भी उपयोगी है। जो लोग भात खाने के आदी हैं और हमेशा भात ही खाते हैं। उन लोगों में उक्त व्याधि की आशंका अधिक रहती है।

प्रकरण ३

वमनघ्न द्रव्य (Antiemetics)

(Not official)

एसिडम् हायड्रोसायनिकम् डायल्यूटम् (B. P. C.)।

रासायनिक संकेत H C N

नाम—एसिडम् हायड्रोसायनिकम् डायल्यूटम् Acidum Hydrocyanicum Dilutum (Acid. Hydrocyan. Dil.)—ले०; डायल्यूट हायड्रोसायनिक एसिड Dilute Hydrocyanic Acid, डायल्यूटेड हाइड्रोजेन सायनाइड Diluted Hydrogen Cyanide- डायल्यूट प्रूसिक एसिड Dilute Prussic Acid—अं०।

स्वरूप—यह एक रंगहीन उत्पत् द्रव होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार का गन्ध होता है। स्वाद में किंचित् अम्ल होता है। मात्रा–२ से ५ बून्द या ०.१२ से ०.३ मि० लि०।

गुणकर्म

वाह्य—वाह्य त्वचा (Epidermis) से इसका शोषण होता है, किन्तु अंशतः यह संज्ञावह नाड्यग्रों को निष्क्रिय करने के कारण स्थानिक संशामक (Local Sedative) एवं स्थानिक संज्ञाहर (Local anaesthetie) प्रभाव करता है।

आभ्यन्तरा महास्रोतस्—यह स्वाद में तिक्त होता है, और जिह्वापर आस्वादनोपरान्त ऊष्मा की अनुभूति होती है। अपने स्थानिक प्रभाव के द्वारा यह लालास्राव कराता है। श्लैष्मिक कलाओं द्वारा इसका शोषण सुगमता पूर्वक हो जाता है, तथा सांवेदनिक नाड्यग्रों पर अवसादक प्रभाव करने के कारण यह आमाशय पर भी संशामक प्रभाव करता है (Gastirc Sedative)।

रक्त—क्षिप्रतापूर्वक शोषित होकर यह रक्त परिभ्रमण में पहुँच जाता है। यह एक तीव्र विषाक्त औषधि है। इसकी विषाक्तता (Poisoning) होने पर शरीर की कोशायें केशिका गत रक्त से ऑक्सिजन ग्रहण करने में असमर्थ हो जाती हैं, जिससे प्राणवायु-दारिद्र्य (Oxygen Starvation) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। साधारण अवस्थाओं में औषधि शरीर कोशाओं द्वारा रूपान्तरित कर दी जाती है और स्थिति सुधर जाती है।

हृदय तथा रक्तवाहिनियाँ—अल्प मात्रा में यह प्राणदा नाड़ी पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण हृन्मन्दता करता है। अत्यधिक मात्रा में हृदय एवं हृत्केन्द्र (Cardiac centre) पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ने के कारण विस्फार की स्थिति में हृत्स्तम्भ हो जाता है। वाहिनी प्रेरक केन्द्र (Vasomotor centre) पर क्षणिक उत्तेजक प्रभाव होने से पहले तो रक्तभार में वृद्धि होती है, किन्तु अन्ततः केन्द्राघात होनेसे रक्तभार बिल्कुल गिर जाता है।

श्वसन—इसका उत्सर्ग श्वासनलिकाओं की श्लैष्मिक कला से होता है, अतएव तद्गत संज्ञावहनाड्यग्रों पर अवसादक प्रभाव करने के कारण संशामक प्रभाव करता तथा श्वास का शमन करता है। अल्प मात्रा में, श्वसन तीव्र एवं गम्भीर हो जाता है, किन्तु बाद में अवसादक प्रभाव होने के कारण श्वसन्मन्दता हो जाती है तथा श्वास कष्ट के साथ (Laboured) होने लगता है। अन्ततः श्वासावरोध से मृत्यु तक हो जाती है।

नाड़ीसंस्थान—औपशयिक मात्रा में तो कोई विशेष प्रभाव नहीं होता, किन्तु अधिक मात्रामें मस्तिष्क पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ने या श्वासावरोध उत्पन्न होने के कारण रक्त की स्थिति में अनिष्टकर परिवर्तन होने के कारण संज्ञानाश एवं सन्यास (Coma) आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। नेत्रकनीनिका विस्फारित हो जाती है।

अल्प मात्रा में यह प्राणदा, वाहिनीसंकोचक एवं श्वसन केन्द्रों पर उत्तेजक तथा अधिक मात्रा में इसके विपरीत अवसादक प्रभाव करता है। सुषुम्ना की प्रत्याक्षिप्त उत्तेजन शीलता (Reflex excitability) पहले कम हो जाती तथा अन्त में पूर्णतः बन्द हो जाती है। परिसरीय संज्ञावह नाड़ियों पर मौखिक प्रयोग की अपेक्षा स्थानिक प्रयोग से अधिक प्रभाव होता है। चेष्टावह नाड़ियाँ तथा पेशियाँ भी निष्क्रिय हो जाती हैं।

उत्सर्ग—हायड्रोसायनिक एसिड का उत्सर्ग क्षिप्रतापूर्वक तथा प्रधानतः श्वास के साथ होता है। इसका कुछ अंश सल्फोसायनाइड्स में परिवर्तित हो जाता है, जिसका उत्सर्ग मूत्र के साथ होता है।

तीव्र विषाक्तप्रभाव—क्षिप्रतापूर्वक घातक प्रभाव करने के कारण आत्महत्या के लिए यह बहुत प्रयुक्त होता है। धूपन (Fumigation) द्वारा इसके गैस का आघ्राणन करने से भी विषाक्त प्रभाव पैदा हो सकते हैं। यदि अधिक मात्रा में प्रयुक्त किया जाय तो रोगी तत्काल चीख मारकर चिल्लाता है तथा २-४ बार आक्षेपयुक्त शारीरिक गति (Convulsive movements) के पश्चात् प्राणान्त हो जाता है। किन्तु मात्रा यदि बहुत अधिक न हो तो रोगी बेहोश हो जाता है, नेत्र स्थिर हो जाते (Fixed) तथा कनीनिका विस्फारित हो जाती है। नाड़ी दुर्बल (Feeble) तथा अनियमित हो जाती है। कभी-कभी नाड़ी का पता भी नहीं चलता। श्वसन मन्द एवं गम्भीर तथा आक्षेपयुक्त हो जाता है तथा मुख से झाग निकलता है। त्वचा ठंढी एवं मसृण (Clammy) हो जाती है, जिससे अन्ततः प्राणान्त हो जाता है।

चिकित्सा—इस औषधि की घातक क्रिया इतनी शीघ्रतापूर्वक होती है, कि चिकित्सा का सुअवसर कदाचित् ही प्राप्त होता है। यदि अवसर प्राप्त हो सके तो आमाशयस्थ विष के विशोधन एवं उसको निष्क्रिय करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए जान्तव अंगार (Animal Charcoal), हाइड्रोजन परॉक्साइड, परमैंगनेट ऑव पोटासियम् (१००० में १) तथा सोडियम्-सल्फेट ५ प्र० श० प्रयुक्त करना चाहिए। इसके बाद ही उपरोक्त द्रव्यों में से किसी के विलयन से (१० में १) आमाशय का प्रक्षालन करना चाहिए। कृत्रिम श्वसन करावें अथवा ऑक्सीजन के साथ ५ प्रतिशत कार्बनडाइ-ऑक्साइड गैस का आघ्राणन करावें। रक्तचाप की कमी के निवारण के लिए एड्रीनेलीन का प्रयोग करें। १ प्रतिशत बल का [सोडियम्-नाइट्राइट-विलयन] प्रतिवार १० सी० सी० की मात्रा में शिरामार्ग द्वारा प्रविष्ट करें। बीच-बीच में सोडियम् सल्फेट के समबल

विलयन में ५% के अनुपात से सोडियम् थायोसल्फेट (Sodium Thiosulphate) मिलाकर उक्त विलयन को एक बार में ५० सी० सी० तक प्रयुक्त करें। श्यावोत्कर्ष (Cyanosis) के लिए रक्त-संक्रम (Blood-transfusion) करना चाहिए।

घातक मात्रा—१ ग्रेन शुद्ध हायड्रोसायनिक एसिड (HCN) अथवा ३ से ५ ग्रेन पोटासियम् सायनाइड (KCN)।

क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड Chlorpromazine Hydrochloride

(नॉट्-ऑफिशल)।

पर्याय—लारगेक्टिल (Largactil)

वर्णन—लारगेक्टिल, सफेद रङ्ग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की एवं उग्र गन्ध (Slight pungent odour) होती है। रासायनिक दृष्टि से यह 3 Chloro-10 (3-dimethylaminopropyl) phenothiazine hydrochloride होता है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल् में घुलनशील है, किन्तु ईथर में नहीं घुलता।

गुण-कर्म तथा प्रयोगः—

क्लोरप्रोमेजीन मस्तिष्क पर तीव्र अवसादक (Potent Cerebral depressant), संशामक (Sedative) एवं निद्रल प्रभाव करता है। स्वतन्त्र नाड़ीमंडल पर भी यह अवसादक प्रभाव (Autonomic depressant) करता है। इसके अतिरिक्त यह वमन-निवारक (Antiemetic) भी होता है। और चिकित्सा में भी इसी रूप में इसका व्यवहार अधिक होता है। अतएव मिचली या हृल्लास (Nausea) एवं वमन(Vomiting)जनक अनेक औषधियों के उपद्रव की शान्ति के लिए तथा आमाशयान्त्रप्रदाह कर्कटार्बुदोत्कर्ष (Carcinomatosis), विकिरिण-चिकित्सा जन्य हृल्लास एवं वमन (Radiation Sickness) तथा सामुद्रिक एवं हवायी हृल्लास (Sea-sickness and Air-sickness) में वमन के अनागत प्रतिषेध (Prevention) एवं चिकित्सा (Treatment) दोनों ही उद्देश्यों से इसका उपयोग किया जाता है। मस्तिष्क संशामक होने से उन्माद (Mania), प्रलाप (Delirium), मनोविभ्रम एवं मानसिक उत्तेजना आदि अनेक मानसिक रोगों में भी इसका व्यवहार किया जाता है। वमन निवारक एवं मस्तिष्क संशामक प्रभृति गुणों के अतिरिक्त यह वेदनास्थापक एवं संतापहर (Analgesic and antipyretic) भी है। अतएव अन्य वेदना स्थापक औषधियों के साथ सहायक औषधि के रूप में भी प्रयुक्त होता है। सामान्यकायिक संज्ञाहरण (Anaesthesia) में संज्ञाहरण के पूर्व इसका प्रयोग करने से मनोवसाद होकर शस्त्रकर्मजन्यपूर्वचिन्तन से रोगी को मुक्ति मिलती है। तथा शस्त्रकर्मोत्तर वमन (Post operative Vomiting) की शान्ति के लिए भी उपयुक्त होता है। इन प्रयोगों के अतिरिक्त चर्मगत रोगों में प्रयुक्त होने से कण्डूका शामक (Antipruritic) है। रक्तचाप वृद्धि (Hypertension) में भी उपयोगी है। दमा (Asthma) एवं हिक्का (Hiccough) में भी संशामक प्रभाव करने के कारण कभी कभी उपयोगी सिद्ध होता है।

शोषण तथा निस्सरण—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से अच्छी तरह शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त अधिकांश भाग यकृत में वियोजित हो जाता है। केवल १०% औषधिका ज्यों का त्यों निस्सरण मूत्र के साथ होता है।

सेवनविधि एवं मात्रा—सामान्यतया प्रतिदिन ७५ से १५० मि. ग्रा. औषधि मुख द्वारा सेवन की जाती है। किन्तु मानसिक रोगों में ३०० से ६०० मि. ग्रा. तक की दैनिक मात्रा देनी पड़ती है। आत्ययिक काल में तथा वमनशमन के लिए औषधि पेशीगत सूचिका भरण द्वारा प्रयुक्त की जाती है। एतदर्थ २५-५० मि० ग्रा० मात्रा दिन में ३-४ बार दी जाती है। संज्ञा हरण में एवं आत्ययिक अवस्थाओं (Emergencies) में २० से ४० मि. ग्रा. मात्रा शिरागत मार्ग द्वारा भी दी जाती है। एतदर्थ शिरा में बूंद-बूंद करके (Drip Infusion) अथवा २० सी. सी. लवण-जल (Normal saline) में मिलाकर शनैः शनैः शिरा में इंजेक्ट की जाती है।

प्रकरण ४

अधिशोषक द्रव्य (Adsorbents)

कोयला या काष्ठांगार (चारकोल Charcoal), केओलिन, मैगनीसियम् ट्राइसिलिकेट एलुमिनियम् हाइड्रॉक्साइड, पेक्टिन एवं अयन-एक्सचेंज रेजिन्स। इनमें चारकोल को छोड़कर अन्य अधिशोषक द्रव्यों का वर्णन यथास्थान अपने-अपने प्रकरण में हो चुका है। अब अवशिष्ट चारकोल आदि का वर्णन यहां किया जायगा।

कार्बोलिग्नाइ एक्टिवेटस (सक्रिय काष्ठांगार) I. P.

Carbo Ligni Activatus (Carbo. Lig. Activat.)—ले०;

एक्टिवेटेड उड-चारकोल (Activated Wood-Charcoal)—अं०।

वर्णन—यह एक रंगहीन एवं गंधहीन काले रंग का सूक्ष्म चूर्ण होता है, जो लकड़ी के बुरादे (Saw-dust) एवं अन्य काष्टीय पदार्थ (Cellulose)तथा नारियल के खोपड़ा (Coconut shells) के विच्छेदक-परिस्रवण (Destructive distillation) के पश्चात् अवशिष्ट भाग (Residues) से वनाया जाता है। इसके अधिशोषक शक्ति (Adsorptive Powder) के बढ़ाने के लिए अन्य उपयुक्त द्रव्य मिला दिए जाते हैं। संग्रह (storage)—इसका संग्रह अच्छी तरह डाट वन्द सूखे पात्रों में करना चाहिए। मात्रा (I. P. Dose)—६० से २४० ग्रेन (४ से १६ ग्राम) या १ से ४ ड्राम।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अधिशोषण (Adsorption)—एक विशुद्ध भौतिक-प्रक्रिया (Physical process) है, जिसमें किसी विलयन में विलीन वायु या अन्य द्रव्य उस विलियन के सम्पर्क में आने वाले घन पदार्थ के वाह्य धरातल पर अधिशोषित (Adsorbed) हो जाते हैं। एक उत्तम अधिशोषक द्रव्य होने के लिए उसमें २ विशेषतायें होनी चाहिए। एक तो उस द्रव्य का अधिशोषण के लिए उपलब्ध धरातल (Surface) उसके आयतन के अनुपात में अधिक होना चाहिए। दूसरी विशेषता यह होनी चाहिए कि उक्त धरातल स्वच्छ (Clean) होना चाहिए। चिकित्सा में इस प्रकार के द्रव्यों का प्रयोग आंत्रगत विषैले अपद्रव्यों एवं गैसों के अधिशोषण के लिए बहुत किया जाता है। एतदर्थ कोयला (Charcoal) एक परमोपयुक्त द्रव्य है।

वाह्यतः—(Externally) उक्त कोयला का चूर्ण (आंगार चूर्ण) जीवाणुनाशक (Disinfectant) एवं दुर्गन्धिनाशक (Deodorant) प्रभाव करता है। इस चूर्ण के रजकण (Particles) जितने ही सूक्ष्म होंगे उनमें अधिशोषण की शक्ति उतनी ही अधिक होगी।

आभ्यन्तर प्रयोग (Internally) से आमाशयान्त्र में भी यह वही अधिशोषक प्रभाव करता है। अतएव फॉस्फोरस-विषाक्तता एवं अन्य क्षाराभ-विषमयता (Alkaloidal poisoning) में आन्त्रगत विष का अधिशोषण करने के लिए कोयले के चूर्ण का मुख द्वारा सेवन कराया जाता है। अधिशोषण द्वारा आन्त्रस्थ अपद्रव्यों को अपने धरातल पर संगृहीत करके यह पुनः आन्त्रों द्वारा उनका प्रचूषण (Absorption) भी नहीं होने देता। अतएव शरीर से अधिशोषित विषका अपहरण करने के लिए लवण-विरेचन (Saline purgative) देना चाहिए। इसी प्रकार अकेले या केओलिन आदि तत्समगुणवाली औषधियों के साथ कोयले के चूर्ण का प्रयोग अतिसार-प्रवाहिका (Diarrhoea & Dysentery) एवं हैजा (Cholera) में करते हैं। उक्त रोगों में यह विकारी जीवाणुओं की वृद्धिको रोकता तथा आन्त्रगत विषाक्त अपद्रव्यों का अधिशोषण करता है।

व्यावसायिक योग :—

(१) अल्ट्राकार्बन Ultra-Carbon (E. Merck.)। इसके (१) चूर्ण (Powder) (२) ग्रेन्यूल्स (Granules) तथा (३) टैबलेट्स आते हैं। चूर्ण १ से ४ चाय के चम्मच भर मुखद्वारा तथा टैबलेट्स १ से २ दिन में २–३ बार ॥

पेक्टिनम् (पेक्टिन), I. P.

Pectinum (Pect.)-ले०; Pectin—अं०।

प्राप्तिसाधन—पेक्टिन एक विशोधित कर्बोजजातीय पदार्थ (Purified carbohydrate product) होता है, जो साइट्रसजातीय फलों के वल्कल के अन्तः भाग (Inner portion of the rind of citrus fruits) से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ७ प्रतिशत मेथॉक्सिल समुदाय के तत्व (Methoxyl group) तथा कम से कम ७८ प्रतिशत गेलेक्ट्युरोनिक एसिड (Galacturonic acid) होता है।

वर्णन—पेक्टिन गंधहीन एवं स्वाद में लुआबी (Mucilaginous) स्थूल या सूक्ष्म चूर्ण होता है। विलेयता—२५° तापक्रम पर २० भाग जल में पूर्णतः घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल् (९०%) में नहीं घुलता। संरक्षण—पेक्टिन का संग्रह अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करना चाहिए, जिनमें हवा भी प्रवेश न करसके (Air-tight Containers)।

प्रयोग—स्थानिक रूप से इसका प्रयोग रक्तस्तम्भक के रूप में तथा व्रणों पर रक्षात्मक आवरण बनाने के लिए किया जाता है। मुख द्वारा इसका सेवन अतिसार (Diarrhoea) में उपयोगी होता है। इसके लिए इसको अकेले या केओलिन के साथ मिलाकर प्रयुक्त करते हैं। आंतों में यह अधिशोषक का कार्य करता है। बृहदन्त्र में पहुँचकर वियोजित होता है, जिससे अतिसारजनक विकारी जीवाणुओं की वृद्धि का निरोध होता है। बच्चों के अतिसार में विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होता है।

अयन-एक्सचेंज रेजिन्स (Ion-Exchange Resins)—यह निष्क्रिय (inert) स्वरूप के सेन्द्रिय पदार्थ (Organic Substances) होते हैं, जो रासायनिक दृष्टि से प्लास्टिक से मिलते जुलते हैं। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आंतों में पहुंचकर कतिपय पदार्थों के अयनों का अधिशोषण करते हैं। उतनी ही मात्रा में दूसरे अयन इन अयन-एक्सचेंज रेजिन्स से पृथक् होते हैं। इस प्रकार उनके

मौलिक स्वरूप में बिना किसी विशेष परिवर्तन के भी अयनों का आदान-प्रदान होता है। सोडियम्, पोटासियम् एवं केल्सियम् आदि के अयनों का आदान-प्रदान करनेवाले रेजिन्स को (१) केटन-एक्सचेंज रेजिन्स (Cation exchange resins) तथा (२) क्लोराइड बाइकार्बोनेट एवं फास्फेट आदि अयनों का आदान प्रदान करनेवाले एनियन एक्सचेंज रेजिन्स (Anion-exchange resins) कहे जाते हैं। एनियन एक्सचेंज रेजिन्स के प्रयोग से आमाशयिक रस में पाये जाने वाले हाइड्रोक्लोरिक एसिड के अम्ल को कम करते हैं। पेप्सिन की क्रियाशीलता भी कम होती है। पॉलि-एमाइन मेथिलिन रेजिन (Polyamine—Methyline Resin) के रूप में इसका व्यवहार आमाशयिक व्रण (Peptic ulcer) एवं आमाशयिक रस की परमाम्लमयता (Hyperchlorhydria) में किया जाता है। एतदर्थ दिन में २–२ घन्टे पर १ से २ ग्राम रेजिन मुख द्वारा दिया जाता है। आमाशयिक नाड़ी-व्रण (Gastric fistula) में इसका स्थानिक प्रयोग भी किया जा सकता है।

केटन-अयन एक्सचेंज रेजिन्स का प्रयोग, सोडियम् पोटासियम् आदि का आन्त्र से अपकर्षण करने के लिए किया जाता है। अतएव जिन अवस्थाओं में सोडियम् क्लोराइड आदि का शरीर में संचय अभीष्ट नहीं होता, ये उपयोगी सिद्ध होते हैं।

———

प्रकरण ५

आंत्रपर कार्यंकर औषधियाँ

१—लवण विरेचन (Saline Purgatives)

पोटासियाइ टारट्रास एसिडस् (I. P., B. P.)

Potassii Tartras Acidus (Pot. Tart. Acid.)—(ले०)।

रासायनिक संकेत—$KC_4H_5O_6$.

नाम—प्योरिफाइड क्रीम ऑव टारटार Purified Cream of Tartar; पोटासियम् वाइटारट्रेट Potassium Bitartrate, पोटासियम् एसिड टारट्रेट Potassium Acid Tartrate ।

इसका सफेद मणिमीय (रवेदार) कुर-कुरा चूर्ण होता है अथवा रंगहीन किंचित् धुधले मणिम होते हैं। स्वाद रुचिकारक एवं किंचित् खट्टा (अम्ल) होता है। विलेयता—२२० भाग जल में १ भाग, किन्तु अल्कोहल (९०%) में अविलेय होता है। मात्रा १५ से ६०ग्रेन (१ माशा से ३॥ माशा)।

(अनधिकृत-योग)

१—पोटस् इम्पीरिआलिस Potus Imperialis (B. P. C.)—इसको इम्पीरिअल ड्रिंक Imperial Drink भी कहते हैं। इसमें एसिड पोटासियम् टारट्रेट ४० ग्रेन, साइट्रिक एसिड ७ ग्रेन, खण्डशर्करा (Sucrose) १ औंस, ऑयल ऑव लेमन ३ बूंद, टिंक्चर ऑव लेमन ५० बूंद तथा जल आवश्यकतानुसार २० औंस तक।

सोडियाइ एट पोटासियाइ टारट्रास (I. P., B. P.)

Sodii et Potassii Tartras (Sod. et Pot. Tart.)—(ले०)

रासायनिक संकेत—$KNa\ C_4H_4O_6, 4H_2O$.

नाम—सोडा टारट्रेटा; रॉशेल-साल्ट (Rochelle Salt); सिग्नेट्स साल्ट (Seignett's Salt); सोडियम् पोटासियम टारट्रेट।

इसके रंगहीन रवे (Crystals) होते हैं अथवा यह श्वेतवर्ण के रवेदार चूर्ण के रूप में होता है। स्वाद में नमकीन (Saline) एवं आस्वादनोपरान्त शैत्य का अनुभव (Cooling) होता है। विलेयता—१½ भाग जल में १ भाग, किन्तु अल्कोहल् (९०%) में अविलेय होता है। मात्रा—१२० से २४० ग्रेन या २ से ४ ड्राम।

(ऑफिशल योग)

१—पल्विस एफरवेसेन्स कम्पोजिटस Pulvis Effervescens Compositus; पल्विस सोडी टारट्रेट एफरवेसेन्स Pulvis Sodae Tartaratae Effervescens। इसको सीडलिज़ पाउडर Seidlitz Powder भी कहते हैं। मात्रा—पहले पाउडर नं० १ को ठंढे या मन्दोष्ण जल में घोलकर तदनु पाउडर नं० २ मिलावें। जब झाग उठने लगे तो पी जाँय।

सोडियाइ सल्फास (सोडियम् सल्फेट) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत—$Na_2SO_४, १०H_2O$.

नाम—सोडियाइ सल्फास Sodii Sulphas (Sod. Sulph.)—ले०; सोडियम् सल्फेट Sodium Sulphate—ग्रं०; ग्लॉवर्स साल्ट Glauber's Salt—व्यावसायिक। सोडासल्फ—हिं०।

वर्णन—यह सोडियम् क्लोराइड एवं सल्फ्यूरिक एसिड् की परस्पर क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसके रंगहीन एवं गंधहीन मणिभ (Crystals) होते हैं, जो स्वाद में तिक्त एवं नमकीन होते हैं। हवा के सम्पर्क से यह प्रस्फुटित (Efflorescent) हो जाते हैं। विलेयता—३ भाग जल में १ भाग किन्तु अल्कोहल् (९०%) में अविलेय होता है। मात्रा—३० से २४० ग्रेन या २ माशा से १। तोला।

सोडियाइ सल्फास एक्सिक्केटस् Sodii Sulphas Exsiccatus B. P C.—ले०; एक्सिक्केटेड ग्लॉवर्स साल्ट Exsiccated Glauber's Salt, एन्हाइड्रस सोडियम् सल्फेट, एक्सिक्केटेड सोडियम् सल्फेट—ग्रं०।

यह उक्त सोडासल्फ को १००° सेंटीग्रेड तापक्रम पर उष्णाकर जलापहरण करने से प्राप्त होता है, जो श्वेतवर्ण के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। यह चूर्ण गन्धहीन एवं स्वाद में तिक्त तथा नमकीन होता है, खुला रहने से यह नमी को ग्रहण करता (Hygroscopic) है। विलेयता—८ भाग जल में १ भाग। मात्रा—१५ से १२० ग्रेन या १ माशा से ६ माशा तक।

सोडियाइ फॉस्फास (सोडियम् फास्फेट), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत—$Na_2HPO_४,12H_2O$.

नाम—सोडियाइ फॉस्फास Sodii Phosphas (Sod. Phosph.)—ले०; डाइ सोडियम् हाइड्रोजन फॉस्फेट Disodium Hydrogen Phosphate—रासायनिक; टेस्टलेस पर्जिंग साल्ट Tasteless Purging Salt—ग्रं०।

वर्णन—इसके रंगहीन प्रस्फुटनशील, रवे (मणिभ) होते हैं, जो स्वाद में नमकीन (Saline) होते तथा शुष्क हवा के सम्पर्क से भी ये दाने प्रस्फुटित हो जाते हैं। विलेयता—७ भाग ठंढे जल में १ भाग। यह सिरप फेरी फास्फ० को० में पड़ता है। मात्रा—३० से २४० ग्रेन।

सोडियाई फॉस्फास एक्सिक्केटस् Sodii Phosphas Exsiccatus—यह एक श्वेतवर्ण का गंध हीन एवं स्वाद में लवणीय चूर्ण होता है, जो खुला रहने से नमी को ग्रहण करता है। मात्रा—१० से ७५ ग्रेन।

सोडियाइ फॉस्फास एसिडस् (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत—$NaH_2PO_4, 2H_2O$.

नाम—सोडियाइ फॉस्फास एसिडस Sodii Phosphas Acidus (Sod. Phosph. Acid)—ले०; सोडियम् डाइ-हाइड्रोजन फॉस्फेट Sodium Di-hydrgen Phosphate—रासायनिक; एसिड सोडियम् फॉस्फेट—अं० ।

वर्णन—रंगहीन मणिम या मणिमीय चूर्ण के रूप में; गन्धहीन, स्वाद में खट्टा एवं लवणीय (Saline)। विलेयता—१ भाग जल में १ भाग। मात्रा—३० से ६० ग्रेन।

मैगनीसियाइ सल्फास (मैग० सल्फ०) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत—$MgSO_4, 7H_2O$.

नाम—मैगनीसियाइ सल्फास Magnesii Sulphas (Mag. Sulph.)—ले०, एप्सम् साल्ट Epsom Salt—व्यावसायिक; मैगनीसियम् सल्फेट—अं०; मैगसल्फ—हि० ।

मात्रा—३० से २४० ग्रेन या २ माशा से १। तो० ।

मैगनीसियाइ सल्फास एक्सिकेटस Magnesii Sulphas Exsiccatus (I. P., B. P.) या अनार्द्र एप्सम् साल्ट (Dried Epsom Salt)। मात्रा—३० से १८० ग्रेन।

गुण-कर्म ।

इन लवणों का शोषण चूंकि आन्त्रों में मन्द गति से होता है, अतएव ये आन्त्रस्थ द्रव्य एवं परिसरीय धातुओं के आसृतीय (Osmotic) संतुलन को विकृत कर देते हैं। किन्तु कतिपय लवण शीघ्रतापूर्वक प्रचूषित भी होते हैं। यह अन्तर उनके संघटक अयनों के स्वभाव के कारण होता है। अतएव केटन्स (Cations) एवं केल्सियम्, मैगनीसियम् तथा गुरु धातुओं के योगिकों का शोषण मन्दगति से होता है, तथा अयन (Anions), फास्फेट्स, सल्फेट्स, टारट्रेट्स तथा साइट्रेट्स आदि का प्रचूषण शीघ्रतापूर्वक होता है। इनमें भास्मिक अयनों (Basic ions) में मैगनीसियम् तथा आम्लिक अयनों में साइट्रेट्स, फास्फेट्स, टारट्रेट्स तथा सल्फेट्स में रेचक गुणकर्म पाया जाता है। जब किसी लवण में दोनों अयन मन्द-प्रचूष्य होते हैं, तो उनमें यह रेचक प्रभाव तीव्रतर स्वरूप का होता है। यथा मैगनीसियम् सल्फेट में सोडियम् सल्फेट की अपेक्षा रेचकगुण तीव्रतर स्वरूप का होता है, क्योंकि दोनों में सल्फेट-अयन समान होता तथा सोडियम्-अयन का शोषण मैगनीसियम्-अयन की अपेक्षा शीघ्रतापूर्वक होता है। लवण विरेचन, वानस्पतिक विरेचनों की भांति आन्त्र में क्षोभक प्रभाव नहीं करते अपितु इनका प्रभाव शोषण न होने के कारण होता है।

इन लवणों के विलयन में अरुचिकर लवण-स्वाद होता है, तथा गाढ़े (संकेन्द्रित) विलयन के रूप में प्रयुक्त होने पर ये आमाशय में क्षोभक प्रभाव करते तथा उत्क्लेशकर भी हो सकते हैं। आन्त्र में विलम्ब तक रहने से ये परिसरीय धातुओं से द्रवांश का अपकर्षण करते हैं, अतएव इस प्रकार आन्त्र में द्रवांश की मात्रा बढ़ जाती है। इस प्रकार मात्रावृद्धि होने से आन्त्र पर भार पड़ता है, जिससे प्रत्यावर्तित रूपेण पुरःसरण गति (Peristalsis) तीव्रता-

पूर्वक होने लगती है। संकेन्द्रित विलयन के रूप में प्रयुक्त होने पर लवण विरेचनों की क्रिया और भी तीव्रतापूर्वक होती है। इन विरेचक लवणों का प्रयोग जितने अधिक संकेन्द्रित विलयन के रूप में किया जाता है, इनका रेचक प्रभाव भी उतना ही तीव्रतापूर्वक होता है।

लवणविरेचनों के आमयिक प्रयोग।

जिन व्यक्तियों में मलबन्ध की आदत हो, उनके लिए ये विरेचन परमोपयोगी होते हैं। स्तम्भिक मलावरोध (Stastic Constipation) में ये विशेष उपयोगी नहीं होते। इनका सेवन प्रायः प्रातःकाल पर्याप्त कोष्णजल में घोलकर खालीपेट की दशामें किया जाता है। सल्फेट तथा टारट्रेट को फेनायमान (Effervescing form) रूपमें भी प्रयुक्त करते हैं। प्रकृति में पाये जाने वाले अनेक खनिजजलों (Mineral waters) में भी सोडियम् एवं मैगनीसियम् सल्फेट आदि विरेचक लवण विलयन के रूपमें पाये जाते हैं, यथा कार्ल्सबाद (Carlsbad) मेरीनबाद (Marienbad), टारस्प (Tarasp) तथा कान्डल (Condal) आदि व्यवसायिक खनिज जलोंमें सोडियमसल्फेट तथा ईस्कलप (Aesculop) पुल्ना (Pullna), अपेन्टा (Apenta) तथा किसिनजन (Kissingen) आदि में सोडियम् एवं मैगनीसियम् सल्फेट दोनों पाये जाते हैं। फ्रिड्रिकशॉल (Friedrichshall) में उपरोक्त दोनों घटकों के अतिरिक्त खाने वाला लवण (Sodium Chloride) भी पाया जाता है। चिरकालज मलविबन्ध के रोगियों में नैसर्गिक चिकित्सा के रूपमें इनका सेवन बहुत उपयुक्त होता है। यदि तीव्रविरेचन कराना अभीष्ट हो तो इनके साथ अन्य वानस्पतिक रेचक औषधियाँ यथा पल्विस जलप को० या मिस्चुरा सेन्नी को० आदि सहायक औषधि की रूपमें मिला दी जाती हैं। सर्वांग शोफ (Dropsy), जलोदर (Ascites) तथा उरस्तोय (Hydrothorax) आदि में जब शरीर से द्रवापकर्षण करना अभीष्ट होता है, तो लवण विरेचनोंका संकेन्द्रित विलयन (गाढ़ा घोल) प्रयुक्त किया जाता है, अथवा इनको जलाप (Jalap) आदि अन्य तीव्र विरेचक द्रव्यों (Drastic purgatives) के साथ प्रयुक्त करते हैं। चूंकि ये प्रायः जलीय विरेचक (Hydragogue purgatives) होते हैं, तथा इनसे सम्यग्रूपेण कोष्ठ शुद्धि नहीं होती, अतएव इनके सेवन के पूर्व प्रायः अन्य उपयुक्त वानस्पतिक या पारदीय विरेचकों के प्रयोग की प्रथा है। जैसे पूर्व रात्रि को पहले कैलोमेल या ब्लू पिल्स की एक मात्रा दे दिया, तत्पश्चात् प्रातः लवण विरेचन का प्रयोग करें।

कभी-कभी ज्वरावस्था में लवण विरेचन के प्रयोग से तापक्रम की कमी में सहायता होती है। विषमज्वर में क्विनीन मिक्सचर के साथ मैगसल्फ या सोडासल्फ प्रायः मिला दिया जाता है। इसके अतिरिक्त पूतियुक्त मलखण्ड का उत्सर्ग हो जाने से आन्त्रगत पूतिभवन (Intestinal putrefaction) के निवारण में भी ये सहायक होते हैं।

रक्तभाराधिक्य में रक्तभार को कम करने के लिए विभिन्न व्यावसायिक खनिज जलों का प्रयोग दैनिक व्यवहार में किया जाता है। याकृतिक रक्त परिभ्रमणगत रक्ताधिक्य (Portal-Congestion) तथा वातरक्त एवं मिहिकाम्लिक प्रवृत्ति (Uric acid diathesis) के रोगियों में मलविबन्ध का उपद्रव होने पर लवण विरेचनों का प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। कृमिनाशक औषधियों के प्रयोगोपरान्त विरेचन के लिए लवण विरेचन ही सबसे उपयुक्त होते हैं।

वेसिलरीअतिसार में सोडियम् सल्फेट का प्रयोग कभी प्रधान औषधि के रूप में किया जाता है। वृक्क शोफ में मूत्रकृच्छ्र या अमूत्रता (Anuria) होनेपर मूत्रल के रूप में लवण विरेचनका प्रयोग करते हैं। रक्ताल्पता या पाण्डुरोग (Anaemia) में लौह चिकित्सा से विबन्ध होने पर कोष्ठ शुद्धि के लिए एप्सम् साल्ट (Epsom salt) एक उत्तम रेचक है।

सोडियम् फॉस्फेट अनुग्रवीर्य (Mild) का होने के कारण बच्चों एवं कोमल कोष्ठ वालों के लिए बहुत उपयुक्त होता है। ऑक्जेल्यूरिया (Oxaluria) तथा वस्तिशोफ (Cystitis) में विशेषतः B. Coli का उपसर्ग होनेपर क्षारीय मूत्र की प्रतिक्रिया आम्लिक करने के लिए एसिड सोडियम् फॉस्फेट का प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है। इसके लिए यह प्रायः ३० ग्रेन की मात्रा में प्रयुक्त किया जाता है।

२—मृदु विरेचक या सारक औषधियाँ (Laxatives)

अगर (Agar), I. P.

Family : Gelidiaceae

नाम—अगर-अगर Agar-agar, जापानीज आइसिंग्लास Japanese Isinglass, अगर Agar।

प्राप्ति-साधन—अगर शुष्क किया हुआ श्लिष्मिस (Gelatinous) पदार्थ है, जो विभिन्न एल्जी प्रजातियों (Algae) की वनस्पतियों से प्राप्त होता है। विभिन्न एल्जी प्रजातिओं का संग्रह कर उनको विरञ्जित करते (Bleaching) हैं, और तदनु उनका क्वाथ बनाकर उसको सघन बना लेते हैं।

अगर की प्राप्ति के लिए भिन्न भिन्न देशों में विभिन्न एल्गी-प्रजातियों का उपयोग करते हैं :—

(१) जेलिडियम् एमेंसाई Gelidium Amansii Lamouroux. (इंगलैंड)। किन्तु ब्रिटिश अगर आजकल 'जाइगर्टिना स्टिलेटा Gigartina Stellata (Stackh) Batt तथा कान्ड्रस क्रिस्पस Chondrus crispus. Stackh से भी बनाया जाता है।

(२) टेरोक्लेडिआ ल्युसिडा Pterocladia lucida (Turn.) J. Ag. तथा टेरोक्लेडिआ केपिलेसिआ Pterocladia Capillacea (Gmel.) Bor nand Thur. (न्यूजीलैंड)। यह रोडोफाइसी (Rhodophyceae or Red Algae) जाति की लाल रङ्ग की समुद्री घास होती है, जो न्यूजीलैंड में अगर-निर्माण में प्रयुक्त होती है।

(३) दक्षिणी अफ्रीका में अगर-निर्माण के हेतु निम्न एल्जी प्रयुक्त होते हैं—(१) ग्रेसिलेरिया कन्फर्वायडिज Gracilaria Confervoides (Linn.) Greville; (२) जेलिडियम् कार्टिलेजिनियम् Gelidium Cartilagineum (Linn) Gaillon तथा (३) जेलिडियम् प्रिस्टॉयडिज Gelidium

---

१. लॅक्सॅटिव्स् को आयुर्वेद में आनुलोमिक (च०), सर (सु०), अनुलोमन (शा०) और यूनानी वैद्यक में "मुलय्यिन" कहते हैं।

pristoides (Turn) Kuntry (४) संयुक्तराष्ट्र अमेरिका (U. S. A.) में अगर-निर्माण के लिए विशेषतः एल्जी की जेलिडियम् कार्टिलेजिनियम् (Gelium Cartilaginium) प्रजाति का उपयोग किया जाता है।

वक्तव्य—ज्ञात हो कि पहले विश्व में अगर के सबसे अधिक परिमाण में निर्माण जापान में होता था और सम्भवतः सारे संसार में अगर यहीं से भेजा जाता था। औषधि की अपेक्षा अगर की अधिक खपत व्यावसायिक द्रव्यों के निर्माण में होता है। इसी कारण अन्य देशों ने भी अपने-अपने देश में अगर निर्माण की व्यवस्था किया।

उत्पत्ति-स्थान—जापान का समुद्री-तट, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका। एशिया के पूर्वी समुद्री-तट एवं उत्तरी अमरीका के पश्चिमी समुद्री-तट पर उक्त एल्जी पुष्कल पाये जाते हैं।

निर्माण-विधि—ये एल्जी समुद्रतट के समीप के भाग में जहां पानी उथला होता है, चट्टान आदि पर लगे होते हैं। अतएव सरलतापूर्वक छोटी-छोटी नावों से भी इनका संग्रह किया जा सकता है। कहीं-कहीं खेती के रूप में इनकी अधिक उपज के लिए समुद्र में स्थान-स्थान पर लट्ठे गाड़ देते हैं, जिसके सहारे ये वृद्धि करते हैं। बाद में ये लट्ठे उखाड़ लिये जाते हैं और एल्जी को उनसे पृथक् कर लिया जाता है। यह संग्रह-कार्य प्रायः ग्रीष्मऋतु में विशेषतः जुलाई-अगस्त के महीने में किया जाता है। संग्रह कर लेने पर प्रथम उसको धूप में सुखाकर, डन्डों से पीटकर उसमें लगे बालू तथा कूड़ाकरकट आदि को साफ कर लेते हैं। अब पुनः पुनः जल से धोकर सुखाते हैं। इस प्रकार उसका विरञ्जन (Bleaching) हो जाता है। इस प्रकार से प्राप्त एल्जी ही अगर बनाने के लिये प्रयुक्त होता है। जाड़ों के महीनों में उनको उबालते हैं, जिससे म्यूसिलेज की भाँति अर्ध-घन द्रव प्राप्त होता है। एतदर्थ १ भाग विरञ्जित (Bleached) एल्जी को ६० भाग जल में उबालते हैं। कभी-कभी इसमें अल्पमात्रा में सल्फ्यूरिक एसिड अथवा एसेटिक एसिड भी मिला देते हैं। जब यह द्रव गर्म रहता है, उसी अवस्था में कपड़े में इसको छानकर अपद्रव्यों को पृथक् कर देते हैं। इसी प्रकार अनेक बार पिघलाते तथा छानते हैं, जिससे अपद्रव्य रहित स्वच्छ अगर-द्रव प्राप्त किया जाता है। अब इस द्रव को बड़ी-बड़ी तश्तरियों में लेकर ठंढा होने के लिए छोड़ दिया जाता है, जिससे वह जमकर जेली (Jelly) की भांति घन हो जाता है। जम जाने पर इसके छड़नुमा कतरे काट लेते हैं। इन कतरों को पिचकारीनुमा बने काष्ठ-यन्त्र (Syringe-like wooden apparatus) में भरकर, जिसके मुख पर नॉजिल (Nozzle) के स्थान में उपयुक्त आकार-प्रकार के छिद्रों वाली लोहे की जाली (Wire netting) लगी होती है, पीछे से पिस्टन (Piston) का दबाव देते हैं। आगे की जाली से सेवई की भांति अगर के पतले चिपटे पट्ट निकलते हैं। इनको शुष्क कर लेते हैं। यही व्यावसायिक अगर है।

स्वरूप—(Characters)—अगर के पतले-पतले, पारभासी (Translucent), प्रायः रङ्गहीन एवं चमकदार लम्बे-लम्बे कम चौड़े पतले पट्टनुमा टुकड़े (Strips), जो लगभग ४ मिलिमिटर चौड़े होते हैं; अथवा लगभग ४ सेंटीमीटर चौड़े तथा पीली आभायुक्त (Yellowish) फीते की भांति लम्बे-लम्बे टुकड़े (Bands) होते हैं; या खाकस्तरी आभा (Greyish-white) के पपड़ीदार हल्के टुकड़े (Flakes) अथवा स्थूलचूर्ण (Coarse powder) के रूप में होता है।

जल में भिगोने से जिलेटीन की भांति लवाबी घन के रूप में परिणत हो जाता है। यह ठंढे जल में अविलेय (Insoluble) होता है, किंतु गर्म पानी में इसको उबालने से यह पानी में घुल जाता तथा इस विलयन को पुनः ठन्डा करने पर यह जेली की भांति घन बन जाता है।

अगर पल्विस Agar Pulvis (Agar Pulv.)—ले०; पाउडर्ड अगर Powdered Agar—अं०। यह खाकस्तरी-हरित वर्ण का चूर्ण होता है। मात्रा—६० से २४० ग्रेन या ४ माशा से १। तो० तक।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अगर को जल के साथ (२०० भाग जल में १ भाग) उबालने से एक स्वादरहित अर्धघन द्रव प्राप्त होता है, जिसका उपयोग रोगियों के आहार के लिए किया जा सकता है। जब रोगी को अन्य आहार-द्रव्य देने की सुविधा न हो तो, ऐसी अवस्था में उनके पोषण के लिए यह एक उत्तम द्रव्य है। आन्त्रों में पहुंचने पर ज्यों का त्यों आगे चल जाता है। केवल अत्यल्प मात्रा (८ से २७ प्रतिशत) ही शोषित होती है। अन्त्रों में पहुँचकर आंत्रभित्ति से द्रवापकर्षण करने के कारण इसके मात्रा में वृद्धि हो जाती है, जिससे यह आन्त्र की पुरस्सरणगति पर उत्तेजक प्रभाव करता है। परिणामतः यह एक उत्तम मृदुसारक (Mild Laxative) द्रव्य है। शुष्क मल को मुलायम बनाकर उसका उत्सर्ग कराता है। अतएव आदती कब्ज Habitual Constipation) के रोगियों के लिए यह औषधि परमोपयुक्त है। इसका सेवन अकेले अथवा इसी प्रकार की प्रभाववाली औषधियाँ यथा लिक्विड पाराफिन या कस्करासगराडा के साथ भी किया जा सकता है।

सेलुलोस के (नॉट-ऑफिशल) सारक यौगिक :—

१—मेथिल सेलुलोस (Methyl Cellulose)—यह खाकस्तरी सफेद रंग का तन्तुमयचूर्ण (Greyish white fibrous powder) होता है, जो जल में भिगोने पर फूलकर गोंदिया घोल की तरह हो जाता है। बृहदन्त्र में पहुँचकर सारक कार्य करता है, अतएव चिरकालीन मलविबन्ध या कब्ज में उपयोगी है। मात्रा—१ से १½ ग्राम (१५ से २२ ग्रेन) दिन में तीन बार जल से सेवन करना चाहिए।

२—सोडियम् कॉर्बाक्सिमेथिल सेलुलोस (Sodium Carboxy-methyl cellulose)—इसका उपयोग भी मेथिल सेलुलोस की ही भांति होता है। मात्रा—१½ ग्राम (२२ ग्रेन) दिन में तीन बार।

ओलियम् रिसिनाइ Oleum Ricini (Ol. Ricin.), I. P.

कैस्टर ऑयल (Castor Oil) एरण्डतैल,

Family Euphorbiaceae (एरण्डादि-कुल)।

कैस्टर ऑयल या एरण्डतैल एक स्थिर तैल (Fixed oil) होता है, जो एरण्ड (रेंड़) के बीजों से प्रपीड़न (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

नाम। वृक्ष—इसके वृक्ष को लेटिन में रिसिनस् कॉम्युनिस् (Ricinus Communis Linn.) कहते हैं। बीज—अरंड, अरंडी, रेंडी—हिं०; एरण्ड बीज—सं०; भेरेंड बं०;

यरंडी द०; एरंड, एरंडी चे बीज— म०; एरंडी–गु०; खिर्वअ, बज्रुल् खिर्वअ—अ०; वेद अंजीर तुख्मे वेद अंजीर– फा०; कैस्टर सीड Costor Seed अं० । तैल—एरण्डतैल— सं०; रेंड़ी का तेल हि०; कैस्टर ऑयल Castor oil– अं० ।

उत्पत्ति–स्थान—समस्त भारतवर्ष ।

वर्णन—बाजार में मिलने वाला एरण्डतैल गाढ़ा एवं चिपचिपा (Viscid) प्रायः रंगहीन अथवा हल्के पीले रङ्ग के द्रव रूप में होता है। इसमें हल्की (जो प्रायः अरुचिकारक होती है) गंध होती है। स्वाद में किंचित् कटु एवं अरुचि कारक होता है। विलेयता—१ भाग ३–५ भाग अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है। यह निम्न ऑफिशल योगों में पड़ता है।

(१) कोलोडियम् फ्लेक्साइल Collodium Flexile (B. P.& I. P.)

(२) आयण्टमेण्ट ऑव जिंक ऑक्साइड एण्ड कस्टर ऑयल (B. P.)

रासायनिक संघटन— (१) रिसिनोलीन (Ricinolein) जो रिसिनोलीक (Ricinoleic एवं आइसोरिसिनोलीक (Isoricinoleic) एसिड्स के ग्लिसराइड्स (Glycerides) का मिश्रण होता है। रिसिनोलीक एसिड (Ricinoleic Acid) एरण्ड तैलका रेचक कर्म इसी के प्रभाव से होता है ऐसा लोगों का विश्वास है। तथा (२) स्टियरिक एवं डाइहाइड्रॉक्सिस्टियरिक एसिड (Stearic and dihydroxystearic acid) के ग्लिसराइड्स ।

मात्रा—६० से २४० मिनम् (१ड्राम से ४ ड्राम तक ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

वाह्य—वाह्य प्रयोग से एरण्ड तैल (रेंड़ी का तेल) त्वचा एवं श्लैष्मिक–कला पर वेदनाहर एवं संशामक (Soothing and Sedative) प्रभाव करता है। नेत्र में अप-द्रव्य (Foreign body) पड़ने से उसके क्षोभ से जो लाली एवं दर्द होता है, उसमें नेत्र में १–२ बून्द कॅस्टर ऑयल डालने से उसका शमन होता है। लेकिन इसके स्थान पर लिक्विड पाराफिन अधिक उपयुक्त होता है। अल्कोहल् मिलाया हुआ कॅस्टर ऑयल सिर के बालों पर बल्य (Hair tonic) प्रभाव करता है। अतएव यह विभिन्न केश–तैलों (Hair Oils) एवं पामेड्स (Pomades) में आधार-द्रव्य (Basis) के रूप में प्रयुक्त होता है।

आभ्यन्तर—१। तोला से २॥ तोला की मात्रा में कॅस्टर ऑयल का मुखद्वारा सेवन करने से यह उत्तम रेचक प्रभाव करता है। ग्रहणी में पहुँचने पर पित्त की उपस्थिति में अग्न्याशयिक रस (Pancreatic juice) की क्रिया से इसका प्रधान घटक रिसिनोलिएट ऑव ग्लिसरोल (Ricinoleate of glycerol) विघटित या विच्छिन्न होकर, ग्लिसरोल एवं रिसिनोलीक एसिड नामक दो उपादानों में परिणत हो जाता है। इस प्रकार कॅस्टर ऑयल का रेचक तत्व रिसिनोलीकएसिड स्वतन्त्र हो जाता है और आन्त्र पर क्षोभक प्रभाव करने से शीघ्रता-पूर्वक (२ से ६ घंटे में) अपना रेचक कर्म करता है। कैस्टर आयल में यह विशेषता है, कि इससे जुलाब होने में न तो आँतों में मरोड़ या ऐंठन (Gripes) होती है और न तो कोई आनु-षंगिक-कुप्रभाव (After-effects) ही प्रगट होते हैं। अतएव बालक, वृद्ध, दुर्बल व्यक्तियों तथा कोमल प्रकृतिवालों एवं स्त्रियों के लिए (गर्भावस्था तथा प्रसवोत्तर काल में भी) एरण्ड

तैल एक परमोपयुक्त एवं निरापद (Safe) जुलाब है। रेचन कर्म के साथ-साथ यह आन्त्रमार्ग का स्नेहन भी करता है। अतएव बवासीर एवं गुदचीर (Anal fissure) के रोगियों में कब्ज निवारण के लिए यह एक उत्तम औषधि है। उदरप्रदेश के शल्यकर्म, कटि-रोग (Pelvic-diseases), उदर्य्याकलाशोथ (Peritonitis), ज्वर, विशेषतः टायफ्वाइड में कब्ज होने पर पेट साफ कराने के लिए एरण्डतैल ही सबसे उपयुक्त एवं निरापद रेचक औषधि होती है।

बच्चों या युवकों में जब अनपच (Indigestion) होता है तथा अपचित आहार के आन्त्र में रहने पर या कठिनमल के सुद्दों के पेट में रहने के कारण क्षोभ से अतिसार (Diarrhoea) हो जाता है, तो ऐसी अवस्था में कोई अन्य औषधि न देकर भी यदि कॅस्टर ऑयल की एक मात्रा दे दी जाय तो उक्त क्षोभकारक अपद्रव्य के निकल जाने से अतिसार अपने आप बन्द हो जाता है। एतदर्थ कभी-कभी कॅस्टर ऑयल को टिंक्चर ओपियम् या अन्य उपयुक्त सहकारी औषधियों के साथ भी देते हैं। इसी प्रकार उग्र आँव पड़ने की अवस्था में (Acute dysentery) में यदि पहले कॅस्टर ऑयल से पेट साफ करके औषधि दी जाय तो जल्दी आराम होता है। इसी प्रकार जीर्णावस्था (Chronic) में भी अल्प मात्रा में (१५ से ३० बूंद) कॅस्टर ऑयल टिंक्चर ओपियम् के साथ देने से बहुत लाभ होता है।

आयुर्वेदीय मतानुसार एरण्ड एक तीव्र वातनाशक औषधि है, और प्रायः इसके सभी अंशों का विभिन्न कल्पों के रूप में विभिन्न वात-व्याधियों में एरण्ड का प्रयोग आयुर्वेदीय एवं हकीमी चिकित्सा पद्धति में होता है। अतएव उक्त अवस्थाओं में यदि रेचन करावें या केवल साधारण रेचन कराना हो तो ऐसी अवस्था में कॅस्टर ऑयल से बढ़कर दूसरी कोई औषधि नहीं है। क्योंकि रेचन के साथ-साथ उक्त व्याधि वातज होने के कारण यह औषधि का भी कार्य करता है। ऐसी अवस्था में इसका सेवन निरन्तर कुछ दिनों तक करना चाहिए और तैल का सेवन कम मात्रा में (प्रायः १ तोला) तथा रात्रि में सोते समय करना चाहिए। मलाशय शुद्धि के लिए एरण्ड तैल का प्रयोग वस्तिया एनिमा (Enema) के रूप में भी किया जाता है।

कॅस्टर ऑयल में रेचक औषधि के रूप में दूसरी विशेषता (जो अन्य रेचक औषधियों में नहीं है) यह है कि रेचन कराने के बाद यह प्रायः सबका सब अन्तिम दस्त के साथ उत्सर्गित हो जाता है। यदि कदाचित् इसका अल्पांश अन्त्रों से शोषित भी होता है, वह भी अन्य स्थिर तैलों की भांति जारित (Oxidised) हो जाता है। अतएव अधिक मात्रा में सेवन किए जाने पर भी इससे कोई अनिष्ट होने की आशंका नहीं रहती। इसीलिए इसे अत्यंत निरापद रेचक औषधि कहा जाता है।

सेवन-विधि—स्वस्थ व्यक्ति को जुलाब के लिए यदि इसका सेवन करना हो तो प्रायः एक ही मात्रा में प्रातःकाल लेना चाहिए। कॅस्टर आयल के सेवन में केवल एक ही कठिनाई पड़ती है कि इसमें एक हल्की अरुचिकारक गंध होती है, जिसके कारण रईसतबा लोग इसके सेवन में अरुचि प्रगट करते हैं। इसके लिए इसको इमल्सन के रूप में या जिलेटिन कैप्स्यूल्स में भरकर दे सकते हैं, अथवा दूसरा श्रेष्ठतर तरीका यह है कि इसको गर्म दूध, चाय या कॉफी में मिलाकर लें। अथवा यदि नाक बन्द करके दवा पी जाय तो भी कोई दिक्कत नहीं होती, क्योंकि इसमें जो भी आपत्ति है वह गन्ध से। तेल पीने के बाद १–१ घन्टे के बाद गर्म जल

पीते रहना चाहिए इससे इसकी रेचक क्रिया में शैथिल्य नहीं होने पाता। यदि औषधीय रूप में सेवन करना हो और यह अभीष्ट हो कि एक पाखाना रोज खुलकर हो जाय तो ऐसी अवस्था में तेल को रात्रि में सोते समय और साधारण मात्रा में (६ माशा से १ तोला) लेना चाहिए। यदि काढ़े (क्वाथ) आदि के साथ लेना हो तो उसमें मिलाकर लेना चाहिए। बच्चों को अपेक्षाकृत कुछ अधिक मात्रा में भी यह सह्य होता है।

कॅस्टरऑयल-घटित नुस्खे:—

(१) ओलियम् रिसिनाई Ol. Ricin. १२० बून्द (२ ड्राम)
म्युसिलेज एकेसिई Mucil. Acac. आवश्यकतानुसार (Q. S.)
ओलियम् लाइमोनिस Oil. Limon. २ बून्द
एक्वा मेन्था० पिप० Aq. Menth. Pip, १ औंस

(२) ओलियम् रिसिनाइ १ फ्लुइड औंस
ओलियम् ऑलिवी Ol. Oliv. ४ ,, ,,
ओलियम् टरबेंथिनी Ol. Terbinth. ६० बून्द

सबको मिलाकर गुद वस्ति दें। संचित कठिन मल (Impacted foecal mass) को निकालने के लिए बहुत उपयोगी है।

बेली फ्रक्टस (Belae Fructus) I. P.

(बिल्व-फल, श्रीफल)

Family : Rutaceae (जम्बीर-कुल)

प्राप्ति-साधन—बेल, ईगलमार्मेलोस् Aegle marmelos (Linn.) Correa नामक वृक्ष के ताजे कच्चे (Unripe) या अर्ध-पक्व (Half-ripe) फल होते हैं।

नाम—बेल—हिं०, बं०; बिल्व—सं०; बिली—गु०; बेल—म०; बेल, सीफल-पं०; सफ़रजले हिन्दी- अ०; बेह हिंदी, बलं, शुल्ल—फा०; ईगल मार्मेलोस् Aegle Mormelos (Linn) Cerrea—ले०; बेल फ्रूट Bael Fruit, बेंगाल क्विंस Bengal Quince—अं०।

उत्पत्तिस्थान—समस्त भारत वर्ष में इसके स्वयं जात (जंगली) या लगाये हुए पेड़ मिलते हैं।

रासायनिक संघटन—(१) इसका सबसे प्रधान घटक (उपादान) मार्मेलोसिन(Marmelosin) नामक मणिभीय स्वरूपका तत्व है; (२) पेक्टिन (Pectin); (३) टैनिन (Tannin) तथा (४) म्युसिलेज एवं शर्करा (Sugar) इत्यादि।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

कच्चा बेल (बेलगिरी) ग्राही (Astringent) किन्तु पक्व फल का गूदा इसके विपरीत मृदुसारक (Laxative) होता है। अतएव पके फल का गूदा स्तम्भिक एवं चिरकालीन (पुराने) मलविबन्ध (कब्ज) में लाभप्रद होता है। एदतर्थ गूदे को अकेले खाया

जा सकता है, अथवा जलमें उसे घोलकर उसके साधारण मात्रा शर्करा की मिलाकर शर्बत के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। कच्चे फल को तोड़कर उसका छिलका उतार उसके कतरे (Slices) काट, धूपमें सुखा कर संग्रह कर लिया जाता है। बाजार में यह बेल गिरी के नाम से मिलता है। अन्य उपयुक्त औषधियों के साथ इसका काढ़ा (Decoction) देने से सफेद आँव (Mucous Diarrhoea) एवं लाल आँव या प्रवाहिका (Dysentery) में बहुत लाभ होता है। स्नेहन (Demulcent) एवं मृदुसारक (Laxative) प्रभाव के लिए पके बेल के गूद्दे का सेवन **प्रवाहिका के रोगोत्तर** काल में (During Convalescence from dysentry) बहुत उपयोगी होता है। ऐसे **अग्निमांद्य** (Dyspepsia) के रोगियों में, जिनमें कभी तो कब्ज रहता है और फिर अतिसार होने लगता है और यही क्रम बराबर बना रहता है, बेल का सेवन बहुत उपयोगी होता है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्राक्टम् बेली फ्रक्टस लिक्विडम् Extractum Belae Fructus Liquidum I.P.L. (Ext. Bel. Fruct. Liq.)–ले०; लिकिड एक्स्ट्रक्ट ऑव बेल फ्रूट Liquid Extract of Bael Fruit अं०; बिल्व का प्रवाही घनसत्व—सं०, हिं०। मात्रा—६० से १२० मिनम् (बूंद) या ४ से ८ मि० लि०।

इ (ई) सबगोल (Ispaghula) I. P.

Family: Plantaginaceae (ईषद्गोलादि-कुल)

इसब(र)गोल एक प्रकार के शुष्क बीज होते हैं, जो प्लॅन्टेगो (Plantago) जाति की विभिन्न वनस्पतियों से प्राप्त किए जाते हैं।

नाम—इसबगोल, इसरगोल—हिं०; ईषद्गोल, अश्वकर्णबीज—सं०; उथमुजीरुं—गु०; अस्पग़ोल, शिकमदरीद—फा०; प्लॅन्टेगो सीड Plantago seed, साइ(सि)लियम् सीड Psyllium seed, प्लॅन्टेन सीड Plantain seed, इसफ़गुल, Isafgul Ispaghula—अं०।

प्राप्ति-साधन—ईसबगोल बीज, मुख्यतः प्लन्टेगो जाति की निम्न २ वनस्पतियों से प्राप्त किया जाता है। किन्तु बाजार में जो इसबगोल बीज मिलता है, उसमें तीसरी उपजाति के बीज भी मिले होते हैं।

(१) प्लॅन्टेगो साइलियम् Plantago psyllium, Linn.

(२) प्लॅन्टेगो ओवेटा Plantago ovata Forskal.

(३) प्लॅन्टेगो इन्डिका Plantago indica, Linn. (Plantago arenaria Waldstein et kitaihel)।

वक्तव्य—(१) प्रथम तथा द्वितीय पौधों से प्राप्त होने वाले इसबगोल बीज का व्यावसायिक नाम स्पेनिस साइलियम् सीड या फ्रेंच साइलियम सीड Spanish or French Psyllium seed) है।

नं०२ की वनस्पति (Plantago ovata) से प्राप्त होने वाले इसबगोल का व्यावसायिक नाम ब्लॉन्ड साइलियम सीड या इन्डियन प्लेन्टेगो सीड (Blond Psyllium Seed or Indian Plantago seed) है।

(२) 'Plantago' शब्द लेटिन से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है 'पादतल Sole of the foot.' इसबगोल की पत्तियों की रूप-रेखा पादतल की तरह होती है, अतएव ऐसा नामकरण किया गया है। Psyllium शब्द यूनानी (Greek) से व्युत्पन्न हैं, जिसका अर्थ होता है Flea--पंख रहित फुदकने वाला एक प्रकारका कीड़ा। इसबगोलके बीजोंका रंग-रूप बहुत कुछ इस कीड़े से मिलता-जुलता है। इसीसे इसको 'Psyllium seed या Flea seed' कहा गया है। "arenaria शब्द लेटिन 'arena' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है 'बालू Sand (सैंड)"। चूंकि उक्त पौधा बालुकामय भूमि में अधिक होता है, इसलिए उसका नामकरण, 'Plantago arenaria' किया गया प्रतीत होता है। भारतवर्ष में पाई जाने वाली ईसबगोल जातिके नाम 'Plantago ovata' में 'ovata' शब्द उक्त वनस्पति की पत्तियों के आकार का द्योतक है।

(३) फारसी 'अस्पग़ोल' शब्द का अर्थ (अस्प—घोड़ा, गोल—कर्ण या कान) अश्वकर्ण है। इसके बीज घोड़े के कान जैसे होते हैं, अतएव इसका फारसी एवं संस्कृत नामकरण क्रमशः 'अस्पगोल' एवं 'अश्वकर्ण बीज' किया गया प्रतीत होता है।

उत्पत्ति स्थान—इसबगोल की प्रथम उपजाति का उत्पत्ति-स्थल स्पेन एवं फ्रांस है। दूसरी एवं तीसरी उपजाति (Plantago ovata) फारस एवं भारतवर्ष में पंजाब सिंध और सतलज से पश्चिम की ओर के पहाड़ी प्रदेशों में स्वयंजात रूप से प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। भारतवर्ष में स्थान-स्थान पर इसकी खेती भी होती है। भारतवर्ष में इसबगोल का आयात प्रधानतः फारस से होता है।

वर्णन—प्लेन्टेगो सिलियम् (Plantago Psyllium) के एक वर्षायु छोटे-छोटे पौधे (Herbs) होते हैं, जो भूमध्य-सागरीय देशों में स्वयंजात रूप से होते हैं। फ्रांस में काफी परिमाण में इसकी खेती भी की जाती है। अनेक देशों में इसबगोल का आयात यहीं से होता है। Plantago ovata से इसकी वनस्पति में यह अन्तर होता है कि इसके पौधे में काण्ड (stem) का अस्तित्व स्पष्ट मालूम पड़ता (Caulescent) है, किन्तु P. ovata में शाखायें मूल से ही निकली होती हैं और काण्ड पर्ण-वृन्त के रूप में दिखाई देता है। फल २ कोष्ठों वाला, जिनमें प्रत्येक में एक-एक बीज होता है।

Plantago ovata, भारतवर्ष तथा एशिया के अन्य देशों में प्रचुरता से पाया जाता है। भारतवर्ष तथा फारस में काफी परिमाण में इसकी खेती भी की जाती है। बीजों का संग्रह जंगली एवं लगाये हुए—दोनों प्रकार के पौधों से किया जाता है।

बीज—प्लैन्टेगो ओवेटा (P.Ovata) के बीज आकार में चौड़े-अंडाकार (Broadly elliptical) से लट्वाकार (Ovate), २ से ३½ मिलिमिटर लम्बे तथा १ से १½ मिलिमिटर चौड़े होते हैं। रंग में ये बीज खाकस्तरी-आभा लिए हलके भूरे रंग के (Pale Brown) होते हैं। एक तल खातोदर (Concave) तथा दूसरा उन्नतोदर (Convex) होता है।

ये बीज देखने में नाव के आकार के (Boat-shaped) लगते हैं। किनारों पर गुलाबी धारायें (Pinkish tinge) होती हैं। उन्नत-तल के मध्य में एक चमकदार भूरे रंग का अनुलम्ब विन्दु (Elongated spot) होता है। यह इसका विशिष्ट विभेदक लक्षण है। खातोदर तल के मध्य में एक गर्त (Deep cavity) होता है, जिसमें नाभि (Hilum) स्थित होती है और एक अत्यन्त पतले श्वेताभ (Whitish) पर्दे से ढकी होती है।

P. syllium के बीज गुलाबी लिए भूरे रङ्ग के होते हैं। उन्नत पृष्ठतल (Convex dorsal surface) पर चौड़े सिरे की ओर एक अनुप्रस्थ (Transverse) परिखा (Groove) वत् रचना होती है। इस तल के बीचो-बीच अनुलम्बदिशा में बीज की पूरी लम्बाई में एक भूरी रेखा होती है। खातोदर तलकी रचना P. ovata की भांति।

रासायनिक संघटन—मुख्यतया म्युसिलेज (Mucilage), (२) एक स्थिरतैल तथा (३) अल्ब्युमिनीय पदार्थ (Albuminous matter)। मात्रा ७५ से २२५ ग्रेन (४ माशा से १ तोला) या ५ से १५ ग्राम।

इस्पगुली टेस्टा Ispaghulae Testa (Ispagh. Test)—ले०; इसपगुल हस्क (Isafgul Husk), सिलियम् सीड हस्क Psyllium Seed Husk—अं०। ईसब गोल की भूसि—हिं०। मात्रा ८ से ३० ग्रेन (४ रत्ती से २ माशा) या ०.५ से २ ग्राम।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—बीजों को जव-कुट करके जल में भिगोने से लुआबी हो जाता है, जो तीसी की पुल्टिस की भाँति एक उत्तम मार्दवकर पुल्टिस (Emollient poultice) होता है।

आभ्यन्तर—मुखद्वारा सेवन करने से इसकी क्रिया अगर की भाँति होती है। अर्थात् द्रवमें फूलकर परिमाण में वृद्धि करता तथा आन्त्रों में स्नेहन (Demulcent) एवं मृदु-सारक (Mild Laxative) क्रिया करता है। यदि सोते समय इसबगोल के बीजों का जवकुट चूर्ण २–३ चम्मच लेकर उसमें थोड़ी कची चीनी मिलाकर जल से फाँक लिया जाय तो प्रातः बिना किसी ऐंठन मरोड़ के १-२ साफ दस्त आ जाते हैं। इसबगोल में म्युसिलेज का अंश इतना होता है कि यदि एक भाग इसबगोल को ४० भाग जल में भिंगो दिया जाय तो बीज जल में फूलकर, लुआबी घन- सा (Mass) जम जाता है। उक्त योग उग्र एवं चिरकालीन-प्रवाहिका (Acute and Chronic dysentery) में एक उत्तम घरेलू औषधि है। इससे एक और लाभ होता है, कि यह आंतों की श्लेष्मिक कला पर एक रक्षक-स्तर बनाता है, जिससे विकारी जीवाणुओं की वृद्धि नहीं होने पाती और साथ ही साथ यह विषैले पदार्थों (Toxnis) का अधिचूषण (Adsorption): कर लेता है, जिससे उक्त विषों का आँतों से प्रचूषण (Absorption) नहीं होने पाता। लाल आँव पड़ने पर (Dysentery) इसको यदि इंद्रयव (कुटज बीज) के साथ दिया जाय तो और भी लाभप्रद सिद्ध होता है।

शुष्ककास (Dry Cough) एवं गले की खरता तथा गलव्रणता (Sorethroat) में इसका क्वाथ बहुत उपयोगी होता है। इससे कण्ठ एवं श्वास प्रणाली की श्लैष्मिक कला पर

स्नेहन (Demulcent) प्रभाव होकर कफ (बलगम) आसानी से निकलता है। एतदर्थ इसबगोल को जल में भिगोकर उसमें शर्करा मिलाकर शर्बत के रूप में भी लिया जा सकता है। उक्त शरबत पूयमेह (Gonorrhoea) में भी बहुत उपयोगी होता है, क्योंकि एक तो यह मूत्रल (Diuretic) प्रभाव करता है, साथ ही मूत्रोत्सर्ग के समय पेशाब की जलन एवं कड़क आदि विकारों को भी शान्त करता है।

६—एन्थ्रासीन वर्ग की रेचक औषधियाँ।

(Anthracene Purgatives)

इस वर्ग में निम्न ४ औषधियों का समावेश होता है:—

(१) मुसब्बर या एलो (Aloe)
(२) रेवन्दचीनी या रुवर्ब (Rhubarb)
(३) सनाय या सेन्ना (Senna)
तथा (४) कॅस्करा सेगरेडा (Cascara Sagrada)।

इनकी क्रियाशीलता इनमें पाये जानेवाले सामान्य घटक एन्थ्रासीन (Anthracene $C_{14}H_{10}$, के कारण होती है। इन औषधियों का दूसरा सामान्य घटक इमोडिन (Emodin) अथवा ट्राइ ऑक्सीमेथिल एन्थ्राक्विनोन (Trioxymethyl anthraquinone) है। रेवन्द चीनी (रहुबार्ब) एवं सनाय में उक्त सामान्य घटकों के अतिरिक्त क्राइसोफेनिक एसिड (Chrysophanic acid) अथवा डाइऑक्सीमेथिल एन्थ्राक्विनोन (Dioxymethyl anthraquinone) भी पाया जाता है, जिसके कारण इनका सेवन करने पर मूत्र का रंग पीताभ-भूरा (Yellowish- brown) हो जाता है। इनका रेचक प्रभाव मध्यम स्वरूप का होता है, अर्थात् न तो ये अत्यन्त मृदु और न अत्यंत तीव्र रेचक प्रभाव करती हैं। इन रेचक औषधियों की सबसे बड़ी उपयोगिता आदती कब्ज (Habitual Constipation) में होती है। दूसरी विशेषता इनकी यह है कि इनकी क्रिया पित्त (Bile) की उपस्थिति में होती है। इन औषधियों की क्रिया विशेषतः बृहदन्त्र पर होती है। इसीलिए इनके रेचक प्रभाव के होने में लगभग १०–१४ घंटे लग जाते हैं। इनका रेचक प्रभाव आंत्र के पेशी-सूत्रों की संकोच-क्रिया में वृद्धि होने से होती है। अतएव इस वर्ग का रेचक औषधियों के सेवन में यह एक दोष है, कि ये आंतों में ऐंठन या मरोड़ (Griping) पैदा करती हैं। अतएव इनके साथ इस दोष के निवारण के लिए हायोसायमस, वेलाडोना या कोई उत्पत् तैल मिला देते हैं।

एलो Aloe या मुसब्बर (कुमारी-रससार)

Family : Liliaceae (पलाण्डु-कुल)

कुमारी-रससार (एलुआ या मुसब्बर) घनीभूत रस होता है, जो घृतकुमारी की विभिन्न प्रजातियों के मांसल पत्तों पर चीरा देने से प्राप्त होता है।

नाम—कुमारी-रससार एलुआ (वा), मुसब्बर—हिं०; कुमारी-ऐलेयक, कृष्णबोल—सं०; मोशब्बर—बं०; एलिया, कालाबोल—म०; एलीओ—गु०; सिब्र—अ०; सिब्र, बोल सियाह, शबयार—फा०; एलोज़ (Aloes)—अं०।

प्राप्ति-साधन—व्यावसायिक एलुआ, घृतकुमारी (Aloe) की (उपजातियों) निम्न प्रजातियों (Species) से प्राप्त किया जाता है:—

(१) एलो फेरोक्स Aloe ferox, Miller.
(२) एलो वेरा Aloe vera, Linn. var. officinais (Forske) Baker.
(३) एलो पेरेई Aloe Perryi, Baker.

उत्पत्ति-स्थान—एलो फेरोक्स दक्षिणी अफरीका (Cape Province) में पुष्कल होता है। एलो वेरा, पश्चिमी द्वीप-समूह, कुराकाओ (Curacao) तथा बारबेडोज (Barbadoes) आदि देशों में होता है। एलो पेरेई, अफ्रीका के उत्तरी-पूर्वी समुद्र-तट के समीप स्थित स्कोत्रा (Scotra) तथा पूर्वी-समुद्रतट के समीप स्थित जंजीवर (Zanzibar) द्वीप से प्राप्त होता है।

टिप्पणी—ऊपर वर्णित एलो (Aloe) या कुमारी की विभिन्न प्रजातियों के उत्पत्ति-स्थान के आधार पर उनसे प्राप्त होने वाले मुसब्बर या एलुआ का तथा वहाँ की कुमारी का व्यावसायिक (Commercial) नामकरण उन्हीं स्थानों के नाम पर किया गया है। यथा दक्षिणी अफरीका के केपप्रान्त (Cape Province) से प्राप्त होने वाले एलुआ को तथा वहाँ होनेवाली मुसब्बर प्रजातियों को केप एलोज़ (Cape Aloes) कहते हैं। इसी प्रकार पश्चिमी द्वीप समूह तथा कुराकाओ (Curacao) एवं बारबेडोज से प्राप्त होने वाले एलुआ एवं वहाँ उत्पन्न होने वाली कुमारी को कुराकाओ या बारबेडोज एलोज़ (Curacao or Barbadoes Aloes) एवं स्कोत्रा तथा जंज़ीवार द्वीपों की कुमारी एवं एलुआ को स्कोत्रीन या जंज़ीवार एलोज़ (Scotrine or Zanzibar Aloes) कहते हैं।

वक्तव्य—भारतीय एलुआ एलोवेरा (Aloe vera Tourn. ex Linn. पर्याय-Aloe barbadensis Linn.) से प्राप्त किया जाता है। यह भारतवर्ष में सर्वत्र होता है। भारतवर्ष में सर्वत्र इसकी खेती की जाती है। आयुर्वेद तथा यूनानी चिकित्सा में घृतकुमारी एवं एलुआ का प्रयोग बहुत दिनों से तथा अधिक मात्रा में होता आ रहा है। यह अनेक योगों में प्रधान घटक के रूप में पड़ता है।

नाम—घीकुआर, ग्वारपाठा, गोंड़पट्ठा—हिं०; घृतकुमारी, कुमारी, गृहकन्या—सं०; घृतकुमारी—बं०; कोरकांड, कोरफड—म०; कुंवार, कुंवारपाठुं—गु०; सब्बारत, नबातुस्सिब्र—अ०; दरख्ते सिब्र—फा०; एलो इन्डिका Aloe indica, एलो वेरा Aloe vera—ले०; कॉमन इन्डियन एलो Common Indian Aloe—अं०।

वर्णन। पौधा—घृतकुमारी (Aloe) की औषधोपयुक्त प्रायः सभी प्रजातियों के छोटे-बड़े गुल्म (Shrubs) होते हैं। उपर्युक्त प्रजातियों में अफ्रीकी प्रजाति (Aloe ferox) अन्य की अपेक्षा सबसे ऊँचा होता है। इसके पौधे ऊँचाई में लगभग ३ गज से लेकर ६ गज तक ऊँचे होते हैं। इसमें विनाल (Sessile) मोटी एवं मांसल पत्तियों का पुञ्ज (Rosette of leaves) होता है तथा श्वेताभ (Whitish) वर्ण के पुष्पों का पुष्प-ध्वज (Spike) निकलता है। सफेद फूल बाद में कभी-कभी लाल या पीले हो जाते हैं। पत्तियाँ लगभग ६–२० इंच लम्बी होती हैं तथा इनके

तटों (Margins) तथा दोनों पृष्ठों पर क्षुद्र कांटे (Prickles) होते हैं। स्कोत्री एलो के पौधे अन्य उपजातियों की अपेक्षा कुछ छोटे होते हैं।

भारतवर्ष में प्रायः (Aloe vera) उपजाति की घृतकुमारी तथा इसी का एक भेद (variety) अर्थात् Aloe chinensis. Baker पाया जाता है। इसके पौधे प्रायः अफ्रिकन उपजाति की अपेक्षा छोटे तथा स्कोत्री उपजाति से बड़े होते हैं। इसके पौधे भी बहुवर्षायु शाक जातीय (Perennial herbs) होते हैं। काण्ड कभी कभी सशाख होता है। पुष्प पीत वर्ण के होते हैं। Aloe Chinensis के पत्ते Aloe vera की अपेक्षा कुछ छोटे होते हैं, जिनके पृष्ठ तल पर बिन्दुमय चिन्ह होते (Spotted) हैं। घृतकुमारी की पत्तियों पर चीरा देने से पीले रंग का एक गाढ़ा रस निकलता है। यही घनीभूतरस व्यावसायिक Aloe (एलौ) या मुसब्बर या एलुआ होता है।

एलो (Aloe) या मुसब्बर—केप एलोज (Cape Aloes) अर्थात् अफ्रीकी एलुआ, गाढ़े भूरे रंग के अथवा हरिताभ भूरे रंग (Greenish brown) के चमकदार (Glossy) पिण्डों (Masses) के रूप में होता है। इसके पतले टुकड़े (चप्पड़) पारदर्शक (Transparent) होते हैं। कुराकाओं एवं बारबेडोज एलुआ के गाढ़े चाकलेटी भूरे रंग के अपारदर्शक (Opaque) पिण्ड होते हैं। एलुआ में एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है तथा स्वाद में यह तिक्त एवं उत्क्लेशकारक (Nauseous) होता है। विलेयता—अल्कोहल् (६० प्रतिशत) में पूर्णतः विलेय होता है।

रासायनिक-संघटन—(१) एलोइन Aloin (बारबेलोइन Barbaloin)—यह हल्के पीले रंग का मणिमीय ग्लाइकोसाइड (Crystalline glycoside) होता है, जो जल में विलेय (Water-Soluble) होता है। इसके अतिरिक्त एलोइन में बी-बारबेलोइन (B-Barbaloin) नामक एक अरूपिक एवं जल विलेय तत्त्व का जो बारबेलोइन के समरूपिक (Isomeric) होता है, तथा आइसो-बारबेलोइन (Iso-Barbaloin) नामक मणिमीय तत्व का समावेश होता है। कुराकाओ एलोज में एलोइन की ३०% मात्रा तथा केप-एलोज़ में १०% मात्रा पाई जाती है। (२) एलो-इमोडिन (Aloe.emodins); (३) राल (Resin); अल्प मात्रा में गैलिक एसिड तथा उत्पत् तैल।

एलोइन—यह हल्के पीले रंग का सूक्ष्मदर्शकगम्य गंधहीन, मणिमीय चूर्ण (Microcrystalline powder) होता है, जो स्वाद में अत्यंक्त तिक्त होता तथा जल एवं अल्कोहल् (६० %) में पूर्णतः विलेय होता है। मात्रा—¼ से १ ग्रेन या १५ से ६० मिलिग्राम।

एलोज पल्विसAloes Pulvis (Aloe Pulv.)—ले०; पाउडर्ड एलोज powdered Aloes—अ०; एलुआ का चूर्ण—हिं०। यह हल्का पीलापन लिए हुए भूरे रंग का अथवा लाली लिये गाढ़े भूरे रंग का चूर्ण होता है। मात्रा—२ से ५ ग्रेन या १ से २½ रत्ती। यह निम्न योगों में पड़ता है:—

(१) एक्स्ट्रैक्टम् कोलोसिन्थिडिस कम्पोजिटम्।

(२) पिल्युला कोलोसिन्थिडिस एट हायासोयमाइ।

(३) पिल्युला रहियाइ कंम्पोजिटा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र प्रणाली—रस में तिक्त होने के कारण अल्प मात्रा में यह दीपन (Stomachic) तथा तिक्तवल्य (Bitter tonic) होता है। एलुआ का **रेचक प्रभाव** इसमें पाये जाने वाले एलोइन (Aloin) नामक ग्लाइकोसाइड के कारण होता है। आंत में पहुंचने पर पित्त की क्रियासे इसका जलांशन (Hydrolysis) होकर इसका एन्थ्राक्विनोन घटक स्वतंत्र हो जाता है, जो बृहदन्त्र (Colon) पर क्षोभक प्रभाव करके पुरस्सरण गति (Peristalsis) को बढ़ाता है, जिससे रेचक क्रिया होती है। किन्तु इसमें दो त्रुटियाँ हैं। एक तो इसकी क्रिया मन्द होने से रेचन में १०-१२ घंटे लग जाते हैं, दूसरे यह आंतों में मरोड़ (Griping) पैदा करता है। यदि अधिक मात्रा में दिया जाय तो रेचन तो शीघ्र होगा नहीं, प्रत्युत आंतों में मरोड़ (ऐंठन) तथा कुन्थन (Tenesmus) एवं वेदना होने की आशंका अधिक रहती है। कभी कभी तो मल में खून भी आने लगता है। उक्त मरोड़ के दोष के निवारण के लिए इसको वातानुलोमन औषधि एवं एक्स्ट्रेक्ट वेलाडोना या हायोसायमस के साथ मिलाकर देना चाहिए। इसको प्रायः गोली के रूप में दिया जाता है। जीर्ण-मलविबन्ध (Chronic Constipation) एवं आदती मलविबन्ध या कब्ज (Habitual Constipaion) की अवस्थाओं में एलुआ एक अच्छी औषधि है। किन्तु मलाशय (Rectum) में रक्ताधिक्य (Congestion) करने के कारण निरन्तर अधिक काल तक इसके सेवन से अर्श (Piles) होने की आशंका होती है। एलोइन से अपेक्षाकृत मरोड़ कम होता है।

मुख द्वारा सेवन किये जाने पर एलुआ से कटिगत रक्तपरिभ्रमण (Pelvic circulation) पर उत्तेजक प्रभाव होने से गर्भाशय में रक्ताधिक्य (Congestion) होता है। दूसरे यह गर्भाशयिक आकुञ्चनगति (Uterine Contractions) को भी बढ़ाता है। उपर्युक्त प्रभावों के कारण यह आर्त्तवप्रवर्त्तक (इमेनेगॉग Emmenagogue) होता है, और गर्भवती स्त्रियों को दिये जाने पर गर्भशातक (Abortifacient) भी हो सकता है। एलुए में उपर्युक्त गुण-कर्म होने से अनार्तव (Amenorrhoea), विलम्बित मासिक धर्म (Delayed menstruation) या ऐसी अन्य विकृतियों में जिनमें आर्तव की कमी होती है यह एक उत्तम औषधि है। विशेषतया जब रोगी में उपर्युक्त व्याधि के साथ साथ कब्ज भी हो तो यह और भी उपयुक्त होती है, क्योंकि यह उक्त दोनों ही दोषों को दूर करता है। जब बालिकाओं में रक्ताल्पता (Anaemia) या हलीमक (Chlorosis) के कारण अनार्तव या कृच्छ्रार्तव का दोष होता है, तो एलुआ के लौहयुक्त योगों का सेवन कराना चाहिए जैसे पिल्युला एलोज एट फेराइ।

उत्सर्ग (Elimination)—एलुआगत इमोडिन (Emodin) नामक रेचक घटक का शरीर से निस्सरण स्त्रियों में प्रधानतः दुग्ध के साथ होता है। अतएव माता को दिये जाने पर स्तनन्धय शिशु (Suckling babies) को भी रेचन हो सकता है। दूध के अतिरिक्त मूत्र के साथ भी यह उत्सर्गित होता है।

प्रयोगसम्बन्धी सावधानी (Caution)—गर्भवती स्त्रियों को तथा प्रसूता स्त्रियों में उनके स्तन्य-पान काल (जब तक बच्चे को अपना दूध पिलाती हो) में एलुआ का सेवन निषिद्ध है। श्रोणिगत अङ्गों के रक्तस्रावी रोगों यथा अर्श या बवासीर (Haemorrhoids) तथा रक्तप्रदर (Menorrhagia) आदि में भी इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—पिल्युला एलोज Pilula Aloes (Pil. Aloes) । मात्रा—४ से ८ ग्रेन (२ से ४ रत्ती) या ०·२५ से ०.५ ग्राम ।

नॉन्-ऑफिशल योग ।

१—पिल्युला एलोज एट फेराइ Pilula Aloes et Ferri, I. P. L. (Pil. Aloes et. Ferr.) —ले०; पिल ऑव एलोज एण्ड आयरन Pill of Aloes and Iron—अं० । प्रत्येक ८ ग्रेन की गोली (Pill) में ४/६ ग्रेन आयरन सल्फेट (Iron Sulphate) या १/४ ग्रेन लौह (आयरन Iron) होता है । मात्रा—४ से ८ ग्रेन (२ से ४ रत्ती) ।

२—पिल्युला एलोज एट एसाफॅटिडी Pilula Aloes et Asafoetidae, I. P. L. (Pil. Aloes.et. Asafoet.—ले०; पिल ऑव एलोज एण्ड एसाफेटिडा Pill of Aloes and Asafetida)—अं० । मात्रा—४ से ८ ग्रेन ।

३—पिल्युला एलोज एट न्युकिस वॉमिकी Pilula Aloes et Nucis Vomicae (Pil. Aloes et. Nuc. Vom.)—ले०; एलोज़ एण्ड नक्स वॉमिका पिल्ज Aloes and Nux Vomica Pills —अं० । मात्रा—१ गोली । इसमें मुसब्बर (Aloes) का सूक्ष्मचूर्ण २१० ग्रेन, कुचिले का घन-सत्व (Dry extract of nux-vomica) २४ ग्रेन तथा वेलाडोना का घनसत्व (Dry extract of belladonna) १६ ग्रेन पड़ता है । अल्कोहल् (६०%) में मिलाकर लुग्दी (Pill-mass) बनायें और उसमें बराबर १०० गोलियाँ बना लें ।

४—टॅबेली एलोज एट न्युकिस वॉमिकी Tabellae Aloes et Nucis Vomicae. (Tab. Aloes et. Nux- vom.)—ले०; टॅबलेट्स ऑव एलोज एण्ड नक्स वॉमिका Tablets of Aloes and Nux Vomica—अं० । मात्रा—१ से २ टिकिया । निर्माण-विधि—मुसब्बर का सूक्ष्म चूर्ण २०० ग्रेन, कुचिले का घनसत्व (Dry extract of Nux Vomica) २५ ग्रेन तथा वेलाडोना का घनसत्व १६ १/२ ग्रेन । सबको परस्पर मिलाकर १०० टिकिया बनावें ।

५—टिंक्चुरा एलोज Tinctura Aloes (Tinct. Aloes)—ले०; टिंक्चर ऑव एलोज़ Tincture of Aloes—अं० । मात्रा—३० से १२० मिनम् (बूंद) ।

६—टिंक्चुरा एलोज कम्पोजिटी Tinctura Aloes Compositae (Tinct. Aloes Co.)—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव एलोज Compound Tincture of Aloes—अं० । इसमें एलोज (मुसब्बर) जॅन्शन, रुबर्ब (रेवन्द चीनी) तथा जिंजर (सोंठ) होता है । मात्रा—१ से २ फ्लुइड ड्राम ।

एलो (मुसब्बर) घटित नुस्खे:—

(१) फिनॉलफ्थेलीन	१ से २	ग्रेन
एलो (Aloe)	१ से २	ग्रेन
एक्ट्रॅक्टम् न्युकिस वॉमिकी Ext. Nuc. Vom.	१/४	ग्रेन
केप्सिकम्	१/२	ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् हायोसायमाई सिक० Ext. Hyoscy Sicc.	१	ग्रेन

सबको मिलाकर १ गोली बनावें । रात में सोते समय ऐसी १ गोली गरम जल से लेने से पाखाना साफ हो जाता है । लेकिन लगातार बहुत दिनों तक इसका सेवन नहीं करना चाहिए ।

(२) फेराईसल्फ० एक्सिकेट० Ferri Sulph. Exsicc.	१½	ग्रेन
एलो	१	ग्रेन
एक्स्ट्रैक्ट नक्स० वामिका	½	ग्रेन
एक्स्ट्रैक्ट हायोसायमस सिक०	½	ग्रेन
सेपो ड्युरस (हार्ड सोप)	½	ग्रेन

सिरप ग्लूकोज लिक्विड— आवश्यकतानुसार

सबको मिलाकर १ गोली बनावें। ऐसी १-१ गोली दिन में २-३ बार देने से रक्ताल्पता पीड़ित रजःकृच्छ्र के रोगियों को बहुत लाभ होता है।

आयुर्वेदीय योग—

(१) रजःप्रवर्तिनी वटी (भै० र०)— १ या २ गोली प्रातः सायं उलटकम्बल की जड़ के क्वाथ के साथ लेना चाहिए। रजोरोध एवं कष्टार्त्तव में उपयोगी है।

(२) कुमारिका वटी (भै० र०)—इसकी १-१ वटी प्रातः सायं जल से लेने से योनिशूल मक्कलशूल तथा अनेक योनि रोगों में लाभप्रद है।

(३) कुमार्यासव (भै० र०)—१-२ तो० समान जल के साथ भोजनोत्तर लेने से यकृन्मन्दताजन्य अग्निमांद्य, विवन्ध तथा अन्य उदर रोगों में लाभप्रद है। रोगोत्तर काल में दौर्बल्य निवारण के लिए तथा भूख बढ़ाने एवं पाचन में सहायता के लिए लवणभास्कर के साथ दिया जाता है। मलेरिया एवं कालज्वर से मुक्त होने पर रोगोत्तर काल में अमृतारिष्ट के साथ इसका सेवन बहुत उपयोगी होता है।

र्‌हियम् (Rheum) I. P., B. P.

र्‌हुबार्ब Rhubarb (रेवन्दचीनी)

Family : Polygonaceae (Buck-wheat Famly)

(पोलीगोनेसिई—चुक्रादि कुल)

नाम—रेवंदचीनी, रेवंचीनी—हिं०; पीतमूला, अम्लपर्णी—सं०; रयोंदचीनी—पं०; आर्चा—गढ़वाल; पम्बचालन—काश्मीर; रेवनचीनी—बं०, गु०; रेवतचीनी—मा०, ते०; लकड़ी रेवंचीनी—बम्बई; रावन्द—अ०; रेवन्द—फा०; र्‌हिआइ रॅडिक्स Rhei Radix, र्‌हाइज़ोमा र्‌हिआइ Rhizoma Rhei—ले०; र्‌हुबार्ब Rhubarb, र्‌हुबार्ब रुट Rhubarb Root, र्‌हुबार्ब र्‌हाइजोम (राइजोम) Rhubarb Rhizome, टर्की र्‌हुबार्ब Turkey Rhubarb—अं०; र्‌हीअम् (र्‌ह्यूम Rheum—B. P.)।

प्राप्ति-साधन—फॉर्माकोपिआ के अनुसार र्‌हुबार्ब (रुवर्ब), र्‌हीअम् ऑफिसिनेल (Rheum officinale, Baillon) या र्‌हीअम् पामेटम् (Rheum Palmatum, Linn) या इसकी अन्य प्रजातीय पौधों की जड़ तथा भौमिक काण्ड (राइजोम) होता है, जिसकी छाल उतारकर सुखा लेते हैं। इसके अन्य व्यावसायिक नाम शेन्सी रुवर्ब (Shensi rhubarb), केन्टन रुवर्ब (Canton rhubarb) तथा हाई-ड्राइड रुवर्ब (High-dried rhubarb) हैं। हिन्दी में इसे चीनी या रुमी रुवर्ब कहते हैं।

वक्तव्य—भारतवर्ष में कश्मीर, भूटान, नैपाल तथा सिक्कम के पहाड़ों में ७००० से १२००० फुटकी ऊँचाई पर र्‌हियम्‌ की अन्य अनेक प्रजातियाँ स्वयंजात रूप से पाई जाती हैं। इनकी जड़ तथा राइज़ोम भी भारतवर्ष में देशी चिकित्सकों द्वारा औषध्यर्थ व्यवहार में लाई जाती है। इसे **भारतीय रेवन्द** कहते हैं। भारतीय रेवन्द उक्त ऑफिशल रेवन्द की अपेक्षा हीन कोटि की होती है, अतः फॉर्माकोपिअल योगों में इसका व्यवहार नहीं किया जाता। भारतवर्ष में र्‌हियम्‌ की पाई जाने वाली प्रजातियों में २ मुख्य हैं—(१) **र्‌हियम्‌ इमोडी Rheum emodi, Wallich** तथा (२) **र्‌हियम्‌ वेबियानम्‌ Rheum webbianum Royle**। भारतीय रेवन्द इन्हीं की जड़ एवं राइजोम होती है।

भारतवर्ष में र्‌हियम्‌ की एक अन्य प्रजाति (उपजाति), जिसे लेटिन में **र्‌हियम्‌ नोबाइल Rheum nobile** कहते हैं, भी विशेष महत्त्व की है। इसकी टहनियाँ खट्टी होती हैं। बाजारू गुच्छाकार **अम्लवेतस** इसी की टहनियाँ हैं। अम्लवेतस आयुर्वेद की एक सन्दिग्ध औषधि है, जिसके नाम पर अनेक औषधियों का व्यवहार होता है। किन्तु अधिक प्रचार में उक्त प्रकार का ही अम्लवेतस है, यद्यपि वास्तविक अम्लवेतस इससे भिन्न है। रेवंदचीनी के रस को निकाल कर गाढ़ा कर लेते हैं। इसे **रेवंदचीनी का उसारा** कहते हैं। भारतीय चिकित्सकों द्वारा इसका व्यवहार औषधि में किया जाता है।

(श्री दलजीतसिंह—यूनानी द्रव्य गुण विज्ञान—पृ० ४४०)

उत्पत्ति-स्थान एवं संग्रह—चीन का पश्चिमोत्तर भाग तथा तिब्बत का दक्षिण पूर्व भाग। ६०००–१२००० फुट की ऊँचाई पर इसके स्वयंजात पौधे होते हैं और खेती (Cultivation) भी की जाती है। संग्रह के लिए ६ से १२ वर्ष के पुराने पौधों की जड़े एवं भौमिक काण्ड सितम्बर-अक्टूबर महीने में खोद लिए जाते हैं। पत्तियों एवं छिलके को उतारकर उनके टुकड़े कर सूखने के लिए रख दिये जाते हैं। बाजार में २ प्रकार के टुकड़े आते हैं, जिनको "फ्लैट्स Flats" तथा "राउन्डस Rounds" कहते हैं। जो टुकड़े लम्बाई के रुख (Sliced longitudinally) काटे हुए होते हैं, उनसे बाज़ारू "फ्लैट्स Flats" तथा जो आड़े काटे जाते हैं (Cut transversely) उनसे "राउन्ड्स Rounds" प्राप्त होते हैं। टुकड़े कर लेने के बाद इनको रस्सियों में गूथकर सूखने के लिए पेड़ों से लटका देते हैं।

वर्णन—र्‌हियम्‌ पामेटम्‌ के बहुवर्षायु शाकजातीय पौधे (Perennial herbaceous Plants) होते हैं, जिनमें मोटे एवं बड़े भौमिक काण्ड (Rhizome) होते हैं। पत्तियाँ बड़ी, प्रसरी एवं मूल से निकली (Radical leaves) होती हैं। वायव्य काण्ड ३ फुट से ६ फुट तक ऊँचा होता है। अप्रैल-मई में पुष्प लम्बी मञ्जरियों में आते हैं तथा फल एवं बीज अक्टूबर तक पक जाते हैं।

राइजोम—ऑफिशल रेवन्दचीनी का राइज़ोम आकार में अनुरम्भाकार (Subcylindrical), पीपेके आकार का (Barrel-Shaped) अथवा कोई-कोई शंक्वाकार (Conical) होता है। किसी-किसी टुकड़े का एक तल समतल तथा दूसरा उन्नत (Plano-Connex) होता है। ये टुकड़े ठोस (Compact) तथा दृढ़ (Firm) होते हैं। प्रायः प्रत्येक टुकड़े में एक आर-पार छिद्र पाया जाता है। लम्बाई में ये २ से ६ इञ्च तथा चौड़ाई में ३ से १० सेंटीमीटर (१ से ४ इञ्च) होते हैं। उक्त टुकड़े प्रायः भूरापन लिए चमकीले पीतवर्ण के रज (चूर्ण) द्वारा धूसरित होते हैं।

नामकरण तथा इतिहास—औषधि के प्रचलित नाम 'रेवन्दचीनी' से ही यह प्रगट है, कि इसका आदिम उत्पत्ति स्थान चीन है और चीन के ही नाम पर इसका रेवन्दचीनी नाम करण किया गया प्रतीत होता है। ऐतिहासिक खोजों द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि ईसा के २७०० वर्ष पूर्व की एक चीनी पुस्तक (Chinese herbal) में इसका उल्लेख मिलता है। मार्कोपोलो (Marco Polo) नामक वेनिस निवासी प्रसिद्ध यात्री ने (१२५०–१३२५) जो अपनी यात्राओं के सिलसिले में चीन भी गया था, उल्लेख किया है कि चीन में यह औषधि प्रचुरता से पाई जाती है। चीन से ही रेवन्दचीनी बुखारा को लाई जाती थी और वहाँ से यह कृष्णसागर (Black Sea) के मार्ग से यूरप पहुँचती थी। आयुर्वेद के प्राचीन संहिताओं एवं निघण्टुओं में इस औषधि का उल्लेख नहीं है। भारतीय चिकित्सकों को इस औषधीय प्रयोगों का ज्ञान सम्भवतः अरबी, फारसी एवं योरोपीय चिकित्सकों के द्वारा हुआ ऐसा ऐतिहासिक परम्परा से ज्ञात होता है।

'रूहियम्' शब्द व्युत्पन्न है लेटिन 'रूहा Rha' से जो योरोपीय रूस की ओल्गा (Volga) नदी का नाम है। इस नदी के किनारे-किनारे रूहियम् की एक उपजाति (प्रजाति) प्रचुरता से होती है, अतएव ऐसा नाम करण किया गया प्रतीत होता है। 'पामेटम्' (Palmatum) नामक प्रजातिक नामकरण उक्त वनस्पतिकी पत्तियों के आकार एवं स्वभाव के आधार पर किया गया है।

दीसकूरीदूस आदि यूनानी चिकित्सकों ने रिहा तथा 'रूहिओन' के नाम से 'रावन्द' का वर्णन किया है। मख्जनुल् अद्विया तथा मुहीत आज़म आदि फारसी निघण्टुओं में रिहा को 'राऽआ' तथा 'रूहिओन' को रायून लिखा है। रूहियम् या रूह्यम शब्द सम्भवतः उक्त रिहा से ही व्युत्पन्न है। प्राचीन इरानियों द्वारा वर्णित रेवास या रीवास सम्भवतः यही है। मख्जनुल् अद्विया के लेखक प्रसिद्ध हकीम मुहम्मदहुसेन ने 'रीवास' के वर्णन में, इसी की जड़ को 'रेवन्द' या 'रावन्द' लिखा है।

रेवंदचीनी का अंगरेजी नाम रूहुबार्ब या रूबर्ब शब्द व्युत्पन्न है 'रूहा बार्बेरम् Rha Barbarum' से जिसका धात्वर्थ है 'जंगली जड़ (रेशह् बर्बरी)'। चूंकि एशिया के जंगली लोग इस जड़का प्रयोग प्राचीन काल से करते आ रहे हैं, अतएव औषधि का नाम Rha Barbarum पड़ गया। अंगरेजी 'Rhubarb' इसी Rha Barbarum का अपभ्रंश रूप मालूम पड़ता है। फारसी शब्द 'रावन्द' का भी यही धात्वर्थ होता है। चूंकि इस औषधि को अरबी-फारसी में रावन्द या रेवन्द कहते हैं और यह चीन से उन देशों में पहुँचती थी, अतएव इसका नाम 'रेवन्द चीनी' पड़ गया।

रासायनिक-संघटन—रुबार्व में २ से ४½% एन्थ्राक्विनोन-व्युत्पन्न घटक (Enthraquinone derivatives) पाये जाते हैं। इसका रेचक प्रभाव इन्हीं के कारण होता है। (१) क्राइसारोबिन (Chrysarobin) या रूहिइन (Rhein) जौहर रेवन्द—यह सत्व इसका प्रधान उपादान है। इसकी रंगत और विरेचन कर्म इसी के आश्रयभूत है। (२) क्राइसोफेनिक एसिड (Chrysophanic acid or dioxymethylanthraquinone); (३) इमोडीन (Emodin or trioxymethylanthra quinone); (४) रहियो टैनिक-एसिड (Rheo-tannic acid) तथा (५) ऑक्जलेट ऑव लाइम, रह्यूमिक एसिड (Rheumic acid), रेज़िन एवं स्टार्च आदि निष्क्रिय घटक भी पाये जाते हैं।

रहियाइ पल्विस Rhei Pulvis (Rhei Pulv.)—लें०; पाउडर्ड रुबार्ब Powdered Rhubarb—अं; रेवन्दचीनी चूर्ण—सं०, हि० । यह नारंगपीत (Orange-Yellow) अथवा पीताभ-भूरे रंग का चूर्ण होता है। मात्रा—३ से १५ ग्रेन या १½ रत्ती से १ माशा ।

पर्य्याय—ग्रिगरीज पाउडर Gregory's Powder । मात्रा १० से ६० ग्रेन (५ रत्ती से ४ माशा या ०.६ से ४ ग्राम ।

१—टिंक्चुरा र्‌हियाइ कम्पोजिटा Tinctura Rhei Composita (Tinct. Rhei Co.)—लें०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव र्‌हुवर्ब Compound Tincture of Rhubarb—अं० । मात्रा—३० से ६० मिनिम् (बूंद) या २ से ४ मिलिलिटर ।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—पिल्यूला र्‌हयाइ कम्पोजिटा Pilula Rhei Composita (Pil. Rhei Co.)—लें०; पिल र्‌हुवर्ब कम्पाउण्ड Pill Rhubarb Compound—अं० । मात्रा—४ से ८ ग्रेन (०.२५ से ०.५ ग्राम) या २ से ४ रत्ती ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

आभ्यन्तर । महास्रोतस्—तिक्त (Bitter) होने के कारण अल्प मात्रा (२ से ५ ग्रेन) में रुबार्ब दीपन (Stomachic) प्रभाव करता है। अधिक मात्रा (२० से ३० ग्रेन) में यह आंत्रिक ग्रंथियों के स्राव को बढ़ाकर आंत्र की पुरस्सरण गति (peristaltic movement) को बढ़ाती है और ४८ घंटे में मृदुरेचक (Mild purgative) प्रभाव करती है, जिससे पतले एवं पीले रंग के दस्त आते हैं। मल का पीलापन सम्भवतः क्राइसेरोबिन एवं पित्त के कारण होता है। रेवन्दचीनी के रेचक प्रभाव में आंतों में ऐंठन (Griping) भी होती है। दूसरी विशेषता इसमें यह है कि जैसा कि रासायनिक संघटन को देखने से ज्ञात होगा कि रेवन्दचीनी में रेचक उपादानों के अतिरिक्त साथ ही साथ कब्जकारक या ग्राही (Astringent) घटक भी पाये जाते हैं। अतएव रेचक प्रभाव के बाद आनुषंगिक विबन्ध (After Constipation) की अवस्था दिखाई देती है। अतएव आदती कब्ज (Habitual Constipation) वाले रोगियों के लिए यह उपयुक्त नहीं होती।

दीपन-पाचन एवं मृदुसारक (Laxative) प्रभाव के लिए बच्चों में अजीर्ण जन्य अग्निमांद्य (Dyspepsia) में यह एक उत्तम औषधि है। इससे अजीर्ण आहार मल के साथ उत्सर्गित हो जाता है और बाद में आनुषंगिक कब्जकारक प्रभाव के कारण स्वयं दस्त आने बन्द हो जाते हैं। और इस प्रकार दोनों प्रकार अभीष्ट प्रभाव एक ही औषधि से सम्पन्न हो जाते हैं। बच्चों की अनेक पेट की खराबियों में ग्रिगरीज पाउडर एक उत्तम औषधि है। दस्त के समय आंतों में ऐंठन तथा बाद में आनुषिंक कब्ज करने के कारण रेचक प्रभाव के लिए अकेले इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। अतएव इसको अन्य रेचक औषधियों तथा बाइकार्बोनेट ऑव सोडा आदि के साथ मिलाकर व्यवहृत करते हैं। एतदर्थ पिल्यूला रिहाई कम्पोजिटा इसका एक उत्तम योग है। प्रथम रेचन तदनु मलविबन्ध इन दोनों कर्म के कारण अतिसार (Diarrhoea) या प्रवाहिका (Dysentery) के प्रारम्भ में ही यदि ग्रिगरीज पाउडर की एक पूर्ण मात्रा दे दी जाय तो व्याधि-शमन हो जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—पल्विस रूहियाइ कम्पोजिटस Pulvis Rhei Compositus (Pulv. Rhei. Co.)—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव रूहुबर्ब (Compound Powder of Rhubarb —अं० । (इसमें ६० ग्रेन चूर्ण में १५ ग्रेन रूहुवर्ब होता है)

रुबार्ब के अन्य उपयोगी योग—

(१) सोडावाई कार्ब०—१५ ग्रेन (१ माशा)

टिंक्चुरा रिहाई कम्पोजिटा (Tinct. Rhei. Co.)—२५ मिनम् (बूंद)

टिंक्चुरा जिंजिबेरिस मिटिस (Tinct. Zingib. Mit.)—२० मिनम् ,,

स्पिरिटस अमोनी एरोमेटिकस (Sp. Ammon. Aromat.)—१५ मिनम् ,,

एक्वा क्लोरोफार्म—इतना मिलायें कि सब दवा १ औंस हो जाय।

उपयोग—दीपन कर्म अर्थात् भूख बढाने एवं पाचन के लिए ऐसी १ मात्रा दवा, खाना खाने के आधा घंटा पहले लेनी चाहिए।

(२) हाइड्रार्जिरम् सबक्लोराइडम् २ ग्रेन (हाइड्रार्ज० सबक्लोर०)

पिल्यूला रूहियाइ कम्पोजिटा ३ ग्रेन (पिल० रूहियाइ को०)

सबको मिलाकर १ गोली बनावें। ऐसी १ गोली रात्रि में सोते समय पानी से लेना चाहिए।

(३) मैगनीसियाइ कार्बोनास पांडोरोसस (मैग० कार्ब० पॉड० Mag. Carb. Pond.) १५ ग्रेन

पल्विस रहियाइ कम्पोजिटस (पल्व० रूहियाइ को० Pulv. Rhei Co.) १० ग्रेन

स्प्रिटस अमोनी एरोमेटिकस (स्प्रिट० अमोन० एरोमेट०) १५ बूंद

ओलियम् एनिसाइ Ol. Anis. १ बूंद

परिस्रुत जल— १ औंस

सबको परस्पर मिलाकर मिक्सचर बनायें। इसको 'लाल मिश्रण या रेड मिक्सचर Red Mixture' भी कहते हैं। इसमें से तीन-तीन या चार-चार घंटे पर १—१ चम्मच दें।

(४) टिंक्चुरा रूहियाइ कम्पोजिटा Tinct. Rhei Co. २४ बूंद

एक्स्ट्रैक्टम् सेन्नी लिक्विडम् Ext. Senn. Liq. ४८ बूंद

एलिक्जिर कॅस्कारी सगरेडी Elix. Casc. Sagr. २४ बूंद

अन्जीर (Ficorum या Fig) १४० बूंद

सुक्रोजम् (सुक्रोज०) Sucrose २४० ग्रेन (४ ड्राम)

परिस्रुत जल— १ औंस

सबको मिलाकर रखलें। यह शर्बत जैसा पेय बनता है। इसको कम्पाउण्ड सिरप ऑव फिग्स (Compound Syrup of Figs) भी कहते हैं। इसमें से १ चम्मच (Tea-Spoonful) सोते समय पिला दें।

प्रयोग—उक्त दोनों योग छोटे वच्चों के लिए वहुत उपयुक्त होते हैं। इससे उनका पेट साफ हो जाता है और अजीर्णादि ठीक हो जाते हैं।

सेन्ना Senna (सनाय) I. P., B. P.

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल)

नाम—सनाय, सनायमकी, सोनामकी (मुखी)—हिं०; मार्कंडी, स्वर्णपत्री—सं०; सोनामूखी—वं०; सोनामुखी—म०; मींढीआवल, सोनामखी—गु०; सोनामक्की—कों०; समाऽ,सनाऽमक्की—अ०; (१) कॅसिया अंगस्टिफोलिआ Cassia angustifolia, Vahl. (२) कॅसिआ अक्यूटिफोलिआ Cassia acutifolia, Delile.—ले०।

वक्तव्य—रेचक औषधि के रूप में सनाय का सर्वप्रथम प्रयोग अरवी चिकित्सकों ने किया, और वाद में अरवों के द्वारा ही यह औषधि यूरप में पहुँची। इसका अरवी नाम भी न्यूनाधिक परिवर्तन से यूरोपीय भाषाओं में ले लिया गया। आयुर्वेद की प्राचीन संहिताओं में भी इसका उल्लेख नहीं मिलता वाद के निघण्टुकारों ने इसे ग्रहण कर लिया है।

ब्रिटिश फॉर्माकोपिआ में प्राप्ति-साधन रूप २ प्रजातिओं का निर्देश है—

(१) कॅसिया अंगस्टिफोलिया Cassia angustifolia, Vahl. तथा

(२) कॅसिया ॲक्यूटिफोलिआ Cassia acutifolia, Delile. प्रथम का व्यावसायिक नाम इन्डियन सेन्ना Indian Senna या टिन्नेवेली सेन्ना Tinnevelly Senna है तथा दूसरी प्रजाति का व्यावसायिक नाम अलिक्जेंड्रियन सेन्ना Alexandrian Senna है।

उत्पत्ति-स्थान—(१) अलिक्जेंड्रियन सेन्ना—मिस्र (Egypt), सूडान। पहले यहाँ की सनाय विदेशों को अलिकजेंड्रिया (Alexandria) के वन्दरगाह से भेजी जाती थी। इसीलिए इसका व्यावसायिक नाम अलिक्जेंड्रिया के नाम पर अलिकजेंड्रियन् सेन्ना पड़ गया था। सम्प्रति इसका निर्यात (Export) सूडान वन्दरगाह से होता है।

(२) टिन्नेवेली सेना—अफ्रीका, अरव, हजाज, सुमाली लैंड, भारतवर्ष के सिंध, पंजाव आदि प्रान्त तथा दक्षिण भारत। अरव तथा हजाज आदि में कॅसिआ अंगसस्टिफोलिआ के जंगली (स्वयंजात) पौधे पाये जाते हैं। और वहाँ पर सनाय का संग्रह भी इन्हीं जंगली पौधों से ही किया जाता है। भारतवर्ष में सिंध एवं पंजाव में भी कहीं-कहीं इसके स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं किंतु व्यावसायिक मात्रा में इनकी उपलब्धि नहीं होती। सम्प्रति दक्षिण भारतवर्ष के तिनेवाली (Tinnevelly), मदुरा तथा त्रिचनापली आदि इलाकों में इसकी वड़े परिमाण में खेती की जाती है। वक्तव्य—तिनेवली में होनेवाली सनाय अरव की अपेक्षा श्रेष्ठ होती है। यूनानी में हजाज में होने वाली सनाय श्रेष्ठ समझी जाती है। इसमें ७ वर्ष तक वीर्य रहता है। इसका व्यावसायिक नाम **सनाय मक्की** है। भारतीय वाजारों में यह इसी नाम से विकतीहै।

उपयुक्त अंग—(१) पत्रक (Leaflets) जिसे सनाय की पत्ती या केवल सनाय भी कहते हैं; (२) फली (Pods)।

वर्णन। पौधा—Cassia acutifolia के ३ फुट से ४॥-६ फुट ऊंचे गुल्म (Shrubs) होते हैं। पर्ण (Leaves) सपत्रक (Compound) होते हैं तथा एकान्तर क्रम (Alternate) से स्थित होते हैं। पत्रकों की स्थिति के अनुसार पत्तियाँ सम पक्षवत् सपत्रक (Paripinnate Compound) होती हैं। मिश्र, सूडान आदि में इसके स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं। नील नदी के समीपवर्ती प्रान्तों में इसकी खेती भी की जाती है।
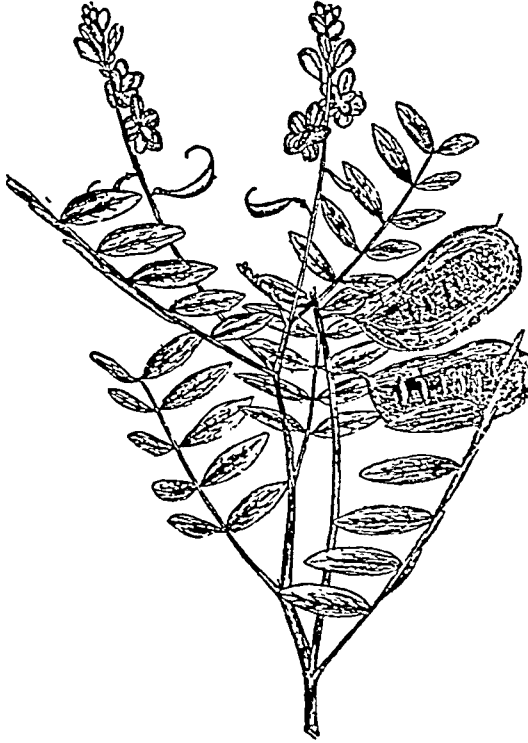
चित्र संख्या ८—सनाय के पौधे की फलीयुक्त शाख

Cassia angustifolia के गुल्म या गुल्मक (Under-Shrub) होते हैं। शाखायें ऊर्ध्वगामी तथा हल्के पीले रंग की होती हैं। पुष्प-व्यूह सवृन्त काण्डज (Receme) होता तथा पत्तियों के कोणों से निकलता है। कोण पुष्पक (Bracts) लट्वाकार कभी-कभी अभिलट्वाकार तथा कालिकायुष्क (Caducous) होते हैं।

संग्रह—मिस्री सनाय का संग्रह प्रायः स्वयंजात या जंगली पौधों (Wild plants) से किया जाता है। अब खारतूम (Khartoum) आदि प्रान्तों में इसकी खेती भी की जाती है। जब फलियाँ पूर्णतः लग जाती हैं, किन्तु कच्ची ही रहती हैं, तो पेड़ों की डालियाँ काट ली जाती हैं और उनको सुखाने के बाद उनको पीट कर पत्तियाँ एवं फलियाँ पृथक कर ली जाती हैं। भारतीय सनाय का संग्रह लगाये हुए पौधों से होता है। खेत में खड़े पौधों से ही मजदूरों द्वारा चाय की पत्ती की तरह पत्तियाँ तोड़वा ली जाती हैं।

सेन्नीफोलियम् (Sennae Folium) I. P., B. P.

(सनाय)

नाम—सेन्नी फोलियम् Sennae Folium (Senn. Fol)—ले०; सेन्नालीफ Senna Leaf—अं०; स्वर्णपत्री—सं०; सनाय–हि० ।

वर्णन—यह (१) कॉसिआ एक्यूटिफोलिआ Cassia acutifolia Delile (अलिक्जेंड्रिअन सेन्ना या मिस्री सनाय) अथवा कॅसिआ अंगस्टिफोलिआ Cassia angustifolia Vahl, (टिन्नेवेली सेन्ना या भारतीय सनाय) की सपत्रक-पत्तियों (Compound leaves) के पत्रक (Leaflets) होते हैं, जो शुष्क करके रखलिए जाते हैं ।

(१) मिस्री सनाय की पत्तियाँ प्रायः २ से ४ सेंटीमीटर लम्बी तथा ७–१२ मिलिमिटर चौड़ी होती हैं और शुष्क होने पर हल्के खाकस्तरी-हरित (Pale greyish-green) रङ्ग की तथा पतली एवं भंगुर (Brittle) होती हैं । रूप रेखा (Outline) में वह भालाकार से लेकर लट्व-भालाकार (Ovate-lanceolate) होती हैं । अधिकतम चौड़ाई मध्यभाग के नीचे होती है । पत्रतट (Margin) अखण्डित (Entire) तथा पत्राग्र (Apex) तीक्ष्ण एवं रोमश (Acute and Mucronate) होता है पत्राधार भाग (Base) में मध्यनाड़ी के दोनों पार्श्वों का भाग असमान (Unequal at the base) होता है, तथा नाड़ियाँ अधस्तल पर अधिक स्पष्ट होती हैं । पत्तियों के दोनों तल मृदु रोमश होते हैं । पत्र-वयन (Texture) कागज की तरह (Papery) । (२) भारतीय सनाय की पत्तियाँ साधारणतः बहुत-कुछ मिस्री सनाय से मिलती-जुलती होती हैं । इन दोनों में निम्न विभेदक लक्षण मिलते हैं ।

(१) रंग में पीताभ-हरित; (२) रूपरेखा में उनसे बड़ी (२.५ से ६ सेंटीमीटर लम्बी) तथा प्रायः भालाकार (Lanceolate) तथा मिस्री की अपेक्षा कम रोमश होती हैं; (३) पत्रवयन (Texture) में भारतीय सनाय मिस्री की अपेक्षा अधिक मजबूत होती है, अतएव कम टूटती है; (४) दोनों के गंध में भी अन्तर होता है ।

सनाय की पत्तियों में एक हल्कीगंध होती है, तथा स्वाद में विशिष्ट प्रकार की (Characteristic) लुआवी (Mucilaginous) एवं किंचित् तिक्त (Slightly bitter) ।

सेन्नी फोलियाइ पल्विस (Sennae Folii Pulvis) (Senn. Fol. Pulv.)-ले०; पाउडर्ड सेन्ना लीफ Powdered Senna Leaf अं०; सनाय का चूर्ण—हिं०; सफूफ सनाय-उर्दू । यह पीताभ-हरित अथवा हरित वर्ण (हरेरंग) का होता है ।

मात्रा—१० से ३० ग्रेन (०.६ से २ ग्राम) या ५ से १५ रत्ती ।

रासायनिकसंघटन—मिस्री तथा भारतीय सनाय दोनों का ही रासायनिक संघटन एक सा होता है । इस में (१) लगभग १.५ प्रतिशत एलो-इमोडिन (Aloe-emodin) तथा र्‌हीन (Rhein) नामक एन्थ्राकिनोन समुदाय के तत्व (Anthraquinone derivatives) पाये जाते हैं, जो स्वतंत्र रूप से अथवा ग्लाइकोसाइड के रूप में रहते हैं; (२) आइसो र्‌हेम्निटिन (Isorhamnetin) पीतवर्ण का रञ्जकतत्व होता है, जो स्वतंत्र रूप में तथा ग्लाइकोसाइड के रूप में होता है ।

इसके अतिरिक्त (३) कीमफेरिन (Kaempferin) तथा कीमफेरोल (KaemPferole) एवं म्युसिलेज, केल्सियम् ऑक्जलेट तथा रंजित आदि तत्व पाये जाते हैं। क्रिया की दृष्टि से सनाय का एलो-इमोडिन नामक घटक ही विशेष महत्व का है।

सेन्नी फ्रक्टस् Sennae Fructus (Senn. Fruct) ले०;
(सनाय की फली)

नाम—सेन्ना फ्रूट Senna Fruit, सेन्ना पॉड Senna Pod—अं०; सनाय की शिम्बी (सेम या फली)-हि०।

वर्णन—मिस्री सनाय की शिम्बी या फली (Alexandrian Senna Pod) रूप-रेखा में भारतीय की अपेक्षा कुछ अधिक चौड़ी एवं वृक्काकार-आयताकार (Reniform-oblong) तथा ४ से ५ सेंटीमीटर लम्बी एवं कम से कम २ सेंटीमीटर चौड़ी होती है। यह फलियाँ खाकस्तरी-हरित या हल्का भूरापन लिए हरित वर्ण की होती हैं। किन्तु बीजों के भाग में भूरे रंग की होती हैं। भारतीय सनाय की फली में उक्त क्षेत्र भूरे से लेकर काले रंग तक के होते हैं। दोनों किनारों से अनेक सूक्ष्म समानान्तर रेखायें मध्य रेखा की ओर आती दीखती हैं। मिस्री सनाय में फली की पृष्ठिक संधि रेखा (Dorsal Suture) स्पष्ट उन्नतोदर (Convex Curvature) तथा औदरिक संधि (Ventral Suture) नतोदर (Concave) होती है। भारतीय में दोनों सिरों को छोड़कर शेष भाग बिल्कुल सरल होता है। फलियों में प्रायः त्रिकोणाकार चपटे बीज होते हैं। रासायनिक संघटन पत्तियों की भाँति।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मात्रा के न्यूनाधिक्य से सनाय सारक (Laxative) तथा तीव्र विरेचक (Brisk purgative) दोनों ही प्रकार की क्रिया करती है। अन्त्र (विशेषतः बृहदन्त्र) के स्राव एवं पुरस्सरणगति में अधिकता होती है और पीले रंग के पतले दस्त आते हैं। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर आंतों में मरोड़ एवं हृल्लास उत्पन्न करने (Griping and Nau) sea) की प्रवृत्ति होती है। एतदर्थ डाक्टरी में ब्लैक ड्रॉफ (मिस्चुरा सेन्नी कम्पोजिटा) नामक सनाय का पेय यौगिक व्यवहृत किया जाता है और मरोड़ की प्रवृत्ति के निवारण के हेतु इसमें कतिपय बूंद टिंक्चर हायोसायमस के मिला देते हैं। सनाय की फलियां (Pods) में मरोड़ उत्पन्न करने की प्रवृत्ति नहीं होती। ब्लैक ड्रॉफ की अपेक्षा पल्व ग्लिसृरहाइजा कम्पोजिटस का प्रयोग अधिक सुकर होता है। अथवा सनाय की ६ से ८ फलियों को ठंढे पानी में १२ घंटे तक भिगो दें। तदनन्तर उनको मलकर छानलें और इस शीतफाण्ट का व्यवहृत करें। आदर्ती कब्ज (Habitual Constipation) तथा गर्भिणी के कब्ज में दस्त साफ लाने के लिए उपर्युक्त योग उपयोगी है।

उपयोगी नुस्खे—

(१) मैग० सल्फ०		५० ग्रेन
स्पिरिटस सिनेमोमाइ	Sp. Cinnam.	१० बूंद
सिरपस जिंजिबेरिस	Syr. Zingib.	६० बूंद (१ ड्राम)
इन्फ्युजम् सेन्नी	(Inf. Senn.)	१ औंस

ऐसी १–१ मात्रा २–२ घंटे पर दें।

(ऑफिशल योग)

१—पल्विसग्लिसर्‌हाइजी कम्पोजिटस Pulvis Glycyrrhizae Compositus (Pulv. geycyrrh. Co.) B. P. & I. P.—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव लिकरिस Compound Powder of Liquorice—अं०; मधुयष्ट्यादि चूर्ण—सं० । मात्रा—६० से १२० ग्रेन (४ से ८ ग्राम) या ३ से ६ माशा ।

२—एक्स्ट्रॅक्टम् सेन्नी लिक्विडम् Extractum Sennae Liquidum (Ext.Senn. Liq.) B. P. & I. P.—ले०; लिक्विड एक्सट्रॅक्ट ऑव सेन्ना Liquid Extract of Senna—अं०; सनाय का प्रवाही घनसत्व—सं०; हिं० । इसका उपयोग सिरपस सेन्नी (शर्वत सनाय) के निर्माण में किया जाता है । मात्रा—१० से ३० बूंद या मिनम् (०.६ से २ मि० लि०) ।

३—सिरपस सेन्नी Syrupus Sennae (Syr. Senn) B. P. & I. P.—ले०; सिरप ऑव सेन्ना Syrup of Senna—अं०; शर्वत सनाय—हिं० । मात्रा—३० से १२० बूंद या मिनम् (२ से ८ मि० लि०) या ½ से १ ड्राम ।

४—इन्फ्युजम् सेन्नी Infusum Sennae (Inf. Senn.) I. P.—ले०; इन्फ्युजन ऑव सेन्ना—अं०; सनाय का फाण्ट—हिं०; । इसका उपयोग मिस्चुरा सेन्नी कम्पोजिटा के निर्माण में किया जाता है । मात्रा—½ से १ (फ्लुइड) औंस ।

५—इन्फ्युजम् सेन्नी कन्सन्ट्रेटम् Infusum Sennae Concentratum (Inf. Senn. Conc.) I. P.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव सेन्ना—अं० । मात्रा—३० से १२० बूंद ।

६—मिस्चुरा सेन्नी कम्पोजिटा Mistura Senna Composita (Mist. Senn. Co.) I. P. ले०; कम्पाउन्ड मिक्सचर ऑव सेन्ना; ब्लैक ड्राफ Black Draught—अं० । मात्रा १ से २ औंस जब दस्त आने प्रारम्भ हो जाँय तो बन्द कर दें ।

(२) कन्फेक्शिओ सेन्नी	
कन्फेक्शिओ सल्फ्युरिस	प्रत्येक बराबर-बराबर
कन्फेक्शिओ पाइपरिस	

सबको मिलाकर रखलें । रात में सोते समय रोज १ चम्मच (tea-spoonful) अर्थात् २ ड्राम ले लें । बवासीर (अर्श) के रोगियों के लिए उत्तम विबन्धहर योग है ।

(४) सिरपस सेन्नी Syr. Senn.	१ ड्राम
सिरपस र्‌हियाई	,,
ग्लिसरिनी (ग्लिसरिन)	,,

सबको मिलाकर रखलें । बच्चों के मलविबन्ध निवारण के लिए रात में सोते समय १ या २ चम्मच (२ से ४ ड्राम) पिला दें ।

(५) टिंक्चुरा सेन्नी कम्पोजिटस	१५ बूंद
एक्स्ट्रॅक्टम् कस्केरी लिक्विड०	१५ बूंद
सोडियाई सल्फेटिस	१५ ग्रेन

इन्फ्युजम् ऑरन्शाइ को० इतना मिलायें कि सब ४ ड्राम (आधा औंस) हो जाय।

ऐसी १–१ मात्रा प्रातः-सायं लें। चिरकालानुवन्धि मलविवन्ध (Chronic Constipation) में वहुत उपयोगी है।

वक्तव्य—(१) पंचसकार चूर्ण (२) षट्सकार चूर्ण सनाय घटित रेचक चूर्ण हैं। मात्रा ३ से ६ माशा।

केसकारा (कॅसकरा) सेगरेडा (B. P.)

Family ; Rhamnaceāe (वदरादि-कुल)

नाम—कॅस्करा (कैस्केरा या केसकारा) सेग्रेडा Cascara Sagrada (Casc. Sagr.); र्ह्यानियाइ पुरशियानी कॉर्टेक्स Rhamni Purshiani Cortex; सैकरेड वार्क Sacred Bark; चित्तम वार्क Chittem Bark.

प्राप्ति-साधन—यह र्ह्यैमनस् पुर्शियानस् Rhamnus Purshianus DC. (कैलिफोर्निआ वकथॉर्न California buck thorn) नाम वृक्ष की सुखायी हुई छाल (Bark) होती है। संग्रह के पश्चात १ वर्ष पुराना हो जाने पर इसको उपयोग में लाना चाहिए।

वक्तव्य— 'केसकारा' शब्द व्युत्पन्न है स्पेनी भाषा के शब्द 'कश्कारह्' से जिसका अर्थ छाल (Bark) होता है। 'सेगरेडा' या 'सैकरेड' के अर्थ हैं 'पवित्र'। 'र्ह्यैमनस' शब्द 'वकथॉर्न Buck thorn' का प्राचीन पर्याय है। इस वनस्पति का विशिष्ट नाम 'पुर्शियाना' जर्मन वनस्पति विशेषज्ञ (Botanist) 'फ्रेड पुर्श Fred Pursh' के नाम पर रखा गया है। इसकी एक भारतीय जाति Rhamnus virgata Roxb. (थंथार) नाम से जो इसे ६ हजार के बीच जौनसार में तथा देहरादून के विदालनाला पर भी पाई जाती है इसके फल कटुवामक और रेचक होते हैं और प्लीहा-विकार में दिये जाते हैं। दक्षिण भारत में इसकी दूसरी जाति (R. wightii) होती है जिसकी रक्तत्वचा रक्त-रोहिण के नाम से विकती है।

चित्र संख्या ९—कस्कारा सेगरेडा की पत्ती एवं फलयुक्त शाख

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी अमरीका का कैलिफोर्निआ प्रान्त।

वर्णन। पौधा—इसके गुल्म-स्वभाव के (Shrub like in habit) लगभग ६–७ फुट ऊँचे छोटे-छोटे वृक्ष होते हैं, जिनके काण्ड-स्कन्ध (Trunk) का व्यास १२–१५ इंच तक होता है। वृक्ष-मूल से ही अनेक शाखायें पृथक होकर ऊपर को बढ़ती हैं। कैलिफोनिर्या में पहाड़ी ढालुओं

पर, जहां काफी नमी होती है, इसके स्वयंजात पौधे होते हैं। छाल का संग्रह आधे अप्रैल से अगस्त तक करते हैं और एतदर्थ ९–१५ वर्ष पुराने वृक्ष उपयुक्त होते हैं।

त्वक् (छाल)—कॅस्कॅरा की छाल कलम की तरह खोखले टुकड़ों (Single quills) अथवा चपटे या परिखोदर टुकड़ों (Channelled pieces) के रूप में प्राप्त होता है। ये टुकड़े प्रायः १० से २० सेंटीमीटर लम्बे, २ सेंटीमीटर चौड़े तथा १–४ मिलिमीटर मोटे होते हैं। वाह्य तल चिकना, कृष्णाभ गाढ़े भूरे रङ्ग का (Dark purplish-brown) होता, है जिस पर इतस्ततः अनुप्रस्थरूपेण स्थित श्वेतरंग की अनेक द्वितीय श्वसनरन्ध्रचिन्ह (Lenticels) दिखाई पड़ती हैं। अन्तस्तल साधारणतया पीले से लेकर पीताभ–भूरेरंग का होता है। लापरवाही से सुखाई हुई छालों में कभी-कभी यह काले रङ्ग का होता है। इस पर अनेक अनुलम्ब रेखायें दिखाई पड़ती (Longitudinally striated) हैं। छाल में एक हल्की किन्तु विशिष्ट गन्ध पाई जाती है और स्थायी उत्क्लेशकारक तिक्त (Nauseously bitter) स्वाद होता है। जिस कागज में छाल लपेट-कर रखी जाती है, उसका रङ्ग इसके प्रभाव से किंचित पीला हो जाता है।

रासायनिक संघटन—(१) इमोडीन (Emodin) (२) इसी से मिलता-जुलता एक दूसरा तत्व फ्रेंगुला-इमोडीन (Frangula-emodin) तथा (३) वसा (२%), ग्लूकोज, उत्पत् तैल आदि भी इसमें पाये जाते हैं।

केस्करी सेगरेडी पल्विस Cascarae Sagradae Pulvis (Casc. Sagr. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड केस्कारा सेगरेडा Powdered Cascara Sagrada—अं०; कस्कारा चूर्ण रंग में हल्के पीताभ–भूरे रङ्ग से लेकर जैतूनी-भूरे रंग (Olive-brown) का होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

तिक्त होने के कारण अल्प मात्रा में (लिक्विड एक्स्ट्रेक्ट की ५ से १० बूंद) देने से यह दीपन (Stomachic) प्रभाव करता है, तथा भूख को बढ़ाता तथा आहार-पाचन में सहायता करता है। अधिक मात्रा (½ से एक ड्राम) में यह सारक (Laxative) होता है। उक्त रेचन क्रिया वृहदंत्र पर कस्कारा के प्रभाव के कारण होती है। जिससे ८—१२ घंटे बाद पीले रंग का मल आता है। एन्थ्रासीन समुदाय की सबसे मृदुरेचन औषधि है। आदती कब्ज (Habitual Constipation) एवं स्त्रियों में तथा कोमल प्रकृति वालों के लिए यह एक उत्तम औषधि है। डाक्टरी में इसका व्यवहार इस रूप में प्रचुरता से किया जाता है। एतदर्थ प्रायः एलिक्जिर का व्यवहार किया जाता है। रात में सोते समय इसकी एक मात्रा ले ली जाती है, जिससे प्रातःकाल दस्त साफ आता है।

सेवन-विधि—शुष्कसत्व का व्यवहार प्रायः गुटिका के रूप में किया जाता है। इसके लिए इसको अकेले भी दे सकते हैं, अथवा अधिक अच्छा होता है, कि कुचिला एवं मुसब्बर के साथ योग बनाकर दें। लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट (प्रवाही घनसत्व), उत्क्लेशकारक होता है। अतएव इसको रुचिकारक एवं सुस्वाद बनाकर देना चाहिए। इसके लिए इसमें ग्लिसरिन, क्लोरोफॉर्म या अन्य उपयुक्त सौगन्धिक द्रव्य मिला सकते हैं।

(ऑफिशल-योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् कॅस्करी सगरेडी सिक्कम् Extractum Cascarāe Sagradāe Siccum (Ext. Cascar. Sagr. Sicc.), B. P.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव कस्करा सगरेडा (Extract of Cascara Sagrada), ड्राइ (Dry) एक्स्ट्रॅक्ट कस्करा सगरेडा—अं० । कस्करा घनसत्व—सं० । मात्रा—०·१२ से ०·५ ग्राम (२ से ८ ग्रेन) ।

२—टॅवलेट्स ऑव कस्करा सगरेडा Tablets of Cascara Sagrada, B. P.—ले० । मात्रा (ड्राइ एक्स्ट्रॅक्ट ऑव कस्कारा)—०·१२ से ०·५ ग्राम (२ से ८ ग्रेन) । यदि प्रति टॅवलेट में कस्कारा एक्स्ट्रॅक्ट की मात्रा का निर्देश न हो तो २ ग्रेन की टॅवलेट देनी चाहिए ।

३—एक्स्ट्रॅक्टम् कॅस्करी सगरेडी लिक्विडम् Extractum Cascarāe Sagradae Liquidum (Ext. Casc. Sagr. Liq.), B. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव कस्करा सगरेडा (Liquid Extract of Cascara Sagrada) । कस्करा सगरेडा फ्लुइड एक्स्ट्रॅक्ट—अं० । मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद) ।

४—एलिक्जिर कस्करी सगरेडी Elixir Cascarāe Sagradāe (Elix. Casc. Sagr), B. P. —ले०; एलिक्जर ऑव कस्करा सगराडा—अं० । मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद) ।

कस्काराघटित नुस्खेः—

(१) सोडा बाई कार्ब०	१० ग्रेन
टिंक्चुरा न्युकिस वॉमिकी	१० बूंद
एक्स्ट्रॅक्ट० कस्करी सगरेडी लिक्विडम्	२० बूंद
स्प्रिट० क्लोरोफॉर्म	१५ बूंद
इन्फ्युजम् जेन्शन को०	१ औंस.

भोजन के एक घंटा पूर्व ऐसी १ मात्रा दें । यह दीपन एवं मृदुसारक है ।

(२) एक्स्ट्रॅक्टम् कस्कारी	२ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् न्युकिस वॉमिकी	¼ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् बेलाडोनी	⅙ ग्रेन

सबको मिलाकर एक गोली बनावें । ऐसी १ गोली रातको सोते वक्त दें । चिरकालीन मलबिन्ध या कब्ज (Chronic Constipation) में उपयोगी है ।

(३) एलिक्जिर कस्कारा सेगरेडा की (१ से २ ड्राम की) एक मात्रा रात में सोते समय जलके साथ लेने से प्रातः १ पखाना साफ हो जाता है । स्त्रियों के लिए इसका उपयोग किया जाता है ।

फिनोलफ्थेलीनम् (I. P., B. P.)

(Phenolphthaleinum (Phenolphthal.)

रासायनिक सूत्र—$C_{20}H_{14}O_{4}$.

पर्याय—पर्जे (र्ग) न Purgen; एपेरिओन Aperion; लेक्जिओन (Lexion); डाईहाइड्रॉक्सी फ्थेलोफिनोन Dihydroxy-phthalo-phenone—रासायनिक ।

वर्णन—फिनोल को फ्थेलिक एसिड (Phthalic anhydride) एवं सल्फ्यूरिक एसिड के साथ गरम करने और उसे साफ करने से प्राप्त होता है। यह पीताभ-श्वेत या श्वेत वर्ण के मणिभीय (Crystalline) या विरूपिक (Amorphous) चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। जिसमें कोई विशिष्ट गन्ध या स्वाद नहीं पाया जाता। यह चूर्ण जल में तो प्रायः अविलेय किन्तु अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है। इसमें अल्कली हाइड्रॉक्साइड्स मिलाने से लाल रंगका विलयन प्राप्त होता है। किन्तु इस विलयन में डायल्यूट एसिड्स मिलने से विलयन पुनः रंगहीन हो जाता है। मात्रा—१ से ५ ग्रेन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

फिनोलफ्थेलीन एक संश्लिष्ट (Synthetic) रेचक औषधि है। इसका रेचक कर्म भी एन्थ्रासीन समुदाय की अन्य औषधियों की भाँति ही होता है। गंधहीन एवं स्वादहीन होने के कारण इसका सेवन अधिक सुविधाजनक होता है। जल में अविलेय होने के कारण इसका सेवन लिक्विडपाराफिन के साथ इमल्सन बनाकर अथवा गोली बनाकर किया जाता है। मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशय से ज्यों की त्यों यह औषधि अन्त में पहुंचकर पित्त (Bile) एवं वहाँ के क्षारीय द्रव के सम्बन्ध में आकर विलीन (Dissolved) होती है। विलीन होकर क्षुद्रान्त्र पर किंचित् क्षोभक प्रभाव (Mild irritation) भी करती है। किंतु प्रधानतर इसकी क्रिया अन्य एन्थ्रासीन रेचन औषधियों की भांति बृहदन्त्र पर होती है, जिससे ४–७ घंटे में दस्त होता है। एन्थ्रासीन समुदायकी अन्य औषधियों की अपेक्षा इसमें यह विशेषता है कि एक तो इसकी क्रिया उनकी अपेक्षा शीघ्र होती है, दूसरे रेचन के समय आंतों में मरोड़ नहीं होता।

इसके अधिकांश भाग का उत्सर्ग अपरिवर्तितरूप में ही मल के साथ हो जाता है। किन्तु कुछ अंश अन्त्रों से शोषित होकर रक्तप्रवाह में पहुँचने के पश्चात् मूत्र एवं पित्त के साथ उत्सर्गित होता है। इस प्रकार इसका कुछ अंश शरीर में ही रह जाता है और घूमफिरकर पित्त (Bile) के साथ पुनः आंतों में पहुँच जाता है। परिणामतः जब तक शरीर से इसका पूर्णतः उत्सर्ग नहीं हो जाता इसका रेचक प्रभाव बना रहता है। जल्दी-जल्दी अनेक बार सेवन करने से उपर्युक्त कारण से ही इसमें संचायी प्रभाव (Cumulative effect) होने की आशंका अधिक रहती है। यों तो यह एक उत्तम रेचक औषधि है; किन्तु अर्श के रोगियों में इसका सेवन निषिद्ध है। इन्जेक्शन द्वारा सेवन करने से भी इससे रेचक क्रिया होती है।

आयोडोफ्थेलीन (Iodophthalein) नामक इसके आयडीन-यौगिक का उपयोग पित्ताशय (Gall-bladder) के एक्सरे-चित्रण के लिए किया जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—टैबेली फिनोलफ्थेलिनाइ Tabellae Phenolphthaleini (Tab. Phenolphthal.) —ले०; टॅबलेट्स ऑव फिनोलफ्थेलीन Tablets of Phenolphthalein—अं०; फिनोलफ्थेलीन की टिकिया—हिं०। मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से ३०० मि० ग्रा०)। वक्तव्य—यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो २ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए। सेवन करते समय इन टिकियों को कूंचकर (चबाकर) तब निगलना चाहिए।

४—तीव्र-विरेचन द्रव्य (Drastic Purgatives[1])—

आइपोमिआ (सकमूनिया) I. P.

Family : Convolvulaceae (त्रिवृतादि-कुल)

पर्याय—आइपोमिई रेडिक्स Ipomoeae Radix, आइपोमिआ Ipomea—ले०; ऑरिज्वा जॅलप रूट Orizba Jalap Root, मेक्सिकन स्केमोनी रूट Mexican Scammony Root, स्केमोनी रूट Scammony Root, मेल जॅलप Male Jalap—अं०; सकमुनिया की जड़—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—यह आइपोमिआ ऑरिजावेंसिस Ipomoea Orizabensis (Pellet) Ledanois नामक प्रसिद्ध वेल की सुखाई हुई जड़ (Root) होती है। जिसमें कम से कम १२% राल (Resin) होती है।

वक्तव्य—'आइपोमिआ Ipomoea' शब्द यूनानी (Greek) से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है 'Worm-like (कृमि-सदृश)'। चूंकि उक्त वल्ली (Twinner) का काण्ड आश्रयभूत वृक्ष को टेढ़े-मेढ़े लपेट कर चढ़ती है, अतएव ऐसा नामकरण किया गया। उक्त लता का विशिष्ट नाम 'ऑरिज़ावेंसिस Orizabensis' मेक्सिको (Mexico) के 'आरिज्वा Orizba' नगर के नाम पर रखा गया है। उक्त स्थान के आस-पास के क्षेत्र में इसके स्वयंजात पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं और इसका संग्रह विशेषतः वहीं से किया जाता है। 'स्केमोनिया सक़मूनिया यूनानी एवं अरबी भाषा का शब्द है।

उत्पत्ति-स्थान—अमरीका का मेक्सिको प्रान्त।'

वर्णन—यह एक वल्लीस्वरूप का बहुवर्षायु क्षुप होती है, जिसमें बड़ी-बड़ी कन्दाकार जड़ें (Tuberous roots) होती हैं। यह कन्द २० इंच तक लम्बी होती है। इन्हीं जड़ों का व्यवहार औषधि में होता है। इनको खोदकर निकाल लेते तथा इनके अनुलम्ब अथवा गोल-गोल टुकड़े काटकर सुखा लेते हैं।

जड़—बाजार में इसके चपटे एवं गोल टुकड़े मिलते हैं, जो व्यास में २ से १२ सेंटीमीटर होते तथा इनकी मोटाई १ से ५½ सेंटीमीटर होती है। वाह्यतः हल्के भूरे से लेकर गाढ़े भूरे रंग के होते हैं तथा इस पर अनेक गहरी झुर्रियाँ (Deeply wrinkled) दिखाई देती हैं। तोड़ने पर चिमड़ा एवं तन्तुमय (Tough and fibrous) होता है। कटे हुए तल पर अनेक एककेन्द्रिक वृत्त (Concentric rings) दिखाई देते हैं, जिन पर तन्तुवाहिनी पूलों (Fibro-vascular bundles) के उत्सेध दिखाई देते हैं।

आइपोमिई पल्विस Ipomoeae Pulvis (Ipom. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड आइपोमिआ Powdered Ipomoea—अं०। यह हल्के खाकस्तरी से खाकस्तरी लिए भूरे (Greyish-brown) रंग का चूर्ण होता है।

---

१. आयुर्वेद में इसे भेदन (च.), विरेचन वा तीक्ष्ण विरेचन और यूनानी वैद्यक में "मुसहिल" कहते हैं वा "मुसहिल वित्तहलील"।

आइपोमिई रेजिना Ipomoeae Resina I. P.

नाम—सकमुनिया—हिं,० म०, सिं०, पं०, भारतीय बाजार; सकमूनिया, महमूदा—अ०, फा०; मामूदा—ते०, ता०; आइपोमिई रेजिना Ipomoeae Resina (Ipom. Res.) —ले०; स्केमोनी रेजिन Scammony Resin, आइपोमिआ रेज़िन Ipomoea Resin, स्केमोनी Scammony वर्जिन स्केमोनी Virgin Scammony—अं०।

सकमुनिया एक गोंदीय-राल (Gum-Resin) होता है जो पहले एक त्रिवृत् जातीय वल्ली, जिसको लेटिन में कन्वालव्युलस स्केमोनियम् Convolvulus scammonium, Linn. कहते हैं, की जड़ पर चीरा लगाने से प्राप्त किया जाता था।

चित्र १०—कन्वालव्युलस स्केमोनियम् (Convolvulus scammonium, Linn.) की शाखा।

वर्णन—यह एक त्रिवृत्-जातीय बेलदार वनस्पति होती है, जिसकी शुष्क की हुई जड़ एवं जड़ या मूल से प्राप्त निर्यास (रालदार गोंद) औषध्यर्थ प्रयुक्त होते हैं। जड़—यह मोटाई में १ से २ इंच तक और आकार में लम्बी तथा गोल होती है। ऊपरी सिरा निचले की अपेक्षा कुछ अधिक मोटा होता है, और उस पर पतली शाखें या उनके चिन्ह होते हैं। बाह्यतः यह गाढ़े भूरे रंग की एवं झुर्रीदार (Wrinkled) किन्तु आभ्यन्तर में खाकस्तरी रंग की अथवा हल्के भूरे रंग की होती है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती तथा स्वाद

में पहले तो किंचिन्मधुर किन्तु बाद में तीक्ष्ण (Acrid)। राल या गोंद (Resin)—यह उक्त वनस्पति की जड़ पर चीरा देने से स्रावित होकर जम जाता है; अथवा बड़े-बड़े औषधि-निर्माण शालाओं में इसकी जड़ को लेकर पहले ९०% अल्कोहल में टिंक्चर बनाकर, उक्त टिंक्चर में पुनः जल मिलाकर गोंद को पृथक कर लेते हैं। बाहर से इसका रंग खाकस्तरी या कालाई लिए भूरा होता है। यह सरलता से टूट जाता (Resinous fracture) है, और टूटी हुई सतह अर्धस्वच्छ (Translucent), सुषिर एवं चमकदार होती है। इसमें विशिष्ट प्रकार की गंध होती है। जल के साथ इसको मिलाने से इमल्सन नहीं बनता और यह अल्कोहल् एवं सॉलवेंट ईथर में विलेय होता है। मात्रा—½ से ३ ग्रेन या ३० से २०० मिलिग्राम।

उत्पत्ति-स्थान—सयाम (Syria), एशियामाइनर तथा यूनान आदि भूमध्य-सागरीय प्रान्त।

वक्तव्य—यूनान एवं अरब के चिकित्सकों को सकमुनिया के रेचक-गुण का ज्ञान बहुत प्राचीन काल से था। बुकरात एवं जालीनूस आदि यूनानी विद्वानों ने भी इसका उल्लेख किया है।

सन् १६१४ की फॉर्माकोपिआ ने Scammony Resin की प्राप्ति की दृष्टि से उक्त पौधे (Convolvulus scammonia) के पर्य्याय रूप में पूर्ववर्णित Ipomoea Root को मान लिया है। यद्यपि भौतिक एवं रासायनिक दृष्टि से किंचित् अन्तर होने पर भी क्रिया की दृष्टि से दोनों बिल्कुल समान हैं। विशुद्ध स्केमोनी रूट की उपलब्धि न होने से अथवा उसमे मिलावट बहुत होने से औषधि निर्माताओं ने उसका परित्याग कर अब आइपोमिआरेजिन का ही निर्माण करना प्रारम्भ कर दिया है। इन सब कारणों से फॉर्माकोपिया ने भी Ipomea Resin को Scammony Resin का पर्य्याय मान लिया है।

गुण-कर्म एवं प्रयोग।

सकमुनिया एक तीव्र जलविरेचन (Smart Hydragogue purgative) है। किन्तु इसकी क्रिया उस समय होती है, जब यह ग्रहणी (Duodenum) में पहुंचकर पित्त से मिल जाता है। यह प्रभाव सम्भवतः पित्तगत टारोकोलेट एवं ग्लाइकोकोलेट ऑव सोडा (Taurocholate and Glycocholate) की सहायता से होता है। इसके बाद पानी की तरह पतले दस्त आने लगते हैं। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर यह आमाशयान्त्र में प्रदाह (Gastro-enteritis) उत्पन्न करता है। एक्स्ट्रैक्ट कोलोसिन्थ को० (Ext. Colocynth. Co.) एवं पिल्यूला कोलोसिन्थ एट हायोसायमाई (Pil. Colocynth. et Hyoscy.) में सकमुनिया भी एक उपादान है। सकमूनिया के सेवन से अन्त्र और आमाशय में खराश होता तथा मिचली होने लगती है। अतएव इसको अन्य रेचक औषधियों के साथ अथवा यदि अकेले इसका प्रयोग करना हो तो गुलकन्द में मिलाकर करना चहिए। एतदर्थ सकमुनियादिचूर्ण[1] (Compound powder of Scammony) एक उत्तम योग है। जिन लोगों को अन्य वैद्यकीय रेचन चूर्णों की मात्रा अधिक होने से उनको फांकने में आपत्ति हो या नाजुक तबिअत के रोगियों के लिए सकमुनिया (Scammony resin) एक परमोपयुक्त रेचन औषधि है। एक तो इसकी मात्रा अत्यल्प है, दूसरे गुलकन्द के साथ देने से स्वाद भी रुचिकर हो जाता तथा मितली, मरोड़ आदि तज्जन्य उपद्रवों का भी निवारण हो जाता है।

(१) पल्विस स्कैमोनियाइ कम्पोजिटा Pulvis Scammoni Composita—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव स्कैमोनी Compound Powder of Scammony—अं०; सकमुनियादि चूर्ण—हिं०। योगविधि—सकमुनिया निर्यासका चूर्ण १० तोला, जलापामूल-चूर्ण ७ तोला, सोंठ का चूर्ण ७½ तो सब को परस्पर मिलायें। मात्रा ४ रत्ती से १ माशा।

जलीय विरेचन होने के कारण इसका प्रयोग उग्र मलविबन्ध (Acute Constipation) में तथा आँत में सुद्दे पड़ जाने पर उनको निकालने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त जब शरीर से द्रवापहरण करना अभीष्ट हो तो भी इसका प्रयोग उपयोगी होता है। इसके द्वारा जलीय विरेचन होने से शरीर से द्रवापहरण हो जाता है। इसी युक्ति के आधार पर मस्तिष्कांतर्गत रक्तस्राव (Apoplexy) मस्तिष्कांतर्गत रक्तसंचय (Cerebral Congestion) तथा जलोदर (Ascites) आदि रोगों में सकमुनिया द्वारा रेचन कराने से लाभ होता है। उदरकृमियों पर भी सकमुनिया कुछ घातक प्रभाव करता है। किन्तु अन्य विशिष्ट एवं विश्वसनीय कृमिघ्न प्रभाव करने वाली औषधियाँ उपलब्ध हैं, अतएव कृमिघ्न प्रभावके लिए तो इसका प्रयोग विशेष उपयोगी नहीं है, किन्तु कृमिघ्न औषधियों के सेवनोंपरान्त कृमियों के निर्हरण के लिए सकमुनिया का प्रयोग बहुत उपयोगी है। (विशेष विवरण के लिए देखें यूनानी द्रव्यगुणविज्ञान-उत्तरार्ध पृ० ४७३–७४)।

(नॉट-ऑफिशल)

जलप (Jalapa) (जलापा), B. P. C.

Family : Convolvulaceae (त्रिवृतादि-कुल)

इसकी लता को लेटिन में आइपोमिआ कॉन्वॉल्व्युलस पर्गा (–र्जा) Ipomoea Convolvulus purga Hayne. कहते हैं। जलापा उक्त निशोथ जातीय विदेशी वनस्पति की ग्रंथिल जड़ (Tuberous root) होती है, जो औषधि में रेचनार्थ प्रयुक्त होती है।

नाम—जलापा (–पा), चलापा–हिं०; जलब, जल्लाबा–अ०, फा०; जलापा Jalapa–ले०; जेलाप Jalapa, जेलप Jalup—अं०।

उत्पत्ति स्थान—उत्तरी अमरीका का जलापा नामक प्रदेश।

चित्र ११। जलापा की जड़ (व्यावसायिक जलापा)

वक्तव्य—उत्तरी अमरीका के मेक्सिको (Mexico) प्रान्त में जलापा एक स्थल विशेष का नाम है। यहाँ पर यह औषधि पुष्कल मात्रा में उत्पन्न होती है। अतएव इसी आधार पर इसका इस प्रकार नामकरण किया गया प्रतीत होता है। मेक्सिको प्रदेश के निवासी तो इस औषधि के रेचक गुण से अति प्राचीन काल से परिचित हैं; किन्तु यूरोप में वनस्पति के स्वरूप का निर्णय एवं गुण ज्ञान का परिचय अट्ठारहवीं—उन्नीसवीं शताब्दी में हुआ है। इसके पूर्व लोग इसको प्रमादवश काली रेवन्दचीनी समझते थे।

वर्णन—जलापा की जड़ें, बेडौल अण्डाकृति (Oblong), तर्क्वाकार (Fusiform) अथवा शलगमाकार (Napiform) सामान्यतः १ से ३ इंच लम्बी और कभी-कभी ६ इंच तक लम्बी एवं कड़ी, ठोस और भारी होती हैं। बड़ी जड़ के दो-दो चार-चार टुकड़े कटे हुए होते हैं। यह बाहर से रेखांकित (Furrowed), झुर्रीदार (Wrinkled) तथा स्थान-स्थान पर छोटे-छोटे दागों से युक्त और रंग में कृष्णाभ-भूरे रंग की होती हैं। भीतर से पिलाई लिए मटमैली होती हैं। इसको आड़ेबल काटने से भीतर अनियमित, काली एककेन्द्रिक रेखायें (Concentric lines) दिखाई पड़ती हैं। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती तथा स्वाद में पहले किंचिन्मधुर तदनु तीक्ष्ण एवं अरुचिकारक। मात्रा—४ रत्ती से १॥ माशा तक।

वक्तव्य—उक्त विशिष्ट रचनाओं के आधार पर जलापा मूल को पहचानने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। इसके चूर्ण को भी आसानी से पहचाना जा सकता है। इसमें धुँए की-सी गंध आती है।

रासायनिक संघटन—इसमें प्रधान घटक (१) एकराल जलापा रेजिना (Jalapoe resina) होती है जो ९ से १८% की मात्रा में पायी जाती है; (२) जलापिन (Jalapin) या कन्वॉल्वयुलिन Convolvulin अथवा जलापर्जिन (Jalapurgin) जो १०% की मात्रा में होता है। यह साल्वेंट ईथर में अविलेय होता है। जलापा रेजिन बहुत-कुछ सकमुनिया रेजिन से मिलता-जुलता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

जलापा की क्रिया बहुत-कुछ सकमुनिया की ही भाँति होती है, किन्तु इसमें निम्न विशेषतायें होती हैं:—

(१) इसमें सकमुनिया की अपेक्षा क्षोभक (Irritant) प्रभाव कम होता तथा मरोड़ (Griping) भी कम होते हैं; (२) आंत्र की श्लैष्मिक कला की ग्रंथियों पर अधिक उत्तेजक प्रभाव होने से इसमें **जलीय विरेचक प्रभाव** सकमुनिया की अपेक्षा प्रबलतर होता है। जलापा की क्रिया भी आन्त्र के क्षारीय रस एवं पित्त से मिलने के बाद ही होती है। इससे इसका रेचक तत्त्व अर्थात् रेजिन घुलकर रेचक प्रभाव करता है। यह **साधारण पित्त विरेचक (Cholagogue)** प्रभाव भी करता है। अल्प मात्रा में प्रयुक्त करने से तो यह **सारक (Laxative)** प्रभाव करता है, किन्तु अधिक मात्रा में सेवन करने से तीव्र विरेचक प्रभाव होता है और पानी की तरह पतले दस्त आते हैं।

जलीय विरेचक होने से इसका प्रयोग शरीर की शोफयुक्त विकृतियों में शरीर से जलका अपकर्षण करने के लिए किया जाता है। एतदर्थ अकेले जलापा चूर्ण को अथवा पल्व जेलप को० का व्यवहार किया जाता है। इस प्रकार आंगिक शोफ (Dropsy), **जलोदर (Ascites)** अथवा **सर्वाङ्गशोफ (Anasarca)** में रेचनार्थ इसे देना चाहिए। इसके अतिरिक्त **उग्रमल विवन्ध (ObstinateConstipation)** तथा मस्तिष्कगत रक्तस्राव एवं रक्ताधिक्य की अवस्थाओं में **मस्तिष्कांतर्गत भार को कम** करने के लिए भी इसका प्रयोग कर सकते हैं। वृक्कशोफ (Bright's disease) एवं मूत्रविषमयता

(Uraemia) में भी जलापा का प्रयोग रेचनार्थ किया जाता है। आमाशयान्त्र में प्रदाह की अवस्था में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

(विशेष विवरण के लिए देखें यूनानी द्रव्य गुणविज्ञान उत्तरार्ध पृ० २३३)

(नॉन् ऑफिशल योग)

१—जलापा पल्वरेटा Jalapa Pulverata—ले०; जेलप पाउडर Jalap Powder—अं०; जलापा चूर्ण-हिं०। यह जलापा का सूक्ष्म चूर्ण होता है, जिसमें आवश्यकतानुसार लेक्टोज भी मिलाया जाता है। इसमें कम से कम १०% रेजिन होनी चाहिए। मात्रा—५ ग्रेन से २० ग्रेन।

२—पल्विस जलापी कम्पोजिटस् Pulvis Jalapae Compositus—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव जॅलप Compound Powder of Jalap—अं०; जलापादि चूर्ण-हिं०;। योगविधि—जलापा चूर्ण ५ औंस, एसिड पोटासियम् टारट्रेट ९ औंस, सोंठ (Ginger) आवश्यकतानुसार। इसमें जलापा ३०% होता है। मात्रा—१० से ६० ग्रेन (४ रत्ती से ३॥ माशा)।

जलापा रेजिना Jalapa Resina—ले०; जॅलप रेजिन Jalap Resin अं०; जलापा का गोंद या रेजिन—हिं०। इसके काले रङ्ग के टुकड़े होते हैं, जो आसानी से टूटते तथा चूर्ण हो जाते हैं। मुसब्बर (Aloes) का रंग-रूप इससे मिलता है, किन्तु स्वाद से दोनों पहचाने जा सकते हैं। मात्रा—२ से ५ ग्रेन।

कालादाना Kaladana, I. P. & I. P. L. (कृष्णबीज)

Family: Convolvulaceae (त्रिवृतादि-कुल)

नाम—श्यामबीज, कृष्णबीज—सं०; कालादाना—हिं०, बं०; कालादाना, कालोकुंपो—गु०; हब्बुन्नील, कुर्तुम हिंदी, दम्अतुल ऊशशाक़—अ०; तुख्मे नील, तुख्मे कब्क़—फा०; कालादाना Kaladana, इन्डियन जेलप Indian Jalap, मॉर्निंग ग्लोरी Morning Glory—अं०; फार्बिटिस् निल Pharbitis nil, आइपोमिआ हेडरेसिआ Ipomoea hederacea, Jacq.—ले०।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष।

वक्तव्य—इसके बीज काले रंग के होते हैं, अतएव इसको 'कृष्णबीज' या 'कालादाना' कहने लगे। इसका उक्त 'कालादाना' हिन्दी नाम इसी रूप में अंगरेजी में ले लिया गया है, जिससे अंगरेजी में भी यह कालाडाना नाम से ही प्रसिद्ध है। आयुर्वेद की प्राचीन संहिताओं एवं निघण्टु ग्रंथों में कालादाना का उल्लेख नहीं मिलता, किन्तु पुराने यूनानी चिकित्सकों ने हब्बुनील नाम से इसका वर्णन किया है, और इसके रेचक गुण से परिचित थे। 'मख़्ज़नुल् अद्विया' एवं 'मुहीत आज़म' में हब्बुन्नील (अर्थात् कालादाना) के बयान में 'अपराजिता' को इसका एक भेद माना है, जो प्रमादवश ही हुआ प्रतीत होता है। अपराजिता के बीज भी रंग में काले होते हैं और इनमें रेचकगुण भी पाया जाता है। किन्तु आकारतः दोनों बीज भिन्न होते हैं। यह त्रुटि सम्भवतः इसी भ्रम से हुई प्रतीत होती है। 'बुस्तानुल् मुफ़्रेदात्' में कालादाना का उल्लेख 'हरमल' के पर्याय के लिए भी किया है। किन्तु यह तीनों द्रव्य सर्वथा एक-दूसरे से पृथक्-पृथक् हैं।

वर्णन—कालादाना की एकवार्षिक लता होती है, जिसके काण्ड पर इतस्ततः मृदु बाल होते हैं। इसकी पत्तियाँ व्यास में २ से ५ इंच, आकार में लट्वु-हृदयाकार (Ovate-cordate) तथा प्रत्येक पत्ती ३–३ खंडों (3-lobed) से युक्त होती है। ये खण्ड भी आकार में लट्वाकार (Ovate) होते तथा इनका अग्र पतला एवं लम्बा होता है। पर्ण-वृन्त १ से ४ इंच लम्बे होते हैं। इसमें गुलाबी लिए नीले रङ्ग के फूल आते हैं, जिनका आधार नलिकाकार होता है और अग्र फनेल के आकार का होता है। इसके फल (Capsules) लगभग १ सेंटीमीटर व्यास के और ३ खानों वाले होते हैं, जिनमें ४–६ तक काले रंग के तिकोने बीज निकलते हैं। इनको तोड़ने पर भीतर से सफेद मग्ज निकलता है। इनका स्वाद कड़ुआहट लिए मीठा और तीक्ष्ण होता है।

प्रयुक्तअंग—बीज। मात्रा १॥ से ३ माशा।

कालाडानी रेजिना Kaladanae Resina या फार्बिट्सिन Pharbitsin—यह कालादाना से प्राप्त रेजिन्स का मिश्रण होता है, जो भूरे रंग के अपारदर्शी टुकड़ों (Fragments) के रूप में प्राप्त होता है। ये टुकड़े किनारों पर पारभासी (Translucent) तथा भंगुर (Brittle) होते हैं। इसमें एक प्रकार की अरुचिकारक गंध होती है।

कालादाना (कृष्णबीज) के
गुण-कर्म तथा प्रयोग।

कालादाना एक तीव्र, सस्ता एवं विश्वसनीय जलीय-विरेचन (Hydragogue purgative) है। इसके गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग बहुत कुछ जलापाचूर्ण की ही भांति हैं। अतः जुलाब के लिए 'कृष्णबीजादि चूर्ण' का प्रयोग बहुत किया जाता है। कृष्णबीजादि चूर्ण बनाने के लिए कालादाना के बीजों को साफ करके तवे पर जरा सा घी देकर भुन लेते हैं। तदनु उसका कपड़छन चूर्ण बना लिया जाता है। दस्तों के साथ मरोड़ के निवारण के लिए कालादाना में उसका षोडशांश ($\frac{1}{16}$) शुण्ठी चूर्ण मिला दिया जाता है। उक्त चूर्ण के स्थान पर 'पल्विस कालादानी कम्पोजिटस' का भी प्रयोग किया जा सकता है। जिन व्याधियों में (यथा जलोदर Ascites आदि) तीव्र विरेचन के साथ शरीर से द्रवापहरण करना अभीष्ट हो तो कालादाना एक उत्तम रेचक है।

(ऑफिशल योग)

१—पल्विस कालादानी कम्पोजिटस Pulvis Kaladanae Compositus, I. P. L.—लें०; कम्पाउण्ड कालादाना पाउडर Compound Kaladana Powder—अं०। इसमें कालादाना ७ भाग, एसिड पोटासियम् टारट्रेट ७ भाग तथा सोंठ १ भाग होता है। मात्रा—६० से ९० ग्रेन।

कोलोसिन्थिस् (इन्द्रायन) I. P.
Colocynthis (Colocynth.)
Family: Cucurbitaceae (कूष्माण्डादि-कुल)

पर्याय—कोलोसिन्थिडिस पल्पा Colocynthidis Pulpa लें०; कोलोसिन्थ पल्प Colocynth Pulp, कोलोसिन्थ Colocynth—अं०; इंद्रायन हिं०।

प्राप्ति-साधन—यह इन्द्रायन (Citrullus colocynthis, Schrad.) नामक लता के फल का शुष्क किया हुआ गूदा (Pulp) होता है।

नाम—वनस्पति। इन्द्रायन, इनारुन, फरफेंदू—हिं०; इन्द्रवारुणी गवाक्षी, गोडुम्बा, विशाला—सं०; राखालशशा—बं०; इन्द्रावण—म०; इन्द्रावणा, इन्दरवारणा—गु०; ढ्रूह—सिन्ध; तूसणवेल, तूस, तूसतूम्बा-गडतूम्बा—मा०; पापरखुडम्—ते०; पेतिकारि—ता०; हं (हिं)ज़ल, अल्क़म—अ०; खर्पुज़ेतल्ख़ (रोबाह), हिंदवाने अबुजहल (-तल्ख), कबिस्त—फा०; कोलोकिन्थिस KoloKynthis—यू०; साइट्रयुलस् कोलोसिन्थिस् Citrullus colocynthis, Schrad.—ले०. बिटर एप्ल (Bitter Apple), बिटर गोर्ड Bitter Gourd, कोलोसिन्थ (Colocynth)—अं०।
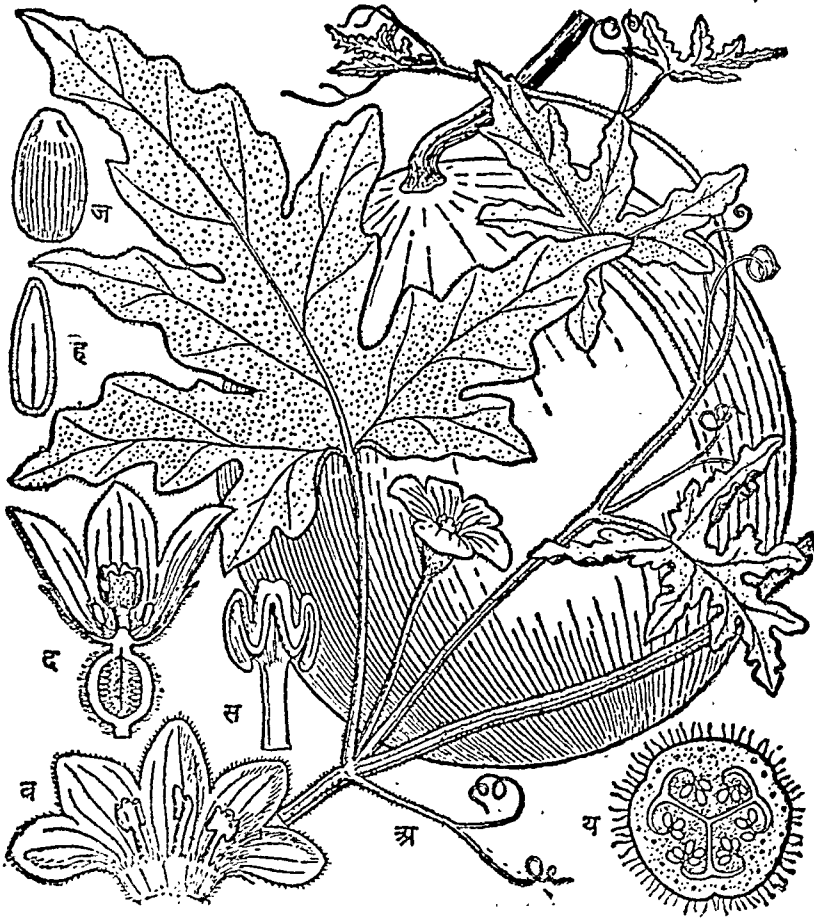
चित्र १२। इन्द्रायण (Citrullus colocynthis) अ—काण्ड (Stem) का भाग, जिससे एक पत्ती, पार्श्वशाखा एवं नरपुष्प निकले हुए हैं। ब—नरपुष्प विच्छेद (Male-flower-cut open) स—पुंकेशर युग्म (One pair of stamens); द—नारी पुष्प का अनुलम्ब (Vertical) विच्छेद; य—गर्भाशय (Ovary) का अनुप्रस्थ विच्छेद; फ—फल, ज—बीज, ह—बीज का अनुलम्ब विच्छेद।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष, इरान, अरब, श्याम, यूनान के कतिपय द्वीप, उत्तरी अफरीका, भूमध्यसागर-तट, स्पेन, पुर्तगाल और जापान आदि स्थानों में इसकी बेल जंगली उपजती है। स्थान-स्थान पर औषध्यर्थ इसकी खेती भी की जाती है। इसकी लतायें नदियों के किनारे रेतीली भूमि में अधिक होती हैं।

वक्तव्य—आयुर्वेद तथा यूनानी चिकित्सा में इस औषधि का व्यवहार प्राचीन काल से होता आ रहा है। चरक, सुश्रुत आदि आयुर्वेद की प्रमाणभूत प्राचीन संहिताओं में भी इसका उल्लेख है। आयुर्वेद के निघण्टुओं में इसका वर्णन है। डाक्टरी में तो केवल इसके गूदे (Pulp) का ही प्रयोग है, किन्तु देशी चिकित्सा में इसके अन्य अंग यथा बीज, पत्र एवं मूल आदि भी व्यवहृत होते हैं।

वर्णन। पौधा—इन्द्रायन की तरबूज या टिंडे की तरह की प्रसरणशील, अत्यन्त कर्कश (स्पर्श में) और धूसरवर्ण की एक सुदीर्घ सुन्दर लता होती है, जिनमें सूत्र निःशाख, पत्तियाँ १।। इंच से ५। इंच लम्बी तथा १ से २ इंच चौड़ी, लट्वाकार, प्रासवत् या प्रासवत्–आयताकार, बहुखण्डित (खण्ड पत्रवत् अथवा पाणिवत् तथा पुनः खण्डित) दोनों पृष्ठों पर स्पर्श में कर्कश (Scabrid) तथा ५–७ खण्डों (Lobes) से युक्त होती हैं। पुष्प पीले और व्यास में ०·५–०·७ इंच होते हैं। फल गोल व्यास में १–३ इंच चिकने-चित्रितवर्ण के होते हैं। फलमज्जा का चिकित्सा में (आयुर्वेद और यूनानी वैद्यक में मूल का भी) उपयोग होता है।

रासायनिक-संघटन—(१) इन्द्रवारुणिन (कॉलोसिन्थिन Colocynthin) नामक एक विरूपिक (Amorphous), रेचक राल (Resin) तत्व; (२) इन्द्रवारुणीन (कालोसिन्थीन Colocynthine) नामक एक अन्य विरूपिक एवं रेचक प्रभाव वाला क्षारोद तत्व (Purgative alkaloid) तथा (३) म्यूसिलेज, गोंदीय तत्व (Gummy matter)।

कोलोसिन्थिडिस पल्विस Colocynthidis Pulvis (Colocynth. Pulv.) —ले०, पाउडर्ड कोलोसिन्थ Powdered Colocynth—अं०। यह पीताभ-श्वेत वर्ण का चूर्ण होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

कोलोसिन्थ या इन्द्रायण में एक तिक्त तत्त्व (Bitter amorphous glucoside) पाया जाता है, अतएव अल्प मात्रा में यह अन्य तिक्त-बल्य औषधियों की भांति दीपन (Stomachic) होता है। किन्तु इस रूपमें इसका व्यवहार होता नहीं। साधारण मात्राओं (Moderate doses) में यह एक पित्त-विरेचक (Hydragogue purgative) औषधि है, और इसी रूप में इसका औषधीय व्यवहार होता है। मात्राधिक्य होने पर यह एक अनर्थकारक औषधि हो जाती है। ऐसी अवस्था में आमाशयांत्रप्रणाली पर तीव्र क्षोभक (Irritant) प्रभाव करती है। दूसरे गर्भवती स्त्रियों में इसके सेवन किए जाने पर गर्भपात (Abortion) की संभावना बहुत अधिक रहती है। इसके सेवन से पतले दस्त आते हैं, परन्तु साथ ही यह आंतों में ऐंठन (Griping) पैदा करती है, अतएव इसको हायोसायमस, बेलाडोना या वातानुलोमन औषधियों के साथ योग करके दिया जाता है। जलीय विरेचक

होने के कारण ऐसी व्याधियों में जिनमें द्रवापहरण अभीष्ट होता है इसका प्रयोग उपयोगी है। अतएव जलोदर (Ascites), सर्वांगशोफ अथवा मस्तिष्कगत-रक्ताधिक्य (Cerebral Congestion) में यह एक उपयुक्त रेचक औषधि है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् कोलोसिन्थिडिस कम्पोजिटम् Extractum Colocynthidis Compositum (Ext. Colocynth. Co.) I.P.—ले०; कम्पाउण्ड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव कोलोसिन्थ Compound Extract of Colocynth—अं०। मात्रा—२ से ८ ग्रेन (०.१२ से ०.५ ग्राम) या १ से ४ रत्ती।

(ऑफिशल इन इन्डियन फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स) I. P. C.

२—पिल्युला कोलोसिन्थिडिस एट हायोसायमाई Pilula Colocynthidis et Hyoscyami (Pil. Colocynth. et Hyoscy,)—ले०;—पिल्स ऑव कोलोसिन्थ एण्ड हायोसायमस Pills of Colocynth and Hyoscyamus। मात्रा—१ से २ गोली (Pills)।

३—पिल्युला कोलोसिन्थिडिस एट पोडोफिलाई Pilula Colocynthidis et Podophylli (Pil. Colocynth. et Podoph.)—ले०; कोलोसिन्थ एण्ड पोडोफिलम् पिल्स Colocynth and Podophyllum Pills—अं०। मात्रा–१ से २ गोली।

कोलोसिन्थ (इन्द्रायण) के उपयोगी नुस्खे :—

(१) एक्स्ट्रॅक्टम् कोलोसिन्थिडिस कम्पोजिटम् Ext. Colocynth. Co.	३ ग्रेन
पिल्यूला हाइड्रार्जिराई Pil. Hydrarg.	$\frac{1}{2}$ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् हायोसोयमाई सिक्कम् Ext. Hyoscya Sic.	१ ग्रेन
केप्सिकम्	$\frac{1}{8}$ ग्रेन

सबको मिलाकर १ गोली बनावें। ऐसी १–२ गोली रात्रि में सोते समय लें। यह एक उत्तम जलीय विरेचन (Hydragogue purgative) योग है।

(२) एक्स्ट्रॅक्ट० कोलोसिन्थ० को०	३ ग्रेन
पल्विस सेपोनिस	१ ग्रेन
ओलियम् मेन्था० पि०	$\frac{1}{2}$ बूंद

सबको मिलाकर १ गोली बनावें। ऐसी १ गोली रात में सोते वक्त दें। मलविबन्ध (Constipation) में लाभप्रद है।

(नॉट-ऑफिशल)

ओलियम् क्रोटोनिस (जयपाल तैल)

Oleum Crotonis

Family : Euphorbiaceae (एरण्डादि-कुल)

प्राप्ति-साधन—क्रोटन ऑयल Croton oil (जमालगोटे का तैल) क्रोटन टिग्लिअम् (Croton tiglium, Linn.) नामक वृक्ष के बीजों की गिरी से प्रपीड़न (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

नाम। बीज—जमालगोटा–हि०; म०; जयपाल, जेपाल, दन्तीबीज—सं०; जयपाल—बं०; नेपालो—गु०; कोनीवीह—आसाम; तुख्म हब्बुस्सलातीन, दन्दुस्सीनी—अ०; दन्द तुख्म बेदअंजीर खताई, दंदचीनी—फा०; क्रोटोनिस सेमीन Crotonis Semen—ले०; क्रोटन सीड्स Croton Seed—अं०। तैल—जमालगोटे का तेल—हि०; जयपाल तैल—सं०; रोग़न हब्बुस्सलातीन—अ०; ओलियम् क्रोटोनिस Oleum Crotonis, ओलियम् टिग्लिआई Oleum Tiglii—ले०; क्रोटन ऑयल Croton oil—अं०।

वक्तव्य—जयपाल के पौधे का जातीयनाम 'Croton' व्युत्पन्न है यूनानी (Greek) से जिसके अर्थ होते हैं 'Tick or bug' (यह एक क्षुद्र कीट होते हैं)। वृक्ष का विशिष्ट नाम 'tiglium' भी यूनानी से व्युत्पन्न है जिसका अर्थ होता है 'To have a thin stool' अतएव वृक्ष के लेटिन नाम से उसके बीजों के स्वरूप एवं उनकी प्रधान क्रिया का परिचय मिलता है। जमालगोटे के बीज स्वरूपतः 'Tick या bug' की तरह होते हैं।

चरक-सुश्रुत आदि प्राचीनतम संहिताओं में जमालगोटे का उल्लेख नहीं मिलता। राजनिघण्टु तथा अन्य अर्वाचीन ग्रन्थों में 'जयपाल' नाम से इसका विवरण अवश्य मिलता है। 'दंद' नाम से ईरानियों को इसका ज्ञान अतिप्राचीन काल से था। सम्भवतः ईरानियों को भी इस औषधि का ज्ञान चीनीयों से हुआ जैसा कि इसके एक फारसी पर्य्याय "दंद चीनी' से प्रगट होता है। मालूम होता है स्थलमार्ग से यह औषधि चीन से फारस पहुँची। फारस से इसका प्रचार अरब में हुआ। जयपाल का अरबी नाम 'दंदुस्सीनी' फारसी नाम 'दंद चीनी' का अरबी रूपान्तर मात्र है। इब्नसीना नामक प्रसिद्ध अरबी हकीम ने भी 'दंदुस्सीनी' के नामसे इस औषधि का वर्णन किया है और उसी प्रकरण में आयुर्वेदीय प्रसिद्ध प्राचीन औषधि 'दंती—(अरबी नाम दंदहिन्दी)' का भी उल्लेख किया है।

आयुर्वेद तथा यूनानी चिकित्सा पद्धति में जमालगोटे के तेल की अपेक्षा बीजों का प्रयोग अधिक होता है, और तद्घटित अनेक योग प्रसिद्ध हैं। डाक्टरी में भी पहले बीजों का ही प्रयोग होता था, किन्तु सम्प्रति केवल तेल का ही व्यवहार होता है। देशीय चिकित्सा पद्धति में प्रयोग के पूर्व बीजों का शोधन किया जाता है। एतदर्थ जमालगोटे के छिलके और दोनों दलों के बीच की जीभ या अंकुर को निकालकर गाय के गोबर के घोल में या दूध में उबालते हैं। **वक्तव्य**—जीभी को निकालते समय सतर्कता से काम लेना चाहिए अन्यथा जहां कहीं लग जाता है, तीव्र क्षोभक (Irritant) प्रभाव कर दाह एवं विस्फोटजनक प्रभाव करता है।

आसाम के जंगली लोग इसको 'कोनीवीह' कहते हैं, क्योंकि बीज के भीतर का गर्भ या अंकुर (कोनी) विषैला (वीह) होता है। (वनौषधि-दर्शिका—गुरुवर बलवन्त सिंह जी)।

उत्पत्ति—चीन, समस्त भारतवर्ष, लंका तथा भारतीय द्वीपसमूह।

वर्णन—इसके छोटे सदाहरित वृक्ष होते हैं। पत्तियाँ चिकनी, पतली, २–४ इंच लम्बी, लट्वाकार लम्बाग्र, दन्तुर एवं ३–५ नाड़ियों (Veins) से युक्त होती हैं। जयपाल बीज अंडाकार या आयताकार (Oblong), गाढ़े भूरे रंग के होते हैं। साधारणतया बाहर से देखने में जमालगोटे के बीज बहुत कुछ एरण्ड बीज (रेंड़ी) से मिलते-जुलते हैं। किन्तु निम्न विशिष्ट लक्षणों के आधार पर, जो केवल रेंड़ के बीज में ही पाये जाते हैं, दोनों की पहचान

की जा सकती है। जयपाल की अपेक्षा एरण्डबीज अधिक चिकने एवं चमकदार होते हैं तथा इस पर अनेक सफेद धारियाँ होती हैं। तैल (Croton Oil)—जयपाल का तेल चिपचिपा तथा रंग में भूरापन लिए पीले रंग से लाली लिए गाढ़े भूरेरंग का (Dark reddish-brown) होता है। इसमें अरुचिकारक गंध होती है तथा स्वाद में तीक्ष्ण एवं जलनशील (Burning) होता है।

मात्रा—$\frac{1}{2}$ से १ मिनम् या बूंद।

रासायनिक संघटन—(१) इसमें प्रधान कार्यकरघटक एक रेजिन (Resin) होता है जो क्रोटोन ऑलीइक एसिड (Crotonoleic acid) का ग्लिसरिल (Glyceryl) होता है। जयपाल का रेचक कर्म इसी के कारण होता है। (२) स्टियरिक, पामिटिक, लॉरिक, ऑलिईक, लिनोसिक तथा टिग्लिक एसिड के ग्लिसराइड्स।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

जमालगोटे का तेल बाह्य प्रयोग से तीव्र क्षोभक (Powerful irritant) तथा आभ्यन्तर प्रयोग से तीव्र विरेचन (Drastic purgative) होता है। बाहरी त्वचा पर लगाने से शोपित होकर भी यह विरेचक प्रभाव करता है। अधिक मात्रा में लगाने पर त्वचा पर विस्फोटक (Vesicant) प्रभाव भी करता है। आभ्यन्तर प्रयोग में भी उक्त संक्षोभक (Irritant) प्रभाव होता है, जिससे अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र प्रदाह (Gastro-enteritis) की अवस्था उत्पन्न होती है। इससे पतले दस्त आते हैं। जिन अवस्थाओं में शरीर से द्रवापकर्षण करना अभीष्ट होता है, तो ऐसी अवस्थाओं में विरेचन के लिए जयपालघटित योग बहुत उपयुक्त होते हैं। आयुर्वेद में इसके अनेक योग प्रसिद्ध हैं। रेचनार्थ जयपाल का मुख्य उपयोग ऐसी अवस्थाओं में किया जाता है, जब रोगी अचैतन्य (Unconscions) हो और रेचन कराना अभीष्ट हो। जैसे मस्तिष्कगत रक्तस्राव (Cerebral haemorrhage) एवं सन्यास (Coma) आदि व्याधियों में। जयपाल तैल को मक्खन या मधु में मिलाकर जिह्वा के नीचे रख देते हैं अथवा इसकी गोली को भी इसी प्रकार प्रयुक्त कर सकते हैं। इसके शोषणोपरान्त रेचन होता है तथा रोगी को छेड़-छाड़ करने की आवश्यकता भी नहीं होती। त्वचा पर मलने से शोषित होने पर भी यह रेचक प्रभाव करता है।

जयपाल घटित योग—

सामान्यावस्था में रेचन के लिए शुद्ध जयपाल तैल के बजाय, तद्घटित योगों का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। आयुर्वेद में ऐसे अनेक उत्तम योग हैं।

(१) इच्छाभेदीरस (भै० र०)—तीव्ररेचनके लिए यह एक उत्तम योग है। इसकी प्रयोग-विधि यह है, कि इसको १ ग्लास चीनी के शरबत के साथ प्रातःकाल ले लिया जाता है। आधा-आधा या एक-एक घंटे के अन्तर से थोड़ा-थोड़ा ठंडा जल पीते रहना चाहिए। जब काफी दस्त हो जाँय और दस्त रोकना अभीष्ट हो तो गरम जल पीने को देना चाहिए इससे दस्त रुक जाते हैं। इससे पानी की तरह पतले दस्त आते हैं। मात्रा—१—३ रत्ती।

वक्तव्य—(१) जयपाल उग्र स्वरूप की औषधि है। अतएव तद्घटित योगों का प्रयोग सतर्कता से करना चाहिए। (२) सभी विरेचनों की क्रियाशीलता प्रायः उष्णजल से बढ़ती है, किन्तु जयपाल की क्रियाशीलता ठीक इसके उलटे ठंढे जलसे बढ़ती है और गरम जल से रुकती है।

(२) नाराचरस। मात्रा–१–२ रत्ती।

(३) जलोदरारिरस—इसका प्रयोग जलोदरि के द्रवापकर्षण के लिए किया जाता है। मात्रा—½–२ रत्ती।

५—पित्तविरेचक औषधियाँ (Cholagogue Purgatives)

पोडोफिलम् (I. P.)

Podophyllum (Podoph.)—ले०; अं०।

Family : Berberidaceae (दारुहरिद्रादि-कुल)

पर्याय—पोडोफिलम् Podophyllum; पोडोफिलम् रूट Podophyllum Root; पोडोफिलाई राइजोमा Podophylli Rhizoma।

प्राप्ति-साधन—यह विलायती (अमेरिकन) गिरिपर्पट या पोडोफिलम् पेल्टेटम् (Podophyllum peltatum Linn.) का शुष्क किया हुआ ग्रंथिल राइजोम एवं मूल होता है, जो औषध्यर्थ प्रयुक्त होता है।

नाम—अमेरिकन मे एपुल (American May Apple), वाइल्ड मैंड्रेक या अमेरिकन मैंड्रेक (Wild Mandrake, American Mandrake); वेजिटेबल मरकरी (Vegetable Mercury)—अं०; विदेशीय गिरिपर्पट—सं०; विलायती पित्त पापड़ा, अमेरिकन पित्तपापड़ा,—हिं०।

वक्तव्य—इस वनस्पति का जातीय नाम (Generic Name) 'पोडोफिलम् Podophyllum यूनानी (Greek) से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है "पाद-सम पर्ण Foot-like Leaf; विशिष्ट नाम 'पेल्टेटम् peltatum' का अर्थ होता है 'ढाल की तरह (शील्ड-लाइक Shield-like),। इसके पत्तों की रूपरेखा एवं स्वरूप उक्त प्रकार का होने से ऐसा नामकरण किया गया है। इसका फल मई मास (May) में परिपक्व होता है तथा रंग में लाल वर्ण का और स्वरूपतः बहुत कुछ सेब से मिलता जुलता है; अतएव इसको May Apple कहते हैं। अमेरिका इसका मुख्य उत्पत्तिस्थान होने से 'American' विशेषण जोड़ा गया है। पारद की भाँति यह भी पित्त विरेचक कर्म के लिए प्रसिद्ध है और वानस्पतिक वर्ग का होने से 'Vegetable Mercury' कहा जाता है। भारतवर्ष में भी गुणतः एवं स्वरूपतः भी बहुत कुछ मिलती जुलती इसकी प्रजातियाँ पाई जाती हैं; अतएव इसका संस्कृत नामकरण 'विदेशीय गिरिपर्पट किया गया है।

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी अमरीका।

वर्णन—इसके छोटे २ शाकजातीय पौधे होते हैं। प्रत्येक पौधे में एक ही पुष्प निकलता है। भौमिककाण्ड (Rhizoma) प्रसरी स्वरूप का (Creeping) होता है, जिसके

प्रत्येक ग्रंथि के अधस्थल से जड़ की शाखाओं (Rootlets) का गुच्छक (Tuft) निकला होता है। फल पकने पर गाढ़े लाल रङ्ग का गूदेदार बीजमांसल फल (Pulpy berry) होता है।

चित्र १३—पोडोफिलम् पेल्टेटम् (Podophyllum peltatum) इस चित्र में पौधे का भूमि के ऊपर का पूरा भाग तथा फल दिखाया गया है।
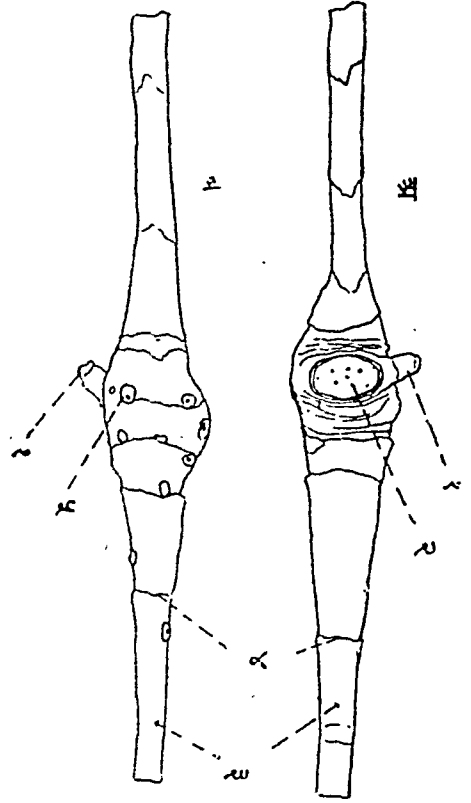
चित्र—१४। (अ) पोडोफिलम् पेल्टेटम् के भौमिक काण्ड का ऊर्ध्वतल (Upper Surface) (ब) अधस्तल (Lower Surface)

राइजोम—व्यवसाय में मिलने वाले टुकड़े ५ से २० सेंटीमीटर लम्बे तथा प्रायः रम्भाकार (Cylindrical) होते हैं, जिन पर ५–५ सेंटीमीटर के अन्तर से ग्रंथिलपर्व पाये जाते हैं। इस ग्रंथिलपर्व का व्यास तो लगभग १५ मिलिमिटर होता है किन्तु राइजोम के शेष भाग का व्यास लगभग ५ मिलिमिटर होता है। बाह्यतः यह लाली लिए गाढ़े भूरे रंग का और ग्रंथिल पर्वों को छोड़कर शेष भाग प्रायः चिक्कण होता है। ग्रंथिल रचनाओं पर प्रायः एक वृत्ताकार, खातोदर काण्ड के टूटने का चिन्ह (Stem Scar) पाया जाता है। इस चिह्न के अगल-बगल तथा अधस्तल पर लगभग १०–१२ पतली-पतली जड़ों के टूटने के चिह्न (Root-Scars) पाये जाते हैं। इन चिह्नों का व्यास १½ से २ मिलिमिटर होता है। राइजोम के शेष रम्भाकार भाग पर कभी-कभी शल्क पत्र (Scale leaves) पाये जाते हैं।

रासयानिक संघटन—(१) इसमें ३-८ प्रतिशत रेजिन होता है, जिसमें निम्नघटक (उपादांन) पायेजाते हैं—(अ) पोडोफिलोटॉक्सिन (Podophyllotoxin)—यह एक श्वेत मणिभीय (White Crystalline) तत्त्व होता है, जो स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है तथा रेचक-क्रिया की दृष्टि से पोडोफिलम् का प्रधान घटक है। यह ठंढे जल में तो अविलेय होता है, किन्तु गरम जल तथा अल्कोहल् में घुल जाता है। किसी-किसी के मत में पोडोफिलम् में पोडोफिलोटॉक्सिन के समरूपिक (Isomeric) ४ प्रतिशत की मात्रा में (B-peltatin) नामक एक दूसरा तत्त्व भी पाया जाता है। पोडोफिलो-रेजिन (Podophyllo-resin) नामक विरूपिक तथा रेचक रेजिन तत्व। इसके अतिरिक्त कॉर्टेक्स (Cortex) तथा मज्जक (Pith) में पिक्रोपोडोफिलिन (Picropodophyllin), स्टार्च तथा क्वर्सेटिन (Quersetin) नामक एक रञ्जकतत्व (Colouring Substance) भी पाया जाता है। पोडोफिलम् राइजोम तथा रूट में कैलिसयम् ऑक्जलेट के क्रिस्टल–पुंज (Cluster Crystals) भी पाये जाते हैं।

पोडोफिलाइ पल्विस Podophylli Pulvis (Podoph. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड पोडोफिलम् (Powdered Podophyllum)—अं०। यह हल्के भूरे रंग का चूर्ण होता है। मात्रा—२ से १० ग्रेन (१ से ५ रत्ती) या ०.१२ से ०.६ ग्राम।

पोडोफिलम् (इन्डिकम्) I. P.

यह पोडोफिलम् हेक्जेंड्रम् Podophyllum hexandrum, Royle या पोडोफिलम् इमोडी Podophyllum emodi, Wall. के शुष्क किये हुए भौमिक काण्ड (Rhizome) तथा मूल (Root) होते हैं। इसमें कम से कम ८ प्रतिशत रेजिन होता है।

नाम—भारतीय या देशी पित्तपापड़ा—हिं०; वनवृन्ताक, गिरिपर्पट—सं०; वनककड़ी—पं०; रिखपित्ता—देववन; पोडोफिलम् इन्डिकम् (Podophyllum indicum), पोडोफिलाई इन्डिसाई राइज़ोमा (Podophylli indici Rhizoma)—ले०; इन्डियन पोडोफिलम् (Indian Podophyllum)—अं०।

वक्तव्य—साधारणतया अमेरिकन तथा इन्डियन पोडोफिलम् गुण-कर्म एवं रचना में बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। किन्तु भारतीय उपजाति में रेजिन (जो इसका कार्यकर घटक है) की मात्रा अमेरिकन की अपेक्षाया अधिक होती है। अतएव यह अमेरिकन की अपेक्षया अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। देववन (देहरादून में १२,००० फुट की ऊँचाई पर हिमालय का क्षेत्र विशेष) में इसको 'रिख (स) पित्ता' कहते हैं जो संस्कृत ऋषिपित्ता का अपभ्रंश प्रतीत होता है। इसका अर्थ हुआ 'पर्वत-वासियों को सुलभ पित्त प्रकोप में उपयोगी द्रव्य, (वनौषधि-दर्शिका—गुरुवर बलवन्तसिंह जी)।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त उत्तरी-पश्चिमी हिमालय प्रदेश में ७,०००—१४,००० फुट की ऊँचाई पर छायादार स्थलों में इसके स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं। काश्मीर के अनेक स्थलों में इसके जंगल-के जंगल पाये जाते हैं।

वर्णन—इसके छोटे-छोटे पौधे (Small herbs) होते हैं। केवल २-३ पत्तियाँ होती हैं, जो पत्रनाल से पीठ पर जुड़ी हुई ६-९ इंच, ३ या अधिक विच्छेदों से युक्त होती हैं।

विच्छेदों की धार अनियमित रूप से कटी हुई तथा नोकीले दांतों से युक्त होती हैं। इसमें एकाकी दण्ड पर (Solitary) १-२ पुष्प आते हैं। फल पकने पर गाढ़े लाल रंग का १॥-२॥ इंच लम्बा, अंडाकार तथा मांसल (Large scarlet pulpy berry) होता है। **मूलस्तम्भ** (राइजोम)—इसके अनियमित रूप से रम्भाकार (Irregularly cylindrical) अथवा पुरः पश्चिम पृष्ठ पर चिपटा (Dorsi-ventrally flattened), कुछ ऐंठे हुए (Contorted) तथा ग्रंथिल (Knotty) पीताभ-भूरे से धूसर-भूरे (Earthy brown), २-४ सेंटीमिटर लम्बे, १-२ सेंटीमीटर मोटे टुकड़े होते हैं। ऊर्ध्व तल पर प्याले-नुमा (Cup-Shaped) टूटे वायव्य-काण्डों के ३-४ चिन्ह होते हैं। अधस्तल से अनेक मजबूत रज्ज्वाकार
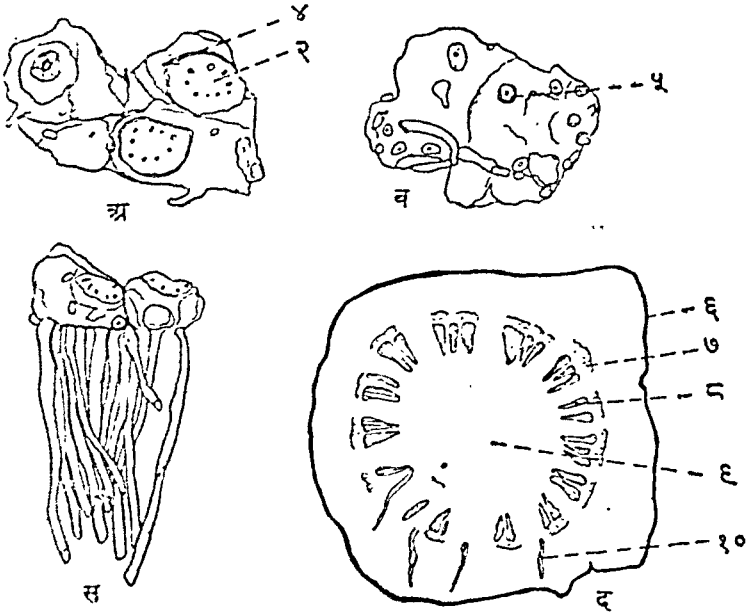
चित्र १५। अ, ब, स—इंडियन पोडोफिलम् के विभिन्न तल। द—राइजोम का अनुप्रस्थ विच्छेद। २—वायव्य काण्ड के टूटने का चिन्ह। ४—शल्क पत्र (Scale leaf)। ५—आगन्तुक मूल (Adventitions root)। ६—कार्क (Cork) ७—अधो-वाही (Phloem) ८—ऊर्ध्ववाही (Xylem) ९—मज्जक (Pith) १०—(Vascular Supply to root)।

जड़ें निकली होती हैं, अथवा इनके टूटे होने पर इन जड़ों के टूटने के चिन्ह पाये जाते हैं। मूलस्तम्भ को तोड़ने पर खट से टूटता है (Short fracture) अनुप्रस्थ विच्छेद में कटे हुए तल के मध्य में मज्जक (Pith) दिखाई देता है, जिसके चारों ओर आरावत्–स्थित (Radially) लगभग २० वाहिनी-पूलों (Vascular bundles) से बना चक्र स्थित होता है। राइजोम में हल्की किन्तु विशिष्ट गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में यह तिक्तएवं तीक्ष्ण होता है।

पोडोफिलाइ इन्डिसाइ पल्विस Podophylli Indici Pulvis (Padoph. Ind. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड इन्डियन पोडोफिलम् Powdered Indian Podo-

phyllum—अं०। यह हल्के भूरे रंग का चूर्ण होता है। मात्रा—२ से १० ग्रेन या ०.१२ ०.६ ग्राम।

पोडोफिलाइ रेजिना Podophylli Resina (Podoph. Res.)—ले०;

पर्याय—पोडोफिलिन Podophyllin, वेजिटेबल कैलोमेल Vegetable Calomel—अं०।

वर्णन—यह अमेरिकन या इन्डियन पोडोफिलम् राइजोम से प्राप्त रेजिन्स का मिश्रण होता है, जो हल्के पीले रंग से पीताभ-भूरे रंग का विरूपीय (Amorphous) चूर्ण अथवा भूरापन लिए खाकस्तरी रंग (Brownish grey) के पिण्डों (Masses) के रूप में प्राप्त होता है। ताप अथवा प्रकाश के प्रभाव से काला (गाढ़े रंग का darker in colour) हो जाता है इसमें पोडोफिलम् की विशिष्टगन्ध पाई जाती है, तथा स्वाद में तिक्त एवं तीक्ष्ण (Acrid) होता है।

विलेयता—गर्मजल में यह अंशतः (Partly) विलेय होता है; किन्तु विलयन के ठंढा हो जानेपर, रेजिन पुनः अधःक्षिप्त (Precipitated) हो जाता है। इसके अतिरिक्त, सॉलवेंटईथर, क्लोरोफॉर्म तथा अमोनिया के मन्दबल विलयन (Dilute Solutions of ammonia) में भी यह थोड़ा-बहुत घुल जाता है।

मात्रा—¼ से १ ग्रेन या १५ से ६० मिलिग्राम।

वक्तव्य—पोडोफिलम् रेजिन का संग्रह खूब अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करना चाहिए और इनको ठंढे एवं अंधेरे स्थान में रखना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वाह्य—पोडोफिलम् स्थानिक क्षोभक (Local irritant) होता है। लिक्विड पाराफिन (Liquid paraffin) में बनाये हुए इसके २०% घोल का प्रयोग कभी-कभी फिरंगार्बुद (Condylomata), वंक्षणीय लसकणार्बुद (Granuloma inguinale) पर लगाने के लिए किया जाता है।

आभ्यन्तर—आभ्यन्तर प्रयोग से पोडोफिलम् की मुख्य क्रिया तद्घटित रेजिन के कारण होती है। यह पित्त विरेचक (Cholagogue purgative) होता है। इसकी क्रिया क्षुद्रान्त्र (विशेषतः ग्रहणी duodenum) पर होती है। इसके प्रभाव से क्षुद्रान्त्र की पुरस्सरण गति में तीव्रता एवं शीघ्रता होती है, जिससे ग्रहणी में पित्त ठहरने नहीं पाता। इसके रेचक कर्म के कारण १०-१२ घंटे में मरोड़ (Gripes) के साथ पित्तयुक्त पतले दस्त आने लगते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि पोडोफिलम् पित्तोत्पत्ति में कोई सहायता नहीं करता। अतः यह अप्रत्यक्ष पित्तजनक (Indirect Cholagogue) औषधि है। पोडोफिलम् की पित्तविरेचन क्रिया बिल्कुल कैलोमेल (Calomel) की भांति होती है। इसीसे इसे 'Vegetable Calomel' भी कहा जाता है। यकृत की क्रिया में विकृति होने पर उत्पन्न विवन्ध (Constipation), अग्निमांद्य (Hepatic dyspepsia) अथवा पित्तमयता (Biliousness) में यह एक उत्तम औषधि है। एतदर्थ इसको ⅛ से ¼ ग्रेन की मात्रा में देना चाहिए। आदती कब्ज या

प्रतिहारिणीशिरागत रक्ताधिक्य (Portal Congestion) में कुछ अधिक मात्रा ($\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन) अपेक्षित होती है। कभी-कभी कम मात्रा में अभीष्ट फल न होने पर इसको और भी अधिक मात्रा में देने की आवश्यकता होती है। यदि कदाचित अधिक दस्त आने लगे और अभीष्ट न हों तो दूध का पानी तथा शर्बत आदि या लबाबी पेय (Mucilaginous drinks) देने से दस्त बन्द हो जाते हैं। किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में इसके प्रति अधिक असह्यता होती है। ऐसे लोगोंमें अपेक्षाकृत कम मात्रा में ही अधिक मात्रावत् लक्षण प्राप्त होते हैं।

कभी-कभी जब रोगी दौर्बल्य की शिकायत करता है, तथा भूख की कमी, शिरःशूल मुख का स्वाद फीका पड़ना आदि लक्षण हों और कोई विशिष्ट व्याधि का अनुसंग न प्रतीत होता हो, तो अल्पमात्रा में ($\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{20}$ ग्रेन) पोडोफिलम् के सेवन से उक्त सभी लक्षण दूर हो जाते हैं। उक्त अवस्था सम्भवतः यकृत्विकार से ही उत्पन्न होती है।

पोडोफिलम् के मरोड़ के दोष-निवारण हेतु इसको हायोसायमस, बेलाडोना या भंगा (Cannabis) के साथ योग करके दिया जाता है। अन्य रेचक औषधियों यथा, मुसब्बर जलापा, इंद्रायण (कोलोसिन्थ) आदि के साथ देने से पोडोफिलम् की रेचक क्रिया और भी स्पष्ट एवं निश्चित रूप से होती है।

पोडोफिलम् के उपयोगी योग।

(१) पोडाफिलाइ रेजिना (Podoph. res.) — $\frac{1}{6}$ ग्रेन
पल्विस इपेकाकानी (Pulv. iqecac.) — $\frac{1}{6}$ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् यूआनिमाई सिक्कम (Ext. euonym. Sicc.) — १ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् न्युकिस वॉमिकी सिक्कम (Ext. Nuc. vom. Sicc.) — $\frac{1}{6}$ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् हायोसायमाइ सिक्कम (Ext. hyoscy. Sicc.) — $\frac{1}{2}$ ग्रेन
पिल्यूला रहियाइ कम्पोजिटा (Pil. rhei. co.) — २ ग्रेन

सबको मिलाकर १ गोली बनावें। ऐसी १-१ गोली प्रातः सायं भोजनोपरान्त दें। यकृत्कार्य मन्दताजन्य आदती कब्ज में बहुत लाभ करती है।

(२) पोडाफिलाइ रेजिना — $\frac{1}{8}$ ग्रेन
एलो (Aloe) — $\frac{1}{4}$ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् जेन्सिआनी (Ext. Gent.) — आवश्यकतानुसार—

सबकी एक गोली बनावें। यह एक उत्तम पित्तविरेचक (Cholagogue purgative) वटिका है।

(३) पोडाफिलाइ रेजिना — $\frac{1}{4}$ ग्रेन
एलोइन (Aloin) — $\frac{1}{4}$ ग्रेन
जॅलाप पल्वरेटा (Jalap Pulverat.) — $\frac{1}{4}$ ग्रेन
ओलियम् मेन्थी पिपरिटी (Ol. Menth. Pip.) — $\frac{1}{2}$ ग्रेन
ग्लिसरिन ट्रागाकान्थ (Glycer. Trag.) — आवश्यकतानुसार—

सबकी १ गोली बनावें। यह भी एक उत्तम पित्तविरेचक वटिका है।

(नॉट ऑफिशल)

यूओॅनिमस् (Euonymus) B. P. C.

Family : Celastraceae (ज्योतिष्मत्यादि-कुल)

प्राप्ति-साधन—यूओॅनिमस्, यूओॅनिमस् एट्रोपरप्यूरियस (Euonymus atropurpureus Jack.) नामक वनस्पति की शुष्क मूल-त्वक् अर्थात् जड़ की सुखाई हुई छाल (Root-bark) होती है।

नाम—यूओॅनिमाइ कार्टेक्स Euonymi Cortex—ले०; यूओॅनिमस बार्क Euonymus Bark, वाहू बार्क Wahoo Bark—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—संयुक्तराष्ट्र अमरीका (U. S. A.)
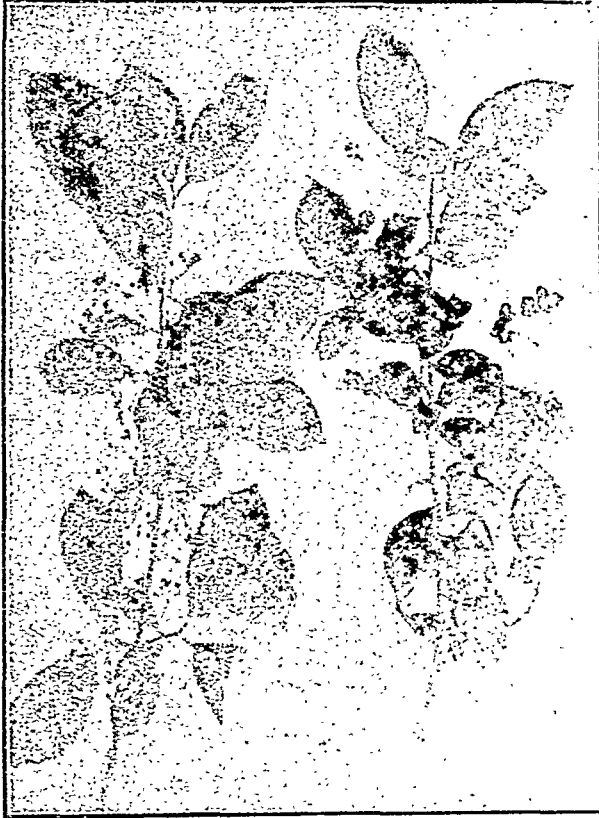
चित्र १६—यूओॅनिमस् एट्रोपर्प्यूरियस

वक्तव्य—(१) यह औषधि पहले ब्रिटिश फार्माकोपिआ में ऑफिशल थी। इसके अनेक भेद (Varieties) हिन्दूस्तान एवं यूरोप में पाए जाते हैं। किन्तु औषध्यर्थ प्रयोग अमेरिकन भेद का ही हुआ। हकीम सावफरस्तुस (Theophrastus) यूनानी तथा प्लाइनी रूमी

ने इसका उल्लेख किया है। (२) भारतवर्ष में पाये जानेवाले भेद को लेटिन में Euonymus tingens Wall. कहते हैं। इसके क्षुप देवबन और चकरौता में अधिक संख्या में मिल जाते हैं जहाँ इसको रोइनी या केशरी कहते हैं। इसे विदेशीय इयोनीमस के प्रतिनिधि स्वरूप काम में लेकर परीक्षा करना चाहिये।

रासायनिक-संघटन—(१) यूऑनिमोल Euonymol नामक एक तिक्त सत्व तथा (२) स्टेरोल, यूआनिस्टेरोल, एट्रोपरप्यूरिओल तथा मेदसाम्ल (Fatty acids)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

यूआनिमस की क्रिया बहुत कुछ पोडोफिलम् की तरह होती है, किन्तु उसकी अपेक्षा मन्दतर होती है। यकृत की विकृतियों (Hepatic disorders) में यह एक परमोत्तम औषधि है। विशेषतः यकृन्मन्दता (Torpidity of the liver) जन्य मलविबन्ध (Constipation) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। कॅस्करा के साथ इसका प्रयोग चिरकालीन या आदती मलविबन्ध (Chronic or habitual Constiqation) में बहुत लाभप्रद एवं उपयुक्त होता है। अन्य उपयुक्त सहयोगी औषधियों के साथ यह शिशुओं की यकृद्वृद्धि में (Infantile hepatic enlargement) में भी बहुत उपयोगी पाया जाता है।

(अनधिकृत-योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् यूआनिमाइ Extractum Euonymi, B. P. C.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव यूआनिमस Extract of Euonymus—अं०। पर्याय—यूआनिमिन (Euonymin)। मात्रा—१ से २ ग्रेन।

२—टिंक्चुरा यूआनिमाइ Tinctura Euonymi, B. P. C.—ले०; टिंक्चर ऑव यूआनिमस—अं०। मात्रा—१० से ४० मिनम् (बूंद) या ०·६ से २·६ मि० लि०।

३—लिकर यूआनिमाइ एट आइरिडिनी Liquor Euonymi et Iridini, B. P. C.—ले०। मात्रा—३० से ६० मिनम् या २ से ४ मि० लि०।

यूऑनिमस के उपयोगी योग—

(१) एक्स्ट्रॅक्टम् यूऑनिमाइ (Ext. Euonym.)	½ ग्रेन
पल्विस इपेकाकानी (Pulv. Ipecac.)	⅙ ग्रेन
पल्विस र्हियाइ कम्पोजिटा (Pulv. Rhei. co.)	२ ग्रेन
सेलिसिनम् (Salicin.)	१ ग्रेन
सोडियम् बाई-कार्बोनेट (Scd. bicarb.)	२ ग्रेन

सबको मिलाकर १ पुड़िया बनालें। ऐसी एक-एक पुड़िया दिन में २-३ बार दें। बच्चों की यकृद्वृद्धि (Infantile hepatic enlargement) में साथ में यदि मन्द हरारत भी हो तो यह योग बहुत उपयोगी है।

(२) यूआॅनिमिन
लेप्टैंड्रिन (Leptandrin) } प्रत्येक ½ ग्रेन
मुसब्बर (Aloe एलो) }
एक्स्ट्रॅक्टम् न्यूकिस वॉमिकी (Ext. Nuc. Vom.) ¼ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् हायोसायमाई सिक्कम् (Ext. hyoscyami Sicc.) ½ ग्रेन
ग्लिसरिन ट्रागाकान्थ (Glyc. Trag.) आवश्यकतानुसार

सबको मिलाकर एक गोली बनावें। ऐसी एक गोली रात को सोते समय दें। यकृत-विकार (Chronic Congestion. of the liver) जन्य कब्ज में बहुत लाभ प्रद है।

योग—

(३) एक्स्ट्रॅक्टम् यूआॅनिमाई (Ext. Euonym.) १ ग्रेन
आइरिडीन (Iridin) १ ग्रेन
पिल्यूला कोलोसिन्थेडिस एट हायोसायमाई २ ग्रेन

सबको मिलाकर एक गोली बनावें। ऐसी १ गोली रात में सोते समय दें। यकृद्गतरक्ताधिक्य (Hepatic congestion) में बहुत लाभकारी है।

(नाट् आॅफिशल)

आयरिडिन (Iridin)

Family : Irideāe (केसरादि-कुल)

प्राप्ति-साधन—एक्स्ट्रॅक्टम् आयरडिन, आयरिस वर्सिकलर (Iris versicolor) नामक क्षुद्र वनस्पति की जड़ का घनसत्व (Extract) होता है, जो गाढ़े भूरे रङ्ग का रेजिन की तरह (Resinous) चूर्ण होता है। आयरिडिन स्वाद में अत्यन्त तिक्त एवं तीक्ष्ण (Acrid) होता है। मात्रा—१ से ३ ग्रेन या ०.०६ से ०.२ ग्राम।

नाम—ईरसा—हिं०; सौसन आस्मान जूनी, सौसन अज़रक़, ईरसाए क़ज़हिय्यः—अं०; ईरसा, सोसन आस्मान गूनी—फा०; आयरिस जर्मेनिका Iris germanica—ले; आयरिस वर्सिकलर Iris versicolor, आरिस Orris—अं०। आयरिस की जड़—आरिस रूट Orris Root—अं०; बेखे ईरसा, रेशए ईरसा—फा०।

वक्तव्य—चूंकि इसमें नीले, पीले, सफेद रंग के इन्द्रधनुप (क़ौसे क़ुज़ह) की भांति फूल लगते हैं, अतएव इसका अरबी नामकरण इस प्रकार किया गया।

उत्पत्ति-स्थान—काश्मीर, ईरान तथा मध्य एवं दक्षिण यूरप।

वर्णन—ईरसा की अनेक उपजातियाँ फारस, यूरप, एवं भारतवर्ष में हिमालय पर्वतमाला में स्वयंजात होती हैं। यह क्षुद्र वनस्पति (Herbaceous plant) होती है, जिसकी जड़ औषध्यर्थ प्रयुक्त होती है। सभी प्रकार के आयरिस की जड़ ग्रंथिल, लम्बगोल और सफेद रंग की होती है। जड़ में बनफ्शे की सी गंध आती है, इसीसे इसका एक बाज़ारू नाम 'बेख़ बनफ्शा' भी है।

यूनानी हकीमों को इसका ज्ञान बहुत प्रचीन-काल से था और उन्होंने इसका उल्लेख भी किया है। प्राचीन काल में यूनान (Greece) तथा इटली आदि देशों में ईरसा की जड़ का प्रयोग औषधि की अपेक्षा या सौगन्धिक कल्प-निर्माण (Perfumery) में अधिक किया जाता था।

रासायनिक-संगठन — आयरिस रूट में एक उत्पत्-तैल (Volatile oil) तथा अनुत्पत् मेद जातीय तत्व (Fatty bodies) पाये जाते हैं। (२) एक मणिमीय ग्लाइकोसाइड जिसे आयरिडिन (Iridin) कहते हैं। डाक्टरी में इसी का व्यवहार औषध में होता है। (३) इसके अतिरिक्त आयरिस-रूट में एक राल, टैनिन, स्टार्च तथा कैल्सियम् ऑक्जलेट भी पाया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

पित्तमयता (Biliousness) तथा यकृन्मन्दता जन्य सभी विकृतियों में आयरिडिन तक उत्तम औषधि है। यूआँनिमिन एवं पोडोफिलिन के साथ इसको मिलाकर देने से और भी लाभ होता है।

वक्तव्य—हकीमी की यह एक प्रसिद्ध औपधि है और वहां इसका विस्तार से वर्णन भी है। इसके अन्य आमयिक प्रयोगों के लिए देखें यूनानी द्रव्यगुणविज्ञान पृ० ५०७–५०८ (लेखक—श्री दलजीतसिंह जी)।

प्रकरण ६—

पित्तजनक या पित्तल औषधियाँ।

(Choleretics)

एक्स्ट्रॅक्टम् फेलिस बोवाइनी (नॉट्-आफिशल)

Extractum Fellis Bovini (Ext. Fell. Bov.)

नाम—फेल बोवाइनम् प्योरिफिकेटम् Fell Bovinum Purificatum—ले०। प्योरिफाइडा ऑक्स वाइल Purified Ox Bile—अं०। शुद्ध वृषभपित्त—सं०। बैल का स्वच्छ किया हुआ पित—हिं०।

स्वरूप—यह गाढ़े पीताभ-हरित वर्ण का होता है। स्वाद में तिक्त एवं अरुचिकारक तथ जल एवं अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है।

मात्रा—५ से १५ ग्रेन या ०.३ से १ ग्राम।

गुणकर्म तथा प्रयोग।

यह एक उत्तम पित्तजनक द्रव्य होता है। इससे पित्त के द्रवांश एवं घनघटक दोनों के उत्सर्ग में वृद्धि हो जाती है। पित्त से अग्न्याशय के विमेदांशिय किण्व (Lipolytic Ferment) का उत्सर्ग भी अधिक मात्रा में होता है, तथा यह आहार के वसांश के प्रचूपण में भी सहायक होता है। अतएव इसका प्रयोग पित्ताभाव जन्य अग्निमांद्य एवं विवन्ध में बहुत उपयोगी होता है। आहार पाचन एवं वसा के शोषण में सहायक होने के कारण यह विटामिन ए, डी तथा K के शोषण में भी सहायक होता है। पित्त की सहायता से ही शरीर विटामिन K का सदुपयोग करता है, जो रक्त में पूर्वघनास्त्रि (Prothrombin) की मात्रा के स्थापन में प्रधान साधन होता है। विटामिन के अभाव में रक्तस्राव की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। मलाशय (Rectum) में मलसंचय के कारण जो विवन्ध होता है, उसमें १ से २ औंस जल में २० से ३० ग्रेन पित्त घोलकर वस्ति के रूप में प्रयुक्त करते हैं। ऐसी स्थिति में मलाशय के मल से परिपूर्ण होने के कारण अधिक द्रव से वस्ति नहीं की जा सकती।

प्रयोगविधि—इसको प्रायः कैचेट (Catchets) में रखकर या विलयन के रूप में (जल के साथ) प्रयुक्त करते हैं। किन्तु इसके लिए इसकी शृंग्यावृत्त (Keratin coated) या सेलोल की वार्निश की हुई गोलियाँ अधिक अच्छी होती हैं। इनका प्रयोग भोजनोत्तर २ घंटे के बाद करना चाहिए।

कतिपय उपयोगी योग :—

(१) फेल बोवाइनी (वृषभपित्त)	४ ग्रेन
पैंक्रिएटीन	१ ग्रेन

दोनों को मिलाकर एक गुटिका बनावें। ऐसी १-१ गोली प्रतिदिन भोजन के बाद दो बार सेवन करें। यह पित्तविरेचक (Colagogue) गुटिका है।

(२) फेल बोवाइनी	२० ग्रेन
एक्वाडेस्टिलेटा (परिस्रुत जल)	२ ग्रेन

मलाशय के शुष्कमल से परिपूर्ण होने के कारण उत्पन्न तीव्र विबन्ध में गुदमें इसकी वस्ति करें। इससे बहुत लाभ होता है।

(३) फेल बोवाइनी	५ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् यूआनीमाई	१ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् नक्सवॉमिकी	१/३ ग्रेन
पिल्यूला फेराइ	३ ग्रेन

इन सबको मिलाकर १ गोली बनावें। ऐसी १ गोली प्रतिदिन रात्रि में सोते समय सेवन करें। यह पित्तविरेचक एवं बल्य हैं। यकृत विकार के कारण पित्तोत्पत्ति समुचित मात्रा में न होने से उत्पन्न अग्निमांद्य एवं विबन्धादि में यह बहुत उपयोगी सिद्ध होती है।

(Not official)

डिहाइड्रोकोलिक एसिड (U. S. P.) (Dehydrocholic Acid).

नाम—डिकोलिन (Decholin); डिहाइड्रोकोलिन (Dehydrocholin)। यह नैसर्गिक पित्ताम्लों से व्युत्पन्नकोलिक एसिड के जारण से प्राप्त होता है।

मात्रा—४ से ८ ग्रेन या ०.२५ से ०.५ ग्राम।

गुण एवं प्रयोग।

यह एक तीव्र पित्तजनक औषधि है और सभी प्रकार के यकृतविकारों में प्रयुक्त होती है। यह औषधि पित्तप्रणाली में स्थित सान्द्रीभूत जमे हुए पित्त (Inspissated bile) एवं श्लेष्मा का उत्सर्ग करके पित्तनलिका के विशोधन में सहायक होती हैं। अतएव इस गुण के कारण इसका प्रयोग तीव्र एवं चिरकालज पित्ताशयशोथ (Cholecystitis), प्रसेकयुक्त कामला, यकृद्दाल्युदर (Cirrhosis of liver), तथा पित्ताभावजन्य विबन्ध आदि व्याधियों में बहुत लाभप्रद होता है। पित्ताशयचित्रण (Cholecystography) में चित्र के स्पष्टीकरण के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। यकृत-विकार जन्य अर्धावभेदक (Migraine) में भी यह लाभ करता है।

इसका प्रयोग ४ ग्रेन वाली कैपस्यूल में औषधि को रख कर किया जाता है अथवा इसके सोडियम् लवण के २० प्रतिशत के विलयन का प्रयोग ५ से १० सी० सी० की मात्रा में इन्जेक्शन द्वारा किया जाता है।

卐

प्रकरण ७—

कृमिघ्न औषधियाँ (Anthelmintics)।

गण्डुपदकृमि या केंचुए की औषधियाँ।

(Anthelmintics for Round-worms)

सेन्टोनिनम् (Santoninum), सेन्टोनिन I. P., B. P.

Santonin (Santonin.) $C_{15}H_{18}O_3$.

Family : Compositae (मुण्डक-कुल)

सेन्टोनीन एक मणिभीय सत्व (Crystalline principle) होता है, जो आर्टिमिसिया सिना (Artemisia cina, Berg.) या आर्टिमिसिया की अन्य प्रजातियों (Species) के शुष्क किए हुए अविकसित पुष्पव्यूह-मुण्डकों (Flower-heads) से प्राप्त किया जाता है।

नाम—पौधे के नाम—आर्टिमिसिया सिना Artemisia cina, Berg.—ले०। (अविकसित पुष्पव्यूह-मुण्डक के नाम)—सेन्टोनिका (Santonica), वर्म-सीड Wormseed; सिमेन सिनी Semen cinae; सिमेन कन्ट्रा Semen Contra.।

वक्तव्य—आर्टिमिसिया का व्यवहार सर्व प्रथम मॉसोलस (Mausolus) नामक राजा की रानी ने किया था। उसका नाम आर्टिमिसिया (Artemisia) था। उसी के नाम पर उक्त औषधि का जातीय नाम (Generic name) पड़ा है। कृमिघ्न प्रभाव के लिए " वर्म सीड Worm Seed" का व्यवहार बहुत दिनों से होता रहा है। इटली में इसका व्यवहार "सिमेनज़िना Semenzina" के नाम से होता रहा है। सिमेनज़िना शब्द, सिमेन्ज़ा Semenza" का संक्षिप्त रूप है और इसका धात्वर्थ "सीड Seed" या बीज होता है। लोगों की धारणा ऐसी थी, कि उक्त औषधि अविकसित पुष्प-मुण्डकों के बजाय बीजों से प्राप्त की जाती थी। अतएव बीज द्योतक उक्त नामकरण हुआ था। उक्त नाम इस औषधि के लिए प्रचलित भी था। सेन्टोनिका का तीसरा पर्याय सिमेन कॅन्ट्रा संक्षिप्त रूप है "सिमेन कॅन्ट्रा वर्मिस Semen Contra Vermes" का।

उत्पत्ति-स्थान—तुर्किस्तान (Turkestan)।

वर्णन। **वनस्पति**—आर्टिमिसया सिना के छोटे-छोटे गुल्मक (Undershrub) होते हैं, जिसमें पुष्पमुण्डकों को धारण करने वाली, लगभग १ से १½ फुट ऊँची ऊर्ध्वगामी शाखायें निकली होती हैं। सेन्टोनिन प्राप्त करने के लिए विकसित होने के पूर्व ही इन मुण्डकों

(Santonica) को तोड़ एवं शुष्क कर संग्रहीत कर लेते हैं। स्वाद में तिक्त एवं कर्पूर-सम (Camphoraceous) तथा पौधे को मसलने से उग्र सुगंधि आती है। सेन्टोनिका—आर्टिमिसिया के पुष्प-स्तवक या मुण्डक (Flower-heads) आकार में आयताकार (Oblong) अथवा अंडाकार (Ellipsoid) होते हैं और ये प्राय: २–४ मिलिमिटर लम्बे होते तथा व्यास १ से १·५ मिलिमिटर होता है। उक्त मुण्डकों के नीचे अधःपत्रावलि (Involucre) होती है, जो आकार में अंडाकार (Ovoid) होती है, और उसमें अनियतारूढ़ दलिका क्रम से स्थित (Closely imbricated) संख्या में १२–१८ तक चमकदार, लट्वाकार अथवा लट्वाकार-मालाकार कोणपुष्पक (Bracts) होते हैं। ये कोण पुष्पक लगभग २ मिलिमिटर लम्बे होते हैं। इन कोणपुष्पकों का मध्य भाग पीत-हरित (Yellowish green) अथवा हरित-भूरा (Greenish brown) होता तथा किनारे श्वेताभ (Whitish होते हैं)। उक्त मुण्डकों (Flower-heads) संख्या में ३ से ६ तक अविकसित नलिकाकार (Tubular) पुष्प होते हैं, जिनकी लम्बाई लगभग १½ मिलिमिटर होती है। सेन्टोनिका में उक्त पुष्प ऊर्ध्व स्थित कोणपुष्पकों (Bracts) द्वारा पूर्णतः आवृत रहते हैं। अण्डाशय (Ovary) आयताकार (Oblong) होती है और उसमें रोमकण्टक (Pappus) नहीं पाया जाता। इन मुण्डकों को ठीक विकसित होने के पूर्व ही प्रायः जुलाई-अगस्त के महीने में तोड़कर शुष्क कर लेते हैं और तदनन्तर उनका संग्रह किया जाता है।

रासायनिक संघटन—सेन्टोनिका में लगभग २ से ३·५ प्रतिशत सेन्टोनिन होता है, जो इस औषधि का प्रधान सक्रिय सत्व है। इसके अतिरिक्त इसमें २ से ३ प्रतिशत उत्पत तैल (Volatile oil) एवं आर्टिमिसिन (Artemisin) पाया जाता है।

सेन्टोनिन—सेन्टोनिन रासायनिक दृष्टि से सेन्टोनिक एसिड (Santonic acid) का लैक्टॉन (Lactone) होता है, जो सेन्टोनिक एसिड के समरूपिक (Isomeric) होता है। सेन्टोनिन चमकदार रंग हीन, त्रियग्वर्गीय मणिभ (Rhombic prisms) या श्वेत मणिभीय चूर्ण (White Crystalline Powder) के रूप में पाया जाता है। आजकल रसायन शालाओं में कृत्रिम संश्लेषण पद्धति द्वारा (Synthetically) भी यह प्राप्त किया जाता है। सेन्टोनिन जल में लगभग अविलेय किन्तु २½ भाग क्लोरोफॉर्म, ४० भाग सॉलवेंट ईथर एवं ५० भाग अल्कोहल (९०%) में विलेय होता है। मात्रा–१ से ३ ग्रेन या ½ से १½ रत्ती।

आर्टिमिसिया की सेन्टोनीन-जनक भारतीय प्रजातियाँ—

भारतवर्ष में आर्टिमिसिया की निम्न प्रजातियाँ (Species) प्रचुरता से पाई जाती हैं, जो सेन्टोनिन की दृष्टि से विशेष महत्व की है।

(१) आर्टिमिसिया ब्रेविफोलिया **Artemisia brevifolia, Wall.**

(२) आर्टिमिसिया मेरिटिमा **Artemisia maritima Linn. forma rubricaule, Badhwar.**

अन्य-नाम—किरमानी अजवायन, किरमाला, छुहारीजवाइन—हि०; चौहार, किरमाणी

यवानी—सं०; शीह—अ०; दिर्मनः—फा०; तर्ख—पश्तु, किरमाणी ओंवा—म०; किरमाणी अजमो—गु०; वर्मसीड Wormseed, सेंटोनिका Santonica–अं०।

वक्तव्य—फारस के 'किरमान' नामक प्रदेश में यह औषधि प्रचुरता से होती है और वहाँ से भारतवर्ष में इसका आयात होता है। किरमाला इसीका अपभ्रंश है।

यूनानी निघण्टुओं में आर्टिमिसिया की अनेक प्रजातियों का उल्लेख मिलता है। किन्तु सेन्टोनिन की दृष्टि से उनका विशेष महत्व नहीं है, यद्यपि उनमें अनेक का प्रयोग चिकित्सा में अन्य प्रभावों के लिये किया जाता है—(लेखक)।

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष में पश्चिमी हिमालय प्रदेश में काश्मीर से कुमायूँ तक ७,०००–६,००० और कहीं-कहीं ११,००० फुट की ऊँचाई पर आर्टिमिसिया की उक्त दोनों प्रजातियों के स्वयंजात पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं। काश्मीर इनकी प्राप्ति का प्रधान क्षेत्र है। इसके अतिरिक्त एशिया, फारस, अफगानिस्तान एवं बलूचिस्तान एवं सिन्धके पर्वतीय भाग (पश्चिमी पाकिस्तान) में भी यह प्रचुरता से होता है।

वर्णन—इसके लगभग १ गज़ ऊँचे बहुशाखी छोटे क्षुप होते हैं। शाखायें मूल से ही निकली होती हैं। काण्ड पर धारियाँ होती (Striate) हैं। पत्तियाँ १·३ से ५ सेंटीमीटर लम्बी तथा त्रिपादानुत्तर-द्विपक्षवत (२–pinnatisect) होती हैं। सघन तूलमय श्वेत लोमों से आवृत (Tomentose) होने से पौधा श्वेत वर्ण का लगता है। पत्रकखण्ड छोटे-छोटे तथा बहुसंख्यक होते हैं। पुष्प-स्तबक (Flower head) छोटे-छोटे (२·५ मिलिमिटर लम्बे) आकार में अंडाकार अथवा आयताकार (Oblong) होते हैं। जिसमें ३-८ पुष्प होते हैं। पौधे से एक प्रकार की उग्र सुगन्धि आती है। स्वाद में तिक्त एवं कर्पूर-सम (Comphoraceous)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

आभ्यन्तर—गण्डूपद कृमि या केंचुए (Ascaris lumbricoides) पर इसका विशिष्ट घातक प्रभाव होता है, तथा इसके प्रयोग से आन्त्रस्थ केंचुवे मृत हो जाते हैं। सूत्रकृमि (Oxyuris Vermicularis) पर भी यह औषधि अंशतः प्रभाव करती है, किन्तु स्फीत-कृमि पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता। कतिपय विशेषज्ञों का कहना है, कि उपरोक्त गण्डूपद कृमि (Round worm) पर यह औषधि घातक प्रभाव नहीं करती अपितु उनको शिथिल एवं निष्क्रिय कर देती (Paralyses) है; क्योंकि इसके प्रयोग के उपरान्त भी कतिपय कृमि जीवितावस्था में उत्सर्गित होते देखे जाते हैं। आमाशय में अंशतः हल हो जाती है, किन्तु आँतों में पहुँचने पर इसका कृमिघ्नकार्य प्रगट होता है। कभी-कभी आमाशयान्त्र से इसके कुछ अंश का शोषण हो जाता है, जिससे पीत दृष्टि (Xanthopsia) तथा पीतवर्ण के मूत्र का उत्सर्ग आदि लक्षण प्रगट होते हैं।

शोषण (Absorption)—धातुओं में जारित (Oxidised) होकर मल-मूत्र के साथ इसका उत्सर्ग ऑक्सीसेन्टोनिन के रूप में होता है। साधारण चिकित्सार्थ मात्रा (Therapeutic dose) में प्रयुक्त होने पर प्रायः संपूर्ण औषधि का उत्सर्ग एक रञ्जित द्रव्य

(Coloured Substance) के रूप में मूत्र के साथ हो जाता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर कभी-कभी मूत्र में सेन्टोनिन का अंश भी पाया जाता है।

नाड़ी संस्थान—विशेषतः नेत्र के दृष्टिपटल (Retina) पर प्रभाव पड़ता है, जिससे विचित्र प्रकार के लक्षण प्रगट होते हैं। पहले दृष्टि नीलाभ, तदनु हरिताभ पीत या पीत वर्ण की हो जाती है। कभी-कभी रसनेन्द्रिय तथा घ्राणेन्द्रिय पर भी प्रभाव लक्षित होते हैं।

वृक्क—सेन्टोनिन का उत्सर्ग प्रधानतः वृक्कों द्वारा होता है, जिससे कभी कभी बच्चों में मूत्रकृच्छ्र (Dysuria) तथा शय्यामूत्र (Incontinence of Urine) आदि लक्षण पैदा हो जाते हैं। इससे अम्ल प्रतिक्रिया युक्त मूत्र का वर्ण हरिताभ-पीत (Greenish-Yellow) तथा क्षारीय मूत्र का वर्ण नीलारुण (Purplish red) हो जाता है। इसका कारण सेन्टोनिन का धातुओं में जारण होने के कारण एक जारण-द्रव्य (Oxidation product) विशेष की उत्पत्ति समझी जाती है, जिसका उत्सर्ग मूत्र के साथ होने से यह प्रभाव उत्पन्न होता है।

विषाक्त-प्रभाव (Toxic action)—**अधिक मात्रा के प्रयोग के परिणाम स्वरूप विषाक्त प्रभाव होने पर शिरःशूल, वमन रेचन, चेतनानाश, वाक्शक्ति का विकृत होना, शीतप्रस्वेद श्वसन एवं हृदयावसाद, आक्षेप, कम्प** (Tremor) **आदि कुपरिणाम लक्षित होते हैं। मूत्र केसरिया रंग का** (Saffron-Coloured) **आने लगता है। कभी-कभी मृत्यु तक हो जाती है। कभी-कभी त्वचा पर विस्फोट** (Rash) **भी उत्पन्न हो जाते हैं।**

आमयिक प्रयोग

गण्डूपदकृमि के लिए सेन्टोनीन विशिष्ट औषधि है। प्रायः इसका प्रयोग रात्रि में खाली पेट पर करना चाहिए। जिस दिन इसका प्रयोग करना हो उस दिन प्रातः काल सुखविरेचन द्वारा पेट साफ कर देना चाहिए और दूसरे दिन प्रातः भी विरेचन का प्रयोग करना चाहिए। सुखविरेचन का प्रयोग अलग न करके प्रायः इसको कैलोमेल (रसपुष्प) के साथ प्रयुक्त करते हैं। यदि बच्चों के लिए प्रयुक्त करना है तो उसमें शूगर (ग्लूकोज, लैक्टोज आदि) आदि भी मिला सकते हैं। दूसरे दिन प्रातः रेचन के लिए ग्रिगरीज़ पाउडर (Gregory's powder) या लवण विरेचनों (Saline purgatives) की एक मात्रा देनी चाहिए। इसी प्रकार एक-एक दिन के अन्तर से सेन्टोनीन का प्रयोग ३ दिन करना चाहिए। पहले इसका प्रयोग ग्रहणी (Sprue) में भी किया जाता था, किन्तु अब ग्रहणी में यह प्रयुक्त नहीं किया जाता।

सेन्टोनिन-घटित नुस्खे—

(१) हाइड्रार्ज० सबक्लोर०—	१ ग्रेन
सेन्टोनिन	१ ग्रेन
फिनोलेफ्थलीन Phenolpthal.	$\frac{1}{8}$ ग्रेन
लेक्टोसम् (लेक्टोज)	२ ग्रेन

सबको परस्पर मिलाकर १ मात्रा बनावें ५ वर्ष के बालक में केंचुए के निर्हरण के लिए ऐसी एक मात्रा रात्रि में दी जाती है। प्रातःकाल मैगसल्फ० का रेचन देना चाहिए।

(२)	सेन्टोनिन	१ ग्रेन
	जिंजिबेरिस	½ ग्रेन
	सल्फर प्रेसिपिटेटम् Sulphur. Precip.	२ ग्रेन
	कन्फेक्शिओ सेन्नी Conf. Senn	२० ग्रेन

सबको मिलाकर एक मात्रा बनावें। ५ वर्ष के बालक के लिए ऐसी एक मात्रा रात्रि में दे दें। इससे केंचुए मरकर उत्सर्गित हो जाते हैं।

पलाशबीज ब्युटिई सिमेन (Buteae semen) I. P.

Family: Leguminosae (शिम्बी-कुल)

यह पलाश (ढाक) वृक्ष की पकी हुई फलियों के बीज होते हैं, जो औषध्यर्थ व्यवहृत होते हैं।

नाम—पलास के बीज, पलास (ढाक) पापड़ा (Palaspapra), पसदामा—हिं०; पलाशबीज—सं०; तुख्म पल: (पलास)—फा०; पलासपापड़ा—द०; पलसाची बीज—म०; पलासपापड़ो—गु०; ब्युटिआ सेमिना (Butea Semina)—ले०; ब्युटिआ सीड्स Butea seeds—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष।

वर्णन—पलाशबीज चपटे एवं वृक्काकार (Reniform) तथा १ से १॥ इंच लंबे, ½ से १ इंच चौड़े एवं मोटाई में लगभग १॥ से २ मिलिमिटर होते हैं। बीजावरण (Seed coat) बाह्यतः ललाई लिए गाढ़े भूरे रंग का एवं अत्यन्त पतला होता है। उसपर अनेक चमकदार सूक्ष्म रेखायें होती (Glossy-veined) हैं। यह आवरण देखने में किंचित् झुर्रीदार (Wrinkled) भी मालूम होता है। इनके अन्दर २ पीताभ रंग के बड़े बीज-पत्रक (Leaf-cotyledons) आवृत होते हैं। बीज के खातोदर धारा (Concave edge) के मध्य में नाभि (Hilun) होती है, जो स्पष्टतः प्रतीत होती है। बीजों में एक हल्की गंध होती है तथा स्वाद में ये किंचित् तिक्त होती हैं।

रासायनिक संघटन—बीजों में लगभग १८ प्रतिशत स्थिर-तैल (Fixed oil) एवं लगभग १८ प्रतिशत अल्ब्युमिनायड जातीय तत्व (Albuminoid substances) तथा शर्करा होती है।

वक्तव्य—नमी से बचाने के लिए बीजों को अच्छे डाट बन्द पात्रों में संग्रहीत करना चाहिए अन्यथा ये शीघ्र खराब हो जाते हैं। पुराने बीज निष्क्रिय होने से यथासम्भव नये बीजों का ही व्यवहार करना चाहिए।

योग (Preparations)—

१—**पल्विस ब्युटीई कम्पोजिटस** Pulvis Buteae Compositus (Pulv. But. Co.) I. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव ब्युटिआ Compound Powder of Butea)—अं०; पलाशबीज-चूर्ण

१ छटाँक (२ औंस) तथा वायविडंग चूर्ण १ छटाँक (२ औंस) लेकर दोनों को परस्पर खूब मिलादें। मात्रा—३० से ६० ग्रेन या २ से ४ माशा।

२—पल्विस ब्युटीई सेमिनम् (Pulvis Buteae Seminum) (Pulv. But. sem.) I. P. C. —ले०; पाउडर—ऑव ब्युटिश्रा सीड्स (Powder of Butea seeds) —अं०, पलासबीज चूर्ण-भाषा। मात्रा—१० से २० ग्रेन या १। माशा से २॥ माशा।

३—पलाशबीजादि चूर्ण (भैषज्यरत्नावली)—पलाशबीज, इन्द्रजौ, वायविडङ्ग, निम्बत्वक् (नीम की छाल) तथा चिरायता—इनके चूर्ण को बराबर बराबर मात्रा में लेकर खूब मिला दें। मात्रा—१॥ से ३ माशा। इसको जल से सुबह-शाम २ बार देना चाहिए।

२—स्फीतकृमिहर औषधियाँ।

(Anthelmintics. for Tape-Worm)

मेलफर्न (Male Fern) I. P., B. P.

Family : Polypodiaceae or Polypodium Family (हंसपाद्यादि-कुल)

पर्य्याय—एसपिडियम् Aspidium; फिलिक्स मास Filix Mas; मेलफर्न राइ-जोम Male Fern Rhizome; राइजोमा फिलिसिस मेरिस Rhizoma Filicis Maris।

प्राप्ति-साधन—यह ड्राइऑप्टेरिस फिलिक्समास Dryopteris Filix-mas (Linn.) Schott, नामक फर्नजातीय वनस्पति का पर्ण-मूल (Frond bases) एवं अग्र्य-कालिका (Apical bud) युक्त भौमिक काण्ड (राइजोम) होता है, जिसको सितम्बर-अक्टूबर मास में उखाड़कर, उससे जड़ों एवं अन्य निष्क्रिय भाग (Dead portion) को काटकर अलग कर दिया जाता है। और ग्राह्य भाग को सतर्कता पूर्वक शुष्क करके (ताकि राइजोम का आभ्यन्तर हरितवर्ण का ही रहे) संग्रहीत कर लिया जाता हैं।

उत्पत्ति-स्थान—इङ्गलैंड, जर्मनी, फ्रांस तथा भारतवर्ष।

वक्तव्य—(१) अमेरिका में गुणधर्म में उक्त वनस्पति के बिल्कुल समान होने के कारण इसके प्रतिनिधि रूप में इसकी दूसरी प्रजाति, जिसको ड्राइऑप्टेरिस मार्जिनालिस (Dryopteris marginalis (Linn.) Asa Gray.) कहते हैं, को भी व्यवहृत करते हैं। अतएव दोनों के भेद-ज्ञान के लिए प्रथम को व्यवसाय में यूरोपियन एस्पिडियम् (European Aspidium) तथा दूसरी को अमेरिकन एस्पिडियम् American Aspidium या मार्जिनल फर्न (Marginal Fern) कहते हैं।

(२) उक्त वनस्पति की जातीय संज्ञा "Dryopteris" व्युत्पन्न है यूनानी (Greek) से जिसके अर्थ हैं "शाहबलूत पर उगने वाला फर्न a fern growing on Oak." इसके प्रजातिक संज्ञा "Filix-Mas" का अर्थ होता है 'Male Fern या नर फर्न'। इसमें अलैंगिक-प्रजनन (Asexual fructification) होने के कारण ही सम्भवतः ऐसा नाम करण किया गया है।

वर्णन—यह एक फर्न (Fern) जातीय वनस्पति होती है, जिसमें तिर्यक्‌स्थित बहुवर्षायु भौमिक-काण्ड (Perennial rhizome) होता है जिसके आधार भाग से अनेक पतली-पतली जड़ें निकली होती हैं। इसी राइजोम से एक वर्षायु अनेक पत्तियाँ (Annual fronds) निकलती हैं, जो द्विपत्त्रवत् सपत्रकपत्र (Bipinnate compound leaves)
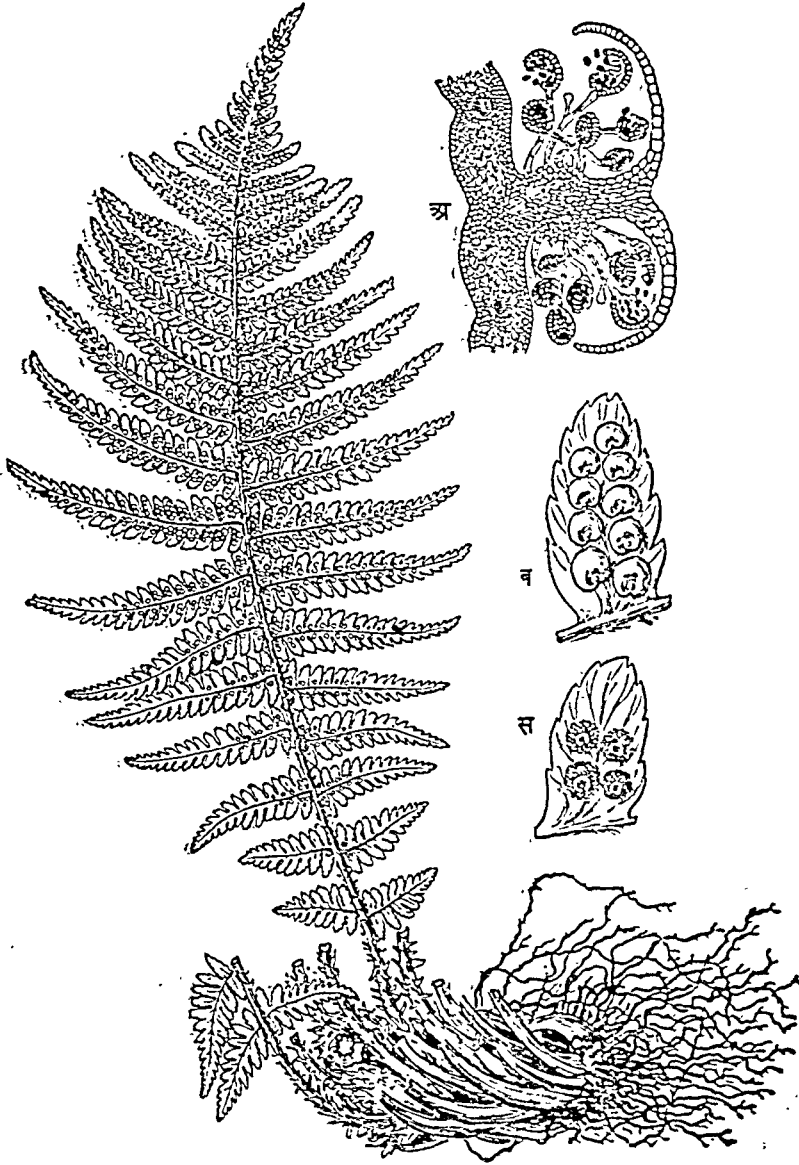
चित्र१७—मेलफर्न (Dryopteris filix-mas)

होती हैं। इसमें लगभग ४० युग्म पत्रक (Prenasy pinae) तथा पुनः प्रत्येक पत्रक में २०-३० युग्म प्रपत्रक (Pinnules) होते हैं। प्रत्येक प्रपत्रक (Pinnule) के अधस्तल पर ८-१० तक सोरस (Sorus-एक व०; sori-बहु व०) होते हैं। पर्णवृन्त (Petioles)

भूरे रंग के, अत्यन्त पतले एवं पारदर्शक शल्कपत्रों (Scales) द्वारा आवृत होते हैं। प्रत्येक सोरस पर एक अत्यन्त पतला वृक्काकार रोमावरण (Indusia) होता है। यह सोरस पत्ती की नाड़ी शाखाओं (Veinlet) से संलग्न रहते हैं।

वक्तव्य—सोरस Sorus—प्रत्येक सोरस में अनेक स्पोरंजिया (Sporongia) होते हैं। प्रत्येक स्पोरंजियम् (Sporongium—एक व०; Sporongia—बहु व०) में ४८-६४ स्पोर्स (Spores) होते हैं। जब यह स्पोर, सोरस से पृथक होकर भूमि पर गिरते हैं तो इन्हीं से नये पौधों की उत्पत्ति होती है।

राइजोम—बाजार में मेलफर्न के भूरापन लिए काले रंग के बेलनाकार (Cylindrical) टुकड़े आते हैं, जो लगभग २ से ६ इंच लंबे तथा व्यास में ३-४ सेंटीमीटर होते हैं। यह राइजोम पत्तियों की जड़ों (Frond-bases) से घने रूप से ढका होता है। राइजोम का अग्रिम सिरा नई पत्तियों (Young fronds) से आवृत होता है। इनमें विशिष्ट प्रकार का कलिकादल बंध (Vernation) पाया जाता है। प्रारम्भ में यह पत्तियाँ कागज की तरह लपेटी रहती हैं, जिनमें यह कुण्डलन पत्राग्र से प्रारम्भ होता है (Circinate Vernation)। यह फर्न जाति की वनस्पतियों की विशिष्ट एवं विभेदक रचना है। इसकी नई पत्तियों एवं अन्य पत्तियों के मूल एक भूरे रंग की रोमदार रचना से ढ़के होते हैं, जिनको रेमेन्टा (Ramenta; ramentum—एक व०) कहते हैं। तोड़ने पर मेलफर्न का राइजोम खट से टूटता है और अन्दर हरिद्वर्ण का श्वेतसारमय सारभाग दिखाई देता है। यह गंधहीन होता है, किन्तु स्वाद में तिक्त, अरुचिकारक एवं उत्क्लेशकारि होता है।

भारतीय मेलफर्न आकार में यूरोपीय मेलफर्न की अपेक्षा छोटा होता है।

रासायनिक संघटन—(१) फिलमेरोन (Filmarone)—यह ५% की मात्रा में पाया जाता है, जो जल में अविलेय, अल्कोहल् में अंशतः विलेय एवं ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में सुविलेय होता है। औषधि का सक्रिय तत्व यही है। जलांशन (Hydrolysis) द्वारा यह फिलिसिक एसिड (Filicic Acid) एवं एस्पिडिनोल (Aspidinol) नामक घटकों में विच्छिन्न होता है।

शील्डफर्न (Shield Fern) में (२) एल्बेस्पिडिन (Albaspidin) नामक पीतवर्ण का मणिभीय तत्व भी पाया जाता है; जो मेलफर्न में उपलब्ध नहीं होता। यह तीव्र कृमिनाशक (Vermifuge) होता है।

फिलिसिस पल्विस Filicis Pulvis (Filic. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड मेलफर्न Powdered Male Fern—अं०; मेलफर्न चूर्ण—हिं०। यह भूरे रंग का चूर्ण होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

आभ्यन्तर प्रयोग—विभिन्न प्रकार के स्फीत-कृमि (Tape-worm) पर घातक क्रिया के लिए यह विशिष्ट औषधि समझी जाती है। इस प्रकार टीनिया सोलियम् (Taenia Solium), टीनिया सेजिनेटा (T. Saginata) एवं डाइफाइलोबोथ्रियम् लेटम् (Diphyllobothrium latum) आदि विभिन्न प्रकार के स्फीत कृमियों के अतिरिक्त कभी कभी

इसका उपयोग आन्त्रीय एवं याकृतिक फ्लूक्स (Intestinal and liver flukes) के निर्हरण के लिए भी किया जाता है। साधारण मात्राओं में तो मेलफर्न से कोई अनिष्ट लक्षण नहीं प्रकट होते, किन्तु अधिक मात्रा में अथवा गाढ़े रूप में सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र-प्रणाली पर क्षोभक प्रभाव करता है, जिससे मिचली (Nansea) एवं वमन तथा अतिसार आदि पचन संस्थान के उपद्रव लक्षित होते हैं। गर्भिणी स्त्रियों में इसको प्रयुक्त करने से प्रत्याक्षिप्त रूप से गर्भाशय में आकुञ्चन प्रारम्भ होकर (Reflex uterine contractions) गर्भस्राव (abortion) भी हो सकता है। अधिक मात्राओं में प्रयुक्त होने पर सुषुम्ना पर पहले तो उत्तेजक प्रभाव करता है, किन्तु बाद में सुषुम्ना एवं सुषुम्ना शीर्ष (Medulla) दोनों ही पर अवसादक प्रभाव होता है। हृदय पर भी यह प्रत्यक्ष अवसादक (Depressant) प्रभाव करता है। शोषणोपरान्त औषधि का निस्सरण प्रधानतः वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ होता है।

सेवन-विधि—कृमिघ्न क्रिया के लिए मेलफर्न का प्रवाही घनसत्व या लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट (Liquid Extract) कप्स्यूल (Capsule) में रखकर दिया जाता है। अथवा इसको दूध में मिलाकर या बबूल के गोंदिया घोल (Mucilage of acacia) के साथ इसका इमल्शन बनाकर तथा उसमें एक्वाक्लोरोफार्म आदि रुचिकारक द्रव्य मिलाकर भी दे सकते हैं। औषधि प्रायः प्रातःकाल खाली पेट पर देनी चाहिए। इसके २–३ दिन पहले से रोगी को हल्का भोजन देना चाहिए तथा चर्बी की चीजें बिल्कुल नहीं लेनी चाहिए। औषधि सेवन के २–३ घण्टे बाद एक तीव्र विरेचन देना चाहिए। क्योंकि मेलफर्न से तो केवल कृमि मर जाते हैं, अतएव उनका निर्हरण (Expulsion) करने के लिए रेचन (Purgative) देना पड़ता है। एतदर्थ एरण्डतैल (Castor oil) का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए। इस कार्य के लिए लवण-विरेचन (Saline Purgative) यथा मैग० सल्फ० आदि अधिक उपयुक्त होते हैं। आवश्यकता पड़ने पर १ माह बाद उक्त चिकित्साक्रम दुहराया जा सकता है। बच्चों के लिए मात्रा प्रतिवर्ष के लिए १ मिनम् या बूंद (०·०६ मि० लि०) लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट। युवकों के लिए १ से २ ड्राम तक की मात्रा देनी पड़ती है। इसे २ मात्राओं में विभक्त करके दे सकते हैं।

प्रयोग-निषेध (Contra-indication)—वृद्ध, दुर्बल, गर्भवती, रक्ताल्पता एवं हृदय-वृक्क तथा यकृत के रोगियों में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् फिलिसिस Extractum Filicis (Ext. Filic.) I. P., B. P.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव मेलफर्न Extract of Male Fern—अं०। पर्याय एस्पिडियम् ओलियोरेजिन Aspidium Oleo-resin। मेलफर्न का प्रवाही घनसत्व—हिं०। इसमें २५% (W—W) फिलिसिन होता है। यह गाढ़े हरे रंग का गाढ़ा (Thick) द्रव होता है, जिसमें रखा रहने पर कभी कभी नीचे दानेदार प्रक्षेप बैठता है। प्रयोग के पूर्व इसको खूब हिलाकर लेना चाहिए। मात्रा—४५ से ९० मिनम् या बूंद (३ से ६ मि० लि०)।

२—कैप्स्यूली फिलिसिस (Capsulae Filicis)—ले०; कैप्स्यूल्स ऑव एक्स्ट्रॅक्ट ऑव मेलफर्न Capsules of Extract of Male Fern—अं०। मात्रा—४५ से ९० मिनम्। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो १५ मिनम् के कैप्स्यूल देने चाहिए।

अन्य योग :—

एक्स्ट्रॅक्टम् फिलिसिस लिक्विडम्	१½ ड्राम
म्युसिलेज ऑव अकेशिया	१½ ड्राम
एका सिन्नेमन	१½ ड्राम

सबको मिलाकर १ मात्रा। रात्रि में सोते समय ऐसी १ मात्रा दें। प्रातः तीव्र विरेचन (लवण विरेचन) देना चाहिए।

पॅलीटिएरीनी टेनास (नॉट्-ऑफिशल)

Pelletierinae Tannas (Pellet. Tann.)

Family : Punicaceae (दाड़िमादि-कुल)

नाम—पॅलीटिएरीनी टेनास Pelletierinae Tannas—ले०। पलीटिएरीन-टेनेट Pelletierine Tannate—अं०।

प्राप्तिसाधन—यह अनार (प्युनिका ग्रेनेटम् Punica granatum, Linn.) के मूल एवं तने के वल्कल में पाये जाने वाले क्षारामों के टैनेट्स का संमिश्रण होता है।

स्वरूप—किंचित् पीताभ, अनिश्चित रूपीय चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में कषाय होता है। विलेयता—जल में तो अंशतः किन्तु अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है।

असंयोज्य द्रव्य—क्षार, चूर्णोदक (लाइम वाटर) तथा धात्वीय लवण (Metallic Salts)।

मात्रा—२ से ८ ग्रेन या ०.१२ से ०.५ ग्राम।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—

पॅलीटिएरीन भी एक उत्तम स्फीतकृमिनाशक औषधि है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने से इससे भी वमन तथा रेचनादि उपद्रव पैदा होते हैं। पॅलीटिएरीन सल्फेट का शोषण आमाशय से शीघ्रतापूर्वक होने से, आन्त्रों में कृमियों पर इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं होता। दूसरे अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर अनेकानेक उपद्रव यथा दृष्टिह्रास (Dimness of vision), शिरोभ्रम (Giddiness) पेशीदौर्बल्य एवं ऐंठन (Twitchings) आदि भी पैदा करता है। टैनेट के प्रयोग से ये कुप्रभाव नहीं होते। औषधि का प्रयोग रिक्तामाशय पर करना चाहिए तथा पहले एरण्डतैल अथवा अन्य उपयुक्त मृदुरेचन द्वारा कोष्ठशुद्धि कर लेनी चाहिए। औषधि लेने के पश्चात् भी विरेचन (तीव्र विरेचन) देना चाहिए। अधिक काल पर्यन्त रखने से औषधि वीर्यहीन हो जाती है अतएव सदैव नवनिर्मित औषधि का प्रयोग करना चाहिए। यदि उपरोक्त औषधि (टैनेट) उपलब्ध न हो तो उसके अभाव में कच्ची औषधि के अभिनवकषाय का प्रयोग भी स्फीतकृमिनाशन (Taeniafuge) के लिए किया जा सकता है।

३—अंकुशमुखकृमिनाशक औषधियाँ—
(Anthelmintics for Hook-worm)
कार्बनियाई टेट्राक्लोराइडम् (B. P.)

रासायनिक-संकेत C $cl_४$.

नाम—कार्बनियाइ टेट्राक्लोराइडम् Carbonei Tetrachloridum (Carbon-Tetrachlor.)—ले०। कार्बन टेट्राक्लोराइड Carbon Tetrachloride—अं०। यह क्लोरीन व कार्बन-डाइसल्फाइड की परस्पर क्रिया से प्राप्त होता है।

स्वरूप—यह एक स्वच्छ, रंगहीन तथा उत्पत् द्रव होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती है। स्वाद में जलन का अनुभव होता है। ज्वलनशील नहीं होता। ज्वाला के सम्पर्क से यह वियोजित हो जाता है और उस समय इससे उग्र गंध आती है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय होता है; किन्तु सॉल्वेंट ईथर तथा डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् में मिश्रित होता है।

मात्रा—३० से ६० मिनम् या २ से ४ मि० लि०।

कैप्स्यूल्स ऑव कार्बन टेट्राक्लोराइड Capsules of Carbon Tetrachloride, B. P.—अं०। Flexible gelatin capsules। मात्रा—२ से ४ मि० लि०। मात्रा निर्देश न होने पर १ मि० लि०।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

कार्बन टेट्राक्लोराइड सामान्यकायिक संज्ञाहर भी होता है। इसमें अशुद्धि के रूप में कार्बन डाइसल्फाइड पाया जाता है, तथा रक्तवहसंस्थान पर अवसादक प्रभाव करने के कारण यह क्लोरोफॉर्म की अपेक्षा दुगुना विषैला होता है। अतएव इस रूप में इसका प्रयोग नहीं किया जाता। विभिन्न प्रकार से इसका व्यावहारिक उपयोग किया जाता है, यथा रबर एवं वसा विलायक के रूप में, विभिन्न रङ्गों में तथा कपड़ों में कीड़े न लगें इसके लिये भी इसका उपयोग किया जाता है।

अंकुशमुखकृमिनाशन के लिए यह एक सस्ती एवं उत्तम औषधि है। इसके अतिरिक्त सूत्रकृमि के उत्सर्ग में भी यह सहायक होती है। किसी-किसी के मत से यह स्फीतकृमि में भी उपयोगी होता है। इतना तो निर्विवाद कहा जा सकता है, कि अंकुशमुखकृमि उपसर्ग में यह औषधि बहुत उपयोगी होती है। इससे कृमि मृत एवं शिथिलावस्था में उत्सर्गित होते हैं।

आमाशय में औषधि में कोई परिवर्तन नहीं होता, तथा इसी रूप में यह आन्त्रों में पहुँचता है। क्षुद्र एवं स्थूलांत्र में अंशतः इसका शोषण भी हो जाता है। अल्कोहल् एवं मेद प्रधान आहार सेवन करने से इसका शोषण और भी सुगमता से होता है। शोषित औषधि का उत्सर्ग प्रधानतः फुफ्फुस द्वारा होता है।

सस्ती होने से समुदाय चिकित्सा (Mass treatments) के लिए यह औषधि उपयुक्त होती है। विषाक्त प्रभावों के प्रकट होने की सम्भावना अधिक रहती है, यही इसमें दोष है। यकृत के लिए भी यह तीव्र विषाक्त औषधि है।

विषाक्त प्रभाव—विषाक्तता होने पर शिरः शूल, उत्क्लेश, वमन, आंत्रिक रक्तस्राव (Malaena), कम्प (Tremor), लासक (Tetany) प्रमीलकता (Narcosis) तथा आक्षेप आदि लक्षण प्रगट होते हैं। आशुमृतक परीक्षा में यकृत, वृक्क तथा अन्य अङ्गों के अन्तःसार में मेदापजनन (Fatty degeneration) पाया जाता है।

अतएव विषाक्त प्रभाव के निवारण के लिए इस औषधि का प्रयोग मद्यसारसेवियों (Alcoholics) में नहीं करना चाहिए। अन्य व्यक्तियों में भी औषधि प्रयोग के बाद तत्काल अल्कोहल् या आहार का सेवन नहीं कराना चाहिए। औषधि प्रयोग के पूर्व १–२ दिन १ औंस की मात्रा में ग्लूकोज का सेवन करने से यकृत विकृतियों की सम्भावना बहुत-कुछ कम हो जाती है। जिन रोगियों में केल्सियम् के अभाव की आशंका हो उन्हें औषधि प्रयोग के पूर्व केल्सियम् तथा पैराथायरायड का सेवन कराना चाहिए। इससे कम्पादि केल्सियम्अभाव जन्य लक्षणों का प्रतिरोध हो जाता है। अमोनियम क्लोराइड से भी यही कार्य होता है।

प्रयोग-विधि—युवकों के लिए साधारणतः २ से ३ सी० सी० (३० से ४५ मिनम्) औषधि प्रयुक्त की जाती है। प्रायः औषधि को कई मात्राओं में विभक्त करके प्रयुक्त किया जाता है। इसका प्रयोग प्रायः जिलेटिन कैप्स्यूल में अथवा जल में विलयन बनाकर करना चाहिए। अत्यधिक शोषण के निवारण के लिए किसी-किसी के मत में औषधि को एक ही मात्रा में प्रयुक्त करना श्रेष्ठतर होता है। बच्चों के लिए १५ वर्ष तक प्रत्येक वर्ष के लिए २ मिनम् के हिसाब से औषधि देनी चाहिए। जैसे यदि १० वर्ष के बालक को औषधि देना है तो उसके लिए २० मिनम् औषधि पर्याप्त होगी। प्रायः रेचन औषधि (मैगनीसियम सल्फेट) का प्रयोग भी औषधि के साथ ही किया जाता है तथा इसके पूर्व मृदुरेचन की आवश्यकता नहीं होती। औषधि प्रयोग के ३–४ घंटे बाद तक आहार नहीं देना चाहिए। कभी-कभी इसका प्रयोग ऑयल ऑव चिनोपोडियम् के साथ किया जाता है। इससे दोनों औषधियों को अल्प मात्रा में संयुक्त करके देने से भी वही कार्य हो जाता है, तथा विषाक्तता की सम्भावना भी कम रहती है। इसके लिए कार्बन टेट्राक्लोराइड ४५ बूंद, १५ बूंद ऑयल ऑव चेनोपोडियम् के साथ देना चाहिये। रेचन के लिए औषधि प्रयोग के पश्चात् कालान्तर से लवण विरेचन का प्रयोग करें। जब अंकुशमुखकृमि के साथ-साथ गण्डूपदकृमि का भी उपसर्ग हो तो पहले ऑयल ऑव चेनोपोडियम् का सेवन करें और पश्चात्तर से कार्बन टेट्राक्लोराइड का प्रयोग करें। दूध के साथ इसका उत्तम इमल्शन बनता है और इसी रूप में इसका प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। इसके सेवन के समय मुख में जलन का भी अनुभव नहीं होता। तेलों के साथ इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि औषधि की पुनरावृत्ति करनी हो तो कम से कम एक पक्ष के बाद ही दूसरी मात्रा दें।

ओलियम् चेनोपोडिआइ (चेनोपोडियम् का तेल) I. P., B. P.

Family : Chenopodiaceae (वास्तुकादि-कुल)

नाम—ओलियम् चेनोपोडियाइ Oleum Chenopodii (Ol. Chenopod.)—लै०; ऑयल ऑव चेनोपोडिअम् Oil of Chenopodium, अमेरिकन वर्मसीड-ऑयल American Worm-seed Oil—अं०; सुगन्धवास्तुक तैल—सं०; चेनोपोडियम् का तैल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—ऑयल ऑव चेनोपोडियम् उत्पत् तैल होता है, जो चेनोपोडियम् एम्ब्रोसिवायडीज नामक पौधे (Chenopodium ambrosioides var. anthelminticum. (Linn.) Asa Gray.) के पुष्प एवं फल युक्त भागों से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह प्रायः अमेरिका से आता है।

वक्तव्य—'Chenopodium चेनोपोडियम्' शब्द का अर्थ होता है "Goose-foot अर्थात् बतख का पैर"। चूंकि इस जाति के पौधों के पत्र-तट का कटाव ऐसा होता है, कि इसकी रूप-रेखा (Outline) बहुत-कुछ बतख के पैर से मिलता-जुलता है। अतः ऐसा नाम करण किया गया है।

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष और अमेरीका। (भारत में राँची, गंगातट पर देहरादून तथा पुर्निया के आसपास इसके क्षुप पाये जाते हैं।)

वर्णन—इसके पौधे ४-५ फीट ऊँचे तथा अनेक शाखाओं से युक्त होते हैं। काण्ड रेखांकित (Striate) होते हैं, तथा सम्पूर्ण पौधे से कपूर की तरह एक तीक्ष्ण सुगन्धि आती है। इसीलिए इसको 'सुगन्ध वास्तुक' नाम दिया गया है। वैसे पौधा साधारण बथुआ से मिलता-जुलता है। पत्तियाँ प्रायः १॥-३॥ इंच लम्बी तथा ½-१½ इंच चौड़ी होती हैं। आकार में यह आयताकार-भालाकार (Oblong-lanceolate), तीक्ष्णाग्र (Acute) या कभी कुण्ठिताग्र (Obtuse) होती हैं। पत्र-तट लहरदार-दन्तुर (Sinuate-dentate) होता है। ऊपरी पत्तियों का तट अखण्डित (Entire) भी हो सकता है। पत्राधार उत्तरोत्तर कम चौड़ा होता हुआ पर्ण-वृन्त (Petiole) में मिल जाता है, जो बहुत छोटा होता है। पुष्प छोटे होते तथा मञ्जरियों (Panicles) में निकलते हैं, जो शाखाओं पर स्थित होती हैं या पत्र-कोणों (Axillary) से निकलती हैं। फल छोटे-छोटे होते तथा पुट पत्रों (Sepals) से आवृत होते हैं। तैल प्राप्त करने के लिए जब पुष्प एवं फल युक्त शाखाग्र हरे रहते हैं, तभी इनका संग्रह कर लिया जाता है और तुरंत जल से परिस्रवण कर तैल प्राप्त कर लिया जाता है। उक्त पौधे के काण्ड, पत्र, पुष्प एवं फल (विशेषतः फल भित्ति Pericarp एवं गर्भाशय (Ovary) एक प्रकार की रोम-ग्रंथियों (Glandular-hairs) से आवृत होते हैं। तैल प्रायः इन्हीं में होता है। तैल (Oil of Chenopodium)—यह रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें एक विशिष्ट गंध पाई जाती है। स्वाद में तिक्त होता है तथा जिह्वा पर जलन (Burning) का अनुभव होता है। १ भाग ३ से १० भाग अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है। **मात्रा**—३ से १५ मिनम् (बूंद) या ०·२ से १ मि० लि०।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

इसका सेवन करने पर मुख में तीक्ष्णता एवं जलन का अनुभव होता है। आमाशय में भी उष्णता का अनुभव होता है तथा कभी कभी उत्क्लेश एवं वमनादि लक्षण भी उत्पन्न होते हैं। आन्त्रों में क्षिप्रता पूर्वक इसका शोषण होता है तथा शोषणोपरान्त हृदय एवं श्वसन पर यह अवसादक प्रभाव करता है। रक्तभार भी गिरजाता है। यह एक उत्तम एवं निश्चित अंकुश-कृमि (Ankylostomum duodenale) नाशक औषधि है। गण्डूपदकृमि पर भी यह घातक प्रभाव करता है।

कभी-कभी इसका प्रयोग अमीबिक प्रवाहिका में भी किया जाता है। जब इमेटिन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता तो ऐसी स्थिति में यह विशेष उपयोगी होता है।

साधारणतः विपाक्त प्रभाव बहुत कम होता है। अत्यधिक मात्रा के कारण कभी-कभी विपाक्त प्रभाव होने से उत्क्लेश, वमन, उदरशूल, कानों में शब्द का होना, तथा बाधिर्य आदि लक्षण प्रगट होते हैं। तीव्रावस्था में सन्यास एवं आक्षेपादि होता तथा श्वसनभेद होने से मृत्यु तक हो जाती है। दुर्बल व्यक्तियों में इन लक्षणों के पैदा होने की सम्भावना अधिक होती है। अन्यथा यदि रोगी के बलाबल एवं मात्रादि का समुचित विचार करके इसका प्रयोग किया जाय, तो अन्य औषधियों की अपेक्षा यह अधिक निरुपद्रव है।

औषधि का उत्सर्ग विशेषतः फुफ्फुस तथा वृक्कों द्वारा होता है, अतएव अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर शुक्लिमेह (Albuminuria) आदि के उत्पन्न होने की भी आशंका हो सकती है।

निषेध (Contra-indications)—गर्भिणी स्त्रियों, पुराने हृद्रोगियों एवं चिरकालज वृक्क शोफ में इसका प्रयोग सतर्कता से करना चाहिए। हृदय, यकृत एवं वृक्क की क्रिया जब विकृत हो तो यथासम्भव औषधि का प्रयोग अल्प मात्रा में करना चाहिए।

प्रयोग-विधि—जिस दिन औषधि का प्रयोग करना हो, उसके पूर्व शाम को लघु आहार देना चाहिए, तथा औषधि का प्रयोग प्रातः काल १–१ घण्टे के अन्तर से ८ बूंद की मात्रा में ३ बार करना चाहिए। इसके लिए या तो औषधि को शर्करा के साथ अथवा जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर प्रयुक्त करें। ३–५ दिन के अन्तर से चिकित्सा की कई बार पुनरावृत्ति की जाती है, जब तक मल में कृमियों की उपस्थिति नास्त्यात्मक न हो जाय। ११ वर्ष तक के बालकों में प्रत्येक वर्ष के लिए १ मिनिम् के अनुपात से औषधि प्रयुक्त करनी चाहिए। युवकों के लिए सामान्य मात्रा २० से ३० बूंद होती हैं। इसका प्रयोग सिरप ऑव ग्लूकोज के साथ भी किया जा सकता है। औषधि प्रयोग के पूर्व तो विरेचन की आवश्यकता नहीं होती, किन्तु पश्चात् में अवश्य विरेचन कराना चाहिए। इससे एक तो औषधिका शोषण कम होता है, दूसरे मल एवं मृत कृमियों का उत्सर्ग होने से कोष्ठ शुद्धि हो जाती है। विरेचन के लिए प्रायः मैगसल्फ का प्रयोग होता है, किन्तु एरण्ड तैल का भी प्रयोग किया जा सकता है।

बच्चों में केंचुवे का उपसर्ग होने पर ५–१० बूंद की मात्रा में दिन में ३ बार औषधि दें। दूसरे दिन भी इसी प्रकार पुनः ३ बार औषधि दें। रेचन के लिए एरण्ड तैल का प्रयोग करें।

टेट्राक्लोरेथीलिनम् (I. P., B. P.)

Tetrachloroethylenum (Tetrachloroaethylen.)

परक्लोरेथिलीन (Perchlorethylene) या टेट्राक्लोरेथीलीन (Tetrachloroethylene) एक रंगहीन द्रव होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गन्ध पाई जाती है। जल में तो यह अविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल (९०%) में विलेय होता है। सालवेंट ईथर एवं तैलों में भी मिश्रित (Miscible) होता है।

मात्रा—१५ से ४५ मिनिम् या १ से ३ मि० लि० (एक मात्रा में)।

गुण एवं प्रयोग।

यह भी कार्बनटेट्राक्लोराइड की भाँति अंकुशमुख कृमिनाशन के लिए एक उत्तम एवं विश्वसनीय औषधि है, किन्तु उसकी अपेक्षा यह कम विषैला होता है तथा इसकी क्रिया अधिक निश्चित होती है। रोगी को विस्तरे में रहना चाहिए, क्योंकि इससे कभी-कभी शिरोभ्रम (Giddiness) की शिकायत हो जाती है। इसका प्रयोग ३ दिन तक प्रत्येक दिन १५ बूंद की मात्रा में १–१ घण्टे पर ३ बार करना चाहिए। तीसरे दिन अन्तिम मात्रा देने के ३ घण्टे पश्चात् लवण विरेचन (सोडियम् सल्फेट) देना चाहिए। रोगी को विस्तरे में रहना तथा आहार में प्रचुर मात्रा में दुग्ध का सेवन करना चाहिए। चिकित्सा के समय अल्कोहल् का प्रयोग परित्याज्य होना चाहिए। ऑयल ऑव चिनोपोडियम् आदि की भाँति इसका सेवन भी जिलेटिन कैपस्यूल में रखकर करना चाहिए।

केंचुवे (Ascaris) में प्रातः काल १० बूंद की एक मात्रा दें तथा आधे घण्टे के बाद तीव्र लवण-विरेचन देना चाहिए। औषधि सेवन के पूर्व दिन लघु आहार का सेवन करें। रेचन सेवन करने के उपरान्त जब तक रेचन न हो जाय आहार न लें।

स्फीत-कृमि (T. saginata) में भी यह लाभप्रद होता है। जब फिलिक्स मास का प्रभाव नहीं होता, तो ऑयल ऑव चेनोपोडियम् के साथ यह औषधि प्रयुक्त की जाती है।

हेक्सिलरिसॉर्सिनाल Hexylresorcinol

(Hexylresorcin.) I. P., B. P. C. (ले०, अं०)।

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_{18}O_2$

पर्याय—केप्रोकोल (Caprokol)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 4-hexylresorcinol होता है, जिसमें कम से कम ९८ प्रतिशत हेक्सिलरिसार्सिनॉल ($C_{12}H_{18}O_2$) होता है। हेक्सिलरिसॉर्सिनोल सफेद या पीली आभा लिए सफेद (Yellowish-white) सूच्याकार क्रिस्टल्स के रूप में प्राप्त होता है, जिनमें एक हल्की गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में तीक्ष्ण (Sharp) एवं कषैला (Astringent) होता है। जिह्वा पर रखने से सुन्नता-सी (Numbness) मालूम होती है। हवा एवं प्रकाश में खुला रहने से इसका रंग विकृत होकर हल्का भूरापन लिए गुलाबी आभायुक्त (brownish.pink tint) हो जाता है।

विलेयता—जल में तो यह केवल थोड़ा-थोड़ा घुलता है (Slightly Soluble); किन्तु अल्कोहल्, मेंथोल, ग्लिसरिन, ईथर, क्लोरोफॉर्म, बेंजीन तथा अन्य वानस्पतिक तेलों (Vegetable oils) में सुविलेय (Freely Soluble) होता है।

संरक्षण (Storage)—हेक्सिलरिसार्सिनॉल को अच्छी तरह डाटबन्द एवं प्रकाश-अप्रवेश्य पात्रों (Tight light resistant Containers) में रखना चाहिए।

मात्रा। (कृमिघ्न मात्रा)—०·१२ से १ ग्राम (२ से १५ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

स्थानिक प्रयोग से हेक्सिलरिसार्सिनाल साधारण एन्टिसेप्टिक प्रभाव करता है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र पर साधारण क्षोभक (Irritant) प्रभाव करता है। लगभग तृतीयांश औषधि आंतों द्वारा शोषित होती है, जो अन्त में मूत्रमार्ग से उत्सर्गित होती है। उत्सर्ग के समय यह मूत्र प्रणाली पर साधारण एन्टिसेप्टिक प्रभाव भी करता है। जो भाग (⅔) आंतों से शोषित नहीं होता, उसका निस्सरण मल के साथ होता है। और इस प्रकार यह आंतगत अनेक विकारी कृमियों पर घातक (Anthelmintic) प्रभाव करता है।

हेक्सीरिसार्सिनॉल अंकुशमुखकृमि (Hook worm), केंचुए (Ascaris) एवं सूत्रकृमि या चूर्णकृमि (Thread-worm), प्रतोदकृमि (Whip worm; trichuris trichiura) एवं हिमेनोलेपिस नाना नामक स्फीतकृमि (hymenolepis nana) के उपसर्ग में विशिष्ट औषधि समझी जाती है। औषधि महँगी होने के कारण सामूहिक चिकित्सा (Mass treatment) के लिए उपयुक्त नहीं है। कृमिघ्न प्रभाव के लिये इसको जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर खाली पेट प्रातःकाल देते हैं। २–३ घंटे के बाद तीव्र विरेचन (विशेषतः लवण-विरेचन) दिया जाता है। दिन भर कुछ खाने को नहीं देना चाहिए। पूर्व शाम को भी खिचड़ी आदि हल्का खाना दें और रात्रि में हल्का विरेचन दिये रहें। युवा व्यक्तियों एवं १० वर्ष के ऊपर के लड़कों के लिए मात्रा ८ ग्रेन से १५ ग्रेन तक दी जाती है। १० वर्ष से कम आयु के बालकों के लिए १½ ग्रेन (०·१ ग्राम) प्रतिवर्ष के हिसाब से देना चाहिए। चूर्णकृमि में मौखिक सेवन के साथ-साथ हेक्सिलरिसार्सिनॉल की वस्ति (०·१% enema) भी देनी चाहिए। इसको देने के पहले गरम पानी तथा साबुन के एनिमा द्वारा मलाशय की शुद्धि कर ली जाती है। मुखद्वारा सेवन के लिए औषधि जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर दी जाती है। मुँह में लगने पर जलन होती है।

(ऑफिशल योग)

१–पिल्युला हेक्सिरिसार्सिनोलिस Pilula Hexylresorcinolis (Pil. Hexylresorcin.) I. P.—ले०; पिल्स ऑव हेक्सिल रिसार्सिनोल–अं०। हेक्सिरिसार्सिनोल की गोली–हि०। इन गोलियों पर जिलेटिन का कड़ा आवरण Tough gelatin Coating) होता है। मात्रा—९ से १५ ग्रेन।

४—सूत्रकृमिहर औषधियाँ:—

(Anthelmintics for thread worm)

इस कृमि का स्वाभाविक निवास-स्थान उण्डुक (सीकम Coecum) है। स्त्री-कृमि रात्रि में बृहदन्त्र से होकर गुद (Anus) में आकर उसके चारों ओर के परिसरीय क्षेत्र में अंडे देती है, जिससे वहाँ खुजली मालूम होती है। बच्चों में इसका उपसर्ग बहुत होता है। बोल-चाल में उक्त व्याधि को 'चूना लगना चूर्णकृमि' भी कहते हैं। इसके उपसर्ग से प्रायः और कोई विकार नहीं होता, चूर्णकृमि-हरण के लिए प्रायः औषधीय घोलों की वस्ति (Enema)

ema) दी जाती है। किन्तु इससे केवल उन कृमियों का ही नाश होता है, जो मलाशय या वृहदन्त्र कुण्डलिनी (Sigmoid Colon) में होते हैं। उसके ऊपर प्रायः वस्तिका प्रभाव नहीं होता। इसलिए मुख द्वारा औषधि सेवन की भी आवश्यकता पड़ती है। पुनरुपसर्ग (Reinfection) की सम्भावना इसमें अधिक रहती है।

जेन्शियन वॉयलेट (I. P., B. P.)

नाम—वॉयोला क्रिस्टेलिना Viola Crystallina--ले०; क्रिस्टल वायलेट, मेडिसिनल जेन्शियन वायलेट—अं०; मेथिल रोसेनिलीन क्लोराइड Methyl rosaniline Chloride—रासायनिक।

वर्णन—इसके हरिताभ-बैंगनी रंग के (Greenish-bronze) मणिभ (Crystals) होते हैं अथवा चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—१५० भाग जल में तथा ३० भाग ग्लिसरिन में विलेय होता है। अल्कोहल् (६०%) में सुविलेय होता है। क्लोरोफॉर्म में भी घुलजाता है। मात्रा—$\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन (१० से ३०मि०ग्रा०)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

जेन्शियन वायोलेट सूत्र-कृमि के निर्हरण के लिए एक उत्तम औषधि है। युवकों के लिए साधारण मात्रा $\frac{1}{2}$ से १ ग्रेन (३० से ६० मिलिग्राम) है। औषधि का सेवन प्रतिदिन ३ बार भोजन के पूर्व ८–१० दिन तक करना चाहिए। इसके बाद एक सप्ताह तक औषधि बन्द रखना चाहिए। एक सप्ताह के बाद यदि आवश्यकता हो तो ८ दिन तक पुनः पूर्व क्रम से औषधि सेवन करें। बालकों के लिए साधारण दैनिक मात्रा $\frac{1}{6}$ ग्रेन है। पूर्ण दैनिक मात्रा को ३ मात्राओं में विभक्त करके देना चाहिए। युवकों के लिए इसका सेवन साधारण टिकिया या गोली के रूप में परन्तु बालकों में एन्टेरिक कोटेड (Enteric-Coated) टिकिया या गोली का प्रयोग करना चाहिए।

कभी-कभी जेन्शियन वायोलेट के सेवनोपरान्त उत्क्लेश (Nausea), वमन (Vomiting) तथा अतिसार (Diarrhoea) का उपद्रव शुरू हो जाता है।

प्रयोग-निषेध—यदि सूत्रकृमि के साथ-साथ रोगी में केंचुए (Round-worm) का भी उपसर्ग हो; तथा हृदय, यकृत एवं वृक्क-रोगों का उपद्रव (Complication) होने पर; शराबियों (Alcoholics) को तथा आमाशयान्त्र प्रणाली के रोगों में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

व्यावसायिक योगः—

(१) मेरोक्सिलन नार्मल (लड़कों के लिए) Meroxylan Normal तथा मेरोक्सिलन फोर्ट० (युवा के लिए) Meroxylan Fort (Wander)—इसकी शर्करावगुण्ठित गोलियाँ (Sugar-Coated Pills) या ड्रेजा (Dragees) आती हैं। प्रत्येक गोली में ०·०२ ग्रान जेन्शियन वायोलेट होता है।

डाइफिनेनम् (Diphenanum) I. P., B. P.

(ब्यूटोलॉन Butolan)

रासायनिक संकेत—$C_{14}H_{13}O_2N$.

वर्णन—श्वेत वर्ण या हल्के क्रीम रंग का गंध एवं स्वाद रहित मणिभीय चूर्ण होता है। यह जल में प्रायः बिल्कुल अविलेय (Insoluble) किन्तु अल्कोहल् (६०%) में अंशतः विलेय होता है। मात्रा (B. P. Dose)—८ से १५ ग्रेन या ०.५ से १ ग्राम।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

ब्यूटोलॉन भी सूत्रकृमिहरण के लिए एक परमोपयुक्त औषधि है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव कृमियों पर पड़ता है, जिससे ५ मिनट के अन्दर ही उनका विनाश हो जाता है। इसके लिए युवकों को ८ ग्रेन या ०.५ ग्राम की टिकिया दिन में ३ बार—७ दिन तक देनी चाहिए। इसके बाद कॉस्टर ऑयल (रेड़ी का तेल) का रेचन देना चाहिए जिससे मरे कृमि उत्सर्गित हो जाते हैं। यदि आवश्यकता हो तो १ सप्ताह के अन्तर से पुनः औषधि की पुनरावृत्ति की जा सकती है। १० वर्ष से ऊपर वालों के लिए तो उक्त मात्रा ही उपयुक्त होती है, किन्तु इससे कम आयु के बालकों में उम्र के हिसाब से मात्रा कम करके देना चाहिए। उक्त औषधि के मौखिक सेवन के साथ-साथ प्रतिदिन क्वाशिया के क्वाथ की वस्ति भी देनी चाहिए।

पिपराजीन साइट्रेट (Piperazin Citrate)

(नॉट्-ऑफिसल)

पर्याय—एन्टीपार (Antepar)।

वर्णन—इसके सफेद रंग के क्रिस्टल होते हैं, जो हवा में खुले रहने पर भी स्थायी (Stable) होते हैं; अर्थात् विकृत नहीं होते और आर्द्रता को भी नहीं सोखते (Non-hygroscopic)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—पहले पिपराजीन का प्रयोग मुख्यतः वातरक्त (Gout) में किया जाता था, क्योंकि मुख द्वारा सेवन किए जाने पर शोषणोपरान्त यूरिक एसिड का विलयन करता है। अब पिपराजीन का प्रयोग सूत्रकृमि अर्थात् चूर्णकृमि एवं केंचुए के उपसर्ग (Threadworm and round worm infectations) में किया जाता है। मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्र से क्षिप्रतापूर्वक इसका शोषण होता है। शोषणोपरान्त कुछ अंश शरीर में वियोजित होकर नष्ट हो जाता है, शेष वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। सूत्रकृमि के लिए बालकों एवं युवाव्यक्ति दोनों में ४० से ५० मि० ग्रा० ($\frac{2}{3}$ से $\frac{5}{6}$ ग्रेन) प्रति किलोग्राम शरीर भार के अनुसार दैनिक मात्रा (Daily dose) निर्धारित की जाती है। इसको २ मात्राओं में विभक्त करके दिया जाता है। किन्तु दैनिक मात्रा ३ ग्राम से अधिक किसी भी हालत में नहीं दी जाती। साधारणतया युवा व्यक्ति को प्रतिदिन १ ग्राम प्रातः एवं १ ग्राम सायं करके दिन में २ बार दिया जाता है। इस प्रकार का चिकित्साक्रम ७

दिनों का होता है। १ सप्ताह के अन्तर से इसी प्रकार का १ कोर्स और दिया जाता है। बालकों में १५ पौंड (७½ सेर) भार तक के बच्चे को प्रतिदिन २५० मि० ग्रा० की १ मात्रा, १५ सेर भार तक के बालक को २६० मि० ग्रा० की मात्रा प्रतिदिन २ बार तथा ३० सेर के ऊपर के भार वाले बालकों के लिए चिकित्साक्रम युवा व्यक्ति की ही भांति होती है।

केंचुए (Round worm) के उपसर्ग में भी मात्रा पूर्वोक्त की ही भांति होती है, किन्तु इसके लिए ३ से ५ दिन का चिकित्साक्रम पर्याप्त होता है। सामूहिक चिकित्सा के लिए एकमात्रिक चिकित्सा क्रम (Single dose therapy) का भी अवलम्बन किया जा सकता है, किन्तु अनेक रोगियों में पुनः औषधि दुहराने की भी आवश्यकता हो सकती है। औषधि का सेवन प्रायः मुख द्वारा ही किया जाता है, और अन्य कृमिघ्न औषधियों की भांति पहले रेचन कराकर पेट साफ करने की अथवा औषधि सेवनोपरान्त रेचन देने की आवश्यकता नहीं होती। औषधीय मात्राओं (Therapeutic doses) में प्रायः कोई विषाक्तता नहीं होती किन्तु मात्राधिक्य से कभी-कभी वमन, अतिसार, दृष्टिविकार, एवं त्वचा में शीतपित्त की भांति चकत्ते उठना आदि उपद्रव हो सकते हैं।

प्रयोग की सुविधा के लिए एन्टीपार का एलिक्जिर भी आता है। इसमें १ फ्लुइड ड्राम में ५०० मि० ग्रा० पिपराजीन होता है। शिशुओं (Infants) के लिए चाय की ४ चम्मच भर तथा बालकों एवं युवा के लिए ६ चम्मच भर एलिक्जिर प्रतिदिन देना चाहिए।

फेनोथियाजीन (Phenothiazine)

(नॉट् ऑफिशल)

पर्याय—थायोडाइफेनिलामीन (Thiodiphenylamine); फेनोविस Phenovis।

यह नीबू के रंग का होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है तथा जो स्वादहीन होता है। यह अत्यन्त विषैली औषधि है, अतएव मनुष्यों में प्रयुक्त होने के लिए बहुत उपयुक्त नहीं है। इसका व्यवहार विशेषतः पशुचिकित्सा में किया जाता है। कभी-कभी अन्य कृमिघ्न औषधियों के व्यर्थ सिद्ध होने पर इसका व्यवहार सूत्रकृमि एवं केंचुए के निर्हरण के लिए किया जाता है। ५ से १० वर्ष आयु वाले बच्चों के लिये दैनिक मात्रा १ ग्राम (१५ ग्रेन) होती है। ५ वर्ष से कम वालों के लिए आधी मात्रा ०·५ ग्राम (८ ग्रेन) पर्याप्त है। इस प्रकार ६ दिन का चिकित्साक्रम होता है। अन्त में तीव्र विरेचन (विशेषतः लवण विरेचन) दिया जाता है।

५—श्लीपदकृमिहर औषधियाँ :—

(Anthelmintics for filarial infection)

श्लीपदकृमि या सूक्ष्म श्लीपदी (Microfilaria) का उपसर्ग एवं विकृति मनुष्य-शरीरगत धातुओं में होती है। उक्त सूक्ष्मश्लीपदी लसीका-वाहिनियों में अवरोध उत्पन्न करके विकृति पैदा करते हैं। श्लीपदकृमि निर्हरण के लिए निम्न औषधियों का प्रयोग किया जाता है—(१) एन्टीमनी के योग (Antimony Preparations); (२) आर्सेनिक के यौगिक

(३) फ्लोरीन (Florine); (४) वैक्सीन (Filocid, Arseno-typhoid आदि) तथा (५) संश्लिष्ट औषधियाँ यथा हेट्राजन (Hetrazan) बेनोसाइड, (Banocide) आदि। इनमें नं० १–४ तक की औषधियों का वर्णन उन-उन प्रकरणों में किया जायगा। यहाँ अवशिष्ट एवं विशिष्ट औषधि हेट्राजन का वर्णन किया जा रहा है।

डाइएथिलकारबामेजिनाइ साइट्रास (B. P. Add.)

Diaethylcarbamazini Citras (Diethylcarbam. Cit.)

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_{29}O_8N_3$.

पर्याय—हेट्राजन Hetrazan; बेनोसाइड Banocide

वर्णन—डाइ-एथिलकारबामेजीनसाइट्रेट (Diethylcarbamazine Citrate) रासायनिक दृष्टि से 1—diethyl Carbamoyl—4—Methylpiperazine dihydrogen Citrate होता है, जो सफेद रंग के गंधहीन क्रिस्टलाइन पाउडर के रूप में प्राप्त होता है। स्वाद में किंचित् खट्टा एवं तीता होता है। विलेयता—जल में खूब अच्छी तरह घुल जाता (Very Soluble) है। गर्म अल्कोहल् में भी फौरन घुल जाता है, किन्तु ठंढे में थोड़ा-थोड़ा ही घुलता है।

मात्रा—२ से ८ ग्रेन (०.१५ से ०.५ ग्राम) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

श्लीपदकृमि (वुचेरेरिया बांक्रॉफ्टाइ Wucheraria bancrofti, वुचेरेरिया मलाइ W. malayi उपसर्ग (Filariasis) एवं केंचुए के उपसर्ग (Ascariasis) के लिए यह विशिष्ट औषधि समझी जाती है। दोनों ही योगों का सेवन मुख द्वारा किया जाता है। हेट्राजन की प्रयोग विधि एवं मात्रा श्लीपद रोग निवारण के लिए यह है कि प्रति किलोग्राम (२०२ पौंड या १ सेर) शरीर भार के लिए २ मिलिग्राम ($\frac{1}{30}$ ग्रेन) के हिसाब से इसकी टिकिया भोजनोत्तर तथा दिनमें ३ बार करके ३ सप्ताह तक दी जाती हैं। अतएव सामान्यतः युवा पुरुष के लिए ५० मि० ग्रा० की एक टेबलेट दिन में ३ बार करके २१ दिन तक देना चाहिए। हेट्राजन के प्रभाव से २–३ दिन में रक्तगत सूक्ष्मश्लीपदियो (Microfilariae) का पूर्णतः लोप हो जाता है उक्त कृमियों पर हेट्राजन की क्रिया किस प्रकार होती है, यह तो नहीं कहा जा सकता किन्तु प्रयोगों द्वारा देखा गया है कि हेट्राजन के प्रभाव से रक्त के भक्षक जीवाणुओं (Phagocytes) की उक्तकृमि के भक्षण की रोचकता (Opsonins) अवश्य बढ़ जाती है।

केंचुए के निर्हरण के लिए प्रति किलोग्राम (१ सेर) शरीर भार के लिए १२ मि० ग्रा० दैनिक मात्रा के हिसाब से औषधि प्रतिदिन एक ही मात्रा में दी जाती है। यही क्रम लगातार ४ दिनों तक रखा जाता है। अथवा प्रति किलोग्राम शरीर भार पर ६ से १० मिलिग्राम की प्रतिदिन ३ मात्रायें दी जाती हैं। इस प्रकार ७ दिन तक औषधि देनी चाहिए। अन्य कृमिघ्न औषधियों की भांति हेट्राजन-चिकित्सा-क्रम में रेचन औषधि (Post-treatment purigation) की आवश्यकता नहीं होती।

गण्डूमुखकृमि-उपसर्ग (Ascariasis) में हैट्राजन टैबलेट्स की अपेक्षा 'हैट्राजन सिरप' का प्रयोग अधिक उपयुक्त समझा जाता है। बच्चों के लिए तो यह और भी अनुकूल होती है। मात्रा—२-३ वर्ष के आयु के बालक के लिए १ चम्मच (२ ड्राम) दिन में ३ बार, ४-५ वर्ष की आयु वाले के लिए ४-४ घंटे पर १ चम्मच (२ ड्राम) शर्बत दें। जब केंचुए निकलने बन्द हो जाँय औषधि बन्द कर दें।

(ऑफिशल-योग)

१—टॅबेली डाइ-एथिल कारबामेजिनाइ साइट्रेटिस Tabellae Diaethylcarbamazini Citratis, B. P. Add.—ले०; टबलेट्स ऑव डाइ-एथिल कारबामेजीन साइट्रेट—अं०।

मात्रा—०·१५ से ०·५ ग्राम। यदि प्रति टिकिया में हेट्राजन की मात्रा का निर्देश न हो तो ५० मि० ग्रा० (३/४ ग्रेन) की टिकिया देनी चाहिए।

६—सिस्टोसोमा-उपसर्ग (Schistosomiasis or bilharziasis) नाशक औषधियाँ :—

ल्युकेन्थोनाइ हाइड्रोक्लोराइडम् (B. P. C.)
(निलोडिन)

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{25}ON_2SCl$.

नाम—Lucanthoni Hydrochloridum (Lucanthon. Hydrochlor.) —ले;० ल्युकेन्थोन हाइड्रोक्लोराइड Lucanthone Hydrochloride—अं०।

पर्याय—निलोडिन Nilodin; मिरेसिल 'डी' Miracil D.।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 1-(2-diethylaminoethylamino —4-methylthiaxanthone hydrochloride) होता है, जो चमकीले पीले क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। यह प्रायः गंधहीन होता है।

विलेयता—गरम पानी तथा गरम अल्कोहल् में फौरन घुल जाता (*Readily soluble*) है।

मात्रा—०·५ से १ ग्राम (८ से १५ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सिस्टोसोमा हीमेटोबियम् एवं सिस्टोसोमा मेन्सोनाइ (S. haematobium and S. mansoni) के मानव शरीर में होने वाले उपसर्ग (Human Schistosomiasis) में ल्युकेन्थोन हाइड्रोक्लोराइड बहुत उपयोगी है। इस औषधि की दूसरी विशेषता यह भी है, कि मुख द्वारा सेवन किए जाने पर भी यह पूर्णतः सक्रिय होती है, और इस प्रकार सामूहिक चिकित्सा के लिए भी बहुत उपयुक्त होती है। मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आंतों से अच्छी तरह शोषित होती है। शोषणोपरान्त केवल १० प्रतिशत भाग मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है, शेष शरीर में ही जारित हो जाता है। युवा व्यक्ति में प्रतिदिन १ ग्राम (१५ ग्रेन) औषधि दिन में २ बार (सुबह-शाम) करके १२ दिन तक दी जाती है। एक कोर्स में प्रयुक्त औषधिक की सकल मात्रा (Total dose)

कम से कम ७५ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के अनुसार होनी चाहिए। बालकों के लिए ५ मि० ग्राम ($\frac{1}{12}$ ग्रेन) प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के अनुसार मात्रा प्रतिदिन २ बार देनी चाहिए। आवश्यकतानुसार १ माह बाद चिकित्साक्रम पुनः दुहराया जाता है।

(योग)

१—टैबेली ल्युकेन्थोनाइ हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellāe Lucanthoni Hydrochloridi (Tab. Lucanthon. Hydrochlor.), B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव ल्युकेन्थोन हाइड्रोक्लोराइड, ल्युकेन्थोन टॅबलेट्स Lucanthone Tablets—अं०। मात्रा—ल्युकेन्थोन हाइड्रोक्लोराइड की भांति।

श्लीपदकृमिनाशक अन्य व्यावसायिक योग—

१—हेट्राजनHetrazan (Lederle) ५० मि० ग्रा० की गोलियाँ (Pills) आती हैं।

२—बेनोसाइड Banocide(B. W.&Co.)—

रासायनिक स्वरूप एवं गुणकर्म तथा प्रयोग की दृष्टि से यह हेट्राजन से बहुत-कुछ मिलती जुलती है। यह भी श्लीपदकृमि उपसर्ग एवं केंचुए में भी प्रयुक्त होती है। इसके लिए रेचन औषधि देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। मात्रा—(१) श्लीपदकृमि के लिए—प्रति सेर (किलोग्राम) शरीर भार के लिए ६ मिलिग्राम के हिसाब से जितनी औषधि की दैनिक मात्रा अभीष्ट हो उसको ३ मात्राओं में विभक्त करके दिनमें तीन बार और यथा सम्भव भोजनोत्तर देना चाहिए। इस प्रकार ३ सप्ताह तक औषधि देनी चाहिए। (२) केंचुए के उपसर्ग (Ascariasis) में ६ से १० मिलिग्राम प्रतिकिलोग्राम (सेर) शरीर भार के हिसाब से जितनी मात्रा अभीष्ट हो उसको ३ मात्राओं में विभक्त करके दिन में तीन बार करके ७ दिन तक। यदि आवश्यकता हो तो १ सप्ताह तक और दे सकते हैं।

३—बेनोसाइड सिरप Banocide Syrup (B. W. & Co.)—प्रत्येक सी० सी० में ३० मिलिग्राम औषधि होती हैं। बच्चों एवं दुर्बल व्यक्तियों के लिए परमोपयुक्त योग है।

४—एन्थिओमेलीन Anthiomaline (May&Baker)—इसके सप्ताह में दो बार पेश्यन्तरिक या शिरागत सूचिकाभरण किए जाते हैं।

५—हेरोजन Herogen (B. D. H.)–यह भी हेट्राजन या बेनोसाईड की ही भाँति यौगिक है। इसके टेबलेट्स आते हैं।

बाजार में उपलब्ध अन्य कृमिघ्न (Anthelmintic) औषधियां:—

१—टेट्राकैप Tetracap (I. C. I.)—यह टेट्राक्लोर-एथिलिन (Tetrachlor-ethylene) के १५ मिनम् या बूंद के बन्द कैप्सूल्स होते हैं। इनका प्रयोग अंकुश मुखकृमि के निर्हरण के लिए किया जाता है।

२—क्रिस्टायड Crystoid Sharp & Dhome (S. D.)—इसकी ०·२ ग्राम की कैप्सूल्स (Capsules) आती हैं। इसकी क्रिया अंकुश मुखकृमि (Hook worm) तथा इस समुदाय के अन्य आंत्रिक कृमियों पर भी होता है। अतएव कृमि की शंका होने पर भी

यदि मलपरीक्षण द्वारा विशिष्ट कृमि को ज्ञात करने की सुविधा न हो तो ऐसी स्थिति में यह परमोपयुक्त औषधि है। मात्रा—६ वर्ष से कम आयु वाले बालक के लिए २ कैप्स्यूल; ६–८ वर्ष तक ३ कैप्स्यूल; ८–१२ वर्ष तक ४ कैप्स्यूल तथा १२ वर्ष के ऊपर ५ कैप्स्यूल की आवश्यकता पड़ती हैं। उक्त कैप्स्यूल को खाली पेट पर जल से पूरा निगल लिया जाता है।

३—एन्टासिल Entacyl (B. D. H.) —इसकी टिकिया (टॅवलेट्स Tablets) आती है। कृमिघ्न औषधि के रूप में इसकी उपयोगिता क्रिस्टायड (Crystoid) की भांति है। अर्थात् यह भी बहुकृमिहर औषधि है। मात्रा—६ वर्ष तक के बालक के लिए प्रतिवर्ष आयु के लिए एक टॅवलेट के हिसाब से प्रतिदिन करके ७ दिन तक देना चाहिए। ६ वर्ष के ऊपर की आयु वालों के लिए २ टिकिया दिन में ३ बार करके ७ दिन तक। ७ दिन तक औषधि देने के बाद औषधि बन्द कर देनी चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो ७ दिन के बाद पुनः औषधिक्रम दुहराया जा सकता है।

४—पिप्रेजीन हाइड्रेट, एन्टीपारसिरप Piprezine Hydrate, Antipar Syrup (B. W. & Co.)—यह शर्बत की भांति मीठी पेय औषधि होती है। बच्चों के सूत्रकृमि (Thread worm) उपसर्ग के लिए उत्तम औषधि है। इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। सूत्रकृमि के अतिरिक्त केंचुए के उपसर्ग (Ascariasis) में भी इसका उपयोग किया जाता है। एतदर्थ औषधि एक ही मात्रा में दी जाती है। शाम के वक्त रात्रि के भोजन के पूर्व औषधि ले ली जाती है और प्रातःकाल रेचन (४ ड्राम मैगसल्फ०) दिया जाता है। मात्रा—केंचुए (Round Worm) के लिए (१) युवकों को अथवा १ मन के ऊपर भारवाले बालकों के लिए ६ ड्राम औषधि एक ही मात्रा में तथा १ मन से कम भारवालों के लिए ४ ड्राम एक ही मात्रा में।

५—मेरोक्सिल Meroxyl (Wander)—यह जेन्शनवायोलेट (Gention violet) का यौगिक है। इसकी ०·०३ ग्राम तथा ०·०६ ग्राम की गोलियाँ (पिल्स Pills) आती हैं। इनका प्रयोग सूत्रकृमिनिर्हरण के लिए किया जाता है। मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

६—ऑक्सिलन Oxylon (B. W. & Co.)—इसका भी प्रयोग सूत्रकृमिनिर्हरण के लिए किया जाता है।

७—ब्यूटलन Butalon (Bayer)—यह सूत्रकृमिनाशक औषधि है। मात्रा—½ से १ गोली दिन में ३ बार।

८—निक्सोलन Nyxolon (H. H. D. C.)—यह औषधि शर्बत के रूप में होती है। इसका प्रयोग मुख द्वारा बच्चों के सूत्रकृमिनिर्हरण के लिए किया जाता है।

९—पाइनोसाइड सिरप Pinocide Syrup (Smith Stanistreet & Co.)—यह मीठी शर्बत (सिरप) के रूप में आती है। इसकी १½ औंस, २½ औंस तथा १ पौंड की शीशियाँ आती हैं। पाइनोसाइड पाइपराजीन सायट्रेट (Piperazine citrate) का योग है। १ फ्लुइड ड्राम सिरप (one tea-spoonful) में ५०० मिलिग्राम पाइपराजीन हायड्रेट (Piperazine hydrate) के बराबर बल की औषधि होती है।

प्रयोग—यह सूत्रकृमि उपसर्ग (Oxyuriasis), अंकुश मुखकृमि उपसर्ग (Ankylostomiasis) एवं केंचुए के उपसर्ग (Ascariasis) तीनों में ही उपयोगी है। इसका प्रयोग एक मात्रा में (Single Dose Therapy) तथा ७ दिन तक अथवा आवश्यकतानुसार बहुमात्रिकक्रम (Multi-dose therapy) में दी जाती है।

प्रकरण ८

शीतग्राही औषधियाँ (Astringents)।

बाह्यतः स्थानिक प्रयोग से शीतग्राही औषधियाँ (Astringents), उक्तस्थान के धातुओं पर संकोचक प्रभाव करती है, जिससे स्राव का निरोध होता है । इस वर्ग की औषधियाँ प्रायः कषायरसप्रधान होती हैं । अतएव इनको कषाय औषधियाँ भी कह सकते हैं । मुखद्वारा सेवन किए जाने पर अन्त्रों में इनकी क्रिया ठीक रेचक द्रव्यों के प्रत्यनीक (Antagonistic) होता है। इस वर्ग में गुण-कर्म की दृष्टि से **ग्राहीगुरुधातुओं** (Astringent Metals), एसिड सल्फ्यूरिक डायल्यूट एवं **वानस्पतिक ग्राही या कषाय औषधियों** का समावेश होता है। ओपियम् एवं खटिका (Chalk) की अन्त्रगत ग्राहि क्रिया उनके स्रावनिरोधक एवं अन्त्र की पुरस्सरणगतिनिरोधक प्रभाव के कारण होती है ।

वानस्पतिकग्राहि द्रव्यों की क्रिया उनमें शल्कि (टैनिन Tannin) की उपस्थिति के कारण होती है । लौह के यौगिकों के साथ टैनिन का संयोग होने से उनका वर्ण कालेरंग का हो जाता है । वानस्पतिक ग्राहि द्रव्यों की क्रिया ग्राहि धातुओं की अपेक्षा यद्यपि मन्द अवश्य होती है, परन्तु धातुओं की अपेक्षा अधिक निरापद होने के बाद मौखिक सेवन के द्वारा आन्त्रगत प्रभाव के लिए वानस्पतिक ग्राहिद्रव्यों का ही प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है इनका बाह्यतः प्रधान उपयोग **स्थानिक रक्तस्तम्भक** (Local haemostatic) के रूप में किया जाता है । इसके अतिरिक्त टैनिकएसिड घटित द्रव्य अथवा टैनिक एसिड अनेक गुरुधातुओं (Metals) अल्कलायड्स एवं ग्लाइकोसाइड्स के साथ मिलकर अविलेय यौगिक बनाते हैं । अतएव इनका उपयोग उन-उन द्रव्यों के **प्रतिविष या अगद** (Antidote) के रूप में भी किया जा सकता है ।

वानस्पतिकग्राहिद्रव्य (Astringents)—टैनिक एसिड (Tannic Acid), कटेक्यु (Catechu) र्‌हैटनी (Rhatany) तथा हेमामेलिस (Hamamelis) ।

(नॉट्-ऑफिशल)

गॉल Galls (माजूफल)

Family: Fagaceae. (मायाफलादि-कुल)

नाम । माजूफल—हिं०, बं०; मायाफल, मञ्जफल-सं०; मायफल—म०; कांटावाला मायां, मायां—गु०; अफ़्स, अल्अफ्स, अफ्सुलबुलूत—अ०; माजू—फा०; गाला गाली सेरुलीई Galla Gallae Ceruleae—लै०; गाल्स Galls, ओक गाल्स Oak Galls, नट गॉल Nut Gall, अलिपो गाल Aleppo Galls, ब्ल्यू गाल Blue Galls, टर्की या सीरियन गाल्स Turkey or Syrian Galls.

प्राप्ति-साधन—यह बलूत (Oak ओक) की जाति के एक ईरानी उपजाति के वृक्ष (जिसको लेटिन में क्कर्स इन्फेक्टोरिया Quercus infectoria, Olivier. तथा अंग्रेजी में डायर्स ओक Dyer's Oak कहते हैं) की डालियों पर एक विशेष प्रकार के कृमि (जिसे सिनिप्स गॉली टिंक्टोरिआ । (Cynips gallāe tinctori Family: Cynipidae कहते हैं) के छिद्र करने और उन छिद्रों में उसके अंडे रखने से उन स्थानों में एक प्रकार की गॉलें उत्पन्न हो जाती हैं। यही गॉली Gallae या गाल्ज Galls अर्थात् माजू या माजूफल कहलाती हैं।

वक्तव्य—क्कर्स इन्फेक्टोरिया को अरबी में दरख़्त बुलूतुल् अफ़्स कहते हैं। अरबी में अफ़्स का अर्थ कषाय होता है। माजूफल का भी स्वाद अत्यंत कषाय होता है। अतएव इसको ऐसा कहा गया है। 'गॉल Gall' शब्द लेटिन से व्युत्पन्न है। इसके फल के ऊपर कतिपय चिन्ह कच्छूवत् होते हैं; अतएव लेटिन एवं अंगरेजी में इसका ऐसा नामकरण किया गया।
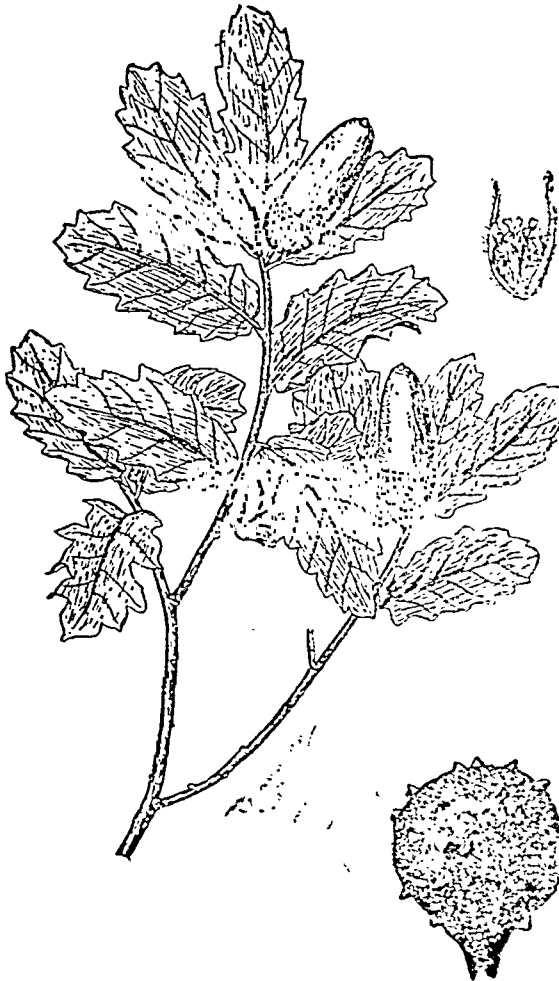
उत्पत्ति-स्थान—एशियामाइनर, फारस, सीरिया, यूनान, साइप्रस (Cyprus) आदि। वक्तव्य—एशिया माइनर का माजू प्रायः अलिप्पो Aleppo बन्दर से विदेशों को भेजा जाता है। इसीलिए Galls के पर्याय में एक नाम "Aleppo Galls" भी है। पूर्वी एवं पश्चिमी हिमालय के समशीतोष्ण प्रदेशों (Temperate Himalayas) में क्कर्स (Quercus) की अनेक प्रजातियाँ पाई जाती हैं। खोज करने से उत्तम प्रतिनिधि (Substitute) प्रजाति का पता चल सकता है।

चित्र १८—माजूवृक्ष की शाख एवं माजूफल।

(Branch of Quercus Infectoria & the Nutgall.)

वर्णन—माजू का वृक्ष लगभग ६ फुट ऊँचा गुल्म स्वभाव का छोटा वृक्ष होता है। माजू-कृमि की स्त्रीजाति (Female gall-wasp), माजूवृक्ष की कोमल शाखा को अपने यंत्र विशेष (Ovipositor) से क्षत करके वहां अंडे देती है। जब अंडों से लारवा (Larva) बनते हैं, तो यह लारवा वहां के चारों तरफ की ऊति (Tissues) को खाने लगते हैं और साथ ही उनके शरीर से वहाँ एक स्राव भी होता है, जिससे परिसरीय ऊतियों (Surrounding tissues) की वृद्धि भी होने लगती है। इस प्रकार कीटगृह (Gall) की रचना होती है। क्रमशः जब विभिन्न परिवर्तनों (Metamorphosis) को पार करने के बाद लारवा प्रगल्भ कृमि हो जाता है तो, गाल में छिद्र करके बाहर निकल आता है। वक्तव्य—माजूफल (Galls) का संग्रह इन कीटगृहों से कीट के निकलने के पूर्व ही करना चाहिए, क्योंकि उस समय उनमें टैनिक एसिड (Tannic acid) की अधिकतम मात्रा रहती है। उस समय के संग्रहीत गाल्स नीलापन लिए खाकस्तरी या हरा (Bluish-grey) रंग के होते हैं। जिन गाल्स से कृमि निकल गया है, उनमें एक तो छिद्र होता है, दूसरे इनका रंग बदल कर सफेद हो जाता है, इनका व्यावसायिक नाम "ह्वाइट गाल्स White Galls" हैं, और टैनिक एसिड की दृष्टि से ये निकृष्ट एवं अग्राह्य होते हैं। इनका उपयोग उत्तम गाल्स में मिलावट करने के लिये किया जाता है।

माजूफल (Galls गाल्स)—गाल्स आकार में उन्नाव की तरह होते हैं, और इनका व्यास १ से २॥ सेंटीमीटर होता है। एक तरफ छोटा-सा डंठल (Basal Stalk) होता है और बाह्यतल पर छोटे-छोटे, गोले-गोले अनेक उत्सेध (Rounded projections) होते हैं। उत्तम गाल कड़े एवं गुरु होते हैं, जिससे पानी में डालने से यह उसमें डूब जाते हैं। स्वाद में यह अत्यन्त कसैले (Astringent) होते हैं। जिन गाल्स में छिद्र हों (जिससे माजू-कृमि बाहर निकलता है) तथा रंग सफेद हों वह अग्राह्य होते हैं।

रासायनिक संघटन—(१) गाल्स में ५०—७० प्रतिशत कषायिन (टैनिन Tannin) होता है। इसको गैलोटैनिक एसिड (Gallotannic acid (Acidum Tannicum, B. P.) कहते हैं। (२) गा(गै)लिक एसिड (Gallic Acid)—२ से ४ प्रतिशत। इसके अतिरिक्त स्टार्च, डेक्स्ट्रोज, वैक्स तथा अन्य मिनरल तत्व (Mineral Substances) भी पाये जाते हैं।

एसिडम् टैनिकम् (टैनिक एसिड) I. P., B. P.

Acidum Tannicum (Acid. Tann.)

रासायनिक सूत्र : $C_{14}H_{10}O_9, 2H_2O$.

पर्याय—टैनिन Tannin; डाइगैलिक एसिड Digallic Acid.

प्राप्ति साधन एवं निर्माणविधि—यह कर्कस (Quercus) जाति के विभिन्न वृक्षों के गाल्स (माजूफल) से प्राप्त किया जाता है। पहले इनमें अभिषवण (Fermentation) कराया जाता है, तदनु इसका चूर्ण बनाकर जल एवं ईथर में विलीन कर टैनिक एसिड प्राप्त किया जाता है।

स्वरूप—यह पीताभ-श्वेत या हल्के भूरे रङ्ग की चमकदार पपड़ियों (Scales) के रूप में अथवा अत्यन्त लघु-पिण्डों (Light masses) अथवा अस्पर्श्य चूर्ण (Impalpable powder)

के रूप में होता है। इसमें विशिष्ट प्रकार की गंध होती तथा स्वाद में अत्यंत कषैला (Astringent) होता है।

विलेयता--(९०%) ॲल्कोहल् तथा १ भाग जल में, एसिटोन में भी सुविलेय होता है, किन्तु १ भाग ग्लिसरिन में अंशतः विलेय होता है। इसके जलीय विलयन को, जिलेटिन, अल्ब्युमिन अथवा किसी क्षाराभ (Alkaloid) के विलयन में मिलाने से अधःक्षेप (Precipitates) हो जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—अक्षत त्वचा पर तो टैनिक एसिड का कोई प्रभाव नहीं होता किन्तु अनावृत श्लैष्मिक कला (Exposed mucous membrane) तथा छिली हुई त्वचा पर लगाने से यह स्थानिक ग्राही (Local astringent) तथा स्थानिक रक्तस्तम्भक (Local haemostatic) प्रभाव करता है।

आभ्यन्तर। महास्रोतस्—Alim (entary Canal)—चूँकि स्थानिक प्रयोग से यह स्रावस्तम्भक एवं प्रोटीन-स्कन्दन प्रभाव करता है, अतएव मुख में इसके प्रभाव से शुष्कता की अनुभूति होने लगती है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर आमाशय में इसकी उक्त क्रिया से पाचन में गड़बड़ी पैदा हो जाती है किन्तु स्थानिक रक्तस्राव के बन्द करने में अवश्य सहायता करता है। आन्त्रों में इसकी उक्त दोनों क्रियाओं के कारण मल विबन्ध पैदा होता तथा मल शुष्क एवं कड़ा हो जाता है। अपनी क्रिया से किण्व (Yeast) एवं जीवाणुओं (Microbes) को प्रक्षिप्त करने के कारण यह साधारण जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) प्रभाव करता तथा मलकी दुर्गन्धि को दूर करता है। शोषणोपरान्त टैनिक एसिड रक्त में प्रधानतः गैलेट्स (Gallates) तथा अंशतः टैनेट्स (Tannates) के रूप में पाया जाता है।

आमयिक प्रयोग।

बाह्यप्रयोग—स्थानिक रक्तस्तम्भक के रूप में इसका प्रयोग नासा, मलाशय, वस्ति एवं मूत्रप्रसेक आदि से रक्तस्राव होने पर किया जाता है। नकसीर (Epistaxis) में इसके चूर्ण का प्रयोग सुंघनी (Snuff) के रूप में अथवा इसका नासाधावन (Nasal-douche) प्रयुक्त होता है। इसके लिए ५ प्रतिशत का विलयन प्रयुक्त किया जाता है। रक्तार्श (Haemorrhoids) में इसको मलहर या गुदवर्ति के रूप में प्रयुक्त करते हैं। स्थानिक ग्राही प्रभाव के कारण इसका प्रयोग स्रावयुक्त त्वग्रोगों तथा विचर्चिका (Eczema) आदि एवं विभिन्न अनुग्र (Subacute) अथवा चिरकालज शोफयुक्त अवस्थाओं में किया जाता है। अतएव कर्णस्राव (Otorrhoea) तथा नेत्राभिष्यंद में १ प्रतिशत बल का विलयन बिन्दुरूप में तथा दुष्टप्रतिश्याय (Ozaena) में नासाधावन, सुंघनी (Snuff) अथवा प्रलेप (Paint) के रूप में किया जाता है। श्वेतप्रदर (Leucorrhoea) में योनि में इसका प्रयोग उत्तरबस्ति, योनिधावन अथवा पेसरी के रूप में किया जाता है। गर्भाशयग्रीवामुख-व्रणता में टैनिकएसिड पेसरी (Pessary) प्रयुक्त करते अथवा टैनिक एसिड और ग्लिसरिन का पिचुधारण करते हैं। वस्तिशोथ (Cystitis) में इसके विलयन की उत्तरबस्ति दी जाती है तथा गुद

भ्रंश अथवा यदि मलाशय में व्रण तथा विदार (Fissure) हो तो टैनिकएसिड सपोजिटरी रखी जाती हैं अथवा इसके विलयन से धावन करते हैं।

दग्ध (Burn) की चिकित्सा में यह एक अत्युपयोगी औषधि है। इसके विलयन (५ से १०%) से व्रणबंधन (Dressing) किया जाता है तथा इसे बराबर तर करते रहते हैं जब कि व्रण के ऊपर भूरे रंग की पपड़ी सी नहीं बन जाती। इससे परिस्रावनिरोध, वेदनाशमन तथा विषमयता (Toxaemia) का निवारण होता है। इसके प्रयोग की दूसरी विधि यह है कि दग्धस्थल पर इसके विलयन का शीकर (Spray) किया जाय और थोड़ी-थोड़ी देर पर इस क्रिया की पुनरावृत्ति की जाय जब तक कि दग्धस्थल पर भूरी पपड़ी न बन जाये इस प्रकार प्रयुक्त करने में टैनिक एसिड के विलयन में एक्रिल्फेविंन (१००० में १ भाग) अथवा जेन्शियन वायोलेट का एक प्रतिशत का विलयन भी मिला दिया जाता है।

आभ्यन्तर प्रयोग—जब मसूढ़े से पीव या रक्त आता हो तो ऐसी स्थिति में टैनिक-एसिडयुक्त दतंमंजन बहुत उपयोगी होता है। मुखपाक (Stomatitis), उग्र अथवा चिरकालज गलव्रणता (Sorethroat) अथवा कण्ठशालूक (Enlarged tonsils) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। उक्त रोगों में टैनिक एसिड चक्रिका (Lozenges) मुख में धारण की जाती हैं अथवा इसका प्रयोग गण्डूष (Gargle) या शीकर (Spray) के रूप में किया जाता है। मुख अथवा स्वरयन्त्र में इसका प्रयोग स्टार्च के साथ मिलाकर प्रधमन (Insufflation) के रूप में भी किया जा सकता है। आमाशयान्त्रगत रक्तस्राव रोकने के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है, किन्तु अधिक मात्रा (३० से ४० ग्रेन की १ मात्रा) प्रयुक्त करनी पड़ती है। क्षारोद (Alkaloid) अथवा धात्वीयलवण विषमयता में इसका प्रयोग प्रतिविष (Antidote) के रूप में किया जाता है।

प्रयोग-विधि—आभ्यन्तर प्रयोग के लिए इसका विलयन, कैचेट या गुटिका प्रयुक्त कर सकते हैं। लौह के लवणों (Ferric satlts) के साथ इसका योग नहीं करना चाहिए। टैनिकएसिड के संयोग से कफीन (Caffeine) प्रक्षिप्त हो जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—ग्लिसेरिनम् एसिडाइ टैनिसाइ Glycerinum Acidi Tannici (Glycer. Acid. Tann.), I. P., B. P.—ले०; ग्लिसरिन ऑव टैनिक एसिड—अं०। टैनिक एसिड १५० ग्राम ग्लिसरिन ८५० ग्राम। दोनों को परस्पर मिलाकर हल्का-हल्का गरम करें ताकि परस्पर खूब अच्छी तरह हल हो जाँय। १५% टैनिक एसिड होता है।

(नॉट-ऑफिशल)

१—सपोजिटोरिया एसिडाइ टैनिसाइ Suppositoria Acidi Tannici (Supp. Acid. Tann.) B. P. C.—ले०; सपॉजिटरीज ऑव टैनिक एसिड, टैनिक एसिड सपोजिटरीज—अं०। प्रत्येक सपोजिटरी में ३ ग्रेन टैनिक एसिड होता है।

२—पेस्टा एसिडाइ टैनिसाइ Pasta Acidi Tannici—ले०; टैनिक एसिड जेली (Tannic Acid Jelly)—अं०। टैनिक एसिड ५०, ट्रागाकान्थ २०, क्लोरोक्रिसोल १, अल्कोहल् (९०%) ६०, जल आवश्यकतानुसार १००० के लिए।

३—टैनोफॉर्म (Tannoform) इसको मेथिल डाइटैनिन (Methyl Ditannin) भी कहते हैं। यह हल्की लाली लिए सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो जल में अविलेय (Insoluble) होता है। मात्रा—८ से १५ ग्रेन (०·५ से १ ग्राम)। उपयोग—वाह्यतः स्थानिक प्रयोग के लिए यह अत्यधिक पसीने (Hyperhidrosis), शय्याव्रण, छाजन (Eczema) शैंकर (Soft Chancre) आदि के स्राव या पंछा को सोखने के लिए तथा बच्चों के अतिसार में मुख मार्ग द्वारा सेवन किया जाता है।

४—एल्ब्युमिनाइ टैनास Albumini Tannas। पर्याय—एल्ब्युटैनिन (Albutannin)। यह अल्ब्युमिन तथा टैनिन का यौगिक होता है, जो पीलापन लिए सफेद रंग के गंधहीन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो जल में नहीं घुलता। मात्रा—८ से १५ ग्रेन (०·५ से १ ग्राम)।

५—टैनिजेन (Tannigen)। पर्याय—डाइ-एसेटिल टैनिन (Di-Acetyl-Tannin); एसिटैनिन (Acetannin) एसिडम् एसेटिल टैनिकम् Acidum Acetyl Tannicum)—यह टैनिक एसिड का एसेटिलीकरण (Acetylisation) के द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो पीलापन लिए या खाकस्तरी सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम) प्रयोग—आन्त्रप्रदाह (Enteritis) एवं बच्चों का अतिसार (Infantile diarrhoea)।

कॅटेक्यु Catechu (Catech.) I. P., B. P. C.

Family : Rubiaceae (मंजिष्ठादि-कुल)

नाम—कॅ (कै) टेक्यु; पेल कॅटेक्यु Pale Catechu; गेम्बीर Gambier; पीत-खदिर—सं०।

प्राप्ति-साधन—यह अंकेरिया गेम्बीर Uncaria gambier (Hunter) Roxb. नामक एक कंटीली झाड़ी की पत्तियों एवं छोटी-छोटी शाखाओं का घनसत्व (Extract) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—सिंगापूर तथा पूर्वी द्वीपसमूह जावा, सुमात्रा तथा मलाया आदि में इसकी खेती की जाती है।

चित्र १९—अंकेरिया गेम्बीर Uncaria gambier की टहनी एवं पत्ती (Twigs & leaves)।

वर्णन—इसकी वृक्षारोहिणी झाड़ियाँ (Shurbs) होती हैं। पूर्वी द्वीपसमूह में इसकी खेती की जाती है और इसके स्वयं जात पौधे भी जंगली रूप से पाये जाते हैं। खैर

बनाने के लिए कोमल टहनियों को काटकर संग्रहीत कर लिया जाता है, और इनको बड़े-बड़े कड़ाहों के जल में उबालकर रसक्रिया की पद्धति से घनाकार टुकड़ों (Cubes) के रूप में प्राप्त किया जाता है।

स्वरूप—इसके घनाकार टुकड़े (Cubes) जो बह्यतः रंग में हल्के हरिताभ-भूरे (Greyish-brown) से गहरे रक्ताभ-भूरे (Reddish-brown) रङ्ग के होते हैं। आभ्यन्तर भाग का रंग हल्का भूरा (Pale-brown) होता है। ये टुकड़े सुषिर (Porous) तथा भंगुर (Friable) तथा स्वाद में पहले किंचित् तिक्त तदनु कषाय एवं अन्त में मधुर होते हैं। विलेयता—उबलते जल में पूर्णतः विलेय होते है।

रासायनिक संघटन—(१) कैटेक्यू-टैनिक एसिड २२ से ५०% (२) कैटेकिन (Catechin) ७ से ३३% (३) क्वरसेटिन (Quercetin) कैटेक्यु-रेड, गम्बीर-फ्लोरेसीन, वैक्स, आयल आदि।

असंयोज्य द्रव्य—क्षार, धात्वीयलवण तथा जिलेटिन।

केटिक्यू पल्विस—Catechu Pulvis (Catech. Pulv.) केटिक्यू का चूर्ण हल्के भूरे रंग (pale brown) का होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

टैनिक एसिड की भाँति यह भी एक अक्षोभक शीतग्राही औषधि है। स्थानिक ग्राही प्रभाव करने के कारण इसका उपयोग दन्तवेष्ठ की व्याधियों, पारदजन्य एवं क्षतज मुखपाक (Stomatitis,) तथा कण्ठ शैथिल्य (Relaxed throat) में दन्तमञ्जन, गण्डूष, प्रलेप अथवा मुखगुटिका (Lozenge) आदि के रूप में किया जाता है। यही स्थानिक ग्राही प्रभाव यह आन्त्रों में भी करता है, अतएव अतिसार में इसका प्रयोग अत्यन्त लाभप्रद होता है।

योग।

१—टिंक्चुरा केटिक्यू Tinctura Catechu, B. P. C.—ले०। टिंक्चर कत्था—हिं०। बल—५ में १। मात्रा—३० से ६० मिनिम् या २ से ४ मि० लि०।

क्रॅमेरिया Krameria (Kramer.) B. P. C.

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल)

पर्याय—रेडिक्स क्रॅमेरिई Radix Krameriae, र्‌हैटनी रेडिक्स Rhatanae Radix—ले०; क्रॅमेरिया रूट Krameria Root; र्‌हैटनी रूट, पेरूवियन र्‌हैटनी Peruvian Rhatn—अं०; क्रॅमेरिया Krameria, B. P.।

प्राप्ति-साधन—क्रॅमेरिया, क्रॅमेरिया ट्राइएन्ड्रा (Krameria triandra, Ruiz and Pavan.) नामक वनस्पति की शुष्क की हुई जड़ होती हैं, जो व्यवसाय में 'पेरूवियन र्‌हैटनी Peruvian Rhatny' के नाम से प्राप्त होती है।

वक्तव्य—इस वनस्पति का जातीय नाम, क्रामर नाम जर्मन वनस्पति विशेषज्ञ के नाम पर रखा गया है। सन् १७७९ में रूज़ (Ruiz) नामक वैज्ञानिक ने देखा कि पेरूनिवासी क्रमेरिया की जड़ का प्रयोग अपने दांतों को साफ करने के लिए करते हैं। सन् १७९६ ई० में

इस औषधि का प्रचार स्पेन में हुआ। पहले 'पारा रहैटनी Para Rhatny' जो उक्त औषधि की ब्रेजिल देश में पाई जाने वाली दूसरी प्रजाति (क्रमेरिया आर्जेन्टिआ Krameriae argentea, Mart) से प्राप्त की जाती थी, ऑफिशल थी।

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष में यह औषधि नहीं पाई जाती। दार्जिलिंग आदि पहाड़ी स्थानों में पहाड़ी ढालों पर इसकी खेती की जा सकती है। इसका मुख्य उत्पत्ति-स्थान अमेरिका के पेरू तथा बोलिविया (Bolivia) प्रान्त है।

वर्णन—क्रॅमेरिया के लगभग ३-३॥ फुट ऊँचे गुल्म (Shrubs) होते हैं, जिसकी शाखायें काण्ड के अधः भाग से ही निकलकर ऊपर न जाकर भूमि की ओर फैलती हैं। पहाड़ियों के बालुकामय ढालों पर ३०००-६००० फुट की ऊंचाई पर इसके जंगल पाये जाते हैं। जड़—जड़ का ऊपरी सिरा ग्रंथिल (Knott Crow) होता है, जिससे अनेक मूल-शाखायें निकली होती हैं। इनमें कोई-कोई शाखा २ फुट तक लम्बी होती है। बाजार में क्रमेरिया की जड़ के टुकड़े मिलते हैं, जिनकी मोटाई का अधिकतम व्यास १५ मि० मिटर (१·५ सेंटीमीटर) होता है। अधिक मोटी शाखाओं में टैनिन की मात्रा कम होने से अग्राह्य होती हैं। उक्त जड़ें प्रायः स्तम्भाकार (Cylindrical) होती हैं, और इनकी वाह्य त्वचा लाली लिए भूरे रंग की (Reddish-brown) होती है।

रासायनिक संघटन—(१) क्रमेरिया-टैनिक एसिड (Krameria-tannic Acid)—यह इस औषधि का प्रधान घटक है, जो लगभग ८% की मात्रा में पाया जाता है। यह जड़ की छाल में पाया जाता है। (२) क्रमेरिया रेड Krameriae red नामक एक रञ्जक तत्व (Colouring matter)।

असंयोज्य द्रव्य—क्षार, चूर्णोदक (Lime-water), लौह एवं सीसा (Lead) के लवण तथा जिलेटिन।

क्रमेरिई पल्विस Krameriae Pulvis (Kramer. Pulv.) B. P. C.—ले०; पाउडर्ड क्रमेरिया Powdered Krameria—अं०। लाली लिए हुए भूरे रंग का चूर्ण होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

टैनिक एसिड होने के कारण क्रमेरिया तीव्र शीतग्राही (Astringent) प्रभाव करती है। इसकी जड़ का चूर्ण दन्तमंजन चूर्णों (Dentrifices) में डालने के लिए एक उत्तम उपादान है। जड़ का फाण्ट (इन्फ्युजन) गल-व्रणता (Sore throat), मसूड़े (Gum) के व्रण में अथवा खून आने पर अथवा पारद के कारण उत्पन्न मुखपाक (Mercurial stomatitis) में एक उत्तम गण्डूष (Gargle) होता है। क्रमेरिया एण्ड कोकेन लॉजेंज गल-व्रणता के लिए एक उत्तम योग है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् क्रमेरिइ सिकम् Extractum Krameriae Siccum (Ext. Kramer. Sicc.) B. P. C.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव क्रमेरिया Extract of Krameria—अं०; क्रमेरियाघन-सत्व—सं०, हिं०। मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०.३ से १ ग्राम) या ४ रत्ती से १ माशा। २—टॅन्क्चिर

क्रमेरिई Trochisci Krameriae (Troch. Kramer.)—लै०; क्रमेरिया लॉजेन्जेज (Krameria Lozenges)—अं० । क्रमेरिया मुखचक्रिका—सं०, हिं०। प्रत्येक मुख गुटिका में १ ग्रेन (६० मि० ग्रा०) क्रमेरिया होता है ;

३—ट्रॉकिस्काइ क्रमेरिई एट कोकेनी Trochisci Krameriae et Cocainãe (Troch. Kra. mer. et Cocain), B. P. C—लै०; क्रमेरिया एण्ड कोकेन लॉजेन्जेज—अं० ।

हेमामेलिस (Hamamelis) I. P., B. P.

Family: Hamamelidaceae.

पर्याय—फोलिआ हेमामेलिडिस Folia Hamamelidis (Hamam.)—लै०; हेमामेलिस लीव्ज़ Hamamelis Leaves, विच-हेज़ल-लीव्ज़ Witch Hazel Leaves—अं० ।

प्राप्ति-साधन—यह हेमामेलिस वर्जिनियाना—(Hamamelis virginiana, Linn.) नामक वृक्ष की सुखाई हुई पत्तियाँ होती हैं ।

उत्पत्ति-स्थान—संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (U. S.A.) तथा कनाडा (Canada) । यह वनस्पति भारतवर्ष में नहीं पाई जाती । हिमालय के समशीतोष्ण प्रदेशों (Temperate Himalayas) में इसकी खेती की जा सकती है ।

वर्णन—हेमामेलिस के ६–१५ फुट ऊँचे गुल्म (Shrub) या छोटे-छोटे वृक्ष होते हैं । अमेरिका में इसके स्वयंजात वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं, तथा स्थान-स्थान पर इसकी खेती भी होती है । पत्तियाँ एकान्तर (Alternate), ४ से १५ सेंटीमीटर लम्बी, ३ से १० सेंटीमीटर चौड़ी तथा आकार में अंडाकार (Oval) से लट्वाकार (Ovate) तथा तीक्ष्णाग्र होती हैं । पर्णवृन्त (Petiole) छोटे तथा पत्र-तट लहरदार (Sinuate) या गोलदन्तुर (Crenate) होता है । फलक (Lamina) का रंग हरा या भूरापन लिए गाढ़े हरे रंग का होता है । पत्र-वयन (Texture) कागज़ की तरह (Papery) पत्तियों में एक हल्की गंध पाई जाती है तथा ये स्वाद में कषाय (Astringent) एवं तिक्त होती हैं ।

रासायनिक संघटन—(१) हेमामेलिटैनिन (Hamamelitannin) नामक मशिमीयतत्व; (२) गॉलिक एसिड (Gallic Acid) तथा (३) अत्यल्प मात्रा में एक उत्पत् तैल ।

हेमामेलिडिस पल्विस Hamamelidis Pulvis (Hamam. Pulv.)—लै०; पाउडर्ड हेमामेलिस (Powdered Hamamelis)—अं० । यह हरित वर्ण का चूर्ण होता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

स्थानिक ग्राही एवं रक्तस्तम्भक (Local astringent and Haemostatic) के रूप में इसके विभिन्न योगों का प्रयोग विभिन्न व्याधियों में किया जाता है । गल-व्रण (Sore-throat) में इसका गरारा (Gargle) किया जाता है । इसी प्रकार सव्रण-मुखपाक (Ulcerative stomatitis) तथा मसूड़ों से खून आने पर इसका प्रयोग बहुत लाभप्रद होता है । सूज़ाक, एवं मूत्र मार्ग से रक्तस्राव, नासास्राव (Nasal Catarrh) एवं नकसीर (Epis-

taxis) में इससे प्रक्षालन करने से बहुत लाभ होता है। हेमामेलिस सपॉजिटरी का प्रयोग शोफ युक्त एवं खूनी बवासीर (Bleeding Piles) में किया जाता है।

(ऑफिशल योग—I. P., & B. P. Preparation)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् हेमामेलिडिस सिक्कम् (Extractum Hamamelidis Siccum (Ext. Hamam. Sicc.)—ले०; ड्राइ एक्स्ट्रॅक्टम् ऑव हेमामेलिस Dry Extract of Hamamelis, एक्स्ट्रॅक्टम् ऑव हेमामेलिस Extract of Hamamelis—अं०; हेमामेलिस घनसत्व—सं०। इसका संग्रह खूब अच्छी तरह डाट बंद पात्रों में रखकर ठंढी जगह में करना चाहिए। इसका उपयोग हेमामेलिस सपॉजिटरी के निर्माण में किया जाता है।

२—सपॉजिटोरिआ हेमामेलिडिस Suppositoria Hamamelidis—ले०; हेमामिलिस सपॉजिटरी Hamamelis Suppository—अं; हेमामेलिस गुदवर्त्ति या हेमामेलिस की वर्त्ती—सं०, हिं०। प्रत्येक सपॉजिटरी या गुदवर्ति में ३ ग्रेन ड्राई एक्स्ट्रॅक्ट।

३—एक्स्ट्रॅक्टम् हेमामेलिडिस लिक्विडम् Extractum Hamamelidis Liquidum (Ext. Hamam. Liq.)—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव हेमामेलिस Liquid Extract of Hamamelis—अं०; हेमामेलिस का प्रवाही घनसत्व—सं, हिं०। इसका प्रयोग हेमामेलिस आयण्टमेंट के निर्माण में किया जाता है।

४—अंग्वण्टम् हेमामेलिडिस Unguentum Hamamelidis (Ung. Hamam.)—ले०; आयण्टमेंट ऑव हेमामेलिस—अं०; हेमामेलिस का मलहम—हिं०। निर्माण—लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव हेमामेलिस १० मि० लि०, ऊन की चर्बी (Wool fat) ५० ग्राम, मृदु पीतपाराफिन (Soft Yellow Paraffin) ४० ग्राम। गर्म खरल में इनको परस्पर मिलावें।

प्रकरण ६

(१) वृहत्कायाणिवक परमवर्णिक रक्तक्षय पर कार्यकर औषधियाँ :—

(Drugs used in Mocrocytic Anaemia)

एक्स्ट्रॅक्टम् हिपेटिस लिक्विडम् Extractum Hepatis Liquidum (Ext. Hepat. Liq.) I. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव लिवर (Liquid Extract of Liver)—अं०। यकृत का प्रवाही घनसत्व—सं० हिं०।

वर्णन—यह बैल या भेड़ या अन्य उपयुक्त जानवरों के यकृत (Liver) को सुरासार में विलीन कर उस विलयन में ग्लिसरीन, अल्कोहल् (सुरासार) तथा परिस्रुत जल मिलाकर बनाया जाता है। इसमें यकृत में पाये जाने वाला शोणितवर्धक तत्व होता है। लिवर एक्स्ट्रॅक्ट के पाण्डुनाशक शक्ति (Antianaemic potency) का निर्देश विटामिन बी$_{१२}$ (Vitamin B$_{१२}$) की मात्रा से प्रदर्शित किया जाता है। १ मि० लि० (सी० सी०) लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव लिवर में कम से कम ०·१ माइक्रोग्राम (mc. gm.) विटामिन बी$_{१२}$ होता है।

मात्रा—दैनिक अधिकतम मात्रा १ औंस या ३० मि० लि०। १ मात्रा में १ माइक्रोग्राम (mc gm.) विटामिन बी$_{१२}$ होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

यकृत में शोणितिक-द्रव्य (Haemopoietic principle) होता है, जिसके कारण इसका प्रयोग घातक-पाण्डु (Pernicious anaemia) आदि वृहत्कायाणिवक परम-वर्णिक प्रकार के रक्ताल्पता रोगों (Hyperchromic macrocytic anaemias) में विशिष्टरूपेण उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस तत्त्व का प्रभाव रक्तमज्जा की रुधिरोद्भावन क्रिया (Haemopoiesis) पर होता है, और यह रुधिरकायाणुओं के विकास में सहायक होता है। इस रक्तक्षयान्तक तत्त्व (Anti-anaemic principle) का अभाव होने से अपरिपक्व रुधिरकायाणु रक्त परिभ्रमण में आ जाते हैं, और वे क्रिया की दृष्टि से बिल्कुल व्यर्थ होते हैं। इस प्रकार उक्त रोगियों में यकृतसत्व का सेवन कराकर पूरक–चिकित्सा (Replacement therapy) द्वारा रक्तक्षयान्तक–द्रव्य के अभाव की पूर्ति की जाती है। अतएव यकृत का प्रयोग करने से रक्तकायाणुओं की स्थिति में सुधार होकर पूर्ण प्रगल्भ एवं क्रियाशील रुधिरकायाणु रक्तपरिभ्रमण में आते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप रोगी की सभी शिकायतें एवं उपद्रव शीघ्र शान्त होने लगते हैं। क्षुधा बढ़ती है, पाचन ठीक प्रकार से होने लगता है तथा शारीरिक शक्ति

बढ़ती है और रोगी अपने को स्वास्थ्यलाभ का अनुभव करने लगता है।[1] निम्नव्याधियों में बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्तक्षय होने के कारण यकृत-चिकित्सा (Liver therapy) बहुत उपयोगी होती है, यथा—(१) उष्णकटिबन्धिक (Tropical) बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्तक्षय जिसमें शोणितिक-तत्व के निर्माण में उपयोगी आहारगत बहिर्द्रव्य (Extrinsic factor Vitamin B_{12}) नामक तत्त्व का अभाव होता है, तथा अन्त्रों की श्लैष्मिक कला की प्रचूषणशक्ति (Absorption) क्षीण हो जाती है। विटामिन 'बी' के अभाव के कारण होनेवाले (पादग्राह पिलेग्रा Pellagra) नामक रोग में भी सम्भवतः इसी प्रकार की विकृति होती है। (२) एडीसन का रक्तक्षय (Addisonian pernicious anaemia)। (३) संग्रहणी (Tropical sprue) तथा गर्भवती का घातक पाण्डु। (४) आमाशयान्त्रप्रणाली की विकृति अथवा उसमें कृमिउपसर्ग होने से तथा यकृन्मन्दता के कारण उत्पन्न बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्तक्षय में। उक्त सभी अवस्थाओं में यकृत-सत्व का सेवन अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है। यकृत के मौखिक प्रयोग (Oral therapy) की अपेक्षा सूचिकाभरण (Parenteral therapy) द्वारा प्रभाव क्षिप्रतर होता है। घातक पाण्डु रोग की चरमावस्था में नाड़ी संस्थान में जो विकृति—विशेषतः सुषुम्नाकाण्ड का अपजनन (Degeneration of the spinal-cord)—होती है, उसमें भी लिवर एक्स्ट्रैक्ट इन्जेक्शन चालू रखने से लाभ होता है क्योंकि शोणितिक तत्त्व के घटक अन्तर्द्रव्य (Intrinsicfactor) में रक्तवर्धक तत्त्व के साथ-साथ नाड्युद्भावक तत्त्व (Neuropoietic principle) भी होता है। सम्भवतः इस प्रभाव में वही सहायक होता है।

सल्फावर्ग की औषधियों के सेवन के उपरान्त कभी-कभी जो अकणिक कायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) होता है, उसमें भी लिवर एक्स्ट्रक्ट का इन्जेक्शन उपयोगी सिद्ध होता है।

लौह के अभाव से होने वाले पाण्डु रोगों (Microcytic anaemias) में भी यकृत-चिकित्सा उपयोगी सिद्ध होती है। यकृत में शोणितिक तत्त्व के साथ-साथ ही लौह एवं ताम्र का भी संचय होता है। दूसरे प्रकार के पाण्डु रोगों में यकृत सम्भवतः लौह, ताम्र के कारण ही उपयोगी सिद्ध होता है।

आर्सेनिक तथा बिस्मथ के सेवन से कभी-कभी विपाक्त प्रभाव के उपद्रव स्वरूप उत्पन्न त्वग्रोग (Dermatitis) में भी यकृत-सत्व उपयोगी होता है।

---

१ आयुर्वेद में 'सामान्य योगचिकित्सा' करके चिकित्सा का एक सिद्धान्त है—धातवः पुनः शारीराः समानगुणैः समानगुणभूयिष्ठैर्वाऽप्याहारविहारैरभ्यस्यमानैर्वृद्धिं प्राप्नुवन्ति। एवमेव सर्वधातुगुणानां सामान्ययोगाद्वृद्धिः। तस्मान्मांसमाप्यायते मांसेन भूयस्तरमन्येभ्यः शरीरधातुभ्यस्तथालोहितं लोहितेन। कर्मापि यद्यस्यधातोर्वृद्धिकरं तत्तदासेव्यम्॥ चरक, शारीर ६॥ इस सिद्धान्त के अनुसार रक्तक्षय में यकृत्का सेवन कराया जा सकता है और आयुर्वेद में रक्तक्षय में रक्त तथा यकृत् दोनों का सेवन करने के लिये भी लिखा है—अतिनिःसृतरक्तो वा क्षौद्रयुक्तं पिबेदसृक्। यकृद्वाभक्षयेदाजमामंपित्तसमायुतम्॥ दे० सु० टी० घाणेकर।

यकृत में विटामिन 'बी कम्प्लेक्स' की प्रचुरमात्रा पाई जाती है। अतएव इसके अभाव से होने वाले रोगों में भी इसका सेवन लाभकारी होता है।[1]

सेवन-विधि—औषधीय रूप में लिवर (यकृत) का सेवन अनेक प्रकार से हो सकता है। या तो यह शुष्क (Dry) रूप से, अथवा लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट के रूप में या इसको पकाकर (Cooked liver) लिया जा सकता है। पकाकर लेना हो तो पावभर (½ पौंड) लिवर की दैनिक मात्रा पर्याप्त होती है। क्रिया की दृष्टि से १ औंस लिवर एक्स्ट्रैक्ट पावभर ताजे लिवर (कलेजी) के बराबर है। मुखद्वारा ताजा या पकाया हुआ यकृत (कलेजी) लेने में कई दोष हैं। एक तो कुछ दिन के बाद मरीज को अरुचि होने लगती है, दूसरे निरन्तर अधिक दिन तक सेवन करने पर पाचन-संस्थान सम्बन्धी विकारों के उत्पन्न होने की आशंका रहती है। भारतवर्ष में इस प्रकार लिवर के मौखिक सेवन में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि शाकाहारी एवं कट्टर धर्मनिष्ठ व्यक्तियों में इस प्रकार इसका सेवन किसी भी प्रकार साध्य नहीं होगा। लिवर के प्रयोग का सबसे उत्तम एवं अल्प-व्यय साध्य मार्ग है इन्जेक्शन द्वारा (Parenteral administration) इसका प्रयोग। इससे अपेक्षाकृत कम व्यय से, कम से कम समय में अधिक से अधिक लाभ प्राप्त होता है। एतदर्थ साधारणतया पेश्यन्तरिक सूचिकारण (Intramusenlar injection) ही अधिक उपयुक्त होता है। यद्यपि शिरामार्ग द्वारा सूचिकाभरण करने से और भी शीघ्र एवं अधिक लाभ होता किन्तु सम्भावी उपद्रवों को देखते हुए प्रायः इस मार्ग का अवलम्बन नहीं किया जाता और न करना चाहिए। सिद्धान्त के लिए शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त करने के लिए प्रतिकिलो० (Per Kilo.) शारीरिक भार प्रयुक्त करने ०·१ ग्राम के हिसाब से २० मिलिलिटर (२० सी. सी.) नार्मल सेलाइन सॉल्यूशन (Physiological Salt Solution) में बनाये गए इसके विलयन का प्रयोग किया जाता है। पेशीगत-सूचिका भरण के लिए विभिन्न कम्पनियों के लिवर एक्स्ट्रैक्ट बाजार में विभिन्न नामों से उपलब्ध होते हैं, जिनका संग्रह आगे किया जायगा। वक्तव्य—किन्हीं-किन्ही रोगियों में लिवर के प्रति असह्यता होने से प्रतिक्रियात्मक लक्षण (Reactions) प्रगट होते हैं। ऐसी अवस्था को सदा ध्यान में रखनी चाहिए। इससे सहसा मृत्यु तक हो सकती है। ये लक्षण निम्नलिखित हैं—इंजेकशन के स्थान में तीव्र पीड़ा का होना, रक्तभार के सहसा गिरने से नाड़ी की गति का मन्द पड़ना, पसीना आना, तथा अनूर्जिक उपद्रवों (Allergic manifestations) का प्रगट होना यथा, शीतपित्त (Urticaria) विशिष्ट रूप से श्वास के दौरे (Attack of Asthma) के समान लक्षण होना, निपात (Collapse), श्वासकृच्छ्र (Dyspnoea) तथा सार्वांगिक रक्तिमा (Gene-

---

१. अन्य जीवतिक्तियों की अपेक्षया जीवतिक्ति 'क' (Vitamin A) यकृत में अधिक होती है। रतौंधी के जो अनेक कारण हैं उनमें 'क' जीवतिक्ति का अभाव एक महत्व का का कारण है। यह एक आश्चर्य तथा संतोष की बात है कि आयुर्वेद में रतौंधी की चिकित्सा में यकृत सेवन का उपदेश किया गया है—

तथा यकृच्छागभवं हुताशने निपाच्य सम्यङ् मगधासमन्वितम्।
प्रयोजितं पूर्ववदाश्वसंशयं जयेत् क्षपांध्ये सकृदञ्जवान्नृणाम्॥

प्लीहायकृच्चाप्युपभक्षिते उभे प्रकल्प्य शूल्ये घृत तैल संयुते।
ते सार्षपस्नेहसमायुतेऽञ्जनं नक्तान्ध्यमाश्वेवं हतः प्रयोजिते॥ (सु० उत्तर १७)
खादेच्च प्लीहयकृती महिषे तैल सर्पिषा। (अष्टांगहृदय, उत्तर १४)।

ralised erythema) का उत्पन्न होना। चिकित्सा—ऐसी अवस्था में आगे औषधि तो बन्द कर ही देना चाहिए। तथा साथ ही एड्रिनेलीन का इंजेक्शन करना चाहिए तथा एन्टीहिस्टामिनिक योगों (एन्टिस्टिन आदि) का रिडॉक्सन (Redoxon) एवं कैल्सियम के साथ दिन में ३–४ बार प्रयोग करावें। हृदय को ताकत देने के लिए कोरामीन (Coramine) लिक्विड (१०–१२ बूंद थोड़े जल में मिलाकर ४–४ घंटे पर) मुखद्वारा अथवा आवश्यकतानुसार कोरामीन एम्पूल्स सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त करें।

(योग)

लाइकर हिपेटिस (Liquor Hepatis) U. S. P.—ले०; लिवर सोल्यूशन (Liver Solution)–अं०। यह भूरे रंग का द्रव होता है, जिसमें स्तनधारी जीवों के यकृत का रक्तवर्धक सत्व होता है। यह सत्व तापग्राही (Thermostable) होता है, तथा पाण्डु के रोगियों में इसका सेवन कराने से रक्त के लाल कणों (R. B. C.) में वृद्धि होती है। मात्रा—औसत मात्रा १ यू० एस० पी० (U. S. P.) युनिट।

२—इन्जेक्शिओ हिपेटिस क्रूडम् Injectio Hepatis Crudum (Inj. Hepat. Crud.) I. P.—ले०; लिवर इन्जेक्शन क्रूड (Liver Injection Crude)—अं०। यह हल्के भूरे रंग का द्रव होता है, जिसमें कभी धुंधलापन (Turbidity) तथा अधःक्षेप (Precipitate) भी दिखाई देता है। प्रत्येक मि० लि० (सी० सी०) में ५ माइक्रोग्राम (mcgm.) विटामिन बी १२ होता है। मात्रा (I.P. Dose)—प्रारम्भ में २ मि० लि० (२ सी० सी० अर्थात् १० माइक्रोग्राम विटामिन बी १२)। इसके बाद प्रति सप्ताह २ मि० लि० की एक मात्रा अथवा इसको कई मात्राओं में विभक्त कर देते हैं। मार्ग—पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा।

३—इन्जेक्शिओ हिपेटिस (Injectio Hepatis) U. S. P.—ले०; लिवर इन्जेक्शन—अं०; मात्रा (Average dose)—१ यू० एस० पी० युनिट।

हिपर प्रोटियोलाइजेटम् Hepar Proteolysatum (Hepar. Proteolysat.) I. P.—ले०; प्रोटियोलाइज्ड लिवर (Proteolysed Liver)—अं०।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—यह स्तनधारी उपयुक्त जीवों (जन्तुओं) के यकृत एवं पपेन (Papain) की परस्पर क्रिया से प्राप्त किया जाता है, जो हल्के खाकस्तरी-भूरे रंग के चूर्ण (Pale greyish-brown powder) अथवा भूरे रंग के पेस्ट (Paste) के रूप में उपलब्ध होता है। प्रत्येक ग्राम में कम से कम ०·१ माइक्रोग्राम (mcgm.) विटामिन बी$_{१२}$ होता है। विलेयता—जल में प्रायः घुल जाता है। मात्रा—प्रतिदिन १ फ्लुइड औंस या ३० मि० लि० एक मात्रा में अथवा सुविधानुसार कई मात्राओं में विभक्त करके दे सकते हैं।

प्रयोग—साधारण लिवर एक्स्ट्रैक्ट की अपेक्षा यह अधिक सुस्वादु (Palatable) होता है, अतएव सुविधापूर्वक मुखद्वारा इसका सेवन किया जा सकता है। प्रारम्भ में (Initial dose) ३० ग्राम की मात्रा दी जाती है, किन्तु बाद में प्रभाव को बनाए रखने के लिए (maintenance dose) ८ ग्राम प्रतिदिन लेना चाहिए। इसको दूध या पानी में घोलकर सेवन किया जाता है।

लिवर विद स्टमक Liver with stomach U. S. P. । यह स्तनधारी भक्ष्य जन्तुओं के यकृत एवं आमाशय सत्व का मिश्रण होता है, जो हल्के भूरे रंग के चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता हैं। मात्रा—१ युनिट (one U. S. P. unit)। अकेले लिवटर एक्स्ट्रैक्ट की अपेक्षा इसके सेवन से तिगुना-चौगुना लाभ होता है। एक्स्ट्रालिन (Extralin) कैप्स्यूल्स इसी के योग हैं । ३–४ कैप्स्यूल दिन में ३–४ बार आहार के साथ लिए जाते हैं।

वेन्ट्रिकुलस् डेसिकेटस् नॉट्–ऑफिशल Ventriculus Desiccatus ले०; डेसिकेटेड स्टमक (Desiccated. Stomach)।

पर्याय—वेंट्रिक्युलिन (Ventriculin); गैस्टर सिक्का (Gaster Sicca)।

वर्णन—यह सूअर, भेड़ या बैल के आमाशय का सत्व होता है, जिसमें से चर्बी का अंश पेट्रोलियम् बेंजीन के द्वारा पृथक कर दिया जाता है। इसमें कोई विशेष गन्ध या स्वाद नहीं होता है; मात्रा—¼ से १ औंस (८ से ३० ग्राम)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

पहले बताया जा चुका है कि बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्ताल्पता, रक्तक्षयान्तक तत्त्व (Antianaemic Principle) के अभाव से उत्पन्न होती है। यह रक्तक्षयान्तक या शोणितिक तत्त्व (Haemopoietic principle) आहारगत कैसिल का वहिर्द्रव्य (Castle's extrinsic factor) तथा आमाशयिक रस गत कैसिल का अन्तर्द्रव्य (Castle's intrnsic factor)—इन दोनों तत्त्वों की परस्पर क्रिया से उत्पन्न होती है। और आन्त्रों द्वारा प्रचूषित होकर यकृत में इसका संग्रह होता तथा अस्थिमज्जा में लालकणों (R. B. C.) के विकास में आवश्यक होता है। घातक पाण्डु (Pernicious anaemia) में आमाशयिकरस में कैसिल के अन्तर्द्रव्य का अभाव होता है। अतएव घातकपाण्डु आदि बृहत्कायाण्विक परमवर्णिक रक्ताल्पताओं (Macrocytic hyperchromic anaemias) में आमाशय सत्व का सेवन बहुत उपयोगी है। विशेषतः उन रोगियों में जिन्हें यकृत–चिकित्सा सह्य न हो, शुष्क आमाशय का सेवन आवश्यक है। १५ ग्राम शुष्क आमाशय प्रमुखतः १०० ग्राम ताजे आमाशय अथवा २०० ग्राम ताजे यकृत के बराबर होता है। इसका सेवन १ तो० (१० ग्राम) प्रतिदिन फलरस या दूध के साथ करना चाहिये। किन्तु गरम दूध या गरम जल से इसका सेवन नहीं करना चाहिए। जब रक्त कणों की संख्या स्वाभाविक (Normal) हो जाय तो मात्रा कम कर देनी चाहिए।

एसिडम् फोलिकम् (फोलिक एसिड) I. P., B. P.

Acidum Folicum (Acid. Folic.)—ले०। Folic Acid—अं०।

रासायनिक संकेत :—$C_{19}H_{19}O_6N_7$.

पर्याय—टेरोइलग्लुटामिक एसिड Pteroylglutamic Acid.

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से फोलिक एसिड, P—(2—amino —4—hydroxy—6—pterydil) Methylaminobenzoyl—4—(+)—glutamic acid, होता है; और 2: 4 : 5—triamino-6-hydroxypyrimidine एवं By—

dibromopropaldehyde तथा P—aminobenzoyl—L—(+)—glutamic acid की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ९४% से १०१% तक फोलिक एसिड (B. P.) अथवा कम से कम ९०% फोलिक एसिड (I. P.) पाया जाता है।

वर्णन—फोलिक एसिड नारंग-पीतवर्ण (Orange-yellow) का सूक्ष्मक्रिस्टलाइन चूर्ण (Microcrystalline powder) होता है, जो प्रायः गन्धहीन तथा स्वादहीन होता है। विलेयता—ठंडेजल में तो बिल्कुल नहीं घुलता, उबलते जल में भी अत्यल्प (५००० भाग में) घुलता है। अल्कोहल् (९५%) में भी अविलेय (Insoluble) होता है। (सोडियम् हाइड्रॉक्साइड) N/₁ Sodium hydroxide में पूर्णतः घुल जाता है, जिससे नारंगी के वर्ण का (Orange-brown) स्वच्छ सोल्यूशन प्राप्त होता है। संरक्षण—फोलिक एसिड को अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखकर प्रकाश से बचाना चाहिए और ठंडी जगह में संग्रह करना चाहिए।

मात्रा—५ से २० मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन) प्रतिदिन।

फोलिनिक एसिड Folinic Acid

(नॉट्-ऑफिशल)

पर्याय—साइट्रोवोरम् फैक्टर (Citrovorum factor); ल्युसोवोरिन् (Leucovorin)।

फोलिक एसिड, फोलिनिक एसिड का पूर्वरूप (precursor) है। शरीर में, यकृत में तथा अस्थिमज्जा में एस्कोरबिक एसिड की उपस्थिति में जैंथीन ऑक्सिडेज (Xanthine Oxidase) नाम किण्व की क्रिया से इसका रूपान्तर फोलिनिक एसिड में होता है और सम्भवतः फोलिक एसिड की क्रिया इसी रूप (फोलिनिक एसिड) में होती है। अतएव फोलिनिक एसिड में रक्ताल्पता नाशक गुण स्वभावतः अधिक होता है। अतएव फोलिक एसिड की भांति इसका भी उपयोग वृहत्कायाण्विक रक्ताल्पता (Megaloblastic auaemias) में किया जा सकता है। मात्रा—३ मि० ग्रा० ($\frac{1}{20}$ ग्रेन) प्रतिदिन, मुखद्वारा अथवा शिरामार्ग द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

फोलिक एसिड, विटामिन 'बी कम्पलेक्स' का उपादान है। रक्तमज्जा के गुण-कर्म के समुचित रूप से सम्पादन के लिए इसकी उपस्थिति आवश्यक है। इसके अभाव से प्रगल्भ लाल-कणों का निर्माण नहीं होता; परिणामतः वृहत्कायाण्विक पाण्डु या रक्ताल्पता (Macrocytic anaemia) की उत्पत्ति होती है। आंतों में नैसर्गिक रूप से भी इसका संश्लेषण होता रहता है। रक्तमज्जा की क्रिया के अतिरिक्त शारीरिक कोशाओं एवं जीवाणुओं की संख्या वृद्धि के लिए भी फोलिक एसिड की उपस्थिति आवश्यक,सी होती है। इसका अभाव होने से जीवाणुओं की संख्या वृद्धि में अवरोध होता है। सल्फोनेमाइड्स के सेवन से आंतों में फोलिक एसिड का नैसर्गिक संश्लेषण एवं प्रचूषण ठीक ढंग से नहीं होता। इस प्रकार फोलिक एसिड संश्लेषण का नियंत्रण सल्फोनेमाईड्स के जीवाणु नाशक-क्रिया में सहायक होता है। अतएव फोलिक एसिड का अभाव होने पर वृहत्कायाण्विक रक्ताल्पता के अतिरिक्त श्वेयकायाणुओं की संख्या में कमी (Leucopenia) तथा अतिसार (Diarrhoea) एवं दंतवेष्ठशोथ (Gingivitis) आदि उपद्रव भी उत्पन्न होते हैं।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से तथा इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर सूचिकाभरण के स्थान से पूर्णतया शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त किण्वों की सहायता से फोलिक एसिड स्वतन्त्र होकर अपने गुण कर्मों का सम्पादन करता है। इकट्ठे एक मात्रा में मुख द्वारा सेवन किये जाने पर अधिकांश भाग का उत्सर्ग मूत्र के साथ होता है। आंतों की श्लैष्मिक-कला की विकृति से जब आहार रस का प्रचूषण ठीक तरह से नहीं होता, तो फोलिक एसिड का भी शोषण कम होकर अभाव की स्थिति उत्पन्न होती है।

आमयिक प्रयोग—उन सभी विकृतियों में जिनमें बृहत्कायाण्विक रक्ताल्पता का उपद्रव होता है, फोलिक एसिड का प्रयोग उपयोगी पाया जाता है। अतएव एडिसन का घातक पाण्डु (Addisonian Pernicions Anaemia), दुष्पोष्यताजन्य बृहत्कायाण्विक पाण्डु (Nutritional macrocytic anaemia), गर्भावस्था का बृहत्कायाण्विक पाण्डु, पिलेग्रा (त्वग्ग्राह), ग्रहणी (Sprue) तथा अकारणज वसाप्रवाहिका (Idiopathic steatorrhoea) आदि में उपयोगी है। किन्तु घातक पाण्डु में अकेले फोलिक एसिड चिकित्सा (Folic acid therapy) पर्याप्त नहीं होती। एतदर्थ इसको लिवरएक्स्ट्रैक्ट तथा विटामिन बी१२ के साथ प्रयुक्त करना चाहिए। जिन लोगों को यकृतसत्व सह्य न हो और अनूर्जिक (Allergic) प्रतिक्रिया की आशंका हो, उनमें केवल फोलिक एसिड तथा विटामीन बी१२ का प्रयोग करने से भी काम चल सकता है, सल्फोनेमाइड के चिकित्सा क्रम में उत्पन्न अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) में भी फोलिक एसिड के प्रयोग से उपद्रव का निवारण होता है।

सेवन-विधि—फोलिक एसिड की साधारण औपशयिक मात्रा (Therapeutic dose) १० से २० मि० ग्रा० ($\frac{१}{६}$ से $\frac{१}{३}$ ग्रेन) प्रतिदिन होती है, जो मुखद्वारा या इंजेक्शन के रूप में १०-१५ दिन तक प्रयुक्त की जाती है। जब अधिक समय तक औषधि क्रम चालू रखने की आवश्यकता हो तो प्रतिदिन एक ही मात्रा में औषधि (१०० से १५० मि० ग्रा० मुखद्वारा या ७५ से १५० मि० ग्रा० इंजेक्शन द्वारा) दी जाती है। जब रोगी काबू में आ जाय तो औषधि का प्रभाव बनाये रखने के लिए सप्ताह में १ बार २५ मि० ग्रा० (मुखद्वारा) या २० मि० ग्रा० (इंजेक्शन द्वारा) देते रहें।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—टॅबेली एसिडाई फोलिसाइ Tabellae Acidi Folici (Tab. Acid. Folic.) B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव फोलिक एसिड, फोलिक एसिड टबलेट स—अं०। मात्रा (फोलिक एसिड)—५ से २० मि० ग्रा० ($\frac{१}{१२}$ से $\frac{१}{३}$ ग्रेन) प्रतिदिन। वक्तव्य—यदि प्रति टॅबलेट में फोलिक एसिड की मात्रा का निर्देश न हो तो ५ मि० ग्रा० फोलिक एसिड की टॅबलेट देनी चाहिए।

२—फोलिकएसिड इंजेक्शन (Folic Acid Injection)। पर्याय—सोडियम् फोलेट (Sodium Folate)। यह सोडियम् टेरोइलग्लुटामेट (Sodium teroylglutamate) का सोल्यूशन होता है, जो पीले रंग का या नारंग पीतवर्ण का स्वच्छ, चन्चल (Mobile) द्रव होता है। प्रति सी० सी० सोल्यूशन में १५ मि० ग्रा० फोलिक एसिड होता है। इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है।

सायनोकोवालामिनम् I. P., B. P.

Vitamin B_{12} (विटामिन वी$_{१२}$)

नाम—सायनोकोवालामिनम् Cyanocobalaminum (Cyanocobalamin.) —ले०; सायनोकोवालामिन Cyanocobalamin—अं०।

पर्याय—विटामिन वी$_{१२}$ (Vitamin B_{12})। अन्यनाम—रुब्रामिन Rubramin; एनाकोविन Anacobin. LLD factor ; जीवतिक्ति 'ख'$_{१२}$।

वर्णन—इसके गाढ़े लालरंग के मणिभ (Crystals) होते हैं अथवा मणिभीय चूर्ण (Crystalline powder) के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन एवं स्वादरहित होता है। इसमें आर्द्रता ग्रहण करने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) होती है । विलेयता—यह जल में अल्पतः (२०° तापक्रम पर ८० भाग जल में) विलेय होता है , और अल्कोहल् (९५%) में अच्छी तरह घुल जाता है। किन्तु एसिटोन, क्लोरोफॉर्म एवं सालवेंट ईथर में अविलेय होता है। मात्रा—पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा—

(१) प्रारम्भिक मात्रा (Initial dose)—५० से १०० माइक्रोग्राम (Micrograms) सप्ताह में एक बार।

(२) धारकमात्रा (Maintenance dose) —५० से १०० माइक्रोग्राम २–३ सप्ताह में एक बार।

वक्तव्य—विटामिन वी$_{१२}$ यकृत से सर्व-प्रथम १९४८ ई० में पृथक् किया गया था। परीक्षण द्वारा लेक्टोवेसिलस् लेक्टिस (Lactobacillus lactis Dorner) की वृद्धि के लिए यह आवश्यक पाया गया था, इसीलिए इसका एक नाम LLD factor रखा गया था । विटामिन वी$_{१२}$ के रासायनिक स्वरूप का विनिश्चय ठीक प्रकार से नहीं हो सका है, किन्तु इसमें ४½% कोवाल्ट पाया जाता है, जो लौह के अभाव से होने वाले रक्ताल्पता में वहुत उपयोगी पाया जाता है। नैसर्गिक रूप से यह अत्यल्प मात्रा में जन्तुओं के यकृत में पाया जाता है । जन्तुओं के विभिन्न शारीरिक धातुओं में जीवाणुओं की क्रिया से यह संश्लिष्ट होता है। मानव शरीर के वृहदन्त्र में जीवाणुओं की क्रिया से वनता है, किन्तु शोषित नहीं होता। स्ट्रेप्टोमाइसीज ग्रिसियस से भी प्राप्त होता है। व्यावसायिक रूप में यह इसी से प्राप्त किया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

शोषण, धातुओं में वितरण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर इसके शोषण के लिए आमाशय में अन्तर्द्रव्य की उपस्थिति आवश्यक होती है । इसीलिए वृद्धावस्था, वसा के अनपच से होने वाले अतिसार (Steatorrhoea) तथा आमाशय में अम्लता की कमी होने पर इसका शोषण-समुचित रूप से नहीं होता। घातक-पाण्डु (Pernicious anaemia) में भी इसका शोषण नहीं होता, अतएव चिकित्सार्थ इसका प्रयोग प्रायः पेशीगत सूचिका भरण द्वारा अधिक उपयुक्त होता है। पेशीगत तथा अवस्त्वक् सूचिका भरण द्वारा प्रयुक्त करने पर इंजेक्शन के स्थल से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है, और घंटा भर के अन्दर रक्तगत संकेन्द्रण अधिकतम हो जाता है। विटामिन वी$_{१२}$ का निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है। आंतों से जो भाग शोषित नहीं होता, उसका उत्सर्ग मल के साथ होता है।

कार्य—विटामिन बी$_{१२}$ रक्तमज्जा में प्रगल्भ लालकणों (Mature R. B. C.) के निर्माण में सहायक होता है, तथा घातक-पाण्डु के सभी नाड़ी–विकृतियों का भी दमन करता है। इसके अतिरिक्त यह अपस्तरीय कोशाओं (Epithelial cells) की वृद्धि में भी सहायक होता है। इसमें नाड़ीपोषक गुण (Neurotrophic action) भी पाया जाता है। विटामिन बी$_{१२}$ प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं वसा (Fat) के समवर्त (Metabolism) में भी भाग लेता है। शरीरगत धातुओं में न्युक्लीक एसिड (Nucleic acid), ग्लाइसीन (Glycine), मेथिओनीन (Methionine) तथा कोलीन (Choline) के संश्लेषण (Synthesis) में भी मुख्य रूप से उत्तरदायी होता है। विटामिन बी$_{१२}$ की क्रिया से कार्बोहाइड्रेट का रूपान्तर वसा (Fat) में होता है। इसके अतिरिक्त इस विटामिन की सहायता से केरोटीन (जो विटामिन 'ए' का पूर्वरूप है) का संचय धातुओं में अधिकाधिक होता है।

आमयिक प्रयोग—विटामिन बी$_{१२}$ का प्रधान उपयोग घातक पाण्डु (Pernicious anaemia or Addison's disease) की चिकित्सा में किया जाता है। किन्तु यह आमाशयगत शोणितवर्धक अन्तर्द्रव्य (Intrinsic factor) की उत्पत्ति को उत्तेजित नहीं करता। अतएव लाभ इसके प्रयोग के साथ-साथ ही बंधा होता है। इसके लिए प्रारम्भ में १ सप्ताह तक प्रतिदिन ३० से ५० माइक्रोग्राम विटामिन बी$_{१२}$ पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा देनी चाहिए। इसके बाद यही मात्रा सप्ताह में २ बार दी जाती है, जब तक कि रक्त की स्थिति सामान्य न हो जाय। अब प्रभाव को बनाए रखने के लिए ५० माइक्रोग्राम की मात्रा महीने में १ बार दी जाती है। स्थिति अधिक गम्भीर होने पर अथवा नाड़ी संस्थान की विकृति होने पर मात्रा अपेक्षाकृत अधिक देनी पड़ती है। साधारण अवस्थाओं में सप्ताह से १ बार १ मि० ग्राम की मात्रा मुखद्वारा देने से भी कार्य हो जाता है। उष्णकटिबन्धज ग्रहणी (Tropical Sprue) एवं अन्य प्रकार की ग्रहणी (Non-tropical Sprue) में १५ से ३० माइक्रोग्राम प्रतिदिन देना चाहिए इसप्रकार १ सप्ताह तक औषधि देने के बाद इसके प्रभाव को बनाए रखने के लिए उक्त मात्रा सप्ताह में १ बार देने की आवश्यकता पड़ती है। अपोषणज बृहत्कायाण्विक रक्ताल्पता (Nutritional macrocytic anaemia) में ५० माइक्रोग्राम सप्ताह में २ बार करके २ सप्ताह तक, इसके बाद उक्त मात्रा दो सप्ताह के बाद एक बार देनी चाहिए। नाड़ी-विकृति अधिक होने पर एक दिन के अन्तर से १०० से १,००० माइक्रोग्राम तक देना पड़ता है।

उपर्युक्त विकृतियों के अतिरिक्त यह अनूर्जिक अधस्त्वग्धातुशोथ (Allergic dermatitis) तथा विषाणुजन्य यकृच्छोफ (Viral hepatitis) में भी उपयोगी बतलाया जाता है।

सेवन-विधि—सायनोकोबालामिन का प्रयोग बहुधा पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा ही किया जाता है, क्योंकि इस प्रकार प्रयुक्त होने पर पूरी औषधि शोषित हो जाती है, और इस प्रकार थोड़े मात्रा में भी क्षिप्रतापूर्वक इसकी क्रिया होती है। आमाशय के अन्तर्द्रव्य के साथ मिलाकर इसका सेवन मुख द्वारा भी किया जा सकता है। उपर्युक्त मार्गों के अतिरिक्त इसका प्रयोग श्वसन मार्ग से प्रधमन (Insufflation) के रूप में भी किया जाता है। इसके लिए

चूर्ण रूप में अथवा ईरोसल (aerosol) के रूप में लवणजल में बनाया हुआ इसका विलयन भी प्रयुक्त कर सकते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ सायनोकोबालामिनाइ Injectio Cyanocobalamini (Inj. Cyanocobalamin.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सायनोकोबालामिन, इन्जेक्शन ऑव विटामिन बी१२—अं०। यह 'इन्जेक्शन ऑव सोडियम् क्लोराइड' में बनाया हुआ सायनोकोबालामिन का सोल्यूशन होता है, जो विसंक्रमित किया हुआ (Sterile) होता है। इसमें ७९.५% से ९६.५% तक शुष्क सायनोकोबालामिन (Anhydrous cyanocobalamin) होता है। मात्रा—सायनोकोबालामिन की भांति। मात्रा का निर्देश न होने पर १ मि० लि० (१ सी० सी०) में ५० माइक्रोग्राम (mcgm.) के बलका सोल्यूशन देना चाहिए।

(नॉट-ऑफिशल)

१—सायनोकोबालामिन विद इन्ट्रिन्जिक फैक्टर कन्सन्ट्रेट (Cyanocobalamin with intrinsic factor Concentrate—यह विटामिन बी१२ अर्थात् वहिर्द्रव्य (Extrinsic factor) तथा भोज्य जन्तुओं के आमाशय की श्लैष्मिक कला में पाये जाने वाले अन्तर्द्रव्य (Intrinsic factor) का मिश्रण होता है। इसका सेवन मुखद्वारा किया जाता है। इसमें विशेषता यह होती है कि अन्तर्द्रव्य के होने के कारण विटामिन बी १२ के शोषण में सहायता मिलती है। १ युनिट (U. S. P. unit) में १५ माइक्रोग्राम (mcgm.) विटामिन बी१२ तथा ३०० माइक्रोग्राम अन्तर्द्रव्य होता है। मात्रा—१ से २ युनिट (U. S. P units) प्रतिदिन कई मात्राओं में विभक्त करके।

(२)—सूक्ष्मकायाण्विक उपवर्णिक रक्तक्षय में प्रयुक्त औषधियाँ—

फेरम् Ferrum (लौह) I. P., B. P. C.

रासायनिक संकेत :—Fe.

नाम—लोहा—हिं०, बं०; लोह, शस्त्र, अयस्—सं०; लोखंड—म०; लोढुं—गु०; हदीद—अ०; आहन—फा०; फेरम् Ferrum—ले०; आयर्न (Iron) अं०।

प्राप्ति-साधन—इसके लिए ०.१ मि० मि० व्यास के तार प्रयुक्त होते हैं।

वक्तव्य—लौह के लवण ३ वर्गों में विभाजित किये जा सकते हैं—(१) फेरस् साल्ट्स या प्रोटोसाल्ट्स (Protosalts) या फेरस ऑक्साइड व्युत्पन्न लवण; (२) फेरिक साल्ट्स या परसाल्ट्स (Persalts) अथवा फेरिक ऑक्साइड से व्युत्पन्न लवण तथा (३) लौह के पर्पटी यौगिक (Scale Preparations)।

फेराइसल्फास Ferri Sulphas (Ferr. Sulph.) I. P., B. P.

फेरस सल्फेट (Ferrous Sulphate)—अं०।

रासायनिक संकेत : $Fe SO_4, 7H_2O$.

नाम—कसीस, हीरा कसीस—हिं०; काशीश (कासीस), खेचर, खग—सं०; हिराकस—बं०; म०; हीराकसी (–शी)—गु०; जाज़ अख्जर—अ०; जाज़ सब्ज—फा०।

प्राप्ति-साधन—लौह पर मन्दबल गंधकाम्ल (Diluted Sulphuric acid) की क्रिया से फेरस सल्फेट प्राप्त होता है। इसमें ९७% से १०३% तक फेरससल्फेट होता है।

वर्णन—कशीस या फेरस सल्फेट के पारदर्शक हरे रंग के क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा हल्का पीलापन लिए नीलाभ हरित वर्ण का (Pale bluish-green) क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन होता है तथा स्वाद में धात्वीय (Metallic) एवं कसैला होता है। हवा में खुला रहने से प्रस्फुटित हो जाता (Efflorescent) है। आर्द्र वायुमण्डल में खुला रहने से, वायुमंडल से आक्सीजन ग्रहण कर कुछ अंश फेरिक सल्फेट में परिणित हो जाता है। इस प्रकार विकृत होने पर इसका रंग भी बदल कर भूरापन लिए पीले रंग का हो जाता है। इस तरह विकृत हुए कासीस का व्यवहार औषधि के रूप में नहीं करना चाहिए।

विलेयता—जल में अच्छी तरह घुल जाता है। संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाट बंद पात्रों में रखना चाहिये।

मात्रा—०·२ से ०·३ ग्राम (३ से ५ ग्रेन)। वक्तव्य—५ ग्रेन फेरस सल्फेट में ६० मि० ग्रा० या १ ग्रेन लौह (Iron) होता है।

फेराइ सल्फास एक्सिकेटस Ferri Sulphas Exsiccatus (Ferr. Sulph. Exsic.) I. P., B. P.—ले०; एक्सिकेटेड फेरस सल्फेट (Exsiccated Ferrous Sulphate)—अं०; जलांशरहित कासीस—हिं०।

प्राप्ति-साधन—फेरस सल्फेट से क्रिस्टलीकरण का जल निकाल देने से एक्सिकेटेड फेरस सल्फेट (Fe SO४.) प्राप्त होता है। इसमें कम से कम ७७ प्रतिशत फेरस सल्फेट होता है।

वर्णन—खाकस्तरी सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो स्वाद में धात्वीय एवं कसैला (Metallic and astringent) होता है। विलेयता—ताजे शृतशीत (Boiled and cooled) जल में धीरे-धीरे किन्तु पूर्णतः घुल जाता है।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन (६० से २०० मि० ग्रा०)। ३ ग्रेन में १ ग्रेन लौह होता है।

फेराइ ग्लुकोनास Ferri Gluconas (Ferr. Glucon.) I. P.—ले०; फेरस ग्लुकोनेट (Ferrous Gluconate)—अं०।

रासायनिक संकेत : $Fe (C_6H_{11}O_7)_2 . 2H_2O.$

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—फेरस ग्लुकोनेट, बेरियम् ग्लुकोनेट एवं फेरस सल्फेट के जलीय विलयन को परस्पर मिलाकर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह पीताभ भूरे रंग का (Yellowish-grey) या हरिताभ-पीले रंग का (Pale greenish-yellow) सूक्ष्म चूर्ण होता है, जिनमें जली हुई चीनी की सी हल्की गंध पाई जाती है। विलेयता—जल में अच्छी तरह घुल जाता है।

मात्रा—४ से ६ ग्रेन (०.२५ से ०.३५ ग्राम)।

फेराइ कार्बोनास सेकेरेटस Ferri Carbonas Saccharatus (Ferri. Carb. Sacch.) B. P. C.—ले०; सेकेरेटेड (Saccharated) फेरस कार्बोनेट, सेकेरेटेड आयर्न कार्बोनेट—अं०।

वर्णन—यह जैतूनी-भूरे रंग का (Olive-brown) चूर्ण होता है, जिसमें लोहे का सा हल्का स्वाद होता है। नमी में खुला रहने से आर्द्रता सोखने की साधारण प्रवृत्ति (Slightly hygroscopic) पाई जाती है। विलेयता—जल में अंशतः विलेय (Partly Soluble) अर्थात् थोड़ा-थोड़ा घुलता है। डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड में भी घुल जाता है और झाग उठता है।

मात्रा—१० से ३० ग्रेन (०.६ से २ ग्राम)।

असंयोज्य पदार्थ—अम्ल, आम्लिकलवण, वानस्पतिक कषायद्रव्य।

लाइकर फेराइ परक्लोराइडाइ (Liquor Ferri Perchloridi (Liq. Ferr. Perchlor.), सोलुशिओ फेराइ परक्लोराइडाइ Solutio Ferri Perchloridi (Sol. Ferr. Perchlor.) I. P., B. P.—ले०; सोल्यूशन ऑव फेरिक परक्लोराइड(Solution of Ferric Perchloride)—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह फेरिक क्लोराइड ($FeCl_3$) का जलीय विलयन होता है, जिसमें १५% (W/V) फेरिक क्लोराइड होता है। इस प्रकार १५ बूंद में २½ ग्रेन फेरिक क्लोराइड या ⅘ ग्रेन लौह होता है।

वर्णन—फेरिक क्लोराइड सोल्यूशन पीताभ-भूरे रंग का (Yellowish-brown) स्वच्छ द्रव होता है, जिसमें हाइड्रोक्लोरिक एसिड की हल्की गंध आती है, तथा स्वाद में अत्यन्त कसैला होता है। मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

फेराइ एट अमोनियाइ साइट्रास Ferri et Ammonii Citras (Ferr. et Ammon. Cit.) I. P., B. P.—ले०; फेरिक अमोनियम् साइट्रेट (Ferric Ammonnium Citrate), आयर्न एण्ड अमोनियम् साइट्रेट—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह साइट्रिक एसिड के गरम जलीय विलयन एवं ताजा प्रक्षिप्त फेरिक हाइड्रॉक्साइड तथा सोल्यूशन ऑव अमोनिया को परस्पर मिलाने से प्राप्त होता है। इसमें २०·५% से २२·५% तक लौह (Fe) होता है।

वर्णन—फेरिक अमोनियम् साइट्रेट की गाढ़े लालरंग की पतली एवं पारदर्शक पपड़ियाँ (Scales) होती हैं, अथवा दाने (Granules) होते हैं। कभी-कभी यह भूरापन लिए लालरंग के दानेदार चूर्ण के रूप में भी प्राप्त होता है। यह प्रायः गंधहीन, तथा स्वाद में कसैला होता है। हवा में खुला रहने से पसीजता (Deliquescent) है। प्रकाश के प्रभाव से भी विकृत हो जाता है। विलेयता—जल में अच्छी तरह घुल जाता है। किन्तु अल्कोहल् (९५%) में अविलेय (Insoluble) होता है। मात्रा—१५ से ४५ ग्रेन (१ से ३ ग्राम)। इसमें ४५ ग्रेन फेरिक अमोनियम् साइट्रेट में १५ ग्रेन लौह होता है।

फेराइ एट क्विनीनी साइट्रास Ferri et Quininae Citras (Ferr. et Quinin. Cit.) I. P., B. P. C.—ले०; आयर्न एण्ड क्विनीन साइट्रेट—अं०।

प्राप्ति-साधन—फेरिक क्विनीन साइट्रेट, फेरिक हाइड्रॉक्साइड, क्विनीन एवं साइट्रिक एसिड के गरम जलीय विलयन तथा सोल्यूशन ऑव अमोनिया को परस्पर मिलाने से प्राप्त होता है। इसमें १४½% से १५½% क्विनीन तथा १२ से १४ प्रतिशत लौह होता है।

वर्णन—इसकी पतली हरापन लिए पीलेरंग की पपड़ियाँ होती हैं, जो स्वाद में क्विनीन की तरह किंचित् तिक्त एवं लौह के स्वाद वाली होती हैं। हवा में खुला रहने से पसीजती हैं। विलेयता—जल में अच्छी तरह घुल जाती है।

मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०'२ से १ ग्राम)।

गुण-कर्म।

बाह्य - अक्षत त्वचा पर लौह के लवणों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता और न तो इनका शोषण ही होता है। किन्तु जिस स्थल की त्वचा छिल गई हो तथा श्लैष्मिक कलाओं एवं व्रणों पर यह ग्राही (Astringent) एवं रक्तस्तम्भक (Styptic) प्रभाव करते हैं।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र प्रणाली—मुख—आहारगत कषायाम्ल (Tannic acid) का लौह के साथ संसर्ग होने पर आयरन टैनेट के रूप में प्रक्षिप्त होने के कारण जिह्वा तथा दाँत काले हो जाते हैं। यहाँ भी ग्राही तथा स्तम्भक (Styptic) प्रभाव करते हैं।

आमाशय—लौह के सभी योग चाहे जिस रूप में मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशय में क्लोराइड के रूप में रूपान्तरित हो जाते तथा ग्राही (Astringent) प्रभाव करते हैं। अधिक मात्रा में अथवा दीर्घकाल तक निरन्तर सेवन किए जाने पर लौह के सभी लवण आमाशय में क्षोभ, अग्निमांद्य, अजीर्ण, शूल, हृल्लास एवं वमन उत्पन्न करते हैं। शोषण के पूर्व सभी फेरिक-अयन फेरस-अयन के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। आम्लिक प्रतिक्रिया में इनका शोषण सुगम होने के कारण लौह-अयनों का शोषण प्रायः ग्रहणी तथा क्षुद्रान्त्र के प्रथम भाग (Jejunum) से ही होता है। लौह के अन्य लवणों की अपेक्षा पर्पटी योग प्रयोगार्थ अधिक उपयुक्त होते हैं, क्योंकि इनसे पाचनादि की उपरोक्त विकृतियाँ प्रायः नहीं होतीं। इसके अतिरिक्त इनमें दूसरी विशेषता यह भी होती है, कि आमाशय में अन्य लौह-लवणों की भांति पर्पटी योग ग्राही प्रभाव भी नहीं करते।

अन्त्र—अन्त्र के अन्तिम भाग में क्षारीय प्रतिक्रिया के प्रभाव से लौह के फेरस यौगिक अविलेय फॉस्फेट, कार्बोनेट आदि में परिवर्तित हो जाते हैं। तदनन्तर स्थानिक प्रभाव के कारण यह मलविबन्ध (Constipation) उत्पन्न करते हैं तथा मल काले रंग का हो जाता है।

शोषण एवं समवर्त-क्रिया (Absorption and Metabolism)—लौह के शोषण की दर वास्तव में शारीरिक आवश्यकता पर निर्भर करता है। जब शरीर में लौह की आवश्यकता अधिक होती है—यथा अत्यधिक रक्तस्राव होने पर तथा लौह के अभाव से होने वाले रक्तक्षय में—तो लौह का शोषण भी अत्यधिक होता है। सामान्यतः शरीर में लौह के संतुलन के लिए आहार से लौह की पर्याप्त मात्रा प्राप्त हो जाती है। लौह का शोषण केवल अयनिक रूप (Ionic form) में ही हो सकता है। अतएव लौह के कार्बनिक यौगिक (Organic Compounds) इस दृष्टि से व्यर्थ से होते हैं, क्योंकि इनमें लौह धातु इस रूप में होती है, कि अयनिक रूप में उसका रूपान्तर नहीं हो सकता। किन्तु अकार्बनिक यौगिकों (Inorganic Compound) में लौह अयनिक रूप में होता है अतएव इनका शोषण भी सुगमता पूर्वक होता है। इस दृष्टिकोण से लौह के एक तीसरे प्रकार के यौगिक होते हैं—द्वितीयक लवण जिनमें

साइट्रिक एवं टारटरिक एसिड होते हैं—जिनमें लौह होता तो है अनयनीभवन (Non-ionisable) रूप में किन्तु इनका वियोजन अयनों के रूप में हो जाता है। आहार में भी लौह कार्बनिक एवं अकार्बनिक यौगिक दोनों रूपों में पाया जाता है, जिनमें दूसरे प्रकार का शोषण तो सुगमता पूर्वक हो जाता है, किन्तु पहले प्रकार के यौगिकों में बिना विशेष परिवर्तन हुए यह सम्भव नहीं होता। लौह के शोषण में दूसरी आवश्यक परिस्थित है आन्त्रों की प्रतिक्रिया (Reaction)। आम्लिक प्रतिक्रिया में शोषण शीघ्रता पूर्वक होता किन्तु क्षारीय प्रतिक्रिया में प्रायः नहीं होता है। यही कारण है कि लौह का शोषण ग्रहणी एवं मध्यांत्र (Jejunum) के ऊर्ध्व भाग को छोड़कर शेष आन्त्रों से नहीं होता और बृहदन्त्र से तो बिल्कुल नहीं होता। लौह के सभी यौगिक का शोषण के पूर्व फेरस (Ferrous) रूप में परिवर्तित होना आवश्यक है। शोषणोपरान्त शीघ्र ही लौह रक्तपरिभ्रमण से पृथक होकर प्रधानतः यकृत में तथा अंशतः प्लीहा एवं वृक्कों में संग्रहीत होता है।

लौह के समवर्त से विटामिन का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है, विटामिन 'सी' एवं 'डी' का। इनमें विटामिन 'सी' लौह के फेरिक लवणों का रूपान्तर फेरस लवणों में करने में सहायक होता है, और इस प्रकार लौह के शोषण में यह परमोपयोगी है। विटामिन 'डी' शोणवर्तुलि के निर्माण तथा लौह के संग्रह में सहायक होता है।

शरीर में लौह का मुख्य उपयोग हीमोग्लोबिन (शोणवर्तुलि) के निर्माण में होता है। इस परिवर्तन के लिए अल्पमात्रा में ताम्र (Copper) की उपस्थिति भी आवश्यक होती है। किन्तु यह केवल योगवाही (Catalytic agent) के रूप में कार्य करता है। रक्त में पाये जाने वाले ताम्र की आधी मात्रा प्रायः हीमोग्लोबिन में पाई जाती है। इस प्रकार रुधिरोद्भावन की क्रिया में ताम्र भी एक आवश्यक उपकरण है। सामान्यावस्था में यह मात्रा आहार से ही प्राप्त हो जाती है। ताम्र के साथ मैंगेनीज का सहयोग होने से ताम्र की क्रिया और भी तीव्र हो जाती है।

प्रतिदिन लालकणों की कुछ संख्या दैनिक कार्य के परिणाम स्वरूप नष्ट होती रहती है। किन्तु इन नष्ट लालकणों से जो लौह स्वतन्त्र होता है वह उत्सर्गित न होकर हीमोसिडेरिन कणिकाओं (Haemosiderin granules) के रूप में जालकान्तस्तरीय संस्थान की कोशाओं (Reticulo-endothelial cells) में संग्रहीत होता तथा हीमोग्लोबिन के निर्माण में संचित लौह की अपेक्षा पहले यही प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार शिरामार्ग द्वारा प्रविष्ट लौह भी संचित लौह के पहले ही एतदर्थ उपयुक्त किया जाता है।

उत्सर्ग—जैसा पहले कहा जा चुका है नष्ट लालकणों से प्राप्त लौह उत्सर्गित न होकर शरीर में संचित होता तथा पुनः हीमोग्लोबिन के निर्माण में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार लौह की बहुत कुछ आवश्यकता की पूर्ति उसी से हो जाती है। अतएव साधारण अवस्थाओं में लौह का शोषण एवं उत्सर्ग दोनों ही बहुत अल्प मात्रा में होते हैं। लौह का निस्सरण प्रधानतः मल के साथ ही (१० से ५० मि० ग्राम प्रतिदिन) होता है। मूत्र से भी अत्यल्प मात्रा में (०.२५ से ०.३ मि० ग्रा०) उत्सर्गित होता है।

लौह के आमयिक[1] प्रयोग।

वाह्य—लाइकर फेराइ परक्लोर० में बराबर मात्रा में ग्लिसरिन मिलाकर, ग्राही गुण के लिए इसका प्रलेप गल (Throat) एवं टांसिल के रोगों में किया जाता है—यथा कण्ठशालूक (Enlarged tonsils), गलरोहिणी (Diptheria) तथा ग्रसनिका-शोथ (Pharyngitis) आदि रोग।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र प्रणाली—ग्राही गुण के कारण अतिसार-प्रवाहिका में लौह के लवणों का प्रयोग लाभकारी होता है। रक्तक्षय से पीड़ित अतिसार रोगी में यह प्रयोग विशेष उपयोगी है। क्योंकि ऐसी परिस्थिति में एक ही कार्य से २ लक्ष्यों की सिद्धि होती है—एक तो अतिसार का शमन होता है दूसरे लौह शोणितवर्धक होने से रक्तक्षय का निवारण करता है, और इस प्रकार रक्त में सुधार कर आंतों पर वल्य प्रभाव भी करता है। और आंतो पर यह वल्य प्रभाव अतिसार को रोकने में सहायक होता है। १ पाइन्ट में ६० बूँद परक्लोराइड सॉल्यूशन मिलाकर इस द्रव की उत्तरवस्ति करने से चूर्णकृमि (Thread worm) नष्ट होते हैं।

रक्त-रोग (Blood-diseases)—लौह पाण्डुरोग या रक्तक्षय (Anaemia) की एक प्रधान औषधि है। विशेषतः उन सभी प्रकार के पाण्डु रोगों में, जो सूक्ष्मकायाणिवक उपवर्णिक (Microcytic hypochromic) प्रकार के होते हैं, लौह विशिष्ट रूपेण उपयोगी होता है। इस प्रकार के पाण्डु रोग में रक्त के लाल कणों में शोणवर्तुलि (Haemoglobin) की कमी हो जाती है। अतएव लौह एक उत्तम शोणित वर्धक (Haematinic) माना जाता है। अतएव इसी आधार पर लौह के लवणों का प्रयोग हरिदुत्कर्ष (Chlorosis), गण्डमाला (Scrofula), जीर्ण वृक्कशोथ (Chronic nephritis) तथा उग्र एवं जीर्ण व्याधियों के रोगोत्तर काल (Convalescence) में बहुत उपयोगी सिद्ध होता हैं। एतदर्थ फेरस लवण (Ferrous Salts) अधिक उपयुक्त होते हैं। इस कार्य के लिए आयुर्वेदिक लौह तथा मण्डूरभस्म घटित योग उत्कृष्टतर होते हैं। आगे इसका पृथक् विचार किया जायगा। पाठक उसका अवश्य अवलोकन करें। कभी कभी लौह का प्रयोग मुख द्वारा करने पर अभीष्ट प्रभाव लक्षित नहीं होता इसका कारण वास्तव में लौह की कार्याक्षमता नहीं अपितु आमाशयान्त्र प्रणाली की विकृति के कारण लौह का शोषण समुचित रूप से होता ही नहीं और अधिकांश मल के साथ उत्सर्गित हो जाता है।

स्वतन्त्रपाण्डु रोग अथवा ऐसी सभी अवस्थाओं एवं व्याधियों में जिनमें रक्त नाश अधिक होता है अथवा रक्त निर्माण का अवसर नहीं प्राप्त होता लौह (Iron) का प्रयोग

१—यूनानी चिकित्सा में लौह के उपयोग—"लोह या फौलाद की भस्म मंदाग्नि यकृतप्लीहा दौर्बल्य, प्लीहावृद्धि, रक्ताल्पता (Anaemia), कामावसाद और मूत्रातीत में खिलाया जाता है। कोष्ठाङ्गों को शक्ति देने के अतिरिक्त यह संग्राही भी है। अतएव जीर्ण अतिसार और रक्तातिसार में भी खिलाया जाता है। यकृदामाशय दौर्बल्य तथा अन्त्रामाशयातिसार में लोहे से बुझाया हुआ पानी या लोहे से बुझाई हुई छांछ पिलाई जाती है।" (यूनानीद्रव्यगुणविज्ञान)

बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। यथा प्रशीताद (स्कर्वी Scurvy) रोग, मलेरिया ज्वर से मुक्त होने के बाद रोगोत्तर काल में। सीस-विषमयता (Lead-poisoning) तथा सभी प्रकार रक्त-स्रावी विकृतियाँ एवं हरिदुत्कर्ष। गर्भवती स्त्रियों में लौह की आवश्यकता अधिक रहने से प्रायः पाण्डु रोग हो जाता तथा उसी के कारण प्रसवोत्तर काल में नाना उपद्रव उत्पन्न होते हैं। अतएव इसमें भी लौह का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। विषम ज्वर (मलेरिया) के कारण उत्पन्न रक्तक्षय अथवा अन्य उग्र व्याधियों से मुक्त होने पर रोगोत्तर काल में रक्ताल्पता होने पर फेरी एट क्विनीन साइट्रस अथवा ईस्टन्स सिरप का प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है। क्यों कि इसमें लौह के साथ-साथ क्विनीन का अल्प मात्रा में योग होने से यह क्विनीन साथ ही साथ तिक्तबल्य (Bitter tonic) प्रभाव भी करता है और यदि साधारण प्लीहा वृद्धि हुई हो तो उसको भी ठीक करता है। प्लैहिक-रक्तक्षय (Splenic anaemia) में भी लौह का प्रयोग बहुत कुछ उपयोगी सिद्ध होता है।

अनेक ऐसी व्याधियाँ जिनका विशिष्ट कारण ज्ञात नहीं होता हो, किन्तु उनमें रक्ताल्पता भी एक प्रधान उपद्रव हो तो ऐसी अवस्थायें लौह का प्रयोग करने से ही दूर हो जाती हैं। कभी कभी रक्तक्षय में सर्वांग शोफ हो जाता है। इसमें लौह खिलासे ही लाभ होता है। इसी प्रकार अनार्त्तव (Amenorrhoea) जो रक्ताल्पता के कारण हुआ हो, आर्त्तवजनक (Emmenegogue) औषधियों के सेवन कराने मात्र से ठीक नहीं होता। किन्तु यदि आर्त्तवजनक औषधि जैसे कुमारी (Aloes) आदि को लौह के साथ प्रयोग कराने से—यथा पिल्यूला एलोज एट फेराई अधिक लाभ होता है। लौह सामान्यकायिक बल्य (General Tonic) भी होता है।

वृक्करोग—चिरकालानुबन्धि वृक्कशोथ (Chronic nephritis or Bright's Disease) में भी लौह का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ आयरन एसिटेट का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है।

गण्डमाला में आयोडाइड ऑव आयरन को प्रयोग करना चाहिए।

उपवर्णिक अथवा लौह के अभाव से होने वाले रक्ताल्पता में उपयोगी अन्य द्रव्यः—

(१) ताम्र (Copper)—आधुनिक प्रयोगों द्वारा सिद्ध हुआ है, कि आमाशयान्त्र से लौह का शोषण होने तथा शोषणोपरान्त शोणवर्तुलि (हीमोग्लोबिन) के निर्माण में सम्पन्न होने में अल्पमात्रा में ताम्र की उपस्थिति बहुत सहायक होती है। इसकी क्रिया योगवाही द्रव्य (Catalytic agent) की भांति होती है। शोणितजनन (Haemopoisis) के लिए जो दैनिक मात्रा (१ से २·५ मि० ग्रा०) अपेक्षित होती है, साधारणतया आहार से ही प्राप्त हो जाती है, फिर भी कभी-कभी पाण्डु के रोगियों में अलग से थोड़ी मात्रा में ताम्र के यौगिक का प्रयोग करने से स्थिति के सुधार में अधिक प्रगति मिलती है।

कोबाल्ट—यह विटामिन बी$_{१२}$ का एक तत्व है। रक्त संजनन में यह भी सहायक है। अतएव आजकल पाण्डु में प्रयुक्त किए जाने के लिए जो व्यावसायिक यौगिक आते हैं, उनमें इन तत्वों के समावेश का भी ध्यान रखा जाता है। एतदर्थ अम्ल से व्यवहृत करने के लिए

कोबाल्टस क्लोराइडका २½ प्रतिशत का सोल्यूशन व्यवहृत होता है। इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। युवा व्यक्ति के लिए प्रतिदिन १०० मि० ग्रा० मात्रा दिन में ३ बार भोजन के बाद दी जाती है। कभी-कभी इसके मौखिक सेवन से अनेक उपद्रव भी उठ खड़े होते हैं।

मैंगनीज (Manganese)—प्रयोगों द्वारा देखा गया है, कि चूहों में अत्यल्प मात्रा में भी मैंगेनीज की उपस्थिति लौह के लिए योगवाही का कार्य करती है। इसी आधार पर मनुष्यों में भी इसकी उपयोगिता की कल्पना की जाती है। इसके लिए ०·५ से २·५ मि० ग्रा० मैंगेनीज सल्फेट मुख द्वारा दिया जाता है।

लौह एवं लौह-लवणों के विभिन्न योग :—

(१) लौह।

(नान्-ऑफिशल योग)

१—सिरपस फेरी फॉस्फेटिस कम्पोजिटस Syrupus Ferri Phosphatis Compositus (Syr. Ferr. Phosph. Co.) I. P., B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड सिरप ऑव फेरस फॉस्फेट—अं०। पर्याय—पेरिश सिरप (Parish's Food or Syrup) या फूड; केमिकल फूड (Chemical Food)। मात्रा—३० से १२० मिनम् (½ से २ ड्राम)।

(२) एक्सिकेटेड फेरससल्फेट, फेरसग्लूकोनेट एवं सकेरेटेड फेरसकार्बोनेट के (ऑफिशल) योग :—

१—टॅबेली फेराइ सल्फेटिस एक्सिकेट Tabellāe Ferri Sulphatis Exsiccate—ले०; टॅबलेट्स ऑफ एक्सिकेटेड फेरस सल्फेट Tablets of Exciccated Ferrous Sulphate, B. P.—अं० प्रत्येक टॅवलेट में ७०% से ८०% फेरस सल्फेट ($Fe\ SO_4$) होता है। मात्रा—(एक्सिकेटेड फेरस सल्फेट)—१ से ३ ग्रेन (६० से २०० मि० ग्रा०)। वक्तव्य—यदि प्रति टॅवलेट मात्रा का उल्लेख न हो तो ३ ग्रेन की टॅवलेट देनी चाहिए। टॅवलेट्स ऑव फेरस सल्फेट शर्करावगुण्ठित (Sugar-Coated) करके दी जाती है। 'टॅवलेट्स ऑव फेरस सल्फेट' की मांग होने पर 'टॅवलेट्स ऑव एक्सिकेटेड फेरस सल्फेट' देनी चाहिए।

२—टॅबेली फेराइ ग्लुकोनेटिस Tabellāe Ferri Gluconatis (Tab. Ferr. Glucon.) B. P. C.—ले०; टबलेट्स ऑव फेरस ग्लुकोनेट Tablets of Ferrous Gluconate—अं०। मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम)। मात्रा का उल्लेख न होने पर ५ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

३—पिल्युला फेराइ कार्बोनेटिस Pilula Ferri Carbonatis (Pill. Ferr. Carb.) I. P., B. P. C.—ले०; पिल ऑव आयर्न कार्बोनेट—अं०। पर्याय—ब्लाड्स पिल Blaud's Pill; आयर्न पिल Iron Pill। इसमें २०% फेरस कार्बोनेट होता है। अर्थात् ३० ग्रेन में २ ग्रेन आयर्न होता है। मात्रा—५ से ३० ग्रेन (०·३ से २ ग्राम)।

(३) लाइकर फेराइ परक्लोर० के (नान् ऑफिशल) योग :—

१—लाइकर फेराइ एट अमोनियाइ एसिटेटिस Liquor Ferri et Ammonii Acetatis—ले०। पर्याय—बाशम्स मिक्सचर Basham's Mixture। टिंक्चर फेराइ परक्लोर ४; एसिड एसेटिक डिल०

६, लाइकर अमोनिया एसिटेटिस ५०, एरोमेटिक एलिक्जिर १२, ग्लिसरिन १२, जल आवश्यकतानुसार १०० के लिए। मात्रा—½ औंस (या १५ मि० लि०) या १। तोला।

२—गारगरिज्मा फ़ेराइ परक्लोराइडाइ Gargarisma Ferri Parchloridi, B. P. C.—फेरिक क्लोराइड गार्गिल—अं०। पोटासियम् क्लोरेट १५० ग्रेन, सोल्युशन ऑव फेरिक क्लोराइड १५० मिनम् या बूंद ग्लिसरिन ३०.० बूंद तथा जल १० औंस। प्रयोग के समय इसमें दुगुना गरम पानी मिलाकर प्रयुक्त करना चाहिए।

(४) फेरिक अमोनियम् साइट्रेट

(नॉन्-ऑफिशल)

१—मिस्चुरा फेराइ एट अमोनियाइ साइट्रेटिस Mistura Ferri et Ammonii Citratis (Mist. Ferr. et. Ammon. Cit.), B. P. C. ले०; मिक्सचर ऑव फेरिक अमोनियम् साइट्रेट—अं०। फेरिक अमोनियम् साइट्रेट ३० ग्रेन, क्लोरोफॉर्म वाटर ½ फ्लुइड औंस। मात्रा—½ फ्लुइड औंस (१५ मि० लि०)।

लौह के अन्य (नॉन्-ऑफिशल) योग एवं लौह घटित यौगिक :—

१—ईस्टन्स सिरप Easton's Syrup। पर्याय–सिरपस फेराइ फास्फेटिस कम् क्विनीना एट स्ट्रिक्नीना Syrupus Ferri Phosphatis cum Quinina et Strychnina (Syr. Ferr. Phosph. C. Quinin. et. Strych.) B. P. C.—ले०। ६० मिनम् या बूंद (१ ड्राम) में १ ग्रेन फेरस फास्फेट (या ½ ग्रेन आयर्न अर्थात् लौह) तथा ⅘ ग्रेन क्विनीन सल्फेट, $\frac{1}{60}$ ग्रेन स्ट्रिक्नीन होता है। मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (½ से १ ड्राम) या २ से ४ मि० लि०।

२—सिरपस फेराई आयोडाइडाइ Syrupus Ferri Iodidi (Syr. Ferr. Iod.) B. P. C.—ले०; फेरस आयोडाइड सिरप—अं०। २ ड्राम में ७½ ग्रेन फेरस आयोडाइड या १½ ग्रेन आयर्न होता है।

३—फेराइ ग्लिसरोफास्फास (Ferr. Glycerophosph.)—ले०; फेरिक ग्लिसरोफास्फेट (Ferric Glycerophosphate)—अं०। इसकी पीलीहरिताभ-पीली पपड़ियाँ (Scales) होती हैं। अथवा दानेदार चूर्ण के रूप में होता है, जो धीरे धीरे जल में घुलता है। मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से ३०० मि० ग्रा०)।

४—फेराइ हाइपोफास्फिस Ferri Hypophosphis (Ferr. Hypophosph.) B. P. C.—ले०; फेरिक हाइपोफास्फाइट [$Fe(H_2PO_2)_3$] मात्रा—१ से ३ ग्रेन (६० से २०० मि० ग्रा०)

लौह (Iron) के व्यावसायिक योग (Commercial preparations)—

१—फेरोनिकम् Ferronicum (Sandoz)—इसकी ०.२ ग्राम की टिकिया (टैबलेट्स Tablets आती हैं। १ टिकिया जल से दिन में ३ वार।

२—फेरस सल्फेट इन्सील्स Ferrous Sulphate (Lilly)—५ ग्रेन की इन्सील्स (Enseals) आती हैं। ३ इन्सील प्रतिदिन।

३—लेक्सट्रॅन फेरस Laxtron Ferrous (Lilly.)—इसकी पल्व्यूल्स (Pulvules) आती हैं। प्रतिदिन १२ पल्व्यूल्स।

४—फरसोलेट(टॅबलेट्स) Fersolate (Glaxo)—१५ ग्रेन दिन में ३ वार।

५—नियो-फेरम् Neo-Ferrum (Crookes)—नियोफेरम् टॅबलेट्स तथा लिक्विड दोनों रूप में आती हैं।

फोलिकएसिड एवं विटामिन बी$_{१२}$ के व्यावसायिक योग—

१—एनाकोबिन Anacobin (B. D. H.)—(१) १ सी० सी० के एम्पूल्स या ५ एवं १० सी० सी० की शीशियाँ (Vials) आती हैं, जिनका प्रयोग सूचिकाभरण (Injection) द्वारा किया जाता है। प्रत्येक सी० सी० में ५० माइक्रोग्राम विटमिन बी$_{१२}$ (Vitamin B_{12}) होता है। (२) एनाकोबिन एलिक्जिर (Anacobin Elixir) प्रत्येक फ्लुइड ड्राम (one teaspoonful) में २५ माइक्रोग्राम Vitamin B_{12} होता है। (३) एनाकोबिन टॅबेलेट्स (Anacobin Tablets) प्रत्येक टॅबलेट में १० माइक्रोग्राम Vitamin B_{12} होता है। नं० २ एवं ३ की औषधियों का सेवन मुख द्वारा (Orally) किया जाता है।

२—मेक्राबिन Macrabin (Glaxo)—इसके ५०, १००, ५०० एवं १००० माइक्रोग्राम प्रति सी० सी० के एम्पूल्स तथा ५ सी० सी० की शीशियाँ (Rubber Capped Phials) आती हैं, जिनके प्रति सी० सी० में ५०, १०० या ५०० माइक्रोग्राम Vitamin B_{12} होता है। इनका प्रयोग सूचिकाभरण (Injection) द्वारा होता है।

३—कोबास्टेब Cobastab (Boots)—इसकी १० सी० सी० की शीशियाँ (Rubber-cap vials) आती हैं, जिनके प्रत्येक सी० सी० में ५० माइक्रोग्राम विटामिन बी$_{१२}$ Vitamin B_{12} होती है। इनका प्रयोग इन्जेक्शन (सूचिकाभरण) द्वारा किया जाता है।

४—साइटोबिअन Cytobion (E. Merck) इसके १५ माइक्रोग्राम प्रति सी० सी० तथा ३० माइक्रोग्राम प्रति सी० सी० वाले १-१ सी० सी० के एम्पूल्स (Ampoules) तथा ३० माइक्रो-ग्राम प्रति सी० सी० वाले ५ सी० सी० की शीशियाँ आती हैं। प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा होता है।

५—एरिफोल Eryfol (Roche)—इसमें विटामिन बी$_{१२}$ एवं फोलिकएसिड (दोनों ही) होते हैं। प्रयोग सूचिकाभरण (Injection) द्वारा होता है।

६—रुब्राटब Rubratob (Squible)—यह पीने की दवा है। इसमें विटामिन बी$_{१२}$, फोलिक एसिड एवं लौह (Iron) तीनों हैं। मात्रा—२ ड्राम दिन में ३ बार भोजन के पूर्व या पश्चात्।

७—एनाफोलिन Anafolin (B. D. H.)—इसके इन्जेक्शन के लिए एम्पूल्स तथा मुख द्वारा सेवन के लिए टॅबलेट्स (Tablets) आती हैं। यह फोलिक एसिड एवं विटामिन बी$_{१२}$ का यौगिक है।

८—फोलिसिन्डॉन Folicindon (Indo-Pharma.)—यह फोलिक एसिड का यौगिक है। बच्चों को १–२ तथा युवकों को २–४ टिकिया भोजन के पूर्व देना चाहिए।

९—बी-फोलिन B.–Folin (Navaratna)—इसमें यकृत सत्व, फोलिक एसिड, विटामिन बी$_{१२}$ एवं लौह सभी होते हैं। १–२ टिकिया दिन में २ बार।

१०—फोलिक एसिड (Lilly)—(१) ५ मि० ग्रा० की गोलियाँ तथा (२) १ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं।

११—फोलवाइट Folvite (Lederle)—यह टॅबलेट्स एवं द्रव (Solution) रूप में उपलब्ध है।

१२—फोल्वरॉन Folvron (Lederle) यह (१) फोल्वरॉन कैप्स्यूल्स एवं (२) फल्वरॉन एलिक्जिर के रूप में। यकृतसत्व (लिवर Liver) के बाजारू यौगिक (जिनमें प्रायः फोलिक एसिड एवं विटामिन बी$_{१२}$ भी होता है)

(अ) इन्जेक्शन्स (Injectable)—

१—टी० सी० एफ० फोलिक एसिड कम्पाउण्ड विथ लिवर एक्स्ट्रॅक्ट (T. C. F.)—२ सी० सी० के एम्पूल्स तथा १० सी० सी० की शीशियाँ (Rubber-Cappedvials)—मात्रा १ से २ सी० सी० पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा।

२—एनीमिनडॉन Anaemindon (Indo-Pharma)—एम्पूल्स तथा शीशियाँ (५ एवं १० सी० सी० की)। मात्रा—१–२ सी० सी० प्रतिदिन अथवा एक दिन के अन्तर से पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा।

३—पानहिपर Panhepar (Raptakos Brett & Co. Ltd.)—२ सी० सी० के एम्पूल्स या १० सी० सी० की शीशियाँ (Vials)। मात्रा—२ सी० सी० पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा सप्ताह में २ बार।

४—एरिथजेन लिवर एक्स्ट्रॅक्ट Erythgen Liver Extract (G. W. Carnrick Co.)।

५—हेमारेक्स Hemarex (Estro.)।

६—प्रोलेक्स Prolex (B. I.)।

७—हेपर-रा फोर्ट० Hepar-Ra-Forte (Duphar.)

८—हेपोल इन्जेक्शन Hepol Injection (Allen & Hanbury Ltd.)

९—लिवाडेक्स Livadex (B. D. H.)।

१०—ल्लोबन Lloban (E. Merck.)।

११—एक्सहेपा १२ Exhepa 12 (Dumex)।

१२—बेलामिल Belamyl (Squibb)।

१३—हेमोलान Hemolon (Alembic)।

(ब) मुखद्वारा सेवन किए जाने वाले—

(१) लिवोजन Livogen (B. D. H.)—२ ड्राम जल के साथ दिन में २ बार।

(२) प्लेस्च्यूल्स Plastules with Liver Extract and Folic Acid (Wyeth)—२ प्लेसच्यूल प्रतिदिन भोजन के बाद जल के साथ।

(३) लिवाडेक्स Livadex 'Oral' (B. D. H.)—

वर्ग स—रक्त-स्कन्दक (Coagulants) या रक्त-स्कन्दन शक्ति को बढ़ाने वाली औषधियाँ—

चिकित्सार्थ रक्त-स्कन्दन (Blood-coagulation) क्रिया में शीघ्रता एवं तीव्रता लाने के लिए निम्न औषधियों का प्रयोग किया जाता है :—

(१) केल्सियम् के लवण या यौगिक (Calcium Salts and preparations)। इसका वर्णन पीछे केल्सियम् के प्रकरण में किया जा चुका है।

(२) रक्त का अन्तःसंक्रमण (Transfusion of whole blood) । इस अन्तः संक्रमित रक्त के साथ, खून में नैसर्गिक रूप से रहने वाले रक्त-स्कन्दन-घटक रोगी के शरीर में पहुँचकर, रक्त-स्कन्दन क्रिया को शीघ्रता पूर्वक कराने में सहायता करते हैं । दूसरे अन्तः संक्रमण के द्वारा खोये हुए रक्त की क्षतिपूर्ति हो जाती है.।

(३) नैसर्गिक सीरम (Normal Serum)—जिसमें घनास्रि (थ्राम्बिन Thrombin) एवं घनास्रिसंधानि (Thromboplastin) नामक रक्त-स्कन्दक घटकों की मात्रा अधिक होती है ।

(४) सिफेलिन (Cephalin)—या उपयुक्त जानवरों के मस्तिष्क (Brain) एवं सुषुम्ना (Spinal cord) का सत्व ।

(५) कांगो रेड (Congo-red तथा सर्प-विष (Snake venom) ।

(६) विटामिन K. (इसका वर्णन विटामिन्स के प्रकरण में किया जायगा) ।

(७) गुरुधातु (Heavy Metals) ।

ह्युमन फाइब्रिन फोम (Human Fibrin Foam), B. P.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह मानवीय रक्तरस के फाइब्रिन (Fibrin) से बनाया जाता है और मधुमक्खी के छत्ते की तरह होता है (dry artificial sponge of human fibrin) । यह स्पंज की तरह तथा रंग में सफेद तथा चिमड़ा (firm texture) होता है । विलेयता—जल में अविलेय (Insoluble) होता है , संग्रह—इसका संग्रह सतर्कतापूर्वक विसंक्रमित पात्रों (Sterile containers) में रखना चाहिए पात्रों का मुह अच्छी तरह सील करके रखना चाहिए । लेबिल (Labelling)—लेबिल पर (१) उस दिनांक का उल्लेख होना चाहिए जिसके बाद यह प्रयोग के योग्य नहीं रहता (२) इसका संग्रह ऐसे स्थान में करना चाहिए. जिससे इसकी सक्रियता बनी रहे ।

ह्युमन तन्त्विजन या फाइब्रिनोजन (Human Fibrinogen), B. P. (मानवीय तन्त्विजन) ।

वर्णन—यह सफेद चूर्ण या छोटे-छोटे ढेलाकार टुकड़ों के रूप में होता है, जो भंगुर होते है । विलेयता—लवणजल (९'९ w v सोडियम् क्लोराइड सोल्यूशन) में फौरन घुल जाता है । जिससे स्वच्छ रंगहीन सोल्यूशन बनता है । थोड़ी देर रखा रहने पर यह विलयन स्वयं. जम जाता है । वक्तव्य—सूचक पत्र (Lable) पर उपर्युक्त निर्देश होने चाहिए । साथ ही इस पर यह भी निर्देश होना चाहिए कि, सोल्यूशन बनाने पर तत्काल इसका प्रयोग होना चाहिए ।

ह्युमन थ्रांबिन (Human Thrombin), B. P.—अ॰; मानवीय घनास्रि—सं०, हिं० ।

वर्णन—ह्युमन थ्राम्बिन मलाई के रंग के चूर्ण रूप में उपलब्ध होता है, जो लवण जल (Saline Solution) में फौरन घुल जाता है । इससे हल्के पीले रंग का सोल्यूशन (विलयन) बनता है । ह्युमन थ्राम्बिन में प्रति मिलिग्राम में कम से कम १० रक्तस्कन्दक मात्रायें (ten clotting doses) होती हैं । संग्रह एवं लेबिलिंग सम्बन्धी निर्देश पूर्ववत् ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मस्तिष्कगत एवं फुफ्फुसगत शस्त्रकर्म या सर्जरी में ह्यूमन फाइब्रिनफोम का उपयोग रक्त-स्तम्भक के रूप में किया जाता है। एतदर्थ इसको ह्यूमन-थ्राम्बिन के साथ मिलाकर व्यवहृत करते हैं। ह्यूमन थ्राम्बिन का पहले लवणजल (Injection of Sodium Chloride) में विलयन बना लेते हैं। इस विलयन में ह्यूमन फाइब्रिन फोम के स्पञ्जाकार टुकड़े को भिगोकर या तर करके जहाँ से खून बह रहा हो, उस स्थान पर रख देते है। इस प्रकार रक्त थ्राम्बिन के सम्पर्क में आते ही जम जाता है। दग्धव्रण (Burn) एवं विकृत जगह पर स्थापन के लिए जहाँ से स्वस्थ त्वचा हटाई जाती है, उस क्षेत्र पर रक्तस्राव आदि को बन्द करने के लिए भी इसका स्थानिक प्रयोग करते हैं। मस्तिष्कगत शस्त्रकर्म (Brain Surgery) में क्षत परिसरीय नाड़ियों के पुनः रोपण (Repair) के लिए भी यह प्रयुक्त किया जाता है। कैटगट की भांति शारीरिक धातुओं में भी इसको स्थापित करने से कोई हानि या अनिष्टकर प्रभाव नहीं होते। रक्तस्रावी प्रवृत्ति के अथवा शोणितप्रियता के रोगियों (Haemophiliacs) में मानवीय रक्तगत फाइब्रिनोजेन (Human fibrinogen) विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होता है। इन रोगियों में इसके प्रयोग से रक्तस्कन्दन अवधि (Clotting-time) काफी घट जाती है, जिससे रक्तस्कन्दन क्रिया जल्दी होने में सहायता मिलती है। इसी प्रकार उक्त-रोगियों में शस्त्रकर्म के परिणाम स्वरूप होनेवाले अत्यधिक रक्तस्राव को रोकने के लिए भी यह प्रयुक्त किया जाता है। अतएव दैनिक व्यवहार में भी शस्त्रकर्म जन्य रक्तस्राव के रोकने के लिए स्थानिक रक्तस्तम्भक के रूप में इनका व्यवहार प्रचुरता से किया जाता है।

अन्य रक्तस्तम्भक यौगिक :—

कांगोरेड (Congo Red), B. P. C.—अं०; रुब्रम कांगो-एन्सिस Rubrum Congoensis (Rub. Cong.)—ले०।

रासायनिक संकेत :—$C_{32}H_{22}O_6N_6S_2Na_2$.

पर्याय—Colour Index No. 370.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह disodium 4:4'—bis (1—amino—4—Sulpho—2—naphthaleneazo) diphenyl होता है, जो लाली लिए भूरेरंग के चूर्ण (reddish-brown powder) के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—जल में घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल् में केवल अंशतः विलेय होता है। मात्रा—०.१ से ०·२ ग्राम (१½ से ३ ग्रेन) शिरागत इंजेक्शन द्वारा। एतदर्थ १% सोल्यूशन की ५ से १० मि० लि० (७५ से १५० मिनम्) शिरागत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त करते हैं और ४-४ या ६-६ घंटे पर मात्रा दुहराई जाती है, अथवा प्रति किलोग्राम शरीर भार के लिए १% सोल्यूशन की ०·२५ मि० लि० मात्रा के हिसाब से।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—शिरागत इंजेक्शन द्वारा कांगोरेड का प्रयोग आन्तरिक रक्तस्रावी विकृतियों, यथा रक्तष्ठीवन (Haemoptysis) आदि में किया जाता है। इसके प्रयोग से रक्तगत फाइब्रिन (तन्त्वि) तथा रक्तचक्रिकाओं (Blood platelets) की संख्या में वृद्धि होकर घनास्रि-उत्कर्ष (Thrombocytosis) होता है, जिससे रक्तस्कन्दन अवधि कम हो जाती है। फलतः रक्तस्कन्दन जल्दी होता है।

इसके अतिरिक्त कांगोरेड का उपयोग धातुगत एमाइल्वायड—अपजनन (Amyloidosis) के परीक्षण के लिए भी किया जाता है। एतदर्थ ०.५ से १.५% का सोल्यूशन ०.२५ मि० लि० प्रति-किलोग्राम शरीर भार के हिसाब से शिरागत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। विशेष साव-धानी रखना चाहिए कि औषधि अच्छी तरह घुल गई है या नहीं। क्योंकि यदि सोल्यूशन अच्छी तरह नहीं बना रहने से घातक परिणाम तक होने की आशंका रहती है। आवश्यकतानुसार सोल्यू-शन को थोड़ा गरम करने से अच्छी तरह घुल जाता है। पहले कांगोरेड का उपयोग शरीर-गत रक्तराशि के परीक्षण के लिए भी किया जाता था। लेकिन अब इसके लिए प्रायः इसका प्रयोग नहीं किया जाता। कांगोरेड में भिंगोये हुए कागज का उपयोग आमाशयिकरसगत हाइड्रोक्लोरिक एसिड के विनिश्चय के लिए भी लिया जाता है।

सोडियाइ एल्गिनास Sodii Alginas (Sod. Algin.), B. P. C.—ले०; सोडियम् एल्गिनेट Sodium Alginate—अं०।

Family: Phaeophyceae.

प्राप्ति-साधन—सोडियम् एल्गिनेट, लेमिनेरिया (Laminaria), एस्कोफाइलम् (Ascophyllum) तथा फ्युकस (Fucus) आदि समुद्री तृणों की विभिन्न प्रजातियों का सत्व होता है। रासायनिक दृष्टि से यह एल्गिनिक एसिड (Alginic acid) का सोडियम् साल्ट होता है।

उत्पत्ति-स्थान—स्काटलैंड तथा आयरलैंड का पश्चिमी समुद्र-तट।

वर्णन—सोडियम् एल्गिनेट सफेद या हल्का पीलापन लिए भूरे रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। विलेयता—पानी में धीरे-धीरे घुलता है। विलयन गाढ़ा तथा चिकना (Viscous) होता है

प्रयोग—सोडियम् एल्गिनेट का प्रयोग स्थानिक रक्तस्तम्भक (Local haemostatic) के रूप में होता है। जहाँ से रक्त बहता हो उस स्थान पर इसका सोल्यूशन लाने से यह केल्सियम् अयनों (Calcium-ion) के साथ संयुक्त होकर केल्सियम् एल्गिनेट के रूप में परिवर्तित हो जाता है, जो उत्तम रक्तस्तम्भक होता है। इसका प्रयोग चूर्ण (Powder) के रूप में किया जाता है। अथवा केल्सियम् क्लोराइड के सोल्यूशन में मिलाकर उक्त सोल्यूशन का स्प्रे (Spray) करते हैं अर्थात् उसके रक्तस्रावी क्षेत्र पर सीकर के रूप में वर्तते हैं। इसके १% विलयन का प्रयोग इमल्सन बनाने के लिए (Emulsifying agent) किया जाता है। ५ से १०% सोल्यूशन का उपयोग जलमिश्रित पेस्ट तथा क्रीम (Watermiscible pastes and creams) बनाने के लिए किया जाता है। इसका उपयोग कृत्रिम दंतनिर्माण में सांचा बनाने के लिए भी किया जाता है।

सेल्युलोसम् ऑक्सिडेटम् (Cellulosum Oxidatum) (Cellulos. Oxidat.), B. P. C.—ले०; आक्सीडाइज्ड सेल्युलोस (Oxidised Cellulose)—अं०। पर्याय—आक्सीसेल (Oxycel)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह सफेद रंग के अथवा मलाइ के रंग का गॉज (Gauze) या रूई (Cotton)होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में खट्टा होता है। रासायनिक दृष्टि सेयह पॉलिएन्हाइड्रोग्ल्यूक्यूरोनिक एसिड (Polyanhydroglucuronic acid)

होता है, जो सर्जिकल गॉज या कॉटन (रुई) एवं नाइट्रोजन डाइ-ऑक्साइड की ऑक्सिडेशन क्रिया से प्राप्त होता है। विलेयता—जल तथा अम्लों में तो नहीं घुलता किन्तु डायल्यूट क्षारों (Dilute alkalies) में घुल जाता है।

वक्तव्य—इसका संग्रह धूप से बचाकर तथा ठंडी जगह में करना चाहिए। इसकी पैकिंग इस प्रकार करनी चाहिए कि पात्र में विसंक्रामण की सुविधा हो। एकबार पात्र खुल जाने पर शेष गॉज प्रयोग के योग्य नहीं होता।

गुण कर्म एवं प्रयोग—इसका प्रयोग भी स्थानिक रक्तस्तम्भक के रूप में विभिन्न शस्त्र कर्मों में केशिकीय रक्तस्राव (Capillary bleeding) तथा सूक्ष्मशिरागत रक्तस्राव (Venous-bleeding) को रोकने के लिए किया जाता है। धातुओं में स्थापित किए जाने पर १–६ सप्ताह में स्वयं शोषित हो जाता है। रक्तस्रावी क्षेत्र पर लगाने से भूरेरंग का एक स्तर-सा बन जाता है, जो बाद में स्वयं शोषित हो जाता है। आन्तरिक अंगो पर शस्त्र करते समय कभी-कभी रक्तस्राव बाद में न हो, इस हेतु इसका स्थापन (Sutured implant) किया जाता है।

टोलोनियम् क्लोराइड Tolonium Chloride या ब्लुटीन क्लोराइड (Blutene Chloride)—

यह हरेरंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो पानी में तो घुलजाता है, किन्तु अलकोहल में केवल अंशतः तथा धीरे-धीरे घुलता है। यह भी रक्तस्तम्भक होता है। एतदर्थ ३ से ४½ ग्रेन (०.२ से ०.३ ग्राम) औषधि प्रतिदिन मुख द्वारा दी जाती है। रक्तप्रदर (Menorrhagia and Metrorrhagia) तथा गुणकर्मीय विकृति से होने वाले गर्भाशयिक रक्तस्राव (Idiopathic functional uterine bleeding) में रक्तस्राव की सम्भावित तिथि से ५–६ दिन पूर्व से प्रयोग करने से रक्तस्राव नहीं होने पाता।

वर्ग स—(ब)–रक्तस्कन्दन या रक्तसंहति-विरोधी द्रव्य (Anticoagulants)।

चिकित्सा व्यवहार में कभी-कभी रक्तस्कन्दन निवारक औषधियों की भी आवश्यकता पड़ती है। साइट्रेट्स्, ऑक्सलेट्स् तथा फ्लोराइड्स् केल्सियम्–अयनों को निष्क्रिय करने के कारण रक्तसंहति का निवारण करते हैं। किन्तु इस रूप में विषाक्त भी होने के कारण मानव शरीर में व्यवहार के योग्य नहीं हैं। साइट्रेट्स् का व्यवहार शरीर के बाहर रक्तस्कन्दन विरोधी प्रभाव के लिए किया जाता है। रक्त-संक्रम (Blood transfusion) के हेतु रक्तसंग्रहालय (Blood Bank) में रक्त रखने के लिए लाइकर सोडियाइ साइट्रेटिस का प्रयोग रक्तस्कन्दन विरोधी द्रव्य (Anticoagulant) के रूप में किया जाता है। साइट्रेट्स भी मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर उक्त प्रभाव नहीं करते। चिकित्सा व्यवहार में निम्न रक्तस्कन्दन-निवारक द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है :—

(अ) घनास्त्रिविरोधी एवं पूर्वघनास्त्रिविरोधी रक्तस्कन्दन निवारक द्रव्य (With antithrombin and antiprothrombin action) :—

(१) हिपेरिन (Heparin), प्रोटामीन सल्फेट, टोलुइडीनब्लू (Toluidine Blue); हिरुडिन (Hirudin)।

(२) हिपेरिन स्थानापन्न संश्लिष्ट यौगिक—डेक्स्ट्रनसल्फेट (Dextran Sulphate)।

(ञ) यकृत में प्रोथाम्बिन एवं फैक्टन ७ का निरोध करने वाले द्रव्य :—

(१) कोमेरिनव्युत्पन्न यौगिक (Coumarin Deirivatives)–एथिल विस्कोमेसिटेट, डाइकोमेरोल, साइक्लोकोमेरोल मारकोमेर।

(२) इन्डेन्डिओन व्युत्पन्न यौगिक (Indandione)—फेनिन्डिओन (Phenindione), आदि।

चिकित्सा व्यवहार में रक्तस्कन्द निवारक द्रव्यों का उपयोग रक्तवाहिनीगत रक्तस्कन्दन एवं अन्तःशल्यता (Embolism) के निवारण (Prevention) के लिए किया जाता है। जमे हुए थक्के (Clot) का तो विलयन नहीं होता, किन्तु स्कन्दन क्रिया आगे नहीं होने पाती, जिससे रक्तपरिभ्रमण का पुनः स्थापन (Collateral circulation) हो जाता है, जिससे सामान्य क्रियाव्यापार में बाधा नहीं होनेपाती।

आत्ययिक अवस्थाओं में तथा जब मुख द्वारा रक्तस्कन्दननिवारक औषधियों का सेवन सम्भव न हो, तो ऐसी अवस्थाओं में हिपेरिन (Heparin) पर मोपयुक्त समझा जाता है। रक्तस्कन्दन निवारक चिकित्सा क्रम (Anticoagulant therapy) के लिए पहले १०,००० से १५,००० युनिट मात्रा में हिपेरिन का शिरागत इंजेक्शन देना चाहिए। इसके बाद ४–४ घन्टे पर ५,००० युनिट मात्रा के ४–६ इंजेक्शन और देने चाहिए। इसके बाद प्रभाव को बनाए रखने के लिए देर से प्रभाव करने वाले यौगिकों का व्यवहार करें। इनका प्रयोग पेशीगत इंजेक्शन द्वारा दिन में १ या २ बार आवश्यकतानुसार करें। हिपेरिन के साथ-साथ एथिल बिसकोमेसिटेट (१.२ ते १.८ ग्राम) अथवा फेनिनडिओन (०.२ से ०.३ ग्राम) आदि का मुख द्वारा प्रयोग करना चाहिए। एन्टिकोआगुलेन्ट्स का प्रयोग निम्न अवस्थाओं में उपयोगी सिद्ध होता है :—

(१) हार्दिक धमनी-घनास्रता (Coronary occlusion) या अवरोध—२४ घंटे के अन्दर रक्तस्कन्दननिवारक द्रव्यों का प्रयोग कर देना चाहिए। इससे सम्भावी उपद्रवों एवं घातकता का निवारण होता है।

(२) फुफ्फुसीय रक्तवाहिनियों की अन्तःशल्यता (Pulmonary Embolism)—अघातक स्वरूप की व्याधि में फौरन हिपेरिन का सिरागत इन्जेक्शन कर देना चाहिये। इससे रक्तस्कन्दन क्रिया आगे नहीं बढ़ने पाती, और सम्भावी घातकावस्था से रक्षा हो जाती है। साथ ही अन्य उपयुक्त रक्तस्कन्दन निवारक औषधियों का मौखिक सेवन भी होना चाहिए। (३) शिरागतघनास्रता (Venous thrombosis)—विशेषतः पैर की या श्रोणि की शिराओं में जब शिराशोथ के साथ घनास्रता (Phlebothrombosis) होती है, तो इन औषधियों का प्रयोग बहुत उपयोगी होता है (४) अन्तःशल्यता (Embolism) एवं घनास्रता (Thrombosis) के परिणाम स्वरूप उत्पन्न धमन्यावरोध (Arterial occlusion) में भी फौरन इन औषधियों का प्रयोग होना चाहिए। (५) अन्य शिराशोथ सहित घनास्रता (Phlebo-thrombosis) अथवा सघनास्रता शिराशोथ (Thrombophlebitis)—(Thrombo-angiitis obliterans), हृदय सम्बन्धी आपरेशन में अन्तःशल्यता आदि के निवारण के लिए भी घनास्रता निरोधक द्रव्यों का प्रयोग उपयोगी होता है।

हिपेरिनम् (यकृति) I. P., B. P.

पर्याय—हिपेरिनम् Heparinum (Heparin.)—ले०; हिपेरिन (Heparin)—अं०; यकृति–सं० ।

हिपेरिन एक जटिल स्वरूप के सेन्द्रिय अम्ल (Complex organic acid) के कैल्सियम् साल्ट का योग है, जिसे विसंक्रमित (Sterile) करके रख लिया जाता है । उक्त सेन्द्रिय अम्ल स्तनधारियों के यकृत एवं फुफ्फुसों में नैसार्गिक रूप से पाया जाता है । इसके प्रत्येक मिलिग्राम (mg.) में कम से कम ७५ युनिट औषधि होती है । एक युनिट बराबर होता है स्टैंडर्ड (Standard) के ०·००७७ मिलिग्राम (mg.) के ।

वर्णन—यह खाकस्तरी रंग लिए भूरे रंग का चूर्ण होता है, जिसमें खुला रहने पर आर्द्रता ग्रहण करने की प्रवृत्ति होती (Hygroscopic) है । जल एवं लवण जल (Saline Solution) में पूर्णतः विलेय होता है, जिससे एक स्वच्छ रंगहीन या हल्के भूरे रंग का (Straw-coloured) विलयन बनता है ।

मात्रा—शिरागत इन्जेक्शन द्वारा (Intravenous injection) - ६,००० से १२,००० युनिट ।

इन्जेक्शिओ हिपेरिनाइ Injectio Heparini—ले०; I. P., B. P. इन्जेक्शन ऑव हिपेरिन Injection of Heparin—अं०; यकृति-सूचिकाभरण—सं० । यह एक स्वच्छ रंगहीन अथवा तृण के रंग का (Straw coloured) पारदर्शी (Transparent) द्रव होता है । मात्रा—शिरागत सूचिका भरण द्वारा—६,००० से १२,००० युनिट ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

हिपेरिन एक तीव्र रक्त संहनन-निवारक द्रव्य (Powerful anticoagulant) है । इसकी क्रिया से पूर्व घनास्रि (प्रोथ्राम्बिन) का परिवर्तन घनास्रि (थ्राम्बिन) में नहीं होने पाता । इसके अतिरिक्त यह थ्राम्बिन (Thrombin) की क्रिया को भी निष्क्रिय करता है, जिससे तन्त्विजन (फाइब्रिनोजेन Fibrinogen) का परिवर्तन तन्त्वि (फाइब्रिन Fibrin) में नहीं होने पाता । इसी के कारण रक्त चक्रिकाओं (Blood-platelets) की संहति (Agglutination) भी नहीं होने पाती । आजकल इसके निर्माण में बहुत सुधार हो गया है, और अब १ मिलिग्राम हिपेरिन ०° सेन्टीग्रेड तापक्रम पर बिल्ली के ५०० सी० सी० रक्त को २४ घन्टे तक जमने से रोकता है (टोरन्टो युनिट Toronto Unit) ।

हिपेरिन के उक्त गुण-कर्म का उपयोग आजकल चिकित्सा शास्त्र में निम्न रूप से किया जाता है :—

(१) प्रयोगशाला (Laboratory) में परीक्षा के हेतु, लिए गए रक्त को जमने से रोकने के लिए; जिन परीक्षाओं में रक्तद्रावण (Haemolysis) की आवश्यकता नहीं होती है अथवा सीरम (Serum) के द्वारा की जाने वाली परीक्षाओं में तो इसकी आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि इन अवस्थाओं में रक्त-स्कन्दन का न होना अभीष्ट नहीं होता । (२) हिपेरिन का अधिक उपयोग रक्त-संक्रम (Blood-transfusion) में किया जाता है । एतदर्थ या तो लिये गए रक्त को हिपेरिन द्वारा जमने से बचाया जाता है अथवा रक्त ग्रहण

के पूर्व ही दाता (Donor) के शरीर में शिरामार्ग से इसको प्रविष्ट करके [६० मिलिग्राम एक ही मात्रा (Single dose) में] १० मिनट के बाद दाता का रक्त ग्रहण किया जाता हैं। यह दाता तथा ग्रहीता (Donor and recipient) दोनों ही के लिए निरापद (Harmless) होता है। (३) हिपेरिन का उपयोग ऐसी व्याधियों के रोक-थाम के लिए किया जाता है, जिनमें रक्तवाहिनियों में रक्त जमने की प्रवृत्ति होती है। अतएव शल्यकर्मोत्तर (Post-operative) घनास्रता (Thrombosis) तथा अन्तः शल्यता (Embolism) हार्दिक धमनी एवं मस्तिष्कगत रक्तवाहिनियों की घनास्रता (Coronary and Cerebral thrombosis) प्रसवोत्तर कालिक घनास्रता (Decubitus thrombosis), फुफ्फुसीय अन्तः शल्यता (Pulmonary embolism) आदि के निवारण के लिए हिपेरिन एक उत्तम औषधि है। चूँकि इसका प्रभाव शीघ्र नष्ट हो जाता है, अतएव शिरागत इन्जेक्शन द्वारा औषधि प्रदान करने में ४-४, ६-६ घंटे के अन्तर से पुनः पुनः इंजेक्शन करना पड़ता है। अथवा दूसरी विधि यह है कि १०० सी० सी० लवण-जल (Normal Saline) में १० मिलिग्राम हिपेरिन का विलयन बनाकर १ से २ सी० सी० प्रति मिनट के हिसाब से निरन्तर विधि द्वारा (Continuous drip method) बराबर औषधि पहुँचाई जाती है।

पेनिसिलिन की भाँति हिपेरिन के भी आजकल ऐसे यौगिक (Preparations) उपलब्ध होने लगे हैं, जिनमें उपर्युक्त झंझट नहीं करना पड़ता अर्थात् दिन में १ मात्रा देने से इसका असर बहुत देर तक बना रहता है और पुनः मात्रा दुहराने की आवश्यकता नहीं पड़ती। हिपेरिन के निम्नयोग बाजार में मिलते हैं।

(१) हिपेरिन पिक्टन मेंस्ट्रुअम् (Heparin Pitkin Menstruum Warner) इसमें ३ सी० सी० में ३०० मिलिग्राम औषधि होती है। प्रतिदिन इसकी केवल १ मात्रा देने से ही काम चल जाता है।

(२) हिपेरिन रिटार्ड Heparin Retard—इसकी २०,००० युनिट (I. U.) मात्रा को २ सी० सी के एम्पूल्स (Ampoules) आते हैं।

(३) हिपेरिन बी० डी० एच० (Heparin B. D. H.)—इसकी १० c.c. की ट्यूब आती है, जिनमें १०० युनिट औषधि होती है। इसका प्रयोग रक्त संग्रहालयों में संग्रहित रक्त को जमने से रोकने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त ५००, १००० एवं ५००० युनिट प्रति सी० सी० बलकी ५-५ सी० सी० की शीशियाँ (Vials) भी आती हैं।

हिपेरिन बूट्स (Heparin Boots)—इसका १००० एवं ५००० युनिट प्रति सी० सी० बल की शीशियाँ आती हैं।

वक्तव्य—किन्हीं-किन्हीं रोगियों में हिपेरिन के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता होती है, जिससे उक्त रोगियों में हिपेरिन की प्रतिक्रिया की सम्भावना अधिक रहती है। अतएव पहले १० मि० ग्रा० का शिरामार्ग द्वारा इंजेक्शन करके इसका परीक्षण कर लेना चाहिए।

हिपेरिन का प्रभाव अत्यधिक होने पर (Overaction of heparin) पर प्रोटामीन सल्फेट के १% के ५ से १० सी० सी० का शिरागतमार्ग द्वारा इन्जेक्शन करना चाहिए। एतदर्थ टोलुइडीन (Toluidine Blue) आदि का भी प्रयोग कर सकते हैं।

हिरुडिन (Hirudin)—यह जोंक (Leech) का सत (Extract) होता है। प्रयोगशालाओं में इसका प्रयोग अधिक किया जाता है। $\frac{1}{6}$ ग्रेन हिरुडिन १००० सी० सी० रक्त को काफी विलम्ब तक जमने से रोकता है। रक्त-संग्रहालयों (Blood Banks) में रक्त-संक्रम (Blood-trans fusion) में रक्त-स्कन्दन विरोधी द्रव्य (Anti-coagulant) के रूप में इसका व्यवहार बहुत होता है। मात्रा—२० से ३०० मिलीग्राम या $\frac{1}{3}$ से ५ ग्रेन, ५० सी० सी० लवणजल (Normal Saline) में विलयन बनाकर।

एथिलिस बिस्कोमेसिटास Aethylis Biscoumacetas (Aethyl. Bis coumacet.) I. P., B. P.—ले०; एथिल बिस्कोमेसिटेट Ethyl Biscoumacetate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{22}H_{16}O_{8}$.

पर्याय—ट्रोमेक्शन (Tromexan)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह ethyl 4 : 4′—dihydroxy dicoumarin—3: 3′—yl-acetate होता है, जो 4 :4′—dihydraxy-dicoumarin -3 : 3′—ylacetic acid का ईस्टरीकरण (esterification) करने से प्राप्त होता है। इसमें कम से कम ९७% एथिल बिस्कोमेसिटेट होता है।

वर्णन—सफेद रंग का या पीताभश्वेतवर्ण (Yellowish-white) का सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (almost insoluble) होता है; क्षारीय हाईड्रॉक्साइड्स के जलीय विलयन में फौरन घुल जाता हैं। २० भाग एसिटोन में भी घुलनशील होता है, और स्वच्छ तथा रंगहीन विलयन प्राप्त होता है। मात्रा—०·१५ से १ ग्राम (२$\frac{1}{2}$ ग्रेन से १५ ग्रेन) प्रतिदिन (प्रोथ्रोम्बिन की क्रियाशीलता के अनुसार)।

डाइकोमेरोल (Dicoumarol) I. P., B. P. C.

रासायनिक संकेत : $C_{19}H_{12}O_{6}$.

पर्याय—डाइकोमेरिन (Dicoumarin)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से 3 : 3′—methyl-enebis—4-hydroxycoumarin होता है, और 4—hydroxycoumarin तथा फार्मेल्डिहाइड की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—डाइकोमेरिन का सफेद रंग या मलाई की तरह मटमैले सफेद रंग का (Creamy-white) अतिसूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Microcrystalline powder) होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की रुचिकर गन्ध होती है, और स्वाद में हल्का तीता होता है। विलेयता—जल में तो थोड़ा-थोड़ा घुलता है; किन्तु तीव्रबलक्षारों (Strong alkalies) के विलयन में फौरन घुल जाता है। मात्रा—५० से ३०० मि० ग्रा० ($\frac{3}{4}$ से ५ ग्रेन) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

एथिल बिस्कोमेसिटेट—मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से क्षिप्रतापूर्वक तथा पूर्णतः शोषित हो जाता है। सेवनोपरान्त रक्तगत अधिकतम संकेन्द्रण १ से ६ घंटे

के अन्दर होता है। यकृत में वियोजित होकर पित्त के साथ उत्सर्गित होता तथा आंतों से पुनः शोषित होकर मूत्र के साथ निस्सरण होता है।

रक्तस्कन्दन विरोधी क्रिया (Anticoagulant action)—यह विटामिन 'के' तथा यकृत के फैक्टर ७ का क्रिया निरोध करता है, जिससे यकृत में पूर्वघनास्रि की (प्रोथ्राम्बिन) उत्पत्ति नहीं हो पाती। फलतः एथिल बिस्कोमेसिटेट रक्तस्कन्दन–निवारक क्रिया करता है। किन्तु उक्त क्रिया पूर्वतः होनेवाले रक्तस्राव पर नहीं होता। यह डाइकेमेरोल की अपेक्षा कम विषैला होता है। औषधि-प्रयोग बन्द कर देने पर पूर्वघनास्रि का निर्माण पूर्ववत् होने लगता है। एथिल बिस्कोमेसिटेट का प्रयोग शाखाओं की धमनियों एवं शिराओं के स्कन्दन या थ्राम्बोसिस के अनागत प्रतिषेध (Preventive measuers) के लिए किया जाता हैं। हार्दिक रक्तवाहिनियों (Coronary vessels) एवं रेटिनल थ्राम्बिस तथा अन्तः शल्यता (Embolism) के निवारण के लिए भी यह उपयुक्त होता है।

सेवन-विधि—ऐथिल बिस्कोमेसिटेट का प्रयोग मुख द्वारा (orally) किया जाता है। युवाव्यक्ति के लिए प्रारम्भ में प्रतिदिन ०·३ ग्राम (५ ग्रेन) की ४ मात्रायें ४-४ घन्टे के अन्तर से दी जाती हैं। इसके बाद प्रभाव को बनाये रखने के लिए (Maintenance dose) प्रतिदिन ०·१५ से ०·६ ग्राम (२ से १४ ग्रेन) की मात्रा को ३-४ मात्राओं में विभक्त करके देते हैं। मात्रा के निर्धारण के लिए रक्तगत प्रोथ्राम्बिन तथा वैयक्तिक प्रकृति को भी ध्यान में रखना चातिए।

विषाक्त-प्रभाव—इसके चिकित्सा क्रम में विषाक्तता की सम्भावना वैसे कम रहती है, किन्तु कभी कभी मात्राधिक्य के कारण रक्तगत प्रोथ्राम्बिन की मात्रा अत्यंत कम हो जाने से रक्तस्रावी प्रवृत्ति पाई जाती है। उक्त उपद्रव प्रायः शोणितमेह (Haematuria), नकसीर (Epistaxis), मसूढ़ों से रक्तस्राव, रक्तवमन या गर्भाशय में रक्तस्राव के रूप में प्रगट हो सकता है। चिकित्सा – उक्त-स्थिति में औषधि का सेवन फौरन बन्द कर देना चाहिए। रक्तगत प्रोथ्राम्बिन की मात्रा तत्काल बढ़ाने के लिए ताजे पूर्ण मानवरक्त का रोगी की शिरा में अन्तःक्षेपण (Transfusion) किया जाता है। इसके अतिरिक्त विटामिन $के_1$ का मौखिक या जल्दी प्रभाव के लिये इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग किया जाता है। मौखिक सेवन के लिए प्रतिदिन १०० मि० ग्रा० की एक मात्रा या १५-२५ मि० ग्रा० की ३-५ मात्रायें दी जाती हैं। इन्जेक्शन के लिए प्रतिदिन ५० से ७५ मि० ग्रा० की मात्रा अपेक्षित होती है। आत्ययिक अवस्थाओं में ४००-५०० मि० ग्रा० तक भी देना पड़ता है।

यकृत एवं वृक्क विकार के रोगियों में तथा गर्भिणी स्त्रियों में एथिल विस्कोमेसिटेट का व्यवहार यथासम्भव निषिद्ध है।

डाइकोमेरोल – यह भी एक उत्तम रक्तस्कन्दननिवारक (Anticoagulant) द्रव्य है। एतदर्थ मुख द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। इसकी क्रिया भी बहुत कुछ एथिल बिस्कोमेसिटेट की ही भाँति होती है। इसके सोडियम-साल्ट का प्रयोग जल-विलेय होने के कारण शिरागत इन्जेक्शन द्वारा भी किया जा सकता है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयांत्र प्रणाली से धीरे-धीरे शोषित होता है। और औषधि का कुछ अंश (३०%) मल के साथ विनाशोषित हुए उत्सर्गित हो जाता है। मौखिक सेवन द्वारा रक्तगत अधिकतम संकेन्द्रण के लिए २४-३६ घन्टे लग जाते हैं। किन्तु कम मात्रा में प्रयुक्त होने पर शोषण भी अधिक होता है, तथा रक्तगत

संकेन्द्रण में भी अपेक्षाकृत कम समय लगता है। औषधीय प्रभाव के लिए रक्त में प्रति लीटर ५ से १० मि० ग्रा० का सन्केन्द्रण पर्याप्त होता है। युवा व्यक्ति के लिए प्रारम्भ में (प्रथम दिन) ०·२ से ०·३ ग्राम (२ से ५ ग्रेन) तथा बाद में २५ से १५० मि० ग्रा० (½ से २ ग्रेन) देना चाहिए।

व्यावसायिक योग :—

(१) ड्युमेरोल Dumarol (W. B.)—०·०५ ग्राम (५० मि० ग्रा०) की टॅबलेट्स आती हैं। मात्रा—प्रारम्भ में २००-३०० मि० ग्रा० फिर १०० मि० ग्रा० प्रतिदिन।

साइक्लोकोमेरोल Cyclocoumarol (नॉट-ऑफिशल)।

पर्याय—क्युमोपाइरन (Cumopyran)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—साइक्लोकोमेरोल सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जिसमें एक हल्की गंध पाई जाती है। जल में यह नहीं घुलता, किन्तु अल्कोहल में थोड़ा-थोड़ा घुल जाता है। साइक्लोकोमेरोल का निर्माण कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा किया जाता है।

प्रयोग—साइक्लोकोमेरोल की क्रिया डाइकोमेरोल की ही भाँति होती है, किन्तु इसमें रक्तस्कन्दन निवारक गुण डाइकोमेरोल की अपेक्षा तिगुना होता है। इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। प्रारम्भ में (Initial dose) १०० से २०० मि० ग्रा० (१½ से ३ ग्रेन) की दैनिक मात्रा दी जाती है। बाद में (Maintenance dose) १२½ से ७५ मि० ग्रा० (⅕ से १¼ ग्रेन) प्रतिदिन या रक्तगत प्रोथ्राम्बिन का परीक्षण करने पर आवश्यकतानुसार प्रति चौथे दिन देते रहना चाहिए। औषधि सेवन के २४ से २६ घंटे में इसका प्रभाव होने लगता है, जो कई दिनों तक बना रहता है। लम्बे चिकित्सा-क्रम के लिए अधिक उपयुक्त है।

मारकोमेर Marcoumar (नॉट-ऑफिशल)—यह भी कोमेरीन व्युत्पन्न संश्लिष्ट यौगिक है, जो मुखद्वारा प्रयुक्त किए जाने पर तीव्र रक्तस्कन्दन-निवारक क्रिया करता है। इसका प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होता है। एतदर्थ प्रारम्भिक मात्रा २० से २४ मि० ग्रा० प्रतिदिन तथा बाद में केवल ३ से ६ मि० ग्रा० दी जाती है। औषधि बन्द कर देने पर भी ७–१४ दिन तक प्रभाव बना रहता है।

डेक्स्ट्रेनाइ सल्फास Dextrani Sulphas (Dextran. Sulph.) B. P. Add.—ले०; डेक्स्ट्रनसल्फेट Dextran Sulphate —अं०।

पर्याय—डेक्स्ट्रनसल्फेट सोडियम्।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—डेक्स्ट्रन सल्फेट सफेद रंग के अथवा मलाई की तरह मटमैले सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो नमी में खुला रहने से आर्द्रता को सोखता है (Hygroscopic)। रासायनिक दृष्टि से यह Sodium salt of sulphuric acid esters of the polysaccharide dextran होता है, जिसके प्रति मिलिग्राम में कम से कम १० युनिट की सक्रियता होती है, तथा १४% गन्धक (S) होता है। विलेयता—जल में पूर्णतः घुल जाता है। मात्रा—५,००० से १५,००० युनिट शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

इन्जेक्शिओ डेक्स्ट्रेनाइ सल्फेटिस Injectio Dextrani Sulphatis (Inj. Dextran. Sulph.) B. P. Add.—ले०; इन्जेशन ऑव डेक्स्ट्रन सल्फेट—श्रं०। यह स्वच्छ हल्के पीले या भूरे रंग का द्रव होता है, जो डेक्स्ट्रन सल्फेट का परिस्रुत जल (Water for injection) में बनाया हुआ सोल्यूशन होता है। मात्रा—५,००० से १५,००० यूनिट।

प्रयोग—इसकी क्रिया हिपेरिन की भाँति होती है। अतएव चिकित्सा-व्यवहार में हिपेरिन के स्थान में रक्तस्कन्दन निवारक के रूप में व्यवहार होता है। एतदर्थ ५००० युनिट मात्रा में ६–६ घंटे पर शिरागत मार्ग द्वारा दिया जाता है। मात्राधिक्य से रक्तस्राव का उपद्रव हो सकता है।

फेनिन्डिश्रोनम् (Phenindionum), B. P. Add.—ले०; फेनिन्डिश्रोन (Phenindione)—श्रं०।

पर्याय–फेनिलिन्डेनेडिश्रोन (Phenylindanedione); डिन्डेवेन (Dindevan)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—Phenylindane 1: 3-dione होता है, जो मृदु तथा सफेद रंग के या मलाइ के रंग के प्रायः गंधहीन एवं स्वादहीन क्रिस्टल्स के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—जल में अल्प मात्रा में घुलता है; १२० भाग अल्कोहल् (९५%) ६·५ भाग क्लोरोफॉर्म तथा ११० भाग सालवेंट ईथर में घुलनशील होता है। सोल्यूशन पीले से लाल रंग का होता है। मात्रा—(१) प्रारम्भिक ०·२ से ०·३ ग्राम या ३ से ५ ग्रेन; बाद में २५ से १०० मि० ग्रा० (३/८ से ११/२ ग्रेन) प्रतिदिन कई मात्राओं में विभक्त करके दिया जाता है। मात्रा के निर्धारण में रक्तगत प्रोथ्राम्बिन का परीक्षण करते रहना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—यह भी एक रक्तस्कन्दन निवारक द्रव्य है, जो रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से बनाया जाता जाता है। डाइकोमेरोल की अपेक्षा इसकी क्रियाशीलता जल्दी नष्ट होती है, किन्तु एथिलबिस्कोमेसिटेट की अपेक्षा इसका प्रभाव अधिक स्थायी होता है। सेवनोपरान्त ३६ से ४८ घंटे में औषधि का अधिकतम प्रभाव लक्षित होता है। औषधि बन्द करदेने के २-३ दिन बाद रक्तगत प्रोथ्राम्बिन की स्थिति पुनः पूर्ववत् हो जाती है। प्रारम्भ में १०० मि० ग्रा० की मात्रा देकर बाद में प्रतिदिन २५ से १०० मि० ग्रा० रक्तगत प्रोथ्राम्बिन की स्थिति के अनुसार दी जाती है।

(ऑफिशल योग)

टॅबेली फेनिन्डिओनी Tabellae Phenindionae (Tab. Phenindion.), B. P. Add.—ले०; टॅबलेट्स ऑव फेनिन्डिओन—श्रं०। पर्याय—टॅबलेट्स ऑव फेनिन्डिओन। मात्रा—फेनिन्डिश्रोन की भाँति। प्रति टॅबलेट मात्रा का उल्लेख न होवे पर ५० मि० ग्रा० (३/४ ग्रेन) की टॅबलेट देना चाहिये।

डिपेक्सिन Dipaxin (नॉट–ऑफिशल)। यह भी एक इन्डेन्डिश्रोन व्युत्पन्न यौगिक (Indandione derivative) है, जो इस वर्ग की रक्तस्कन्दननिवारक औषधियों में सबसे सक्रिय औषधि है। प्रारम्भिक मात्रा २० से २५ मि० ग्रा० की दी जाती है। बाद में प्रभाव को बनाए रखने के लिए प्रतिदिन २ से ५ मि० ग्रा० दी जाती है। औषधि सेवन के बाद २४–७२

घंटे के अन्दर पूर्ण प्रभाव लक्षित होता है और औषधि बन्द कर देने पर भी ६–७ दिन तक इसका प्रभाव बना रहता है।

वर्ग द—कतिपय विशिष्ट रक्तरोगों पर कार्यकर औषधियाँ।

इस वर्ग में निम्न औषधियों का वर्णन किया जायगा :—

(१) श्वेतमयता में प्रयुक्त औषधियाँ (Drugs used in Leukaemia);

(२) अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) में प्रयुक्त औषधियाँ तथा

(३) अप्रगल्भरक्तकायाणूत्कर्ष या बहुरक्तकायाणुमयता (Polycythaemia vera) में उपयुक्त औषधियाँ।

श्वेतमयता में प्रयुक्त औषधियाँ—यह रक्तोत्पादक एवं लसतंस्था की एक घातक व्याधि है। जो प्रायः असाध्यसी होती है। चिकित्सा में केवल तात्कालिक लक्षण शमन होता है। किया-व्यापार की दृष्टि से इन औषधियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :—

(१) कोषाओं पर क्रिया करने से या साइटोटॉक्सिक द्रव्य (Cytotoxic agents) :—

(अ) रासायनिक विशेषताओं (Chemical Properties) द्वारा कार्य करने वाली :—

(१) कोषा-विभजन निरोधक (Antimiotic) औषधियाँ—मुस्टीन हाइड्रोक्लोराइड (Mustine Hydrochloride), ट्रेटामीन (Tretamine), यूरिथेन (Urethane) तथा बसल्फन (Busulphan) आदि।

(२) समवर्त-निरोधक (Antimetabolic) द्रव्य— फोलिक-एसिडप्रत्यनीक द्रव्य (Folic acid antagonists), मरकेप्टोप्यूरीन (Mercaptopurine) आदि।

भौतिक विशेषताओं (Physical properties) द्वारा कार्य करने वाली:—

रेडियो-एक्टिव्ह फास्फोरस (Radio-active Phosphorus).

(२) अन्तःस्राव (Hormones)

कॉर्टिसोन (Cortisone) एवं कार्टिकोट्रोफिन।

उपर्युक्त औषधियों में तरुण श्वेतमयता (Acute Leukaemia) में प्रायः समवर्त-निरोधक द्रव्यों यथा फोलिकएसिड प्रत्यनीक द्रव्य तथा मरकेप्टोप्यूरीन एवं अन्तः स्रावों (कॉर्टिसोन तथा कॉर्टिकोट्रोफिन) का उपयोग किया जाता है। कोषाविभजन-निरोधक द्रव्य (Antimiotics) तथा रेडियोएक्टिव्हफास्फोरस आदि विशेषतः चिरकालीन मज्जाभश्वेतमयता (Chronic myeloid leukaemia) में बसल्फन, यूरिथेन, रेडियोएक्टिव्हफास्फोरस, डेमिकोल्सिन (Demecolcin) तथा मस्टीनहाईड्रोक्लोराइड आदि व्यवहृत होते हैं। चिरकालीन लसात्मकश्वेतमयता (Chronic Lymphatic Leukaemia) में ट्रेटामीन (Tretamine), रेडियोएक्टिव्ह फास्फोरस तथा मस्टीनहाइड्रोक्लोराइड आदि का प्रयोग किया जाता है।

अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) में प्रयुक्त औषधियाँ—पेन्टन्युक्लियोटाइड, (Pentnucleotide), पाइरिडाक्सीन हाइड्रोक्लोराइड, फोलिक एसिड एवं पेनिसिलिन आदि।

बहुलालकायाणुमयता (Polycythaemia vera) में प्रयुक्त औषधियाँ—फेनिलहाइड्रेजीन हाइड्रोक्लोराइड (Phenylhydrazine Hydrochloride), एसेटिलफेनिल हाइड्रेजीन (Acetyphenylhydrazine), रेडियो एक्टिव्हफास्फोरस तथा मस्टीनहाइड्रोक्लोराइड आदि ।

मस्टिनीहाइड्रोक्लोराइडम् Mustinae Hydrochloridum (Mustin. Hydrochlor.), B. P. C.—ले०; मस्टीन हाइड्रोक्लोराइड (Mustine Hydrochloride)—अं० ।

रासायनिक संकेत :— $C_5H_{12}NCl_3$.

पर्याय—नाइट्रोजन मस्टर्ड (Nitrogen Mustard) ।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह di (2—Chloroethyl) methylamine hydrochloride होता है, जो सफेद या प्रायः सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। हवा में खुला रहने से नमी को सोखता है । विलेयता—जल में अच्छी तरह घुलनशील होता है । मात्रा—०·१ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के हिसाब से प्रतिदिन । अधिकतम एक मात्रा (Maximum Single dose) ८ मि० ग्रा० की होती है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

नाइट्रोजन मस्टर्ड के रासायनिक एवं भौतिक गुणधर्म (Chemical and physical properties) मस्टर्ड गैस (Mustard gas) की भाँति होते हैं । शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर शरीर के विभिन्न धातुओं पर साइटोटॉक्सिक क्रिया (Cytotoxic action) होती है । उक्त क्रिया जालकान्तस्तरीय धातुओं (Reticulo-endothelial tissues), लसधातु (Lymphoid tissue) एवं रक्तसंजननधातुओं (Haemopoietic tissues) पर विशिष्ट रूप से होती है। अतएव यह हाजकिन के रोग एवं श्वेतमयता (Leukaemia) एवं लसमांसार्बुद (Lymphosarcoma) आदि घातक रोगों में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है । किन्तु ध्यान रहे कि उक्त व्याधियाँ घातक तथा असाध्य स्वरूप की हैं । अतएव इनमें स्थायीलाभ नहीं होता, किन्तु लक्षणों का तात्कालिक शमन अवश्य होता है । जिन रोगियों में क्षय-किरण प्रयोग लाभप्रद नहीं सिद्ध होता उनमें विशेषरूप से उपयुक्त होता है । चिरकालीन मज्जाभश्वेतमयता (Chronic myeloid Leukaemia) में नाइट्रोजन मस्टर्ड विशेष रूप से उपयोगी होता है । उपर्युक्त व्याधियों के अतिरिक्त फंगसजन्य त्वचागत कणिकार्बुद (Mycosis fungoides), बहुलालकायाणुमयता (Polycythaemia vera) एवं लिम्फोब्लेस्टोमा (Lymphoblastoma) तथा कणिकार्बुदोत्कर्ष (Sarcoidosis) आदि व्याधियों में भी नाइट्रोजन मस्टर्ड उपयोगी बताया जाता है ।

विषाक्तप्रभाव—नाइट्रोजन मस्टर्ड तथा इस समुदाय के अन्य यौगिक तीव्रक्षोभक होते हैं, अतएव इनका प्रयोग करते समय त्वचा एवं श्लैष्मिक कलाओं के संरक्षण का ध्यान रखना चाहिए । औपशयिक एवं विषाक्तमात्राओं में बहुत कम अन्तर (margin of safety) होने से इसके प्रयोग में विशेष सतर्कता की आवश्यकता है । इंजेक्शन के स्थान में दर्द, वमन, मिचली तथा अतिसार आदि उपद्रव पैदा होते हैं । कभी-कभी जिस शिरा में इंजेक्शन दिया जाता है, वह जम जाती

(Thrombophlebitis) है। कभी-कभी श्वेतकायाणुअपकर्ष (Leucopenia), कणिककायाणु-अपकर्ष (Granulocytopenia) एवं घनाभ्रिकायाणु-अपकर्ष (Thrombocytopenia) आदि घातक उपद्रव भी हो जाते हैं।

सेवन-विधि—इसका प्रयोग शिरागत इंजेशन द्वारा प्रतिदिन या एक दिन के अन्तर से किया जाता है। औषधिको विशोधित लवण जल (Sterile normal saline Solution) या परिस्रुत जल (Water forinjection) में घोलकर प्रयुक्त किया जाता है। मात्रा ०.१ से ०.२ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के अनुसार दी जाती है। किन्तु एक बार में ८ मि० ग्रा० से अधिक मात्रा नहीं प्रयुक्त की जाती। ३ से ६ इंजेक्शन का एक कोर्स होता है। अस्थिमज्जा की क्रिया सामान्य हो जाने पर आवश्यकतानुसार ६ से ८ सप्ताह बाद दूसरा कोर्स दिया जा सकता है। मस्टीन हाइड्रोल्कोराइड का इंजेक्शन ताजा ही प्रयुक्त करना चाहिए तथा इंजेक्शन देते समय ध्यान रहे कि औषधि सिरा से अतिरिक्त परिसरीय धातुओं में न जाने पावे।

ट्रेटामीन (Tretamine (नॉट् ऑफिशल) ।

पर्याय—Triethylene Melamine, TEM.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 2 : 4 : 6—tri—(ethyleneimino) -s- triazine होता है, जो रंगहीन क्रिस्टलाइन घन के रूप में प्राप्त होता है। जल में यह फौरन घुल जाता है। मात्रा—२.५ से १० मि० ग्रा० या $\frac{1}{24}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन प्रतिदिन मुखद्वारा; २ से ३ मि० ग्रा० ($\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{20}$ ग्रेन) शिरागत मार्ग द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—ट्रेटामीन भी मस्टीन हाइड्रोक्लोराइड (नाइट्रोजन मस्टर्ड) की भाँति साइटोटॉक्सिक प्रभाव (Cytotoxic action) करता है। किन्तु इसमें विशेषता यह है, कि मुख द्वारा अथवा इंजेक्शन द्वारा दोनों ही मार्गों से प्रयुक्त होने पर नाइट्रोजन मस्टर्ड की अपेक्षा कम विषैला होता है। मुख द्वारा प्रयुक्त करने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से शीघ्रतापूर्वक शोषित हो जाता है, और साथ ही साथ पाचक रसों की क्रिया से वियोजित नहीं होता। एतदर्थ प्रातःकाल खाली पेट पर २.५ से ५ मि० ग्रा० की मात्रा में २ ग्राम (३० ग्रेन) सोडियम् बाइकार्बोनेट के साथ मिलाकर प्रयुक्त करते हैं। दवा सेवन करने के बाद भी दो-तीन घंटे तक कुछ खाने को नहीं देते। दूसरे दिन प्रातःकाल इसी प्रकार एक मात्रा और दी जाती है। इसके बाद उक्त मात्रा सप्ताह में एक बार दी जाती है। पूरा कोर्स २०–३० मि० ग्रा० का होता है। १० दिन के बाद अस्थिमज्जा में निश्चित रूप से परिवर्तन होता है। चिरकालीन लसमयश्वेतमयता (Chronic lymphatic leukaemia) में विशेष रूप से उपयोगी है। इसका प्रयोग मुखमार्ग के अतिरिक्त शिरागत इन्जेक्शन द्वारा भी किया जा सकता है। एतदर्थ लवण जल में बनाया हुआ ०.५ प्रतिशत बल का सोल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है। एक बार में २ मि० ग्रा० औषधि दी जाती है। इंजेक्शन सप्ताह में १ बार किया जाता है। पूरा कोर्स ४–६ इंजेक्शन का होता है।

बसल्फन Busulphan (नॉट्–ऑफिशल) । पर्याय–माइलेरान (Myleran) ।

माइलेरान का प्रयोग मुखद्वारा (orally) किया जाता है। मुख द्वारा सेवन किया जाने पर आमाशयान्त्र से अच्छी तरह शोषित हो जाता है। इसकी सॉयटोटॉक्सिक क्रिया निःसंदेह

अस्थिमज्जा पर होती है। अतएव चिरकालीन मज्जाभश्वेतमयता तात्कालिक लाभ के लिए (Chronic myeloid leukaemia) में यह परमोपयोगी एवं उपयुक्त औषधि सिद्ध होती है। प्रतिदिन ५ से१० मि० ग्रा० (१/१२ से १/६ ग्रेन) औषधि मुखद्वारा दी जाती है। जब कणिककायाणुओं की संख्या घटकर प्रतिघन मि० मि० २०,००० से १५, ००० या रक्तचक्रिकाओं (Blood platelets) की संख्या प्रतिघन मिलिमिटर में १००,००० से नीचे आजाय तो औषधि की मात्रा घटाकर २ से ५ मि० ग्रा० (१/३ से १/१२ ग्रेन) की धारक मात्रा (Maintenance dose) प्रतिदिन दी जाती है। इससे २ से १८ महीने तक रोग की शान्ति रहती है। माइलेरान का प्रयोग मुख द्वारा किया जा सकता है तथा साथ ही कम खर्चीला है। उपद्रव भी अपेक्षाकृत कम होते हैं।

मरकेप्टोप्यूरीन Mercaptopurine (नॉट्-ऑफिशल)। पर्याय—प्युरिनेथोल (Purinethol)।

इसकी क्रिया प्युरिन के प्रत्यनीक (purin—antagonist) होती है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है और शोषणोपरान्त निस्सरण भी उतनी ही जल्दी होता है। इसका उत्सर्ग प्रधानतः मूत्रके साथ होता है। युवा व्यक्तियों की अपेक्षा बच्चों के उग्रश्वेतमयता (Acute leukaemia) में विशेष उपयोगी—है। प्रतिदिन २.५ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीरभार के अनुसार औषधि मुखद्वारा दी जाती है। इस कार का क्रम ३–६ सप्ताह तक चलाया जाता है। इसके बाद १ से २ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के हिसाब से धारकमात्रा दी जाती है। इस चिकित्साक्रम से २–३ महीने के लिए रोग की शान्ति हो जाती है। कभी कभी रोगी को औषधि सह्य हो जाती है, जिससे पुनः आक्रमण होने पर दोबारा इसके सेवन से लाभ नहीं भी होता। कभी-कभी मरकेप्टोप्यूरीन का सेवन चिरकालीनमज्जाभश्वेतमयता (Chronic myeloid leukaemia) में भी उपयोगी सिद्ध होता है।

फोलिकएसिड-प्रत्यनीक औषधियाँ (Folic Acid Antagonists)—

इस समुदाय में दो यौगिक विशेष महत्त्व के हैं :—(१) **एमिनोप्टेरिन (Aminopterin)** तथा (२) **मेथोट्रेक्सेट (Methotrexate)**। एमिनोप्टेरिन रासायनिक दृष्टि से 4—aminopteroylglutamic acid होता है। मेथोट्रेक्सेट का रासायनिक स्वरूप 4—amino—N_{10}-methylpteroylglutamic acid होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—ये यौगिक फोलिक एसिड के समवर्त को विकृत करते (Antimetabolic to folic acid) हैं। और इस प्रकार न्यूक्लिक एसिड समवर्त (Nucleic acid metabolism) में भी बाधा करते हैं। इनकी क्रिया से न तो फोलिक एसिड का परिवर्तन फोलिनिक एसिड में होने पाता और न उपस्थित फोलिनिक एसिड का शरीर धातुओं में उपयोग ही होने पाता है। अतएव इनकी विषाक्तता जन्य उपद्रवों की शान्ति होती है। ये यौगिक भी अस्थिमज्जा की कोशाओं पर साइटोटॉक्सिक प्रभाव करते हैं। अतएव उग्र श्वेतमयता (Acute Leukaemia) में रोग की तात्कालिक शान्ति के लिए उपयुक्त सिद्ध होते हैं। मज्जाभ श्वेतमयता की अपेक्षा लसमय श्वेतमयता (Lymphatic type) में अधिक प्रभाव करते हैं। किन्तु अत्यन्त विषैला होने से इनका प्रयोग सीमित है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाते हैं और १–२ घंटे के अन्दर

ही रक्तगत अधिकतम संकेन्द्रण प्राप्त होता है। शोषणोपरान्त निस्सरण भी जल्दी ही होता है। २४ घंटे के अन्दर लगभग आधी औषधि मूत्र के साथ उत्सर्गित हो जाती है। वृक्कों की विकृति में इनका रक्तगत संकेन्द्रण देर तक बना रहता है। युवकों की अपेक्षा बच्चों में ये औषधियाँ अपना प्रभाव अधिक करती हैं।

विषाक्त प्रभाव—उक्त दोनों यौगिक विषैले स्वभाव के हैं। विषाक्तता के कारण मुखपाक (Stomatitis), निलोहा (Purpura), श्वेतकायाणु-अपकर्ष, वमन, अतिसार आदि उपद्रव प्रगट होते हैं।

मात्रा एवं सेवन-विधि—युवा व्यक्ति के लिए ०.५ से २ मि० ग्रा० प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा जब तक रोग की शान्ति (Remission) न हो जाय। बालकों के उग्र श्वेतमयता रोग में एमिनोप्टेरिन प्रतिदिन ०.२५ से ०.५ मि० ग्रा० तथा मेथीट्रेक्सेट १.२५ से ५ मि० ग्रा० प्रतिदिन मुख द्वारा दिए जाते हैं। विषाक्त लक्षण प्रगट होने पर ७-१० दिन का अन्तर करके पुनः अल्प मात्रा से चिकित्सा क्रम प्रारम्भ करना चाहिए।

रेडियो-सक्रिय फास्फोरस (P_{32})

(Radio-active Phosphorus)

आज-कल कतिपय रासायनिक तत्वों के रेडियो-सक्रिय आइसोटोप्स (Radio-active isotopes) का उपयोग चिकित्सा व्यवहार में कतिपय औषधियों के शरीर धातुगत वितरण, ग्रहण एवं निस्सरण के परीक्षण के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक घातक व्याधियों में भी इनका प्रयोग विशिष्ट रूपेण उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसी प्रकार रेडियो-सक्रिय फास्फोरस के फास्फेट यौगिक का व्यवहार श्वेतमयता रोग (Leukaemia) तथा बहुलालकायाणुमयता (Polycythaemia vera) रोगों में बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। श्वेतमयता रोग में भी चिरकालीन मज्जाभ श्वेतमयता तथा चिरकालज लसमय श्वेतमयता में विशेष रूप से उपयोगी होता है। एतदर्थ डाइबेसिक सोडियम् फास्फेट लवण (Dibasic Sodium Phosphate) का व्यवहार किया जाता है। इसका प्रयोग शिरागत इन्जेक्शन द्वारा किया जाता है।

बहुलालकायाणुमयता रोग में ३ से ६ मिलिक्युरीज़ (Millicuries) का एक इन्जेक्शन शिरा में देते हैं। प्रायः २-३ महीने तक पुनः इन्जेक्शन देने की आवश्यकता नहीं होती। ३ से ६ महीने बाद आवश्यकतानुसार १ से ६ मिलिक्युरीज़ का एक इन्जेक्शन और दे सकते हैं। चिरकालीन श्वेतमयता रोगों में १ से २ मिलिक्युरी का सप्ताह में १ या २ बार शिरागत इन्जेक्शन देते हैं। जब श्वेतकायाणुओं की संख्या प्रतिघन मि० मि० ३०,००० रह जाय तो इन्जेक्शन बन्द कर दिए जाते हैं। रेडियो-सक्रिय फास्फोरस से १-२ साल तक रोग रुक जाता है। क्ष-किरण चिकित्सा के साथ-साथ सहायक चिकित्सा के रूप में भी इसका प्रयोग बहुत उपयुक्त है।

फेनिलहाइड्रेजीन हाइड्रोक्लोराइड Phenylhydrazine Hydrochloride (नॉट्-ऑफिशल)।

यह गुलाबी आमा लिए सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो रखा रहने से भूरा हो जाता है। ५ भाग जल तथा अल्कोहल् में घुलनशील होता है।

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र से शोषित हो जाता है; किन्तु इसका निस्सरण धीरे-धीरे होता है। अतः इसमें संचायी प्रवृत्ति भी पाई जाती है। इसकी क्रिया विशेषतः रक्त के लाल कणों पर होती है। लालकणों को गलाता है, जिससे लालकणों की संख्या में कमी हो जाती है। अतएव परमलालकणमयता (Polycythaemia vera) में उपयोगी है। ०·१ ग्राम या १½ ग्रेन मात्रा मुख द्वारा प्रतिदिन २–३ बार दी जाती है। जब लालकणों (R. B. C.) की संख्या स्वाभाविक हो जाय तो तीसरे या चौथे दिन ५० मिली ग्राम या ¾ ग्रेन की धारक मात्रा दी जाती है।

एसेटिलफेनिल हाइड्रेजीन (Acetylphenyl Hydrazine)। पर्याय—पाइरोडिन हाइड्रेसेटिन (Pyrodine Hydracetin)।

पाइरेडिन हाइड्रसेटिन के रंगहीन एवं गंधहीन क्रिस्टल्स होते हैं, जो ५० भाग जल एवं अल्कोहल् में घुलनशील होते हैं। मात्र—१ से २ ग्रेन या ६० से १२० मिली ग्रा० मुखद्वारा।

प्रयोग—यह भी वहुलालकायाणुमयता (Polycythaemia vera) में प्रयुक्त होता है। इसके लिए प्रतिदिन १½ ग्रेन या ०·१ ग्राम औषधि जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर मुखद्वारा सेवन किया जाता है। इस प्रकार ७ से १० दिन तक चिकित्सा-क्रम चलाया जाता है। आवश्यकतानुसार १४ दिन बाद पुनः चिकित्सा-क्रम दुहराया जा सकता है। हर पाँचवें या सातवें दिन १½ ग्रेन की धारक मात्रा दी जाती है। फेनिल हाइड्रजीन की अपेक्षा यह कम विषैली है।

इन्जेक्शिओ न्युक्लियोटाइडाइ Injectio Nucleotidi (नॉट-ऑफिशल)। पर्याय—लाइकर पेंटोसाइन्युक्लियोटाइडाइ Liquor Pentosi Nucleotidi।

वर्णन—यह हल्के पीले रंग का स्वच्छ द्रव होता है, जिसमें ८% सोडियम् पेंटोसन्युक्लियोटाइड्स (Sodium Pentose Nucleotides) होते हैं। मात्रा–१० से २० मि० लि० या सी० सी० (१५० से ३०० मिनम् या बूंद)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—न्युक्लियोटाइड्स श्वेतकायाणुओं की उत्पत्ति में उत्तेजना (Leucocyte stimulants) देते हैं। यह क्रिया विशेषतः कणिककायाणुओं (Granulocytes) पर होती है। अतएव कणिककायाणुओं की संख्या में अत्यधिक ह्रास होने पर अर्थात् अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) की अवस्थाओं में इन्जेक्शन ऑव न्युक्लियोटाइड बहुत उपयोगी होता है। एतदर्थ १० से २० मि० लि० सोल्यूशन का नितम्ब पेशियों में गम्भीर इंजेक्शन दिया जाता है। उक्त मात्रा दिन में २ बार करके ४-५ दिन तक दी जाती है। इसके बाद धारक मात्रा के लिए १० सी० सी० सोल्यूशन का प्रतिदिन एक बार पेशीगत इंजेक्शन किया जाता है। एक सप्ताह के बाद यदि रक्तगत कणिक कायाणुओं की संख्या स्वाभाविक हो गई हो तो औषधि बन्द कर दी जाती है।

कभी-कभी इस चिकित्सा-क्रम में हृदय प्रदेश में पीड़ा, श्वास कष्ट, ज्वर, प्रकम्प, अधिक प्रस्वेद एवं उदर पीड़ा तथा इन्जेक्शन के स्थान में दर्द आदि उपद्रव भी लक्षित होते हैं, जिनका चिकित्सक को ध्यान रखना चाहिए।

अध्याय ८

परिच्छेद १

पोषक द्रव्य (Nutrients)

प्रकरण १

जीवतिक्तियाँ (विटामिन्स Vitamins)

आहारगत प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट आदि के अतिरिक्त, कतिपय अन्य सहायक द्रव्यों की भी आवश्यकता होती है, जिनके अभाव के कारण आहार संतुलित होते हुए भी शारीरिक वृद्धि ठीक प्रकार से नहीं होती। यही नहीं अपितुउक्त सहायक तत्त्वों के अभाव में अनेक व्याधियों की उत्पत्ति भी होती है। उक्त तत्त्वों की क्रिया राजगीर की भाँति होती है। जिस प्रकार भवन निर्माण के लिए आवश्यक ईंट, पत्थर, चूना आदि सभी उपकरणों के एकत्रित रहने पर भी जिस प्रकार मिस्त्री के न होने से भवननिर्माण सम्भव नहीं है, उसी प्रकार आहार के सभी घटकों के संतुलित मात्रा में होते हुए भी उक्त सहायक द्रव्यों के अभाव में आहार्य तत्वों का उपयोग शरीर में नहीं हो पाता। इनको **जीवतिक्तियाँ** या **विटामिन्स** (Vitamins (बहुव०); विटामिन Vitamin (एक व०) कहते हैं। स्कर्वी तथा बेरी-बेरी आदि विटामिन–अभावज व्याधियों का सहसा ज्ञान इसी प्रकार हुआ। एक बार नाविकों का एक समूह जो लम्बी यात्रा के लिए प्रस्थान किए हुए था स्कर्वी रोग से आक्रान्त हुआ। बाद में संयोगवशात् इनको नीबू मिला और सबने उसको खाया और परिणाम स्वरूप सभी नाविक उक्त रोग से मुक्त हो गए। इस प्रकार उपशय निदान द्वारा यह अनुमान हुआ कि नीबू में अवश्य कोई ऐसा तत्व है, जो उक्त व्याधि को दूर करने में समर्थ है, तथा साथ ही यह भी अनुमान हो गया कि उक्त तत्व के अभाव में स्कर्वी रोग होता है। इसी प्रकार बेरी-बेरी के रोगियों के आहार में चावल की मात्रा घटाने एवं रोटी, शाक आदि की मात्रा बढ़ाने से रोगमुक्ति हुई। जिससे यह अनुमान हुआ कि चावलों में कोई ऐसा तत्व है, जो बेरी-बेरी से मुक्त करने में समर्थ है, तथा जिसका शरीर में अभाव बेरी-बेरी का जनक है। विटामिन्स 'सी' एवं 'बी' और बाद में अन्य विटामिन्स का ज्ञान इसी प्रकार हुआ। सम्प्रति अनेक विटामिन्स का ज्ञान प्राप्त किया जा चुका है। आजकल चिकित्सार्थ प्रयुक्त करने के लिए उक्त विटामिन्स का निर्माण संश्लेषण (Synthesis) की पद्धति द्वारा कृत्रिमरूप से प्रयोगशालाओं (Laboratories) में किया जाने लगा है। निर्माणशालाओं में निर्मित सभी विटामिन्स के योग बाजार में उपलब्ध हैं। कृत्रिमरूप से निर्मित विटामिन्स में यह लाभ है, कि इनके रासायनिक स्वरूपादि का विनिश्चय एवं इनका प्रमापन (Standardization) सुविधा पूर्वक किया जा सकता है।

इन जीवतिक्तियों (विटामिन्स) में कुछ तो जल में घुलती हैं; और कुछ वसा में विलेय होती हैं। अतएव वर्णन सौकर्य के लिए इनके २ समुदाय कर दिये गए हैं—

(१) जल-विलेय जीवतिक्तियाँ (**Water-soluble vitamins**)—यथा, विटामिन 'बी' कम्प्लेक्स, विटामिन 'सी' एवं विटामिन 'पी' ;

(२) वसा-विलेय जीवतिक्तियाँ विटामिन्स—विटामिन 'ए', 'डी', 'ई', एवं 'के'। इनका पृथक्-पृथक् वर्णन इन्हीं दोनों शीषकों में किया जायगा।

प्राणियों को नैसर्गिक रूप से जीवतिक्तियों की प्राप्ति खाद्य के साथ हरितशाकों, अंडे, दूध एवं मांस आदि से होता है। आंत्रों द्वारा प्रचूषित होने पर ये शरीर में अपने क्रिया व्यापार का सम्पादन करते हैं तथा आवश्यकता से अधिक मात्रा का संचय शरीरगत धातुओं में होता है, जो आवश्यकता के समय संचित धन की भाँति उपयोग में लाया जाता है। जल-विलेय जीवतिक्तियों का संग्रह अत्यल्प मात्रा में होता है, परिणामतः इनके अभाव से होनेवाली व्याधियों की आशंका अधिक रहती है। वसा-विलेय समुदाय की जीवतिक्तियाँ शरीर में काफी मात्रा में संचित हो जाती हैं, जिससे इनके अभावज रोग अपेक्षाकृत कम पाये जाते हैं। निम्न अवस्थाओं में शरीर में जीवतिक्तियों का अभाव उत्पन्न हो सकता है—(१) आहार में जीवतिक्ति का उचित परिणाम में न होना; (२) आहार में जीवतिक्ति की उपस्थिति उचित मात्रा में होने पर भी अंत्र की विकृति के कारण समुचित मात्रा में उसका प्रचूषित न होना; (३) इसके अतिरिक्त कतिपय ऐसी अवस्थायें होती हैं, जिनमें जीवतिक्तियों की आवश्यकता सामान्य की अपेक्षा अधिक होती है; क्योंकि उक्त कालों में शरीर में उनका व्यय अपेक्षाकृत अधिक होता है, जैसे गर्भावस्था एवं धात्रीकाल (**During pregnancy and lactation**) में स्त्रियों को तथा वृद्धिशील बालकों (**Growing child**) को। सारांश यह है कि जब भी शरीर में विटामिन्स की समुचित मात्रा प्रचूषित नहीं होती अथवा उनका अत्यधिक व्यय होगा तो विटामिनाभावज रोगों की उत्पत्ति होगी ऐसी अवस्था में उन-उन जीवतिक्तियों के योगों के सेवन से फौरन लाभ होता है। आजकल चिकित्सा में इनका बहुत महत्व है। साधारण अवस्थाओं में इनका सेवन मुखद्वारा तथा शीघ्र लाभ के लिए इंजेक्शन द्वारा किया जाता है।

जीवतिक्ति-विरोधी द्रव्य या एन्टीविटामिन्स (**Antivitamins**)—उन द्रव्यों को कहते हैं, जो विभिन्न जीवतिक्तियों या विटामिन्स की क्रिया को निष्क्रिय करते हैं। उक्त क्रिया इन द्रव्यों का **रासायनिक संघटन** (**Chemical constitution**) विशिष्ट जीवतिक्ति के रासायनिक संघटन के समरूप होने के कारण होती है। कतिपय द्रव्य ऐसे हैं, जिनका क्रिया व्यापार एक-सा (**Chemical analogues**) होने से किसी विशिष्ट जीवतिक्ति के प्रत्यनीक प्रभाव करते हैं, यथा सल्फोनेमाइड्स एवं पावा* (**PABA**) की एक दूसरे के प्रत्यनीक प्रभाव। **टॉक्सामिन्स**[1] (**Toxamins**) भी जीवतिक्ति-प्रत्यनीक प्रभाव करते हैं, जिससे इनको भी एन्टिविटामिन्स की श्रेणी में समझा जा सकता है। टॉक्सामिन्स अपने सहज स्वभाव से विटामिन्स की क्रिया का निरोध करते हैं।

---

*—टॉक्सामीन एक काल्पनिक विषाक्त द्रव्य समझे जाते हैं, जिनके कारण कृमिदंत रोग (Dental caries) की उत्पत्ति होती है। यह कतिपय आहार द्रव्य तथा द्विदल धान्यों (Cereals) में पाये जाते हैं।

जीवतिक्ति-विरोधी द्रव्य:—

(१) विटामिन बी$_1$, प्रत्यनीक द्रव्य—कार्बोहाइड्रेट्स।

(२) बायोटिन (Biotin) विरोधी द्रव्य—एविडिन (Avidin)।

(३) विटामिन 'सी' विरोधी द्रव्य—ग्लूकोएस्कोर्बिक एसिड (Gluco-ascorbic acid)।

(४) फोलिक एसिड—४—एमिनो-फोलिक एसिड (4-Amino-folic acid)।

(५) विटामिन 'ए' एवं 'ई'—विकृत चर्बी या वसा (Rancid fat)

(६) विटामिन 'के'—डाइकोमेरोल (Dicoumarol)

(७) विटामिन 'डी'—फाइटिक एसिड (Phytic acid)—यह आँतों में केल्सियम् के साथ संयुक्त होकर ऐसे यौगिकों में रूपान्तरित हो जाता है, जिनका शोषण नहीं होता। परिणामतः शरीर में केल्सियम् का अभाव होता है।

१—जल-विलेय जीवतिक्तियाँ (Water-Soluble Vitamins)।

विटामिन 'बी' कम्प्लेक्स (जटिल जीवतिक्ति 'ख')

(Vitamin B Complex)

विटामिन 'बी' कम्प्लेक्स में अनेक विटामिन्स का समावेश होता है, जिनमें अनेक की स्वतंत्र उपलब्धि नैसर्गिक साधनों (Natural sources) द्वारा अथवा संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से (Synthetically) की जा चुकी है। मानव शरीर की उपयोगिता की दृष्टि से विटामिन 'बी' कम्प्लेक्स-अन्तर्भूत निम्न विटामिन्स महत्व के हैं:—जीवतिक्ति बी^{1} (Thiamine), जीवतिक्ति बी$_2$ (Riboflavine), पैन्टोथेनिक एसिड (Pantothenic acid या जीवतिक्ति बी$_3$)। जीवतिक्ति बी$_6$ (Pyridoxine), जीवतिक्ति 'बी$_7$ [Nicotinic acid and nicotinamide (B_6),] फोलिक एसिड (Folic acid), कोलीन (Choline), पारा-अमिनोबेंजोइक एसिड (पावा) P. A. B. A- Para-aminobenzoic acid तथा जीवतिक्ति बी$_{12}$ (Rubramin—B_{12})।

थियामिनी हाइड्रोक्लोराइडम् (थियामीन हाइड्रोक्लोराइड) I. P. B. P.

(विटामिन बी$_1$)

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_{17}ON_4SCl, HCl., H_2O.$,

पर्याय—अन्युरिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Aneurinae Hydrochloridum (Aneurin. Hydrochlor.), B. P.; Thiaminae Hydrochloridum (Thiamin. Hydrochlor.), I. P.—ले०; अन्युरीन हाइड्रोक्लोराइड (Aneurine Hydrochloride); थियामीन हाइड्रोक्लोराइड (Thiamine Hydrochloride); Vitamin B$_1$—अं०; अनाड़िकी, प्रतिनाड़िकीय—सं०।

प्राप्ति-साधन—थियामीन हाइड्रोक्लोराइड रासायनिक दृष्टि से 3—(4'—amino—2'—methylpyrimidyl-5'—methyl)—4—methyl—5-B—hydroxyethyl—thiazolium Chloride Hydroc hloride mono-hydrate होता है; जो (१) नैसर्गिक रूप से (Natural Sources)

चावल के कन्ने (Rice polishings) से अथवा खमीर (Yeast) तथा अन्य साधनों से अथवा (२) कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें २०.४ प्रतिशत से २१.२ प्रतिशत क्लोरीन (Cl.) होता है। १०.३% से १०.८% क्लोरीन (Cl) हाइड्रोक्लोराइड के रूप में होता है। ९५.०% से १०२.० प्रतिशत तक जलांश रहित थियामीन हाइड्रोक्लोराड (Anhydrous thiamine chloride) होता है।

वर्णन—यह रंगहीन सूच्याकार सूक्ष्म पट्टकों (Monoclinic plates) के रूप में पाया जाता है, जो प्रायः गुच्छकों (Rosette-like clusters) में पाये जाते हैं। इसमें विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है तथा स्वाद में तिक्त होता है। हवा में खुला रहने पर जलांश को सोखता है। शीशे के बंद पात्र में रखने से तथा प्रकाश से बचाने से यह स्थिर (Stable) रहता है, अर्थात् विगड़ता नहीं। विलेयता—यह जल में क्षिप्रतापूर्वक घुल जाता (Readily soluble) है; मेथिल अल्कोहल् तथा ग्लिसरिन में भी घुल जाता है। किन्तु डिहाइड्रेटेड अल्कोहल्, सालवेंट ईथर तथा एसिटोन में प्रायः अविलेय (Insoluble) होता है। वक्तव्य—साधारण आम्लिक माध्यम में तो यह स्थिर (Stable) होता है, किन्तु क्षारीय एवं क्लीव प्रतिक्रिया विलयन में शीघ्रतापूर्वक विगड़ जाता है। मात्रा—(१) रोग-प्रतिषेधक (Prophylactic)—$\frac{१}{३०}$ से $\frac{१}{१२}$ ग्रेन (२ से ५ मि० ग्रा०) प्रतिदिन; (२) रोग-निवारक (Therapeutic)—$\frac{१}{३}$ से $\frac{३}{४}$ ग्रेन (२० से ५० मि० ग्रा०) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

विटामिन बी१ उबालने से तथा क्षारीय विलयन (Alkaline Solution) में शीघ्रतापूर्वक नष्ट हो जाता है। आम्लिक एवं क्लीव विलयन (Acid and Neutral Solution) तथा शुष्कावस्था में यह अपेक्षाकृत अधिक स्थाई (Stable) होता है। खमीर (Yeast), अंकुरित बीज, दाल, हरितशाक, टमाटर, दूध, अंडा तथा जन्तुओं के यकृय में यह जीवतिक्ति नैसर्गिक रूप से पाई जाती है। आजकल इसका निर्माण संश्लेषण (Synthesis) द्वारा कृत्रिम रूप से भी किया जाता है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर क्षुद्रांत्र से इसका शोषण होता है। शोषणोपरान्त शरीरगत धातुओं में इसका संग्रह पर्याप्त मात्रा में नहीं होता। अतएव इसके अभावजन्य लक्षण या उपद्रव शीघ्रता पूर्वक प्रगट होते हैं। अतिसार-प्रवाहिका के कारण आंत्रगत श्लैष्मिक कला के विकृत होने से इस जीवतिक्ति का शोषण आंतों द्वारा समुचित रूपसे नहीं होता।

बालकों एवं वृद्धिशील युवकों में इस जीवतिक्ति के अभाव से दुष्पोष्यता (Malnutrition) के लक्षण प्रगट होते हैं और शरीर की वृद्धि समुचित रूप से नहीं होती। इसके अतिरिक्त युवकों में बहुनाड़ीशोथ (Polyneuritis) के लक्षण भी उत्पन्न होते हैं। विटामिन बी१ के अभाव से शोषणोपरान्त शरीर में कार्बोहाइड्रेटसमवर्त (Carbohydrate metabolism) भी समुचित रूप से नहीं होता। क्योंकि इसके विघटनात्मक (Ketabolic) प्रक्रिया में पाइरुविक एसिड (Pyruvic acid) की उत्पत्ति होती है और इसके जारण (Oxidation) के लिए विटामिन बी१ की उपस्थिति आवश्यक होती है। विटामिन बी१ के अभाव के कुपरिणाम स्वरूप पाइरोविक एसिड का आगे विघटन नहीं होता, जिससे एक तो कार्बोहाइड्रेट की विघटनात्मक (Ketabolic) प्रक्रुया अधूरी रह जाती है, दूसरे शरीरगत धातुओं में उक्त

पाइरोविक एसिड एवं लेक्टिक एसिड का अनावश्यक संग्रह होता है, जिससे आंतो से ग्लूकोज का प्रचूषण समुचित रूप से नहीं होता। परिणामतः व्यक्ति दुर्बल होता जाता है। युवा व्यक्ति के लिए प्रतिदिन कम से कम १ मिलिग्राम (अधिक से अधिक ३ मि० ग्रा०) तथा बालकों के लिए ०.५ मिलिग्राम की आवश्यकता होती है। गर्भावस्था, धात्रीकाल (Lactation period), परमावटुकमयता (Hyperthyroidism) तथा अन्य सभी ऐसी अवस्थाओं में, जिनमें आधारिक समवर्त (Basic metabolism) बढ़ जाता है, विटामिन बी, की आवश्यकता और भी बढ़ जाती ही।

विटामिन बी, के अभाव (Athiaminosis) की प्रारम्भिक अवस्थाओं में निम्नलक्षण प्रगट होते हैं—क्षुधानाश एवं पचनसंस्थान की अन्य विकृतियाँ, सुस्ती (Lassitude), शिरःशूल, अनिद्रा (Sleeplessness), हृत्स्पन्दन (Palpitation दिल-धड़कना), शारीरिक मिहनत करने पर सांसफूलना, पैर के तलवों में जलन (Burning Sensation) मालूम होना तथा त्वचा में परमस्पर्शज्ञता (Hyperaesthesia) आदि। आगे चलकर उग्र रूप का बहुनाड़ीशोथ (Polyneuritis), सर्वांगशोथ (Oedema) तथा हृच्छीघ्रता (Tachycardia) तथा हृदय कार्याक्षमता (Cardiac insufficiency) आदि भयंकर उपद्रव उत्पन्न होते हैं। विटामिन बी, के अभाव से होने वाले रोगों में बेरी-बेरी (Beri-Beri) एक महत्व का रोग है बेरी-बेरी में प्रतिदिन २० से ५० मिलिग्राम मात्रा देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त नाड्यर्ति (Neuralgia एवं नाड़ीशोथ (Neuritis) में भी इसका प्रयोग लाभप्रद पाया जाता है। अतएव गृध्रसी (Sciatica) रोग में विटामिन बी, का प्रयोग उपयोगी है। साधारण अवस्था में ३–५ मिलिग्राम की दैनिक मात्रा टेबलेट् के रूप में मुखद्वारा दिन में उग्र अवस्थाओं में २५ से १०६ मिलिग्राम की मात्रा भी दे सकते हैं। औषधि का सेवन पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा भी कर सकते हैं। गर्भावस्था, धात्री काल, उपसर्ग (Infection) तथा परमावटुकमयता में भी साधारणमात्राओं में विटामिन बी, का प्रयोग उपकारी होता है। कार्बोहाइड्रेट समवर्त में सहायक होने के कारण मधुमेह (Diabetes mellitus) में इन्सुलिन के साथ सहायक औषधि के रूपमें इसका प्रयोग बहुत लाभ करता है। वृद्धिशील बालकों की दुष्वोष्यता में जब उसकी समुचित वृद्धि नहीं होती तथा अजारकता (Anorexia) की अवस्थाओं में भी विटामिन बी, का सेवन उपयोगी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त अंत्रों के दौर्बल्य के कारण होने वाली मलविबन्ध (Atonic Constipation) में, आन्त्रिकज्वर (Typhoid) आदि रोगों के निवृत्तिकाल (Convalescence) में तथा कतिपय प्रकार के शोथ (Oedema) के भी विटामिन बी, का प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ प्रतिदिन ५.० मिलिग्राम पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा दिया जाता है।

अंत्र विशोधक शुल्वौषधियों के चिकित्सा क्रम में उक्त औषधि के साथ विटामिन बी, का भी कोई यौगिक देना चाहिए। क्योंकि शुल्वौषधियों के कुपरिणाम स्वरूप आंत्रों से विटामिन बी, का प्रचूषण समुचित रूप से नहीं होता।

कभी-कभी मात्रातियोग से विषाक्तता के लक्षण भी लक्षित होते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप

जटिल जीवतिक्ति बी (Vitamin B. Complex) के अन्य उपादान जीवतिक्तियों के अभावज उपद्रव उत्पन्न होते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ अन्युरिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Injectio Aneurinae Hydrochloridi (Inj. Aneurin. Hydrochlor.), B. P., इन्जेक्शिओ थियामिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Injectio Thiamini Hydrochloridi (Inj. Thiam., Hydrochlor.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव थियामीन हाइड्रोक्लोराइड, इन्जेक्शन ऑव अन्युरीन हाइड्रोक्लोराइड, इन्जेक्शन ऑव विटामिन बी$_1$—अं०। विटामिन बी$_1$ का इन्जेक्शन या सूई—हिं०।

मात्रा—२० से ५० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ से $\frac{3}{4}$ ग्रेन) अधस्त्वक् या पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा। यदि इंजेक्शन सोल्यूशन के बल का निर्देश न हो तो १ मि० ग्रा० में २५ मि० ग्रा० या १ सी० सी० में $\frac{3}{8}$ ग्रेन के बल का सोल्यूशन देना चाहिए।

२—टॅबेली थियामिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Thiamini Hydrochloridi (Tab Thiamin. Hydrochlor.) I. P.; टॅबेली अन्युरिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Aneurinae Hydrochloridi (Tab. Aneurin. Hydrochlor.), B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव थियामीन हाइड्रोक्लोराइड (Tablets of Thiamine Hydrochloride), टॅबलेट्स ऑव अन्युरीन हाइड्रोक्लोराइड (Tablets of Aneurine Hydrochloride), टॅबलेट्स ऑव विटामिन बी$_1$ (Tablets of Vitamin B$_1$) —अं०। विटामिन बी$_1$ की टिकिया—हिं०।

मात्रा—अन्युरीन हाइड्रोक्लोराइड की भांति। यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो ३ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

सेकेरोमाइसीज सिक्कम् Saccharomyces Siccum (Saccharomy. Sicc.), I. P.—ले०; ड्राइड यीस्ट (Dried Yeast)—अं०।

पर्याय—सेरिविसी फर्मेन्टम् Cerevisiae Fermentum; खमीर—हिं०।

प्राप्ति-साधन—ड्राइड यीस्ट (सुखाया खमीर), सेकेरोमाइसीज सेरिविसी या टोरुला युटिलिस Saccharomyces Cerevisiae or Torula utilis (Family:Sacharomycetaceae) की विभिन्न श्रेणियों (strains) के सुखायी हुई सेलें (Dry cells) होती हैं। इसमें कम से कम ४०% प्रोटीन होता है।

वर्णन—शुष्क खमीर पीताभ-श्वेत वर्ण या पीलापन लिए हल्के नारंगी के रंग के पत्राकार छोटे छोटे टुकड़ों (Flakes) के रूप में या दानों (Granules) अथवा पाउडर (चूर्ण) के रूप में उपलब्ध होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की गंध तथा स्वाद पाया जाता है। १ ग्राम (१५ ग्रेन) शुष्क खमीर में ०.१ से ०.२ मि० ग्रा० थियामीन हाइड्रोक्लोराइड, ०.३ से ०.६ मि० ग्रा० निकोटिनिक एसिड, ०.०४ से ०.०६ मि० ग्रा० राइबोफ्लेविन तथा इनके अतिरिक्त जीवतिक्ति ख जटिल (Vitamin B Complex) के अन्य घटक यथा पाइरोडाक्सीन, पेंटोथेनिक एसिड, फोलिक एसिड एवं विटामिन बी$_{12}$ आदि भी पाये जाते हैं।

मात्रा—२ से ४ ग्राम (३० से ६० ग्रेन)।

परपोलिशिओनीज ओराइजी Perpolitiones Oryzae (Perpol. Oryz.), I. P. L,—ले०; राइस पालिशिंग्स (Rice Polishings), राइस ब्रेन Rice Bran), चावल का कन्ना—हिं०। यह धान के चावलों से प्राप्त किया जाता है।

एक्स्ट्रॅक्टम् परपोलिशिओनम् ओराइजी Extractum Perpolitionum Oryzae (Ext. Perpol. Oryz.), I. P. L.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव राइस पालिशिंग्स (Extract of Rice Polishings)—अं०। पर्याय—एक्स्ट्रॅक्ट ऑव राइस ब्रेन (Extract of Rice Bran)—अं०। कन्ने का प्रवाही घनसत्व—हिं०। प्रत्येक मि० लि० या सी० सी० में ६० माइक्रोग्राम (Mcgm) विटामिन बी, होता है।

गुण एवं प्रयोग—सूखे हुए खमीर में जीवतिक्ति ख जटिल (Vitamin B. Complex) के प्रायः सभी उपादान या घटक पाये जाते हैं। अतः उक्त जीवतिक्ति के अभाव से होने वाली व्याधियों, यथा बेरी-बेरी, त्वग्ग्राह (Pellagra) एवं राइबोफ्लेविन की कमी (Ariboflavinosis) में इसका व्यवहार बहुत उपयोगी है। एतदर्थ प्रतिदिन २० से ३० मि० ग्रा० तक की मात्रा दी जाती है। खमीर का प्रयोग ग्रहणी (Sprue) एवं उष्णकटिबन्धीय बृहत्कायाण्विक घातकपाण्डु (Tropical macrocytic anaemia) एवं फुन्सी या यवानपिड़िका (Furunculosis and acne) आदि व्याधियों में भी उपयोगी है। शुष्क खमीर (Dried yeast) की टॅबलेट्स (Tablets) आती हैं। भोजन के साथ पूरक आहार द्रव्य के रूप में भी इसको व्यवहृत कर सकते हैं। बच्चों को प्रतिदिन २० से ४० ग्रेन मात्रा में मिलाकर दे सकते हैं। युवकों (Adults) के लिये ६० से १२० ग्रेन की मात्रा अपेक्षित होती है। उपर्युक्त अवस्थाओं में खमीर के स्थान में मारमाइट (Marmite) एवं बिमेक्स (Bemax) का भी प्रयोग किया जा सकता है। यह द्विदलधान्यों के भ्रूण (Cereal embryos) से बनाये जाते हैं, और विटामिन बी के उत्तम यौगिक हैं।

(योग—I. P. Preparations)

१—एक्स्ट्रॅक्टम्से केरोमाइसी सिक्कम् कन्संट्रेटम्—Extractum Saccharomyces Siccum Concentratum (Ext. Saccharomy. Sicc. Conc.)—ले०; कन्सन्ट्रेटेड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव ड्राइड यीस्ट Concentrated Extract of Dried Yeast—अं०। यह गाढ़े भूरे रंग का शर्बत की भाँति गाढ़ा एवं चिपचिपा द्रव होता है, जो स्वाद में किंचित् नमकीन (Saline) होता है, तथा इसमें मांस जैसी (Meaty) विशिष्ट प्रकार की गंध आती है। विलेयता—जल में पूर्णतः घुल जाता है। मात्रा—१५ से ३० ग्रेन (१ से २ ग्राम)।

२—सेकेरोमाइसीज सिक्कम् कम् क्रेटा Saccharomyces Siccum cum Creta (Saccharomy. Sicc. c. Cret.)—ले०; ड्राइड यीस्ट विद्चाक (Dried Yeast with chalk)—अं०। खमीर एवं खटिक का मिश्रित चूर्ण—हिं०। इसमें १ भाग खटिक (Chalk) तथा ९९ भाग शुष्क खमीर (Dried yeast) होता है। खमीर एवं खटिक के मिश्रित चूर्ण में कम से कम ३९ प्रतिशत प्रोटीन होता है। यह पीली आभा लिए श्वेत वर्ण का अथवा हल्के पीतामनारंग वर्ण (Pale-yellowish orange) का चूर्ण होता है। ३० से ६० ग्रेन (२ से ४ ग्राम)।

विटामिन बी$_1$ के व्यावसायिक योग :—

१—विटामिन्डान बी$_1$ मीडियम् (Vitamindon B$_1$ Medium), विटामिन्डान बी$_1$ स्ट्रांग (Vitamindon B$_1$ Strong), वि० कन्सन्ट्रेटेड (Concantrated), वि० एक्स्ट्रा Extra, वि० स्पेशल Special (Indo-Pharma)—इसकी क्रमशः ५, १०, २०, ५० एवं १०० मिलिग्राम की टॅबलेट्स (टिकिया) आती हैं। मात्रा—क्रमशः ५–१००, २०–१००, १००–१५० तथा १००–३०० मिलिग्राम प्रतिदिन भोजन के १ घंटा पूर्व देना चाहिये।

२—बेरिन Berin (Glaxo)—इसकी ३, ५ एवं १० मिलिग्राम की टॅबलेट्स (टिकिया); प्रति सी० सी० २५ एवं ५० मिलिग्राम के एम्पूल्स (Ampoules); तथा प्रति सी० सी० ५० एवं १०० मिलिग्राम बल की शीशियाँ (Vials) आती हैं।

३—बेटेबिओन Betabion (Merck)—इसकी ५० मिलिग्राम की टॅबलेट्स प्रति सी० सी० २५ मिलिग्राम, एवं प्रति २ सी० सी० में १०० मि० ग्रा० के एम्पूल्स, तथा प्रति सी० सी० में १०० मिलिग्राम के बल की १० सी० सी० की रबर बन्द शीशियाँ (Rubber-capped Phials) आती हैं।

४—बिटालिन Betalin's' (Lilly) (१) ३० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के बल के ५ सी० सी० एवं २० सी० सी० के, ५० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के बल के ५ एवं २० सी० सी० के, ६० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० बल के ५ एवं २० सी० सी० के तथा १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के ५ एवं ३० सी० सी० के रबर बन्द एम्पूल्स (Rubber Stoppered ampoules); इसके अतिरिक्त १०, ३०, ६०, एवं १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के १ सी० सी० के ६, २५ एवं १०० एम्पूल्स के बक्स; ६'६६ मि० ग्रा० प्रति औंस के बल के एलिक्जिर (Elixir) के बोतल (Bottles); पल्व्यूलिस Pulvules (५, १०, १५ मि० ग्रा० के) तथा १, ३, ५, ६, ६, १०, १२, १५, २५, ५० एवं १०० मि० ग्रा० के टबलेट्स।

५—बेनर्वा Benerva (Roche)—३ एवं ५ मि० ग्रा० के टॅबलेट्स; ५० एवं १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० बल की शीशियाँ (Rubber CappedPhials)।

६—बेडोम Bedome। ३, १०, २५ एवं १०० मि० ग्रा० की टॅबलेट्स तथा ५० एवं १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के बल की रबर बन्द शीशियाँ (Phials)।

७—बाइबेक्स Vibex (Park Davis)—१, ३, ५ एवं १० मि० ग्रा० की टॅबलेट्स (टिकिया) २०, ५०, १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के बल की बहुमात्रिक रबर बन्द शीशियाँ (Multidose Phials)।

८—थियामीन हाइड्रोक्लोराइड Thiamine Hydrochloride—३, ५ मि० ग्रा० की टिकियाँ (Tablets) तथा ६० एवं १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० बल की बहुमात्रिक शीशियाँ (Phials)।

विटमिन बी$_2$ जटिल (Vitamin B$_2$ Complex)—इस विटामिन या जीवतिक्ति के २ भाग होते हैं—(१) **राइबोफ्लेविन (Riboflavin)** जो बालकों की वृद्धि के लिए आवश्यक है; (२) **निकोटिनिक एसिड (Nicotinic Acid)** जिसके अभाव में **त्वग्ग्राह (Pellagra)** नामक त्वचा रोग होता है। इसीसे इस जीवतिक्ति को **त्वग्ग्राह-प्रतिषेधक तत्व (P. P. Factor)** भी कहते हैं।

राइबोफ्लेविन (Riboflavin) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_{17}H_{20}O_6N_4$.

नाम—राइबोफ्लेविना **Riboflavina (Riboflav.)**—ले० । पर्य्याय—लेक्टोफ्लेविन (**Lactoflavin**); विटामिन 'जी' **Vitamin 'G'** ।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह **6 : 7—dimethyl—9—(D—1′—ribityl) isoalloxazine** होता है । यह खमीर (**Yeast**) आदि नैसर्गिक साधनों द्वारा प्राप्त किया जाता है, अथवा **संश्लेषण द्वारा कृत्रिम रूप से** बनाया जाता है । इसमें १४½ से १५.२ प्रतिशत **N** होता है ।

वर्णन—राइबोफ्लेविन नारंगपीत वर्ण के मणिमीय चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें एक हल्की गंध होती है तथा स्वाद में किंचित् तिक्त होता है । राइबोफ्लेविन एक जल-विलेय रंजक-द्रव्य (Pigment) है जो सर्व प्रथम दूध से पृथक किया गया (Isolated) था । इसी से इसका एक पर्याय 'लेक्टोफ्लेविन' भी है । खमीर तथा यकृतसत्व में यह नैसर्गिक रूप से पाया जाता है । इसके अतिरिक्त चावल के बाह्यस्तर (Rice-Polishings), वृक्क, अंडा, दूध, पनीर (Cheese), गेहूँ के अंकुर, दाल (Cereals), पालक, टमाटर, गाजर आदि में भी यह नैसर्गिक रूप से उपलब्ध होता है ।

मात्रा—(१) रोग प्रतिषेधक दैनिक मात्रा—१/६० से १/१६ ग्रेन या १ से ४ मिलिग्राम; रोग निवारक (Therapeutic) दैनिक मात्रा—१/१२ से १/६ ग्रेन या ५ से १० मिलिग्राम ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

राइबोफ्लेविन कोषाओं (**Cells**) की श्वसनक्रिया (अर्थात् कोषाओं का ऑक्सीजन ग्रहण करना एवं मल रूप से Co२ छोड़ना) में सहायक होता है । और इस प्रकार यह शरीर **वृद्धिकारक (Growth-Promoting)** होता है । बालकों के लिए प्रतिदिन १ मिलिग्राम तथा युवकों के लिए ३ मिलिग्राम की आवश्यकता होती है ।

इस जीवतिक्ति के अभाव (**Ariboflavinosis**) में निम्न लक्षण प्रगट होते हैं—मनुष्य शरीर में इस जीवतिक्ति की दैनिक आवश्यक मात्रा न पहुँचने से ३-४ मास में अभावजन्य उपद्रव लक्षित होने प्रारम्भ हो जाते हैं । **मुख-कोणों (Angles of the mouth)** पर पाण्डुता (**Pallor**) होकर सव्रणता (**Ulceration**) होती है । इसके बाद ओष्ठ लाल हो जाते तथा उन पर विदार (**Fissure**) हो जाते हैं । श्लैष्मिक कला का बाह्यस्तर पपड़ियों के रूप में उचड़ने लगता है । जिह्वा के रंग में भी वैवर्ण्य होकर कतिपय रसांकुर (**Papillae**) नष्ट हो जाते हैं ।

मुख एवं जिह्वा की विकृतियों के अतिरिक्त मस्तक (**Forehead**) एवं चेहरे (**Face**) की त्वचा भी विकृत होती है । पहले तो स्थान पर लालिमा उत्पन्न होती है, तदनु वहां की त्वचा **उचरने लगती (Desquamation of the skin)** है । (२) नेत्र सम्बन्धी विकृतियाँ (**Ocular disturbances**)—आंखों में खुजली एवं जलन होती है । बाह्य पटल (**Sclera**) एवं स्वच्छ मण्डल में अत्यधिक लालिमा (**Congestion of the sclera**

and rosacea keratitis) होती है। इसके अतिरिक्त प्रकाश-संत्रास (Photophobia) भी हो जाता है तथा आगे चलकर दृष्टि (Vision) उत्तरोत्तर बहुत कम हो जाती है। उक्त लक्षणों के साथ साथ किन्हीं रोगियों में पेशी दौर्बल्य, पैरों के तलवों में जलन तथा स्पर्श-वैपरीत्य (Paraesthesia) भी लक्षित होते हैं।

वृद्धिशील बालकों में इस जीवतिक्ति का अभाव होने से उनकी वृद्धि रुक जाती है।

प्रयोग—राइबोफ्लेविन-अभाव जन्य उपर्युक्त विकृतियों में इसका प्रयोग विशिष्ट रूप से गुणकारी होता है। एतदर्थ १०-१५ मि० ग्रा० मुख द्वारा अथवा पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा देना चाहिए। कभी कभी जब केवल निकोटिनिक एसिड के चिकित्साक्रम से त्वग्ग्राह (Pellagra) के रोगियों में लाभ नहीं होता तो, निकोटिनिक एसिड के साथ सहायक औषधि के रूप में राइबोफ्लेविन (५.० मि० ग्रा० प्रतिदिन) देने से बहुत लाभ होता है। इसके अतिरिक्त ग्रहणी के रोगियों में जिनमें अंत्रों से वसामय पदार्थों का प्रचूषण समुचित रूप से नहीं होता, उनमें राइबोफ्लेविन (५ से १० मि० ग्रा० प्रतिदिन मुखद्वारा या इन्जेक्शन द्वारा) देने से बहुत उपकार होता है।

प्रचूषणोपरान्त शरीरगतधातुओं में इस विटामिन का अधिक संग्रह नहीं हो पाता क्यों कि यह शनैः शनैः नष्ट होता रहता है। अतएव मात्रातियोग से कोई अनिष्ट उपद्रव की सम्भावना प्रायः नहीं रहती। आवश्यकता से अतिरिक्त मात्रा का मूत्र के साथ उत्सर्ग हो जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—टैबेली राइबोफ्लेविनाइ Tabellae Riboflavini (Tab. Riboflav.) I. P., B. P.—ले०; टैबलेट्स ऑव राइबोफ्लेविन (Tablets of Riboflavin)—अं०। राइबोफ्लेविन या विटामिन बी$_2$ की टिकिया—हिं०। मात्रा—राइबोफ्लेविन की भांति। यदि प्रति टिकिया मात्रा का उल्लेख न हो तो १ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ राइबोफ्लेविना Injectio Riboflavina (Inj. Riboflav.) I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव राइबोफ्लेविन, इन्जेक्शन ऑव लैक्टोफ्लेविन—अं०। विटामिन बी$_2$ का इन्जेक्शन या सूई।

राइबोफ्लेविन के व्यावसायिक योग—

१—राइबोफ्लेविन टैबलेट्स (Lilly)—१, ५ एवं १० मि० ग्रा० की टिकिया; (२) राइबोफ्लेविन एवं निकोटिन्नेमाइड के १ सी० सी० के एम्पूल्स (Riboflavine and nicotinamide ampoules)—प्रति सी० सी० में ५ मि० ग्रा० राइबोफ्लेविन तथा २०० मि० ग्रा० निकोटिनेमाइड होता है।

२—विटामिन्डान बी$_2$ Vitamindon B$_2$ (Indo. Pharma.)—३ मि० ग्रा० के टबलेट्स (टिकिया)। मात्रा—३ से ६ टिकिया प्रतिदिन भोजन के १ घन्टे पूर्व जल से।

एसिडम् निकोटिनिकम् (निकोटिनिक एसिड) I. P., B. P.

रासायनिक संकेतः $C_6 H_5 O_2 N$.

नाम—Acidum Nicotinicnm (Acid. Nicotin.)—ले०; निकोटिनिक एसिड, निएसिन Niacin, पी० पी० फैक्टर P. P. Factor (पिलेग्रा प्रिवेन्टिव फेक्टर

Pallagra-Preventive Factor)—अं०; Pyridine B–Carboxylic Acid–रासायनिक; त्वग्ग्राह विरोधी तत्व—हिं।

प्राप्ति-साधन—निकोटिनिक एसिड रासायनिक दृष्टि से Pyridine 3—Carboxylic acid होता है, और निकोटीन (Nicotine) तथा किसी उपयुक्त आक्सिडायजिंग एजेन्ट (Suitable Oxidising agent) की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९.५ प्रतिशत निकोटिनिक एसिड ($C_{६} H_{५} O_{२} N$) होता है।

वर्णन—निकोटिनिक एसिड के सफेद रंग के या मलाई के रंग के (Creamy-White) क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में हल्का खट्टा होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर ५५ भाग जल में घुलता है; उबलते जल तथा अल्कोहल (९५ प्रतिशत) में फौरन घुल जाता है। मात्रा—(१) रोग प्रतिषेधक (Prophylactic)—१५ से ३० मि० ग्रा० (¼ से ½ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) रोग निवारक—५० से २५० मि० ग्रा० (¾ से ४ ग्रेन) प्रतिदिन।

निकोटिनेमाइडम् Nicotinamidum (Nicotinamid.) I. P., B. P.—लै०; निकोटिनेमाइड Nicotinamide—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{६} H_{६} ON_{२}$

पर्याय—निकोटिनिक एसिड एमाइड (Nicotinic Acid Amide); निएसिनेमाइड (Niacinamide)

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह Pyridine-3—Carboxylic acid amide होता है। इसमें कम से कम ९८.५% निकोटिनेमाइड ($C_{६} H_{६} ON_{२}$) होता है।

वर्णन—यह सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता— २५° तापक्रम पर १ भाग जल में तथा १.५ भाग अल्कोहल् (९५%) में घुलता है। सालवेंट ईथर में अल्पतःविलेय (Slightly soluble) होता है।

मात्रा। (१) रोग प्रतिषेधक—१५ से ३० मिलिग्राम (¼ से ½ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) रोग निवारक ५० से २५० मिलिग्राम (¾ से ४ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

निकोटिनिक एसिड कार्बोहाइड्रेट-समवर्त (Carbohydrate Metabolism) में सहायक होता है। इन्सुलिन के साथ निकोटिनिक एसिड का प्रयोग करने से यह इन्सुलिन (मधुनिषूदनि) की क्रियाशीलता को बढ़ाता है। अतएव मधुमेह (Diabetes mellitus) में इसका प्रयोग उपयोगी होता है। इसके अतिरिक्त यह मदात्ययजन्य मस्तिष्कविकृति (Encephalopathy) तथा विकीरण-विकार (Radiation Sickness) में भी उपयोगी होता है। एतदर्थ १५ ग्रेन की दैनिक मात्रा अपेक्षित होती है।

निकोटिनिक एसिड के अभाव से त्वग्ग्राह रोग (Pellagra) की उत्पत्ति होती है। उक्त व्याधि में निकोटिनिक एसिड के प्रयोग से शीघ्रतापूर्वक रोग शमन होता है, इसीलिए इसको त्वग्ग्राह निवारक जीवतिक्ति या तत्व (Pellagra Preventive Factor (P. P.

Factor) कहते हैं। त्वग्ग्राह (पिलेग्रा) में एक विशिष्ट प्रकार का त्वक्शोफ (Dermatitis), जिह्वाशोथ (Glossitis) एवं मुखपाक (Stomatitis) तथा निद्रानाश (Insomnia), मूढ़चित्तता (Dementia) एवं उन्माद (Insanity) आदि अनेक मस्तिष्क विकार लक्षित होते हैं। इसके अतिरिक्त रक्ताल्पता एवं स्वच्छमण्डलशोथ (Keratitis) आदि नेत्र विकार भी लक्षित हो सकते हैं। त्वग्ग्राहरोग निवारण के लिए प्रतिदिन १५० से ५०० मिलिग्राम औषधि मुखद्वारा (५० मि० ग्रा० की टिकिया) अथवा पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा (५० मि० ग्रा० एम्पूल्स) दी जाती है।

शुल्वौषधियों का मुखद्वारा चिरकाल तक सेवन करने में कुपरिणाम स्वरूप निकोटिनिक एसिड का प्रचूषण अंत्रों द्वारा समुचित मात्रा में नहीं होता। अतएव शुल्वौषधि चिकित्सा क्रम में उक्त औषधियों के साथ अल्प मात्रा में निकोटिनिक एसिड का भी सेवन करते रहना चाहिए।

शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर निकोटिनिक एसिड वाहिनी-विस्फार (Vaso-dilatation) करता है, जिससे त्वचा में खुजली मालूम होती है। अतएव शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त करने के लिए निकोटिनेमाइड के यौगिक अधिक उपयुक्त होते हैं, क्योंकि इनसे उक्त उपद्रव की आशंका नहीं रहती। वाहिनी-विस्फारक होने के कारण हार्दिक धमनी की घनास्रिता (Coronary thrombosis) एवं हृच्छूल (Angina Pectoris) में निकोटिनिक एसिड का प्रयोग उपयोगी होता है। एतदर्थ इसकी ५ से १० मिलिग्राम की मात्रा शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त की जाती है। गलक्षतजन्य स्थिति (Status anginosus) में ५०० सी० सी० लवणजल में १०० मि० ग्राम औषधि का विलयन शिरामार्ग द्वारा शनैः शनैः दी जाती है। इसके अतिरिक्त सान्तरित पंगुता (Intermittent Claudication) एवं मेनीर के रोग (Menier's disease) में भी निकोटिनिक एसिड का प्रयोग कभी कभी उपयोगी पाया जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली एसिडाइ निकोटिनिसाइ *Tabellāe Acidi Nicotinici (Tab. Acid. Nicotin.)* I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव निकोटिनिक एसिड Tablets of Nicotinic Acid—अं०; निकोटिनिक एसिड की टिकिया—हिं०। मात्रा—निकोटिनिक एसिड की भांति। यदि प्रति टिकिया में निकोटिनिक एसिड का उल्लेख न हो तो ५० मि० ग्रा० निकोटिनिक एसिड की टिकिया देनी चाहिए।

२—टॅबेली निकोटिनेमइडाइ *Tabellae Nicotinamidi (Tab. Nicotinamid.)* I. P. B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव निकोटिनेमाइड Tabltes of Nicotinamide—अं०। पर्याय—टबलेट्स, ऑव निकोटिनिक एसिड एमाइड Tablets of Nicotinic Acid Amide—अं०। निकोटिनेमाइड की टिकिया—हिं०। मात्रा—निकोटिनेमाइड की भांति। यदि प्रति टॅबलेट निकोटिनेमाइड की मात्रा का उल्लेख न हो तो ५० मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

३—इन्जेक्शिओ निकोटिनेमाइडाइ *Injectio Nicotinamidi (Inj. Nicotinamid.)* I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव निकोटिनेमाइड Injection of Nicotinamide—अं०। पर्याय—निएसिनेमाइड इन्जेक्शन Niacinamide Injection—अं०। निएसिनेमाइड की सुई—हिं०। मात्रा—५० से २५० मि० ग्रा० प्रतिदिन इन्जेक्शन द्वारा। साधारणतया १ मि० लि० (सी० सी०) में ५० मि० ग्रा० के बल का सॉल्यूशन देना चाहिए।

निकोटिनिक एसिड एवं निकोटिनेमाइड के यौगिक :—

(१) ट्राइ-इथेनोलामीन ऑव नियासिन (Tri-ethanolamine of Niacin)—इसके ३० प्रतिशत विलयन की ५ सी० सी० से क्रमशः बढ़ाकर २०–३० सी० सी० तक की दैनिक मात्रा शिरागत मार्ग द्वारा दी जाती है। पूरा चिकित्साक्रम २० इन्जेक्शन का होता है। उपयुक्त चिकित्सा क्रम अवरोधक अन्तर्धमनीशोथ (Obliterating endarteritis) में बहुत उपयोगी है।

(२) निकोटिनेमाइड Nicotinamide (Merck)। (१) २०० मिलिग्राम के टैबलेट्स तथा (२) १०० मिलिग्राम प्रति सी० सी० के १ सी० सी० के एम्पूल्स।

(नॉट-ऑफिशल)

पैण्टोथेनिक एसिड (विटामिन बी $_3$)

(Pantothenic Acid (Vitamin B_3)

वर्णन—यह जीवतिक्ति खमीर, अंडा, यकृत, चावल एवं गेहूँ में नैसर्गिक रूप से पाई जाती है। आजकल संश्लेषण द्वारा कृत्रिमरूपसे भी इसका निर्माण किया जाता है। बाजार में यह सोडियम एवं कैल्सियम् पेण्टोथिनेट (Sodium and Calcium Pantothenate) लवणों के रूप में उपलब्ध होता है। स्वाभाविक अवस्था में प्रति १०० सी० सी० रक्त में ३३·३ माइक्रोग्राम (Microgram) के अनुपात से पेण्टोथेनिक एसिड पाया जाता है। शरीर के लिए इसकी ५–१० मि० ग्रा० की दैनिक आवश्यकता होती है।

मात्रा—५० से १०० मिलिग्राम प्रतिदिन।

गुण एवं प्रयोग—मानव शरीर पर इसके विशिष्ट गुण-कर्मों का अभीतक पता नहीं चल सका है। तथापि विद्वानों का कहना है कि यह विटामिन बी कम्प्लेक्स के अन्य उपादानों की क्रिया में सहायक होता है; तथा समय के पूर्व बाल पकने (Premature greying of hair) को तथा—एलोपीसिआ (Alopecia) में इसका प्रयोग लाभप्रद होता है। एतदर्थ कैल्सियम् पैण्टोथिनेट का सेवन मुख द्वारा अथवा सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त परिसरीय नाड़ीशोथ (Peripheral neuritis) एवं सकम्प प्रलाप (Delirium tremens) में भी इसका प्रयोग उपयोगी बतलाया जाता है।

पेण्टोथेनिक एसिड के व्यावसायिक योग—

१—पैंथोलिन Pantholin (Lilly)—यह (Tablets) कैल्सियम् पैण्टोथिनेट की टिकिया होती हैं। प्रति टैबलेट १० मि० ग्रा० की होती है।

पाइरिडॉक्सिनी हाइड्रोक्लोराइडम् (B. P. C.)

रासायनिक संकेत : $C_8 H_{12} O_3$ NCL.

नाम–Pyridoxinae Hydrochloridum (Pyridoxin. Hydrochlor.) —ले०; पाइरिडॉक्सीन हाइड्रोक्लोराइड (Pyridoxine Hydrochloride)—अं०; विटामिन बी$_6$ (Vitamin B_6)।

पर्याय—रैट एक्रोडाइनिया फैक्टर Rat Achrodinia Factor (मूषक-शाखा-शूलहर तत्व)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—Methyl 3—Hydroxy-4, 5—Hydroxymethyl pyridine. होता है। इसके हाइड्रोक्लोराइड लवण का व्यवहार औषधि में होता है। यह श्वेत रंग के मणिभीय चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा जल • विलेय होता है। साधारण ताप से तो यह नष्ट नहीं होता, किन्तु अधिक देर तक प्रत्यक्ष प्रकाश के संसर्ग से नष्ट हो जाता है। द्विदल-धान्यों (Cereals), चावल के पालिश, खमीर, अंडा, मांस एवं मछलियों में यह जीवतिक्ति नैसर्गिक रूप से पाई जाती है। आजकल संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से भी इसका निर्माण किया जाता है। मात्रा—(१) रोगप्रतिषेधक (Prophylactic)—१ से ३ मिलिग्राम प्रतिदिन; (२) रोग निवारक (Therapeutic)—२० से १०० मिलिग्राम। वक्तव्य—पाइरिडीन हाइड्रोक्लोराइड की मात्रा का उल्लेख मिलिग्राम में किया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

विटामिन बी$_6$ शरीर में प्रोटीन से वसा (Fat) के निर्माण में सहायक होता है। मेद-साम्लों की समुचित रूप से शरीर में उपयोगिता समवर्त होने के लिए भी इसकी उपस्थिति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त अकणिककायाणुओं (Agranulocytes) के पूर्ण प्रगल्भ रूप में बनने (Maturation) के लिए भी इसकी उपस्थिति आवश्यक होती है। अतएव अकणिक कायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) में इसके सेवन से बहुत लाभ होता है। एतदर्थ इसके १० प्रतिशत घोल का प्रयोग पेश्यन्तरिक या शिरागत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है। १२५–२०० मि ग्रा० की दैनिक मात्रा करके ५–६ दिन तक औषधि देने की आवश्यकता पड़ती है। गर्भिणी के वमन (Hyperemesis gravidarum), उद्विकीरण जन्य व्याधि (Irradiation Sickness) में भी इसका सेवन उपयोगी पाया जाता है। एतदर्थ ३० से १०० मिलिग्राम की दैनिक मात्रा मुखद्वारा अथवा पेश्यन्तरिक या शिरागत इन्जेक्शन द्वारा दिया जाता है। इसके अतिरिक्त गम्भीर पेश्यवसन्नता (Myasthenia gravis), पेशीक्षय (Muscular dystrophy), सकम्प अंगघात (Paralysis agitans), पारकिंसन का रोग (Parkinsons disease) तथा कतिपय प्रकार की रक्ताल्पता में भी इसके सेवन से बहुत उपकार होता है। एतदर्थ ५०–१०० मि० ग्रा० की दैनिक मात्रा मुख, पेशी या शिरामार्ग द्वारा ३ सप्ताह तक दी जाती है। साधारण अवस्थाओं में औषधि का सेवन मुख द्वारा तथा गम्भीरावस्थाओं में इन्जेक्शन द्वारा करना चाहिए।

बी कम्प्लेक्स समुदाय की अन्य जीवतिक्तियों की क्रिया में अप्रत्यक्षतया यह जीवतिक्ति भी सहायक है। अतएव त्वग्ग्राह रोग (Pellagra) में जब निकोटिनिक एसिड, राईबोफ्लेविन तथा थियामीन आदि से लाभ नहीं होता और विशेषतया जब निद्रानाश, पेशीदौर्बल्य, क्षोभनशीलता आदि उपद्रवों का शमन न हो रहा हो तो पाइरिडॉक्सीन हाइड्रोक्लोराइड (५० मि० ग्रा० प्रतिदिन मुखद्वारा अथवा इन्जेक्शन द्वारा) प्रयोग से उक्त उपद्रवों का शमन हो जाता है।

पाइरिडॉक्सीन के व्यावसायिक योग :—

(१) हेक्सा बिटालिन Hexa Betalin (Lilly.)–इसकी १, १०, २५ एवं ५० मि० ग्राम की टिकिया (Tablets) तथा इन्जेक्शन के लिए प्रति सी० सी० ५० मिलिग्राम के १ सी० सी० के एम्पूल्स (Ampoules) आते हैं। १ सी० सी० एम्पूल्स के अतिरिक्त प्रति सी० सी० ५० एवं १०० मि० ग्रा० के रबरबन्द (Rubber-Stoppered) ५ एवं १० सी० सी० के भी एम्पूल्स प्राप्त होते हैं।

(२) बेनाडोन Benadon (Vit. B_6) इसकी १ तथा २५ मि० ग्राम की टिकिया तथा ५० मि० ग्रा० प्रति सी. सी. के एम्पूल्स प्राप्त होते हैं।

(३) पाइरिडॉक्सिन Pyridoxine (B. D. H.)—इसकी १० मि० ग्रा० की मुखद्वारा सेवन के लिए गोली तथा ५० मि० ग्रा० के एम्पूल्स आते हैं।

एसिडम् पारा-एमिनोबेंजोइकम् (PABA) I. P.

रासायनिक संकेत : $C_7H_7NO_2$.

नाम—Acidum Para-aminobenzoicum (Acid. Para-amino-benz.) ले०—; पारा-एमिनो बेंजोइक एसिड (Para-aminobenzoic Acid) अं०।

पर्याय—पावा (PABA)।

वर्णन—पारा-एमिनो बेंजोइक एसिड के सफेद या हल्के पीले रंग के क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा यह क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। प्रकाश में खुला रहने से इसका रंग विकृत हो जाता है। विलेयता—जल में तो अल्पतः घुलता (Slightly Soluble) है; किन्तु अल्कोहल् में सुविलेय (Freely Soluble) होता है। ईथर में मुश्किल से घुलता (Sparingly Soluble) है। संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाटबंद-प्रकाश-अभेद्य पात्रों में (Tight. light-resistant Containers) रखना चाहिये।

मात्रा— प्रारम्भ में (Initial)—४ से ६ ग्राम (६० से ९० ग्रेन); बाद में २ से ३ ग्राम (३० से ४५ ग्रेन)।

सोडियाइ पारा-एमिनोबेंजोआस Sodii Para-aminobenzoas (Sod. Para-aminobenz.), I. P.—ले०; सोडियम् पारा-एमिनोबेंजोएट Sodium Para-aminobenzoate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_7H_6O_2NNa$.

वर्णन—श्वेत वर्ण का अथवा मटमैले रंग का (Buff-coloured) क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन होता है। विलेयता–जल में अच्छी तरह घुल जाता है। अल्कोहल् में कम घुलता है। बेंजीन तथा क्लोरोफॉर्म में और भी कम घुलता है तथा ईथर में प्रायः अविलेय ही होता है।

मात्रा—५ से १० ग्राम (७५ से १५०ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—मुख द्वारा अथवा इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है। यकृत में ग्लाइसिन के साथ संयुक्त होकर पारा-एमिनोहिप्प्यूरिक एसिड में परिवर्तित होता है, और प्रधानतः इसी रूप में मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। खमीर तथा यकृत सत्व में यह नैसर्गिक रूप से पाया जाता है। क्लोरोमाइसेटिन एवं ऑरिओमाइसेटिन के पूर्व रिकेट्सिया उत्सर्ग के लिए यह विशिष्ट औषधि समझी जाती है। औपध्यर्थ इसका व्यवहार सोडियम् पारा-एमिनोबेंजोएट के रूप में किया जाता है। पारा अमिनोबेंजोइक एसिड (PABA) की क्रिया शुल्वौषधियों (Sulpha-group of drugs) के प्रत्यनीक (Antagonistic) होती है। अतएव इसके प्रयोग से सल्फा-औषधियों की विषाक्तता का निवारण होता है। सल्फा-औषधियों

के उपद्रवों में अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) विशेष महत्व का है। पात्रा से इसका निवारण होता है। आंत में इसकी उपस्थिति से फोलिकएसिड के संश्लेषण में सहायता मिलती है।

साधारण अवस्थाओं में पात्रा का प्रयोग मुखद्वारा किया जाता है। एतदर्थ प्रारम्भ में ४ से ६ ग्राम की मात्रा दी जाती है बाद में प्रति २–२ या ३–३ घंटे पर २ से ३ ग्राम मात्रा देते हैं। यदि मरीज को उलटी अधिक होती हो अथवा वेहोशी के हालत में सोडियम पारा-एमिनो-वेंजोएट का प्रयोग इंजेक्शन द्वारा कर सकते हैं।

मिलेनिन नामक त्वचागत रञ्जक तत्व के निर्माण में सहायक होने के कारण पात्रा के प्रयोग से सफेद वाल काले हो जाते हैं। इसके लिए प्रतिदिन १००० मिलिग्राम औषधि ६–७ माह तक देनी पड़ती है।

वायोटिन (Biotin)—यह वीकम्प्लेक्स के अन्य जीवतिक्तियों के साथ खमीर, अंडा, यकृत एवं दालों में नैसर्गिक रूप से पाया जाता है। प्रति दिन मनुष्य को १५० माइक्रोग्राम की आवश्यकता होती है। इसके अभाव से मनुष्यों में शल्कीय त्वक्शोफ (Scaly dermatitis) होता है तथा त्वचा का रंग पीला पड़ जाता है। जिह्वा के रसांकुर (Papillae) नष्ट हो जाते तथा प्रगल्भ रक्तकणों का निर्माण नहीं होता।

कोलीन (Choline)—यह लेसिथिन का एक घटक (Constituent) है तथा बी कम्प्लेक्स समुदाय के जीवतिक्तियों के साथ पाया जाता है। स्तनधारियों में इसके अभाव से यकृत एवं वृक्कों में मेदापक्रान्ति (Fatty degeneration) होती है। यकृद्दाल्युदर (Hepatic Cirrhosis) एवं क्षुद्रांत्र क्रियावात (Paralytic ileus) में इसका प्रयोग उपकारी होता है। कोलीन क्लोराइड टवलेट्स (Choline Chloride Tablets) वाजार में उपलब्ध होती हैं।

एसिडम् एसकोरबिकम् (I. P., B. P.)
(विटामिन 'सी')

रासायनिक संकेत : $C_6H_8O_6$.

नाम—Acidum Ascorbicum (Acid. Ascorb.)—ले०; एसकोरबिक एसिड (Ascorbic Acid)—अं०।

पर्याय—विटामिन 'सी' Vitamin C; सेलिन Celin; रिडॉक्सन (Redoxon); सेविटामिक एसिड (Cevitamic Acid); एन्टी स्कारव्युटिक फैक्टर (Antiscorbutic Factor), प्रति शीताद जीवतिक्ति, आमलक अम्ल—सं०, हिं०।

प्राप्ति-साधन—एसकोरविक एसिड रासायनिक दृष्टि से enolic form of 3-keto-L gulofuranolactone होता है। विटामिन 'सी' नैसर्गिक साधनों (केप्सिकम् एनम् Capsicum annum) के पक्कफल तथा नारंगी, नीवू, टमाटर आलू आदि) से अथवा अधुना संश्लेषण पद्धति द्वारा कृतिमरूप से (Synthetically) प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९८% एसकोरविक एसिड होता है। सर्व प्रथम गॉगिल नामक वैज्ञानिक ने इस विटामिन को अधिवृक्क वहिस्तर (Adrenal cortex) से प्राप्त किया था।

वर्णन—यह सूक्ष्म रंगहीन क्रिस्टल्स अथवा चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में अम्ल होता है। प्रकाश में खुला रहने से इसका रंग विकृत होने लगता है। विलेयता—जल में फौरन घुल जाता (readily soluble) है। इसके अतिरिक्त आल्कोहल् (९५%), मेथिल अल्कोहल् तथा एसिटोन में भी घुलनशील होता है; किन्तु सालवेंट ईथर, क्लोरोफार्म, वेंजीन तथा लघु पेट्रोलियम् (Light petroleum) में नहीं घुलता। संरक्षण—अधिक समय तक रखने से, अथवा पात्र खुला रखने से हवा के सम्पर्क से एवं उबालने से यह विटामिन नष्ट हो जाता है।

मात्रा—(१) रोग प्रतिषेधात्मक (Prophylactic)—२५ से ७५ मि० ग्रा० (३/८ से ११/८ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) रोग निवारक (Therapeutic)—०·२ से ०·५ ग्राम (३ से ८ ग्रेन) प्रतिदिन। वक्तव्य—१ ग्राम एसकोरविक एसिड में २०,००० युनिट प्रतिशीतादसक्रियता (Antiscorbutic activity) होती है। अथवा सर्वमान्य नमूने (Standard) के ०·०५ मि० ग्रा० मात्रा में १ युनिट की स्कर्वी निवारक शक्ति है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

आन्त्र से प्रचूषित होने के बाद मनुष्य शरीर में इस विटामिन का संग्रह काफी मात्रा में नहीं होता। अतएव अभाव पूर्ति के लिए आहार के साथ प्रतिदिन आवश्यक मात्रा शरीर में पहुँचते रहना चाहिए अन्यथा इसके अभाव से उत्पन्न होनेवाले विकार उत्पन्न होते हैं। यद्यपि ताजे दूध में विटामिन 'सी' पाया जाता है, किन्तु उबालने अथवा शुष्कीकरण से यह नष्ट हो जाता है। आधे सेर ताजे कच्चे दूध में लगभग १४ मिलिग्राम विटामिन 'सी' होता है। इस विटामिन की सबसे अधिक मात्रा नीबू की प्रजातियों में नैसर्गिक रूप से पाई जाती है। ३१/२ औंस ताजे रस में लगभग ६५ से १३० मिलिग्राम तक विटामिन 'सी' होता है।

साधारण अवस्थाओं में मनुष्य को प्रतिदिन ५.० से ७५ मिलिग्राम एसकोरविक एसिड की आवश्यकता होती है। विकारी जीवाणुओं के उपसर्ग में यह आवश्यकता बढ़कर १०० से २०० मि० ग्रा० हो जाती है। गर्भावस्था (Pregnancy) एवं स्तन्यकाल (Lactation) में स्त्रियों को कम से कम १०० मिलिग्राम विटामिन 'सी' प्रतिदिन चाहिए। मात्राधिक्य होने पर अनावश्यक मात्रा शरीर द्वारा उत्सर्गित हो जाती है, और कोई भी अनिष्ट उपद्रव नहीं उत्पन्न होते।

विटामिन 'सी' में प्रधान उपसर्ग-शामक (Anti-infective) एवं व्रणरोपण (Wound-healing) गुण-कर्म पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक औषधियों (विशेषतः आर्सेनिक) की विषाक्तता (Toxicity) का भी निवारण करता है।

विटामिन 'सी' के अभाव से प्रशीताद (स्कर्वी Scurvy) नामक प्रसिद्ध रोग की उत्पत्ति होती है। स्कर्वी के साथ रोगी में उपवर्णिक प्रकार की पाण्डुता (Hypochromic anaemia) भी पाई जाती है और रोगी में रक्तस्राव की प्रवृत्ति होती है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली एसिडाइ एसिकोरविसियाइ Tabellæ Acidi Ascorbici(Tab. Acid. Acorb.) I. P, B. P.—ले;० टॅबलेट्स ऑव एसकोरविक एसिड Tablets of Ascorbic Acid, टॅब्लेट्स ऑव

विटामिन 'सी' Tablets of Vitamin C—अं० । मात्रा—एसकोरविक एसिड की भाँति । मात्रा का उल्लेख न होने पर २५ मि० ग्रा० (३/८ ग्रेन) की टॅब्लेट देनी चाहिए ।

२—इन्जेक्शिओ सोडियाइ एसकोरबेटिस Injectio Sodii Ascorbatis (Inj. Sod. Ascorb.) I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सोडियम् एसकोरवेट Injection of Sodium Ascorbate—अं० । यह एसकोरविक एसिड तथा सोडियम् हाइड्राक्साइड का 'वाटर फार इन्जेक्शन' में बनाया हुआ सोल्यूशन होता है । मात्रा—०.०५ से ०.१ ग्राम (३/४ से १½ ग्रेन) ।

विटामिन 'सी' (Vitamin C) या एस्कोरविक एसिड (Ascorbic acid) के व्यावसायिक योग—

१—सिवेलिन Cevalin (Lilly)—(१) १५, २५, ५०, १०० २५० एवं ५०० मि० ग्रा० की टॅवलेट्स (टिकिया); (२) २ सी० सी० में १०० मि० ग्रा०, १ सी० सी० में ५०० मि० ग्रा०, ५ सी० सी० में ५०० मि० ग्रा०, ५ सी० सी० में १ ग्राम तथा १० सी० सी० में १ ग्राम के एम्पूल्स ।

२—सीलिन Celin (Glaxo)—(१) ५०, १०० मि० ग्रा० की टिकिया; (२) १ सी० सी० तथा ५ सी० सी० के एम्पूल्स ।

३—रिडाक्सन Redoxan (Ciba)—इसकी ५० मि० ग्रा० की टॅबलेट्स तथा १०० मि० ग्रा० की एम्पूल्स आती हैं ।

४—सेडिलानिड Cedilanid (Sandoz.) ।

५—सेविओन Cebion (Merck)—(१) ५०, २५० तथा ५०० मि० ग्रा० की टिकिया; (२) १ सी० सी० में ५० मि० ग्रा०, २ सी० सी० में १०० मि० ग्रा० तथा ५ सी० सी० में ५०० मि० ग्रा० के एम्पूल्स; (३) १ सी० सी० में ५०० मिलिग्राम के वल की १० सी०सी० की रबर बन्द शीशियाँ (Vials) ।

६—एस्कोरवेल Ascorvel । (१) २५, ५०, १०० एवं २५० मि० ग्रा० के टॅबलेट्स तथा १०० एवं ४०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के एम्पूल्स ।

७—केन्टन Cantan । २५ मि० ग्रा० के टॅवलेट्स एवं एम्पूल्स ।

वक्तव्य—विटामिन 'सी' के योगों का सेवन अधस्त्वग् मार्ग द्वारा नहीं करना चाहिए ।

८—सेविओन Cebion (E. Merck.)—५०, ३०० एवं ५०० मि० ग्रा० की (१) टॅवलेट्स तथा (२) क्रमशः इसी शक्ति के १, २ एवं ५ सी० सी० के एम्पूल्स तथा इन्जेक्शन के लिए (३) अनेक मात्रिक शीशियाँ (Rubber-capped Phials of 10 C. C.) आती हैं ।

(नॉट-ऑफिशल)

विटामिन 'पी' (Vitamin P.) ।

पर्याय—हेस्पेरिडिन **Hesperidin**; साइट्रिन **Citrin**; परमिएबिलिटी विटामिन **Permeability Vitamin**; केशिका-अन्तःप्रवेश्यता निरोधक जीवतिक्ति ।

वर्णन—यह फ्लेवोन (Flavone) समुदाय का द्रव्य है, जो मणिभीय स्वरूप का होता है तथा जल में घुल जाता है । इसके रासायनिक स्वरूप का ठीक-ठीक विश्लेषण अभी नहीं हो सका

है। नैसर्गिक रूप से यह एस्कोरविक एसिड के साथ, जिन-जिन द्रव्यों में एस्कोरविक एसिड पाया जाता है उन्हीं-उन्हीं द्रव्यों में यह भी पाया जाता है। इसके अभाव में केशिकाओं (Capillaries) में अन्तःप्रवेश्यता (Permeability) बढ़ जाती है, जिससे व्यक्ति में रक्तस्राव की प्रवृत्ति पाई जाती है। शीताद (Scurvy) में केशिकाओं में भंगुरता (Fragility) का गुण बढ़ जाता है, जिससे रक्तस्रावी प्रवृत्ति उसमें भी पाई जाती है। किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में दोनों ही विकृतियाँ साथ-साथ पाई जाती हैं। ऐसी स्थिति में दोनों जीवतिक्तियों के मिश्रित योगों का प्रयोग करना चाहिए। विटामिन 'पी' के अभाव से होने वाले रक्तस्राव में स्थान-स्थान पर त्वचा के नीचे रक्तस्राव होकर नीलोहांक (Petechiae) की उत्पत्ति होती है। स्कर्वी में रक्तस्राव विस्तृत क्षेत्र में होता है।

रूटिन (Rutin)—यह पीले रंग का क्रिस्टलाइन स्वरूप का एक ग्लाइकोसाइड होता है, जो तम्बाकू (Tobacco) आदि से प्राप्त किया जाता है जो रासायनिक स्वरूप में बहुत कुछ हेस्पेरिडिन से मिलता है। इसकी क्रिया बहुत कुछ विटामिन 'पी' से मिलती है। यह केशिकाओं की भंगुरशीलता (Fragility of the Capillaries) को कम करता है। किन्तु रक्तभार (Blood Pressure) पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। रक्तचाप (High Blood Pressure) रोग में रक्तस्रावी प्रवृत्ति के निवारण के लिए इसका प्रयोग उपयोगी है। मधुमेहियों में नेत्रगोलक के नाड़ीपटल के शोथ (Diabetic retinitis) एवं शस्त्रकर्म के समय में अथवा बाद में होने वाले रक्तस्राव के निवारण के लिए भी यह प्रयुक्त किया जाता है। मात्रा–२० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ ग्रेन) दिन में ३ बार मुख द्वारा इसको विटामिन 'सी' के साथ मिलाकर भी प्रयुक्त करते हैं।

विटामिन 'पी' के व्यावसायिक योग—

(१) हेस्पेरिडिन मेथिलकेल्कोन Hesperidin Methyl Chalcone $C_{२९}H_{३६}O_{१५}$. यह पीतवर्ण का गंधहीन, स्वाद में तिक्त तथा विरूपिक (Amorphous) चूर्ण होता है, जो हिस्पेरिडिन से बनाया जाता है। यह जल, अल्कोहल् तथा एसिटोन में तो विलेय होता है, किन्तु ईथर में नहीं घुलता।

हेस्पेरिडिन या पर्मिडन Hesperidin or Permidin (Glaxo)—इसकी ०·२५ ग्राम की टिकिया आती है। दिन में ३–४ बार मुख द्वारा सेवन करना चाहिए।

हेस्पेरिडिन मेथिल केल्कोन (Lilly)—५० मि० ग्रा० की पल्व्यूल्स Pulvules) आती है। हेस्पेरिडिन मेथिलकेल्कोन विथ विटामिन 'सी' Hesperidin Methyl Chalcone with Vitamin 'C' (Lilly)—यह विटामिन 'पी' एवं 'सी' का समिश्र यौगिक है। प्रत्येक पल्व्यूल में ५० मि० ग्रा० हेस्पेरिडिन मेथिल केल्कोन तथा १०० मि० ग्रा० विटामिन 'सी' होता है।

रूटिन Rutin (Lilly.)—२० एवं ५० मि० ग्रा० की टवलेट्स आती हैं। इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है।

साइट्रिन (Citrin)—५० मि० ग्रा० की दैनिक मात्रा शिरामार्ग द्वारा दी जाती है।

बिरूटन Birutan (E. Merck.)—५० मि० ग्रा० की टिकिया (टैबलेट्स) १०० मि० ग्रा० की २ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं।

२—वसा-विलेय जीवतिक्तियाँ (Fat-soluble Vitamins)

जीवतिक्ति 'ए'

Vitamin A (विटामिन A 'ए')

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{29}OH$.

पर्याय—उद्वर्धक जीवतिक्ति (Growth Promoting Factor); संक्रमण निवारक तत्व या जीवतिक्ति (Ant-infective Factor); वसा विलेय 'ए' (Fat-soluble A.) ।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—पूर्ण विकसित रूप में विटामिन 'ए' की उपलब्धि जान्तव द्रव्यों यथा मछली के जिगर का तेल (Fish-liver), अंडे की जर्दी, मक्खन एवं हरी घास चरने वाली गायों के दूध आदि से होती है । हरे शाकों एवं वनस्पतियों के वर्धनशील शाखाओं में कैरोटीन (Carotene, C_{40} H_{57}), तथा पीले मकाई के क्रिप्टोजैंथीन (Cryptoxanthine) नामक पीले रंग का एक रंजक तत्व (Pigment पिगमेंट) पाया जाता है । यही विटामिन 'ए' का पूर्वरूप (Provitamin A) होता है, जो जन्तुओं के शरीर में पहुँचने पर यकृत की कोशाओं (Kupffer's cells) द्वारा गृहीत होकर कैरोटिनेज (Carotenase) नामक किण्व की क्रिया से रंगहीन पूर्ण विकसित विटामिन 'ए' के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है । इस प्रकार प्राप्त विटामिन 'ए' का संग्रह शरीर में मुख्यतया यकृत में तथा अल्पमात्र में फुफ्फुस एवं वृक्कों में भी होता है । यह विटामिन काफी स्थिर (Stable) होता है, तथा उबालने पर भी जब तक तापक्रम अत्यधिक न हो नष्ट नहीं होता ।

औषधीय प्रयोगके लिए उक्त विटामिन नैसर्गिक रूपसे मछलियोंके याकृतिक तैल (Fish-Liver oil) से तथा कृत्रिम रूप से संश्लेषण द्वारा (Synthetically) प्राप्त किया जाता है । मछलियों में भी इसके व्यावसायिक प्राप्ति के मुख्य साधन हैलिबट ऑयल (Halibut oil), कॉड-लिवर ऑयल (Cod-liver oil) तथा शार्क-लिवर आयल (Shark-liver oil) हैं । भारतवर्ष में भी अनेक सामुद्रिक एवं नदियों में पाई जानेवाली मछलियों में भी यह प्रचुरता से पाया जाता है । सामुद्रिक मछलियों से प्राप्त विटामिन 'ए' को विटामिन 'ए$_1$' (Vitamin A_1) तथा नदियों की मछलियों से प्राप्त विटामिन 'ए' को विटामिन 'ए$_2$' (Vitamin A_2) की संज्ञा दी गई है । वक्तव्य—अन्तर्राष्ट्रीय सर्वमान्य बीटा-कैरोटीन (B-carotene) की ०·६ माइक्रोग्राम (Microgram) की मात्रा में एक युनिट विटामिन 'ए' (One unit of vitamin A) की सक्रियता होती है ।

लाइकर विटामिनाइ 'ए' कन्सन्ट्रेटस् Liquor Vitamini A Concentratus (Liq. Vitamin. A Conc.) I. P., B. P.—ले० कन्सन्ट्रेटेड सॉल्यूशन ऑव विटामिन 'ए' Concentrated Solution of Vitamin A—अं० ।

वर्णन—यह हल्के पीले अथवा पीले रंग के तैलीय-द्रव (Oily liquid) होता है, जिसमें मछली की तरह स्वाद एवं हल्की गन्ध होती है । मात्रा—१ से १० मिनम् या बूंद (या ०·०६ से ०·६ मि० लि०) । इसके १ मिनम् में २५०० युनिट विटामिन 'ए'की सक्रियता तथा १०मिनम् में उसी अनुपातसे २५,००० युनिट विटामिन 'ए' की सक्रियता होती है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

विटामिन 'ए' आयुवर्धक होता है, अतएव इसके अभाव में वृद्धावस्था के लक्षण अपेक्षाकृत शीघ्र ही प्रगट होने की आशंका होती है । समस्त शरीर के अपिस्तरीय धातुओं (Epit-

helial tissues) को स्वस्थ बनाये रखना तथा नाड़ी संस्था की रचना एवं क्रिया को प्राकृतिक रूप में बनाये रखना इस विटामिन का मुख्य कर्म है। इसके अतिरिक्त चक्षुरिन्द्रिय (Vision) को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए भी यह विटामिन आवश्यक है। वसा-विलेय होने के कारण, सामान्यतया युवा पुरुष के शरीर में आवश्यक मात्रा में इसका संचय शरीर में सदैव रहता है। अतएव युवकों में इसके अभाव की स्थिति प्रायः उत्पन्न नहीं होती। वसामय आहार के साथ कैरोटीन का सेवन करने से आन्त्रों द्वारा सुगमता से प्रचूषण होकर यकृत में पहुँचकर उक्त कैरोटीन (विटामिन 'ए' का पूर्वरूप) विटाविन 'ए' में परिवर्तित हो जाता है। किन्तु लिक्विड पाराफिन के साथ कैरोटीन को नहीं देना चाहिए क्योंकि यह पाराफिन में विलेय होने के कारण आन्त्रों द्वारा प्रचूषित नही हो पाता प्रत्युत उसी में स्थिर रहता है।

विटामिन 'ए' के अभाव में निम्न विकृतियाँ लक्षित होती हैं :—(१) शारीरिक वृद्धि रुक जाती है तथा साथ ही स्थानिक एवं सामान्य कायिक दोनों ही रूप से विकारीजीवाणुओं के प्रतिरोध (Resistance) की शक्ति क्षीण हो जाती है जिससे उपसर्ग (Infection) की सम्भावना अधिक रहती है। (२) चक्षुरिन्द्रिय सम्बन्धी विकार–नेत्र की अनुकूलशक्ति (Accommodation) विकृत हो जाती है और नक्तान्ध्यता (Night Blindness) की उत्पत्ति की बहुत अधिक सम्भावना रहती है। इसके अतिरिक्त अन्य नेत्रव्याधियों, यथा शुष्काक्षिपाक (Xerophthalmia), नेत्र के स्वच्छ मण्डल की मृदुता (Keratomalacia), नेत्रकला का सपूयपाक (Purulent Ophthalima) आदि की उत्पत्ति होती है। स्वच्छमण्डल (Cornea) के समीपवर्त्ती भाग पर नेत्रकीश्लैष्मिक कला पर सफेद धब्बे (Bitot's Spots) निकलते हैं। नेत्रों में प्रकाशसंत्रास (Photophobia) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। आँखों से कम दिखाई देने लगता है और उत्तरोत्तर दृष्टि कम होते होते अन्त में नष्ट हो जाती (Loss of Sight) है; (३) लालाग्रंथियों एवं आंत्र की श्लैष्मिक कला तथा रसांकुरों (Villi) में अपजनन होकर कोशायें नष्ट हो जाती हैं; (४) त्वचा की विकृतियाँ— त्वचा में खरता (Keratinization) तथा स्वेदोत्पत्ति में न्यूनता हो जाती है तथा इतस्ततः (विशेषतः अग्रबाहु, स्कन्धप्रदेश तथा नितम्ब में) उत्कर्णिक विस्फोट (Papular-rash) निकलते हैं। (५) नाड़ी-संस्थान—में अपजनन (Degeneration) होने के कारण अनेक प्रकार के अंगघात (Paralysis) की उत्पत्ति होती हैं, (६) इसके अतिरिक्त इस विटामिन के अकाल से बच्चों में दंतोद्गम (Dentition) ठीक समय से नहीं होता। अस्थियों का विकास भी समुचित रूप से नहीं होता तथा मूत्र में भास्वीयमूत्राश्मरी (Phosphatic Calculi) की उत्पत्ति की सम्भावना होती है। इस विटामिनके अतियोग (आधिक्य) में त्वचा पीले रंग की हो सकती है।

एक स्वस्थ युवा पुरुष को स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रतिदिन ३,००० युनिट विटामिन 'ए' की आवश्यकता होती है। वृद्धिशील बालकों (Growing Child) के लिए तथा गर्भावस्था एवं धात्रीकाल में स्त्रियों के (Nursing mother) के लिए प्रतिदिन ६,००० युनिट के हिसाब से आवश्यकता होती है। कमी की अवस्था (Deficiency) में कम से कम दैनिक मात्रा ३०,००० युनिट होनी चाहिए। आवश्यकतानुसार अधिक मात्रा (२ लाख युनिट तक) दी जा सकती है। मात्रातियोग (Overdose) से प्रायः कोई विशिष्ट अनिष्ट लक्षण नहीं होते।

विटामिन 'ए' का शोषण महास्रोतस् से क्षिप्रतापूर्वक हो जाता है और ५–८ घंटे के अन्दर शरीर में इसका काफी सन्केन्द्रण (Concentration) हो जाता है। अतएव साधारणतया इसका सेवन मुखमार्ग द्वारा ही करना या कराना श्रेष्ठतर है। आत्ययिक अवस्थाओं में सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त कर सकते हैं।

चिकित्सार्थ विटामिन 'ए' का प्रयोग निम्न व्याधियों में किया जाता है—नक्तान्ध्य, (Night Blindness), नेत्र के स्वच्छ मण्डल की मृदुता (Keratomalacia), बार-बार श्वसनिकाशोथ (Relapsing bronchitis) का होना, ब्रांकोन्युमोनिया, आमवाताभ संधिशोथ (Rheumatoid arthritis) एवं नाड़ी-अपजनन आदि।

चिकित्सा में विटामिन 'ए' की पूर्ति नैसर्गिक साधनों द्वारा यथा, दूध, अंडा, हरेशाक, एवं कॉड-लिवर ऑयल, हेलिबट-लिवर ऑयल, एवं शार्क-लिवर ऑयल तथा बाजार में प्राप्त होने वाले विटामिन 'ए' के संश्लिष्ट योगों (Proprietory Preparations) द्वारा की जाती है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१–केप्स्युली विटामिनाइ 'ए' Capsulae Vitamini A (Caps. Vitamin. A), B. P. C.–ले०; केप्स्यूल्स ऑव विटामिन 'ए' (Capsules of Vitamin A)–अं०। प्रत्येक केप्स्यूल में ४,५०० युनिट विटामिन 'ए' की सक्रियता होती है। प्रत्येक केप्स्यूल में असली दवा २½ या ३ बूंद होती है। परिमाण (Volume) ठीक करने के लिए कोई उपयुक्त वानस्पतिक तेल मिला दिया जाता है। मात्रा–प्रतिदिन १ से ५ केप्स्यूल।

२–केप्स्यूली विटामिनोरम् 'ए' एट 'डी' (Capsulae Vitaminorum A et D), (Caps. Vitamin A et D), B. P. C.–ले०; केप्स्यूल्स ऑव विटामिन 'ए' एण्ड 'डी'–अं०। प्रति कैप्स्यूल में ४,५०० युनिट विटामिन 'ए' की तथा ४५० युनिट विटामिन 'डी' की सक्रियता होती है।

३–केप्स्युली विटामिनोरम् Capsulae Vitaminorum (Caps. Vitaminor.), B. P. C.–ले०; केप्स्युल्स ऑव विटामिन्स–अं०। पर्याय–विटामिन केप्स्यूल्स। प्रत्येक केप्स्यूल में विटामिन 'ए' की २,५०० युनिट तथा विटामिन 'डी' की ३०० युनिट, थायमिन हाइड्रोक्लोराइड ०.५ मि० ग्रा०, निकोटिनेमाइड ७.५ मि० ग्रा०, एस्कोरबिक एसिड १५ मि० ग्रा० होता है। मात्रा–प्रतिदिन २-३ कैप्स्यूल।

विटामिन 'ए' के व्यावसायिक योग—

१–प्रिपेलिन Prepalin (Glaxo)—(१) केप्स्यूल्स (२४,००० युनिट के); (२) एम्पूल्स (प्रति सी० सी० में १००,००० युनिट); (३) द्रव (Liquid)–प्रति सी० सी० में ७२,००० युनिट। गर्भावस्था में प्रतिदिन ३–४ कैप्स्यूल या ३६–४८ बूंद द्रव या १–२ सी० पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। इसके बाद २–३ दिन के अन्तर से केप्स्यूल या १२ बूंद द्रव या ३–७ दिन के अन्तर से १ सी० सी० का सूचिकाभरण करें।

(२) एडिक्सोलिन Adexolin (Glaxo)— इसके भी (१) केप्स्यूल्स आते हैं तथा (२) द्रव–(Liquid) रूप में भी प्राप्त होता है।

(३) जेल्सील्स अल्फालिन 'Gelseal's Alphalin (Lilly)—इसके १०,००० युनिट या २५,००० तथा ५०,००० युनिट के जेल्सील (Gelseal) आते हैं।

(४) विटावेल 'ए' Vitavel A—प्रति केप्स्यूल ३३,००० युनिट होता है।

(५) एवोलियम् (Avoleum Liquid)—प्रति कैप्स्यूल ४,५०० युनिट होता है।

विटामिन 'डी' (जीवतिक्ति 'डी')
(Vitamin D)

यह एक वसा-विलेय जीवतिक्ति है, जिसमें अस्थिवक्रतानिवारक गुण-धर्म (Antirachitic properties) पाये जाते हैं। वियोजित होने पर यह D_1, D_2, D_3, में विच्छिन्न होता है। इनमें विटामिन D_2 का प्रसिद्ध नाम "केल्सिफेरॉल Calciferol" है विटामिन डी के सभी व्यवसायिक योगों में यही विटामिन होता है। प्रकृति में अर्गास्टेरॉल (Ergosterol) ही सूर्य की लोहितातीत किरणों के प्रभाव (Ultraviolet irradiation) से केल्सिफेरॉल या विटामिन 'डी' में परिवर्तित हो जाता है। अर्गास्टेरॉल एक प्रकार का स्टेरॉल होता है, जिसे सर्व प्रथम टेंरेट (Tanret) नामक वैज्ञानिक ने अर्गट से प्राप्त किया था। अतएव अर्गट के नाम पर ही इस स्टेरॉल को अर्गास्टेरॉल कहते हैं। जीवतिक्तियों में यही एक जीवतिक्ति ऐसी है जो मनुष्यों की त्वचा पर सूर्यरश्मियों की क्रिया से नैसर्गिक रूप से प्राप्त होती रहती है। यही कारण है कि भारतवर्ष जैसे दरिद्र देश में भी सूर्य प्रकाश सुलभ होने के कारण पौष्टिक आहार न मिलने पर भी फक्क रोग (Rickets)—विटामिन 'डी' के अभाव से होने वाला रोग) अपेक्षा कम होता है।

विटामिन डी के लगभग अबतक दस पूर्व रूपों (Pro-vitamins D) का निश्चय किया जा चुका है, जो सूर्य रश्मियों के प्रभाव (Irradiation) से विटामिन डी में परिवर्तित हो जाते हैं। अर्गास्टेरॉल के अतिरिक्त अन्य पूर्व रूपों के रूपान्तर से विटामिन D_3 की उत्पत्ति होती हैं।

केल्सिफेरॉल (Calciferol) I. P. B. P.

रासायनिक संकेत $C_{28}H_{43}OH$.

पर्याय—केल्सिफेरोल्सि (Calciferolis); विटामिन 'डी'; वायोस्टेरोल (Viosterol)।

प्राप्ति-साधन—यह उपयुक्त विलायक (Solvent) में अर्गास्टेरॉल पर सूर्य की लोहितातीत किरणों के प्रभाव (Ultra-violet irradiation) से प्राप्त किया जाता है। इसके १ मिलिग्राम मात्रा में ४,००० युनिट विटामिन 'डी' की (अस्थिवक्रता या फक्कनिवारक) सक्रियता (Activity) होती है। स्वरूप—यह रंगहीन, गंधहीन एवं स्वाद रहित सूच्याकार मणिभ (Acicular crystals) के रूप में उपलब्ध होता है। विलेयता—यह जल में तो नहीं घुलता (Insoluble) किन्तु वसा एवं तैलों में क्षिप्रतापूर्वक विलेय होता है। संग्रह—इसका संग्रह खूब अच्छी तरह डाट-बन्द शीशियों में करना चाहिए, जिनमें से हवा विशेष उपायों द्वारा अच्छी तरह निकाल दी गई हो अथवा हवा निकाल कर तत्स्थान में निष्क्रिय गैस भर दिया गया हो। उक्त पात्रों को ठंढे तथा अंधेरी जगह में रखना चहिये।

मात्रा—(१) वच्चों एवं युवकों के लि० दैनिक रोगप्रतिषेधक मात्रा (Prophylactic daily dose)—१/२४०० से १/६०० ग्रेन या ०·०२५ से ०·१ मिलिग्राम (अर्थात् १,००० से ४,०००

युनिट)। (२) रोगनिवारक (Therpeutic)—दैनिक मात्रा—१/१२८० से १/१२८ ग्रेन या ०'०५ से ०.५ मिमिग्राम (अर्थात् २,००० से २०,००० युनिट)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

आँतों से केल्शियम् एवं फास्फोरस का प्रचूषण होने के लिए विटामिन 'डी' की उपस्थिति अत्यन्त आवश्यक होती है। अतएव इसके अभाव में उक्त तत्वों का प्रचूषण आवश्यक मात्रा में नहीं होता, जिससे अस्थिजनक धातुओं (Osteogentic tissue) में केल्सियम् एवं फास्फोरस का संग्रह आवश्यक परिमाण में नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त यह कार्बनिक फास्फेट्स (Organic phosphates) का रूपान्तर अकार्बनिक फास्फेट्स (Inorganic phosphates) में करता है, जो अस्थिभवन की क्रिया के लिए परमावश्यक घटक है। अतएव स्पष्ट है कि विटामिन 'डी' के अभाव में अस्थिभवन (Bone-formation) का कार्य समुचित रूप से नहीं होता। वर्धनशील बच्चों में तथा गर्भवती एवं धात्री (Nursing mother) को अपेक्षाकृत विटामिन 'डी' की आवश्यकता अधिक होती है। और इसकी कमी होने से बच्चों में फक्करोग (Rickets), कृमिदन्त (Dental caries) तथा गर्भवती स्त्रियों में अस्थिमृदुता (Osteomalacia) नाम अस्थिसंस्थान सम्बन्धी रोग होते हैं। अतएव उक्त रोगों में तथा गर्भ धारण-काल (Period of Pregnancy) एवं स्तन्यकाल (During lactation period) में केल्सिफेरोल का प्रयोग मुखद्वारा अथवा आवश्यकतानुसार इंजेक्शन (पेश्यन्तरिक) द्वारा किया जाता है। इससे बहुत जल्दी उपकार होता है। गर्भवती स्त्रियों के लिए तथा स्तन्यकाल में ७०० युनिट की दैनिक धारक मात्रा (Maintenance does) पर्याप्त होती है। फक्करोग के निवारण हेतु अपेक्षाकृत अधिकमात्रा (५०००-२०,०००-५०,००० युनिट दैनिक मात्रा तक) अपेक्षित होती है।

आजकल केल्सिफेरॉल का उपयोग कतिपय त्वग्रोगों (Lupus vulgaris and Psoriasis), आमावताभ संधिशोथ (Rheumatoid arthritis) एवं अनूर्जिक अवस्थाओं (Allergic States) में भी किया जाने लगा है। एतदर्थ ६००,००० युनिट (I. U.) की मात्रा सप्ताह में ३ बार इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त की जाती है अथवा १५०,००० युनिट की दैनिक मात्रा टेबलेट्स के रूप में दी जाती है। अधिक मात्रा द्वारा किये जाने वाले चिकित्साक्रम में रक्त का परीक्षण केल्सियम् के प्रतिशतक मात्रा के लिए करते रहना चाहिये, क्योंकि कभी-कभी मात्रातियोग के कारण अनेक अनिष्ट उपद्रव उठ खड़े होते हैं।

जीवतिक्त्युत्कर्ष अथवा विटामिनमात्रातियोग जन्यविषमयता (Hypervitaminosis)—कभी-कभी अत्यधिक मात्रा में विटामिन प्रयोग से विषाक्तता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। साधारण अवस्थाओं में तो केवल अस्थियों के वृद्धिशील प्रान्तों में परमचूर्णमयता (Hyper-Calaemia) हो जाती है तथा इसी अनुपात से आंतों में कैल्सियम एवं फॉस्फेट की कमी होती है। उग्रस्थितियों में केल्सियम एवं फॉस्फेट अस्थियों से स्थानान्तरित होकर रक्तवाहिनियों, हृदय, फुफुस, वृक्क तथा आमाशय आदि में स्थान-स्थान पर जमा होने लगता है तथा केल्सियम फास्फेट घटित मूत्राश्मरी (Calcium Phosphate Calculi) बनने लगती है। विषाक्तता होने पर क्षुधानाश, वमन-अतिसार, एवं शरीरक्षय होने लगता है। इसके अतिरिक्त बालग्रैवेयक (Thymus) एवं प्लीहा नामक ग्रंथियों

का भी क्षय (Atrophy) होने लगता है। प्राणी के शरीर का भार उत्तरोत्तर घटने लगता है और अन्ततः प्राण खो बैठता है।

(ऑफिशल योग I. P. &. B. P. Preparations) :—

१—टॅबेली केल्सिफेरोलिस Tabellāe Calciferolis (Tab. Calciferol.)—ले०; टॅबलेट्स ऑव विटामिन डी$_2$; स्ट्रांग टॅबलेट्स ऑव केल्सिफेरोल—अं०; विटामिन डी$_2$ की टिकिया—हिं०। मात्रा—केल्सिफेरोल की भांति। यदि प्रति टॅबलेट मात्रा का उल्लेख न हो तो १.२५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{48}$ ग्रेन) या ५०,००० युनिटशक्ति की टॅबलेट देनी चाहिए।

२—लाइकर केल्सिफेरोलिस (Liquor Calciferolis Liq. Calciferol.)—ले०; सोल्यूशन ऑव केल्सिफेरोल, सोल्यूशन ऑव विटामिन 'डी$_2$'—अं०। यह केल्सिफेरोल का मूंगफली के तेल में या अन्य किसी उपयुक्त तेल में बनाया हुआ सोल्यूशन होता है, जिसकी १ ग्राम मात्रा में ३००० युनिट विटामिन 'डी' होता है। मात्रा—(१) रोगप्रतिषेधक—०.३ से १.२ मि० लि० या ५ से २० बूंद अर्थात् १,००० से ४,००० युनिट; (२) रोग शामक—१.५ से १५ मि० लि० (२५ से २५० या बूंद) अर्थात् ५,००० से ५०,००० युनिट प्रतिदिन।

३—लाइकर विटामिनाइ 'डी' कन्सण्ट्रेट्स Liquor Vitamini D Concentratus (Liq. Vitamin. D. Conc.)—ले ; कन्सन्ट्रेटेड सोल्यूशन ऑव विटामिन 'डी'—अं०। यह हल्के पीले रंग का या पीले रंग का तैलीय द्रव (Oily liquid) होता है, जिसमें एक हल्की गंध होती है तथा स्वाद में कुछ-कुछ मछली के तेल की तरह होता है। मात्रा—(१) रोगप्रतिषेधक—०.१ से ०.४ मि० लि० (१½ से ६ मिनम्) अर्थात् १००० से ४००० युनिट प्रतिदिन। (२) रोग शामक—०.५ से ५ मि० लि० (८ से ७५ मिनम्) या ५००० से ५०,००० युनिट प्रतिदिन।

(४) लाइकर विटामिनोरम् 'ए' एट 'डी' कन्सन्ट्रेटस Liquor Vitaminorum A et D Concentratus (Liq. Vitamin. A et. D Conc.)—ले०; कन्सन्ट्रेटेड सोल्यूशन ऑव विटामिन 'ए' एण्ड 'डी'—अं०। यह मछली के तेल में अथवा मूंगफली के तेल में अथवा अन्य उपयुक्त वानस्पतिक तेल में बनाया हुआ विटामिन ए तथा विटामिन डी का सोल्यूशन होता है। १ ग्राम मात्रा में ४५,००० से ५५,००० युनिट विटामिन ए सक्रियता तथा ५,००० युनिट विटामिन 'डी' सक्रियता होती है। मात्रा—०.०६ से ०. मि० लि० (१ से १० मिनम्) अर्थात् २५०० से २५,००० युनिट विटामिन 'ए' तथा २५० से २५०० युनिट विटामिन 'डी' प्रतिदिन।

आलियम् मॉरह्वी (कॉड-लिवरऑयल) B. P.

Family : Gadidāe.

नाम—ओलियम् मॉरह्वी Oleum Morrhuae (Ol.Morrh.), ओलियम् जेकोरिस एसेलाइ Oleum Jecoris Aselli—ले; कॉड-लिवर ऑयल Cod-liver oil—अं०; मछली का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—कॉड-लिवर ऑयल, काड (Cod) नामक मछली के ताजे लिवर(Liver) यकृत या जिगर (कलेजी) से प्राप्त किया जाता है। इस मछली का वैज्ञानिक नाम गेडस मॉरह्वा (Gadus morrhua, Linn.) है। तेल निकालने के बाद इसको ०° पर ठंढा करके इससे घनवसा (Solid fat) का भाग-विशेषतः पामिटिन (Palmatin)—

[illegible] है। इस प्रकार ओरणोनयुक्त, न जमनेवाला (non-freezing) व्या-[illegible] कॉडलिवर ऑयल या मछली का तेल प्राप्त हो जाता है । इस प्रकार प्राप्त तैल के [illegible] १०० युनिट विटामिन 'ए' की क्रियाशीलता तथा ८५ युनिट अस्थिवक्रता-[illegible] (Antirachitic activity) अर्थात् ८५ युनिट विटामिन 'डी' [illegible] होती है ।

उत्पत्ति-स्थान—नॉर्वे, फ्रांस, इंगलैंड, न्यूफाउण्डलैंड, उत्तरी अमेरीका तथा जापान ।

वर्ण—कॉड-लिवर ऑयल हल्के पीले रङ्ग का होता है, जिससे मछली की हल्की गंध आती है। [illegible] स्वाद में [illegible] (Bland) होता है अथवा मामूलीतौर पर मछलीका सा ही स्वाद होता है। ईथर तथा क्लोरोफार्म में तो यह फौरन घुल जाता (Soluble) है किन्तु अल्कोहल् ([illegible]) में केवल अंशतः विलेय (Slightly Soluble) होता है ।

संगठन—कॉडलिवर ऑयल का मुख्य उपादान विटामनि 'ए' एवं विटामिन 'डी' है। इसके अतिरिक्त इसमें (१) अनसेचुरेटेड एसिड्स के ग्लिसराइड्स (Glycerides of unsaturated acids); (२) पामिटिन (Pamitin); (३) ओलीइक (Oleic), पामिटिक तथा स्टियरिक (Stearic) आदि मेदसाम्ल (Fattyacids) तथा (४) सेन्द्रिय यौगिकों (Organic Compounds) के रूप में अत्यल्प मात्रा में आयोडीन, ब्रोमीन, सोडियम् पाटोसियम्, कैल्सियम्, लौह; (५) कोलेस्टेरॉल (Cholesterol) एवं बाइल एसिड्स (Bile acids) भी होते हैं ।

मात्रा—६० से १८० मिनम् (बूंद) या ४ से १२ मि० लि० । यह दैनिक मात्रा (Daily dose) है, जिसको कई मात्राओं में विभक्त करके दिया जाता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

सभी स्थिर तैलों का पाचन होकर शोषणोपरान्त यकृत् द्वारा विघटन (Desaturation) होता है। तब वे शरीरोपयोगी होते हैं। किन्तु अन्य स्थिर तैलों की अपेक्षा कॉडलिवर ऑयल में यह विशेषता है कि इसमें मेदसाम्ल (Fatty acids) पूर्व से ही विघटितावस्था (Unsaturated) में रहते हैं। अतएव यह उनकी अपेक्षा शीघ्रतापूर्वक जारित (Readily oxidised) होता है। अर्थात् इसका इमलसन शीघ्रतापूर्वक होता है, सुपाच्य है तथा [illegible] आंतों से प्रचूषित (Absorbed) हो जाता है। अतएव यह एक आदर्श-आहार (Ideal food) है। दौर्बल्यावस्था में अथवा क्षयकारक व्याधियों (Wasting-diseases) में [illegible] के लिए यह एक परमोपयोगी द्रव्य है। इसमें अल्पमात्रा में कोलेस्टेरॉल (Cholesterol) तथा आयोडीन भी पाया जाता है ।

कॉडलिवर आयल में वसाविलेय विटामिन 'ए' एवं 'डी' प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। [illegible] इन विटामिन्स के अभाव से होने वाली व्याधियों में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी होता है।

शुद्ध तैल के रूप में कॉडलिवर ऑयल के सेवन में कभी-कभी कठिनाई होती है, क्यों कि इसमें [illegible] गंध होती है, तथा विशुद्ध शाकाहारी (Strict Vegetarians) इसको लेने से इन्कार करते हैं। ऐसी अवस्थाओं में इसका सेवन इमलसन के रूप में किया जा सकता है, [illegible] बाजार में कॉडलिवर ऑयल के अनेक सुस्वादु व्यावसायिक योग उपलब्ध होते हैं। [illegible] सेवन किया जा सकता है ।

बाह्यतः कॉडलिवर ऑयल का उपयोग शल्य चिकित्सा में दग्ध (Burns), दुष्ट-व्रण (Septic Sores) तथा ट्युबरक्युलर व्रण (Tubercular ulcers) तथा त्वग्रोग विशेष (Exfoliative dermatitis) में व्रण-बंधन (Dressing) के लिए किया जाता है।

(ऑफिशल-योग)

१—एक्स्ट्रैक्टम् माल्टी कम् ओलिओ मॉरही Extractum Malti Cum Oleo Morrhuae (Ext. Malt. C. Ol. Morrh.) B. P.—ले०; एक्स्ट्रैक्ट ऑव माल्ट विद कॉडलिवर ऑयल Extract of Malt with Codliver Oil—अं०। मात्रा—६० मिनम् (बूंद) से १ औंस या ४ से ३० मि० लि०। इसको दिन में कई-बार में दिया जाता है।

२—इमल्सिओ ओलियाइ मॉरही Emulsio Olei Morrhuae (Emuls. Ol. Morrh.) B. P.—ले०; इमल्सन ऑव कॉडलिवर ऑयल Emulsion of Codliver Oil—अं०। इसमें ५०% कॉडलिवर ऑयल होता है। मात्रा—१२० से ३६० मिनम् या ८ से २४ मि० लि०। इसको दिन में कई बार में देना चाहिए।

ओलियम् हाइपोग्लॉसाइ (हेलिबट-लिवर ऑयल) B. P.
Family: Pleuronectidae.

पर्याय—ओलियम् हाइपोग्लॉसाइ Oleum Hippoglossi (Ol. Hippoglos's) —ले०; हेलिबट-लिवर ऑयल (Halibut-liver Oil)—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह एक स्थिर तैल होता है, जो हेलिबट नामक मछली (Hippoglossus hippoglossus) के लिवर (Liver) या जिगर से प्राप्त किया जाता है।

स्वरूप—यह सुनहले पीले रंग का द्रव होता है, जो गंध एवं स्वाद में मछली की तरह होता है। यह अल्कोहल (९०%) में तो अंशतः विलेय होता है, किन्तु सॉलवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा हल्के पेट्रोलियम् में अच्छी तरह मिल जाता है। १ ग्राम तेल में कम से कम ३०,००० युनिट विटामिन 'ए' क्रियाशीलता तथा २५०० से ३५०० युनिट विटामिन 'डी' क्रियाशीलता होती है।

मात्रा—१ से ८ मिनम् (बूंद) या ०·०६ से ०·५ मि० लि०।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

हेलिबट-लिवर ऑयल में विटामिन 'ए' कॉड-लिवर ऑयल की अपेक्षा ५० गुना अधिक होता है। इसके प्रत्येक ग्राम में कम से कम ३०,००० युनिट विटामिन 'ए' क्रियाशीलता तथा २५०० से ३५०० युनिट विटामिन 'डी' क्रियाशीलता होती है। कॉड-लिवर ऑयल के स्थान में इसका प्रयोग सर्वथा उपयुक्त है।

(ऑफिशल योग)

१—केप्स्यूल्स ऑव हेलिबट लिवर ऑयल (Capsules of Halibut liver Oil) B. P.—अं०। मात्रा—१ से ८ मिनम् ०·०६ से ०·५ मि० लि०। प्रति केप्स्यूल में ४५०० युनिट विटामिन 'ए' सक्रियता होती है।

ओलियम् सिलेकायडियाइ Oleum Selachoidei (Ol. Selachoid.) I. P.—ले०; शार्क-लिहर ऑयल (Shark-Liver Oil)—अं०। शार्क मछली का तेल—हि०।

Family : Carchariidae : Selachoidei

प्राप्ति-साधन—यह शार्क की विभिन्न उपजातियों (Species) की मछलियों के ताजे या सुरक्षित किए हुए। (Preserved) यकृत से प्रपीड़न द्वारा अथवा अन्य उपयुक्त विधियों द्वारा प्राप्त किया जाता है। शार्क का तेल विशेषतः इसकी जाइगीना ट्युड (Zygoena tudes) नामक प्रजाति से प्राप्त करते हैं। इसके प्रति ग्राम तैल में विटामिन 'ए' की ६,००० अन्तर्राष्ट्रीय युनिट (I. U.) की सक्रियता होती है।

वर्णन—शार्क का तेल हल्के पीले रंग का या भूरापन लिए पीले रंग का होता है, स्वाद में मछली की भांति। विलेयता—अल्कोहल (९०%) में थोड़ा-थोडा घुलता (Slightly soluble) है; ईथर, क्लोरोफार्म तथा लघु पेट्रोलियम् (Light petroleum) में भी मिल जाता (Miscible) है। संरक्षण—शार्क के तेल को अच्छी तरह डाट बंद रंगीन शीशियों में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—०.२ से १.० मि०लि० (३ से १५ मिनम्): विटामिन 'A' १५,०० से ६,५०० युनिट।

ओलियम् सिलेकायडियाई डायल्यूटम् Oleum Selachoidei Dilutum (Ol. Sela. Dil.) I. P.—ले०; डायल्यूट शार्कलिहर ऑयल—अं०। शार्क का हल्का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—शार्क लिह्वर ऑयल में साफ किया हुआ मूंगफली का तेल (decolourised deodorind archis Oil) तथा विटामिन 'डी' मिलाकर बनाया जाता है। १ ग्राम तेल में १००० युनिट विटामिन ए तथा १०० युनिट विटामिन 'डी' होता है।

वर्णन—हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें मछली किसी हल्की गंध तथा स्वाद पाया जाता है। इसको अम्बरी रंग की शीशियों में रखना चाहिए। मात्रा—४ से १२ मि० लि० (६० से १८० मिनम्) प्रतिदिन, विभक्त मात्राओं में।

ओलियम् सिलेकायडियाइ एट विटामिन 'डी' Oleum Selachoidei et Vitamin D. (Ol. Selachoid. et. Vitamin. D.) I. P.—ले०; शार्क लिवर ऑयल विद विटामिन 'डी'।

वर्णन—१ ग्राम में ६,००० युनिट विटामिन 'ए' तथा १,००० युनिट विटामिन 'डी' होता है। मात्रा—०.५ से १.५ मि० लि० (७ से २२ मिनम्) विभक्त मात्राओं में।

एक्स्ट्रॅक्टम् माल्टी कम् ओलियो सिलेकायडियाइ Extractum Malti Cum Oleo Selachoidei (Ext. Malt. c. Oil. Selachoid.) I. P.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव माल्ट विद शार्कलिह्वर ऑयल—अं०।

इसमें ५% (w/w) शार्क का तेल होता है। प्रति ग्राम में ३०० युनिट (I. U.) विटामिन 'ए' की सक्रियता होती है। मात्रा—४ से १६ मि० लि० (६० से २४० मिनम्)।

काडलिवर ऑयल के नुस्खे:—

(१) केलिसयम् हाइपोफॉस्फेट ५ ग्रेन
काडलिवर ऑयल ६० बूंद
म्युसिलेज अकेशिया एवं आवश्यकतानुसार
ट्रागाकान्थ
सिरप टोलू ६० बूंद
एक्वा सिन्नेमन १ औंस तक
(अर्क दालचिनी)

ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार भोजनोत्तर दें। कमजोरी की हालत में उत्तम शक्तिवर्धक सुपाच्य आहार है।

(२) फेरी एट अमोनी साइट्रास १५ ग्रेन
काडलिवर आयल ६० बूंद
म्युसिलेज अकेसिया आवश्यकतानुसार
ऑयल लेमन (नीबू का तेल) १ बूंद
एक्वा क्लोरोफॉर्म १ औंस तक

ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार भोजनोत्तर। प्रयोग पूर्ववत्।

हेलिवट ऑयल तथा विटामिन 'ए' एवं 'डी' के अन्य व्यावसायिक योग:—

१—होलिवेरॉल Holiverol या हेलिब्युटॉल Halibutol। मात्रा—२ से १० बूंद दिन में २ वार।

२—सोडियम् मोर्हुएट Sodium Morrhuate (नॉट-ऑफिशल)—इसके ५% विलयन का इन्जेक्शन कुटिल शिराओं (Varicose Veins) में किया जाता है। बवासीर के मस्सों (Piles) में भी इसके इन्जेक्शन से लाभ होता है।

३—विगेंटोल (Vigantol), वागेन (Vogan), वायोस्टेरॉल (Viosterol), नेविटोल (Navitol), आल्फाडेटालिन (Alphadattalin), इरेंडाल (Irradol), रेडिओस्टेरिन (Radiosterin), रेडिओस्टोल (Radiostol) आदि। मात्रा—५ से १५ बूंद प्रतिदिन।

४—ऑस्टेलिन फोर्ट Ostelin Forte। १ टेवलेट में ५०,००० युनिट केल्सिफराल तथा १ सी० सी० एम्पूल में ६००,००० युनिट केल्सिफराल होता है।

५—रेडिओस्टोलियम् कन्सन्ट्रेटम् (Radiostoleum Conc.) में १ सी० सी० में ७५,००० युनिट विटामिन 'ए' तथा १५, ००० युनिट विटामिन 'डी' होता है।

(नॉट-ऑफिशल)

विटामिन 'ई' (जीवतिक्ति 'ई')

Vitamin E.

रासायनिक संकेत : $C_{२२}H_{५०}O_{२}$.

पर्याय—एन्टीस्टेरिलिटी विटामिन Antisterility Vitamin (वन्ध्यतानिवारक जीवतिक्ति या विटामिन); रिप्रोडक्टिव विटामिन Reproductive Vitamin (सन्तानोत्पादक जीवतिक्ति या विटामिन), अल्फा-टोकोफेरॉल dl-a-tocopherol—रासायनिक।

वर्णन—यह एक वसा-विलेय (Fat-soluble) जीवतिक्ति है, जो अंकुरित गेहूँ के तैल (Wheat-germ oil) में प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। इसके अतिरिक्त यह जई (Oats) विभिन्न शाक तथा अन्य अंकुरित बीजों में भी न्यूनाधिक मात्रा में पाई जाती है। जान्तव धातुओं तथा मांस, वसा तथा आशय (Viscera) में भी अल्प मात्रा में इसकी उपस्थिति होती है। आजकल औषधीय प्रयोग के लिए संश्लेषण (Synthesis) पद्धतिद्वारा कृत्रिम रूप से भी इसके निर्माण में काफी सफलता प्राप्त हुई है। यह जल में नहीं घुलता, तथा पीताभ तैलीय द्रव के रूप में होता है, तथा साधारण तापक्रम पर उष्णता, प्रकाश, वायु एवं अम्ल तथा क्षारों के प्रभाव से यह विकृत नहीं (Fairly resistant) होता है। नैसर्गिक साधनों से प्राप्त विटामिन 'ई' संश्लिष्ट विधियों द्वारा निर्मित योगों की अपेक्षा अधिक सक्रिय होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

स्वस्थावस्था में जीवतिक्ति 'ई' (Vit. E) की उपस्थिति सन्तानोत्पत्ति के लिये आवश्यक होती है। अतएव इसका अभाव वन्ध्यता (Sterility) का जनक होता है। जिसके परिणाम स्वरूप पुरुषों में शुक्रजनक अधिच्छद धातु (Seminiferous epithelium) का अपजनन होकर पुष्ट शुक्राणुओं की उत्पत्ति नहीं होती। स्त्रियों में या तो गर्भाधान (Conception) ही नहीं होता, अथवा गर्भाधान हो भी जाय तो गर्भ की वृद्धि समुचित रूप से नहीं होती, जिससे प्रगल्भ होने के पूर्व ही वह नष्ट हो जाता है। अतः वन्ध्यत्व निवारण के लिए तथा जिन स्त्रियों में बार-बार गर्भस्राव (Abortion) की प्रवृत्ति होती है और कोई स्पष्ट कारण प्रतीत नहीं होता, तो ऐसी स्थितियों में विटामिन 'ई' के सेवन से चमत्कारि लाभ होता है। इसके अतिरिक्त पीयूषग्रंथि के अग्रिम खण्ड (Anterior pituitary) के ईस्ट्रोजन नियंत्रक अन्तः स्राव के संतुलित क्रिया व्यापार में भी विटामिन 'ई' अप्रत्यक्षतया सहायक होता है। गर्भकालीन विषमयता (Pregnancy toxaemia) में भी इसका प्रयोग उपयोगी होता है।

प्रजनन सम्बन्धी रोगों के अतिरिक्त विटामिन 'ई' का प्रयोग नाड़ी-अपजनन जनित रोगों (Degenerative nervous diseases) में तथा पेशीक्षय (Muscular dystrophy) की विभिन्न अवस्थाओं में भी किया जाता है। इसीसे अपुष्ट पेशिक पार्श्व जरठता (Arryotrophic lateral sclerosis) रोग में इसके सेवन से बहुत लाभ होता है। उपर्युक्त व्याधियों के निवारण हेतु प्रारम्भ में कतिपय दिन तक २५ मिलिग्राम मात्रा दिन में ३ बार दी जाती है, और तदनु १० मिलिग्राम प्रतिदिन की धारक-मात्रा (Maintenance dose) कुछ दिनों तक बराबर चालू रखी जाती है।

सम्प्रति विटामिन 'ई' का प्रयोग श्लेषजनोत्कर्ष (Collagenosis) जनित अनेक विकारों—यथा अयक्ष्मजत्वगुर्धिरवर्णता (Lupus erythematosis), खरचर्मता (Scleroderma) एवं चर्मपेशी शोथ (Dermatomyositis) आदि—में भी किया जाने लगा है। एतदर्थ कम से कम २०० मिलिग्राम की दैनिक मात्रा अपेक्षित होती है।

विटामिन 'ई' का उपयोग कतिपय वाहिनी रोगों में भी किया जाता है। अतएव विलोपकरघनास्रवाहिनी शोथ (Thromboangiitis obliterans), रेनाड का रोग (Raynaud's disease) एवं हार्दिक धमनी की कार्याक्षमता (Coronary in-

sufficiency) में २० मिलिग्राम प्रिस्कोलीन (priscoline) के साथ ७५ मिलिग्राम अल्फा-टोकोफेरॉल एसिटेट मिलाकर दिन में ४ बार देने से बहुत उपकार होता है।

टोकोफेरिलिस एसिटास Tocopherylis Acetas (Tocoph. Acet.) B. P. C.—ले०; टोकोफेरिल एसिटेट (Tocopheryl Acetate)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{३१} H_{५२} O_3$.

प्राप्ति-साधन—यह नैसर्गिक रूप से (acetate of natural a-tocopherol) सोयाबीन तेल से प्राप्त होता है, अथवा रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से (*Synthetic* (±)-a-tocopherol) प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह हल्के सुनहले रंग का गाढ़ा द्रव होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—एसिटोन में फौरन घुल जाता है। इसके अतिरिक्त क्लोरोफार्म तथा ईथर में भी घुलता है। अल्कोहल् में भी घुलता है।

मात्रा—३ से १० मि० ग्रा० ($\frac{१}{२०}$ से $\frac{१}{६}$ ग्रेन)। बाजार में इसकी ३ मि० ग्रा० की टिकिया एफिनल या विटिओलिन के नाम से मिलती है।

गुण एवं प्रयोग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर अधिक से अधिक आधा हिस्सा ही शोषित होता है। लगभग ५०% भाग मल के साथ उत्सर्गित हो जाता है। शोषणोपरान्त शरीरगत सभी धातुओं में वितरित होता है, और विशेषतः मेदीय धातुओं (Adipose tissues) में संग्रहीत होता है। विटामिन 'ई' के सभी यौगिकों का प्रयोग मुख्यतः गर्भ को स्थिर करने के लिए किया जाता है। अतएव यह अप्रगल्भ प्रसव (Premature labour), आदती एवं सम्भावी गर्भस्राव (Habitual and threatened abortion) आदि में उपयोगी है। जिन रोगियों में अपरा की दुर्बलता के कारण इसका पृथक्करण समय से पूर्व होता है, उनमें भी विटामिन 'ई' उपयोगी है। एतदर्थ १०० मि० ग्रा० प्रतिदिन ३ बार दे सकते हैं। स्थिति सुधर जाने पर धारक मात्रा (Maintenance dose) १ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के अनुसार दिया जाता है। उपर्युक्त अवस्थाओं के अतिरिक्त पेशी दुष्पोष्यता (Muscular dystrophies), अपुष्ट-पेशिक पार्श्वजरठता (Amyotrophic lateral Sclerosis), पेशी शोथ (Fibrositis), त्वचा विकृति (Scleroderma) आदि में भी उपयोगी पाया जाता है।

विटामिन 'ई' के व्यावसायिक योगः—

१—जेल्सील्स एप्रोलिन Gelseals Eprolin; जेल्सील्स एप्रोलिन 'एस' Gelseals Eprolin 'S' (Lilly)—एप्रोलिन के ५० एवं १०० मि० ग्रा० के तथा एप्रोलिन 'S' के ५ मि० ग्रा० के। मात्रा—एप्रोलिन से ५० मि० ग्रा० वाले १–१२ तथा प्रतिदिन १०० मि० ग्रा० वाले १–६ जेल्सील प्रतिदिन। एप्रोलिन 'S' के २–१० जेल्सील प्रतिदिन।

२—गेहूँ का तेल (Wheat Germ Oil)। मात्रा—(१) प्रतिषेधात्मक (Prophylactic) ५ से १० सी० सी० प्रतिदिन। (२) चिकित्सार्थ—१० से २० सी० सी० प्रतिदिन। १ ग्राम तेल में

२ अन्तर्राष्ट्रीय युनिट (I. U.) विटामिन 'ई' की क्रियाशीलता होती है। क्रूक्स (Crookes) के ३ मिनम् के कैप्स्यूल आते हैं।

३—एविअन Erion (E. Merck) – इसके १०, ५० एवं १०० मि० ग्रा० के कैप्स्यूल (पेलेट् Pellets) तथा ३० एवं १०० मि० ग्रा० प्रति सी० सी० के १–१ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं।

४—फाइटोफेरोल कैप्स्यूल्स Phytoferol Capsules (Vitamin E. (B. D. H.)—इसके १० मि० ग्रा० एवं ५० मिलिग्राम के कैप्स्यूल्स आते हैं।

५—वाइ-एटल Vi—Etal (Vit: E—Wander)—इसके १२ मि० ग्राम के टॅबलेट्स एवं १ सी० सी० में ३० मि० ग्रा० बल के एम्पूल्स प्राप्त होते हैं।

६—टोकोफेरोलिसजेलेट Tocopherolis Gelet (Vit. E. Philips)—४७ मि० ग्रा० के जेलेट (कैप्स्यूल्स)।

७—विटामिन्डान ई (Vitamindon E (Indo-Pharma) इसकी टबलेट्स आती हैं। ३–१० टिकिया प्रतिदिन देनी चाहिए।

८—विटिओलिन Vitcolin (Glaxo)—यह विटामिन 'ई' का तैलीय विलयन होता है। इसके ६ मि० ग्रा० एवं ३० मि० ग्रा० के कैप्स्यूल्स (Capsules) आते हैं। मात्रा—आदती गर्भस्राव (Habitual Abortion) में पूरे गर्भावस्था में ६ मि० ग्रा० प्रतिदिन देना चाहिये। सम्भावी गर्भस्राव (Threatened Abortion) पहले २४–३० मि० ग्रा० प्रतिदिन तदनु ६ मि० ग्राम प्रतिदिन।

विटामिन 'के' (Vitamin K)

(जीवतिक्ति 'के')

पर्याय—कोआगुलेशन विटामिन "koagulation Vitamin" (रक्तस्कन्दन-जीवतिक्ति)।

वर्णन—यह भी एक वसा विलेय जीवतिक्ति है, जो नैसर्गिक रूप से विभिन्न शाकों (Vegetables) यथा अल्फाल्फा (Alfa-alfa), पालक (Spinach), गाजर के कोमल शाखाग्र, टमाटर एवं सोयाबीन के तेल तथा जानवरों के यकृत में पाई जाती है। पूतियुक्त (Putrified) मछली, धानकी भूसी तथा किलाट (Casein) में यह विटामिन काफी परिमाण में पाया जाता है। रक्तजमने की प्रक्रिया में यह विटामिन बहुत सहायक होता है, जिससे इसे 'koagulation Vitamin या रक्तस्कन्दन जीवतिक्ति' की संज्ञा ही दे दी गई है। विटामिन 'के' दो स्वरूपों में उपलब्ध होता है—(१) 'के$_1$ k_1' तथा विटामिन 'के$_2$' (Vitamin k_2)। रासायनिक दृष्टि से विटामिन के$_1$, 2—methyl—3—phytyl—1: 4—naphthaquinone होता है। यह पीले रंग के तैलीय द्रव के रूप में उपलब्ध होता है। इसका निर्माण रासायनिक संश्लेषण पद्धतिद्वारा कृत्रिम रूप से भी किया गया है। आंतों से विटामिन 'के' का शोषण होने के लिए पित्त की उपस्थिति आवश्यक होती है। अतएव शरीर में विटामिन की कमी, स्वयं विटमिन का अभाव होने से अथवा पित्त की कमी के कारण इसका शोषण ठीक तरह से न होने के कारण दोनों ही अवस्थाओं में हो सकता है।

एसिटोमिनेफ्थोनम् Acetomenaphthonum, B. P., एसिटोमिनेडिओनम् Acetomenadionum, I. P.—ले० ।

एसिटोमिनेफ्थोन (Acetomenaphthone), एसिटो मिनेडिओन (Acetomenadione)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{१५}H_{१४}O_{४}$.

पर्याय—केपिलोन ओरल Kapilon Oral ।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 1 : 4—dia—cetoxy—2—methylnaphthalene होता है । इसमें कम से कम ९८% $C_{१५}H_{१४}O_{४}$ होता है ।

वर्णन—सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन होता है अथवा कभी-कभी एसेटिक एसिड जैसी हल्की गंध आती है । विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble); ठंढे अल्कोहल् में थोड़ा-थोड़ा घुलता है । उबलते अल्कोहल् (९५%) में ३·३ भाग में घुलता है । मात्रा—२ से १० मि० ग्रा० ($\frac{१}{३०}$ से $\frac{१}{६}$ ग्रेन) ।

मिनेफ्थोनम् Menaphthonum (Menaphthon.) B. P., मिनेडिओनम् Menadionum (Menadion) I. P.—ले०; मिनेफ्थोन (Menaphthone) मिनेडिओन (Menadione)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{११}H_{८}O_{२}$.

पर्याय—केपिलॉन (Kapilon); प्रोकेविट (Prokyavit) ।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 2-methyl-1 : 4—naphthaquinone होता है, जिसमें कम से कम ९८·५% मिनेफ्थोन ($C_{११}H_{८}O_{२}$) होता है । मिनेफ्थोन चमकीले पीले रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है । श्लैष्मिक कलाओं (Mucous membranes) एवं त्वचा पर अत्यन्त क्षोभक प्रभाव करता है ।

विलेयता—जल में तो अविलेय होता है; किन्तु अल्कोहल (९५%) में थोड़ा-थोड़ा घुल जाता (*Slightly Soluble*) है । स्थिर तैल (*Fixed oil*) में ५० भाग में विलेय होता है ।

मात्रा—१ से ५ मि० ग्रा० ($\frac{१}{६०}$ से $\frac{१}{१२}$ ग्रेन) प्रतिदिन पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा ।

मेनाडिओनाइ सोडियाइ बाइसल्फिस Menadioni Sodii Bisulphis (Menadion. Sod. Bisulph.) I. P.—ले०; मेनाडिओन सोडियम् बाइसल्फाइट (Menadione Sodium Bisulphite)—अं० ।

रासायनिक संकेत: $C_{११} H_{८} O_{२}$, $NaHSO_{3}$, $3H_{2} O$.

पर्याय—हाइकिनोन (Hykinone) ।

वर्णन—यह मिनेफ्थोन या मेनाडिओन का सोडियम् डाइसल्फाइट साल्ट होता है, जो सफेद क्रिस्टलाइन एवं गंधहीन तथा उन्दचूष (Hygroscopic) चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है । विलेयता—जल में तो घुलनशील है; किन्तु अल्कोहल् (६५%) में थोड़ा-थोड़ा ही घुलता है और ईथर तथा बेंजीन में तो बिल्कुल ही नहीं घुलता । मात्रा—१ से २ मि० ग्रा० ($\frac{१}{६०}$ से $\frac{१}{३०}$ ग्रेन)—पेशीगत या शिरागत इन्जेक्शन द्वारा ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

विटामिन 'के' की नैसर्गिक प्राप्ति आहार के द्वारा होती है। किन्तु इसके प्रचूषण के लिए आंत्रों में पित्त की उपस्थिति आवश्यक होती है। पित्त के अभाव में विटामिन 'के' तथा अन्य सभी वसा-विलेय जीवतिक्तियों (Fat-Soluble Vitamins) का प्रचूषण समुचित रूप से नहीं होता तथा परिणामतः उनके अभावजन्य उपद्रवों की उत्पत्ति होती है। विटामिन 'के' के अभाव में रक्त में पूर्व घनास्नि की अल्पता (Hypoprothrombinaemia) होती है, जिससे रक्तस्कन्दनकाल विलम्बित हो जाता है। अतएव रक्तस्राव होने पर जल्दी रुकता नहीं। किन्तु विटामिन 'के' की रक्तस्कन्दन क्रिया के लिए यकृत का स्वस्थावस्था में रहना आवश्यक है। अतएव सभी रक्तस्रावी अवस्थाओं (Haemorrhagic state) में, जिनमें यकृत में कोई विकृति न हो विटामिन 'के' का प्रयोग विशेष उपयोगी होता है। अवरोधजन्य कामला (Obstructive Jaundice) तथा विलियरी फिस्चुला जन्य रक्तस्राव तथा नवजात शिशु के रक्तस्रावी रोगों में विटामिन 'के' का प्रयोग लाभप्रद सिद्ध होता है। एतदर्थ प्रसव के कई दिन पूर्व से प्रतिदिन ५ से १० मि० ग्रा० विटामिन 'के' मुख द्वारा माता को सेवन कराया जाता है। अथवा प्रसव के प्रारम्भ में ही ५ से १० मि० ग्रा० मिनेफ्थोन का एक इन्जेक्शन पेशी में दे दिया जाता है। इससे सम्भावी शिशु की रक्तस्राव प्रवृत्ति का नियंत्रण हो जाता है; अथवा यदि माता को औषधि सेवन करानी अभीष्ट न हो तो, शिशु को १ मि० ग्रा० मिनेफ्थोन का पेशिगत इन्जेक्शन दिया जा सकता है, अथवा मुखद्वारा एसिटोमिनेफ्थोन दे सकते हैं।

जिन औषधियों के सेवन से अथवा अन्य कारणों से रक्त में पूर्व घनास्नि की कमी (Hypoprothrombinaemia) का उपद्रव होता है, उनमें विटामिन 'के' का प्रयोग उपयोगी होता है। किन्तु उक्त विकृति यदि यकृत की खराबी के कारण हो, अथवा वंशानुगत हो तो उसमें विटामिन चिकित्सा बहुत सफल नहीं होती।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ मिनेफ्थोनाइ Injectio Menaphthoni (Inj. Menaphthon.) B. P., इन्जेक्शिओ मिनेडिओनाइ Injectio Menadioni (Inj. Menadion.) I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव मिनेफ्थोन, इन्जेक्शन ऑव मिनेडिओन—अं०। एथिल ओलिएट या अन्य उपयुक्त तैल में बनाया हुआ मिनेफ्थोन का सोल्यूशन होता है। मात्रा (मिनेफ्थोन) १ से ५ मि० ग्रा० प्रतिदिन पेशीगत सूचिका भरण द्वारा। सोल्यूशन के बल का उल्लेख न होने पर १ मि० लि० या १ सी० सी० में ५ मि० ग्रा० के बल का सोल्यूशन दिया जाता है।

२—टॅबेली एसिटोमिनेफ्थोनाइ Tabellae Acetomenaphthoni (Tab. Acetomenaphthon.) B. P.; टॅबेली एसिटोमिनेडिओनाइ Tabellae Acetomenadioni, I. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव एसिटोमिनेफ्थोन, टॅबलेट्स ऑव एसिटोमिनेडिओन—अं०। मात्रा—२ से १० मि० ग्रा० ($\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन)। मात्रा का उल्लेख न होने पर ५ मि० ग्रा० की टॅबलेट्स देनी चाहिए।

३—इन्जेक्शिओ मेनाडिओनाइ सोडिआइ बाइसल्फिटिस Injectio Menadioni Sodii Bisulphitis (Inj. Menadion. Sod. Bisulphit.) I. P.—ले०, इन्जेक्शन ऑव मेनाडिओन सोडियम् बाइ-

सल्फाइट Injecton of Menadione Sodium Bisulphite—अ॰। इसका संग्रह अच्छी तरह मुंह बंद एक मात्रिक एम्पूल्स (Single-dose hermetic containers) में करना चाहिए।

मात्रा—१ से २ मि० ग्रा०।

(नॉट्-ऑफिशल)

सिनकेविट सोडियम् डाइफास्फेट Synkayvite Sodium Diphosphate। पर्याय-मेनाडिओल सोडियम् डाइफास्फेट (Menadiol Sodium Diphosphate)।

रासायनिक दृष्टि से यह Hexa-hydrate of the tetrasodium salt of 2—methyl-1: 4—Naphthalene-diol diphosphate होता है। या गुलाबी रंग का या हल्के भूरे रंग का चूर्ण होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है। नमी में खुला रहने से आर्द्रता को सोखता है। यह जल में खूब अच्छी तरह घुल जाता है, किन्तु अल्कोहल् में नहीं घुलता। जलविलेय होने कारण मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र से पित्त की अनुपस्थिति में भी शोषित हो जाता है। इसकी क्रिया मेनोफ्थोन की ही भाँति समझनी चाहिए। किन्तु प्रायः तिगुनी मात्रा देनी पड़ती है।

फाइटोनेडिओन (Phytonadione)।

पर्याय—मेफिटोन (Mephyton); विटामिन 'के'।

यह पीले रंग का गाढ़ा द्रव होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। जल में तो यह नहीं घुलता किन्तु अल्कोहल्, बेंजीन तथा वानस्पतिक तेलों में घुल जाता है। हवा में खुला रहने से तो नहीं विगड़ता किन्तु प्रकाश के प्रभावसे विकृत हो जाता है। अन्य यौगिकों की अपेक्षा इसका प्रभाव जल्दी एवं दूसरों की अपेक्षा अधिक तीव्र तथा चिरस्थायी होता है। रक्त में पूर्वघनास्रि की कमी होने पर (Hypoprothrombinaemiā) में विशेष उपयोगी है।

विटामिन 'के' के व्यावसायिक योग—

१—केपेलिन Kapalin (Glaxo)

२—प्रोकेविट Prokayvit (B. D. H.)—इनके १-१ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं, जिनमें ५ मिलिग्राम औषधि होती है। पेशीगत सूई (Intramuscular injection) लगाते हैं।

३—प्रोकेविट (मौखिक प्रयोग के लिए) Prokayvit Oral।

४—एसीटो मेनेफ्थोन Acetomenopthone (Boots)—१० मिलिग्राम की टॅबलेट्स आती हैं। मुखद्वारा।

५—सिंकामेनSynkamen (Amino-methyl-naphthol)—१ मिलिग्राम की १-१ सी० सी० की एम्पूल्स। मात्रा—१ से ५ मिलिग्राम पेशीगत या शिरागत इन्जेक्शन द्वारा।

—:०:—

प्रकरण २

सुक्रोजम् Sucrosum (Sucros.) I. P., B. P.

(खण्डशर्करा)

रासायनिक संकेतः $C_{12}H_{22}O_{11}$

पर्याय—सक्करम् प्योरिफिकेटम् **Saccharum Purificatum**; रिफाइन्ड सूगर **Refined Sugar**; केन सूगर **Cane Sugar**; सिता, शर्करा, चीनी—सं०, हिं० ।

प्राप्ति-साधन—यह ईख के रस (Sugar-Cane juice) या मीठे चुकन्दर (Sugar-beet) से प्राप्त किया जाता है ।

वक्तव्य—हिन्दुस्तान में गन्ने की खेती बहुत प्राचीन काल से होती आ रही है । भारतीय चिकित्सक खण्ड शर्करा का औषधीय प्रयोग अति प्राचीन काल से करते आरहे हैं । यूनानी चिकित्सा में शर्करा का प्रवेश सम्भवतः भारतवर्ष से ही हुआ है ।

स्वरूप—यह रंगहीन मणिभ (Colourless crystals) या मणिभीय टुकड़े (Crystalline masses) या सफेद चूर्ण के रूप में होता है । यह जल में सुविलेय होता है । यह प्रायः सभी सिरप्स (Syrups) के निर्माण में पड़ता है ।

सिरपस **Syrupus (Syr.) I. P., B. P.**—ले०; सिरप **(Syrup)**—अं०; शर्बत—हिं० । यह सुक्रोज (६६·७%) का परिस्रुत जल में घोलकर चाशनी लेकर बनाया जाता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

शर्करा एक उत्तम आहार (**Food**) है । आंतों द्वारा क्षिप्रतापूर्वक शोषित होकर शरीरोपयोगी रूप में परिवर्तित हो जाता है । आवश्यकता से अधिक शर्करा शरीर में वसा के रूप में सञ्चित होती है । अतएव क्षयकारक अवस्थाओं में जल्दी से ताकत लाने के लिए यह एक उपयोगी द्रव्य है । यह स्नेहन (**Demulcent**) होता है तथा इसकी चाशनी बनाकर उसमें रखी हुई चीजें बिगड़ती नहीं । अनेक मुरब्बे, गुलकन्द औषधीय शर्बत, पानक आदि कल्प इसी आधार पर बनाए जाते हैं । अरुचिकारक औषधियों को सुस्वादु बनाने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है ।

शर्करा मूत्रल (**Diuretic**) भी होती है । शिरोगत आघात से मस्तिष्कान्तर्गत भार (**Intra-cranial pressure**) को कम करने के लिए शिरागत मार्ग द्वारा इसका उपयोग किया जाता है । एतदर्थ सुक्रोज (**Sucrose**) के ५०% विलयन की लगभग १०० मिलिमिटर (३½ औंस) मात्रा पर्याप्त होती है ।

लेक्टोजम् Lactosum (Lactos.) I. P., B. P.

(दुग्धशर्करा)

रासायनिक संकेत $C_{12}H_{22}O_{11}H_2O$.

पर्याय—सॅक्केरम् लेक्टिस Saccharum Lactis; मिल्क सूगर Milk Sugar; लेक्टोस (ज) Lectose; दुग्ध शर्करा--सं०। यह छेने के पानी (Whey of milk) से प्राप्त किया जाता है।

स्वरूप—यह श्वेत मणिमीय चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचिन्मधुर होता है। विलेयता--७ भाग ठंढे जल में १ भाग विलेय होता है। गर्म जल में अपेक्षाकृत अधिक विलेय होता है। अल्कोहल् (९०%) में प्रायः अविलेय होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

लेक्टोज एक उत्तम पोषक-द्रव्य है और चीनी (सुक्रोज) की अपेक्षा कम मीठा होने से इसका व्यवहार अधिक किया जाता है। यह तीव्रमूत्रल होता है, जिससे हृद्विकार एवं वृक्कों की विकृति से उत्पन्न होनेवाले शोफ (Dropsy) में इसका व्यवहार बहुत उपयोगी होता है। शर्करा की अपेक्षा यह हल्का तथा सुपाच्य होता है तथा उदर में आध्मान आदि की आशंका भी इसमें बहुत कम होती है। अतएव बच्चों को पिलाये जाने वाले गाय के दूध से शर्करा के स्थान में इसी को डालना चाहिए। शिशुओं के उदरविकार में औषधिके साथ अनुपान रूप में लेक्टोज का व्यवहार अधिक श्रेयस्कर है। प्रसव (Labour pains) में सहायक होने के कारण आधा पाइन्ट दूध में ५½ से ७ ड्राम की मात्रा में लेक्टोज मिलाकर दिया जाता है।

डेक्स्ट्रोजम् Dextrosum (Dextros.) I. P., B. P. डेक्टट्रोज Dextrose (द्राक्षशर्करा)।

रासायनिक संकेत : $C_6 H_{12} O_6$

पर्याय—एन्हाइड्रस डेक्सट्रोज AnhydrousDextrose; ग्रेप सूगर Grape Sugar; द्राक्षशर्करा—सं।

वर्णन—डेक्स्ट्रोज सफेद मणिमीय या दानेदार चूर्ण के रूप में होता है, जो स्टार्च (Starch) से जलांशन (Hydrolysis) द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह गंध हीन तथा स्वाद में मधुर होता है। यह एक से कम भाग जल में, ५० भाग ठंढे अल्कोहल् (९०%) तथा उबलते हुए अल्कोहल् के ५ भाग में विलेय होता है।

डेक्स्ट्रोजम् हाइड्रेटम् Dextrosum Hydratum (Dextros Hyd.) I. P., B. P.—ले०; मेडिसिनल डेक्स्ट्रोज Medicinal Dextrose, प्योरिफाइड डेक्स्ट्रोज Purified Dextrose—अं०; डेक्स्ट्रोज मॉनो हाइड्रेट Dextrose Monohydrate-रासायनिक।

वर्णन—यह भी स्टार्च से जलांशन (Hydrolysis) द्वारा प्राप्त किया जाता है तथा रंग हीन मणिम, अथवा सफेद या क्रीमी रंग के(Cream-coloured) मणिमीय या दानेदार चूर्ण के

रूप में होता है, जो प्रायः गंध हीन तथा स्वाद में मधुर होता है। यह १ भाग से कम जल में तथा ५० भाग अलकोहल् (९०%) में विलेय होता है।

ग्लूकोजम् लिक्विडम् Glucosum Liquidum (Glucos. Liq.) I. P., B. P. —ले०; लिक्विड ग्लूकोज Liquid Glucose—अं०। पर्याय—कॉर्न सिरप (Corn Syrup)

वर्णन—लिक्विड ग्लूकोज स्टार्च के जलांशन द्वारा प्राप्त किया जाता है, और डेक्स्ट्रोज, माल्टोज, डेक्सट्रिन तथा जल का मिश्रण होता है। यह गाढ़े चिपचिपे (Viscous) रंगहीन तथा मधुर द्रव के रूप में होता है। यह अल्कोहल् (९०%) में अंशतः किन्तु जल में सुविलेय होता है।

यह फेरी कार्बोनास सेक्केरेटस (Ferri Carbonas Saccharatus) नामक यौगिक का एक उपादान है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मुखद्वारा डेक्स्ट्रोज का सेवन किए जाने पर क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता तथा रक्त में पहुँचकर शरीरोपयोगी रूप में उपलब्ध होता है। अतएव जितनी जल्दी शोषित होता है, उतनी ही जल्दी जारित (Oxidised) भी होता है। इसको समुचित रूपसे जारित होने के लिए शरीर में मधुनिसूदनि (इन्सुलिन) नामक अग्न्याशयिक अन्तःस्राव की उपस्थिति आवश्यक है। इसके अभाव में ग्लूकोज का जारण समुचित रूप से नहीं होता। कार्बोज जातीय पदार्थों का अन्तिम रूपान्तर ग्लूकोज ही में होता है। वसा के सम्यक् जारण के लिए ग्लूकोज की उपस्थिति आवश्यक होती है और इसके अभाव में वसा का जारण सम्यग्रूपेण नहीं होता। और विभिन्न मेदसाम्लों (Fatty acids) की उत्पत्ति होती है, जो शरीर के लिए अवाञ्छित होते हैं। परिणामतः रक्त में अम्लोत्कर्ष (Acidosis) की उत्पत्ति होती हैं। सामान्यावस्था में ग्लूकोज का संचय मधुजनि (ग्लाइकोजन) के रूप में यकृत तथा पेशियों में होता रहता है, जो आवश्यकता पड़ने पर ग्लूकोज में रूपान्तरित होकर शारीरिक शक्ति (Energy) उत्पादन में व्यय होता रहता है। कहने का तात्पर्य ग्लूकोज शारीरिक क्रिया व्यापार को सम्पादित करने में सिक्के (Coins) की तरह कार्य करता है।

दीर्घकालिक ज्वरों-यथा आंत्रिक ज्वर में, जिनमें शारीरिक धातुओं का अत्यधिक क्षय होता है, ग्लूकोज एक उत्तम पोषक खाद्य होता है। आमाशयिक व्रण (Gastric Ulcer) में लवणजल के साथ बनाया हुआ ग्लूकोज का विलयन गुद-मार्ग द्वारा दिया जाता है। इससे व्रण के रोपण में सहायता मिलती है। मधुमेह में इन्सुलिन के मात्रातियोग (Overdose) के कारण उत्पन्न उपशर्कराभयता (Hypoglycaemia) के निवारण के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार मधुमेहज मूर्च्छा (Diabetic Coma) एवं शुक्तोत्कर्ष (Ketosis) में इन्सुलिन के साथ ग्लूकोज का सेवन बहुत उपयोगी होता है।

शिरामार्ग द्वारा ग्लूकोज का संकेन्द्रित विलयन प्रयुक्त करने से यह मूत्रल (Diuretic) प्रभाव करता है। ग्लूकोज के परमबल विलयन (Hypertonic Solution—२५%) का शिरागत सूचिका भरण करने से शरीरगत धातुओं से जल का अपकर्षण करने से, शरीर धातुगत

द्रवीय निपीड़ (Fluid Pressure) को कम करता है। अतएव मस्तिष्कान्तर्गत भारको कम करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। विषाक्तावस्थाओं (Toxaemias) में ग्लूकोज का शिरामार्ग द्वारा सूचिकाभरण करने से बहुत लाभ होता है। ग्लूकोज के ५% विलयन का शिरागत इन्जेक्शन रक्तराशि को बढ़ाने के लिए अनेक अवस्थाओं में किया जाता है। शल्यकर्म जन्य स्तब्धता (Shock), विषूचिकाजन्य निपात (Collapse of Cholera), शरीर से अत्यधिक द्रवापकर्ष होने पर (Dehydration), तथा औपसर्गिक ज्वरों में रक्तवह संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव (Circulatory Stimulant) के लिए ग्लूकोज विलयन (५%) का शिरागत इन्जेक्शन बहुत उपयोगी होता है। हृद्भेद (Cardiac Failure) में ग्लूकोज विलयन में स्ट्रोफेन्थिन मिलाकर देना चाहिए।

ग्लूकोज के परमबल विलयन (Hypertonic Solution) के सूचिकाभरण से, शरीर धातुओं में स्थित विषाक्त द्रव्यों के निर्हरण में सहायता होती है। इसके अतिरिक्त यह शोफ (Oedema) का भी निवारण करता है और शरीर धातुओं में ग्लूकोज के संग्रह करने की क्षमता बढ़ जाती है।

ग्लूकोज के सेवन से विषैले पदार्थों का यकृत पर कुप्रभाव नहीं होने पाता। जिन व्यक्तियों में यकृत विकृत हो तो दीर्घकालिक शल्य कर्म के पूर्व ग्लूकोज का इन्जेक्शन दे दिया जाता है।

वक्तव्य—ग्लूकोज-सॉल्यूशन के विभिन्न बल के एम्पूल्स बाजार में उपलब्ध होते हैं।

(डेक्स्ट्रोज के ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ डेक्स्ट्रोसाइ Injectio Dextrosi (Inj. Dextros.) I. P., B. P.—ले; इन्जेक्शन ऑव डेक्स्ट्रोज Injection of Dextrose—अं०। यह परिस्रुत जल (Water for injection) में बनाया हुआ डेक्स्ट्रोज का विशोधित (Sterile) विलयन होता है, जो स्वच्छ रंगहीन अथवा हल्के तृणरंग का (faintly Straw-coloured) द्रव होता है। यदि इन्जेक्शन ऑव डेक्स्ट्रोज में सोल्यूशन के बल का उल्लेख न हो तो ५% (w/v) सोल्यूशन देना चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ सोडियाइ साइट्रेटिस कम् डेक्स्ट्रोसो Injectio Sodii Citratis cum Dextroso (Inj. Sod. Cit. c. Dextros.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सोडियम् साइट्रेट विद डेक्स्ट्रोज Injection of Sodium Citrate with Dextrose—अं०। सोडियम् साइट्रेट २० ग्राम, डेक्स्ट्रोज २० ग्राम, परिस्रुत जल (Watre for injection) आवश्यकतानुर १००० मि० लि० के लिए।

(नॉट-ऑफिशल)

१—इन्जेक्शिओ डेक्स्ट्रोसाइ फोर्टिस Injectio Dextrosi Fortis (Inj. Dextros. Fort.) B. P. C.—ले०, स्ट्रांग इन्जेक्शन ऑव डेक्स्ट्रोज (Strong Injection of Dextrose)—अं०। डेक्स्ट्रोज ५० ग्राम, परिस्रुत जल (Water for injection) १०० मि० लि०। यदि प्रति एम्पूल सोल्यूशन की मात्रा का निर्देशन हो तो ५० मि० लि० या ५० सी० सी० के एम्पूल्स देने चाहिए।

(ग्लूकोज का योग)

१—सिरपस ग्लूकोजाइ लिक्विडाइ Syrupus Glucosi Liquidi (Syr. Glucos. Liq.), I. P.—ले०; सिरप ऑव लिक्विड ग्लूकोज; सिरप ऑव ग्लूकोज,—अं०। ३३·३% ग्लुकोज।

लीव्यूलोजम् (लीव्युलोज) I. P.

रासायनिक संकेत : $C_6H_{12}O_6$.

नाम—लीव्यूलोजम् Laevulosum (Lāevulos.)—ले०; लीव्यूलोज Laevulose—अं०; वामधु—सं० । पर्याय—फ्रक्टोज (Fructose) ।

लीव्यूलोज सफेद या क्रीम रंग का उन्दचूष (Hygroscopic) मणिभीय चूर्ण होता है, जो प्रायः गंध हीन तथा स्वाद में मधुर होता है । यह जल में सुविलेय होता है !

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

खण्ड शर्करा की अपेक्षा लीव्यूलोज अधिक मधुर तथा सुपाच्य होता है । यह अन्य शर्करा की अपेक्षा अधिक क्षिप्रतापूर्वक जरित हो जाता है । अतएव अनेक क्षयकारक व्याधियों (Wasting diseases) तथा मधुमेह (Diabetes mellitus) के लिए यह एक उत्तम एवं उपयुक्त खाद्य है । स्वस्थ व्यक्तियों में, जिसमें यकृत विकृत न हो मुखद्वारा अधिक मात्रा में भी प्रयुक्त होने पर ग्लूकोज आदि अन्य शर्करा की भांति रक्तगत शर्करा का सन्केन्द्रण अधिक नहीं होता, क्योंकि अन्त्रों से प्रचूषित लीव्यूलोज का कुछ भाग तुरन्त जारित हो जाता है, शेष यकृत में ग्लाइकोजन के रूप में संचित हो जाता है । चिकित्सार्थ लिव्यूलोज का प्रयोग प्रायः नहीं किया जाता । इसका मुख्य उपयोग यकृत की कार्यक्षमता (Liver efficiency) के परीक्षण के लिए किया जाता है । इसके लिए रोगी को १२ घंटे तक कोई आहार नहीं दिया जाता । तदनु प्रातःकाल खाली पेट पर ५० ग्राम (१½ औंस) लीव्यूलोज ४–५ औंस पानी में घोल कर रोगी को दिया जाता है । २ घंटे तक प्रत्येक आधे-आधे घंटे पर रक्तगत शर्कर की प्रतिशतक मात्रा का परीक्षण किया जाता है । यदि यकृत विकृत न होगा, तो रक्तगत संकेन्द्रण किसी भी हालत में ०·१४% से अधिक नहीं होना चाहिए ।

जिलेटिनम् (जिलेटिन) I. P., B. P. Gelatinum (Gelat.); Gelatin - (अं) ।

प्राप्ति-साधन—जिलेटिन एक प्रकार का प्रोटीन होता है, जो श्लेषजनीय द्रव्यों (Gollagenous material) से प्राप्त किया जाता है ।

वर्णन—जिलेटिन के रंग हीन या हल्के पीले रंग के पारभासी चद्दरनुमा टुकड़े (Sheets), तार (Shreds) अश्रुवत दाने (Granules) या चूर्ण होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध एवं स्वाद होता है । ठंढेजल में यह अविलेय होता है, किन्तु पानी में भिगोने पर जल को सोखने (५ से १० गुना जल) से फूल जाता है । गर्म जल में यह घुलजाता है, और उक्त विलयन ठंढा होने पर जेली (Gelly) की भांति अर्धघन स्वरूप का हो जाता है । अल्कोहल् , सॉलवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में यह अविलेय होता है ।

जिलेटिन के उपयोग (Uses) ।

अनेक पेस्ट, सपाँजिटरी, पेसरी, बूजीज, डिस्क एवं जिलेटिन कैप्स्यूल्स (Gelatin Capsules) के निर्माण में जिलेटिन एक प्रमुख आधार-द्रव्य (Basis) होता है । अनेक औषधीय गुटिकाओं (Pills) के अवगुण्ठन (Coating) के लिए भी यह व्यवहृत होता है ।

रक्त-स्तम्भक (Haemostatic) होने के कारण आभ्यन्तर मार्ग द्वारा जिलेटिन का प्रयोग कभी-कभी आन्तरिक रक्तस्रावों (Internal haemorrhages)में किया जाता है। इसके श्लेषामीय गुण (Colloidal value) के कारण जिलेटिन का उपयोग स्तब्धता (Shock) एवं निपात (Collapse) में किया जाता है। एतदर्थ उक्त व्याधियों में प्रयुक्त होने वाले लवण-द्रव (Saline infusion) में जिलेटिन मिला देते हैं। चूँकि जिलेटिन में २५% ग्लिसरिन होता है, अतएव इसका प्रयोग गम्भीर पेश्यवसन्नता (Myasthenia gravis) तथा पेशीदुष्पोष्यता (Muscular dystrophy)में उपयोगी होता है।

(ऑफिशल-योग)

१—जिलेटिनम् जिंसाइ Gelatinum Zinci–इसको अन्नाज पेस्ट Unna's Paste भी कहते हैं। इसमें जिंक ऑक्साइड तथा जिलेटिन प्रत्येक १५% होता है।

२—जिलेटिन ग्लिसरिन सपॉजिटरी में पड़ता है।

इन्जेक्शिओ प्रोटिनियाइ हाइड्रोलिसेटी Injectio Proteini Hydrolysati (Inj. Prot. Hydrolysat) I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट **Injection of Protein Hydrolysate**—अं०।

पर्याय—पेप्टोन सोल्यूशन (**Peptone Solution**); एमिजन (**Amigen**)।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—यह भूरापन लिए लाल रंग का स्वच्छ द्रव होता है, जिसमें मांसकी सी गंध आती है, तथा विशिष्ट प्रकार का स्वाद पाया जाता है। लिटमस सोल्यूशन में साधारण आम्लिक होता है। यह प्रोटीन के जलांशन (Hydrolysis) से प्राप्त विभिन्न तत्वों का मिश्रण होता है, जिसमें प्रधानतम घटक एमिनो-एसिड्स होते हैं। इसमें लवण भी मिलाया जाता है। लवण या सोडियम् क्लोराइड ०'९% तथा नाइट्रोजन की टोटल मात्रा ०'७५ से ०'८८% तक होती है।

मात्रा—२०० से ४०० मि० लि० (७ से १५ औंस) शिरागत इन्जेक्शन द्वारा। इन्जेक्शन बहुत धीरे-धीरे दिया जाता है, ताकि प्रतिमिनट केवल १ सी० सी० या मि० लि० दवा प्रविष्ट होती है।

प्रोटिनियाइ हाइड्रोलिसेटी Proteini Hydrolysati (oral)—(नॉट-आफिशल)। पर्याय—प्रोन्युट्रिन (**Pronutrin**); हाइड्रोलाइज्ड प्रोटीन—अं०।

यह भी जलांशन द्वारा विघटित प्रोटीन (Hydrolysed Protein) होता है, जो मौखिक सेवन के लिए उपलब्ध होता है। चूर्ण रूप में अथवा सोल्यूशन के रूप में आता है, जो रुचिकारक बना दिया जाता है। मात्रा—रोगी के शरीर भार एवं आवश्यकतानुसार।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—शरीर की आवश्यकताओं को देखते हुए प्रोटीन (प्रोभुजिन् या मांसजातीय पदार्थ) आहार का मुख्य घटक है। शारीरिक धातुओं (**Tissues**) की क्षतिपूर्ति (**Repair**) एवं नवीन धातुओं के निर्माण के लिए प्रोटीन परमावश्यक होता है। प्रयुक्त प्रोटीन की श्रेष्ठता तद्गत एमिनो-एसिड्स पर निर्भर करता है। अतएव रक्तगत प्रोभुजिनल्पता

(हाइपोप्रोटीनीमिया Hypoproteinaemia) की अवस्थाओं में पूरक चिकित्सा के रूप में प्रोटीनस यौगिकों का व्यवहार करना पड़ता है। एतदर्थ **प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट** परमोपयुक्त होता है। साधारण अवस्थाओं में इसका सेवन मुख द्वारा कराया जाता है। इसका स्वाद एवं गंध कम से कम शाकाहारियों को रुचिकारक नहीं होता। अतएव इसका सेवन दूध, फलरस या माल्टेड दूध में मिलाकर करना चाहिए। आत्ययिक अवस्थाओं में इसको **शिरागत मार्ग** द्वारा प्रयुक्त करते हैं। चूंकि इस योग में प्रोटीन पूर्वतः पाचित होती है, अतएव इन्जेक्शन देते ही शीघ्रतापूर्वक परिणाम होने लगता है। एतदर्थ ३-४ दिन तक प्रतिदिन एक इन्जेक्शन २०० सी० सी० (मि० लि०) की मात्रा में दिया जाता है। इन्जेक्शन के लिए विशिष्ट प्रकार का यंत्र (Haye's Pattern transfusion set) प्रयुक्त किया जाता है। इससे दवा धीरे-धीरे शिरा में चढ़ाई जाती है। २०० मि० लि० में कम से कम १ घण्टा समय लगना चाहिए। चिरकालीन उपवास से पोषण का अभाव होने से उत्पन्न निपात (Collapse) में हाइड्रोलाइज्ड प्रोटीन का इन्जेक्शन करने से तत्काल आयुष्यप्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त आमाशयिक एवं अग्न्याशयिक व्रण (Gastric and duodenal ulcer) के रोगियों को ३०० से ४०० ग्राम की मात्रा ८-६ मात्राओं में विभक्त करके मुख द्वारा सेवन कराने से शक्ति भी बनी रहती है और इसके पूर्व पाचित होने से इन अंगों पर कार्य भार भी नहीं पड़ने पाता। अत्यधिक रक्तस्राव (Severe haemorrhage) होने पर तथा यकृद्दाल्युदर (Hepatic Cirrhosis) एवं तरुण तथा चिरकालीन यकृच्छोफ (Acute and Chronic hapatitis) में भी हाइड्रोलाइज्ड प्रोटीन का सेवन उपकारक होता है। आहार विशेष के प्रति वैयक्तिक स्वभावजन्य असह्यता (Food idiosyncrasies) में भी आहार पूर्ति के लिए इसका व्यवहार किया जा सकता है।

अनिष्ट प्रभाव—इन्जेक्शन में जल्दी करने से कभी कभी शीतपित्ती एवं वाहिनी-नाड़ी शोथ (Angio neurotic oedema) आदि अनूर्जिक लक्षण (Allergic reactions) तथा इन्जेक्शन के स्थान में शोथ तथा ज्वर एवं हृल्लास (मिचली), वमन आदि उपद्रव भी प्रगट होते हैं। कभी कभी शिरा में घनास्रता (Venous thrombosis) भी हो जाता है।

ओवोलेसिथिन (Ovolecithin) या एग-लेसिथिन (Egg-lecithin)

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—नैसर्गिक रूप में मस्तिष्क में भी लेसिथिन प्रचुरता से पाया जाता है। व्यवहार में यह अंडे की जर्दी (Yolk of egg) से प्राप्त किया जाता है। ओवोलेसिथिन हल्के पीले रंग का मोम की भांति (Wax-like) पदार्थ होता है, जो जल में अविलेय (Insoluble) होता है। मात्रा—०·२ से ०·५ ग्राम (३ से ८ ग्रेन) मुख द्वारा।

गुण एवं प्रयोग—लेसिथिन नाड़ीबल्य (Nervine tonic) होता है तथा इसके प्रभाव से रक्त के लालकणों एवं हीमोग्लोबिन की मात्रा में भी वृद्धि होती है। लगातार इसका सेवन करने से शरीर भार भी बढ़ता है तथा स्वास्थ्य में सुधार होता है।

———

परिच्छेद २

यूरिक एसिड डायथिसिस (Uric-acid diathesis) अर्थात् मिहिकाम्ल-प्रवृत्ति में कार्यकर औषधियाँ—

कॉल्चिकम् Colchicum (विदेशी सूरंजान)

Family : Liliaceae (पलाण्डु-कुल)

प्राप्ति-साधन—कॉल्चिकम्, विदेशीय सूरंजान या कॉल्चिकम् ऑटम्नेल (Colchicum autumnale, Linn.) नामक क्षुद्र वनस्पति (Herb) के (१) ताजे पूर्णकन्द (Corm) अथवा बाहरी छिलका उतारकर आड़ेरूप से काटे कतरे (Sliced transversely) होते हैं; जिनको अधिक से अधिक ६५° तापक्रम पर सुखा लिया जाता है। (२) उक्त वनस्पति के शुष्क किए हुए पक्व बीजों का भी औषध्यर्थ व्यवहार होता है।

नाम । पूर्णकन्द (Corm)—कॉल्चिसाइ कार्मस् Colchici Cormus रेडिक्स कॉल्चिसाइ Radix Colchici I. P., B. P.—ले०; ऑटम्न क्रोकस कॉर्म Autumn Crocus Corm, कॉल्चिकम् रूट Colchicum Root, मेडो सैफ्रन कॉर्म Meadow Saffron Corm—अं०; कॉल्चिकम् कॉर्म Colchicum Corm—B. P. विदेशी (विलायती) कड़वा सूरंजान—हिं०।

बीज—कॉल्चिसाइ सेमेन Colchici Semen (Colch. Sem.)—ले०; कॉल्चिकम् सीड Colchicum Seed—अं०; विदेशी सूरंजान के बीज—हिं०।

वक्तव्य—दीसकूरीदूस कॉल्चिकम् उपजाति विशेष के विषाक्त प्रभाव से परिचित था। इसके फूल केशर के रंग के होते हैं, अतएव इसका एक अंगरेजी नाम 'Meadow Saffron, है। मसीही आदि पुराने अरबी हकीमों ने रंगभेद से सफेद, पीला तथा काला एवं स्वाद भेद से मीठा तथा कड़ुआ (तल्ख) सूरंजान का वर्णन किया है। उनकी राय में मीठा सूरंजान आभ्यन्तर प्रयोग के लिए तथा तल्ख सूरंजान विषैला होने के कारण बाह्यतः प्रयुक्त होनेवाले तैलों में डालने के लिए उपयुक्त होता है। आधुनिक खोजों से यह सिद्ध हुआ है कि चिकित्सोपयोग की दृष्टि से कड़वा सूरंजान ही उपयुक्त होता है। अरबी चिकित्सक कॉल्चिकम् के वातरक्त (Gout) व्याधि में विशेष उपयोग से परिचित थे। यूरोप में इसके औषधीय प्रयोग का प्रचार सम्भवतः अरबों के ही द्वारा हुआ प्रतीत होता है।

उत्पत्ति-स्थान—मध्य यूरप, इङ्गलैंड तथा उत्तरी अफरीका। वक्तव्य—यह औषधि भारतवर्ष में नहीं पाई जाती। पश्चिमी हिमालय के समशीतोष्ण प्रदेशों (Western temperate *Himalayas*) में इसके उत्पादन (Cultivation) का प्रयत्न किया जा सकता है। काश्मीर में कड़वे सूरंजान की एक दूसरी उपजाति, जिसे लेटिन में कॉल्चिकम् ल्यूटियम् (Colchicum luteum Baker) कहते हैं, पाई जाती है, जो गुण-कर्म की दृष्टि से विलायती सूरंजान की एक उत्तम प्रतिनिधि (Substitute) है। इसका वर्णन इसी प्रसंग में आगे किया जायगा।

वर्णन—कॉल्चिकम् के बहुवर्षायु छोटे-छोटे पौधे (Perennial herbs) होते हैं, जो नम स्थानों में (Moist meadows) में स्वयंजात पाये जाते हैं। इनमें भूमि के नीचे पूर्ण (Corm) लगता है, जिसके आधार से अनेक पतली-पतली जड़ें निकलती हैं। अगस्त-सितम्बर के महीने (Autumn) में कॉर्म (Corm) के आधार से पुष्पधारक दण्ड निकलता है। उक्त पुष्प पेरियन्थ ट्यूब (Perianth tube) के बढ़ने से भूमि के ऊपर निकल जाते हैं किन्तु गर्भाशय (Ovary) जमीन में ही रहती है। उक्त पुष्पधारक दण्ड का आधार तीन कोषाकार पत्तियों (Sheathing leaves) द्वारा आवृत रहता है। ये तीनों पत्तियाँ छोटे छोटे पर्वों (Internodes) द्वारा एक दूसरे से पृथक होती हैं और सबसे नीचे वाली पत्ती के अक्ष में आगामी वर्ष का पुष्पधारकदण्ड कलिका के रूप में सुरक्षित रहता है। वसंत ऋतु (Spring) में पत्तियों की वानस्पतिक वृद्धि होती है, जिससे कार्म का संचित खाद्य पदार्थ व्यय होकर उसका ह्रास हो जाता है किन्तु पुनः उसी से संलग्न दूसरे कार्म (Corm) की उत्पत्ति होती है। ग्रीष्म ऋतु में उक्त पत्तियाँ सूख जाती हैं; किन्तु इनका आधार भाग वाह्यावरण के रूप में नये कार्म को चारों ओर से आवृत किए रहती हैं। जून के महीने में फल आता है, जो त्रिकोष्ठीय सामान्य स्फोटी प्रकार का फल (Trilocular Capsule) होता है। पत्तियों के मुर्झा जाने के बाद (ग्रीष्म में) ही औषधि का संग्रह किया जाता है। कन्द से सूत्राकार निकली जड़ें काटकर साफ कर दी जाती हैं तथा कार्म को आवृत करने वाले भूरे शल्क पत्रों को हटा दिया जाता है। इस प्रकार प्राप्त कार्म औषधीय कॉल्चिकम् है। औषध्यर्थ पूरे कन्द को व्यवहृत करते हैं, आड़ेरूप से उसके कतरे काटकर शुष्ककर रख लेते हैं। बाजार में प्रायः सूरंजान के इसी प्रकार सुखाये हुए कतरे ही उपलब्ध होते हैं।

चित्र नं० १५।
विलायती सूरञ्जान (कॉल्चिकम् ऑटम्नेल) का पूरा पौधा।

कन्द (Corm)—कॉल्चिकम् का ताजा पूर्णकन्द (Fresh corm) प्रायः शंक्वाकार (Conical) होता है, जो ३–५ सेंटीमीटर लम्बा, २–३ सेंटीमीटर चौड़ा तथा लगभग २ सेंटीमीटर मोटा होता है। इसका एक तल चपटा (Flat) तथा दूसरा गोलाकार (Rounded) होता है। चपटे तल के आधार भाग में एक छोटा सा उथला खात (Shallow depression) होता है, जिसमें आगामी वर्ष के वायव्यकाण्ड एवं कन्द की जननी कलिका होती है। कन्द के शीर्ष (Apex) पर गत वर्ष के पुष्पधारक काण्ड का अवशेष (Remains) होता है तथा कन्द के शीर्ष से आधार तक (From the apex to the base) अनेक हल्की रेखायें दिखाई देती हैं, जो वाहिनी-पूलों (Vascular bundles) का द्योतक होती हैं। कन्द के मूल में टूटी हुई, अनेक सूत्राकार जड़ों के चिन्ह दिखाई देते हैं। ताजे कन्द पर दो शल्कीय आवरण चढ़े होते हैं, जिनमें वाह्य भूरे रंग का तथा आभ्यन्तर लाली लिए पीले रंग का होता है। ताजे कन्द को काटने से अरुचि कारक गन्धवाला स्टार्चयुक्त रस निकलता है, किन्तु सूखे हुए कन्द में प्रायः गंध नहीं होती किन्तु स्वाद में यह तिक्त अवश्य होता है।

कतरे (Slices)—कॉल्चिकम् के सुखाये हुए कतरे रूपरेखा (Outline) में प्रायः अनुवृक्काकार (Subreniform) या लट्वाकार, १–३ सेंटीमीटर लांबे, १–२ सेंटीमीटर चौड़े तथा २–५ मिलिमीटर मोटे होते हैं। इनके किनारे पीताभ भूरे रंग के होते हैं तथा इनको तोड़ने पर सूखे अदरक की तरह खट से टूटते हैं तथा धूल-सी निकलती है (Breaks with a short-mealy fracture)। ये टुकड़े गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त एवं उग्र (Acrid) होते हैं।

रासायनिक-संघटन—(१) कॉल्चिसीन (Colchicine) जो इसका सक्रिय अल्कलायड् है (०·२ से ०·४%) तथा (२) स्टार्च, रेजिन आदि।

असंयोज्यपदार्थ (Incompatibles)—कषाय द्रव्य (Astringents), टिंक्चर ऑव आयोडीन तथा ग्वायकम्।

चित्र नं० १६।
ख–सूरञ्जान कन्द का अनुलम्ब–विच्छेद (Longitudinal Section)।
क–पत्तियाँ तथा पक्व फल।
ग–बीज का अनुलम्ब–विच्छेद।
(१) नाभि (Hilum);
(२) स्ट्रोफिओल (Straphiole)
(३) भ्रूण (Embryo)।

कॉल्चिसाई सीमेन (कॉल्चिकम् सीड्स)
(सूरञ्जान के बीज) I. P.

वर्णन—यह कॉल्चिकम् ल्यूटियम् के सुखाये हुए पक्व बीज होते हैं, जिसमें कम से कम ०·३% कॉल्चिसीन होता। उक्त बीज भूरापन लिये सफेद रंग के होते हैं, जो जल में उबालने पर गाढ़े भूरे रंग के हो जाते हैं और बीज-चोल (Testa) आसानी से पृथक हो जाता है। बीजों में नाभि (Hilum) के पास एक छोटा नुकीला उत्सेध होता है।

रासायनिक-संघटन—(१) कॉल्चिसीन (०·३ से ०·६ प्रतिशत) तथा (२) एक स्थिर तैल (A fixed oil)।

कॉल्चिसाइ सेमिना पल्विस Colchici Semina Pulvis (Colch. Sem. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड कॉल्चिकम् सीड Powdered Colchicum Seed—अं०। यह भूरे रंग का चूर्ण होता है।

कॉल्चिसिना Colchicina (Colchicin.) I. P., B. P.—ले०; कॉल्चिसीन (Colchicine)—अं०।

वर्णन—कॉल्चिसीन एक क्षारोद (अल्कलायड) है, जो कॉल्चिकम् ऑटम्नेल नामक उपर्युक्त वनस्पति के कन्द तथा बीजों से प्राप्त किया जाता है। यह हल्के पीले रंग के मणिभ या विरूपिक सूक्ष्म पपड़ियों (Amorphous Scales) अथवा चूर्ण के रूप में होता है। यह प्रायः गंधहीन, स्वाद में तिक्त तथा प्रकाश में खुला रहने पर गाढ़े रंग का हो जाता है। जल, अल्कोहल् (९५%) तथा क्लोरोफॉर्म में सुविलेय तथा १६० भाग सालवेंट ईथर में विलेय होता है।

मात्रा—$\frac{1}{120}$ से $\frac{1}{60}$ या ०·५ से १ मिलिग्राम। पूर्णमात्रा (Total dose) $\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन या २ से ८ मिलिग्राम।

भारतीय सूरंजान

(Indian Colchicum) I. P.

नाम—सूरंजान—हिं०; सूरिंजाने तल्ख़—फा०; सूरिंजान–काश्मीर; कॉल्चिकम् ल्यूटिअम् Colchicum luteum Baker—ले०; काश्मीर या बिटर हर्मोडॅक्टिल Kashmir or bitter hermodactyl—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—अफगानिस्तान, तुर्किस्तान और उत्तर भारतवर्ष में पश्चिमी हिमालय के समशीतोष्ण प्रदेशों में पहाड़ों की ढालपर घासों के बीच, तथा मुरी की पहाड़ियों से काश्मीर और चंबा तक तथा पंजाब में इसके स्वयंजात पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं। श्रीनगर के आसपास तथा गढ़ी से बड़ा मुल्ला तक सड़क के किनारे के क्षेत्र में पुष्कल मात्रा में इसके पौधे देखने को मिलते हैं।

वक्तव्य—भारतीय सुरंजान, विलायती सुरंजान का उत्तम प्रतिनिधि-द्रव्य (Substitute) है। स्वरूप एवं रासायनिक संघटन में यह बहुत-कुछ विलायती जाति के समान होता है। इसके भी प्रायः वही सब योग (Preparations) टिंक्चर, एक्स्ट्रक्ट आदि बनते हैं, जो विलायती सूरंजान से बनाये जाते हैं और जिसका वर्णन पहले हो चुका है। अतएव भारतीय चिकित्सकों को विलायती सूरंजान के योगों के स्थान में भारतीय उपजाति को ही व्यवहृत करना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—बाह्य प्रयोग से त्वचा एवं श्लैष्मिक-कला (Mucous memberane) पर लगाने से यह स्थानिक क्षोभक (Local irritant) होता है, जिससे उक्त स्थान पर लाली (Redness) एवं वेदना उत्पन्न हो जाती है। उक्त गुण-कर्म के कारण चिकित्सा में इसका उपयोग कॉल्चिसीन आयण्टमेंट (Colchicine Ointment)—१०० ग्राम लेनोलिन

(Lanoline) में ०·०५ कॉल्चिसीन) के रूप में जननेन्द्रिय कर्णार्बुद (Vulval papillomata) में किया जाता है। एतदर्थ उक्त मलहम की २ सी० सी० मात्रा सुबह शाम प्रयुक्त की जाती है। इसी प्रकार १ महीने तक लगातार प्रातः सायं उक्त मलहम को लगाते हैं।

आभ्यन्तर—मुख द्वारा अधिक मात्रा में सेवन करने पर आमाशयान्त्र प्रणाली पर यह तीव्र क्षोभक प्रभाव करता है, जिसके परिणाम स्वरूप **वमन तथा अतिसार** (Vomiting and diarrhoea) उत्पन्न होते हैं। उक्त प्रभाव सम्भवतः प्राणदा नाड़ी के परिसरीय-अंगों (Peripheral vagal-endings) की उत्तेजना (Excitation) के कारण होते हैं, क्योंकि आट्रपीन के द्वारा उक्त लक्षणों का शमन हो जाता है। यद्यपि कॉल्चिसीन की क्रिया बहुत-कुछ पाइलोकार्पीन (Pilocarpine) की भांति होती है, जिससे कॉल्चिसीन के प्रभाव से श्वास-प्रणालिकाओं (Bronchioles), गर्भाशय एवं प्लीहा के पेशी सूत्रों की आकुञ्चन गति (Muscular Contraction) में वृद्धि ही होती है, किन्तु हृदय एवं ग्रंथियों (Glands) के नाड्यग्रों (Nerve-terminals) पर कॉल्चिसीन के प्रभाव पाइलोकार्पीन की भांति नहीं होते, यह दोनों का अन्तर है।

केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान (Central Nervous System)—पर यह मन्द-मन्द विषाक्त-प्रभाव (Toxic action) करता है, जिससे क्रियातियोग की अवस्था में संज्ञावह (Sensory) एवं चेष्टावह (Motor) दोनो प्रकार की नाड़ियों का घात (Paralysis) होता है। मृत्यु प्रायः श्वसन एवं वाहिनी-विस्फारक (Vasomotor) केन्द्रों (Centres) के आघात (Failure) से होती है।

रक्तवह-स्थान पर साधारणतया तो इसकी कोई विशिष्ट क्रिया नहीं होती, किन्तु विषाक्त-मात्राओं में रक्तसंवहन पर अवसादक (Depressant) प्रभाव होता है, जिससे रक्तभार गिर जाता हैं, नाड़ी द्रुतगतिवाली तथा क्षीण (Feeble and rapid) एवं मृदु (Soft) हो जाती है। **श्वेतकणों** (Leucocyte) पर कॉल्चिसीन का विशिष्ट प्रभाव होता है। पहले तो एक-दो घन्टे तक श्वेतकायाणुओं की संख्या में अस्थायी रूप से कमी (Leucopoenia) दिखाई देती है, किन्तु तदनु श्वेतकायाणूत्कर्ष (Leucocytosis) होता है। उनमें भी विशेषतः बह्वाकारी प्रकार के श्वेतकण (Polymorphonuclear) ही प्रभावित होते पाये जाते हैं। संभवतः उक्त प्रभाव कॉल्चिसीन जन्य आमाशयान्त्र प्रदाह के ही कारण होता है।

श्वसन-संस्थान पर कॉल्चिसीन **तीव्र अवसादक** (Depressant) प्रभाव करता है, जिससे श्वसन मंद पड़ जाता है, और अन्ततः **श्वसनभेद** (Respiratory failure) होने से मृत्यु तक हो जाती है।

वृक्कों (Kidneys) पर इसकी क्रिया भिन्न भिन्न रोगियों में विभिन्न प्रकार की दिखाई पड़ती है। किन्हीं में अमूत्रता (Anuria), किन्ही में अधिक मूत्रजनन (Diuresis) तथा किन्हीं में रक्तमेह (Haematuria) लक्षित होता है। यूरिक-एसिड (Uric acid) के निस्सरण (Elimination) में स्पष्ट वृद्धि नहीं पाई जाती।

विषाक्त-प्रभाव (Toxic Action)—**कॉल्चिकम् (सूरंजान) के द्वारा तीव्र** (Acute) **तथा चिरकालज** (Chronic) **दोनों प्रकार की विषाक्तता** (Toxic action) **मिलती है।** मात्राति-

योग के कारण तो उग्र स्वरूप की विषाक्तता तथा औषधीय मात्रा में भी निरन्तर चिरकाल तक इसका सेवन करने से चिरकालज विषाक्तता की स्थिति उत्पन्न होती है। तीव्र विषाक्तता प्रायः उग्र आमाशयान्त्र प्रदाह (Gastro-intestinal irritation) के कारण होती है। अतएव इसमें तज्जन्य सब लक्षण पाये जाते हैं। चिरकालज विषाक्तता में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं—जिह्वा का मैली होना (Turred tongue), मुंह का स्वाद विगड़ना, क्षुधानाश, अधिक प्यास लगना, हृदया-धरिक प्रदेश में पीड़ा होना (Epigastric pain) तथा आध्मान (पेट फूलना Flatulence) एवं अतिसार (Diarrohoea) आदि।

चिकित्सा—वामक उपायों द्वारा कै करानी चाहिए और उसके वाद स्नेहन-पेय (Demulcent drinks) यथा अंडे की सफेदी आदि को पानी में घोलकर पिलाना चाहिए। टैनिक-एसिड इसका रासायनिक प्रतिविष (Chemical andidote) है। अवसाद के निवारण के लिए उत्तेजक द्रव्य (Stimulants) यथा चाय, काफी, आदि होना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर मार्फीन का अधस्त्वक् सूचिकाभरण (Subcutaneous injection) करना चाहिये।

प्रयोग—कॉल्चिकम् या सूरंजान वातरक्त (**Gout**) की एक प्रसिद्ध औषधि समझी जाती है। यद्यपि यह न तो रक्तगत यूरिक एसिड की प्रतिशतक मात्रा में ही कमी करती है और न तो शरीर से उत्सर्ग में ही वृद्धि होती है, किन्तु उग्र वातरक्त के रोगियों में इसके सेवन से शीघ्र ही जोड़ों का शोथ एवं दर्द तथा अन्य कष्टप्रद उपद्रव शान्त हो जाते हैं। यदि कॉल्चिकम् के साथ सोडा सेलिसिलास तथा सोडियम् अथवा पोटासियम् बाइकार्बोनेट मिलाकर दिया जाय तो और भी लाभ होता है। एतदर्थ कॉल्चिसीन की ($\frac{१}{१२०}$ ग्रेन) की टिकिया, अथवा काल्चिकम् का लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट (२ से ५ बूँद) अथवा घनसत्व (**Dry extract** ($\frac{१}{८}$ ग्रेन) या टिंक्चर ऑव कॉल्चिकम् १५ से ३० बूँद (अर्थात् $\frac{१}{४}$ से $\frac{१}{२}$ ड्राम) व्यवहृत होता है। यदि अधिक मात्रा में औषधि दी जा रही हो तो ४–४ घंटे पर अन्यथा २–२, ३–३ घंटे के अन्तर से देना चाहिए। प्रायः २–३ दिन में रोगी को काफी लाभ हो जाता है। आराम होने के लिए सामान्यतया कुल $\frac{१}{१६}$ से $\frac{१}{८}$ ग्रेन की आवश्यकता पड़ती है।

सावधानी—दुर्बल रोगियों में इसका प्रयोग बड़ी सतर्कता से करना चाहिये, विशेषतया हृद्रोगियों एवं अतिसार-प्रवाहिका के रोगियों में इसको बड़ी सावधानी से देने की आवश्यकता है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् कॉल्चिसाइ लिक्विडम् *Extractum Colchici Liquidum* (*Ext. Colch. Liq.*) I. P., B. P.–ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव काल्चिकम् Liquid Fxtract of colchicum–अं०; सूरंजान का प्रवाही घनसत्व–सं०, हिं०। इसमें ०.३ % (W/V) कॉल्चिकम् के अल्कलायड्स होते हैं। इसका उपयोग 'टिंक्चर काल्चिकम् बनाने में किया जाता है।

२—टिंक्चुरा कॉल्चिसाइ Tincture Colchici (Tinct Colchi) I. P., B. P.–ले०; टिंक्चर ऑव काल्चिकम्–अं०, सूरंजान का टिंक्चर–सं०, हिं०। इसमें ०.०३% काल्चिकम् के अल्कलायड्स होते हैं। मात्रा–५ से १५ बूंद या मिनम् (०.३ से १ मि० लि०)। १ मिलिलिटर या १५ मिनम् में ०.३ मि० ग्रा० ($\frac{१}{२००}$ ग्रेन) सूरन्जानकंद (Colchicum Corm) के अल्कलायड्स होते हैं।

३–एक्स्ट्रैक्टम् कॉल्चिसाइ सिकम् Extractum Colchici Siccum (Ext. Colch. Sicc.), I. P.–ले०; ड्राई एक्स्ट्रैक्ट ऑव काल्चिकम् (Dry Extract of colchicum)–अं०; सूरंजान का घनसत्व–सं०, हिं० । मात्रा–१० से ३० मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन) । ३० मि० ग्रा० या $\frac{1}{2}$ ग्रेन घन सत्व में ०·३ मि० ग्रा० ($\frac{1}{200}$ ग्रेन) कॉल्चिसीन होता है ।

(नॉट्–ऑफिशल)

१–मिस्चुरा कॉल्चिसाइ एट सोडियाइ सेलिसिलेटिस Mistura Colchici et Sodii Salicylatis (Mist. Colch et Sod. Salicyl.), B. P. C.–ले०; कॉल्चिकम् एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट मिक्सचर–अं० । टिंक्चर ऑव कॉल्चिकम् १५ मिनम्, सोडियम् सेलिसिलेट तथा पोटासियम् बाइ कार्बोनेट प्रत्येक १५ ग्रेन, लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव लिकरिस (Liquorice) अर्थात् मुलेठी का प्रवाही घन-सत्व ५ मिनम्, क्लोरोफॉर्म वाटर आवश्यकतानुसार $\frac{1}{2}$ फ्लुइड औंस के लिए । मात्रा–$\frac{1}{2}$ (फ्लुइड) औंस या १५ मि० लि० ।

२–टैबेलि कोल्चिसिनी Tabellae colchicinae (Tab. colchicin.), B. P. C.–ले०; टॅवलेट्स ऑफ कोल्चिसीन, कोल्चिसीन टॅवलेट्स–अं०; कोल्चिसीन की टिकिया–हिं० । मात्रा (कोल्चिसीन)–०·५ से १ मि० ग्रा० ($\frac{1}{120}$ से $\frac{1}{60}$ ग्रेन); टोटल मात्रा २ से ८ मि० ग्रा० ($\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन) । वक्तव्य–यदि प्रति टॅवलेट कोल्चिसीन की मात्रा का उल्लेख न हो तो $\frac{1}{240}$ ग्रेन कोल्चिसीन वाली टिकिया देनी चाहिए । इस प्रकार की १ टिकिया में कोल्चिसीन की उतनी ही मात्रा होती है, जितनी १० मिनम् टिंक्चर कॉल्चिकम् में होती है ।

३–कोल्सेमिड (Colcemid) या डिमेकोल्सीम (Demecolcine)—यह एक अल्कलायड है, जो काल्चिकम् ऑटम्नेल (विलायती सूरंजान) से पृथक किया गया है । रासायनिक दृष्टि से यह Desacetylmethyl Colchicine होता है । चिरमज्जाम श्वेतमयता (Chronic myeloid leukaemia) में विशेष रूप से उपयोगी होता है । एतदर्थ प्रतिदिन ६ से १० मि० ग्रा० औषधि कई मात्राओं में विभक्त कर के दी जाती है । कभी कभी कर्कटार्बुद (Carcinoma) में भी उपयोगी बतलाया जाता है । चर्मगत कर्कटार्बुद में इसका १% मलहम भी प्रयुक्त किया जाता है ।

कॉल्चिकम् के कतिपय उपयोगी योग :—

(१) टिंक्चुरा कॉल्चिसाइ — १५ बूंद (मिनम्)
Tinct. Colch.

पोटासियम् बाई-कार्बोनेट
Pot. Bicarb.
मैगनीसियम् कार्बोनेट
Mag. Carb. } प्रत्येक १५ ग्रेन

एक्वा मेन्था० पिप०
Aque Mentha Pip. } इतना मिलायें कि सब मिलकर १ औंस औषधि हो जाय ।

ऐसी एक खुराक ४–४ घंटे पर वातरक्त (Gout) में देना चाहिए ।

(२) टिंक्चुरा कॉल्चिसाई १० मिनम्

मिस्चुरा अल्बा — १ औंस
Mist. Alba

सब मिलाकर १ मात्रा।

ऐसी एक मात्रा ३-३, ४-४ घन्टे के अन्तर से देना चाहिए। वातरक्त में बहुत गुणकारी है।

(३) टिंक्चुरा कॉल्चिसाइ — १० मिनम् (min.)
पोटासियाई साइट्रस Pot. Cit. — २० ग्रेन
मैग० सल्फ० — ६० ग्रेन (१ ड्राम)
इन्फ्युजम् बुकु रिसेन्स Inf Buchu. Rec. — आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए।

ऐसी १-१ मात्रा ३-३ घंटे के अन्तर से वातरक्त (गाउट) में दिया जाता है।

(४) एक्स्ट्रॅक्टम् कॉल्चिसाइ सिकम् — $\frac{1}{2}$ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् कॅस्करी सॅगरेडी Ext. Casc. Sagr. }
एलोज (Aloes) } प्रत्येक १ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् बेलाडोनी सिकम् — $\frac{1}{6}$ ग्रेन

सबको मिलाकर गोली बनावें। यह गुटिका चिरकालज वातरक्त (Chronic Gout) में बहुत लाभकारी है।

सिंकोफेनम् (सिंकोफेन) B. P.

Cinchophenum (Cinchophen.)–ले०; Cinchophen–अं०।

रासायनिक संकेतः $C_{16} H_{11} O_2 N$.

पर्याय—क्विनोफन (Quinophan); अटोफन (Atophan); अगोटन (Agotan)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह २–Phenyl cinchonic acid होता है, जो पीरुविक एसिड (Peruvic acid) तथा बेंजिलिडीन–एनिलीन (Benzylidine aniline) की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९% $C_{16} H_{11} O_2 N$ होता है।

वर्णन—सिंकोफेन के सफेद या पीलापन लिए क्रिस्टल्स या चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् तिक्त होता है। विलेयता—जल में तो अविलेय होता है; किन्तु १२० भाग अल्कोहल (९५%), १०० भाग सालवेंट ईथर, ४०० भाग क्लोरोफॉर्म तथा क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स, कार्बोनेट्स एवं बाइकार्बोनेट्स के विलयन में घुल जाता है।

मात्रा—०.३ से ०.६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)।

नियोसिंकोफेनम् Neocinchophenum (Neocinchophen.), I. P.—ले०; नियोसिंकोफेन—अं०।

रासायनिक संकेतः $C_{19} H_{17} O_2 N$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह Ethyl 2–Phenyl–6–Methyl cinchoninate होता है।

वर्णन—नियोसिंकोफेन सफेद रंग के या हल्के पीले रंग के चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जो गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। हवा में खुला रहने पर तो स्थायी (Stable) होता है, किन्तु प्रकाश के प्रभाव से विकृत हो जाता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है; किन्तु गरम अल्कोहल (९५%) में घुल जाता है। ईथर तथा क्लोरोफार्म में और भी घुलता है।

मात्रा—०·२ से ०·३ ग्राम (३ से ५ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सिंकोफन की वेदनाहर (Analgesic) एवं तापहर (Antipyretic) क्रिया तो सेलिसिलेट्स के समान होती है, किन्तु इसके अतिरिक्त इसका विशिष्ट कर्म है शरीर से यूरेट्स (Urates) तथा यूरिक एसिड (Uric acid) का निस्सरण (Elimination) कराना, जिसके कारण यह वातरक्त (Gout) की रामबाण औषधि समझी जाती है। यद्यपि सूरंजान (कॉल्चिकम्) भी वातरक्ती के जोड़ों (Gouty joint) की वेदना को शीघ्रतापूर्वक शमन करने में अपना स्थान रखता है, तथापि रोगोत्पादक मूल कारण (रक्तगत यूरिक एसिड एवं यूरेट्स की अधिकता) के उन्मूलन में सिंकोफन ही सहायक होता है। सम्भवतः सिंकोफन के प्रभाव से वृक्कों द्वारा यूरिक एसिड अधिकाधिक मात्रा में छनकर मूत्र में आ जाता है तथा यह युरिनरी ट्यूब्यूल्स (Tubules) से यूरेट्स के पुनः शोषण को भी रोकता है। इस प्रकार रक्तगत अतिरिक्त यूरिक एसिड एवं यूरेट्स सुगमतापूर्वक वृक्कों द्वारा छनकर बिना किसी अवरोध के मूत्र के साथ शरीर से उत्सर्गित हो जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है, कि वातरक्ती की संधियों में संचित अतिरिक्त यूरिक एसिड रक्त में आ-आकर मूत्रद्वारा उत्सर्गित हो जाता है , जिससे प्रधान कारण के दूर हो जाने से रोगी को वास्तविक अर्थ में लाभ हो जाता है। सामान्यतः रक्त में यूरिक एसिड की मात्रा ०·००३% होती है; किन्तु वातरक्त (गाउट) में यह मात्रा बहुत बढ़ जाती है। सिंकोफन का २–३ दिन तक लगातार प्रयोग करने से, यूरिक एसिड की रक्तगतमात्रा शीघ्रतापूर्वक कम होकर ऐसे स्तर पर आ जाती है कि आगे औषधि का सेवन करने पर भी वह कम नहीं होती। सिंकोफेन के सेवन-काल में मूत्र को क्षारीय बनाये रखना अत्यावश्यक है। साधारणतया सिंकोफन की प्रयोग-पद्धति निम्न प्रकार है—७–१० ग्रेन सिंकोफन ३० ग्रेन सोडा बाई-कार्ब के साथ प्रतिदिन ३–४ बार दिया जाता है। ३–४ दिन के बाद औषधि बन्द कर देनी चाहिए और ४–७ दिन के अन्तर से पुनः उक्तक्रम से औषधि दें। सिंकोफन की अपेक्षा इसका एक दूसरा योग 'नियोसिंकोफन Neocincophen श्रेष्ठतर एवं अधिक ग्राह्य है, क्योंकि एक तो इसमें कोई स्वाद नहीं होता, दूसरे यह सिंकोफन की अपेक्षा अधिक सह्य होता और साथ ही कम विषैला होता है।

ज्वरहर (Antipyretic), नाड़ीशूलहर (Antineuralgic) एवं आमवातहर (Antirheumatic) होने के कारण वातरक्त के अतिरिक्त सिंकोफन का उपयोग, आमवात (Rheumatism), गृध्रसी (Sciatica) एवं नाड्यर्ति (Neuralgias) में भी किया जाता है।

वक्तव्य—औषधि का सेवन भोजनोत्तर (After meals) एवं जल के साथ करना चाहिए। यह एक संचायी स्वभाव (Accumulative) की औषधि है, अतएव इसके सेवन काल में बीच-बीच में विराम (Period of rest) होना आवश्यक है।

विषाक्त प्रभाव (toxic Symptoms)—सिंकोफन द्वारा विषाक्तता होने पर निम्न उपद्रव लक्षित होते हैं—उग्रस्वरूप की कामला, यकृतवृद्धि एवं यकृत्प्रदेश में पीड़ा, मूत्र में बिलिरुबिन (Bilirubin) एवं अल्ब्युमिन की उपस्थिति। नाइट्रोजन का उत्सर्ग स्वाभाविक से अधिक होता है, जो शारीरिक धातुओं के अत्यधिक क्षय का द्योतक है। मृत्यु प्रायः यकृत के पीतक्षय (Yellow atrophy of liver) के कारण होती है। चिकित्सा—विषाक्तता का संदेह होने पर तुरन्त औषधि बन्द कर देनी चाहिए। साथ में प्रतिदिन २ बार ३ औंस ग्लूकोज के विलयन का २० युनिट इन्सुलिन के साथ सूचिकाभरण करना चाहिए। उदर शुद्धि के लिए मैग० सल्फ० देना चाहिए।

(ऑफिशल-योग I. P. Preparation)

१—टॅबेली नियोसिंकोफेनाइ Tabellae Neocinchopheni (Tab. Neocineehophen.), I. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव नियोसिंकोफेन—अं०। मात्रा (नियोसिंकोफेन)—३ से ५ ग्रेन (२०० से ३०० मि० ग्रा०)।

सिंकोफन के अन्य उपयोगी योग :—

(नॉट्-ऑफिशल)

१—अटोफेनिल Atophanyl—इसमें समभाग में सोडियम अटोफन एवं सोडियम् सेलिसिलेट होता है। इसके ०.५ ग्राम प्रति १० सी० सी० वाले एम्पूल्स आते हैं। शिरागत मार्ग द्वारा इनका सूचिकाभरण किया जाता है।

२—एनोटल Anotal—इसकी ५ ग्रेन की टॅबलेट्स आती हैं। वातरक्त (Gout) में ४–६ टॅबलेट प्रतिदिन दी जाती हैं।

३—एटोकिनोल Atoquinol—इसकी ०.५ ग्राम की टिकिया आती हैं।

४—पाइपराजिन (Piperazin) तथा सिडोनल (Sidonal)। मात्रा—५ से १५ ग्रेन।

(नॉट-ऑफिशल)

बेनेमाइड (Benemide)। पर्याय—प्रोबेनेसिड (Probenecid)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह P—(di—n-propylsulphanyl) benzoic acid होता है, जो सफेद रंग के गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—एसिड तो जल में अविलेय होता है, किन्तु इसका सोडियम् साल्ट क्षिप्रतापूर्वक जल में घुल जाता है।

मात्रा— ०.५ से २ ग्राम (८ से ३० ग्रेन) प्रतिदिन मुख द्वारा।

गुण एवं प्रयोग—बेनेमाइड एक तीव्र यूरिक एसिड या मिह्किाम्ल निस्सारक औषधि (Uricosuric drug) है। मुख द्वारा सेवन किए जने पर आंतों से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है और शोषणोपरान्त प्लाज्माप्रोटीन के साथ संयुक्त होकर रक्त में पाया जाता है। सेवन के २ घण्टे बाद रक्त में इसका अधिकतम संकेन्द्रण पाया जाता है। शरीर गत धातुओं में

धीरे-धीरे ग्लाइक्युरोनिक एसिड (Glycuronic acid) के साथ संयुक्त होता है, तथा इसी रूप में मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। प्रोवेनेसिड का प्रयोग चिरकालीन वातरक्त (Chronic gout) एवं वातरक्तजन्य संधिशोथ (gouty arthritis) में बहुत उपयोगी पाया जाता है। किन्तु व्याधि की तरुणावस्था (Acute condition) में इसके प्रयोग से विशेष लाभ नहीं होता। चिरकालीन वातरक्त एवं वातरक्तज संधिशोथ में ८ से १५ ग्रेन औषधि प्रतिदिन मुख द्वारा दी जाती है। इसके साथ-साथ सेलिसिलेट्स का प्रयोग नहीं करना चाहिए; क्योंकि दोनों की क्रिया एक दूसरे के प्रत्यनीक (Antagonistic) होती है।

रक्ताधिक्य जन्य हृद्भेद (Congestive heart failure) में प्रतिदिन ४ ग्राम औषधि कई मात्राओं में विभक्त कर देने से उपकार होता है। एमिनो सेलिसिलेट तथा सल्फोनेमाइड के साथ इसका प्रयोग करने से कम मात्रा में भी औषधि प्रयुक्त करने से अपेक्षाकृत रक्त गत संकेन्द्रण अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। वैक्टीरिअल हृदन्तः शोथ (Bacterial endocarditis) में पेनिसिलिन के साथ इसका प्रयोग सहायक औषधि के रूप में किया जाता है। एतदर्थ प्रतिदिन ८ ग्रेन औषधि ३–४ वार दी जाती है। इससे रक्त में पेनिसिलिन का संकेन्द्रण अपेक्षा कृत अधिक मात्रा में तथा देर तक रहता है।

परिच्छेद ३

शरीरसमवर्तक्रिया पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

(Drugs acting on metabolism)

थाय्ररायडियम् या थायरायड (ग्रैवेयक ग्रंथि सत्व या अवटुका सत्व) I. P., B. P

नाम—थायरायडियम् Thyroideum (Thyroid.), थायरायडियम् सिक्कम् Thyroideum Siccum—ले०; ड्राइ थायरायड Dry Thyroid, थायरायड एक्स्ट्रक्ट Thyroid Extract, डेस्सिकेटेड थायरायड ग्लैंड Dessicated Thyroid Gland—अं०; ग्रैवेयक ग्रंथि (अवटुका) सत्व—सं०, हिं०।

प्राप्तिसाधन—यह बैल, भेड़ तथा सूअर आदि भक्ष्य पशुओं की ग्रैवेयक ग्रंथि (थायरायड ग्लैंड (Thyroid gland) से प्राप्त किया जाता है। एतदर्थ ग्रंथि को ६०° तापक्रम पर सुखाकर चूर्ण बना लेते हैं। उक्त चूर्ण से वसा (Fat) का अंश पेट्रोलियम (Light petroleum.) द्वारा पृथक कर दिया जाता है और अवशिष्ट भाग (Residue) को सुखाकर रख लिया जाता है। यही व्यावसायिक एवं औषध्यर्थ प्रयुक्त थायरायड एक्स्ट्रैक्ट (ग्रैवेयक ग्रंथि सत्व) है, जो क्रीमी-रंग के (Cream-coloured) विरूपिक (Amorphous) चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें मांस की तरह स्वाद एवं गंध होता है। इसमें ०·१ प्रतिशत (०·०९ से ०·११% के बीच) आयोडीन पाया जाता है, जो थाइरॉक्सीन (Thyroxine) के रूप में मिश्रित रूप से पाया जाता है। उक्त ग्रैवेयक ग्रंथिसत्व का संग्रह अच्छी तरह डाट वन्द शीशियों में तथा ठंढे स्थान में करना चाहिए, अन्यथा औषधि के विगड़ जाने की आशंका रहती है।

मात्रा—½ से २ ग्रेन (०·०३ से ०·१२ ग्राम) या ३० से १२० मि० ग्रा०।

'एल'-थाइरॉक्सिनम् सोडियम् L-Thyroxinum Sodium (L-Thyroxin. Sod.), B. P. C. (नॉट-ऑफिशल)—ले०;—'एल' थाइरॉक्सीन सोडियम्—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{१५} H_{१०} O_{४} NI_{४} Na, 5H_{२}O$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह Sodium L-a-amino—B—[3 : 5-di-iodo-4—(4-hydroxy-3:5-di iodo phenoxy) phenyl] propionate pentahydrate होता है।

वर्णन—यह मलाई के रंग का चूर्ण होता है, जो जल में तो अल्प मात्रा में विलेय होता है, किन्तु मिनरल एसिड्स तथा क्षारीय हाइड्रॉक्साइड सोल्यूशन में अधिक घुलता है।

मात्रा—०.१ से ०.५ मि० ग्रा० ($\frac{१}{६००}$ से $\frac{१}{१२०}$ ग्रेन)

गुण-कर्म एवं प्रयोग।

गुण-कर्म (Pharmacology)—अवटुका-ग्रंथि (Thyroid Gland) एक अन्तःस्रावी ग्रंथि है। थाइरॉक्सीन (Thyroxine) इसका अन्तःस्राव (Hormone)

है, जिसमें ६०% आयोडीन होता है। मानव शरीर में आयोडीन का संचय केवल इसी धातु में पाया जाता है। अधुना कृत्रिमरूप से इसके सोडियम् लवण, जिसे थाइरॉक्सीन सोडियम् (Thyroxine Sodium) कहते हैं, का निर्माण किया गया है। उक्त स्राव का नियंत्रण, पीयूषग्रंथि के अग्रिम खण्ड (Anterior pituitary) अवटुकोत्तेजक अन्तः स्राव (Thyrotropic hormone) के द्वारा होता है। उक्त दोनों स्रावों का परस्पर पूरक क्रिया व्यापार होता है अर्थात् यदि थाइरॉक्सीन की कमी होती है, तो अवटुकोत्तेजक स्राव की मात्रा अधिक हो जाती है और उसकी कमी में थाइरॉक्सीन की कमी अथवा अप्रत्यक्षतया आयोडीन की कमी होने पर पीयूष ग्रंथि के अवटुकोत्तेजक स्राव में अतियोग होने के कारण अवटुकाग्रंथि के कोशाणुओं में वैकृतिक अतिवृद्धि होने लगती है, जिसके परिणाम स्वरूप गलगण्ड या घेंघा (Goitre) रोग की उत्पत्ति हो जाती है। इसके अतिरिक्त उक्त अवस्था में परमावटुक ग्रंथिता (Hyperthyroidism) जन्य अन्य सभी उपद्रव भी लक्षित होते हैं।

सामान्यतः मानव थायरायड ग्रंथि में १५ मिलिग्राम आयोडीन पाया जाता है, जिसमें प्रतिदिन ½ से १ मिलिग्राम शारीरिक कार्यों में खर्च होता रहता है। इसकी पूर्ति खाद्य द्रव्यों में पाये जाने वाले आयोडीन से होती है। अतएव ऐसे प्रान्तों में जहां उत्पन्न होने वाले खाद्य-पेय द्रव्यों में आयोडीन का सर्वथा दारिद्रय होता है, गलगण्ड रोग बहुत होता है। थायरायड का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि यह शरीर की सभी कोशाओं की समवर्त क्रिया (Metabolic rate) को बढाने में सहायता करती है। अतएव सामान्य शारीरिक वृद्धि के लिए यह नितान्त आवश्यक है और इसके अभाव (Thyroid deficiency) में शारीरिक एवं मानसिक विकास रुक जाता एवं अनेक रोगों की उत्पत्ति होती है।

आभ्यन्तर । रक्त-संवहन (Circulation)—मुख द्वारा अधिक काल तक निरन्तर सेवन से नाड़ी की गति में तीव्रता एवं हृत्स्पन्दन में मन्दता होती है। थायरायड एक्स्ट्रैक्ट का शरीर में इन्जेक्शन करने से रक्तभार (Blood-pressure) में कमी होती है, किन्तु मौखिक सेवन से यह प्रभाव लक्षित नहीं होता।

समवर्त-क्रिया (Metabolism)—स्वस्थ व्यक्ति में भी थायरायड से प्रोटीन, वसा (Fat) एवं कार्बोहाइड्रेट के समवर्त (Metabolism) में वृद्धि होती है। जिन लोगों में अवटुकास्राव की कमी होती है, उनमें तो उक्त क्रिया और भी स्पष्टतः लक्षित होती है। केल्सियम-समवर्त (Calcium metabolism) पर भी इसका प्रभाव पड़ता है, जिसके परिणाम स्वरूप अस्थियों का केल्सियम एवं फास्फोरस उन संग्रहस्थलों से स्थानान्तरित होकर मूत्र के साथ शरीर से अधिकाधिक मात्रा में उत्सर्गित होता है। परिणामतः शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है तथा शरीर भार में कमी हो जाती है। डेढ़ मन भार वाले स्वस्थ युवा व्यक्ति में १ मिलिग्राम थाइरॉक्सीन द्वारा आधारिक समवर्त (Basal Metabolism) में २०% वृद्धि होती है। श्लेष्म-शोफ युक्त व्यक्तियों (Myxoedemic patients) में १० मिलीग्राम से आधारिक-समवर्त में ३०% वृद्धि लक्षित होती है। थाइरॉक्सीन मौखिक प्रयोग अथवा शिरागत सूचिका भरण द्वारा प्रयुक्त किए जाने पर दोनों प्रकार से समान क्रिया होती है। अधिक मात्रा में निरन्तर सेवन से एक सप्ताह में परमावटुक ग्रंथिता (Hyper-thyroidism) के लक्षण प्रगट होने लगते हैं।

वृक्क—थायरायड (अवटुका सत्व) तीव्र मूत्रल (Diuretic) होता है। यह क्रिया सम्भवतः शरीर से यूरिया के अधिक मात्रा में उत्सर्गित होने के कारण होती है।

नाड़ी-संस्थान—अधिक मात्र में प्रयुक्त होने पर कभी-कभी प्रकम्प (Tremor), बेचैनी एवं निद्रानाश के उपद्रव प्रगट होते हैं। मोटापे (Obesity) की चिकित्सा के लिए थायरायड का प्रयोग करते समय किन्हीं रोगियों में उन्माद (Mania) का उपद्रव देखा जाता है।

निस्सरण—इसका निस्सरण अधिकांशतः वृक्कों द्वारा होता है। अधिक काल तक निरन्तर इसके सेवन से अतिसार आदि आमाशयान्त्र की विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं।

तीव्र अवटुकासत्वविषाक्तता (Acute Thyroidism)—मात्रातियोग में निम्न उपद्रव देखे जाते हैं:—नाड़ी की गति में तीव्रता (Rapid pulse), ज्वर, शिरःशूल, मूर्च्छोन्मुखता, अतिसार, बेचैनी, कण्डू, इतस्ततः पीड़ा का अनुभव (Wandering pain) तथा कभी-कभी प्रलाप (Delirium) भी देखा जाता है। चिरकालीन-अवटुकासत्वविषाक्तता (Chronic Thyroidism)—इसमें निम्न लक्षण होते हैं:—शारीरिक भार का कम होना, पेशीदौर्बल्य, बालों का झड़ना, वहिर्नेत्र गलगण्ड की भाँति नेत्रगोलक का आगे को निकलना, कनीनिका का विस्फारित होना। अन्ततः उत्तरोत्तर कमजोरी होकर मृत्यु तक हो जाती है।

आमयिक प्रयोग।

अवटुका सत्व (थायरायड) का मुख्य उपयोग श्लेष्मशोफ (Myxoedema) तथा बौनापन (Cretinism) में किया जाता है। उक्त दोनों ही व्याधियाँ अवटुकाग्रंथि के अन्तःस्राव के अभाव के कुपरिणाम स्वरूप उत्पन्न होती हैं। इनमें श्लेष्मशोफ प्रायः युवकों (Adults) में तथा बौनापन बालकों में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसका प्रयोग स्थौल्य या मोटापन (Obesity), कतिपय प्रकार के गलगण्ड (Goitre), तथा त्वग्रोगों (Skin diseases) में भी उपयोगी होता है। अस्थिभग्न में यदि संधान (Union) में बहुत विलम्ब हो रहा हो तो केल्सियम् के साथ इसका प्रयोग लाभप्रद सिद्ध होता है। इसी प्रकार शल्कीय विचर्चिका (Scaly eczema) तथा चिरकालज वृक्कोत्कर्ष (Chronic nephrosis) में भी यह गुणकारी सिद्ध होता है। कभी-कभी संधियों के स्नायु-शैथिल्य एवं बच्चों के शय्या-मूत्र रोग में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

थायरायड की मात्रा का निर्धारण रोग की स्थिति एवं रोगी के आयु के आधार पर किया जाता है, और इसका सेवन प्रायः चूर्ण (पाउडर Powder) अथवा टिकिया (टॅबलेट्स Tablets) के रूप में किया जाता है। ६ माह के बौने के लिए औसत मात्रा ६ मिलि ग्राम ($\frac{1}{10}$ ग्रेन) होती है, जो उत्तरोत्तर बढ़ाकर ६० से १२० मिलिग्राम (१ से २ ग्रेन) तक की जा सकती है। श्लेष्मशोफियुवक की प्रारम्भिक मात्रा शुष्क अवटुकासत्व (Dried extract) के लिए $\frac{1}{2}$ से १ ग्रेन (३० से ६० मि० ग्रा०) तथा थाइरॉक्सीन सोडियम् के लिए ०·१ से ०·२ मि० ग्रा० है। ऐसी २–३ मात्रायें प्रतिदिन प्रायः खाली पेट पर दी जाती हैं। तदनु जहाँ तक रोगी को सह्य हो, उत्तरोत्तर मात्रा बढ़ाई जाती है। लक्षणों के शान्त हो जाने पर कुछ दिनों का अन्तर करके केवल धारक मात्रा (Maintenance dose) में औषधि का सेवन जारी रखा

जा सकता है। थायरायड एक उग्र प्रभाववाली तथा संचायी स्वभाव की औषधि है, अतएव अधिक काल तक यदि इसका सेवन करना हो तो विपाक्त प्रभावों के लिए रोगी का सतर्कता से परीक्षण करते रहना चाहिए। और ज्योंही इसका परिज्ञान हो तुरन्त औषधि की मात्रा कम कर देनी चाहिए अथवा थोड़े समय के लिए औषधि बन्द कर देनी ही श्रेयस्कर है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली थायरायडियाइ Tabellae Thyroidei (Tab. Thyroid), B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव थायरायड—अं०। मात्रा—३० से २४० मि० ग्रा० (१/२ से ४ ग्रेन) प्रतिदिन। प्रति टिकिया में थायरायड की मात्रा का उल्लेख न होने पर १/२ ग्रेन या ३० मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

(नॉट-आफिशल)

१—टॅबेली 'एल' थायरॉक्सिनी सोडियाइ Tabellae L-Thyroxini Sodii (Tab. L-Thyroxin. Sod.), B. P. C. ले०; L—Thyroxine Sodium Tablets—अं०। मात्रा—०·१ से ०·५ मि० ग्रा० (१/६०० से १/१२० ग्रेन)। प्रतिटिकिया मात्रा का निर्देश न होने पर ०·०५ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए। वक्तव्य—यह योग थायरायड् एक्स्ट्रॅक्ट की अपेक्षा दुगुनी सक्रिय होती है। इसका ०·१ मि० ग्राम बराबर होता है १ ग्रेन (६० मि० ग्रा०) थायरायड एक्स्ट्रॅक्ट के इसके गुण एवं प्रयोग थायरायड एक्स्ट्रॅक्ट की ही भाँति समझने चाहिए। किन्तु मुखद्वारा सेवन किए जाने पर केवल आधी मात्रा में ही शोषित होती है।

थायरायड के व्यावसायिक योगः—

(१) बाजार में थायरायड की १/५ ग्रेन, यथा १/४, १/२ एवं १ ग्रेन की टिकिया उपलब्ध होती है। थाइरॉक्सीन सोडियम् की ०·५ तथा ०·१ मि० ग्रा० की टिकिया (Tablets) भी आती हैं।

(२) एल्ट्रॉक्सिन Eltroxin (Glaxo)—L—Thyroxine Sodium का यौगिक है। ०·५ मि० ग्रा० एवं ०·१ मि० ग्रा० की टिकिया आती है।

थायरायड के नुस्खेः—

(१) थायरायडियम् १ ग्रेन

केलसियम् लेक्टेट १५ ग्रेन

दोनों को मिलाकर १ मात्रा बनावें। ऐसी १-१ मात्रा प्रातः सायं जल से दें। अस्थिभग्न (Fracture) में शीघ्रतापूर्वक अस्थिसंधान के लिए उपयोगी है।

अवटुका ग्रंथिक्रियारोधक द्रव्य—

(Antithyroid Products)

जिस प्रकार शारीरिक क्रियाओं के सामञ्जस्य को स्थापित रखने के लिए अवटुकाग्रंथि का स्राव अत्यंत आवश्यक है, तथा उसके अभाव से अनेक व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार कभी-कभी अवटुका ग्रंथि के स्राव में अनावश्यक अधिकता हो जाती है, जिससे अनेक व्याधियाँ यथा बहिर्नेत्रगलगण्ड (Exophthalmic Goitre or Grave's Disease)

आदि अन्य अनेक उपद्रवों की उत्पत्ति होती है। ऐसी स्थिति में उक्त स्रावाधिक्य के निरोधक की आवश्यकता होती है। ऐसी स्थिति में यों तो आयोडीन एवं कभी कभी क्विनीन के प्रयोग से लाभ होता है, किन्तु उक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए कतिपय विशिष्ट औषधियाँ हैं, जिनका वर्णन यहां किया जा रहा है। इनकी क्रिया अपेक्षाकृत अधिक तीव्र, प्रत्यक्ष (Direct) एवं सुनिश्चित होता है।

प्रोपिलथायरोसिलम् Propylthiouracillum (Propylthiouracil.), I. P., B. .P.—ले०;प्रोपिलथायरोसिल—अं०।

रासायनिक संकेतः $C_7H_{10}ON_2S$.

पर्याय—प्रोपेसिल(Propacil); 6-n-propyl-thiouracil—रासायनिक।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 4-hydroxy-2-mercapto-6-n.propylpyrimidine होता है, जिसमें कम से कम ९८% $C_7H_{10}N_2OS$ होता है।

वर्णन—प्रोपिल थायरोसिल सफेद रंग के या हल्के मलाई के रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। बाह्यतः देखने में तथा स्पर्श में स्टार्च की भांति होता है। विलेयता—जल में अल्पतः विलेय (Slightly soluble), अल्कोहल् (९५%) में भी कदाचित् ही घुलता है। क्लोरोफॉर्म तथा सालवेंट ईथर में भी अल्पतः विलेय है। क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स के सोल्यूशन में अच्छी तरह घुल जाता है। मात्रा। (१) स्थिति सुधार के लिए (Controlling dose)—०·२ से ०·६ ग्राम (३ से १० ग्रेन) प्रतिदिन; (२) प्रभाव को बनाये रखने के लिए (Maintenance dose)—५० से २०० मि० ग्रा० (¾ से ३ ग्रेन) प्रतिदिन।

मेथिलथायरोसिलम् Methylthiouracilum (Methylthiouracil.), B. P.—ले०; मेथिल थायरोसिल—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_5H_6ON_2S$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 4-hydroxy-2-mercapto-6-methylpyrimidine होता है। इसमें कम से कम ९८% $C_5H_6ON_2S$ होता है।

वर्णन—मेथिलथायरोसिल सफेद रंग के या हल्के मलाई के रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है; जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल में अल्पतः विलेय होता है। मात्रा—(१) रोग निवारक ०·२ से ०६ ग्राम (३ से ९ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) प्रभाव को बनाए रखने के लिए ५० से २०० मि० ग्रा० (¾ से ३ ग्रेन)

(नॉट-ऑफिशल)

थायरोसिलम् Thiouracilum (Thiouracil.)—ले०; थायरोसिल—अं०।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 2-mercapto 4-hydroxydyrimidine. होता है, जो सफेद या हल्के मलाई रंग के चूर्ण के रूप में उपलब्ध होते हैं। उक्त चूर्ण गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल, अल्कोहल् (९०%) सालवेंट ईथर तथा एसिड्स में अल्पतः घुल जाता है। मात्रा—०·१ से ०·२ ग्राम (१½ से ३ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

थाइरोसिल—थाइरॉक्सीन (Thyroxine अवटुकाग्रंथि का अन्तःस्राव) के स्राव को कम करने के कारण थाइरोसिल का मुख द्वारा सेवन करने से अवटुकाविषाक्तता (Thyrotoxicosis) की अवस्थाओं में बहुत लाभ होता है। किन्तु उक्त अवस्था में थाइरॉक्सीन का स्राव तो कम हो जाता है, परन्तु साथ ही पीयूषग्रंथि (Pituitary gland) के अवटुकापोषकस्राव (Thyrotrophic Hormone) में वृद्धि हो जाती है, जिससे अवटुकाग्रंथि के धातुओं में वृद्धि (Hyperplasia) होती है। परिणामतः अवटुकाविषाक्तता (Thyrotoxicosis) में थाइरोसिल के प्रयोग से आधारिक समवर्त (Basal metabolism) में सुधार होकर सामान्यावस्था अवश्य उत्पन्न हो जाती है, किन्तु अवटुकाग्रंथि का आकार एवं वहिर्नेत्रता (Exophthalmos) ज्यों का त्यों रहता है। अतएव यदि अवटुका ग्रंथ्युच्छेद (Thyroidectomy) करना हो तो थोड़े समय के लिए थाइरोसिल को वन्द कर देना चाहिए और शस्त्र कर्म के पूर्व १–२ सप्ताह तक ल्यूगॉल्स आयोडीन सॉल्यूशन (Lugol's iodine Solution) का सेवन करना चाहिए। अतएव सभी प्रकार के **वैकृतिक परमावटुकग्रंथितावस्थाओं** (Pathological hyperthyroidism) में थाइरोसिल एक उत्तम औषधि है। सम्प्रति थाइरोसिल का प्रयोग कतिपय हृदय-व्याधियों—यथा रक्ताधिक्यजन्य हृद्भेद (Congestive heart-failure), अलिन्द-अराजकता (Auricular fibrillation) एवं हृच्छूल (Angina pectoris) आदि—में भी किया जाता है।

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा थाइरोसिल का क्षिप्रतापूर्वक शोषण हो जाता है और आधे घंटे के अन्दर रक्त में इसका अधिकतम संकेन्द्रण (Concentration) हो जाता है। इसी प्रकार शरीर से इसका निस्सरण भी शीघ्रतापूर्वक होता है। अतएव दैनिक सकल मात्रा (Total daily dose) को २–३ मात्राओं में विभक्त करके देना चाहिए।

अधिक काल तक अधिक मात्रा में थाइरोसिल का प्रयोग करने से विषाक्त प्रभाव होने की आशंका भी बहुत रहती है। अतएव सामान्यतः १ सप्ताह तक औषधि पूर्ण मात्रा में (अधिकतम दैनिक मात्रा ६ ग्रेन है जो ३-४ मात्राओं में विभक्त करके दी जाती है) दी जाती है। प्रायः उक्त समय के बाद सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। तदनु प्रतिदिन, एक दिन अथवा आवश्यकतानुसार अधिक अन्तर से औषधिका सेवन केवल धारक मात्रा (Maintenance dose) ¾ से १ ग्रेन प्रतिदिन) में जारी रखा जाता है। साथ ही विषाक्त प्रभावों के लिए रोगी का परीक्षण करते रहना चाहिए और उक्त स्थिति में औषधि का सेवन तुरन्त बन्द कर देना चाहिये।

मेथिल थाइरोसिल—यह क्रिया में थाइरोसिल की भांति है, किन्तु इसकी प्राप्ति उसकी अपेक्षा अधिक सुगमता से होती है तथा थाइरोसिल की अपेक्षा कम विषाक्त एवं मूल्य में सस्ता है। इसकी प्रारम्भिक दैनिक मात्रा (Initial daily dose) ४½ ग्रेन (०·३ ग्राम) है, किन्तु धारक मात्रा अपेक्षाकृत कम (१५ से २५ मिलिग्राम सप्ताह में २ वार) है।

प्रोपिल थाइरोसिल—प्रथम सप्ताह में इसकी दैनिक मात्रा १००–१५० मिलिग्राम (१½ से २½ ग्रेन) होनी चाहिए और इसको ४ मात्राओं में विभक्त करके ६–६ घंटे के

अन्तर से देनी चाहिए। उपद्रवों का शमन हो जाने पर ५० से ७५ मिलिग्राम (¾ से १¼ ग्रेन) की दैनिक मात्रा (Maintenace dose) देते रहना चाहिए। यह भी थाइरोसिल की अपेक्षा कम विषाक्त होता है।

विषाक्त प्रभाव— विषाक्तता की अवस्था में निम्न उपद्रव लक्षित होते हैं—ज्वर, त्वक्-शोफ (Dermatitis), शीतपित्त (Urticaria), खुजली (Prurigo); पाद-शोफ संधिशोथ एवं संधिशूल (Arthritis and Arthralgia) लसीकाग्रंथियों की आकार-वृद्धि एवं प्लीहोदर (Splenomegaly) हृत्कार्यातालवद्घता (Cardiac arrythmia), एवं हृन्मन्दता (Bradycardia)—जो कभी-कभी घातक (Fatal) सिद्ध हो जाते हैं; प्रकाशसंत्रास (Photophobia) एवं नेत्राभिष्यन्द (Conjunctivitis)। साधारणतया चिकित्साकी दृष्टि से अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) सबसे महत्त्व का उपद्रव है। उक्त स्थिति में प्रायः औषधि-ज्वर (Drug fever) भी लक्षित होता है। अतएव गलव्रणता (Sore-throat) के साथ तीव्रज्वर का होना खतरे का सूचक लक्षण समझना चाहिए। चिकित्सा—प्रत्येक सप्ताह में श्वेतकायाणुओं (W. B. C.) के लिए रक्त परीक्षण करते रहना चाहिए और अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) अर्थात् श्वेतकायाणुओं की सापेक्ष गणना (Differential Count) में कणिककायाणुओं (Granulocytes) की कमी होने पर फौरन औषधि बन्द कर देना चाहिए। अनागतबाधा प्रतिषेध (Prevention) के लिए विटामीन बी कम्प्लेक्स (Vitamin B Complex) एवं प्रोटियोलाइज्ड लिवर (Proteolysed liver) का सेवन उपकारी है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली मेथिलथायरोसिलाइ Tabellāe Methylthiouracili (Tab. Methylthiouracil), B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव मेथिल थायरोसिल—अं०। मात्रा—मेथिलथायरोसिल की भांति। वक्तव्य—यदि प्रति टॅबलेट मेथिलथायरोसिल की मात्रा का उल्लेख न हो तो ५० मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

२—टॅबेली प्रोपिल्थायरोसिलाइ Tabellāe Propylthiouracili (Tab. Propylthiouracil.), I. P, B. P,—ले०; टॅबलेट्स ऑव प्रोपिल्थायरोसिल—अं०। मात्रा—प्रोपिलथायरोसिल की भाँति। यदि प्रति टॅबलेट मात्रा का उल्लेख न हो तो ५० मि० ग्रा० की टॅबलेट देनी चाहिए।

(नॉट्-ऑफिशल)

१—आयडोथायरोसिल सोडियम् Iodothiouracil Sodium। पर्याय—इट्रुमिल सोडियम् (Itrumil Sodium)—यह सफेद या हल्के पीले रंग का गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो जल तथा अल्कोहल् में धुलनशील होता है। इसमें ५% आयोडीन, ४०% थायरोसिल तथा १०% सोडियम् होता है। परम-अवटुग्रंथिमयता (Hyperthyroidism) एवं (Thyrotoxicosis) में उपयोगी है। मात्रा—०·१ से ०·२ ग्राम (१½ से ३ ग्रेन) कई मात्राओं में विभाजित करके दिया जाता है।

व्यावसायिक योग—थाइरोसिल एवं मेथिल थाइरोसिल की ०·०५ ग्राम, ०·१ ग्राम, एवं ०.२ ग्राम की तथा प्रोपिल थाइरोसिल की २५ मिलिग्राम की टिकिया (टेब्लेट्स (Tablets) बाजार में मिलती है।

कारबिमेजोल (B. P. Add.)
Carbimazole (Carbimaz.)

पर्याय—नियोमर्केजोल Neomereazole ।

वर्णन—कारबिमेजोल सफेद या मलाई के रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती है। स्वाद में साधारण तीता होता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय होता है; अल्कोहल् (९५%) तथा सालवेंट ईथर में भी थोड़ा-थोड़ा घुलता है। किन्तु क्लोरोफॉर्म तथा एसिटोन में क्षिप्रतापूर्वक घुल जाता है। मात्रा—(१) रोगनिवारक--२० से ४० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ से $\frac{2}{3}$ ग्रेन) प्रतिदिन मुखद्वारा कई मात्राओं में विभक्त करके। (२) धारकमात्रा—५ से १५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—कारबिमेजोल के गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग प्रोपिलथायरोसिल की ही भांति समझना चाहिए। बल्कि प्रोपिल थायरोसिल की अपेक्षा इसमें सक्रियता बहुत अधिक होती है। इसका निस्सरण भी धीरे-धीरे होता है अतएव इसकी क्रिया स्थायी होती है। इस वर्ग की औषधियों में यह सबसे कम विषैली औषधि है। थायरायड ग्रंथि पर शस्त्रकर्म करने के पूर्व प्रयुक्त करने के लिए यह बहुत उपयुक्त होता है। गलगण्ड (Goitre) में ४० मि० ग्रा० मात्रा प्रतिदिन मुखद्वारा दी जाती है। वैषिक गलगण्ड (Adenomatous Goitre) में मात्रा अपेक्षाकृत अधिक (४० से ५० मि० ग्रा० प्रतिदिन) देनी पड़ती है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली कारबिमेजोली Tabellae Carbemazoli, B. P. Add. ले०; टॅबलेट्स ऑव कारबिमेजोल (Teblets of Carbimazol)--अं०। मात्रा—कारबिमेजोल की भाँति। यदि प्रति टॅबलेट मात्रा का निर्देश न हो तो ५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ ग्रेन) की टिकिया देनी चाहिए।

(नॉन्-आफिशल)

१—मेथिमेजोल (Methimezole)। पर्याय—टेपेजोल (Tapazole)। गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग कारबिमेजोल की भांति। मात्रा—१५ से ३० मि० ग्रा० ($\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन)।

रेडियो-एक्टिव आयोडीन सोल्यूशन (U. S. P.)

नाम—Radioactive Iodine Solution, Na I [131]; Sodium Radio Iodide (I[131]) Solution.

वर्णन—यह आयोडीन-१३१ (Iodine-131) का सोल्यूशन होता है, जो औपध्यर्थ मुखद्वारा तथा शिरागत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करने के लिए उपयुक्त बनाया जाता है। इसमें सूचक पत्र पर उल्लिखित मात्रा का ९५ से १०५% तक आयोडीन-१३१ (आयोडाइड के रूप में) होता है।

मात्रा—रोगनिवारक (Therapeutic) १ से १०० मिलिक्युरी (1 to 100 millicuries) (२) निदान के लिए (Diagnostic as tracer)—१ से १०० माइक्रोक्युरी (1 to 100 microcuries)।

वक्तव्य—१ माइक्रोक्युरी (Microcurie) बराबर होता है १ क्युरी (Curie) के $\frac{1}{1000000}$ (दसलाखवें) भाग के बराबर इसी प्रकार १ मिलिक्युरी (Millicurie) बराबर है १ क्युरी के

$\frac{1}{1000}$ (हजारवें) भाग के बराबर। 'क्युरी Curie' एक वैज्ञानिक माप है, जो रेडियो-एक्टिव यौगिकों की वियोजित मात्रा (Radium emnation) के उल्लेख के लिए प्रयुक्त किया जाता है। उक्त 'क्युरी' संज्ञा मेरीस्क्लोडाउस्के क्युरी (Marie Sklodowska Curie) नामक वैज्ञानिक के नाम के आधार पर रखा गया है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

चिकित्सा व्यवहार में रेडियो-एक्टिव आयोडीन सोल्यूशन का सर्वप्रथम प्रयोग १६४२ ई० में हर्ट्ज एवं राबर्ट (Hertz and Robert) नामक वैज्ञानिकों द्वारा अवटुकाविषमयता (Thyrotoxicosis) के इलाज के लिए किया गया था। तब से इसमें परिष्कार हुए और अब थायरायड ग्रंथि की अनेक विकृतियों में यह परमोत्तम औषधि समझी जाती है। किन्तु इसके प्रयोग में एक बहुत बड़ा दोष यह है, कि कभी-कभी इसके सेवन के बाद थायरायड ग्रंथि में घातक स्वरूप में परिवर्तन (Malignant changes) होने लगते हैं, जिससे इसका प्रयोग विशिष्ट प्रकार के रोगियों में ही किया जाता है। मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आमाशय से पूर्णतः शोषित हो जाता है, और शोषणोपरान्त शरीरगत बहिः कोशारस में वितरित हो जाता है। शोषणोपरान्त आइसोटोप (Isotope) का संग्रह विशेषतः थायरायड ग्रंथि में होता है। सामान्यावस्था में १५ से ३०% औषधि ग्रैवेयक या अवटुका ग्रंथि (Thyroid gland) में संचित होती है और शेष भाग मूत्र के साथ लगभग (२४ घंटे के अन्दर) उत्सर्गित हो जाता है। परमावटुका ग्रंथिता (Hyperthyroidism) की अवस्था में अपेक्षाकृत अधिक औषधि (५० से ६०%) अवटुका ग्रन्थि में संचित होती है। इसके विपरीत उपावटुका ग्रंथिता (Hypothyroidism) की अवस्था में थायरायड में संचय अपेक्षा कृत कम (५ से १०%) होता है और अधिकांश औषधि मूत्र के साथ उत्सर्गित हो जाती है। इस प्रकार संचित रेडियो-एक्टिव आयोडीन महीनों तक थायरायड के अन्दर बनी रहती है, और ग्रंथि पर अपना चिरस्थायी प्रभाव करती है।

रेडियो-एक्टिव आयोडीन का उपयोग चिकित्सा में मुख्यतः थायरायड ग्रंथि के गुणकर्मीय विकृतियों (disordered functions) के निदान के लिए तथा अवटुकाविषाक्तता (Thyrotoxicosis) एवं थायरायड के घातक अर्बुदों (विशेषतः कैन्सर) की चिकित्सा के लिए किया जाता है। इससे ग्रंथि की वैकृतिक वृद्धिका निरोध होकर ग्रंथि सामान्य रूप में आ जाता है। किन्तु जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इसका उपयोग विशिष्ट अवस्थाओं में ही सम्भव होता है, यथा—(१) ४५ वर्ष से ऊपर की आयु के रोगियों में; (२) जिन रोगियों को अन्य एन्टीथायरायड औषधियाँ सह्य न हों अथवा उनके प्रयोग से कोई प्रभाव न हो रहा हो तथा जिनमें ग्रंथिच्छेद (Thyroidectomy) निषिद्ध हो। (३) अवटुकाविषयता (Thyrotoxicosis) के जिन रोगियों में गम्भीर हृदयविकार का उपद्रव हो और इस प्रकार जीवन की आशा बहुत कम हो।

प्रत्येक रोगी के लिए वैयक्तिक मात्रा का निर्धारण करना पड़ता है। इसके लिए ग्रंथि के आकार एवं रोग की गम्भीरता तथा तीसरे इस बात को भी ध्यान में रखा जाता है, कि औषधि प्रयुक्त करने पर वास्तव में कितनी मात्रा का स्थिरीकरण थायरायड में होता है, तथा औषधि गुण-कर्म के लिए कितनी मात्रा ग्रंथि द्वारा उपलब्ध होती है। एतदर्थ पहले एक परीक्षणमात्रा (Tracer-

dose) का सेवन कराया जाता है। निर्धारित मात्रा का प्रयोग इकट्ठे एक मात्रा में अथवा २-३ माह के अन्तर से दो मात्राओं में विभक्त करके भी किया जाता है। सामान्यतः पहली मात्रा ५-१५ मिलिक्युरीज की देनी चाहिए और २–३ महीने के बाद यदि अवटुका विषाक्तता के उपद्रव फिर भी लक्षित हो रहे हों, तो दूसरी मात्रा दी जा सकती है।

कभी-कभी हृच्छूल (Angina Pectoris) तथा रक्ताधिक्य जन्य हृद्भेद (Congestive heart-failure) में थायरायड की क्रिया सामान्य होने पर भी उपावटुकाग्रंथिता (Hypothyroidism) उत्पन्न करने के लिए रेडियो-एक्टिव आयोडीन का व्यवहार उपयोगी होता है। परीक्षण मात्रा द्वारा थायरायड द्वारा संग्रहीत एवं मूत्र के साथ उत्सर्गित रेडियो-एक्टिव आयोडीन मात्रा के आधार पर थायरायड के गुण-कर्मीय व्यापारों की परीक्षा की जा सकती है।

सेवन-विधि—रेडियो-एक्टिव आयोडीन का प्रयोग जलीय सोल्यूशन के रूप में मुखद्वारा अथवा शिरामार्ग द्वारा किया जाता है। नैदानिक प्रयोजन के लिए प्रायः १ से ४० माइक्रोक्युरी (Tracer dose) की मात्रा प्रयुक्त की जाती है। अवटुका विषमयता में १ वार में प्रयुक्त करने के लिए अधिकतम मात्रा ८ मिलिक्युरिज की होती है। इसको या तो इकट्ठे एक मात्रा में प्रयुक्त करते हैं। अथवा पहली वार में आधे से ज्यादा औषधि दे दी जाती है। और शेष भाग २-३ महीने के वाद दूसरी मात्रा के रूप में प्रयुक्त की जाती है।

गर्भवती स्त्रियों में तथा बच्चों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(नॉट-ऑफिशल)

पैराथायरायड ग्लैंड्स (उप-अवटुका ग्रंथि)

(Parathyroid Glands)

ग्रैवेयक या अवटुकाग्रंथि (Thyroid Gland) से संलग्न (प्रायः) ४ छोटी-छोटी ग्रंथियाँ होती हैं, जिनको उप-अवटुका ग्रन्थि (Parathyroid glands) कहते हैं। इसका अन्तः स्राव (Hormone) भी अनेक महत्त्वपूर्ण क्रियाओं के संतुलन के लिए आवश्यक होता है। अतएव उक्त स्राव के न्यूनाधिक्य से अनेक विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं। उक्तस्राव, नाड़ी संस्थान की क्रियाओं के संतुलितरूप से स्थिरीकरण में तथा रक्तगत फास्फेट एवं केल्सियम् की मात्रा के समुचित संकेन्द्रण में विशेष सहायक होता है। क्षीणोप-अवटुक ग्रंथिता अपना उपावटुकग्रन्थि की कार्यहीनता (Hypoparathyroidism) की अवस्था में निम्न वैकृतिक अवस्थायें उत्पन्न होती हैं—(१) रक्त में उपचूर्णमयता (Hypocalcaemia) की स्थिति का उत्पन्न होना, जिससे रक्तगत कैल्सियम् की प्रतिशतक मात्रा सामान्य (१० मिलिग्राम %) से कम हो जाती है; (२) रक्त में भास्वर की प्रतिशतक मात्रा का सामान्य से अधिक होना (Hyperphosphataemia); (३) कैल्सियम् (Ca.) तथा फास्फोरस (P.) के निस्सरण में ह्रास होना तथा (४) अपतानिका (Tetany) नामक रोग की उत्पत्ति। परमोप-अवटुकग्रंथिता अथवा उपवटुकग्रंथि की क्षिप्रकारिता (Hyprerpara thyroidism) की स्थितियों निम्न विकार लक्षित होते हैं—(१) रक्त में परमचूर्णमयता (Hypercalcaemia) की उत्पत्ति; (२) रक्तगत भास्वर प्रतिशत मात्रा में ह्रास (Hypophosphataemia) होना

(३) मूत्र में केल्सियम् तथा फास्फोरस (भास्वर) का अपेक्षाकृत अधिक निस्सरण (Excretion) होना; (४) रक्तराशि में कमी होना तथा वृक्क का कार्याघात (Renal failure) तथा भूख की कमी, वमन, अतिसार एवं पेशी-दौर्बल्य की उत्पत्ति। अन्ततः सन्यास (Coma) की स्थिति उत्पन्न होकर मृत्यु तक हो जाती है।

उप-अवटुकाग्रंथि की कार्यहीनता में, उक्तग्रंथि के सत्व का व्यवहार चिकित्सार्थ इंजेक्शन द्वारा किया जाता है। किन्तु अधिक काल तक निरन्तर इसका सेवन करने से संचायी प्रभाव (Cumulatiue effect) के कारण क्षिप्रकारिता जन्य (Hyperpara thyroidism) उपद्रवों के उत्पन्न होने की आशंका रहती है।

इन्जेक्शिओ पैराथायरायडियाइ Injectio Parathyroidei. (Inj.Para-thyroid.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव पैराथायरायड **Injection of Para-thyroid**—अं०। पर्याय—पैराथायरायड एक्ट्रैक्ट **Parathroid Extract** (उप-अवटुकाग्रंथि सत्व); पैराथॉरमोन **Parathormone;** पैरायडिन **Paroidio;** लाइकर पैराथायरायडियाइ **Liquor Parathyroidei, u. S. P.** ।

वर्णन—यह उप-अवटुकाग्रंथि के जल-विलेय सत्वों (Water-Soluble principles) का विशोधित (Sterile) जलीय विलयन होता है, जो इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। मनुष्य एवं अन्य जानवरों में इसके प्रयोग से उप-अवटुकाग्रंथि की कार्यहीनता से उत्पन्न अपतानिका (Para-thyroid tetany) जन्य उपद्रवों का शमन होता है तथा रक्त में केल्सियम् की प्रतिशतक मात्रा में वृद्धि होती है। उक्त विलयन की १ सी० सी० मात्रा में कम से कम १०० यूनिट (U. S. P. Units) की क्रियाशीलता (Potency) होती है। प्रत्येक यूनिट उस मात्रा का $\frac{१}{१००}$ वां भाग होता है, जिसके सेवन के १६–१८ घंटे के बाद स्वस्थ कुत्ते के १०० सी० सी० रक्तरस (Blood Serum) में केल्सियम् की मात्रा में १ मिलिग्राम की वृद्धि होती है। मात्रा—२५ युनिट (U. S. P. units) पेशीगत सूचिका भरण द्वारा।

आमयिक प्रयोग।

पैराथायरायडसत्व का प्रयोग उन सभी अवस्थाओं में किया जा सकता है, जिनमें रक्त में कैल्सियम् की प्रतिशतक मात्रा सामान्य से कम हो गई हो, किन्तु अस्थियों में कैल्सियम की कमी न हो; क्योंकि यह अस्थियों में कैल्सियम की कमी न हो; क्योंकि यह अस्थि एवं अन्य धातुओं से जहां कैल्सियम् का संग्रह होता है, उसको स्थानान्तरित कर के ही रक्त में कैल्सियम् की मात्रा को बढ़ाता है। अतएव इसका मुख्य उपयोग अपतानिका (**Tetany**) रोग में किया जाता है। (विशेषतः अवटुकोच्छेदनोपरान्त उत्पन्न अपतानिका रोग में)। इसके अतिरिक्त यह उद्वेष्टन-प्रियता (**Spasmophilia**), गम्भीरपेश्यवसन्नता (**Myasthenia gravis**) तथा **वेपथुमय अंगघात** (**Paralysis agitans**) में भी उपयोगी होता है। कैल्सियम के साथ सीस (**Lead**) का शरीर से निस्सरण कराने के कारण सीस–विषमयता (**Lead-poisoning**) की अवस्था में भी इसका प्रयोग उपयोगी होता है। जिन अवस्थाओं में शरीर में अधिकाधिक केल्सियम की आवश्यकता होती है, यथा अस्थिवक्रता (**Rickets**), अस्थि-मृदुता (**Osteomalaica**) एवं यक्ष्मा (**Tuberculosis**) आदि, उनमें पैराथायरायड के प्रयोग का कोई उपयोग नहीं है।

पैराथायरायडसत्व का प्रयोग अधस्त्वक् या पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा होना चाहिए; क्योंकि इसके मौखिक सेवन से कोई प्रभाव नहीं होता। दूसरे यह एक उग्रप्रभाववाली औषधि है तथा इसमें संचय की भी प्रवृत्ति (Cumulative) पाई जातीहै। अतएव रक्तगत केल्सियम् की मात्रा का परीक्षण करते रहना चाहिए, अन्यथा परमचूर्णमयता (Hypercalcaemia) की स्थिति उत्पन्न होकर लेने के देने की दशा हो सकती है।

विषाक्त-प्रभाव (Toxic Symptoms)—परमचूर्णमयता (Hypercalcaemia) की स्थिति में निम्न उपद्रव लक्षित होते हैं—बेचैनी, श्वसन में कष्ट, पेशी-दौर्बल्य, वमन, क्षुधानाश, अतिसार सुस्ती, आलस्य मालूम होना तथा जम्हाई आना (Drowsiness), शोणितमेह (Haematuria) तथा अन्ततः निपात (Collapse) होकर मृत्यु हो जाती है।

डाइहाइड्रोटेकिस्टेराल Dihydrotachysterol (A. T. 10)—यह अर्गस्टेराल (Ergosterol) से प्राप्त किया जाता है। अतः यद्यपि रासायनिक दृष्टि से विटामिन डी$_2$ (Vitamin D_2) से मिलता जुलता है, किन्तु क्रिया की दृष्टि से पैराथायरायड अन्तःस्राव की भांति है। और इसका आमयिक प्रयोग भी ठीक उसी की भांति है। मात्रा—५ से १५ मिलिग्राम (जब तक रक्तगत केल्सियम् की प्रतिशतक मात्रा सामान्य न हो जाय और इसमें प्रायः ८-१० दिन लगते हैं)।

इंजेक्शिओ इन्सुलिनाइ (इन्सुलिन) I. P., B. P.

नाम—इन्जेक्शिओ इन्सुलिनाइ Injectio Insulini (Inj. Insulin.). इन्सुलिनम् Insulinum—ले०; इन्जेक्शन ऑव इन्सुलिन Injection of Insulin, इन्सुलिन Insulin—अ०; मधुनिषूदन—सं०।

प्राप्ति-साधन—यह स्तनधारी जीवों के अग्नाशय से प्राप्त होने वाले मधुमेहनिवारक तत्त्व (Antidiabetic principle) का विशोधित विलयन (Sterile Solution) होता है, जिसके प्रत्येक मिलिलिटर (Per ml.) या प्रत्येक सी० सी० (Per C. C.) में २०,४० या ८० युनिट इन्सुलिन होता है। वक्तव्य—प्रामाणिक इन्सुलिन हाइड्रोक्लोराइड (Standard insulin hydrochloride) की ०·०४५५ मिलिग्राम मात्रा बराबर होती है १ युनिट के।

स्वरूप—यह रंगहीन तथा स्वच्छ द्रव के रूप में होता है, जिसमें कोई गंदगी (Turbidity) नहीं होती तथा रखने से किसी प्रकार का कोई प्रक्षेप (Deposit) नहीं होता। वक्तव्य—इन्जेक्शन ऑव इन्सुलिन के शक्ति का प्रमापन जैविकीय पद्धतियों (Biological assay) द्वारा किया जाता है। संग्रह (Storage)—इन्सुलिन का संग्रह शीतस्थान में करना चाहिए और २०° तापक्रम से अधिक गर्मी तो किसी भी हालत में इसके लिए अभीष्ट नहीं है। इस प्रकार सुरक्षित करने से pH_3 से pH_4 के बीच हाइड्रोजन-अयन संकेन्द्रण पर इन्सुलिन की शक्ति या क्रियाशीलता २ वर्ष तक ज्यों की त्यों बनी रहती है। वक्तव्य—इन्जेक्शन की शीशी पर इन्सुलिन की निर्माण तिथि Date of manufacture) तथा इसकी क्रियाशीलता की अवधि (अर्थात् कितने समय तक इसकी क्रियाशीलता बनी रहेगी, जिससे यह ज्ञात हो सके कि उक्त समय के बाद औषधि निष्क्रिय हो जाने के कारण प्रयोग के योग्य नहीं होगी) का द्योतक लेबिल अवश्य लगा होना चाहिए।

मात्रा—इन्जेक्शन द्वारा। मात्रा का निर्धारण वास्तव में रोगी की स्थिति के अनुसार चिकित्सक द्वारा ही होता है। सामान्यतया मात्रा का स्पष्ट उल्लेख न होनेपर २० युनिट प्रति मिलिलिटर केवल का विलयन प्रदान करना चाहिए। साधारणतया २० युनिट की मात्रा दिन में २ बार (प्रातः सायं) दी जाती है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अग्न्याशय (Pancreas) एक उभयतः स्रावी ग्रंथि है। अर्थात् इससे एक बहिःस्राव की उत्पत्ति होती है, जिसको अग्न्याशयिक रस (Pancreatic juice) कहते हैं और दूसरा एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अन्तःस्राव (Internal secretion) भी इसके अग्निद्वीपों (आइलेट्स ऑव लैंगर हान्स Islets of Langerhans) की कोशाओं (B-cells) से स्रवित होता है। इसीको इन्सुलिन (Insulin) या मधुनिपूदनि कहते हैं। उक्त अन्तःस्राव पुनः रसायनियों द्वारा शोषित होकर रक्तसंवहन में पहुँचता रहता है और शरीर में कार्बोहाइड्रेट-समवर्त (Carbohydrate metabolism) के संपादन में प्रधानतया सहायक होता है। जो कुछ आहार हम सेवन करते हैं, उसका अन्तिम रूपान्तर ग्लूकोज के रूप में होकर शारीरिक क्रिया व्यापार में इसी रूप में खर्च होता है। उक्त ग्लूकोज का संचय यकृत एवं पेशियों आदि में ग्लाइकोजन के रूप में होता है, और आवश्यकता पड़ने पर यह ग्लूकोज के रूप में परिवर्तित होकर शारीरिक क्रिया व्यापार के सम्पादन में खर्च होता है। उक्त सब कार्य इन्सुलिन के द्वारा होता है। रक्त में भी शर्करा की एक निश्चित प्रतिशतक मात्रा रहती है, उसमें एक (उप मधुमयता Hypoglycaemia) अथवा (परममधुमयता Hyperglycaemia) होना, दोनों ही अवस्थायें शरीर के घातक होती हैं। इन्सुलिन के अभाव में न तो ग्लूकोज का संचय ग्लाइकोजन के रूप में यकृत तथा पेशियों में हो पाता है और नहीं उसका रूपान्तर जारणोपयुक्त रूप में हो पाता है। अतएव अपव्ययी व्यक्ति की भाँति ग्लूकोज का दुरुपयोग होने लगता है। रक्त में शर्करा की प्रतिशतक मात्रा बढ़ जाती है और अन्त में मूत्र के साथ उसका उत्सर्ग होने लगता है और इक्षुमेह या शर्करामेह (Glycosuria) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार शरीर से शर्करा का अत्यधिक निस्सरण होने से रोगी क्षीण एवं कृश होने लगता है। आगे चलकर वसा के समवर्त (Fat metabolism) में भी विकृति होती है, जिससे उसका जारण (Oxidation) समुचित रूप से नहीं होता। परिणामतः वसा के कच्चे जारण के कुपरिणाम स्वरूप अनेक घातक अपद्रव्य-यथा एसिटो-एसिटिक एसिड, हाइड्रॉक्सिव्यूटरिक एसिड, आदि शरीर में संचित होते तथा अन्ततः मूत्र में उत्सर्गित होने लगते हैं। इसके अतिरिक्त श्वसन-गुणक (Respiratory quotient) भी गिर जाता है, जो इस बात का द्योतक है कि जो ऑक्सीजन शरीर में जारित हुआ है, वह पूरा-पूरा कार्बनडाइ-ऑक्साइड (CO_2) के रूप में श्वसन के साथ उत्सर्गित नहीं हो रहा है, यद्यपि स्वस्थावस्था में ऐसा होता है।

चिकित्सार्थ प्रयुक्त करने के लिए प्राप्त इन्सुलिन का अधस्त्वक् सूचिकाभरण करने से इन्सुलिन के अभाव के कारण उत्पन्न उपर्युक्त सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। अतएव अधुना इन्सुलिन, मधुमेह रोग (Diabetes Mellitus) की मुख्य औषधि समझी जाती है। किन्तु इससे व्याधिका मूलोच्छेद नहीं होता। जबतक इन्सुलिन का इन्जेक्शन देते रहते हैं, केवल उसी

समय तक रोग की शान्ति रहती है। इन्सुलिन का इन्जेक्शन देते ही २४-४८ घंटे के अन्दर मधुमेह के सभी प्रधान लक्षण (Cardinal Symptoms) शान्त हो जाते हैं। अतएव सम्भावी (Threatened) अथवा उत्पन्न (Actual) मधुमेहसन्यास (Diabetic-coma) की यह रामबाण औषधि है। उक्त अवस्था में आवश्यकतानुसार अधिक मात्रा (४० से ६० युनिट आवश्यता पड़ने पर २४ घंटे में २०० युनिट तक) में तथा शीघ्रपरिणाम उत्पन्न करने के लिए शिरामार्ग (Intravenous route) का भी अवलम्बन करना पड़ता है। यदि अधिक मात्रा में इन्सुलिन दिया गया हो, तो उपमधुमयता (Hypoglycaemia) के निवारण के लिए मुख द्वारा ग्लूकोज भी देना चाहिए। एतदर्थ गुदमार्ग द्वारा सोडियम् बाइ-कार्बोनेट के ३% विलयन का भी प्रयोग किया जाता है।

इसी प्रकार पिड़कोत्पत्ति (Furunculosis) विशेषतः प्रमेह पिड़िका (Carbuncle), अम्लोत्कर्ष (Acidosis) एवं शुक्तोत्कर्ष (Ketosis) चाहे मधुमेहज हो अथवा अन्य कारण से उत्पन्न हो—में भी इन्सुलिन विशेष उपयोगी है। रक्त में परम मधुमयता (Hyperglycaemia) होने से उत्पन्न उपद्रवों-यथा नाड्यर्ति (Neuralgia), कण्डु एवं शिश्नमणिशोथ (Balanitis) आदि- में भी इन्सुलिन से लाभ होता है। गर्भवती के वमन (Hyperemesis gravidarum) में इन्सुलिन इन्जेक्शन के साथ-साथ मुखद्वारा ग्लूकोज देने से वमन शान्त हो जाता है। कभी-कभी बहिर्नेत्र गलगण्ड में भी इसका प्रयोग उपयोगी होता है। मधुमेहियों में शल्यकर्म के पूर्व इन्सुलिन का इन्जेक्शन देने से किसी प्रकार के उपद्रव की आशंका नहीं रहती। सकम्प प्रलाप (Delirium tremens) में ४० से ८० युनिट की मात्रा में इन्सुलिन का इन्जेक्शन देने से बहुत लाभ होता है। उक्त मात्रा से रक्त में शर्करा की प्रतिशतक मात्रा सामान्य से कम न हो जाय, इसके निवारण के लिए साथ ही मुख द्वारा ग्लूकोज भी देना चाहिए।

इन्सुलिन का प्रयोग कभी-कभी दुष्पोष्यता (Malnutrition) अर्थात् मधुमेह के अतिरिक्त शारीरिक क्षीणता की अवस्था में भी किया जाता है। ऐसी अवस्था में अपेक्षाकृत इसका सेवन कम मात्रा में करना चाहिए। इससे भूख बढ़ती तथा कार्बोहाइड्रेट का पाचन समुचित रूप से होता है, जिससे रोगी के शरीर का भार बढ़ने लगता है। इसके अतिरिक्त इन्सुलिनुत्पादक अंग को भी उत्तेजना मिलती है। एतदर्थ १० युनिट की मात्रा भोजन के आधे घन्टे पूर्व दिन में तीन बार प्रयुक्त की जाती है। उत्तरोत्तर मात्रा बढ़ाई भी जा सकती है। कभी-कभी उग्र उपसर्गावस्था (Acute infection) में अत्यल्प मात्रा में इन्सुलिन के साथ ग्लूकोज देने से भी लाभ होता है।

सम्प्रति कतिपय मानसिक व्याधियों यथा साइज़ोफ्रेनिया (Schizophrenia) के चिकित्सार्थ इन्सुलिन के द्वारा सन्यास (Insulin coma) की अवस्था उत्पन्न कराई जाती है। एतदर्थ साल्यूबुल इन्सुलिन की २५ युनिट या आवश्यकतानुसार अधिक मात्रा अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त की जाती है। जरूरत के अनुसार उक्त सन्यास की अवस्था कई घंटों तक कायम रखी जाती है और स्वेच्छानुसार जब आवश्यक हो ग्लूकोज के शिरागत इन्जेक्शन द्वारा इसका निवारण कर सकते हैं।

प्रयोग-विधि (Modes of Administration)—मुख द्वारा नष्ट हो जाने के कारण इसकी कोई क्रिया नहीं होती। जिह्वाधः प्रयोग से इसका अंशतः शोषण अवश्य होता है, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से यह मार्ग भी विश्वसनीय नहीं है। अतएव इन्सुलिन का प्रयोग साधारण अवस्थाओं में सदैव अधस्त्वग् मार्ग द्वारा (Subcutaneously) करना चाहिए। आत्यधिक अवस्थाओं में शिरामार्ग से (Intravenously) भी दिया जा सकता है। एक युवा व्यक्ति के लिए १० युनिट की मात्रा दिन में ३ बार भोजन के आध घंटे पूर्व देना पर्याप्त होती है। इन्सुलिन के चिकित्सा क्रम में सबसे खतरे की बात होती है रक्त में शर्करा की मात्रा का आवश्यकता से अधिकतम हो जाना (उपमधुमयता Hypoglycaemia), जिसमें लेने के देने पड़ जाते हैं। अतएव रक्त का परीक्षण शर्करा की प्रतिशतक मात्रा के लिए करते रहना चाहिए। यदि यह सम्भव न हो तो, रोग की उग्रता, रोगी का शरीरभार, एवं आहारमात्रा तथा उपद्रवों का विचार करते हुए यथासम्भव कम से कम मात्रा प्रयुक्त करनी चाहिए। सामान्यतः ऐसी स्थिति में मात्रा २० युनिट से अधिक नहीं बढ़ानी चाहिए। यदि औषधि अधिक मात्रा में देने की आवश्यकता हो तो उसको कई मात्राओं में विभक्त करके देना चाहिए। इन्सुलिन–चिकित्साकाल में रोगी को उपवास नहीं करना चाहिए। मूत्र में शर्करा आने पर भी जिन विकृतियों में रक्तगत शर्करा की प्रतिशतक मात्रा अधिक न हो तो ऐसी अवस्था में इन्सुलिन का प्रयोग नहीं करना चाहिए, जैसे वृक्कीय शर्करामेह (Renal glycosuria)। २ ग्राम शर्करा के समवर्त के लिए १ युनिट इन्सुलिन पर्याप्त होती है। अतएव प्रतिदिन जितने ग्रामशर्करा का निस्सरण हो रहा हो उसके आधे युनिट्स इन्सुलिन २–३ मात्राओं में विभक्त कर के आधार के ½ घंटे पूर्व देना चाहिए।

इन्सुलिन का प्रभाव इन्जेक्शन के १५ मिनट बाद से ही होने लगता है और पूर्ण प्रभाव ३ घंटे में होता है। जब अधिक मात्रा एक ही बार में दी जाती है तो उसका प्रभावकाल १० युनिट की अपेक्षा द्विगुण होता है। शिरागतमार्ग से प्रयुक्त होने पर प्रभाव भी क्षिप्रता पूर्वक होता है और प्रभाव १–२ घंटे के बाद ही खत्म भी हो जाता है।

मात्रातियोग के परिणाम (Result of Overdosage) अर्थात् इन्सुलिनजन्य उपमधुमयता—इन्सुलिन के चिकित्सा-क्रम में, जैसा पहले भी उल्लेख किया गया है, रक्त में शर्करा की प्रतिशतक मात्रा के सहसा कम हो जाने का बहुत खतरा रहता है। इसको उपमधुमयता की अवस्था (हाइपोग्लाइसिमिया Hypoglycaemia) कहते हैं। ऐसी स्थिति प्रायः अधिक मात्रा एवं कम बार में इन्सुलिन के प्रयोग से होती है। उपद्रवों की उग्रता रक्तगत शर्करा की प्रतिशतक मात्रा के कम होने के अनुसार होती है। उक्त रक्तगतशर्करा के ०·०७ प्रतिशत हो जाने पर तो केवल बेचैनी एवं घबराहट होती है तथा रोगी को अनुभव होता है कि प्राण संकट में पड़नेवाला है। ०·०६ प्रतिशत पर दौर्बल्य, घबड़ाहट, आँखों के सामने अंधेरा हो जाना आदि तथा अत्यधिक प्रस्वेद होता है। ०·०४–०·५५ प्रतिशत मात्रा होने पर तो घातक स्थिति उत्पन्न हो जाती है और सन्यास होकर रोगी की मृत्यु तक हो जाती है। ऐसी स्थिति में अविलम्ब ग्लूकोज सॉल्यूशन (१२½ से २५ ड्राम जल में ७५ से ३०० ग्रेन ग्लूकोज का विलयन) का शिरामार्ग द्वारा इन्जेक्शन करना चाहिए। साथ ही एड्रीनेलीन (१ सी० सी०) का इन्जेक्शन देना चाहिए। ½ से १ सी० सी० की मात्रा में पिच्युट्रिन का भी इन्जेक्शन दे सकते हैं।

इन्सुलिन के अन्य योग (Insoluble Insulin)

जैसा कि पहले उल्लेख हो चुका है, साल्यूबुल इन्सुलिन (Soluble Insulin) में यह दोष होता है कि इसकी क्रियाशीलता शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। अतएव इन्सुलिन के ऐसे योगों के निर्माण की ओर लोगों की प्रवृत्ति हुई जिनकी क्रिया देर तक बनी रहे। परिणामतः कतिपय ऐसे योगों के निर्माण में सफलता भी मिली है, जिनका उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

इन्जेक्शिओ इन्सुलिनाइ प्रोटामिनेटी कम् जिंको Injectio Insulini Protaminati cum Zinco I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव प्रोटामीन जिंक इन्सुलिन (Injection of Protamine Zinc Insulin), प्रोटामीन जिंक इन्सुलिन (Protamine Zinc Insulin P. Z. I.)—अं०।

वर्णन—यह स्तनधारियों के अग्न्याशय से प्राप्त होने वाले विशिष्ट मधुमेह निवारक तत्त्वों का विशोधित निलम्बन (Suspension) होता है, जिसमें उपयुक्त प्रोटामीन एवं जिंक क्लोराइड भी मिला दिया जाता है। उक्त विलयन के प्रत्येक मिलिलिटर या सी० सी० में ४० या ८० युनिट इन्सुलिन होता है। इसमें मध्यस्थ द्रव या थापी (Buffer) के रूप में सोडियम् फास्फेट भी मिला दिया जाता है। इसका संरक्षण भी इन्जेक्शन ऑव इन्सुलिन की ही भाँति ठंढे में करना चाहिए।

यह एक प्रायः रंगहीन धुँधले (Turbid) द्रव के रूप में प्राप्त होता है। शीशी रखी रहने पर निलम्बित द्रव तल में बैठ जाता है, तथा साल्यूबुल इन्सुलिन की अपेक्षा यह और भी अस्थिर (Unstable) होता है। विशिष्ट अवधि के बाद यह निष्क्रिय होने से अप्रयोज्य हो जाता है। अतएव शीशी पर लेबिल होना चाहिए, जिसमें निम्न बातों का उल्लेख हो:—

(१) निर्माण तिथि; (२) कितनी अवधि के पश्चात् अप्रयोज्य है तथा (३) दवा खींचने के पूर्व शीशी को खूब हिलाकर तब दवा सिरिंज में खींचे।

मात्रा—(इंजेक्शन द्वारा)। मात्रा का विशिष्ट निर्देश न होने पर ४० युनिट प्रति मिलि-लिटर की शीशी देनी चाहिए।

ग्लोबिन जिंक इन्सुलिन Globin Zinc Insulin I. P., B. P. या ग्लोबिन इन्सुलिन Globin Insulin (G. I.)—

वर्णन—यह एक स्वच्छ द्रव के रूप में होता है, जो इन्सुलिन के साथ जिंक क्लोराइड तथा बछड़े के रक्त से प्राप्त वर्तुलि (ग्लोबिन Globin) को मिलाकर बनाया जाता है।

वक्तव्य—इसका प्रभाव स्टैंडर्ड इन्सुलिन की अपेक्षा अधिक विलम्ब तक तथा प्रोटामिन-जिंक-इन्सुलिन की अपेक्षा कम समय तक रहता है।

शिरागत इंजेक्शन द्वारा इसको नहीं प्रयुक्त करना चाहिए, क्योंकि यह रक्त में पहुँचकर प्रक्षिप्त (Precipitated) हो जाता है। अतएव आत्ययिक प्रयोग की दृष्टि से यह व्यर्थ है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अविलेय इन्सुलिन योगों (Insoluble Insulin) का प्रभाव विलम्ब तक तथा एकसा होने के कारण ऐसी अवस्थाओं में जब दिन में अनेक बार इन्सुलिन इन्जेक्शन की

आवश्यकता होती है, तो प्रायः उपर्युक्त अविलेय योग अधिक उपयुक्त होते हैं। इनमें उपमधु-मयता जन्य प्रतिक्रिया (Hypoglycaemic reaction) की आशंका भी अपेक्षाकृत कम रहती है। किन्तु मधुमेही में आहारजन्य मधुमयता के नियन्त्रण के लिए यह पर्याप्त नहीं होता, क्योंकि इसका प्रभाव धीरे-धीरे होता है। प्रोटामीन-जिंक इन्सुलिन का प्रभाव २–३ घंटे के पश्चात् प्रारम्भ होकर साधारण रूप से तो ४८ घण्टे तक रहता है, और ग्लोबिन-इन्सुलिन (G.I.) का अधिकतम प्रभाव ६–८ घंटे तक रहता है। केवल प्रोटामीन-जिंक-इन्सुलिन के चिकित्सा क्रम में रक्तगत शर्करा की स्थायी कमी प्रायः १–२ सप्ताह में होती है, अतएव प्रारम्भ में सहसा इसकी मात्रा बढ़ाने की आवश्यकता नहीं है।

उग्रस्वरूप के मधुमेही में साल्यूबुल तथा इन्साल्यूबुल इन्सुलिन के चिकित्साक्रम में विशेष लाभ होता है। एतदर्थ प्रातः काल जलपान (Breakfast) के २० मिनट पूर्व एक इंजेक्शन २ भाग साल्यूबुल इन्सुलिन के साथ १ भाग प्रोटामीन-जिंक-इन्सुलिन के अनुपात से दिया जाता है। आवश्यकतानुसार ऐसी ही दूसरी मात्रा रात्रि में दी जा सकती है। दूसरी पद्धति यह भी है कि २४ घंटे में जितना इन्सुलिन देना हो उसका ¾ भाग प्रोटामीन-जिंक-इन्सुलिन के रूप में प्रातः जलपान के पूर्व दिया जाता है और शेष ¼ भाग साल्युबुल इन्सुलिन के रूप में रात्रि के भोजन के १-२ घन्टे पूर्व देते हैं। इस प्रकार के मिश्रित चिकित्साक्रम में इन्सुलिन का अधिकतम प्रभाव इन्जेक्शन के ३-४ घन्टे के बाद से प्रारम्भ होकर लगभग १८ घन्टे तक रहता है। साधारण प्रकार के रोगियों में प्रतिदिन प्रोटामीन-जिंक इन्सुलिन की एक सूई देते रहने से ही काम चल जाता है।

वक्तव्य—अविलेय इन्सुलिन योगों की चिकित्सा क्रम में कालान्तर से कभी-कभी संचायी प्रभाव (Cumulative action) जन्य उपमधुमयता (Protamine zinc insulin hypoglycaemia) के उपद्रव हो जाता है। अतएव इसके लिए सतर्क रहना चाहिए। दूसरे एक ही स्थान पर बार-बार इन्जेक्शन देने से सूजन एवं कोथ आदि उत्पन्न होने का भय रहता है। अतएव स्थान बदल-बदल कर सूई देनी चाहिए।

इन्सुलिन जिंक सस्पेन्सन (क्रिस्टलाइन) Insulin Zinc Suspension (I. Z. S.) Crystalline, B. P. Add.

पर्याय—Crystalline I. Z. S.; Insulin Ultra Lente.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह स्तनधारी जन्तुओं के अग्न्याशय से प्राप्त मधुमेह निवारक तत्व Antidiabetic principle) एवं जिंक क्लोराइड का विसंक्रमित निलम्बन (Sterile buffered Suspension) होता है, जिसमें इन्सुलिन के क्रिस्टल्स निलम्बन की अवस्था में रहते हैं। प्रायः रंगहीन धुँधले द्रव के रूप होता है। प्रत्येक मि० लि० (सी० सी०) में ४० से ८० युनिट औषधि होती है। वक्तव्य—सूचकपत्र (Label) पर लिखित तिथि के बाद औषधि प्रयोग के योग्य नहीं होती। अतएव उक्त तिथि के बाद इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। मात्रा—आवश्यकतानुसार।

इन्सुलिन जिंक सस्पेन्सन (एमॉर्फस्) Insulin Zinc Suspension (Amorphous), B. P. Add.

पर्याय—Amorphous I. Z. S.; Insulin Semi lente।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—उपर्युक्त की भांति। अन्तर केवल यह होता है, कि इस निलम्बन में इन्सुलिन के कण कोई खास आकार-प्रकार के नहीं (Amorphous) होते हैं।

मात्रा—आवश्यकतानुसार।

इन्सुलिन जिंक सस्पेन्सन Insulin Zinc Suspension, B. P. Add.

पर्याय—Insulin lente.

वर्णन—यह रंगहीन धुंधला द्रव (Turbid liquid) होता है, जिसका सूक्ष्मदर्शक द्वारा परीक्षण करने पर इन्सुलिन के कण सूच्याकार त्रिपार्श्विक कणों (Mono-clinic prismatic crystals) के रूप में दिखाई देते हैं। आकार प्रकार में ये १० से ४० माइक्रान्स (microns) तक होते हैं। प्रति मि० लि० द्रव में ४० से ८० युनिट औषधि होती है। वक्तव्य—इसका संरक्षण यथासम्भव ठंडी जगह में करना चाहिए। मात्रा—आवश्यकतानुसार।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—उपर्युक्त तीनों योग इन्सुलिन के परिष्कृत योग हैं, जिनका निर्माण सर्व प्रथम डेनमार्क के वैज्ञानिकों ने किया। इनमें अनेक विशेषतायें हैं, जो इनसे पूर्व प्रचलित इन्सुलिन योगों में नहीं पायी जातीं। इन्सुलिन जिंक सस्पेंसन यौगिकोंके प्रयोग से स्थानिक अथवा सार्वदैहिक अनूर्जिक प्रतिक्रियाओं (Allergic reaction) की आशंका बहुत कम होती है, क्योंकि इसमें विजातीय प्रोटीन नहीं होता। जिंक प्रोटीन सस्पेन्सन (निलम्बन) का प्रभाव प्रयोग के बाद जल्दी ही होता है, तथा २४ घन्टे तक रहता है। अतएव दिन में १ इंजेक्शन देने से दिन भर प्रभाव बना रहता है। एमार्फस जिंक सस्पेंसन का भी प्रभाव जल्दी ही प्रारम्भ होकर १४ घंटे तक बना रहता है। क्रिस्टलाइन निलम्बन का प्रभाव २४ घन्टे तक रहता है। दूसरी विशेषता इन यौगिकों की यह है, कि इनको परस्पर मिलाकर भी प्रयुक्त कर सकते हैं। किन्तु पेनिसिलिन के इन निलम्बन यौगिकों को विजातीय-प्रोटीन घटित यौगिकों के साथ नहीं मिलाना चाहिए।

आइसोफेन इन्सुलिन Isophane Insulin U. S. P.

पर्याय—N. P. H. 50.

वर्णन—यह प्रोटामीन जिंक इन्सुलिन का परिष्कृत रूप है। इन्सुलिन का जलीय निलम्बन होता है, जो जिंक-इन्सुलिन क्रिस्टल्स के साथ प्रोटामीन मिलाकर बनाया जाता है। आइसोफेन इन्सुलिन का निलम्बन धुंधले रंग (Cloudy) का होता है। जिसके प्रति मि० लि० (सी० सी०) में ४० से ८० युनिट इन्सुलिन होती।

नामकरण—आइसोफेन इन्सुलिन का विलयन प्रतिक्रिया में न्युट्रल होता है, अतएव इसके सांकेतिक नाम N. P. H. 50. का N. रखा गया। चूंकि इसमें प्रोटामीन भी होता है, अतएव P. और चूंकि इस पेनिसीलिन के परिष्कृत यौगिक का निर्माण सर्वप्रथम हेजडोर्न (Hagedorn) नामक वैज्ञानिक ने किया था इसलिए H. रखा गया।

मात्रा—आवश्यकतानुसार।

गुण एवं प्रयोग—प्रायः इसके प्रयोग से २ घन्टे बाद इसका पूर्ण प्रभाव लक्षित होता है, और लगभग ३० घन्टे तक रहता है। सक्रियता की दृष्टि से इसको २ भाग इन्सुलिन के निलम्बन यौगिक एवं १ भाग प्रोटामीन जिंक इन्सुलिन का मिश्रण समझा जा सकता है। इसको भी दिन में १ बार प्रयुक्त करने से बराबर प्रभाव बना रहता है। इसको प्रारम्भ में जलपान (Breakfast) के पूर्व १० युनिट मात्रा दिया जा सकता है। प्रतिदिन ३-४ युनिट मात्रा बढ़ाते जायँ। जब रक्तगत शर्करा की मात्रा सामान्य (Normal) हो जाय तथा मूत्र में शर्करा आनी बन्द हो जाय तो औषधि बन्द कर सकते हैं। यदि भोजनोत्तर मूत्र में शर्करा आनी बन्द न हो तो इसको पेनिसिलिन के अन्य सॉल्युबुल यौगिकों के साथ मिलाकर व्यवहृत करें।

जिंक इन्सुलिन क्रिस्टल्स Zinc Insulin Cystals। (नॉट ऑफिशल)

यह क्रिस्टलाइन इन्सुलिन यौगिक है, जिसमें जिंक (०·४५ से ०·९ प्रतिशत) मिलाया जाता है। इसका सोल्यूशन पानी की तरह स्वच्छ होता है। प्रति मि० लि० (या सी० सी०) में ४० से ८० युनिट इन्सुलिन होता है। जिन रोगियों में इन्सुलिन के अन्य यौगिकों के प्रयोग से अनूर्जिक प्रतिक्रिया की आशंका अधिक हो उनके लिए यह उपयुक्त होता है।

मुख द्वारा सेवनोपयुक्त मधुमेहनाशक अन्य औषधियाँ:—

"बी ज़ेड ५५" BZ55। पर्याय—कारब्युटामाइड (Carbutamide); इनवेनोल (Invenol)।

वर्णन—यह एक सल्फोनेमाइड-व्युत्पन्न यौगिक है, जो रासायनिक दृष्टि से N-butyl-N'-sulphanilyurea होता है।

प्रयोग—यह मुखद्वारा सेवनोपयुक्त मधुमेहनाशक औषधि समझी जाती है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आँतों से क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाती है। प्रारम्भ में प्रतिदिन १ ग्राम (१५ ग्रेन) की मात्रा तीन बार दी जाती है। प्रारम्भ में कुछ दिनों तक यह क्रम चलाने के बाद मात्रा धीरे धीरे कम की जाती है और अन्त में प्रतिदिन केवल धारक मात्रा (Maintenance dose) १ या १½ ग्राम दिन भर में दी जाती है। किन्तु औषधि अत्यन्त विषैली है, अतएव इसकी उपयोगिता अभी बहुत सीमित है।

टालुब्युटामाइड Talubutamide (Orinase, rastinon)—

रासायनिक दृष्टि से यह N-butyl-N'-tolene P-Sulphonylurea होता है। यह भी कारब्युटामाइड की भाँति मधुमेहनाशक औषधि है। यह कारब्युटामाइड की अपेक्षा परिष्कृत यौगिक है। इसमें उसकी अपेक्षा विषाक्तता कम होती है।

ग्वानिडीन (Guanidine) एवं सिन्थेलिन 'बी' (Synthlin-B)—

मुखद्वारा सेवन किए जाने पर ग्वानिडीन रक्तगत शर्करा संकेन्द्रण को कम करता है, जिससे उपशर्करामयता (Hypoglycaemia) की स्थिति उत्पन्न होती है। इसके इस गुण का उपयोग मधुमेह की चिकित्सा में करने का प्रयास किया गया था। इसी आधार पर इसी के एक परिष्कृत यौगिक सिन्थेल्नि 'बी' का निर्माण किया गया है, जो रासायनिक दृष्टि से Dodecamethyl

guanidine hydrochloride होता है। मधुमेहियों में मुखद्वारा सेवन किए जाने पर यह रक्तगत शर्करा को कम करता है। मात्राक्रम—प्रथम दिन १५ मि० ग्रा० (¼ ग्रेन), दूसरे-तीसरे दिन ३० मि० ग्रा० (½ ग्रेन)। १ दिन के बाद पुनः इसी क्रम को दुहराया जा सकता है।

अधिवृक्कबहिस्तरीय अन्तः स्राव

(The hormones of the Suprarenal-cortex)

अधिवृक्क या उपवृक्क ग्रंथियाँ (Suprarenal glands) संख्या में २ होती हैं, जिनमें से एक-एक दोनों वृक्कों के ऊपरी सिरे पर स्थित होती हैं। शरीर रचना की दृष्टि से इनके २ भाग होते हैं—(१) बहिस्तर (Cortex); (२) अन्तस्तर (Medulla)। अन्तस्तर का अन्तः स्राव (Hormone) एड्रिनेलिन है, जिसका वर्णन रक्तवाहिनियों पर कार्यकर औषधियों के साथ किया जायगा। अधिवृक्कों के बहिस्तर से भी अनेक अन्तःस्राव उत्पन्न होते हैं, जो शरीर में अनेक महत्वपूर्ण क्रियाओं का संतुलन एवं सम्पादन करते हैं और उनके अभाव में अनेक विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं। अतएव सामान्य योग चिकित्सा या प्रतिनिधि-चिकित्सा (Replacement therapy) के आधार पर अधिवृक्क बहिस्तरीय सत्व का उपयोग सम्प्रति चिकित्सा में किया जाता है। अधिवृक्कों द्वारा निम्न अन्तःस्रावों (Hormones) की उत्पत्ति होती है :—(१) कार्बोहाइड्रेट-समवर्त नियंत्रक अन्तः स्राव (Carbohydrate metabolism hormones) इसको कॉर्टीसोन (Cortisone) या कम्पाउण्ड ई (Compound E) भी कहते हैं। (२) इलेक्ट्रोलिटिक एवं जलसमवर्त-नियंत्रक अन्तः स्राव (Electrolytic & water metabolism hormone)—इसको डेसऑक्सि कॉर्टिकॉस्टेरॉन (Desoxycorticosteron) या पर्कॉर्टेन (Percorten) कहते हैं तथा (३) प्रजननावयव सम्बन्धी अन्तः स्राव (Sex hormones)—अधिवृक्क के बहिस्तर में एन्ड्रोजन (Androgen), ईस्ट्रोन (Oestrone) तथा प्रोजेस्टेरॉन (Progesterone) नामक प्रजननावयव सम्बन्धी अन्तः स्रावों की भी उत्पत्ति अल्प मात्रा में होती है। अधिवृक्कों के उक्त क्रियाव्यापार में पीयूष-ग्रंथि के अग्रिम खण्ड (Anterior pituitary) के अधिवृक्कोत्तेजक अन्तः स्राव (Adreno-corticotropic hormone) द्वारा उत्तेजना मिलती है। अधिवृक्क बहिस्तर (Adrenal cortex) के मुख्य निम्न कार्य हैं—(१) इसके प्रभाव से इलेक्ट्रो लाइट्स तथा जल उचित मात्रा में वृक्कों द्वारा उत्सर्गित होते हैं।

इन्जेक्शिओ सुप्रारिनेलाइ कॉर्टिसिस Injectio Suprarenali Corticis (Inj. Suprarenal Cort.) B. P. C.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सुप्रारिनल कॉर्टेक्स—अं०।

पर्याय—एक्स्ट्रैक्ट ऑव सुप्रारिनल कॉर्टेक्स (Extract of Supra-renal Cortex); कोर्टिन (Cortin); यूकोरटोन (Eucortone)।

प्राप्ति-साधन—इसमें उपवृक्क बहिस्तर के सक्रिय तत्व होते हैं। बिल्ली तथा कुत्ता आदि जानवरों में जिनके उपवृक्क निकाल दिए गए हैं, इन्जेक्शन करने से उपवृक्क बहिस्तर के कार्यों का सम्पादन होने से जीवन प्राप्त होता है। यह बैलों के उपवृक्क ग्रन्थियों से बनाया जाता है।

वर्णन—इन्जेक्शन ऑव सुप्रारिनल कॉर्टेक्स एक स्वच्छ, प्रायः रंगहीन द्रव के रूप में प्राप्त होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है या इससे प्याज जैसी हल्की गंध आती है। विलयन को रखने

पर भी स्वच्छ बना रहता है तथा धुंधलापन (Opalescence) नहीं होता या द्रव के नीचे तलछट नहीं पाया जाता (Free from deposits)।

संघटन—इसमें उपवृक्क-बहिस्तर से प्राप्त अनेक स्टिरायड यौगिक (Steroid compounds) पाये जाते हैं, जिनमें निम्न मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं:—

कॉर्टिकोस्टेरोन (Corticosterone), डिहाइड्रोकॉर्टिकोस्टेरोन (Dehydrocorticosterone), हाइड्रॉक्सिकॉर्टिकोस्टेरोन (17-Hydroxycorticosterone), कॉर्टिसोन (Cortisone) एवं एल्डेस्टेरोन (Aldesterone) आदि। इसमें एसकोरविक एसिड नहीं पाया जाता। अत्यल्प मात्रा में एड्रिनेलीन पाया जाता है।

मात्रा—७५ से ६०० बूंद या मिनम् (५ से ४० मि० लि०), अधस्त्वक्, पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अधिवृक्क-बहिस्तरीय सत्व का मुख्य प्रयोग **एडिसन के रोग (Addison's disease)** में किया जाता है। उक्त रोग में अधिवृक्कों के बहिस्तर में अपजनन (Degeneration) होने से उसके स्रावों का सर्वथा अभाव पाया जाता है। अतएव उक्त व्याधि में सत्व के प्रयोग से प्रायः सभी उपद्रवों की शान्ति हो जाती है। चूंकि अधिवृक्क बहिस्तरीय अभावज लक्षण बहुत कुछ हिस्टामीनजन्य स्तब्धता एवं उग्रदग्धव्रणजन्य स्तब्धता (Histamine Shock and shock due to burns) से मिलते जुलते हैं, अतएव **शस्त्रकर्मज एवं आघातज स्तब्धता (Surgical and traumatic Shock)** में भी कॉर्टिन एवं डिसॉक्सिकॉर्टिकास्टेरोन का प्रयोग उपयोगी होता है। चूंकि **विसूचिका (Cholera)** की भयानक अवस्था में भी अत्यधिक जलापकर्षण होने से रक्त के परिमाण (Volume) में बहुत कमी पाई जाती है, अतएव हैजे में नमक का पानी (परमबल लवण जल Hypertonic Saline Solution) चढ़ाते समय उसमें कॉर्टिन (Cortin) भी मिलाकर दिया जा सकता है। गम्भीर पेश्यवसन्नता (Myasthenia gravis) में इन्जेक्शन द्वारा अथवा अधस्त्वक्-स्थापन (Implantation) द्वारा परकोर्टिन (Percorten) का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त गर्भिणी के वमन (Vomiting of Pregnancy), बालशोष (Infantile marasmus) आदि रोगों में भी इसका प्रयोग उपयोगी माना जाता है।

प्रयोग-विधि—**उग्र अभावज विकृतियों (Severe deficiency)** में प्रमापित (Standardised) कार्टिकल एक्स्ट्रेक्ट (अर्थात् कॉर्टिन Cortin) २५ सी० सी० पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा दिया जाता है। आत्ययिक अवस्था (Crisis) में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में (५० से १०० सी० सी० तक) शिरागत इन्जेक्शन द्वारा दिया जाता है। साथ ही **डिसॉक्सिकॉर्टिकॉस्टेरोन** २० मिलिग्राम की मात्रा में पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा देना चाहिए। इसके अतिरिक्त मुख द्वारा प्रतिदिन १० ग्राम (१५० ग्रेन या २½ ड्राम) सोडियम क्लोराइड एवं इसका आधा (७५ ग्रेन या १¼ ड्राम) सोडियम बाइ-कार्बोनेट देना चाहिए और रोगी को खूब पानी पीने को देना चाहिए। अथवा सोडियम् क्लोराइड एवं ग्लूकोज सॉल्यूशन शिरामार्ग द्वारा भी दिया जा सकता है। **चिरकालीन विकृतियों (Chronic**

Cases) में प्रतिदिन २ से ५ ग्राम डिसॉक्सि-कॉर्टिकोस्टेरोन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा तथा ६-८ ग्राम (९.०-१२० ग्रेन या १½ से २ ड्राम) सोडियम् क्लोराइड मुखद्वारा देने से अभीष्ट लाभ हो जाता है। डिसॉक्सिकॉर्टिकोस्टेरोन का प्रयोग इंजेक्शन के अतिरिक्त मुखद्वारा, जिह्वाधः प्रयोग द्वारा (Sublingualy) तथा उपयुक्त रोगियों में अधस्त्वक् स्थापन (Subcutaneous implantation) द्वारा भी किया जा सकता है। अधस्त्वक्स्थापन द्वारा प्रयुक्त करने के लिए १०० मिलिग्राम की मात्रा दी जाती है।

सावधानी—डिसॉक्सिकॉर्टिकोस्टेरोन (डोका Doca) के चिकित्सा क्रम में कभी कभी मात्राधिक्य के कारण अनेक भयानक उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं, यथा उपमधुमयता (Hypoglycaemia), धातुओं में सोडियम् क्लोराइड का आवश्यकता से अधिक मात्रा में स्थिरीकरण (जिसके कारण शरीर में शोफ Oedema हो जाता है), रक्ताधिक्य (Hypertension) तथा रक्ताधिक्यजन्य हृत्क्रिया-भेद (Congestive heart-failure) आदि।

कॉर्टिकोट्राफिन (Corticotrophin) B. P. Add.

पर्याय—एड्रिनोकॉर्टिकोट्राफिकहार्मोन Adrenocorticotrophic Hormone; ACTH.

प्राप्ति-साधन तथा वर्णन—कॉर्टिकोट्राफिन, बैल या सूअर के बच्चों के पीयूष ग्रंथि के अग्रिम खण्ड से प्राप्त अन्तः स्राव का विसंक्रमित योग होता है। इसके सेवन से उपवृक्क के बहिस्तरीय स्रावों पर उत्तेजक प्रभाव होता है। प्रत्येक ग्राम में कम से कम ०·७५ युनिट शक्ति होती है। यह सफेद रंग के अथवा मटमैले सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। कभी कभी यह पत्राकार छोटे-छोटे टुकड़ों (Flakes) के रूप में भी उपलब्ध होता है। जल अथवा लवणजल (Normal Saline) में बनाया हुआ इसका विलयन प्रायः स्वच्छ या कभी-कभी कुछ-कुछ धुंधला (Opalescent) होता है। संरक्षण—इसका संरक्षण अच्छी तरह से बन्द पात्रों में रखकर ठंढी जगह (२०°C से कम) में करना चहिए। अच्छी तरह संरक्षण करने पर २ साल तक इसकी सक्रियता बनी रहती है। सूचक-पत्र (Labelling)—सूचक-पत्र में निम्न बातों का उल्लेख होना चाहिए—(१) युनिटों में शक्ति का उल्लेख तथा (२) दिनांक, जिसके बाद यह प्रयोग के योग्य नहीं रहेगा।

मात्रा—६-६ घंटे पर १० से २५ युनिट पेशीगत इंजेक्शन द्वारा; १० से २५ युनिट शिरागत अन्तः संक्रमण (Intravenous infusion) द्वारा। इसके लिए इसको काफी मात्रा ग्लुकोज सोल्यूशन में मिलाकर शिरामार्ग से बहुत धीरे-धीरे (६ घंटे में) पहुँचाया जाता है।

गुण-कर्म—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली के पाचक किण्वों द्वारा नष्ट हो जाता है, अतएव औषधीय प्रभाव के लिए इसको इंजेक्शनद्वारा प्रयुक्त करते हैं। औषधि का प्रयोग पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा अथवा सिरामार्ग द्वारा शनैः शनैः अन्तः संक्रमण (Intravenous infusion) किया जाता है। पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर भी औषधि का कुछ अंश नष्ट हो जाता है। अतएव प्रभाव की दृष्टि से शिरामार्ग सबसे उत्तम है। शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने के बाद लगभग ३ घंटे बाद अधिकतम संकेन्द्रण हो जाता है और यह प्रभाव ६ घंटे तक बना रहता है। अतएव यदि लगातार विलम्ब तक प्रभाव अभीष्ट हो तो ६-६ या ८-८ घंटे के अन्तर से १० से १५ युनिट की मात्रा पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करनी चाहिए।

चिकित्सा व्यवहार की दृष्टि से कॉर्टिकोट्रॉफिन का व्यवहार उन सभी अवस्थाओं में कर सकते हैं, जहाँ कार्टिसोन के प्रयोग का निर्देश हो। अन्तर दोनों में यह है, कि कार्टिसोन विशुद्ध स्थानापन्न या पूरक चिकित्सा (Substitution therapy) है, जब कि कार्टिकोटॉफिन से उपवृक्कीय बहिस्तर पर स्वयं उत्पादन की प्रेरणा मिलती है।

(ऑफिशल योग)

इन्जेक्शिओ कॉर्टिकोट्राफिनाइ Injectio Corticotrophini (Inj. Corticotrophin.)—ले०; इन्जेक्शन ऑव कॉर्टिकोट्राफिन Injection of Corticotrophin, B. P. Add. अं० । पर्याय–ACTH Injection । मात्रा—देखो कॉर्टिकोट्राफिन ।

(नॉट्-ऑफिशल)

इन्जेक्शन ऑव कॉर्टिकोट्राफिन U. S. P.—यह १०, १५, २४ तथा ४० युनिट (U. S. P. Units) की शक्ति के चूर्ण के रूप में अथवा ५ सी० सी० में २०० युनिट शक्ति का सोल्यूशन मिलता है। मात्रा ४ युनिट (Units) दिन में ४ बार पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा।

आजकल इसके ऐसे योग भी आते हैं, जिनको दिन में १ वार प्रयुक्त करने से २४ घंटे तक असर बना रहता है। 'Repository Corticotrophin Injection ,U.S.P' इसी प्रकार का योग है। यह जिलेटिन सोल्यूशन में मिलाकर बनाया जाता है। किन्तु इसका व्यवहार केवल अधस्त्वग् मार्ग (Subcutaneously) अथवा पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा ही किया जा सकता है। दिन में १० युनिट का एक इन्जेक्शन पर्याप्त होता है। इसकी ५०,१०० एवं २०० युनिट की शक्ति के ५ सी० सी० की शीशियाँ आती हैं।

डिऑक्सीकॉर्टोनाइ एसिटास Deoxycortoni Acetas (Deoxycort. Acet.) B. P., डेजॉक्सीकार्टोनाइ एसिटास Desoxycortoni Acetas (Desoxycort. Acet.) I. P.—ले०; डिऑक्सीकार्टोन एसिटेट, डेजॉक्सीकार्टोन एसिटेट—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{23}H_{32}O_{4}$.

पर्याय—डिऑक्सीकॉर्टिकोस्टेरोन एसिटेट (Deoxycorticosterone Acetate); डेजॉक्सीकॉर्टिकोस्टेरोन एसिटेट (Desoxycorticosterone Acetate); डिऑक्सीकार्टोन एसिटेट (Deoxycortone Acetate) परकोरटन (Percorten); डोका (DOCA)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 21—acetoxy-4—pregnene–3 : 20—dione होता है, जो ग्लेसियल एसेटिक एसिड (Glacial acetic acid) तथा 21—diazo-4—pregnene-3 : 20—dione की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—डिऑक्सी कार्टोन एसिटेट के रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं अथवा यह गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है; किन्तु अल्कोहल ९५% एसिटोन तथा स्थिर तेलों (fixed oils) में घुल जाता है।

मात्रा—(१) २ से ५ मि० ग्रा० प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा; त्वचाधःस्थापन Implantation) के लिए ०.१ से ०.४ ग्राम (१½ से ६ ग्रेन)।

गुण कर्म तथा प्रयोग।

डोका (Doca) का प्रधान कार्य शरीर में लवण एवं जल के संवहन (Salt-water metabolism) का नियन्त्रण करना होता है। एडिसन के रोग में (Addison's disease) तथा उपवृक्क रहित जीवों में यह जीवन को स्थापित रखने में सहायता करता है। यह शरीरगत **सोडियम् साल्ट्स के निस्सरण को रोकता है** तथा **पोटासियम् के अधिका-धिक निस्सरण में सहायक होता है**। जिह्वाधः प्रयोग से मुख की श्लैष्मिक कला में भी इसका शोषण पर्याप्त हो सकता है, किन्तु मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आंतों से अच्छी तरह शोषित नहीं होता। अतएव औषधीय प्रभाव के लिए **इसके तैलीय-विलयन** (Oily Solution) का प्रयोग **पेशीगत सूचिकाभरण** द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। यदि यह अभीष्ट हो कि औषधि धीरे-धीरे शोषित होकर देर तक प्रभाव करे, तो इसके लिए इसके पेलेट्स का त्वचाधः-स्थापन (Implantation of solid pellets in the Subcutaneous tissue) किया जाता है। इसका उत्सर्ग अल्पतः वृक्कों द्वारा होता है।

चिकित्सा में डोका (Doca) का मुख्य उपयोग **एडिसन के रोग** (Addison's disease) में किया जाता है। उक्त व्याधि में उपवृक्क के वहिस्तर का अपजनन (Degeneration) हो जाता है, जिससे वहिस्तरीय अन्तःस्रावों (Hormones) का पूर्णतः अभाव पाया जाता है। एतदर्थ व्याधि की उग्रावस्था में पहले दिन १० मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ ग्रेन) की मात्रा ८-८ घंटे पर पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा दी जाती है। इसके बाद प्रतिदिन ५ से १० मि० ग्रा० की धारक-मात्रा (Maintenance dose) दी जाती है। व्याधि की साधारण अवस्थाओं में २ से ५ मि० ग्रा० मात्रा का प्रतिदिन या एक दिन के अन्तर से पेशीगत इंजेक्शन करना चाहिए। साथ ही मुखद्वारा कार्टिसोन तथा सोडियम् क्लोराइड का भी सेवन करना चाहिए। एडिसन के रोग में अथवा उपवृक्क का विच्छेद होने पर यदि चिरकाल तक इसके प्रयोग की अपेक्षा हो तो दैनिक इंजेक्शन के झंझट को दूर करने के लिए त्वचाधः धातु में १०० मि० ग्रा० के ३ या ४ पेलेट्स स्थापित कर दिए जाते हैं। इससे इनका प्रभाव धीरे-धीरे वर्षों तक रहता है। **व्यवहार की दृष्टि से डोका के दीर्घकालिक प्रयोग के लिए यह विधि बहुत उपयुक्त एवं अल्प व्यय सांध्य है**। दीर्घकालिक प्रभाव के लिए डिऑक्सीकोर्टिकोस्टेरोन के ट्राइमेथिल एसिटेट यौगिक का अतिसूक्ष्म क्रिस्टलाइन रूप में (microcrystalline form) पेशीगत इंजेक्शन किया जाता है। ५० से १०० मि० ग्रा० का एक इंजेक्शन देने से ४-५ सप्ताह तक प्रभाव बना रहता है।

इसके अतिरिक्त डोका का उपयोग निम्नावस्थाओं में भी किया जाता है। शस्त्रकर्म अथवा आघातजन्य स्तब्धता (Shock) अथवा जल जाने पर विषसंचार के कारण उत्पन्न स्तब्धता में भी यह उपयोगी है। हैजे में शरीर से अत्यधिक द्रवापहरण हो जाने पर परमबल लवण जल (Hypertonic saline infusion) के साथ डोका मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है।

विशेष—डोका के चिकित्सा क्रम के मात्राधिक्य या मात्रातियोग के कारण निम्न उपद्रव हो सकते हैं, जिनको ध्यान में रखना चाहिए—परममधुसयता (Hyperglycaemia), **सोडियम् क्लोराइड का शरीर में संचय तथा उसके कारण शोफ** (Oedema), **शरीर में पोटासियम् का दारिद्र्य**

(Hypopotasaemia) एवं रक्तभाराधिक्य (Hypertension) एवं रक्ताधिक्यजन्य हृदय निपात (Congestive heart-failure) आदि ।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ डिऑक्सीकार्टोनाइ एसिटेटिस Injectio Deoxycortoni Acetatis (Inj. Deoxycort. Acet.), B. P., इन्जेक्शिओ डेजॉक्सी कार्टोनाइ एसिटेटिस Injectio Desoxycortoni Acetatis (Inj. Desoxycort. Acet), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव डिऑक्सीकार्टोन एसिटेट, इन्जेक्शन ऑव डिजॉक्सीकार्टोन एसिटेट—अं० । यह एथिल ओलिएट या अन्य उपयुक्त स्थिर तेल में बनाया हुआ डिऑक्सी कार्टोन एसिटेट का सोल्यूशन होता है। मात्रा—२ से ५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{12}$ ग्रेन) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा । यदि सोल्यूशन में बल का उल्लेख न हो तो १ सी० सी० (मि० लि०) में $\frac{1}{12}$ ग्रेन के बल का सोल्यूशन देना चाहिये ।

२—पेलेटी डेजॉक्सीकार्टोनाइ एसिटेटिस Pelletae Desoxycortoni Acetatis (Pellet. Desoxycorton Acetet.), I. P.—ले०; इम्प्लान्ट्स ऑव डिऑक्सीकोर्टिन एसिटेट (Implants of Deoxycortone Acetate) B. P.—अं० । मात्रा—०·१ से ०·४ ग्राम (१$\frac{1}{2}$ से ६ ग्रेन) । मात्रा का उल्लेख न होने पर १·५ ग्राम (१$\frac{1}{2}$ ग्रेन) की पेलेट्स देनी चाहिए ।

कोर्टेनिल Cortenil (Hoechst.) ५ मि० ग्रा० एवं १० मि० ग्रा० की १ एवं २ सी० सी० के एम्पूल्स ।

कॉर्टिसोनाइ एसिटास (कॉर्टिसोन एसिटेट) B. P. Add.

नाम—Cortisoni Acetas (Cortison. Acet.)—ले०; Cortisone Acetate—अं० । पर्याय—Compound E.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 11—dehydro—17—hydroxycortico-Sterone 21—acetate होता है, जो सफेद या प्रायः सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है । उक्त चूर्ण प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है । विलेयता—५०० भाग जल तथा ३०० भाग अल्कोहल् (९५%) तथा ४ भाग क्लोरोफॉर्म में घुल जाता है ।

मात्रा—प्रतिदिन ५० से २०० मि० ग्रा० कई मात्राओं में विभक्त करके । (१) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा ५० से २०० मि० ग्रा० प्रतिदिन १ मात्रा में अथवा कई मात्राओं में विभक्त करके; (२) नेत्रश्लैष्मिककलाधः सूचिकाभरण (Sub-conjunctival injection) द्वारा ५ से १० मि० ग्रा० प्रति पांचवें दिन; (३) उपवृक्कच्छेदन (Adrenalectomy), एडिसन का रोग तथा पीयूषग्रंथि के अग्रिमखण्ड की क्रियाक्षमता (Panhypopituitarism) में स्थानापन्न चिकित्सा के लिए प्रतिदिन १२$\frac{1}{2}$ से ५० मि० ग्रा० ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से तथा इंजेक्शन करने पर इंजेक्शन के स्थल से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है । शोषणोपरान्त शरीर में शीघ्रतापूर्वक वियोजित होने के कारण औषधीय मात्राओं में इसका संकेन्द्रण बनाये रखने के लिए औषधि को विभक्त मात्राओं में प्रयुक्त करना पड़ता है, किन्तु मुखमार्ग से सेवन किए जाने पर डिऑक्सीकॉर्टोन का शोषण अच्छी तरह नहीं होता ।

उपवृक्क का क्रियाघात (Addison's disease)—इस व्याधि में उपवृक्क-वहिस्तर का क्षय हो जाता है, जिससे अन्तःस्राव का अभाव होता है। परिणामतः भयंकर स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उक्त व्याधि में कॉर्टिसोन का प्रयोग स्थानापन्न चिकित्सा के रूप में किया जाता है। एतदर्थ औषधि मुखद्वारा दी जाती है। इसके साथ-साथ सोडियम् क्लोराइड का भी सेवन करना चाहिए। कभी कोर्टिसोन के साथ-साथ डिऑक्सीकोर्टोन भी देते हैं। प्रतिदिन ५ से २० मि० ग्रा० कार्टिसोन तथा १ से ३ मि० ग्रा० डिऑक्सीकोर्टोन मिलाकर देते हैं। साथ साथ प्रतिदिन २ से ४ ग्राम सोडियम् क्लोराइड का सेवन होना चाहिए।

अन्यरोग—आमवाताभ संधिशोथ (Rheumatoid arthritis) में कभी कभी कॉर्टिसोन या ACTH के प्रयोग से चमत्कारी लाभ होता है। एतदर्थ कॉर्टिसोन एसिटेट (या Compound E) की प्रतिदिन १०० मि० ग्रा० मात्रा देनी पड़ती है। इसी प्रकार की क्रिया ACTH से भी होती है। इसी प्रकार कार्टिसोन तथा ACTH दोनों कोलाजन की विकृति (Fibrinoid degeneration of Collagen) से होने वाली अन्य अनेक व्याधियों में भी उपयोगी होता है, जैसे आमवातज्वर (Rheumatic fever) त्वग् रोग (Lupus erythematosus) संधि-शोथ (Reriarthritis nodosum), अदोषज उप-मधुमयता (Indiopathic Hypoglycaemia) वातरक्तज संधिशोथ (Gouty-arthritis) आदि।

इसके अतिरिक्त कॉर्टिसोन तथा ACTH दोनों ही अनेक अनूर्जिक व्याधियों में प्रयुक्त होने पर बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। अतएव तमकश्वास (Bronchial asthma), सीरम रोग (Serum Sickness), तृणज्वर (Hay fever), अनूर्जिक त्वक्शोक (Allergic dermatitis) तथा अपस्तरीय त्वक्शोक (Exfoliative type) में उपयोगी होता है।

(ऑफिशल योग)

(१) इन्जेक्शिओ कॉर्टिसोनाइ एसिटास Injectio Cortisoni Acetas (Inj. Cortison. Acet.). B. P. Add. —ले०; इंजेक्शन ऑव कॉर्टिसोन एसिटेट Injection of Cortisone Acetate—अं०। यह लवणजल (Injection of Sodium Chloride) में बनाया हुआ विसंक्रमित निलम्बन (Suspension) होता है, जो सफेद द्रव के रूप में होता है। रखने से कण तलस्थित हो जाते हैं, किन्तु पात्र को हिला देने से पुनः सोल्यूशन में मिल जाते हैं। मात्रा—कार्टिसोन एसिटेट की भांति। यदि शक्ति का निर्देश न हो तो १ सी० सी० में २५ मि० ग्रा० का निलम्बन देना चाहिए।

२—टैबेली कॉर्टिसोनाइ एसिटेटिस Tabellae Cortisoni Acetatis (Tab. Cortison. Acet.) B. P. Add.—ले०; टैबलेट्स ऑव कॉर्टिसोन एसिटेट (Tablets of Cortisone Acetate)—अं०। मात्रा—कॉर्टिसोन एसिटेट की भांति। यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो २५ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—हाइड्रोकॉर्टिसोन (Hydrocortisone) या हाइड्रोकार्टोन (Hydrocortone)—सफेद रंग का गंधहीन चूर्ण होता है, जो जल में अल्पमात्रा में घुलता है। रासायनिक दृष्टि से 17—hydroxy corticosterone होता है। हाइड्रोकॉर्टिसोन अधिवृक्कबहिस्तर का मुख्य अन्तःस्राव है,

जो नैसर्गिक रूप से रक्त में पाया जाता है। कॉर्टिसोन की अपेक्षा यह बहुत अधिक सक्रिय होता है। मुखमार्ग द्वारा सेवन किए जाने पर इसकी क्रियाशीलता बहुत अधिक होती है। अपेक्षाकृत यह कम विषैला है। औषधीय प्रभाव के लिए इसको मुखद्वारा अथवा सिरागत अन्तःसंक्रमण (Intravenous drip-infusion) द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। इसका एसिटेट लवण त्वचा पर स्थानिकप्रयोग के लिए (१ से २·५% मलहम) तथा नेत्र में लगाने के लिए (२½% निलम्बन Suspension या १½% नेत्राञ्जन) तथा संधियों के अन्दर सूचिकाभरण के लिए उपयुक्त होता है।

२—एल्डोस्टेरोन (Aldosterone) पर्याय—एल्डोकोर्टिन (Aldocortin), इलेक्ट्रोकोर्टिन (Electrocortin)। इसका प्रयोग विशेषतः पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा अधिक उपयुक्त होता है। तैलीय विलयन का प्रभाव अधिक स्थायी होता है।

३—डेल्टकार्टोन (Deltacortone) पर्याय—मेटिकोर्टिन प्रेडनिसोन (Prednisone)—यह कॉर्टिसोन से संश्लेषण पद्धति द्वारा बनाया जाता है। सफेद रंग या मलाई के रंग का गंधहीन एवं क्रिस्टलाइन या विरुपिक (Amorphous) चूर्ण होता है। मात्रा—प्रारम्भमें २० से ४० मि० ग्राम प्रतिदिन ४ मात्राओं में विभक्त करके मुखद्वारा भोजनोत्तर देना चाहिए। इस प्रकार २-७ दिन तक औषधि देने के बाद प्रतिदिन केवल ५ से २० मि० ग्रा० की धारकमात्रा (Maintenance dose) दी जाती है।

४—डेल्टाकॉर्ट्रिल (Deltacortril)। पर्याय-प्रेडनिसोलोन (Prednisolone), मेटिकॉर्टिलोन। यह हाइड्रोकॉर्टिसोन से संश्लेषण पद्धति द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसके गुण-कर्म एवं प्रयोग तथा मात्रादि डेल्टकॉर्टोन की भाँति समझने चाहिए।

५—फ्लुड्रोकॉर्टोन एसिटेट (Fludrocortone Acetate) या फ्लुरोहाइड्रोकोरिसोन एसिटेट (Fluorohydro-corisone Acetate)—यह हाइड्रोकॉर्टिसोन-व्युत्पन्न यौगिक (halogenderivative) है। आमवाताभ-संधि शोथ (Rheumatoid arthritis) एवं एडिसन के रोग में उपयोगी है। इसका प्रधान उपयोग मलहम (०·१ से १·२५%) के रूप में त्वचागत अनूर्जिक विकृतियों के शमन के लिए किया जाता है।

व्यावसायिक योगः—

(१) परकोर्टेन Parcorten (Ciba)—इसकी जिह्वा के नीचे रखकर चूसने के लिए टिकिया या लिंगुएट्स (Linguets) १ मि० ग्रा० की, एम्पूल्स (५ से १० मि० ग्रा०), क्रिस्टूल्स (Crystules ६० मि० ग्रा०) तथा धीरे-धीरे बहुत दिनों तक प्रभाव होने के लिए त्वचाधःस्थापनार्थ इम्प्लान्ट्स (Implants—१०० मि० ग्रा०) आते हैं।

———

परिच्छेद ४

वेदनास्थापक (Analgesic) एवं ज्वरहर या संतापहर (Antipyretic) तथा आमवातनाशक (Antirheumatic) एवं संतापहर तथा वेदनानाशक एवं एन्टीसेप्टिक प्रभाव करने वाली औषधियाँ।

इस वर्ग में विशेषतः उन औषधियों का वर्णन किया जायगा, जिनका उपयोग संतापहर या ज्वरहर एवं वेदनास्थापक (Analgesic) क्रिया के लिए अथवा आमवात (Rheumatism) में आमवातहर, ज्वरहर एवं वेदनानाशक कर्म के लिए किया जाता है। इनमें कतिपय औषधियाँ साधारण एन्टीसेप्टिक प्रभाव भी करती हैं। इनको २ समुदायों में विभक्त किया जा सकता है :—

(अ) वेदनास्थापक एवं संतापहर या ज्वरनाशक औषधियाँ (Analgesics and Antipyretics) :—

(१) पाइरेजोलोन-यौगिक (Pyrazolon derivatives)—एमिडोपायरीन (Amidopyrine) फेनाजोन या एन्टिपाइरिन।

(२) एनिलाइन यौगिक (Aniline Compounds)—फिनासेटिन (Phenacetin) तथा एसिटेनिलाइड (Acetanilide)।

(३) फेनिलब्युटाजोन।

(ब) आमवातनाशक एवं ज्वरहर तथा एन्टिसेप्टिक प्रभाव करने वाली औषधियाँ (Antirheumatics, Antipyretics and Antiseptics) :—

(१) सेलिसिलिक एसिड एवं सेलिसिलेट्स।

(२) सेलिसिल ईस्टर्स (Salicyl esters) यथा—एसिड एसेटिल सेलिसिलिक या एस्प्रिन, मेथिल सेलिसिलास।

(३) बेंजोइन, बेंजोइक एसिड तथा बेंजोएट्स।

(४) सिकोफेन (इसका वर्णन पहले मिहिकाम्ल प्रवृत्तिनाशक या यूरिकएसिड डाएथेसिस में कार्यकर औषधियों के साथ किया जा चुका है।)

जो औषधियाँ संताप या ज्वर (Pyrexia) अवस्था में शरीर के तापक्रम को कम करती हैं, उसको संतापहर (Antipyretics) या ज्वरहर (Febrifuge) औषधियाँ कहते हैं। इन औषधियों की उक्त क्रिया विशेषतः ज्वरावस्था में ही लक्षित होती है। सामान्य तापक्रम होने पर औषधीय मात्राओं में इनके प्रयोग से तापक्रम पर कोई विशेष प्रभाव नहीं लक्षित होता है। विषाक्तमात्राओं (Toxic doses) में सेवन करने के भले ही तापक्रम कम हो सकता

है। सामान्यावस्था में शरीर का तापक्रम ९८·४° फाहरनहीट (F.) होता है। उक्त तापक्रम का स्थिरीकरण शरीरगत ऊष्मोत्पत्ति एवं ऊष्मानाश के संतुलन द्वारा होता है। इस संतुलन में विकृति होने के कारण तापक्रम अस्वाभाविक रूप से बढ़ भी जाता है और उसी प्रकार घट भी सकता है। शरीर की ऊष्मा के संतुलन का नियंत्रण मस्तिष्कगत **तापनियन्त्रक केन्द्र (Heat regulating centre)** द्वारा होता है। यहां पर **एन्टिपाइरेटिक्स** से विशेषतः उन औषधियों का तात्पर्य है, जो ज्वरहर प्रभाव मुख्यतः उक्त तापनियंत्रक केन्द्र पर कार्य करने के कारण करती हैं। इन औषधियों में दूसरी विशेषता यह भी है, कि तापक्रम कम करने के साथ-साथ इनमें अनेक वेदना का भी शमन या स्थापन करती हैं। अतएव चिकित्सा में इनका उपयोग ऐसी अवस्थाओं में किया जाता है, जब ज्वर के साथ-साथ शरीर में दर्द या वेदना भी होती है।

फेनासेटिनम् (फेनासेटिन) I. P., B. P.

Phenacetinum (Phenacet.)—ले०; Phenacetin—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{13}O_2N$.

पर्याय—एसिटोफेनिटिडिन (**Acetophenetidin**); एसेटफेनिटिडिन (**Acetphenetidin**)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह aceto-P·phenetidide (phenetidine) होता है, जो P-phene-tidine का एसिटिलिकरण करके प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—फेनासेटिन सफेद एवं चमकदार क्रिस्टलाइन छोटे छोटे पत्राकार टुकड़ों (scales) अथवा सफेद रंग के सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। यह प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में हल्का तीता होता है। हवा में खुला रहने से स्थायी (stable) होता है, और बिगड़ता नहीं। **विलेयता**—जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है, २० भाग अल्कोहल् (९५%) में तथा क्लोरोफार्म में घुलनशील है। सॉलवेंट ईथर में भी घुल जाता है। **मात्रा**—०·३ से ०·६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)।

फेनाजोनम् Phenazonum (Phenazon.) I. P., B. P. C.—ले० फेनाजोन (Phenazone)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{11}H_{12}ON_2$.

पर्याय—एन्टिपाइरिन (**Antipyrin**)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 2 : 3—dimethyl-1-phenylpyrazot-5-one, होता है, जो फेनिल हाइड्रेजीन एवं एथिल एसिटो एसिटेट को परस्पर मिलाने से (by condensing phenylhydrazine with ethyl acetoacetate) प्राप्त यौगिक का मेथिलीकरण करने से प्राप्त होता है। **वर्णन**—फेनाजोन या एन्टीपाइरिन के छोटे-छोटे रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा यह सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् तिक्त होता है। **विलेयता**—१ भाग जल में १ भाग के अनुपात से घुलनशील है। इसके अतिरिक्त १ भाग अल्कोहल्, १ भाग क्लोरोफॉर्म तथा ५० भाग ईथर में भी घुलता है।

असंयोज्य पदार्थ—यह स्प्रिट ऑव नाइट्रस ईथर तथा अन्य नाइट्राइट्स के आम्लिक विलयन एवं टैनिक एसिड के जलीय विलयन में असंयोज्य होता है। फेनाजोन के चूर्ण को सोडियम् सेलिसिलेट, ब्युटिल क्लोरल हाइड्रेट एवं बेटानेफ्थोल के साथ रगड़ने से यह द्रव के रूप में परिणित हो जाता है।

मात्रा—०·३ से ०·६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)।

एमिडोपायरिना Amidopyrina (Amidopyrin.), B. P. C.—लै०; एमिडोपायरीन Amidopyrine—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{१३}H_{१७}ON_{3}$.

पर्याय-एमिनोपाइरीन (Aminopyrine), पाइरेमिडॉन (Pyramidon)।

प्राप्ति-साधन—एमिडोपायरीन रासायनिक दृष्टि से 4—dimethylamino-2 : 3—dimethyl-1-phenylpyrazol—5—one, होता है। इसको प्राप्त करने के लिए पहले 2 : 3—dimethyl-4-nitroso—I-phenylpyrazol-5-one का प्रहासन करके (by reducing) 4—amino—2 : 3—dimethyl-1-phenylpyrazol-5-one प्राप्त किया जाता है। इसका मेथिलीकरण करने से (by methylating) एमिडोपायरीन प्राप्त होता है।

वर्णन—एमिडोपायरीन के छोटे-छोटे रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा यह सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो गंधहीन तथा प्रायः स्वादहीन भी होता है। विलेयता – १६ भाग जल २ भाग अल्कोहल् (९०%) में घुल जाता है। सालवेंट ईथर में क्षिप्रतापूर्वक (Readily) घुलनशील है।

असंयोज्य पदार्थ—ऑक्सीडायजिंग द्रव्य (Oxidising agents), नाइट्राइट्स, एपोमार्फीन तथा एकेसिया (Acacia)।

मात्रा—०·३ से ०·६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)।

एन्टिफेब्रिन Antifebrin। पर्याय—एसिटानिलाइड (Acetanilide), U. S. P.; फेनिल–एसिटामाइड (Phenyl-acetamide)।

मात्रा—(U. S. P. Dose)—०·२ ग्राम या ३ ग्रेन।

गुण-कर्म।

नाड़ीसंस्थान—इस समुदाय की औषधियों का मुख्य कर्म, जिसका चिकित्सा में उपयोग किया जाता है, वह है वेदनास्थापन (Analgesia)। उक्त कर्म सम्भवतः इन औषधियों की वेदनावाहक पथ में नाड़ी सूत्रों के संधिस्थलों (Synapses) पर इनकी क्रिया के कारण होता है। परिसरीय नाड़ियों तथा नाड्यग्रों पर इनका कोई प्रभाव नहीं होता।

तापक्रम—उक्त सभी औषधियाँ प्रायः तीव्र संतापहर (Antipyretic) प्रभाव करती हैं। स्वस्थावस्था में औषधीय मात्राओं में सेवन करने पर यह प्रभाव लक्षित नहीं होता। जब शारीरिक तापक्रम सामान्य से अधिक हुआ हो, तो ऐसी स्थिति में सेवन करने पर ये तापक्रम को कम करती है। इनकी यह क्रिया सम्भवतः तापनियंत्रक केन्द्र पर साक्षात् प्रभाव करने के कारण होती है। इस रूप में एमिडोपायरीन अपेक्षाकृत दूसरों के अधिक सक्रिय है। इनके सेवन पर त्वाची रक्तवाहिनियों (Cutaneous vessels) का विस्फार होता है, जिससे भौतिक क्रिया द्वारा रक्तगत ताप का विकरण होकर ताप में कमी आ जाती है।

त्वचा—सज्वर अवस्थाओं में इनके सेवन से त्वचा पर स्वेदल (Diaphoretic) प्रभाव होता है, जो शरीरगत बढ़े तापक्रम को कम करने में सहायक होती हैं। कभी-कभी इनके

चिकित्सा-क्रम में त्वचा पर उत्कर्णिक (papular)। रक्तिमामय (Erythematous) तथा शीतपित्त की भांति विस्फोट (Rashes) निकलते हैं।

हृदय, रक्तवाहिनियाँ एवं रक्त—ये सब औषधियाँ हृदय पर साक्षात् अवसादक (Depressant) प्रभाव करती हैं। यहां तक कि विपाक्तता होने पर रक्तसंवहन—भेद (Circulatory failure) तक हो सकता है। यह दोष एसिटेनिलाइड में सबसे अधिक तथा फेनाजोन में उससे कम और फेनासेटिन एवं एमिडोपायरीन में तो अपेक्षाकृत बहुत ही कम होता है। वैयक्तिक वैशिष्ट्य (Idiosyncrasy) के कारण किन्हीं व्यक्तियों में साधारण मात्राओं में भी प्रयुक्त होने पर भी निपात (Collapse) का भयंकर उपद्रव उठ खड़ा होता है। फेनाजोन, पेशियों पर साक्षात् क्रिया करके रक्तवाहिनियों का संकोच कराता है। जिसके परिणामस्वरूप पहले तो रक्तभार कुछ चढ़ता है, किन्तु बाद में हृदय पर इन औषधियों का अवसादक प्रभाव होने के कारण रक्तभार पुनः गिर जाता है। साधारण मात्राओं में रक्त पर तो कोई प्रभाव नहीं पड़ता। हाँ, मात्राधिक्य की अवस्था में इसके रंग में कुछ विकृति अवश्य हो सकती है। यह परिवर्तन इन औषधियों का रक्त के लालकणों के रंजक तत्व या शोणवर्तुलि (Haemoglobin) का मेथिमोग्लोबिन (Methaemoglobin) में परिवर्तन होने के कारण होता है।

वृक्क—फेनाजोन तथा एमिडोपायरीनका उत्सर्ग मूत्र के साथ होता है। मात्राधिक्य में औषधि का सेवन करने से शोणवर्तुलि-मेह (Haemoglobinuria) का उपद्रव हो जाता है।

शोषण तथा निस्सरण—मुखद्वारा सेवन करने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से यह औषधियाँ पूर्णतया तथा क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाती है। सेवन के १—२ घंटे बाद ही रक्त में इनका अधिकतम संकेन्द्रण पाया जाता है। इनका वियोजन (are metabolised) प्रधानतः यकृत में होता है। एसिटेनिलाइड एवं फेनासेटिन शोषणोपरान्त वियोजित होकर N-acetyl-P-aminophenol में रूपान्तरित होते हैं, और इनकी वेदनाहर एवं संतापहर दोनों ही क्रियायें इसी परिवर्तन के कारण होती हैं। शरीर से इनका निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है। औषधि का कुछ अंश तो स्वतंत्र रूप से उत्सर्गित होता है। और कुछ अंश सल्फ्युरिक एवं ग्लूक्युरोनिक अम्लों के साथ संयुक्त होकर (in conjunction with) उत्सर्गित होता है। २४ घंटे के अन्दर प्रायः पूरी औषधि शरीर से बाहर निकल जाती है। फेनाजोन का निस्सरण मूत्र में प्रधानतः hydroxyantipyrine के रूप में होता है। कुछ भाग ज्योंका त्यों भी उत्सर्गित होता है। एमिडोपायरीन का उत्सर्ग 4-aminoanti pyrine तथा N-acetyl-4-aminoantipyrine के रूप में होता है।

विपाक्त प्रभाव—कभी-कभी इन औषधियों का सेवन अधिक मात्राओं में हो जाने के कारण अनेक उपद्रव प्रगट होते हैं। ऐसी स्थिति में पसीना होता है, नाड़ी (Pulse) तथा श्वसन दुर्बल पड़ जाता है। रोगी प्रायः अवसन्नता (Prostration) एवं अत्यधिक दौर्बल्य का अनुभव करता है। विपाक्तता की स्थिति में यही लक्षण अधिक उग्र एवं भयंकर स्वरूप के हो जाते हैं। जिससे बहुत पसीना होता है, तथा श्यामोत्कर्ष (Cyanosis) एवं निपात (Collapse) होकर मृत्यु हो जाती है। कभी त्वचा पर नानाविध विस्फोट भी निकलते हैं। फेनाजोन तथा एसिटेनिलाइड के इस प्रकार की आशंका अधिक रहती है।

चिकित्सा—अगल-बगल गरम पानी की बोतलें रखें। उत्तेजक (Stimulants) का प्रयोग करना चाहिए। एट्रोपीन एवं स्ट्रिक्नीन का त्वचाधः इन्जेक्शन दें। आक्सीजन सुँघावें।

आमयिक प्रयोग।

आभ्यन्तर—चिकित्सा व्यवहार में इन औषधियों का सबसे अधिक उपयोग वेदना-स्थापक के रूप में विभिन्न प्रकार के नाड़ीजन्य वेदनाओं के शमन के लिए किया जाता है। व्यवहार की दृष्टि से इस कार्य के लिए फेनासेटिन अन्य औषधियों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है। इसकी ५ ग्रेन की मात्रा आवश्यकतानुसार १-१ घन्टे के अन्तर से २-३ बार देने से सभी प्रकार के नाड़ीजन्य वेदना का शमन होता है अस्पतालों में वितरण के लिए एस्प्रिन एवं कफीन घटित फेनासेटिन का प्रसिद्ध योग 'ए० पी० सी० पाउडर या टॅबलेट' अधिक उपयुक्त है। इसी प्रकार कोडीन एवं बारबिटुरेट्स के साथ मिलाकर भी इसका प्रयोग किया जाता है।

चिकित्सा में इन औषधियों का दूसरा मुख्य उपयोग सर्दी-जुकाम (प्रतिश्याय) तथा इन्फ्लुएन्जा आदि रोगों में किया जाता है। इन अवस्थाओं में ज्वर के साथ-साथ सारे शरीर में दर्द तथा जकड़न एवं शिर में भारीपन आदि उपद्रव होते हैं। ऐसी अवस्था में ये औषधियाँ ज्वरहर एवं वेदनास्थापक दोनों ही कार्य करती हैं। इसी प्रकार गृध्रसी (Sciatica) रजः कृच्छ्रता (Dysmenorrhoea), दंतशूल, पेशीशूल तथा अन्य वातिक दर्दों में इनका प्रयोग चमत्कारी लाभ करता है। किन्तु आन्त्रिक शूल (Intestinal colic), वृक्कीय शूल (Renal colic) एव पित्ताश्मरी शूल (Biliary colic) आदि उद्वेष्टयुक्त शूलिक दर्दों (Spasmodic nature) में इनके प्रयोग से विशेष सफलता नहीं मिलती। ऐसी अवस्था में मार्फीन आदि द्रव्यों का ही प्रयोग करना पड़ता है।

उपद्रव—इस समुदाय की अनेक औषधियाँ, यथा एन्टिपायरिन एवं एमिडोपायरीन आदि विषैले स्वभाव की होती हैं। अतएव इनके प्रयोग में कभी कभी अनेक उपद्रव लक्षित होते हैं। वैयक्तिक प्रकृति (Idiosyncrasy) इसमें विशेष रूप से सहायक होती है। ऐसी स्थिति में त्वचा पर शीतपित्ती की तरह ददोड़े (Urticarial-rash) अथवा रक्तिमामय चकत्ते (Erythematous) निकलते हैं। अत्यधिक पसीना होता है, तापक्रम बहुत गिर जाता है और शीतांग होकर कभी कभी निपात (Collapse) की प्रवृत्ति पाई जाती है। कमजोर रोगियों में इस प्रकार की आशंका अधिक रहती है। एमिडोपायरीन से कभी-कभी आर्सेनिक एवं सल्फोनामाइड्स की भाँति उपद्रव होते हैं, यथा रक्त में अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) तथा श्वेतकणों की सकल गणना में सहसा ह्रास (Leucopenia) आदि। कभी-कभी अत्यधिक अवसन्नता (Prostration) होकर मृत्यु तक हो सकती है।

सेवनविधि—इन औषधियों का प्रयोग मुखद्वारा ही किया जाता है। इनको पाउडर (चूर्ण) के रूप में अथवा टॅबलेट के रूप में तथा जिलेटिन की डिब्बियों (Cachets) या कैप्स्यूल्स में रखकर सेवन कर सकते हैं। फेनाजोन पानी में घुलनशील होता है; अतएव इसको अर्क पेपरमिंट (Peppermint water) में मिलाकर दे सकते हैं। अन्य द्रव्यों को ट्रागाकान्थ-चूर्ण की सहायता से जलीय निलम्बन (Suspension) बनाकर व्यवहृत किया जाता है। एन्टिपायरिन को केलोमल या क्लोरलहाइड्रेट अथवा सोडियम् सेलिसिलेट के साथ मिलाकर

नहीं प्रयुक्त करना चाहिए। फेनाजोन अनेक द्रव्यों के साथ असंयोज्य होता है। अतएव इसका प्रयोग प्रायः अकेले ही करना अधिक अच्छा है।

(फेनासेटिन के ऑफिशल योग)

१—टॅवेली फेनासेटिनाइ Tabellae Phenacetini (Tab. Phenacetin.) I. P., B. P.—ले०; टॅवलेट्स ऑव फेनासेटिन, टॅवलेट्स ऑव एसिटो फेनेटिडिन (Acetophenetidin)-अं०; फेनासिटिन की टिकिया—हिं०। मात्रा—फेनासेटिन की भांति। यदि प्रतिटिकिया फेनासिटिन की मात्रा का उल्लेख न हो, तो ५ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

२—टॅवेली एसिडाइ एसेटिलसेलिसिलिसाइ एट फेनासेटिनाइ Tabellae Acidi Acetylsalicylici et Phenacetini (Tab. Acid. Acetylsalicyl. et Phenacetin.) I. P., B. P.—ले०। पर्याय—टॅवेली फेनासेटिनाइ एट एसिडाइ एसेटिलसेलिसिलिसाइ Tabellae Phenacetini et Acidi Acetylsalicylici (Tab. Phenacetin. et Acid. Acetylsalicyl.)—ले०; टॅवलेट्स ऑव एस्प्रिन एण्ड फेनासेटिन (Tablets of Aspirin and Phenacetin)—अं०। मात्रा—१ से २ टिकिया। वक्तव्य—प्रत्येक टॅवलेट या टिकिया में २½ ग्रेन एस्प्रिन तथा २½ ग्रेन फेनासेटिन होता है।

३—टॅवेली कोडिनी कम्पोजिटी Tabellae Codeinae Compositae (Tab. Codein. Co.) I. P., B. P.—ले०; कम्पाउण्ड टॅवलेट ऑव कोडीन, टॅवलेट्स ऑव एस्प्रिन फेनासेटिन एण्ड कोडीन—अं०। कोडीन युक्त एस्प्रिन-फेनासेटिन की टिकिया—हिं०। प्रत्येक टॅवलेट में ४ ग्रेन एस्प्रिन, ४ ग्रेन फेनासेटिन, तथा ⅛ ग्रेन कोडीन फॉस्फेट होता है। मात्रा—१ से २ टिकिया।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—फेनाजोनाइ सेलिसिलास Phenazoni Salicylas (Phenazon. Salicyl.)—ले०; फेनाजोन सेलिसिलेट—अं०। पर्याय—सेलिपिरिन (Salipyrin); एन्टिपायरीन सेलिसिलेट। यह सफेद रंग के गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् मधुर क्रिस्टल्स के रूप में होता है, जो जल में अत्यल्प मात्रा में घुलनशील होता है। मात्रा—०·३ से १·२ ग्राम या ५ से २० ग्रेन। उपयोग—वेदनास्थापक (Analgesic) ज्वरहर तथा आमवातनाशक होता है।

२—फेनाजोनाइ एसेटिलसेलिसिलास Phenazoni Acetyl Salicylas—ले०। पर्याय—एन्टिपायरीन एसेटिलसेलिसिलास—अं०। सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है। मात्रा—८ से १५ ग्रेन।

३—एक्जेलजीन (Exalgine)। पर्याय—मेथिल-एसिटेनिलाइड (Methyl acetanilide)। इसके रंगहीन सूच्याकार (Acicular) क्रिस्टल्स होते हैं। मात्रा—½ से २ ग्रेन।

४—पेनेडोल (Panadol)—रासायनिक दृष्टि से यह N-acetyl-P-aminophenol होता है। एक उत्तम वेदनास्थापक एवं ज्वरहर है। मात्रा—१ से २ टिकिया प्रतिदिन आवश्यकतानुसार २-३ बार। प्रत्येक टॅवलेट ०·५ ग्राम या ८ ग्रेन की होती है।

(फेनाजोन के नॉन्-ऑफिशल योग)

१—टॅवेली फेनाजोनाइ Tabellae Phenazoni। पर्याय—टॅबलेट्स ऑव एन्टीपायरीन—अं०। मात्रा—०·३ से ०·६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)। यदि प्रतिटॅवलेट मात्रा का निर्देश न हो, तो ५ ग्रेन की टॅवलेट देनी चाहिए।

व्यावसायिक योगः—

(१) कोडोपाइरिन Codopyrin (Glaxo)—इसमें एस्प्रिन, फेनासेटिन तथा कोडीनफास्फेट होता है। इसकी टॅबलेट्स आती हैं।

फेनिलब्युटाजोनम् (फेनिलब्युटाजोन), B. P. C. Phenylbutazonum (Phenylbutazon.)—ले०; Phenylbutazon—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{१९}H_{२०}O_{२}N_{२}$

पर्याय—ब्युटाजोलिनडिन Butāzolidin।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 4—butyl-1: 2—diphenylpyrazolidine-3: 5—dione होता है, और ethylbutylmanolate (एथिलब्युटिल मेलोनेट) तथा 1 : 2—diphenyl. hydrazine की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—फेनिलब्युटाजोन सफेद रंग का या मलाई के रंग का (Creamy-white) सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में पहले स्वादरहित बाद में हल्का तीता। विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेयता (Almost insoluble); किन्तु २५ भाग अल्कोहल् तथा १५ भाग ईथर में घुल जाता है। क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स के जलीय विलयन (Aqueous Solutions of alkali hydroxides) में भी घुलता है। क्लोरोफॉर्म तथा बेंजीन में सुविलेय होता है। मात्रा—०'२ से ०'६ ग्राम (३ से १० ग्रेन) प्रतिदिन, कई विभक्त मात्राओं में।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से फेनाजोन का शोषण क्षिप्रतापूर्वक तथा पूर्णतः (Rapidly and Completely) हो जाता है। बल्कि अधस्त्वक् तथा पेशीगमार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर इसका शोषण धीरे-धीरे होता है, तथा स्थान पर सूजन एवं दर्द आदि की भी सम्भावना रहती है। शोषणोपरान्त धीरे-धीरे पूर्णतः वियोजित हो जाता है, और औषधि बन्द करने के ७–१० दिन के भीतर शरीर से पूर्णतः उत्सर्गित हो जाता है। मुख द्वारा सेवन करने के २ घंटे बाद रक्त में इसका अधिकतम संकेन्द्रण हो जाता है। औषधीय प्रभाव के लिए रक्त में औषधि का ८ से ११ मि० ग्रा० प्रतिशत संकेन्द्रण पर्याप्त होता है। इसके बाद प्रभाव को बनाये रखने के लिए ५ से ८ मि० ग्रा० की आवश्यकता होती है। किन्तु प्रायः १० से १५ मि० ग्रा० प्रतिशत संकेन्द्रण होने पर विषाक्त प्रभाव लक्षित होने लगता है। औषधि का निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ वृक्कों द्वारा होता है।

ब्यूटाजोलिडिन एक वेदनास्थापक (Analgesic) एवं ज्वरहर (Antipyretic) औषधि है। इसका असर टिकाऊ (२–४ दिन) होता है। इस रूप में इसका व्यवहार संधि एवं अस्थियों के अनेक वेदना युक्त विकृतियों में किया जाता है। आमवाताभ संधिशोथ (Rheumatoid arthritis), तरुण एवं चिरकालीन वातरक्तजन्य सन्धिशोथ (Acute and Chronic gouty arthritis), जाड्यतायुक्त कशेरुसंधिशोथ (Ankylosing Spondylitis), विभिन्न संध्यस्थिशोथ (Osteo-arthritis), पेशीगत आमवात आदि में इसके प्रयोग से वेदनाशमन होता तथा अन्य उपद्रवों की भी शान्ति होती है। एतदर्थ प्रतिदिन ०'२ से ०'८ ग्राम (३ से ८ ग्रेन) औषधि मुख द्वारा भोजन के बाद दी जाती है।

लेकिन चूंकि औषधि विषैली है, अतएव मुखमार्ग से सेवन के लिए अधिकतम दैनिक मात्रा ०·६ ग्राम की ही समझनी चाहिए। आत्ययिक अवस्थाओं में ½ से १ ग्राम की दैनिक मात्रा, कई मात्राओं में विभक्त करके अधस्त्वक् अथवा पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा भी प्रयुक्त कर सकते हैं। परन्तु प्रायः औषधि सेवन के लिए मुखमार्ग ही अधिक उपयुक्त है।

उपर्युक्त व्याधियों के अतिरिक्त कभी-कभी इसका प्रयोग हाजकिन के रोग (Hodgkin's-desease) में भी उपकारक है। किन्तु इससे केवल थोड़े समय के लिये लाक्षणिक लाभ होता है।

विषाक्तता—फेनिल ब्युटाजोन के चिकित्सा- क्रम में कभी-कभी (लगभग २४% रोगियों में) विषाक्तताजन्य उपद्रव लक्षित होते हैं। ऐसी स्थिति में मिचली (Nausea), वमन, क्षुधानाश (Anorexia) हृदयाधरिक प्रदेश में पीड़ा (Epigastric pain) तथा (कभी-कभी) अतिसार आदि पचन-संस्थान की विकृतियाँ प्रगट होती हैं। इसके अतिरिक्त मुख, अन्ननाली, आमाशय एवं ग्रहणी में सव्रणता; रक्तवमन (Haematemesis), आंत्रगत रक्तस्राव (Melaena), यकृत-शोफ (Hepatitis) एवं कामला आदि का भी उपद्रव होता है। रक्त में अकणिक कायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) रक्त-चक्रिका ह्रास (Thrombocytopenia) अपचयिक रक्ताल्पता (Aplastic anaemia) आदि भयंकर विकृतियां भी उठ खड़ी हो सकती है। मूत्रकृच्छ्रता, शुक्लिमेह (अल्ब्युमिन्युरिया) तथा शोणित मेह (Haematuria) आदि मूत्र संस्थानीय उपद्रव भी हो सकते हैं। नाड़ी संस्थान सम्बन्धी निद्रानाश, शिरोभ्रम, नेत्रनाड़ी शोथ (optic neuritis) आदि भी होते हैं।

विषाक्तता की सम्भावना प्रायः सहसा मात्राधिक्य में औषधि का सेवन करने पर होती है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में तथा युवा व्यक्तियों की अपेक्षा वृद्धों में विषाक्तता की सम्भावना अधिक होती है। प्रयोग निषेध-रक्तभार (Hypertension) के रोगियों में, हृदय, वृक्क एवं यकृत की विकृतियों में, आमाशयिक व्रण (Peptic ulcer) के रोगियों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। हृदय विकार जन्य शोफ के रोगियों में यदि औषधि का सेवन करना ही हो तो लवण का आहार में निषेध करना चाहिए। औषधि के प्रति प्रायः आदती सह्यता (Tolerance) नहीं पैदा होती। इसलिए आवश्यकता पड़ने पर दूसरा कोर्स भी दिया जा सकता है।

एसिडम् सेलिसिलिकम् (सेलिसिलिक एसिड) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_7H_6O_3$.

नाम—Acidum Salicylicum—ले०; Salicylic Acid—अं०।

प्राप्ति-साधन—सोडियम् फेनॉक्साइड (Sodium phenoxide) तथा कार्बनडाइ-ऑक्साइड की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा सेलिसिलिक एसिड प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९·५% सेलिसिलिक एसिड होता है।

वर्णन—सेलिसिलिक एसिड के रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं अथवा अत्यंत हल्के (Light feathery) क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् मधुर एवं कड़वा (Acrid) होता है। विलेयता—जल में अत्यल्प मात्रा में (५५० भाग में १ भाग) तथा अल्कोहल् (९५%) में ४ भाग में १ भाग के अनुपात से घुलता है, सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में फौरन घुल जाता है। इसके अतिरिक्त अमोनियम् एसिटेट, सोडियम् फास्फेट, पोटासियम् एवं सोडियम् साइट्रेट के विलयन (सॉल्यूशन) में भी घुलनशील (Soluble) है।

असंयोज्य द्रव्य—लौह के लवण (Iron salts), क्विनीन सल्फेट, स्प्रिट ईथर नाइट्रोसाइ एवं स्प्रिट अमोनिया एरोमेटिक।

सोडियाइ सलिसिलास Sodii Salicylas (Sod. Salicyl.) I. P., B. P.—ले०; सोडियम् सेलिसिलेट—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_7H_5O_3Na$.

प्राप्ति-साधन—यह सेलिसिलिक एसिड एवं सोडियम् कार्बोनेट की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया (interaction) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९·५% सोडियम् सेलिसिलेट होता है।

वर्णन—सोडियम् सेलिसिलेट के छोटे-छोटे क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा कागज के सूक्ष्म कतरन की भांति क्रिस्टलाइन छुइयाँ (Crystalline flakes) अथवा सफेद चूर्ण के रूप में होता है। सामान्यतः गंधहीन होता है, किन्तु कभी कभी एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है। स्वाद में किंचित् मधुर, नमकीन तथा अरुचिकारक होता है। विलेयता—१ भाग जल तथा ११ भाग अल्कोहल में घुलता है। उबलते जल तथा अल्कोहल में सुविलेय (Very Soluble) होता है।

मात्रा—०·६ से २ ग्राम (६ से ३० ग्रेन)।

असंयोज्य पदार्थ—अम्ल (Acids), एन्टीपायरिन, क्विनीन, तथा लौह के लवण।

एसिडम् एसेटिलसेलिसिलिकम् Acidum Acetylsalicylicum (Acid. Acetylsalicyl.) I. P., B. P.-ले०; एसेटिल सेलिसिलिक एसिड (Acetylsalicylic Acid)-अं०।

रासायनिक संकेत: $C_9 H_8 O_4$.

पर्याय—एस्प्रिन (Aspirin)।

प्राप्ति-साधन—यह सेलिसिलिक एसिड पर एसेटिक एन्हाइड्राइड (Acetic anhydride) या एसेटिल क्लोराइड (Acetyl chloride) की रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९·५ प्रतिशत एसेटिल सेलिसिलिक एसिड होता है।

वर्णन—एस्प्रिन छोटे छोटे रंगहीन सूच्याकार क्रिस्टल्स (Acicular crystals) अथवा सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में मामूली खट्टा होता है।

विलेयता—३०० भाग जल, ७ भाग अल्कोहल् (९५%), २० भाग सालवेंट ईथर, १७ भाग क्लोरोफॉर्म तथा अमोनियम् एसिटेट के तीव्रबल विलयन (Strong Solution of Ammonium acetate) में घुलनशील (Soluble) होता है।

संरक्षण (Storage)—एस्प्रिन को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए और नमी से बचाना चाहिए। आर्द्रता के प्रभाव से इसका जलांशन (Hydrolysis) होकर एसेटिक एसिड तथा सेलिसिलिक एसिड में वियोजित हो जाता है।

मात्रा—०·३ से १ ग्राम (५ से १५ ग्रेन)।

गुण कर्म ।

बाह्य । स्थानिक प्रयोग से सेलिसिलिक एसिड एन्टिसेप्टिक होता है । इसके लिए इसका २% बल का सोल्यूशन तथा मलहम उपयुक्त होता है । इसके अतिरिक्त स्थानिक प्रयोग से स्वेदापनयन (Anhidrotic) भी होता है । इसका मलहम लगाने से त्वचा की खरता दूर होकर त्वचा मुलायम हो जाती है ।

आभ्यन्तर । शोषण तथा निस्सरण—सेलिसिलेट्स का शोषण क्षुद्रांत्र से होता है । कुछ अंश आमाशय से भी शोषित हो जाता है । एस्प्रिन की अपेक्षा सोडियम् सेलिसिलेट का शोषण अधिक होता है । सोडियम्-बाई कार्बोनेट के साथ प्रयुक्त करने से इनके शोषण में सहायता मिलती है । सेलिसिलिक एसिड का शोषण त्वचा से भी होता है । लार्ड (Lard) तथा लेनोलीन (Lanoline) में बनाये हुए मलहम का शोषण अपेक्षाकृत अधिक होता है । मुखद्वारा सेवन किए जाने पर रक्त में अधिकतम संकेन्द्रण २ घंटे बाद होता है । शोषणोपरान्त शरीरगत सभी धातुओं में वितरित होता है । शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ (५० से ८०%) तथा अल्पमात्रा में पसीना, लालास्राव, पित्त एवं थूक के साथ भी होता है । इनका निस्सरण क्षिप्रतापूर्वक होता है और २ दिन के अन्दर प्रायः अधिकांश भाग उत्सर्गित हो जाता है । मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय होने पर इसका उत्सर्ग अपेक्षाकृत अधिक होता है । पारा-अमिनो बेंजोइक एसिड इसके वियोजन को रोकता है और इस प्रकार रक्तगत संकेन्द्रण को बनाये रखने में सहायक होता है ।

केन्द्रीय नाड़ी संस्थान (Central Nervous System)—इस वर्ग की औषधियाँ वेदनास्थापक (Analgesic) एवं संतापहर (Antipyretic) होती हैं । एस्प्रिन में उक्त कर्म अधिक प्रबल होते हैं । संतापहर प्रभाव विशेषतः ज्वर की अवस्था में ही लक्षित होता है । संतापहर प्रभाव विशेषतः त्वाचीं रक्तवाहिनियों के विस्फारित (dilatation) होने के कारण होता है । इससे पसीना भी अधिक आता है, तथा ताप के विकरण (heat radiation) में सहायता मिलती है । मुखद्वारा २०–३० ग्रेन सोडियम् सेलिसिलेट अथवा १० ग्रेन एस्प्रिन की एक मात्रा का सेवन करने से २–३ घंटे के अन्दर १०५° बुखार उतरकर १०१° तक आ सकता है ।

आमवातहर प्रभाव (Antirheumatic action)—आमवात में सेलिसिलेट्स एवं एस्प्रिन विशिष्ट औषधि के रूप में व्यवहृत होते हैं । आमवात में इनके सेवन से ज्वर, संधिशोथ एवं वेदना आदि सभी उपद्रवों का शमन होता है । आमवात ज्वर में हाइएल्युरोनाइडेस (Hyaluronidase) नामक किण्व की मात्रा बढ़ जाती है, जो आमवातज विकृतियों के अनेक कारणों में से एक है । सेलिसिलेट्स इसकी वृद्धि का निरोध करते (Inhibit) हैं । दूसरे इनके प्रभाव से कार्टिसोन (Cortisone) का स्राव भी अधिक मात्रा में होने लगता है । इनके अतिरिक्त ये प्रोटीनपाचक किण्व 'फाइब्रिनोलाइसिन Fibrinolysin' की उत्पत्ति को भी रोकते हैं । सम्भवतः संधिशोथ के निवारण में इनकी यह क्रिया सहायक होती है ।

त्वचा—त्वचागत रक्तवाहिनियाँ विस्फारित होती हैं, तथा ये औषधियाँ स्वेद-केन्द्र (Sweat centre) पर भी प्रभाव करती है । इस प्रकार सेलिसिलिक एसिड, एस्प्रिन एवं सोडियम् सेलिसिलेट स्वेदल (Diaphoretics) होते हैं ।

वृक्क—मूत्र पर एन्टिसेप्टिक प्रभाव करते हैं तथा मूत्र की प्रतिक्रिया को आम्लिक बनाने में सहायक होते हैं।

महास्रोतस् Alimentary Canal—आमाशय पर सेलिसिलिक एसिड किंचित् क्षोभक प्रभाव करता है, अतएव कभी-कभी मिचली, वमन तथा उदर में पीड़ा आदि उपद्रव पैदा करता है। सोडियम् सेलिसिलेट तथा सेलिसिन अपेक्षाकृत कम क्षोभक होते हैं। सेलिसिन तिक्तबल्य (Bitter Stomachic) प्रभाव भी करता है। एसिड एसेटिल सेलिसिलिक आमाशय से ज्यों का त्यों आंतों में पहुँचता है। अतएव वमन आदि उपद्रव अपेक्षाकृत कम होते हैं। आंतों में पहुँचने पर इसका कुछ अंश सेलिसिलिक एसिड के रूप में वियोजित हो जाता है। इसका शोषण सोडियम् एसेटिल सेलिसिलेट के रूप में होता है।

यकृत—सेलिसिलेट्स पित्त-विशोधक (Biliary antiseptics) होते हैं। यकृत-कोशाओं पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण पित्तस्राव में भी वृद्धि करते हैं।

हृदय तथा रक्तवाहिनियाँ—अधिक मात्राओं में प्रयुक्त होने से रक्तसंवहन पर अवसादक प्रभाव करते हैं। रक्तभार गिर जाता है। विकृत हृदय के रोगियों में हृदय-निपात (Congestive failure) की आशंका रहती है।

रक्त—अधिक मात्रा में प्रयुक्त होनेपर रक्तरसगत पूर्वघनास्त्रि (Prothrombin) की मात्रा कम करते हैं, जिससे रक्त-स्कन्दन-काल (Coagulation time) बढ़ जाता है। दूसरे यह 'विटामिन 'के k' की क्रिया को भी विकृत करते हैं। रक्तस्कन्दन में उक्त जीवतिक्ति (विटामिन) का प्रधान हाथ होता है। चूंकि ये मिहिकाम्ल (Uric acid) के निस्सरण में सहायक होते हैं, अतएव रक्त में मिहिकाम्ल या यूरिक एसिड का संकेन्द्रण कम हो जाता है। शोषणोपरान्त रक्त में पहुँचने पर सेलिसिलिक एसिड सोडियम् सेलिसिलेट के रूप में परिवर्तित हो जाता है, और इसी रूप में रक्त में पाया भी जाता है। औषधीय प्रभाव के लिए रक्तगत अधिकतम संकेन्द्रण जो अपेक्षित हो सकता है, वह है ३५ मि० ग्रा० प्रति १०० सी० सी० रक्त। उक्त संकेन्द्रण ४० मि० ग्रा० के ऊपर पहुँचने पर विषाक्तता के लक्षण प्रगट होते हैं।

शरीरसमवर्त क्रिया (Metabolism)—इन औषधियों के प्रभाव से प्रोभुजिन का अधिकाधिक विघटन (Increased protein breakdown) होता है, जिससे कोशान्तर्गत द्रवांश का आकर्षण होता है। तथा बहिः कोशीय धातु में द्रवांश की वृद्धि (Increase of extracellular fluid) होकर रक्तप्रवाह में जलमयता (Hydraemia) की स्थिति उत्पन्न होती है, जिससे मूत्रल प्रभाव होता है। इसी क्रिया के द्वारा आमवातज शोथयुक्त संधियों के अन्दर के द्रवांश का भी आकर्षण होता है, जिससे संधियों का सूजन कम होता है, और वेदना की भी शांति होती है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर यह औषधियाँ कर्बोजजातीय पदार्थों के समवर्त (Carbohydrate metabolism) पर भी प्रभाव करती हैं, जिससे मधुमेह के रोगियों में शर्करामेह (Glycosuria) का नियंत्रण हो सकता है।

वैयक्तिकप्रकृति (Idiosyncrasy)—स्वभाववैशिष्ट्य के कारण अनूर्जिक-प्रतिक्रिया (Allergic reaction) हो सकती है, जिसके परिणाम स्वरूप शीतपित्त (Urticaria) वाहिनी-नाड़ीजन्य शोथ (Angioneurotic oedema) तथा श्वास आदि उपद्रव लक्षित होते हैं। एस्प्रिन में इस

प्रकार की सम्भावना अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। किन्तु अन्य सेलिसिलेट्स के प्रयोग में भी यह प्रतिक्रिया कभी कभी पाई जाती है।

विषाक्त प्रभाव--आमवात के चिकित्सा क्रम में अधिक मात्रा में चिरकाल तक औषधि का प्रयोग किए जाने पर कभी कभी विषाक्तता (Toxicity) का उपद्रव हो सकता है। साधारण विषाक्तता की स्थिति में सिन्कोनिनविषमयता (Cinchonism) की भांति लक्षण पास होते हैं, यथा कानों में शब्द होना (कर्णक्ष्वेड), ऊँचा सुनाई देना, दृष्टि में विकृति होना, शिरःशूल एवं शिरोभ्रम, शैथिल्य (Lassitude) आदि। इन लक्षणों के प्रगट होने पर औषधि बन्द कर देनी चाहिए। ऐसी स्थिति में भी यदि चिकित्सा चालू रखी गई तो और भी भयंकर लक्षण उत्पन्न होने की आशंका रहती है, यथा मिचली, वमन, बधिरता (Deafness), त्वचा पर विस्फोट (Skin rash) का प्रगट होना, द्विधा दृष्टि (Diplopia), प्रलाप, अत्यधिक पसीना, नाड़ी तीव्रता, श्वासकृच्छ्र तथा उद्वेष्ट (Convulsion) एवं सन्यास (Coma) तक हो सकता है। रक्त में पूर्वघनास्वि (Prothrombin) की मात्रा कम हो जाती हैं, जिससे रक्तस्रावी प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

आमयिक प्रयोग।

बाह्य—शल्य-चिकित्सा (Surgical practice) में सेलिसिलिक एसिड का प्रयोग धावन-द्रव (लोशन lotion), मलहम (आयण्टमेंट ointment), पट्टी (लिंट lint) एवं शोषणीय तूल या रुई (Cotton) के रूप में अनेक अवस्थाओं में किया जाता है। दद्रु या दाद (Ringworm) के लिए यह विशिष्ट औषधि समझा जाता है। इसके लिए बराबर मात्रा में फिनोल (कार्बोलिक एसिड) मिलाकर मलहम के रूप में प्रयुक्त करते हैं। १ औंस मलहम में ३० ग्रेन फिनोल तथा ३० ग्रेन सेलिसिलिक एसिड मिलाकर बनाया हुआ मलहम इस कार्य के लिए बहुत उपयुक्त होता है। मलहम बनाने के लिए आधार द्रव्य के रूप में ऊन की चर्बी (लेनोलिन lanoline or wool-fat) का व्यवहार करना चाहिए, क्योंकि इससे त्वचा द्वारा सेलिसिलिक एसिड के शोषण में सहायता मिलती है। यक्ष्माजन्य त्वचागत दानों (Lupus), तथा मस्सा (Corn) एवं घट्टा (Tylosis) को गलाने के लिए (as keratolytic agent) सेलिसिलिक एसिड एक उत्तम औषधि है। एतदर्थ इसका 'कोलोडियम् एसिडाइ सेलिसिलिसाइ' योग बहुत उपयुक्त है। हाथ पैर के तलवों एवं कोख या कक्षा में दुर्गन्धित पसीना निकलने पर सेलिसिलिक एसिड का डस्टिंग पाउडर व्यवहृत किया जाता है। विचर्चिका (Eczema), त्वग्रोग (Intertrigo) एवं शीतपित्त (Urticaria) में त्वचा पर इसका लोशन या मलहम (१ से ४%) लगाने से खुजली कम होती है।

आभ्यन्तर। (१) आमवात—सेलिसिलेट्स का प्रयोग चिकित्सा में विशिष्ट आमवात-नाशक द्रव्य (Antirheumatic) के रूप में होता है। तरुण आमवात (Acute Rheumatism) में यह प्रभाव अधिक स्पष्टतया लक्षित होता है। पूर्णरूप से क्रिया सम्पन्न होने के लिए शरीर में सेलिसिलेट्स का काफी संकेन्द्रण (Concentration) होना चाहिए। एतदर्थ प्रतिदिन ६० से १५० ग्रेन तक की मात्रा देनी पड़ती है। इसको ६ मात्राओं में विभक्त करके रात दिन बराबर ४-४ घंटे के अन्तर से मात्रायें देनी चाहिए। वैसे रोग की उग्रता में पहले

२० से ३० ग्रेन की मात्रा प्रति तीन-तीन घंटे पर दी जाती है और ऐसी ५-६ मात्रायें दे लेने के बाद ४-४ घंटे पर देनी चाहिए, इसके लिए सामान्य नियम यह है, कि प्रारम्भ में औषधि अधिक मात्राओं में तथा जल्दी-जल्दी दी जाती है। बाद में मात्रा घटा दी जाती है और सेवनकाल का अन्तर बढ़ा दिया जाता है। लक्षणों का शमन हो जाने पर भी चिकित्सा-क्रम १-२ सप्ताह तक चालू रखना चाहिए। औषधि का सेवन प्रायः मुखद्वारा ही करना अच्छा है। चिरकालीन आमवात (Chronic Rheumatism) में सेलिसिलेट्स के बजाय एस्प्रिन का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। (२) वातरक्त (Gout)—चूँकि सेलिसिलेट्स शरीर से यूरिक एसिड के निस्सरण में सहायक होते हैं. अतएव वातरक्त (गाउट) की चिकित्सा के लिए इनका प्रयोग उपकारक हो सकता है। व्याधि की तरुण (Acute) एवं चिरकालज (Chronic) दोनों ही अवस्थाओं में इसका व्यवहार किया जा सकता है। इसके लिए इसको सूरञ्जान (काल्चिकम्) के साथ मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। इसके साथ साथ सोडियम्-बाइ-कार्बोनेट का भी सेवन कराना चाहिए और रोगी को काफी पानी पिलाना चाहिए। लेकिन ध्यान रहे, कि वातरक्त में सेलिसिलेट्स के चिकित्सा-क्रम से केवल लाक्षणिक लाभ ही होता है।

एस्प्रिन का प्रयोग नाना प्रकार के वातज दर्दों के शमन के लिए किया जाता है, यथा पेशी शूल, शिरः शूल (सिर दर्द), अर्धावभेद (Hemicrania) या आधा सीसी, दंतशूल आदि इसके अतिरिक्त प्रतिश्याय या जुकाम (Cold) एवं एन्फ्लुएन्जा आदि के आक्रमण को रोकने के लिए भी इसका प्रयोग प्रचुरता से किया जाता है।

सोडियम् सेलिसिलेट का व्यवहार धमनीदार्ढ्यकर द्रव्य (Sclerosing agent) के रूप में कुटिल शिराओं (Varicose Veins) की चिकित्सा के लिए भी किया जाता है। इसके लिए इसके २०% सॉल्यूशन की ३ सी० सी० मात्रा का एक इंजेक्शन कुटिल शिरा में देने से काम चल जाता है। यदि आवश्यक हो तो एक सप्ताह बाद पुनः दूसरा इंजेक्शन (३०% सॉल्यूशन) भी दे सकते हैं। इसमें १०% लवण जल भी मिला दिया जाता है। इस इंजेक्शन में विशेष सतर्कता रखने की जरूरत है, कि गलती से सॉल्यूशन शिरा के अतिरिक्त इधर उधर परिसरीय धातु में न जाने पावे, अन्यथा वहां उग्र सूजन एवं दर्द होता है और फोड़ा बनने का भय रहता है।

सेवन-विधि—सोडियम् सेलिसिलेट का सेवन प्रायः मुख द्वारा तथा सॉल्यूशन के रूप में किया जाता है। चूंकि शरीर से इसका निस्सरण क्षिप्रतापूर्वक होता है, इसलिए शरीर में औषधीय प्रभाव के लिए इसका सन्केन्द्रण बनाये रखने के लिए औषधि ३–३ या ४–४ घंटे पर बराबर देनी पड़ती है। चूंकि यह आमाशय में क्षोभक प्रभाव करता है, अतएव आमवात रोग की औषधि अधिक मात्राओं में देनी पड़ती है, इसके साथ-साथ सोडियम् बाइकार्बोनेट तथा काफी मात्रा में जल का प्रयोग होना चाहिए। चूंकि अधिक मात्रा में तथा लगातार अधिक दिनों तक इसका सेवन करने से रक्त में पूर्वघनात्ति (प्रोथ्राम्बिन) की न्यूनता या ह्रास (Hypoprothrombinaemia) होता है, अतएव इसके निवारण के लिए विटामिन 'k' का प्रयोग भी होना चाहिए। सोडियम् सेलिसिलेट के साथ क्विनीन या साइट्रिक एसिड मिलाने से सॉल्यूशन में प्रक्षेप (Precipitation) हो जाता है। सोडियम् सेलिसिलेट का प्रयोग अम्ल-माध्यम (Acid medium) तथा एस्प्रिन का

प्रयोग क्षारीय माध्यम (Alkaline meduim) में नहीं होना चाहिए। एस्प्रिन का प्रयोग चूर्ण या टॅबलेट अथवा जिलेटिन की डिब्बी (Catchet) में रखकर किया जा सकता है। बच्चों में इसे दूध में मिलाकर दे सकते हैं।

सेलिसिन जल में अच्छी तरह नहीं घुलता। इसमें ग्लिसरिन मिला देने से इसकी विलेयता बढ़ जाती है।

(१) सेलिसिलिक एसिड के (ऑफिशल) योग:—

१—अन्ग्वण्टम् एसिडाइ सेलिसिलिसाइ Unguentum Acidi Salicylici (Ung. Acid. Salicyl.) I. P., B. P.—ले०। आयण्टमेंट ऑव सेलिसिलिक एसिड, सेलिसिलिक एसिड आयण्टमेंट — अं०। सेलिसिलिक एसिड का मलहम—हिं०। निर्माण-विधि—सेलिसिलिक एसिड का सूक्ष्म चूर्ण २० ग्राम, आयण्टमेंट ऑव ऊल अल्कोहल्स (Ointment of wool alcohols) ९८० ग्राम। पहले आयण्टमेंट ऑव ऊल अल्कोहल्स को पिघला लें। फिर इसमें सेलिसिलिक एसिड के चूर्ण को मिलाकर सीसे के दण्ड से चलाते रहें, जब तक ठंडा न हो जाय। इसमें २% सेलिसिलिक एसिड होता है।

२—लेसर्स पेस्ट Lessar's Paste (B. P.) पर्याय—पेस्टा जिंसाइ ऑक्साइडाइ कम् एसिडो सेलिसिलिसो Pasta Zinci Oxidi cum Acido Salicylico —ले०; पेस्ट ऑव जिंक ऑक्साइड एण्ड सेलिसिलिक एसिड Paste of Zinc Oxide and Salicylic Adid—अं०।

निर्माण-विधि—जिंक ऑक्साइड का सूक्ष्म चूर्ण २४० ग्राम, सेलिसिलिक एसिड का सूक्ष्म चूर्ण २० ग्राम, छाना हुआ (finely Sifted) स्टार्च २४० ग्राम तथा सफेद मृदु पाराफिन (सफेद वैसेलिन) ५०० ग्राम। पहले पाराफिन को पिघला लें। फिर अन्य द्रव्यों को उसमें मिलाकर हिलाते रहें, जब तक कि ठंडा न हो जाय। इसमें २% सेलिसिलिक एसिड तथा २४% जिंक आक्साइड होता है।

(२) सोडियम् सेलिसिलेट के योग :—

(नॉन्-ऑफिशल या अनधिकृत)

१—टॅबेली सोडियाइ सेलिसिलेटिस Tabellāe Sodici Salicylatis (Tab. Sod. Salicyl.), B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव सोडियम् सेलिसिलेट, सोडियम् सेलिसिलेट टॅबलेट्—अं०। मात्रा—(सोडियम् सेलिसिलेट) १० से ३० ग्रेन। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो ५ ग्रेन सोडियम् सेलिसिलेट की टिकिया दो।

एसेटिल सेलिसिलिक एसिड (एस्प्रिन) के योग :—

(ऑफिशल)

१—टॅबेली एसिडाइ एसेटिलसेलिसिलिसाइ Tabellāe Acidi Acetylsalicylici (Tabe. Acid. Acetylsalicyl.) I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव एसेटिल सेलिसिलिक एसिड, टॅबलेट्स ऑव एस्प्रिन—अं०। एस्प्रिन की टिकिया—हिं०। मात्रा—०·३ से ग्राम (५ से १५ ग्रेन)। मात्रा का निर्देश न होने पर ५ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

२—कम्पाउण्ड टॅबलेट्स ऑव कोडीन (B. P.) टॅबलेट्स ऑव एस्प्रिन-फिनासेटिन एण्ड कोडीन। प्रत्येक टिकिया में एस्प्रिन तथा फिनासेटिन प्रत्येक ४ ग्रेन, कोडीन फास्फेट $\frac{1}{8}$ ग्रेन होता है। मात्रा—१ से २ टिकिया।

३—टैबेली एसिडाइ एसेटिल सेलिसिलिसाइ एट फेनासिटिनी Tabellae Acidi Acetylsalicylici et Phenacetini (Tab. Acid. Acetylsalicyl. et. Phenacetin) B. P.—ले०; एस्प्रिन एण्ड फिनासेटिन टॅबलेट्स—अं०। प्रत्येक टिकिया में एस्प्रिन ३½ ग्रेन तथा फेनासिटिन २½ ग्रेन होता है। मात्रा—१ से २ टिकिया।

४—टॅबेली एसिडाइ एसेटिल सेलिसिलिसाइ कम्पोजिटी Tabellae Acidi Acetylsalicylici Compositae (Tab. Acid. Acetylsalicyl. Co.) I. P.—ले०; कम्पाउन्ड टॅबलेट्स ऑव एसेटिल सेलिसिलिक एसिड—अं०।

पर्याय—ए० पी० सी० टॅबलेट्स (A. P. C. Tablets)। इसमें एस्प्रिन, फिनासेटिन तथा कॉफीन तीनों द्रव्य होते हैं। मात्रा—१ से २ टिकिया।

(नॉट-ऑफिशल)

१—केल्सियाइ एसेटिल सेलिसिलास Calcii Acetylsalicylas—ले०। पर्याय—टिल्केल्सिन Tylcalsin। यह सफेद रंग का विरूपिक (Amorphous) चूर्ण होता है। १ भाग ६ भाग जल में घुलता है, किन्तु रखा रहने पर कुछ समय के बाद सॉल्यूशन वियोजित हो जाता (Dissociates) है। इसमें सोडियम् सेलिसिलेट तथा एस्प्रिन दोनों के गुण-कर्म पाये जाते हैं। आमवातहर, वेदनास्थापक तथा तापहर (Antipyratic) यौगिक है। मात्रा—०.३ से १ ग्राम (५ से १५ ग्रेन)।

(नॉट्-ऑफिशल या अनधिकृत योग)

१—कोलोडियम् एसिडाइ सेलिसिलिसाइ Coliodium Acidi Salicylici (Collod. Acid. Salicyl.), B. P. C.—ले०; कोलोडिअन (Collodion) ऑव सेलिसिलिक एसिड, सेलिसिलिक एसिड कोलोडिअन—अं०। पर्याय—कॉर्न पेंट Corn Paint। सेलिसिलिक एसिड १ औंस ८७ ग्रेन तथा फ्लेक्सिबुल कोलोडिअन (Flexible Collodion) १० फ्लुइड औंस। दोनों को परस्पर मिलावें। इसका संग्रह अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में ठंढी जगह में करना चाहिए। इसमें १२% सेलिसिलिक एसिड होता है।

२—कान्सपर्सस् एसिडाइ सेलिसिलिसाइ कम्पोजिटस Conspersus Acidi Salicylici Compositus (Conspers. Acid Salicyl. Co.), B. P. C.—ले०; सेलिसिलिक एसिड कम्पाउण्ड डस्टिंग पाउडर—अं०। पर्याय—Pulvis pro Pedibus (B. P. C.)। सेलिसिलिक एसिड चूर्ण १३१ ग्रेन, बोरिक एसिड पाउडर १ औंस प्योरिफाइड टॉक (Purified talc) ८ औंस २०६ ग्रेन। इसमें ३% सेलिसिलिक एसिड तथा १०% बोरिक एसिड होता है।

३—कान्सपर्सस् जिंसाइ ऑक्साइडाइ एट एसिडाइ सेलिसिलिसाई Conspersus Zinci Oxidi et Acidi Salicylici (Conspers. Zinc. Oxid. et Acid. Salicyl.), B. P. C.—ले०; जिंक ऑक्साइड एण्ड सेलिसिलिक एसिड डस्टिंग पाउडर—अं०। जिंक आक्साइड चूर्ण २ औंस, सेलिसिलिक एसिड पाउडर (चूर्ण) ½ औंस, स्टार्च पाउडर ७½ औंस। सबको परस्पर मिलावें। सेलिसिलिक एसिड ५%; जिंक ऑक्साइड २०% तथा स्टार्च ७५%।

४—सेलिसिलेमाइड (Salicylamide)। रासायनिक दृष्टि से यह २–hydroxybenzamide होता है, जो सेलिसिलिलिक एसिड का एमाइड होता है। रंगहीन अथवा सफेद रंग का क्रिस्टलाइन

चूर्ण होता है, जो जल तथा अल्कोहल् में अल्पतः विलेय (Slightly Soluble) होता है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र से शीघ्रतापूर्वक शोषित होता है। शरीर से निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है। यह वेदनास्थापक, ज्वरहर तथा आमवातनाशक होता है। किन्तु इस रूप में इसकी क्रिया हीन कोटि की है। वेदनाहर के रूप में ८ से १५ ग्रेन की मात्रा दिन में ३ बार तथा तथा आमवातनाशक के रूप में ३० से ४५ ग्रेन की मात्रा दिन में ३–४ बार दीजिये।

५.— सोडियम् रिसॉर्सिलेट— रासायनिक दृष्टि से यह Sodium 2: 6-dihydroxybenzoate होता है। मुख द्वारा सेवन किए जानेपर आंतों से शीघ्रतापूर्वक शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त इसका निस्सरण भी शीघ्रतापूर्वक तथा मूत्र के साथ होता है। प्रायः २४ घंटे के अन्दर ६०% औषधि उत्सर्गित हो जाती है। आमवातज्वर में उपयोगी है। एतदर्थ प्रतिदिन १ ग्राम (१५ ग्रेन) की मात्रा कई मात्राओं में विभक्त कर के दी जाती है। इसमें यह क्रिया सेलिसिलेट्स की अपेक्षा बहुत अधिक होती है परन्तु विषाक्तता भी उतनी ही अधिक होती है।

(नॉट–ऑफिशल)

सेलिसिनम् Salicinum (Salicin.) B. P. C.–ले०; सेलिसिन–अं०; वेतसीन—सं०, हिं०।

रासायनिक संकेतः $C_{13} H_{18} O_7$

Family: Salicaceae (वेतस-कुल)

प्राप्ति-साधन— यह क्रिस्टलाइन स्वरूप का एक ग्लुकोसाइड (B-glucoside) होता है, जो वेतस–कुल की सेलिक्स एवं पॉप्युलस जाति की विभिन्न उपजातियों या प्रजापतियों (Various species of salix and Populus) की वनस्पतियों की कोमल शाखाओं की छाल से प्राप्त किया जाता है। एतदर्थ प्रधानतः सेलिक्स फ्रेजिलिस (Salix fragilis L.) एवं सेलिक्स परप्यूरिया (Spurpurea L.) का उपयोग किया जाता है।

उत्पत्ति स्थान —यूरोप।

वर्णन – सेलिसिन के रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा यह श्वेत रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तीता होता है। विलेयता—३० भाग जल तथा ८० भाग अल्कोहल् में तो विलेय (Soluble) होता है; किंतु ईथर तथा क्लोरोफार्म में नहीं घुलता।

मात्रा—०·३ से १ ग्राम (५ से १५ ग्रेन)।

प्रयोग—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर शोषणोपरान्त इसकी क्रिया सेलिसिलेट की तरह होती है। शरीर से इसका निस्सरण मूत्र के साथ होता है। सेलिसिन वेदनास्थापक एवं ज्वरहर (Analgesic and antipyretic) होता है। एतदर्थ मिक्सचर के रूप में अथवा टैबलेट के रूप में प्रयुक्त करते हैं। किन्तु सेलिसिलेट की अपेक्षा इसकी क्रिया हीनकोटि की होती है।

(नॉट-ऑफिशल)

सोडियम् जेंटिसेट (Sodium Gentisate)।

सोडियम् जेंटिसेट का उपयोग आमवात की चिकित्सा के लिए किया जाता है। इसके लिए १० ग्राम (१५० ग्रेन की दैनिक मात्रा देनी पड़ती है। इसकी विशेषता यह है, कि एक तो यह सोडियम् सेलिसिलेट की भांति गुण-कर्म करता है, दूसरे उसकी तरह विषाक्त प्रभाव प्रायः नहीं

करता। सोडियम् सेलिसिलेट भी शोषणोपरान्त जेंटिसिक एसिड के रूप में परिवर्तित होता है, तथा इसी रूप में अपना आमवातनाशक कर्म करता है। इसी अनुमान के आधार पर इस यौगिक की कल्पना की गई है। जेंटिसिक एसिड का शोषण आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा अच्छी तरह हो जाता है। और शोषणोपरान्त यह मूत्रमार्ग द्वारा उत्सर्गित होता है। सोडियम् जेंटिसेट उन किण्वों की क्रिया का निरोध करता है, जो आमवात में संधियों में द्रव संचय में सहायक होते हैं।

ओलियम् गोलथिरिई (ऑयल ऑव गोलथिरिया) I. P.

(गुलथीरिया का तेल)

Family : Ericaceae.

नाम—ओलियम् गोलथिरिई Oleum Gaultheriae (Ol. Gaulth.), I. P.—ले०; ऑयल ऑव गोल्थीरिया (Oil of Gaultheria)—अं०।

पर्याय—ऑयल ऑव विंटरग्रीन Oil of wintergreen—अं०; शीतहरित का तेल, गन्धपुरा का तेल (Gandupura Ka-tel—हिं०।

प्राप्ति-साधन—गुलथीरिया का तेल एक उड़नशील सुगन्धित तेल होता है, जो गुलथीरिया फ्रेग्रेन्टिसिमा (Gaultheria fragrantissima Wall.) नामक वनस्पति के ताजे पत्तों से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९८% मेथिल सेलिसिलेट ($C_8H_8O_3$) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय प्रदेश में नैपाल से लेकर आसाम तक तथा दक्षिण भारत में नीलगिरि एवं ट्रावन्कोर में गुल्थीरिया के पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त बर्मा तथा लंका में भी पाया जाता है।

वर्णन—रंगहीन अथवा अत्यन्त हल्की रंगयुक्त आभा लिए (Almost colourless) तैल होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की उग्र सुगन्धि पाई जाती है, तथा स्वाद में तीक्ष्ण (Pungent) होता है। विलेयता—६ भाग अल्कोहल् (७०%) में विलेय (Soluble) होता है।

मेथिलिस सेलिसिलास Methylis Salicylas (Methyl. Salicyl.), I. P., B. P.—ले०; मेथिल सेलिसिलेट (Metnyl Salicylate)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_8H_8O_3$.

पर्याय—[शीतहरित या गुल्थीरिया का कृत्रिम (नकली) तैल] Artificial Oil of Wintergreen.।

प्राप्ति-साधन—मेथिल अल्कोहल् की सहायता से सेलिसिलिक एसिड का ईस्टरीकरण (Esterification) करने से मेथिल सेलिसिलेट प्राप्त होता है। इसमें कम से कम ९९% मेथिल सेलिसिलेट ($C_8H_8O_3$) होता है।

वर्णन—मेथिल सेलिसिलेट, एक रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग के द्रव के रूप में होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि पाई जाती है। मुँह में रखने से मीठा तथा सुगन्धित मालूम होता है, तथा मुँह में उष्णता का अनुभव होता है। विलेयता—जल में केवल अल्प मात्रा में घुलता (Slightly Soluble) है।

वक्तव्य—यदि नुस्खे में 'ऑयल ऑव विंटरग्रीन, विंटर ग्रीन या विंटर ग्रीन ऑयल' की मांग की गई हो, तो उसके स्थान में 'मेथिल सेलिसिलेट' देना चाहिए।

मेथिलसेलिसिलेट 'कैटाप्लाज्मा केओलिनाइ या केओलिन पुल्टिस' में पड़ता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—गुलथीरिया के तेल की क्रिया मुख्यतः इसके घटक 'मेथिल सेलिसिलेट' के कारण होती है। मेथिल सेलिसिलेट के गुण-कर्म तथा प्रयोग प्रायः सेलिसिलेट से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं। गुलथीरिया के तेल एवं मेथिल सेलिसिलेट का व्यवहार मुख द्वारा सेवन के लिए नहीं किया जाता। अक्षत त्वचा (Unbroken skin) से भी यह अच्छी तरह शोषित हो जाता है। अतएव इसका प्रयोग लिनिमेंट या आयण्टमेंट (मलहम) के रूप में पेशीशूल (Myalgia), गृध्रसी (Sciatica) एवं आमवातज संधिशोथ एवं संधि-शूल के स्थानिक दर्द के निवारण के लिए किया जाता है। एतदर्थ इसको दर्दयुक्त स्थान पर मलते हैं।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—लिनिमेंटम् मेथिलिस सेलिसिलेटिस Linimentum Methylis Salicylatis (Lin. Methyl. Salicyl.), B. P. C—ले०; लिनिमेंट ऑव मेथिल सेलिसिलेट—अं०। मेथिल सेलिसिलेट—अं०। मेथिल सेलिसिलेट २½ फ्लुइड औंस, मूंगफलीका तेल या बिनौले का तेल इतना मिलायें कि तैयार दवा १० फ्लुइड औंस हो जाय।

२—लिनिमेंटम् मेथिलिस सेलिसिलेटिस एट युकेलिप्टाइ Linimentum Methylis Salicylatis et Eucalypti (Lin. Methyl. Salicyl. Eucalypti) B. P. C—ले०; लिनिमेंट ऑव मेथिल सेलिसिलेट एण्ड युकेलिप्टस—अं०, मेंथोल (सतपुदीना) ½ औंस, युकेलिप्टस का तेल १ औंस, रेक्टि-फाइड कॅम्फर ऑयल २½ फ्लुइड औंस, मेथिल सेलिसिलेट १० फ्लुइड औंस के लिए।

३—अंग्वण्टम् मेथिलिस सेलिसिलेटिस कम्पोजिटम् Unguentum Methylis Salicylatis Compositum (Ung. Methyl. Salicyl. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड आयण्टमेंट ऑव मेथिल सेलिसिलेट; एनालजेसिक बल्सम् Analgesic Balsam—अं०। मेथिल सेलिसिलेट ५ औंस, मेंथोल १ औंस, युकेलिप्टोल ¼ औंस, कायपुटी का तेल (Oil Cajuput) ¼ औंस, सफेद मधूच्छिष्ट या मोम (White Beeswax) २ औंस, हाइड्रस ऊलफैट (ऊन की चर्बी) १½ औंस।

वेदनास्थापक एवं ज्वरहर तथा आमवातनाशक प्रभाव करने वाले व्यावसायिक योग :—

(१) इर्गापायरीन Irgapyrin (J. R. Geigy S. A. Basle)—इसकी ५ सी० सी० की एम्पूल्स आती हैं। प्रतिदिन या एक दिन के अन्तर से नितम्ब प्रदेश में पेशीगत इंजेक्शन दिया जाता है।

(२) नोवाल्जिन Novalgin (Hoechst.)—०.५ ग्राम की टॅबलेट्स।

बेंजोइनम् (बेंजोइन) I. P., B. P.

Benzoinum (Benzoin.)—ले०; Benzoin—अं०।

(लोबान)

Family : Styraceae (लोध्र-कुल)

पर्याय—गम बेंजामिन Gum Benjamin; सुमात्रा बेंजोइन Sumatra Benzoin; श्याम बेंजोइन Siam Benzoin.

प्राप्तिसाधन—बेंजोइन या लोबान एक बल्समिक रेजिन (Balsamic resin) होता है, जो लोध्र-कुल के निम्न वृक्षों के काण्ड (Stem) पर चीरा (Incisions) लगाकर एकत्रित किया जाता है :—

(१) स्टाइरेक्स बेंजोइन (Styrax benzoin Dryand.) तथा स्टाइरेक्स पेरलेलोन्युरम् (Styrax paralleloneurum Perkins) । इनसे प्राप्त होने वाले लोबान या बेंजोइन को व्यवसाय में "सुमात्रा बेंजोइन Sumatra benzoin कहते हैं।

(२) स्टाइरेक्स टोंकिनेन्सिस (Styrax tonkinensis Craib.) । इससे प्राप्त होने वाले बेंजोइन को व्यवसाय में "श्याम बेंजोइन Siam Benzoin" कहते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—मलाया प्रायद्वीप, श्याम, सुमात्रा आदि।

वर्णन—(१) सुमात्रा बेंजोइन—इसके कड़े एवं भंगुर स्वभाव के (Brittle) ढेले (Masses) होते हैं, जिनका मुख्य अंश (Matrix) खाकस्तरी-भूरे (Greyish-brown) रंग से लेकर लाली लिए भूरे रंग का (Reddish-brown) तथा पारभासी (Translucent) होता है। इसमें जगह जगह सफेद या हल्के लाल रङ्ग के छोटे-छोटे दाने (Tears) पड़े होते हैं। (२) श्याम बेंजोइन—यह दो रूपों में प्राप्त होता है—(१) अश्रुवत दाने (Tears) तथा (२) बड़े ढेले (Blocks)। लोबान में एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि पाई जाती है। स्वाद में कड़वा (Acrid) होता है। लोबान को आग में डालने से यह पिघलता है, और पिघलने पर इससे सफेद सुगंधित एवं तीक्ष्ण धुआँ निकलता है।

रासायनिक संघटन—(१) बेंजोइक एसिड (Benzoic Acid) १८ प्रतिशत; (२) सिन्नेमिक एसिड २० प्रतिशत (३) उड़नशील तेल (Volatile oil) तथा (४) (Resins) या राल।

एसिडम् बेंजोइकम् Acidum Benzoicum (Acid. Benzoic.) I. P., B. P.—ले०; बेंजोइक एसिड—अं०; लोबानाम्ल—सं०, हिं०।

रासायनिक संकेत : $C_6 H_5 CO_2 H$.

प्राप्ति-साधन—बेंजोइक एसिड (१) नैसर्गिक रूप से लोबान या बेंजोइन से प्राप्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त अब (२) रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से (by synthesis) भी प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९.५ प्रतिशत $C_7 H_6 O_2$ पाया जाता है।

वर्णन—इसके पंख के रेशों की भाँति अत्यन्त हल्के (light feathery) तथा रंगहीन एवं प्रायः गंधहीन क्रिस्टल्स होते हैं। कभी-कभी इससे बेंजेल्डिहाइड या बेंजोइन (लोबान) की सी हल्की गंध आती है। विलेयता—जल में ३५० भाग में १ भाग के अनुपात से तथा अल्कोहल् (९५%) में ३ भाग के अनुपात से घुलता है। किन्तु सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में तुरन्त घुल जाता (Readily soluble) है।

असंयोज्य द्रव्य—फेरिक साल्ट्स (Ferric salts) तथा मरक्युरिक क्लोराइड।

वक्तव्य—बेंजोइक एसिड 'टिंक्चुरा ओपियाई कम्फोरेटा' का एक उपादान है।

सोडियाइ वेंजोआस Sodii Benzoas (Sod. Benz.). I. P., B. P.—ले०; **सोडियम वेंजोएट**—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_7 H_5 O_2 Na$.

प्राप्ति-साधन—यह वेंजोइक एसिड तथा सोडियम् कार्बोनेट की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९ प्रतिशत सोडियम् वेंजोएट होता है।

वर्णन—सोडियम् वेंजोएट सफेद रंग के विरूपिक (Amorphous), दानेदार अथवा क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। कभी-कभी इससे वेंजोइन की हल्की गंध आती है। स्वाद में किंचित् मधुर तथा नमकीन जो प्रायः अरुचिकारक होता है। विलेयता—२ भाग जल तथा ९० भाग अल्कोहल् (९५%) में घुलता है।

मात्रा—०·३ से २ ग्राम (५ से ३० ग्रेन)।

असंयोज्य पदार्थ—एसिड्स (Acids), फेरिक लवण (Ferric salts), सीस (Lead) रजत (Silver), मरकरी तथा अनेक अल्कलायड्स ।

गुण-कर्म ।

वाह्य—स्थानिक प्रयोग से लोवान (वेंजोइन) एवं लोवानाम्ल (वेंजोइक एसिड) जीवाणुवृद्धिरोधक (एन्टिसेप्टिक), तृणाणुस्तम्भक (**Bacteriostatic**) तथा छत्राणु-वृद्धिरोधक (**Fungistatic**) प्रभाव करते हैं। इसका गाढ़ा घोल (**Concentrated Solution**) प्रयुक्त करने से उत्तेजक एवं क्षोभक कर्म करते हैं।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्रप्रणाली—वेंजोइक एसिड आंत्र में जीवाणुनाशक (**Disinfectant**) प्रभाव करता है। एसिड की अपेक्षा लवण-यौगिक (Salts) कम क्षोभक होते हैं। अतएव चिकित्सा व्यवहार की दृष्टि से अधिक उपयोगी हैं। अधिक मात्रा में मुखद्वारा सेवन से आंतों में साधारण क्षोभक प्रभाव कर सकते हैं।

तापक्रम—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर वेंजोइक एसिड तथा वेंजोएट्स **तापक्रम को कम करते** (Antipyretic) हैं।

श्वसन-संस्थान—वेंजोइन तथा सोडियम् वेंजोएट **कफनिस्सारक** (Expectorant) तथा **श्वासप्रणालिकाविशोधक** होते हैं। इनकी उक्त क्रियाएँ धूम्राघ्राणन (Inhalation) के रूप में स्थानिक प्रयोग से तथा मुखद्वारा सेवन किए जाने पर दोनों ही प्रकार से होती है। आघ्राणन के रूप में प्रयुक्त होने पर तो श्वसनिकाओं पर इसकी साक्षात् क्रिया होती है, और वेंजोएट का मुखद्वारा सेवन करने पर शोषणोपरान्त इसका निस्सरण श्वासमार्ग से भी होने के कारण यह उक्त प्रभाव करता है। इससे बलग़म ढीला होता है तथा दुर्गन्धित एवं दूषित कफ का शोधन होता है। ज्वरहर एवं कफोत्सारि तथा कफशोधक क्रियाओं को ही दृष्टिकोण में रखकर इसका प्रयोग यक्ष्मा आदि में किया जाता है।

मूत्रमार्ग—वेंजोइक एसिड तथा इसके लवण मुखद्वारा से किए जाने पर शोषणोपरान्त यकृत में पहुँचकर ग्लाइसिन के साथ संयुक्त होकर हिप्यूरिक एसिड (Hippuric acid) के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं, और शरीर से इनका निस्सरण इसी रूप में प्रधानतः मूत्रमार्ग से

होता है। हिप्पूरिक एसिड उत्सर्ग के समय वृक्काणुओं पर उत्तेजक प्रभाव करता है, तथा क्षारीय मूत्र को आम्लिक बनाने में सहायता करता है। इसके अतिरिक्त मूत्रमार्ग पर जीवाणुनाशक प्रभाव भी कराता है। इस प्रकार बेंजोइक एसिड तथा बेंजोएट्स मूत्रल (Diuretic) तथा क्षारीय मूत्र को आम्लिक बनाने वाले मूत्रमार्ग विशोधक (Acidifiers of alkaline urine) तथा मूत्रमार्ग विशोधक होते हैं।

समवर्त-क्रिया (Metabolism)—समवर्त क्रिया बढ़ जाती है। बेंजोइक एसिड, यूरिक एसिड के निस्सरण को कम करता है।

निस्सरण या उत्सर्ग—इनका उत्सर्ग प्रधानतः मूत्र के साथ तथा श्वसनमार्ग से होता है। कुछ अंश पसीना तथा लालास्राव के साथ भी उत्सर्गित होता है।

आमयिक प्रयोग।

बाह्य—कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव बेंजोइन का प्रयोग ताजे घावों पर लगाने के लिए बहुत उपयुक्त होता है। और इस रूप में इसका व्यवहार प्रचुरता से किया जाता है। इससे खूनका बहना भी बन्द होता है, साथ ही घाव पर एन्टिसेप्टिक प्रभाव भी होता है। त्वचा पर छत्राणु-उपसर्गजन्य विकृति (Fungal infection) में सेलिसिलिक एसिड के साथ बनाये हुए बेंजोइक एसिड का मलहम उपयोगी होता है। त्वचा पर लगाने से शीतपित्ती के खुजली का शमन होता है। मुहांसा (Acne) के ठीक हो जाने पर त्वचागत अन्य विकृतियों को दूर करने के लिए टिंक्चर बेंजोइन को० में ग्लिसरिन तथा पानी मिलाकर (५% टिंक्चर बेंजोइन को० तथा ५% ग्लिसरिन) चेहरे पर लगाते हैं। आहार द्रव्यों के संरक्षण के लिए भी इसका (०·१% सॉल्यूशन) व्यहार होता है।

आभ्यन्तर। फुफ्फुस—चिरकालीन श्वसनिका शोथ (Chronic bronchitis) तथा यक्ष्मा एवं जुकाम, एन्फ्लुएन्जा, ग्रसनिका शोथ आदि व्याधियों में इसका व्यवहार मुखद्वारा अथवा आघ्राणन के रूप में बहुत उपयोगी है। आघ्राणन के लिए २० औंस पानी में ६० बूंद दवा मिलाकर आघ्राणन-यन्त्र (Inhaler) द्वारा इसका भाप सूंघा जाता है।

यकृत—यकृत के क्रिया व्यापार के परीक्षण के लिए सोडियम् बेंजोएट मुखद्वारा प्रयुक्त किया जाता है।

(बेंजोइन के ऑफिशल या अधिकृत योग)

१—टिंक्चुरा बेंजोइनी कम्पोजिटा Tinctura Benzoini Composita (Tinct. Benzoin. Co.) I. P., B. P.—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव बेंजोइन (Compound Tincture of Benzoin)—अं०। पर्याय—फ्रायर्स बल्सम् Friar's Balsam। लोबान का चूर्ण (Benzoin crushed) १०० ग्राम, प्रिपेयर्ड स्टोरेक्स (Prepared Storax) ७५ ग्राम, बल्सम् ऑव टोलू २५ ग्राम, मुसब्बर (Aloes) २० ग्राम तथा अल्कोहल् (९०%) आवश्यकतानुसार १०० मि० लि० तैयार दवा के लिए। इसमें बेंजोइन १०% होता है।

(नॉन्-ऑफिशल या अनधिकृत योग)

१—वेपर मेंथोलिस एट बेंजोइनी Vapour Mentholis et Benzoini (Vap. Menthol.

et. Benzoin.) B. P.—ले०; इन्हेलेशन (Inhalation) ऑव मेंथोल एण्ड बेंजोइनी--अं०। १ फ्लुइड औंस 'इन्हेलेशन ऑव बेंजोइन' में ८ ग्रेन मेंथोल मिलाकर बनाया जाता है।

२—वेपर बेंजोइनी Vapour Benzoini (Vap. Benzoini) B. P. C.—ले०; बेंजोइन इन्हेलेशन--अं०। कुट्टित लोबान (Crushed Benzoin) ४५ ग्रेन, प्रिपेयर्ड स्टोरेक्स ३० ग्रेन तथा अल्कोहल् (९०%) १ औंस के लिए।

३--अंग्वण्टम् एसिडाइ बेंजोइसाइ कम्पोजिटम् Unguentum Acidi Benzoici Compositum (Ung. Acid. Benz. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड आयण्टमेंट ऑव बेंजोइक एसिड--अं०। पर्याय--ह्वाइट फील्ड्स आयण्टमेंट Whitefield's Ointment। बेंजोइक एसिड का सूक्ष्म चूर्ण २६२ ग्रेन, सेलिसिलिक एसिड का सूक्ष्म चूर्ण १३१ ग्रेन इमल्सिफाइंग आयण्टमेंट ९ औंस ४४ ग्रेन। इसमें ६% बेंजोइक एसिड तथा ३% सेलिसिलिक एसिड होता है।

४—फेनिकारबेजाइडम् (Phenicarbazidum)—ले०; फेनिकारबेजाइड—अं०। पर्याय--क्रायोजेनीन Cryogenin। रासायनिक नाम:—Meta-benzaminosemi Carbazide मात्रा—०·२५ से ०·७५ ग्राम (४ से १२ ग्रेन)। उपयोग—प्रलेप ज्वर (Pyrexia of Pthisis) एवं आंत्रिकज्वर में उपयोगी है।

—:*:—

अध्याय ६

सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १।

रक्तवह-संस्थान पर कार्य करने वाली औषधियाँ :—

(अ) हृदय पर कार्यकर औषधियाँ :—

(१) हृद्य औषधियाँ (Cardiac tonics):

डिजिटेलिस (हृत्पत्री), स्ट्रोफेन्थस्, स्क्विल (विलायती वनपलाण्डु), अर्जिनिया (देशी वनपलाण्डु) तथा एपोसायनम्।

(२) हृदयावसादक औषधियाँ (Cardiac depressants) :—

एकोनाइट (वत्सनाभ—विलायती एवं देशी), क्विनीडीन (Quinidine) एवं प्रोकेनेमाइड (Procaineamide) आदि।

(ब) रक्तवाहिनियों (Blood-vessels) पर कार्यकर औषधियाँ :—

(१) रक्तचाप या रक्त-निपीड़ को बढ़ने वाली (Raising the blood pressure):

(अ) वाहिनी-संकोचक (Vaso-Constrictors):

एड्रिनेलीन, एफेड्रीन, एम्फिटामीन, मेथिल-इम्फिटामीन, पिच्युटरी एक्स्ट्रेक्ट, आदि आदि।

(ब) रक्तराशि (Blood volume) को बढ़ानेवाली औषधियाँ एवं उपाय :—
रक्त-संक्रमण (Blood Transfusion)।

रक्तचाप को कम करने वाली औषधियाँ (Drugs lowering the blood-pressure : Hypotensive Drugs):

(अ) वाहिनी-विस्फारक (Vaso-dilators) :

एमिल नाइट्राइट, ऑक्टिलनाइट्राइट, नाइट्रोग्लिसरिन, सोडियम् नाइट्राइट, स्प्रिट ऑव नाइट्रस ईथर, एसेटिल कोलीन, कारबेकोल, पापावरीन, हाइड्रेलेजीन (Hydrallazine), खेलीन (Khelline), टोलेजोलीन आदि।

(ब) रक्तराशि को कम करने वाली औषधियाँ एवं उपाय :

जोंक लगाना या जलौका प्रयोग (Leech), रक्त स्रवण (Blood-letting) एवं रेचक औषधियो द्वारा द्रवापकर्षण।

वर्ग अ—हृदय पर कार्य करने वाली औषधियाँ

हृदय प्रधानतः उत्क्षेपक यंत्र या पम्प (Pump) का कार्य करता है। स्वस्थावस्था एवं व्याधि दोनों ही अवस्थाओं में हृदय की यह क्षमता (Efficiency) विशेष महत्त्व की है। हृदय नाड़ी धातु एवं पेशी धातु से निर्मित एक विशिष्ट प्रकार का अंग है, जो अनेकानेक जटिल क्रियायें करता है। इसकी गति तालबद्धता के साथ होती रहती है, जिसका संचालन स्वजनित आवेगों द्वारा होता रहता है। हृदय में निम्न विशेषतायें पाई जाती हैं, यथा तालबद्धता (Rhythmicity). उत्तेजनशीलता (Excitability), संकोचनशीलता (Contractility), संवहनशीलता (Conductivity) बलपरता (Tonicity)।

उत्तेजनशीलता का गुण होने से बाह्य आवेगों के प्रति-क्रिया स्वरूप हृत्पेशी में संकोच (Contraction) होता है, किन्तु ऐच्छिक पेशियों से इसमें यह विशेषता होती है, कि जब तक आवेग काफी तीव्र नहीं होंगे, उनका प्रभाव हृत्पेशी पर लक्षित नहीं होगा और जब आवेग तीव्र स्वरूप के होंगे तो पेशी में संकोच होगा। हृत्पेशी में यह विशेषता होती है कि जब संकोच होगा तो इसमें सम्पूर्ण सूत्र क्रियाशील होते हैं, इसे "All or ncne phenomenon" कहते हैं। इसके विपरीत ऐच्छिक पेशियों में यह होता है, कि मन्दतर आवेगों से भी इसमें चेष्टा होती है; किन्तु कतिपय सूत्र क्रियाशील होते हैं, तो साथ ही साथ अन्य मांस सूत्र विश्राम की स्थिति में रहते हैं। इसके अतिरिक्त हृत्पेशी में एक दूसरी विशेषता यह होती है, कि प्रतिकारक काल (Refractory period) में आवेगों के रहते हुए भी इसमें संकोच नहीं होता। संवहनशीलता (Conductivity) हृत्पेशी की एक तीसरी विशेषता है जो विशेषतः अलिन्द-निलय पुलिन्द (Bundle of His) तथा इसकी शाखाओं में पाई जाती है। संवहनशीलता का तात्पर्य यह है कि अलिन्द सिरा संपात (Sino-auricular node) से गति प्रवर्तक आवेग दोनों अलिंदों के सम्पूर्ण सूत्रों में एक साथ प्रसारित होते तथा तदनु पुनः अलिन्दनिलय संपात (Auriculo-Ventricular node) पर केन्द्रित होते हैं। यहाँ से इनका संवहन पुनः अलिन्द निलय पुलिन्द तथा इसकी शाखा-प्रशाखाओं द्वारा दोनों निलयों में सर्वतः किया जाता है। जो औषधियाँ इस संवहन शीलता को अवसादित करती हैं, वे हृदय की उत्तेजन शीलता को भी कम करती हैं। एक दूसरी विशेषता हृत्पेशी में यह भी है, कि इसमें 'शक्ति सञ्चय reserve force' की भी क्षमता होती है, जिससे आत्ययिक काल में आवश्यकता पूर्ति के लिए इसकी उत्क्षेपण क्रिया कई गुना बढ़ सकती है।

हृत्पेशी की गति स्वयम्भू (Spontaneous) होते हुए भी वास्तव में इसका नियन्त्रण नाड़ी केन्द्रों द्वारा होता है। हृद्गतिचक्र का नियन्त्रण २ केन्द्रों द्वारा होता है, (१) हृद्गत्यवरोधक (Cardio-inhibitor) तथा (२) हृद्गति प्रवर्तक या प्रदीपक (Accelerator)। स्वयं हृदय मन (Seat of mind) तथा शरीर के विभिन्न अङ्गों से विभिन्न आवेग सुषुम्नाशीर्षगत केन्द्र को पहुँचते हैं, तथा वहाँ से पुनः हृदय को प्रतिसंक्रमित होते हैं। इस प्रकार हृद्गति का संतुलन हुआ करता है। गत्यवरोधक केन्द्र का सम्बन्ध प्राणदा नाड़ी (Vagus nerve) से तथा गतिप्रदीपक केन्द्र का सम्बन्ध स्वतन्त्रनाड़ी (Sympathetic) से है। कार्य में परस्पर विरोधी होते हुए भी

इनका संतुलन इस प्रकार होता रहता है, कि परिस्थित्यनुकूल आवश्यक परिवर्तन होने में कोई बाधा नहीं होती। अवसादक सूत्र मस्तिष्कगत प्राणदा केन्द्र से, प्राणदानाड़ी के साथ हृदयगत प्राणदा कन्दिका (Vagus ganglia) में आते हैं। यहाँ सूत्रिकायें निकलकर सिरा-अलिन्द सम्पात् (Sino-auricular node) में जाती हैं, जो दक्षिणालिन्द के शीर्ष में स्थित होता है। यही हृद्गतिचक्र का आदिप्रवर्तक (Pace-maker) होता है। यहाँ से ये सूत्रिकायें अलिन्द-निलय पुलिन्द (Auriculo-Ventricular Bundle) में जाती हैं। इस प्राणदामार्ग शृंखला में कहीं भी उत्तेजक प्रभाव होने से हृद्गतिमन्दता होती है। प्राणदामार्गशृंखला की भाँति हृदय की स्वतंत्र नाड़ीमार्गशृङ्खला में भी नाड़ी केन्द्र, नाड़ी, कन्दिका तथा नाड्यग्र (Nerve-endings) होते हैं, जो उपरोक्त प्रकार से ही हृदय की भित्तियों में फैले होते हैं। इस शृंखला के भी सम्पूर्ण या किसी एक मार्ग की उत्तेजना होने से हृद्गति में तीव्रता होती है।

हृदयाकुञ्चन का प्रारम्भ सिरा-अलिन्द सम्पात से होता है। यह स्थान दक्षिणालिन्द के शीर्ष में उत्तरा महासिरा के मुख के पास होता है। यहाँ से आवेगतरंगें दोनों अलिन्दों में सर्वतः फैल जाती हैं, तत्पश्चात् पुनः अलिन्द-निलय सम्पात (Auriculo-ventricular node) पर केन्द्रित होकर अलिन्द-निलय पुलिन्द एवं इसकी शाखा-प्रशाखाओं के द्वारा निलयद्वय के अन्तस्तर में फैल जाती हैं। अलिन्द-निलय पुलिन्द का निर्माण एक विशेष प्रकार के लम्बे सूत्रों द्वारा होता है, जिन्हें परकंजी के सूत्र (Purkinje fibres) कहते हैं। इनमें अवेग संवहनशीलता का गुण विशेष-रूप से होता है।

हृदय की गतिका सुचारु रूप से सम्पादन होने के लिए आवश्यक है कि हृत्पेशी को पर्याप्त मात्रा में प्राणवायु (Oxygen) मिलता रहे। ऐच्छिक पेशियों से हृत्पेशी में यह विशेषता है कि 'जारक दारिद्र्य Oxygen-debt' की अवस्था में यह कार्य नहीं कर सकतीं। हृदय को आक्सीजन हार्दिक धमनी (Coronary circulation) के द्वारा प्राप्त होता है। हार्दिक धमनीगत रक्तसंचार हृदय के आकुञ्चन पर निर्भर होता है। अर्थात् आकुञ्चन जितनी तीव्रतापूर्वक होगा, हार्दिक धमनी में भी उतनी ही अधिक राशि रक्त की पहुँचेगी। हार्दिक धमनी संचार में जहाँ कुछ भी विकृति हुई कि हृदय पर उसके अनिष्ट प्रभाव लक्षित होने लगते हैं। हार्दिक धमनी का नियन्त्रण भी हृदय की भांति स्वतन्त्र एवं प्राणदानामक परिस्वतंत्र नाड़ी द्वारा होता है। स्वतंत्रनाड़ी की उत्तेजना से हार्दिक धमनी का विस्फार एवं परिस्वतंत्र की उत्तेजना से संकोच होता है। तात्पर्य यह कि प्राणदा की उत्तेजना से हृदयपोषक रक्त-संचार एवं हृदय की कार्यक्षमता में कमी एवं स्वतन्त्रनाड़ी की उत्तेजना से इसके विपरीत दोनों में वृद्धि होती है।

सम्पूर्ण रक्तवह संस्थान का परस्पर सहयोग होते हुए भी, रक्तसंवहन को सुचारू रूप से चलाने एवं इसमें विकृति आने पर क्षतिपूरण का विशेष उत्तरदायित्व हृत्पेशी पर ही होता है।

हृद्रोगों में पाई जानेवाली दो अवस्थायें विशेष महत्त्व की हैं, जिनका वर्णन संक्षेपतः यहाँ कर देना आवश्यक प्रतीत होता है।

इन दोनों अवस्थाओं को क्षतिपूरण (Compensation) तथा अलिन्द की अराजकता (Auricular fibrillation) कहते हैं।

क्षतिपूरण (Compensation)—हृदय की उस शक्ति को कहते हैं, जिसके द्वारा यह प्रत्यनीक अवस्थाओं (Adverse condition) में भी रक्तसंचार को सुचारु रूप से चलाने में प्रयत्नशील होता है। इस शक्ति के नष्ट होने से ही हृद्भेद (Heart failure) होता है। क्षतिपूरण शक्तिभेद (Failure of Compensation) होने पर श्वासकृच्छ्र (Dyspnoea), ऊर्ध्वश्वसन (Orthopnoea), हृदय का विस्फारित होना, नाड़ीशीघ्रता, परिसरीय रक्तपरिभ्रमण का मन्द होना, हाथ-पैर का शीतल एवं शोथयुक्त होना तथा सर्वांगशोथ (Dropsy) आदि लक्षण प्रगट होते हैं।

अलिन्दों की फड़फड़ाहट (Flutter) एवं अराजकता (Fibrillation)—इन दोनों विकृतियों में अलिन्दस्पन्दन में अनावश्यक वृद्धि हो जाती है। वैद्युतिक हृल्लेखन (Electrocardiogram tracings) द्वारा यह परीक्षण किया जाता है। दोनों ही अवस्थाओं में अलिन्द स्पन्दावेगों की संख्या अत्यन्त प्रवृद्ध हो जाती है। अन्तर केवल यह होता है, कि अराजकता की अवस्था में आवेग अनियमित (Irregular) किन्तु फड़फड़ाहट में नियमित होते हैं। अराजकता में स्पन्दन संख्या प्रतिमिनट ४००–५०० तक तथा फड़फड़ाहट में किंचिन्न्यून यथा २५०–३०० तक हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है, कि अलिन्द-निलय पुलिंद इस तीव्र वेग से अलिन्द जन्य आवेगों का संवहन निलयों में करने में असमर्थ हो जाता है, जिससे परस्पर असम्बद्धता होकर अलिंद-निलय स्पन्दन अतालबद्ध होने लगते हैं। ये दोनों उपद्रव गम्भीर स्वरूप के होते हैं, तथा हृद्भेद एवं चिरकालीन कपाटरोग के सूचक होते हैं।

अराजकता में एक तरंग अपना चक्र पूरा नहीं करने पाती, तवतक अलिंदों के विभिन्न सूत्र समुदाय से नाना वैकृतिक तरंगे उत्पन्न होकर अलिन्दों में फैलती रहती हैं. जिससे तरङ्गों का एक भंवर सा वन जाता है। इसे सरकसगति (Circus movements) कहते हैं। इसमें प्रतिकारक काल अत्यल्प हो जाता अथवा उसका अभाव हो जाता है। यह स्थिति प्रायः अंतिम अवस्थाओं में उत्पन्न होती है। इस विकृति की प्रारम्भिक अवस्थाओं में डिजिटेलिस तथा क्विनीडीन का प्रयोग वहुत उपयोगी होता है।

हृदयोत्क्षिप्तराशि (Cardiac Output) हृदयोत्क्षिप्त रक्त की मात्रा दक्षिणालिन्द में लौटने वाली अशुद्धरक्तराशि पर निर्भर होती है। शारीरिक परिश्रम से शिराओं द्वारा अधिकाधिक अशुद्ध रक्त हृदय में आता है, अतएव इससे हृदयोत्क्षिप्त रक्तराशि में भी वृद्धि हो जाती है। हृद्गतिप्रदीपक औषधियों, यथा एड्रिनेलीन, अट्रोपीन आदि द्वारा भी हृदयोत्क्षेपण में आंशिक वृद्धि हो सकती है। किन्तु अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर एड्रिनेलीन इस राशि में वृद्धि के स्थान में और भी कमी करता है। डिजिटेलिस भी हृदयोत्क्षेपण में कोई वृद्धि नहीं करता। केवल रक्ताधिक्य जन्य हृद्भेद (Congestive failure) में यह साधारण वृद्धि करता है।

नाइट्राइट्स आदि वाहिनी-विस्फारक औषधियाँ भी हृदयोत्क्षिप्त राशि में वृद्धि करती हैं, किन्तु अत्यधिक विस्फारण से रक्तभार में कमी हो जाने पर वृद्धि के स्थान में कमी हो जाती है। लवणजल का अन्तः संक्रमण (Saline infusion) करने पर भी हृदयोत्क्षेपण में वृद्धि होती है, क्योंकि इससे शिराजरक्तागति (Venous return) में वृद्धि होती है।

हृद्गति (Heart rate) में निम्न परिवर्तन हो सकते हैं :—

(अ) हृद्गतिमन्दता निम्न कारणों से उत्पन्न होती है—

प्राणदानाड़ी केन्द्र पर प्रभाव पड़ने से—जो औषधियाँ केन्द्रिक नाड़ीतन्त्र (मस्तिष्कसौषुम्निक नाड़ी-तन्त्र) को उत्तेजित करती हैं, वे हृत्केन्द्र (Cardiac centre) पर भी उत्तेजक प्रभाव करती हैं। किन्तु हृत्सम्बन्धी स्वतंत्रनाड़ीकेन्द्र की अपेक्षा परिस्वतंत्र केन्द्र अर्थात् प्राणदाकेन्द्र (Vagal centre) पर यह प्रभाव तीव्रतर होता है; परिणामतः हृन्मन्दता ही लक्षित होती है, जैसे रक्त में जारक (Oxygen) का अभाव होने से—यथा श्वासावरोध में-प्राणदाकेन्द्र इसी प्रकार उत्तेजित होता है। एकोनाइट, डिजिटेलिस, स्ट्रोफेन्थस्, स्क्विलल, पिक्रोटॉक्सिन, स्ट्रिक्नीन तथा मॉर्फीन आदि औषधियाँ प्राणदा केन्द्र पर प्रभाव करने से हृन्मन्दता करती हैं। रक्तचाप में वृद्धि होने से—यथा रक्तभाराधिक्य (High blood pressure) आदि भी सुषुम्नाशीर्ष पर प्रभाव पड़ने से हृन्मन्दता होती है। किन्तु यह प्रभाव तभी लक्षित होता है, जब प्राणदा नाड़ियों का विच्छेद न किया गया हो अथवा अट्रोपीन द्वारा वे निष्क्रिय न की गई हों। पञ्चमी तथा दशमी मूर्धजा नाड़ियों द्वारा परिसरीय भागों से मस्तिष्क में पहुँचने वाले विभिन्न सांवेदनिक आवेगों द्वारा भी प्राणदा केन्द्र प्रतिसंक्रमितरूप से (Reflexly) उत्तेजित होता है, यथा अमोनिया गैस का आघ्राणन करने से।

(२) नाड़ीकन्दिकाकोषाओं (Ganglion cell) पर प्रभाव पड़ने से—निकोटीन, कोनाईन, लोबेलीन तथा जेलसीमियम् (पीतचमेली) प्राणदानाड़ीमार्गगत कन्दिकाकोशाओं पर उत्तेजक प्रभाव करते हैं, अतः इससे भी हृन्मन्दता प्रगट होती है। किन्तु तत्पश्चात इन पर अवसादक प्रभाव होता है, और अत्यधिक मात्रा में इन औषधियों के प्रयुक्त होने पर इन कन्दिकाकोशाओं के निष्क्रिय हो जाने (Paralysed) से मन्दता के स्थान में हृद्गति में तीव्रता हो जाती है।

(३) नाड्यग्रों (Nerve-endings) के प्रभावित होने से—प्राणदानाड्यग्रों की उत्तेजना से भी हृन्मन्दता होती है यथा पाइलोकार्पीन, एसेटिलकोलीन, कारबेकॉल, फिजियॉस्टिग्मीन आदि के द्वारा।

(४) हृत्पेशीपर प्रभाव करने से—कतिपय औषधियाँ हृत्पेशी पर विशिष्ट प्रभाव करने से हृद्गतिमन्दता पैदा करती हैं। कतिपय औषधियाँ अल्पमात्रा में प्रयुक्त होने पर तो हृन्मन्दता, किन्तु अधिक मात्रा में सेवन किये जाने पर अलिन्द निलय पुलिन्द (Bundle of His) पर कार्य करने से मन्दता के स्थान में गति में वृद्धि करती हैं। अतएव वेरियम, डिजिटेलिस, क्विनीडीन, एकोनाइट तथा पिच्युटरी एक्स्ट्रॅक्ट द्वारा जो हृन्मन्दता उत्पन्न होती है, यह इन औषधियों के हृत्पेशी पर विशिष्ट प्रभाव के ही कारण होती है।

(ब) हृद्गतितीव्रता (हृच्छीघ्रता) तथा इसके कारण—

(१) हृदयसम्बन्धी स्वतंत्रनाड़ी केन्द्र पर प्रभाव करने से—कोकेन द्वारा हृद्गतितीव्रता इसी प्रकार होती है। शारीरिक उत्तेजनशीलता (Excitement) तथा रक्तगत अजारकता (Anoxaemia) की स्थिति में जो हृच्छीघ्रता होती है, वह सम्भवतः इन कारणों से सुषुम्नाशीर्षगत हृत्सम्बन्धी स्वतन्त्रनाड़ी केन्द्र (Accelerator or Sympathetic centre) पर उत्तेजक प्रभाव पड़ने अथवा एड्रिनेलीन (उपवृक्कि) स्राव में उत्तेजना होने से होती है। प्रतिक्षोमक (Counter-irritants) द्रव्यों के प्रयोग अथवा किसी कारण से रक्तभार में कमी होने से भी हृच्छीघ्रता होती है।

(२) नाड़ी कन्दिका कोषाओं पर कार्य करने से—निकोटीन कोनाईन, लोबेलीन तथा जेलसिमियम् आदि औषधियाँ अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर प्राणदानाड़ी-मार्गस्थित कन्दिका कोषाओं को निष्क्रिय करने के कारण हृच्छीघ्रता उत्पन्न करती हैं।

(३) नाड्यग्रों पर कार्य करने से—अट्रोपीन, हायोसायमीन, तथा हायोसीन आदि द्रव्य प्राणदानाड्यग्रों को निष्क्रिय करने के कारण, तथा एड्रीनेलीन, टायरामीन (Tyramine), इफेड्रीन, कोकेन तथा पाइलोकार्पीन आदि अल्प मात्रा में सेवन करने से स्वतन्त्रनाड्यग्रों को उत्तेजित करने के कारण हृद्गति में तीव्रता पैदा करती हैं।

(४) हृत्पेशी पर कार्य करने से—कॅफीन तथा विषाक्त मात्रा में डिजिटेलिस आदि द्रव्य इसी प्रकार हृच्छीघ्रता करते हैं।

हृदयोत्तेजक द्रव्य (Cardiac Stimulants)—जब हृदय का कार्य भेद हो रहा हो तो ऐसी स्थिति में ये औषधियाँ हृदय की क्रियाशीलता में सुधार करतीं तथा रक्तपरिभ्रमण को स्थिर रखने में सहायक होती हैं।

हृदयोत्तेजक औषधियों को निम्न समूहों में विभक्त किया जा सकता है :—

(१) स्वतंत्र नाड्यग्रों के उत्तेजित करने वाली औषधियाँ, यथा एड्रिनेलीन, एफेड्रिन (अल्प मात्रा में), संश्लिष्ट या कृत्रिम एफेड्रीन (Pseudo-ephedrine), टायरामीन आदि।

(२) परिस्वतंत्र नाड्यग्रों को अवसादिक करने से यथा एट्रोपीन।

(३) सुषुम्नाशीर्ष पर उत्तेजक प्रभाव करनेवाले द्रव्य, यथा लेप्टाजॉल (कार्डियाजॉल), निकेथामाइड, कैम्फर तथा स्ट्रिक्नीन।

(४) हृत्पेशी पर प्रत्यक्ष कार्य करने वाली औषधियाँ—कॅफीन तथा डिजिटेलिस समुदाय की औषधियाँ।

(५) हृत्पेशी में अधिक रक्त संचार करने से—इस समुदाय के पुनः दो उपसमुदाय हैं :—

(अ) हार्दिक रक्तपरिभ्रमण (Coronary Circulation) में वृद्धि करने वाले द्रव्य, यथा थियोब्रोमीन, थियोफाइलीन (Theophylline), कफीन, एड्रीनेलीन, नाइट्राइट्स तथा डिजिटेलिस। ग्लूकोज हृत्पेशी के लिए पोषक (Nutrient) होता है।

(अ) रक्तगत परिवर्तन करने वाले—लौह तथा अन्य शोणित वर्धक (Haematinic) द्रव्य एवं आक्सीजनाघ्राणन।

अमोनिया के आघ्राणन एवं अल्कोहल्, ईथर तथा अमोनिया (उदरगत प्रभाव से) भी हृदयोत्तेजना होती है, किन्तु यह उत्तेजना प्रतिसंक्रमित रूप से (Reflexly) होती है।

हृद्य औषधियाँ (Cardiac tonics)—वे औषधियाँ हैं, जो हृत्पेशी की बल्यता एवं पोषण में सुधार करने के कारण उसकी गति में वृद्धि करती हैं। हृदयोत्तेजक औषधियाँ क्लान्त घोड़े पर चाबुक लगाने की भांति कार्य करती हैं, अतएव इनका प्रयोग

केवल आत्ययिक अवस्थाओं में ही उपयोगी हो सकता है; क्योंकि इनका प्रभाव क्षणिक होता है। ये औषधियाँ हृत्पेशीगत रक्तसंचार में सुधार करने कारण प्रत्यक्ष वल्य प्रभाव करतीं, यथा डिजिटेलिस, कफीन, थियोब्रोमीन आदि, तथा सामान्यकायिक स्वास्थ्य में सुधार करने से अप्रत्यक्ष-तया हृद्य प्रभाव करती हैं, यथा लौह के यौगिक।

२—हृदयावसादक औषधियाँ :—
(Cardiac Depressants)

मस्तिष्क-सौषुम्निक तंत्र के बाद हृदय ही एक ऐसा अंग है, जिसके विषैली औषधियों से प्रभावित होने की सम्भावना अन्य धातुओं की अपेक्षा बहुत अधिक होती है। जब हृदय अव-सादित होता है, तो इसकी आकुञ्चन शक्ति (Force of Contraction), संवहनशीलता तथा बारंबारता (Rate) में भी कमी हो जाती है। अनेक हृद्विकारों में यह अभीष्ट होता है, कि आकुञ्चन शक्ति को कम किये बिना बारंबारता (हृद्गति संख्या) में कमी कर दी जाय। यह कार्य इन्हीं हृदयावसादक औषधियों (Cardiac depressants) द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इन औषधियों को निम्न समुदायों में विभक्त किया जा सकता है :—

(१) प्राणदानाड़ी केन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ :—एकोनाइट, मॉर्फीन।

(२) प्राणदानाड्यग्रों को उत्तेजित करने वाली औषधियाँ :—कोलीनजन (Colinergic drugs) **औषधियाँ।**

(३) हार्दिक रक्तपरिभ्रमण (Coronary Circulation) **को कम करने वाली औषधियां : पिच्युट्रीन, एड्रीनेलीन (अल्प मात्रा)।**

(४) हृत्पेशी पर प्रत्यक्ष प्रभाव करने वाली औषधियाँ :—एकोनाइट, प्रोकेन-एमाइड, इमेटीन, क्विनीडीन, हायड्रोसायनिक एसिड, क्लोरलहाइड्रेट तथा अधिक मात्रा में अन्य कार्बनिक निद्रल औषधियाँ।

रक्तवाहिनियों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ :—
(Drugs acting on the vessels.)

धमनियाँ नाड़ी एवं पेशीसूत्रनिर्मित नलिकायें होती हैं, जिनका व्यास (Calibre) विभिन्न प्रभावों द्वारा बदलता रहता है। इन प्रभावों का सम्पादन सुषुम्नाशीर्ष स्थित वाहिनी-प्रेरक केन्द्र (Vasomotor centres) तथा सुषुम्नास्थित अनेक वाहिनी प्रेरक उपकेन्द्रों (Subsidiary centres) द्वारा नियन्त्रित वाहिनीसंकोचक (Vaso-constrictor) एवं वाहिनीविस्फारक (Vaso-dilator) नाड़ियों द्वारा होता है। तात्पर्य यह कि रक्तवाहि-नियों का नियन्त्रण दो प्रकार की नाड़ियों द्वारा होता है, एक जो इनको संकुचित करती हैं, दूसरे जो इनको विस्फारित करती हैं। रक्तपरिभ्रमण के सुचारुरूप से सम्पादित होने के लिए रक्त-वाहिनियों में एकसा तनाव होना जरूरी है। इसके लिए वाहिनी संकोचक केन्द्र से बराबर आवेग (Impulses) संवाहित होते रहते हैं। वाहिनी-विस्फारक आवेगों का कार्य भिन्न प्रकार से होता है। धमनियों में विस्फारक (Dilator) पेशीसूत्र नहीं होते। अतएव विस्फारक आवेग

अपना कार्य संकोचक आवेगों के निरोध द्वारा करते हैं। इन दोनों प्रकार के आवेगों का नियंत्रण स्वतंत्र नाड़ी-मण्डल द्वारा होता है। यदि दोनों की उत्तेजना एक साथ ही की जाय तो संकोचक प्रभाव प्रधान हो जाता है। यदि यह क्रिया विलम्ब तक होती रहे तो संकोचक तन्तुओं के प्रथम क्लान्त होने से अन्ततः विस्फारण की ही स्थिति उत्पन्न होती है। वाहिनीप्रेरक संस्थान के किसी भी भाग पर--केन्द्र से लेकर नाड्यग्र तक—प्रभाव होने से औषधियों का प्रभाव इस संस्थान पर पड़ता है। इस संस्थान पर औषधियों का कार्य शरीर के अन्य अंगों से विभिन्न आवेगों के पहुँचने से प्रत्याक्षिप्तरूपेण (Reflexly) भी होता है। स्मरण रहे कि फुफ्फुसीया एवं मस्तिष्कगत धमनियों में वाहिनीसंकोचक नाड़ियाँ नहीं पाई जातीं, यद्यपि इन कोमलांगों में रक्तपरिभ्रमण का समुचित रूप से होना जीवनधारण के लिए नितान्त आवश्यक होता है। अतः इनका कार्य इसी प्रत्याक्षिप्त विधि से होता है।

धमनियों के अन्दर रक्त का जो दबाव इनकी भित्तियों पर होता है, उसे **रक्तभार** (**Blood pressure**) कहते हैं। यह भार वाहिनीसंकोचक नाड़ियों के क्रियाशील होने से इसकी वृद्धि होती है। प्रान्तिक प्रभावों (**Afferent influences**) के अतिरिक्त निम्नावस्थायें भी रक्तभार के ह्रास-वृद्धि में बहुत कुछ सीमा तक कारक होती हैं:—(१) एक निश्चित काल में हृदय की उत्क्षिप्त रक्तराशि (**Heart's output**); (२) रक्तपरिभ्रमण में सकल रक्तराशि की मात्रा; तथा (३) रक्त की सान्द्रता (**Viscosity**)।

निम्न कारण रक्तभार की वृद्धि में कारक होते हैं, यथा —(१) सार्वदैहिक धमनिकाओं का संकोच; (२) हृदय की उत्क्षिप्त रक्तराशि में वृद्धि; (३) सामान्यकायिक रक्तराशि में वृद्धि (४) रक्त की सान्द्रता में आधिक्य होना। इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि विपरीत अवस्थायें रक्तभार को कम करेंगी।

धमनिकाओं (**Arterioles**) का संकोच रक्तभार की वृद्धि में एक महत्त्व का कारण है। विशेषतः आशयिक क्षेत्र (**Splanchnic area**) की धमनिकायें। यदि ये विस्फारित हो जाँय तो इनमें इतनी अधिक रक्त राशि चली जाती है कि मस्तिष्क आदि उत्तमांगों में बहुत कम रक्त पहुँच पाता है। परिणामतः मूर्च्छा आदि उपद्रव पैदा हो जाते हैं। इसी प्रकार यदि धमनिकायें संकुचित रहें, किन्तु हृदय कार्य न करे अथवा अत्यधिक रक्तस्राव के कारण रक्तराशि में अत्यधिक कमी हो जाय तो भी रक्तभार का संतुलन नहीं हो सकेगा। रक्त की सान्द्रता अधिक हो जाने पर भी रक्तभार वृद्धि की सम्भावना अधिक हो जाती है।

केशिकायें (**Capillaries**)—रक्त एवं धातुओं के बीच विनमय (**Exchange**) का कार्य केशिकाओं की मध्यस्थता से सम्पन्न होता है। अतएव केशिकाओं में रक्तपरिभ्रमण को सम्यग्रूपेण स्थापित रखना रक्तसंवहन संस्थान का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। धमनिकाओं के बाद केशिकायें होती हैं तथा इनमें संकोचशीलता अधिक होने से परिस्थित्यनुकूल केशिकाओं के अन्दर जानेवाले रक्त का ये नियन्त्रण करती हैं। केशिकाओं में भी संकोच एवं विस्फार की शक्ति होती है, जिनका नियन्त्रण रासायनिक एवं नाड़ी-आवेगों द्वारा होता है। पिच्युटरीग्रंथि से एक अन्तःस्राव (**Hormone**) स्रवित होता है जो केशिकाओं की स्वाभाविक शक्ति (**Tone**)

का संतुलन करता है। हिस्टामीन, सोमल तथा एण्टीमनी केशिकाओं को विस्फारित करते हैं। शल्यकर्मजन्य स्तब्धता (Surgical Shock) में रक्तभार-ह्रास आशयिक केशिकाओं के विस्फारित होने के कारण होता है।

कैरोटिड साइनस (Carotid Sinus)—महामातृका (Common carotid) धमनी जहाँ बहिर्मातृका (Ext. carotid) तथा अन्तर्मातृका (Int. Carotid) धमनियों में विभक्त होती है, वहाँ इन धमनियों के तत्समीपवर्ती भाग में स्वतन्त्रनाड़ी मण्डल के प्रचुर सूत्र धमनी के चतुर्दिक् एवं उसकी भित्ति में फैले होते हैं। रक्तसंवहन एवं श्वसन के नियन्त्रण में यह केन्द्र विशेष महत्व रखता है। इस साइनस के अन्दर रक्तभार की वृद्धि एड्रीनेलीन के उद्रेचन पर अवरोधक तथा भार की कमी उत्तेजक प्रभाव करती है। आराम की अवस्था में मातृकानाड़ियाँ एड्रिनेलीन की क्रियाशीलता पर अवरोधक प्रभाव करती है।

(अ) रक्तचाप को बढ़ाने वाली औषधियाँ एवं प्रक्रियाये—

(१) वाहिनीप्रेरक केन्द्र (Vaso-motor centre) पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण कार्य करने वाली औषधियाँ—ऐसी सभी औषधियाँ जो मस्तिष्क—सुषुम्ना पर उत्तेजक प्रभाव करती है, वे सुषुम्ना-शीर्ष (Medulla) स्थित वाहिनी प्रेरक केन्द्र पर भी उत्तेजक प्रभाव करती हैं। आशयिक प्रदेश की रक्तवाहिनियों को संकुचित करने के कारण ये रक्तचाप को बढ़ाती हैं। स्ट्रिक्नीन, कॅफीन, डिजिटेलिस, कैम्फर, अट्रोपीन, कोकेन तथा लेप्टाजोल, निकेथामाइड आदि एनालेप्टिक औषधियाँ इसी प्रकार की है। संकेन्द्रित रूप में अल्कोहल का प्रयोग भी प्रत्याक्षिप्त रूप से केन्द्र को उत्तेजित करता एवं रक्तचाप में वृद्धि करता है। रक्त में CO_2 की मात्रा अधिक होने से भी केन्द्र उत्तेजित होता है। प्रतिक्षोभक (Counter-irritants) का प्रयोग भी प्रत्याक्षिप्त रूप से वाहिनीप्रेरक केन्द्र को उत्तेजित करता है।

(२) आशयिक प्रदेशस्थ वाहिनी संकोचक नाड़ी कन्दिकाओं पर प्रभाव करने वाली औषधियाँ—निकोटीन, लोवेलीन तथा कोनीईन—ये प्रथम कन्दिकाकोशाओं पर उत्तेजक किन्तु पश्चात् अवसादक प्रभाव करते हैं।

(३) वाहिनी-प्रेरक नाड्यग्रों पर कार्य करने वाले द्रव्य—सामान्यतः रक्तवाहिनियों की बलपरता एड्रिनेलीन के प्रभाव से स्थिर रहती है, और उपवृक्क के विकारयुक्त होने पर यह बात जाती रहती है। इसी प्रकार इफेड्रीन एवं अर्गोटॉक्सीन (अल्प मात्रा में) भी प्रभाव करते हैं। ये औषधियाँ स्वतंत्रनाड्यग्रों पर प्रभाव करके तीव्रतापूर्वक वाहिनियों का संकोच करती हैं। फलतः रक्तभार बढ़ जाता है।

(४) धमनियों की पेशियों पर प्रभाव करने वाली औषधियाँ—ये औषधियाँ मुख द्वारा अथवा सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर वाहिनियों की भित्तियों के मांस सूत्रों पर प्रभाव करती हैं, जिससे धमनियों का संकोच (Constriction) होता तथा फलतः रक्तभार बढ़ जाता है। डिजिटेलिस, पोषणिका ग्रंथि के पश्चिम खण्ड का सत्व तथा बेरियम् आदि।

(५) रक्त के आयतन में वृद्धि करने वाले—निपात (Collapse) एवं स्तब्धता (Shock) के समय विशेषतः जो अत्यधिक रक्तस्राव के कारण होता है, रक्तभार गिर जाता है। ऐसी परिस्थिति में इसका निवारण एवं रक्तभार में वृद्धि निम्न उपायों द्वारा की जा सकती है।

(१) रक्त-संक्रमण (Blood transfusion); तथा (२) समबल लवणजल (Normal Saline) का शिरागत सूचिकाभरण।

(३) हृदय पर उत्तेजक प्रभाव अथवा इसकी उत्क्षेपण क्षमता (Output) में वृद्धि करने वाले—हृद्य (Cardiac stimulants) औषधियाँ इसी प्रकार कार्य करती हैं।

(ब) रक्तभार-ह्रासक औषधियाँ वा प्रक्रियायें—ये औषधियाँ निम्न प्रकार से कार्य करती हैं :—

(१) वाहिनी-प्रेरक केन्द्र को अवसादित करके—अल्कोहल्, ईथर क्लोरोफॉर्म, क्लोरलहाइड्रेट एवं प्रमीलक द्रव्य वाहिनी-प्रेरक केन्द्र को अवसादित करते हैं, जिससे रक्तभार गिर जाता है। इनके प्रभाव से त्वाची रक्तवाहिनियाँ विस्फारित हो जाती हैं, जिससे उष्णता का भी कुछ नाश होता है। कोल-टार (Coal-tar) वर्ग की संतापहर (Antipyretic) औषधियाँ भी इसी प्रकार कार्य करती हैं। क्षत (Injury) होने के उपरान्त जो स्तब्धता होती है उसका कारण भी वाहिनी-प्रेरक केन्द्र की क्रियाहीनता ही होती है।

(२) धमनियों की पेशियों पर कार्य करके—इस समुदाय की औषधियाँ एमिल नाइट्राइट, आर्गेनिक नाइट्राइट्स, कारवेकॉल, एसेटिल कोलिन तथा थियोब्रोमीन आदि हैं। ये मुख द्वारा, अथवा सूचिकाभरण द्वारा एवं कतिपय ऐसी हैं जो सुंघाने पर भी, धमनिकाओं (Arterioles) को विस्फारित करती हैं, जिससे रक्तभार गिर जाता है। कभी-कभी समवर्त-जनित कतिपय द्रव्य भी वाहिनीविस्फारण करते हैं, यथा रक्त की अम्लता बढ़ने से ऐसा ही होता है।

(३) रक्त की राशि कम करने से—रक्तपरिस्रावण (Bleeding), शिरावेध (Venesection) एवं जलौका-प्रयोग द्वारा रक्त की राशि कम की जा सकती है। रक्तपरिभ्रमण गत रक्त की राशि में कभी रक्तरस की मात्रा न्यूनता होने से भी हो सकती है। रेचन एवं स्वेदल द्रव्य इसी प्रकार प्रभाव करते हैं।

(४) केशिकाघात (Capillary paralysis) करने से—हिस्टामीन (Histamine) तथा विषाक्त मात्रा में आर्सेनिक एवं एन्टीमनी इसी प्रकार रक्तभार को कम करते हैं।

हृदय पर अवसादक प्रभाव करने से—यथा हृदयावसादक औषधियाँ।

(स) रक्तवाहिनियों पर स्थानिक प्रभाव करने वाली औषधियाँ—

(१) स्थानिक वाहिनी-उत्तेजक (Local vascular stimulants)—यह वे द्रव्य या प्रक्रिया हैं, जिनका त्वचा यह पर स्थानिक प्रयोग करने से उस स्थल की धमनिकायें विस्फारित हो जाती हैं। अल्कोहल, आयोडीन, अमोनिया, टारटार इमेटिक, आरसीनियस एसिड, कैम्फर, कैंथेरिडीन, कैप्सिकम् (लाल मिर्च), फिनोल, क्रियाजोट, क्रोटन ऑयल, क्लोरोफार्म, ईथर, सरसों (Mustard), उड़नशील तैल तथा उष्ण उपनाह आदि इसी प्रकार कार्य करते हैं।

(२) स्थानिक ग्राही (Local astringents) या रक्तस्तम्भक (Haemostatics or styptics)—वे औषधियाँ हैं, जिनका स्थानिक प्रयोग करने से रक्तवाहिनियाँ संकुचित हो जाती हैं। एड्रिनेलीन एवं वर्फ या अन्य उपाय द्वारा स्थानिक शीत प्रयोग (Cold-application) से यह वाहिनी-संकोचक प्रभाव वाहिनियों के पेशीसूत्रों के आकुञ्चन के कारण होता है। वानस्पतिकग्राही (Vegetable astringents) औषधियाँ तथा एलम् (फिटकरी), सिल्वर (रजत), लेड (सीस) एवं आयरन (लौह) आदि धातुवर्ग के ग्राही द्रव्य यह कार्य वाहिनियों के परिसरीय धातुओं के प्रोभुजिन् को स्कन्दित करके करते हैं। वाहिनियों की भित्ति के पेशीसूत्रों पर इनका कोई प्रभाव नहीं होता। सर्पविष (Snake venom) का स्थानिक प्रयोग करने से यह रक्त को स्कन्दित करता (Coagulates) तथा इस प्रकार स्थानिक रक्तस्तम्भक प्रभाव करता है। इस प्रकार उपरोक्त औषधियाँ दूरवर्ती स्थलों पर यह कार्य नहीं कर सकती।

इनके अतिरिक्त कतिपय औषधियाँ ऐसी भी हैं, जो मुखद्वारा अथवा सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर, रक्तस्कन्दन में सहायता करने के कारण दूरवर्ती आन्तरिक रक्तस्राव (Internal haemorrhage) को रोकती हैं। इनको **दूरवर्ती रक्तस्तम्भक** (Remote haemostatic) द्रव्य कहते हैं। इनका प्रयोग शोणितप्रियता (Haemophilia) रक्तष्ठीवन (Haemoptysis) आदि आभ्यन्तरिक रक्तस्रावों में बहुत उपयोगी होता है। कैलसियम्, कांगोरेड (Congo red), रक्तस्तम्भक लसिका (Haemostatic Serum) तथा विटामीन K इसी प्रकार की औषधियाँ हैं।

कतिपय औषधियाँ मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर शोषणोपरान्त रक्तवाहिनियों का संकोच करती हैं, यथा एड्रीनेलीन, पोषणिकाग्रंथिका पश्चिमखण्ड, डिजिटेलिस तथा अर्गट आदि। प्रायः ये रक्तस्तम्भक के रूप में नहीं प्रयुक्त की जातीं। केवल अर्गट एवं पिच्युटरी एक्सट्रैक्ट का प्रयोग गर्भाशयगत रक्तस्राव (Uterine haemorrhage) को रोकने के लिए किया जाता है।

वाहिनी-संकोचक (Vaso-constrictor) उन द्रव्यों को कहते हैं, जो परिसरीय प्रभाव (Peripheral action) के द्वारा वाहिनियों का संकोच करते हैं, यथा एड्रीनेलीन एफेड्रीन, टाइरामाइन, पिच्युटरी एक्स्ट्रैक्ट अर्गोटॉक्सीन तथा बेरियम् आदि।

२. रक्तभार को कम करने वाली औषधियाँ :—

वाहिनी-विस्फारक (Vaso-dilators)

वाहिनी-विस्फारक औषधियाँ धमनिकाओं का विस्फार करती हैं, अतएव ये रक्तचाप को कम करती हैं। ये निम्न प्रकार से कार्य करती हैः—

(१) **वाहिनी-प्रेरक केन्द्र पर अवसादक प्रभाव करने से**—यथा प्रमीलक द्रव्य (Narcotics), क्लोरोफॉर्म तथा ईथर द्वारा संज्ञाहरण में।

(२) **स्वतंत्र नाड़ी कोशाओं पर अवसादक प्रभाव करने से**—निकोटीन।

(३) रक्तवाहिनियों के ऐच्छिक पेशीसूत्रों पर अवसादक प्रभाव करने से—नाइट्राइट्स, कारवेकॉल, एसेटिलकोलीन, पेपावेरीन तथा थियोब्रोमीन।

(४) केशिकाओं को निष्क्रिय करने से (Paralysing the Capillaries)-हिस्टामीन, आर्सेनिक तथा एन्टीमनी (विषाक्त मात्रा में)।

(५) वाहिनी प्रेरक नाड्यग्रों पर अवसादक प्रभाव करने से—अर्गोटॉक्सीन (अधिक मात्रा में) तथा एपोकोडीन।

रक्तोत्पत्ति में सुधार करने के कारण अप्रत्यक्षतया हृद्य प्रभाव करते हैं।

गुणकर्मादिविवेचनीय परिच्छेद २

प्रकरण १

१–हृद्य औषधियाँ

डिजिटेलिस् फोलियम् (फोलिया–बहु व०) I. P., B. P.

Family : Scrophulariaceae (कटुका-कुल)

पर्याय—डिजिटेलिस् फोलियम् Digitalis Folium, फोलिश्रा डिजिटेलिस Folia Digitalis-ले०; डिजिटेलिस Digitalis, फॉक्सग्लॅव–लीव्ज Foxglove-leaves-अं०; तिलपुष्पी, हृत्पत्री—सं० ।

प्राप्ति-साधन—डिजिटेलिस, डिजिटेलिस् परपूरिश्रा Digitalis purpurea, Linn) नाम वनस्पति के पत्र होते हैं, जिनको उपयुक्त काल में संग्रह कर सतर्कता के साथ शीघ्रतापूर्वक ६०° तापक्रम पर शुष्क कर संग्रह कर लेते हैं ।

वक्तव्य—उक्त वनस्पति का जातीय नाम "डिजिटेलिस् Digitalis" लेटिन शब्द 'डिजिटस Digitus' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है 'अंगुलि Finger' । इसके दलचक्र या पुष्प के आभ्यन्तर कोष (Corolla) का कटाव अंगुलियों की तरह होने से ऐसा नामकरण किया गया है । विशिष्टनाम 'परपूरिया Purpurea' इसके पुष्प के 'नीलारुण Purple' रंग का होने के कारण है । यह भी लेटिन शब्द है ।

यद्यपि यूनान में यह औषधि उत्पन्न होती थी, किन्तु प्राचीन यूनानी चिकित्सकों द्वारा इसके औपधीय प्रयोग का वर्णन नहीं मिलता । आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इसके औषधीय प्रयोग (Therapeutic use) का उल्लेख सन् १६५० की लन्दन फॉर्माकोपिश्रा (London pharmacopoeica) में मिलता है । किन्तु उस समय इसका प्रयोग हृद्रोगों में नहीं किया जाता था । एक शताब्दी पश्चात् (सन् १७८५ ई०) विदरिंग (Withering) नामक वैज्ञानिक ने हृद्विकार जन्य शोफ (Dropsy) में इसका प्रयोग मूत्रल (Diuretic) क्रिया के लिए किया । किन्तु हृद्य औषधि (Cardiac tonic) के रूप में इसका प्रचार मेकेंजी (Mackenzie) द्वारा हुआ । सम्प्रति यह एक उत्तम हृद्य औषधि समझी जाती है ।

उत्पत्ति-स्थान—यूरप, संयुक्तराष्ट्र अमरीका (U. S. A.), कनाडा तथा इङ्गलैंड । अमरीका तथा इङ्गलैंड में इसके पौधे बगीचों में खूबसूरती के लिए लगाए जाते हैं तथा औषधीय प्रयोजन के लिए स्थान-स्थान में इसकी खेती भी की जाती है । भारतवर्ष में हिमालय प्रदेश में ६,०००–७,००० फुट की ऊँचाई पर स्थान-स्थान में इसके छिट-फुट पौधे पाये जाते हैं । अधुना काश्मीर, दार्जिलिंग

तथा नीलगिरि की पहाड़ियों पर इसकी खेती भी की जाती है। औषधीय प्रयोजन के लिए काश्मीर की डिजिटेलिस बहुत उत्तम पाई गई है।

वर्णन—डिजिटेलिस के सामान्यतः द्विवर्षायु (Biennial) अथवा कभी-कभी बहु-वर्षायु (Perennial) छोटे-छोटे पौधे (Herb) होते हैं जो प्रायः २ फुट से ४ फुट तक ऊँचे होते हैं। द्विवर्षायु पौधों में प्रथमवर्ष में तो प्रायः पत्तियों का झुण्ड (Rosette of Leaves) निकलता है, और पुष्पधारक वायव्य काण्ड (Aerial Stem) प्रायः दूसरे वर्ष में निकलता है। पुष्प-व्यूह सवृन्तकाण्डज (Receme) होता है जिस पर गुलाबी लिए बैंगनी रंग (Purple) के लगभग १॥–२ इंच लम्बे घंटिकाकार (bell-shaped)

चित्र २२—डिजिटेलिस् (Digitalis purpurea) पुष्पिताग्र एवं पत्ती।

पुष्प निकलते हैं। उक्त पुष्प, पुष्पव्यूहदण्ड के एक ही पार्श्व से निकले दीखते हैं तथा अधोमुख (Pendulous) होते हैं। पुष्प-सूत्र K (5), C (5), A4 didynamous (विषम-युग्म), G (2) होता है। जंगली पौधों के आभ्यन्तर पुट (Corolla) का आभ्यन्तरतल (Ventral Surface) श्वेताभ (Whitish) रंग का होता है, किन्तु उस पर नीलारुण (Purple) रंग के विन्दु-विन्दु (Eye-spots) होते हैं। फल द्विगहरक सामान्य स्फोटी (Bilocular Capsule) होता है जिसमें अनेक छोटे-छोटे अक्ष लग्न (Attached to axile placentae) बीज होते हैं। पत्र (Lea-

nes—डिजिटेलिस् के पत्ते सामान्यतः ४ से ८ इंच लम्बे तथा १।। से ४ इंच चौड़े होते हैं, किन्तु लगाये हुए किन्हीं-किन्हीं पौधों में १६ इंच लम्बे तथा ६ इंच तक चौड़े हो सकते हैं। ऊर्ध्व-तल खाकस्तरी-हरित (Greyish-green) रंग का तथा अधस्तल फीके पीले रंग का होता है। पत्र-फलक (Lamina) आकार में लट्वाकार भालाकार (Ovate-lanceolate) से चौड़ा-लट्वाकार (Broadly ovate) तथा अखण्डित होते हैं। पत्र-तट (Margin) गोलदन्तुर (Crenate) से आरावत (Serrate) कटे हुए तथा पत्र-मूल या आधार (Base) काण्डसम्पृक्त (Decurrent) होता है। नाड़ी-विन्यास (Venation) पक्षवत् (Pinnate) तथा पत्र-वयन (Texture) कागज की तरह (Papery) होता है। पर्णवृन्त (Petiole) छोटा तथा सपक्ष (Winged) होता है। पत्र के दोनों तल विशेषतः अधस्तल सूक्ष्म-लोमावृत होते हैं। शुष्क पत्र अत्यन्त भंगुर (Brittle) होते हैं। डिजिटेलिस की पत्तियों में हल्की चाय की गंध आती है तथा स्वाद में ये अत्यन्त तिक्त होती हैं। पत्तियों का संग्रह प्रायः दूसरे वर्ष में पौधों के पुष्पागम काल में किया जाता है।

रासायनिक संघटन—डिजिटेलिस की क्रियाशीलता मुख्यतः इसमें पाये जानेवाले ग्लाइकोसाइड्स (Glycosides) के कारण होती है, जो जलांशन (Hydrolysis) होने पर २ प्रकार के घटकों में विच्छिन्न होते हैं—(१) शर्कराघटक तथा दूसरा अग्लूकोन (Aglucone) घटक। ग्लाइकोसाइड्स का भी सक्रिय अंश मुख्यतः उनका अग्लूकोन घटक ही होता है। शर्कराघटक केवल उनकी क्रिया में सहायता करता है। डिजिटेलिस में मुख्यतः निम्न ग्लाइकोसाइड पाये जाते हैं—(१) डिजिटॉक्सिन (Digitoxin, $C_{४१} A_{६४} O_{१३}$)—यह श्वेत मणिमीय चूर्ण (White crystalline powder) के रूप में प्राप्त होता है और डिजिटेलिस का सबसे प्रधान सक्रिय घटक है। यह जल में तो अविलेय किन्तु डायल्यूट अल्कोहल् में विलेय होता है। जलांशन होने पर डिजिटॉक्सिजेनिन Digitoxigenin (अग्लाइकोन Aglycone घटक) तथा डिजिटोक्सोज Digitoxose (शर्कराघटक) में विच्छिन्न होता है। (२) जिटॉक्सिन (Gitoxin. $C_{४१} H_{६४} O_{१४}$) यह भी जल में अविलेय होता है, तथा जलांशन होनेपर जिटॉक्सिजेनि (Gitoxigenin) नामक अग्लाइकोन घटक तथा डिजिटोक्सोज (Digitoxose) नामक शर्करा उपादानों में विघटित होता है। (३) जिटेलिन (Gitalin $C_{३५} H_{५६} O_{१२}$)—यह भी जलांशन से जिटॉक्सिजेनिन हाइड्रेट Gitoxigenin hydrate तथा डिजिटोक्सोज Digitoxose में विघटित होता है। इन मणिमीय स्वरूप के ग्लाइकोसाइड्स के अतिरिक्त कतिपय विरूपिक (Amorphous) ग्लाइकोसाइड्स भी पाये जाते हैं जो जल-विलेय (Water-Soluble) होते हैं।

डिजिटेलिस प्रिपरेटा Digitalis Praeparata (Digit. Praep.), I. P., B. P.-ले०; प्रिपेयर्ड डिजिटेलिस (Prepared digitalis)—अं०।

पर्याय—डिजिटेलिस पल्वरेटा Digitalis Pulverata-ले०, पाउडर्ड डिजिटेलिस (Powdered Digitalis)-अं०।

वर्णन—यह डिजिटेलिस परपूरिआ की पत्तियों का स्थूल चूर्ण होता है, जो हरे रंग का होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में तिक्त (तीता) होता है। १ ग्राम चूर्ण में १० युनिट की शक्ति होती है। इसके लिए कम शक्ति का चूर्ण भी आवश्यकता

पड़ने पर मिलाया जा सकता है। टिंक्चर बनाने के बाद अवशिष्टांश का भी व्यवहार इस कार्य के लिए किया जाता है। संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखना चाहिए ताकि नमी न पहुँचे। सूचक-पत्र (Label) पर इस बात का उल्लेख होना चाहिए कि १ ग्राम चूर्ण में कितना युनिट शक्ति है। मात्रा—½ ग्रेन से १½ ग्रेन (३० से १०० मि० ग्रा०)। १०० मि० ग्रा० या १½ ग्रेन चूर्ण में १ युनिट की शक्ति होती है।

डिजिटॉक्सिनम् Digitoxinum (Digitox.) I. P., B. P. C.—लै०; डिजिटॉक्सिन (Digitoxin)–अं०।

पर्याय—डिजिटेलीन क्रिस्टिलेसी (Digitaline Crystallisce), B. P. C.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह सफेद या मटमैले (Buff-coloured) रंग का अतिसूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Micro.crystalline powder) होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। यह या तो विशुद्ध डिजिटॉक्सिन ($C_{41}H_{64}O_{13}$) होता है, अथवा डिजिटेलिस परपूरिआ से प्राप्त ग्ल्यूकोसाइड्स का मिश्रण होता है, जिसका प्रधान घटक डिजिटॉक्सिन होता है। डिजिटॉक्सिन अत्यन्त विषैला होता है। विलेयता—जल में तो अविलेय (Insoluble) होता है; ईथर में भी अत्यल्प घुलता है। किन्तु क्लोरोफॉर्म तथा अल्कोहल् (९०%) में घुलनशील होता है। मात्रा (I. P. Dose)। (१) दैनिक मात्रा—१·२ से २·० मि० ग्रा० (मुखद्वारा); (२) प्रभाव को बनाये रखने के लिए (Maintenance dose)—०·१ से ०·२ मि० ग्रा० प्रतिदिन; (३) शिरागत इंजेक्शन द्वारा—१·२ मि० ग्रा०।

डिजिटेलिस लनाटी फोलियम् Digitalis Lanatae Folium (Digit. Lanat. Fol.), B. P. C.–लै०; डिजिटेलिस लनाटा लीव्ज Digitalis Lanata Leaves–अं०। पर्याय—ऑस्ट्रियन डिजिटेलिस (Austrian Digitalis); ऑस्ट्रियन फॉक्सग्लव (Foxglove); (Woolly foxglove Leaves)–अं०।

प्राप्ति-साधन—यह डिजिटेलिस् लनाटा Digitalis lanata Ehrh. नामक डिजिटेलिस प्रजाति की पत्तियाँ होती हैं, जिनको संग्रह करने के बाद ही अंधेरे स्थान में कृत्रिम ताप द्वारा (temperature not exceeding 60° C.) सुखाकर रख लिया जाता है।

उत्पत्ति-स्थान—यूरोप में आस्ट्रिया एवं बाल्कन देशों में डिजिटेलिस लनाटा स्वयंजात उगता है। ब्रिटेन में काफी परिमाण में इसकी खेती की जाती है। भारतवर्ष में भी काश्मीर में बड़ामुला एवं टनमर्ग आदि स्थानों में इसको लगाने का प्रयास किया जा रहा है।

वर्णन—डिजिटेलिस लनाटा की पत्तियाँ तोड़ने पर भुरभुरी (Brittle) होती हैं। पत्तियाँ २ से ५ से १५ से ३० सेंटीमीटर लम्बी तथा ०·४ से २ से ४·५ सेंटीमीटर चौड़ी तथा वाह्यरूप-रेखा में आयताकार-भालाकार (Oblong–lonceolate) होती हैं। पत्तियाँ प्रायः विनाल (Sessile) होती हैं, तट प्रायः अखण्डित (Entire margin) तथा आधार की ओर इस पर सूक्ष्म बाल होते हैं, शीर्ष की ओर लहरदार (Wavy) तथा अति-अस्पष्ट दंतुर होती हैं।

रासायनिक-संघटन—डिजिटेलिस लनाटा की पत्तियों में मुख्य तीन ग्लाइकोसाइड्स—डिजिटॉक्सिन (Digitoxin), जिटॉक्सिन (Gitoxin) एवं डिजॉक्सिन (Digoxin)–पाये जाते हैं। इनमें डिजॉक्सिन अत्यन्त सक्रिय होता है तथा अन्य प्रजातियों में नहीं पाया जाता। सामान्यतः

उक्त तीनों ग्लाइकोसाइड्स पत्तियों में डेक्स्ट्रोस एवं एसेटिलसमुदाय के साथ संयुक्त पाये जाते हैं। ऐसी अवस्था में इनको डिजिलेनिड (Digilanid) या लेन्टोसाइड (Lantoside) 'ए', 'बी' एवं 'सी' कहते हैं।

डिजॉक्सिनम् Digoximum (Digoxin) I. P., B. P.–ले०; डिजॉक्सिन (Digoxin)–अं० ।

रासायनिक संकेतः $C_{४१} H_{६४} O_{१४}$.

प्राप्ति-साधन—यह क्रिस्टलाइन स्वरूप का ग्लाइकोसाइड (Crystalline glycoside) है, जो डिजिटेलिस् लनाटा की पत्तियों से प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—डिजॉक्सिन के रंगहीन अथवा सफेद रंग के क्रिस्टल्स होते हैं अथवा क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। इसका अल्कोहोलिक सोल्यूशन स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल एवं क्लोरोफॉर्म में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है; किन्तु अल्कोहल् (५०%) में घुल जाता है। पाइरिडीन (Pyridine) में सुविलेय अर्थात् और भी अच्छी तरह घुल जाता है (Freely Soluble)।

मात्रा—(१) प्रारम्भिक (Initial dose)—१ से १·५ मि० ग्रा० ($\frac{१}{६०}$ से $\frac{१}{४०}$ ग्रेन); (२) प्रभाव बनाये रखने के लिए (Maintenance dose)—०·२५ मि० ग्रा० ($\frac{१}{२४०}$ ग्रेन)–दिन में १ या २ बार; (३) शिरागत इंजेक्शन द्वारा (प्रारम्भिक मात्रा) ०·५ से १ मि० ग्रा० ($\frac{१}{१२०}$ से $\frac{१}{६०}$ ग्रेन)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—लनाटोसाइड 'सी' एक ग्लाइकोसाइड होता है, जो डिजिटेलिस लनाटा की पत्तियों से प्राप्त किया जाता है। यह रंगहीन अथवा सफेद रंग के क्रिस्टल्स या सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध किया जाता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल में तो अविलेय होता है, अल्कोहल् में भी कदाचित् एवं अत्यल्प मात्रा में ही घुलता (Sparingly soluble) है। १ ग्राम लेन्टोसाइड 'सी' २० मि० लि० मिथेनोल (Methanol) तथा २००० मि० लि० क्लोरोफार्म में घुलता है।

मात्रा—$\frac{१}{१२०}$ ग्रेन या ०·५ मि० ग्रा० मुखद्वारा। इसका प्रयोग इंजेक्शन द्वारा भी किया जाता है।

लेनाटोसाइड 'सी' (Lantocide C.) U. S. P.

गुण-कर्म।

स्थानिक—मधुमेयों की उपस्थिति के कारण श्लैष्मिक कलाओं तथा अधस्त्वग्धातुओं पर स्थानिक प्रयोग से डिजिटेलिस तीव्र क्षोभक प्रभाव करता है, जिससे शोफ एवं रुजा की उत्पत्ति होती है। यह प्रभाव विशेषतः डिजिटॉक्सिन नामक सक्रिय मधुमेय सत्व के कारण होता है। डिजिटेलिन में ऐसा कोई प्रभाव नहीं होता, अतएव अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा इसका प्रयोग बिना किसी उपद्रव के किया जा सकता है, किन्तु डिजिटॉक्सिन से तीव्र क्षोभ एवं पीड़ा होती है, तथा कभी-कभी विद्रधि भी बन जाती है।

आभ्यन्तर। आमाशयन्त्र प्रणाली—साधारण मात्रा में आमाशय की श्लैष्मिक कला पर वैसे तो कोई विशेष प्रभाव नहीं होता, किन्तु इसमें पाये जाने वाले मधुमेय एवं फेनिल

(Saponins) घटकों के कारण कभी-कभी आमाशयिक श्लैष्मिक कला पर क्षोभक प्रभाव अवश्य होता है। निरन्तर अधिक काल पर्यन्त इसका सेवन करने से औपशयिक मात्राओं (Therapeutic doses) में भी यह उत्क्लेश एवं वमन पैदा करता है। यह प्रभाव आमाशय पर इसके क्षोभकगुण के कारण नहीं, अपितु शोषणोपरान्त वमन केन्द्र (Vomiting centre) पर उत्तेजक प्रभाव पड़ने से अथवा हृदय संज्ञावह प्राणदानाड्यग्रों की उत्तेजना के कारण होता है। इस लक्षण को डिजिटेलिस-अतियोग (Over-digitalization) का सूचक समझना चाहिए। इसका शोषण आन्त्रों से तथा मन्दगति से होता है, तथा पाचकरसों के प्रभाव से इसके सक्रिय तत्त्व विघटित नहीं होने पाते। किन्तु शिराज-रक्ताधिक्य (Venous engorgement) की अवस्था में जैसा कि हृद्रोगों में हो जाता है, इसका शोषण विलम्ब से होता है तथा सम्भवतः मधुमेय घटक अंशतः नष्ट भी हो जाते हैं। टिंक्चर डिजिटेलिस तथा डिजिटॉक्सिन का प्रचूषण सुगमतापूर्वक होता है तथा शोषणोपरान्त ४–७ घंटे में इसका कार्य हृदय पर होने लगता है। गुदमार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर इसके सभी मधुमेय सुगमता पूर्वक प्रचूषित हो जाते हैं।

हृदय तथा रक्तसंवहन—डिजिटेलिस का प्रभाव प्रधानतः हृदय तथा रक्तसंवहन संस्थान पर होता है। यह **हृदय की गति को मन्द एवं विस्फारकाल** (Period of diastole) **को विलम्बित** करता है, तथा **हृदय संकुचन** (Contraction) में **तीव्रता** एवं **हृत्पेशी** में **बल्यता** उत्पन्न करता है।

डिजिटेलिस के हृदय सम्बन्धी गुण-प्रभाव को वर्णन की सुगमता के लिए ३ अवस्थाओं में विभक्त किया जा सकता है:—

प्रथम या औपशयिक अवस्था (Therapeutic stage)—इस अवस्था में प्राणदा केन्द्र की उत्तेजना के कारण हृद्गति किंचिन्मन्द हो जाती है, किन्तु हृत्पेशी-आकुञ्चन तीव्रतर बल के साथ होने लगता है। परिणामतः हृदाकुञ्चन (Systole) सम्यग्रूप से होने लगता है। उपरोक्त दोनों प्रभाव के कारण क्रमशः हृदयोत्क्षेपण (Cardiac-output) में वृद्धि होती है तथा गतिमन्दता के कारण निलयों के पूरण के लिए पर्याप्त समय मिल जाता है। अतएव इस प्रकार शिरागत रक्ताधिक्य भी कम हो जाता है। शिरागत रक्तभार में कमी तथा धमनियों का परिपूरण सम्यक् रूप से होने से धमनी-रक्तभार में वृद्धि हो जाती है। किन्तु मात्रा वृद्धि होने पर वाहिनी-संकोचक केन्द्र तथा रक्तवाहिनियों के पेशीसूत्रों के उत्तेजित होने के कारणधमनिकायें (Arterioles) संकुचित हो जाती हैं।

द्वितीयावस्था या विषमयता (Poisoning) की अवस्था–हृद्गत्यवरोधक प्रक्रिया (Inhibitory mechanism) को अतिशयित क्रियाशीलता (Overactivity) इस अवस्था का प्रधान लक्षण है। इसके परिणाम स्वरूप नाड़ी मन्द एवं अनियमित हो जाती है। हृद्गतिमन्दता प्रथमावस्था की अपेक्षा और भी अधिक होने से, हृदयपूरण के लिए समय भी पहले की अपेक्षा अधिक मिलता है, जिससे पूरण वास्तव में पहले की अपेक्षा अधिक होता भी है। इस प्रकार प्रत्येक आकुंचन में पहले की अपेक्षा हृदयोत्क्षेपण में वृद्धि होने पर भी, हृन्मदता

अत्यधिक होने के कारण प्रतिमिनट सकलगणना (Total) में हृदयोत्क्षेपण सामान्यावस्था से कम होता है। इसके अतिरिक्त अलिन्द-निलय पुलिन्द के पेशीसूत्रों की संवहनशीलता (Conductivity) पर भी निरोधक प्रभाव होता है; परिणामतः अलिन्दज आवेगों का संवहन निलयों में सम्यग्रूप से नहीं होता। अतएव अलिन्द-निलय गतितालवद्धता भी विकृत हो जाती है, जिससे हृदय-निरोध(Incipient heart-block) तथा कभी-कभी पूर्ण हृद्गत्यवरोध (Complete heart block) भी हो सकता है। इस अवस्था का दूसरा प्रधान लक्षण अल्पमूत्रता है, जो धमनिकाओं के संकोच के कारण वृक्कीय रक्तसंचार में विकृति होने से होता है।

तृतीयावस्था—यह अवस्था अत्यधिक मात्रातियोग के कारण उत्पन्न हो जाती है। हृत्पेशी में अत्यधिक क्षोभ की अवस्था उत्पन्न हो जाती है और निलयताल (Ventricular rhythm) भी तीव्र हो जाता है; किन्तु नाड़ीप्रक्रिया इस प्रकार के प्रभाव में विकृत नहीं होती, क्योंकि प्राणदानाड़ी की उत्तेजना होने से हृद्गति में तीव्रता के स्थान में और मन्दता ही हो सकती है। अलिन्दों के पेशी सूत्र भी इस प्रभाव से वंचित नहीं रहते। इस प्रकार अलिन्दों तथा निलयों की क्रिया में अस्वाभाविक परिवर्तन होने से परस्पर असहयोग या अलिन्दनिलयातालवद्धता (Auriculo-Ventricular arrhythmia) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिसके परिणाम स्वरूप अनेक घातक उपद्रव होकर **हृदयातिपात** की स्थिति उत्पन्न कर सकते हैं।

उपरोक्त सभी लक्षण निम्न पांचो हार्दिक रचनाओं पर डिजिटेलिस के प्रभाव के कारणों होते हैं, यथा:—

१—अलिन्दसिरा सम्पात् (Sino-auricular node)

२—हृत्पेशी

३—अलिन्द-निलय पुलिन्द

४—हार्दिक धमनियाँ (Coronary arteries)

५—सामान्यकायिक धमनियाँ (The Systemic arteries)

१—**अलिन्दसिरासम्पात्** पर अवरोधक प्रभाव करने के कारण यह **हृन्मन्दता** करता है। साधारण औपशमिक मात्राओं में यह उपद्रव विशेषरूप से लक्षित नहीं होता, अपितु विषाक्तता की अवस्था में विशेष स्पष्ट होता है। इस मन्दताजनक प्रभाव में प्राणदा नाड़ी की उत्तेजना भी सहायक होती है। अलिन्दसिरा सम्पात् पर डिजिटेलिस का दूसरा प्रभाव **अतालवद्धता** (Sinus-arrhythmia) का उत्पन्न करना है।

२—डिजिटेलिस हृत्पेशी पर प्रत्यक्ष प्रभाव करके त्रिधा क्रिया (Threefold effect) करता है, यथा (१) वल्यता (Tonicity) में वृद्धि; (२) संकोचनशीलता (Contractility) में वृद्धि तथा (३) इसकी **संक्षोभनशीलता** (Irritability) में भी वृद्धि करता है, जिससे हृत्पेशी में आवेगों (Stimuli) के प्रति अधिक संवेदनशीलता उत्पन्न हो जाती है। कपाटस्तम्भिकापेशी (Papillary muscles) में भी वल्यता आ जाती है। हृत्पेशी के दुर्बल एवं विकृत हो जाने पर प्रथम दो गुण विशेषरूप से लक्षित होते तथा उपादेय सिद्ध होते हैं। किन्तु तीसरे गुण अर्थात् **संक्षोभशीलता** में अत्यधिक वृद्धि होने से (यथा विषाक्त मात्राओं

में होता है), हृदयका अनियमित संकोच (Premature contractions), हृच्छीघ्रता (Tachycardia) एवं अलिन्दनिलय अराजकता आदि घातक उपद्रव उत्पन्न हो सकते हैं।

३—अलिन्द-निलय पुलिन्द (Auriculo-Ventricular Bundle) पर डिजिटेलिस का प्रभाव—अलिन्द-निलय पुलिन्द अलिन्दजन्य आवेगों का वहन निलयों में करता है, जिसके परिणामस्वरूप तालवद्धता के साथ अलिन्दसंकोच के पश्चात निलय संकोच हुआ करता है। सामान्यतः इस पुलिन्द के द्वारा निलयों के आवेगों में पहुँचने में ⅕ सेकंड समय लगता है। डिजिटेलिस अलिन्द-निलय पुलिन्द की संवहनशीलता में विकृति उत्पन्न कर सकता है, जिससे उपरोक्त काल विलम्बित (Prolonged) हो सकता है, अथवा विषाक्तमात्राओं में आंशिक (Incipient) अथवा कभी-कभी पूर्ण हृत्स्तम्भ (Complete heart-block) की स्थिति भी उत्पन्न कर देता है। इसमें प्रथम प्रभाव भी विषाक्तता का द्योतक होता है। अतएव इस प्रकार का लक्षण मिलने पर औषधि का सेवन बन्द कर देना चाहिए। इसका ज्ञान हृल्लेखन (Heart Tracings) द्वारा किया जा सकता है। केवल अलिन्दाराजकता (Auricular fibrillation) में यह स्थिति कुछ अंश तक उपादेय होती है। इससे अलिन्दजन्य अनेक अनावश्यक आवेग निलयों में नहीं पहुँचने पाते।

४—औपशयिक मात्रा (Therapeutic dose) में डिजिटेलिस के सेवन से महाधमनीगत रक्तभार में वृद्धि होती तथा हृद्विस्फार (Diastole) विलम्बित एवं हृत्संकोच (Systole) अधिक तीव्रता के साथ होता है। उपरोक्त परिवर्तनों के कारण हार्दिक रक्तपरिभ्रमण (Coronary Circulation) में सुधार होने से हृत्पेशी का पोषण समुचित रूप से होने लगता है। अतएव हृदय में बल्यता आती है। किन्तु विषाक्त मात्राओं में **हार्दिक धमनीसंकोच** होने की आशंका रहती है, जिससे हृत्पेशी दुर्बल हो जाती तथा **नाड़ी** विकृत होकर **सान्तरित** (Pulsus alternatus) हो जाती है।

५—**सामान्यकायिक रक्तवाहिनियों पर डिजिटेलिस का प्रभाव**—अल्प मात्रा में सेवन करने से तो रक्तवाहिनियों पर कोई विशेष प्रभाव लक्षित नहीं होता, किन्तु विषाक्त मात्रा में **धमनी-संकोच** करता है।

शरीर-ताप (Temperature)—औषधीय मात्रा (Medicinal doses) में तो शरीरतापक्रम पर कोई विशेष प्रभाव नहीं लक्षित होता, किन्तु विषाक्त मात्राओं में स्वस्थावस्था में भी तापक्रम में काफी ह्रास हो जाता है।

नाड़ी संस्थान—औपशयिक मात्रा में नाड़ी-संस्थान पर कोई विशेष प्रभाव नहीं लक्षित होता; किन्तु अत्यधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर शिरोभ्रम (Giddiness), शिरःशूल (Headache), दृष्टि-ह्रास (Dimness of Sight) तथा बाधिर्य आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। आंखों के सामने प्रकाश की चमक एवं प्रकाशमय वस्तुओं के चारोंओर नीली आभा दिखाई देती है। ये सब लक्षण सम्भवतः मस्तिष्कीय रक्तपरिभ्रमणगत विकृति के कारण होते हैं। विषाक्त मात्राओं में प्रत्याक्षिप्त उत्तेजनशीलता (Reflex excitibility) तथा चेष्टावह नाड़ियाँ अवसादित हो जाती हैं।

सुषुम्नाशीर्षगत कतिपय केन्द्रों पर डिजिटेलिस उत्तेजक प्रभाव करता है। प्राणदा केन्द्र को उत्तेजित करने के कारण हृन्मन्दता तथा कभी-कभी वाहिनी-प्रेरक केन्द्र (Vaso-motor centre) को उत्तेजित करने के कारण रक्तभार में वृद्धि होती है। विषाक्त मात्रा में अथवा चिरकालज प्रयोग से वमन-केन्द्र भी उत्तेजित होता है, जिससे वमन का उपद्रव होता है, जो डिजिटेलिस-अतियोग (Over digitalization) का द्योतक होता है।

वृक्क—हृच्छोफ (Cardiac dropsy) अर्थात् हृद्विकारजन्य सर्वांगशोफ में यह तीव्र मूत्रल प्रभाव करता है। यह क्रिया डिजिटेलिस के प्रभाव से रक्तपरिभ्रमण में सुधार होने के कारण होती है। अत्यधिक मात्राओं में प्रयुक्त होने से इसके विपरीत वाहिनी-संकोच होने से मूत्रकृच्छ्र अथवा अमूत्रता तक हो सकती है।

औपशयिक मात्रा में मुखद्वारा सेवन करने पर इसका प्रभाव धीरे-धीरे प्रगट होता है, तथा हृदय सम्बन्धी प्रभाव लक्षित होने में लगभग २४–३६ घंटे तथा मूत्रल प्रभाव प्रगट होने में ७२ घण्टे लग जाते हैं। किन्तु अधिक मात्रा में सेवन करने से साधारणतः २–४ तथा अधिक से अधिक ६–२४ घंटे में ही इसके ये प्रभाव प्रगट होने लगते हैं। डिजिटॉक्सिन तथा डिजॉक्सिन दोनों मधुमेय हृत्पेशी में स्थिर हो जाते हैं। इनका उत्सर्ग अत्यन्त मन्द गति से होता है। इसी गुण के कारण डिजिटेलिस विशेष उपादेय औषधि है।

संचायी प्रभाव (Cumulative action)—चिरकाल तक डिजिटेलिस का प्रयोग करने से मात्रा में वृद्धि न करने पर भी कभी-कभी अनिष्ट उपद्रव प्रगट हो जाते हैं। यह प्रभाव औषधि की संचायी प्रवृत्ति के कारण होती है, जिसका कारण उत्सर्ग का समुचित रूप से न होना अथवा धातुओं (Tissues) द्वारा औषधि के विघटन या वियोजन में विलम्ब होना होता है। ऐसी स्थिति में प्रायः निम्न लक्षण प्रगट होते हैं:—

(१) वमन केन्द्र के उत्तेजित होने के कारण, उत्क्लेश (Nausea) एवं वमन का होना

(२) मूत्रकृच्छ्रता।

(३) शिरःशूल।

(४) प्राणदानाड़ी की अत्यधिक उत्तेजना के कारण नाड़ी की संख्या में बराबर ह्रास होते जाना। नाड़ी की संख्या पर विशेष ध्यान रखना चाहिए, ताकि यह संख्या ६० से कम न होने पावे।

(५) हृद्विकृतियाँ

उत्सर्ग—इसका उत्सर्ग प्रधानतः वृक्कों द्वारा, तथा अंशतः आमाशयान्त्र श्लैष्मिक कला द्वारा होता है।

आमयिक प्रयोग।

हृत्कपाटविकारों (Valvular diseases) में डिजिटेलिस का प्रयोग—हृद्रोगों के लिए डिजिटेलिस एक परमोत्तम औषधि है। यदि हृदय का कार्य अनियमित हो गया हो तो उसको नियमित करने के लिए यह एक परमोपयोगी औषधि है। हृत्पेशियों पर यह बल्य प्रभाव करता है। हृत्कपाट रोगों में रक्तोत्क्षेपण समुचित रूप से न होने के कारण निलयों पर अनावश्यक दबाव पड़ने से विस्फार हो जाता है, जिससे हृत्पेशी दुर्बल हो जाती है। ऐसी स्थिति में उनकी

कार्यक्षमता को स्थापित करने में डिजिटेलिस बहुत सहायक होती है। हृदय के शीघ्र, दुर्बल एवं अनियमित संकुचन को यह मन्द, बलपूर्ण एवं नियमित बनाता है। चूंकि डिजिटेलिस का कार्य हृत्पेशी पर प्रभाव होने से होता है, अतएव इसका प्रयोग अलिन्द विस्फार की अपेक्षा निलय विस्फार (Ventricular Dilatation) में अधिक उपयुक्त होता है। अतएव द्विपत्रक कपाट की विकृति (Mitral regurgitation) जन्य श्वासकृच्छ्र, कास, फुफ्फुस एवं औदोरिक आशयों के शिराज रक्ताधिक्य (Venous engorgement), सर्वांगशोफ (Oedema) तथा जलोदर (Dropsy) आदि उपद्रवों का शमन करता है।

रक्ताधिक्यजन्य हृदयातिपात (Congestive heart-failure) में, चाहे यह साधारण अथवा उग्र स्वरूप का हो तथा रक्तभार में आधिक्य अथवा न्यूनता हो, हृद्गति तीव्र अथवा मन्द हो अथवा महाधमनीद्वार की विकृति (Aortic regurgitation) का उपद्रव हो या न हो यह परमोपयोगी सिद्ध होता है। हृत्पेशी-अकार्यक्षमता (Myocardial insufficiency) के कारण उत्पन्न रक्ताधिक्य एवं श्वासकृच्छ्र जन्य उपद्रवों के शमन के लिए प्रायः डिजिटेलिस का सेवन किया जाता है। इन सभी अवस्थाओं में चिकित्सा के लिए रोगी को आराम से विस्तरे में रखना आवश्यक है।

डिजिटेलिस का दूसरा प्रधान उपयोग, हृत्कार्यों की अनियमितता (Cardiac irregularities) में होता है। अलिन्दाराजकता (Auricular fibrillation) में यह बहुत उपकार करता है, जो हृत्पेशी तथा कपाट विकारों में प्रायः उपद्रव स्वरूप पैदा हो जाता है। ऐसी अवस्था में असंख्य अनियमित आवेग अलिन्द से निलयों में पहुँचते रहते हैं, जिससे तालबद्धता (Rhythmicity) नष्ट होकर इनका संकोच असम्बद्ध रूप से (Inco-ordinated) होने लगता है। ऐसी स्थिति में डिजिटेलिस से अद्भुत् लाभ होता है। इसके लिए प्रथम कतिपय दिन इसका प्रयोग १५ से २० बून्द की मात्रा में दिन में ३-४ बार करना चाहिए, तत्पश्चात् मात्रा कम कर देनी चाहिए तथा प्रयोग काल का अन्तर भी बढ़ा देना चाहिए यथा सप्ताह में १–२ दिन अथवा अधिक से अधिक दिन में एक बार। इससे अलिन्द-निलय पुलिन्द की संवहनशीलता में मन्दता होने से हृद्गति में आंशिक अवरोध होता है, जिससे अनेक अनियमित संकोचावेग अलिन्दों से निलयों में नहीं पहुँचने पाते। इसप्रकार हृत्पेशी को आराम मिलता तथा उसमें बल्यता पैदा होकर स्वास्थ्य लाभ होता है।

अलिन्दों के फड़फड़ाहट (Auricnlar flutter) में भी डिजिटेलिस का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है। ऐसी स्थिति में अलिन्दों के स्पन्दन में अनावश्यक तीव्रता पैदा हो जाती है, यद्यपि इनका आकुञ्चन नियमितरूप से होता है। पूर्ण मात्रा में डिजिटेलिस का प्रयोग करने से पहले तो यह अलिन्द-फड़फड़ाहट को अराजकता के रूप में परिणत करता है, तदनु जिस प्रकार अलिन्दाराजकता में कार्य करता है (उपरोक्त) उसी प्रकार यहाँ भी अलिन्दनिलय पुलिन्द (Bundle of His) की संवहन शीलता को कम करने से निलयों की शीघ्रता को कम कर देता है।

यदि पूर्वतः आंशिक हृद्गत्यवरोध (Partial heart-block) हो, विशेषतः सिरा-अलिन्द (Sinoauricular) एवं अलिन्द-निलय पुलिन्द कार्यविरोध में डिजिटेलिस का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इससे कार्यावरोध में और भी सहायता मिलती है।

मूत्रल के रूप में डिजिटेलिस का प्रयोग—हृद्विकार जन्य सर्वांग शोफ में डिजिटेलिस एक परमोपयोगी मूत्रल औषधि है कभी कभी केवल इसी के प्रयोग से रोग का शमन हो जाता है। इसके मूत्रल प्रभाव के कारण पोषणाभाव (Nutritional) एवं रक्ताल्पताजन्य (Anaemic) सर्वांग शोफ (Oedema) में भी यह बहुत उपकारक होता है। वृक्क एवं अन्य अंगों के विकारजन्य शोफ में यह उपयोगी नहीं होता; किन्तु यदि शोफ का कारण समुचित रक्तपरिभ्रमण का अभाव हो, तो इसका प्रयोग किया जा सकता है।

ज्वरयुक्त तीव्र व्याधियाँ—कभी-कभी ज्वरयुक्त तीव्र औपसर्गिक व्याधियों में, जब उनके विष संचार किं वा उच्च तापक्रम के कारण हृदय के विकृत होने की आशंका हो तो,इसके निवारण अर्थात् हृदयको विषाक्त आक्रमण से बचाने के लिए डिजिटेलिस का प्रयोग किया जाता है। न्यूमोनिया आदि में कभी-कभी इसी आधार पर इसका प्रयोग किया जाता है। विद्वानों का कहना है कि इस प्रयोजन के लिए डिजिटेलिस का प्रयोग रोग के प्रारम्भ से ही करना चाहिए, ताकि पहले से ही हृदय पर डिजिटेलिस का पर्याप्त प्रभाव हो जाने से रोग जीवाणुओं अथवा उनके विष का उसपर कोई प्रभाव न पड़े।

डिजिटेलिस तथा केल्सियम्—यदि डिजिटेलिस के साथ-साथ केल्सियम् का प्रयोग भी अभीष्ट हो, विशेषतः शिरामार्ग से, तो पहले केल्सियम चिकित्सा समाप्त कर लेने के उपरान्त ही डिजिटेलिस का प्रयोग करना चाहिए।

वक्तव्य—रोगी, रोग, देश, काल आदि का विचार करके उपयुक्त रोगी का चुनाव करने के बाद ही डिजिटेलिस का प्रयोग करना चाहिए; क्योंकि ध्यान रहे कि यद्यपि कतिपय अवस्थाओं में यह बहुत उपयोगी होता है, किन्तु साथ ही अनेक अवस्थायें ऐसी भी हैं, जिनमें इसका कोई विशेष प्रभाव लक्षित नहीं होता अथवा जिनमें इसका प्रयोग निषिद्ध होता है। इसका सबसे सरल उपाय यह है कि डिजिटेलिस चिकित्सा में ज्योंही नाड़ीमन्दता, उत्क्लेश तथा वमनादि इसके सामान्य गुण-कर्म प्रगट होने लगें, औषधि का सेवन कुछ समय के लिए बन्द कर देना चाहिए। इससे संचायीप्रवृत्ति के कारण औषधि के विषाक्त प्रभाव होने की सम्भावना बहुत कम रहती है।

यद्यपि हृद्रोगों में डिजिटेलिस रामवाण औषधि समझी जाती है, किन्तु अनेक हृद्विकारोंमें इसका प्रयोग अनिष्ट एवं घातक प्रभाव करता है। अतएव आंशिक हृद्गत्यावरोध, मस्तिष्कगत रक्तस्राव, अन्तःशल्यता (Embolism) तथा महाधमनी विस्फार (Aortic aneurism) एवं उग्रधमनीदार्ढ्य (Pronounced arterio-sclerosis) में इसका प्रयोग निषिद्ध है। इसके अतिरिक्त हृदय में तन्त्वापक्रान्ति (Fibrous degeneration) अथवा मेदापक्रान्ति (Fatty degenertion) की अवस्थाओं में यह कोई लाभ नहीं करता। तीव्र हृत्पेशीशोथ (Acute Myocarditis) अथवा हृदन्तःशोथ (Endocarditis) में इसका प्रयोग सतर्कता के साथ करना चाहिए क्योंकि ऐसी परिस्थित में क्षुब्ध हृत्पेशी पर अनावश्यक दबाव पड़ने से घातक परिणाम होने की सम्भावना रहती है। रोहिणी विष (Diphtheria toxin) से हृदय के विषाक्त होने पर भी डिजिटेलिस का प्रयोग यथा सम्भव नहीं होना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार विषाक्त हृदय को डिजिटेलिस का प्रभाव असह्य होता है।

प्रयोग-विधि (Prescribing hints)—डिजिटेलिस का प्रयोग साधारणतया टिंक्चर के रूप में किया जाता है। एतदर्थ अकेले टिंक्चर १५ से ३० बूंद की मात्रा में दिन में ३ बार जलमिलाकर दिया जाता है। किन्तु जल मिलाने से टिंक्चर की क्रियाशीलता अधिक स्थायी नहीं होती। तथापि किसी भी हालत में ६–६ घंटे से कम अन्तर से इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। मुखद्वारा सेवन करने से डिजिटेलिस के प्रयोग में एक दोष होता है कि आमाशय में यह क्षोभक प्रभाव करती है, जिससे वमन आदि उपद्रव होने लगते हैं। अतएव ऐसी स्थिति में इसका प्रयोग सूचिकाभरण द्वारा किया जा सकता है। वमनादिक अधिक होने से मुखद्वारा यदि औषधि का प्रयोग सम्भव न हो तो, गुदामार्ग द्वारा (Rectal administration) भी औषधिका प्रयोग किया जा सकता है।

डिजिटेलिस के योगः—

(१) पाउडर्ड डिजिटेलिस के (ऑफिशल) योग। १–टॅबेली डिजिटेलिस प्रिपरेटी Tabellāe Digitalis Preparatae (Tab. Digit. Praep.) I. P., B. P.–ले०, टॅबलेट्स ऑव प्रिपेयर्ड डिजिटेलिस–अं०। पर्याय–टबेली डिजिटेलिस (Tabellāe Digitalis)–ले०; डिजिटेलिस टॅबलेट्स Digitalis Tablets)–अं०। मात्रा–$\frac{1}{2}$ से १$\frac{1}{2}$ ग्रेन (३० से १०० मि० ग्रा०)। यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो १ ग्रेन की टॅबलेट देनी चाहिए। वक्तव्य–डिजिटेलिस टॅबलेट्स का संग्रह वायु-अप्रवेश्य पात्रों (Air-tight containers) में करना चाहिए।

२–टिंक्चुरा डिजिटेलिस Tinctura Digitalis (Tinct. Digit.) I. P., B. P.–ले०; टिंक्चर डिजिटेलिस–अं०। टिंक्चर डिजिटेलिस (१) पत्तियों से (नं० १) अथवा (२) पत्तियों के चूर्ण अर्थात् प्रिपेयर्ड डिजिटेलिस (नं० २) से बनाया जाता है। इसके प्रति मि० लि० मात्रा में १ युनिट की शक्ति होती है। मात्रा–५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० ग्रा०)।

(२) डिजॉक्सिन के (ऑफिशल) योग।

१–टॅबेली डिजॉक्सिनाइ Tabellāe Digoxini (Tab. Digoxin.) I. P., B. P.–ले०; टॅबलेट्स ऑव डिजॉक्सिन–अं०। मात्रा (डिजॉक्सिन)—(१) प्रारम्भिक–१ से १·५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{40}$ ग्रेन); बाद में—०·२५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{240}$ ग्रेन) प्रतिदिन १ या २ बार। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो ०·२५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{240}$ ग्रेन) की टॅबलेट देनी चाहिए।

२–इन्जेक्शिओ डिजॉक्सिनाइ Injectio Digoxini (Inj. Digox.) I. P., B. P.–ले०; इंजेक्शन ऑव डिजॉक्सिन–अं०। मात्रा–१० से २० मि० लि० (१५० से ३०० मिनम्) शिरागतमार्ग से। ३०० मिनम् में $\frac{1}{60}$ ग्रेन डिजॉक्सिन होता है।

(३) डिजिटॉक्सिन के (I. P. Preparations) योग।

१–इन्जेक्शिओ डिजिटॉक्सिनाइ Injectio Digitoxini (Inj. Digitox.)–ले०; इन्जेक्शन ऑव डिजिटॉक्सिन–अं०। मात्रा—शिरागत मार्ग द्वारा १·२५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{50}$ ग्रेन)।

२–टॅबेली डिजिटॉक्सिनाइ Tabellāe Digitoxini (Tab. Digitox.), ले०; टॅबलेट्स ऑव डिजिटॉक्सिन–अं०। मात्रा—(१) प्रारम्भिक—१·२५ से २ मि० ग्रा० मुख द्वारा; (२) बाद में ०·२५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{240}$ ग्रेन) प्रतिदिन एक या दो बार।

(४) लनाटोसाइड 'सी' के योग।

लनाटोसाइड 'सी' टॅबलेट्स (Lanatoside 'C' Tablets. मात्रा—$\frac{1}{120}$ ग्रेन (०.५ मि० ग्रा०) मुखद्वारा।

२–लनाटोसाइट 'सी' इन्जेक्शन (Lanatoside C. Injection)—पेशीगत या शिरागत इन्जेक्शन द्वारा दिया जाता है। मात्रा का निर्धारण आवश्यकतानुसार चिकित्सक करता है।

वक्तव्य—२-३ दिन के अन्दर शरीर में वियोजित हो जाता है, अतएव इसमें संचायी प्रवृत्ति कम पाई जाती है।

डिजिटेलिस के नुस्खेः—

(१) टिंक्चर डिजिटेलिस — १५ बूंद
स्पिट अमोनिया एरोमेटिक — २० बूंद
टिंक्चर कार्ड० को० — २० बूंद

एक्वा क्लोरोफॉर्म आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए। ऐसी १ मात्रा ३–३ या ४–४ घंटे के अन्तर से रक्तसंचयजन्य हृद्भेद (Congestive Heart-failure) में उपयोगी है।

डिजिटेलिस के व्यावसायिक योगः—

(१) डिजिफॉर्टिस टॅबलेट्स (Digifortis Tablets)

(२) टॅबलेट डिजिटेलिस (Tablet Digitalis)

उक्त दोनों डिजिटेलिसपत्र (Digitalis Leaf) के योग हैं। इसकी ०.१ ग्राम की टिकिया (टॅबलेट) आती है। इसके प्रयोग में सुविधा होती है।

(३) डिजिटॉक्सिन टॅबलेट्स (Digitoxin Tablets (Squibb)–इसकी ०.१ मिलिग्राम तथा ०.२ मिलिग्राम की टिकिया आती है।

(४) सिस्टोडिजिन (Cystodigin)–इसकी ०.१ मिलिग्राम की टिकिया आती है।

(५) डिजिटेलिन नेटिवेल्ली Digitalin Nativelle. उक्त तीनों डिजिटॉक्सिन (Digitoxin के योग हैं। मुखद्वारा सेवन किए जानेपर शीघ्रतापूर्वक इनका शोषण होता है तथा आनुषंगिकउपद्रव (Side effects) भी अपेक्षाकृत कम होते हैं।

हृदय की क्रियाक्षमता (Cardiac decomponsition) एवं अलिन्द–अराजकता (Auri) cular fibrillation) में भी उपयोगी हैं।

(६) डिजॉक्सिन Digoxin (Park Davis)–इसकी (१) ०.२५ मिलिग्राम की टिकिया (टॅबलेट) या (२) द्रव रूप में १० सी० सी० तथा ३० सी० सी० की शीशियाँ (Vials) आती हैं, जिनमें प्रत्येक सी० सी० में ०.५ मिलिग्राम औषधि होती है। (३) ०.५ मिलिग्राम के एम्पूल्स।

(७) डिजिलेनिड Digilanid (Sandoz)—इसकी (१) ०.२५ मिलिग्राम (mg.) की टॅबलेट, (२) अथवा द्रव रूप में शीशियाँ (प्रत्येक मिलिलिटर या सी० सी० में ०.५ मिलिग्राम औषधि) तथा इन्जेक्शन के लिए एम्पूल्स (Ampoules) आते हैं, जिनमें १ सी० सी० में ०.२५ मिलिग्राम औषधि होती है।

उक्त दोनों (६, ७) डिजॉक्सिन के योग हैं। इनमें डिजिटेलिस के तीनों ग्लाइकोसाइड्स होते हैं। रक्ताधिक्यजन्य हृद्भेद (Congestive Heart-Failure), हृत्कपाटों की क्रियाक्षमता (Valvular insufficiency) तथा ऐसे हृदय विकारों में जिनमें रक्तभार बढ़ा हो (Hypertensive Heart Disease) में उपयोगी हैं।

मात्रा—वास्तव में मात्रा का निर्धारण हृदय की हालत एवं डिजिटेलिस के प्रति इसकी संवेदन शीलता (Sensitiveness) के आधार पर करना चाहिए। गम्भीरावस्था (Serious decompensation) में प्रारम्भ में कतिपय दिन तक प्रतिदिन २-४ सी० सी० की मात्रा में शिरागत इंजेक्शन दिया जाता है। इसके वाद २-३ दिन तक मुख द्वारा १-२ टिकिया या २०-२५ बूंद द्रव रूप में दिन में ३ बार। इसके वाद मात्रा घटा देनी चाहिंए और १०-१५ दिन तक १ टिकिया या १५ बूंद द्रव दिन में ३ वार दें। इसके पश्चात् यदि दवा और दिनों तक चालू रखनी हो तो दिन में वजाय ३ मात्राओं के २ या १ ही मात्रा देनी चाहिए। इस रूप में औषधि की मात्रा का स्थिरीकरण (Maintenance treatment) स्थापित रखा जा सकता है। बच्चों में मात्रा अपेक्षाकृत कम होनी चाहिएः—

२ वर्षतक—३-४ बूंद दवा प्रतिदिन ३ बार
१२ „ ७-८ „ „ „ „
१२ वर्ष से ऊपर—१० बूंद „ „

(८) सेडिलेनिड (Cedilanid)—(१) टिकिया ०·२५ मिलिग्राम की; (२) द्रव (Solution)—१ सी० सी० में १ मिलिग्राम औषधि (३) एम्पूल्स—१ सी० सी० (मि० लि०) में ०·२ मिलिग्राम।

(९) लेनाटोसाइड सी० Lanatoside C.—(१) ०·२५ मिलिग्राम टॅबलेट्स। (२) एम्पूल्स। ये दोनों (८, ९) ग्लाइकोसाइड सी० (Glycoside C) के यौगिक हैं।

अन्य व्यावसायिक योगः—

(१०) नेटिवेलिस डिजिटेलिन ग्रेन्यूल Nativelles Digitalin granules—यह डिजिटॉक्सिन का योग है। इसके $\frac{१}{२४०}$ ग्रेन (०·२५ मिलिग्राम) के सफेद (White) दाने या $\frac{१}{६००}$ ग्रेन या ०·१ मिलिग्राम के गुलावी (Pink) दाने आते हैं।

(११) डिजालेन Digalen (P. D.)—इसके भी टॅबलेट्स, द्रव तथा एम्पूल्स आते हैं।

(१२) डिजिप्यूराटम् Digipuratum। मात्रा—$\frac{१}{२}$ से २ ग्रेन।

(१३) डिजिफॉर्टिस (Digifortis) एवं डिजिस्टन लिक्विड (Digistan Liquid)।

(१४) डिजिग्लुसिन Digiglusin (Lilly)—इसकी मात्रा तथा प्रयोगनिर्देश (Indications) डिजिटेलिस की भांति। (१) द्रव (Liquid)—प्रत्येक सी० सी० में १ युनिट (U. S. P. digitalis unit) की क्रिया शीलता। (२) टॅबलेट्स—प्रत्येक टॅवलेट में १ युनिट (U. S. P.)। (३) एम्पूल्स—प्रत्येक सी० सी० में १ युनिट।

डिजिटेलिस के विभिन्न योगों की क्रिया शीलता में टिंक्चर डिजिटेलिस की वरावर मात्रायें:—
पत्ती ०·१ ग्राम = टिंक्चर १० बूंद (मिनम्)

डिजिटेलिन नेटिवेलि	० १ ग्राम = टिंक्चर १२ बूंद
डिजिटॉक्सिन	०.२५ ग्राम = टिंक्चर ३० बूंद
डिजॉक्सिन, डिजिलेनिड	०.२५ ग्राम = टिंक्चर १५ बूंद
लेनाटोसिड सी०	०.२५ ग्राम = टिंक्चर १५ बूंद

(नॉट-ऑफिशल)

स्ट्रोफेन्थस (Strophanthus (Strophanth.))

Family : Apocynaceae (करवीरादि-कुल)

नाम—सेमिना स्ट्रोफेन्थाइ Semina Strophanthi, स्ट्रोफेन्थस् सेमिना Strophanthus Semina—ले०; स्ट्रोफेन्थस सीड्स Strophanthus Seeds, कोम्बे सीड्स Kombe Seeds—अं०

प्राप्ति-साधन—यह स्ट्रोफेन्थस् कोम्बे (Strophanthus kombe, Oliver.) के शुष्क किए हुए पके बीज होते हैं, जिनपर से लोमशशूक-युक्त छिलका (Awns) उतार दिया गया है।

वक्तव्य—'स्ट्रोफेन्थस्' यूनानी (Greek) शब्द से व्युत्पन्न है, जो दो शब्दों के मिलने से बना है। 'स्ट्रोफास' जिसके अर्थ हैं 'कुटिलतापूर्वक आवृत्त' तथा दूसरा 'एन्थस्' जिसका तात्पर्य पुष्प से है। इसका दलचक्र (Corolla) कुटिलतापूर्वक स्थित होता है, अतः इसी आधार पर इसका नामकरण इस प्रकार किया गया है। अफ्रीका की भाषा में इसको 'उरयनज' या 'उरयज' कहते हैं। अफ्रीका के निवासी स्ट्रोफेन्थस की किन्ही उपजातियों का उपयोग अपने तीरों (Arrows) को विषाक्त करने के लिए करते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—अफ्रीका (विशेषतः जेम्बसी, गिनी आदि प्रान्त) तथा जावा, सुमात्रा आदि में होता है।

वक्तव्य—यह वनस्पति भारतवर्ष में नहीं होती। जम्बू तथा काश्मीर आदि में इसकी खेती का प्रयत्न किया गया, किन्तु विशेष सफलता नहीं प्राप्त हुई। तथापि दक्षिण के उष्ण-कटिबन्धीय प्रान्तों (Tropical regions) में सफलता की आशा है। अतएव इन प्रान्तों में इसका प्रयत्न किया जाना चाहिए।

वर्णन—स्ट्रोफेन्थस के ऊंचे-ऊंचे आरोही (Climbing) पौधे होते हैं, जो जंगलों में ऊँचे वृक्षों के सहारे ऊँचाई तक चढ़े मिलते हैं। इसके काण्ड कड़े (Woody) होते हैं। इसमें एक-एक साथ २-२ अपसारी (Divergent) रूप से स्थित भग्नैकसंधिक फल (Follicles) लगते हैं, जो प्रायः ८ इंच से १३-१४ इंच लम्बे तथा लगभग १ इञ्च चौड़े होते हैं। प्रत्येक फली में अनेक बीज भरे होते हैं। जिनपर शूकयुक्त छिलका (Feathery awn) चढ़ा होता है। इन छिलकों को उतारकर बीजों को शुष्क कर लिया जाता है। यही बीज औषध्यर्थ प्रयुक्त होनेवाला व्यावसायिक (Commercial) स्ट्रोफेन्थस है। बीज—स्ट्रोफेन्थस के बीज आकार में भालाकार या रेखाकार भालाकार (Linear-lanceolate), किंचित् चपटे तथा १२ से १८ मिलिमिटर लम्बे, ३ से ५ मिलिमिटर चौड़े एवं ½ से २ मिलिमिटर मोटे होते हैं। बीजों का वाह्यावरण (Testa) घने बालों

(Greyish-green or fawn silky hairs) से ढका होता है, जिसके अग्र बीज के तीक्ष्णाग्र (Acuminated apex) की ओर होते हैं। बीजों के औदर्य तल (Ventral surface) पर एक उन्नतरेखा (Raphe) होती है, जो बीज के मध्य से लेकर अग्र तक स्थित होती है, जहां शूक (Awn) लगा होता है। अनुप्रस्थ अथवा अनुलम्ब विच्छेद पर भ्रूण (Embryo) के चारों ओर भ्रूण-पोष (Endosperm) दिखाई पड़ता है। इन बीजों में एक विशिष्ट हल्की गंध (अरुचिकारक) होती है, तथा स्वाद में ये तिक्त होते हैं।
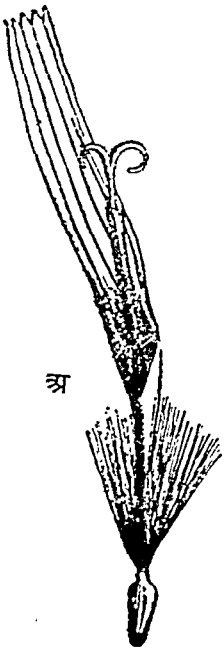
चित्र नं० २३—(अ), (ब)

रासायनिक-संघटन—(१) स्ट्रोफेन्थस के बीजों में ७ से १० प्रतिशत स्ट्रोफेन्थिन (Strophanthin) पाया जाता है, जो इन बीजों का प्रधान वीर्य (सक्रिय तत्व) होता है। इस उपजाति के स्ट्रोफेन्थस में पाये जानेवाले स्ट्रोफेन्थिन को इसके विशिष्ट नाम 'कोम्बे Kombe' के आधार पर K-Strophanthin कहा जाता है। यह निम्न तिक्त ग्लाइकोसाइड्स का मिश्रण होता है—

(१) K-Strophanthin

(२) सिमेरिन (Cymarin)

उक्त दोनों ही ग्लाइकोसाइड जलांशन (Hydrolysis) से 'स्ट्रोफेन्थिडिन' नामक एक एग्लुकोन (Aglucone) तत्व तथा सिमेरोज (Cymarose) तत्व एवं एक शर्करा घटक में विच्छिन्न होता है। (२) स्थिर तैल, (३) कोम्बिक एसिड (Kombic acid), स्ट्रोफेन्थिक एसिड (यह एसिड एक सेपोनिन होता है) आदि घटक भी पाये जाते हैं।

वक्तव्य—चिकित्सा की दृष्टि से इसका प्रथम घटक 'स्ट्रोफेन्थिन' ही महत्व का है।

स्ट्रोफेन्थस् पल्विस Strophanthus Pulvis (Strophanth. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड स्ट्रोफेन्थस् (Powdered Strophanthus)—अं०; स्ट्रोफेन्थस् का चूर्ण—हिं०। यह हरिताभ-पीले रंग का होता, जिसमें जगह-जगह भूरे दाने (Brown speks) दिखाई पड़ते हैं।

ओएबेनम् Ouabainum (Ouabain) I. P., B. P.—ले०; ओएबेन (Ouabain)—अं०; स्ट्रोफेन्थस का सत—हिं०।

रासायनिक संकेत : $C_{२९}H_{४१}O_{१२},8H_2O$.

पर्याय—स्ट्रोफेन्थिन 'जी' Strophanthin G.

प्राप्ति-साधन—ओएबेन, क्रिस्टलाइ स्वरूप का ग्लाइकोसाइड (Crystalline glycoside) होता है, जो (१) स्ट्रोफेन्थस् ग्रेटस Strophanthus gratus Fra-

noh. के बीजों से अथवा (२) एकोकेन्थरा शिम्पेराइ Acokanthera schimperi (A. DC.) Schweiuf के काष्ठ (Wood) से प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—ओएबेन के छोटे-छोटे रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा यह सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता–ठंढे जल में धीरे-धीरे (१०० में १) घुलता है; डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् में भी घुल जाता है। किन्तु सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है।

मात्रा—०·१२ से ०·२५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{500}$ से $\frac{1}{250}$ ग्रेन) सिरागत इंजेक्शन (Intravenous injection) द्वारा।

स्ट्रोफेन्थिनम् 'के' Strophanthinum-K (नॉट-ऑफिशल), B. P. C.—ले०; स्ट्रोफेन्थिन 'के' (Strophanthin-K)—अं०। पर्याय—कोम्बे-स्ट्रोफेन्थिन (Kombe-Strophanthin); K-Strophanthin (B. P. C.)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह प्रमापित शक्ति का (Standardised) ग्लाइकोसाइड्स का मिश्रण होता है, जो स्ट्रोफेन्थस से प्राप्त किए जाते हैं। इसकी शक्ति को निश्चित बल का रखने के लिए (ओएबेनमूल Anhydrous Ouabain का ४०%) आवश्यकतानुसार इसमें लेक्टोज पाउडर मिला दिया जाता है। यह सफेद या पीताभ-सफेद रंग का चूर्ण होता है, जिसमें सूक्ष्मदर्शक द्वारा देखने पर इतस्ततः सूक्ष्मस्वरूप के क्रिस्टल्स भी दिखाई दे सकते हैं। विलेयता–जल एवं अल्कोहल (९०%) में साधारण मात्राओं में घुलता (Moderately Soluble) है। संरक्षण–इसको अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए, ताकि नमी न घुसे और प्रकाश से बचाकर रखना चाहिए।

मात्रा—०·२५ से १ मि० ग्रा० ($\frac{1}{240}$ से $\frac{1}{60}$) पेशीगत या सिरागत इंजेक्शन द्वारा।

गुण-कर्म।

स्थानिक (Locally)—स्ट्रोफेन्थिन श्लैष्मिक कला पर क्षोभक प्रभाव करता है, किन्तु डिजिटेलिस की अपेक्षा यह क्रिया मन्दतर होती है। नेत्र की श्लैष्मिक कला (Conjunctive) तथा कृष्णमण्डल (Cornea) पर यह संज्ञाहर प्रभाव करता है।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र-प्रणाली—मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर डिजिटेलिस की अपेक्षा स्ट्रोफेन्थस का शोषण मन्दतरवेग से होता है, तथा यह स्थानिक क्षोभक प्रभाव भी उसकी अपेक्षा कम करता है। पाचक रसों की क्रिया से यह शीघ्रतापूर्वक नष्ट भी हो जाता है। अतएव इन कारणों से मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर इसकी बहुत-कुछ क्रिया शीलता नष्ट हो जाती है।

हृदय तथा रक्तसंवहन—हृदय तथा रक्तसंवहन पर भी इसकी क्रिया डिजिटेलिस की ही भाँति होती है। किन्तु डिजिटेलिस की भाँति यह संचायी प्रवृत्ति (Cumulativa) की औषधि नहीं है। दूसरे डिजिटेलिस की भांति परिसरीय वाहिनियों पर यह संकोचक प्रभाव नहीं करता।

वृक्क—वृक्कों पर यह मूत्रल प्रभाव करता है। यह वृक्कगत परिसरीय वाहिनियों पर संकोचक प्रभाव नहीं करता, अपितु हृद्गति में सुधार होने के कारण रक्तभार में वृद्धि होती है। अतएव डिजिटेलिस की अपेक्षा इसका मूत्रल प्रभाव अधिक प्रभावशील होता है।

आमयिक प्रयोग।

हृद्विकारों में स्ट्रोफेन्थस का प्रयोग बहुत किया जाता है। जब हृत्कार्य का सन्तुलन टूट गया हो (Cardiac decumpensation) तो उसको फिर से संतुलित करने के लिए स्ट्रोफेंथस एक उत्तम औषधि है। किन्तु इसमें एक दोष यह है, कि मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर महास्रोत में पाचक रसों के प्रभाव से इसके क्रियाशील तत्त्व अर्थात् स्ट्रोफेंथस में पाये जाने वाले मधुमेय (ग्लाइकोसाइड्स) वियोजित (Decomposed) हो जाते हैं। अतएव ऐसी स्थिति में इसकी क्रिया संदेहास्पद होती है। ओएबेन (Strophanthus-G) जलविलेय होने के कारण तथा इसका संगठन भी निश्चित स्वरूप का होता है, अतएव ग्लूकोज के साथ शिरागत मार्ग द्वारा बहुत लाभकारी होती है,—जब हृत्कार्य संतुलन (Decompenstion) में तीव्र अव्यवस्था उत्पन्न हो गई हो, विशेषतः जब उसमें हृच्छ्वास (Cardiac asthma), फुफ्फुसशोफ या सूजन (Pulmonary Oedema) आदि उपद्रव भी हों; औपसर्गिक व्याधियों में उपद्रव स्वरूप उत्पन्न तीव्र हृदयातिपात (Acute heart-failure); जब दौरे (Paroxysm) के रूप में हृच्छीघ्रता फड़फड़ाहट युक्त तीव्र स्वरूप की अतालबद्धता (Flutter-arrhythmia) हो; जब डिजिटेलिस के प्रयोग के कारण अत्यधिक उत्क्लेश एवं वमन होता हो, जिससे उसका प्रयोग न किया जा सकता हो; अलिन्द-निलय कार्यस्तब्धता (Auriculo-Ventricular block) जब कि हृन्मन्दतायुक्त निलय-स्वायत्तता (Ventricular autonomy) का भी उपद्रव हो तथा जब हृदय के वाम भाग की कार्यक्षमता में दाहिने की अपेक्षा अधिक विकृत होने की आशंका हो। किन्तु इन स्थितियों में भी स्ट्रोफेन्थस का प्रयोग लगातार अधिक काल पर्यन्त करना हानिकर समझा जाता है।

डिजिटेलिस की अपेक्षा स्ट्रोफेन्थस में निम्न विशेषतायें पाई जाती हैं :—(१) इसका प्रभाव शीघ्र (कुछ मिनटों में ही) लक्षित होता है; डिजिटेलिस का प्रयोग मुखद्वारा करने पर पूर्ण प्रभाव लक्षित होने में कई घंटे लगते हैं।

(ऑफिशल योग)

१–इन्जेक्शिओ ओएबेनियाइ Injectio Ouabaini Inj. Ouabain. I. P., B. P.–ले०, इन्जेक्शन ऑव ओएबेन (Injection of Ouabain)–अं०, ओबेन की सूई–हिं०। यह 'वाटर फॉर इन्जेक्शन में बनाया हुआ ओएबेन का विसंक्रमित (Sterile) सोल्यूशन होता है। मात्रा (ओएबेन)–०·१२ से ०·२५ मि० ग्रा०, शिरागत इंजेक्शन द्वारा। यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो १ मि० लि० या १ सी० सी० में ०·२५ मि० ग्रा० के बल का सोल्यूशन देना चाहिए।

(नॉन्-आफिशल)

१–टिंक्चुरा स्ट्रोफेन्थियाइ Tinctura Strophanthi (Tinct. Strophan.)–ले; टिंक्चर स्ट्रोफेन्थस–अं०। मात्रा–२ से ५ बूंद या मिनम् (०·१२ से ०·३ मि० लि०)।

स्ट्रोफेन्थस के नुस्खे—

(१) टिंक्चुरा स्ट्रोफेन्थाइ	(Tinct. Strophanth.)	५ बूंद
टिंक्चुरा न्युकिस वॉमिकी	(Tinct: Nuc. Vom.)	१५ बूंद

टिंक्चर० कार्ड० को० (Tinct. Card. Co.) ३० बूंद
एक्वा क्लोरोफॉर्म (Aq. Chlorof.) १ औंस

यह एक हृद्य योग (Cardiac tonic) है।

(१) स्ट्रोफेन्थिन Strophanthin। ०·३ से ०·६ मिलिग्राम (mg.) की टॅबलेट्स (टिकिया) आती है।

(२) ओबेन Ouabain। इसके १-१ सी० सी० के (प्रत्येक सी० सी० में ०·२५ तथा ०·५ मिलिग्राम) एम्पूल्स आते हैं।

(३) स्ट्रोफोसिड Strophosid (Sandoz):—K-Strophanthoside। ०·२५ मिलिग्राम तथा ०·५ मिलिग्राम प्रति सी० सी० के एक-एक सी० सी० के एम्पूल्स। मात्रा—०·२५ से ०·५ मिलिग्राम शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

सिल्ला या स्क्लि (B. P. C.)

Family : Liliaceae (पलाण्डु-कुल)।

नाम— सिल्ला (Scilla Scill.), बल्बस सिल्ली (Bulbus Scillae), रेडिक्स सिल्ली (Radix Scillae)—ले०; स्क्विल (Squill), ह्वाइट स्क्विल (White Squill)—अं०; विदेशीय वनपलाण्डु, विलायती जंगली कांदा या प्याज—हिं०; उन्सुल—अ०; इस्क़ील, प्याज दश्ती—फा०।

प्राप्ति-साधन—अर्जिनीआ सिल्ला Urginea Scilla, Steinh (पर्याय—अर्जिनिआ मेरिटिमा (Urginea maritima, (Linn.) Baker) के प्रपुष्टपत्रक-कन्द (बल्ब Bulb) को, इसके बाहरी शुष्क छिलकों (Outer membranous scales) को उतारकर छोटे छोटे कतरों (Slices) में काटकर सुखा लिया जाता है। यही औषधोपयुक्त व्यावसायिक सिल्ला होता है।

उत्पत्ति-स्थान—भूमध्यसागर के तटीय देशों यथा स्पेन, फ्रांस, इटली, यूनान तथा मोरक्को (Morocco) आदि के बालुकामय एवं पहाड़ी स्थानों (Sandy and hilly localities) में इसके स्वयंजात पौधे बहुतायत से पाये जाते हैं। व्यावसायिक प्रयोजन की पूर्ति इन्हीं जंगली पौधों के कन्दों से की जाती है।

वक्तव्य—यह ओषधि भारतवर्ष में प्रायः नहीं पाई जाती। किन्तु गुण-धर्म एवं स्वरूपतः भी बहुत-कुछ मिलती जुलती इसी की एक उपजाति भारतवर्ष में भी पाई जाती है, जिसे लेटिन में अर्जिनीआ इंडिका Urginea inindica, Kunth. तथा अंगरेजी में इन्डियन स्क्विल्ल (Indian Squill) कहते हैं। उक्त भारतीय वनपलाण्डु (अर्थात् इंडियन स्क्विल्ल) विदेशीय वनपलाण्डु (अर्थात् अर्जिनीआ सिल्ला) की उत्तम प्रतिनिधि औषधि है। इसका विवरण आगे यहीं पर दिया जायगा। अतएव उत्पादन की दृष्टि से यह कहा जा सकता है, कि जहां-जहां इन्डियन स्क्विल्ल के स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं, वहां-वहां अर्जिनीआ सिल्ला की भी खेती की जा सकती है।

नामकरण तथा इतिहास—लेटिन 'Scilla' शब्द व्युत्पन्न है यूनानी 'स्किल्ला Skilla' से जिसका अर्थ होता है 'To split (पर्त-पर्त) फटना'। चूंकि सिल्ला के कन्दों के पत्रक पर्त-पर्त फाड़े या उचाड़े जा सकते हैं, अतएव ऐसा नामकरण सम्भव है। चूंकि यह

वनस्पति समुद्र-तट (विशेषतः भूमध्यसागरीय तट) पर प्रचुरता से स्वयंजात पाई जाती है, इसीसे इसका एक नाम 'अर्जिनीआ मेरिटिमा **Urginea maritima**' या 'समुद्री-पलाण्डु (Sea Onion)' भी है। अंगरेजी स्क्लिल शब्द व्युत्पन्न है "स्किल्ला" से, जो एक यूनानी शब्द है। इसका अर्थ होता है "शुष्ककरना" या "कष्टदेना"। क्योंकि इसकी उत्तमजाति अत्यन्त तीव्र प्रभाव युक्त होती है, अतएव ऐसा नामकरण किया गया था।
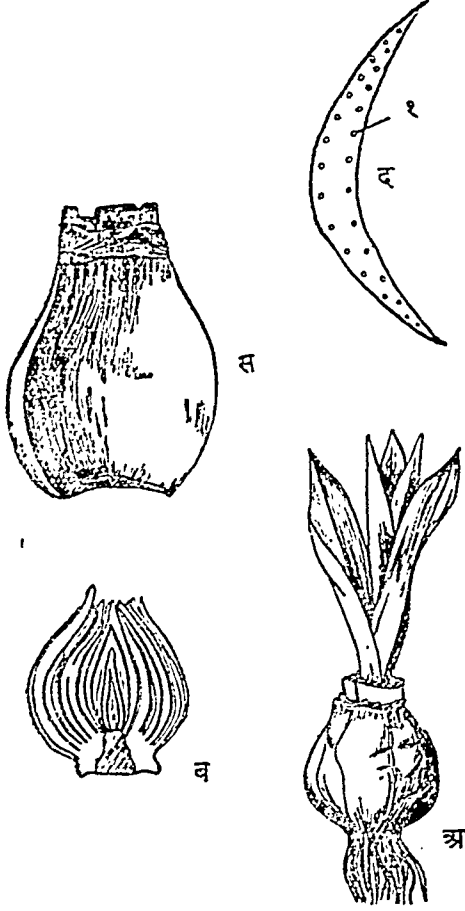
इस औषधि का प्रयोग यूनानी हकीमों के यहाँ प्राचीन काल से होता आ रहा है। वे इसका प्रयोग कफोत्सारि (**Expectorant**) एवं मूत्रल (**Diuretic**) आदि क्रियाओं के लिए श्वास तथा जलादेर आदि व्याधियों में करते थे। इसके अतिरिक्त आमवात तथा कुष्ठ आदि त्वग्रोगों में भी इसका प्रयोग किया जाता था। यूरोप में औषधि का प्रचार सम्भवतः मध्यकालीन युग के अरबी चिकित्सकों द्वारा हुआ।

चित्र २४—अर्जिनीआ सिल्ला (Urginea Scilla)

(अ)—पूर्णकन्द (Whole bulb)

(ब)—पूर्णकन्द का अनुलम्ब-विच्छेद (Longitudinal Section)

(स)—एक पत्रक (A single scale)

(द)—पत्रक (Scale) का अनुप्रस्थ-विच्छेद Tra)-nsvcrse Section)

(१) वाहिनी-पूल (Vascular bundle)

वर्णन—स्क्विल का कन्द आकार में साधारण प्याज की तरह होता है। औसत लम्बाई ६" से ८" तथा व्यास ६" होता है। कोई-कोई फूटवाल के बराबर के कन्द (Bulb) भी पाये जाते हैं। बाहरी छिलके (Outer Scales) के रंग भेद से इसके भी (१) सफेद तथा (२) लाल अथवा इटेलियन (सफेद) तथा फ्रेंच (लाल स्किल) करके २ भेद होता है। किन्तु रङ्ग के अतिरिक्त गुण-कर्म एवं रासायनिक संगठन की दृष्टि से विशेष भेद नहीं होता। इन कन्दों का बाहरी छिलका उतारकर इनके लम्बे-लम्बे कतरे (Slices) काटकर सुखा लिए जाते हैं। औषध में यही सुखाये हुए कतरे व्यवहृत होते हैं।

स्वरूप—अन्तस्तरीय पर्तें किंचित् वक्र, पीताभ या गुलाबी रंग की तथा पारभासी (Translucent) होती हैं, जो बीच में अपेक्षाकृत अधिक चौड़ी, किन्तु अग्रों की ओर क्रमशः कम चौड़ी होती हुई, सिरों पर प्रायः नुकीली-सी हो जाती हैं। ये पर्तें गंधरहित, स्वाद में तिक्त तथा १ से २

इंच तक लम्बी होती हैं। शुष्क होने पर आसानी से इनका चूर्ण बन जाता है, किन्तु नम होने पर चिमड़ी होती हैं, जिससे आसानी से चूर्णित नहीं होतीं।

रासायनिक-संघटन—स्क्विल में २ सक्रियग्लाइकोसाइड्स पाये जाते हैं, जिनको (१) सिलारिन 'ए' Scillarin A तथा (२) सिलारिन 'बी' Scillarin B कहते हैं। इनमें सिलारिन 'ए' ($C_{36}H_{52}O_{13}$) क्रिस्टलाइन स्वरूप का ग्लाइकोसाइड होता है, जो जलांशन (Hydrolysis) होने पर एग्लुकोन उपादान सिलारिडिन ए (Scillaridin A) एवं शर्करा उपादान सिलाबिग्रोस (Scillabiose) में विच्छिन्न होता है। सिलारिन बी, विरूपिक (Amorphous) तथा विलेय (Soluble) होता है। यह प्रायः ग्लाइकोसाइड्स का मिश्रण होता है। औषधीय दृष्टि से दोनों ही तीव्र सक्रिय होते हैं। इसके अतिरिक्त म्युसिलेज (४ से ११%)। सिनिस्ट्रिन (Sinistrin) नामक कार्बो हाइड्रेट, फाइटोस्टेरोल (Phytosterol) एवं केल्सियम् ऑक्जलेट आदि तत्व भी पाये जाते हैं।

अर्जिनिया Urginea (Urgin.), I. P.

(भारतीय वनपलाण्डु या देशीकांदा)

Family : Liliaceae (पलाण्डु-कुल)।

नाम—जङ्गली प्याज, कोँदा, कँदरी,—हिं०; कोलकन्द, (रा० नि०) वनपलाण्डु—सं०; रानकांदा, कोलकांदा—म०; जङ्गलीकांदो, पाणकन्दो—गु०; उन्सुले हिंदी—अं०; इस्कीले हिंदी, पियाज़ सहराई—फा०; अर्जिनीआ इन्डिका **Urginea indica, Kunth;** सिल्ला इन्डिका **Scilla indica**—ले०; इंडियन स्क्विल्ल **Indian Squill**—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—भारतीय वन-पलाण्डु के पौधे पश्चिमी हिमालय प्रदेश में ७,००० फुट की ऊँचाई तक तथा गढ़वाल, कुमाँयू, बिहार एवं कोकण तथा कोरोमण्डल के वालुकामय समुद्रीतटों पर पाये जाते हैं। पश्चिमी घाट के किनारे-किनारे वालुकामय भूमि में भी यह प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

वर्णन—कोलकन्द के छोटे-छोटे चिकने पौधे (Glabrous herbs) होते हैं; जिसमें २ से ४ इञ्च लम्बे परिच्छदपत्रक-कन्द (Bulb) लगते हैं। इन्डियन सिल्ला के कन्द अर्जिनिआ सिल्ला की अपेक्षा छोटे तथा बाहर से मटमैले रङ्ग के होते हैं। चिकित्सा की दृष्टि से यह कन्द अर्जिनीआ सिल्ला का उत्तम प्रतिनिधि-द्रव्य (Substitute) है। इन कन्दों का ऊपरी छिलका अलग करके लम्बी फांकें (Strips) काट ली जाती हैं जो प्रायः १ से ५ सेंटीमीटर लम्बी, ३ से १० मिलिमिटर चौड़ी तथा १ से ३ मिलिमिटर मोटी होती हैं। ये टुकड़े दोनों सिरों की ओर क्रमशः पतले होते हैं तथा प्राय तीन-तीन, चार-चार टुकड़े परस्पर जुटे रहते हैं। इन टुकड़ों पर लम्बाई की दिशा में उन्नत श्वेत रेखायें दिखाई पड़ती हैं जो वाहिनी-पूलों (Vascular bundles) का द्योतक होती हैं। अनुप्रस्थ-विच्छेद (Transverse section) में ये उन्नत-विन्दु के रूप में दिखाई पड़ती हैं। रंग में ये, पीली आभा लिए हल्के भूरे रङ्ग से लेकर मटमैले पीताभवर्ण (Dull yellow colour) के होते हैं। सूखने पर तो ये भंगुर (Brittle) किन्तु नम होने पर चिमड़े (Tough) एवं नम्य या लचीले (Flexible) होते तथा इनमें कोई विशेष गन्ध नहीं पाई जाती किन्तु स्वाद में अत्यंत तिक्त (Bitter) होते हैं।

रासायनिक-संघटन—विलायती कांदे (अर्जिनीश्रा सिल्ला) की भांति।

वक्तव्य —आर्द्र-वायु मंडल में खुला रहने से इसमें नमी सोखने की प्रवृत्ति होती है, जिससे इसके कतरे नम, चिमड़े, नम्य (Flexible) हो जाते हैं तथा चूर्ण की लुटकी (Cake) बंध जाती है। अतएव इसका संग्रह खूब अच्छी तरह डाट-बन्द शीशियों में करना चाहिए। यदि उस पात्र में कोई शुष्कताजनक द्रव्य (Exsiccator) रख दिया जाय तो और भी अच्छा है।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन (½ से १॥ रत्ती) या ६० से २०० मिलिग्राम।

टिंक्चर ऑव स्क्विल्ल Tincture of Squill—अं०। मात्रा ५ से ३० मिनिम् या ०·३ से २ मि० लि०।

गुण-कर्म।

सिल्ला के गुणकर्म भी अधिकांशतः डिजिटेलिस की ही भाँति होते हैं। इसमें केवल निम्न विशेपतायें पाई जाता हैं, शेष वर्णन इसके लिए भी डिजिटेलिस की ही भाँति समझना चाहिएः—

(१) मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर इसका शोषण मन्द गति गति से होता है तथा शोषण भी पूर्णतः नहीं होता। अतएव इसके हृदयोपरि प्रभाव विशेषरूपेण लक्षित नहीं होते।

(२) डिजिटेलिस की अपेक्षा आमाशयान्त्र पर यह तीव्रतर क्षोभक प्रभाव करता है, जिससे उत्क्लेश (Nausea) वमन तथा रेचन आदि लक्षण प्रगट होते हैं। पूर्णमात्रा में प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र की श्लैष्मिक कला में शोथ पैदा करता है। कभी-कभी चिकित्सार्थ प्रयुक्त मात्रा में भी यह लक्षण देखने में आता है।

(३) आमाशय पर स्थानिक क्षोभक प्रभाव के कारण प्रत्याक्षिप्त रूपेण (Reflexly) कफोत्सारि प्रभाव करता है।

(४) डिजिटेलिस की अपेक्षा यह तीव्रतर मूत्रल प्रभाव करता है। इसकी क्रिया दो प्रकार से होती है —(१) डिजिटेलिस की भांति यह रक्तसंवहन में सुधार करता है तथा (२) इसके सक्रियतत्व सिलारेन (Scillaren) का उत्सर्ग वृक्कों द्वारा होता है अतएव यह वृक्ककोशाओं पर उत्तेजक प्रभाव करता है।

आमयिक प्रयोग।

स्क्विल का प्रयोग हृद्दौर्बल्यजन्य सर्वांगशोफ या अन्य किसी भी कारण से उत्पन्न सर्वांग-शोफ मे बहुत किया जाता है। इसके क्षोभक प्रभाव के निवारण के लिए इसके साथ प्रायः डिजिटेलिस का भी संयोग कर दिया जाता है। हृद्दौर्बल्य जन्य सर्वांगशोफ (Cardiac dropsy) में ग्वाइज पिल (Guys Pill) के रूप में इसका प्रयोग बहुत लाभप्रद होता है। स्क्विल का प्रयोग लगातार नहीं करना चाहिए। बीच-बीच में इसका प्रयोग बन्दकर देना चाहिए।

आमाशयान्त्रप्रदाह एवं वृक्करोगों में इसका प्रयोग बड़ी सतर्कता से करना चाहिए।

कफोत्सारि (Expectorant) औषधि के रूप में इसका प्रयोग बहुत होता है, किन्तु अभिनव उग्र श्वासनलिका शोथ (Acute Bronchitis) में इसका प्रयोग निषिद्ध है। चिरकालज फुफ्फुस रोगों में यह विशेष उपयोगी होता है, जब कि कफोत्सारि प्रभाव करने के अतिरिक्त यह हृदय पर भी बल्य प्रभाव करता है, विशेषतः दक्षिण भाग पर, चिरकालीन फुफ्फुस रोगों में प्रायः हृदय के दक्षिण भाग का विस्फार हो जाता है। बच्चों के चिरकालीन

फुफ्फुसरोगों में सिल्ला का सिकंजवीन बहुत उपयोगी होता है। इसके लिए इसको १० से १५ बूंद में प्रयुक्त करते हैं।

विलायती वनपलाण्डु (Urginea Scilla) के ब्रिटिश फार्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में उल्लिखित मुख्य योगः—

१—टिंक्चुरा सिल्ली Tinctura Scillāe (Tr. Scill.)—ले०; टिंक्चर ऑव स्किल्ल—अं०। मात्रा—५ से ३० बूंद या मिनम् (०·३ से २ मि० लि०)। १०% (w/v) स्क्विल्ज के बराबर होता है।

२—एसिटम् सिल्ली Acetum Scillae (Acet. scill.)—ले०; विनेगर ऑव स्किल्ल (Vinegar of Squill)—अं०। मात्रा—१० से ३० बूंद या मिनम् (०·६ से २ मि० लि०)। यह डायल्यूट एसेटिक एसिड तथा स्क्विल्ल (१० में १) से बनाया जाता है।

३—ऑक्सिमेल सिल्ली Oxymel Scillae (Oxymel scill.)—ले०; ऑक्सिमेल ऑव स्किल्ल—अं०। ५ % स्क्विल्ल होता है। मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

४—सिरपस् सिल्ली Syrupus Scillāe (Syr. Scill.) – ले०; सिरप ऑव स्क्विल्ल—अं०। इसमें ४·५% (w/v) स्क्विल्ल होता है। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

५—पिल्युली डिजिटेलिस कम्पोजिटी Pilulāe Digitalis Compositae (Pil. Digit. Co.) —ले०; कम्पाउण्ड पिल्स ऑव डिजिटेलिस—अं०। प्रत्येक गोली में १ ग्रेन स्क्विल्ल, १ ग्रेन डिजिटेलिस का चूर्ण तथा १ ग्रेन पारदगुटिका-कल्क (Pill-mass of mercury) होता है। मात्रा—१ से २ गोली।

६—लिंक्टस् सिल्ली ओपिएटस् Linctus scillāe opiatus (Linct. scill. opiat.)—ले०; ओपिएट लिंक्टस ऑव स्क्विल्ल—अं०। पर्याय—गीजलिंक्टस (Gees Linctus)। कम्फोरेटेड टिंक्चर ऑव ओपियम् २० बूंद, ऑक्सिमेल ऑव स्क्विल्ल २० बूंद, सिरपटोलू २० बूंद। सबको परस्पर मिलावें। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

७—लिंक्टस् सिल्ली ओपिएटस् प्रो इन्फेन्टिबस् Linctus scillāe Opiatus pro Infantibus (Linct. scill. opiat. Pro. Infant.)—ले०; Opiate Linctus for Infants—अं०।

कम्फोरेटेड टिंक्चर ऑव ओपियम् ५ बूंद, ऑक्सिमेल ऑव सिल्ला ५ बूंद, सिरपटोलू ५ बूंद, ग्लिसरिन २० बूंद, सिरप १ ड्राम। सबको परस्पर मिलावें। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

भारतीय वनपलाण्डु (Urginea indica) या इन्डियन सिल्ला के योग (डाक्टरी रूप में औषधि-योजन (dispensing) के लिए विलायती सिल्ला के स्थान में प्रयुक्त हो सकते हैं):—

१—टिंक्चुरा अर्जिनिई Tiuctura Urgineāe (Tinct. Urginea.), I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव अर्जिनिया Tincture of Urginea—अं०। इसमें १०% (w/v) अर्जिनिया होता है। मात्रा—५ से ३० बूंद या मिनम् (०·३ से २ मि० लि०)।

२—सिरपस् अर्जिनिई Syrupus Urgineāe (Syr. Urgin), I. P.—ले०; सिरप ऑव अर्जिनिया Syrup of Urginea—अं०। इसमें ४½% अर्जिनिया की शक्ति होती है। मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

३—एक्स्ट्रैक्टम् अर्जिनिई लिक्विडम् Extractum Urgineāe Liquidum (Ext. Urg. Liq.), I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव इन्डियन स्क्विल्ल—अं० । मात्रा १ से ३ मिनम् (००'६ से ०'२ मि० लि०) ।

४—एसिटम् अर्जिनिई Acetum Urgineāe (Acet. Urgin.), I. P.—ले०; विनेगर ऑव अर्जिनिया (Vinegar of Urginea)—अं० । मात्रा—१० से ३० मिनम् (०'६ से २ मि० लि०)।

५—लिंक्टस् अर्जिनिई Linctus Urgineāe (Linct. Urgin), I. P. C.—ले०; लिंक्टस ऑव इन्डियन स्क्विल्ल—अं० । मात्रा—३० से ६० मिनम् (½ से १ ड्राम)।

६—ऑक्सिमेल अर्जिनिई Oxymel Urgineāe (Oxymel. Urg.), I. P. C.—ले०; ऑक्सिमेल ऑव इन्डियन स्क्विल्ल—अं० । मात्रा—½ से १ ड्राम ।

सिल्ला के योग (नुस्खे)—

(१) टिंक्चुरा इपेकाक्वानी Tinct. Ipecae.	१० बूंद
ऑक्सिमेल सिल्ली Oxymel- Scill.	६० बूंद
टिंक्चुरा टोलू Tinct. Tolu	३० बूंद
एक्वा केम्फर	१ औंस

सबको मिलाकर १ खुराक बनावें । चिरकालीन ब्रांकाइटिस (Chronic bronchitis) में उपयोगी है ।

(२) पोटासियाइ एसिटास	१५ ग्रेन
सिरपस सिल्ली	३० बूंद
टिंक्चुरा इपेकाक्वानी	८ बूंद
एक्वा मेन्था पिपरेटी	१ औंस

ब्रांकाइटिस (Bronchitis) में उपयोगी है ।

(३) टिंक्चुरा ओपियाइ कम्फोरेटा Tinct. Opii Camph.	२ ड्राम
ऑक्सिमेल सिल्ली Oxymel Scill.	२ ड्राम
सिरप टोलू Syr. Tolu.	१ औंस

सबको परस्पर अवलेह की तरह मिलाकर रखलें । गले के खराश से आने वाले शुष्क कास (सूखी खाँसी) में १ चम्मच दिन में कई बार चटावें ।

(४) टिंक्चुरा सिल्ली	१० बूंद
स्पिरिट जुनिपर Sp. Juniper	८ बूंद
स्पिरिट ईथर नाइट्रोसाई Sp. Aether Nitros.	२० बूंद
सिरपस ऑरन्शाइ Syr. Aurant.	१ ड्राम
इन्फ्युजन बुकु रिसेन्स Inf. Buchu Rec.	१ औंस

चिरकालीन वृक्कशोफ (Chronic Nephritis) में उपयोगी है ।

सिल्ला के व्यावसायिक योगः—

(१) एनासारसिन Anasarcin । इसकी टॅबलेट्स आती है । इसमें स्क्विल्ल के सक्रिय ग्लाइकोसाइड्स होते हैं । हृद्विकारजन्य जलोदर (Cardiac Dropsy) में उपयोगी है ।

(२) सिलर्लोरेन Scillaren (Sandoz)—(१) टॅबलेट्स ०·८ मिलिग्राम के। (२) द्रव (Solution)—प्रत्येक सी० सी० में ०·८ मिलिग्राम। (३) ०·५ मिलिग्राम के एम्पूल्स। मात्रा—(१) टिकिया—१ से २ दिन में ३ बार; द्रव (सॉल्यूशन) २० से ३० बूंद प्रतिदिन ३ बार; इन्जेक्शन—½ से १ सी० सी० शिरागत (Intravenously)।

(३) अर्जिनिन (Urginin)—(१) ०·५ मिलिग्राम टॅबलेट्स तथा (२) १ मिलिग्राम एम्पूल्स। टिकिया मुखद्वारा (Orally) तथा एम्पूल्स शिरागत इन्जेक्शन द्वारा।

एपोसाइनम् Apocynum (नॉट्-ऑफिशल)।

Family : Apocynaceae (कुटजादि-कुल)

नाम—एपोसाइनम् Apocynum—ले०। **पर्याय**—एपोसाइनम् केनाबिनम् Apocynum Cannabinum; कनाडियन हेम्प Canadian Hemp; डॉग्स बेन Dog's Bane; अमेरिकन भांग—हिं०।

वर्णन—यह अमेरिकन भांग (Apocynum Cannabinum) की सुखाई हुई जड़ होती है। इसमें सिमेरिन नामक मधुमेय या ग्लाइकोसाइड (Glycoside) होता है, जो इस औषधि का सक्रिय तत्व होता है। जलांशन (Hydrolysis) होने पर यह सिमेरोस (Cymarose) तथा स्ट्रोफेन्थिडिन (Strophanthidin) नामक तत्वों में वियोजित होता है। मात्रा (मूल-चूर्ण)—१ से ५ ग्रेन (०·०६ से ०·३ ग्राम)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मुखद्वारा अधिक मात्रा में सेवन करने पर एपोसाइनम आमाशयान्त्रप्रदाह पैदा करता (Gastro-intestinal irritant) है, जिससे मिचली, वमन एवं अतिसार आदि उपद्रव लक्षित होते हैं।

रक्तसंवहन पर इसकी क्रिया डिजिटेलिस की भांति होती है। साथ ही डिजिटेलिस की भांति संचय की प्रवृत्ति का दोष नहीं होता। यह एक तीव्र मूत्रल (Diuretic) औषधि है, अतएव इसका प्रयोग हृच्छोफ (Cardiac dropsies) तथा यकृद्दाल्युदरजन्य जलोदर (Ascites due to cirrhosis of liver) में बहुत लाभकारी है। फुफ्फुसावरणान्तर्गत द्रवांश (Pleuritic effusion) के शोषण के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। इसी प्रभाव के कारण, अमेरिका में इसे 'वेजिटेबुल ट्रोकार Vegetable trocar भी कहते हैं। साइमेरिन का प्रयोग ½ से १ मिलिग्राम ($\frac{1}{120}$ से $\frac{1}{60}$ ग्रेन) की मात्रा में अधस्त्वक् अथवा पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त करते हैं।

(नॉन् आफिशल योग)

१—टिंक्चुरा एपोसाइनाइ Tinctura Apocyni—ले०; टिंक्चर ऑव एपोसाइनम्—अं०। मात्रा—५ से १० मिनम् (०·३ से ०·६ मि० लि०)।

एपोसाइनम् के नुस्खे :—

पोटासियम् एसिटास	१५ ग्रेन
टिंक्चर एपोसाइनम्	१० बूंद
एक्स्ट्रॅक्ट पुनर्नवा लिक्विड	२० बूंद

शर्बत नारंग	१ ड्राम
इन्फ्युजन बुकु रिसेन्स	१ फ्लुइड औंस

सब मिलाकर एक मात्रा। सर्वांगशोफ (General anasarca) में उपयोगी है।

(नॉट- ऑफिशल)

अर्जुन Arjuna

Family : Combretaceae (हरीतक्यादि-कुल)

प्राप्ति-साधन—यह अर्जुन वृक्ष (टर्मिनेलिआ अर्जुन Terminalia arjuna, W. & A.) नामक वृक्ष का सुखाया हुआ काण्ड-त्वक् (Bark) होता है।

नाम—अर्जुन, कोह, कौह—हिं०; अर्जुन, पार्थ, ककुभ—सं०; जुमरा—पं०; अर्जुन सादड़ा—म०।

वक्तव्य—अर्जुन आयुर्वेद की एक प्रसिद्ध हृद्य (Cardiac tonic) औषधि है।

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय की तराई से लेकर कुमारी अन्तरीप तक समस्त भारतवर्ष, लंका आदि।

वर्णन—अर्जुन के पतझड़ करने वाले मझोले कद के वृक्ष होते हैं, जिसकी शाखायें ऊपर न जाकर पार्श्वों में फैलती हैं। इसका काण्ड चिक्कण होता है। बाहरी छिलका पतला गुलाबी लिए खाकस्तरी रंग (Pinkish-grey) अथवा श्वेताभ (Whitish) वर्ण का होता है, जो कागज की भांति पतले-पतले पर्तों में छूटता है। पुष्प पीताभ वर्ण के होते हैं, जो शाखाओं पर ऊर्ध्वमुख मञ्जरियों (Erect panicles) में निकलते हैं। फल रूपरेखा में कमरख की तरह होते हैं, जो लगभग १ इंच या अधिक लम्बे, अंडाकार अथवा आयताकार (Oblong) तथा ५ पक्षों (Wings) से युक्त होते हैं। छाल (Bark)—बाज़ार में अर्जुन की छाल के चपटे या वक्र (Curved) टुकड़े मिलते हैं, जो लगभग ६ इंच लम्बे, ४ इंच चौड़े तथा ०'३–१ सेंटीमीटर मोटे (अथवा इससे न्यूनाधिक) होते हैं। बाह्यतः यह खाकस्तरी (Grey) रंग के एवं चिक्कण तथा अन्तस्तल हल्के खाकस्तरी रंग का तथा सूक्ष्म धारीदार (Finely Striated) होता है। तोड़ने पर छाल खट-से टूटती (Short Fracture) है और टूटे हुए टुकड़ों में त्वचा का अभ्यन्तर गुलाबी भाग दीखने लगता है। स्वाद में छाल कषैली (Astringent) होती है।

रासायनिक संघटन—छाल में विश्लेषण द्वारा निम्नघटक उपलब्ध हुए हैं—एक रंग हीन मणिभीयतत्व जिसे अर्जुनीन (Arjunine) कहते हैं तथा (२) एक लेक्टोन (३) अर्जुनेटीन (Arjunetine, $C_{11}H_{18}O_{4}$), (४) टैनिन (१५'५%), (५) जलविलेय केल्सियम् लवण (२५%) तथा रंजकद्रव्य (Colournig matter)।

योग (Preparations)।

१—डिकोक्टम् अर्जुनी Decoctum Arjunae (ec. Arjun.) I. P. C.—ले०; डिकॉक्शन ऑव अर्जुन Decoction of arjuna—अं०; अर्जुन क्वाथ—सं०। निर्माण-विधि—अर्जुन छाल का जवकुट चूर्ण ४ औंस, परिस्रुत जल ४० औंस। छाल को जल में डालकर उबालें जब आधा अवशिष्ट रह जाय उतारकर छान लें। आवश्यकतानुसार इसमें परिस्रुत जल मिलाकर अभीष्ट परिमाण प्राप्त कर लें। मात्रा—½–१ फ्लुइड औंस।

२—एक्स्ट्रैक्टम् अर्जुनी लिक्विडम् Extractum Arjunae Liquidum (Ext. Arjun. Liq.) I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव अर्जुन Liquid Extract of Arjuna—अं०, अर्जुन का प्रवाही घनसत्व-सं० । मात्रा—३० से ६० मिनम् (बूंद) या २ से ४ मि० लि० ।

अर्जुन के आयुर्वेदीय योग—

१—अर्जुनत्वक्-चूर्ण—अर्जुन की छाल का कपड़ छान चूर्ण । मात्रा—१ से ३ माशा ।

२—ककुभादि चूर्ण (भै० र०)—मात्रा—१ माशा ।

३—अर्जुनघृत । मात्रा—६ माशा से १ तो० ।

४—अर्जुनारिष्ट । मात्रा—१–२ तो० बराबर जल मिलाकर भोजनोत्तर दिन में २ बार ।

२—हृदयावसादक औषधियाँ :—

एकोनाइटम् (एकोनाइट), B. P. C.

(वत्सनाभ)

Family Ranunculaceae (वत्सनाभ-कुल) ।

नाम—सिंगिया, सिंगिया विष, विष, मीठा ज़हर—हिं०; बीश, ख़ानिकुज्ज़ीब, ख़ानिकुन्नमिर—अ०, फा०; अकूनीतून—यूनानी; रेडिक्स एकोनाइटी Radix Aconiti—ले०; एकोनाइटम् Aconitum—B. P.; एकोनाइट रूट Aconite Root, एकोनाइट, Aconite मॉन्क्सहुड Monk's hood, वूल्फ्स बेन Wolf's bane—अं० ।

प्राप्ति-साधन—एकोनाइट, एकोनाइटम् नेपिलस् Aconitum napellus Linn. नामक पौधे की कंदाकार ग्रंथिल जड़ (Tuberons root) होता है ।

वक्तव्य—उपर्युक्त नाम इसके पौधे के भी हैं । 'एकोनाइटम् Aconitum' शब्द यूनानी (Greek) से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है "Without Soil बिनामिट्टी के" । चूंकि वत्सनाभ का पौधा ऊँचे-ऊँचे पहाड़ों की चट्टानों पर उगता है ।) अतएव ऐसा नाम करण किया गया है । लेटिन 'एकोनाइटम्, Aconitum' एवं अंगरेजी 'एकोनाइट Aconite इसी यूनानी 'अकूनीतून' से व्युत्पन्न है । उक्त पौधे का विशिष्ट नाम 'napellus' लेटिन से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है "Little turnip अर्थात् छोटा शलगम" । चूंकि इसके कन्द का आकार छोटे शलगम की तरह होता है, अतएव ऐसा नामकरण किया गया है । चूंकि इसके पुष्प का आकार पुराने जमाने के इसाई-पादरी (Monk) की टोपी के आकार का होता है, अतएव इसको अङ्गरेजी में 'मॉन्क्स हुड Monk's hood' कहते हैं । पहले इस औषधि को ज़हरीले प्रभाव का उपयोग 'भेड़िया' 'चीता' आदि जंगली जानवरों को मारने के लिए किया जाता था अतएव इसको अरबी में 'ख़ानिकुज्ज़ीब तथा ख़ानिकुन्नमिर' तथा अंगरेजी में 'Wolf's bane' कहते हैं ।

उत्पत्ति-स्थान—यह औषधि भारतवर्ष में नहीं पाई जाती 'यूरोप' उत्तरी अमरीका तथा एशिया के पहाड़ी प्रान्तों में उपयुक्त ऊँचाई पर इसके स्वयंजात पौधे (Wild plants) पाये जाते हैं । इङ्गलैंड में इसकी खेती होती है । अतएव व्यावसायिक प्रयोजन के लिए एकोनाइट रूट का संग्रह यूरोप, अमरीका में जंगली पौधों से एवं इङ्गलैंड में लगाए हुए पौधों से किया जाता है । उक्त जड़ों को साफ करके, शुष्क कर लिया जाता है, जो औषध्यर्थ प्रयुक्त होती हैं ।

भारतीय-प्रतिनिधि द्रव्य (Indian Substitute)–एकोनाइटम् नेपिलस भारतवर्ष में नहीं पाया जाता, यद्यपि एकोनाइट की अनेक उपजातियाँ हिमालय प्रदेश में पाई जाती हैं। **एकोनाइटम् चेस्मेन्थम् Aconitum chasmanthum Stapf ex Holmes.** यूरोपीय एकोनाइट का भारतीय भेद एवं उत्तम प्रतिनिधि द्रव्य (Substitute) है।

वक्तव्य—आयुर्वेद में प्रयुक्त होने वाला वत्सनाभ एकोनाइटम् फेरोक्स Aconitum ferox नामक उपजाति है, जो भारतवर्ष में हिमालय प्रदेश में प्रचुरता से पाई जाती है।

वर्णन—एकोनाइट के बहु-वर्षायु छोटे-छोटे पौधे (Perennial herbs) होते हैं, जिनमें कन्दाकार जड़ें (Tuberous roots) लगती हैं। हर अगले वर्ष में पूर्ववर्ती जड़ का खाद्यपदार्थ पौधे की वृद्धि में व्यय हो जाता है, तथा उसके मूलस्तम्भ (Root stock) की
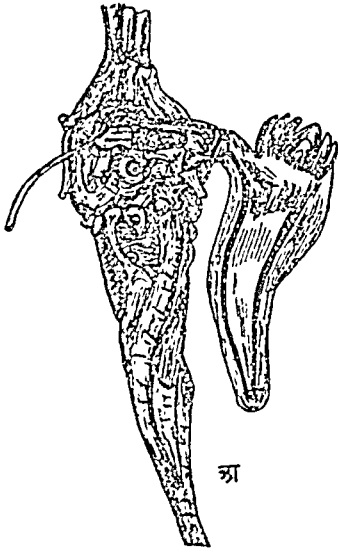
चित्र २५। अ—इसमें पुरानी एवं नई दोनों जड़ें दिखलाई गई हैं। (Parent and daughter roots)।

पार्श्ववर्ती कलिका (Lateral bud) से नया पौधा तैयार होकर उसमें नई जड़ (daughter root) पैदा होती है। जंगली पौधों में इस प्रकार की प्रायः एक किन्तु लगाये हुए पौधे में कई जड़ें पाई जाती हैं। एकोनाइट के जंगली पौधे प्रायः १॥ फुट से २ फुट तक ऊँचे होते हैं। लगाये हुए पौधे अपेक्षाकृत अधिक (३–४॥ फुट) ऊँचे होते हैं। काण्ड के अधः भाग की पत्तियाँ प्रायः सवृन्त (Petiolate) तथा ऊपरी अवृन्त या विनाल (Sessile) होती हैं।
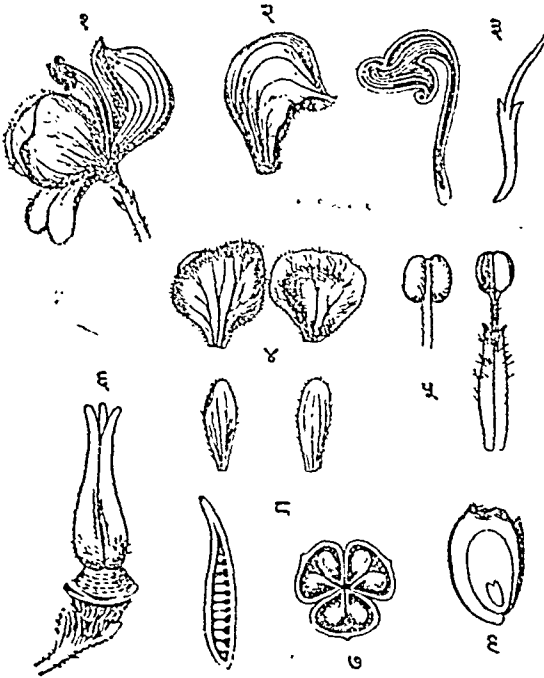
चित्र २६—एकोनाइट के पुष्प के विभिन्न भाग।

(१) पुष्प

(२) ३) आभ्यन्तरकोष

(४) वाह्यकोष (पुहपम)

(५) लिंगसूत्र

(६) गर्भाशय

(७) गर्भाशय का अनुप्रस्थ विच्छेद

(८) फल

(९) बीज

जो पुष्पागम के पूर्व पौधे के सिरे पर छत्रक-सा (Tuft) बनती हैं। ये पत्तियाँ त्रिपादोत्तर–पाणिवत् खण्डित (Palmatisect) होती हैं, जिनमें ३–७ तक खण्ड होते हैं। प्रत्येक खण्ड पुनः अर्धानुत्तर पल्लवत् खण्डित (Pinnatifid) होता है। इसका पुष्प-व्यूह सवृन्त-काण्डज (Receme) होता है, जिस पर गाढ़े बैंगनी रंग के पुष्प आते हैं। ये पुष्प प्रायः मई मास के अन्त में निकलते हैं। पुष्पों में ५ अन्तर्दलायित (Petaloid) पुटपत्र (Sepals) होते हैं, जिसमें पश्चिमवर्त्ती सबसे बड़ा तथा टोप (Hood) की तरह होता है। शेष इसी के नीचे होते हैं। फल, ३ से ५ तक भग्नैकसंधिक फलों का संहत (Etaerio of three to five follicles) होते हैं। मूल (Tubers)—एकोनाइट की जड़ें आकार में प्रायः अभिशंक्वाकार (Obconical) होती हैं, जिससे ऊपरीसिरा (Crown) अधिक चौड़ा और नीचे की ओर उत्तरोत्तर कम चौड़ी होती जाती हैं। ये जड़ें प्रायः ४ से १० सेंटीमीटर लम्बी तथा ऊपरी सिरे (Crown) पर व्यास में १ से ३ सेंटीमीटर होती हैं। बाहर से ये गाढ़े भूरे रंग की होती हैं। पूर्ववर्षीय जड़ (Parent root) पश्चाद्वर्षीय जड़ (Daughter root) की अपेक्षा अधिक सिकुड़ा हुआ एवं झुर्रीदार (Shrivelled) होता है। इन जड़ों से अनेक छोटी-छोटी मूल-शाखायें (Root-lets) निकली होती हैं। किन्तु संग्रह के बाद ही इन छोटी जड़ों को प्रायः काट दिया जाता है, जिनके चिन्ह एकोनाइट की जड़ों पर मिलता है। डॉटर-रूट के शीर्ष पर अग्र्य कलिकाएँ (Apical buds) होती हैं। इन जड़ों से एक विशिष्ट हल्कीगंध (Slight odour) आती है तथा स्वाद में प्रथम मधुर किन्तु बाद में चुनचुनाहट (Tingling) के साथ स्वाप (Numbness) की अनुभूति होती है।

(ऑफिशल इन इन्डियन फॉर्मोकोपिआ I. P. इन्डियन फॉर्मोकोपिअल लिस्ट I, P. L. तथा इन्डियन फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स I. P. C.)

श्रृंगोविष (एकोनाइटम् चेस्मेन्थम्) I. P.

नाम—मोहरी Mohri—काश्मीर; श्माममोहरी. मोहरी—पं०; श्रृंगीविष—सं० एकोनाइटम् चेस्मेन्थम् Aconitum chasmanthum Stapf ex Holmes—ले०।

उत्पत्ति-स्थान—पश्चिमी हिमालय प्रदेश में चित्राल एवं हज़ारा से लेकर काश्मीर तक ७,०००–१२,००० फुट की ऊँचाई पर इसके स्वयंजात (जंगली) पौधे मिलते हैं।

वक्तव्य—श्रृंगी विष का उल्लेख आयुर्वेद के प्राचीन ग्रंथों में भी मिलता है। वत्सनाभ का प्रयोग आयुर्वेद में प्राचीन कल से होता आ रहा है।

वर्णन—श्रृंगी विष के द्विवर्षायु छोटे-छोटे पौधे (Biennial herbs) होते हैं। इसकी जड़ें कन्दाकार (Tuberous) किन्तु युग्म (एक साथ दो-दो) रूप से होती हैं। सम्भवतः इसी से इसको श्रृंगी विष कहते हैं। इसकी जड़ें एकोनाइटम् नेपिलस् की अपेक्षा छोटी, रंग में बाहर से प्रायः काली तथा तोड़ने में कम कड़ी (Fracture lighter) होती हैं। प्रथम वर्ष की जड़ (Parent root) द्वितीय वर्ष की जड़ (Daughter root) की अपेक्षा सिकुड़ी हुई (Shrunken) तथा छोटी होती है। कभी-कभी इसमें सूत्राकार शाखायें (Rootlets) लगी होती हैं अथवा इनके टूटने पर, उभड़े हुए चिन्ह (Protruded scars) पाये जाते हैं। द्वितीय वर्ष की जड़ों के शीर्ष (Apex) पर टूटे हुए काण्ड का अवशेष एवं टूटी हुई पत्तियों के आधार भागों का चक्र (Whorl of leaf bases) पाया जाता है। यह जड़ २·५ सेन्टी मीटर से ४·५ सेन्टी मीटर तक लम्बी तथा १·२ से १·८ सेन्टी मीटर चौड़ी होती हैं। बाहर से भूरी का काली (Brown to blackish) तथा झुर्रीदार (Wrinkled) होती हैं।

रासायनिक-संघटन—एकोनाइट में औसत रूप से ०·५ प्रतिशत इसके क्षाराभ (अल्कलायड्स) पाये जाते हैं। किन्तु उक्त प्रतिशत मात्रा उत्पत्ति-स्थान तथा संग्रह-काल के भेद से बदलती रहती है और इस प्रकार भिन्न २ नमूनों में यह मात्रा ०·२ से १·५ प्रतिशत हो सकती है।

(१) एकोनाइटीन (Aconitine, $C_{34} H_{47} O_{11} N$)—एनोनाइट का यह प्रधान सक्रिय क्षारोद (Alkaloid) है। रासायनिक दृष्टि से यह एसेटिलबेंजोइलएकोनीन (Acetylbenzoyl aconine) होता है। यह तीव्र विषाक्त प्रभावयुक्त होता है तथा ईथर में सद्यः विलेय (Readily Soluble) होता है। (२) पिक्रएकोनाइटीन Picraconitine (Benzoylaconine) यह एकोनाइटीन की अपेक्षा कम विषाक्त, इथर में अविलेय तथा विरूपिक स्वरूपका (Amorphous) होता है। (३) एकोनीन (Aconine)—यह भी ईथर में अविलेय होता है। इसके अतिरिक्त इसमें (४) स्टार्च तथा एकोनाइटिक एसिड (Aconitic acid) भी होता है।

गुण-कर्म।

वाह्य—क्लोरोफार्म या वसामय पदार्थों के साथ इसका प्रयोग करने से सुगमतापूर्वक इसका शोषण होता है। एकोनाइट पहले तो संज्ञावह नाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करता है, किंतु तदनु इनको निष्क्रिय करता है (Paralyses)। संवेदनिक नाड्यग्रों के निष्क्रिय होने से उस स्थान पर चुनचुनाहट, सुन्नता तथा संज्ञाहर (Anaesthesia) प्रभाव लक्षित होते हैं। श्लैष्मिक कलाओं से क्षिप्रतापूर्वक इसका शोषण होता है।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र प्रणाली—जिह्वा पर लगाने पर भी त्वचा की ही भांति चुनचुनाहट (Tingling), स्वाप (Numbness) तथा संज्ञाहर प्रभाव करता तदनु रसनेन्द्रिय के नाड्यग्रों पर क्षोभक प्रभाव होने के कारण प्रत्याक्षिप्त रूपेण लालाजनक भी होता है। इसके अतिरिक्त किंचित् उत्क्लेश (Nausea) भी होता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने से यह आमाशयान्त्र प्रदाह भी करता है, जिसके परिणाम स्वरूप उत्क्लेश, वमन तथा अतिसार आदि लक्षण भी पैदा हो जाते हैं।

हृदय तथा रक्त संवहन—अल्प मात्रा में यह हृदय की गति को मन्द कर देता है। विस्फारण काल (Diastole) बढ़ जाता है तथा संकोच (Systole) भी निर्बलतापूर्वक होने लगता है। नाड़ी (Pulse) दुर्बल एवं मृदु पड़ जाती है। यह हृन्मन्दता प्राणदा नाड़ी केन्द्र की उत्तेजना के कारण होती है, अतएव यदि प्राणदा नाड़ी का विच्छेद कर दिया जाय तो नहीं लक्षित होती। हृदय संकोच दुर्बलतापूर्वक होने से उत्क्षिप्त रक्त की राशि भी कम हो जाती है। अतएव रक्तभार (Blood pressure) भी गिर जाता है। अन्ततः वाहिनीप्रेरक केन्द्राघात भी हो जाता है। इस औषधि का प्रयोग करते समय इसके हृदयावसादक प्रभाव को ध्यान में रखना चाहिए।

श्वसन—अल्प मात्रा में प्रयुक्त होने पर प्रथम तो यह श्वसनकेन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे श्वसन गम्भीर हो जाता तथा इसकी संख्या में भी वृद्धि हो जाती है; किन्तु बाद ही में अवसादक प्रभाव के लक्षण, यथा श्वसन का मन्द, गम्भीर एवं, अनियमित तथा कष्टयुक्त (Laboured) होना आदि, प्रगट होते हैं। श्वसन केन्द्र पर घातक प्रभाव होने के कारण श्वसनाघात (Respiratory failure) होने से मृत्यु प्रायः श्वासावरोध(Asphyxia) के कारण होती है।

तापक्रम—(Temperature)—ज्वरों में इसका प्रयोग करने से तापक्रम में कमी होती है। वास्तव में यह क्रिया किस प्रकार होती है, यह तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु स्वेदप्रजनन (Diaphoresis) इसका एक प्रधान कारण हो सकता है।

नाड़ी संस्थान—स्थानिक अथवा मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर वत्सनाभ (एकोनाइट) संज्ञावह नाड्यग्रों पर प्रथम तो उत्तेजक किन्तु अन्ततः अवसादक प्रभाव करता है। चेष्टावह नाड्यग्रों पर भी इसी प्रकार का प्रभाव लक्षित होता है। विषाक्तता की दशा में ताप संवेदना (Thermic sensation) से वह नाड़ियाँ भी प्रभावित हो जाती हैं। प्राणदा, वाहिनी संकोचक (Vaso-constrictor) तथा श्वसन केन्द्रों पर भी यह प्रथम उत्तेजक तथा तदनु अवसादक प्रभाव करता है। मस्तिष्क पर कोई विशेष प्रभाव नहीं होता। नेत्रकनीनिका प्रथम संकुचित, किन्तु तदनु विस्फारित होती है। अत्यधिक मात्रा में यह सुषुम्नास्थित चेष्टा केन्द्रों (Motor centres) को प्रथम उत्तेजित, तथा तदनु अवसादित करता है। विषाक्तता की अवस्था में जो आक्षेप (Convulsions) लक्षित होते हैं, उनका प्रधान कारण श्वासावरोध होता है।

त्वचा—त्वचागत रक्तवाहिनियों के विस्फार होने के कारण यह प्रस्वेदजनक प्रभाव करता है।

उत्सर्ग—यह प्रधानतः मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। कभी-कभी अंशतः इसके सक्रिय सत्व, लालास्राव, आमाशयिक रस, पित्त तथा स्वेद में भी पाये जाते हैं।

तीव्र विषाक्त प्रभाव—विषाक्त मात्रा सेवन करने के थोड़ी देर बाद ही मुख एवं कण्ठ में उग्र स्वरूप का चुनचुनाहट तथा ज्वलन का अनुभव होता है, जिससे सुन्नता भी उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त निम्न लक्षण प्रगट होते हैं—उदर प्रदेश में तीव्र ज्वलन, अत्यधिक लालास्राव, वमन तथा अतिसार, अत्यधिक प्रस्वेद एवं त्वचा का शीतल एवं चिपचिपा हो जाना, त्वचा में चुनचुनाहट तथा चींटी के रेंगने की सी अनुभूति (Formication) एवं स्वापोत्पत्ति का होना, नाड़ी का दुर्बल एवं अनियमित होना, नेत्र कनीनिका का प्रथम संकुचित तथा बाद में विस्फारित होना तथा नेत्र का घूरने की स्थिति में स्थिर होना (Fixed staring eyes)।

आमयिक प्रयोग

वाह्य प्रयोग—एकोनाइट का वाह्य प्रयोग मर्दनार्थ लिनिमेंट के रूप में नाड़ीशूल (Neuralgia), गृध्रसी (Sciatica) पेशीगत आमवात (Muscular rheumatism) तथा संधिशोथ आदि में किया जाता है। क्लोरोफॉर्म के साथ इसका योग करने से इसकी क्रियाशीलता बढ़ जाती है, क्योंकि क्लोरोफॉर्म के साथ इसका शोषण सरलतापूर्वक होता है। अतएव इस कार्य के लिए इसका प्रयोग लिनिमेण्ट ए० बी० सी० (A. B. C.) के रूप में होता है।

आभ्यन्तर प्रयोग—एकोनाइट का प्रयोग कभी-कभी अन्य औषधियों के साथ-साथ ज्वरावस्था में किया जाता है। विशेषतः शोफोपद्रुत ज्वर में यह अधिक उपयुक्त होता है।

एकोनाइट के कतिपय उपयोगी नुस्खे :—

(१) टिंक्चुरा एकोनाइटाइ	१ बूंद
टिंक्चुरा डिजिटेलिस	२ बूंद
टिंक्चुरा बेलाडोनी	२ बूंद
इन्फ्युजन जेन्शियानी कम्पोजिटा	४ ड्राम तक

ऐसी एक-एक मात्रा प्रत्येक चौथे घंटे पर दें। वातज हृत्स्पन्दन (Nervous Palpitation) में उपयोगी होता है।

(२) टिंक्चुरा एकोनाइटाइ	२ बूंद
स्प्रिटस क्लोरोफॉर्माइ	५ बूंद
सेलिसीन	१ ग्रेन
एक्वा कैम्फोरी	½ औंस तक

ऐसी एक मात्रा २–२ घंटे के अन्तर से दिन में ४ बार प्रयुक्त करें। साधारण प्रतिश्याय की प्रारम्भिक अवस्था में इसका प्रयोग उपयोगी होता है।

(३) क्लोरोफॉर्माइ एकोनाइटाइ — १ औंस
क्लोरोफॉर्मम् बेलाडोनी — १ औंस
लिनिमेंटम् कैम्फोरी — १ औंस

यह मर्दन के लिए एक उत्तम योग है। वातजशूल तथा संधिशूल में यह बहुत उपयोगी होता है।

(४) टिंक्चुरा एकोनाइटाइ — १ बूंद
लाइकर अमोनियासाइट्रेटिस — २ ड्राम
सोडियाइ साइट्रेटिस — २ ग्रेन
स्प्रिटस् अमोनिया एरोमेटिकस् — १० बून्द
एका ऑरेन्शाइ क्लोरिस — १ औंस तक

ऐसी एक-एक मात्रा औषधि प्रत्येक तीसरे घंटे पर प्रयुक्त करें। तीव्र कण्ठशालूक (Acute tonsillitis) में उपयोगी है।

योग (Preparations) :—

(अ) इन्डियन फार्माकोपिआ (I. P.) तथा इण्डियन फर्माकोपियल लिस्ट (I. P. L.) के योग :—

१—लिनिमेंटम् एकोनाइटी Linimentum Aconiti (Lin. Aconit.)—ले०; लिनिमेंट ऑव एकोनाइट Liniment of Aconite—अं० ।

२—टिंक्चुरा एकोनाइटी Tinctura Aconiti (Tinct. Aconit.)—ले०; टिंक्चर ऑव एकोनाइट Tincture of Aconite—अं०; शृंगीविष निष्कर्ष—सं०। इसके प्रत्येक मिलिलिटर (ml.) या सी० सी० (१५ बूंद) में ०·१४० मिलिग्राम से लेकर ०·१६० मिलिग्राम (mg.) तक एकोनाइटीन (Aconitine : $C_{34}H_{47}O_{11}N$.) की शक्ति होती है। मात्रा (I. P. Dose)—२ से ५ मिनम् (०·१५ से ०·३ मिलिलिटर)।

(ब) इण्डियन फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स (Indian Pharmaceutical Codex : I. P. C.) के योगः—

(३) टिंक्चुरा एकोनाइटी फोर्टिस Tinctura Aconiti Fortis (Tinct. Aconit. Fort.)—ले०; स्ट्रांग टिंक्चर ऑव एकोनाइट Strong Tincture of Aconite—अं०। पर्याय—फ्लेमिंग्स टिंक्चर ऑव एकोनाइट Flemings Tincture of Aconite। तीव्रबल शृंगीविष निष्कर्ष—सं०। इसमें ०·१९ से ०·२१ प्रतिशत (v/v) एकोनीटीन होता है।

(४) क्लोरोफॉर्मम् एकोनाइटी Chloroformum Aconiti (Chlorof. Aconit.)—ले०; क्लोरोफॉर्म ऑव एकोनाइट Chloroform of Aconite—अं०।

(५) पिग्मेंटम् आयोडाइ एट एकोनाइटी Pigmentum Iod. et. Aconit (Pig. Iod. et. Aconit.)—ले०; आयोडीन एण्ड एकोनाइट पेंट Iodine and Aconite Paint—अं०।

निर्माण-विधि—आयोडीन का मन्दबल विलयन (Weak Solution of Iodine) १० औंस (fl. oz.), एकोनाइट का तीव्रबल निष्कर्ष (Strong tincture of Iodine) १० फ्लुइ औंस (fl. oz.) । दोनों को परस्पर मिलावें ।

(६) पिगमेंटम् एकोनाइटी कम्पोजिटम् Pigmentum Aconiti Compositum (Pig. Aconit. Co.)—ले०; कम्पाउण्ड एकोनाइट पेंट Compound Aconite Paint अं० । निर्माणविधि—लिनिमेंट ऑव एकोनाइट ७½ औंस, लिनिमेंट ऑव बेलाडोना ७½ औंस, क्लोरोफॉर्म २½ औंस, परिस्रुत जल (Distilled Water) २½ औंस, सबको परस्पर मिलावें ।

(७) लिनिमेंटम् एकोनाइटी, बेलाडोनी एट क्लोरोफोर्माइ Linimentum Aconiti, Belladonnāe et chloroformi, B. P. C.—पर्याय ए० बी० सी० लिनिमेंट (A. B. C. Liniment) । यह लिनिमेंट ऑव एकोनाइट लिनिमेंट ऑव बेलाडोना तथा लिनिमेंट ऑव क्लोरोफॉर्म बराबर बराबर मात्रा में मिलाकर बनाया जाता है ।

एकोनाइट के नुस्खेः—

(१) मेन्थाल ५ ग्रेन	(२½ रत्ती)
लिनिमेंट एकोनाइट	४ ड्राम
लिनिमेंट बेलाडोना	४ ड्राम

सबको परस्पर मिलाकर रख लें । जिस जगह दर्द हो वहाँ की त्वचा पर इसका लेप करें ।

(२) मेन्थाल (सत पुदीना) २ ग्रेन	(१ रत्ती)
टिंक्चर एकोनाइट	६० बूंद
टिंक्चर मिर्रह (बोल)	१४० बूंद
लाइकर आयोडीन मिटिस (Liq. Iod. Mit.)	१४० बूंद
ग्लिसरिन	१४० बूंद

सबको मिलाकर रख लें । दंतशूल या मसूढ़े के दर्द के लिए उत्तम गमपेंट (Gum Paint) है ।

क्विनिडिनी सल्फास (क्विनिडीन सल्फेट), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $(C_{20}H_{24}O_2N_2)$ 2, H_2SO4, $2H_2O$.

नाम—Quinidināe Sulphas (Quinidin. Sulph.)—ले०; Quinidine Sulphate—अं० ।

प्राप्तिसाधन—क्विनिडीन सल्फेट, सिंकोना की विभिन्न प्रजातियों के काण्डत्वक् से प्राप्त क्विनिडीन (Quinidine) नामक अल्कलायड का सल्फेट लवण होता है, जिसमें ८२% से ८७% तक क्विनिडीन ($C_{20}H_{24}O_2N_2$) होता है ।

वर्णन—इसके रंग हीन सूच्याकार-क्रिस्टल्स (needle-like crystals) होते हैं, जो स्वाद में अत्यन्त तिक्त होते हैं । प्रकाश में खुला रहने से इसका रंग विकृत हो जाता है (Darkens in colour) है । विलेयता—९० भाग जल तथा १० भाग अल्कोहल् (९०%) में घुलता है । मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से १०० मि० ग्रा०) ।

गुण-कर्म—क्विनीन की भांति विषमज्वरनाशक एवं गर्भाशयोत्तेजक प्रभाव साधारण मात्रा में क्विनीडीन में भी पाया जाता है। चिकित्सोपयोग की दृष्टि से इसका महत्त्व का कर्म है ऐच्छिक एवं हार्दिक पेशियों पर अवसादक क्रिया (depressant action on both skeletal and cardiac muscles)।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से पूर्णतः शोषित हो जाता है। सेवनोपरान्त १–३ घण्टे बाद हृदय पर इसका पूरा प्रभाव लक्षित होता है, जो न्यूनाधिक मात्रा में ७–८ घण्टे बाद तक स्थिर रहता है। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर भी यह अच्छी तरह शोषित होता है और आधे से १½ घंटे के भीतर औषधीय प्रभाव के लिए रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण हो जाता है। शोषणोपरान्त शरीर में वियोजित होकर प्रधानतः मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। केवल ५ से २०% भाग ज्यों का त्यों निकल जाता है। शरीर से इसका निस्सरण जल्दी होने से प्रभाव बनाए रखने के लिए औषधी जल्दी-जल्दी देनी पड़ती है। रक्ताधिक्यज हृदयातिपात (Congestive heart failure) की स्थिति में औषधि का निस्सरण समुचित रूप से नहीं होता, ऐसी स्थिति में किंचित् संचायी प्रवृत्ति पाई जाती है।

हृदय तथा रक्तसंवहन—हृदय एवं रक्तवह संस्थान में क्विनिडीन की क्रिया निम्न रचनाओं पर होती है:—(१) हृत्पेशी (Myocardium); (२) हृदयसम्बन्धी प्राणदा-नाड़ीशाखा (Cardiac Vagal System) तथा (३) रक्तवाहिनियाँ (Vessels)। हृत्पेशी पर अवसादक एवं संशामक प्रभाव करने के कारण हृत्पेशी की उत्तेजनशीलता (Excitability) एवं अत्यधिक संकोचन शीलता (Contractility) को कम करता है। परिणामतः इसके प्रयोग से अलिन्दसिरासम्पात् (Sino-auricular node) के अतिरिक्त अन्य स्थानों से प्रारम्भ होने वाले अनियमित संकोचों (Ectopic beats) का शमन होता है। इसके अतिरिक्त हृत्पेशी के विश्रामकाल (Refractory period) को भी विलम्बित करता है। अतएव क्विनिडीन निलय-शीघ्रता (Ventricular tachycardia) एवं अलिन्द-अराजकता (Atrial fibrillation) का शमन करता है। इसकी क्रिया से अलिन्द (Atrium), अलिन्द-निलय सम्पात (A-V-node), अलिन्द-निलय पुलिन्द (Atrio-Ventricular bundle or bunble of His) तथा निलयों के संकोच प्रचरणशीलता (Conductivity) पर संशामक प्रभाव होता है। अन्ननलिका एवं हार्दिक प्राणदानाड़ी शाखाओं पर अवसादक क्रिया (Vagolytic action) के कारण हृदयोद्वेष्ट का निवारण करता है।

रक्तवाहिनियों के अनैच्छिक पेशीसूत्रों पर क्विनीडीन की प्रत्यक्ष क्रिया होती है, जिसके परिणाम स्वरूप परिसरीय रक्तवाहिनियों का विस्फार (Peripheral vasodilatation) होता है; परिणामतः रक्तभार को कम करता है।

आमयिक प्रयोग—क्विनिडीन का प्रयोग अनेक हार्दिक रोगों में बहुत उपयोगी पाया जाता है, यथा अलिन्द-अराजकता (Auricular fibrillation), प्रावेगिक (अलिन्द-शीघ्रता) शीघ्रहृदयता (Paroxysmal tachycardia) तथा प्रावेगिक निलय-

शीघ्रता (Paroxysmal Ventricular tachycardia) आदि। इसके अतिरिक्त अलिन्दों एवं निलयों की अतालवद्धता (Arrhythmias), अलिन्द-विस्फुरण (Auricular flutter), अतिरिक्त हृदय संकोच (Ectopic beats) आदि हृदय की अन्य गुण-कर्मीय विकृतियों में भी बहुत उपयोगी है। हृदय सम्बन्धी शस्त्रकर्म (Cardiac Surgery) एवं साइक्लोप्रोपेन द्वारा संज्ञाहरण के समय निलयों की अतालवद्धता के उपद्रव के निवारण के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी भयंकर हिक्का अथवा प्रवृद्ध मातृका प्रत्याक्षित अवस्था (Hyperactive carotid Sinus reflexes) में सम्भावी मूर्च्छा एवं हार्दिक क्रियाघात के निवारण के लिए भी इसको दिया जाता है। हृदय-चित्रण की विकृति (Wolff-Parkinson-white Syndrome) के परीक्षण के लिए भी यह प्रयुक्त होता है।

प्रयोग-विधि—क्विनिडीन का प्रयोग मुखद्वारा पाउडर (चूर्ण) के रूप में अथवा जिलेटिन की डिब्बियों या कैचेट्स (Cachets) या कैप्स्यूल्स (Capsules) में रखकर किया (निगला) जाता है। किन्हीं-किन्हीं रोगियों को औषधि सह्य नहीं होती, अतएव पहले अल्प-मात्रा (३ ग्रेन) के प्रारम्भकर वैयक्तिकप्रकृति (Idiosyncrasy) का परीक्षण कर लेना चाहिए। यदि परीक्षण मात्रा सेवन करने के उपरान्त २–३ घण्टे तक कोई असह्यता सूचक लक्षण प्रगट न हो, तो ६ ग्रेन (०·४ ग्राम) की मात्रा ३–३ या ४–४ घंटे पर दें, जब तक कि अभीष्ट प्रभाव न लक्षित हो। इस प्रकार अधिकतम दैनिक मात्रा ३० से ४५ ग्रेन (२ से ३ ग्राम तक दी जा सकती है। औषधि का सेवन मुख द्वारा किया जाता है। अलिन्दों की फड़फड़ाहट एवं अराजकता (Atrial flutter and fibrillation) में यदि साथ ही निलयों की गति अत्यन्त (Ventricular rate) अत्यन्त तीव्र हो, तो क्विनीडीन के साथ-साथ डिजिटेलिस का भी प्रयोग होना चाहिए। अथवा पहले डिजिटेलिस का कोर्स देकर तब क्विनीडीन का चिकित्साक्रम प्रारम्भ करना चाहिए। इस प्रकार आवश्यकतानुसार औषधि-क्रम ३–४ दिन तक चलाया जा सकता है। किन्तु प्रत्येक मात्रा के बाद नाड़ी की गति की परीक्षा करते रहना चाहिए और यह संख्या सामान्य या नियमित हो जाने पर औषधि बन्द कर देनी चाहिए। इसी प्रकार उक्त चिकित्साक्रम में विपाक्तता के लक्षण प्रगट होने पर भी चिकित्सा क्रम बन्द कर देना चाहिए। अतः नाड़ी गति में अतितीव्रता (प्रति मिनट संख्या १४० से ऊपर हो)। त्वचा के नीचे जगह-जगह रक्तस्राव के चित्तों (Petechiae) का दिखाई देना, हृदय की गति में अतालवद्धता (Cardiae arrythmia) होना आदि लक्षणों का प्रगट होना औषधि बन्द करने के लिए सूचक चिन्ह हैं। आत्ययिक अवस्थाओं (Emergencies) में क्विनीडीन ग्लूकोनेट (६ से १२ ग्रेन) पेशीगत इंजेक्शन द्वारा अथवा क्विनीडीन ग्लूकोनेट या लेक्टेट १२ ग्रेन मात्रा लेकर १०% समबल लवण जल (Normal saline) सोल्यूशन के रूप में शिरागत इंजेक्शन द्वारा (धीरे-धीरे) प्रयुक्त कर सकता है।

सावधानी—कभी-कभी इसके प्रयोग से क्विनीन की भांति सिंकोनिज्म के लक्षण अथवा हृदय सम्बन्धी भयानक विकृतियां या उपद्रव प्रकट होते हैं। अतएव इस चिकित्साक्रम में उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

प्रयोग-निषेध (Contra-indications)—निम्न प्रकार की अवस्थाओं एवं रोगियों में क्विनीडन का प्रयोग निषिद्ध है:—(१) क्विनीडीन के प्रति वैयक्तिक-असह्यता (Idiosyncrasy) होने पर; (२) दुर्बल एवं विकृत हृदय (Damaged heart), वाले रोगियों में; (३) औपसर्गिक हृदन्त शोथ (Infective endocarditis), हृदयगत्यावरोध (Heart block) एवं जिनमें अन्तःशल्यता (Embolism) का पूर्व इतिवृत्त मिलता हो ।

प्रोकेनेमाइडाइ हाइड्रोक्लोराइडम् Procainamidi Hydrochloridum (Procainamid. Hydrochlor.) B: P. C.—ले०; प्राकेनेमाइड हाइड्रोक्लोराइड (Procainamide Hydrochloride)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{13}H_{22}ON_3Cl$.

पर्याय—प्रोनेस्टिल हाइड्रोक्लोराइड (Pronestyl Hydrochloride) ।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह P-amino-N-(2-diethylaminoethyl) benzamide hydrochloride होता है, जो N N-diethylethylene-diamine एवं P-nitrobenzoyl chloride की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त नाइट्रो-कम्पाउण्ड का प्रह्रासन (reducing) करने से प्राप्त होता है ।

वर्णन—सफेद या पीताभ-सफेद वर्ण का गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो जल (०·२५ भाग) एवं अल्कोहल् (२ भाग) में घुल जाता है । ईथर एवं क्लोरोफॉर्म में अपेक्षाकृत कम घुलता है । मात्रा—८ से १५ ग्रेन (०·५ से १ ग्राम) प्रतिदिन मुखद्वारा; १½ से ८ ग्रेन (०·१ से ०·५ ग्राम) सिरागत इंजेक्शन द्वारा (इन्जेक्शन बहुत धीरे-धीरे देना चाहिए) ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से तथा इंजेक्शन के स्थल से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है । इसका निस्सरण भी ज्यों का त्यों उसी रूप में तथा प्रधानतः मूत्र के साथ होता है । शिरागतमार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर यह रक्तभार (Blood Pressure) को कम करता है । उक्त क्रिया सम्भवतः परिसरीय रक्तवाहिनियों के विस्फारण (Peripheral vasodilatation) के कारण होती है । रक्तभार के (Hypertensive) रोगियों में यह क्रिया और भी स्पष्टतया लाक्षित होती है ।

चिकित्सा में प्रोकेनेमाइड का व्यवहार विशेषतः संज्ञाहर औषधियों के कुपरिणाम स्वरूप उत्पन्न अनियमित एवं सावेग शीघ्रहृदयता (Ectopic and paroxysmal tachycardia) में तथा उरोगुहागत शस्त्रकर्म (Thoracic and Cardiac operations) में हृदय की गति में अतालबद्धता (Arrhythmia) न होने पावे, इसके निवारण के लिए शस्त्रकर्म के पूर्व इसका इन्जेक्शन कर दिया जाता है । सामान्य अवस्थाओं में प्रोकेनेमाइड का सेवन मुखद्वारा किया जाता है । ८ से १५ ग्रेन मात्रा ३–३ घंटे के अन्तर से दी जाती है, और हृदय की अतालबद्धता (Arrhythmia) के शमन हो जाने पर औषधि बन्द कर दी जाती है । उग्र-अवस्था में उपर्युक्त मात्रा पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा (६–६ घण्टे पर) दे सकते हैं । यदि स्थिति बहुत गम्भीर हो तो शिरामार्ग का अवलम्बन किया जाता है । एतदर्थ ०·२ से ०·५ ग्राम मात्रा शिरामार्ग से (Intravenous infusion) बहुत धीरे-धीरे

(प्रति मिनट २५ से ५० मि० ग्रा०) दी जाती है। यदि रक्तभार में आवश्यकता से अधिक कमी हो जावे तो औषधि फौरन बन्द कर देनी चाहिए और फेनिलेफ्रीन आदि रक्तचापवर्धक या वाहिनी संकोचक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। शिरागत मार्ग द्वारा औषधि का प्रयोग करने से अनेक प्रकार के उपद्रवों के प्रगट होने की आशंका रहती है।

३—रक्तचापवर्धक औषधियाँ :—

एड्रिनेलीन (I. P., B. P)

रासायनिक संकेत : $C_9H_{13}O_3N$.

नाम—एड्रिनेलिना Adrenalina (Adrenal.) B. P., एपिनेफ्रिना Epinephrina (Epineph.) I. P.—ले०; एड्रिनेलीन (Adrenaline), एपिनेफ्रीन (Epinephrine)—अं०। उपवृक्कसत्व—सं०, हिं०।

पर्याय—सुप्रारेनिन (Suprarenin); एडनेफ्रीन (Adnephrine)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह (—) —1—3′ :4′—dihydroxyphenyl—2—methylaminoethanol, होता है। नैसर्गिक रूप से यह स्तनधारी जन्तुओं के उपवृक्क (Suprarenal gland) से अथवा रासायनिक संश्लेषण पद्धतिद्वारा कृत्रिम रूप से भी प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—एड्रिनेलीन सफेद रंग का अथवा मलाई के रंग का (Creamy-white) क्रिस्टलाइन चूर्ण (Sphaero-crystalline powder) के रूप में उपलब्ध होता है। विलेयता—जल में थोड़ा थोड़ा घुलता (Sparingly Soluble) है; खनिज अम्लों (Mineral acids) के जलीय विलयन तथा सोडियम् एवं पोटासियम् हाइड्राक्साइड के जलीय विलयन (सोल्यूशन) में फौरन घुल जाता (Readily Soluble) है। किन्तु अमोनिया एवं क्षारीय कार्बोनेट्स के जलीय विलयन में नहीं घुलता। अल्कोहल् (९५%) में भी अविलेय (Insoluble) होता है। वक्तव्य—क्षीवप्रतिक्रिया के सोल्यूशन में यह स्थायी (Stable) नहीं होता, और ऐसा सोल्यूशन हवा में खुला रहने से विकृत होकर लाल हो जाता है।

मात्रा—$\frac{१}{६००}$ से $\frac{१}{१२०}$ ग्रेन (०.१ से ०.५ मि० ग्रा०)।

एपिनेफ्रिनी बाइटार्ट्रास (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_9H_{13}O_3N,C_4H_6O_6$.

नाम—एपिनेफ्रिनी बाइटारट्रास Epinephrinae Bitartras (Epineph. Bitartr.)—ले०; एपिनेफ्रीन बाइटारट्रेट Epinephrine Bitartrate—अं०।

पर्याय—एड्रिनेलीन बाइटारट्रेट Adrinaline Bitartrate; एड्रिनेलीन एसिड टारट्रेट Adrenaline Acid Tartrate।

वर्णन—यह गंधहीन क्रिस्टेलाइन चूर्ण होता है, जो रंग में सफेद, किंचित् खाकस्तरी-सफेद (Greyish-white) अथवा हल्का भूरापन लिए खाकस्तरी रङ्ग (Light brownish grey) का होता है। विलेयता—यह अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में तो अल्पतः घुलता (Slightly Soluble) है, किन्तु जल में विलेय या घुलनशील (Soluble) होता है। संरक्षण (Storage) इसको अच्छी

तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए तथा प्रकाश से बचाना चाहिए। अन्यथा हवा में खुला रहने से तथा प्रकाश के प्रभाव से इसका रंग विकृत होने लगता (Darkens in colour) है।

मात्रा—$\frac{१}{६००}$ से $\frac{१}{१२०}$ ग्रेन या ०·१ से ०·५ मिलिग्राम (mg.) अधस्त्वक् सूचिकाभरण (Subcutaneous injection) द्वारा।

गुण-कर्म।

स्वेदग्रंथिगतनाड्यग्रों के अतिरिक्त एड्रिनेलीन प्रायः सभी स्वतंत्रनाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करता है। थायरायड एवं एड्रिनेलीन की क्रियाओं में परस्पर बहुत सम्बन्ध होता है। थायरायड की क्रिया पर एड्रिनेलीन का प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार थायरायड के अन्तःस्राव के प्रभाव से शारीरिक तन्तुओं में एड्रिनेलीन की क्रिया के प्रति संवेदन-शीलता पैदा हो जाती है।

श्लैष्मिक कलाओं पर स्थानिक प्रयोग से वाहिनी-संकोचन नाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण **केशिकाओं तथा धमनिकाओं (Arterioles) का संकोच करता** है। इससे उस स्थान में वैवर्ण्य (**Blanching**) भी पैदा हो जाता है।

नेत्र—एड्रीनेलीन के विलयन का नेत्र में आश्च्योतन करने से नेत्र की श्लैष्मिक कला (**Conjunctiva**) में संकोच तथा वैवर्ण्य पैदा हो जाता है। शिरागत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त करने से स्वतन्त्रनाड्यग्रों की उत्तेजना के कारण कनीनिका विस्फारण होता है।

हृदय तथा रक्तसंवहन—शिरागतसूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने से **धमनीरक्तभार (Arterial blood-pressure)** में वृद्धि करता है। चूंकि धातुओं में एड्रिनेलीन एमाइन ऑक्सिडेस (**Amine Oxidase**) किण्व द्वारा शीघ्र ही नष्ट कर दिया जाता है, अतएव इसका प्रभाव भी शीघ्र ही नष्ट होकर पुनः सामान्य स्थिति में आ जाता है। यह रक्तभार-वृद्धि एड्रिनेलीन के धमनिकाओं पर प्रत्यक्ष संकोचक प्रभाव होने के कारण होता है। यह संकोचक प्रभाव आशयिक प्रदेश, त्वचा एवं वृक्क की (**Splanchnic area**) की रक्तवाहिनियों पर सबसे अधिक तथा फुफ्फुस ऐवं मस्तिष्क पर सबसे कम होता है। हार्दिक धमनी (**Coronary artery**) पर यह संकोचक प्रभाव प्रायः बिल्कुल नहीं होता।

हृदय की गति पहले तीव्र (**Accelerated**), तदनु मन्द किन्तु अन्त में पुनः तीव्र हो जाती है। तीव्रता हृत्पेशी में फैली हुई स्वतंत्र नाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव होने के कारण होती है। अल्पकालिक मन्दता, रक्तभार में वृद्धि होने के कारण महाधमनी तोरण (**Aortic arch**) एवं मातृकाधमनी (**Carotid sinus**) के संज्ञावहा सूत्रों (**Afferent fibres**) पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण प्रत्याक्षिप्त प्रभाव (**Reflex effect**) के द्वारा होता है। हार्दिक धमनियाँ किंचित विस्फारित हो जाती हैं, जिससे हृदय का पोषण पुष्टितर रूप में होने लगता है। इसके अतिरिक्त विस्फारण के कारण इसकी (हृदयगति) एवं कार्य की अपेक्षा अधिक प्राणवायु मिलने लगती है। किन्तु इसमें एक दोष भी है कि कभी-कभी (विशेषतः क्लोरोफॉर्म एवं साइक्लोप्रोपेन द्वारा संज्ञाहरण करते समय) इसके प्रयोग से हृत्पेशी सूत्रों में अराजकता (**Fibrillation**) की स्थिति उत्पन्न होने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

श्वसन—अल्प मात्रा में अधस्त्वग् मार्ग द्वारा (**Hypodermically**) प्रयुक्त होने पर यह श्वासनलिकापेशियों पर शैथिल्यजनक प्रभाव (विशेषतः उद्वेष्ट की दशा में) करता है।

किन्तु इन्जेक्शन, द्वारा अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर कभी-कभी प्रत्याक्षिप्त रूपेण 'एड्रिनेलीन-जन्य अश्वसनावस्था Adrenalnie Apnoea' उत्पन्न हो जाती है।

महास्रोत एवं यकृत—मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर यह सामान्यकायिक प्रभाव नहीं करता, क्योंकि आमाशय की श्लैष्मिककलागत रक्तवाहिनियों पर संकोचक प्रभाव करने से एक तो इसका शोषण मन्दगति से होता है, दूसरे मन्दगति से शोषण होने के कारण रक्त-परिभ्रमण में पहुँचने के पूर्व ही यह नष्ट हो जाता है। किन्तु जिह्वाधः धातु (Sublingual tissue) द्वारा इसका शोषण अत्यंत क्षिप्रतापूर्वक होता है। अतएव यदि मुख में दवा विलम्ब से स्थिर रहे तो सामान्यकायिक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त मात्रा में इसका शोषण जिह्वाधः धातु से हो जाता है। लाला-प्रजनन में भी वृद्धि होती है। शिरागतमार्ग से सूचिकाभरण करने से एड्रिनेलीन, महास्रोतगत स्वतंत्रनाड्यग्रों को उत्तेजित करने के कारण आन्त्र की पुरः सरणगति (Peristalsis) पर निरोधक प्रभाव करता है। किन्तु इसके विपरीत आमाशयमुद्रिकाद्वार (Pyloric sphincter), क्षुद्रान्त्रोण्डुक द्वार (Ileocaecal sphincter) तथा गुदद्वारोंAnal sphincters) की संकोचनगति में तीव्रता हो जाती है, क्योंकि इन द्वारों से सम्बन्धित स्वतंत्रनाड़ीसूत्र इनके गतिप्रवर्तक (Augmentorfibres) होते हैं। पित्ताशय की गति पर अवरोधक किन्तु पित्तप्रणाली की गति पर उत्तेजक प्रभाव पड़ता है।

गर्भाशय—गर्भावस्था में एड्रिनेलीन स्वयं गर्भाशय तथा इसकी रक्तवाहिनियों का संकोचन (Contracion) करता है। किन्तु साधारण अवस्था में कोई प्रभाव लक्षित नहीं होता। गर्भ की अवस्था में भी श्वास के निवारण के लिए ½ सी० सी० लाइकर एड्रिनेलीन का सूचिकाभरण करने पर व्यवहार में कोई विशेष प्रभाव नहीं देखा जाता।

पेशी—ऐच्छिक पेशियों के थकान को दूर करता तथा क्लान्ति नहीं उत्पन्न होने देता। पेशियों की क्रियाशीलता विशेषतः उत्तेजनशीलता किंवा संकोचनशीलता में भी तीव्रता करता है। पेशियों पर एड्रिनेलीन क्युरारा के प्रत्यनीक प्रभाव (Anticurari-action) करता है।

समवर्त-क्रिया (Metabolism)—१००० मे १ के बल का १.५ मिलिलिटर सॉल्यूशन अधस्त्वग्मार्ग से प्रयुक्त होने पर **आधारभूत समवर्त** (Basal metabolisom) में २० प्रतिशत वृद्धि कर देता है।

स्वेद एवं मूत्र—वृक्क की रक्तवाहिनियाँ संकुचित हो जाती हैं, जिससे रक्तभार में वृद्धि होती रहती है। पहले तो मूत्र में कुछ कमी हो सकती है, किन्तु वृक्कीया रक्तवाहिनियों के शिथिल होने तथा रक्तभार वृद्धि होने पर अधिक **परिमाण में मूत्रप्रजनन** (Diuresis) होता है। इन्सुलिन के विपरीत इसमें मूत्र में काफी परिमाण में शर्करा भी पाई जाती है। स्वेद-ग्रंथियों पर एड्रिनेलीन कोई प्रभाव नहीं करता।

विषाक्त प्रभाव—विषाक्तता की अवस्था में निम्न लक्षण प्रगट होते हैं:—(१) **गम्भीर प्रभाव एवं लक्षण**—तीव्र हृद्विस्फार, निलयाराजकता (Ventricular fibrillation) तथा मृत्यु। यह स्थिति प्रायः हृदय के दुर्बल एवं विकृत होने पर शिरागत मार्ग द्वारा एड्रिनेलीन का प्रयोग करने से होता है।

(२) साधारण लक्षण—ये लक्षण प्रायः अक्षम (Susceptible) व्यक्तियों में एड्रिनेलीन के त्वचाधः प्रयोग से प्रगट होते हैं। लक्षण—हृत्स्पन्दन (Palpitation), हृच्छीघ्रता (Tachycaradia), श्वासकृच्छ्र, (Dyspnoea), नाड़ीशीघ्रता, रक्तभार में वृद्धि, पेशीकम्प (Muscular tremor), उत्क्लेश (Nausea), वमन, शिरोभ्रम (Vertigo) तथा शीतप्रस्वेद (Cold sweat) आदि।

आमयिक प्रयोग।

स्थानिक प्रयोग (Locally)—रक्तस्तम्भक (Hāemostatic) होने के कारण जहाँ सम्भव हो, इसका स्थानिक प्रयोग रक्तस्राव रोकने के लिए किया जाता है। विशेषतः इसका उपयोग केशिकीय रक्तस्राव (Capillary oozing) तथा अन्य सूक्ष्मवाहिनी गत रक्तस्राव को रोकने के लिए किया जाता है। इसके लिए लाइकर एड्रीनेलीन फोये द्वारा लगा दिया जाता है, अथवा इसके विलयन में कपड़े अथवा रूई का फोया भिगोकर रक्तस्रावी स्थान में रखकर बाँध दिया जाता है। नासा, दंतवेष्ठ तथा अर्शगत रक्तस्राव को रोकने के लिए भी यह एक उपयोगी औषधि है। नकसीर (Epistaxis) में इसके विलयन का प्रयोग नासाधावन के रूप में, अथवा उसमें (१००० में १ के बल का विलयन) कपड़ा भिगोंकर नासापश्चिम भाग में उसका पूरण किया जाता है। अर्शगत रक्तस्रावावरोध के लिए गुदवर्ति (Suppository) या मलहर के रूप में प्रयुक्त होता है। इसके संकोचक प्रभाव (Constricting effect) के लिए लाइट लिक्विड पाराफिन के साथ नासाशीकर (Nasal spray) के रूप में तृणज्वर (Hay fever), प्रतिश्याय (Nasal catarrh) तथा नासा एवं गलशोथ में किया जाता है।

एड्रीनेलीन का प्रयोग कोकेन, प्रोकेन आदि स्थानिक संज्ञाहर औषधियों के साथ सहायकौषधि के रूप में किया जाता है। इससे संज्ञाहर प्रभाव अधिक देर तक स्थिर रहता, तथा रक्तस्राव की भी आशंका कम रहती है। इसके लिए २० बूंद संज्ञाहर औषधि के विलयन में लाइकर एड्रीनेलीन ½ से १ बूंद के अनुपात से मिलाया जाता है। किन्तु स्वभाववैशिष्ट्य के कारण जो लोग इस औषधि के प्रति अक्षम होते हैं, उनमें हृत्स्पन्दन, पेशीकम्प, नाड़ी-शीघ्रता आदि कुलक्षण भी प्रगट हो जाते हैं। जो थोड़ी देर के पश्चात् स्वयंएव लुप्त हो जाते हैं। इसमें एक दोष भी है, कि स्थानिक प्रयोग से इसमें कोथ उत्पन्न करने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

आभ्यन्तर प्रयोग—एड्रिनेलीन का प्रधान उपयोग निपात (Collapse) एवं स्तब्धता (Shock) की अवस्थाओं में हृदय तथा रक्तपरिभ्रमण पर उत्तेजक प्रभाव (Circulatory Stimulant) करने के लिये किया जाता है। किन्तु एड्रिनेलीन के ये प्रभाव चूँकि क्षणिक होते हैं, इसलिए केवल आत्ययिक अवस्थाओं (Emergency practice) में ही यह उपयुक्त होता है। साधारणतया हृदय में क्षतिपूरण की शक्ति न रहने पर (Failure of Compensation) इसका प्रयोग कोई विशेष उपकार नहीं करता। विशूचिका में जब कि द्रवांश का अधिक अपकर्षण हुआ हो तो लवण-जल में एड्रिनेलीन सॉल्यूशन भी मिला दिया जाता है। स्वस्थ पुरुषों में यकायक हृद्गति रुक जाने पर यथा जल में डूबने पर तथा प्रांगार-एकजारेय विषमयता (Carbon-monoxide poisoning) आदि में एड्रिनेलीन का सीधे हृदय में इन्जेक्शन करनेसे कभी-कभी हृदय की गति पुनः प्रारम्भ हो जाती

है। यदि इसके साथ-साथ कृत्रिमश्वसन तथा हृत्प्रदेश पर मर्दन (Massage) किया जाय तो और भी सहायता मिलती है। इसके लिए लम्बी तथा पतली सूई प्रयुक्त करनी चाहिए तथा इन्जेक्शन चतुर्थ अन्तरपर्शुकीयावकाश (Fourth inter-costal space) में उरःफलक के सन्निकट दक्षिण निलय में करना चाहिए।

निलयों की गति अत्यन्त मन्द हो जाने से सम्भावी हृदवरोध (Heart-block) में यह बहुत उपयोगी है। हिक्का (Hiccough) निवारण के लिए यह एक **परमोपयोगी** औषधि है। इसके लिए त्वचाधः सूचिकाभरण द्वारा इसको प्रयुक्त करना चाहिए। आमाशयगत रक्तस्राव में जल के साथ लाइकर एड्रिनेलीन मिलाकर प्रयुक्त करने से यह रक्तस्राव का निरोध करता है। वमननिवारण के लिए भी यह कभी प्रयुक्त किया जाता है।

श्वासनलिकोद्वेष्ठ निवारण करने के कारण यह **श्वास** (Spasmodic asthma) में लाभप्रद होता है। इसके लिए यह अधस्त्वग्मार्ग द्वारा ५ से ८ बूंद की मात्रा में प्रयुक्त किया जाता है। अधिक अच्छा यह होता है कि इसके साथ $\frac{1}{100}$ ग्रेन अट्रोपीन या $\frac{1}{2}$ ग्रेन इफेड्रिन हाइड्रोक्लोराइड मिलाकर एड्रिनेलीन प्रयुक्त किया जाता है। इससे इसकी क्रियाशीलता और भी तीव्र एवं स्थायी हो जाती है।

निम्न अवस्थाओं में इसका प्रयोग यथासम्भव नहीं अथवा सतर्कता के साथ करना चाहिए :—

(१) धमनीदार्ढ्य (Arterio-sclerosis) के रोगियों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(२) फुफ्फुस एवं मस्तिष्कगत रक्तस्राव में भी इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि इससे रक्तस्राव के और भी अधिक होने की आशंका होगी।

(३) फौफ्फुसिकशोफ (Pulmonary Oedema) में एड्रिनेलीन का प्रयोग करने से शोफ-वृद्धि की सम्भावना रहती है।

(४) क्लोरोफॉर्म जन्य हृदयानिपात (Cardiac failure) में एड्रिनेलीन के प्रयोग से अलिन्द तथा निलयों में अराजकता (Fibrillation) होने का भय रहता है।

(५) हार्दिक धमनीदार्ढ्य (Caronary arterio-sclerosis) तथा परमावटुकाग्रंथिमयता (Hyperthyroidism) के रोगियों में जिनमें हृच्छूल एवं श्वासकृच्छ्र (Dyspnoea) के दौरे का उपद्रव होता हो, उनमें भी इसका प्रयोग सतर्कता के साथ करना चाहिए।

एड्रिनेलीन के प्रयोग के विभिन्न मार्ग—

(१) मुख—मुख द्वारा इसका प्रयोग मुख एवं आमाशय में स्थानिक प्रयोग के लिए किया जाता है। जिह्वाधः धातुओं द्वारा क्षिप्रतापूर्वक शोषण होने के कारण कभी-कभी सामान्यकायिक प्रभाव के लिए भी इसका जिह्वाधः (Sublingual) प्रयोग किया जाता है।

(२) अधस्त्वग् मार्ग द्वारा (Subcutaneously)—इस मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर रक्तभार में किंचित् वृद्धि तथा श्वसनिकाओं के संकोच का निवारण करता है। इस प्रकार प्रयुक्त होने पर कभी-कभी हृत्स्पन्दन तथा पेशीकम्प का उपद्रव हो जाता है।

(३) पेशीमार्ग द्वारा (Intramuscularly)—रक्तभार में वृद्धि करता तथा श्वासनलिका संकोच का निवारण करता है।

(४) शिरामार्ग द्वारा (Intravenously)—तत्काल रक्तचाप में वृद्धि करता है। स्तब्धता एवं निपात (Collapse) में इसी प्रकार प्रयुक्त करना चाहिए। शिरा द्वारा प्रयुक्त करने के लिए अधस्त्वग् मात्रा का $\frac{1}{10}$ वाँ हिस्सा पर्याप्त होता है।

(५) हृदन्तःमार्ग (Intracardially)—यकायक हृदयनिपात (Cardiac failure) में इसी प्रकार एड्रिनेलीन का प्रयोग करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—सॉल्यूशिओ एपिनेफ्रिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Solutio Epinephrinae Hydrochloridi (Sol. Epineph. Hydrochlor.), I. P.—ले०; सॉल्यूशन ऑव एपिनेफ्रीन हाइड्रोक्लोराइड Solution of Epinephrine Hydrochloride—अं०। पर्याय—लाइकर एड्रिनेलिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Liquor Adrenalinae Hydrochloridi (Liq. Adrenal. Hydrochlor.), B. P. —ले०; साल्यूशन ऑव एड्रिनेलीन हाइड्रोक्लोराइड (Solution of Adrenaline Hydrochloride) एपिनेफ्रीन सॉल्यूशन Epinephrine Solution—अं०।

यह एपिनेफ्रीन का हाइड्रोक्लोरिक एसिड तथा डिस्टिल्ड वाटर में बनाया हुआ विलयन (सॉल्यूशन) होता है, जिसके प्रत्येक १०० मिलिलिटर या सी० सी० में ०·०९० से ०·११० ग्राम $C_9 H_{13} O_3 N$. होता है। इसका विलयन प्राय रंगहीन तथा प्रक्रिया में साधारण अम्ल होता है, जो खुला रहने से तथा प्रकाश के प्रभाव से गाढ़े रंग का हो जाता (Darkens in colur) है। अतएव इसे अच्छी तरह डाटबंद, अम्बरी रंग की शीशियों (Amber-coloured phials) में रखना चाहिए। वक्तव्य—इस विलयन का प्रयोग इन्जेक्शन के लिए नहीं करना चाहिए तथा एक निश्चित समय के बाद विलयन निष्क्रिय हो जाता है, और प्रयोग के योग्य नहीं रहता। यदि उस काल के भीतर भी सॉल्यूशन का रंग बिगड़कर भूरा या गुलाबी हो जावे तथा अधःक्षेप (Precipitate) दिखाई दे तो भी यह प्रयोग के योग्य नहीं रहता।

यह इन्जेक्शिओ प्रोकेनी हाइड्रोक्लोराइडाइ एट एपीनेफ्रिनी (I. P.) अथवा इन्जेक्शिओ प्रोकेनी एट एड्रिनेलिनी (B. P.) नामक ऑफिशल योग में पड़ता है।

२—इन्जेक्शिओ एपिनेफ्रिनी Injectio Epinephrinae (Inj. Epinephrin.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव एपिनेफ्रीन Injection of Epinephrine—अं०। पर्याय—इन्जेक्शिओ एड्रिनेलिनी Injectio Adrenalinae (Inj. Adrenal.), B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव एड्रिनेलीन Injection of Adrenaline, इन्जेक्शन ऑव एड्रिनेलीन टारट्रेट Injection of Adrenaline Tartrate—अं०।

मात्रा—२ से ८ बूंद या मिनम् (०·१२ से ०·५ मि० लि०)।

(नॉन्-ऑफिशियल योग)

१—अंग्वएटम् एड्रिनेलीनी एट कोकेनी Unguentum Adrenalinae et Cocainae, B. P. C.—एड्रिनेलीन ०·१ ग्राम; बोरिक एसिड ०.२ ग्राम; कोकेन हाइड्रोक्लोराइड १·०; परिस्रुत

प्रामितायन—रासायनिक दृष्टि से यह l-a-3 : 4-dihydroxyphenyl-B-amino-ethanol-D-bitartrate monohydrate होता है। इसमें कम से कम ९५% जलांश रहित नोरेड्रिनेलीन ($C_8H_{11}O_3N, C_4H_6O_6$) होता है।

वर्णन—यह सफेद या मटमैले सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। प्रकाश तथा हवा में खुला रहने से इसका रंग विकृत होता है। विलेयता—जल में सुविलेय (Freely soluble) होता है। मात्रा—प्रतिमिनट २ से ८ माइक्रोग्राम शिरागत मार्ग (Intravenous infusion) द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

नोरेड्रिनेलीन, एड्रिनेलीन का पूर्व रूप (Precursor) है। रासायनिक संघटन में भी यह एड्रिनेलीन से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। नैसर्गिक रूप से यह स्वतन्त्र नाड्यग्रों पर (At the end of the adrenergic sympathetic nerves) उत्सर्गित होता है। कुछ भाग उपवृक्क (Adrenal medulla) से भी निकलता है। शरीर में यह शोषित होकर एड्रिनेलीन के रूप में परिवर्तित होता है। इसकी प्रधान क्रिया परिसरीय रक्तवाहिनियों का संकोच (Peripheral vasoconstriction) होता है, जिससे परिसरीय रक्तभार बढ़ता है। कोकेन की सहायता से यह क्रिया और भी सहायता मिलती है। हृदयोत्क्षिप्त राशि में तो यह वृद्धि नहीं करता, किन्तु हार्दिक धमनी का विस्फार (dilatation of coronary vessels) होने से हार्दिक रक्तपरिभ्रमण में सुधार करता है। शोषणोपरान्त एमीन-ऑक्सिडेज नामक किण्व से संयुक्त होकर मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। नोरेड्रिनेलीन का मुख्य उपयोग परिसरीय रक्त संवहन-निपात (Peripheral vasomotor collapse and shock) के निवारण के लिए किया जाता है। अतएव हैजा, अत्यधिक रक्तस्राव, आघात (Trauma) दोषमयता (Septicaemia), एवं शल्यकर्मों के बाद स्तब्धता निवारणार्थ) इसका प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ इसको शिरामार्ग से बूंद बूंद करके लगातार क्रम (Continuous drip infusion) से दिया जाता है। ४ से ८ माइक्रोग्राम औषधि ५ प्रतिशत ग्लूकोज सोल्यूशन (जल या लवणजल में बनाया हुआ) में मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। सामान्यतः प्रतिमिनट १–२ सी० सी० सोल्यूशन दिया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर ५ सी० सी० सोल्यूशन प्रतिमिनट तक दे सकते हैं। मुख द्वारा इसका सेवन करने से कोई क्रिया नहीं होती।

सिम्पैथोमाइमेटिक ड्रग्स
(Sympathomimetic Drugs.)

ये औषधियाँ उपवृक्किजन नाड़ियों (Adrenergic nerves) पर प्रभाव करके उपवृक्कि-सम अर्थात् एड्रिनेलीन की ही भाँति (Adrenaline-like) कार्य करती हैं। वास्तव में एड्रिनेलीन ही इस समुदाय की एक वास्तविक प्रतिनिधि औषधि है, अर्थात् स्वतन्त्र नाड़ियों (Sympathetic nerves) की उत्तेजना से विभिन्न अंगों पर जो प्रभाव होते हैं (Sympathomimetic action), प्रायः वे सब गुण-कर्म एड्रिनेलीन में पाये जाते हैं। सामान्यतः निम्नौषधियों का समावेश इस समुदाय में किया जाता है, जैसे इफेड्रिन; एम्फिटामीन (Amphetamine), कोबेफ्रिन, नियोसिनेफ्रिन (Neosynephrin), प्रोपेड्रीन

(Propadrine), फोलेड्रीन (Pholedrine), नेयेड्रीन, पेरेड्रीन तथा टायरामीन (Tyramine) आदि। एक समुदाय में होते हुए भी प्रत्येक औषधि के गुणकर्म में कुछ न कुछ विभिन्नता पाई जाती है, यथा इफेड्रीन हृदय पर अवसादक तथा मस्तिष्क सौषुम्निक तंत्र पर उत्तेजक प्रभाव रखता है; कोबेफ्रिन में यह अवसादक गुण और भी अधिक तथा प्रोपेड्रीन में बहुत कम होता है। स्थानिक संज्ञाहर सहायक के रूप में एड्रिनेलीन की अपेक्षा कोवेफ्रिन ५ गुना तथा नियोसेफ्रिन २० गुना प्रबल होता है। अतएव स्थानिक संज्ञाहरण के लिए नोवोकेन के साथ सहायक के रूप में प्रायः कोबेफ्रिन मिला दिया जाता है। श्वासनलिकासंकोच निवारण की शक्ति अन्य औषधियों की अपेक्षा एड्रिनेलीन में सबसे अधिक होती है। नियोसेफ्रिन वाहिनी संकोच करता तथा रक्तभार में वृद्धि करता है, तथा आघ्राणन द्वारा प्रयुक्त होने पर रक्तवाहिनियों के पेशीसूत्रों पर एम्फिटामीन की भाँति प्रत्यक्ष प्रभाव करने के कारण स्थानिक रक्तवाहिनियों का संकोच करता है किन्तु एम्फिटामीन की भांति मस्तिष्कगत उच्चकेन्द्रों को उत्तेजित करने के गुण-कर्म इसमें नहीं पाये जाते। फोलेड्रीन या वेरिटॉल (Veritol) का वाहिनी-संकोच प्रभाव विलम्ब तक रहता है, साथ ही यह हृत्तीव्रता तथा मस्तिष्कोत्तेजना भी नहीं करता। अतएव स्तब्धता (Shock) तथा वाहिनीप्रेरककेन्द्राघात (Vaso-motor paralysis) में यह विशेष उपयुक्त होता है। इसमें एड्रिनेलीन की भाँति तो विपाक्त प्रभाव कम होता है, तथा मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर इसका प्रभाव देर तक रहता है, इस रूप में यह इफेड्रीन की समता रखता है। अनूर्जिकावस्थाओं (Allergic conditions) में प्रायः इसी औषधि का प्रयोग किया जाता है।

वाहिनी-संकोचक प्रभाव की मात्रा एवं रासायनिक संघटन के भेद से इन औषधियों की प्रचूषणगति में भी परस्पर बहुत अन्तर पाया जाता है। जिस औषधि में वाहिनी-संकोचन की शक्ति जितनी प्रबल होती है, उसका प्रचूषण भी उतनी मन्दता पूर्वक होता है; तथा जिनका रासायनिक संघटन जितना ही अस्थिर (Unstable) होता है, पाचक रसों से उनका विघटन भी उतनी ही शीघ्रता पूर्वक हो जाता है। अतएव मुखमार्ग से प्रयुक्त होने के लिए इस समुदाय की वही औषधि उपयुक्त हो सकती है, जो रासायनिक संघटन में स्थिर हो तथा वाहिनी-संकोचन प्रभाव यथा सम्भव न्यूनातिन्यून हो।

एफेड्रीन, एम्फिटामीन (बेंजेड्रीन) तथा प्रोपेड्रीन के संघटन में बेंजीन रिंग (Benzene ring) OH परमाणु सम्बन्धित नहीं होते, अतएव ये औषधियाँ शीघ्र वियोजित नहीं होती तथा अधिक स्थायी होती हैं। किन्तु एड्रिनेलीन कावेफ्रिन तथा नियोसिनेफ्रिन (Neosynephrin) आदि जिनमें केटेकोल (Catechol) तथा फिनोल प्रधान मूलक (Neocleus) होता है, मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर निष्क्रिय होती हैं। अन्य मार्गों द्वारा प्रयुक्त होने पर भी शीघ्र वियोजित होकर इनका अधिकांश शरीर ही में नष्ट हो जाता है।

उपरोक्त विशेषताओं के साथ विपाक्त प्रभाव में भी तर-तम भेद से इस समुदाय की भिन्न-भिन्न औषधियों में न्यूनाधिक्य पाया जाता है। इस विपाक्तता (Toxicity) के २ प्रधान कारण होते हैं, यथा (१) रक्तभार में अत्यधिक वृद्धि, जिससे अतियोग के कुपरिणाम स्वरूप नाना कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं; (२) मस्तिष्क-सौषुम्निक तन्त्र पर उत्तेजक प्रभाव, जिसके दुष्प्रभाव से चित्तविक्षोभ (Nervousness), उत्तेजनशीलता, कम्प तथा निद्रानाश आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। प्रथम दोष एड्रिनेलीन में सबसे अधिक पाया जाता है; दूसरा दोष अर्थात्

मस्तिष्क-सुषुम्ना पर विषाक्त प्रभाव करने वाली औषधियों में एम्फिटामीन सबसे प्रधान, तदनु एफेड्रीन तथा एड्रिनेलीन एवं कोवेफ्रिन में यह दोष सबसे कम होता है। अन्य औषधियाँ साधारण मात्रा (Therapeutic dose) में नाड़ी विकार नहीं करतीं।

एफेड्रिना (एफेड्रीन) I. P., B. P. ($C_{10} H_{15} ON)_2, H_2O$.

Family: Gnetaceae (सोमादि-कुल)

नाम—एफेड्रिना Ephedrina (Ephed.)-ले०; एफेड्रीन (Ephedrine) -अं०; सोमसत्व-सं०।

प्राप्ति-साधन—यह एक अल्कलायड् (Alkaloid) या क्षारोद है, जो (१) एफेड्रा की विभिन्न उपजातियों से प्राप्त किया जाता है; अथवा (२) आजकल कृत्रिमरूप से संश्लेषण (Synthesis) द्वारा रसायनशालाओं (Pharmaceutical laboratories) में भी बनाया जाता है। रासायनिक दृष्टि से यह l-a-hydroxy-B-methylamino propyl benzene का hemihydrate होता है (l = laevorotatory; a = alpha; b = Bete)। इसमें ९४ प्रतिशत से ९५ प्रतिशत तक $C_{10} H_{15} ON$ होता है।

एफेड्रीन, एफेड्रा की निम्न प्रजातियों से प्राप्त किया जाता है:—

(१) एफेड्रा सिनिका Ephedra sinica, Stapf. (B. P.)

(२) एफेड्रा एक्विसेटिना Ephedra equisetina Bunge. (B. P.)

(३) एफेड्रा जिरेर्डिआना Ephedra gerardiana (Wall.) Stapf. (I. P.; I. P. L. & I. P. C.)

(४) एफेड्रा नेब्रोडेंसिस् Ephedra nebrodensis (Tineo.) Stapf. (I.P.; I. P. L. & I. P. C.)

उत्पत्तिस्थान तथा नामकरण एवं इतिहास—एफेड्रा की प्रथम दोनों प्रजातियाँ चीन में स्वयंजातरूप से उत्पन्न होती हैं। चीन में इनका औषधीय प्रयोग लगभग ५००० वर्ष पूर्व से होता आ रहा है। दक्षिणी चीन के समुद्री-किनारों के क्षेत्र में यह ओषधि बहुतायत-से पाई जाती है और वहाँ की संग्रहीत ओषधि का निर्यात यूरोपीय देशों को केन्टन के बन्दरगाह से होता है। चीनी-भाषा में एफेड्रा को "मा-हुवांग Ma-Huang" कहते हैं। 'Ma' का अर्थ होता है "कषाय Astringent" तथा 'Huang' का अर्थ होता है "पीला Yellow"। चूंकि ओषधि का रस कषाय एवं काण्ड पीताभ रंग के होते हैं; अतएव ऐसा नामकरण किया गया प्रतीत होता है। इन दोनों उपजातियों को चीनी एफेड्रा (Chinese Ephedra) भी कहते हैं। आधुनिक चिकित्सा में एफेड्रा के व्यवहार का प्रचार सन् १८८७ के बाद से अधिक हुआ है, जब कि उक्त विद्वान ने एफेड्रीन नामक अल्कलायड को उक्त पौधे से प्राप्त किया तथा तत्पश्चात् एफेड्रीन के फार्माकॉलाजी एवं थेराप्यूटिक्स का सम्यग्रूप से ज्ञान हुआ।

एफेड्रा जिरेर्डिआना एवं एफेड्रा नेब्रोडेन्सिस् एफेड्रा की भारतीय उपजातियाँ हैं तथा एफेड्रीन की दृष्टि से विशेष महत्व की हैं। इनको भारतीय एफेड्रा (Indian Ephedra) भी कहते हैं।

नाम—सोम-सं०; टुटगंठा 'Tutgantha'-जौनसार; असमानी बूटी-पं०; होम-ईरान; (१) एफेड्रा वल्गेरिस् Ephedra vulgaris, एफेड्रा जिरेर्डिआना Ephedra gerardiana (Wall) Stapf. तथा (२) एफेड्रा नेब्रोडेन्सिस Ephedra nebrodensis (Tinco) Stapf-ले० ।

चित्र नं०—२७

(अ) एफेड्रा सिनिका का पौधा।

(ब) काण्ड (Stem) का अनुप्रस्थ-विच्छेद (Transverse section)।

(स) एफेड्रा सिनिका के शल्क-पत्र (Leaves of E. sinica)।

(द) एफेड्रा एक्विसेटिना की पत्तियाँ (Leaves of E. equisetina)।

(१) श्वसनरंध्र या स्टोमा (Stoma); (२) एपिडर्मिस (Epidermis); (३) दृढ़भित्तिक सूत्र-पुंज (Group of sclerenchymatous fibres); (४) तन्तु (Fibres); (५) पेरिसाइक्लिक-फाइबर्स (Pericyclic fibres); (६) मज्जक (Pith)।

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय प्रदेश में ७,०००–१४,००० फुट की ऊँचाई पर तथा पश्चिमी तिब्बत से सिक्किम तक १२,००० फुट से १६,००० फुट की ऊँचाई पर शुष्क प्रदेशों में इसके

स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं। वक्तव्य—उक्त प्रदेशों में जहाँ-जहाँ भारतीय एफेड्रा उत्पन्न होता है, चीनी एफेड्रा की भी खेती की जा सकती है।

वर्णन—इफेड्रा के काण्ड पर अनेक सूक्ष्म उन्नत रेखायें होती हैं। पत्तियाँ आकार में छोटी तथा प्रत्येक ग्रंथि पर दो-दो (अथवा कभी-कभी ३-४) के चक्र में स्थित होती हैं। दोनों पत्तियों के मूल परस्पर मिले हुए (Connate) होते हैं, जिससे काण्ड (Stem) उनके मध्य से निकला हुआ प्रतीत होता है पत्तियाँ चतुर्पंक्तिक-अभिमुख (Decussate) क्रम से स्थित होती हैं। एफेड्रा के ताजे पौधों से हल्की सुगंधि भी आती है, किन्तु सूख जाने पर उक्त गंध नहीं आती। एफेड्रा स्वाद में किंचित् तीता होता है।

(१) एफेड्रा सिनिका—इसके काण्ड लम्बाई में लगभग १ फुट तथा किंचिद् भूरापन लिए हुए खाकस्तरी हरिद्वर्ण के होते हैं। ये काण्ड पतले होने पर भी काफी कड़े (Tough) होते हैं। पत्तियाँ लगभग ४ मिलिमिटर लम्बी होती हैं, तथा इसके फलक रंग में श्वेताभ एवं फलकमूल (Base) ललाई लिए भूरे रंग का होता है। पत्तियों के अग्र पीछे को मुड़े (Recurved) होते हैं।

(२) एफेड्रा एक्विसेटिना—इसके पौधे सिनिका की अपेक्षा अधिक कड़े होते तथा इसमें शाखा-प्रशाखायें अधिक होती हैं। यह पौधे ऊँचाई में भी पहली की अपेक्षा अधिक होते हैं। इस पर ग्रंथियाँ (Nodes) सिनिका प्रजाति की अपेक्षा अधिक करीब-करीब होती हैं। पत्तियों के अग्र पीछे की ओर नहीं मुड़े होते।

वक्तव्य—विदेशों में पहले चीनी एफेड्रा की ही खपत अधिक होती थी। किन्तु भारतीय एफेड्रा में भी एफेड्रीन की मात्रा काफी पाई जाती है। अतएव व्यवसायिक दृष्टि से भारतीय एफेड्रा भी विशेष महत्त्व का है। विशेषतः सिक्कम के एफेड्रा में एफेड्रीन की मात्रा सबसे अधिक होती है।

रासायनिक संघटन—एफेड्रा के मुख्य सक्रिय घटक इसके l-ephedrine तथा d-p seudoe-phedrine नामक क्षारोद (Alkaloids) हैं जिसकी सकलमात्रा स्थान, संग्रहकाल एवं उपजाति विशेष भेद से १·२५–२ प्रतिशत होती है। उक्त दोनों ही क्षारोद एफेड्रीन (Ephedrine) में परिवर्तित हो जाते हैं। अतएव एफेड्रा का सक्रिय वीर्य यही एफेड्रीन नामक क्षारोद है। भारतीय एफेड्रा में एफेड्रीन की प्रतिशत मात्रा चीनी एफेड्रा की अपेक्षा अधिक होती है।

(३) एफेड्रा जिरेर्डिआना—इसके गुल्म-स्वभाव के खड़े-खड़े छोटे-छोटे पौधे होते हैं। शाखायें गाढ़े हरे रंग की, रम्भाकार (Cylindrical), एक-एक पर्व या ग्रंथि (Node) पर कई-कई तथा किञ्चित वक्राकार होकर ऊर्ध्वगामी (Arcuately ascending) होती हैं। इन शाखाओं पर ध्यानपूर्वक देखने से सूक्ष्म धारियाँ (Striated) दिखाई देती हैं। शाखा-प्रशाखाओं (Branchlets) के पर्व (Internodes) लम्बाई में १–४ सेंटीमीटर तथा व्यास में १–२ मिलिमिटर होते हैं। पत्तियाँ शल्क-सदृश (Reduced to sheath) होती हैं तथा ग्रंथिओं (Nodes) पर पाई जाती हैं। स्त्री एवं पुं-पुष्प भाग अलग-अलग पाये जाते हैं।

[illegible] (Bracts), गोलाकार, कुण्ठिताग्र (Obtuse) एवं मिलित-मूलक (Connate) होते हैं। फल अण्डाकार (Ovoid) पकने पर लाल रंग के तथा मीठे होते हैं। जंगली लोग इन्हें खाते हैं।

(४) एफेड्रा नेब्रोडेन्सिस—के अधिक से अधिक ६ फुट ऊँचे गुल्म (Shrubs) होते हैं, जो सघन शाखा-प्रशाखाओं से युक्त (densely-branched) होते हैं। स्वरूपतः ये शाखायें बहुत-कुछ जिरेर्डिआना की शाखाओं से मिलती-जुलती हैं।

वक्तव्य—औषधीय प्रयोग के लिए उक्त पौधों की सुखाई हुई शाखाओं का व्यवहार होता है, जो बाजार में एफेड्रा नाम से प्राप्त होती है। कहीं-कहीं यह सोम के नाम से भी बेची जाती है। औषधि के लिए कम से कम ४ वर्ष पुराने पौधों का संग्रह करना चाहिए, क्योंकि इससे कम आयु के पौधों में एफेड्रीन की उचित प्रतिशतमात्रा नहीं पाई जाती। संग्रह के लिए जब पौधों में पुष्प निकलते हैं वह समय सबसे उपयुक्त होता है, क्योंकि इस समय पौधे में सक्रियतत्व (अर्थात् एफेड्रीन) की अधिकतम मात्रा पाई जाती है। वर्षा ऋतु (मई से अक्टूबर) में सक्रियतत्व की मात्रा कम रहती है। अतएव उक्त समय में इसका संग्रह नहीं करना चाहिए। एफेड्रीन की अधिकतम मात्रा हरी शाखाओं में होती है। इसका संग्रह अच्छी तरह बन्द बर्तन में करना चाहिए और आर्द्रता तथा प्रकाश से बचाना चाहिए। अन्यथा औषधि निष्क्रिय हो जाती है।

एफेड्रिना Ephedrina (Ephed.)–ले०; एफेड्रीन Ephedrin–अं०।

एफेड्रीन के रंगहीन, अप्रस्वेद्य (Non-deliquescent) तथा अप्रस्फुटनीय (Non-efflorescent), षट्कोणीय (Hexagonal) अथवा त्रिपार्श्विक (Prismatic) मणिभ (Crystals) होते हैं, जो प्रायः गंधहीन होते हैं; अथवा कभी-कभी इनसे एक हल्की अरुचिकारक गंध आती है। विलेयता—जल एवं अल्कोहल (९५%), सॉल्वेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में सद्यः विलेय होता है; इसके अतिरिक्त २० भाग ग्लिसरिन, २५ भाग जैतून के तेल (Olive oil) तथा १०० भाग लिक्विड पाराफिन में भी विलेय होता है।

एफेड्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Ephedrinae Hydro-chloridum (Ephed. Hydrochlor.)–ले०; एफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड Ephedrine Hydrochloride–अं०।

रासायनिक संकेत—$C_{10} H_{15} ON, HCL$.

वर्णन—यह एफेड्रीन नामक अल्कलायड का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है, जो प्रायः रंग-हीन एवं गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त मणिभ (क्रिस्टल) के रूप में होता है। यह जल तथा अल्कोहल (९०%) में विलेय होता है। मात्रा—$\frac{1}{4}$ से १ ग्रेन या १६ से ६० मिलिग्राम।

गुण-कर्म।

एफेड्रीन स्वरूप तथा गुणकर्म में बहुत-कुछ एड्रिनेलीन तथा टायरामीन से सम्बन्धित होता है। रचना में एड्रिनेलीन से इसके व्यूहाणुओं में यह अन्तर होता है, कि एड्रिनेलीन के व्यूहाणु (Molecule) में पाये जानेवाले २ उदजारेय (Hydroxyl) मूलक इसमें नहीं पाये जाते तथा उसकी अपेक्षा इसमें एक मेथिलमूलक अधिक समाविष्ट होता है। इस रचना-

वैशिष्ट्य के कारण यह अधिक स्थिर होता है। एड्रिनेलीन की भाँति इसके प्रभाव भी स्वतन्त्र-नाड्यग्रों के उत्तेजित होने के कारण होते हैं। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर यह अन्य अनेक लक्षण भी पैदा करता है, जो स्वतन्त्र पेशियों एवं स्वतन्त्र नाड़ी-मण्डल की कन्दिकाओं (Ganglias) की अव्यवस्थित उत्तेजना के कारण होते हैं।

स्थानिक प्रयोग से छिली हुई त्वचा (Denuded surfaces) एवं श्लैष्मिक कलाओं पर एफेड्रीन के प्रभाव से रक्तवाहिनियों का संकोच होता है। साधारणतः स्वस्थ त्वचा से प्रायः इसका शोषण नहीं होता।

नेत्र—एफेड्रीन के विलयन का नेत्रों में आश्च्योतन करने से किंचित् कनीनिका-संकोच (Mydriasis) होता है किन्तु नेत्र की अनुसरणशक्ति (Accommodation) तथा नेत्र की श्लेष्मिकला की रक्तवाहिनियों पर कोई प्रभाव नहीं लक्षित होता और न नेत्रान्तर्गत भार में ही वृद्धि होती है।

आभ्यन्तर—आभ्यन्तर प्रयोग से एफेड्रीन का शोषण श्लैष्मिक-कला, आमाशय तथा मलाशयादि से होता है। एड्रिनेलीन की अपेक्षा इसका शोषण मन्दतरगति से किन्तु प्रभाव अधिक स्थायी होता है। एफेड्रिन के विलयन का विशोधन उबालकर भी किया जा सकता है, क्योंकि एमाइन ऑक्सिडेस (Amine oxidase) नामक किण्व के प्रति यह क्षम होता है, अतएव उष्णता से इसकी क्रियाशीलता नष्ट नहीं होती।

हृदय तथा रक्तसंवहन—मुख अथवा अधस्त्वग्मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर यह हृदय की गति में तीव्रता तथा रक्तभार में वृद्धि करता है। एड्रिनेलीन की अपेक्षा यह प्रभाव मन्दतर गति से होता है, किन्तु अधिक स्थायी होता है। एड्रिनेलीन की अपेक्षा इसमें पुनः एक विशेषता है, कि मात्रा की क्रमिक वृद्धि से रक्तभार में तदनुरूप वृद्धि नहीं होती; अपितु अनुबन्धि मात्राओं में वृद्धि-स्थान में कमी हो जाती है इसे फिनॉमेना ऑव टेकी फ्लेक्सिस (Phenomenon of tachyphylaxis) कहते हैं। हृत्पेशी पर इसका प्रत्यक्षतया अवसादक प्रभाव होता है जो अल्पमात्राओं में तो लक्षित नहीं होता, किन्तु अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर स्पष्टतः प्रगट होता है। अन्ततः हृत्पेश्यावसाद के कारण रक्तचाप गिर जाता है।

श्वसन—एफेड्रीन श्वसन केन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करता तथा श्वासप्रणालिका-पेशियों को शिथिल करता है विशेषतः जब वे उद्वेष्ठ या संकोच की दशा में होती हैं यथा तमक-श्वास। यह प्रभाव श्वास-प्रणालिका सम्बन्धी स्वतंत्रनाड्यग्रों पर औषधि का उत्तेजक प्रभाव होने के कारण होता है।

केन्द्रित नाड़ी तंत्र पर भी यह औषधि उत्तेजक प्रभाव करती है, जिससे कभी-कभी विशेषतः स्त्रियों में—अनिद्रा, कम्प तथा चिन्ता एवं अन्यमनस्कता आदि उपद्रव प्रगट होते हैं।

आमयिक प्रयोग।

एफेड्रिन भी प्रायः उन सभी अवस्थाओं में प्रयुक्त होता है, जिनमें एड्रिनेलीन प्रयुक्त किया जाता है। तमकश्वास (Bronchial asthma) में $\frac{१}{४}$ से $\frac{१}{२}$ ग्रेन की मात्रा में प्रयुक्त होने से $\frac{१}{२}$ घंटे के अन्दर कष्ट का निवारण हो जाता है, तथा दिन में ऐसी २–३ मात्रायें सेवन करने से दौरे की शान्ति हो जाती है। यदि रोग का आक्रमण बहुत उग्र होता है, तो ऐसी

[illegible] है यह औषधि एड्रिनेलीन की अपेक्षा दुर्बल पड़ती है, दूसरे कई बार इसका प्रयोग करने से सहनता (Toleration) भी पैदा हो जाती है, जिससे अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न करने के लिए उत्तरोत्तर अधिकाधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। मौखिक प्रयोग के लिए एफेड्रिन हाइड्रोक्लोराइड की टिकिया बाजार में प्राप्त होती हैं। एफेड्रा (सोमकल्प) वनस्पति का स्थूल चूर्ण भी मौखिक प्रयोग के लिए १॥ से ३ माशा की मात्रा में प्रयुक्त किया जाता है। कभी-कभी एफेड्रिन का प्रयोग एड्रिनेलीन के साथ सहायक औषधि के रूप में किया जाता है, जिससे इसका प्रभाव चिरकाल तक स्थिर रहता है। सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त करने के लिए ½ ग्रेन से १ ग्रेन की मात्रा के एफेड्रिन-हाइड्रोक्लोराइड के एम्पूल्स (Ampoules) भी बाजार में उपलब्ध होते हैं, जिनका प्रयोग श्वास के दौरे (Attack) के समय अकेले या एड्रिनेलीन के साथ मिलाकर किया जाता है। किन्हीं रोगियों में एफेड्रिन के प्रयोग से अत्यधिक प्रस्वेद एवं निद्रानाश आदि के उपद्रव हो जाते हैं। बालकों के कुक्कुरकास (Whooping Cough) में कभी-कभी एफेड्रिन के प्रयोग बहुत उपकारक होता है।

श्वास के अतिरिक्त एफेड्रिन का प्रयोग अनवधानिक स्तब्धता (Anaphylactic shock) तृणज्वर (Hayferer) शीतपित्त तथा वाहिनीशोथ (Angio-neurotic oedema) आदि विकारों में तथा स्थानिक संज्ञाहर औषधियों के साथ एड्रिनेलीन के स्थानापन्न रूप में भी होता है। अन्तर्सौषुम्निक संज्ञाहरणजन्य निपात (Collapse) के निवारण के लिए यह एक उत्तम औषधि है। तृणज्वर में मुखद्वारा तथा नासामार्ग से शीकर (Spray) के रूप में दोनों प्रकार से यह अभीष्ट प्रभाव पैदा करता है। शीकर के लिए प्रायः इसका ३ से ५% का विलयन प्रयुक्त होता है। इस प्रकार स्थानिक प्रभाव से रक्ताधिक्य युक्त (Engorged) नासाश्लैष्मिक कला का यह संकोच करता है। सम्प्रति एफेड्रिन के इस प्रभाव का उपयोग प्रतिश्याय (Cold) एवं नासागतशस्त्रकर्म (Nasal surgery) में किया जाता है।

प्रमीलकद्रव्यजन्य विषमयता (Narcotic poisoning) में भी एफेड्रिन बहुत उपयोगी होता है, और इस कार्य के लिए यह, कॅफीन, स्ट्रिक्नीन तथा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड आदि से श्रेष्ठ होता है; क्योंकि यह न केवल श्वसन एवं वाहिनी-प्रेरक केन्द्रों को ही उत्तेजित करता है, अपितु उच्च मानसिक केन्द्रों पर भी बल्य प्रभाव (Analeptic action) करता है, और इस प्रकार अवसाद का निवारण करता है।

गम्भीर पेश्यवसन्नता (Myasthenia gravis) में भी एफेड्रीन का प्रयोग बहुत लाभप्रद होता है। ¾ ग्रेन की मात्रा में प्रतिदिन प्रयुक्त करने से उत्तरोत्तर पेशियों में अधिकाधिक बल्यता उत्पन्न होती है। मैं यह कम्प (Tremor) एवं दौर्बल्य का भी निवारण करता है।

केन्द्रिक नाडीतन्त्र (Central Nervous system) पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण वैकालिक तन्द्रा (Narcolepsy) आदि के निवारण के लिए यह एक उत्तमौषधि है।

बस्तिद्वार (Sphincter of the bladder) पर बल्य प्रभाव करने के कारण बालकों के शय्यामूत्र-रोग (Nocturnal incontinence of urine) में एफेड्रिन का प्रयोग उपादेय होता है। इसके लिए १०–१२ वर्ष के बालक के लिए रात्रि में सोते समय ½ ग्रेन औषधि का सेवन करना चाहिए।

सावधानी—हृद्विकार तथा रक्तभारवृद्धि एवं हृच्छूल के रोगियों में इसका व्यवहार सतर्कता से करना चाहिए।

विषाक्तलक्षण—औषधिसेवन में मात्रातियोग के कारण निम्न उपद्रव लक्षित होते हैं, यथा हृच्छीघ्रता, कम्प (Tremor), शिरोभ्रम (Vertigo), हृत्स्पन्दन, प्रस्वेदन, उत्क्लेश तथा वस्तिक्षोभ आदि। वस्तिक्षोभ के परिणामस्वरूप मल-मूत्र विसर्जन कष्टप्रद हो जाता है। उक्त सभी लक्षण रक्तचाप में वृद्धि होने के कारण होते हैं, अतएव रक्तभार के स्वाभाविक हो जाने पर यह स्वयमेव विलुप्त हो जाते हैं। पहले कहा गया है कि एफेड्रीन हृत्पेशी पर प्रत्यक्ष अवसादक प्रभाव करता है, अतएव जब हृदय में रचनात्मक विकार उत्पन्न हो गया हो तो हृदयावसाद की आशंका के कारण इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। अतएव हृच्छ्वास (Cardiac asthma) तथा उग्र रक्तपरिभ्रमण निपात (Acute-circulatory collapse) में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

कतिपय व्यक्तियों में, जिनमें इस औषधि के प्रति असहिष्णुता होती है, उनमें अल्पमात्रा में प्रयुक्त होने पर भी विषाक्त प्रभाव लक्षित होने लगते हैं। अतएव ऐसे व्यक्तियों को भी इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली एफेड्रिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Ephedrinae Hydrochloridi (Tab.-Ephed. Hydrochlor.), B. P. & I. P.—ले०; इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड टॅबलेट Ephedrine Hydrochloride Tablet—अं०; इफेड्रिन की टिकिया–हि०। मात्रा–$\frac{1}{4}$ ग्रेन से १ ग्रेन (१६ से ६० मि० ग्राम०)। वक्तव्य—यदि प्रतिटिकिया इफेड्रीन की विशिष्ट मात्रा का निर्देशन हो तो $\frac{1}{2}$ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

२—एक्स्ट्रॅक्टम् ए(इ)फेड्री लिक्विडम् Extractum Ephedrae Lquidum (Ext. Ephed.-Liq.) I. P.&I. P. L.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव इफेड्रा Liquid Extract of Ephedra-अं०; इफेड्रा का प्रवाहि घन-सत्व-हि०। इसमें २ प्रतिशत (w/v) इफेड्रीन होता है। मात्रा (I. P. Dose) ३० से ४५ बूंद या मिनम् (२ से ३ मि० लि०)।

३—टिंक्चुरा एफेड्री Tinctura Ephedrae (Tinct. Ephed.) I. P. &I. P.L.—ले०; टिंक्चर ऑव इफेड्रा Tincure of Ephedra—अं०। इफेड्रा का निष्कर्ष—हिं०। टिंक्चर इफेड्रा, लिक्वि एक्स्ट्रॅक्ट ऑव इफेड्रा से बनाया जाता है। इसमें $\frac{1}{2}$ प्रतिशत (W/V) इफेड्रीन होता है। मात्रा—९० से १२० बूंद या मिनम् (६ से ८ मि० लि०) या १॥ से २ ड्राम।

(नॉट-आफिशल योग)

१—एलिक्जिर एफेड्रिनी हाइड्रोक्लोराइडाई Elixir Ephedrinae Hydrochloridi (Elix. Ephed. Hydrochler.)। मात्रा—$\frac{1}{2}$ से १ ड्राम।

२—स्यूडो-इफेड्रिन Pseudo-Ephedrine—यह इफेड्रीन की अपेक्षा कम विषैला है। दमा (Asthma) में विशेष उपयोगी है।

३—एड्रिनो-एफेड्रीन (Adreno-Ephedrine)—यह १००० में १ के बल के एड्रिनेलीन सॉल्यूशन में बनाया जाता है, जिसमें २% इफेड्रीन होता है। इसका उपयोग स्थानिक प्रयोग के लिये

स्थैनिक स्थानों पर वाहिनी-संकोचक क्रिया के लिये तथा श्वास (Asthma) एवं औपसर्गिक सर्वांगशोथ (Epidemic Dropsy) आदि रोगों में अधस्त्वक्सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है।

कोरामीन-एफेड्रीन Coramine-Ephedrine (Ciba)—इसकी टिकिया (Tablets), (२) १ सी० सी० के एम्प्यूल्स तथा (३) १५ सी० सी० की बंद शीशियाँ (द्रव की Liquid Bottles) आती हैं। दमा एवं उग्र रक्तभारावसाद (Acute Hypotension) में विशेष उपयोगी है।

५—कार्डियाजोल-एफेड्रीन (Cardiazol-Ephedrine (Knoll) ।

६—एफाजोन Ephazone—इसकी टॅबलेट्स आती हैं। इसमें इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड, थियोब्रोमीन, फेनाजोन तथा एक्नोरिसिन होता है।

७—जेफ्रॉल Zephrol—अर्थात् इफेड्रीन कफ सिरप (Ephedrine Cough Syrup)—उद्वेष्टयुक्त कास (Spasmodic cough) में १ चम्मच २-३ बार दें।

८—एन्ड्रीन Endrine—नासा बिंदु (Nasal drop) तथा नासा-सीकर (Nasal spray) के रूप में प्रयुक्त होता है।

इफेड्रीन के नुस्खे:—

(१) एफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड — ४ ग्रेन
सोडियम् क्लोराइड — ४½ ग्रेन
क्लोरब्यूटॉल — २ ग्रेन
परिस्रुत जल (Aqua Destillata) — १ औंस

मुख तथा नासा में सीकर (Oro-nasalspray) के लिए यह एक उत्तम योग है।

(२) एफेड्रीन — ४ ग्रेन (२ रत्ती)
क्लोरब्यूटाल (Chlorbutol) — ४ ग्रेन ,,
मूंगफली का तेल — २५० बूंद
लिक्विड पाराफिन लीवी (लघु पाराफिन) — ४ औंस

नासा बिन्दु (Nasal drop) के लिए यह एक उत्तम योग है।

एम्फिटामिना (बेंजेड्रीन), I. P., B. P.
Amphetamina (Amphetamin.)

रासायनिक संकेत—$C_6H_5.CH_2.CH.(NH_2.)CH_3$.

नाम—एम्फिटामीन Amphetamine, बेंजेड्रीन (Benzedrine)—अं०।

वर्णन—यह रंगहीन द्रव के रूप में होता है, जिसमें एक हल्की किन्तु विशिष्ट प्रकार की गंध होती है तथा स्वाद में उग्र (Acid) होता है। यह जल में तो अंशतः विलेय होता है; किन्तु सॉल्वेंट ईथर, अल्कोहल् तथा क्लोरोफॉर्म एवं अम्लों (Acids) में अपेक्षाकृत अधिक विलेय होता है। साधारण तापक्रम पर भी धीरे-धीरे उड़ता रहता है। इसमें कम से कम ९८% $C_9H_{13}N$. होता है।

एम्फिटामिनी सल्फास Amphetamineae sulphes (Amphetamin. Sulph.) I. P., B. P. लि०; एम्फिटामीन सल्फेट Amphetamine Sulphate, बेंजेड्रीन सल्फेट Benzedrine Sulphate अं०।

यह एक गंधहीन श्वेत वर्ण के चूर्ण के रूप में होता है, जो स्वाद में कुछ तीता होता है। २०° तापक्रम पर ८·८ भाग जल तथा ५१५ भाग अल्कोहल् (९५%) में विलेय होता है। मात्रा—२ १/२ से १/६ ग्रेन या २·५ से १० मिलिग्राम।

गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग।

रासायनिक संघटन की दृष्टि से एम्फिटामीन बहुत-कुछ इफेड्रीन से मिलता-जुलता है। साधारणतया इसकी क्रिया एड्रीनेलीन की भाँति (Adrenergic) होती है; किन्तु एड्रीनेलीन की अपेक्षा इससे मानसिक उत्तेजना (Cortical stimulation) अधिक होती है।

स्थानिक (Local)—स्थानिक प्रयोग से एम्फिटामीन की क्रिया एड्रीनेलीन एवं इफेड्रीन की भाँति होती है।

(२) यह श्वसनोत्तेजक (Respiratory stimulant) होता है। मौखिक प्रयोग (Oral use) के लिए एम्फिटामीन सल्फेट उपयुक्त होता है क्योंकि यह उत्पत् (Volatile) नहीं होता। इसकी ५ मि० ग्रा० की टिकिया बाजार में मिलती हैं।

उपर्युक्त गुण-कर्म के कारण एम्फिटामीन का प्रयोग नार्कोलेप्सी (Narcolepsy), गम्भीर प्रमीलनावस्था (Profund narcosis,) मानसिक अवसाद (Depressing psychopathy) तथा पार्किंगसोनिज्य Post-encephalitic parkinsonism आदि मानसिक व्याधियों में बहुत उपयोगी होता है। एतदर्थ इसको स्कोपोलामीन के साथ प्रयुक्त करते हैं। मृगी या अपस्मार को चिकित्सा के लिए जब फेनोबारबिटोन का प्रयोग अधिक समय तक करना हो तो साथ में एम्फिटामीन भी मिला दिया जाता है। स्वस्थावस्था में एम्फिटामीन का प्रयोग थकावट आदि के निवारण के लिए नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसी अवस्था में जल्दी ही विषाक्त प्रभाव उत्पन्न होने की आशंका रहती है।

अनैच्छिक पेशियों पर यह उद्वेष्टनिवारक (Spasmolytic) प्रभाव करता है। इससे कभी-कभी इसका प्रयोग बालकों के शय्यामूत्र (Nocturnal-enuresis) रोग में किया जाता है।

एम्फिटामीन महास्रोतस् द्वारा क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाता है और इसका निस्सरण (Excretion) वृक्कों द्वारा होता है। अधिक काल तक औषधि का प्रयोग करने से किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में इसकी आदत (Habituation) पड़ जाती है।

प्रयोगनिषेध (Contra-indications)—निम्न अवस्थाओं में एम्फिटामीन का प्रयोग नहीं करना चाहिए—(१) रक्तचाप वृद्धि (Hypertension), धमनीदार्ढ्य (Arteriosclerosis) एतदर्थ इसका प्रयोग सीकर (Spray: १% विलयन) के रूप में किया जा सकता है अथवा इन्हेलर (Inhaler) द्वारा इसके वाष्प का आघ्राणन (Inhalation of the vapour) किया जाता है। इसप्रकार प्रयुक्त करने से यह स्थानिक रक्तवाहिनियों का संकोच (Vaso-constriction) करता है तथा उक्तस्थल का स्राव (Secretion) भी कम हो जाता है। नासाग्रसनिका (Nasopharyngeal) मार्ग की शोफयुक्त व्याधियों यथा प्रतिश्याय (Coryza), नासा की श्लैष्मिककला का उग्रशोथ (Acute rhi-

nitis), नासा-कोटरशोथ (Sinusitis) एवं कर्णनलिकावरोध (Eustachian tube blocking) आदि में एफिटामीन का प्रयोग उक्त प्रकार से किया जाता है, और इससे बहुत लाभ होता है। आघ्राण के लिए एफिटामीन की नलिकायें बाजार में मिलती हैं। अधिक मात्रा में अथवा चिरकाल तक सूंघते रहने से, औषधि के कुछ भाग के शोषित हो जाने से मानसिक उत्तेजना (Cortical stimulation) आदि सार्वदैहिक प्रभाव भी लक्षित होते हैं।

एफिटामीन सल्फेट के १०% विलयन या सॉल्यूशन को आँख में डालने से कनीनिका विस्फार (Dilatation of the pupil) होता है, और साथ ही नेत्र की अनुकूलन-शक्ति (Accomodation) एवं नेत्रान्तःभार (Intra-ocular tension) में कोई विकृति नहीं होती।

समान्यकायिक प्रभाव (Systemic Action)—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर एफिटामीन बृहन्मस्तिष्कबहिस्तर (Cerebral cortex) एवं सुषुम्नाशीर्ष (Medulla) पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिसके परिणामस्वरूप निम्न प्रभाव लक्षित होते हैं—(१) यह तीव्र मानसिक उत्तेजक (Cerebral excitant) होता है, जिससे मानसिक कार्य-क्षमता बढ़ जाती है, तथा थकान एवं अनिद्रा की अनुभूति कम होती है। (२) रक्त-भार (Blood Pressure) में वृद्धि होती है तथा।

आइसोप्रिनेलिनीसल्फास (I. P.; B. P.)

रासायनिक संकेतः $C_{11}H_{17}O_3N, \frac{1}{2}H_2SO_4, H_2O$.

नाम—आइसोप्रिनेलिनी सल्फास (सल्फेटिस) Isoprenalinae Sulphas (Sulphatis)—ले०; आइसो प्रिनेलीन सल्फेट (Isoprenaline Sulphate) —अं०।

पर्याय—एल्युड्रिन (Aleudrin); नियोड्रिनल (Neodrenal); नियो-एपिनीन (Neo-epinine)।

प्रति-स्थापन—रासायनिक दृष्टि से यह 1—(3 : 4-dihydroxyphenyl)—2-iso propylaminoethanol Sulphate होता है। इसमें ५·२ % से ५·५ % तक N., तथा ६% से ६·३ % तक S होता है।

वर्णन—आइसोप्रिनेलीनसल्फेट रंगहीन एवं गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जो जल में अच्छी तरह घुल जाता है। किन्तु अल्कोहल् (९५%), क्लोरोफार्म एवं साल्वेंट ईथर में प्रायः अविलेय होता है।

मात्रा—$\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन (५ से २० मि० ग्रा०)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

इसकी क्रिया एड्रिनेलीन की भांति होती है, किन्तु यह एड्रिनेलीन की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है। इसमें श्वासनलिका-विस्फारक क्रिया एड्रिनेलीन तथा एफेड्रीन दोनों की अपेक्षा तीव्र होती है। इसके अतिरिक्त इसके प्रयोग से रक्तभार में कमी होती है, तथा हृदय की गति तीव्र हो जाती है। औषधार्थ इसका व्यवहार मुखद्वारा, जिह्वाधः मार्ग से (Sublingually)

अथवा आघ्राणन के रूप में किया जाता है। तमकश्वास (Bronchial asthma) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके लिए १० मि० ग्रा० की टिकिया जिह्वा के नीचे रखने से कार्य चल जाता है। एतदर्थ जिह्वाधः गुटिका (Linguets) का भी व्यवहार कर सकते हैं। आघ्राणन के लिए इसके ०·५ से ३ % बल के सोल्यूशन का सीकरयन्त्र द्वारा (Atomiser) मुंह में सीकर (Spray) किया जाता है। किन्तु एक बार में १ सी० सी० से अधिक सोल्यूशन नहीं प्रयुक्त करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर उक्त क्रिया ४-४ घंटे पर दुहराई जा सकती है। अन्य कारणों से उत्पन्न श्वासनलिकोद्वेष्ठ (Bronchospasm) में भी इसको प्रयुक्त कर सकते हैं। इन्जेक्शन के रूप में यथासम्भव इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार इसके साथ-साथ एड्रिनेलीन का भी व्यवहार नहीं करना चाहिए।

ऑफिशल योग

टॅबेली आइसोप्रिनेलिनी सल्फेटिस Tabellae Isoprenalinae Sulphatis (Tab. Isoprenalin. Sulph.)I. P., B. P.–ले०; टॅबलेट्स ऑव आइसोप्रिनेलीन सल्फेट Tablets of Isoprenaline Sulphate–अं०; आइसो प्रिनेलीन की टिकिया–हिं०। मात्रा—$\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन। यदि प्रति टिकिया मात्रा का उल्लेख न हो तो १० मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

(नॉट-ऑफिशल)

२—नेबुला आइसोप्रिनेलीनी सल्फेटिस Nebula Isoprenalinae Sulphatis (Neb. Isoprenal. Sulph.),B. P.C.–ले०; आइसोप्रिनेलीन स्प्रे Isoprenaline Spray–अं०। आइसो प्रिनेलीन सल्फेट ४३$\frac{3}{4}$ ग्रेन, प्रोपिलिन ग्लाइकोल (Propylene glycol) $\frac{1}{2}$ फ्लुइड औंस, सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट ४$\frac{3}{8}$ ग्रेन, डिस्टिल्डवाटर आवश्यकतानुसार १० औंस के लिए। इसमें १०% आइसो प्रेनेलीन होती है।

३—नेबुला आइसो प्रिनेलिनी सल्फेटिस कम्पोजिटा Nebula Isoprenalinae Sulphatis Composita (Neb. Isoprenal Sulph. Co.)–ले०; आइसो प्रिनेलीन कम्पाउण्ड स्प्रे—अं०। आइसो प्रिनेलीन सल्फेट ४३$\frac{3}{4}$ ग्रेन, एट्रोपीनमेथोनाइट्रेट (Atropine methonitrate) ८$\frac{3}{4}$ ग्रेन, पापवेरीन हाइड्रोक्लोराइड $\frac{1}{4}$ औंस, प्रोपिलीन ग्लाइकोल $\frac{1}{2}$ फ्लुइड औंस, सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट ४$\frac{3}{8}$ ग्रेन डिस्टिल्ड वाटर आवश्यकतानुसार १० औंस के लिए। इसमें १०% आइसोप्रिनेलीन, २$\frac{1}{2}$% पापावेरीन हाइड्रोक्लोराइड तथा ०.२% अट्रोपीन मेथोनाइट्रेट होता है।

मेथिल-एम्फिटामिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Methylamphetaminae Hydrochloridum (Methylamphetamin Hydrochlor.), I. P., B. P. Add.–ले०; मेथिल-एम्फिटामीन हाइड्रोक्लोराइड—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{15}N$, HCL.

पर्याय—डिसॉक्सि-इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड (Desoxy-ephedrine Hydrochloride)—अं०; मेथेड्रीन (Methedrine); पर्विटिन (Pervitin)।

प्राप्तिसाधन—यह मेथिल-एम्फिटामीन का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है, जिसमें कम से कम ९९% मेथिल-एम्फिटामीन ($C_{10}H_{15}N$) होता है।

वर्णन—सफेद रंग का सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल, अल्कोहल् तथा क्लोरोफॉर्म में घुलनशील होता है।

मात्रा—१/२५ से १/६ ग्रेन (२·५ से १० मि० ग्रा०)। मस्तिष्कोत्तेजक (Analeptic)—१० ३० मि० ग्रा०, पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—इसके गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग बहुत-कुछ एम्फिटामीन की ही भाँति होते हैं। मस्तिष्कोत्तेजक (Cerebral stimulant) होता है तथा रक्त-वाहिनियों का संकोच करता है, जिससे रक्त-निपीड़ (Blood Pressure) बढ़ता है। शारीरिक एवं मानसिक कार्य-क्षमता बढ़ती है। एतदर्थ इसका प्रयोग मुखद्वारा भी किया जा सकता है। सुषुम्नाशीर्षोत्तेजक (Analeptic) होने के कारण संज्ञाहरण के उपद्रवस्वरूप अथवा प्रमर्लीक द्रव्यों (Narcotics) के कारण सम्भावी निपात (Collapse) में इसको अधस्त्वक् पेशीगत या शिरागत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त किया जाता है।

(ऑफिशल योग)

इन्जेक्शिओ मेथिल-एम्फिटामिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Injectio Methylamphetaminae Hydrochloridi, I. P., B. P. Add.—ले०; इंजेक्शन ऑव मेथिलेम्फिटामीन हाइड्रोक्लोराइडाइ—अं०। मात्रा। एनालेप्टिक (Analeptic) या सुषुम्नाशीर्षोत्तेजक के रूप में—१० से ३० मि० ग्रा० (१/६–१/२ ग्रेन) पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा। सोल्यूशन के बल का निर्देश न होनेपर प्रति सी० सी० (मि० लि०) २० मि० ग्रा० या १५ मिनम् में १/३ ग्रेन के बल का सोल्यूशन देना चाहिए।

२—टॅबेली मेथिलेम्फिटामिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Methylamphetaminae Hydrochloridi, B. P. Add.—ले०; टॅबलेट्स ऑव मेथिलोम्फिटामीन—अं०। मात्रा—२·५ से १० मि० ग्रा० (१/२५ से १/६ ग्रेन)। मात्रा का निर्देश न होने पर ५ ग्रेन की टॅबलेट देनी चाहिए।

डेक्सेम्फिटामिनी सल्फास Dexamphetaminae Sulphas (Dexam phetamin Sulph.), B. P. C.–ले०; डेक्सेम्फिटामीन सल्फेट– Dexamphetamine Sulphate–अं०। पर्याय—डेक्सेड्रीन (Dexedrine)।

वर्णन—सफेद या प्रायः सफेद रंग का क्रिस्टलाइन या सूक्ष्म क्रिस्टलाइन (Microcrystalline) चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता– ९ भाग जल एवं ९००० भाग अल्कोहल (९०%) में घुलता है।

मात्रा—१/१२ से १/६ ग्रेन (५ से १० मि० ग्रा०)।

गुण एवं प्रयोग—यह एम्फिटामीन की अपेक्षा दुगुना सक्रिय होता है। इसके आमयिक प्रयोग भी एम्फिटामीन की ही भाँति समझना चाहिए। मेदोरोग (Obesity) में विशेषरूप से उपयोगी होता है। एतदर्थ ५ से १० मि० ग्रा० (१/१२ से १/६ ग्रेन) औषधि दिन में तीन बार भोजन के आधा घंटा पूर्व देना चाहिए।

अन्य (नॉन्-ऑफिशल) सिम्पैथोमाइमेटिक औषधियाँ:—

नेफाजोलिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Naphazolinae Hydrochloridum (Naphazolin. Hydrochlor.), B. P. C.–ले०; नेफाजोलीन हाइड्रोक्लोराइड Naphazoline Hydrochloride–अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{14}H_{15}N_2Cl$.

पर्याय-प्राइवीन (Privine)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २-(1- naphthylmethyl) iminazoline hydrochloride होता है, जो सफेद या मटमैले सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। यह प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—६ भाग जल एवं १५ भाग अल्कोहल् में घुलता है।

गुण एवं प्रयोग—इसके प्रयोग से परिसरीय रक्त-वाहिनियों का संकोच होता है, जिससे रक्तभार (Blood Pressure) में वृद्धि होती है। प्राइवीन का चिकित्सार्थ प्रयोग मुख्यतः स्थानिक प्रयोग (Local applicatian) के लिए किया जाता है। अनूर्जिक (Allergic) या शोफजन्य (Inflammatory) नासाश्लैष्मिककलाशोथ (Rhinitis) अथवा नासाकोटरशोथ (Sinusitis) में इसका ०.०५ से ०.१ % जलीय विलयन (Aqueous isotonic solution) प्रयुक्त करने से वहुत लाभ होता है। व्याधि की तरुणावस्था एवं चिरकालज स्वरूप दोनों में ही समानरूप से उपयोगी है।

फेनिलेफ्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Phenylephrinae Hodrochloridum (Phenylephrin. Hydrochlor.), B. P. C., U. S. P.-ले०; फेनिलेफ्रीन हाइड्रोक्लोराइड Phenylephrine Hydrochloride-अं०।

रासायनिक संकेत: $C_9H_{14}O_2NCl$.

पर्याय—नियोफ्रिन (Neophryn); नियो-सिनेफ्रीन (Neo-Synephrine)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह (—)-१-(३-hydroxyphenyl) -२-methyl-aminoethanol hydrochloride होता है, जो सफेद या मटमैले सफेद रंग के गंधहीन एवं स्वाद में तिक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता-२ भाग जल एवं ४ भाग अल्कोहल् में घुल जाता है। मात्रा—$\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन (५ से १० मि० ग्रा०) अधस्त्वक् या पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा।

गुण एवं प्रयोग—यह भी सिम्पैथोमाइमेटिक समुदाय की औषधि है और एड्रिनेलीन की अपेक्षा कम विषैली है तथा इसका प्रभाव भी उसकी अपेक्षा अधिक स्थायी होता है। मुखद्वारा सेवन किये जाने पर परिसरीय रक्तवाहिनियों का संकोच करने के कारण (Peripheral vasoconstriction) रक्तभार में वृद्धि करता है। साथ ही इसमें यह भी विशेषता है, कि यह हृदय सम्बन्धी कोई विकृति भी नहीं होती तथा केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान के केन्द्रों (Cerebral centres) पर कोई उत्तेजक प्रभाव भी नहीं करता। सुषुम्नामार्ग द्वारा प्रयुक्त संज्ञाहर औषधियों के साथ सम्भावी रक्तभार की कमी के निवारण के लिए इसको प्रयुक्त करते हैं। स्थानिक संज्ञाहर (Local anaesthetics) औषधियों के साथ भी इसको वाहिनीसंकोचन क्रिया के लिए प्रयुक्त करते हैं। इससे संज्ञाहर औषधि का प्रभाव देर तक ठहरता है। अधस्त्वक् अथवा पेशीगत इंजेक्शन के लिए प्रारम्भ में ५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ ग्रेन) मात्रा प्रयुक्त करते हैं। वाद में आवश्यकतानुसार १ से १० मि० ग्रा० ($\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन औषधि दी जाती है। शिरागत मार्ग द्वारा बूंद-बूंद करके (Intravenous drip-method) भी इसका प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ ७५ से १०० मि० ग्रा० मात्रा ५०० सी० सी० लवणजल या गूलूकोज सोल्यूशन में मिलाकर प्रयुक्त करते

है। परिसरीय वाहिनीसंकोचक होने के कारण, परीसरीय रक्तसंवहननिपात (Peripheral-vascular collapse) में इसका प्रयोग उपकारी है। किन्तु रक्तराशि की कमी से होने वाली विकृति में यह उपयोगी नहीं होता। ०.२५ से ०.५% बल का सोल्यूशन स्थानिक क्रिया के लिए नासा की श्लैष्मिक कला के शोथ (Nasal congestion), नाशाकोटरशोथ (Sinusitis), तृणज्वर (Hay fever), नाक से पानी बहना (Vasomotor rhinitis) में प्रयुक्त करते हैं। नेत्र-चिकित्सा में कनीनिका-विस्फारण (Mydriasis) के लिए यह बहुत उपयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त स्थानिक प्रयोग द्वारा वाहिनीसंकोचक प्रभाव के लिए भी प्रयुक्त हो सकता है। एतदर्थ ०.५ से २% बल का सोल्यूशन प्रयुक्त करते हैं। स्थानिक संज्ञाहर द्रवों में भी इसे (२००० में १) मिलाया जाता है। रक्तभार की कमी में (Postural hypotension) तथा (Supraventricular tachycardlia) में इसको १/३ से ३/४ ग्रेन (२० से ५० मि० ग्रा०) की मात्रा में मुखद्वारा प्रयुक्त किया जाता है। किन्तु रक्तभाराधिक्य (Hypertension) के रोगियों में तथा हृदय में गुण-कर्मीय विकृति (Organic disease) होनेपर यह उपयोगी नहीं होता। १% सोल्यूशन का प्रयोग आघ्राणन के रूप में श्वासनलिका विस्फारण के लिए तमकश्वास में दे सकते हैं।

(नॉन्-ऑफिशलयोग)

१—इन्जेक्सन ऑव फेनिलेफ्रीन हाइड्रोक्लोराइड Injection of Phenylephrine Hydrochloride, U. S. P.-अं०। इसकी १ सी० सी० तथा ५ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं। १ सी० सी० में १० मि० ग्रा० (१/६ ग्रेन) तथा ५ सी० सी० में ५० मि० ग्राम० (३/४ ग्रेन) दवा होती है।

२ - सोल्यूशन ऑव फेनिलेफ्रीन हाइड्रो क्लोराइड Solution of Phenylephrine Hydrochloride, U. S. P.-अं०। यह स्वच्छ; रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें ९५% से १०५% तक औषधि होती है।

हाइड्रॉक्सि-एम्फिटामीन हाइड्रोब्रोमाइड Hydroxy-amphetamine Hydrobromide--अ०। पर्याय पेरेड्रीन (Paredrine)।

यह रासायनिक दृष्टि से २—amino-1-p-hydroxy phenylpropane hydrobromide होता है। यह एड्रिनेलीन की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है, साथ ही केन्द्रिक नाड़ी-संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव नहीं करता। मुखद्वारा अथवा अधस्त्वक् अथवा शिरागतमार्गद्वारा प्रयुक्त करने से रक्तभार में वृद्धि करता है। यह प्रभाव कुछ तो प्रत्यक्ष हृत्पेशी पर उत्तेजक क्रिया होने से तथा परिसरीय एवं आशयिक रक्तवाहिनियों का संकोच होने से होता है। नेत्रों में इसका सोल्यूशन (१ से ३%) डालने से कनीनिका-विस्फार (Mydriasis) होता है, किन्तु नेत्र के अनुकूलन गति में कोई विकृति नहीं होती और नेत्रान्तर्गत भार (Intraocular tension) भी नहीं बढ़ता। वाहिनी-संकोचक क्रिया के लिए इसका व्यवहार सौषुम्निक संज्ञाहरण (Spinal anaesthesia), रक्तभार न्यूनता (Postural hypotension), हृदय-निपात (Heart Block) तथा हृच्छीघ्रता (Supraventricular tachycardia) आदि अवस्थाओं में भी किया जाता है। सौषुम्निक संज्ञाहरण में वाहिनी-संकोच क्रिया के लिए पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा १० से २० मि० ग्रा० (१/६ से १/३ ग्रेन) अथवा ५ से १० मि० ग्रा० (१/१२ से १/६ ग्रेन) शिरागत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त करते हैं।

मात्रा—(१) मुखद्वारा—२० से ४० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ से $\frac{2}{3}$ ग्रेन); (२) पेशीगत इंजेक्शन द्वारा—१० से २० मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन) (३) शिरागत इंजेक्शन द्वारा—५ से१० मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन)

मेथोक्सामीन हाइड्रोक्लोराइड (Methoxamine Hydrochloride) । पर्याय—वेसिलोक्स (Vasylox), वेसोक्सीन (Vasoxine) ।

यह भी एक सिम्पैथोमाइमेटिक एमाइन होता है, और इस वर्ग की अन्य औषधियों की भाँति परिसरीय रक्तसंवहन-निपात (Peripheral vascular failure) में प्रयुक्त किया जाता है। शस्त्रकर्म में सौपुम्निक संज्ञाहरण आघात एवं अधिक रक्तस्राव होने पर रक्तभार (Severe hypertension) के रोगियों में, परम अवटुमयता (Hyper. thyroidism) तथा हार्दिक धमन्यवरोध (Cardiac infarction) के रोगियों में इसका प्रयोग निषिद्ध है। मात्रा—१० से १५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। आत्ययिक अवस्थाओं में ५ से १० मि० ग्रा० शिरागत इंजेक्शन द्वारा दे सकते हैं।

फेनिलप्रोपेनोलेमीन हाइड्रोक्लोराइड Phenylpropanolamine Hydro chloride । पर्याय— प्रोपेड्रीन (Propadrine) ।

रासायनिक दृष्टि से यह २—amino—1—Phenyl—1—propanol-hydrochloride होता है, जो बहुत-कुछ एफेड्रीन से मिलता-जुलता है। मुखद्वारा इसका सेवन अनूर्जिक उपद्रवों (Allergic manifestations) में किया जाता है। और इसका जलीय सोल्यूशन (१ से ३%) का स्थानिकप्रयोग वाहिनी-संकोचक क्रिया के लिए किया जाता है। मात्रा—२५ से ५० मि० ग्रा० ($\frac{2}{5}$ से $\frac{3}{4}$ ग्रेन) मुखद्वारा।

फेनिलप्रोपिलमेथिलामीन (Phenylpropylmethylamine) ।

पर्याय—वेनोड्रीन (Venodrine) ।

रासायनिक दृष्टि से यह २—phenyl—1—methylaminopropane होता है। यह विशेषतः स्थानिक वाहिनी-संकोचक (Local vasoconstrictor) प्रभाव करता है। इसके उड़नशील यौगिक (Volatile base) का प्रयोग आघ्रायन के रूप में तथा हाइड्रोक्लोराइड लवण का जलीय सोल्यूशन स्थानिक प्रयोग के लिए व्यवहृत होता है।

फोलेड्रीन (Pholedrine) पर्याय—वेरिटेन Veritain; फोलेटोन (Pholetone) ।

रासायनिक दृष्टि से यह P—(2—Methylaminopropyl) phenol होता है। यह भी परिसरीय वाहिनी-संकोचक है, जिससे धमनी एवं शिरागत दोनों प्रकार के रक्तभार में वृद्धि होती है, साथ ही कुछ हृच्छीघ्रता (Tachycardia) भी होती है। प्रयोग—इस वर्ग की अन्य औषधियों की भाँति। मात्रा—२० से ३० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन) पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा; ५ से १५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन) शिरागतमार्ग द्वारा।

साइक्लोपेन्टामीन हाइड्रोक्लोराइड (Cyclopentamine Hpdrochloride)—पर्याय—क्लोपेन हाइड्रोक्लोराइड (Clopane Hydrochloride)—

रासायनिक दृष्टि से यह 1—cyclopentyl—2—methylaminopropane hydrochloride होता है। नासा की श्लैष्मिक कला के सूजन और लाली को हटाने के लिए (as nasal deconge-

stant) ½ से १% बल का सोल्यूशन स्थानिक प्रयोग के लिए प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त रक्तभार को बढ़ाने के लिए भी इसका व्यवहार किया जाता है। मात्रा—२५ मि० ग्रा० (⅖ ग्रेन) पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा; १० मि० ग्रा० (⅙ ग्रेन) शिरागत मार्ग इंजेक्शन द्वारा।

मेथॉक्सिफेनामीन हाइड्रोक्लोराइड (Methoxyphenamine Hydrochloride)। पर्याय—आरथॉक्सीन हाइड्रोक्लोराइड (Orthoxine Hydrochloride)।

रासायनिक दृष्टि से यह २—(o-Methoxyphenyl) isopropylmethylamine hydrochloride, यह एक तीव्रश्वासनलिका-विस्फारक (Bronchodilator) औषधि है। दमा या श्वास (Asthma), अनूर्जिकनासाशोथ (Allergic rhinitis), शीतपित्त एवं अनूर्जाजन्य आमाशयान्त्र-प्रणाली उपद्रवों (Gastrointestinalal lergy) में विशिष्ट रूप से उपयोगी है। मात्रा—५० से १०० मि० ग्रा० (¾ से १½ ग्रेन) मुखद्वारा।

टुआमेनोहेप्टेन (Tuaminoheptane) पर्याय—टुआमीन (Tuamine)।

रासायनिक दृष्टि से यह 1—methylhexylamine होता है। स्थानिक वाहिनी-संकोचक है। इसका मुख्य उपयोग नासागत लाली तथा सूजन को दूर करने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसको आघ्राणन (Inhalation) के रूप में तथा इसके जलविलेय सल्फेटसाल्ट का सोल्यशन (१%) सीकर (Spray) या बिन्दु (Drop) के रूप में व्यवहृत होता है।

कोबेफ्रीनहाइड्रोक्लोराइड (Cobefrine Hydrochloride)।

रासायनिक दृष्टि से यह 3, 4—dihydroxyphenyl. propanolamine hydrochloride होता है। यह जल में सुविलेय होता है। इससे जलीय विलयन (1 : 200 aqueous solution) का प्रयोग केशिकारक्तस्राव (Capillary haemorrhage) को रोकने के लिए किया जाता है। स्थानिक संज्ञाहरण के लिए प्रयुक्त सोल्यूशन्स में भी मिलाते हैं।

वायामीन (Wyamine) पर्याय—मिफेन्टरमीन (Mephentermine)।

रासायनिक दृष्टि से N-methylphenyl-tertiary-butylamine होता है। रक्तभार की कमी में (Hypotensive conditions) १० से २० मि० ग्रा० (⅙ से ⅓ ग्रेन) पेशीगत या शिरागत मार्गद्वारा प्रयुक्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस वर्ग की अन्य औषधियों की भाँति स्थानिक प्रयोग के लिए भी व्यवहृत होता है।

मेराट्रन (Meratran), फ्रेंकेल (Frenquel), या बेंजहाइड्रॉल हाइड्रोक्लोराइड (Benzhydrol Hydrochloride)।

रासायनिक दृष्टि यह a-(2-piperidyl) benzhydrol hydrochloride है। इसका विशेष उपयोग केन्द्रिक नाड़ी-संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव के लिए किया जाता है। किन्तु परिसरीय रक्तवाहिनियों, हृदय एवं रक्तभार आदि पर विशेषरूप से सक्रिय नहीं होता। इसका उपयोग नाड़ी-संस्थान की विभिन्न विकृतियों में किया जाता है। इस प्रकार यह (Narcolepsy), अवसाद (Depression) (Apathy of Chroinc Schizophrenia Spasmodietorticollis,), (Leucolomy) तथा अत्यधिक मानसिक अवसाद करने वाली औषधियों के उपद्रव के शमन के लिए व्यवहृत हो सकता है। मात्रा—२ से २० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुखद्वारा।

४—रक्तचाप-ह्रासक औषधियाँ।

एमिलिस नाइट्रिस एमिल Amylis Nitris (Amyl. Nitris) I. P., B. P.

एमिल नाइट्राइट (Amyl Nitrite)।

वर्णन—यह एक स्वच्छ पीले रंग का सुगंधित द्रव होता है, जो स्वाद में तीक्ष्ण (Pungent) एवं सौगन्धित होता है। यह अत्यन्त उड़नशील एवं ज्वलनशील (Inflammable) होता है और निम्न तापक्रम पर भी उड़ता रहता है। यह जल में तो अविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल (९५%) एवं सॉल्वेंट ईथर में मिल जाता है। मात्रा—२ से ५ बूंद (मिनम्) या ०·१२ से ०·३ मि० लि० (आघ्राणन) Inhalation (सूँघने के लिए) द्वारा।

वक्तव्य—एमिल नाइट्राइट को खूब अच्छी तरह डाटबंद शीशियों में रखकर ठंडे अंधेरे जगह में रखना चाहिए। उष्णता से तथा शीशी को बहुत हिलाने से यह अधिकाधिक उड़ता है।

गुणकर्म।

आभ्यन्तर। रक्त—फुफ्फुस एवं आमाशय द्वारा क्षिप्रतापूर्वक शोषित होकर रक्तपरिभ्रमण में सोडियम् नाइट्राइट के रूप में परिवर्तित हो जाता है। रक्त में अत्यधिक मात्रा में उपस्थित होने पर यह जारशोणवर्तुलि (Oxyhaemoglobin) को समशोणवर्तुलि (Methaemoglobin) तथा नाइट्रिक आक्साइड हीमोग्लोबिन (Nitric oxide haemoglobin) में परिवर्तित कर देता है। इस परिवर्तन के कारण रक्त का रंग भी परिवर्तित होकर चाकलेट-वर्ण (Chocolate-coloured) हो जाता है। इस प्रकार रक्तकणों में जारक की मात्रा कम हो जाने के कारण क्रिया भी समुचितरूप से नहीं होने पाती, जिससे श्वासकृच्छ्र तथा श्यावोत्कर्ष (Cyanosis) आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। साधारण मात्राओं में समशोणवर्तुलि शीघ्र नष्ट होकर रक्त की स्थिति सामान्य हो जाती है, किन्तु विषाक्त मात्रा में औषधि का सेवन करने पर इस विकृति के कारण घातक स्थिति उत्पन्न हो सकती है। ऑक्सीजन का आघ्राणन कराने से भी इस विकार के निवारण में सहायता मिलती है।

हृदय तथा रक्तवाहिनियाँ—आघ्राणनोपरान्त मुख, शिर एवं ग्रीवा उष्ण तथा लालवर्ण के हो जाते हैं। मातृकाधमनियाँ (Carotids) एवं इनकी शाखायें भारी एवं कड़ी पड़ जाती हैं, तथा इनमें फड़कन (Throbbing) होने लगती है। हृत्स्पन्दन तीव्रतापूर्वक एवं जोरों के साथ (Violently) होने लगता है, जिसके पश्चात् शिरःशूल, शिरोभ्रम (Giddiness) एवं श्वसनशीघ्रता आदि लक्षण भी प्रगट होते हैं। पुतलियाँ विस्फारित हो जाती हैं। ये सभी लक्षण शिर एवं ग्रीवा की रक्तवाहिनियों के विस्फार के परिणामस्वरूप होते हैं। इसके पश्चात् सम्पूर्णशरीर की रक्तवाहिनियाँ विस्फारित हो जाती हैं, जिससे रक्तभार भी गिर जाता है। ३ से ५ बूंद औषधि सुंघाने से रक्तभार में २० मि० मि० mercury तक कमी हो जाती है। यह विस्फार नाइट्राइट के रक्तवाहिनियों की भित्ति पर प्रत्यक्ष प्रभाव से होता है। मस्तिष्कीय रक्तवाहिनियों की अपेक्षा यह विस्फारात्मक परिवर्तन आशयिक एवं परिसरीय रक्तवाहिनियों (Peripheral vessels) में विशेषरूप से लक्षित होता है। किन्तु हार्दिक (Coronary) फौफ्फुसिक एवं मस्तिष्कीय (Cerebral) रक्तवाहिनियाँ भी विस्फारित हो जाती हैं।

पेशियाँ—प्राय: अधिकांश अनैच्छिक पेशियों पर अवसादक प्रभाव होता है। धमनियों के पेश्यावृत्तों पर यह अवसादक प्रभाव विशेषरूप से लक्षित होता है। श्वास-नलिकाओं (Bronchioles), गर्भाशय तथा अन्त्रों की पेशियाँ भी शिथिल पड़ जाती हैं।

फुफ्फुस—रक्तभार में कमी होने के कारण मस्तिष्क में शुद्ध रक्त की पर्याप्तराशि न पहुँचने के कारण श्वसनकेन्द्र के उत्तेजित होने से (रक्त में आक्सीजन की कमी के कारण) पहले तो श्वसन भी उत्तेजित हो जाता है। तदनु श्वसन परिश्रमित (Laboured) होकर श्वासकृच्छ्र हो जाता तथा अन्ततः श्वासावरोध (Asphyxia) भी उत्पन्न हो सकता है।

नाड़ी-संस्थान—साधारण मात्रा में एवं अल्पकाल तक औषधि का आघ्राणन (Inhalation) करने से मस्तिष्कगत उच्चकेन्द्रों पर तो कोई विशेष प्रभाव लक्षित नहीं होता, किन्तु सुषुम्नाशीर्षकगत केन्द्र प्रारम्भ में उत्तेजित हो सकते हैं। रक्तभार में कमी हो जाने पर मस्तिष्कीय रक्त परिभ्रमण विकृत होने से हृदयावरोधक केन्द्र (Inhibitory centre of the heart) अवसादित हो जाता है तथा श्वसन एवं वाहिनीप्रेरक-केन्द्र (Vaso-motor centre) उत्तेजित हो जाते हैं। शिरःशूल, शिरोभ्रम तथा शिर में भारीपन एवं धक्धक् की अनुभूति (Throbbing in the heart) आदि नाड़ी विकार रक्तवाहिनियों के विस्फारित एवं रक्तभार में कमी हो जाने के कारण होते हैं। मृत्यु के किंचित्पूर्व संज्ञा एवं चेष्टावह-नाड़ियों की क्रिया भी विकृत हो जाती है।

नेत्र—नेत्रान्तःभार (Intra-ocular-tension) में वृद्धि तथा कनीनिकाविस्फार एवं नेत्रान्तःपटलीय रक्तवाहिनियों (Retinal vessels) के विस्फारित होने

तापक्रम—ज्वर एवं स्वस्थावस्था दोनों अवस्थाओं में शरीर तापक्रम में ह्रास होता है।

उत्सर्ग (Excretion)—शोषणोपरान्त इसका अधिकांश तो शरीर में ही (६० से ७० प्रतिशत नष्ट हो जाता है। शेषांश का उत्सर्ग प्रधानतः मूत्र के साथ नाइट्राइट या नाइट्रेट के रूप में होता है।

आमयिक प्रयोग।

आघ्राणन (Inhalation)—हृच्छूल (Angina Pectoris) के लिए एमिल नाइट्राइट परमोत्तम औषधि है। इसके लिए इसका प्रयोग विशेषतः आघ्राणन के रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त कोई भी हृच्छूल जो दौरे के रूप में (Paroxysmal) होता हो, उसके निवारण के लिए यह औषधि अत्यन्त उपयोगी होती है। हृच्छूल (Angina Pectoris) में इसकी क्रिया विशेषतः हार्दिकधमन्योद्वेष्ठ (Coronary Spasm) के निवारण करने के कारण होती है। दौरे के शमन के लिए प्रायः ५ बूंद औषधि पर्याप्त होती है। उग्र प्रभाव एवं रक्तभार में कमी करने के कारण इसका प्रयोग आत्ययिक समय (अर्थात् दौरे के समय) के लिए ही अधिक उपयुक्त होता है। अनागतव्याधिप्रतिषेध अथवा निरन्तर सेवन के लिए इसके स्थान में सोडियम् नाइट्राइट एवं नाइट्रोग्लिसरिन का ही प्रयोग करना चाहिये। यदि विशिष्टपूर्वरूप (Aura) के प्रगट होते ही एमिलनाइट्राइट का आघ्राणन किया जाय तो अपस्मार (मृगी) के दौरे के निवारण के लिए भी यह उपयोगी औषधि है। धमन्योद्वेष्ठजन्य अर्धावभेदक (Migraine) में भी कभी-कभी यह उपयोगी सिद्ध होता है।

अपस्मार या मृगीरोग (Epilepsy) में कभी-कभी दौरे के निवारण के लिए एमिलनाइट्राइट के प्रयोग से सफलता मिलती है। किन्तु एतदर्थ इसका प्रयोग तभी उपयोगी सिद्ध होता है, जब वास्तविक दौरा प्रारम्भ होने के पूर्व ही इसका व्यवहार किया जाय। दौरा शुरू हो जाने पर इससे कोई लाभ नहीं होता।

नकसीर (Epistaxis) तथा रक्तष्ठीवन (Haemoptysis) में एमिल नाइट्राइट सुंघाने से भी कभी लाभ हो जाता है। इसकी उक्त क्रिया रक्तभार को कम करने के कारण होती है।

आजकल नाइट्राइट्स् का प्रयोग सायनायड विषमयता (Cyanide poisoning) में प्रतिविष के रूप में किया जाता है। एतदर्थ फौरन एमिल नाइट्राइट को सुंघाना चाहिए और तदनु अविलम्ब सोडियम् नाइट्राइट एवं सोडियम् थायोसल्फेट (Soduim thiosulphate) का शिरागत सूचिकाभरण करना चाहिए।

प्रयोग-विधि—एमिल नाइट्राइट के ३–५ बूंद के चमकदार एम्पूल्स बाजार में मिलते हैं। प्रयोग के समय इसको रूमाल में लपेट कर शीशी को तोड़ देना चाहिए और रूमाल को सूंघना चाहिए। कभी-कभी रोगियों में इसके प्रति सह्यता उत्पन्न हो जाती है, जिससे अनेक शीशियाँ सूंघने पर इसका प्रभाव लक्षित होता है। साधारणतया एमिल नाइट्राइट से फौरन लाभ होता है।

ऑक्टिलिस नाइट्रिस Octylis Nitris (Octyl. Nitris.), I. P., B. P. C.—ले०; ऑक्टिल नाइट्राइट (Octyl Nitrite)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_8 H_{17} O_2 N$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 2—ethyl-n-hexyl-nitrite होता है। इसमें कम से कम ९५% ऑक्टिमल नाइट्राइट होता है।

वर्णन—यह पीले रंग का स्वच्छ द्रव होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि पाई जाती है, तथा स्वाद में सुगन्धित एवं तीक्ष्ण (Pungent) होता है। विलेयता—जल में तो यह अविलेय (Insoluble) होता है; किन्तु अल्कोहल् (९५%) तथा ईथर में मिल जाता (Miscible) है। मात्रा—३ से ६ मिनम् (०·२ से ०·४ मि० लि०) आघ्राणन (Inhalation) द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—एमिल नाइट्राइट की भाँति ऑक्टिल नाइट्राइट भी रक्तवाहिनियों को विस्फारित (Dilatation) करता है। किन्तु उसकी अपेक्षा एक तो यह कम विषैला है, दूसरे इसका प्रभाव अधिक देर तक ठहरता है। इसके अतिरिक्त ऑक्टिल नाइट्राइट अनैच्छिक पेशियों के उद्वेष्ठ का भी शमन करता है। अतएव उद्वेष्ठयुक्त व्याधियों में यथा हृच्छूल (Angina), हार्दिक धमनी-उद्वेष्ठक (Coronary spasm) एवं श्वसनिका-उद्वेष्ठ (Bronchial spasm) आदि में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी है। एतदर्थ दवा एमिल नाइट्राइट की भाँति शीशे के एम्पूल्स में आती है। प्रयोग के समय इसको रूमाल में रख कर एम्पूल का मुँह तोड़कर (जिससे दवा रूमाल के अन्दर गिरती है।) सूंघा जाता है।

लाइकर ग्लिसेरिलिस ट्राइनाइट्रेटिस Liquor Glycerylis Trinitratis (Liq. Glyc. Trinit), B. P. C.—ले०; सोल्यूशन ऑव ग्लिसेरिल ट्राइनाइट्रेट Solution of Glyceryl Trinitrate—अं०। पर्याय—सोल्यूशन आफ नाइट्रोग्लिसरिन Solution of Nitro glycerin; लाइकर ट्राइनाइट्रिनी (Liquor Trinitrini); स्प्रिटस ग्लिसेरिलिस नाइट्रेटिस Spiritus Glycerylis Nitratis।

वर्णन—यह रंगहीन स्वच्छ द्रव के रूप में होता है, जो ग्लिसेरिल ट्राइनाइट्रेट का अल्कोहल् (१०%) में बनाया सोल्यूशन होता है। मात्रा–$\frac{३}{४}$ से १$\frac{१}{२}$ मिनम् (०.०५ से ०.१ मि० लि०)।

टॅबेली ग्लिसेरिलिस ट्राइनाइट्रेटिस Tabellae Glycerylis Trinitratis (Tab. Glyc. Trinit.), I. P., B. P. –ले०; टॅबलेट्स ऑव ग्लिसेरिल ट्राइनाइट्रेट Tablets of Glyceryl Trinitrate–अं० ।

पर्याय—नाइट्रोग्लिसरिन टॅबलेट्स; टॅबेली ट्राइनाइट्रिनी (Tabellae Trinitrini); ट्राइनाइट्रिन टॅबलेट्स ।

मात्रा—$\frac{१}{१२०}$ से $\frac{१}{६०}$ ग्रेन (०.५ से १ मि० ग्राम०) । मात्रा का उल्लेख न होने पर ०.५ मि० ग्रा० टॅबलेट्स देना चाहिए ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग— मुखद्वारा सेवन किये जाने पर ज्यों का त्यों इसका शोषण आमाशय से होता है । शोषणोपरान्त ग्लिसरोल, नाइट्राइट्स एवं नाइट्रेट्स में वियोजित होता है। हृच्छूल (Angina Pectoris) में तत्कालिक प्रभाव के लिए इसका प्रयोग जिह्वाधः मार्ग (Sublingually) से किया जाता है । प्रायः दौरे के आक्रमण को रोकने के लिए तो एमिलनाइट्राइट का ही व्यवहार अधिक उपयुक्त होता है । और दौरे के बीच में नाइट्रोग्लिसरिन का व्यवहार किया जाता है, जिससे दौरे का प्रतिपेध होता है । एतदर्थ इसका प्रयोग अल्पमात्रा में $\frac{१}{३२०}$ ग्रेन या ०.२ मि० ग्रा० ४-४ या ६-६ घंटे पर लेने से काम चल जाता है । श्वसनिका-उद्वेष्ठ में भी इसका प्रयोग उपयोगी वतलाया जाता है ।

हृच्छूल के दौरे के प्रतिपेध के लिए एरिथ्रोल टेट्रानाइट्रेट (Erythrol Tetranitrate) अधिक उपयुक्त होता है ।

सोडियाइ नाइट्रिस Sodii Nitris (Sod. Nitris) I. P., B. P. C.—ले०; सोडियम् नाइट्राइट (Sodium Nitrite)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $NaNO_2$.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—सोडियम् नाइट्रेट का धात्वीय सीस (Metallic lead) के साथ मिलाकर प्रहासन करने से (by reducing) प्राप्त होता है । इसमें कम से कम ९५% सोडियम् नाइट्राइट होता है । सोडियम् नाइट्राइट रंगहीन अथवा पीताभ वर्ण के क्रिस्टल्स के रूप में अथवा सफेद या हल्के पीलेरंग के दानेदार चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है । जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन (Saline) और नमी में खुला रहने से पसीजता (Deliquescent) है । विलेयता—जल में तो घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल् (९०%) में मुश्किल से घुलता (Sparingly Soluble) है ।

मात्रा—$\frac{१}{२}$ से २ ग्रेन (३० से १२० मि० ग्रा०); ५ ग्रेन (०.३ ग्रेन शिरागत इंजेक्शन द्वारा ।

असंयोज्य द्रव्य—आक्सिडायजिंग पदार्थ, फेनाजोन कॅफीनसाइट्रेट ।

गुण एवं प्रयोग—सोडियम् नाइट्राइट के गुण-कर्म सामान्यतः नाइट्रोग्लिसरिन की ही भाँति होते हैं, किन्तु इसका प्रभाव धीरे-धीरे होता है तथा इसमें शिरःशूल आदि उपद्रव अपेक्षाकृत कम होते हैं । मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर आमाशय में हाइड्रोक्लोरिक एसिड के सम्पर्क में आने पर नाइट्रस एसिड में परिवर्तित हो जाता है, जो आमाशय में साधारण क्षोभक प्रभाव करता है ।

इस रूप में वियोजित होने पर शोषण के पूर्व ही यह निष्क्रिय हो जाता है। हवा में खुला रहने पर भी यह जारित होकर नाइट्रेट के रूप में बदल जाता है। इस प्रकार होने पर नाइट्राइट के रूप में इसकी क्रियाशीलता नहीं होती।

हृच्छूल (Angina Pectoris) के दौरे में इसको ½ से १ ग्रेन की मात्रा में ३–३ या ४–४ घंटे के अन्तर से मुख द्वारा देते हैं। रक्त में पहुँचने पर नाइट्राइट्स ऑक्सीहिमोग्लोबिन को मेथिमोग्लोबिन (Methaemoglobin) में परिवर्तित करते हैं। इसकी उपयोगिता सायनाइड विषमता (Cyanide Poisoning) की चिकित्सा में किया जाता है। इससे यह सायनाइड के साथ संयुक्त होकर उसे साइन-मिथेमोग्लोबिन में परिवर्तित करता है, जो अपेक्षाकृत कम विषैला होता है। एतदर्थ १% विलयन का धीरे-धीरे शिरा में इंजेक्शन दिया जाता है। आवश्यकतानुसार १० सी० सी० से ५० सी० सी० तक औषधि प्रयुक्त की जाती है। इंक्जेशन बहुत धीरे-धीरे करना चाहिए। इस चिकित्सा से जो सायनाइड बच गया हो उसको निष्क्रिय करने के लिए सोडियम् थायोसल्फेट को प्रयुक्त करना चाहिए। इसके लिए २५% सोल्यूशन (की आवश्यकतानुसार ५० सी० सी० तक मात्रा) शिरामार्ग से किया जाता है।

रक्तभाराधिक्य में भी इसको व्यवहृत किया जाता है, किन्तु इन रोगियों में विशेष लाभ लक्षित नहीं होता।

राओल्फिआ (I. P.), B. P. C.
Rauwolfia (Rauwol.) Rauwolfia. (सर्पगन्धा)
Family : Apocynaceāe (करवीर-कुल)

नाम—छोटाचाँद (Chotachand)—हिं०; चन्द्र (Chandra)—बं०; अराकन-टीटा (Arachon-tita)—आसाम; राओल्फिआ Rauwolfia, सर्पगन्धा Sarpogandha—व्यावसायिक।

प्राप्ति-साधन—सर्पगन्धा, राओल्फिआ सर्पेन्टिना Rauwolfia serpentina Benth. ex Kurz. नामक वनस्पति के ३–४ वर्ष तक के पुराने पौधों की सुखाई हुई जड़ (वल्कल या छालयुक्त Bark intact) होती है। इसमें कम से कम ०·८ प्रतिशत राओल्फिआ के अल्कलायड्स होने चाहिए।

उत्पत्ति-स्थान—राओल्फिआ जाति (Genus) में लगभग ५० प्रजातियाँ (Species) पाई जाती हैं, जो प्रायः उष्ण एवं समशीतोष्ण (Subtropical) प्रदेशों में मिलती हैं। इनमें ७ प्रजातियाँ भारतवर्ष में पाई जाती हैं। इनमें भी औषधि की दृष्टि से राओल्फिआ सर्पेन्टिना ही मुख्य है। अन्य प्रजातिओं का उपयोग व्यवसाय में मिलावट (Adulteration) के लिए किया जाता है।

सर्पगन्धा का मुख्य उत्पत्तिस्थान भारतवर्ष है। हिमालय की तराई में सतलज से आसाम तक (४००० फुट की ऊँचाई तक) विशेषतः देहरादून, शिवालिक प्रान्त, उत्तरी अवध एवं गोरखपुर में इसके स्वयंजात पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त बिहार, उड़ीसा, बंगाल तथा दक्षिण भारत में कोंकण, उत्तरी कनाडा, दक्षिण मरहट्ठा प्रदेश, पूर्वी एवं पश्चिमी घाट में (३००० फुट तक) भी इसके पौधे काफी पाये जाते हैं। भारतवर्ष के बाहर बर्मा, श्याम, जावा तथा लंका में भी इतस्ततः सर्पगन्धा पाया जाता है।

वर्णन। पौधा—सर्पगन्धा या राओल्फिआ के बहुवर्षायु क्षुप (Perennial Shrub) होते हैं, जो १-३ फुट तक ऊँचे होते हैं। पत्तियाँ प्रत्येक ग्रंथि (node) पर ३-३ या ४-४ के चक्र (Whorls) में निकलती हैं। किसी-किसी पर्व पर अभिमुख (Opposite) भी होती हैं। यह पत्तियाँ ३-७ इंच लम्बी, १½-२½ इंच चौड़ी, भालाकार (Lanceolate), तीक्ष्णाग्र या लम्बाग्र (Acute or acuminate), चिकनी तथा ऊर्ध्वतल पर चमकीले हरेरंग की तथा अधस्तल पर पीताभ-हरित (Pale) रंग की होती हैं। पुष्पगुच्छों (Cymes) में निकलते हैं, जो श्वेत गुलाबी रंग के होते हैं। पुष्पवृन्त (Pedicls) एवं पुटचक्र लाल रंग का होता है। फल (Drupe) व्यास में ¼ इंच गोले, एक-एक या एक-एक के साथ दो-दो लगे होते हैं औरपकने पर चमकीले नीलारुण-काला (Purplish-black) या कालेरंग के हो जाते हैं। पुष्पागम काल (Flowering period) लम्बा (एप्रिल से नवम्बर) तक होता है। फल जुलाई से नवम्बर तक पकते हैं। किन्तु विशेषता यह है, कि सभी फल एक साथ नहीं पकते।

जड़ (Root)—सर्पगन्धा की जड़ें गंधहीन किन्तु स्वाद में अत्यन्त तिक्त होती हैं। यह जड़ें साधारणतया ४ इंच से लेकर १६ इंच तक लम्बी (कोई-कोई जड़ें अनुकूल परिस्थिति में ६० इंच तक पाई गई हैं) मोटी तथा गोली (Round) होती हैं किन्तु नीचे की ओर इनकी मोटाई क्रमशः कम होती जाती (Gradually tapering) है। मोटाई का व्यास (Diameter) साधारणतया ½ से १ इंच होता हैं। जड़ें टेढ़ी-मेढ़ी (Tortuous) तथा कभी-कभी सशाख (Branched) होती हैं। वाह्यतल झुर्रीदार (Wrinkled) एवं खुरदुरा (Rough) होता है. जिस पर अनुलम्ब दिशा में अनेक रेखायें तथा धारियाँ (Longitudinal Markings) होती हैं। तोड़ने में जड़ें खट से टूट जाती हैं (Fracture Short) किन्तु टूटे हुए तल अनियमित रूप से टूटते (Irregular) हैं। सर्पगन्धा की जड़ छाल (Root-bark) खाकस्तरी पीले रंग (Greyish-yellow) से लेकर हल्के भूरेरंग (Brownish) की होती है। काष्ठीय भाग (Wood) हल्के पीले रंग का होता है। सर्पगन्धा के अल्कलायड्स की अधिकतम मात्रा जड़ की छाल में पाई जाती है।

रासायनिक संघटन—सर्पगन्धा का रासायनिक विश्लेषण सर्वप्रथम १९३१ ई० में सिद्दीकी भाइयों ने विहार के नमूने पर किया था, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने ५ मणिमीय स्वरूप के (१) अल्कलायड्स (Crystalline alkaloids) पृथक किए (Isoleted) थे:—

(अ) अजमलीन ग्रुप (Ajamaline group)—(१) अजमलीन (Ajmaline : $C_{२०}H_{२६}O_{२}N_{२}$, $३H_{२}O$) (२) अजमलिनीन (Ajmalinine : $C_{२०}H_{२६}O_{३}N_{२}$, १·५ $H_{२}O$) तथा (३) अजमलिसीन (Ajmalicine)।

(ब) सर्पेन्टीन ग्रुप (Serpentine Group)—इसमें पीतवर्ण के २ क्षारोद प्राप्त हुए थे:—(४) सर्पेन्टीन (Serpentine : $C_{२०}H_{२०}O^{३}N_{२}$, १·५ $H_{२}O$) तथा (५) सर्पेन्टिनीन (Serpentinine $C_{२०}H_{२०}O_{५}N_{२}$, १·५ $H_{२}O$.)

अब अन्य अनेक दूसरे अल्कलायड्स भी पृथक किए गये हैं, जिससे इनका संख्या १५ तक पहुँच गई है। उपरोक्त पाँच के अतिरिक्त शेष १० अल्कलायड्स निम्नलिखित हैं:-(६) राओल्फिनीन (Rauwolfinine), (७) रिसर्पीन (Reserpine), (८-९) रॉपीन तथा सर्पाजीन (Raupine

and Sarpagine), (१०) रॉहिम्बीन (Rauhimbine), (११) आइसो-रॉहिम्बीन (Iso-rauhimbine), (१२) रिसर्पीनीन (Reserpinine), (१३) यॉहिम्बीन (Yohimbine), (१४) थिबेन (Thebaine) तथा (१५) पापावरीन (Papaverine) ।

वक्तव्य — चिकित्सोपयोग की दृष्टि से उपरोक्त अल्कलायड्स में सबसे महत्त्व का अल्कलायड रिसर्पीन (Reserpine) (या सर्पासिल Serpasil) है । सर्वप्रथम इस क्षारोद को पृथक करने में मूलर Muller) एवं शिल्ट(Schlittler & Bein : 1952) आदि वैज्ञानिकों ने सफलता प्राप्त की थी । राओलिफ्आ सर्पेन्टिना के अतिरिक्त सर्पासिल अधुना सर्पगन्धा की निम्नलिखित अन्य विदेशी जातियों से भी प्राप्त किया गया है: —

(१) राओल्फिआ हेटेरोफाइला Rauwolfia heterophylla Willd. ex Roem. & Schult । यह सर्पगन्धा की अमेरिकन प्रजाति है ।

(२) राओल्फिआ वॉमिटोरिआ R. Vomitoria Afzel.—(सर्पगन्धा की अफ्रिकन प्रजाति) ।

(३) राओल्फिआ केनेसेन्स R. Canescens L. (पश्चिमी द्वीपसमूह W. Indies एवं भारतीय बागों में पाये जाने वाले पौधों से) ।

(२) अल्कलायड्स के अतिरिक्त सर्पगन्धा में एक ओलियोरेजिन (Oleoresin) तथा ओलीकएसिड ग्लूकोज, सुक्रोज, मिनरल साल्ट्स आदि घटक भी पाये जाते हैं । इन घटकों में चिकित्सा की दृष्टि से सर्पासिल के बाद दूसरा महत्त्व का घटक इसका रेजिन है । सर्पगन्धा का निद्रल एवं नाड़ी-संशामक प्रभाव इसी ओलियोरेजिन के ही कारण होता है ।

गुणकर्म तथा प्रयोग ।

सर्पगन्धा में मुख्यतः तीन कर्म पाये जाते हैं, जो विशेष महत्त्व के हैं । यह नाड़ी-संस्थान पर **संशामक (Sedative)** क्रिया करता है । इसके अतिक्ति सर्पगन्धा **निद्रल (Hypnotic)** होता है, तथा **रक्त-भार को कम करता (Hypotensive)** है । सर्पगन्धा के रासायनिक संघटन एवं गुणकर्मादि के विषय मे भारतवर्ष एवं विदेशों में भी काफी अनुसन्धानकार्य किया गया है । अब तक इसके अनेक अल्कलायड्स एवं अन्य रासायनिक संघटकों का पता चल चुका है । बिहार से प्राप्त सर्पगन्धा में अल्कलायड्स की सकलमात्रा **(Total alkaloids)** ०·८ से १·३ प्रतिशत तक होती है । देहरादून के नमूनों में यह मात्रा १ से १·३ प्रतिशत तक पाई जाती है । किन्तु बिहारी नमूनों की भाँति देहरादून की जड़ी में सर्पगन्धा के पीत **क्रिस्टलाइन अल्कलायड्स (Yellow crystallinalkaloids)** नहीं पाये जाते । सम्प्रति सर्पगन्धा में अनेक विदेशी वैज्ञानिकों द्वारा **राओल्फिनीन (Rauwolfinine), रिसर्पीन (Reserpine),** हाइपोटेन्सीन **(Hypotensine)** तथा रेस्सिनेमीन **(Rescinnamine)** आदि नये अल्कलायड्स भी पृथक किए गए **(Isolated)** हैं । **राओल्फिआ** की दूसरी प्रजाति, **राओल्फिआ केनेसेन्स (R. Canescens)** से भी **राओल्सीन (Rauwolscine)** नामक अल्कलायड पृथक किया गया है । यह भी **रक्तभार को कम करने में काफी समर्थ होता** है । रक्तभार कम करने की तथा निद्रा लाने का सबसे अधिक प्रभाव राओल्फिआ सर्पेन्टिना प्रजाति के अल्कलायड्स में रिसर्पीन नामक अल्कलायड में होता है ।

चिकित्सा में सर्पगन्धा का प्रधान उपयोग **रक्तभार कम करने** के लिए किया जाता है । अतएव **रक्तभार रोग (Hypertension)** में यह बहुत उपयोगी औषधि है । इस प्रकार इसके

प्रयोग से धीरे-धीरे रक्तभार गिरता है और कतिपय सप्ताहके बाद यह परिणाम काफी मात्रामें लक्षित होता है। भारतवर्ष में उन्माद या पागलपन की चिकित्सा के लिए सर्पगन्धा का प्रयोग कतिपय क्षेत्रों में बहुत दिनों से होता आ रहा है। इसीलिए इसे 'पागल की बूटी' भी कहते हैं। नाड़ी-संशामक एवं निद्रल क्रिया के लिए सर्पगन्धा के अल्कोहोलिक सत्व (**Alcoholic extracts**) तथा इसके अल्कलायड्स को सम्मिलित रूप से प्रयोग करना पड़ता है। बाजार में इसके रिसर्पीन अल्कलायड् की सर्पासिल (**Serpasil**) नाम से बनी बनाई टिकिया मिलती हैं। सामान्यतया इसकी ०·२५ ग्राम की तीन मात्रायें दिन में और चौथी मात्रा रात्रि में सोते समय दी जाती है। रक्तभार जब काफी कम हो जावे तो १०० मिलिग्राम की मात्रा प्रतिदिन चालू रखें (**Maintenance dose**)। वैसे रोगी एवं रोग की अवस्था में प्रत्येक रोगी के लिए यह मात्रा न्यूनाधिक हो सकती है।

शोषण—सर्पगन्धा का शोषण मुखद्वारा सेवन किये जाने पर भी होता है। शोषणोपरान्त इसका पूर्ण प्रभाव ३–४ दिन के बाद होता है तथा यह प्रभाव औषधि बन्द कर देने पर भी आगे को सप्ताह तक बना रहता है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् राबोल्फिई लिक्विडम Extractum Rauwolfiae Liquidum (Ext. Rauwolf. Liq. I. P. & I. P. L.—ले०; लिक्विड एक्स्टॅक्ट ऑव राओल्फिआ Liquid Extract of Rauwolfia—अं०। सर्पगन्धा का प्रवाही घनसत्व—सं०, हिं०। इसमें १% (w/v) राओल्फिआ के अल्कलायड्स होते हैं। इसका उपयोग टिंक्चर राओल्फिआ बनाने में किया जाता है। मात्रा—३ से ६ बूंद या मिनम् (०·२ से ०·५ मि० लि०)।

२—एक्स्ट्रॅक्टम् राबोल्फिई सिक्कम् Extractum Rauwolfiae Siccum (Ext. Rauwolf. Sicc.) I. P. & I. P. L.—ले०; ड्राई एक्स्ट्रॅक्ट ऑव राओल्फिआ Dry Extract of Rauwolfia—अं०; सर्पगन्धा का सत—हिं०। इसमें ४ प्रतिशत राओल्फिआ के अल्कलायड् होते हैं। मात्रा—¼ से १ ग्रेन (१५ से ६० मिलिग्राम)।

३—टिंक्चुरा राबोल्फिई Tinctura Rauwolfiae (Tinct. Rauwolf.), I. P. & I. P. L.—ले०; टिंक्चर ऑव राओल्फिआ Tincture of Rauwolfia—अं०। इसमें ०·२५% राओल्फिआ के अल्कलायड्स होते हैं। मात्रा—१२ से ३० बूंद या मिनम् (०·८ से २ मि० लि०)।

सर्पगन्धा या राओल्फिआ के व्यावसायिक योगः—

(१) सर्पासिल Serpasil (Ciba)–इसकी ०·२५ मिलिग्राम तथा ०·१ मिलिग्राम की टिकिया या टॅबलेट्स (Tablets) आती हैं। पहले ०·२५ मिलिग्राम दिन में ३ बार तथा ऐसी एक मात्रा रात्रि में सोते समय देनी चाहिए। जब रक्तभार अभी मात्रा में कम हो जाय तो उसको स्थिर बनाये रखने के लिए ०·१ मिलिग्राम की १–२ टिकिया दिन में आवश्यकतानुसार २–३ बार दें।

(२) राओल्फिआसिडेटिवा Rauwolfia Sedativa (S. P. W.)–इसकी १–२ गोली प्रतिदिन २–३ बार आवश्यतानुसार दें। लगातार १ सप्ताह तक औषधि देने के बाद यदि पुनः देना हो तो ३–४ दिन का अन्तर कर पुनः चिकित्सा-क्रम प्रारम्भ करें।

(३) राल्ब्रोम Ralbrom (E. I. P.) यह पीने की दवा होती है। ½ से २ चम्मच जैसी आवश्यकता हो प्रतिदिन २–३ बार दें।

(४) रॉडिक्सिन Raudixin Tablets (Squibb)–यह भी सर्पगन्धा का योग है।

(५) सर्पिना Serpina (Himalayan Drug Co.) इसकी गोलियाँ आती हैं।

(६) ब्रोमो–रॉल्फिन Bromo-Raulfin (Eastern Drug) पीने की दवा है।

(७) रॉल्फिन Raulfin (E. D)—इसकी गोलियाँ आती हैं।

(८) रॉल्फेन Raulfen (B. C.)—यह पीने की दवा होती है तथा इसकी गोलियाँ भी आती हैं।

(९) R. S.-5। (Gluconate Limited)—हाल ही में यह अल्कलायड ग्लूकोनेट लिमिटेड द्वारा राश्रोल्फिया सर्पेन्टिना की जड़ से पृथक किया गया है। यह हल्के पीले रंग का होता है। इसकी टिकिया टॅवलेट्स आती हैं। प्रत्येक टॅवलेट में $\frac{1}{8}$ ग्रेन अल्कलायड् होता है। इसकी सामान्य मात्रा १–२ टॅवलेट दिन में ३ बार १० दिन तक दिया जाता है। जब रक्तभार में अभीष्ट मात्रा तक कमी हो जाती है, तो औषधि के प्रभाव को वनाए रखने के लिए (Maintenance Dose)—१ टिकिया प्रतिदिन दी जाती है।

रक्तचाप-ह्रासक अन्य (नॉन्-ऑफिशल) औषधियाँः—

हाइड्रेलेजीन हाइड्रोक्लोराइड (Hydrallazine Hydrochloride)। पर्याय—एप्रेसोलीन (Apresoline)।

रासायनिक दृष्टि से यह **1–Hydrizinophthalazine hydrochloride** होता है, जो रंगहीन अथवा सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है। यह जल तथा अल्कोहल् में घुल जाता है। प्रयोग—यह एक **रक्तभार ह्रासक औषधि (Anti-pressure drug)** है। एतदर्थ औषधि का सेवन मुखद्वारा अथवा पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा भी किया जाता है, आत्ययिक काल में इंजेक्शन शिरामार्ग से भी कर सकते हैं। उग्र अवस्था में ४–४ या ६–६ घंटे के अन्तर से १० से ४० मि० ग्रा० मात्रा पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा दी जाती है। इसके बाद औषधि का सेवन मुखद्वारा कर सकते हैं।

वेरेट्रमविरिडे Veratrum Viride (Verat. Vir.) B. P. C.। पर्याय—Green Hellebore; American Hellebore; American Veratrum, Indian Poke।

Family : Liliaceae (पलाण्डु-कुल)

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह वेरेट्रम विरिडे Veratrum viride Ait. नामक क्षुद्रवनस्पति का राइज़ोम (पाताली धड़) होती है। उक्त वनस्पति उत्तरी अमरीका एवं कनाडा में प्रचुरता से पाई जाती है। रासायनिक संघटन—इसमें (१) जर्वीन (Jervine), रुबीजर्वीन (Rubijervine) एवं वेरेट्रामीन आदि एमाइन अल्कलायड्स (Aminealkaloids or alkalamines); (२) वेरेट्रिडीन (Veratridine), जर्मेरीन (Germerine) आदि ईस्टर अल्कलायड्स तथा स्युडोजर्वीन (Pseudojervine) एवं वेराट्रोसीन आदि ग्लाइकोसाइडिक अल्कलायड्स पाये गए हैं।

प्रयोग—ग्रीन हेलवोर रक्तचाप ह्रासक प्रभाव करता है। अतएव इसका प्रयोग रक्तचापाधिक्य (High Blood Pressure) में किया जाता है। मात्रा। (१) जड़ का चूर्ण (Powdered root)

१ से २ ग्रेन; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट—१ से २ मिनम्; (२) टिंक्चर वेरेट्रिन (Tinct. Verat.)—५ से ३० मिनम्। यह १० में १ की शक्ति का होता है।

वेरेट्राइ विरिडिस पल्विस Veratri Viridis Pulvis (Verat. Vir. Pulv.), B. P. C. ले०;—पाउडर्डग्रीनहेलबोर Powdered Green Hellebore–अं०। यह हल्के भूरे या हल्के जैतूनी रंग (Pale olive) का चूर्ण होता है।

वेरिलायड (Veriloid) या अल्केवरविर Alkavervir—

यह वेरेट्रम् विरिडे से प्राप्त अल्कलायड्स का मिश्रण होता है। मात्रा—(१) मुखद्वारा—$\frac{1}{20}$ से $\frac{1}{12}$ ग्रेन (३ से ५ मि० ग्रा०) प्रतिदिन ६–६ या ८–८ घंटे के अन्तर से देना चाहिए। (२) पेशीगत सूचिकाभरणद्वारा—५० पौंड शरीर भार के लिए ०·२५ मि० ग्रा० के हिसाब से ४–४ या ६–६ घंटे के अन्तर से। उग्रावस्था में प्रति १० पौंड़ भार के लिए ०·०४ मि० ग्रा० के हिसाब से मात्रा १०% लवणजल में मिलाकर शिरामार्ग से दें। इसके बाद प्रति १० पौंड भार के लिए ०·२ मि० ग्रा० के हिसाब से मात्रा लेकर १ लिटर ५% ग्लूकोज सोल्यूशन में मिलाकर शिरागत मार्ग से बूंद-बूंद करके (Intravenous drip-infusion method) दें। किन्तु इस चिकित्सा क्रम में प्रति २–२ तथा बाद में प्रति १०–१० मिनट बाद रक्तभार को देखते रहना चाहिए और भार में कमी होने पर औषधि फौरन बन्द कर देनी चाहिए।

वेराल्वा (Veralva) या प्रोटोवेरेट्रीन्स 'ए'; एवं 'बी', (Protoveratrines A and B)–यह वेरेट्रम् की यूरोपीय प्रजाति या सफेद हेलबोर (White Hellebore) से प्राप्त अल्कलायड्स का मिश्रण होता है। मात्रा—०·५ से १·५ मि० ग्रा० मुखद्वारा दिन में ४ बार। (२) पेशीगत इंजेक्शन द्वारा—०·१५ से ०४ मि० ग्रा० ४-४ या ८-८ घंटे अन्तर से; (३) ०·०५ से ०·१ मि० ग्रा० शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

खेलिन या विसेमिन (Khellin or Visammin)—यह एक क्रिस्टलाइन स्वरूप में प्राप्त होने वाला सक्रियतत्त्व होता है, जो रंगहीन तथा स्वाद में तिक्त क्रिस्टल्स के रूप में प्राप्त होता है। ये क्रिस्टल्स पानी में नहीं घुलते। उक्त सत्त्व एम्युनि विस्नगा Amuni Visnaga नाम वनस्पति से प्राप्त किया जाता है, जो भूमध्यसागरीय देशों में स्वयंजात रूप से प्राप्त होती है। रासायनिक दृष्टि से खेलिन नामक सत्त्व 2-methyl-5, 8-dimethoxyfuranochrome होता है।

मात्रा—$\frac{1}{2}$ से $2\frac{1}{2}$ ग्रेन (२५ से १५० मि० ग्रा०) प्रतिदिन। इसको तीन मात्राओं में विभक्त करके मुखद्वारा दिया जाता है। (२) $1\frac{1}{2}$ से ५ ग्रेन (१०० से ३०० मि० ग्रा०) पेशीगत इंजेक्शन द्वारा।

गुण एवं प्रयोग—खेलिन की प्रत्यक्ष क्रिया रक्तवाहिनियों, श्वसनिकाओं (Bronchi), आंत्र, गर्भाशय एवं अन्य आशयों के अनैच्छिक पेशीसूत्रों पर होता है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली से तथा पेशीगत इंजेक्शन से यह क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है। चिकित्सा में मुख्यतः इसका उपयोग हार्दिकधमनी-विस्फारक (Coronary dilator) के रूप में हृच्छूल के दौरे के निवारण के लिए किया जाता है। तमकश्वास (Bronchial asthma), कुक्कुर खाँसी एवं गर्भाशय-शूल आदि उद्वेष्टयुक्त विकृतियों में भी यह उपयोगी बतलाया जाता है। इसका उत्सर्ग धीरे-धीरे होने से औषधि कुछ-कुछ संचायी स्वरूप की होती है।

———

अध्याय १०

सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १

इस अध्याय में निम्नवर्ग की औषधियों का वर्णन किया जायगाः—

(१) श्वसनसंस्थान पर कार्यकर औषधियाँ (Drugs acting on the Respiratory System);

(२) मूत्र-प्रजननसंस्थान पर कार्य करनेवाली औषधियाँ (Drugs acting on the Urogenital System); तथा

(३) त्वचापर कार्य करनेवाली औषधियाँ (Drugs acting on the Skin)।

सर्वप्रथम उक्त औषधियों के सामान्य क्रिया-व्यापार तथा उनके वर्गीकरण आदि का विवेचन किया जायगा। तत्पश्चात् पृथक-पृथक औषधियों के गुणकर्मादि का वर्णन होगा।

प्रकरण १

श्वसनसंस्थान पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

श्वसन की प्रक्रिया में, श्वसन सम्बन्धी अंगों, वायुमण्डल, रक्त, रक्तपरिभ्रमण नाड़ीसंस्थान तथा श्वसनकेन्द्र का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इनमें से किसी भी उपकरण में विकृति होने से श्वसन-क्रिया में भी विकृति उत्पन्न हो जाती है। श्वसन का प्रधान कार्य धातुओं को प्राणवायु (Oxygen) प्रदान करना तथा शरीर से मलरूप कार्बन-डाई-ऑक्साइड (CO_2) का उत्सर्ग करना होता है। इन दोनों क्रियाओं का संतुलन शारीरिक परिश्रम के ऊपर निर्भर रहता है। अर्थात् शारीरिक परिश्रम अधिक होने से धातुओं को अधिकाधिक ऑक्सिजन की आवश्यकता पड़ती है, अतएव अधिकाधिक ऑक्सिजन शरीर में प्रविष्ट होता है और इसी प्रकार कार्बन-डाई-ऑक्साइड भी अधिक मात्रा में उत्पन्न होता एवं शरीर से उत्सर्गित होता है। फुफ्फुस एवं धातुओं में यह वायव्य-विनमय (Gaseous exchange) गैसों के प्रसृतीय (Diffusion of gases) के भौतिक नियम (Physical law) द्वारा होता है। इसका तात्पर्य यह है, कि अधिक भारवाले स्थल की वायु निम्न भारवाले स्थल की ओर प्रसरण करती है, जब तक कि दोनों स्थलों का भार समान न हो जाय। जब श्वसन-क्रिया समुचित रूप से नहीं होती, शरीर में कार्बन-डाई-ऑक्साइड की मात्रा अधिक हो जाती तथा धातुओं में प्राणवायु का दारिद्र्य हो जाता है।

श्वसन की इस जटिल प्रक्रिया का नियंत्रण मस्तिष्कगत उष्णीषक एवं सुषुम्नाशीर्ष के ऊर्ध्वभाग में स्थित श्वसनकेन्द्र (Respiratory Centre) द्वारा होता है। यद्यपि अनेक प्रत्याक्षिप्त आवेगों (Reflex Stimulation) के प्रति यह केन्द्र संवेदनशील (Sensitive) होता है, तथापि इसकी क्रिया स्वच्छन्दतापूर्वक (Autonomous) होती है। ऐसा अनुमान विद्वानों का है, कि अन्तश्श्वसन तथा बहिश्श्वसन दोनों क्रियाओं के लिए दो पृथक केन्द्र हैं; यद्यपि सामान्यतः अन्तश्श्वसन-केन्द्र (Inspiratory centre) ही क्रियाशील रहता है तथा प्रच्छ्वास (Expiration) की क्रिया निष्क्रियस्वरूप (Passive) की होने से सामान्यतः बहिश्श्वसन-केन्द्र (Expiration centre) भी निष्क्रिय अवस्था में ही रहता है। केवल आत्ययिक अवस्था में ही जब कि विशिष्ट प्रच्छ्वास पेशियों की क्रिया अपेक्षित होती है, तो यह केन्द्र क्रियाशील होता है।

श्वसन का सम्पादन करानेवाली प्रधान नाड़ी मस्तिष्क की प्राणदा नामक नाड़ी (Vagus) है, जिसमें श्वसनांगों सम्बन्धी संज्ञावह एवं चेष्टावह दोनों प्रकार के सूत्र होते हैं। इसके संज्ञावह सूत्र सम्पूर्ण श्वासमार्ग की भित्तियों एवं फुफ्फुसों में फैले हुए हैं, तथा निरन्तर आवश्यक आवेगों को केन्द्र की ओर प्रेषित करते रहते हैं। इस प्रकार श्वसन-क्रिया का संतुलन बराबर होता रहता है। श्वसनिकाओं (Bronchi) की पेशियों का प्रचेष्टन प्राणदा के चेष्टावह सूत्रों द्वारा होता है। स्वरयन्त्र की श्लैष्मिक कला में प्रसरित संवहन-सूत्र (Afferent fibre) का सम्बन्ध कास प्रक्षिप्त क्रिया (Cough reflex) से है, जिसके द्वारा श्वासपथ का संरक्षण होता तथा कोई विजातीय पदार्थ श्वासमार्ग में प्रविष्ट नहीं होने पाता।

इसके अतिरिक्त रक्तचाप के न्यूनाधिक्य का भी प्रभाव श्वसन के ऊपर होता है। रक्तभार में वृद्धि होने से प्रत्याक्षिप्त रूपेण श्वसन पर अवसादक तथा इसके विपरीत भार गिरने से उत्तेजक प्रभाव पड़ता है।

नाड़ी-नियन्त्रण के अतिरिक्त रक्तगत आक्सीजन एवं CO_2 की राशि का भी श्वसन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। यदि रक्त में Co_2 की मात्रा बढ़ जाती है, तो श्वसनकेन्द्र उत्तेजित हो जाता है, और श्वसन-क्रिया शीघ्रता एवं गम्भीरता पूर्वक होने लगती है। इसके विपरीत रक्त में जारक (Oxygen) की मात्रा बढ़ने से अथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड का दबाव (Tension) कम होने से केन्द्र अवसादित होता तथा श्वसन मन्द हो जाता है, यहाँ तक कि कभी अश्वसन (Apnoea) की भी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अतएव उपरोक्त विवरण से निष्कर्ष यह निकला कि रक्तरस में CO_2 का दबाव बढ़ने से श्वसन-केन्द्र अवसादित होता है।

यह कार्बन-डाइ-ऑक्साइड (CO_2) जल के साथ संयुक्त होकर कार्बोनिक एसिड (H_2CO_3) के रूप में परिणत हो जाता है। इसके पुनः वियोजित होने से रक्त में हाइड्रोजन-अयनों (H-ions) की मात्रा में वृद्धि हो जाती है, जिससे रक्तगत हाइड्रोजन-अयन संकेन्द्रण बढ़ने से केन्द्र उत्तेजित होता है। अतएव रक्तगत हाइड्रोजन-अयन संकेन्द्रण के न्यूनाधिक का भी श्वसन पर तत्काल प्रभाव लक्षित होता है, तथा उसकी प्रतिक्रिया के स्वरूप शरीर पुनः इसे संतुलित करने का प्रयत्न करने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप श्वसनशीघ्रता आदि लक्षण प्रगट होते हैं। इसी प्रकार की स्थिति व्यायाम या अन्य शारीरिक परिश्रम करने के बाद भी होती है। रक्त में ऑक्सीजन की कमी की स्थिति को अराजकता (Anoxaemia) कहते हैं, और यह स्थिति उत्पन्न होते ही श्वसनशीघ्रता आदि लक्षण प्रगट होने लगते हैं।

उपरोक्त अवस्थाओं के अतिरिक्त श्वसनकेन्द्र पर अप्रत्यक्षतया अन्य उच्चकेन्द्रों का भी प्रभाव पड़ता है, यथा त्वचोद्भूत वेदना तथा उष्णता के संवेदनात्मक आवेग, निद्राकाल में जब कि केन्द्र अवसाद की अवस्था में रहता है तथा निगरण (आहार निगलन) के समय जब कि श्वसन-क्रिया क्षणिक अवरोध की स्थिति में रहती है।

श्वसनकेन्द्रको उत्तेजित करनेवाली औषधियाँ—कोई भी कारण जिससे रक्तगत ऑक्सीजन की राशि में न्यूनता हो जाय, यथा रक्तस्राव तथा शोणवर्तुली (Haelmoglobin) की कमी (यथा पाण्डु आदि में), श्वसनकेन्द्र को उत्तेजित करता है, जिससे श्वसनक्रिया बढ़ जाती है। अतएव लौह, सोमल (Arsenic) तथा यकृतसत्व (Liver extract) रक्तकणों तथा शोणवर्तुलि दोनों की मात्रा में वृद्धि करने के कारण श्वसनकष्ट का निवारण करते हैं। औषधियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से भी श्वसनकेन्द्र उत्तेजित किया जा सकता है, यथा स्ट्रिक्नीन, अमोनिया, कॅफीन, अट्रोपीन, एफेड्रीन, कार्बन-डाइ-ऑक्साइड गैस, लोबेलीन, कैम्फर, लेप्टाजोल, निकेथामाइड तथा पिक्रोटॉक्सिन (एनालेप्टिक्स) आदि। जो औषधियाँ मस्तिष्क-सुषुम्ना को उत्तेजित करती हैं, वे श्वसनकेन्द्र को भी उत्तेजित करती हैं। इसके अतिरिक्त यह केन्द्र प्रत्याक्षिप्त रूपेण (Reflexly) संवेदनिक आवेगों द्वारा भी उत्तेजित किया जा सकता है, यथा अमोनिया गैस का आघ्राणन तथा त्वचा पर शैत्य का प्रयोग।

श्वसनकेन्द्र को अवसादित करनेवाली औषधियाँ—

सामान्यकायिक संज्ञाहर, बारबिटुरेट्स, प्रमीलक द्रव्य (Narcotics), एकोनाइट, जेलसेमियम् तथा हाइड्रोसायनिक आदि औषधियाँ श्वसनकेन्द्र पर अवसादक प्रभाव करती हैं। मार्फीन, हिरोइन (Heroin) तथा क्लोरलहाइड्रेट इस अर्थ में तीव्र द्रव्य हैं।

श्वसन-संस्थान पर कार्य करनेवाली औषधियों का वर्णन निम्न शीर्षकों में किया जा सकता है:—

(अ) श्वसन (Respiration) पर प्रभाव करनेवाली औषधियाँ;
(ब) श्वासनलिका स्राव (कफ) पर प्रभाव करनेवाली औषधियाँ;
(स) श्वासनलिका-पेशियों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ;
(द) कास (Cough) पर कार्यकर द्रव्य;
(य) श्वासपथ का शोधन करनेवाली औषधियाँ;
(ज) फुफ्फुस एवं श्वसनिकाओं के क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त होने वाले द्रव्य।

(ब) वर्ग—श्वासनलिकास्राव (Bronchial Secretion) पर प्रभाव डालने वाली औषधियाँ:—

१—कफोत्सारि (Expectorants)

जो औषधियाँ श्वासनलिकास्राव में वृद्धि करती एवं उनके उत्सर्ग में सहायक होती हैं, उन्हें **कफोत्सारि या एक्सपेक्टॉरेंट्स (Expectorants)** कहते हैं। वायुमार्ग के संरक्षण के लिए जो स्वाभाविक व्यवस्था है, उसको समझने से इस 'कफोत्सारि' क्रिया को सुगमतापूर्वक समझा जा सकता है। वायुमार्ग-संरक्षक के रूप में २ प्रकार की क्रियायें समय-समय पर आवश्यकतानुसार सहायता करती हैं यथा (१) चेष्टात्मक (Motor) एवं (२) स्रावात्मक (Secretory)। श्वासमार्ग की श्लैष्मिक कला की लोमश कोशाओं के लोमों (Cilia) की

बाहर की ओर की एकदेशिक गति चेष्टात्मक संरक्षण का उदाहरण है। इसी प्रकार श्वासमार्गगत अपद्रव्य के निस्सारण के लिए प्रत्यावर्तित रूप (Reflex) से कास का होना तथा श्वासनलिका शाखा–प्रशाखाओं के पेशीसूत्रों की पुरःसरणगति (Peristaltic movement) भी चेष्टात्मक क्रिया के ही उदाहरण हैं। स्रावात्मक प्रक्रिया द्वारा श्वासनलिकाओं का श्लैष्मिक तल आर्द्र रहता तथा क्षोभक द्रव्यों के द्रावण में सहायता होती है। इस स्राव का स्रवण नलिकाओं की श्लैष्मिककलागत ग्रंथियों द्वारा होता है। उक्त दोनों प्रकार (चेष्टात्मक एवं स्रावात्मक) की प्रक्रियाओं का नियन्त्रण परिस्वतंत्र (प्राणदा) एवं स्वतन्त्र नाड़ियों द्वारा होता है। श्वासनलिकाओं की श्लैष्मिककला के आवेगों (Impulses) का संवहन प्राणदानाड़ी के केन्द्रगा या संज्ञावह (Afferent) सूत्रों द्वारा होता है तथा इसके प्रान्तगासूत्र स्रावीग्रंथियों एवं नलिकाओं के पेशीसूत्रों का नियन्त्रण करते हैं। प्राणदा के अतिरिक्त इन पेशीसूत्रों का संबंध स्वतन्त्रनाड़ी के प्रान्तगासूत्रों से भी होता है। उक्त दोनों प्रकार के नाड़ीसूत्रों का सम्बन्ध एक काल्पनिक कासकेन्द्र (Cough centre) से होता है, जो श्वसन एवं वमनकेन्द्रों से सम्बन्धित होता है।

क्रिया की दृष्टि से कफनिःसारक द्रव्यों का निम्न वर्गीकरण किया जाता है :—

१—प्रत्याक्षिप्त कफोत्सारि (Reflex expectorants)—इस समुदाय की औषधियाँ प्राणदा के आमाशयस्थ संज्ञावह अग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करके अपना कार्य करती हैं। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर इसके स्थान में ये वामकप्रभाव करती हैं टारटार इमेटिक, इपेकाकाना, सँनेगा, क्विल्लाया, स्किल्ल, चाइनेंसिस (Chinensis), अमोनिया, बाइकॉर्बोनेट ऑव अमोनिया, क्षार, एपोमार्फीन, तथा कैम्फर आदि इसी प्रकार के द्रव्य हैं। कफस्राव का केन्द्र भी वमनकेन्द्र की भाँति सुषुम्नाशीर्ष में होता तथा दोनों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। अतएव वामक औषधियाँ अल्पमात्रा में प्रयुक्त होने पर कफनिःसारक का कार्य करती हैं।

इसी प्रकार श्वासमार्ग की श्लैष्मिकला में स्थित प्राणदानाड़ी के संज्ञावह अग्रों की उत्तेजना से भी कफस्राव में वृद्धि हो जाती है। उत्पत् तैल, तैलीयराल (Oleo-resins) तथा वल्सम्ज (Balsams) आदि इसी प्रकार अपना प्रभाव करते हैं।

२—केन्द्रिक कफनिःसारकद्रव्य (Central expectorant)—इस प्रकार के द्रव्य अपना कार्य केन्द्रिकप्रभाव (Central effect) के द्वारा करते हैं, यथा एपोमॉर्फीन तथा कभी-कभी इपेकाकाना तथा टारटार इमेटिक आदि।

३—श्वासनलिकाग्रंथियों को उत्तेजित करके कफनिस्सारक प्रभाव करनेवाले द्रव्य—आयोडाइड्स आदि उत्सर्ग के समय श्लेष्मस्रावी ग्रंथियों पर उत्तेजक प्रभाव करते हैं। परिणामतः श्लेष्मस्राव में वृद्धि होती है।

चिकित्सा की दृष्टि से कफोत्सारि औषधियों को निम्न समुदायों में रख सकते हैं :—

१—उत्तेजक कफोत्सारिद्रव्य (Stimulant expectorants) ये औषधियाँ श्वासनलिका की श्लैष्मिककला द्वारा उत्सर्गित होती तथा श्लेष्मग्रंथियों एवं श्लैष्मिककला पर किंचित् उत्तेजक एवं क्षोभक प्रभाव करने के कारण श्लेष्मस्राव में वृद्धि करती हैं। इस समुदाय

में विशेषतः उड़नशील तैल तथा सौगन्धिक द्रव्य (Aromatics) हैं, अतएव इन्हें सौगन्धिक कफोत्सारि (Aromatic expectorants) भी कहते हैं। उत्पत् तैल, टरबीन, बल्साम ऑव पेरु तथा टोल्, कैम्फर, बेंजोएट्स, क्रियाजोट तथा ग्वायॅकाल आदि इसी प्रकार के द्रव्य हैं।

२—संशामक कफोत्सारि औषधियाँ (Sedative expectorants) इन कफनिस्सारक औषधियों का प्रयोग विशेषतः उग्रस्वरूप के कास में बहुत उपयोगी होता है। ये औषधियाँ विभिन्न प्रकार से कार्य करती हैं :—

इस वर्ग की औषधियाँ श्वसनिकाओं (Bronchioles) की श्लैष्मिककला के शोफ एवं क्षोभ का संशमन करती हैं। इस प्रकार कारण का निवारण होने से कास की शान्ति होती है। प्रत्याक्षिप्त कफोत्सारि अथवा उत्क्लेशकारक कफनिस्सारक (Nauseant expectorants) औषधियाँ इसी प्रकार अपना प्रभाव करती हैं, यथा टारटार इमेटिक, इपेकाकाना तथा एपोमॉर्फीन आदि। मुलेठी (Liquorice), बबूल (Acacia) तथा मधुरी या ग्लिसरिन (Glycerine) आदि मार्दवजनक औषधियाँ (डिमलसेंट्स Demulcents) भी इसी प्रकार संशामक कफोत्सारि प्रभाव करती हैं।

(२) इस समुदाय में कफोत्सारि लवणों (Saline expectorants) का समावेश होता है। यह गाढ़े तथा चिपचिपे (Tenacious) कफ को पतला कर देते हैं, जिससे उसका उत्सर्ग सुगमतापूर्वक हो जाता है। पोटासियम् आयोडाइड, अमोनियम् क्लोराइड तथा सोडियम्, पोटासियम् एवं अमोनियम् बाइकार्बोनेट इसी प्रकार कार्य करते हैं।

(३) इस समुदाय की औषधियाँ कासजनक प्रत्याक्षिप्त आवेगों का शमन करने के कारण अपना प्रभाव करती हैं, यथा बेलाडोना तथा ओपियम् एवं इनके अल्कलायड्स के यौगिक। इनका प्रयोग वेदनाहर कफोत्सारि (Anodyne expectorants) के रूप में भी होता है। टिंक्चर ओपिआइ कैम्फोरेटा, पल्व इपेकाक एट ओपियाई, कोडाईन एवं हिरोईन तथा सिरप प्रूनिआइ सिरोटिना (Syr. Prun. Serot.) आदि इसी प्रकार की औषधियाँ हैं।

३—उद्वेष्टहर कफनिस्सारक (Antispasmodic expectorants)—ये औषधियाँ न तो चिपचिपे कफ को पतला करती हैं और न तो स्राव में वृद्धि ही करती हैं। ये श्वसनिका की पेशियों को शिथिल करने के कारण कफोत्सर्ग में सहायक होती हैं। अतएव श्वास एवं चिरकालज श्वसनिकाशोथ (Chronic bronchitis) आदि व्याधियों में ये विशेष उपयोगी होती हैं। बेलाडोना, लोबेलिया, नाइट्राइट्स ग्रिंडेलिया, एफेड्रिन तथा एड्रिनेलीन आदि इसी प्रकार की औधियाँ हैं।

२—श्लेष्मनिरोधक (Anti-expectorants) ये औषधियाँ उपरोक्त कफोत्सारि द्रव्यों के विपरीत श्वासनलिकास्राव को कम करती हैं। चिकित्सा में इस हेतु इनका प्रयोग कम किया जाता है। ओपियम्, मॉर्फीन, बेलाडोना तथा कोडीन आदि स्राव-निरोधक प्रभाव करते हैं।

वर्ग स—श्वासप्रणालिकाओं के पेशी-सूत्रों पर प्रभाव करनेवाली औषधियाँ (Drugs which influence the Bronchial muscles)—

श्वासनलिकोद्वेष्टहर अथवा श्वासहर औषधियाँ।

(Bronchial Antispasmodics or antiasthmatics)

ये औषधियाँ आघ्राण (Inhalation) द्वारा अथवा मुखद्वारा सेवन किए जाने पर श्वासप्रणालिकाओं की पेशियों को शिथिल करती हैं। अतएव श्वासनलिकाओं में उद्वेष्ठ के कारण जो श्वासकृच्छ्रता होती है, उसका निवारण होता है। श्वासरोग (Asthma) में भी यही विकृति होती है, अतएव श्वास के दौरे को रोकने के लिए इस समुदाय की औषधियाँ बहुत सहायक होती हैं। श्वासप्रणालिकाओं के संकोचक-सूत्रों का नियन्त्रण प्राणदानाड़ी (Vagus nerve) के परिस्वतन्त्र सूत्रों (Parasympathetic) द्वारा तथा प्रणालिका-विस्फारकसूत्रों का नियन्त्रण स्वतन्त्रनाड़ीसूत्रों (Sympathetic) द्वारा होता है। श्वासप्रणालिकाओं के उद्वेष्ठ का निवारण निम्न प्रकारों से होता है :—

(१) प्राणदानाड्यग्रों (Vagal nerve endings) के अवसाद (Depression) से—यथा अट्रोपीन एवं हायोसीन द्वारा इसी प्रकार उद्वेष्ठ का निवारण होता है।

(२) प्राणदानाड्यग्रों अथवा कन्दिकाओं (Ganglia) पर अवसादक प्रभाव पड़ने से—यथा लोबेलिआ के द्वारा।

(३) स्वतन्त्रनाड्यग्रों (Sympathetic nerve-endings) पर उत्तेजक-प्रभाव के कारण—यथा एड्रिनेलीन एवं एफेड्रीन तथा एम्फिटामीन एवं आइसो-प्रिनेलीन (Isoprenaline)।

(४) श्वासप्रणालिकाओं के पेशीसूत्रों पर अवसादक प्रभाव के कारण—यथा पापावरीन (Papaverine) एवं नाइट्राइट्स (Nitrites) तथा अमिनोफिलीन।

(५) केन्द्र (Centre) पर अवसादक प्रभाव से यथा प्रमीलक द्रव्यों (नार्कोटिक्स Narcotics के द्वारा।

अल्पमात्रा में मॉर्फीन से भी श्वासप्रणालिकाओं को पेशियाँ शिथिल (Relaxation) होती हैं। इसी कारण दमा के बाज-बाज रोगी अफीमखाने के आदी हो जाते हैं। स्ट्रेमोनियम् अथवा धतूरा की पत्तियों का सिगरेट पीने से अथवा शोरक-पत्र (Nitre paper) का धुँआ सूँघने से भी थोड़े समय के लिए लाभ हो जाता है। इससे श्वासप्रणालिकाओं का उद्वेष्ठ (Spasm) दूर होकर मरीज को आराम मिल जाता है। उक्त क्रिया के लिए अट्रोपीन एक उत्तम द्रव्य है, किन्तु इसके प्रयोग में एक दोष भी है, कि यह पेशियों को शिथिल तो करता है, जिससे उद्वेष्ठ का निवारण होता है, किन्तु शरीर के अन्य स्रावों की भाँति श्लैष्मिकस्राव को भी कम करता है, जिससे श्वासप्रणालिकाओं में खुश्की उत्पन्न हो सकती है। और यह रोगी के लिए अभीष्ट नहीं होता। किन्तु स्वतन्त्र नाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने से उद्वेष्ठ को दूर करने वाली औषधियों यथा (एड्रीनेलीन आदि) में यह आशंका नहीं रहती।

श्वासप्रणालिकोद्वेष्टहर औषधियाँ निम्नलिखित हैं—एड्रिनेलीन, एफेड्रीन, अट्रोपीन, नाइट्राइट्स, ग्रिंडीलिया एवं लोबेलिआ। इनमें अन्तिम दो को छोड़कर शेष का वर्णन यथा समय पहले किया जा चुका है। इस अध्याय में आगे द्रव्यों के वर्णन के प्रकरण में ग्रिंडीलिया एवं लोबेलिआ (Lobelia) की विवेचना की जायगी।

द—श्वासप्रणालिकाओं की श्लैष्मिक-कला पर संशामकप्रभाव करनेवाली औषधियाँ:—
(Bronchial Sedatives)

कास (Coughing) या खाँसी एक प्रत्याक्षिप्त क्रिया (रिफ्लेक्स एक्ट Reflex act) है, जो स्वाभाविक रूप से श्वासमार्ग में आये हुए विजातीय द्रव्य को निकालने के लिए स्वयं होती है। श्वसनमार्ग की श्लैष्मिक कला की कोषाओं में लोम या बाल (Cilia) होते हैं, जिनकी गति केवल एक ही दिशा में अर्थात् ऊपर या बाहर की ओर होती है। जब श्वासमार्ग में कोई विजातीय कण आ जाता है, तो उसको निकालने के लिए खाँसी आने लगती है, और वह द्रव्य इन्हीं लोमों या बालों की गति द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है। इसी प्रकार गले में किसी क्षोभक पदार्थ या कारण के रहने से, अथवा श्वासप्रणालिकाओं में चिपचिपा बलगम (Tenacious mucous) रहने से बराबर खाँसी आने लगती है। ऐसी स्थिति में इसके शमन की आवश्यकता पड़ती है। यक्ष्मा के रोगियों में भी एक प्रकार की सूखी खाँसी या शुष्क कास (Dry hacking Cough) का उपद्रव होता है। अतएव ऐसी अवस्थाओं में कास या खाँसी रोग या व्याधि का स्वरूप धारण कर लेती है, जिससे श्वास-प्रणालियों की श्लैष्मिक कला पर संशामक प्रभाव करनेवाली औषधियों (Bronchial Sedatives) के प्रयोग की आवश्यकता पड़ती है। उपरोक्त प्रकार की खाँसी के शमन के लिए वेलाडोना, अफीम (ओपियम्), हिरोइन (Heroin), कोडोईन, डायोनीन (Dionin), वाइल्डचेरीबार्क (Wild cherry bark) का व्यवहार किया जाता है। इनमें चेरीबार्क को छोड़कर शेष औषधियों का वर्णन किया जा चुका है। यहाँ आगे वाइल्डचेरी का विस्तृत विवरण यथास्थान किया जायगा।

य—श्वासप्रणालिका पर जीवाणुवृद्धिनाशक एवं जीवाणुवृद्धिरोधक प्रभाव पैदा करने वाली औषधियाँ :—
(Pulmonary antiseptics)

प्रायः देखा जाता है, कि कतिपय जीवाणुनाशक औषधियाँ जब मुखद्वारा प्रयुक्त होती हैं, तो उनका उत्सर्ग फुफ्फुसों द्वारा होता है। अतएव अनुमान किया जाता है, कि इस प्रकार सेवन की हुई औषधियाँ यक्ष्मा आदि के जीवाणुओं पर अवश्य घातक प्रभाव करती होंगी। इसी अनुमान के आधार पर यक्ष्मादि फुफ्फुस-रोगों में पहले इन जीवाणुनाशक द्रव्यों का प्रयोग मुखद्वारा किया जाता था। किन्तु वास्तव में मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर उत्सर्ग होते-होते ये इतनी हल्की हो जाती हैं, कि जीवाणुओं पर विनाशक प्रभाव करने के लिए, इनका जितना संकेन्द्रण (Concentration) अपेक्षित होता है, उतना नहीं रह जाता। आघ्राणन (Inhalation) द्वारा प्रयुक्त होने पर फुफ्फुसकी दुर्गन्धियुक्त व्याधियों में इन औषधियों से बहुत उपकार होता है।

इस वर्ग में निम्न औषधियाँ आती हैं :—

क्रियाजोट (Creosote), ग्वायकल (Guaiacol), कोलतार-यौगिक (Tar Preparations) तथा उड़नशील तैल (विशेषतः तारपीन का तैल एवं युकेलिप्टस आयल)। इनमें से यहाँ पर केवल क्रियाजोट एवं ग्वायकल का ही वर्णन किया जायगा। अन्य औषधियों का विवेचन अपने-अपने प्रसंग में अन्यत्र किया जायगा।

प्रकरण २

वृक्कों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

(Drugs acting on the Kidneys).

वृक्क शरीर में २ महत्त्व के कार्यों का सम्पादन करता है। एक तो शरीर में जल की मात्रा के संतुलन में सहायक होता है, दूसरे मांसजातीय पदार्थों के समवर्त के परिणामस्वरूप उत्पन्न त्याज्य पदार्थों यथा यूरिया, यूरिक एसिड आदि का उत्सर्ग भी वृक्कों से होता है। इसके अतिरिक्त अन्य सेन्द्रिय तथा निरिन्द्रिय द्रव्य भी, जो रक्त में आवश्यकता से अधिक मात्रा में उपस्थित रहते हैं तथा आगे उनका शरीर में अन्य कोई उपयोग नहीं होता, अथवा समवर्तित (Metabolised) नहीं हो सकते, इन सब का उत्सर्ग भी वृक्कों द्वारा ही होता है। अवायवीय (अनुत्पत् non-volatile) अम्लों का उत्सर्ग करके ये रक्त की क्षारसंचिति (Alkaline reserve) का भी संतुलन करते हैं। वायवीय या उत्पत् अम्लों (कार्बन डाई-ऑक्साइड CO_2) का उत्सर्ग श्वसन के साथ फुफ्फुसों द्वारा होता है। आवश्यकतानुसार समय-समय पर जलांश का न्यूनाधिक मात्रा में उत्सर्ग करके आसृतीयपीड़न (Osmotic pressure) मानदण्ड को भी स्थिर रखने में सहायक होता है।

चूंकि वृक्क से उत्सर्गित होने वाले सभी द्रव्य विलयन के रूप में ही उत्सर्गित होते हैं, अतएव आवश्यक है कि इसके उत्सर्ग के लिए पर्याप्त जल प्राप्त हो सके। साधारणतः रक्तगत द्रवांश का यकायक कम होना भी हानिप्रद होता है, अतएव मूत्रप्रजनन के लिए जलरक्तता (Hydraemia) की स्थिति का पैदा होना आवश्यक है। यह जलरक्तता की स्थिति अस्थायी स्वरूप की होती है और पुनः जलांश के इतस्ततः धातुओं में चले जाने से आसृतीय भार का पुनः संतुलन हो जाता है।

एक बात यहाँ स्मरण रखना चाहिए कि यूरिया, यूरिक एसिड, रंजक (Pigments), लवण एवं जल आदि जिनका उत्सर्ग वृक्कों से होता है, वृक्क इन द्रव्यों का निर्माण स्वयं नहीं करता, अपितु, रक्त के साथ वृक्कों में पहुँचने पर केवल ये पृथक कर दिए जाते हैं। यही कारण है कि पाचन, सात्म्यीकरण (Assimilation), समवर्तक्रिया एवं रक्तसंवहन में विकृति होने से मूत्र की स्थिति में भी परिवर्तन हो जाता। अतएव मूत्र की परीक्षा से इन विभिन्न अंगों की क्रिया व्यापार का बहुत कुछ अनुमान किया जा सकता है।

एक स्वस्थ पुरुष प्रतिदिन लगभग १½ सेर (५० औंस) मूत्र का परित्याग करता है, जिसकी प्रतिक्रिया अम्ल एवं उसमें २·२ प्रतिशत यूरिया होता है। रक्त की प्रतिक्रिया क्षारीय एवं स्वस्थावस्था में उसमें यूरिया की मात्रा केवल ०·०५ से ०·१ प्रतिशत ही होती है। अतएव इससे सिद्ध होता है, कि गवीनी में पहुँचने के पूर्व वृक्कों में ही यह सब परिवर्तन होता है।

वृक्क की रचना असंख्य वृक्काणुओं (Nephrons) के मिलने से होती है। वृक्क की विभिन्न क्रियाओं का सम्पादन इन्हीं वृक्काणुओं (नेफ्रान्स) से होती है। रचना एवं क्रिया की दृष्टि से वृक्काणु (Nephron) के भी विभिन्न भाग होते हैं, जिनके लिए पृथक-पृथक नाम दिए गए हैं, और इनके द्वारा विशिष्ट-विशिष्ट क्रियाव्यापारों का सम्पादन होता है। शरीर के अनेक ऐसे अपद्रव्यों का निस्सरण वृक्कों द्वारा होता है, जिनका शरीर के लिए कोई आवश्यकता नहीं है, अथवा शरीर में इनका रहना हानिकर होता है। ऐसे द्रव्यों में यूरिया, यूरिक एसिड आदि प्रधान हैं। इसके अतिरिक्त औषधियों का भी निस्सरण वृक्कों द्वारा होता है। रक्त में अनेक ऐसे तत्त्व भी होते, जिनकी उपस्थिति एक निश्चित प्रतिशत मात्रा तक रहनी आवश्यक होती है। शर्करा, विभिन्न लवण, हीमोग्लोबिन आदि इसी प्रकार के द्रव्य हैं। इनको देहली-द्रव्य (Threshold Substances) कहते हैं। अतएव यूरिया, यूरिक एसिड आदि जैसे त्याज्य द्रव्यों के उत्सर्ग के साथ-साथ वृक्क इन द्रव्यों के उत्सर्ग को रोकते हैं। अर्थात इन द्रव्यों की रक्त में उपस्थिति जब तक निश्चित प्रतिशत मात्रा से अधिक नहीं होती, मूत्र में इनकी उपस्थिति नहीं पाई जाती। हाँ, निश्चित प्रतिशत मात्रा से ऊपर जाने पर इन द्रव्यों का भी उत्सर्ग मूत्र के साथ होने लगता है। मधुमेह (Diabetes mellitus) में मूत्र में शर्करा की उपस्थिति इसी प्रकार पाई जाती है।

(अ) मूत्रल औषधियाँ या डायुरेटिक्स (Diuretics)

जिन औषधियों से मूत्रप्रजनन अधिक मात्रा में होता है, मूत्रल (डायुरेटिक्स Diuretics) कहते हैं, अधिक मूत्रप्रजनन (Diuresis) जल का अधिक सेवन करने से अथवा शरीर से द्रवांश का अपकर्षण होने से होता है।

मूत्रल द्रव्यों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है:—

१. ऐसे मूत्रल द्रव्य जो सक्रिय धमनी-गुच्छकों (Glomeruli) की संख्या में वृद्धि करते हैं—प्रत्येक वृक्क में लगभग १० लक्ष वृक्काणु होते हैं। इस प्रकार दोनों वृक्कों में कुल मिलाकर २० लक्ष वृक्काणु होते हैं। किन्तु इनमें सभी एक समय में क्रियाशील नहीं होते, क्योंकि उन्हीं गुच्छकों (Glomeruli) की केशिकायें विस्फारित होती हैं, जो क्रियाशील होती हैं, अन्यथा बंद रहती हैं। जितने अधिक संख्या में वृक्काणु क्रियाशील होते हैं, मूत्रप्रजनन भी उतना ही अधिक होता है। इस प्रकार अधिकाधिक वृक्काणुओं के क्रियाशील होने से निस्स्यन्दक क्षेत्र (Filtering Surface) की वृद्धि होने से अधिक मात्रा में मूत्र की उत्पत्ति होती है। केफीन (Caffeine) तथा यूरिया (Urea) इसी प्रकार मूत्रल प्रभाव करते हैं।

२. वृक्कगत रक्तपरिभ्रमण एवं गुच्छक धमनी भार (Glomerular arterial pressure) में वृद्धि करनेवाले मूत्रल द्रव्य—वृक्कों में रक्तप्रवाह जितनी ही तेजी से होता है, तथा वृक्कगत धमनी-गुच्छकों (Glomeruli) में रक्तभार जितना ही अधिक होता है, मूत्र का उत्सर्ग भी उतना ही अधिक होता है। अतएव अनेक हृद्य औषधियाँ जो हृदय की क्रिया पर उत्तेजक प्रभाव करती हैं, अप्रत्यक्ष-तया मूत्रल प्रभाव भी करती हैं। इस प्रकार डिजिटेलिस वर्ग की औषधियाँ, कॅफीन, थियोफिलीन तथा थियोब्रोमीन हृद्य प्रभाव के साथ-साथ मूत्रल (Diuretc) क्रिया भी करती हैं। इस प्रकार की मूत्रल औषधियों को हृद्यमूत्रल औषधियाँ (Cardio-vascular Diuretics) कहते हैं। वृक्कगत धमनी-गुच्छकों से निकलनेवाली शिराओं (Efferent glomerular veins) का संकोच होने से भी गुच्छकों की धमनी में रक्तभार बढ़ जाता है, और इस क्रिया को करनेवाले द्रव्य मूत्रल प्रभाव भी करते हैं।

अल्प मात्रा में पिच्युटरी सत्व (Pituitary-extract) एवं एड्रिनेलीन (Adrenaline) इस प्रकार मूत्र के उत्सर्ग में वृद्धि करते हैं। वृक्कीय रक्तवाहिनियों का विस्फार होने से भी रक्तपरिभ्रमण अधिकाधिक हो जाता है, और इस क्रिया से भी मूत्रजनन में वृद्धि होती है। स्प्रिट ऑव नाइट्स ईथर इसी प्रकार मूत्रल क्रिया करता है।

वृक्कीय धमनी-गुच्छकों का रक्तभार शारीरिक रक्तप्रवाह में द्रवांश अर्थात् जलांश की अधिकता (Hydraemia) से भी बढ़ जाता है; और इससे मूत्रजनन में भी वृद्धि हो जाती है। अतएव खूब पानी पीने से अथवा लवणजल (Normal Saline Solution) का अधस्त्वग् या शिरागत सूचिकाभरण करने से भी पेशाब अधिक होता है। गुदनलिका द्वारा लवणजल प्रविष्ट करने से भी यही क्रिया होती है।

पेट में पानी आ जाने से (जलोदर) उसके दबाव के कारण वृक्कगत रक्तपरिभ्रमण मन्द पड़ जाता है, जिससे मूत्र का उत्सर्ग भी मन्द पड़ जाता है। ऐसी परिस्थिति में तेज जुलाबों के द्वारा अथवा शल्यकर्म (Tapping) द्वारा उक्त द्रव का शरीर से अपकर्षण हो जाने (निकल जाने) से वृक्कों पर दबाव कम हो जाता है और उनका रक्तपरिभ्रमण सुधरने से मूत्रोत्पत्ति भी ठीक तरह से होने लगती है।

(३) अम्लोत्कर्ष (Acidosis) के द्वारा मूत्रल प्रभाव करनेवाली औषधियाँ—अमोनियम् क्लोराइड (नौसादर) तथा केल्सियम् क्लोराइड का अधिक मात्रा में प्रयोग करने से भी मूत्रप्रजनन होता है। ये रक्तरस की क्षारीयक संचिति (Alkaline reserve) को कम करते, तथा अश्लेषाभीय घटकों (Non-colloidal constituents) में वृद्धि करते हैं। अतएव रक्तगत प्रोभुजिन के संकेन्द्रण को कम करने के कारण मूत्रजनन में सहायक होते हैं।

(४) वृक्कों पर स्थानिक प्रभाव द्वारा मूत्रल प्रभाव करनेवाली औषधियाँ—इनको उत्तेजक मूत्रल (Stimulant diuretics) या क्षोभक मूत्रलऔषधियाँ (Irritant diuretics) भी कहते हैं। ये औषधियाँ वृक्कों द्वारा उत्सर्गित होने के कारण वृक्क की स्रावी कोषाओं पर उत्तेजक प्रभाव करती हैं। वृक्काण्ड नलिकाओं द्वारा स्राव अधिक मात्रा में होता, अथवा इनके द्वारा पुनः शोषण की क्रिया न्यूनतः होने लगती है। इस प्रकार मूत्र अधिक मात्रा में उत्सर्गित होता है। कॅफीन आदि को छोड़कर इस वर्ग की अन्य औषधियों का प्रयोग अधिक मात्रा में होने से ये वृक्कप्रदाह भी पैदा करती हैं। इस वर्ग में निम्न औषधियों का समावेश होता है :—

(१) मधुमेय (ग्लाइकोसाइड्स)—यथा स्कोपेरिन।

(२) अम्ल, क्षार, केफीन, थियोब्रोमीन तथा अन्य प्यूरिनव्युत्पन्न औषधियाँ (Purine derivatives) तथा पारद के मूत्रल यौगिक (Mercurial Diuretics)—यथा मरसालिल (Mersalyl), मरक्यूरोफिलिन (Mercurophylline) तथा मरकप्टोमेरिनसोडियम् (Mercaptomerin sodium) आदि।

(३) कतिपय उत्पत् तैल—यथा बुक्कु, ज्युनिपर का तेल तथा चन्दन का तेल (सैंडल उड ऑयल)।

(४) लवणक्रिया (Salt action) द्वारा मूत्रल प्रभाव करनेवाली औषधियाँ—ये रक्तगत सान्द्रता (Viscidity) को कम करती हैं। परिणामतः निस्यन्दनशीलता बढ़ जाती है। इनके प्रभाव से गुच्छकगत रक्तवाहिनियों के रक्तभार में भी वृद्धि होती है तथा वृक्काणु कुण्डलिकाओं द्वारा पुनः

शोषण की क्रिया भी कम होती है। अतएव इन कारणों से मूत्रप्रजनन अधिक मात्रा में होता है। जल, यूरिया, अमोनियम एसिटेट एवं साइट्रेट, विभिन्न लवण (Salts), शर्करा, दुग्ध तथा ग्रैवेयकग्रंथि सत्व (Thyroid extract) इसी प्रकार कार्य करते हैं।

मूत्रल औषधियों के आमयिक प्रयोग (Therapeutics)—मूत्रल औषधियों का प्रयोग शरीरगत जलमयता की अवस्था में जलापकर्षण एवं कभी-कभी त्याज्य घन-घटकों के उत्सर्ग के लिए भी किया जाता है। अतएव निम्न अवस्थाओं में इनका प्रयोग उपयोगी होता है :—

(१) हृद् एवं फुफ्फुस-विकारों में जब मूत्राल्पता हो तथा जलोदर (Dropsy) होने की आशंका हो।

(२) रक्तगत त्याज्य या अन्य विषाक्त पदार्थों के क्षिप्र उत्सर्ग के लिए।

(३) रसिक गुहाओं में द्रव का संचय होने पर यथा जलोदर (Ascites) एवं जलोरस (Hydrothorax) आदि में।

(४) वस्ति एवं मूत्रप्रसेक प्रदाह में क्षोभ-शमन तथा मूत्राश्मरी निर्माण की आशंका होने पर तन्निवारण के लिए।

मूत्रावरोधक औषधियाँ (Antidiuretics)—प्रारम्भ में एड्रिनेलीन तथा अन्तिमावस्था में पिच्युट्रीन वृक्कीय रक्तवाहिनियों को संकुचित करने के कारण मूत्रावरोधक (एन्टीडायुरेटिक) प्रभाव करती हैं। लवण एवं जलीय विरेचनों (Hydragogue purgatives) के प्रयोग से तथा डिजिटेलिस की विषाक्तावस्था में भी मूत्राल्पता होती है।

मूत्र की प्रतिक्रिया (Reaction of the urine)—सामान्यतः मूत्र की प्रतिक्रिया किंचित् अम्ल होती है (PH ५·१२ से ७·४६ तक तथा औसतन् ६·०३ होता है)। पाचन के समय आमाशयिक रस का स्राव अधिक होने से तथा उपवास के समय यह अम्लता किंचित् न्यून हो जाती है।

मूत्राम्लीयक या मूत्र की अम्लता बढ़ानेवाली औषधियाँ—एसिड सोडियम् फॉस्फेट आदि आम्लिक लवणों अथवा अमोनियम् एवं कैलसियम क्लोराइड तथा मेंडेलिक, बेंजोइक; बोरिक एवं सेलिसिलिक अम्लों के प्रयोग से मूत्र की अम्लता बढ़ती है। खनिज अम्लों के प्रयोग से यह अम्लता और भी बढ़ाई जा सकती है, किन्तु स्थानिक क्षोभक प्रभाव अधिक करने के कारण प्रायोगिक उपयोग की दृष्टि से ये विशेष महत्त्व की नहीं हैं।

मूत्र-क्षारीयक औषधियाँ—सोडियम्, पोटासियम् एवं लिथियम् के लवण जो रक्त में जारित होकर कार्बोनेट्स में परिणत होते तथा इसी रूप में वृक्कों द्वारा उत्सर्गित होते हैं, मूत्र को क्षारीय बना देते हैं।

(ब)—मूत्रमार्ग-विशोधक (जीवाणुवृद्धिरोधक अर्थात् एन्टिसेप्टिक) औषधियाँ।
(Urinary antiseptics)

मूत्र-मार्ग में विकारीजीवाणुओं का उपसर्ग (Infection) होने पर अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। यह उपसर्ग बाहर से सीधे मूत्रमार्ग में पहुँचकर उत्तरोत्तर मूत्राशय एवं गवीनी (Ureters) आदि ऊर्ध्व अंगों में पहुँचता है, अथवा रक्तपरिभ्रमण में विकारीजीवाणुओं के पहुँचने पर अन्य अंगों के साथ-साथ मूत्रमार्ग में भी उपसर्ग पहुँचता है। उक्त उपसर्ग उग्रस्वरूप का (Acute) अथवा चिरकालीन (Chronic) होता है। मूत्रमार्ग के उपसर्ग करनेवाले जीवाणुओं में बी०

(वेसिलस) कोलाई (B. coli) एक सर्वसाधारण जीवाणु है, जिससे प्रायः उपसर्ग हुआ करता है। अतएव उपसर्ग होने पर मूत्रमार्ग को विशोधित करने की आवश्यकता पड़ती है। एतदर्थ जीवाणुनाशक द्रव्यों (Antiseptics) के घोल के द्वारा उत्तरवस्ति या धावन (Irrigation) किया जाता है, अथवा मुखद्वारा ऐसी औषधियों का सेवन कराया जाता है, जो आँतों से रक्तपरिभ्रमण में शोषित होने के पश्चात् वृक्कों द्वारा उत्सर्गित होती हैं और इस प्रकार शरीर से निस्सरण (Excretion) के समय मूत्रमार्ग को विशोधित कर देती हैं। बहुत सी जीवाणुनाशक (Disinfectants) या जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) औषधियाँ मुखद्वारा सेवन किये जाने पर जब आंतों से शोषित होकर रक्तपरिभ्रमण में पहुँचती हैं, तो क्रिया-प्रतिक्रिया के स्वरूप उनके संघटन में इस प्रकार का रूपान्तर हो जाता है, कि जब वृक्कों द्वारा उनका निस्सरण होता है, तो वह प्रायः निष्क्रिय सी हो जाती हैं। किन्तु ऐसी औषधियों के लगातार सेवन से मूत्रमार्ग के आंशिक विशोधन में सहायता अवश्य मिलती है।

मूत्र-प्रजनन-संस्थान पर जीवाणुनाशक कार्य करनेवाली औषधियों की सक्रियता बहुत कुछ मूत्र की प्रतिक्रिया (Reaction) पर निर्भर करती है। मूत्र की क्लीव प्रतिक्रिया (Neutral) अथवा क्षारीय (Alkaline) प्रतिक्रिया अधिकांश जीवाणुओं की वृद्धि में सहायक होती है। किन्तु वेसिलस कोलाइ (B. Coli) की वृद्धि मूत्र की प्रतिक्रिया अम्ल (Acid) होने पर अधिक होती है। साधारणतया मूत्र की प्रतिक्रिया एक निश्चित स्तर तक क्षारीय होने पर अथवा अम्ल होने पर जीवाणुओं की वृद्धि रुक जाती है। किन्तु वास्तव में ऐसी स्थिति अधिक काल तक रखनी सम्भव नहीं होती, क्योंकि इससे वृक्कों की क्रिया में विकृति आने की आशंका रहती है। मूत्र की प्रतिक्रिया को आम्लिक बनाने के लिए एसिड सोडियम् फॉस्फेट एक उपयोगी द्रव्य है।

चिकित्सा में निम्न मूत्रमार्ग-विशोधक औषधियों का व्यवहार किया जाता है :—

(अ)—अमोनिया फॉर्मेल्डिहाइड समुदाय की औषधियाँ यथा हेक्जामीन (Hexamine)।

(ब) कतिपय अम्ल एवं उनके लवण—यथा मन्डेलिक एसिड (Mandelic acid), बेंजोइक एसिड तथा बेंजोएट्स, सेलिसिलिक एसिड तथा सेलिसिलेट्स एवं बोरिक एसिड। इस वर्ग की औषधियाँ प्रायः अपना कार्य मूत्र की प्रतिक्रिया अत्यन्त आम्लिक करने के कारण (By making the urine highly acid) करती हैं। अमोनियम् क्लोराइड, केल्सियम् क्लोराइड, तथा एसिड सोडियम् फास्फेट भी अपना इसी प्रकार करते हैं।

(स) कोल-तार (Coal-tar) वर्ग की औषधियाँ—यथा—मर्क्युरोक्रोम, एक्रिफ्लेविन, मेथिलिनब्ल्यू, एवं पाइरिडियम् (Pyridium)।

(द) शुल्वौषधियाँ (Sulphonamide group) यथा—सल्फाडायजीन एवं सल्फाथायजोल आदि।

(य) एन्टिबायोटिक्स (Antibiotics) यथा—पेनिसिलिन, स्ट्रेप्टोमायसिन एवं ऑरोमायसिन आदि।

(फ) उत्पत् या उड़नशील तैल (Essential oils) यथा—चन्दन का तैल (संडल वुड ऑयल) बुक्कु एवं कबाब चीनी का तैल।

(व) नाइट्रोफ्युरन-व्युत्पन्न यौगिक—नाइट्रोफोन्टोइन (Nitrofuantoin)।

———

प्रकरण ३

प्रजननावयवों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

(Drugs Acting On the Genital Organs)

(१) गर्भाशय (Uterus)

औषधीय प्रयोग की दृष्टि से स्त्री-प्रजननांगों में गर्भाशय (Uterus) सबसे महत्व का है। सन्तति परम्परा को स्थापित रखने के लिए इस अंग का स्वस्थ रहना नितान्त आवश्यक होता है। किन्तु औषधि परीक्षण की दृष्टि से इस अंग पर रहने वाली क्रियाओं के परीक्षण में बड़ी कठिनाई भी होती है; क्योंकि विभिन्न जातियों के गर्भाशय पर होने वाली विभिन्न औषधियों की क्रियाओं में बहुत अन्तर देखा जाता है। यही नहीं मानवजाति में भी अवस्था की भिन्नता से यथा कुमार्यावस्था से गर्भाशय (Virgin) एवं अगर्भगर्भाशय (Non-pregnant uterus) तथा सगर्भगर्भाशय (Pregnant uterus) की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में औषधियों के क्रिया-व्यापार में अन्तर पाया जाता है। सगर्भगर्भाशय पर औषधियों की क्रिया अधिक प्रबल एवं स्पष्ट लक्षित होती है। गर्भाशय की मांसपेशियों में क्रिया की दृष्टि से यह विशेषता होती है, कि इसमें स्वयंजात आकुंचन गति होती है, तालबद्धता के साथ (Spontaneous rhythmic contraction) होती है। गर्भाशय की यह गति मानव-शरीर में तथा पृथक कर देने पर (Isolated) भी पाई जाती है। गर्भाशय की आकुंचन-गति बीजवाहिनियों (Fallopian tubes) से प्रारम्भ होकर नीचे की ओर गर्भाशय ग्रीवा की ओर जाती है। गर्भाशय में इसी प्रकार की गति कुमार्यावस्था में भी होती है, किन्तु अपेक्षाकृत मन्द अवश्य होती है। किन्तु कुमारियों में भी उक्त गति मासिक धर्म के समय तीव्रतर एवं प्रबल हो जाती है।

गर्भाशय की मांसभित्तियों की रचना में दूसरी विशेषता यह होती है, कि इसमें रक्त-वाहिनियाँ प्रचुरता से पाई जाती हैं। गर्भावस्था में इनमें अधिकाधिक रक्तसंचार होता है। किन्तु इन रक्तवाहिनियों की स्थिति में विशेषता होती है, जो अङ्गरेजी भाषा के अंक ८ की स्थिति में होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप गर्भाशय में आकुंचन होने से इन पर उक्त स्थितिविशेष के कारण दबाव पाकर रक्तस्राव स्वयंएव बन्द हो जाता है।

नाड़ी-नियन्त्रण के अतिरिक्त गर्भाशय की सामान्य क्रियाओं यथा मासिकधर्म (Menstrual cycle) का सुचारुरूप से होना तथा गर्भधारण के लिए अन्य उपयुक्त क्रियाओं एवं गर्भधारण के बाद होने वाली क्रियाओं के सुचारु सम्पादन के लिए डिम्बग्रन्थि (Ovary) एवं पीयूषग्रंथि के अग्रिमखण्ड का घनिष्ट सम्बन्ध होता है। एन्टीरियर पिचुटरी ग्लैंड के प्रजननपोषी अन्तः स्राव (Anterior pituitary gonadotrophic hormone) के दो अंश होते हैं। इनमें एक का सम्बन्ध

गुरुकोष (ग्रेफियन फॉलिकिल Graafian follicle) एवं डिम्ब (Ova) की उत्पत्ति से होता (F. S. H or Prolan A) है तथा दूसरे को बीजकिणपुट-अन्तःस्राव (L H or Prolan B) कहते हैं, जो गर्भधारण में सहायक होता है। बीजग्रन्थियों (Ovaries) का कृत्रिम रूप से विच्छेद करने से अथवा जिन स्त्रियों में जन्मजात इसका अभाव होता है, उनमें मासिक धर्म बन्द हो जाता तथा गर्भाशय का क्षय हो जाता है।

आर्त्तव प्रवर्त्तक या आर्त्तवजनन (इमेनेगॉग Emmene gogues)—उन औषधियों को कहते हैं, जिनके सेवन से आर्तव की प्रवृत्ति होती है, विशेषतः उन अवस्थाओं में जब आर्तव का पूर्णतः अभाव होता है या अल्पमात्रा में होता है। आर्त्तव-प्रवर्त्तक औषधियों का चुनाव कारण पर निर्भर करता है। यदि अनार्तव (Amenorrhoea) या रजःकृच्छ्रता (Dysmenorrhoea) बीजग्रंथि की क्रिया विकृत होने के कारण होतो ऐसी अवस्था में ईस्ट्रोजन (Oestrogen) एवं प्रोजस्टरॉन (Progesterone) के प्रयोग से लाभ होगा। और यदि कारण अत्यधिक रक्तक्षय (Loss of blood) एवं रक्ताल्पता (Anaemia) हो तो, शोणितवर्द्धक (Haematinics) अर्थात् खून बढ़ाने वाली औषधियों—यथा लौह के यौगिक—का प्रयोग करना चाहिए। यदि दुस्स्वास्थ्य (Cachexica) या दौर्बल्य हो, तो बल्य औषधियों (Tonics) का प्रयोग करने से लाभ होता है। अधिकांश गर्भपातक द्रव्यों का सेवन जब अल्पमात्रा में किया जाता है, तो वह आर्त्तवप्रवर्त्तक का कार्य करते हैं। यह क्रिया विशेषतः अगर्भवती स्त्रियों (Nonpregnant women) में तथा उन अवस्थाओं में लक्षित होता है, जब आर्तव या मासिक धर्म, तत्सम्बन्धी किसी अंग के क्रिया-व्यापार की विकृति (Functional cause) के कारण ठीक तरह से नहीं आता।

गर्भशातक या गर्भपातक एवं गर्भस्रावी औषधियाँ (एक्बोलिक्स Ecbolics या ऑक्सिटोसिक्स Oxytocics and Abortifacients)—जो गर्भाशय में आकुंचन गति (Uterine contractions) पैदा कर गर्भ को बाहर निकालती हैं। यह दो प्रकार की हैं:—

(अ) प्रत्यक्ष गर्भपातक द्रव्य (Direct Ecbolics)—इस वर्ग की औषधियों का प्रभाव प्रत्यक्षतया (१) गर्भाशय की पेशियों अथवा (२) गतिप्रवर्त्तक स्वतंत्रनाड्यग्रों (Motor-sympathetic endings) पर होता है, जिससे गर्भाशय में आकुंचन होकर गर्भ का बहिर्निस्सरण होता है। आर्गोमेट्रीन (Ergometrine), पोस्टीरियर पिच्युटरी (Posterior Pituitary) अर्थात् पश्चिम पीयूषग्रंथिसत्व, ऑक्सिटोसिन (Oxytocin), हिस्टामीन (Histamine) तथा क्विनीन आदि औषधियों की क्रिया सीधे गर्भाशयिक पेशीसूत्रों पर होता है। अर्गोटाक्सीन, अर्गोटामीन तथा टायरामीन आदि अपनी क्रिया गतिप्रवर्त्तक स्वतंत्रनाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण करते हैं। सीस (Lead) भी गर्भपातक होता है, किन्तु चिकित्सार्थ इसका व्यवहार नहीं किया जाता। इसका प्रयोग लोग अवैध गर्भपात (Criminal abortion) के लिए करते हैं।

(ब) अप्रत्यक्ष गर्भपातक औषधियाँ (Indirect Ecbolics)—इस वर्ग की औषधियाँ अपना कार्य कटि या श्रोणिगुहागत अंगों में रक्तातिसंचय (Pelvic congestion) करने का कारण करती हैं। तीव्र विरेचन (Drastic purgatives) तथा मुसब्बर

(Aloes) आदि की क्रिया इसी प्रकार होती है। इसी कारण गर्भावस्था में विरेचन देना निषिद्ध होता है।

(२) स्तन या स्तन्यजनन (Mammary glands) :—

सामान्यतया स्तन्यजनन (Secretion of milk) भी एक नैसर्गिक क्रिया है, जो प्रसव के बाद स्वयं प्रवर्त्तित होता है। युवावस्था के अन्य परिवर्तनों के साथ-साथ स्त्रियों के स्तनों में भी परिवर्तन होकर उनकी वृद्धि होती है। प्रत्येक मासिकचक्र (Menstrual cycle) के समय ग्रन्थि में वृद्धिजनक परिवर्तन होते हैं। गर्भावस्था में स्तनग्रन्थियों में यह परिवर्तन अधिक स्पष्ट होता है। किन्तु प्रारम्भिक मासों में केवल ग्रन्थि के आकार में वृद्धि होती तथा कतिपय अन्य रचनागत विशेषतायें भी होती हैं। दुग्धजनक परिवर्तन एवं उत्तेजना गर्भावस्था के अन्तिम महीनों में होता है। स्तन वृद्धि एवं दुग्धोत्पत्ति की क्रियाओं का नियंत्रण अनेक अन्तःस्रावों (Hormones) की पारस्परिक कार्य-सम्बन्ध के कारण होता है। स्तनवृद्धि पर ईस्ट्रोजन (Oestrogen) एवं प्रोजस्टरॉन (Progesterone) नामक अन्तःस्रावों का बहुत प्रभाव पड़ता है। किन्तु इनकी क्रिया का सम्यक् संचालन एन्टीरियर पिच्युटरी अन्तःस्राव एवं ग्रैवेयकग्रंथि (Thyroid gland) के अन्तःस्राव के द्वारा होता है। अपरा (Placenta) के भी अन्तःस्राव गर्भावस्था में स्तनवृद्धि में उत्तेजना देते हैं। वास्तव में स्तन्यजनन की क्रिया का प्रधान नियंत्रण पीयूषग्रन्थि के अग्रिम खण्ड (Anterior lobe of the Pituitary gland) के प्रोलेक्टिन (Prolactin) नामक स्तन्यजनक अन्तःस्राव (Lactogenic hormone) के द्वारा होता है। तथा ग्रैवेयक ग्रंथि भी इसमें सहायक होता है। अतएव साधारण अवस्थाओं में, जब दूध कम आता है ग्रैवेयकग्रंथि के यौगिकों के सेवन से काम चल जाता है।

कतिपय औषधियाँ, जिनका शरीर से निस्सरण (Excretion) दूध के साथ भी होता है, स्तनन्धय अर्थात् दूध पीनेवाले बच्चों (Breast-fed babies) पर भी अपना प्रभाव करती हैं। जैसे माता को ब्रोमाइड का सेवन कराने से उसका स्तनपान करने वाले बच्चे में भी निद्राजनक प्रभाव लक्षित होता है। इसी प्रकार मॉर्फिन, ओपियम् (अफीम), तथा मुसब्बर (Aloes) आदि रेचक द्रव्य माता के द्वारा सेवन किए जाने पर स्तनपान करनेवाले बच्चे पर भी अपना प्रभाव करते हैं। अनेक औषधियाँ यथा सल्फोनामाइड्स (Sulphonamides), पेनिसिलिन, आयोडाइड्स तथा सेलिसिलेट्स एवं क्विनीन आदि—ऐसी भी हैं, जो माता के दूध के साथ उत्सर्गित होने पर भी बच्चे पर कोई कुप्रभाव नहीं करतीं।

स्तन्यजनक या दुग्धजनक औषधियाँ (गॅलक्टेगॉग्स (Galactagogues)— जो औषधियाँ स्तन्यजनन (Secretion of milk) में वृद्धि करती हैं, उनको स्तन्यजनक या गॅलक्टेगॉग कहते हैं। पीयूषग्रंथि के पूर्व खण्ड का प्रोलेक्टिन (Prolectin) नामक अन्तःस्राव इनमें मुख्य हैं। स्तनपान (Suckling) स्वयं स्तन्यजनन में उत्तेजक प्रभाव करता है। पोस्टीरियर पिच्युटरी इन्जेक्शन से स्तन्यजनन पर तो कोई प्रभाव नहीं होता, किन्तु स्तन के अनैच्छिक पेशीसूत्रों पर प्रभाव करने से उनको उत्सर्गित करने में सहायक अवश्य होता है।

स्तन्यावरोधक द्रव्य (Antigalactagogues)—जो स्तन्यजनन को रोकते हैं, यथा आयोडाइड्स, एवं ईस्ट्रिन (Oestrin)।

(३) वीजग्रंथिपोषक तत्व तथा स्राव एवं प्रजननावयव सम्बन्धी अन्तःस्राव (गोनाडोट्रॉफिन्स एण्ड सेक्सहॉर्मोन Gonadotrophins and Sex Hormones):—

प्रजननावयवों (Reproductive organs) का पीयूषग्रंथि से अग्रिमखण्ड (Anterior pituitary) से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। स्त्रियों में युवावस्था में होनेवाले अनेक शारीरिक परिवर्तनों का प्रारम्भ पीयूषग्रंथि के अग्रिमखण्ड के डिम्बग्रंथि-उत्तेजक अन्तःस्रावों (Gonadotrophic hormones) की ही क्रिया से होता है। एण्टीरियर पिच्युटरी के ही प्रभाव से कुमारियों में रजोदर्शन (Menstruation) का प्रादुर्भाव होता है, तथा मासिक धर्म प्रारम्भ हो जाने पर डिम्बग्रंथि के ओस्ट्रोजन (Oestrogen) एवं प्रोजस्टरॉन (Progesterone) नामक महत्त्वपूर्ण अन्तःस्रावों की उत्पत्ति का आरम्भ होता है। इसी प्रकार पुरुष-प्रजननांगों एवं यौवन में पुरुषत्व के शारीरिक परिवर्तनों का आरम्भ भी एण्टीरियर पिच्युटरी के ही प्रभाव से होता है। उक्त परिवर्तनों को कराने में तथा युवावस्था के प्रजननावयव सम्बन्धी क्रिया-व्यापार के सम्पादन में निम्न विभिन्न प्रजननावयन सम्बन्धी अन्तः स्राव तथा तत्व सहायक होते हैं :—

(१) अग्रिमपीयूषग्रंथि के अन्तःस्राव की भाँति क्रिया करने वाले अन्तःस्राव या तत्व (Anterior Pituitary-like Hormones)—ये यद्यपि रासायनिक रचना में अग्रिम पीयूषग्रंथि के अन्तःस्रावों की भाँति भले ही न हों, किन्तु क्रिया में बिल्कुल उन्हीं के समान होते हैं। आजकल चिकित्सा-व्यवसाय में इनका बहुत उपयोग किया जाता है। इसीलिए इन्हें अग्रिम पीयूषग्रंथि-सम अन्तःस्राव (Anterior Pituitary-like Hormones) कहते हैं।

(१) वीजकोष-उत्तेजक अन्तःस्राव (The Follicle-stimulating hormone (FSH.)—इसको थाइले केन्ट्रिन (Thylakentrin) तथा प्रोलन 'ए' Prolan A भी कहते हैं। इसकी क्रिया से पुरुषों में शुक्राणुओं (Spermatozoa) की उत्पत्ति तथा स्त्रियों में डिम्बकोषों (Ovarian follicles) का परिपाक (Ripening) होता है। अकेले इसका सेवन करने से डिम्बों की उत्पत्ति (Ovulation) में तो कोई प्रेरणा नहीं मिलती, किन्तु इसके प्रभाव से गुरुकोषों (Gra afian follicles) की वृद्धि में अवश्य उत्तेजना मिलती है।

(२) वीजकिणपुट-उत्तेजक अन्तःस्राव या पीतांग-उत्तेजक अन्तःस्राव (The Leuteinizing Hormone (LH)—इसे (१) इन्टर्सटिशियल सेल स्टिमुलेटिंग हार्मोन (Interstitial Cell Stimulating Hormone (ICSH) तथा प्रोलन 'वी' Prolan B. भी कहते हैं। इसकी क्रिया से स्त्रियों में डिम्ब की उत्पत्ति (Ovulation), वीजकिणपुट की उत्पत्ति (Luteinization) तथा ओस्ट्रोजन की उत्पत्ति होती है। इस क्रिया के वीजग्रंथि में, वीजकोशाओं (Follicles) की उपस्थिति आवश्यक है। इसके लिए पहले फॉलिकिल-उत्तेजक अन्तःस्राव (FSH) का प्रयोग कर लेना चाहिए। पुरुषों में इसकी क्रिया से एन्ड्रोजन (Androgens) की उत्पत्ति होती है, जो पौरुषग्रंथियों (Prostate glands) एवं शुक्रप्रपिकाओं (Seminal vesicles) की वृद्धि में सहायक होता है।

(३) ल्युटोट्रॉफिन Luteotrophins—यह अन्तःस्राव एण्टीरियर पिच्युटरी के प्रोलेक्टिन (Prolactin) से बहुत-कुछ मिलता-जुलता (Identical) होता है। यह

दुग्धस्रावोत्तेजक प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त बीजकिणपुट (Corpus luteum) से प्रोजस्टरॉन नामक अन्तःस्राव का उद्भव भी इसी क्रिया से होता है।

व्यावसायिक कार्य के लिए बीजग्रन्थि-पोषक या उत्तेजक अन्तःस्राव गर्भिणी स्त्रियों के मूत्र से तथा गर्भिणी घोड़ियों के रक्तरस (Serum) से प्राप्त किया जाता है। पहले को **कोरिऑनिक गोनाडोट्रॉफिन** (Chorionic Gonadotrophin) कहते हैं। इसकी क्रिया ल्युटिनाइजिंग हार्मोन (LH) की भाँति होती है। इससे स्तन्यजनन में अधिकता होती है। गर्भिणी घोड़ियों के रक्तरस से प्राप्त होने वाले तत्वों को **सीरम गोनाडोट्रॉफिन** (Serum Gonadotrophin) कहते हैं। इसकी क्रिया '**प्रोलन A**' नामक अन्तःस्रावों की भाँति होती है। चूँकि उक्त दोनों अन्तःस्राव यद्यपि एण्टीरियर पिच्युटरी से प्राप्त नहीं किए जाते। किन्तु इनकी क्रिया एण्टीरियर के उन-उन अन्तःस्रावों की ही भाँति होती है, अतएव इनको **पीयूषग्रन्थि-सम अन्तःस्राव** (Anterior Pituitary-like Hormones) कहते हैं। इन बीजग्रन्थिपोषक **अन्तःस्रावों का प्रयोग चिकित्सा में पेशीगतसूचिकाभरण** (Intramuscular Injectoin) द्वारा किया जाता है।

(२) **बीज-ग्रंथियों के अन्तःस्राव** (Sex Hormones)—बीजग्रंथियों से हमारा तात्पर्य स्त्रियों की डिम्बग्रंथियों (Ovaries) तथा पुरुषों की शुक्रग्रंथियों (Testicles) से है। स्त्री के डिम्बग्रंथियों से २ प्रकार के अन्तःस्रावों की उत्पत्ति होती है। (१) को **ओस्ट्रेडिऑल** (Oestradiol) या ओस्ट्रिन-जनक अन्तःस्राव (Oestrogenic Hormone) कहते हैं। (२) को **प्रोजेस्टरॉन** (Progesterone) कहते हैं। इनमें प्रथम की उत्पत्ति डिम्बग्रंथि (Ovary) के बहिर्वस्तुगत बीजकोषीय धातुओं (Follicular tissue) से तथा प्रोजेस्टरॉन की उत्पत्ति बीजकिणपुट या पीतांग (Corpus luteum) के द्वारा होती है। पुरुषों के शुक्रग्रंथियों के अन्तः स्राव को (३) **टेस्टॉस्टरान** (Testosterone) या एन्ड्रोजीन हार्मोन (Androgenic hormone) या अन्ड्रोजन (Androgens) कहते हैं। रासायनिक दृष्टि से ये तीनों अन्तः स्राव (ओस्ट्रोजन्स, प्रोजेस्टरॉन तथा टेस्टोस्टरॉन) एक प्रकार जटिल स्वरूपीय स्टिरायड्स (Complex steroids) होते हैं, जो प्रायः कोलेस्टरॉल (Cholesterol) के रासायनिक अविघटन द्वारा उत्पन्न होते हैं। बीजग्रंथियों के उक्त अन्तः स्राव चिकित्सार्थ प्रयुक्त करने के लिए **नैसर्गिक रूप से** साक्षात् अन्य स्तनधारी जन्तुओं की ग्रंथियों से प्राप्त किए जाते हैं अथवा **कृत्रिम रूप से** रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा (Synthetically) प्राप्त किए जाते हैं।

(अ) **ओस्ट्रीन-जनक अन्तः स्राव या तत्व** (Oestrogens) चिकित्सा में व्यवहृत होने के लिए ओस्ट्रीन पदार्थ दो स्वरूप से पाये जाते हैं—(१) **नैसर्गिक साधनों से प्राप्त ओस्ट्रोजन्स** (Natural Oestrogens) तथा (२) रासायनिक-संश्लेषण पद्धति द्वारा (Synthetically) निर्मिक कृत्रिम औस्ट्रोजन्स (Synthetic Oestrogens)। इनमें नैसर्गिक ओस्ट्रीन-पदार्थों का प्रयोग प्रायः **पेशीगत सूचिकाभरण** द्वारा किये जाने पर ही इनकी क्रियाशीलता होती है, किन्तु कृत्रिम यौगिको की यह विशेषता है, कि मुखद्वारा (Orally) सेवन किए जाने पर ही ये सक्रिय होते हैं। कृत्रिम ओस्ट्रीन-पदार्थों में स्टिलबिस्ट्रॉल (Stilboestrol) तथा इसके यौगिक प्रमुख हैं।

नैसर्गिक ओस्ट्रीन-पदार्थ (Natural Oestrogens)—ओस्ट्रोन (Oestrone), ओस्ट्रे डिऑल (Oestradiol) ओस्ट्रे डिऑल के यौगिक (ओस्ट्रे डिऑल मॉनोबेंजोएट Oestradiol Monobenzoate), ओस्ट्र डियॉल डाइप्रोपिओनेट Oestradiol Dipropionate तथा एथिनिलीस्ट्रे डिऑल Aethinyloestradiol) आदि।

कृत्रिम ओस्ट्रीन-पदार्थ (Synthetic Oestrogens)—स्टिलबिस्ट्रॉल (Stilboestrol), डायनोस्ट्रॉलमी (Dienoestrol) तथा हेक्सास्ट्राल (Hexoestrol)।

(ब) बीजकिणपुट-अन्तःस्राव या पीतांग अन्तःस्राव (Corpus Luteum Hormone) या गर्भधारकअन्तःस्राव (**Progestational Hormone**)—इसे प्रोजस्टिन (**Progestin**) या प्रोजस्टरॉन (**Progesterone**) कहते हैं। रासायनिक दृष्टि से यह एक प्रकार का स्टरॉयड (**Steroid**) ही होता है। यह भी व्यवहार में दोनों प्रकार से प्राप्त किया जाता है—(१) तो **नैसर्गिक** या **प्राकृतिक रूप** से विभिन्न स्तनधारी जन्तुओं के बीजग्रंथि के बीजकिणपुट या पीतांग (Corpus luteum) से अथवा (२) रासायनिक संश्लेषण पद्धतिद्वारा **कृत्रिम रूप से**। व्यवसाय में इसका निर्माण बहुतायत से सोयबीन (Soya bean) में पाने जाने वाले स्टिग्मेस्टरॉल नामक स्टेरॉल से किया जाता है। गर्भिणी स्त्रियों के मूत्र में पाये जाने वाले प्रिग्नैनडिऑल (Pregnandiol) नामक तत्व के रासानिक अपह्रासन (Reduction) द्वारा भी प्रोजेक्टरॉन प्राप्त हो सकता है। प्रोजेस्टिन का प्रथम कार्य गर्भाशय को गर्भ धारण योग्य बनाना होता है। गर्भ धारण हो जाने पर यह अपरा (Placenta) की उत्पत्ति एवं गर्भित डिम्ब (Tertilised ovum) पर पोषक प्रभाव करता है। डिम्बग्रंथि की वृद्धि होती है तथा गर्भास्था में गर्भाशयिक-आकुंचनों (Uterine contractions) को रोकता है। गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में इस स्राव का ह्रास होकर गर्भाशय प्रसव के अनुकूल बनता है। इसके विपरीत जब गर्भधारण नहीं होता तो पीतांग (Corpus luteum) नष्ट हो जाता है। और अगले मासिक धर्म के साथ पुनः नया पीतांग बनता है। प्रोजेस्टरॉन की क्रिया ठीक प्रकार से लक्षित होने के लिए आवश्यक है कि पहले ओस्ट्रोजन तथा एन्टीरियर पिच्युटरीका सेवन रोगी को करा लिया जाय।

प्रोजेस्टीन-पदार्थ—प्रोजस्टरॉन (Progesterone), एथिस्टरॉन Ethisterone । प्रथम का प्रयोग पेशीगतसूचिकाभरणद्वारा तथा दूसरा मुखद्वारा (Orally) प्रयुक्त किया जाता है।

(३) शुक्रग्रंथि-अन्तःस्राव या एन्ड्रोजन्स (**Androgens**)—पुरुष की शुक्रग्रंथियों के अन्तःस्राव को **टेस्टॉस्टेरॉन** (Testosterone) कहते हैं। यह अन्तःस्राव **तेल में घुलनशील** होता है और **नैसर्गिक रूप में** सॉड़ या बैल (**Bull**) की शुक्रग्रंथियों से प्राप्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त रासायनिक संश्लेषण-पद्धतिद्वारा कृत्रिम रूप से यह कोलेस्टरॉल या अन्य स्टेरॉल से भी बनाया जाता है। यह अन्तःस्राव स्त्री एवं पुरुष दोनों ही में अनेक क्रियायें करता है। पुरुषों में यौवन के परिवर्तन इसी के प्रभाव से होते हैं। स्त्रियों में ओस्ट्रोजन के अनेक क्रियाओं का निवारण करता है।

एन्ड्रोजन्स—टेस्टॉस्टरॉन (Testosterone), टेस्टॉस्टेरॉन प्रोपिओनेट (Testosterone Propionate) या पेरेन्ड्रेन (Parendren), मेथिल टेस्टॉस्टेरॉन (Methyl Testosterone)।

प्रकरण ४

त्वचा पर कार्य करनेवाली औषधियाँ।

(Drugs acting on the skin)

त्वचा (Skin) भी शरीर का एक बहुत उपयोगी अंग है, और यह अपने नीचे स्थित शारीरिक अंगों पर रक्षात्मक आवरण होने के अतिरिक्त अनेक अन्य उपयोगी कार्यों का सम्पादन भी करता है। शरीर के त्याज्य तत्त्वों का निस्सरण मुख्यतया ३ अंगों द्वारा होता है, यथा (१) वृक्क, (२) फुफ्फुस तथा तीसरा प्रधान अंग त्वचा है। त्वचा शरीर के तापक्रम के संतुलन को बनाये रखने में सहायता करता है। शारीरिक तापक्रम का बढ़ना-घटना त्वचागत रक्तवाहिनियों के रक्तपरिभ्रमण की मात्रा एवं पसीने की उत्पत्ति पर निर्भर करता है। जैसे अधिक पसीना होने से तापक्रम घट जाता है। इसी लिए बुखार (ज्वर) को कम करने के लिए स्वेदल या पसीना लाने वाली औषधियों का प्रयोग किया जाता है। त्वचा द्वारा इसी प्रकार सूर्य की नीललोहितातीत किरणों (Ultra-violet rays) का शोषण होता है, जो विटामिन 'डी' की उत्पत्ति में सहायक होता है। त्वचा द्वारा इसी प्रकार औषधियों का भी शोषण होता है। और अनेक बार सामान्यकायिक प्रभाव के लिए त्वचा पर औषधियों का प्रयोग किया भी जाता है। त्वचा में संवेदनिक नाड़ियों (Sensory nerves) का सघनजाल बिछा हुआ है, अतएव त्वचा पर आघात होने से इन नाड़ियों द्वारा प्रत्यावर्तित क्रिया (Reflex action) द्वारा श्वसन एवं रक्तसंवहन पर भी प्रभाव होता है। यहाँ तक कि त्वचा के जल जाने पर कभी-कभी स्तब्धता (Shock) एवं विषमयता के घातक उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। कभी जहरीली दवाइयों के सेवनोपरान्त अथवा रक्त में विकारी जीवाणुओं का उपसर्ग होने पर त्वचा पर नाना प्रकार के विस्फोट (Eruption) निकल आते हैं। त्वचा की यह प्रतिक्रिया शरीर के रक्षा-हेतु ही होती है।

स्वेद-ग्रंथियों (Sweat-glands) पर कार्य करने वाली औषधियाँ—त्वचा का एक प्रधान कार्य है, स्वेद या पसीने का उत्पन्न करना। यह कार्य त्वचा में स्थित स्वेद-ग्रन्थियों (Sweat-glands) द्वारा सम्पन्न होता है। रक्तगत अनेक त्याज्य पदार्थों का उत्सर्ग इसी स्वेदद्वारा होता है। अधिक स्वेदोत्पत्ति कराने से शरीर का तापक्रम कम किया जा सकता है। स्वेद-ग्रन्थियों का नियंत्रण स्वतंत्र-नाड़ीमण्डल की स्रावी-नाड़ियों (Secretory nerves) द्वारा होता है, जिनका नियंत्रण पुनः केन्द्रिक-नाड़ीमण्डलांतर्गत (Central Nervous System) केन्द्रों (Centres) द्वारा होता है। स्वेदोत्पत्ति एवं मूत्रोत्पत्ति, ये दोनों क्रियायें एक दूसरे के प्रति पूरक (Compensatory) होती हैं। अतएव स्वेदोत्पत्ति को प्रभावित करके वृक्कों को भी आराम पहुँचाया जा सकता है।

जो औषधियाँ स्वेदोत्पत्ति में वृद्धि करती हैं, उनको **स्वेदल औषधियाँ** (डायफोरेटिक्स Diaphoretics) या सुडोरिफिक्स (Sudorifics) कहते हैं। इनका कार्य निम्न प्रक्रियाओं द्वारा होता है :—

(१) प्रत्यक्षतया केन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव के द्वारा—जो औषधियाँ सुषुम्ना-केन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करती हैं, वे सुषुम्ना में स्थित स्वेदकेन्द्रों (Sweat-centres) को भी उत्तेजित करती हैं। निम्न औषधियाँ इसी प्रक्रियाद्वारा स्वेद-केन्द्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने से स्वेदल प्रभाव करती हैं, यथा—अमोनियम् एसिटेट, अमोनियम् साइट्रेट तथा कर्पूर (कैम्फर)।

(२) स्रावी नाड्यग्रों (Nerve-endings) पर उत्तेजक प्रभाव के द्वारा—पाइलोकार्पीन (Pilocarpine) इसी प्रकार तीव्र स्वेदल प्रभाव करता है। फिजॉस्टिग्मीन, एसेटिलकोलीन तथा मुस्करीन इसी प्रकार की औषधियाँ हैं।

(३) त्वचीय रक्तवाहिनियों का विस्फारण कराने से—स्थानिक सेंक, तप्त-स्नान (Hot baths), उष्णपेय (Hot drinks—यथा चाय, काफी आदि) तथा निम्न औषधियाँ—अल्कोहल्, डोवर-पाउडर (Dover's Powder), क्लोरल हाइड्रेट, सेलिसिलेट्स।

(४) केन्द्र की प्रत्यावर्ति उत्तेजना (Reflex stimulation) के द्वारा वामक औषधियाँ—यथा एन्टीमनी तथा इपेकाकाना आदि—केन्द्र की प्रत्यावर्तित (प्रत्याक्षिप्त) उत्तेजना द्वारा स्वेदल प्रभाव करती हैं हृल्लास (Nausea) तथा भय चिन्ता आदि जन्य मानसिक उत्तेजनावस्थाओं में जो पसीना आने लगता है, उसकी उत्पत्ति इसी प्रकार होती है।

स्वेदल औषधियों का प्रयोग निम्न औषधियों के लिए चिकित्सार्थ किया जाता है :—(१) तापक्रम को कम करने के लिये ज्वरावस्था (Pyrexia) में; (२) जब वृक्कों का कार्य मन्द पड़ने से उससे त्याज्य पदार्थों का उत्सर्ग (यूरिया आदि) समुचित रूप से नहीं होता और रक्त में उन त्याज्य पदार्थों का संकेन्द्रण अधिक होने से घातक प्रभाव की आशंका होती है—यथा **मूत्र-विषमयता (Uraemia) की अवस्था**—तो उनका निस्सरण त्वचाद्वारा करने के लिए, एतदर्थ **पाइलोकार्पिन** एक उत्तम औषधि है। (३) शरीर में होनेवाले अनावश्यक द्रवसंचय में—यथा **सर्वांग शोफ (Dropsy)** आदि में—द्रवापहरण के लिए तथा शुक्लिमेह (Albuminuria) आदि रोगों में वृक्कों को आराम देने के लिए तथा (४) सम्भावी प्रतिश्याय अथवा विषजन्य शोफोपद्रुत अवस्थाओं में उनके शमन के लिए। समवर्त-जनित अपद्रव्यों (Metabolic products) के कारण होने वाले शोफयुक्त व्याधियों यथा—वातरक्त (Gout) आदि—में।

जो औषधियाँ पसीने को कम करती हैं, उनको **स्वेदावरोधक औषधियाँ** (एन्हाइड्रोटिक्स Anhidrotics) या एन्टीहाइड्रोटिक्स (Antihydrotics) कहते हैं। इनका कार्य निम्न प्रकार से होता है :—

(१) स्रावीनाड्यग्रों पर अवसादक (Depressant) प्रभाव करने से यथा एट्रोपीन (Atropine)।

(२) सांवेदनिक नाड्याग्रों में निष्क्रियता उत्पन्न करने से शैत्यजनक पदार्थों के स्थानिक प्रयोग, अथवा शीतल वायुमण्डल में इसी प्रकार स्वेदावरोध होता है।

बालों (Hairs) पर कार्य करने वाली औषधियाँ—करतल, पादतल आदि कतिपय भागों को छोड़कर प्रायः सम्पूर्ण शरीर पर बाल पाये जाते हैं। मुख, कक्षा (Axilla) तथा गुह्यांगों के बालों के विकास का नियंत्रण तो विशेषतः अन्तःस्रावों (Hormones) द्वारा होता है, किन्तु सामान्यतया केश (Hairs) का नियंत्रण पीयूषग्रंथि (Pituitary) तथा ग्रैवेयक ग्रंथियों (Thyroid glands) द्वारा होता है।

प्रायः चिरकालज रोगोत्तर काल में दुष्पोषण के कारण बाल झड़ने लगते हैं और कभी खल्वत्व (Baldness) भी हो जाता है। ऐसी स्थिति में मुखद्वारा तो बल्य औषधियों (Tonics) का सेवन कराया जाता है, तथा स्थानिक प्रयोग के लिए केशोत्तेजक लोशन (Stimulating lotions) के रूप में कैंथेरिडिन, रोजमरी, मिर्च (Capsicum) के योग तथा पाइलोकार्पीन आदि का प्रयोग करना चाहिये। यदि कारण उत्पादक भावों का अभाव हो तो आवश्यकतानुसार ग्रैवेयक ग्रंथिसत्व अथवा पिचुटरीन आदि का मौखिक सेवन करायें।

लोमशातक औषधियाँ (Depilatory) उनको कहते हैं, जिनके प्रयोग से बाल झड़ जाते हैं। एतदर्थ स्थानिक प्रयोग के लिए प्रयुक्त योगों में बेरियम् सल्फाइड एक प्रधान घटक होता है। मौखिक प्रयोग के लिए थैलियम् (Thallium) का व्यवहार किया जाता है।

(१) क्षोभक (Irritants) एवं प्रतिक्षोभक (Counter-Irritants) औषधियाँ—

प्रतिक्षोभक औषधियाँ (Counter-irrtants) उनको कहते हैं, जो स्थानिक क्षोभक प्रभाव के द्वारा आन्तरिक अंगों के शोथ या रक्ताधिक्य (Congestion) का निवारण करती हैं। इन प्रतिक्षोभक-द्रव्यों का स्थानिक प्रभाव के अतिरिक्त सामान्यकायिक (General) एवं दूरस्थ अंगों पर भी प्रभाव (Remote) लक्षित होते हैं। स्थानिक प्रभाव में औषधि की तीव्रता एवं प्रयोगकाल के अन्तर से कई स्थितियाँ उत्तरोत्तर क्रम से मानी गई हैं। पहली अवस्था वह है जिसमें साधारण प्रभाव होता है और उस स्थान की त्वचा में रक्ताधिक्य (Congestion) होने से रक्तिमा या लालिमा (Rubefaction) उत्पन्न होती है। ऐसी औषधियों को रक्तिमोत्पादक औषधियाँ (Rubefacients) कहते हैं। यदि क्षोभक प्रभाव उग्र हो अथवा क्षोभक औषधि का प्रयोग चिरकाल तक किया जाय तो प्रथम तो छोटे-छोटे उद्रविक विस्फोट (Vesicles) उत्पन्न होते हैं, जो बाद में परस्पर मिलकर बड़े-बड़े उद्रविक विस्फोट बन जाते हैं। ऐसी औषधियों को उद्रविक विस्फोटोत्पादक (वेसिकेन्ट Vesicant) औषधियाँ कहते हैं। जब इनमें पूय पड़ जाता है तो इनको पूयमय विस्फोट (Pustules) कहते हैं और ऐसी औषधियों को पस्चुलेंट्स (Pustulants) कहते हैं। यथा—टारटार इमेटिक एवं जयपाल तेल आदि। जिन द्रव्यों को लगाने से उस स्थल की जीवन-शक्ति (Vitality) नष्ट होती तथा जिसके परिणाम स्वरूप उस स्थल के समीपवर्ती क्षेत्र में शोथ एवं कोथ (Sloughing) उत्पन्न होता है—ऐसे द्रव्यों को दाहक औषधियाँ (कॉस्टिक्स Caustics) या एस्केरोटिक्स (Escharotics) कहते हैं। जिंक क्लोराइड, सोडियम्, पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड, आदि द्रव्य इसी प्रकार के हैं।

सामान्यकायिक प्रभाव में क्षोभक प्रभाव मन्द होने पर हृदय एवं श्वसन पर उत्तेजक प्रभाव होता है, किंतु अत्यधिक क्षोभक प्रभाव होने पर इसके विपरीत अवसादक प्रभाव होता है। मुँह पर ठण्ढा पानी धारने से प्रमीलक-विषमयता (Narcotic poisoning), मूर्च्छा एवं हिस्टीरिया आदि रोगों में इसी प्रकार प्रभाव पड़ता है।

प्रतिक्षोभक द्रव्यों का उपयोग चिकित्सा में निम्न रूप से किया जाता है:—

(१) किसी स्थल विशेष पर गम्भीरत: स्थित अंग के शोथ के शमन के लिए वहाँ की त्वचा पर प्रतिक्षोभक द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है, जो रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) अथवा विस्फोटोत्पादक (Vesicant) प्रभावद्वारा उक्त कार्य का सम्पादन करते हैं—यथा फुफ्फुसावरण शोथ (Pleurisy) एवं यकृच्छोफ (Hepatitis) में उर:प्रदेश या यकृतप्रदेश पर प्रतिक्षोभक द्रव्यों का प्रयोग ।

(२) त्वचाधः धातुओं या रचनाओं में संग्रहीत वैकृतिक द्रव्य-संचय (Effusion) अथवा वृद्धि के अपहरण एवं शोषण के लिए—यथा फुफ्फुसावरण-शोथ के परिणामस्वरूप, फुफ्फुसधरकलान्तरीय द्रव्यसंचय (Pleuritic effusion) अथवा संधि श्लेष्मकला शोथ के परिणाम स्वरूप संधि में संचित द्रव का शोषण करने के लिए तत्तत्स्थलों पर ब्लिस्टर-जनक द्रव्यों का प्रयोग तथा ग्रंथि-वृद्धि में आयोडीन के योगों का मर्दन (Massage) या प्रलेप इसी हेतु किया जाता है ।

(३) नाड्यर्ति (Neuralgia) एवं आमवात आदि व्याधिजन्य वेदना-शमन के हेतु भी वेदना-स्थल की त्वचा पर ऐसी औषधियों का प्रयोग किया जाता है ।

(४) केन्द्रिक नाड़ी संस्थान-क्षोभ (Central nervous irritability) के शमन के लिए यथा हिस्टीरिया आदि में ।

(५) प्रत्यावर्तित रूप से केन्द्रिक नाड़ी-संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव के लिए—यथा मूर्छा (Syncope) एवं प्रमीलकविषमयता आदि अचेतना की अवस्थाओं में ।

प्रतिक्षोभक द्रव्य—कैंथेरिडिन, लालमिर्च (कैप्सिकमम् Capsicum), आयोडीन (Iodine), सर्षप (मस्टर्ड Mustard) तथा सभी उत्पत् तैल (Volatile oils) ।

(२) मार्दवकर एवं स्नेहन द्रव्य :—

जिन द्रव्यों को त्वचा पर लगाने से त्वचा मृदु या मुलायम होती तथा उसकी कर्कशता (खराश) दूर होती है उनको मार्दवकर द्रव्य (इमोलिएन्ट्स Emollients) कहते हैं । तैलीय एवं चर्बीयुक्त पदार्थ—वेसिलिन, लेनोलिन आदि—इसी प्रकार के होते हैं और इनको लगाने से त्वचा मृदु होती है । जो द्रव्य श्लैष्मिक कलाओं (Mucous membranes) के खराश को कम करते तथा उनका स्नेहन करते हैं उनको स्नेहन द्रव्य (डिमल्सेंटस Demulcents) कहते हैं । यह पिच्छिल (Viscid) स्वरूप की होती हैं ।

मार्दवकर एवं स्नेहन द्रव्य—जैतून का तेल (Olive oil), तिल तैल, बिनौले का तेल(Cotton seed oil), बादाम का तेल (Almond oil), तीसी का तेल, मूंगफली का तेल (Arachis oil), ग्लिसरिन, मधु, मुलेठी, बबूल का गोंद (Acacia), कतीरा (ट्रॅगाकॉन्थ (Tragacanth) तथा स्टार्च आदि ।

(३) मलहर (मलहम) तथा मलहर के अधार द्रव्य—
(Ointment Bases)

आयन्टमेंट या मलहम एक कल्प है, जिसका उपयोग त्वचा पर लगाने के लिए होता है। इसका प्रयोग त्वचा से अभीष्टक्षेत्र की रक्षा के लिए, अथवा मार्दवकर (Emollient) प्रभाव के लिए किया जाता है । जब त्वचा पर कोई ठोस दवा अथवा कोई द्रवरूप औषधि लगानी होती है, तो उसके आधारद्रव्य (Vehicle) के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है ।

मलहम बनाने के लिए अधारद्रव्य के रूप में प्रायः वसा अर्थात् चर्वी (Fats), पैराफिन, विभिन्न जान्तव एवं वानस्पतिक तैल तथा ऊन की चर्वी (लेनोलिन) आदि का व्यवहार किया जाता है। कभी-कभी इसकी आवश्यकता पड़ती है, कि मलहम में चिकनाई न रहे, ऐसी अवस्था में ऐसे आधारद्रव्यों का प्रयोग किया जाता है, जो जल में घुल जाते हैं अथवा जल से धोने पर धुल जाते हैं। ऐसे आधार-द्रव्यों को "वाशेबुल आयन्टमेंट वेसेज Washable Ointment Bases" या जल-विलेय आधारद्रव्य कहते हैं, जैसे हाइड्रस आयन्टमेंट (Hydrous ointment), सोडियम् लॉरिल सल्फेट (Sodium lauryl-sulphate) एवं इमल्सिफाइंग वैक्स आदि।

गुणकर्म विज्ञानीय परिच्छेद २

प्रकरण १

अ—श्वसन पर प्रभाव करनेवाली औषधियाँ।

कार्बनिआइ डाइऑक्साइडम् (I. P., B. P.)—ले०;

(Carbonei Dioxidum),

कार्बन डाइऑक्साइड—(अं०)।

(Carbon Dioxide. (Carbon Diox.) : CO_2.

वर्णन—कार्बन डाइऑक्साइड खनिजकार्बोनेट्स (Mineral Carbonates) तथा खमीर (Fermentation of Sugars) से प्राप्त किया जाता है। सुविधा के लिए इसको धातु की नलिकाओं (Metal cylinders) में प्रपीड़ित करके रख लिया जाता है। कार्बन डाइऑक्साइड, एक रंगहीन गैस होता है, जो अन्य गैसों की अपेक्षा गुरु होता है। इसका जलीय विलयन (Aqueous Solution) स्वाद में हलका अम्ल या खट्टा (Acid) होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

फेनायमान योगों के रूप में Co_2 का प्रयोग चिकित्सा में बहुत अधिक होता है। खनिज जलों एवं अन्य कृत्रिम जलों (Aerated waters) की भी उपयोगिता विशेषतः कार्बन-डाई-ऑक्साइड गैस की ही उपस्थिति के कारण होती है।

स्थानिक प्रयोग से गैस तथा इसका विलयन त्वचा एवं श्लैष्मिक कला पर क्षोभक (Irritant) प्रभाव करता है, तथा यदि यह प्रयोग विलम्ब तक किया जाय तो स्थानिक स्वाप (Numbness) एवं संज्ञाहर प्रभाव भी लक्षित होता है। त्वचागत स्थानिक क्षोभक प्रभाव (Sensory irritation) का प्रत्याक्षिप्त रूपेण शरीर पर उत्तेजक प्रभाव होता है। अतएव रक्तवहसंस्थान एवं नाड़ीसंस्थान के विभिन्न रोगों में कार्बनद्विजारेयावगाह (Carbon dioxide bath (Nauheim bath) बहुत उपयोगी होता है। कभी कतिपय हृद्विकारों में भी इस अवगाह का प्रयोग किया जाता है। यष्टिका के रूप में (Carbon dioxide Snow) प्रयुक्त करने से यह प्रयुक्त स्थल के धातुओं पर घातक प्रभाव भी करता है। अतएव इसका प्रयोग दाहक (Caustic) के रूप में त्वचा पर उत्पन्न मस्सों (Warts) अथवा इसी प्रकार के अन्य त्वचा रोगों में किया जाता है। किन्तु इसका प्रयोग बड़ी सतर्कता के साथ करना चाहिए। प्रयोग-काल पर ध्यान रखना चाहिए। प्रयोग में विलम्ब करने से उस स्थल की

सम्पूर्ण धातुयें नष्ट होकर कोथादि उपद्रव पैदा हो सकते हैं। सामान्यतः उपरोक्त दाहक प्रयोग के लिये ५ से ४० सेकण्ड पर्याप्त होता है।

आभ्यन्तर—आभ्यन्तर प्रयोग से यह दीपन (Stomachic), वातानुलोमन तथा मूत्रल (Diuretic) प्रभाव करता है। इसके लिए यह कृत्रिम वायव्यित जलों (Aerated waters) के रूप में बहुत प्रयुक्त होता है। आजकल अनेक खनिज जल में औषधार्थ इन्हीं गुणों के लिए प्रयुक्त होते हैं। आमाशय पर यह संशामक प्रभाव भी करता है, अतएव वायव्यित जलों एवं कार्बोनिक एसिड गैस का प्रयोग फेनायमान मिश्रण (Effervescent mixture) के रूप में वमन एवं सामुद्रिक उत्क्लेश (Sea Sickness) आदि व्याधियों में किया जाता है।

मुखद्वारा प्रयुक्त होने पर यह कोई सामान्यकायिक प्रभाव नहीं करता। प्रधानतः यह आमाशय से ही डकार (Eructation) के साथ उत्सर्गित हो जाता तथा केवल अंशतः शोषित होकर फुफ्फुसों द्वारा उत्सर्गित होता है। रक्तगत Co_2 की मात्रा में इससे कोई परिवर्तन नहीं होता।

शुद्ध रूप में इस वायु का आघ्राणन (Inhalation) करने से मस्तिष्क-सुषुम्नोपरि प्रभाव एवं अजारकता (Anoxaemia) के कारण श्वासवरोध उत्पन्न होता है। किन्तु ऑक्सीजन के साथ आघ्राणन करने से रक्तभार में वृद्धि हो जाती है तथा श्वसन, वाहिनी-प्रेरक एवं प्राणदा केन्द्रों पर पहले उत्तेजक तदनु अवसादक प्रभाव लक्षित होता है। ५ प्रतिशत संकेन्द्रण में यह प्रत्यक्षतया श्वसनकेन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करता है। कैरोटिड साइनस (Carotid Sinus) तथा महाधमनी-तोरण (Aortic arch) गत संज्ञावह-नाड्यग्रों पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण CO_2 प्रत्याक्षिप्त रूपेण भी श्वसन-केन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करता है। किन्तु पुनः शुद्धवायु का सेवन करने से यह प्रभाव लुप्त हो जाता है। रक्त में CO_2 का संकेन्द्रण अत्यधिक (२० से ३० प्रतिशत) होने से इसके विपरीत अवसादक प्रभाव होता है तथा वाहिनी-प्रेरक केन्द्र एवं हृदय का आघात हो जाता है।

सामान्यतः श्वसन का नियन्त्रण रक्तगत कार्बन-डाई-ऑक्साइड संकेन्द्रण द्वारा होता है, तथा CO_2 के दबाव में साधारण वृद्धि होने पर भी केन्द्र प्रभावित होता है। अतएव प्रांगार-एकजारेय विषमयता (Carbon monoxide poisoning) में श्वसन एवं वाहिनी-प्रेरक केन्द्र को उत्तेजित करने के लिए आक्सीजन के साथ ५ प्रतिशत कार्बनडाई-ऑक्साइड मिलाकर उसका आघ्राणन कराया जाता है। क्लोरोफार्म एवं ईथर द्वारा संज्ञाहरण करने के समय तथा प्रमीलक-विषमयता (Narcoting poisoning) में भी यह उपयोगी होता है। संज्ञाहरण के समय इसका प्रयोग श्वसन को उत्तेजित करता तथा औषधि को क्षिप्रतापूर्वक शोषित होने में सहायता करता है, फलतः संज्ञाहरण भी शीघ्रतापूर्वक हो जाता है; शस्त्रकर्म हो जाने के बाद उत्तरकाल में इसके प्रयोग से श्वसन गम्भीरतापूर्वक होने लगता है, जिससे अधिक प्रवीजन होने से औषधि के उत्सर्ग में सहायता मिलती है, तथा संज्ञाहरणोत्तर उपद्रवों की आशंका नहीं रहती। ७० प्रतिशत ऑक्सीजन ३० प्रतिशत CO_2 मिलाकर प्रयुक्त करने से हिक्का (Hiccough) का निवारण होता है।

सौषुम्निक संज्ञाहरण (Spinal anaesthesia) में यदि सम्बन्धी प्रचेष्टनी नाड़ियों का आघात न हुआ हो तो रक्तभार में वृद्धि करने के हेतु शुद्ध आक्सीजन के साथ १० प्रतिशत कार्बन-डाई-ऑक्साइड का प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। नाड़ीघात की स्थिति में कृत्रिम श्वसन (Artificial respiration) तथा वाहिनीसंकोचकोत्तेजक (Vaso-constrictor stimulants द्रव्य अधिक उपयोगी होते हैं।

नवजात शिशु के श्वासावरोध, डूबे हुए व्यक्ति (Drowning) एवं मदात्यय की अवस्थाओं में भी इसका प्रयोग लाभप्रद होता है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—कार्बन डाइऑक्साइड स्नो Carbon Dioxide Snow—कार्बन डाइऑक्साइड दण्डिका (कार्बन डाइऑक्साइड स्नो) का व्यवहार स्थानिक प्रयोग के लिए दाहक (Caustic) कर्म के लिए किया जाता है।

ऑक्सीजिनम् (Oxygenum)—ले० (I. P., B. P.); ऑक्सीजन (Oxygen)—हिं०।

ऑक्सीजन (Oxygen) या प्राणवायु—इसमें कम से कम ६८ प्रतिशत v/v शुद्ध ऑक्सीजन O_2 होता है। सुविधा के लिए इसे धातु की वेलनाकार नलिकाओं (Cylinders) में प्रपीड़ित (Compressed) करके रखा जाता है।

स्वरूप--यह एक रंगीन, गन्धहीन एवं स्वादहीन गैस होता है। आयतन में इसका एक भाग जल के ४३ भाग तथा अल्कोहल् के ३·६ भाग में विलीन हो जाता है।

क्रिया एवं प्रयोग।

वायुमण्डलक के वायु में यद्यपि ऑक्सीजन की मात्रा (२०%) नाइट्रोजन की अपेक्षा कम होती है, किन्तु यह विशेष महत्व का घटक है। इसीसे इसको प्राणवायु की भी संज्ञा दी गई है। आक्सीजन की मात्रा बढ़ने से अथवा शुद्ध आक्सीजनवायु का आघ्राणन करने से सामान्यतः कोई विशेष परिवर्तन नहीं लक्षित होता, केवल रक्तभार में किंचित् वृद्धि होती तथा हृन्मन्दता हो जाती है। शरीर में अजारकता (Anoxaemia) की स्थिति में यह बहुत उपयोगी होता है। निम्न अवस्थाओं में अजारकता की स्थिति उत्पन्न होती है; (१) धमनियों में जब आक्सीजन की आतति (Tension) सामान्यावस्था से कम हो जाती है, जिससे शोणवर्तुलि में आक्सीजन सामान्य से कम मात्रा में पाया जाता है; (२) जब रक्त में ऑक्सीजन की आतति (Tension) तो सामान्य (Normal) होती है, किन्तु क्रियाशील शोणवर्तुलि की मात्रा बहुत कम होती है, (यथा रक्ताल्पता में) ऐसी स्थिति विभिन्न प्रकार की रक्ताल्पता रोगों में, तथा कार्बन मानॉक्साइड (Carbon Monoxide), नाइट्राइट्स एवं सल्फानिलेमाइड (Sulphanilamide) आदि के कारण उत्पन्न विषमयता (Poisoning) की अवस्थाओं में होता है; (३) चिरकालीन हृदय-रोग तथा स्तब्धता (Shock), अत्यधिक रक्तस्राव एवं रक्तसंवहनभेद (Circulatory Failure) की अवस्थाओं में भी अजारकता की स्थिति होती है, क्योंकि उक्तरोगों में शरीरगत धातुओं (Tissues) में ऑक्सीजन पर्याप्त मात्रा में नहीं पहुँचता। उपरोक्त सभी व्याधियों में चूँकि रक्त में आक्सीजन पर्याप्त मात्रा में नहीं पहुँचता अतएव इन सभी अवस्थाओं में ऑक्सीजन प्रदान से लाभ होता है।

जिन रोगों में रक्त में आक्सीजन की कमी के कारण श्वासावरोध (Asphyxia) का उपद्रव होता है। उनमें ऑक्सीजन देने से लाभ होता है। न्यूमोनिया (श्वसनक सन्निपात) में तथा बच्चों के कण्ठरोग (Croup) में फुफ्फुसों से आक्सीजन का ग्रहण उचित मात्रा में नहीं होता। अतएव श्वसन में कठिनाई होती है। पानी में डूबने (Drowning) पर श्वासावरोध हो जाता है। तथा बेहोश करने के लिए क्लोरोफॉर्म सुँघाते समय कभी-कभी श्वासावरोध का उपद्रव होता है। उक्त सभी अवस्थाओं में ऑक्सीजन देने की अवश्यकता पड़ती है। पहाड़ों की ऊँचाई पर हवा का दबाव कम होने के कारण श्वसन के साथ ऑक्सीजन पर्याप्त मात्रा में शरीर में नहीं पहुँचता। किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में यह व्याधि (Mountain Sickness) का रूप धारण कर लेता है और ऑक्सीजन देने की आवश्यकता पड़ जाती है। फुफ्फुसशोथ (Pulmonary Oedema) की अवस्थाओं में भी आक्सीजन की कमी होती तथा श्वासावरोध (Asphyxia) का उपद्रव होता है।

हार्दिक धमनी के थ्राम्बोसिस (Coronary Thrombosis) रोग में भी ऑक्सीजन-प्रदान से बहुत उपकार होता है।

हेलियम् Helium (He.), B. P.

वर्णन—यह एक रंग, गंध एवं स्वादरहित गैस से होता है, जो नैसर्गिक पेट्रोलियम गैस से प्राप्त किया जाता है। व्यवसाय में यह धातु-नलिकाओं में निपीड़ित (Compressed in metal cylinders) रूप में प्राप्त होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

हेलियम् गैस का उपयोग रोगियों को सुंघाने के लिए किया जाता है। जब रोगी को श्वास लेने में कठिनाई या कष्ट होता है, तो हेलियम् गैस को ऑक्सीजन के साथ मिलाकर (८० प्रतिशत हेलियम्, २० प्रतिशत ऑक्सीजन) अथवा नैसर्गिक वायु के साथ मिलाकर (२ भाग आयतन में वायु तथा १ भाग हेलियम्) प्रयुक्त करते हैं। एतदर्थ इसका प्रयोग श्वसनमार्ग के अनेक रोगों में यथा दमा या श्वास, वायुकोषविस्फार (Emphysema), श्वासनलिका-विस्फार (Bronchiectasis) तथा फुफ्फुस में तन्तूत्कर्ष (Pulmonary fibrosis) आदि किया जाता है।

ब—कफनिःसारक द्रव्य (Expectorants) :—

इपीकेकाना (इपेकाक०), I. P., B. P.
(Ipecacuanha (Ipecac.)
Family: Rubiaceae (मञ्जिष्ठादि-कुल)

पर्याय—इपीकेकानी रेडिक्स Ipecacuanhae Radix–ले०; इपीकेकाना रूट Ipecacuanha Root, हिप्पो Hippo–अं०।

प्राप्ति-साधन—यह सिफेलिस इपीकेकाना Cephaelis ipecacuanha (Brot) A. Rich—जिसका व्यावसायिक नाम रायो Rio या ब्रेजिलियन इपेकाकाना Rrazilian Ipecacuanha है—अथवा सिफेलिस एक्युमिनेटा Cephaelis acuminata. Karsten—जिसको व्यवसाय में कार्टेजिना Cortagena अथवा निकार्गुआ Nicarg-

ua या पनामा इपेकाक्काना Panama Ipecacuanha कहते हैं—के शुष्क किये हुए मूल (Root) या राइज़ोम (Rhizome) होते हैं। इसमें कम से कम २०% इमेटीन होता है।

वक्तव्य—'Caphaelis, शब्द व्युत्पन्न है, दो यूनानी (Greek) शब्दों से जिनके अर्थ होते हैं 'Head' तथा "to collect and roll up", जो इसके पुष्प-व्यूह की विशेषता बताते हैं। 'इपीकेकाना Ipecacuanha' शब्द पुर्तगाली भाषा का शब्द है, जो व्युत्पन्न है उक्त ओषधि के स्थानिक (ब्रेजिल के) नाम 'ipe-kae-guene' से। इसका अर्थ होता है "a creeping plant that causes vomiting," इपेकाक्काना की दूसरी उपजाति का नाम 'acuminata' उसकी पत्तियों के तीक्ष्णाग्र (Acute apex) वाली होने से रक्खा गया है। उक्त वनस्पति का औषधीय प्रचार सन् १६६० से प्रारम्भ हुआ।

उत्पत्ति-स्थान—सिफेलिस इपीकेक्काना ब्रेजिल (दक्षिणी अमरीका) की वनस्पति है, जहाँ यह नम जंगलों में बहुतायतरूप से स्वयंजात होती है। सिफेलिस एक्युमिनेटा भी अमरीका में ही होती है। वक्तव्य—उक्त दोनों वनस्पतियाँ भारतवर्ष में स्वयंजात नहीं होतीं। किन्तु अधुना दार्जिलिंग एवं नीलगिरी में इसकी खेती की जाती है।

चित्र २८—इपेकाकाना का पौधा तथा जड़।

वर्णन। वनस्पति—इपेकाकाना के गुल्मकस्वरूप के(Shrubby) लगभग १ फुट ऊँचे छोटे-छोटे पौधे होते हैं। वायव्य काण्ड कौणिक (Angular) होता है। इसमें राइज़ोम भी पाया जाता है, जो आकार में रम्भाकार या बेलनाकार तथा १ से ३ इंच लम्बा होता है। इसी भौमिककाण्ड से जड़ें निकली होती हैं, जिनमें कोई-कोई काफी मोटी हो जाती हैं। राइज़ोम

युक्तमोटी जड़ें ही व्यावसायिक इपेकाकाना होती हैं। इपेकाकाना में सफेद रंग के पुष्प आते हैं। जो पौधे के सिरे पर एकाकी अग्रग पुष्पव्यूहधारक दण्ड (Solitary terminal peduncle) पर गुच्छक के रूप में स्थित होते हैं। जड़ (Ipecacuanha Root)—इपेकाकाना की जड़ें गाढ़े ईंट के रंग की अथवा गाढ़े भूरे रंग के टेढ़े-मेढ़े टुकड़ों (Tortuous pieces) के रूप में मिलती हैं, जो अधिक से अधिक ६ इंच (१५ सेंटीमीटर) लम्बी तथा ६ मिलिमिटर तक मोटी होती हैं। इसका रंग उत्पत्ति-स्थल की भूमि की प्रकृति पर निर्भर करता है। जड़ पर इतस्ततः छाल (Bark) बिल्कुल उतरी हुई होती है। मूल-त्वक् (Root-bark) पर छल्लेदार उभाड़ों की श्रृंखला (Annulated) होती है। छाल को तोड़ने से यह खट से टूट जाती (Short fracture) है तथा काष्ठभाग (Wood) को तोड़ने पर छोटे-छोटे टुकड़े से निकलते (Fracture splintery) हैं। जड़ को तोड़ने पर भीतर मज्जक (Pith) प्रायः नहीं के बराबर होता है। यों तो जड़ों में कोई गन्ध नहीं होती, किन्तु इसका चूर्ण सूंघने पर क्षोभक एवं छिक्काजनक (Sternutatory) होता है। स्वाद में यह तिक्त (Bitter) होता है। राइजोम—इपेकाकाना के भौमिककाण्ड आकार में रम्भाकार (Cylindrical) होता है, जिसका व्यास १–३ मिलिमिटर होता है। बाह्यतः अनुलम्बदिशा में झुर्रीदार (Wrinkled) या रेखांकित (Striated) होता है। राइजोम पर कभी-कभी इतस्ततः कलिकायें मिलती हैं तथा टूटे हुए मूल या शाखा के चिन्ह (Scars) मिलते हैं।

रासायनिक संघटन—इपेकाकाना की जड़ में (अ) प्रायः २ से ३% अल्कलायड्स पाये जाते हैं, जो निम्नलिखित हैं—(१) इमेटीन (Emetine); (२) सिफेलिन (Cephaeline) तथा (३) साइकोट्रीन (Psychotrine); (४) मेथिल-साइकोट्रीन (Methyltrpsychorine); (५) इमेटामीन (Emetamine)। किन्तु इनमें इमेटीन तथा सिफेलीन ही विशेष महत्व के हैं। इमेटीन की प्रतिशत मात्रा ६६% से ७२% तक तथा सिफेलीन लगभग २६% होता है। (ब) क्षारोदों के
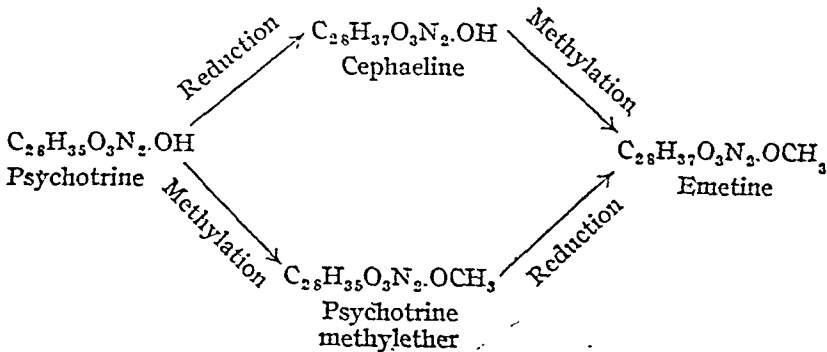
अतिरिक्त इमेटीन में (१) इपेकाकानिन (Ipecacuanhin) नामक मणिभीय स्वरूप का एक ग्लाइकोसाइड तथा (२) इपेकाकानिक एसिड (Ipecacuanhic acid) तथा (३) स्टार्च एवं (४) कैल्सियम् ऑक्जलेट भी पाया जाता है। रासायनिक दृष्टि से इपेकाक्वाना के अल्कलायड्स बहुत कुछ समरूपिक होते हैं, जिससे एक का रूपान्तर दूसरे में आसानीपूर्वक किया जा सकता है। इसी कारण मेथिलीकरण द्वारा सिफेलीन का रूपान्तर इमेटीन में किया जा सकता है। जैसा नीचे के चित्र से स्पष्ट है—

इपेकाक्वानी पल्विस Ipecacuanhae Pulvis (Ipeca. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड इपेकाक्वाइना Powdered Ipecacuanha—अं०। यह हल्के खाकस्तरी रंग (Light grey) से लेकर पीताभ-भूरे रंग का चूर्ण होता है।

इपेकाक्वानी प्रिपरेटा Ipecacuanhae Praeparata (Ipecac. Praep.)—ले०; प्रिपेयर्ड इपेकाक्वाना Prepared Ipecacuanha—अं०। पर्याय—इपेकाक्वाना पल्वरेटा Ipecacuanha Pulverata।

यह इपेक्वाना का सूक्ष्मचूर्ण होता है, जिसमें आवश्यकता पड़ने पर लेक्टोजचूर्ण या निस्सत्व इपेकाक्वानाचूर्ण (Powdered exhausted ipecacuanha) मिला दिया जाता है, ताकि तैयार चूर्ण में इमेटीन २% हो। उक्त चूर्ण के २ ग्रेन में १/२५ ग्रेन इमेटीन होता है।

मात्रा—½ से २ ग्रेन या ३० से १२० मि० ग्रा०। (वामक मात्रा)—१५ से ३० ग्रेन या १ से २ ग्राम।

इमेटिनी हाइड्रोक्लोराइडम् (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_{29}H_{40}O_{4}N_{2}$, २HCL, $७H_{2}O$.

नाम—इमेटिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Emetinae Hydrochloridum (Emet. Hydrochlor.)—ले०; इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड (Emetine Hydrochloride)—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह नैसर्गिक रूप से इपेकाक्वाना से प्राप्त इमेटीन नामक अल्कलायड का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है, अथवा रासायनिक संश्लेषण-पद्धतिद्वारा सिफेलिन (Cephaeline) का मेथिलीकिरण करने से प्राप्त होता है। इसमें ८५.२ प्रतिशत से ८८.३ प्रतिशत तक इमेटीन होता है।

वर्णन—इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड रंगहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो प्राय: गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। प्रकाश में खुला रहने से यह पीले रंग का हो जाता है। विलेयता—पानी तथा अल्कोहल (९५%) में फौरन घुल जाता है।

संरक्षण—इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—३० से ६० मि० ग्रा० (½ से १ ग्रेन) प्रतिदिन अधस्त्वक् या पेशीगत इंजेक्शन द्वारा।

इमेटिनी एट बिस्मथाइ आयोडाइडम् Emetinae et Bismuthi Iodidum (Emet. et. Bism. Iod.) B. P.—ले०; इमेटिन एण्ड बिस्मथ आयोडाइड अं०।

वर्णन—लाली लिए नारंगी के रंग का (Reddish-orange) चूर्ण होता है, जो प्राय: गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त एवं कड़वा होता है। इसमें २५ प्रतिशत से ३० प्रतिशत तक इमेटीन एवं १८ प्रतिशत से २२½ प्रतिशत तक बिस्मथ (Bi.) होता है। विलेयता—जल एवं अल्कोहल् (९५%) में अविलेय होता है; किन्तु एसिटोन में घुल जाता है।

मात्रा—६० से २०० मि० ग्रा० (१ से ३ ग्रेन) प्रतिदिन।

इन्जेक्शिओ इमेटिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Injectio Emetinae Hydrochloridi (Inj. Emet. Hydrochlor.), I. P, B. P,—ले०; इन्जेक्शन ऑव इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड—अं०; इमेटीन की सूई—हिं०।

यह परिस्रुत जल (Water for injection) में बनाया हुआ इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड का विशोधित विलयन होता है, जिसमें ६५'५ से ७७'७ प्रतिशत तक इमेटीन होता है। मात्रा—३० से ६० मि० ग्रा० (½ से १ ग्रेन) प्रतिदिन अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। यदि इन्जेक्शन के बल (Strength) का उल्लेख न हो तो १ मि० लि० या १ सी० सी० में १ ग्रेन के बल का सोल्यूशन देना चाहिए।

(नॉट्-ऑफिशल)

इमेटिनी पर-आयोडाइडम् Emetinae Periodidum (Emet Period.)—ले०; इमेटीन पर-आयोडाइड–अं०।

रासायनिक संकेत: $C_{२९}H_{४०}N_{२}O_{४}I_{६}$.

इसमें २८.७% इमेटीन होता है। यह इमेटीन के सभी यौगिकों में कम विषैला योग है। पुराने अमीबिक प्रवाहिका में बहुत उपयोगी है। इमेटीन-बिस्मथ आयोडाइड के स्थान में इसका उपयोग किया जाता है। मात्रा—०.१२ ग्राम या २ ग्रेन प्रतिदिन तीन बार करके १५ दिन तक देना चाहिए।

गुण-कर्म।

वाह्य—इपीकेक्काना चूर्ण अक्षत त्वचा पर क्षोभक, रक्तिमोत्पादक तथा उत्पूयक (Pustulant) प्रभाव करता है। ५,००० में १ के बल का इमेटीन विलयन मांसयूष-वर्धनक (Broth culture) स्थित अमीबा पर घातक प्रभाव करता है। आंत्रस्थ आँव (mucus) स्थित कीटाणुओं पर घातक प्रभाव के लिए अपेक्षया अधिकबल के विलयनों की अपेक्षा होती है, यथा १०० में १ से लेकर १००० में १ तक के विलयन।

आभ्यन्तर—महास्रोतस्—इपीकेक्काना में एक अरुचिकर तिक्त स्वाद होता है, तथा यह लालोद्रेक करता है। अल्पमात्रा में (¼ से ½ ग्रेन) स्थानिक रक्त-परिभ्रमण पर उत्तेजक प्रभाव करके आमाशयिकरस का उद्रेक करता तथा दीपन (Stomachic) प्रभाव करता है। असाधारण मात्रा (१५ से ३० ग्रेन इपीकेक्काना चूर्ण या ½ से १ ग्रेन इमेटीन) में यह वामक प्रभाव कभी-कभी इमेटीन के सूचिकाभरणद्वारा प्रयोग करने पर भी लक्षित होता है। वमन प्रत्याक्षिप्त क्रिया (Reflex action) तथा केन्द्रीय (Central) दोनों ही के प्रभाव से होता है। सूचिकाभरणद्वारा इमेटीन के प्रयोगोपरान्त वमन प्रायः औषधि के हृदयोपरिप्रभावजन्य प्रत्याक्षिप्त क्रिया अथवा आमाशय में इसका उत्सर्ग होने पर स्थानिक क्षोभक प्रभाव के कारण होता है। वामक औषधि होते हुए भी अल्पमात्रा (Drop doses) में टिंक्चर इपीकेक्काना वमननिवारक (Anti-emetic) प्रभाव भी करता है।

आमाशय की भाँति आन्त्रों में भी यह क्षोभक प्रभाव करता है, तथा इमेटीन आन्त्रों की स्वयंभूगति को उत्तेजित करता है। इसी क्षोभक प्रभाव, तथा स्थानिक वाहिनी-विस्फारण (Local vaso-dilatation) होने से अधिक द्रवसंचय होने के कारण, इमेटीन प्रयोग के समय कभी-कभी उपद्रव स्वरूप में अतिसार पैदा हो जाता है। स्थानिक क्षोभक प्रभाव के कारण ही अमीबिक डिसेन्टरी में, मुखद्वारा प्रयोग के लिए इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड के स्थान में इमेटीन बिस्मथ-आयोडाइड का प्रयोग किया जाता है।

किसी-किसी के मत में इमेटीन, यकृत पर प्रत्यक्ष तथा उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे पित्तोद्रेक अधिक मात्रा में होता है।

हृदय तथा रक्तपरिभ्रमण—इमेटीन के कुप्रभाव से हृदय दुर्बल, मन्द तथा अनियमित हो जाता है। यह अपने हृदयावसादक कुप्रभाव के लिए प्रसिद्ध है। साधारण अवस्थाओं में तो यह हृन्मन्दता ठीक हो जाती है, तथा हृदय सामान्यावस्था को प्राप्त हो जाता है। किन्तु अत्यधिक मात्रा में उपयुक्त होने से अलिन्दों एवं निलयों के कार्य में असम्बद्धता एवं परस्परासहयोग के कारण अलिन्द अथवा निलय में अराजकता (Fibrillation) होने के कारण मृत्यु तक हो सकती है। इस औषधि का उपरोक्त परिणाम हृत्पेशीपर इसके प्रत्यक्ष प्रभाव के कारण होता है।

इमेटिन के प्रयोग से रक्तभार में भी कमी हो जाती है। मात्राधिक्य एवं पुनरावृत्ति इस कमी में और भी सहायक होती है।

नाड़ी-संस्थान—नाड़ीमण्डल पर भी यह अवसादक प्रभाव करता है, जिसके परिणामस्वरूप दौर्बल्य, आलस्य (Lethargy) अथवा नाड़ीशोथ (Neuritis) पैदा हो जाते हैं। विषाक्त मात्रा के प्रयोग से सुषुम्ना के अग्रिमशृंग के नाड़ीकोषाओं में अपजनन (Degeneration) क्रिया होने लगती है।

श्वासमार्ग—आमाशयगत प्रभाव से अप्रत्यक्षतया यह कफोत्सारि (Expectorant) प्रभाव करता है। उत्सर्ग के समय श्वासनलिकाओं की श्लैष्मिककला पर भी यह उत्तेजक प्रभाव करता है तथा कफ को पतला करता है। विषाक्त मात्रा में इमेटीन से फुफ्फुसगत रक्ताधिक्य (Pulmonary Congestion) तथा रक्तस्रावी फुफ्फुसपाकजन्य सघनता (Consolidation) आदि उपद्रव भी लक्षित होते हैं।

त्वचा—साधारण मात्रा से (½ से १ ग्रेन) त्वचा पर उत्तेजक प्रभाव करके स्वेदजनन (Diaphoresis) करता है। अफीम के साथ योग होने से (यथा डोवर्स पाउडर) यह क्रिया और भी तीव्रता पूर्वक होती है।

गर्भाशय—कोई-कोई कहते हैं, कि गर्भवती स्त्रियों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए; क्योंकि इससे गर्भस्राव होने की आशंका होती है। किन्तु प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि ऐसी परिस्थिति में गर्भस्राव इमेटीन के कारण नहीं अपितु विकारीजीवाणुओं के विषाक्त प्रभाव के कारण होता है।

तीव्र विषाक्तप्रभाव (Acute toxic-action)—इमेटीन भी एक संचायीप्रवृत्ति वाली (Cumulative) औषधि है। विषाक्त प्रभाव होने पर तीव्र वृक्कीय कार्याक्षमता (Acute renal insufficiency), सर्वांगशोफ, रक्तष्ठीवन (Haemoptysis), शिथिलघात (Flaccid paralysis) परिसरीयनाड़ीशोथ, प्रलाप, सन्यास (Coma) तथा हृदयातिपात आदि लक्षण प्रगट होते हैं।

आमयिक प्रयोग।

आभ्यन्तर प्रयोग महास्रोत—जाठर्यबल्य (Stomachic tonic) होनेके कारण इपेकाकाना चूर्ण का प्रयोग (¼ से ½ ग्रेन) अन्य दीपन (Stomachic) एवं तिक्तबल्य

औषधियों के साथ जठर की निर्बलता के कारण उत्पन्न हुई अग्निमांद्य (Atonic dyspepsia) में किया जाता है। १५-१५ मिनट या ½-½ घंटे के अन्तर से टिंक्चर इपेकाक का प्रयोग १-१ बूंद की मात्रा में करने से गर्भवती स्त्रियों का वमन शमन होता है। आमाशय-क्षोभ अथवा अन्य कारणों से उत्पन्न वमन में भी इससे कल्याण होता है। विषाक्तता की दशा में आमाशय की शुद्धि के हेतु वामक प्रभाव के लिए इपेकाक उपयुक्त नहीं होता, क्योंकि इसकी क्रिया मन्दगति से होती है, किन्तु बालकों के गलरोग (Croup) एवं श्वासनलिका-शोथ (Bronchitis) व्याधि के लिए यह एक उत्तम औषधि है। इससे कफष्ठीवन केवल यान्त्रिक क्रिया के रूप में ही नहीं, अपितु श्वसनमार्ग की श्लैष्मिक कला पर भी यह प्रत्यक्ष प्रभाव करता है। इसके लिए इसके टिंक्चर या वाइनम का प्रयोग ६० से १२० बूंद की मात्रा में १-२ घंटे के अन्तर से करना चाहिए जबतक कि बालक को वमन न होने लगे।

अमीबिक प्रवाहिका (Amoebic dysentery) तथा तज्जन्य यकृच्छोफ (Hepatitis) में यह एक अमोघ औषधि है। पहले इपेकाक का चूर्ण आवश्यकतानुसार २०, ३०, ६० या ९० ग्रेन की मात्रा में प्रयुक्त किया जाता था। किन्तु इससे प्रायः मतली (उत्क्लेश) तथा वमन आदि उपद्रव भी होते थे। अब उपर्युक्त दोनों व्याधियों में इपेकाक के स्थान में इन्जेक्शन द्वारा इमेटीन प्रयुक्त किया जाता है। इसके लिए यद्यपि ½ से १ ग्रेन की मात्रा में इसका प्रयोग किया जाता है, किन्तु १ ग्रेन की मात्रा अधिक उपयुक्त होती है। एक क्रम में इसके १० से अधिक इन्जेक्शन्स नहीं प्रयुक्त करने चाहिए। अधिक उपयुक्त तो यह होता है, कि ६ इन्जेक्शन लगाकर ३-४ दिनका विश्राम दें, तदनन्तर पुनः शेष इन्जेक्शन्स लगावें। इसके बाद एक पक्ष के पहले दूसरे क्रम (Course) का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसके साथ-साथ बिस्मथकार्बोनेट का प्रयोग करनेसे इमेटीन की क्रियाशीलता और भी बढ़ जाती है। क्योंकि अन्त्र की प्रतिक्रिया क्षारीय होने से इसका कार्य और भी तीव्रतापूर्वक होता है। इमेटीन के प्रयोग से उपर्युक्त दोनों व्याधियों में वेदना, स्पर्शासह्यता (Tenderness), ज्वर, रक्त, आँव (mucus) तथा कुन्थन (Tenesmus) आदि लक्षणों का तत्काल शमन हो जाता है।

साथ में इसको न भूलना चाहिए कि इमेटीन संचायी स्वभाव की औषधि है, तथा इससे विषाक्त लक्षणों के प्रगट होने की बहुत सम्भावना रहती है। अतएव विषाक्त स्वभाव के लक्षित होते ही औषधि का प्रयोग बन्द कर देना चाहिए।

प्रवाहिका की जीर्णावस्था में जब कि अमीबा (Ent. histolytica) सिस्टिक अवस्था में पाया धाता है, तो इमेटीन का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसी अवस्था में इमेटीन-बिस्मथ आयोडाइड का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। इसका प्रयोग जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर किया जाता है। कभी-कभी उद्देश्यविशेष से इमेटिन की शर्करावगुण्ठित चक्रिकायें भी प्रयुक्त की जाती हैं। आमाशयिक रस का इन चक्रिकाओं पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता अतएव ये ज्यों की त्यों आन्त्रों में पहुँच जाती हैं, जहाँ यह वियोजित हो जाती हैं और इमेटिन स्वतंत्र होकर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव अमीबा के ऊपर करने लगती है। इस प्रक्रिया विशेष से औषधिप्रयोग की अवश्यकता इसलिए होती है कि अधस्त्वक्-सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर आंत्रों में औषधि का अभीष्टसंकेन्द्रण नहीं होने पाता। इन चक्रिकाओं का प्रयोग २ से ३ ग्रेन की मात्रा में रात्रि में सोते समय मुखद्वारा किया जाता है। वमन के निवारण के लिए औषधिसेवन के एक घंटा पूर्व

फेनोबार्बिटोन को एक मात्रा दे देना चाहिए अथवा एतदर्थ टिंक्चर ओपियम् भी प्रयुक्त कर सकते हैं। कतिपय रोगियों में इस प्रयोग से आशाजनक लाभ होता है; किन्तु साथ ही अनेक रोगियों में परिणाम निराशाजनक होता है। ऐसी स्थिति में स्टोवॉर्सोल (Stovarsol), कॉर्बार्सोन (Carbarsone) आदि की आवश्यकता पड़ती है। बिलहार्जिएसिस (Bilharziasis) रोग के लिए भी इमेटिन एक उपयोगी औषधि है, विशेषतः जब उसमें अमीबिक डिसेन्टरी का अनुबन्ध हो; क्योंकि ऐसी स्थिति में एक ही तीर से दो निशाने लगाने का कार्य होता है। अथवा जिन रोगियों में चिरकालीन वृक्क एवं हृदयविकृति हो अथवा जिनको नीलाञ्जन (Antimony) सह्य न हो, उनमें भी नीलाञ्जन के बाद इमेटिन ही अभीष्ट औषधि है। जिन रोगियों में उपद्रवानुबन्ध अधिक हो उनमें इमेटिन का प्रयोग शिरागतमार्ग से न करके पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण द्वारा ही करना चहिए। स्नायुकरोग (Dracontiasis) में भी इमेटिन का प्रयोग उपयोगी देखा गया गया है।

प्रसेकजन्यकामला (Catarrhal jaundice) तथा यकृतन्मन्दता (Torpid liver) में स्वतंत्र रूपेण अथवा अन्य पित्तविरेचक औषधियों के साथ इपेकाक्काना का प्रयोग बहुत उपयोगी होता है।

श्वसनमार्ग—कफोत्सारि होने के कारण इपेकाक्काना का प्रयोग वाइनम्, टिंक्चर, लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट लॉजेंज या सिरप के रूप में श्वसनमार्ग की शोफयुक्त व्याधियों, प्रतिश्याय, तीव्र एवं चिरकालीन श्वासनलिकाशोथ तथा ब्रांकोन्यूमोनिया में दैनिक रूप से किया जाता है। इन स्थितियों में इसका अल्पमात्रिक प्रयोग अधिक उपयोगी होता है तथा इससे वमन का उपद्रव भी नहीं होने पाता। दमा (Hay asthma) तथा कुक्कुरखाँसी में भी इपेकाना का प्रयोग कर सकते हैं।

(पाउडर्ड इपेकाक्वाना के ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् इपेकाकानी लिक्विडम् Extractum Ipecacuanhae Liquidum (Ext. Ipecac. Liq.) I. P., B. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव इपेकाक्वाना—अं०। इसमें २% (w/v) इमेटीन होता है। इस प्रकार ०.१२ मि० लि० में २.४ मि० ग्रा० या २ मिनम् में $\frac{1}{२५}$ ग्रेन इमेटीन होता है। मात्रा—०.०३ से ०.१२ मि० लि० ($\frac{1}{2}$ से २ मिनम्)। (२) वामक मात्रा (Emetic dose)—०.६ से २ मि० लि० (१० से ३० मिनम्)।

२—टिंक्चुरा इपेकाक्वानी Tinctura Ipecacuanhae (Tinct. Ipecac.), I. P., B. P.—ले०; टिंक्चर ऑव इपेकाक्वाना—अं०; टिंक्चर इपेकाक०—हिं०। इसमें ०.१% (w/v) इमेटीन होता है। इस प्रकार २ मि० लि० में २ मि० ग्रा० या ३० मिनम् में $\frac{1}{३०}$ ग्रेन इमेटीन होता है। मात्रा—०.६ से २ मि० लि० (१० से ३० मिनम् या बूंद)। वक्तव्य—यदि नुस्खे में 'वाइनम् इपेकाक्वानी' लिखा हो तो उसके स्थान में टिंक्चर इपेकाक० दिया जा सकता है।

(प्रिपेयर्ड इपेकाक्वाना के ऑफिशल योग)

१—पल्विस इपेकाक्वानी एट ओपियाई Pulvis Ipecacuanhae et opii (Pulv. Ipecac. et. Opii), I. P., B. P.—ले०; पाउडर ऑव इपेकाक्वाना एण्ड ओपियम्—अं०। पर्याय—डोवर्स पाउडर (Dover's Powder); कम्पाउण्ड पाउडर ऑव इपेकाक्वाना; पल्विस इपेकाक्वानी कम्पो-

जिटस। १०% पाउडर्ड मार्फीन, १०% पाउडर्ड इपेकाक्वाना तथा लेक्टोज होता है। १० ग्रेन चूर्ण में $\frac{1}{10}$ ग्रेन जलांशरहित मार्फीन (Anhydrous morphine) होता है। मात्रा—०.३ से ०.६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)।

२—टॅबेली इपेकाक्वानी एट ओपिपाई Tabellãe Ipecacuanhãe et Opii (Tab. Ipecac. et Opii), I. P., B. P.—ले०; टॅवलेट्स ऑव इपेकाक्वाना एण्ड ओपियम् - अं०। पर्याय—टॅवलेट्स ऑव डोवर्स पाउडर (Tablets of Dover's Powder); डोवर पाउडर की टिकिया—हिं०।

मात्रा—०.३ से ०.६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)। मात्रा का उल्लेख न होने पर ५ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

३—टॅवलेट्स ऑव एस्प्रिन एण्ड डोवर्स पाउडर Tablets of Aspirin and Dover's Powder —अं०। प्रति टिकिया दोनों की २½-२½ ग्रेन मात्रा होती है। मात्रा—१ से २ टेवलेट या टिकिया।

व्यावसायिक योग:—

(१) इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड Emetine Hydrochloride (Wander)—०.०१ ग्राम ($\frac{1}{6}$ ग्रेन), ०.०३ ग्राम (½ ग्रेन) ०.०६ ग्राम (१ ग्रेन) के १ सी० सी० के एम्पूल्स।

एपोमॉर्फिनी हाइड्रोक्लोराइडम् (I. P., B. P.)

Apomorphinae Hydrochloridum

(Apomorph. Hydrochlor)

पर्याय—एपोमॉर्फीन हाइड्रोक्लोराइड Apomorphine Hydrochloride—अं०।

स्वरूप—सूक्ष्म, भासमान (Glistening) मणिभके रूपमें होता है; रंगहीन या भूरापन लिए श्वेतवर्ण का होता है, जो प्रकाश तथा वायु में खुला रहने से हरिताभ (Greenish) वर्ण का हो जाता है; किंचित् अम्ल। विलेयता—१ भाग ५० भाग जलमें, अल्कोहल् (९०%) में; किन्तु ईथर तथा क्लोरोफार्म में केवल अंशत: विलेय होता है।

मात्रा—$\frac{1}{32}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन या २ से ८ मिलिग्राम। वामक प्रभाव के लिए अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है।

गुण-कर्म।

आभ्यन्तर—आमाशय—एपोमॉर्फीन एक विश्वसनीय वामक औषधि है, जो वमन-केन्द्र (Vomiting Centre) पर प्रभाव करके कार्य करता है। १० से १५ मिनट के अन्दर ही इसका प्रभाव लक्षित होता है, जिसके साथ वमन के विशिष्ट सहचारी लक्षण, यथा लाला, नासा, कण्ठ एवं श्वासमार्गप्रसेक तथा शीत प्रस्वेद (Cold perspiration) आदि। आमाशय पर यह क्षोभक प्रभाव भी नहीं करता तथा मुख द्वारा प्रयुक्त अन्य वामक औषधियाँ जब निष्क्रिय सिद्ध होती हैं, तो यह अवश्य अपना प्रभाव दिखलाता है। $\frac{1}{6}$ ग्रेन की मात्रा में गुदमार्ग द्वारा इसका प्रयोग करनेसे भी वमन होता है।

हृदय तथा रक्तपरिभ्रमण—औषधीय मात्राओं में तो कोई विशेष लक्षण नहीं प्रगट होते, किन्तु अधिक मात्राओं में नाड़ी की गति में वृद्धि हो जाती है, जो प्राय: हृदयोत्तेजक नाड़ियों (Accelerator Nerve) पर उत्तेजक प्रभाव होने के कारण होता है।

श्वसन--अन्य वामक औषधियों की भाँति, अल्पमात्रा में प्रयुक्त होने पर यह भी श्वास-नलिकास्राव तथा कफ का उद्रेक करता तथा कफ को पतला करता है। इसका एक कारण औषधि का कास-केन्द्र (Cough Centre) पर प्रत्यक्ष प्रभाव भी होता है। अत्यधिक मात्रा में प्रयुक्त होने से मस्तिष्क-सौषुम्निकतंत्रघात हो जाता है। मृत्यु श्वसनभेद् के कारण होती है, यद्यपि हृदय की गति कुछ देर बाद तक जारी रहती है।

नाड़ी-संस्थान--कम मात्रा में प्रयुक्त करने से तो यह निद्रल प्रभाव करता है, तथा अधस्त्वग् मार्ग द्वारा इमेटीन प्रयुक्त करने से यह प्रमीलक (Narcotic) होता है। विषाक्त मात्रा में प्रयुक्त करने से तीव्र, अनियमित आक्षेप (Convulsions) होने लगते हैं।

आमयिक प्रयोग।

आभ्यन्तर प्रयोग—आशु ((Prompt) तथा अव्यर्थ वामक (Certain emetic) होने के कारण एपोमॉर्फीन का उपयोग विषमयतावस्थाओं यथा प्रमीलकौषधि-विषमयता (Narcotic poisoning) तथा मादकता (Drunkenness) आदि में किया जाता है। मुख की अपेक्षा सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर अल्पतर मात्रा में भी शीघ्रतापूर्वक कार्य करता है। अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा (Hypodernically) $\frac{1}{10}$ ग्रेन की मात्रा में भी प्रयुक्त होने पर १-२ मिनट में ही वमन होने लगता है। मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर भी शोषणोपरान्त इसके वामक लक्षण प्रगट हो सकते हैं, किन्तु इसके लिये अपेक्षया अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। कफोत्सारि (Expectorant) प्रभाव के लिए सदैव इसका प्रयोग मुख द्वारा किया जाता है। स्वरयंत्र, क्लोमनलिका (Trachea) तथा श्वासनलिकाओं के शोथ की प्रारम्भिक अवस्था में एपोमॉर्फीन शोथका विलयन करता तथा कफ को ढीला करके उसके उत्सर्ग में सहायक होता है। बालकों के गलरोग—(Croup) तथा श्वासनलिकाशोथ (Bronchitis) में भी इसका प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। चिरकालीन श्वसनिकाशोथ (Chronic Bronchitis), श्वसनीफुफ्फुसपाक (Broncho-pneumonia) तथा बड़ी नलिकाओं को चिरकालीन प्रसेकावस्था (Chronic Catarrh) एवं श्वास के साथ जूट, शण तथा रूई आदि के कण श्वास-नलिकाओं में पहुँचने तथा तज्जन्य क्षोभ की अवस्था में जब कफ का उत्सर्ग चिपचिपा होने के कारण समुचित रूप से नहीं होता, तो इसका प्रयोग लाभप्रद होता है। कभी-कभी कोडीन (Codeine) के साथ उपयुक्त शर्बत मिलाकर सिरप ऑव वाइल्ड शेरी, सिरप ऑव लेमन आदि) अवलेह के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है। कुक्कुर कास (Hiccough) में भी इसका प्रयोग विशेष गुणकारी सिद्ध हुआ है। $\frac{1}{10}$ ग्रेन के एक इंजेक्शन मात्र से कभी-कभी रोगमुक्ति हो जाती है।

कभी-कभी वामक मात्रा से कम मात्रा में (अधिक से अधिक $\frac{1}{32}$ ग्रेन तक) इसका प्रयोग संशामक प्रभाव के लिए अल्कोहल् के नशे में (Alcoholic excitement) तथा सकम्प प्रलाप (Delirium tremens) में किया जाता है।

सावधानी—दुर्बल, वृद्ध, बालक तथा हृदय एवं फुफ्फुस के चिरकालीन रोगियों में इसका प्रयोग सतर्कता के साथ करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ एपोमॉर्फिनी हाइड्रोक्लोराइडाई Injectio Apomorphinae Hydrochloridi (Inj. Apomorph. Hydrochlor.), I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव एपोमार्फीन हाइड्रोक्लोराइड Injection of Apomorphine Hydrochloride—अं०। मात्रा (वामक)—२ से ८ मि० ग्रा० ($\frac{1}{32}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन) अवस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

(नॉट्-ऑफिशल)

सनेगा (Senega), B. P. C.

Family : Polygalaceae (बोलीगाली-कुल)

नाम—सनिगी रेडिक्स Senegae Radix—ले०; सनेगा रूट Senega Root, सनेगा Senega (Seneg.)—अं०; सनेगा Senega—B. P.; सनिगा मूल—सं०; सनिगा की जड़—हिं०, जज़र सनिगा; जज़र बोलीगाली—अ०।

चित्र २९—सनेगा का पौधा एवं जड़।

प्राप्ति-साधन—यह पोलीगाला सनिगा (Polygala Senega, Linn.) नामक पौधे का शुष्क किया हुआ मूल-स्तम्भ (Root-Stock) तथा मूल होता है।

वक्तव्य—'पोलीगाला Polygala' शब्द व्युत्पन्न है यूनानी से जिसका अर्थ होता है "much milk अर्थात् स्तन्याधिक्य"। पहले इसका प्रयोग स्तन्यजनक औषधि (Galactagogue) के रूप में किया जाता था, अतएव ऐसा नामकरण हुआ। पहले इसको 'बोलोगाली' कहते थे। इसीसे मुहीत आजम में बोलोगाली नाम से इस औषधिका संक्षिप्त विवरण मिलता है। पोलीगालून नाम से इसका वर्णन दीसकूरीदूस तथा पलायनी रूमी आदि प्रचीन यूनानी चिकित्सकों ने भी किया है। 'सनिगा' शब्द "सनिका Seneca" से व्युत्पन्न है, जो अमरीका की एक प्राचीन जाति का नाम है! इस जाति में लोग इस औषधिका प्रयोग सर्प-दष्ट की चिकित्सा में करते थे। सन् १७३८ ई० में प्रथम बार इसका प्रयोग फुफ्फुस-रोगों पर हुआ। और तब से यूरोप में भी इसका प्रचार हो गया।

उत्पत्ति-स्थान—संयुक्तराष्ट्र अमरीका तथा दक्षिणी कनाडा।

वक्तव्य—यह औषधि भारतवर्ष में नहीं पाई जाती; किन्तु हिमालय प्रदेश के समशीतोष्ण कटिबन्धीय भाग में पहाड़ी-ढालुओं पर इसकी खेती (Cultivation) की जा सकती है।

वर्णन—सनिगा के छोटे-छोटे पौधे होते हैं, जिसकी जड़ें सशाख एवं बहुवर्षायु (Perennial) होती हैं। प्रति वर्ष जड़ से अनेक वायव्य काण्ड निकलते हैं, जो लगभग १ फुट ऊँचे होते हैं। औषधि का संग्रह ग्रीष्म के अन्त में किया जाता है, और तने के कुछ भाग को छोड़कर शेष काटकर अलग कर दिया जाता है। और मूल (Root) तथा उसके साथ लगे हुए काण्ड का कुछ भाग साफ करके संग्रहीत कर लिया जाता है। यही व्यावसायिक सनिगा है। जड़ या मूलस्तम्भ—इसका मूल प्रायः २ से ८ इञ्च लम्बा तथा ⅙ से ½ इञ्च मोटा होता है। रंग में यह हरिताभ (Greyish) या भूरापन लिए पीतवर्ण का होता है तथा तोड़ने पर खट से टूट जाता (Fracture Short) है। ऊपरी सिरे पर एक चौड़ी ग्रंथिल रचना (Knotty crown) होती है, जिस पर छोटी-छोटी शाखाओं के अनेक अवशेष (Remains) लगे होते हैं। अधोभाग गोपुच्छाकार होता है और उस पर कील या हुक की भांति एक उभार होता है। मूल-वल्कल पर कभी आड़े रूप से स्थित झुर्रियाँ (Wrinkles) पाई जाती हैं। कोई-कोई जड़ टेढ़ी-मेढ़ी वल खाये हुए (Curved or Contorted) होती हैं। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध भी पाई जाती है। आर्निका, वलेरियन तथा ग्रीन हेलवोर की जड़ें इससे मिलती-जुलती हैं, किन्तु उनमें से किसी पर भी कीलवत् रचना नहीं पायी जाती।

रासायनिक संघटन—इसमें ग्लाइकोसाइड (Glycoside) या मधुसेय स्वभाव के दो सेपोनिन्स (Glycosidal saponins) पाये जाते हैं, यथा—(१) सेनेगिन (Senegin) तथा (२) पॉलीगैलिक एसिड (Polygalic acid)। सेनेगिन श्वेतवर्ण का एक गंधरहित चूर्ण होता है, जिसको सूँघने से छींकें आने लगती हैं।

सॅनेगी पल्विस Senegæ Pulvis—ले०; पाउडर्ड सॅनेगा Powdered Senega—अं०; सॅनेगाचूर्ण।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सॅनेगा की क्रिया प्रधानतः इसमें पाये जाने वाले सॅनेगिनतत्त्व के कारण होती है। सनेगिन की क्रिया सपोटॉक्सिन (Sapotoxin) की भाँति होती है। सेपोनिन होनेके कारण इनको भी जल के साथ हिलाने से झाग उत्पन्न होता है तथा तैल एवं रालीय-द्रव्यों (Resinous substances) के साथ मिलाने से इमल्सन बन जाता है। सेपोनिन के अतिरिक्त इसमें ग्लाइकोसाइड के भी कर्म पाये जाते हैं। अधस्त्वग् मार्गद्वारा प्रयुक्त करने से, उस स्थान में क्षोभक (Irritant) प्रभाव करता है। सनेगा के चूर्ण को सूँघने से छींक आने लगती है और अधिक क्षोभ होने से खाँसी भी आने लगती है। मुखद्वारा सेवन करने से यह कफनिस्सारक (Expectorant) प्रभाव करता है। सेवनोपरान्त प्रधानतः शरीर से इसका निस्सरण (Excretion) श्वासनलिकाओं की श्लैष्मिककला (Bronchial mucous-membrane) द्वारा होता है, अतएव यह उनके स्राव (Secretion) में भी वृद्धि करता है।

औषधि के रूप में सनेगा का मुख्यतया प्रयोग कफनिस्सारक (Expectorant) के रूप में तथा औषधीय वसा (Fats) एवं तैल (Oils) के इमल्सन बनाने के लिए किया

जाता है। कफनिस्सारक होने के कारण इसका प्रयोग उग्र एवं चिरकालीन श्वासनलिकाशोथ (Acute and Chronic (Bronchitis) तथा न्यूमोनिया के उपशमावस्था में बहुत उपयोगी होता है। श्वासनलिकाविस्फार (Bronchiectasis) में भी यह लाभप्रद सिद्ध होता है। उक्त अवस्थाओं में सनेगा का व्यवहार अमोनियम् बाईकार्बोनेट के साथ किया जाता है।

सनेगा से अत्यल्पमात्रा में भी उत्तम इमल्सन बनता है। अतएव कॅस्टरऑयल (Castor-oil) अर्थात् एरण्डतैल के इमल्सन बनाने के लिए इसका व्यवहार बहुत किया जाता है। एतदर्थ १ औंस तैल के लिए ३ बूंद टिंक्चर सॅनेगा पर्याप्त होता है।

योग (B. P. C. Preparations)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् सॅनेगी लिक्विडम् Extractum Senegae Liquidum (Extract. Seneg. Liq.)—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव सनेगा Liquid Extract of Senega—अं०; सनेगा का प्रवाही घनसत्व।

मात्रा—५ से १५ मिनम् (बूँद) या ०·३ से १ मि० लि०।

२—टिंक्चुरा सॅनेगी Tinctura Senegae (Tinct. Seneg.) ले०; टिंक्चर ऑफ सनेगा—(Tincture of Senega)—अं०; टिंचर सनेगा। मात्रा—३० से ६० मिनम् (बूँद) या २ से ४ मि० लि०।

३—इनफ्युजम् सॅनेगी कन्सन्ट्रेटम् Infusum Sengae Concentratum—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव सनेगा Concentrated Infusion of Senega—अं०; सनेगा का सन्केन्द्रित फाण्ट या हिम। मात्रा—३० से ६० मिनम् या २ से ४ मि० लि०।

चाइनेन्सिस Chinensis (Chinen.) I. P.

(देशी सनेगा)

Family : Polygalaceae

नाम—चाइनेन्सिस रूट Chinensis Root इन्डियन सॅनेगा (Indian Senega)—अं०; मेराद् Meradu—हिं०; नेगाली Negali—म०।

प्राप्ति-साधन—चाइनेन्सिस, पॉलिगॉला चाइनेन्सिस Polygala Chinensis Linn. नामक क्षुद्र वनस्पति की सुखाई हुई जड़ (Dried root) होती है, जिसका संग्रह शरद ऋतु (Autumn) में ३–४ साल पुराने पौधों से किया जाता है।

उत्पत्ति स्थान—समस्त भारतवर्ष (५,००० फुट की ऊँचाई तक) यह प्रायः समस्त भारतवर्ष में चौमासे में खुले हुए मैदानों में उगी हुई मिलती है।

वक्तव्य—उक्त वनस्पति पूर्वोक्त अमरीकी सनेगा (Polygala Senega) की उत्तम प्रतिनिधि द्रव्य है। पहले ब्रिटिश फार्माकोपिआ में भी उसीका उल्लेख था। अब इन्डियन फॉर्माकोपिआ में अमरीकी सनेगा के स्थान में उपरोक्त देशी सनेगा का ग्रहण किया गया है।

वर्णन—इन्डियन सॅनेगा या चाइनेन्सिस की जड़ टेढ़ी-मेढ़ी तथा किंचित चपटी (Flattened and tortuous), जो बाह्यतः भूरे रंग की होती है। बाजार में जो औषधि उपलब्ध होती है, उसमें

प्रायः मूल-जड़ (Top roots) ही होती है। जड़ों की शाखायें (Rootlets) प्रायः टूटी हुई होती हैं और प्रधान पर उसके चिह्न (Scars) अवश्य पाये जाते हैं। मूल-त्वक् या जड़ का छिलका (Root-bark) बहुत पतला होता है और आसानी से छुड़ाया जा सकता (Seperable) है। इस पर अनुलम्ब दिशा में हल्की झुर्रियाँ (Fine longitudinal wrinkles) पड़ी होती हैं। तोड़ने पर यह जड़ें खट से टूट जाती (Fracture Short) हैं, और टूटे हुए तल को देखने से जड़ के अन्दर का भाग पीले रंग का (With yellow wood) मालूम होता है। स्वाद साधारण कड़वी (Slightly acrid) होती हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

विदेशी सनेगा की भांति, जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है।

योग (I. P., & I. P. C. Preparations)।

१—एक्स्ट्रैक्टम् चाइनेन्साइ लिक्विडम् Extractum Chinensi Liquidum (Ext. Chinen. Liq.) I. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव चाइनेन्सिस Liquid Extract of Chinensis—अं०। इसी से टिंक्चर ऑव चाइनेन्सिस बनाया जाता है। मात्रा—०.३ से १ मि० लि० (या ५ से १५ मिनम् या बूंद)।

२—टिंक्चुरा चाइनेन्सिस Tinctura Chinensis (Tinct. Chinensis), I. P., ले;० टिंक्चर ऑव चाइनेन्सिस Tincture of Chinensis—अं०। मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद) या ½ से १ ड्राम।

३—इन्फ्युजम् चाइनेन्सिस कन्सन्ट्रेटस् Infusum Chinensis Concentratum (Inf. Chinen. Conc.), I. P. C.—ले०, कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव चाइनेन्सिस Concentrated Infusion of Chinensis—अं०। इसी से इन्फ्युजम चाइनेन्सिस बनाया जाता है। मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० बूंद या मिनम् ½ से १ ड्राम)।

४—इन्फ्युजम् चाइनेन्सिस Infusum Chinensis (Inf. Chinen.), I. P. C—ले०; इन्फ्युजन ऑव चाइनेन्सिस Infusion of Chinensis—अं०। यह कन्सट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव चाइनेन्सिस में परिस्रुत जल (Distilled water) मिलाकर बनाया जाता है। कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव चाइनेन्सिस २½ औंस; परिस्रुत जल २० औंस)।

५—इन्फ्युजन् चाइनेन्सिस रिसेन्स Infusion Chinensis Recens (Inf. Chinen. Sec.)—I. P. C.—ले०; फ्रेश इन्फ्युजन ऑव चाइनेन्सिस Fresh Infusion of Chinensis—अं०; देशी सनेगा का अभिनवफाण्ट—हि०। मात्रा—½ से १ औंस या १¼ तो० से ८½ तो०।

क्विल्लाया Quillaia (Quill.), I. P., B. P.

Family : Rosaceæ (तरुण्यादि कुल।)

नाम—क्विल्लाई कॉरटेक्स Quillaiæ Cortex—ले०; क्विल्लाया बार्क Quillaia Bark, पनामा बार्क Panama Bark, सोपबार्क Soap Bark—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह क्विल्लाजा सेपोनेरिया (Quillaja saponaria Molina) अथवा क्विल्लाजा की अन्य उपजातियों के छाल (Bark) का अन्तर्भाग (Inner part) होता है।

वक्तव्य—क्विल्लाया या क्विल्लाजा शब्द चिली-भाषा के 'Quillean' शब्द से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है 'धोना'। चिली-प्रदेश के निवासी इसका प्रयोग रीठे की भाँति वस्त्रों को स्वच्छ करने में करते थे। अतएव इसका नामकरण इस प्रकार हुआ।

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिणी अमरीका के चिली (Chili), पेरू (Peru) तथा बोलिविया (Bolivia) आदि प्रान्त। वक्तव्य—भारतवर्ष में यह वनस्पति स्वयंजात रूप से नहीं पाई जाती। उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त में बागों में इसके वृक्ष लगाये गए हैं तथा उक्त क्षेत्र में इसकी वृद्धि का प्रयास भी किया जा रहा है।

वर्णन—क्विल्लाया के बड़े-बड़े वृक्ष होते हैं। छाल काफी मोटी होती है। इसकी छाल के बड़े तथा चपटे टुकड़े होते हैं। बाहरी भाग भूरापन लिए सफेद या लाली लिए भूरे रंग का होता है। अन्तर्भाग चिकना सफेद या पीताभ-श्वेत वर्ण का (Yellowish-White) होता है। छाल का अन्तर्भाग ही औषध्यर्थ प्रयुक्त होता है। स्वाद में यह कषाय (Astringent) एवं उग्र (Acrid) होता है। इसके चूर्ण को सूँघने से छींकें आने लगती हैं, तथा छाल को पानी में हिलाने से काफी झाग पैदा होती है।
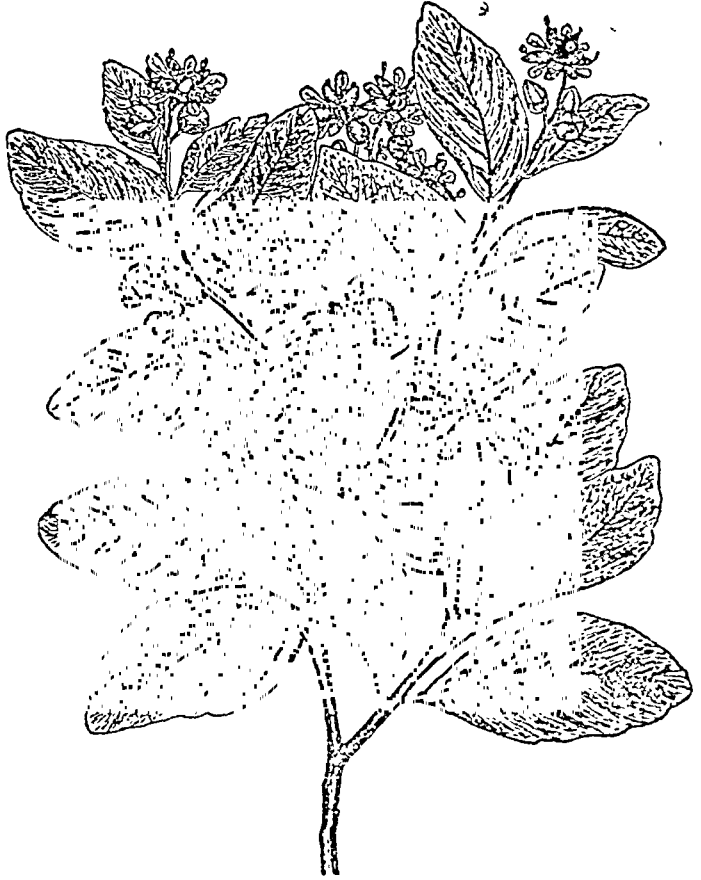
चित्र नं० ३०—क्विल्लाजा सेपोनेरिआ की शाख।

रासायनिक संघटन—इसमें दो ग्लाइकोसाइड्स (Glycosides) पाये जाते हैं, जिनको (१) क्विल्लाजा-सेपोटाक्सिन (Quillaja-sapotoxin) तथा (२) क्विल्लाजिक एसिड (Quillajic acid) कहते हैं। यह सेपोनिन नामक ग्लाइको साइड से मिलते-जुलते हैं।

क्विल्लाई पल्विस Quillaiae Pulvis (Qnll. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड क्विल्लाया Powdered Quillaia—अं०। क्विल्लाया चूर्ण।

यह 'लाइकर पिसिस कार्बोनिस' में पड़ता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—क्विल्लाया के चूर्ण की सुंघनी नाक में क्षोभक प्रभाव करती है, जिससे छींकें आने लगती हैं, और नाक से पानी बहने लगता है। कभी-कभी यह क्षोभक प्रभाव इतना अधिक होता है, कि खाँसी भी आने लगती है। क्विल्लाया में सेपोनिन काफी मात्रा में पाया जाता है, जिससे रेजिन्स एवं तैलों (आयल्स) का इमलशन बनाने के लिए इसका उपयोग बहुत किया जाता है। यों अभ्यन्तर प्रयोग से यह कफनिस्सारक (Expectorant) होता है। अतएव कभी-कभी चिरकालीन श्वासनलिकाशोथ (Chronic Bronchitis) एवं वायुनलिकाविस्फार (Emphysema) में जब बलगम मुश्किल से निकलता है, टिंक्चर क्विल्लाया का प्रयोग (३० से ६० बूंद की मात्रा में) उपयोगी होता है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रक्टम् क्विल्लाई लिक्विडम् Extractum Quillaiae Liquidum (Ext. Quill. Liq.), B. P.—लॅ०; लिक्विड एक्स्टॅक्ट ऑव क्विल्लाया Liquiq Extract of Quillaia—अं०; क्विल्लाया का प्रवाही घनसत्व। यह इमल्सिओ क्लोरोफॉर्माई (Emulsio Chloroformi) एवं इमल्सिओ मेन्थीपिपरेटी (Emulsio Menthae Piperitae) में पड़ता है।

२—टिंक्चुरा क्विल्लाई Tinctura Quillaiae (Tinct. Quill.), I. P.—लॅ०; टिंक्चर ऑव क्विल्लाया Tincture of Quillaia—अं०। क्विल्लाया ५%। अल्कोहल् (४५%) में। मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० बूंद या मिनम्: ½ से १ ड्राम)।

(व) वैसाका या वैसक (Vasaka), I. P. (अड़ूसा)
Family Acanthaceae (वासक-कुल)

प्राप्ति-साधन—वैसाका या वैसक, एढाटोडा वैसिका Adhatoda vasica Nees. नामक क्षुप की ताजी या सुखाई हुई पत्तियाँ होती हैं।

नाम—वासा, वासक, वृष, अटरूषक, सिंहमुखी (Lion-mouthed), सिंहपर्णी (Lion-leaved)—सं०; अड़ूसा, बाँसा, वसौंटा—हिं०; बाँसा, बहेंकड़, बौंकड़—पं०; बैसिंग—कु०; अडुलसा—म०, अरडुसो (सो)—गु०; बाकस—बं०; हशीशतुस्सुआल—अ०; बाँस; खाजा—फा०।

उत्पत्ति-स्थान—अड़ूसा भारतवर्ष में ४००० फुट की ऊँचाई तक सर्वत्र पाया जाता है। प्रायः ऊसरभूमि, पुराने बाग-बगीचे एवं खंडहरों में इसके स्वयंजात पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं।

रासायनिक संघटन—वासा की पत्तियों में वासिसीन Vasicine ($C_{11}H_{12}N_2O$) नामक एक तिक्त क्रिस्टलाइन अल्कलायड् पाया जाता है। इसके अतिरिक्त एक उड़नशील तेल, फैट (Fat) अर्थात् वसा, शर्करांश, म्युसिलेज तथा एक पीतरंग (Yellow dye) आदि तत्व भी न्यूनाधिक मात्रा में पाये जाते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

भारतवर्ष में बहुत दिनों से वासा का प्रयोग चिकित्सा में कफनिस्सारक (Stimulant expectorant) तथा श्वासनलिकोद्वेष्ठहर (Bronchial antispasmodic) के

रूप होता चला आ रहा है। अतएव यह उक्त गुण-कर्म के कारण पुरानी खाँसी (Chronic Bronchitis), दमा या श्वास (Bronchial asthma) एवं तपेदिक की सूखी खाँसी (Hacking cough of pthisis) में बहुत उपयोगी पाया जाता है। एतदर्थ इसका प्रयोग स्वरस (Juice), प्रवाहीघनत्व (Liquid Extract) ,शर्बत या सिरप (Syrup), टिंक्चर आदि के रूप में किया जाता है। दमा के दौरे को रोकने के लिए इसकी सुखाई पत्तियों को सिगरेट के रूप में भी व्यवहार किया जाता है। आयुर्वेद में अनेक रूप से इसका प्रचुर व्यवहार होता है। वासावलेह इसका प्रसिद्ध आयुर्वेदिक योग है।

योग (Preparations)

१—एक्स्ट्रक्टम् वसाकी लिक्विडम् Extractum Vasakāe Liquidum (Ext. Vasak. Liq.) I. P., I. P.L. ले०; लिक्विड एक्स्टॅक्ट ऑव वासक Liquid Extract of Vasak—अं०। अड़ूसा या वासा का प्रवाही घनसत्व—हिं०। मात्रा—१ से २ मि० लि० (१५ से ३० बूंद या मिनम्) ¼ से ½ ड्राम।

२—सिरपस वसाकी Syrupus Vasakae (Syr. Vasak.) I. P., I. P. L—ले०; सिरप ऑव वासक Syrup of Vasak—अं०; शर्बत अड़ूसा—हिं०। मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद) या ½ से १ ड्राम।

(आयुर्वेदीय योग)

३—वासावलेह।

४—वासारिष्ट।

५—वासापानक।

६—वासाचन्दनादितैल।

स—श्वासनलिकोद्वेष्ठहर औषधियाँ।

(Bronchial Antispasmodics)

लोबेलिआ Lobelia (Lobel.) I. P. L., I. P.

Family : Companulaceae (वनतम्बाकू-कुल)

पर्याय—लोबेलिआ हर्बा Lobelia Herba; वाइल्ड टबेको Wild Tobacco.

प्राप्ति-साधन—लोबेलिआ निकोटिएनिफोलिआ Lobelia nicotianifolia Heyne. नामक पौधे की जड़ को छोड़कर शेष भाग को अक्टूबर-नवम्बर के महीने में संग्रह कर लिया जाता है। इसे छाया में सुखाकर रख लिया जाता है। यही उपरोक्त लोबेलिआ औषधि है। इसमें कम से कम ०·८ प्रतिशत लोबेलीन (Lobeline) होना चाहिए।

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिण भारत में पश्चिमीघाट की पर्वतश्रेणी (Western Ghats) में बम्बई से ट्रावन्कोर तक २०००–७००० फुट की ऊँचाई तक लोबेलिआ या वनतम्बाकू के स्वयं-जात पौधे बहुतायत से पाये जाते हैं। कोंकण, दक्षिण का पठार, नीलगिरी एवं मलाबार तथा मैसूर में यह कसरत से मिलता है।

वर्णन—लोबेलिया के कोमलक्षुप स्वभाव के द्विवर्षायु अथवा बहुवर्षायु शाकजातीय पौधे (Biennial or perennial herb) होते हैं, जो ३–६ फुट तक ऊँचे होते हैं। काण्ड (Stem)

खोखला या पोला (Hollow) होते हैं जो ऊपर चलकर करीब-करीब शाखाओं में विभक्त हो जाता है। पत्तियाँ एकान्तर (Alternate), छोटे डंठलों वाली (Sub-sessile) तथा हल्के हरे रंग की होती हैं। यह पत्तियाँ साधारणतः २ से १० इंच लम्बी तथा ½ से २ इंच तक चौड़ी होती हैं। नीचे की कोई-कोई पत्तियाँ १½ फुट तक लम्बी होती हैं। आकार में मालाकार (Lanceolate) अथवा अभिलट्वाकार होती हैं। पत्तियों के अग्र तीक्ष्ण (Acute) तथा किनारे सूक्ष्म-दन्तुर (Finely serrulate) होते हैं। इसमें श्वेतरंग के पुष्प (फूल) लगते हैं। फल द्विकोष्ठीय तथा फूला हुआ (Bilocular inflated capsule) होता है, जो व्यास में ५–९ मिलिमिटर, आकार में लगभग लम्बगोल (Subglobose) होते हैं और इन पर अनुलम्ब दिशा में १० धारायें (Longitudinal ribs) होती हैं। पुष्पवृन्तों (Peduncles) पर गाढ़े विन्दुओं के रूप में एक पीला चिपचिपा द्रव जमा होता है। स्वाद में लोवेलिआ अत्यन्त तीक्ष्ण एवं क्षोभक (Acrid and irritating) होती हैं।

रासायनिक संघटन––लोवेलिआ में (१) लोवेलीन नामक क्षारोद या अल्कलायड (Alkaloid) पाया जाता है। क्रिया एवं प्रयोग की दृष्टि से यह विशेष महत्व का है। इसके अतिरिक्त इसमें निम्न ३ अन्य अल्कलायड्स भी पाये गए हैं। यथा––(२) लोबिनीन (Lobinine : $C_{१८}H_{२५}O_{२}N$) (३) आइसो-लोबिनीन (Isolobinine : $C_{२८}H_{३८}O_{२}N$) तथा (४) लोबिनालीन (Lobinalinl $C_{१८}H_{२५}O_{२}N$.) ।

योग :—(I. P., I. P. L. & I. P. C. Preparations) :––

१––टिंक्चुरा लोवेलिई ईथेरिया Tinctura Lobeliae Aetherea, I. P., I. P. L.—ले०; ईथेरिअल टिंक्चर ऑव लोवेलिआ Ethereal Tincture of Lobelia—अं०। इसमें ०.०६ प्रतिशत (W/V) लोवेलीन होता है। मात्रा––५ से १५ मिनम् (बूंद) या ०.३ से १ मि० लि०।

२––टिंक्चुरा लोवेलिई Tinctura Lobeliae (Tinct. Lobel.), I. P. C.—ले०; टिंक्चर ऑव लोवेलिया Tincture of Lobelia—ले; अं०। मात्रा––१५ से ३० मिनम् (बूंद) या १ से २ मि० लि०।

३—लोवेलिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Lobelinae Hydrochloridum (Lobeline. Hydrochlor.), I. P.—ले०; लोवेलीन हाइड्रोक्लोराइड्स।

लोवेलिनी हाइड्रोक्लोराइडस (I. P.)—ले०।

Lobelinae Hydrochloridum, (Lobelin. Hydrochlor.)

नाम—लोवेलीन हाइड्रोक्लोराइड Lobeline Hydrochloride––अं०।

वर्णन––यह लोवेलिआ में पाये जाने वाले अल्कलायड लोवेलीन का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है, जो सफेद मणिभीय (क्रिस्टेलाइन Crystalline) या दानेदार चूर्ण (Granular powder) के रूप में होता है। यह चूर्ण प्रायः गन्धहीन होता है, किन्तु स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—यह जल तथा अल्कोहल (९५%) में घुलनशील होता है, और क्लोरोफॉर्म में और जल्दी से घुलता (सुविलेय) है।

वक्तव्य—लोबेलीन हाइड्रोक्लोराइड का संग्रह सतर्कता से अच्छी तरह डाटबन्द पात्र में करना चाहिए तथा इसको रोशनी से बचाना चाहिए।

योग (Preparation)।

१—इन्जेक्शिओ लोबेलिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Injectio Lobelinae Hydrochloridi, I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव लोबेलीन हाइड्रोक्लोराइड Injection of Lobeline Hydrochloride—अं०। मात्रा—पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा $\frac{1}{20}$ से $\frac{1}{10}$ ग्रेन या ३ से ९ मिलीग्राम।

गुण-कर्म।

लोबीलिया का गुणकर्म विशेषतः इसके क्षारोद लोबेलीन (Lobeline) के कारण होता है, जो निकोटीनसम प्रभाव करता है। यह परिस्वतंत्रनाडीकन्दिकाओं को प्रथमतः उत्तेजित तथा अन्ततो अवसादित करता है।

असाधारण मात्रा में प्रयुक्त होने से यह आमाशयान्त्र-प्रदाह करता है, जिसके फलस्वरूप वमन, रेचन तथा तीव्र अवसन्नता (Prostration) आदि कुपरिणाम लक्षित होते हैं। यहाँ पर वमन प्रायः वमनकेन्द्र (Vomiting centre) की उत्तेजना के कारण होता है।

हृदय तथा संवहन—प्रारम्भ में क्षणिक वृद्धि होती है। किन्तु बाद में **रक्तभार** गिर जाता है। हृद्दौर्बल्य की अवस्था में इस रक्तभार की कमी के कुप्रभाव के कारण हृत्स्तम्भ तक हो सकता है। ये सब प्रभाव औषधि के हृत्पेशी एवं प्राणदानाड़ीकन्दिका पर प्रत्यक्ष प्रभाव होने के कारण होते हैं।

श्वसन—प्राणदानाड्यग्रों एवं कन्दिकाओं पर अवसादक प्रभाव करने के कारण यह श्वसनिका पेशियों (Bronchial muscles) को शिथिल करता है। अतएव यह श्वास-नलिकोद्वेष्ठहर (Bronchial antispasmodic) है। यह श्वसनकेन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करता है।

विषाक्त प्रभाव—इससे विषाक्त प्रभाव प्रायः बहुत कम होते हैं। यदि होते हैं, तो वमन, अतिसार, शीतप्रस्वेद, हृत् एवं श्वसनमन्दता आदि लक्षण प्रगट होते हैं। कभी-कभी आक्षेप होकर मृत्यु भी हो सकती है।

चिकित्सा—आमाशय-नलिका (Stomach pump) द्वारा आमाशय का प्रक्षालन करें या वामक औषधियों द्वारा वमन करायें। फिर २० ग्रेन टैनिन २ औंस जल में मिलाकर पिलायें। यदि आवश्यकता हो तो थोड़ी देर के बाद पुनः एक मात्रा दें। इसके पश्चात् उत्तेजक औषधियाँ (Stimulants) यथा ब्रांडी तथा अमोनियाँ आदि प्रयुक्त करें। स्ट्रिक्नीन का इन्जेक्शन दें। अल्पमात्रा में मार्फीन या अफीम का भी प्रयोग कर सकते हैं। बाह्य उष्णता पहुँचायें। संन्यास (Coma) की दशा में पिण्डिलियों पर राइ का प्लास्टर लगावें तथा रोगी को सीधा लिटा दें।

आमयिक प्रयोग।

यह तीव्र श्वासनलिकोद्वेष्ठहर होता है, अतएव इसका प्रयोग श्वास में किया जाता है। ब्रोमाइड्स तथा आयोडाइड्स के साथ प्रयुक्त करने से और भी जल्दी लाभ होता है। उद्वेष्ठयुक्त

श्वासनलिका-शोथ तथा कुक्कुरखाँसी में भी इसके प्रयोग से उद्वेष्ट एवं श्वासकृच्छ्र का निवारण होता है।

श्वसनकेन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण लोवेलीन का प्रयोग न्यूमोनिया, मार्फीन एवं कार्बन मॉनाक्साइड विषाक्तता तथा नवजात शिशु के श्वासावरोध में किया जाता है। इसके अतिरिक्त आकस्मिक श्वसनाघात (Sudden respiratory failure) की अवस्थाओं में हृद्य औषधियों के साथ सूचिकाभरण द्वारा इसको प्रयुक्त करते हैं। इसके लिए अधस्त्वग् मार्ग-द्वारा इसको $\frac{1}{20}$ ग्रेन की मात्रा में प्रयुक्त करते हैं। हृद्दौर्बल्य की अवस्था में इसका प्रयोग सावधानी से करना चाहिए।

उपयोगी नुस्खे—

(१) पोटासियम् ब्रोमाइड	१२० ग्रेन
पोटासियम् आयोडाइड	१२० ग्रेन
टिंक्चुर लोवेलिई ईथेरिया	१८० बूंद
टिंक्टर बेलाडोना	६० बूंद
एक्वा क्लोरोफॉर्म	६ औंस

इसमें से $\frac{1}{2}$ से १ औंस तक की मात्रा दिन में ३ या ४ वार देनी चाहिए।

(नॉट ऑफिशल)

हर्बा ग्रिंडीलिया (Herba Grindelia)

Family : Compositae (मुण्डी-कुल)

नाम—गमप्लांट Gum Plant, टारवीड (Tar Weed ।)

यह ग्रिंडेलिया कम्पोरम् (Grindelia Camporum) के शुष्क किये हुए पत्र तथा पुष्पिताग्र (Flowering tops) होते हैं, जो औषधि में प्रयुक्त होते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी अमेरिका।

रासायनिक संघटन—(१) रेजिन २० प्रतिशत; (२) एक मणिभीय (क्रिस्टेलाइन Crystalline) तत्त्व जिसे हेनट्रिआकान्टेन (Hentriacontane) कहते हैं; (३) अल्पमात्रा में रञ्जकतत्व (Colouring matter) तथा एक उड़नशील तैल (Volatile oil)।

गुणकर्म तथा प्रयोग।

यह साधारण दीपन (Stomachic) होता है, किन्तु लगातार अधिक कालपर्यन्त सेवन से आमाशय-विकार होने की सम्भावना रहती है। शोषणोपरान्त यह श्वास तथा हृदय की गति को किंचित् मन्द करता है। औषधीय उपयोग की दृष्टि से इसका प्रधान कर्म श्वासनलिका की पेशियों को शिथिल करना तथा श्वास-नलिकाओं की श्लैष्मिक-कला पर उत्तेजक प्रभाव करता है। इस प्रकार यह कफनिस्सारक (Expectorant) तथा श्वासनलिकोद्वेष्टहर (Bronchial antispasmodic) होता है। मात्राधिक्य से यह औषधि श्वसन एवं हृत्केन्द्रों (Respiratory and Cardiac centres) पर तीव्र अवसादक (Depressant) प्रभाव करती है। इससे कनीनिका-विस्फार (Dilatation of the pupil) होता है और निद्रा आ जाती है।

ग्रिंडेलिया का व्यवहार चिकित्सा में श्वासनलिकोद्वेष्ठयुक्त व्याधियों में बहुत उपयोगी होता है। अतः तमकश्वास या दमा (Asthma) एवं कुक्कुर-खाँसी (Whooping Cough) तथा उद्वेष्ठयुक्त श्वासनलिकाशोथ (Spasmodic bronchitis) आदि में यह उपयोगी है। दमा के दौरे (Paroxsm) में आधे-आधे या एक-एक घंटे के अन्तर से ग्रिंडेलिया के लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट (प्रवाही घनसत्व) का प्रयोग करने से दमे का दौरा रुक जाता है। शोरे के साथ इसकी सूखी पत्तियों का धूम्रपान करने से भी दमे का दौरा रुक जाता है।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रैक्टम् ग्रिंडेलिई लिक्विडम् Extractum Grindeliae Liquidum B. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव ग्रिंडेलिया Liquid Extract of Grindelia—अं०। ग्रिंडेलिया का प्रवाही घनसत्व। मात्रा १०–२० बूँद या ०·६ से १·२ मिलिलिटर।

द—श्वासनलिकाओं पर संशामक प्रभाव करने वाली औषधियाँ।

(Bronchial Sedatives)

प्रूनस् सिरोटिना (नाट्-ऑफिशल), B. P. C. Prunus Serotina (Prun. Serot.)

पर्याय—प्रूनिआइ वर्जिनिएनी कॉर्टेक्स **Pruni Virginianae Cortex**; वाइल्ड चेरी **Wild Cherry.**

प्राप्ति-साधन—यह उक्त पौधे (Prunus serotina) की छाल होती है, जिसको शरदऋतु में संग्रह कर सुखा लेते हैं।

वर्णन—छाल (Bark) : इसके टेढ़े-मेढ़े (Curved) या नालीदार (Channelled) बड़े टुकड़े होते हैं, जो लगभग ३ मिलिमिटर मोटे होते हैं। कभी-कभी छाल छोटे-छोटे टुकड़े के रूप में भी प्राप्त होती है। ताजी छाल बाहर से चिकनी, लाली लिए भूरे रंग को होती है, जिस पर अनुप्रस्थ दिशा में या बेड़े-बेड़े (Transversely) लेंटिसेल्स (Lenticels) के चिह्न होते हैं। पुरानी छाल खुरदरी एवं फीके भूरे रंग की होती है। स्वाद में यह कसैली, सुगन्धित एवं तिक्त होती है। पानी में भिगोने पर इसमें कड़वेबादाम (Bitter almonds) की सी गंध आती है।

रासायनिक संघटन— इसमें (१) प्रूनेसिन (Prunasin) नामक एक ग्लाइकोसाइड तथा (२) प्रूनेज (Prunase) नामक एक किण्व (Enzyme) पाया जाता है, जिसके जल की उपस्थिति में वियोजित होने से हायड्रोसायनिक एसिड, बेंजाल्डिहाइड एवं डेक्स्ट्रोज की उत्पत्ति होती है। इसके अतिरिक्त वाइल्ड चेरी बार्क में (३) एक तिक्तसत्व (Bitter principle), टैनिन तथा स्टार्च एवं रेजिन आदि तत्त्व पाये जाते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वाइल्ड चेरी एक कासहर औषधि है। श्वासप्रणालिकाओं की श्लैष्मिककला पर इसका संशामक प्रभाव होता है। अतएव यह एक उत्तम संशामक कासहर औषधि है। एतदर्थ डाक्टरी में इसका व्यवहार बहुत किया जाता है। इसके लिए शर्बतचेरी (Syrup Pruni Serotinae) का स्वतन्त्र रूप से अथवा कासहर मिक्सचर्स (Cough Mixtures) में अन्य औषधियों के साथ सहायकौषधि के रूप में व्यवहार होता है। शर्बत चेरी को मिलाने से

मिक्सचर सुस्वादु एवं रुचिकारक भी हो जाता है। वाइल्ड चेरी की उक्त कासहर क्रिया सम्भवतः इसमें पाये जाने वाले हायड्रोसायनिक एसिड के कारण होती है।

योग।

१—सिरपस् प्रूनियाइ सिरोटिनी Syrupus Pruni Serotinae (Syrup. Prun. Serot) B. P. C.—ले०; सिरप ऑव वाइल्ड चेरी Syrup of Wild Cherry—अं०; शर्बत चेरी। पर्याय—सिरपस प्रूनियाई वर्जिनिआनी Syrupus Pruni Virginianae। मात्रा—३० से १२० मिनम् या २ से ८ मि० लि०।

य—श्वासप्रणालियों पर जीवाणुनाशक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ।

(Drugs which disinfect the Respiratory tract)

क्रियाजोटम् (B. P., I. P.) Creosotum (Creosot.)

नाम—क्रियाजोट Creasote—अं०।

प्राप्ति-साधन—क्रियाजोट लकड़ी के अलकतरे (Wood tar) के परिस्रवण (Distillation) से प्राप्त होता है। इसमें ग्वायकोल (Guaicol), क्रियाजोल (Creosol) तथा अन्य फिनोल पाये जाते हैं।

स्वरूप—रंगहीन अथवा किंचित् पीताभ वर्ण का द्रव होता है। इसमें विशिष्ट प्रकार की उग्र गंध (जली हुई वस्तु की भाँति Smoky) होती है तथा स्वाद में जिह्वा पर रखने से जलन का अनुभव होता है। विलेयता—यह शीतल जल में तो कुछ कम किन्तु उष्णजल में अपेक्षाकृत अधिक विलेय होता है। इसके अतिरिक्त अलकोहल् (९०%), ईथर, क्लोरोफॉर्म स्थिर एवं उड़नशील तैल, एसेटिक एसिड तथा बेंजोल में भी विलेय होता है।

मात्रा—२ से १० बूंद या ०'१२ से ०'६ मि० लि०।

(नॉट्-ऑफिशियल)

ग्वायकोल (Guiacol)

रासायनिक संकेत : $C_6H_4(OCH_3)OH$.

स्वरूप—यह २ प्रकार का होता है, एक औषधीय (Medicinal) दूसरा कृत्रिम (Synthetic) (१) औषधीय ग्वायकोल—यह एक रंगहीन तैलीय द्रव होता है, जो ग्वायकमरेजिन् से आंशिक परिस्रवण (Fractional distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें प्रायः क्रियाजोट या क्रियासोल भी मिश्रित होता है। गंध उग्र एवं जली हुई वस्तु की भांति, तथा स्वाद में दाहक होता है। (२) कृत्रिमग्वायकोल (संश्लिष्ट)—यह पेरोकेटेकीन से संश्लिष्ट किया जाता है, जो रंगहीन मणिभ के रूप में पाये जाते तथा २८° सेंटीग्रेड तापक्रम पर द्रवीभूत होते हैं। इसमें एक प्रकार की सुगन्धि होती है। यह विदग्ध होता तथा इसमें कोई अपद्रव्यमिश्रण नहीं होता।

विलेयता—यह जल में अंशतः (८० भाग जल में १ भाग) किन्तु अलकोहल (९०%), ईथर, ग्लिसरिन तथा जैतून एवं बादाम आदि स्थिर तैलों में सुविलेय होता है।

मात्रा—५ से १० बूंद या ०'३ से ०'६ मि० लि०।

क्रियाजोट एवं ग्वायकोल के गुण-कर्म।

बाह्य—कर्बोलिक एसिड की भांति क्रियाजोट भी जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic), जीवाणुनाशक (Disinfectant) एवं दुर्गन्धनाशक (Deodorant) होता है। त्वचा पर लगाने से किंचित् उष्णता का अनुभव होता तथा बाद में स्वापजनक प्रभाव लक्षित होता है।

आभ्यन्तर—आमाशयान्त्रप्रणाली—मुख में क्रियाजोट एवं ग्वायकोल के संसर्ग से उष्णता का अनुभव होता तथा लालाप्रजनन (Salivation) होता है। किन्तु मुख की श्लैष्मिक कला पर विनाशक प्रभाव भी करता है। आमाशय की श्लैष्मिक कला में संज्ञावह-नाड्यों पर अवसादक प्रभाव करता तथा निम्न कोटि के वानस्पतिक जीवाणुओं पर विनाशक प्रभाव करने के कारण पूतिभवन (Putrefaction) एवं किण्वन (Fermentation) क्रियाओं का निरोध करता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने से उत्क्लेश, वमन, शूल तथा अतिसारादि उपद्रव पैदा होते हैं। नाड़ी तीव्र तथा श्वसन मन्द एवं कष्ट युक्त हो जाता है।

स्राव (Secretion)—क्षिप्रतापूर्वक ये शोषित होकर रक्त में पहुँच जाते तथा श्वास-नलिकाओं एवं वृक्कों द्वारा उत्सर्गित होते हैं। इन अंगों पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण इनके स्राव में भी ये वृद्धि करते हैं। साथ ही यदि स्राव दुर्गन्धित हों तो इनकी दुर्गन्धि को भी दूर करते हैं।

सूक्ष्म-जीवाणु (Micro-organism)—क्रियाजोट तथा ग्वायकोल सूक्ष्म जीवाणुओं के संसर्ग में आने पर उन पर घातक प्रभाव करते हैं, यहां तक कि आघ्राणन द्वारा यक्ष्मा के कीटाणुओं के संसर्ग में आने पर उन पर भी यह घातक प्रभाव करते हैं।

आमयिक प्रयोग।

वाह्य प्रयोग—क्रियाजोट वाष्प या क्रियाजोटशीकर (Creosote spray) के रूप में आघ्राणन द्वारा इसका प्रयोग चिरकालीन श्वासप्रणालिकाशोथ (Chronic bronchitis), यक्ष्मा तथा फुफ्फुसकोथ (Gangrene) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। आघ्राणन के लिए क्रियाजोट का प्रयोग अकेले अथवा फिनोल के साथ मिलाकर आघ्राणनयंत्र (Repirator) द्वारा किया जाता है। अथवा वेपर क्रियाजोटाइकम्पोजिटस् (Vapour Creosoti Co.) के रूप में भी इसका प्रयोग कर सकते हैं।

आभ्यन्तर प्रयोग—आमाशयान्त्र-प्रणाली—क्रियाजोट या ग्वायकोल में रुई का फोया भिगोकर शूलयुक्त दंतकोटर में धारण करने से दंतशूल (Toothache) का शमन होता है। अल्पमात्रा में (१ से २ बूंद) प्रयुक्त करने से ये उत्क्लेश, वमन तथा आमाशयार्ति (Gastralgia) आदि का भी निवारण करते हैं। विस्मथ एवं क्षारों के साथ प्रयुक्त करने से यह अग्निमान्द्य (Fermentative dyspepsia) तथा अतिसार आदि में भी उपयोगी होता है।

फुफ्फुस—यक्ष्मा के कीटाणुओं पर घातक प्रभाव करने के कारण क्रियाजोट तथा ग्वायकोल दोनों ही यक्ष्मा के लिए उपयोगी औषधि माने जाते हैं। इस कार्य के लिए ग्वायकोल कार्बनेट तथा थियोकोल (Thiocol) अधिक उपयुक्त होते हैं। इसके अतिरिक्त ऐसी खांसी में जिसमें दुर्गन्धयुक्त बलगम निकलता है, थियोकोल बहुत लाभप्रद होता है।

(नॉन्-ऑफिशियल योग)

१—क्रियाजोटाइ कार्बोनास Creosoti Carbonas इसको क्रियाजोटोल (Creosotal) भी कहते हैं। यह एक चिपचिपा अम्बरी रंग का प्रायः गंध एवं स्वादरहित द्रव होता है, जो जल में अविलेय होता है। इसमें ग्वायकोल एवं क्रियासोल के कार्बनेट्स होते हैं। मात्रा—५ से २० बूंद या ०.३ से ०.६ मि० लि०। शर्करायुक्त गर्म दूध में मिलाकर इसको प्रयुक्त करना चाहिए। बच्चों को आयु के अनुसार ३-५ बूंद प्रयुक्त करें। न्यूमोनिया तथा कासादि में लाभप्रद है।

२—वेपर क्रियाजोटाइ को० Vapour Creosoti Co., इन्हेलेशिओ आयोडाइ को० Inhalatio Iodi Co.। क्रियोजोट का बाष्पाघ्रायन योग—हि०। इसमें क्रियाजोट २, फिनोल २, लाइकर आयोडाई मिटिस (Liq. Iodi Mit) १ स्प्रिट ईथर १ तथा स्प्रिटस क्लोरोफार्माइ २ भाग होता है। यक्ष्मा में इसका आघ्राणन (Inhalation) बहुत उपयोगी होता है।

३—ग्वायकोलिस बेंजोआस Guaiacolis Benzoas या बेंजोसॉल (Benzosol)—यह प्रायः वर्णहीन, गंधहीन एवं स्वादरहित मणिभ के रूप में होता है, जो ग्वायकोल की अपेक्षा कम क्षोभक एवं उत्क्लेशकारी (Nauseous) होते हैं। मात्रा—४ से १२ ग्रेन या ०.२५ से ०.८ ग्राम। इसको कैचेट्स में रखकर टिकिया के रूप मे सेवन किया जाता है।

४—पोटासियाइ ग्वालकोलसल्फोनास Potasii Guaiacol Solphonas—ले०। पोटासियम् ग्वायकोल सल्फोनेट Potassium Guaiacol Sulphonate—अं०। बाजार में यह औषधि थियोकोल (Thiocol) नाम से प्रसिद्ध है। इसके स्नेहवर्ण के मणिभ होते हैं, अथवा श्वेत चूर्ण के रूप में पाई जाती है, जो जल विलेय होता है। इसमें क्रियाजोट एवं ग्वायकोल दोनों के विशिष्ट प्रभाव पाये जाते हैं, साथ ही उनके अवगुण इसमें नहीं होते। स्वाद में भी यह अरुचिकर नहीं होता। बच्चों के लिए यह औषधि विशेष उपयुक्त है। यक्ष्मा तथा आन्त्रक्षय (Intestinal T. B.) में यह औषधि बहुत लाभप्रद सिद्ध हुई है। विषमज्वर में जिनको क्विनीन सह्य नहीं होता उनके लिए यह बहुत उपयुक्त होता है। यह ७½ से १५ ग्रेन या ०.५ से १ ग्राम की मात्रा में प्रयुक्त किया जाता है।

५—ग्वायकोल कम्फोरेटा Guaiacol Camphorata—इसे ग्वायकम्फोल Guaiacamphol भी कहते हैं। यह ग्वायकोल तथा कम्फोरिक एसिड में संयोग से तैयार किया जाता है। यह श्वेतवर्ण का सुगन्धित चूर्ण होता है, जो जल में तो अविलेय किन्तु अल्कोहल (९०%) तथा क्लोरोफार्म में सुविलेय होता है। मात्रा—५ से १० ग्रेन या ०.३ से ०.६ ग्राम। यक्ष्मा के रात्रि-स्वेद के लिए यह एक उत्तम औषधि है।

६—ग्वायकोल सिन्नेमेट Guaiacol Cinnamate या स्टाइरेकोल (Styracol)—इसके प्रायः रंग रहित सूच्याकार मणिभ होते हैं, जो जल में तो अविलेय किन्तु अल्कोहल् (९५%) तथा क्लोरोफार्म में विलेय होते हैं। मात्रा—५ से १५ ग्रेन या ०.३ से १ ग्राम। आन्त्रक्षय (Intestinal phthsis) के लिए यह एक परमोपयोगी औषधि है।

७—ग्वायकोल कार्बोनास Guiacol Carbonas या ड्युटाल (Duotol)—यह स्वाद एवं गन्ध रहित श्वेतवर्ण का मणिभीय चूर्ण होता है, जो जल में अविलेय किन्तु अल्कोहल (९०%) में (७० भाग अल्कोहल में १ भाग) में विलेय होता है। मात्रा—५ से १५ ग्रेन या ०.३ से १ ग्राम। यह भी यक्ष्मा के लिए एक उत्तम औषधि है।

परिस्रुतजल (एक्वा डेसटिलेटा) B. P & I.P.

रासायनिक संकेत : H_2O.

नाम—एक्वा डेसटिलेटा Aqua Destillata (Aq. Dest.)—ले०; डिस्टिल्ड वाटर Distilled Water—अं०; परिस्रुतजल—सं०; शुद्ध पानी—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—परिस्रुतजल (डिस्टिल्ड वाटर) साधारण कल (नल) के पानी को भवका या यंत्रविशेष द्वारा विस्रवण (Distillation) करके प्राप्त किया जाता है । इस प्रकार साधारण जल में मिले हुए अपद्रव्य पृथक् हो जाते हैं और विशुद्धजल (डिस्टिल्ड वाटर) पृथक् प्राप्त हो जाता है । यह अत्यन्त स्वच्छ, रंगहीन, गंधहीन एवं स्वादरहित द्रव होता है ।

एक्वा प्रो इन्जेक्शिओन Aqua Pro Injectione (Aq. Pro. Inj.) B. P. & I. P. ले०—वाटर फॉर इन्जेक्शन Water for Injection—अं०; सूचीवेधोपयुक्त विशुद्धजल—सं०; इन्जेक्शन का पानी—हिं० ।

जो पानी सूई की दवा (सूचिकाभरण) के लिए प्रयुक्त किया जाता है, उसका विस्रवण (Distillation) विशेष सावधानी से तथा विशिष्ट उपकरणों से युक्त यंत्र द्वारा किया जाता है । इसके लिए पात्र विशोधित होते हैं । इस प्रकार के जल में विशेष सावधानी रखी जाती है ताकि बाहरी हवा या किसी भी प्रकार के जीवाणुओं (Bacteria) का संक्रमण न होने पावे । अन्त में पुनः कन्दुक (Autoclave) में इसे विशोधित कर विशोधित शीशियों (Ampoules) में सावधानी से भर दिया जाता है । पेनीसिलिन (Penicillin) की सुई बनाने के लिए और भी शोधित जल की आवश्यकता होती है । इस कार्य के लिए जो परिस्रुतजल आता है, उसकी शीशियों पर पाइरोजन रहित 'पाइरोजन फ्री Pyrogen free' लिख दिया जाता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

भैषज्य-कल्पना Pharmaceutical preparations) में जल का उपयोग प्रचुरता से अनेक प्रकार से किया जाता है । विभिन्न मिक्सचर, लोशन (Lotion) या धावनद्रव आदि जल के माध्यम से ही बनाए जाते हैं । सूचिकाभरण की औषधियाँ अर्थात् विभिन्न इन्जेक्शन्स (Injections) भी जल (वाटर फॉर इन्जेक्शन Water for Injection) में बनाए जाते हैं ।

बाह्य—अक्षतत्वचा द्वारा जल का शोषण अत्यन्त मन्दगति से होता है । अधिक समय तक सम्पर्क में रहने से बहिस्तरीय कोशाओं (Epithelial cells) द्वारा अंशतः शोषण होता है, और इस जलसंचय के कारण उक्त कोशायें किंचित् फूल जाती हैं । गर्मपानी के प्रभाव से त्वचागत रक्तवाहिनियाँ विस्फारित (Dilatation) होती हैं, जिससे विकरण (Radiation) द्वारा ताप का अपहरण होता है । पसीना भी अधिक आता है । उक्त दोनों क्रियाओं के कारण शारीरिक तापक्रम कम हो जाता है ।

इसके विपरीत शीतोदक (ठण्डा पानी) से त्वचा की रक्तवाहिनियों का संकोच (Constriction) होता तथा पसीना का निकलना भी रुक जाता है । ठण्ढे पानी में कपड़ा भिगोकर ज्वर की अवस्था में स्पंज करने (पोंछने) से ताप का अपहरण अवश्य होता है । बाह्यतः शरीर पर ठंढे पानी के प्रभाव से कास (Coughing) एवं अन्तःश्वसन पर उत्तेजक प्रभाव होता

है। शीतलजल का प्रयोग बर्फ के रूप में अनेक उग्रशोथ की अवस्थाओं में शोथविलयन के लिए किया जाता है। एतदर्थ लीटर की शीतल नलिकाओं (Leiter's Coil) का भी व्यवहार किया जाता है। इस प्रकार उक्त प्रयोग मस्तिष्कावरणशोथ (मेनिन्जाइटिस Meningitis) तथा मोच (Sprain) आदि में उपयोगी है। जैसा कि अभी वर्णन किया गया है कि शीतलजल के स्थानिक प्रयोग से उस स्थान की त्वचागतवाहिनियों का संकोच होता है, इसी प्रकार प्रत्याक्षिप्तक्रिया (Reflex) द्वारा त्वचा पर शीतलजल के सम्पर्क से आन्तरिक (तथा दूरस्थ) रक्तवाहिनियों का भी संकोच होता है। इस आधार पर त्वचा पर बर्फ के प्रयोग से अनेक आन्तरिक रक्तस्रावी रोगों—यथा नकसीर (Epistaxis), रक्तवमन (Haematemesis) आदि में खून जाना बन्द हो जाता है। बेहोशी की अवस्था में होश लाने के लिए मुँह पर ठंढा पानी छिड़कने का प्रचार तो आम जनता में भी है। अतः हिस्टीरिया तथा विषैली औषधियों के फलस्वरूप उत्पन्न बेहोशी में रोगी की चेतना को जागृत करने के लिए मुँह पर ठंढे पानी के छींटे दिए जाते हैं। प्रायः नवजात शिशु उत्पन्न होते ही रोता है जिससे उसके शरीर में स्वतंत्ररूप से श्वासोच्छ्वास की क्रिया प्रारम्भ होती है। जो बच्चे जन्म के बाद अचेतन रहते हैं, उनकी चेतना को जागरूक करने के लिए भी मुँह पर ठंढे पानी के छींटे दिए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त पाश्चात्यवैद्यक में अनेक ज्वरों (आमवात, टायफायड, न्यूमोनिया आदि) तथा अनेक अन्य व्याधियों में ठण्ढे पानी का बाह्य प्रयोग विभिन्न प्रकार के स्नानों (Cold bath) के रूप में करने का निर्देश है, यथा कोल्ड बाथ, कोल्ड एफ्युजन (Cold affusion) खिरबाथ (सरिता या नदी-स्नान)। कोल्ड-शावर-बाथ (शीतल सीकर-स्नान)। कोल्ड फुट-बाथ आदि आदि। किन्तु आयुर्वेद में कम से कम टायफायड तथा न्यूमोनिया आदि सन्निपातिक ज्वरों में इस प्रकार के स्नान का पूर्णतः निषेध है, और यह बहुत कुछ हदतक युक्ति-संगत एवं अनुभवसिद्ध भी है।।

आभ्यन्तर—ठण्ढे पानी के महत्व एवं आवश्यकता से मानव-समाज अपरिचित नहीं है। 'पानीयं जीवनम्' जैसी आयुर्वेदीय उक्तियों को मानने में कम से कम रेगिस्तानी इलाकों एवं उष्णकटिबन्धीय प्रान्तों के लोगों को हिचकिचाहट बिल्कुल नहीं होगा। शीतलजल एवं बर्फ का प्रयोग चिकित्सा में भी प्रचुरता से किया जाता है। अस्वाभाविक तृष्णा तथा वमन (यथा कालरा या हैजा में) एवं हिक्का या हिंचकी (Hiccough) के निवारण के लिए बर्फ के टुकड़े मुँह में रखकर चूसने के लिए दिए जाते हैं। इसी प्रकार रक्तवमन (Haematemesis) में भी बर्फ चूसने से लाभ होता है। बहुत से लोग प्रातः उठकर पाखाना जाने से पहिले ठण्डा पानी पीते हैं। इससे आँतों की क्रिया जागरुक होकर दस्त साफ हो जाता है। काफी मात्रा में ठण्डा जल पीने से पेशाब भी अधिक मात्रा में होता है। इस प्रकार जल स्वयं एक उत्तम मूत्रल है। और इससे मूत्रमार्ग का शोधन भी होता है, जिससे मूत्राश्मरी बनने की प्रवृत्ति का निवारण होता है। यह क्रिया यूरिकएसिड जन्य अश्मरी पर विशेषरूप से होती है। जल शरीर से अनेक विषाक्त तत्वों का विलीनीकरण (Dilution) एवं शरीर से निस्सरण में भी सहायक होता है। अतएव मूत्रविषमयता (यूरीमिया Uraemia) में काफी मात्रा में जल पीने से बहुत लाभ होता है। भोजन के बीच-बीच में जल पीने से पित्ताश्मरी (Gall-stone) की प्रवृत्ति का निवारण होता है।

इसी प्रकार उष्णोदक का व्यवहार भी चिकित्सार्थ अनेक अवस्थाओं में किया जाता है। वमन कराने के लिए गर्मजल पिलाया जाता है। एतदर्थ साधारणतया ½ से १ पाइन्ट मात्रा पर्याप्त होती है। मात्रातियोग होने से पेट फूल जाता तथा उसमें शैथिल्य आ जाता है। उदरगत वायु के विकृत होने पर आयुर्वेदीय पाचक चूर्णों या गुटिकादि का सेवन गर्मजल के साथ करने से अधिक लाभ होता है।

उग्रवृक्कशोथ (Acute nephritis) तथा हृद्विकारजन्य शर्वांगशोफ (Cardiac oedema) में जल का सेवन यथासम्भव कम करना चाहिए, जबतक वृक्क की क्रिया में सुधार न होने लगे।

वाटर फॉर इन्जेक्शन अर्थात् परिस्रुत एवं विशोधित जल का उपयोग सिरागत सूचिकाभरण की औषधियों (Intravenous injection) के निर्माण के लिए किया जाता है। किन्तु अधिक परिमाण में यदि विलयन प्रविष्ट करना हो तो परिस्रुतजल (Distilled water) के वजाय समबल लवणजल (Normal Saline) का व्यवहार करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१--अणवण्टम् एक्वोसस् Unguentum Aquosus (Ung. Aquos.) ले०; हाइड्रस आयण्टमेंट Hydrous Ointment--अं०। इसमें आयण्टमेंट ऑफ ऊल अल्कोहल्स (Ointment of wool Alcohols) के बराबर (अर्थात् ५० प्रतिशत , डिस्टिल्ड वाटर होता है।

१—जैंथीन समुदाय की मूत्रल औषधियाँ (Xanthine Diuretics)

कॅफीन (कह्वासत्व या कह्वीन) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_8H_{10}N_4O_2, H_2O$.

नाम—कॅफीन Caffeina (Caffein.)—ले०; कॅफीन Caffeine--अं०। पर्याय—थीईन Theine; ग्वारेनीन Guaranine।

वक्तव्य--कॅफीन, थीईन एवं ग्वारेनीन रासायनिक दृष्टि से वस्तुतः एक ही वस्तु हैं; किन्तु तीन भिन्न-भिन्न वनस्पतियों से प्राप्त होने के कारण इसके उक्त तीनों नाम रखे गए हैं। कॅफीन सर्वप्रथम सन् १८२० में कहवे के बीजों से प्राप्त किया गया था। थीईन १८३८ ई० में चाय की पत्तियों से प्राप्त हुआ था। ग्वारेनीन, ग्वाराना (Guarana) या ब्रेजिलियन कोकोआ (Brazilian Cocoa) से प्राप्त किया गया था।

प्राप्ति-साधन—कॅफीन एक अल्कलायड (Alkaloid) होता है, जो निम्न साधनों (Sources) से प्राप्त किया जाता है:—

(१) कमेलिया साइनेन्सिस Camellia sinensis (Linn.) O. Kuntze (Family : Theaceae) अर्थात् चाय की सूखी पत्तियों से;

(२) कॅफीआ अरेविका Coffea arabica Linn (Family : Rubiaceae मञ्जिष्ठा-कुल) अर्थात् कहवा के बीजों से;

(३) ब्रेजिलिअन कोकोआ के बीजों से;

तथा (४) कृत्रिम रूप से संश्लेषण द्वारा (Synthetically);

उत्पत्ति-स्थान—चाय की भारतवर्ष, लंका, जावा एवं चीन तथा अन्य उष्णकटिबन्धीय प्रदेशों में खेती की जाती है। कहवा (काफी) लंका, पश्चिमी द्वीपसमूह, पश्चिमी अफरीका आदि में प्रचुरमात्रा में उत्पन्न किया जाता है।

वर्णन—कॅफीन रासायनिक दृष्टि से 1 : 3 : 7-trimethyl-xanthine होता है, अथवा इसका मॉनोहाइड्रेट (Monohydrate) होता है। कॅफीन सफेद चूर्ण के रूप में होता है अथवा इसकी सफेद एवं चमकदार सुइयाँ (Needles) होती हैं, जो परस्पर मिलकर छोटे-छोटे पिण्ड के रूप में (Matted together) हो जाती हैं। यह गंधहीन एवं स्वाद में तिक्त (Bitter) होता है। हवा में खुला रखने से मॉनोहाइड्रेट प्रस्फुटित हो जाता (Efflorescent) है। विलेयता—यह क्लोरोफॉर्म में सुविलेय (Readily Soluble), अल्कोहल् (९५%) में विलेय एवं जल तथा सॉलवेंट ईथर में अत्यल्पमात्रा में घुलता (Sparingey Soluble) है।

मात्रा—५ से १० ग्रेन (या ०.३ से ०.६) ग्राम।

असंयोज्य पदार्थ (Incompatibles)—टैनिक एसिड, पोटासियम् आयोडाइड एवं पारद के लवण (मरक्युरियल साल्ट्स Mercurial Salts)।

कॅफीन से ' कॅफीन एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट' बनाया जाता है।

कॅफीना एट सोडियाइ सेलिसिलास Caffeina et Sodii Solicylas (Caffein. et Sod. Solicyl.) I. P.—ले०; कॅफीन एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट Caffeine and Sodium Salicylate—अं०।

वर्णन–यह कॅफीन तथा सोडियम् सेलिसिलेट को मिलाकर बनाया जाता है। इसमें कम से कम ४७% तथा अधिक सेअधिक ५०% जलरहित कफीन (एनूहाइड्रस कफीन Anhydrous Caffeine $C_8H_{10}O_2N_4$. तथा ५० से ५३ प्रतिशत सोडियम् सेलिसिलेट (Sodium Salicylate $C_7H_5O_3Na$.) होता है। यह सफेद रंग के विरूपिक (Amorphous) चूर्ण या दानेदार पिण्ड के (Granular mass) के रूप में होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् मधुर एवं तिक्त होता है। विलेयता–यह जल में (गर्मजल में ठंढे की अपेक्षा अधिक) सुविलेय एवं अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है। मात्रा—५ से १० ग्रेन, अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा (Subcutaneously) २ से ५ ग्रेन।

गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग।

कॅफीन भी एक मिहकी (प्यूरिन Purin) व्युत्पन्न द्रव्य है। अतएव इस वर्ग के अनेक सामान्य गुणकर्म इसमें भी पाये जाँयगे।

आभ्यन्तर—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर शोषणोपरान्त कॅफीन की ३ मुख्य क्रियायें होती हैं :—(१) मूत्रल (डायुरेटिक); (२) यह मस्तिष्कोत्तेजक (Cerebral Stimulant) होता है, जिससे उच्चमानसिक केन्द्रों (Higher nervous Centres) पर उत्तेजक प्रभाव होता है; (३) यह हृदयोत्तेजक (Cardiac Stimulant) होता है, तथा इसके प्रभाव से हार्दिक रक्तवाहिनियाँ विस्फारित होती हैं।

वृक्क—कॅफीन एक तीव्र मूत्रल औषधि है। इसीलिए चाय पीने से पेशाब अधिक होता है। यद्यपि कॅफीन की अपेक्षा थियोब्रोमीन में और थियोब्रोमीन की अपेक्षा थियोफिलीन में मूत्रल गुण तीव्रतर होता है, तथापि कॅफीन के प्रयोग में विशेषता यह है, कि अधिक काल पर्यन्त सेवन

से भी यह उन दोनों की अपेक्षा अधिक निरापद (Safe) है और वृक्क के तन्तु-धातुओं पर क्षतिकारक प्रभाव नहीं करता। परिणामतः वृक्क-रोगों में भी इस क्रिया के लिए कॅफीन का प्रयोग अधिक उपयुक्त एवं निरापद है। कॅफीन की यह मूत्रलक्रिया शरीरगत अतिरिक्त जलांश की मात्रा पर निर्भर करता है। अर्थात् रक्त में अतिरिक्त जलांश की मात्रा जितनी अधिक होगी, मूत्रलक्रिया भी उतनी ही अधिक होगी। तात्पर्य यह है, कि स्वस्थावस्था की अपेक्षा विकृतावस्थाओं में यह प्रभाव अधिक होता है। दूसरी विशेषता यह है कि मूत्र के घन-घटकों की अपेक्षा जलीय अंश पर ही इसका प्रभाव अधिक पड़ता है।

चिकित्सा में कॅफीन का प्रयोग विशेषतः **हृदयविकारजन्य जलोदर** (**Cardiac dropsy**) में उपयोगी होता है। और डिजिटेलिस चिकित्सा में सहयोगी औषधि के रूप में व्यवहृत होता है। चिरकालीन बहिस्तरीय वृक्कशोथ (**Chronic parenchymatous nephritis**) में कॅफीन का कोई प्रभाव नहीं होता, किन्तु **चिरकालीन अन्तस्तरीय वृक्कशोथ** (**Chronic interstitial nephritis**) में यह अवश्य उपकार करता है। किन्तु वृक्कों **पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण उग्रवृक्कशोथ** (**Acute nephritis**) **में इसका प्रयोग करना चाहिए।** दूसरा दोष इसमें यह है, कि निरन्तर सेवन से ७–८ रोज बाद रोगी को आदत सी हो जाती है, और औषधीय मात्राओंमें इसका कोई प्रभाव लक्षित नहीं होता।

आजकल डायुरेटिन अग्युरिन (**Agurin**) तथा थियोफिलीन आदि अधिक प्रभावशाली औषधियाँ निकल आई हैं। अतएव अब चिकित्सा में अपेक्षाकृत कॅफीन का व्यवहार कम होने लगा है।

नाड़ी-संस्थान--कॅफीन **केन्द्रिक नाड़ी-संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव** करता है। (१) मस्तिष्क (**Cerebrum**)--कॅफीन मस्तिष्कोत्तेजक (**Cerebral stimulant**) औषधि है। साधारण मात्राओं में केवल **मस्तिष्कोत्तेजक उच्चमानसिक केन्द्र** (**Higher Psychical centres**) उत्तेजित होते हैं। इसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति अपने को प्रसन्न एवं अधिक चैतन्य होनेका अनुभव करता है। थकान तथा तन्द्रा दूर हो जाते हैं। शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के कार्य में व्यक्ति अपने को अधिक सक्रिय होने का अनुभव करता है। इन्हीं प्रलोभनों के कारण (तथा सस्ता होने से) आजकल चाय पीने का प्रचार मानसिक एवं शारीरिक दोनों प्रकार के श्रम करनेवालों में बहुत अधिक हो गया है। **किन्तु अधिक मात्रा में सेवन करने से निद्रानाश, बेचैनी, कानों में झनझनाहट तथा कभी-कभी** (**Delirium**) **प्रलाप एवं कम्प आदि कुप्रभाव लक्षित होने लगता है।** (२) **सुषुम्नाशीर्ष** (**Medulla**) **तथा सुषुम्ना** (**Spinal cord**)—मेडुला पर उत्तेजक प्रभाव पड़ने के कारण **श्वसन-केन्द्र** (**Respiratory centre**) तथा **प्राणदानाड़ीकेन्द्र** (**Vagal centre**) **पर उत्तेजक** प्रभाव पड़ता है। सुषुम्ना की चेष्टावह कोशाओं (मोटर सेल्ज) पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे सौषुम्निक प्रत्याक्षिप्त क्रियाओं में तीव्रता तथा पेशियों की चेष्टाओं में अधिक सक्रियता आ जाती है। आजकल चिकित्सार्थ कॅफीन का प्रयोग केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान के रोगों में निम्न रूपों में किया जाता है—

एस्पिरिन, फिनासेटिन आदि वेदनाहर औषधियों के साथ सहायक उपादान एवं दोषहर्ता के रूप में कॅफीन मिलाया जाता है। कॅफीन मिलाने से एक तो एस्पिरिन आदि की क्रिया

शीघ्रता से होती है, तथा दोषहर्ता के रूप में कॅफीन उक्त औषधियों के **हृदयावसादक प्रभाव** (Depressing action on the heart) का निवारण करता है। इस प्रकार ए० पी० सी० पाउडर (A. P. C. Powder. i. e, Aspirin Phenacetin & Caffeine Powder) का यह एक उपादान है। केन्द्रिक नाड़ी-संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण **मानसिक थकान** (Nervous exhaustion) में तथा श्वसन-केन्द्र को उत्तेजित करने के कारण **सुरासारविषमयता** (अल्कोहॉलिक प्वायजनिंग Alcoholic poisoning) में इसका व्यवहार किया जाता है।

हृदय तथा रक्तसंवहन—कॅफीन एक उत्तम **हृदयोत्तेजक** (Cardiac Stimulant) औषधि है; और इस क्रिया के लिए इसका प्रयोग चिकित्सा में अनेक अवस्थाओं में किया जाता है। किन्तु ध्यान रहे कि इसकी क्रिया थके घोड़े पर चाबुक लगाने की ही भाँति होती है। अतएव इसका प्रयोग आत्ययिक अवस्थाओं में ही विशेष उपयोगी है। न्यूमोनिया आदि सान्निपातिक ज्वरों की उग्रता के कारण होने वाले **आत्ययिक या साम्भाविक हृदय-निपात** (Cardiac failure) के निवारण के लिए यह एक उपयोगी औषधि है। एतदर्थ इसका प्रयोग सूचिकाभरण (इन्जेक्शन) द्वारा किया जाता है। **चिरकालीन हृदय-रोगजन्यनिपात्** (Cardiac failure) के निवारण के लिए इसका प्रयोग हृत्पत्री (डिजिटेलिस Digitalis) के सहयोगी औषधि के रूप में किया जाता है।

वक्तव्य—कॅफीन के चिकित्साक्रम में कभी-कभी अनेक उपद्रव या ऐसे लक्षण उत्पन्न होते जो रोगी के हित की दृष्टि से अभीष्ट नहीं होते–यथा अत्यधिक हृत्स्पन्दन (Palpitation), शिर में चक्कर आना अर्थात् शिरोभ्रम (Vertigo), उत्क्लेश, वमन, निद्रानाश, तथा यहां तक कि कभी-कभी प्रलाप (Delirium) भी होने लगता है। अतएव विशेषतः जिन रोगों में रोगी को निद्रा आना तथा मानसिक आराम की अत्यावश्यकता है, उनमें इन सब बातों का ध्यान चिकित्सक को विशेष रूप से रखना चाहिए। उक्त कुप्रभावों की सम्भावना अन्तस्तरीय वृक्कशोथ (Interstial nephritis) के रोगियों में अधिक होती है। अतएव ऐसे रोगियों में कॅफीन का प्रयोग नहीं करना चाहिए अथवा बड़ी सतर्कता से करना चाहिए।

श्वसन—कॅफीन सुषुम्नाशीर्ष पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे **श्वसन-केन्द्र पर भी उत्तेजक प्रभाव** होता है। अतएव चिकित्सा में इसका प्रयोग उन सभी अवस्थाओं में उपयोगी होता है; जिनमें सम्भावी श्वसनभेद् (Failure of respiration) की आशंका हो। एतदर्थ इसका प्रयोग सूचिकाभरणद्वारा (इन्जेक्शन) ही करना चाहिए। अतएव न्यूमोनियाँ आदि ज्वरों में तथा अल्कोहल् एवं मॉर्फीन आदि के विषमयावस्था (Narcotic poisoning) में इसका प्रयोग उपयोगी है। साधारण अवस्था में गर्म-गर्म कॉफी देने से भी यह कार्य हो सकता है। इसके अतिरिक्त यह श्वासनलिकाओं को भी विस्फारित करता है, जिससे श्वास या दमारोग में भी (दौरा रोकने के लिए) उपयोगी हो सकता है। किन्तु इस कार्य के लिए एफेड्रीन, एड्रिनेलीन तथा अट्रोपीन आदि विश्वस्त औषधियाँ आजकल उपलब्ध हैं। अतएव इस कार्य के लिए इसका उपयोग प्रायः नहीं किया जाता।

पेशी—विशेषतः ऐच्छिक मांसपेशियों (Skeletal muscles) की सक्रियता बढ़ जाती है। थकान एवं आलस्य का निवारण होता है।

शरीरसमवर्तक्रिया—कैफीन पीति (जेन्थीन Xanthine) एवं यूरिया के निस्सरण (Excretion) में सहायक होता है तथा शरीर में ऑक्सीजन का अधिकाधिक उपयोग एवं कार्वनडाई ऑक्साइड का निस्सरण होता है। ऐच्छिक पेशियों की क्रियाशीलता में तात्कालिक वृद्धि होने से शरीर-तापक्रम में भी तात्कालिक साधारण वृद्धि हो सकती है।

शोषण एवं निस्सरण—कैफीन अत्यन्त क्षिप्रतापूर्वक (Rapidly) एवं पूर्णतः शोषित हो जाता है। शोषित कैफीन का अधिकतम अंश शरीर में ही जारित (Oxidised) हो जाता है। शेष अल्पमात्रा का उत्सर्ग मूत्र के साथ डाइ-मेथिलजेन्थीन तथा मानोमेथिलजेन्थीन के रूप में होता है। निरन्तर औषधिक के सेवन से यह रोगी को सह्य हो जाती है, जिससे इसका मूत्रल प्रभाव भी निर्बल पड़ जाता है।

उग्र विषाक्त प्रभाव—यद्यपि मात्रातियोग (Over dosage) में भी कैफीन द्वारा घातक प्रभाव बहुत कम देखने में आता है, किन्तु अनेक ऐसे कुलक्षण अवश्य प्रगट हो जाते हैं, जिनमें तात्कालिक चिकित्सा की आवश्यकता पड़ती है। कैफीन-विषाक्तता में निम्न उपद्रव लक्षित होते हैं—गले में जलन, तृष्णा, आमाशयान्त्र में पीड़ा, सिर में चक्कर आना तथा कै एवं पहले दस्त आने लगते हैं। ऐसी स्थिति में मस्तिष्क-अवसादक एवं निद्रल औषधियों का व्यवहार करना चाहिए—यथा ब्रोमाइड्स, अल्कोहल् एवं मॉर्फीन आदि।

योग (Preparations)।

१—इन्जेक्शिओ कैफीनी एट सोडियाइ बेंजोएटिस Injectio Caffeinae et Sodii Benzoatis—ले०; इन्जेक्शन ऑव कैफीन एण्ड सोडियम् बेंजोएट Injection of Caffeine and Sodium Benzoate—अं०। मात्रा—२ से ५ ग्रेन (०·१२ से ०·३ ग्राम)। अधस्त्वक् सूचिकाभरणद्वारा (Subcutaneously) यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो १५ मिनम् में ३$\frac{3}{4}$ ग्रेन की मात्रा देनी चाहिए।

२—माइग्रेनीन Migrainine। पर्याय—एन्टिपाइरीन (Antipyrin); कैफीन साइट्रिकम् (Caffeine-citricum)। यह जल में विलेय होता (पानी में घुल जाता) है। इसमें ९ प्रतिशत कैफीन, १ प्रतिशत साइट्रिक एसिड तथा ९० फीसदी (प्रतिशत) फेनाजोन (Phenazone) होता है। इसका प्रयोग शिरःशूल या सर के दर्द (Headache) में किया जाता है। किन्तु इसमें एक दोष हो सकता है, कि रोगी को निद्रा नहीं आती। मात्रा—८ से १५ ग्रेन (०·५ से १ ग्राम) या ४ से ८ रत्ती।

३—कैफीन एट सोडियाई सेलिसलास Caffeine et Sodii Salicylas B. P. C.—ले०। इसका सफेद रंग का विरूपिक (Amorphous) चूर्ण होता है, जिसमें ४७ से ५० प्रतिशत तक कैफीन होता है। इसकी क्रिया डिजिटेलिस की भांति किन्तु उससे क्षिप्रतर (More rapid) होती है। मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०·३ से १ ग्राम) या २$\frac{1}{2}$ से ७$\frac{1}{2}$ रत्ती मुखद्वारा; २ से ५ ग्रेन अधस्त्वक्सूचिकाभरणद्वारा (Hypodermically)।

४—कैफीनी साइट्रस Caffeinae Citras, B. P. C.—ले०; कैफीन साइट्रस Caffeine Citras—अं०। इसका सफेद रंग का गंधहीन चूर्ण होता है। जल में कुछ-कुछ घुल जाता (३२ भाग में १ भाग) है। मात्रा—२ से १० ग्रेन (०·१२ से ०·६ ग्राम) या १ से ५ रत्ती।

५—कॅफीनी एट सोडियाइ आयोडाइडम् Caffeinae et Sodii Iodidum, B. P. C.—ले०। पर्याय—सोडियम् कॅफीन आयोडाइड Soduim Caffeine Iodide। यह सफेद चूर्ण के रूप में होता है, जो ठंडे पानी में अल्पतः (Slightly) तथा गरम पानी में सुविलेय (Freely Soluble) होता है। इसमें ५०% कॅफीन होता है। प्रयोग—हृदय-विकारजन्य जलोदर (Cardiac Dropsy), फुफ्फुसावरणशोथ (Pleurisy) तथा श्वास में इसका प्रयोग उपयोगी होता है। मात्रा—२ से १० ग्रेन (१ से ५ रत्ती)।

थियोफिलिनम् (थियोसिन), B. P. & I. P.

रासायनिक संकेत: $C_7H_8O_2N_4, H_2O$.

नाम—थियोफिलिनम् Theophyllinum (Theophyll.)—ले०; थियोफिलीन Theophylline—अं०। पर्याय—थियोसिन Theosin।

प्राप्ति-साधन—थियोफिलिन एक अल्कलायड है, जो चाय (Camellia sinensis (Linn.) O. Kuntze) की सूखी पत्तियों से प्राप्त किया जाता है। आजकल यह कृत्रिम रूप से संश्लेषणद्वारा (Synthetically) भी प्राप्त किया जाता है। रासायनिक दृष्टि से यह 1: 3—Dimethylxanthine होता है।

वर्णन—थियोफिलीन सफेद रंग के मणिभीय (क्रिस्टेलाइन) चूर्ण के रूप में होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त (तीता) होता है। हवा में खुला रहने से यह बिगड़ता नहीं (Stable in air)। विलेयता—२५° फाहरनहीट तापक्रम पर १२० भाग जल में १ भाग के अनुपात से विलेय होता है। गरम जल में अपेक्षाकृत अधिक घुलनशील होता है। २५ डिगरी तापक्रम पर ८० भाग अल्कोहल् (९५ प्र० श०) में विलेय होता है। सॉलवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में अंशतः विलेय (Sparingly soluble) होता है; किन्तु क्षारीय हाइड्रोक्साइडस् (Alkali Hydroxides) के विलयन एवं डायल्यूट अमोनिया में सुविलेय (Freely Soluble) होता है।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन या ६० से २०० मिलिग्राम।

थियोफिलीन इन्जेक्शिओ मर्सालिलाइ (Injectio Mersalyli) में पड़ता है।

थियोफिलीना एट सोडियाइ एसिटास Theophyllina et Sodii Acetas (Theophyll. et Sod. Acet.), I. P. ले०; थियोफिलीन एण्ड सोडियम् एसिटेट Theophylline and Sodium Acetate—अं०। पर्याय—थियोसिन सोडियम् एसिटेट।

प्राप्ति-साधन—यह सोडियम् थियोफिलीन एवं सोडियम् एसिटेट को परस्पर (समान अनुपात में Equimolecular proportions) मिलाकर बनाया जाता है। इसको बनाने की विधि यह है कि पहले सोडियम् थियोफिलीन एवं सोडियम् एसिटेट को जल में घोलकर उसका विलयन बना लिया जाता है। इस विलयन को वाष्पीकरण (Evaporation) के द्वारा सुखाकर थियोफिलीन एण्ड सोडियम् एसिटेट नामक यौगिक प्राप्त कर लिया जाता है। इसमें कम से कम ५५ प्रतिशत तथा अधिक से अधिक ६५ प्रतिशत जलीयाणुरहित (एन्हाइड्रस Anhydrous) थियोफिलीन ($C_7H_8O_2N_4$.) होता है।

वर्णन—थियोफिलीन एण्ड सोडियम् एसिटेट का सफेद क्रिस्टेलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त तथा लवण-सम (Salty) होता है। विलेयता—यह २५ भाग जल में

विलेय होता है; किन्तु अल्कोहल् (९०%), सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में अत्यल्पमात्रा में घुलता है। विलयन की प्रतिक्रिया क्षारीय होती है। मात्रा—२ से ५ ग्रेन (०·१२ से ०·३ ग्राम)।

थियोफिलीना कम् एथिलीनडायमिना Theophyllina cum Aethylenediamina (Theophyll. C. Aethylenediam.)—ले०; थियोफिलीन विथ एथिलीनडायमीन Theophylline with Aethylenediamine—अं०।

पर्याय—एमिनोफिलीन (Aminophyllin); यूफिलीन (Euphyllin); कार्डोफिलिन (Cardophyllin)।

प्राप्ति-साधन—एमिनोफिलीन बनाने के लिए पहले थियोफिलीन का एथिलीनडायमीन के साथ विलयन बना लेते हैं। फिर इस विलयन को सुखाकर थियोफिलीन विथ एथिलीनडायमीन प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ७५ प्रतिशत जलरहित (Anhydrous) थियोफिलीन ($C_७H_८O_२N_४$) तथा कम से कम १२·३ प्रतिशत एथिलीनडायमीन होता है।

वर्णन—इसके सफेद या हल्का पीलापन लिए (पीताभ) सफेद दाने होते हैं, जो स्वाद में तिक्त होते हैं, और सूंघने पर इनसे हल्की अमोनिया की गंध आती है। विलेयता—२५ डिगरी तापक्रम पर ५ भाग जल में विलेय होता है; किन्तु जलरहित अल्कोहल् (Dehydrated alcohol) तथा सालवेंट ईथर में नहीं घुलता। इसका जलीय विलयन रखा रहनेपर थोड़ी देर में गंदला हो जाता है। इसको सतर्कतापूर्वक अच्छी तरह डाटवंद पात्रों में रखना चाहिए जिसमें वायु का भी प्रवेश न हो सके।

मात्रा—१½ से ८ ग्रेन (०·१ से ०·५ ग्राम)।

थियोब्रोमीना एट सोडियाइ सेलिसिलास (I. P., B. P.)

नाम—थियोब्रोमीना एट सोडियाइ सेलिसिलास Thebromina et Sodii Salicylas (Theobrom. et Sod. Salicyl.)—ले०; थियोब्रोमीन एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट Theobromine and Sodium Salicylate—अं०।

पर्याय—डायुरेटिन (Diuretin)।

प्राप्ति-साधन—यह सोडियम् हाइड्रॉक्साइड एवं थियोब्रोमीन तथा सोडियम् सेलिसिलेट की परस्पर अन्तःक्रिया (Interaction) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ४६ प्रतिशत थियोब्रोमीन ($C_७H_८O_२N_४$) तथा ४१ प्रतिशत सोडियम् सेलिसिलेट होता है। सोडियम् सेलिसिलेट में सोडियम् (Na.) की जो मात्रा है उसके अतिरिक्त इस यौगिक में अधिक से अधिक ६·९ प्रतिशत सोडियम् की और मात्रा हो सकती है।

वर्णन—थीयोब्रोमीन एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट का सफेद रंग का विरूपिक चूर्ण (Amorphous powder) होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् मधुर एवं क्षारीय (Sweetish and alkaline) होता है। विलेयता—समभाग जल में विलेय होता है; किन्तु अल्कोहल् (९५%), सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में नहीं घुलता।

मात्रा—१० से २० ग्रेन (०·६ से १·२ ग्राम)।

थियोब्रोमीन, थियोफिलीन तथा अन्य प्यूरिन-यौगिकों (Purin-derivatives) के गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग।

इस वर्ग की औषधियाँ उत्तम मूत्रल प्रभाव करती हैं, तथा साथ ही इनमें कॅफीन की भाँति नाड़ी-संस्थानजन्य उपद्रव भी नहीं होते। स्वतंत्र रूप से इनका मौखिक सेवन किए जाने

पर आमाशय की श्लैष्मिककला पर क्षोभक प्रभाव होने के कारण वमन तथा उत्क्लेश आदि उपद्रवों की आशंका रहती है। अतएव इनके साथ केल्सियम् तथा ल्युमिनल आदि वात-संशामक औषधियों का योग कर देने से इन उपद्रवों का निवारण हो जाता है। अब बाजार में विभिन्न कम्पनियों द्वारा निर्मित ऐसे यौगिक विभिन्न व्यावसायिक नामों (यथा डायुरेटिन, अग्युरिन आदि) से उपलब्ध हैं। अतएव चिकित्सा में अब प्रायः इन्हीं का व्यवहार किया जाता है। यद्यपि रासायनिक दृष्टि से इस समुदाय की विभिन्न औषधियों में बहुत कुछ समरूपिकता पाई जाती है, किन्तु गुणकर्म एवं औपधीय उपयोगिता में इनमें परस्पर बहुत तारतम्य मिलता है।

थियोब्रोमीन कॅफीन की भाँति हृदय पर तो उत्तेजक प्रभाव करता ही है, किन्तु साथ ही साथ यह वृक्कों पर उसकी अपेक्षा तीव्रतर क्रिया करता, जिससे मूत्रल प्रभाव इसमें कॅफीन की अपेक्षा बहुत अधिक पाया जाता है। इसके अतिरिक्त यह रक्तभार (Blood pressure) को कम करता तथा हार्दिक रक्तवाहिनियों (Coronary vessels) को विस्फारित करता है, जिससे रक्तवाहिनियों के उद्वेष्ठ (Vascular Spasm) का शमन होता है। **डायुरेटिन (Diuretin)** तथा **अगुरिन (Agurin)** थियोब्रीन के दो मुख्य यौगिक हैं, जिनका व्यवहार चिकित्सा में बहुत किया जाता है। इन दोनों में भी अगुरिन, डायुरिटिन की अपेक्षा अधिक क्रियाशील होता है, तथा इसमें डायुरेटिन के दोष भी नहीं पाये जाते। हृत्पेशी में अपजनन (Myocardial degeneration) होने के परिणामस्वरूप उत्पन्न अथवा वृक्कशोथ (नेफ्राइटिज़) के कारण होनेवाले जलोदर या सर्वांगशोफ।

थियोफिलीन में हृदयोत्तेजक गुण कॅफीन की अपेक्षा कम है, किन्तु मूत्रल प्रभाव उसकी अपेक्षा बहुत अधिक है। थियोफिलीन की मूत्रल क्रिया में विशेषता यह है कि यह मूत्र के जलीयांश को बढ़ाने के साथ-साथ उसके घन-घटकों की मात्रा में भी वृद्धि करता है। अतएव ऐसे सर्वांग-शोफ (Oedema) में, जिसमें लवण (सोडियम् क्लोराइड) का उत्सर्ग ठीक प्रकार से नहीं होता, मूत्रल क्रिया के लिए थियोफिलीन परमोपयुक्त औषधि है।

अमिनोफिलीन, थियोफिलीन का एक प्रसिद्ध यौगिक है। यह हार्दिक धमनियों को विस्फारित करता है, तथा हृदय के उत्क्षेपणगति एवं उत्क्षिप्तरक्तराशि दोनों में ही वृद्धि करता है। अतएव हृच्छूल (Anginapectoris), हार्दिकधमनी-अवरोध (Coronary occlusion), हृदय एवं वृक्कविकार जन्य जलोदर (Cardiac and renal dropsy) तथा हृदय-विकारजन्य श्वास (Cardiac asthma) आदि विकृतियों में अमिनोफिलीन के प्रयोग से बहुत लाभ होता है। इसके अतिरिक्त यह श्वसनकेन्द्र पर भी उत्तेजक प्रभाव करता है। अतएव अमिनोफिलीन का प्रयोग उन सभी अवस्थाओं में, जिनमें श्वसनभेद् (Respiratory failure) की आंशका हो, उपयोगी होता है। तमकश्वास या दमा (Bronchial-asthma) में भी इसका प्रयोग उपयोगी होता है। विशेषतः जिन रोगियों को एड्रिनेलीन सह्य हो जाता है, उनमें एमिनोफिलीन का शिरागत अथवा पेशीगत इन्जेक्शन दौरा रोकने में सफल सिद्ध होता है।

थियोब्रोमीन, थियोफिलीन तथा प्यूरिन समुदाय (Purin derivatives) की अन्य औषधियों के यौगिकः—

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ थियोफिलीनीकम् एथिलीनडायमिना Injectio Theophyllināe cum Aethylenediamina (Inj. Theophyll. c. Aethylenediam.) B. P. & I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव थियोफिलीन विथ एथिलीन डायमीन Injection of Theophylline with Ethylenediamine; इन्जेक्शन ऑव एमिनोफिलीन Injection of Aminophylline—ग्रं० ।

मात्रा—१½ से ८ ग्रेन (०·१ से ०·५ ग्राम) शिरागत या पेश्यन्तरिक सूचिकाभरणद्वारा ।

वक्तव्य—जब व्यवस्थापत्र में इन्जेक्शन ऑव एमिनोफिलीन में मात्रा का निर्देश न हो, तो शिरागत सूचिकाभरण के लिए १५० मिनम् (बूंद) में ४ ग्रेन के बल का विलयन तथा पेश्यन्तरिक सूचिकाभरण (Intramuscular injection) के लिए ३० मिनम् में ८ ग्रेन (२ मि० लि० में ०·५ ग्राम) के बल (Strength) का विलयन देना चाहिए ।

२—टॅबेली थियोफिलीनी कम् एथिलीनडायमिना Tabellāe Theophyllināe cum Aethylenediamina (Tab. Theophyll. c. Aethylenediam.), B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव थियोफिलीन विथ एथिलीन डायमीन Tablets of Theophylline with Ethylenediamine; टॅबलेट्स ऑव एमिनोफिलीन Tablets of Aminophylline—ग्रं० । अमिनोफिलीन की टिकिया—हिं० । मात्रा—१½ से ८ ग्रेन (०·१ से ०·५ ग्राम) । जब प्रति टिकिया की मात्रा का निर्देश न लिखा हो तो १½ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए ।

(नान्-ऑफिशल योग) :—

१—थियोब्रोमीना Theobromina B. P. C.—ले०; थियोब्रोमीन Theobromine—ग्रं०; डाईमेथिलजेंथीन Dimethyl Xanthine—रासायनिक । यह एक अल्कलायड् है जो थियोब्रोमा कोको (Theobroma Cocao) नामक वृक्ष के बीजों से प्राप्त किया जाता है । रासायनिक दृष्टि से यह थियोफिलीन का समरूपिक (Isomeric) होता है । मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम) ।

२—थियोब्रोमीना एट सोडियाइ एसिटास Theobromina et Sodii Acetas U. S. P.—ले० । पर्याय—एग्यूरिन (Agurin) यह चूर्ण के रूप में होता है, जिसमें पसीजने (Deliquescence) की प्रवृत्ति बहुत पाई जाती है । विलेयता—१ भाग २ भाग जल में घुल जाता है । मात्रा—७½ ग्रेन (½ ग्राम) अर्थात् ३ रत्ती ।

३—थियोब्रोमीन केल्सियम् सेलिसिलेट Theobromine Calcium Salicylate । इसको केल्सियम् डायुरेटिन (Calcium Diuretin) या थियोकेल्सीन (Toeocalcine) भी कहते हैं ।

थियोकेल्सीन का श्वेतचूर्ण होता है । इसमें ४८ प्रतिशत थियोब्रोमीन तथा ११ प्रतिशत केल्सियम् सेलिसिलेट होता है । इसकी क्रिया डायुरेटिन की तरह होती है । धमनीदार्ढ्य (Arterio-Sclerosis) तथा श्वास (Asthma) में इसका प्रयोग उपयोगी होता है । मात्रा—८ से १५ ग्रेन (०·५ से १ ग्राम) या ४ रत्ती से १ माशा तक ।

४—रोडन केल्सियम् डायुरेटिन Rhodan Calcium Diuretin । इसकी टिकिया आती है । प्रत्येक टिकिया में ७½ ग्रेन केल्सियम्-डायुरेटिन तथा १½ ग्रेन पोटासियम् सल्फोसायनेट होता है । मात्रा–१ टिकिया दिन में २-३ बार ।

२—लवणक्रिया के द्वारा मूत्रल प्रभाव करनेवाली औषधियाँ।

(Osmotic Diuretics or Diuretics actiug by Salt Actiou)

यूरिया (Urea) B. P., I. P.

Urea. CO (NH_2) 2.

नाम—यूरिया—ले०; कार्बेमाइड Carbamide—अं०।

निर्माणविधि—यह अमोनियम् सायनेट से वाष्पीभवन द्वारा, अथवा अन्य कई कृत्रिम विधियों द्वारा तैयार किया जाता है।

स्वरूप—रंगहीन, पारदर्शक, त्रिपार्श्वीय मणिभ (Prismatic Crystals) के रूप में होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन एवं शीतल होते हैं। विलेयता—यह जल में सुविलेय (१ भाग जल में १ भाग), अल्कोहल (९०%) में अल्पविलेय (५ भाग में १ भाग) तथा सॉलवेंट ईथर एवं क्लोरोफॉर्म में अविलेय होता है।

मात्रा—७५ से २२५ ग्रेन अथवा ५ से १५ ग्राम।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

यूरिया का शोषण आन्त्रों से क्षिप्रतापूर्वक होता है। यह तीव्रमूत्रल प्रभाव करता है। शीघ्रतापूर्वक उत्सर्ग होने के कारण इसका प्रभाव भी अल्पकालिक होता है। इसका प्रयोग विभिन्न शोफों (Dropsy) में लाभप्रद होता है। हृच्छोफ (Cardiac dropsy) के निवारण के लिए यह एक उत्तम औषधि है। मिहिकाम्ल अश्मरी (Uric acid calculi) में व्याधिशमन एवं अनागतव्याधिप्रतिषेध दोनों रूप में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी होता है। मूत्रल प्रभाव के लिए इसका प्रयोग यकृद्दाल्युदर, वातरक्त तथा चिरकालीन वृक्कव्याधियों में भी किया जाता है।

शरीर में और किसी प्रकार से इसका उपयोग नहीं होता, अतएव अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर वृक्कों द्वारा सब उत्सर्गित हो जाता है। चिरकालीन अन्तस्तरीय वृक्कशोफ (Chronic Interstial Nephritis) में तो इसका उत्सर्ग समुचितरूप से नहीं होने पाता, किन्तु चिरकालीन बहिस्तरीय वृक्कशोफ (Chronic parenchymatous Nephritis) में यह कठिनाई नहीं है; अतएव इसमें मूत्रल औषधि के रूपमें इसका प्रयोग उपयोगी होता है। क्विनीनके साथ १ प्रतिशत विलयन के रूप में इसका प्रयोग कोकेन के स्थानापन्नस्वरूप इसका प्रयोग स्थानिक संज्ञाहरण के लिए भी किया जाता है। यह जल में विलेय होता है, विषाक्त प्रभाव भी इसमें अपेक्षया बहुत कम होता तथा इसका विशोधन भी सम्यग्रूपेण किया जा सकता है। अतएव इस प्रयोजन स्थानिक (संज्ञाहरण) के लिए यह एक उपयुक्त औषधि है। ५ से १० प्रतिशत विलयन का प्रयोग आन्तरिक अर्श (Internal piles) को गलाने के लिए किया जाता है।

कभी-कभी यूरिया का प्रयोग वृक्क की कार्यक्षमता (Renal efficiency) के परीक्षण के लिए भी किया जाता है, इसके लिए १५ ग्राम (२२५ ग्रेन) यूरिया मुखद्वारा प्रयुक्त किया जाता है, और विभिन्न अन्तरों से उसके उत्सर्ग की मात्रा से वृक्क की कार्यक्षमता का अनुमान किया जाता है। सामान्यतः ४ प्रतिशत यूरिया का उत्सर्ग वृक्कों से होना चाहिए। १ घंटे के बाद १·५ प्रतिशत तथा २ घंटे के अनन्तर २ प्रतिशत यूरिका का उत्सर्ग वृक्कों की मन्द कार्यक्षमता का द्योतक है।

(नान्-आफिशियल योग)

१—क्विनीनी एट यूरिया हाइड्रोक्लोराइडम् Quininae et Urea Hydrochloridum—ले०; यूरिया क्विनीन—अं० । इसमें ५८ प्रतिशत क्विनीन होता है । रंगहीन पारभासी (Translucent) त्रिपार्श्वीय दानों के रूप में होता है । यह जल में विलेय होता है तथा अधस्त्वग् मार्गद्वारा विषम-ज्वर में तथा स्थानिक संज्ञाहरण के लिए प्रयुक्त होता है । मात्रा—अधस्त्वक् सूचिकाभरण के लिए १५ ग्रेन या १ ग्राम (ऐसी एक मात्रा प्रतिदिन देनी चाहिए) ।

स्प्रिटस ईथेरिस नाइट्रोसाइ (I. P.)

नाम—स्प्रिट ईथेरिस नाइट्रोसाई Spiritus Aetheris Nitrosi (Sp. Ather. Nitros.), I. P.—ले०; स्वीट स्पिरिट ऑव नाइटर Sweet spirit of Nitre—अं० ।

स्वरूप—यह पारदर्शक, किंचित् पीताभ द्रव होता है, जिसमें सेव की भाँति तथा तीक्ष्ण चुभनेवाला गन्ध होता है; स्वाद विशिष्ट स्वरूप का । इसको छोटी-छोटी डाटबन्द शीशियों में शीतल स्थान में रखना चाहिए, जहाँ प्रकाश से सुरक्षा हो सके ।

असंयोज्य द्रव्य—पोटासियम् आयोडाइड तथा इसी प्रकार अन्य विलेय आयोडाइड्स, आयरन सल्फेट, एँटीपायरीन, सेलिसिलेट्स, टैनिक एवं गैलिक एसिड तथा इमल्सन्स ।

मात्रा—१५ से ६० बूंद या १ से ४ मि० लि० ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

आभ्यन्तर—स्प्रिट ऑव नाइट्रस ईथर में साधारण रूप में ईथर तथा नाइट्राइट्स दोनों के गुण-कर्म पाये जाते हैं । अतएव यह आशुकारी उत्तेजक (Diffusible stimulant), उद्वेष्टहर एवं वातानुलोमन होता है ।

रक्तसंवहन—यह हृत्कार्य में तीव्रता एवं परिसरीय रक्तवाहिनियों में शिथिलता पैदा करता है । वृक्कीय एवं त्वाची रक्तवाहिनियों का विस्फारण करने के कारण यह मूत्रल तथा स्वेदल प्रभाव करता है । अतएव मूत्र एवं स्वेद-प्रजनन करने के कारण ज्वरहर (Antipyretic) होता है । ज्वरहर मिश्रणयोगों में यह प्रधान उपादान होता है ।

३—पारद के मूत्रल यौगिक (Mercurial Diuretics)—

मरसालिल एसिड (B. P. Add.)

(Mersalyl acid, B. P. Addendum.)

वर्णन—यह श्वेत वर्ण के गंधहीन चूर्ण के रूप में होता है, इसमें ४१·५ से ४४ प्रतिशत तक पारद (Hg.) होता है ।

विलेयता—जल तथा डायल्यूट खनिज अम्लों (Dilute mineral acids) में मुश्किल से घुलता (Sparingly Soluble) है । किन्तु सोडियम् हाइड्रॉक्साइड के विलयन में सुविलेय होता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

इस समुदाय की मूत्रल औषधियों की क्रिया उस समय और भी तीव्र होती है, जब किंचित् अम्लोत्कर्ष (Acidosis) की अवस्था हो । अतएव इनका प्रयोग करने के पूर्व अमोनियम्

क्लोराइड का सेवन कराने से इसकी क्रिया अधिक तीव्र होती है। यह मूत्रनलिकाओं में द्रवांश के पुनः शोषण (Tubular reabsorption of water) को कम करते हैं, जिससे मूत्र की मात्रा बढ़ती और मूत्रल क्रिया होती है। इसके अतिरिक्त यह धातुओं से सोडियम् क्लोराइड का निस्सरण (Excretion) भी करते हैं। इन यौगिकों में थियोफिलीन का संयोग कर देने से मूत्रल-क्रिया अधिक तीव्र हो जाती है तथा साथ ही पारद के यौगिकों के शोषण में भी सहायता मिलती है।

पारद के मूत्रल यौगिकों का प्रयोग विशेषतः हृदयविकारजन्य शोफ (Cardiac oedema) में लाभप्रद होता है। चिरकालीन हृत्कपाट विकृतियों (Chronic valvular disease) में इसका प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है। एतदर्थ इन यौगिकों का प्रयोग प्रायः पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) के रूप में किया जाता है। कभी-कभी पारद के प्रति असह्यता (Idiosyncrasy) होने के कारण अल्पमात्रा में प्रयुक्त होने पर भी घातक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, अतएव प्रथम मात्रा में रोगी का परीक्षण करके ही आगे चिकित्सा-क्रम को बढ़ाना चाहिए। १ से २ सी० सी० (या मि० लि० mil.) मात्रा में औषधि १-१ या २-२ दिन के अन्तर से दी जाती है। जब अभीष्ट मात्रा में द्रवांश निकल जावे तथा शोफ (Oedema) कम हो जावे तो औषधि बन्द करके रोगी को डिजिटेलिस का सेवन कराना चाहिए और भोजन में लवण वर्ज्य करना चाहिए। अन्य प्रकार के शोफ अथवा जलोदर (Ascites) में इन यौगिकों से विशेष लाभ नहीं होता।

उपद्रव (Untoward effects)—यद्यपि पारद के उक्त ऑर्गेनिक यौगिक (Organic compounds) इन-ऑर्गेनिक यौगिकों की अपेक्षा कम विषाक्त (toxic) होते हैं, तथापि अधिक समय तक इनके सेवन से कभी-कभी अनेक भयंकर कुप्रभाव उत्पन्न हो जाते हैं। इनमें कुछ लक्षण तो पारद धातु के कारण होते हैं, जैसे मुखपाक (Salivation and Stomatitis), बृहदन्त्रशोथ (Colitis) एवं मल के साथ रक्त आना तथा वृक्कों पर कुप्रभाव होने से मूत्र में निर्मोक (Cast) एवं अल्ब्युमिन का आना आदि। दूसरे प्रकार का कुप्रभाव शरीरगत धातुओं में लवण-दारिद्र्य (Chloride depletion) के कारण होता है, जैसे दौर्बल्य, प्रलाप (Delirium) एवं सन्यास (Coma) आदि।

योग (Preparations) :—

१—इन्जेक्शिओ मरसालिलाइ Injectio Mersalyli, B. P. Add.—ले०; इन्जेक्शन ऑव मरसालिल Injection of Mersalyl—अं०। पर्याय—मरसालिल एण्ड थियोफिलीन इन्जेक्शन -Mersalyl and Theophylline Injection। इसमें मरसालिल एसिड ९.५६ भाग, थियोफिलीन ५ भाग, सोडियम् हाइड्रॉक्साइड १ भाग, वाटर फॉर ईन्जेक्शन आवश्यकतानुसार १०० मि० लि० के लिए। मात्रा—½ से २ मि० लि० या सी० सी० (८ से ३० मिनम् या बूंद) पेशीगतसूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा। २ सी० सी० उक्त द्रव में ०.२ ग्राम मरसालिल (Mersaly तथा ०.१ ग्राम थियोफिलीन होता है।

२—इन्जेक्शिओ मरसालिलाइ एट थियोफिलिनाइ Injectio Mersalyli et Theophyllini, I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव मरसालिल एण्ड थियोफिलीन Injection of Mersalyl and Theo-

phylline—अं० । इसमें लगभग २ भाग मरसालिल तथा १ भाग थियोफिलीन होता है। संग्रह–इसका संग्रह एकमात्रिकएम्पूल्स (Single-dose Containers) अथवा बहु-मात्रिक पात्रों (Multiple-dose Containers) में किया जाता हैं। मात्रा—सॉल्यूशन की इतनी मात्रा जिसमें ०'०५ से ०'२ ग्राम मरसालिल तथा ०'०२५ से ०'१ ग्राम थियोफिलीन हो। मार्ग—पेशीगत सूचिकाभरणद्वारा।

३—इन्जेक्शिओ मरक्युरोफिलिनी Injectio Mercurophyllinae (Inj. Mercurophyll.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव मरक्युरोफिलीन Injection of Mercurophylline—अं०। यह मरक्युरोफिलीन का वॉटर फार इन्जेक्शन में बनाया हुआ विशोधित विलयन (Sterile Solution) होता है, जो हल्के पीले रंग का स्वच्छ एवं गंधहीन द्रव होता है। इसका वितरण अच्छी तरह बन्द एकमात्रिक पात्रों (Single-dose hermetically Sealed Containers) में किया जाता है। मात्रा—द्रव की इतनी मात्रा जिसमें पारद यौगिक १०० मिलिग्राम (१½ ग्रेन) तथा थियोफिलीन ४० मि० ग्रा० (⅔ ग्रेन) हो। मार्ग—पेशीगत सूचिकाभरणद्वारा।

४—मरकेप्टोमेरिन सोडियम् स्टेराइल Mercaptomerin Sodium, Sterile, U. S. P.। यह सफेद रंग का नमी को सोखने वाला या उन्दचूष (Hygroscopic) चूर्ण होता है, अथवा मधुमक्खी के समान जालीदार छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं, जो जल तथा अल्कोहल् में सुविलेय होते हैं। किन्तु ईथर तथा क्लोरोफार्म में केवल अंशतः विलेय (Slightly Soluble) होता है। मात्रा—१ मि० लि० या सी० सी० (जिसमें १२० मि० ग्रा० औषधि होती है) सूचिकाभरणद्वारा (Parenterally)।

व्यावसायिक योग:—

(१) सेलिरगन Salyrgan (Hoechst)—यह मर्सालिल एवं थियोफिलीन का यौगिक है। इसकी (१) शर्करावगुण्ठित गोलियाँ (Dragees) तथा (२) १ सी० सी० एवं २ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं।

(२) थायोमेरिन सोडियम् Thiomerin Sodium (Wyeth)—यह मरकेप्टोमेरिन सोडियम् का योग है। इसकी १'४ ग्राम की शीशियाँ (Vials) या ४'२ ग्राम की बहुमात्रिक शीशियाँ (Multiple dose vials) आती हैं। १ सी० सी० या २ सी० सी० अधस्त्वक् सूचिकाभरणद्वारा।

४—शरीर से लवण या सोडियम् क्लोराइड (Sodium Chloride) का अपहरण करनेवाली औषधियाँ—

(Ion-exchange Resins and Diamox)

कारवेक्रिलेमीन रेजिन्स (कार्वो-रेजिन)

Carbacrylamine Resins, N. N. R.
(Carbo-Resin)

वर्णन—यह रासायनिक संश्लेषण-पद्धति द्वारा निर्मित यौगिक (Synthetic molecular Compounds) होते हैं, जो घुलनशील नहीं होते। यह २ प्रकार के होते हैं:—(१) Cation-exchange resins तथा (२) Anion-exchange resins। सोडियम्-अयनों का अधिक संकेन्द्रण (High Concentration of Sodium-ion)

होने पर उनका अपहरण करने के लिए केटन-इक्शचेंज रेजिन (Cation-exchange resins) तथा क्लोराइड अयनों का अत्यधिक संकेन्द्रण होने पर उनके अपहरण के लिए अनियन इक्सचेंज रेजिन्स (anion-exchange resins) का व्यवहार किया जाता है। जब सर्वांगशोफ (Oedema) की अवस्था में शरीरगत धातुओं में सोडियम क्लोराइड का संचय अत्यधिक होने लगता है, तो शरीर से उसका अपहरण करने के लिए केटन-एक्सचेंज रेजिंस का व्यवहार किया जाता है। एतदर्थ कार्बो-रेजिन बहुत उपयुक्त होता है। यह आहारगत सोडियम्-अयनों के साथ संयुक्त हो जाता है, जिससे उनका शोषण नहीं होने पाता और मल के साथ बाहर उत्सर्गित हो जाते हैं। मूत्रल औषधियों के साथ इनका व्यवहार करने से इनकी उक्त क्रिया और भी तीव्रतर होती है। किन्तु ऐसी अवस्था में शरीरगत धातुओं में सोडियम् क्लोराइड का अत्यकि दारिद्रय होने पर क्षुधानाश, उत्क्लेश (Nausea), वमन, तथा आमाशयिक क्षोम आदि अनेक उपद्रप हो सकते हैं, अतएव इनका प्रयोग करते समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिए। **मात्रा**—प्रारम्भिक मात्रा (Initial dose) १६ ग्राम (या ४ ड्राम) की होती है। ऐसी ३ मात्रायें १ दिन में दी जाती हैं। इसको जल में मिलाकर (Suspended in water) लिया जाता है। यदि औषधि एक ही मात्रा में देनी हो तो अधिकतम मात्रा २४ ग्राम (६ ड्राम) से अधिक नहीं होनी चाहिए।

एसिटेजोले-माइड

(Acetazoleamide)

पर्याय—डायमॉक्स (Diamox)।

वर्णन—यद्यपि यह भी सल्फा वर्ग का ही एक यौगिक है, जिसका वर्णन पृथक परिच्छेद में किया जायगा, तथापि रासायनिक संघटन एवं क्रिया की दृष्टि से इसमें अपनी विशेषता रखने के कारण यहीं कर दिया गया है। रासायनिक दृष्टि से यह 2-acetylamino-1, 3, 4 thiadiazole-5-Sulphonamide होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

डायमाक्स भी एक मूत्रल औषधि है। किन्तु इसकी क्रियासरणी अन्य मूत्रल औषधियों से भिन्न है। यह मूत्रनलिकाओं (Renal tubules) में कार्बोनिक अन्हाइड्रेज (Carbonic anhydrase) नामक किण्व (Enzyme) की क्रिया का अवरोध करता है, जिससे हाइड्रोजन एवं बाइ-कार्बोनेट अयनों की उत्पत्ति में विकृति होकर मूत्र की क्रिया अत्यन्त आम्लिक (Acidification of urine) होकर मूत्रजनन में सहायक होती है। इसके द्वारा शरीर से सोडियम् का तो अपहरण होता है, किन्तु क्लोराइड का नहीं होता।

ऐसे सर्वांगशोफ में जिसमें धातुओं में सोडियम् क्लोराइड का संचय अधिक होता है (Odema with Salt retention) तथा रक्ताधिक्यजन्य हृद्भेद (Congestive heart failure) में डायमॉक्स एक उत्तम औषधि है। एतदर्थ इसका सेवन मुखद्वारा (Orally) तथा अन्य मार्गोंद्वारा (Parenterally) भी किया जाता है। २५० ग्राम की मात्रा का सेवन २ घंटे में रक्त में पर्याप्त संकेन्द्रण कर देती है, जिससे औषधि का प्रभाव पर्याप्त मात्रा में लक्षित होने लगता है, और यह ६ घंटे तक रहता है। उग्रावस्था के अतिरिक्त ऐसी

अवस्थाओं में जब शोथ होने की आशंका हो इसका प्रयोग अनागत व्याधिप्रतिषेध के लिए (Prophylactic) भी किया जा सकता है।

डायमॉक्स का प्रयोग पारद के मूत्रलयौगिकों के साथ करने से बहुत अच्छा परिणाम मिलता है। एतदर्थ बारी-बारी से एकदिन इसको और एकदिन पारद के यौगिक को देते हैं।

डायमॉक्स के साथ अमोनियम् क्लोराइड का सेवन नहीं करना चाहिए, क्योंकि इससे डायमॉक्स की मूत्रल क्रिया अवरुद्ध हो जाती है।

उपद्रव (Untoward effects)—यों तो डायमाक्स में विषाक्त प्रभाव (Toxicity) बहुत कम होती है। किन्तु असावधानीपूर्वक तथा अधिक समय तक इसके सेवन से शरीर से सोडियम् एवं पोटासियम् का अत्यधिक अपहरण होने के कारण अनेक कुपरिणाम उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसी अवस्था में औषधि का सेवन बन्द कर देने से ये लक्षण दूर हो जाते हैं।

५—वानस्पतिक मूत्रल-औषधियाँ (Vegetable Diuretics)।

जुनिपेरस् (Juniperus), I. P. C.

ज्युनिपर (हपुषा)

Family : Pinaceae (सरल-कुल)

चिकित्सा-व्यवहार की दृष्टि से जुनिपर या हपुषा की २ प्रजातियाँ (Species) विशेष महत्व की हैं :—

(१) जुनिपेरस् मेक्रोपोडा Juniperus macropoda Boiss तथा (२) जुनिपेरस कम्युनिस् Juniperus communis Linn.। चिकित्सा में प्रायः इनके फल (बेरी) तथा उनसे प्राप्त होने वाले उत्पत् तैल (ऑयल ऑव जुनिपर) तथा उनसे बनने वाले योगों का व्यवहार होता है।

नाम-फल—हपुषा, हवुषा—सं०; हाऊबेर—हिं०; अवहल—पं०; हब्बुल् अरअर—अं०; झोरा (Jhora)—कुमायूँ; जुनिपराइ फ्रक्टस Juniperi-fructus, बक्की गालबुली जुनिपराइ Baccae Galbuli Juniperi—ले०; जुनिपर बेरीज़ Juniper Berries—अं०।

तैल—ओलियम् जुनिपराइ Oleum Juniperi (Ol. Junip.), I. P. L.-ले०; ऑयल ऑव जुनिपर Oil of Juniper—अं०; हपुषा का तेल।

वक्तव्य—जुनिपर का जातीय नाम "जुनिपेरस Juniperus" व्युत्पन्न है, केल्टिक (Celtic) भाषा से जिसका अर्थ "खुरदरा Rough" होता है। इसकी पत्तियाँ सूच्याकार (Subulate) एवं खुरदरी होती हैं। प्रजातिक नाम 'कम्युनिस् Communis' लेटिन भाषा का शब्द है और अर्थ होता है "सर्वसाधारण Ordinary Kind"। दूसरी प्रजाति का नाम "मेक्रोपोडा Macropoda" उसके फलों की आकृति का द्योतक है, जो कम्युनिस की अपेक्षा बड़े होते हैं। पश्चिमी हिमालय प्रदेश में जुनिपर की कई प्रजातियाँ (Species) पाई जाती हैं और कहीं-कहीं स्थानिक लोगों में इसके औषधीय व्यवहार का प्रचलन भी था, किन्तु भारतीय बाजारों (विशेषतः बम्बई) में प्रायः यह औषधि फारस से आती थी और हब्बुल् अरअर के नाम से उपलब्ध होती थी। यूनानियों तथा उसके पश्चात् अरबों को इस औषधि का ज्ञान प्रचीन

काल से था, ऐसा ऐतिहासिक पर्यालोचन से प्रतीत होता है। उत्तरी भारत के बाजारों में यह हाऊबेर के नाम से उपलब्ध होता है।

आयुर्वेदीय निघण्टुओं में भी हवुषा या हपुषा नाम से इसका उल्लेख मिलता है, और इसके गुण-कर्मादि का भी वर्णन निघण्टुकारों ने किया है। भाव-प्रकाशकार ने तो फलों के * आकार के आधार पर इसके २ भेदों का भी उल्लेख किया है, जो उपर्युक्त दोनों भेदों के लिए लागू हो सकता है।
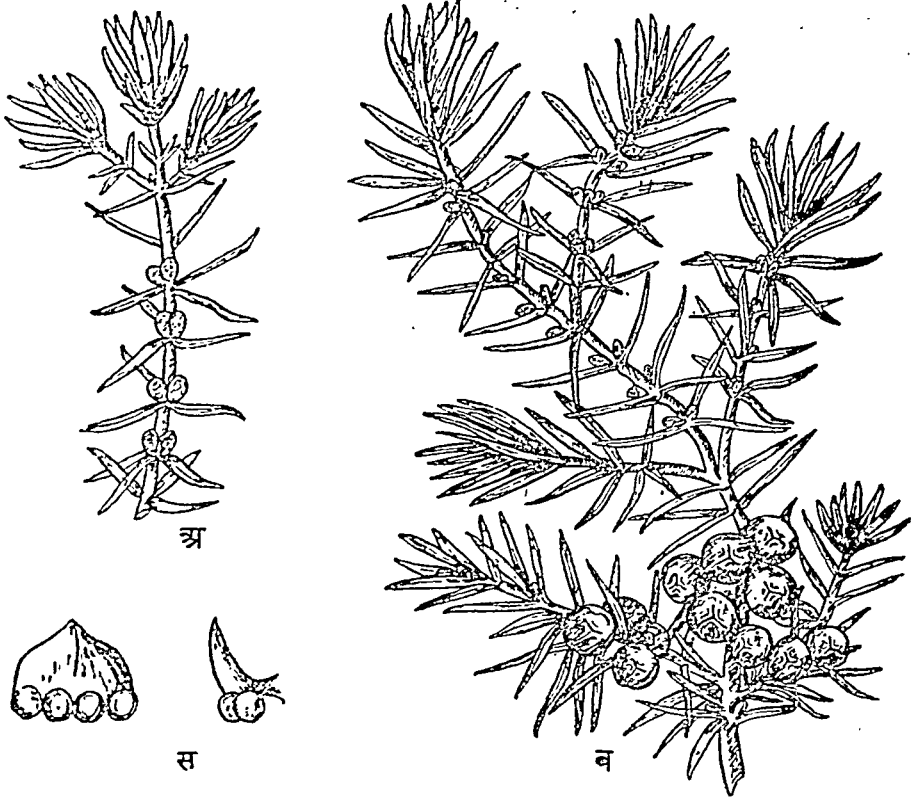
चित्र नं० ३१

उत्पत्ति-साधन—दोनों ही प्रकार के हपुषा (जुनिपर) के वृत्त भारतवर्ष में मध्य हिमालय एवं पश्चिम हिमालय प्रदेशों (नेपाल से पश्चिम-काश्मीर-बिलोचिस्तान-अफगानिस्तान) में १२,०००-

---

* अथ हवुषा द्वयम्; तन्मध्ये प्रथमं फलं मत्स्यसदृशं विस्रगंधं द्वितीयमश्वत्थफलसदृशं। मत्स्यगन्धम्'

तयोर्नामानि गुणाँश्चाह—

हवुषा वपुषा विस्रा पराऽश्वत्थफला मता।
मत्स्यगंधा प्लीहहन्त्री विषघ्नी ध्वांक्षनाशिनी ॥११०॥
हवुषा दीपनी तिक्ता मृदूष्णा तुवरा गुरुः।
पित्तोदरसमीरार्शोग्रहणीगुल्मशूलहृत् ।
पराऽप्येतद् गुणा प्रोक्ता रूपभेदो द्वयोरपि ॥१११॥
(भा० प्र० हरीतक्यादि वर्ग २)

१४,००० फुट की ऊँचाई पर प्रचुरता से पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त, फारस, अरब, यूरप तथा उत्तरी अमरीका में भी पर्याप्त पाया जाता है।

वर्णन—जुनिपेरस मेक्रोपोडा के मध्यम कद के अथवा छोटे कद के वृक्ष होते हैं। छोटे पौधों एवं बड़े पौधों की निचली शाखाओं पर पत्तियाँ सूच्याकार (Subulate) तथा ऊपर की शाखाओं पर शल्क-सदृश (Scale-like) होती है। जुनिपेरस् कम्युनिस् की घनी झाड़ियाँ होती हैं, जिनमें शाखायें प्रायः अधोमुख एवं भूमिप्रसरी स्वभाव की (Procumbent) होती हैं। पत्तियाँ ५-१२ मिलिमिटर लम्बी रेखाकार (Linear) नुकीले अग्रों वाली तथा ३-३ के चक्र (Whirls) में निकली होती हैं। यह पत्तियाँ पृष्ठतलपर उन्नतोदर (Convex), तथा ऊर्ध्वतल पर खातोदर (Concave), चिकनी एवं नीली आभा के साथ सफेद रंग की (Bluish white) होती हैं।

चित्र—३१ क जुनिपर कम्युनिस एवं जुनिपर मेक्रोपोडा की फलयुक्त शाखा।

फल—हपुषा के फल बेर की भाँति तथा नीलाभश्यामवर्ण की (Blue black) होती हैं। जुनिपेरस के फल कम्युनिस की अपेक्षा बड़े होते हैं। फलों पर चिपचिप राल-सा लगा होता है। मेक्रोपोडा में २-५ बीज एवं कम्युनिस में १-३ बीज होते हैं। फल शल्कपत्रों (Scales) से आवृत होता जिसके अन्तमध्य में दरारें दृष्टिगोचर होती हैं। मात्रा—२० रत्ती (६० ग्रेन या ४ ग्राम)।

तैल (Oil of juniper)—यह एक उड़नशील तैल (Volatile oil) होता है जो पक्व हपुषा फलों (Ripe berries of juniper) को जलमें भिगोकर परिस्रवण (Distillatin) द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह एक रंगहीन द्रव के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि पाई जाती है। स्वाद में यह उष्ण (Warm), सुगन्धित एवं तिक्त होता है। यह तैल अल्कोहल (६५ %), क्लोरोफॉर्म, बेंजीन (Benzene), कार्बन-डाईसल्फाइड एवं एमाइल अल्कोहल (Amyl alcohol) में मिल जाता (विलीन होता) है। जुनिपर के तेल को अच्छी तरह डाटबन्द पात्र में ठण्ढी जगह में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए। मात्रा—½ से ३ मिनम् (बूंद) या ०'०३ से ०'२ मि० लि०।

रसायनिक संघटन—(१) पाइनीन (Pinene : $C_{10}H_{16}$); कम्फीन (Camphen : $C_{10}H_{16}$), तथा टर्पिनिओल (Terpineol) एवं केडिनीन (Cadinene $C_{15}H_{24}$) । (२) जुनिपर कम्फर (Juniper Camphor) जो क्रिस्टलाइन स्वरूप का होता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

जुनिपर ऑयल के सामान्य गुण-कर्म भी तारपीन के तेल की ही भाँति समझने चाहिए । किन्तु इसकी विशेष क्रिया वृक्कों एवं मूत्र पर होती है । जुनिपर वृक्कों पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे मूत्रल (Diuretic) कर्म होता है । रक्त में शोषित होने के बाद इसका निस्सरण मूत्र के साथ होता है, जिससे पेशाब में बनफशई सुगन्धि पाई जाती है । चिकित्सा में इसका उपयोग मुख्यतः हृदय एवं यकृत्-विकारजन्य जलोदर तथा शोथ (Cardiac and hepatic dropsy) में किया जाता है । प्रायः इसको मूत्रल लवणों के साथ प्रयुक्त करते हैं । उग्र वृक्क विकृति में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए ।

योग :—

(१) एक्स्ट्रॅक्टम् जुनिपराइ लिक्विडम् Extractum Juniperi Liquidum (Ext. Junip. Liq.), I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव जुनिपर Liquid Extract of Juniper—अं०; हपुषा का प्रवाही घनसत्व । मात्रा—३० से ६० मिनम् (बूंद) या २ से ४ मि० लि० ।

(२) स्पिरिटस् जुनिपराइ Spiritus Juniperi—ले०; स्प्रिट ऑव जुनिपर Spirit of Juniper—अं० । मात्रा—५ से २० मिनम् (बूंद) या ०·३ से १·२ मि० लि० ।

(नॉट ऑफिशल)

स्कोपेरियम् (Scoparium)

Family : Leguminosae-Papilionaceae

(शिम्बी-कुल)

पर्याय—ब्रूम टॉप्स Broom Tops; कॅक्युमिना स्कोपेरियाइ Cacumina Scoparii; सेरोथेम्नाइ हर्बा Sarothamni Herba ।

प्राप्ति-साधन—यह सिटिसस् स्कोपेरियस् (Cytisus Scoparius (Linn.) Link.) नामक गुल्म जातीय पौधे के ताजे सुखाये हुए शाखाग्र (Tops) होते हैं ।

वक्तव्य—'स्कोपेरियस् Scoparius' शब्द व्युत्पन्न है "स्कोपी Scopae" से जिसका अर्थ होता है 'छोटी-छोटी शाखें या झाड़ू' । चूंकि इस वनस्पति की छोटी-छोटी शाखायें झाड़ू की तरह मालूम होती हैं । अतएव ऐसा नामकरण किया गया है ।

उत्पत्ति-स्थान—यूरोप तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका (U.S.A.) ।

वर्णन—इसके ३ से ६-७ फुट ऊँचे बहुवार्षिक गुल्म (Perennial Shrub) होते हैं । नीचे का तना कड़ा एवं काष्ठीय (Woody) होता है, किन्तु ऊपर का हिस्सा हरा एवं मसृण या चिकना (Glabrous) होता है । तने के ऊपरी हिस्से में लम्बाई के रूख में ५ धारियाँ (Five longitudinal ridges) होती हैं । नीचे की पत्तियाँ सनाल अर्थात् डंठलयुक्त (Stalked) होती हैं

तथा इनमें ३ अभिलट्वाकार (Ob-ovate) पत्रक (Leaflets) होते हैं। किन्तु ऊपरी भाग की पत्तियाँ प्राय: विनाल अर्थात् बिना डंठल की (Sessile) होती हैं और एक-एक पत्रक वाली होती हैं। पुष्प शिम्बी-कुल के अपराजितादि-उपकुल की भांति (Papilionaceous) होते हैं। फल शिम्बी-कुल के स्वभाव की भांति फली (Pod) के रूप में लगते हैं, जो पकने पर काले रंग के हो जाते हैं। यह फलियाँ १-२ इंच लम्बी होती हैं।
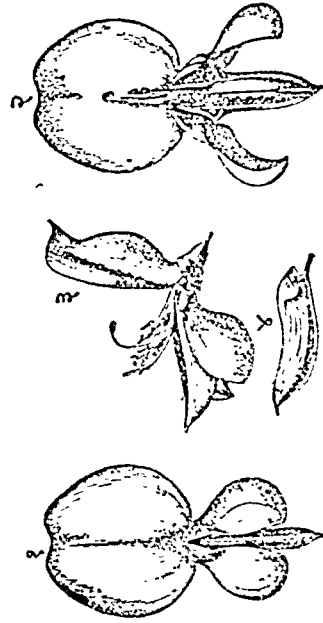
चित्र ३२—सिटिसस् स्कोपेरियस् की शाखा।

रासायनिक संघटन—इसका सबसे महत्व का घटक स्पारटीन (Sparteine) नामक अल्कलायड होता है, जो एक उड़नशील द्रव (Volatile liquid) होता है। इसके अतिरिक्त इसमें (२) स्कोपेरिन (Scoparine) नामक पीतवर्ण का मणिभीय (Crystalline क्रिस्टेलाइन) तत्व तथा (३-४) जेनिस्टीन (Genisteine) एवं सेरोथेम्नीन (Sarothamnine) नामक अलकलायड्स पाये जाते हैं। इनमें जेनिस्टीन क्रिस्टेलाइन एवं उड़नशील एवं सेरोथेम्नीन अनुत्पत (Non-volatile) स्वरूप का होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—यह एक उत्तम मूत्रल औषधि है। इसका प्रयोग प्रायः अन्य मूत्रल औषधियों के साथ सर्वांगशोफ (Dropsy) की अवस्थाओं में बहुत उपयोगी होता है। हृदय-विकार के कारण सूजन होने पर तथा अन्तस्तरीय-वृक्कशोफ (Interstitial Nephritis) में इसका प्रयोग विशेष उपकारी होता है। एतदर्थ निम्न योग विशेष गुणकारी है— पोटासियम् टारट्रेट २० ग्रेन, स्प्रिट जुनिपर ३० बूंद, इन्फ्युजम् स्कोपेराइ रिसेन्स (स्कोपेरियम् का अभिनवफाण्ट) १ औंस। सबको मिलाकर एक खुराक बनाकर मरीज को पिला दें। किन्तु उपर्युक्त योग का प्रयोग उग्र वृक्क-रोगों (Acute Kidney diseases) में नहीं करना चाहिए।

नॉन्-ऑफिशल योग।

१—इन्फ्युजम् स्कोपेराइ रिसेन्स Infusum Scoparii Recens B. P. C.—ले०; स्कोपेरियम् का अभिनवफाण्ट। मात्रा—३० से ६० मिलिलिटर या १ से २ औंस (अर्थात् ½ से १ छटांक)।

पुनर्नवा Punarnava (Punarnav.) I. P.

Family : Nyctaginaceae (पुनर्नवा-कुल)

प्राप्ति-साधन—इन्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) के अनुसार पुनर्नवा बोर्हविया डिफ्यूजा Boerhaavia diffusa Linn. नामक क्षुद्र वनस्पति का ताजा या सुखाया हुआ पंचांग (Fresh or dried plant) होता है।

किन्तु इन्डियन फॉर्माकोपिअल लिस्ट (I. P. L.) तथा इन्डियन फॉर्माकोपिअल कोडेक्स (I. P. C.) के अनुसार पुनर्नवा के नाम से निम्न वनस्पतियों के ग्रहण करने का निर्देश है :—

(१) बोर्हविया रिपेन्स Boerhaavia repens Linn. (पुनर्नवा-प्रजाति) तथा (२) ट्राएन्थेमा पोर्टुलेकेस्ट्रम् Trianthema Portulacastrum Linn. (Family : Ficoideae) (वर्षाभू-कुल)।

नाम—रक्तपुनर्नवा, शोथघ्नी—सं०; विषखपरा, गदहपूर्ना, पथरी, ठीकरी—हिं०; पुनर्नवा, गदहपूरना—बं०; इन्दकूकी—अं०; रातीसाटोडी—गु०; स्प्रेडिंग हॉग्वीड् (Spreading Hog-weed)—अं०।

वक्तव्य—पुनर्नवा का उल्लेख चरक, सुश्रुत आदि प्राचीन संहिताओं एवं सभी निघण्टुओं में मिलता है। भारतीय चिकित्सक इसका व्यवहार प्रचुरता से करते हैं। इसी कारण अब इसका ग्रहण इन्डियन फार्माकोपिआ में भी कर लिया है। किन्तु यहाँ उल्लेखनीय बात यह है, कि इन्डियन फॉर्माकोपिआ एवं इन्डियन फॉर्माकोपिअल लिस्ट में पुनर्नवा के नाम से जिन दोनों वनस्पतिओं का उल्लेख किया गया है, इन दोनों को ही पुनर्नवा नाम देना भ्रमपूर्वक है। ये दोनों ही भिन्न एवं भिन्न २ वानस्पतिक कुलों (Families) की वनस्पतियाँ हैं। आयुर्वेद में भी इसका पृथक नामों से उल्लेख है। इनमें बोर्हविआ की प्रजातिओं को पुनर्नवा तथा ट्राएन्थेमा प्रजातिओं के लिए 'वर्षाभू' शब्द आये हैं। चूंकि दोनों के पौधे स्थूलरूप से देखने में एक से मालूम होते हैं, तथा गुण-कर्म में भी बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं अतएव इनको पुनर्नवा नाम दे दिया गया प्रतीत होता है। दोनों में ही श्वेत एवं रक्त पुष्प-भेद पाये जाते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—दोनों वनस्पतियाँ समस्त भारतवर्ष में प्रचुरता से पाई जाती हैं। ऊसर-भूमि में अथवा सड़कों के किनारे इसके स्वयंजात पौधे घास की भाँति उगे होते हैं।

वर्णन—Boerhaavia diffusa L.—इसके प्रायः न्यूनाधिक मांसल और परिप्रसरी क्षुप होते हैं। काण्ड (Stem) प्रायः ललाई लिए हुए हरितामवर्ण (Greenish purple) का चिमड़ा (Stiff) तथा लचीला (Slender), लम्बगोल (Cylindrical) होता है। पर्व ग्रन्थिल (Thick at the nodes) तथा शाखायें द्विधा-विभक्त (Divaricately branched) होती हैं। मुख्य काण्ड से शाखायें १-१ गज तक लम्बी निकलती हैं। पत्तियाँ चौड़ी, लट्वाकार, अधस्तल पर श्वेताभ, आमने-सामने की पत्तियाँ छोटी-बड़ी, सबसे बड़ी पत्तियाँ २ इंच तक लम्बी १½ इंच तक चौड़ी होती हैं। पुष्प छोटे-छोटे, गुलाबी रंग के लगभग अवृन्त (Nearly sessle) होते हैं, जो ४-१० की संख्या में छत्रक के आकार के गुच्छकों (Umbels) में शाखाओं पर स्थित होते हैं। इसकी जड़ें बहुत कन्दाकार नहीं होतीं।

(२) Boerhaavia repens Linn. स्थूलतः इसके पौधे भी B. diffusa L. की ही भाँति होते हैं। इसकी जड़ें इसकी अपेक्षा बड़ी, मोटी तथा तर्क्वाकार (Fusiform) होती हैं।

(३) Trianthema portulacastrum Linn. I. P. इसके भी न्यूनाधिक मांसल (Succulent), प्रसरी (Prostrate) अर्थात् भूमि पर फैलने वाले लतास्वरूप के शाकजातीय पौधे (Herb) होते हैं। वर्षाऋतु में यह वनस्पति उगती एवं बढ़ती है और जाड़ों में जाकर सूख जाती है। इसी से इसको 'वर्षाभू' कहा जाता है। बाह्यतः देखने में इसके पौधे भी पुनर्नवा की भाँति लगते हैं। किन्तु पुष्प अकेले (Solitary) तथा अवृन्त (Sessile) होते हैं, जो शाखाओं के कोणों (Axillary) में निकलते हैं। इण्डियन फॉर्माकोपिआ के अनुसार इसके श्वेत पुष्पवाले भेद (White variety : T. monogyna L.) का ग्रहण करना चाहिए।

रासायनिक संघटन—पुनर्नवा तथा वर्षाभू दोनों में ही (१) पुनर्नवीन (Punarnavine) नामक अल्कलायड् पाया जाता है (०·०१%), जो इनका सक्रिय तत्व होता है। इसके अतिरिक्त बोर्हेविआ में ६½ प्रतिशत पोटासियम् नाइट्रेट (Potassium nitrate); सल्फेट, क्लोराइड तथा स्थिर तेल (Fatty oil) तथा ट्राएन्थेमा (वर्षाभू) में एक दूसरा अल्कलायड् भी पाया जाता है, जिसका रासायनिक सूत्र $C_{32}H_{41}O_{6}N_{2}$. होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अपने **मूत्रल (Diuretic)** कर्म के लिए पुनर्नवा प्राचीन काल से प्रसिद्ध है, और इस रूप में इसका प्रयोग बहुत दिनों से होता आ रहा है। पुनर्नवा एवं ट्राएन्थेमा दोनों ही मूत्रल के रूप में बराबर हैं। इनकी यह क्रिया विशेषतः इनमें पाये जाने वाले पुनर्नवीन नामक अल्कलायड तथा **पोटासियम् नाइट्रेट** के कारण होती है। पुनर्नवीन की क्रिया प्रत्यक्ष वृक्कों **(Kidneys)** पर होती है, जिससे मूत्रनलिकाओं से द्रव का पुनः शोषण **(Reabsorption of fluid)** नहीं होने पाता। परिणामतः मूत्रगत द्रवांश की मात्रा बढ़ती है। मूत्रल होने के साथ-साथ पुनर्नवा शोथघ्न भी होता है। मूत्रल होने के कारण शरीर से द्रवापकर्षण **(Dehydration)** के लिए जलोदर **(Ascites)** में इसका बहुत प्रयोग उपयोगी होता है। यकृद्दाल्युदर **(Cirrhosis of the liver)** जन्य अथवा कालाजार आदि व्याधियों के

उपद्रव स्वरूप जलोदर तथा उदर्याकला (Peritoneum) की विकृति के कारण उत्पन्न जलोदर में यह विशेष उपयोगी होता है। हृद्विकारजन्य जलोदर (Cardiac dropsy) तथा चिरकालीन वृक्कशोथ (Chronic nephritis) में अकेले पुनर्नवा से लाभ नहीं होता। ऐसी अवस्था में इसको डिजिटेलिस आदि औषधियों के साथ दिया जाता है। पाश्चात्य वैद्यक में पुनर्नवा का प्रयोग—लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट के रूप में मिश्रणों (Mixtures) में मिलाकर किया जाता है। आयुर्वेद में जलोदर के चिकित्साक्रम में रोगी को जल बिल्कुल नहीं दिया जाता। रोगी को प्रायः दूध पर रखा जाता है। ऐसी अवस्था में **अर्कपुनर्नवा** का प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है; क्योंकि एक तो यह जल का भी काम देता है, और साथ ही औषधीय कार्य भी करता है। जलोदर के अतिरिक्त पुनर्नवा का प्रयोग अकेले या अन्य औषधियों के साथ **मूत्रकृच्छ्** (Dysuria), पथरी (अश्मरी) रोग (Calculus) में तथा सिकतामेह में भी लाभप्रद होता है।

मूत्रल होने के अतिरिक्त पुनर्नवा **स्रंसन** (Laxative) तथा अधिक मात्रा (६ ग्राम या ६ माशा) में वामक (Emetic) होता है। पाण्डु (Anaemia), कामला (Jaundice) तथा पाण्डुजन्य सर्वांगशोथ में पुनर्नवा अथवा लौह या मण्डूर भस्म के साथ बनाये हुए इसके योग बहुत लाभ करते हैं। एतदर्थ **पुनर्नवामण्डूर** आयुर्वेद का एक प्रसिद्ध योग है।

स्थानिक शोथों के विलयन के लिए पुनर्नवा की जड़ का प्रयोग अन्य शोथघ्न द्रव्यों के साथ लेप के रूप में भी किया जाता है।

हकीम लोग पुनर्नवा (विषखपरा) के बीजों को वाजीकर (Aphrodisiac) माजूनों में डालते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रैक्टम् पुनर्नवी लिक्विडम् Extractum Punarnavae Liquidum (Ext. Punar. Liq.)—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव पुनर्नवा Liquid Extract of Punarnava—अं०; पुनर्नवा का प्रवाही घनसत्व—सं०, हिं०। मात्रा—३० से १२० बूंद या मिनम् (२ से ८ मि० लि०) या ½ से २ ड्राम।

२—एक्स्ट्रैक्टम् ट्राएन्थेमा लिक्विडम् Exatractum Trianthema Liquidum (Ext. Trianth. Liq.), I. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव ट्राएन्थेमा Liquid Extract of Trianthema—अं०; वर्षाभू या पथरी का प्रवाही घनसत्व—सं०, हिं०। मात्रा—३० से १२० बूंद (२ से ८ मि० लि०) या ½ से २ ड्राम।

पुनर्नवाघटित मूत्रल मिक्स्चर :—

(१) पोटासियम् साइट्रेट	१५ ग्रेन
टिंक्चर डिजिटेलिस	१० मिनम् (बूंद)
एक्स्ट्रैक्ट पुनर्नवा लिक्विड	६० बूंद (१ ड्राम)
सिरप ऑरेन्शाइ	६० बूंद (१ ड्राम)

इन्फ्युजम् स्कोपेरियम् आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए

हृद्विकारजन्य जलोदर (Cardiac dropsy) में विशेष उपयोगी है।

(२) पोटासियम् एसिटेट १५ ग्रेन
लाइकर अमोनिया एसिटेट डिल० १२० बूंद (२ ड्राम)
एक्स्ट्रैक्ट पुनर्नवा लिक्विड १ ड्राम
सिरप लेमन १ ड्राम

इन्फ्युजन स्कोपेरियम् आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए वृक्कशोथ में विशेष उपयोगी है।

पुनर्नवाघटित आयुर्वेदीय योग :—

(१) पुनर्नवादिमण्डूर (भै० र०)—४ से ८ रत्ती की मात्रा में त्रिफलाचूर्ण या पुनर्नवा (पथरी) की जड़ के रस एवं मधु से।

(२) पुनर्नवाष्टक क्वाथ—पुनर्नवा की जड़, नीम की छाल, पटोलपत्र (Leaves of Trichosanthes dioica), सोंठ (Dried Zinger), कुटकी (Picrorhiza kurroa), गुर्च या गिलोय, (Tinospora cordifolia), दारुहल्दी (Dried wood of Berberis aristata) तथा हरड़ (Chebulic myrobalan) इनको बराबर-बराबर मात्रा में लें, जिससे सब मिलकर २ तो० हों। ३२ तोला जल में इसका क्वाथ (Decoction) तैयार करें। जब ८ तो० शेष रह जाय तो छानकर रोगी को पीने को देना चाहिए। सर्वांगशोथ (Anasarca), श्वास, तथा पाण्डु (Anaemia) में उपयोगी है।

(३) पुनर्नवासव (भै० र०) यह शोथ (General dropsy) यकृद् रोग तथा उदररोग में उपयोगी है। मात्रा—१ से २ तो० बराबर जल से भोजन के बाद।

(४) पुनर्नवाद्यरिष्ट (भै० र०)—हृद्विकार (Cardiac dropsy), पाण्डु, कामला (Jaundice), हलीमक (Chlorosis) श्वास, कास में उपयोगी है। मात्रा एवं सेवन-विधि पुनर्नवासव की भांति।

(५) पुनर्नवादि लेह (भै० र०) Electuary)—मात्रा—३ माशा से ६ माशा तक। हृदयविकारजन्य शोथ में।

(६) पुनर्नवादि तैल (भै० र०)—पाण्डु, हलीमक, फुफ्फुसावरणशोथ (Pleurisy) में इसके मालिश से बहुत लाभ होता है।

(७) पुनर्नवाद्य घृत (भै० र०)—मात्रा—६ माशा।

ट्रिबुलस् फ्रक्टस् (Tribulus Fructus) I. P. C.
(गोखरू छोटा) Gokhru

Family : Zygophyllaceae. (गोक्षुर-कुल)

प्राप्ति-साधन—गोखरू ट्रिबुलस् टेरेस्ट्रिस् Tribulus terrestris Linn. नामक क्षुद्र वनस्पति के पक्व फल होते हैं।

नाम—गोक्षुर, लघुगोक्षुर, त्रिकंटक, चणपत्रक—सं०; गोखरू, गुलखुर, छोटा गोखरू—हिं०; खारेखसक, खारेसेहगोशा—फा०; हसक—अ०; गोखरि—बं०; लहान गोखुर—म०; नानां गोखरू—गु०; स्मॉल कॅल्टोप्स Small Caltops—अं०।

वक्तव्य—भारतीय बाजारों में (१) छोटा तथा (२) बड़ा भेद से २ प्रकार का गोखरू मिलता है। स्वरूपतः दोनों के फलों की आकृति कुछ-कुछ मिलती है। बड़े के फल छोटे

की अपेक्षा बड़े होते हैं, अतः इसको बड़ा गोखरू कहते हैं। बड़े गोखरू को लेटिन में पिडेलियम् म्युरेक्स Pedalium murex Linn. (Family : Pedeliaceāe) कहते हैं।

ट्रिबुलस की एक दूसरी प्रजाति (Species) ट्रिबुलस अलेटा Tribulus alata होती है, जो पश्चिम भारतवर्ष विशेषतः पंजाब, सिंध, बलूचिस्तान, फारस, अरब तथा सीरिया एवं मिश्र में पाई जाती है। पंजाब एवं सिन्ध में इसे भी बड़ा गोखरू के नाम से पुकारते हैं। नाम—गोखुरे कलाँ, बाखरा—हिं०; निंढोत्रिकुंड, लटक—सिन्ध; हसक—पंजाब।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष में ११,००० फुट की ऊँचाई तक इसके पौधे पाये जाते हैं।

वर्णन—गोखरू के पौधे ऊसर भूमि में तथा सड़कों के किनारे स्वयंजात रूपसे पाये जाते हैं। भूमि पर फैले हुए शाक जातीय पौधे (Herb) होते हैं। पत्तियाँ चने की पत्तियों की तरह होती हैं, जिससे दूर से देखने में पौधा चने के पौधे की भांति लगता है। फल (Friut)—गोलाकार (Globose) ५ कोष्ठों का (Woody Cocci) होता है। प्रत्येक कोष्ठ पर २ बड़े तथा २ छोटे एवं कोमल कण्टक (Spines) होते हैं, जो फल के ऊपरी सिरे पर गोलाई में एक पंक्ति में स्थित होते हैं। प्रत्येक कोष्ठ में छोटे-छोटे अनेक बीज होते हैं।

बड़े गोखरू (Pedalium murex) के फल आकार में छोटे गोखरू की तरह किन्तु उसकी अपेक्षा बहुत बड़े होते हैं। इस पर ऊपरी सिरे पर चारों कोनों पर एक-एक कांटे पाये जाते हैं। फल अधो लम्बी (Pendulus) होता है।

रासायनिक संघटन—गोखरू के फल में ०.००१ प्रतिशत (१) एक अल्कलॉयड्, (२) ३-५ प्रतिशत तक एक स्थिर तैल तथा अल्पमात्रा में एक उत्पत् तैल, रेजिन पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त (३) इसमें काफी मात्रा में नाइट्रेट्स पाये जाते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सामान्यतया चिकित्सा में गोखरू के फलों का ही व्यवहार किया जाता है। किन्तु देशी चिकित्सा में कभी-कभी इसके पंचाङ्ग का भी ग्रहण करते हैं। गोखरू शीतल, मूत्रल (Diuretic), बल्य (पौष्टिक) तथा वाजीकरण (Aphrodisiac) होता है। अतएव मूत्रकृच्छ्रता (Dysuria) अथवा जब पेशाब तकलीफ के साथ तथा थोड़ा-थोड़ा (Painful micturition) होता है, एवं पथरी रोग (Calculus affections) में इसका व्यवहार उपयोगी है। एतदर्थ लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट अथवा अर्क गोखुरु तथा इसके फाण्ट (Infusion) या क्वाथ का व्यवहार किया जा सकता है। वाजीकरण होने के कारण नपुंसकता-रोग (Impotence) में इसके चूर्ण का अन्य उपयुक्त औषधियों के साथ व्यवहार देशी चिकित्सक करते हैं। मूत्र-संस्थान पर गोखरू की क्रिया बुकु की भांति होती है। कहीं-कहीं इसका प्रयोग पूयमेह या सुजाक (Gonorrhoea) में भी करते हैं। आयुर्वेद की यह एक प्रसिद्ध औषधि है और लघु पंचमूल का एक उपादान है।

(योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् गोखरू लिक्विडम् Extractum Gokhru Liquidum (Ext. Gokhru Liq.) I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव गोखरू Liquid Extract of Gokharu—

अं०; गोखरू का प्रवाही घनसत्व—हि ०। पर्याय—एक्स्ट्रैक्टम् ट्रिबुलस लिक्विडम् Tribulus Liquidum। मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)

(मूत्र मार्ग पर जीवाणुनाशक-प्रभाव करनेवाली औषधियाँ)

हेक्सामीना (Hexamina) I. P.

(हेक्सामीना : Hexamine)

रासायनिक संकेत : $C_6H_{12}N_4$.

पर्याय—मेथिनामीन Methenamine; हेक्सामेथिलीन टेट्रामीन Hexamethylene tetramine; एमिनोफॉर्म Aminoform; फॉर्मिन Formin; युरोट्रोपीन Urotropin।

प्राप्ति-साधन—हेक्सामीन, अमोनिया तथा फॉर्मेल्डिहाइड को परस्पर मिलाने से प्राप्त होता है। इसमें कम से कम ९९ प्रतिशत $C_6H_{12}N_4$. होता है।

वर्णन—हेक्समीन रंगहीन क्रिस्टलस अथवा सफ़ेद रंग के क्रिस्टेलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गन्ध हीन तथा स्वाद में पहले मधुर किन्तु बाद में तिक्त या तीता (Bitter) होता है। विलेयता—यह जल, अल्कोहल् तथा क्लोरोफॉर्म में घुलनशील होता है। विलयन की प्रतिक्रिया क्षारीय होती है। मात्रा—५ से १५ रत्ती (१० से ३० ग्रेन या ०.६ से २ ग्राम)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

हेक्सामीन एक मूत्रमार्ग-विशोधक (Urinary antiseptic) औषधि है। आँतों से इसका प्रचूषण (Absorption) एवं शोषणोपरान्त शरीर से निस्सरण दोनों ही क्रियायें क्षिप्रतापूर्वक होती हैं। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर औषधि का कुछ अंश आमाशय के पाचक रसों द्वारा विघटित हो जाता है। कई दिन के उपवास के बाद खाली पेट पर औषधि लेने से यह विघटन-क्रिया अपेक्षाकृत कम होती है। निस्सरण के समय मूत्र के सम्पर्क में आने पर यह क्रिया वियोजित होकर फर्मेल्डिहाइड के रूप में परिवर्तित हो जाता है, और मूत्रमार्ग पर इसकी जो जीवाणुनाशक क्रिया होती है, वह प्रायः इसी फॉर्मेल्डिहाइड की उत्पत्ति पर निर्भर करती है। इसके लिए मूत्र की प्रतिक्रिया आम्लिक (Ph 5-6 से कम) होनी आवश्यक है। मूत्रमार्ग में पूयजनक (Pyogenic) एवं पूतिजनक जीवाणुओं (Putrefactive organism) का उपसर्ग होने पर (यथा वस्तिशोथ अर्थात् सिस्टाइटिस एवं पायलाइटिस Pyelitis आदि में) मूत्र दुर्गन्धित हो जाता है तथा उसकी प्रतिक्रिया क्षारीय (Alkaline) हो जाती है। ऐसी स्थिति में जब हेक्सामीन का प्रयोग किया जाता है, तो इसके साथ ऐसी औषधियाँ भी दी जाती हैं, जो मूत्र को आम्लिक बनाने में सहायता करती हैं। एतदर्थ एसिडसोडियम् फास्फेट (२० से ३० ग्रेन) या सोडियम् बेंजोएट (५ से ३० ग्रेन) अथवा अमोनियम् क्लोराइड (५ से २० ग्रेन) दिन में ३ बार देना चाहिए। टायफायड (Typhoid) में हेक्सामीन का प्रयोग बहुत उपयोगी समझा जाता है। इससे एक तो वस्तिप्रदाह (Cystitis) होने की आशंका नहीं रहती, दूसरे यह जीवाणुओं के उपसर्ग को भी रोकता है। मूत्रमार्ग में बी० कोलाई (B. Coli) का उपसर्ग होनेपर हेक्सामीन (युरोट्रोपीन) का प्रयोग विशिष्टरूपेण उपयोगीहोता है। बी० कोलाई द्वारा सामान्यकायिक उपसर्ग (Generalised infection) होने पर यूरोट्रोपीन का शिरा में इन्जेक्शन किया जाता है। गर्भिणी के मूत्रमार्ग में विकारी जीवाणुओं का उपसर्ग होने पर

हेक्सामीन का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि गर्भावस्था में इस प्रकार का उपसर्ग प्रायः बी० कोलाई द्वारा होता है।

चूंकि हेक्सामीन का उत्सर्ग (Excretion) क्षिप्रतापूर्वक होता है, अतएव नियमित अन्तर से दिन में कई बार औषधि देनी पड़ती है, ताकि मूत्रमार्ग में इसका पर्याप्त संकेन्द्रण बना रहे।

(नॉन-आफिशल योग)

१—पिपराजिना (Piperazina)—इसके छोटे-छोटे रंगहीन क्रिस्टल होते हैं, जिनमें पसीजने की प्रवृत्ति होती (Deliquescent) है। यह स्वाद में नमकीन होता है, तथा इसमें एक हल्की गंध होती है। प्रतिक्रिया क्षारीय होती है। जल में घुल जाता है। मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०·३ से १ ग्राम)।

जिन लोगों में यूरिक एसिड की प्रवृत्ति (Uric acid diathesis) होती है, उनमें इसका प्रयोग उपयोगी होता है। इसी प्रकार रक्तवात (गाउट Gout) तथा जिनमें पथरी बनने की प्रवृत्ति (Lithiasis) पाई जाती है, उनमें भी यह उपयोगी है।

२—हेक्सामीन ग्लाइकोकोलेट (Hexamine Glycocholate)। पर्याय—फेलामीन (Felamine)। इसकी टिकिया आती है। यह पित्तविरेचक (Cholagogne) होता तथा पित्तनलिका पर जीवाणुनाशक (Biliary antiseptic) प्रभाव करता है। अतएव प्रसेकजन्य कामला (Catarrhal Jaundice), पित्ताश्मरी (Gall-stone) एवं टायफायड से रोगमुक्त होने के बाद उपद्रव निवारण के लिए इसका व्यवहार किया जाता है। मात्रा—५ ग्रेन या ०·३ ग्राम।

३—फॉर्मेमोल (Formamol)—इसमें जीवाणु-नाशक प्रभाव हेक्जामीन की अपेक्षा अधिक प्रबल होती है तथा मूत्रमार्ग में उसकी भाँति क्षोभक प्रभाव (Irritation) करने की प्रवृत्ति भी नहीं होती। मात्रा—८ से १५ ग्रेन।

४—पाइरिडियम् (Pyridium)। पर्याय—मेलोफन (Malophen)—इसका लाल रंग का चूर्ण होता है, जो जल एवं अल्कोहल आदि में अंशतः विलेय होता है। इसकी १½ ग्रेन की टिकिया आती है, जो दिन में २ बार १-१टिकिया दी जाती है। सूजाक एवं स्टेफिलोकोकल उपसर्ग में विशेष उपयोगी है।

हेक्सिलरिसॉर्सिनॉल

(Hexylresorcinol) B. P. C. & I. P.

पर्याय—केप्रोकॉल (Caprokol)।

वक्तव्य—हेक्सिलरिसॉर्सिनाल का वर्णन पहले कृमिघ्न औषधियों (Anthelmintics) के प्रकरण में किया जा चुका है। इस कार्य के लिए चिकित्सा-व्यवहार में इसका प्रयोग अधिक होता है। यह अंकुशमुखकृमि (Hook-worm), स्फीतकृमि (Tape-worm) एवं सूत्रकृमि (Thread-worm) के लिए विशिष्ट कृमिघ्न औषधि है। इसके अतिरिक्त यह मूत्रमार्ग पर भी जीवाणुनाशक (Urinary disinfectant) प्रभाव करता है। इस कार्य के लिए भी इसका प्रयोग कतिपय मूत्रसंस्थान के रोगों में किया जाता है।

मात्रा—२ से १५ ग्रेन या ०'१२ से १ ग्राम (१ रत्ती से १ माशा तक)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

कृमिघ्न होने के अतिरिक्त हेक्सिरिसॉर्सिनाल मूत्र-मार्ग पर भी जीवाणुनाशक प्रभाव (Urinary disinfectant) करता है। किन्तु बी० कोलाई या अन्य बेसिलरी उपसर्गों की अपेक्षा गोलाणुओं के उपसर्ग (Coccal infection) में यह विशेष उपयोगी होता है। दूसरी विशेषता इसमें यह है कि प्यूरिन वर्ग की औषधियों की भांति इसकी क्रिया पर मूत्र की प्रतिक्रिया (Reaction) का कोई असर नहीं होता। हाँ साथ में सोडियम्-बाई-कार्बोनेट अधिक मात्रा में सेवन किए जाने पर इसकी क्रिया कुछ मन्द पड़ जाती है। हेक्सिरिसॉर्सिनॉल देते समय जल का सेवन यथासम्भव कम करना चाहिए। स्टेफिलोकोकस के उपसर्ग के कारण उत्पन्न बस्ति-प्रदाह (Cystitis) एवं पायलाइटिस (Pyelitis) में हेक्सिरिसॉर्सिनॉल एक परमोपयोगी औषधि है। इसके लिए हेक्सिरिसॉर्सिनॉल का जैतून के तेल में विलयन (सॉल्यूसन) बना लिया (२½ प्रतिशत बल का) जाता है और इनको कैप्स्यूल्स में रखकर, ऐसे २–४ कैप्सस्यूल्स दिन में ३ बार भोजनोत्तर दिया जाता है। प्रत्येक कैप्स्यूल में लगभग २ ग्रेन औषधि होती है। अथवा यदि हेक्सिरिसॉर्सिनाल का जैतून के तेल में बनाया हुआ विलयन देना हो तो उसकी दैनिक मात्रा ३ से ६ ड्राम होनी चाहिए। प्रत्येक ड्राम में १½ ग्रेन औषधि होती है। इसका सेवन ठीक भोजनोत्तर करना चाहिए।

एसिडम् मेंडेलिकम् (B. P. C.)

Acidum Mandelicum (Acid Mandelic)

नाम—मेंडेलिक एसिड (Mandelic Acid); फेनिलग्लाइकोलिक एसिड (Phenylglycollic Acid)।

वर्णन—मेंडेलिक एसिड के सफेद क्रिस्टल्स होते हैं, जो प्रकाश में खुले रहने से धीरे-धीरे पीले रंग के हो जाते हैं। यह प्रायः गंधहीन होता है; स्वाद में भी अम्ल एवं नमकीन। विलेयता—यह ७ भाग जल एवं १ भाग अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में घुलनशील होता है।

मात्रा—३० से ६० ग्रेन या २ से ४ ग्राम (२ माशा से ४ माशा)।

केल्सियाइ मेंडलास Calcii Mandelas (Calc. Mandel.) रासायनिक संकेत: $C_{16}H_{14}O_6Ca.$, B. P. C.—ले०; केल्सियम् मेंडलेट Calcium Mandelate—अं०।

वर्णन—इसका सूक्ष्म-क्रिस्टलाइन (Micro-crystalline) चूर्ण होता है, जिसमें हल्की सुगंधि आती है, तथा जो स्वाद में हल्का नमकीन होता है। विलेयता—अल्कोहल् (९० प्रतिशत) में तो यह बिल्कुल अविलेय होता है, किन्तु जल में कुछ-कुछ घुल जाता है।

मात्रा—३० से ६० ग्रेन या २ से ४ ग्राम।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मेंडेलिक एसिड तथा इसके योग मूत्रसंस्थान पर उत्तम जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) अथवा जीवाणुनाशक (Bactericidal) प्रभाव करते हैं। किन्तु मेंडेलिक एसिड के बजाय इसके अमोनियम्, सोडियम् या केल्शियम् लवण अर्थात् अमोनियम् मेंडेलेट,

सोडियम् मेंडेलेट या केल्शियम् मेंडेलेट अधिक उपयुक्त एवं निरापद होता है। इनमें भी सबसे अच्छा केल्सियम् मेंडेलेट है। इसकी ६० ग्रेन या ४ ग्राम (३½ माशा) की मात्रा दिन में ४ वार दी जाती है। यह खाने में भी अरुचिकर नहीं होता तथा निस्सरण के समय मूत्रमार्ग पर भी क्षोभक प्रभाव नहीं करता। किन्तु इसकी क्रिया सुचारुरूप से होने के लिए मूत्रकी प्रतिक्रिया आम्लिक होनी चाहिए तथा हाइड्रोजन-अयन-संकेन्द्रण (Ph value) एक निश्चित स्तर (Ph 5·5) से ऊपर नहीं होना चाहिए। एतदर्थ रोगी को आहार में कार्बोहाइड्रेट वाले तत्व (चावल मधुर द्रव्य आदि) कम कर देने चाहिए तथा पानी पीने को कम देना चाहिए। यदि इससे काम न चले तो साथ-साथ अमोनियम् क्लोराइड की १५ ग्रेन की मात्रा दिन में ४ वार या आवश्यकतानुसार ५–६ वार देना चाहिए। किन्तु इस क्रम को २–३ रोज बाद बन्द कर देना चाहिए। इसके लिए निम्न चिकित्साक्रम उत्तम है:—

(१) **अमोनियम् क्लोराइड मिक्सचर :** अमोनियम् क्लोराइड १ औंस, मुलेठी का प्रवाहीघनसत्व (*एक्स्ट्रैक्ट ग्लिसिरहाइजा लिक्विड*) ४ *ड्राम* (२४० बूंद) *तथा* जल ८ औंस (पाव भर)—इसमें से ½ औंस दवा जल में मिलाकर दिन में ४ बार भोजन के पूर्व देना चहिए। (२) **सोडिम् मेंडेलेट मिक्सचर :** सोडियम् मेंडेलेट १½ औंस, शरबत नारंग (सिरप आरन्शाइ) १½ औंस, जल ८ औंस। सबको मिलाकर रख लें। इसमें ½ औंस दवा पानी में मिलाकर दिन में ४ वार भोजनोत्तर दें।

आजकल बाजार में विभिन्न कम्पनियों के बने-बनाये अनेक योग उपलब्ध हैं। इसका उल्लेख यथा-स्थान किया जायगा। इनकी विशेषता यह है, कि इनके साथ मूत्र की प्रतिक्रिया आम्लिक बनाने के लिए अमोनियम् क्लोराइड मिक्सचर को अलग से देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसका सेवन ८-१० दिन के बाद बन्द कर देना चाहिए, तथा चिकित्सा-काल में रोगी को जल कम पीना चाहिए तथा आहार में कार्बोहाइड्रेट बन्द कर देना चाहिए।

बैक्टीरिया कोलाइ तथा स्टेफिलोकोकाइ से उपसर्ग से होने वाले वस्तिप्रदाह (Cystitis) एवं मूत्र-मार्ग के अन्य अंगों के प्रदाह में मेंडेलिक एसिड का प्रयोग बहुत उपयोगी है। विशेषतः गर्भावस्था एवं प्रसवोत्तर कालिक उपसर्ग में यह विशिष्टरूपेण उपयोगी है।

वक्तव्य—कभी-कभी मेंडेलिक एसिड के सेवन से अतिसार, रक्तमेह (हीमेचूरिया (Haematuria) एवं मूत्रकृच्छ्र आदि उपद्रव हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में औषधि का सेवन तुरंत बन्द कर देना चाहिए।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—सोडियाइ मेंडेलास Sodii Mandelas (Sod. Mandel.)—ले०; **सोडियम् मेंडेलेट** Sodium Mandelate—अं०। सोडियम् मेंडेलेट के सफेद क्रिस्टल्स होते हैं, जिनमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की सुगन्ध होती है। यह १½ भाग जल में विलेय होता है। मात्रा—५० ग्रेन या ३·४ ग्राम (३ माशा)।

२—अमोनियाइ मेंडेलास Ammonii Mandelas (Ammon. Mandel.)—ले; **अमोनियम् मेंडेलेट** Ammonium Mandelate—अं०। इसके सफेद छोटी-छोटी सुइयाँ होती हैं, जिनमें नमी

सोखने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) बहुत पाई जाती है। यह जल एवं अल्कोहल् में जल्दी से घुल जाता है। मात्रा--५० ग्रेन।

२--मैंडेलामीन (Mandelamine)--यह सफेद रंग के गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जो स्वाद में खट्टा होता है। इसमें ४६% हेक्जामीन तथा ५०% मैंडेलिक एसिड होता है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आंतों से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है। शोषणोपरान्त इसका निस्सरण भी जल्दी तथा मूत्र के साथ होता है। मात्रा--०.७५ से १ ग्राम (१० से १५ ग्रेन) दिन में ३ बार मुखद्वारा।

(नॉट्-ऑफिशल)

बुकु (Buchu). B. P. C.

Family : Rutaceae (जम्बीर-कुल)

पर्याय—बुकुफोलिआ Buchu Folia (ले०); बुक्कु लीव्ज़ Buchu Leaves (अं०); बुक्को Bucco; डायोस्मा Diosma; शार्ट या राउण्ड बुकु Short or Round Buchu.

प्राप्ति-साधन—उपर्युक्त बुकु बेरोज्मा बेटुलिना Barosma betulina (Thunb.) Bartl. and Wendl. नामक पौधे के सुखाये हुए पत्ते होते हैं।

वक्तव्य—उपर्युक्त पौधे के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित अन्य २ प्रजातियों के पत्ते भी बुकु के स्थानापन्न रूप से (Substitute) अथवा मिलावट (Adulteration) के लिए प्रयुक्त होतेहैं।

(१) बेरोज्मा क्रेनुलेटा B. Crenulata (Linn.) Hook. इसकी पत्तियाँ अण्डाकार (Oval) होती हैं, जिससे व्यवसाय में इसको "ओवल बुकु Oval Buchu" भी कहते हैं।

(२) बेरोज्मा सिरेटिफोलिआ B. Serratifolia (Curt.) Willd. इसकी पत्तियाँ दोनों की अपेक्षा लम्बी होती हैं। अतः इसे "लांग बुकु Long Buchu" भी कहते हैं।

बुकु नाम इस वनस्पति के जुलु (Zulu) नाम "Bucu" का अंग्रेजीकृत रूपान्तर संज्ञा है। इसके लातीनीनाम बेरोज्मा बेटुलिना में जातिकनाम 'बेरोज्मा Berosma' बुकु की पत्तियों में पाई जाने वाली विशिष्ट गंध का द्योतक है। प्रजातिक नाम 'बेटुलिना Betulina' का धात्वर्थ होता है "Birch leaf like अर्थात् शाहबलूत जाति के पौधों की पत्तियों की तरह," जो बुकु की पत्तियों के आकार के आधार पर रखा गया प्रतीत होता है।

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिणी अफरीका में पहाड़ी ढालुओं पर बुकु की अनेक प्रजातियाँ (Species) जंगली रूप से (स्वयंजात Wild) उगी हुई प्रचुरता से पाई जाती हैं। यूरोप आदि में लिए दक्षिणी अफरीका के केपटाउन नामक बन्दरगाह से काफी मात्रा में बुकु का निर्यात (Export) होता है।

वर्णन—बुकु की छोटी-छोटी झाड़ियाँ (Small Shrubs) होती हैं जिनमें पत्तियाँ सघन होती हैं, और अभिमुखक्रम (Opposite) से निकली होती हैं।

पत्तियों के संग्रह के लिए पुष्पागम के समय पत्रमय शाखाओं को काट लिया जाता है। इन शाखाओं से पत्तियों को चुन लेते हैं, और तत्काल ही सावधानी पूर्वक सुखा लेते हैं, ताकि

इनका हरितवर्ण नष्ट न होने पावे। ये पत्तियाँ चमकीले हरे रंग की अथवा पीताभ हरितवर्ण की होती हैं। सूखी पत्तियाँ तो भंगुर (Brittle) किन्तु नम होने पर चिमड़ी (Stiff and Cartilaginous) होती हैं। मुख में चबाने पर यह सुगन्धित (Aromatic) होती हैं। तथा इनको मसलकर सूंघने पर एक विशिष्ट प्रकार की उग्र गंध आती है।

रासायनिक संघटन—बुकु की पत्तियों में (१) एक उत्पत्‌ या उड़नशील तैल (Volatile oil) १·५ से ३·८ प्रतिशत तक पाया जाता है। इस तैल का प्रधान सक्रियघटक डायोसफिनोल (Diosphenol) होता है, जो क्रिस्टलाइन स्वरूप में पृथक प्राप्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसमें निम्नघटक भी पाये जाते हैं :—(२) d-limonene नामक एक किटोन (Ketone), जो पेपरमिंट के तेल में पाये जाने वाले मेंथोन (Menthone) से मिलता-जुलता है; (३) डाइपेन्टीन (Dipentene); (४) म्युसिलेज (Mucilage) तथा (५) डायोस्मिन (Diosmin) नामक ग्लाइकोसाइड, जो प्रायः निष्क्रियसा होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बुकु की प्रधान क्रिया इसमें पाये जाने वाले उड़नशील तैल के कारण होती है। मुखद्वारा सेवन किये जाने पर यह शीघ्रतापूर्वक शोषित होता है, और शोषणोपरान्त शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः वृक्कोंद्वारा होता है। अतएव निस्सरण के समय यह वृक्कों पर उत्तेजक प्रभाव करता है। तदुपरान्त मूत्र के साथ उत्सर्गित होते समय यह मूत्रमार्ग पर संशामक एवं जीवाणुनाशक प्रभाव करता है। इसके कारण मूत्र में एक विशिष्ट प्रकार की गंध भी आती है। इस प्रकार बुकु एक **मूत्रल एवं मूत्रमार्ग-विशोधक (Diuretic and urinary antiseptic)** औषधि है। मूत्रसंस्थान के विभिन्न अंगों की श्लैष्मिक कलाओं की क्षोभनशीलता (**Irritability**) एवं शोथावस्था में यह एक उपयोगी औषधि है। अतः वस्तिशोथ (सिस्टाइटिस **Cystitis**), मूत्राशय की क्षोभनशीलता, मूत्रप्रसेकशोथ (युरेथ्राइटिस **Urethritis**) पूयमेह या सूजाक (**Gonorrhoea**) एवं ऐसी ही मूत्रसंस्थान की अन्य व्याधियों में बुकु का प्रयोग किया जाता है। **अधिक मात्रा में प्रयुक्त करने से अथवा निरन्तर अधिक काल तक इसका सेवन जारी रखने से वृक्कों को क्षति पहुँचने की सम्भावना हो सकती है।** अतएव इसके प्रयोग के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

सेवनविधि में इसके **अभिनव फाण्ट (Fresh infusion)** का प्रयोग अधिक सुविधाजनक एवं गुणकारी होता है।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—इन्फ्युजम् बुकु कन्सन्ट्रेटम् Infusum Buchu Concetratum, B. P. C.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव बुकु Concentrated Infusion of Buchu-अं०; बुकु का संकेन्द्रित फाण्ट। मात्रा—६० से १२० बूंद (मिनम् Minim) या ४ से ८ मि० लि०।

२—इन्फ्युजम् बुकु रिसेन्स Infusum Buchu Recens, B. P. C. मात्रा—½ से १ छटांक (१ से २ औंस या ३० से ६० मि० लि०)।

३—टिंक्चुरा बुकु Tinctura Buchu, B. P. C.—ले०; टिंक्चर बुकु। मात्रा—३० से ६० बूंद (मिनम्) या २ से ४ मि० लि०।

ओलियम् सेन्टेलाइ (चन्दन का तेल) B. P. C.

Oleum Santali (Ol. Santal.) ले०;

Family : Santalaceae (चन्दन-कुल)

नाम—ऑयल ऑव सेन्डल उड Oil of Sandal wood; ऑयल सेन्टल उड Oil of Santal wood—अं०; चन्दन का तेल—हिं०; रोगन संदल—अ०, फा०।

प्राप्ति-साधन—चन्दन का तेल एक सुगन्धित उड़नशील तेल होता है, जो सॅन्टलम् अल्बम् (Santalum album Linn.) अर्थात् सफेद चन्दन नामक वृक्ष के हृत्काष्ठ (Heart wood) को पानी में भिगोकर परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—चन्दन का तेल हल्के पीले रंग का या प्रायः रंगहीन गाढ़ा द्रव (Viscid liquid) होता है, जिसमें चन्दन की विशिष्ट सुगन्धि पाई जाती है। तेल पुराना होने पर भी यह सुगन्धि स्थायी रूप से रहती है। स्वाद अरुचिकारक (Unpleasant) होता है।

रासायनिक संघटन—चन्दन के तेल में निम्नघटक पाये जाते हैं :—(१) इसमें लगभग ९० प्रतिशत की मात्रा में २ समरूपिक (Isomeric) सेस्क्विटरपीन अल्कोहल् (x-Santalol & B-Santalol : $C_{15}H_{24}O$.) पाये जाते हैं; इसके अतिरिक्त इसमें सेन्टेलल (Santalal : $C_{15}H_{22}O$.) नामक एक एल्डिहाइड तथा सेन्टीन (Sentene), सेन्टेनोन (Santenone), टेरीसेन्टोल (Teresantal), सेन्टेलोन (Santalone) एवं सॅटेलीन (Santalene) नामक तत्व भी पाये जाते हैं।

वक्तव्य—चन्दन के तेल को खूब अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखकर ठंडे स्थान में रखना चाहिए और इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—५ से १५ मिनम् (बूंद) या ०.३ से १ मि० लि०।

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिण भारत में मैसूर और कुर्ग में इसके वृक्ष जंगली रूप से (Wild) होते हैं, तथा लगाए (Cultivated) भी जाते हैं। वहाँ इसका व्यवसाय सरकार के हाथ में है।

वक्तव्य—आयुर्वेदीय एवं यूनानी चिकित्सा में तेल के अतिरिक्त चन्दन के हृत्काष्ठ (Heart wood) एवं उसके बुरादे (चन्दन का बुरादा) का भी प्रचुर प्रयोग होता है। आयुर्वेदीय निघण्टुओं में चन्दन के कई भेदों का उल्लेख मिलता है, जिनमें (१) सफेद चन्दन एवं (२) रक्तचन्दन (Red Sandal wood) प्रधान हैं। रक्तचन्दन के भी टुकड़े तथा बुरादा बाजारों में मिलता है। स्मरण रहे कि रक्तचन्दन शिम्बी-कुल (Family : Leguminosae) का टेरोकार्पस सेन्टेलिनस् Pterocarpus santalinus नामक एक भिन्न ही वृक्ष है। रक्तचन्दन में सुगन्धि भी नहीं पाई जाती।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

शोषणोपरान्त चन्दन के तेल का निस्सरण मूत्र-प्रजनन मार्गद्वारा होता है, जिस पर यह उत्तेजक एवं जीवाणुनाशक प्रभाव करता है। पहले इसका विशिष्ट प्रयोग सूजाक या पूयमेह की उग्रावस्था एवं चिरकालीन अवस्था (Acute and Chronic gonorrhea) दोनों ही

दशाओं में किया जाता था। एतदर्थ १५–२० बूंद की मात्रा थोड़ी सी चीनी या बतासे में रख कर दी जाती है। प्रतिपराश्रयी (Antiparasitic) होने के कारण खुजली (Scabies) में इसका प्रयोग उपयोगी होता है।

श्वासमार्ग की वायुप्रणालियों पर चन्दन का तेल कोथप्रतिबन्धक तथा कफनिस्सारक प्रभाव करता है। अतएव जीर्णकास तथा ऐसे कास में जिसमें दुर्गन्धित कफ निकलता हो, २-३ बूंद बतासे पर डालकर खिलाते हैं।

वक्तव्य—आयुर्वेद एवं यूनानी वैद्यक में चन्दन के हृत्काष्ठ (Heart wood) तथा बुरादे का प्रचुर प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ इसके अनेक योग एवं कल्प प्रसिद्ध हैं।

क्युबेबा Cubeba (Cubeb.) I. P. C.

(कबाबचीनी)

Family : Piperaceae (पिप्पली-कुल)

प्राप्ति-साधन—क्युबेब (कबाबचीनी), पाइपर क्युबेबा (Piper Cubeba Linn.) नामक लता के फल होते हैं, जिनको पूर्ण वृद्धि हो जाने पर किन्तु पकने के पूर्व ही डालियों से तोड़ कर संग्रह कर लिया जाता है, और धूप में सुखा कर उन्हें रख लेते हैं।

नाम--कबाबचीची--हिं०, बम्बई, द०; दुमकी मिर्ची, दुमदार मिर्च--द०; कबाब, कबाबचीनी--फा०; कबाबेसीनी, हब्बुलूउरूस--अ०; क्युबेबी फ्रक्टस Cubebae fructus —ले०; क्युबेब्स Cubebs—अं०।

वक्तव्य—चिकित्सा में कबाबचीनी का प्रसार मध्यकालीन अरबी चिकित्सकों द्वारा हुआ। मसूदी, सिहाह एवं इब्नसीना आदि चिकित्सकों ने इसका उल्लेख किया है और इसे जावा तथा चीन की औषधि करके माना है। अरब में कबाबचीनी का आयात इन्हीं देशों से भारतवर्ष के माध्यम से होता था। राजनिघण्टु में 'कंकोल' के नाम से तथा मदनपाल-निघण्टु में इसका वर्णन कटुक-कोल (Pungent pepper) के नाम से किया गया है। योरोपीय चिकित्सकों में इसका प्रसार १६ वीं शताब्दी में हुआ।

उत्पत्ति-स्थान—जावा, सुमात्रा एवं बोर्निओ। इसके अतिरिक्त लंका तथा दक्षिण भारत में कहीं-कहीं विशेषतः मैसूर प्रान्त में इसकी खेती भी की जाती है।

वर्णन। लता--कबाबचीनी की गुल्म-स्वभाव की बहुवर्षायु आरोही लता (Climbing perennial plant) होती है, जिसका काण्ड (Stem) लचीला (Flexuous) एवं पर्वों पर ग्रन्थियाँ काफी उन्नत (Jointed stem) होती हैं। पत्तियाँ—डंठलयुक्त (सवृन्त), आयताकार अथवा लट्वाकार-आयताकार, अग्रतीक्ष्ण (Acuminate), चर्मल (Coriaceous) एवं चिकनी होती हैं। नरपुष्प एवं नारीपुष्प पृथक्-पृथक् पौधों पर पाये जाते (Dioecious) हैं, और अवृन्त-काण्डजक्रम (Spike) में निकले होते हैं।

फल—कबाबचीनी के सुखाये हुए फल काली मिर्च की भांति गाढ़े भूरे रंग के तथा अर्ध-गोलाकार (Spherical) होते हैं। व्यास में लगभग ४ मिलिमिटर। बाहरी छिलका झुर्रीदार तथा उस सूक्ष्म रेखाओं का जाल-सा (Reticulately wrinkled) होता है। आधार की ओर डंठल-सा लगा होता है, जो वास्तव में डंठल नहीं होता, अपितु आधार पर सिकुड़ जाने

से पेरिकार्च या बाहरी छिलके का ही बढ़ा हुआ-सा भाग (Thecaphore) होता है। औषधीय दृष्टि से पके हुए फल व्यर्थ होते हैं। कबाबचीनी को मसलने से एक विशिष्ट प्रकार की मसालेदार सुगंधि आती है, तथा मुँह में रखकर चबाने से तिक्त एवं मसालेदार (Spicy) स्वाद होता है।

रासायनिक संघटन—कबाबचीनी में प्रधानतः (१) एक उत्पत् तैल (उड़नशील तैल Volatile oil) ५ से २० प्रतिशत की मात्रा में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें (२) क्युबेबिन (Cubebein $C_{20}H_{20}O_6$) नामक तत्व तथा (३) रेजिन (Resin 3%) और क्युबेबिक एसिड (Cubebic acid) जो लगभग १% की मात्रा में होता है। क्युबेब या कबाबचीनी के गुण-कर्म प्रायः इन्हीं दोनों तत्वों के कारण होते हैं। उपर्युक्त घटकों के अतिरिक्त कबाबचीनी में गोंद (Gum) स्थिरतैल (Fatty oil), कैल्सियम् ऑक्जलेट तथा मैगनीसियम् मेलेट आदि तत्व भी पाये जाते हैं।

मात्रा—३० से ६० ग्रेन (२ से ४ ग्राम) या १॥ माशा से ३ माशा तक।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

आभ्यन्तर—आमाशयान्त्र प्रणाली (Gastro-intestinal tract) पर कबाबचीनी की क्रिया काली मिर्च जैसी होती है। अल्पमात्रा में यह उत्तेजक (Stimulant) होता है तथा दीपन (Stomachic) एवं वातानुलोमन (Carminative) क्रिया करता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर क्षोभक होने से आमाशयान्त्र-प्रदाह (Gastro intestinal irritation) करता है, जिससे पाचन की क्रिया विकृत होती है। श्वसन-मार्ग एवं मूत्र-प्रजनन-मार्ग की श्लैष्मिक कलाओं पर उत्तेजक प्रभाव करने के कारण यह उनके स्राव में वृद्धि करता है और साथ ही जीवाणुवृद्धि रोधक भी होता है। अतएव कबाबचीनी मूत्रल एवं मूत्र-प्रजनन-मार्ग-विशोधक (Genito-urinary antiseptic) होता है। कोपाइबा की भांति इसका व्यवहार गले एवं श्वसन-मार्ग के रोगों में मुखगुटिका (Lozenges) अथवा आघ्राणन (Inhalation) के रूप में किया जाता है। मूत्रमार्ग-विशोधक होने से सूजाक (Gonorrhoea) तथा इसकी चिरकालीनावस्था (Gleet) एवं मूत्राशय-प्रदाह (Cystitis) में किया जाता है।

निस्सरण (Excretion)—शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः श्वसन-मार्ग से तथा मूत्र के साथ होता है।

प्रयोग-विधि—कबाबचीनी का चूर्ण मुखचक्रिकाओं (लॉजेन्जेज Lozenges) के रूप में अथवा जिलेटिन की छोटी-छोटी डिब्बियों (कैचेट्स Cachets) में रखकर किया जा सकता है। कबाबचीनी का तेल जिलेटिन कैप्स्यूल्स में रखकर दिया जाता है। अथवा इसका प्रयोग इमल्सन (Emulsion) के रूप में किया जाता है। बुकु के समान गुण-कर्म होने के कारण उसके साथ प्रयोग करने से इसकी क्रिया और भी तीव्रतर होती है।

क्युबेब (कबाबचीनी) के योग :—

१—एक्स्ट्रॅक्टम् क्युबेबी लिक्विडम् Extractum Cubebae Liquidum (Ext. Cubeb. Liq.), I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव क्युबेब Liquid Extract of Cubeb—अं०;

कबाबचीनी का प्रवाही घनसत्व। मात्रा—½ से १ फ्लुइड ड्राम (२ से ४ मि० लि०) या ३० से ६० बूंद।

२—टिंक्चुरा क्युबेबी Tinctura Cubebae (Tinct. Cubeb.), I. P. C.—ले०; टिंक्चर ऑव क्युबेब Tincture of Cubeb—अं०; कबाबचीनी का निष्कर्ष। मात्रा— ३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०) या ½ से १ फ्लुइड ड्राम।

३—ओलिओरेजिना क्युबेबी Oleoresina cubebae (Oleores. Cubeb.), I. P. C.—ले०; ओलिओरेजिन ऑव क्युबेब Oboresin of Cubeb—अं०। इसको अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए। मात्रा—५ से ३० मिनम् या बूंद (०·३ से २ मि० लि०)।

नाइट्रोफ्युरन्टोइन Nitrofurantoin (नॉट्-ऑफिशल)

पर्याय—फ्युरेडेन्टिन (Furadantin)।

वर्णन—फ्युरेडेन्टिन पीले रंग का तिक्त चूर्ण होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की एक हल्की गंध भी पाई जाती है। विलेयता—जल में तो घुल जाता है, किन्तु अल्कोहल् में थोड़ा-थोड़ा घुलता है। मात्रा—५ से १० मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन) प्रति किलोग्राम शरीर भार के अनुसार प्रतिदिन मुखद्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र-प्रणाली से शीघ्रता-पूर्वक शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त लगभग ४०% भाग मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। शेष भाग शरीर में जारित हो जाता है। शरीर से निस्सरण जल्दी-जल्दी होता है, अतएव रक्त में बराबर संकेन्द्रण बनाये रखने के लिए ४-४ या ६-६ घंटे पर प्रयुक्त करना पड़ता है। ई० कोलाइ (E. Coli), स्टेफिलोकोकस्, स्ट्रेप्टोकोकस्, पाराकोलोन बेसिलाइ (Para-colon bacilli) तथा ए० ईरोजेनोज (A aerogenes) पर यह जीवाणुस्तम्भक एवं जीवाणुनाशक प्रभाव करता है। अतएव मूत्रमार्ग में उपर्युत जीवाणुओं का उपसर्ग होने पर मुखद्वारा औषधि का सेवन किए जाने पर मूत्रमार्गगत उपसर्ग का शमन होता है। गवीनी-मुखशोथ (Pyelitis) गवीनी मुख एवं वृक्कशोथ (Pyelonephritis) तथा वस्ति दाह (Cystitis) में उपयोगी है। १४ दिन के बाद यदि औषधि देने की आवश्यकता हो तो १ माह का अन्तर देकर दूसरा कोर्स देना चाहिए।

अर्गट (Ergot) I. P.

Family : Hypocreaceae (or Flesh-consuming Family)

(अन्नामय-कुल)

पर्याय—सिकेल कॉर्न्यूटम् Secale Cornutum; अर्गटा Ergota (Ergot.)-ले०; अर्गट Ergot, अर्गट ऑव राई Ergot of Rye—अं०; अन्नामय—सं०।

प्राप्ति-साधन—अर्गट क्लेविसेप्स परपूरिया (Claviceps purpurea Tulasne) नामक फंगस (Fungus) के शुष्क किया हुए स्क्लिरोशियम् (Sclerotium) होते हैं, जो तृण-कुल (Family : Gramineae) की राई (Rye) नामक पौधे से प्राप्त किए जाते हैं। इस पौधे का वानस्पतिक नाम सिकेल सिरिआले (Secale cereale Linn.) है। इसमें कम से कम ०·२ प्रतिशत अर्गोटॉक्सीन (Ergotoxine) होता है, जिसमें कम से कम १५ प्रतिशत अर्गट के जल विलेय अल्कलायड्स (अर्गोमेट्रीन) होते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—स्पेन, पुर्तगाल, पोलैण्ड तथा रूस आदि यूरोपीय देश। आजकल दक्षिण भारत में नीलगिरी में अर्गट प्राप्त करने के लिए उक्त राई वनस्पति की खेती की जाती है, और उनसे अर्गट प्राप्त करने में सफलता भी प्राप्त की गई है।

शिमला में कतिपय तृणजातीय वनस्पतियों में स्वयंजात अर्गट भी मिला है। किन्तु ब्रेकिपोडियम् सिल्वेटिकम् (Brachypodium Sylvaticum Beaur.) ऑप्लिसमेनस् कम्पोजिटस् (Oplismenus Compositus Beauv) एवं क्राइसोपोगन की कतिपय प्रजातियों (Chrysopogon Species) से प्राप्त अर्गट का परीक्षण करने से उनमें अर्गट के विशिष्ट अल्कलायड्स नहीं मिले।

इतिहास—यद्यपि अर्गट का स्थूल परिचय एवं प्रसूतिशास्त्र में इसके प्रयोग का ज्ञान १६ वीं शताब्दी में भी था; किंतु इसका विशेष प्रचार एवं प्रसिद्धि १९ वीं शताब्दी में हुई है। उक्त फंगस क्लेविसेप्स पर्पूरिया के जीवन-चक्र (Life Cycle) का अध्ययन टुलास्ने (Tulasne) नामक
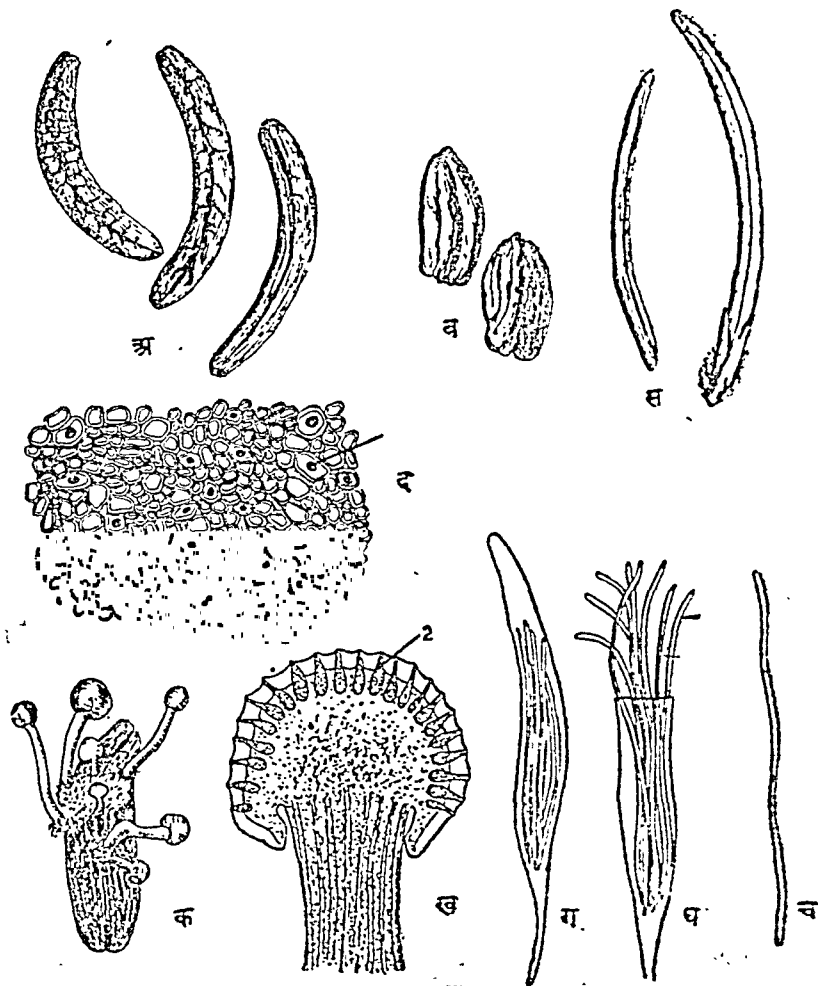
चित्र—२३ इसमें अर्गट के फंगस के जीवन-चक्र (Life-Cycle) की विभिन्न अवस्थायें दिखलाई गई हैं।

वैज्ञानिक ने सर्वप्रथम किया एवं १८५३ ई० में इस पर पूर्ण प्रकाश उक्त वैज्ञानिक ने ही किया। फंगस का उक्त नामकरण भी इसी वैज्ञानिक द्वारा किया गया।

वक्तव्य—फंगस का जातीयनाम (Generic name) क्लेविसेप्स (Claviceps), इसके स्क्लिरोशियम् अवस्था में मुग्दराकृति (Club-like Character) के कारण, तथा प्रजातिक नाम (Specific name) परपूरिआ (Purpurea) इसके नील लोहित रंगके कारण रखा गया प्रतीत होता है।

वर्णन—अर्गट (स्क्लिरोशियम्) गाढ़े बैंगनी (Dark violet) से काले रंगका तथा १ से ३ सेंटीमीटर लम्बा एवं १ से ५ मिलिमिटर चौड़ा होता है। आकार में गोपुच्छाकार (फ्युजिफॉर्म Fusiform) तथा बहुत-कुछ त्रिपार्श्विक होता है, यद्यपि धारायें बहुत स्पष्ट नहीं होतीं (Obscurely 3-angled)। इसके अतिरिक्त यह किंचित् धनुष की भाँति वक्र या टेढ़ा (Arcuate) तथा दोनों सिरों या अग्रों की ओर उत्तरोत्तर कम चौड़ा होता (Tapering towards the ends) है। प्रत्येक पार्श्व पर बीचों-बीच अनुलम्ब दिशा में एक परिखा (Longitudinal furrow) होती है, तथा आड़े-आड़े अनुप्रस्थदिशा में अनेक दरारें होती (Transversely Cracked) हैं। इसको तोड़ने पर यह खट से टूट जाता (Fracture Short) है, और अंगुलियों के बीच रगड़ने से भंगुर (Brittle) होता है। अन्दर की ओर यह मटमैले सफेद रंगका या गुलाबीलिए सफेद रंग का होता है और केन्द्र से चारों ओर को पहिए के आरों की भाँति रेखायें जाती हुई दिखाई देती हैं। अर्गट में एक हल्की अरुचिकारक गंध होती है, तथा स्वाद में भी यह अरुचिकारक (Disagreeable and mawkish) होता है।

संग्रह (Collection)—अर्गट का संग्रह राई (Rye) के खेतों से किया जाता है। जब स्क्लिरोशिआ (स्क्लिरोशियम् Sclerotium—एक व०; स्क्लिरोशिआ Scelerotia—बहुवचन) पूर्णत: प्रगल्भ (Fully developed) हो जाते हैं और बालियों पर दीखने लगते हैं, तो खेतोंसे इनको एकत्रित कर लिया जाता है।

संरक्षण (Storage)—स्क्लिरोशिआ को संग्रह करने के बाद उनको अच्छी तरह सुखाकर, डाटबन्द पात्रों में सावधानी पूर्वक रखना चाहिए और नमी से उसकी रक्षा करनी चाहिए। नमी (Moisture) अधिक पहुँचने से अल्कलायड्स की मात्रा में कमी आ जाती है, और इस प्रकार औषधि निष्क्रिय होने लगती है।

रासायनिक संघटन—अर्गट में पाये जाने वाले सक्रिय तत्वों में इसके अल्कलाइड्स (Alkaloids) मुख्य हैं, जिनको २ वर्गों में बाँटा जा सकता है, यथा—

(१) जलविलेय क्षारोद या अल्कायड्स (Water-Soluble alkaloids)—आर्गोमेट्रीन (Ergometrine : $C_{१९}H_{४१}O_{६}N_{3}$.)। इसका दूसरा नाम अर्गोनोवीन (Ergonovine) भी है।

(२) जल में न घुलनेवाले क्षारोद (Water-insoluble alkaloids)—यथा (१) अर्गोटॉक्सीन (Ergotoxine : $C_{३५}H_{४१}O_{६}N_{५}$.); (२) अर्गोटामीन (Ergotamine : $C_{३३}H_{३५}O_{५}N_{५}$.); (३) अर्गोसीन (Ergosine : $C_{३०}H_{३७}O_{५}N_{५}$.) तथा अर्गोक्रिस्टीन (Ergocristine : $C_{३९}H_{३३}O_{५}N_{५}$.)। ये चारों परस्पर बहुत-कुछ मिलते-जुलते हैं।

अर्गट में कतिपय ऐसे घटक, जो एमिनो-एसिड के वियोजन (Decomposition) के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं, भी पाये जाते हैं--यथा टायरामीन तथा हिस्टामीन (या अर्गामीन)। इसके अतिरिक्त अनेक अन्य तत्व भी पाये जाते हैं, किन्तु औषधीय प्रयोग की दृष्टि से ये विशेष महत्व के नहीं हैं, क्योंकि या तो इनकी उपस्थिति इतनी मात्रा में नहीं होती, जिससे कोई विशेष प्रभाव शरीर पर हो सके, अथवा निष्क्रिय (Inert) स्वरूप ये होते हैं।

अर्गटा प्रिपरेटा Ergota Praeparata (Ergot. Praep.) B. P. C.—ले०; प्रिपेयर्ड अर्गट (Prepared Ergot)—अं०; अर्गट चूर्ण हिं०।

यह अर्गट का चूर्ण होता है, जिसमें से वसामय भाग विशेष प्रक्रियाद्वारा पृथक कर दिया जाता है। इसमें ०·२% अर्गोटॉक्सीन होता है, जिसमें कम से कम १५% अर्गोमेट्रीन (Ergometrine) होता है। इस प्रकार ८ ग्रेन चूर्ण में $\frac{१}{६०}$ ग्रेन अर्गोटॉक्सीन तथा (इसमें) $\frac{१}{४००}$ ग्रेन अर्गोमेट्रीन होता है। मात्रा—०·१५ से ०·५ ग्राम (२½ से ८ ग्रेन)।

टॅबेली अर्गोटी प्रिपरेटी (Tabellae Ergotae Praeparatae (Tab. Ergot. Praep.), I. P., B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव प्रिपेयर्ड अर्गट (Tablets of Prepared Ergot)—अं०; अर्गट की टिकिया--हिं०। मात्रा—०·१५ से ०·५ ग्राम (२½ से ८ ग्रेन)। मात्रा का उल्लेख न होने पर २½ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

एक्स्ट्रॅक्टम् अर्गोटी लिक्विडम् Extractum Ergotae Liquidum (Ext. Ergot. Liq.), I. P., B. P. C.--ले०; लिक्विड एक्स्टॅक्ट ऑव अर्गट (Liquid Extract of Ergot)—अं०; अर्गट का प्रवाही घनसत्व सं०, हिं०। ताजे लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव अर्गट के २० मिनम् (१·२ मि० लि०) या बूंद में $\frac{१}{६०}$ ग्रेन अर्गोटॉक्सीन होता है। मात्रा ०·६ से १·२ मि० लि० (१० से २० मिनम् या बूंद)।

वक्तव्य—अर्गट का प्रवाही घनसत्व रखा रहने से १ साल बाद निष्क्रिय हो जाता है। अतएव इस अवधि के बाद इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

अर्गोमेट्रिनी मेलियास Ergometrinae Maleas (Ergometrin. Maleas.). I. P., B. P.—ले०; अर्गोमेट्रीन मेलिएट (Ergometrine Maleate)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{१९} H_{२३} O_{२} N_{३}, C_{४} H_{४} O_{४}$।

पर्याय—अर्गोनोवीन मेलिएट (Ergonovine Maleate)।

प्राप्ति-साधन—यह अर्गोमेट्रीन नामक अल्कलायड् का एसिड मेलिएट (acid maleate) यौगिक होता है, जिसमें कम से कम ९५% अर्गोमेट्रीन मेलिएट होता है।

वर्णन—अर्गोमेट्रीन मेलिएट सफेद रंगके अथवा हल्के पीले रंगके अतिसूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Microcrystalline powder) के रूप में उपलब्ध होता है। विलेयता—जल (३६ भाग) में घुलनशील होता है, अल्कोहल् (९०%) में अपेक्षाकृत कम घुलता (१०० भाग में) है। सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में अविलेय होता है।

मात्रा—०·५ से ०·२५ मि० ग्रा० (१/१२० से १/६० ग्रेन); पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा—०·२५ से १ मि० ग्रा० (१/२४० से १/६० ग्रेन); सिरागत इंजेक्शन द्वारा—०·१२५ से ०·२५ मि० ग्रा० (१/४८० से १/२४० ग्रेन)।

इन्जेक्शिओ अर्गोमेट्रीनी मेलिएटिस Injectio Ergometrinae Maleatis (Inj. Ergometrin. Maleat.). I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव अर्गोमेट्रीन मेलिएट, अर्गोनोवीन मेलिएट इंजेक्शन—अं०। मात्रा—पेशीगत सूचिकाभरण-द्वारा—०·२५ से १ मि० ग्रा० तथा शिरागत इंजेक्शन द्वारा ०·१२५ से ०·५ मि० ग्रा०। यदि सोल्यूशन के बल का उल्लेख न हो तो १ सी० सी० में ०·५ मि० ग्रा० के बल का सोल्यूशन देना चाहिए।

टॅबेली अर्गोनेट्रिनी मेलिएटिस Tabellae Ergometrinae Maleatis—ले०; टॅबलेट्स ऑव अर्गोमेट्रीन मेलिएट (B. P.) अं०। पर्याय—टॅबलेट्स ऑव अर्गोनोवीन मेलिएट (Tablets of Ergonovine Maleate) मात्रा—०·५ से १ मि० ग्रा० (१/१२० से १/६० ग्रेन)। यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो ०·५ मि० ग्रा० (१/१२० ग्रेन) की टिकिया देनी चाहिए।

अर्गोटॉक्सिनी ईथेनोसल्फोनास (नॉट-आफिशल) Ergotoxinae Aethanosulphonas (Ergotox. Aethanosulph.)—ले०; अर्गोटॉक्सीन इथेनोसल्फोनेट—अं०।

यह अर्गोटॉक्सीन नामक अल्कलायड् का इथेनोसल्फोनेट यौगिक होता है। इसमें ८३·६% अर्गोटॉक्सीन होता है। अर्गोटॉक्सीन ईथेनोसल्फोनेट रंगहीन तथा गंधहीन सूच्याकार मणिभ (Acicular Crystals) के रूप में उपलब्ध होता, जो जल में मुश्किल से (Sparingly Soluble) घुलता है। अल्कोहल् (९०%) में अपेक्षाकृत अधिक घुलता है। मेथिल अल्कोहल् में अच्छी तरह घुल जाता है।

मात्रा—०·५ से १ मि० ग्रा० (१/१२० से १/६० ग्रेन) अधस्त्वक् तथा पेशगीत इन्जेक्शन द्वारा।

अर्गोटामिनी टारट्रास Ergotaminae Tartras (Ergotamin. Tart.), I. P., B. P.—ले०; अर्गोटामीन टारट्रेट—अं०।

रासायनिक संकेत : $(C_{३३}H_{३५}O_{५}N_{५})2, C_{४}H_{६}O_{६}$.

पर्याय—गाइनर्जेन (Gynergen); फेमर्जेन (Femergen)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—वह अर्गट की विभिन्न प्रजातियों से प्राप्त अर्गोटामीन नामक अल्कलायड् का टारट्रेट लवण चूर्ण के रूप से प्राप्त होता है। विलेयता—पानी में घुल जाता है। इसका जलीय विलयन धुंधला (Turbid) हो सकता है। किन्तु टारटेरिक एसिड मिला देने से विलयन स्वच्छ हो जाता है। ५०० भाग अल्कोहल् (९०%) में भी घुल जाता है।

मात्रा—१ से २ मि० ग्रा० (१/६० से १/३० ग्रेन) एक मात्रा में; अधस्त्वक् या पेशीगतसूचिकाभरणद्वारा ०·२५ से ०·५ मि० ग्रा० (१/२४० से १/१२० ग्रेन)।

इन्जेक्शिओ अर्गोटा मिनी टारट्रेटिस Injectio Ergotaminae Tartrans (Inj. Ergotamin. Tart.), I. P, B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव अर्गोटामीन

टारट्रेट—अं०। मात्रा—०·२५ से ०·५ मि० ग्रा० (१/२४० से १/१२० ग्रेन) अधस्त्वक् या पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा। यदि सोल्यूशन के शक्ति की उल्लेख न हो तो १ सी० सी० में ०·५ मि० ग्रा० की शक्ति का सोल्यूशन देना चाहिए।

टॅबेली अर्गोटामिनी टारट्रेटिस—ले०; टॅबलेट्स ऑव अर्गोटामीन टारट्रेट, B. P.—अं०। मात्रा—१ से २ मि० ग्रा० (१/६० से १/३० ग्रेन) एक मात्रा में। मात्रा का उल्लेख न होने पर १ मि० ग्रा० की टिकिया दे।

गुण-कर्म।

जैसा की पहले उल्लेख किया जा चुका है, अर्गट की क्रिया मुख्यतः इसमें पाये जाने वाले निम्न २ क्षारोदों (अल्कलायड्स) के कारण होती है :—

(१) अर्गोटॉक्सीन तथा अर्गोटामीन;

(२) अर्गोमेट्रीन।

अर्गोटॉक्सीन तथा अर्गोटामीन—इन दोनों अल्कलायड्स की क्रिया प्राय समानरूप की होती है, परन्तु गर्भाशय पर अर्गोटामीन की क्रिया अधिक स्थायी होती है।

आर्गोटाक्सीन का सेवन मुखद्वारा किए जाने पर भी यह आमाशयिक एवं आन्त्रिक रस से वियोजित नहीं होता। अतः मुखद्वार दिए जाने पर भी इससे वही गुण-कर्म होते हैं, जो इन्जेक्शन द्वारा दिए जाने पर होते हैं। अर्गोटॉक्सीन का प्रयोग ईथेनोसल्फोनेट के रूप में शिरागत या पेशीगत सूचिकाभरण-द्वारा किया जाता है। अर्गोटॉक्सीन की **प्रधान क्रिया स्वतन्त्र या अनैच्छिक पेशी-सूत्रों (Unstriped muscle fibres)** पर होता है। उसमें भी विशेषतः **गर्भाशय (Uterus)** एवं **रक्तवाहिनियों (Blood vessels)** के **अनैच्छिक पेशी-सूत्रों का संकोच (Contraction)** होता है। (१) **रक्तवाहिनियाँ**—यह विशेषतः परिसरीय धमनिकाओं (Peripheral arterioles) का संकोच कराता है, जिससे रक्तचाप (ब्लड प्रेसर) में वृद्धि होती है। निरन्तर अधिक काल तक सेवन का परिणाम यह होता है, कि उक्त धमनिकाओं में उद्वेष्ठ (Spasm) होकर उनमें अवरोध (Obliteration) होता है, जिससे परिसरीय प्रदेश (जैसे हाथ-पैर की अंगुलियों) में रक्त नहीं पहुँचता और इसके परिणाम स्वरूप वहां कोथ (Gangrene) की स्थिति उत्पन्न होती है। रक्तवाहिनियों पर अर्गोटॉक्सीन की यह क्रिया स्वतंत्र नाड़ी-मण्डल के नाड़ी-अग्रों (Nerve-endings) पर उत्तेजक प्रभाव पड़ने से होता है। इस रूप में अर्गोटॉक्सीन तथा एड्रिनेलीन की क्रियाओं में परस्पर यह अन्तर है, कि अर्गोटाक्सीन केवल संकोचकसूत्रों (Vaso-Constrictors) पर ही उत्तेजक प्रभाव करता है, किन्तु एड्रिनेलीन संकोचक एवं विस्फारक (Vaso-dilating set) सूत्रों को भी उत्तेजित करता है। इसे एड्रिनेलीन का "Vaso-motor reversal action" कहते हैं। अर्गोटॉक्सीन की भांति अर्गोटामीन भी वाहिनियों पर उत्तेजक Vaso-tonic) प्रभाव करता है, किन्तु करोटि के परिसरीय वाहिनियों (Extracranial vessels) पर यह क्रिया विशेष रूप से होती है। इसका उपयोग अर्धावभेद (Migraine) की चिकित्सामें किया जाता है।

गर्भाशय पर इसकी क्रिया गर्भाशय के अनैच्छिक सूत्रों पर उत्तेजक प्रभाव होता है, **जिससे गर्भाशय में संकोच होने लगते हैं।** यह संकोच (१) साधारण मात्रा (Moderate

dose) में औषधि के प्रयुक्त होने पर तीव्रतर, अधिक काल तक तथा थोड़े-थोड़े अन्तर से होते हैं, जो प्रसव के हेतु अधिक उपयुक्त होते हैं। यह संकोच गर्भाशयिक पेशी-सूत्रों के चेष्टा-कारक उत्तेजक नाड़ी-सूत्रों (Motor excitory nerve-endings) की उत्तेजना के कारण होते हैं। (२) अधिक मात्राओं में औषधि का सेवन करने से उक्त संकोच अतिप्रबल एवं विना अन्तर के (More powerful and spastic without relaxation) होते हैं। उक्त क्रिया सगर्भगर्भाशय (Gravid uterus) पर अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट होते हैं। शरीर के बाहर पृथककृत गर्भाशय (Isolated uterus) पर भी परीक्षण में उक्त प्रभाव दिखाई पड़ता है।

अर्गोटामीन में भी गर्भाशयोत्तेजक क्रिया (Oxytocic action) अर्गोटॉक्सीन की ही भांति होती है, किंतु इसकी विशेषता यह है, कि अर्गट के सभी योगों में इसकी उक्त क्रिया अधिक स्थायी होती है। दूसरे इसके यौगिकों के मौखिक सेवन से भी उतना ही प्रभाव होता है, जितना सूचिकाभरण-द्वारा प्रयोग से होता है। चिकित्सा में इसके टारट्रेट यौगिक "अर्गोटामीन टारट्रेट" का व्यवहार किया जाता है।

(२) अर्गोमेट्रीन या अर्गोनोवीन—यह अर्गट का जल-विलेय अल्कलायड् है, और अर्गट की क्रिया प्रधानतः इसीके कारण होती है। अर्गट के अन्य क्षारोदों की भांति यह क्षोभक प्रभाव भी कम करता है तथा आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा इसका शोषण भी क्षिप्रतापूर्वक होता है। दूसरी विशेषता इसकी यह है, कि अर्गोटाक्सीन समुदाय के क्षारोदों की अपेक्षा इसका प्रभाव शीघ्रतापूर्वक (मुखद्वारा सेवन किए जाने पर ५–८ मिनट के अन्दर; पेशीगत सूचिकाभरण से ३–८ मिनट में तथा शिरागत सूचिकाभरण से १ मिनम में) होता है, किंतु उनकी अपेक्षा यह प्रभाव कम स्थायी होता है। गर्भाशय के अतिरिक्त अन्य अनैच्छिक सूत्रों पर इसका प्रभाव बहुत कम होता है तथा कोथोत्पत्ति की सम्भावना भी इसमें कम होती है अतएव गर्भपातक क्रिया (Oxytocic action) के लिए यह सबसे उपयुक्त होता है।

क्रियातियोग (Over action) की अवस्था में निम्नलक्षण उत्पन्न होते हैं—केन्द्रिक नाड़ी-संस्थान पर उत्तेजक प्रभाव होने से, दुर्बलता, कम्प (Tremor) तथा पेशियों में (विशेषतः हाथ-पैर की) आक्षेप (Convlsion)। इसके अतिरिक्त स्वतंत्र नाड़ी-मण्डल की उत्तेजना के कारण कनीनिका-विस्फार, बहिर्नेत्रता (Exophthalmos), तथा रोंगटों का खड़ा होना एवं हृच्छीघ्रता आदि।

अन्य सांस्थानिक गुण-कर्म पचन-संस्थान—स्वाद में तिक्त होने के कारण मौखिक सेवन से लालास्राव की वृद्धि होती है। आंत्र की गति पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता। हृदय-हृदय पर उत्तेजक प्रभाव होता है। नाड़ी की गति में पहले वृद्धि होती है किन्तु बाद में यह गति मन्द पड़ जाती है। श्वसन—पहले श्वसन-केन्द्र पर उत्तेजक प्रभाव होता है। किन्तु बाद में यह केन्द्र को अवसादित करता (Depresses) है। मृत्यु श्वासावरोध (Asphyxia) के कारण होती है। विभिन्न स्राव (Secretion)—परिसरीय धमनिकाओं का संकोच होने से स्रावी ग्रंथियों के रक्तभ्रमण में भी दुर्बलता आती है, जिससे स्वेद, लालास्राव, दुग्धस्राव तथा मूत्रजनन में कमी आती है।

अर्गटजन्य विषमयता (Ergot Poisoning)--(१) उग्र विपाक्त प्रभाव (Acute toxic action)—अर्गट के सेवन के परिणामस्वरूप उग्र विषमयता की अवस्था अपेक्षाकृत कम देखने को मिलती है। परन्तु कभी-कभी यह स्थिति सहसा अत्यधिक मात्रा में अर्गट के सेवन से (मात्रातियोग) हो जाती है। ऐसी स्थिति में निम्न लक्षण होते हैं—नाड़ी अत्यन्त दुर्बल हो जाती है, किन्तु उसकी गति तीव्र होती जाती है; त्वचा में झुनझुनाहट (Tingling) तथा खुजली मालूम होती है; अत्यधिक तृष्णा अनुभव होता है तथा आमाशयान्त्रप्रदाह (Gastro-enteritis) के लक्षण प्रकट होते हैं; गर्भाशय से रक्तस्राव (Uterine haemorrage) होता तथा गर्भस्राव (Abortion) हो जाता है। रोगी को अन्त में सन्यास (Coma) की स्थिति हो जाती है, तथा श्वसन-भेद (Respiratory failure) से मृत्यु हो जाती है। कभी-कभी गर्भस्राव न होने पर भी घातक विपाक्त प्रभाव होकर रोगी का प्राणान्त हो जाता है।

चिरकालीन विषमयता या अर्गटमयता (Chronic poisoning : "Ergotism")—इस प्रकार का रोग प्राय: यूरोपीय देशों की गरीब जनता में देखा जाता है, जहाँ लोग अर्गट की राई का प्रयोग खाद्य के रूप में करते हैं। ऐसी स्थिति में २ प्रकार की विकृतियाँ होती हैं; (१) इसमें हाथ-पैर अँगुलियों में कोथ की स्थिति होती है। इसे कोथजनक अर्गट विषमयता (Gangrenous Ergotism) तथा (२) इसमें नाड़ीसंस्थान की विकृति होती है, जिससे अपस्मार की भाँति आक्षेप (Epilepti-form convulsion) होते हैं। इसे आक्षेपजनक अर्गट विषमयता (Convulsive Ergotism) कहते हैं।

आमयिक प्रयोग।

चिकित्सा में अर्गट का प्रधान उपयोग प्रसूतिशास्त्र में इसकी गर्भाशयिक क्रिया के लिए किया जाता है। गर्भाशयिक संकोच जब दुर्बल होते हैं, जिससे गर्भ के पुरस्सरण गति में विलम्ब होता है, तो इसका प्रयोग किया जाता है। किन्तु अपत्य-पथ में यान्त्रिक अवरोध होने की अवस्था में इसका प्रयोग भूलकर भी नहीं करना चाहिए। वास्तव में अब अर्गट का अधिक प्रयोग प्रसव हो जाने के पश्चात् तथा अपरा (Placenta) के निकल जाने के बाद होने वाले प्रसवोत्तर रक्त-स्राव (Past-partum haemorrhage) के रोकने के लिए किया जाता है। इसके लिए प्रथम २० बूंद की मात्रा में अर्गट का प्रवाही घनसत्व (लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट) दिया जाता है, और तत्पश्चात् १५ बूंद की मात्रा दिन में तीन बार दी जाती है। इसके लिए टॅबलेटस का भी व्यवहार कर सकते हैं। तात्कालिक प्रभावके लिए १ सी० सी० की मात्रा में अर्गोमेट्रीन का इन्जेक्शन पेशी में दिया जाता है। यदि आवश्यकता हो तो ½ सी० सी० की पिटोसिन (पिच्युटरी एक्स्ट्रैक्ट) भी मिला दिया जाता है। इसके स्थान में अर्गोमेट्रीन एसिड मेलिएट की ½ से १ मिलीग्राम की टिकिया मुखद्वारा अथवा १ सी० सी० की मात्रा में पेशीगत या शिरागत सूचिकाभरण भी किया जा सकता है। अर्गोडेक्स (Ergodex) की १ औंस, ४ औंस एवं १६ औंस या एक पौंड की पैकिंग भी बाजार में मिलती है। इसमें अर्गोटॉक्सीन तथा अर्गो-मेट्रीन दोनों तत्व होते हैं। १० से २० बूंदकी मात्रा में दिन में ३–४ बार के क्रम से इसका भी प्रयोग किया जा सकता है।

गर्भावस्था के अतिरिक्त गर्भाशय पर अर्गट की क्रिया उतनी प्रबल नहीं होती। ऐसी अवस्था में यह गर्भाशय पर आर्तव प्रवर्तक (Emmenagogue) प्रभाव करता है। अतएव

ऐसी अवस्थामें इसका प्रयोग गर्भाशय के अनेक रक्तस्रावी रोगों में उपयोगी होता है। इसी आधार पर अर्गट का प्रयोग अशोक या हाइड्रास्टिस तथा अन्य औषधियों के साथ रक्तप्रदर (Menorrhagia and Metrorrhagia) एवं गर्भाशय के रक्तगुल्म (Fibroid) आदि रोगों में किया जाता है।

अर्गोटामीन का प्रयोग अन्य अनेक व्याधियों में भी किया जाता है। करोटि के परिसरीय रक्त-वाहिनियों में उद्वेष्ठ (Spasm) का निवारण करने के कारण यह अर्धावभेद (Migraine) या दौरे से होने वाले शिरःशूल (सिरदर्द) में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके लिए अर्गोटामीन का अधस्त्वक् (Hypodermic) या पेशी में (Intramuscularly) सूचिकाभरण या इंजेक्शन (०·२५ से ०·५ मिलिग्राम) दिया जाता है। प्रायः दर्द के दौरे का १ घंटे के अन्दर शमन हो जाता है। परन्तु यदि आवश्यकता हो तो १–१ घंटे के अन्तर से ३ इंजेक्शन तक देने की आवश्यकता पड़ती है। एतदर्थ इसका मौखिक सेवन भी करा सकते हैं। इसके लिए १ मिलि ग्राम ($\frac{1}{60}$ ग्रेन) की टिकिया १–१ घंटे के अन्तर से ६ टिकिया तक दे सकते हैं। इन टिकियों का जिह्वाधः प्रयोग (Sublingual) भी करने से वही प्रभाव होता है। शीतपित्त (Urticaria) में भी अर्गोमेट्रीन का प्रयोग (अर्गोमेट्रीन $\frac{1}{30}$ से $\frac{1}{60}$ ग्रेन प्रतिदिन मुखद्वारा) कभी-कभी उपयोगी सिद्ध होता है।

इसके अतिरिक्त हर्पीज़ जोस्टर (Herpes Zoster) एवं मीनर के रोग (Meniere's disease) में भी अर्गोमेट्रीन का प्रयोग गुणकारी होता है। हर्पीज जोस्टर में साधारण अवस्थाओं में इसका सेवन मुखद्वारा कराया जाता है। उग्र अवस्था में प्रतिदिन $\frac{1}{2}$ से १ मि० ग्रा० की मात्रा इन्जेक्शन द्वारा दी जाती है, और इस प्रकार ६ दिन तक देते हैं। मीनर के रोग में $\frac{1}{2}$ से १ सी० सी० की मात्रा आवश्यकतानुसार १–२ घंटे के अन्तर से १–३ बार दी जाती है। आत्ययिक अवस्थाओं में $\frac{1}{2}$ मिलिग्राम का पेशीगत इंजेक्शन दिया जाता है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—बसर्जिन (Basergin)—यह भी अर्गोमेट्रीन टारट्रेट का योग है। इसकी टिकिया आती है। प्रत्येक टिकिया में $\frac{1}{240}$ ग्रेन या ०·२५ मिलिग्राम औषधि होती है। अथवा इन्जेक्शन के लिए इसके एम्पूल्स भी आते हैं। प्रत्येक मि० लि० या सी० सी० में $\frac{1}{320}$ ग्रेन या ०·२ मि० ग्रा० औषधि होती है। मात्रा—१ टिकिया या इन्जेक्शन के लिए १ सी० सी०।

२—नियो फेमर्जिन (Neo-Femergin) या नियो-गाइनर्जेन (Neo-Gynergen)—प्रत्येक टॅबलेट या टिकिया में अर्गोमेट्रीन $\frac{1}{480}$ ग्रेन या ०·१२५ मि० ग्राम; तथा $\frac{1}{240}$ ग्रेन या ०·२५ मि० ग्रा० औषधि होती है।

(अर्गोटामीन के नॉन्-ऑफिशल योग)

केफर्गट (Cafergot)—प्रत्येक टिकिया में १ मि० ग्रा० में अर्गोटामीन टारट्रेट तथा १०० मि० ग्रा० कफीन होता है। सरदर्द में कफीन के साथ अर्गोटामीन का प्रयोग करने से अल्पमात्रा में अधिक फायदा होता है। मात्रा—प्रारम्भ में २ टिकिया मुखद्वारा। इसके बाद $\frac{1}{2}$–$\frac{1}{2}$ घंटे पर १–१ टिकिया मुखद्वारा लें। जब तक सिरदर्द बन्द न हो जाय। टोटलमात्रा ६ टॅबलेट्स।

बेलर्गल Bellergal (नॉट्-ऑफिशल)—इसकी टिकिया होती हैं, जिनमें प्रत्येक टिकिया में अर्गटामीन टारट्रेट ०·३ मिलग्राम, l-hyoscyamine ०·१ मिलिग्राम तथा फेनोबार्बिटोन ०·०२ ग्राम होता है।

अर्गट के उपयोगी नुस्खे:—

(१) एक्स्ट्रैक्ट० अर्गट लिक्वि० २० बूंद
क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड ४ ग्रेन
टिंक्चर डिजिटेलिस ५ बूंद
स्प्रिट क्लोरोफॉर्म १५ बूंद
एक्वा (जल) इतना मिलाये कि सब मिलकर १ औंस हो जाय।

प्रयोग—इस मिक्स्चर का प्रयोग प्रसूता को (during puerperium) कराया जाता है, जिससे गर्भाशय को अपनी पूर्वस्थिति में आने (Involution of the uterus) में सहायता एवं शीघ्रता हो जाती है।

(२) एक्स्ट्रैक्ट अर्गट लिक्विड १५ (मिनम्)
स्प्रिट वाइनाइ गैलिसाइ (Spt. Vini Gallici) ३० बूंद
सिरप ऑरन्शाई (शरवतनारंग) १ ड्राम
एक्वा मेन्था-पिप० १ औंस तक

प्रयोग—ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार देना चाहिए। इसका प्रयोग प्रसवोत्तर कालिक रक्तस्राव (Postpartum haemorrhage) को रोकने के लिए किया जाता है।

(३) क्विनीन० सल्फ० ३ ग्रेन
एसिड० सल्फ० डिल० १० बूंद
एक्स्ट्रैक्ट अर्गट लिक्विड २० बूंद
एक्वा क्लोरोफॉर्म १ औंस तक।

प्रयोग—मिक्सचर नं० २ की भाँति।

(४) फेराइसल्फास एक्सिकेटस १ ग्रेन
अर्गोटीन २ ग्रेन
एक्स्ट्रैक्ट नक्सवॉमिका सिक्कस ½ ग्रेन
ग्लिसेरिनम् ट्रॉगाकान्थ० आवश्यकतानुसार इसकी गोलियाँ (Pills) बनावें।

प्रयोग—इसका प्रयोग आर्तव-प्रवर्तक के रूप में रजःकृच्छ (Dysmenorrhoea) में उपयोगी होता है।

(५) एक्स्ट्रैक्ट० अर्गट० लिक्विड १५ बूंद
एक्स्ट्रैक्ट अशोक० लिक्विड० १ ड्राम
सिरपस (Syrupus) १ ड्राम
जल आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए
सब मिलाकर १ मात्रा

प्रयोग—उक्त मिश्रण की १ मात्रा दिन में तीन चार दें। रक्तप्रदर (Menorrhagia) में उपयोगी है।

(६) अर्गोसील Ergosel (Hind.)—यह अरगट का बना-बनाया यौगिक है। हिन्द कम्पनी की औषधि है। इसके कैप्स्यूल्ज आते हैं। एक कैप्स्यूल दिन में ३ बार। इसका प्रयोग प्रसव के तृतीयावस्था में जब अपरा निकल गया हो तब करना चाहिए। अपरिहार्य गर्भस्राव (Inevitable

or incomplete abortion)में भी इसका व्यवहार किया जाता है। मात्रा—पूर्ववत्। इससे दोनों ही कार्य होता है। गर्भस्राव समुचित रूप से हो जाता है और बाद में रक्तस्राव भी बन्द हो जाता है।

(नॉट् ऑफिशल)

हाइड्रेस्टिस् राइज़ोमा

Family : Ranunculaceae (वत्सनाभ-कुल)

नाम—हाइड्रेस्टिस् राइजोमा Hydrastic Rhizoma—ले०; हाइड्रेस्टिस् Hydrastis, गोल्डेन सील Golden. Seal, यलोरूट Yellow Root—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह हाइड्रेस्टिस् केनाडेन्सिस (Hydrastis canadensis Linn.) नामक पौधे का शुष्क किया हुआ राइजोम तथा मूल होता है।

उत्पत्ति-स्थान—संयुक्तराष्ट्र-अमरीका (U. S. A.), कनाडा तथा यूरोप।

वक्तव्य—'Hydrastis' शब्द यूनानी से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ होता है "to accomplish or act with water"। इसका विशिष्ट नाम (Specific name) 'Canadensis' इसके उद्भवस्थल 'कनाडा' के आधार पर रखा गया है।

वर्णन—हाइड्रेस्टिस् के छोटे-छोटे बहुवर्षायु पौधे (Perennial plants) होते हैं। इसका राइजोम टेढ़ा-मेढ़ा (Tortuous) तथा स्तम्भाकार (Cylindrical) लम्बाई में १ से ६ सेंटीमीटर तथा मोटाई में ३ से १० मिलिमिटर होता है, जो भूमि के अन्दर क्षैतिजदिशा में (Horizontally) अथवा तिरछे रूप से (obliquely) बढ़ता है। बाह्यतः यह पीताभ-भूरेरंग (Yellowish-brown) का होता है तथा राइजोन पर सर्वत्र टूटी हुई लम्बी-लम्बी रज्ज्वाकार जड़ों (wiry roots) का अवशेष लगा होता है। राइजोम के ऊर्ध्व तल पर अनेक टूटे हुए वायव्य काण्डों के आधार भाग (Stem-bases) तथा शल्कपत्र (Scale-leaves) लगे होते हैं। तोड़ने पर यह खट से तथा रालीय द्रव्य की भांति टूटता (Fracture short and resinous) है और टूटा हुआ तल गाढ़े पीले रंग से पीताभ-भूरे रंग का होता है। इसमें एक हल्की किन्तु विशिष्ट गंध होती है तथा स्वाद में तिक्त होता है। मुंह में इसका टुकड़ा चबाने से लालास्राव को पीला कर देता है।

चित्र १४—हाईड्रेस्टिस् केनाडेन्सिस का पौधा।

रासायनिक संघटन—इसके प्रधान सक्रिय घटक निम्न ३ क्षारोद (Alkaloids) होते हैं—(१) हाइड्रेस्टीन (Hydrastine); (२) बर्बेरीन (Berberine) तथा (३) केनाडीन (Canadine)। इसके अतिरिक्त इसमें रेजिन, स्टार्च एवं अल्पमात्रा में एक उड़नशील तैल भी पाया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

बाह्य—व्रणों पर लगाने से हाइड्रास्टिस उत्तेजक (Stimulant) एवं जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) प्रभाव करता है। एतदर्थ पुराने व्रणों पर जो जल्दी न भर रहा हो, इसको लगाने से लाभप्रद सिद्ध होता है। विचर्चिका (Eczema) एवं मुखदूषिका या मुहासे (Acne) पर मलहर के रूप में इसको लगाने से बहुत लाभ होता है। एतदर्थ १ औंस सादे मलहम (Simple Ointment) या वैसलीन (Vasleine) में ५ से २० ग्रेन हाइड्रास्टीन मिलाकर उक्त मलहम को प्रयुक्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त स्थानिक प्रयोग से श्लैष्मिक कलाओं (Mucous Membranes) पर यह ग्राही (Astringent), रक्तस्तम्भक (Haemostatic) एवं शोथघ्न प्रभाव करता है, अतएव श्लैष्मिक कलाओं के चिरकालीन शोथयुक्त विकारों एवं विभिन्न रक्तस्रावी रोगों (यथा नकसीर फूटना, गुद एवं मूत्रमार्ग के रक्तस्राव) में एक पाइंट (आध सेर) जल में २ से ४ ड्राम लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट मिलाकर उक्त द्रव से धावन किया जाता है। इसी प्रकार नाक, कान, गल-मूत्रप्रसेक (Urethra) एवं योनिपथ (Vagina) आदि की श्लैष्मिककला-शोथ एवं स्राव में उक्त द्रव से धावन करने से बहुत लाभ होता है।

आभ्यन्तर—मुखद्वारा सेवन करने से यह अल्पमात्रा में तिक्तबल्य (Bitter tonic) एवं अधिक मात्रा में पर्यायज्वरहर (Antiperiodic) होता है। चिरकालीन आमाशयान्त्रिक प्रसेक (Chronic gastric and intestinal Catarrh) में भी यह बहुत उपयोगी है। इसके अतिरिक्त हाइड्रेस्टिस धमनियों एवं गर्भाशय के अनैच्छिक पेशीसूत्रों पर संकोचक प्रभाव करता है, जिससे यह रक्तस्तम्भक (Haemostatic) एवं गर्भशातक (Ecbolic) होता है। अधुना चिकित्सा में हाइड्रेस्टिस की इसी क्रिया का उपयोग किया जाता है। इस रूप में यह अर्गट की स्थानापन्न औषधि समझी जाती है और गर्भाशयान्तःकलाशोथ एवं गर्भाशय के रक्तस्रावी रोगों में यह औषधि बहुत उपयोगी समझी जाती है। अतएव रक्तप्रदर (Menorrhagia) एवं रजःकृच्छ्रता (Dysmenorrhoea) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी है। उपर्युक्त अवस्थाओं में इसको अर्गोटिन (Ergotin), एक्स्ट्रैक्ट अशोक, एवं कोटार्निन (Cotarnine) आदि के साथ प्रायः गोली के रूप में व्यवहृत करते हैं।

(नॉन्-ऑफिशल योग।)

१—एक्स्ट्रैक्टम् हाइड्रेस्टिस् लिक्विडम् Extractum Hydrastic Liquidum—ले०। इसमें २% हाइड्रेस्टीन नामक क्षारोद होता है। मात्रा—५ से १० मिनम् या ०·३ से १ मि० लि०।

२—हाइड्रेस्टिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Hydrastinae Hydrochloridum—ले०; हाइड्रेस्टीन हाइड्रोक्लोराइड Hydrastine Hydrochloride—अं०। यह सफेद रंग का अथवा क्रीमरंग का गंधहीन चूर्ण होता है जो जल में विलेय (Soluble) होता है। मात्रा—$\frac{1}{4}$ से १ ग्रेन या १६ से ६० मि० ग्रा० (मुखद्वारा orally अथवा अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा hypodermically)।

३—हाइड्रेस्टिनीनी हाइड्रोक्लोराइडम् Hydrastininae Hydrochloridum—ले०; हाइड्रस्टिनीन हाइड्रोक्लोराइड Hydrostinine Hydrochloride—अं०। यह हल्के पीले रंग का मणिभीय चूर्ण (Crystalline Powder) होता है, जो जल में विलेय होता है। मात्रा—¼ से ½ ग्रेन या १६ से ३० मि० ग्रा० मुखद्वारा अथवा अधस्त्वगमार्ग द्वारा।

हाइड्रास्टिस के उपयोगी योगः—

(१) हाइड्रास्टिन	¼ ग्रेन
अर्गोटिन	१ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्टम् सिमिसिफ्यूजी (Extractum Cimicifugae)	½ ग्रेन

प्रयोग—सबको मिलाकर गोली बनावें रक्तप्रदर (Menorrhagia) में उपयोगी है।

(२) एक्स्ट्रॅक्ट ऑव कनाबिस इन्डिका	¼ ग्रेन
अर्गोटिन	१ ग्रेन
हाइड्रास्टिन हाइड्रोक्लोराइड	½ ग्रेन
कोटारनीन हाइड्रोक्लोराइड	¼ ग्रेन

ग्लिसेरिन ट्रागाकान्थ आवश्यकतानुसार सबको मिलाकर गोली बनावें।

प्रयोग—वेदनायुक्त रक्तप्रदर (Menorrhagia) में उपयोगी है।

(३) एक्स्ट्रॅक्ट हाइड्रास्टिस लिक्विड	१० बूंद
लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव अर्गट	१५ बूंद
लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव अशोक	६० बूंद
साधारण सिरप	१ ड्राम
जल	१ औंस तक

प्रयोग—ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार रक्तप्रदर (Menorrhagia) में उपयोगी है।

इन्जेक्शिओ पिटु(च्यु)टेराइ पोस्टीरिओरिस (I. P.)

(पश्चिम पीयूषग्रंथिसत्व का इंजेक्शन)

पर्याय—इन्जेक्शिओ पिच्युटेराइ पोस्टीरिओरिस Injectio Pituitarii Posterioris (Inj. Pituit. Post.); एक्स्ट्रॅक्टम् पिच्युटेराइ लिक्विडम् Extractum Pituitarii Liquidum—ले०; पिच्युटरी (पोस्टीरियर लोब) एक्स्ट्रॅक्ट Pituitary (Posterior Lobe) Extract; पिच्युटरी एक्स्ट्रॅक्ट (Pituitary Extract); पोस्टीरियर पिच्युटरी इन्जेक्शन Posterior Pituitary Injection; पिच्युट्रीन (Pituitrin)—अं०; पश्चिम पीयूषग्रंथि सत्व या पश्चिम पीयूषग्रंथि सत्व का इंजेक्शन।

प्राप्ति-साधन—जिन स्तनधारी जन्तुओं (Mammals) के मांस का व्यवहार खाद्य के रूप में (यथा वृषभ आदि) होता है, उनके पीयूषग्रन्थि या पिच्युटरी ग्लैंड के पश्चिम खण्ड (पोस्टीरियर लोब) का जलीय सत्व (Aqueous extract) होता है, जिसको विशिष्ट पद्धतिद्वारा विशोधित या विसंक्रामित (Sterile) किया जाता है। इसके प्रति सी० सी० या मिलिलिटर में १० युनिट गर्भाशयोत्तेजक (Oxytocic) शक्ति होती है।

वर्णन—यह रंगहीन स्वच्छ द्रव के रूप में होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार हल्की गंध होती है। इसमें पीयूषग्रन्थि के पश्चिम खण्ड में पाये जाने वाले दोनों प्रकार के सक्रिय तत्व होते हैं, यथा—(१) ऑक्सिटोसिन (Oxytocin) या पिटोसिन (Pitocin)—यह गर्भाशय पर प्रभाव कर उसमें संकोच (Contractions) पैदा करता है, तथा रक्तचाप या भार (Blood pressure) पर कोई प्रभाव नहीं लक्षित होता, (२) वासोप्रेसिन (Vasopressin) या पिट्रेसिन (Pitressin)—इसकी क्रिया से रक्तवाहिनियों का संकोच होकर रक्तभार में वृद्धि होती है। इससे मूत्र-प्रजनन (Diuresis) एवं मूत्रावरोध (Anti-diuresis) दोनों ही क्रियायें होती हैं।

पिच्युएटरी एक्स्ट्रैक्ट की एक-एक मात्रा की एम्पूल्स (Ampoules) आती हैं। इसके लेबिल पर तथा पैकिंग पर निर्माण-तिथि (Date of manufacture) तथा औषधि के सक्रिय-काल की अवधि (अर्थात् कितने दिनों तक यह एम्पूल प्रयोग के योग्य रहेगा) भी लिखी होनी चाहिए। सतर्कतापूर्वक ठंढी जगह (रेफ्रिजरेटर) में रखने से प्रायः निर्माणकाल के १८ महीने बाद यह प्रयोग के काबिल रहता है। इसके अतिरिक्त यदि लेबिल पर मूत्रावरोधक एवं वाहिनी-संकोचक-शक्ति का उल्लेख हो तो उस पर प्रति सी० सी० (या मि० लि०) गर्भाशयोत्तेजक शक्ति (Number of oxytocic Units per ml.) का भी उल्लेख होना चाहिए।

मात्रा—३ से ८ मिनम् (बूंद) या ०·२ से ०·५ मि० लि० इसमें २ से ५ युनिट गर्भाशय-संकोचक (Oxytocic) शक्ति होती है। अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण (इन्जेक्शन) द्वारा।

इसके अतिरिक्त पीयूषग्रंथि के पश्चिम खण्ड में पाये जाने वाले दोनों तत्वों के अलग-अलग इन्जेक्शन भी आते हैं—

इन्जेक्शिओ ऑक्सिटोसिनाइ Injectio Oxytocini (Inj. Oxytoc.)-I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव ऑक्सिटोसिन **Injection of Oxytocin—**अं०। पर्याय—**ऑक्सिटोसिन (Oxytocin), पिटोसिन (Pitocin)**।

वर्णन—इन्जेक्शन ऑव आक्सिटोसिन विशोधित या विसंक्रामित जलीय-विलय (Sterible aqueous Solution) होता है, जो पीयूषग्रन्थि के पश्चिम खण्ड से बनाया जाता है; किन्तु इसमें केवल गर्भाशय संकोचक तत्व (Oxytocic principle) ही होता है। यह एक स्वच्छ एवं रंगहीन द्रव होता है। प्रत्येक सी० सी० (C. C.) या मिलिलिटर (ml.) में १० युनिट गर्भाशयसंकोचक तत्व (10 Units Oxytocic) होता है।

मात्रा—८ से १५ मिनम् (०·५ से १ मि० लि०) या (५ से १५ युनिट) या ½ से १ सी० सी०।

वक्तव्य—इसके १ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं, जिनपर निर्माणतिथि, सक्रिय-अवधि, सक्रिय तत्वों की युनिट मात्रा आदि का उल्लेख होता है। प्रायः १८ महीने के बाद औषधि प्रयोग के योग्य नहीं रहती।

इन्जेक्शिओ वासोप्रेसिनाइ Injectio Vasopressini (Inj. Vasopress.), B. P., I. P.,—ले०; इन्जेक्शन ऑव वासोप्रेसिन **Injection of Vasopressin, वासोप्रेसिन (Vasopressin), पिट्रेसिन (Pitressin)—**अं०।

वर्णन—यह भी विसंक्रामित जलीय विलयन होता है, जो पीयूषग्रंथि के पश्चिम खण्ड से बनाया जाता है, किन्तु इसमें केवल रक्तभारवर्धक (Pressor) एवं मूत्रावरोधक (Antidiuretic)

तत्त्व होते हैं। यह एक स्वच्छ रंगहीन द्रव के रूप में होता है। पैकिंग आदि पूर्ववत्। मात्रा—८ से २५ मिनम् (०.५ से १.५ मि० लि०) (या १ से १.५ सी० सी० : ५ से १५ युनिट) अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग।

चिकित्सा में पोस्टीरियर पिच्युटरी एक्स्ट्रैक्ट का प्रयोग मुख्यतः निम्न क्रियाओं के लिए किया जाता है—

(१) **गर्भाशय का संकोच कराने के लिए (Oxytocic)**; यह क्रिया सगर्भ गर्भाशय पर विशेष रूप से होती है।

(२) इसके अतिरिक्त यह रक्तभार में वृद्धि करता है, तथा आन्त्र की **अनैच्छिक पेशीसूत्रों पर भी संकोचक प्रभाव करता है**, जिससे शल्यकर्म के बाद आन्त्र को गतिशील बनाने के लिए भी इसका प्रयोग होता है। मूत्रप्रजनन पर यह **मूत्रावरोधक (Antidiuretic)** प्रभाव करता है।

इन दोनों समुदाय के कार्यों के कराने वाले तत्व आजकल (ऑक्सिटोसिन पिटोसिन **Pitocin** के रूप में तथा वासोप्रेसिन **पिट्रेसिन Pitressin** के रूप में) पृथक्-पृथक् रूप से प्राप्त किये जाते तथा उनके इन्जेक्शन आदि बाजार में उपलब्ध होते हैं। पिच्युटरी के उक्त गुण-कर्म विशेष रूप से **शिरागत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने** पर लक्षित होते हैं। **अधस्त्वक् सूचिकाभरण किये जाने पर (Subcutaneously)** भी वही सब क्रिया में लक्षित होती हैं, किन्तु अपेक्षाकृत मन्द रूप से। अक्षततत्वचा (**Unbroken skin**) से इसका शोषण बिल्कुल नहीं होता तथा मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र में पाचक रसों की क्रिया से वियोजित होकर निष्क्रिय हो जाता है। हाँ, नासा में इसका सीकर (Spray) करने से अथवा इसका फोया (**Plug**) रखने से तथा गुदमार्ग (**Rectum**) द्वारा प्रयुक्त किए जाने पर इसका शोषण होकर उपरोक्त क्रियाएँ होती है।

गर्भाशय—पोस्टीरियर पिच्युटरी का गर्भाशयसंकोचक तत्व (ऑक्सिटोसिन) **गर्भाशयिक पेशियों पर संकोचक प्रभाव** करता है। यह क्रिया सगर्भ गर्भाशय पर और विशेषतः प्रसवकाल में जब कि गर्भ निस्सरण के लिए गर्भाशयिक संकोच प्रारम्भ कर चुके हों तो विशेष रूप से होता है। अतएव जब अपत्य-पथ में कोई यांत्रिक अवरोध (Mechanical obstruction) न हो तथा गर्भाशय-मुख (Os) का विस्फार काफी हो चुका हो तो ऐसी अवस्था में **प्रसव-क्रिया के विलम्बित (Delayed labour) होने पर** पिच्युटरी (पिटोसिन) के इन्जेक्शन से प्रसव-क्रिया के शीघ्रतापूर्वक सम्पन्न होने में सहायता मिलती है। इस रूप में इसकी क्रिया अर्गट की भांति होती है, और इसका व्यवहार भी **अर्गट के सहायक औषधि के रूप में किया जाता है।** इसके अतिरिक्त प्रसव के बाद ½ से १ सी० सी० की मात्रा में अर्गोमेट्रीन के साथ इसका व्यवहार **प्रसवोत्तर रक्तस्राव (Postpartum haemorrhage)** रोकने के लिए भी किया जाता है।

महास्रोतस् या अन्नप्रणाली (Alimentary Canal)—पिच्युटरी लालास्राव (Salivary Secretion) एवं आमाशयिक एवं अग्न्याशयिक (Pancreatic) स्रावों को कम करता है। पिच्युटरी की मुख्य क्रिया आँतों के पेशीसूत्रों पर होता है **जिससे आंतों पर**

वल्यप्रभाव होता तथा पुरस्सरणगति (Peristalsis) में भी उत्तेजना मिलती है। यह क्रिया विशेषतः पिट्रेसिन (Pitressin) नामक तत्व के कारण होती है। अतएव चिकित्सा में इसका उपयोग शल्य-कर्म के बाद उत्पन्न आध्मान (Tympanitis) तथा आंतों की निष्क्रियता (Paralysis) में किया जाता है। इसके लिए पिट्रेसिन अथवा पोस्टीरियर पिच्युटरी एक्सट्रैक्ट का भी इंजेक्शन दे सकते हैं। इसके अतिरिक्त पित्त-नलिका या वृक्कों का एक्सरे-चित्रण करने के ½ घंटे पूर्व पिट्रेसिन (०.५ सी० सी० की २ मात्रायें) का इंजेक्शन देते हैं, जिससे आंतगत वायु खारिज हो जाती है और चित्र साफ आते हैं। आमाशयान्त्र के स्रावों पर अवरोधक प्रभाव करने के कारण यह आमाशयिक व्रण (Gastriculcer) आदि रोगों में भी यह उपयोगी हो सकता है।

हृदय तथा रक्तवाहिनियाँ—(१) रक्तवाहिनियाँ (Blood vessels)—पिच्युटरी का सिरागत सूचिकाभरण करने से धमनीगत रक्तभार में वृद्धि होती है। चिकित्सा में इसका उपयोग स्तब्धता (Shock) के निवारण के लिए किया जाता है। कभी-कभी बड़े शल्यकर्म में संज्ञाहरण करने (Anaesthesia) में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। तब तात्कालिक प्रभाव के लिए पिच्युटरी का इंजेक्शन दिया जाता है। (२) हृदय (Heart)—थोड़े समय के लिए हृदय की गति में वृद्धि-सी होती प्रतीत होती है, किन्तु वास्तव में यह हृदय की गति को मन्द करता है। यह क्रिया पिच्युटरी के हृत्पेशी पर प्रत्यक्ष प्रभाव के कारण अथवा हृदय-निरोधक (Vagal) केन्द्र पर प्रभाव के कारण होती है। हृदय के उत्क्षेपणकार्य में भी दुर्बलता आ जाती है, जिससे फुफ्फुसाभिगा धमनियों में भी अपेक्षाकृत कम राशि में रक्त फेंका जाता है और इस प्रकार फुफ्फुसीय रक्तपरिभ्रमणगत भार में भी कमी हो जाती है।

वृक्क—वृक्कों पर इसकी तात्कालिक क्रिया वैसे मूत्रलस्वरूप की सी होती प्रतीत होती है, किन्तु वास्तव में यह मूत्रावरोधक प्रभाव (Antidiuretic) करता है। यह क्रिया पिच्युटरी के प्रभाव से युरिनरी ट्यूब्यूल्स द्वारा जलीयांश का पुनः अधिक शोषण (Reabsorption) होने से होती है। अतएव चिकित्सा में इसका उपयोग मूत्रमेह (Diabetes insipidus) रोग की चिकित्सा के लिए किया जाता है। इसके लिए वासोप्रेसिन के २ से १० युनिट की दैनिक मात्रा दी जाती है। किन्तु इन्सुलिन की भाँति इसमें भी दोष है कि जब तक औषधि दी जाती है लाभ रहता है और जहाँ औषधि बन्द कर दी कि ज्यों का त्यों हो गया। अतएव बार-बार इन्जेक्शन न देना पड़े इसके लिए शुष्क पिट्रेसिन चूर्ण का नाक में प्रधमन (Insufflation) कर दिया जाता है अथवा पिट्रेसिन टैनेट (Pitressin tannate in oil) के ½ से १ सी० सी० की मात्रा में दिन में १ बार पेशीगत इन्जेक्शन दे दिया जाता है। इस प्रकार दिन में बार-बार औषधि प्रयोग नहीं करना पड़ता।

हर्पीज जोस्टर (Herpes Zoster) रोग के प्रारम्भिक अवस्था में प्रतिदिन ½ से १ सी० सी० की मात्रा में पिच्युट्रिन का इंजेक्शन देने से वेदना का शमन होता है तथा रोग का मयाद भी कम हो जाता है।

कभी-कभी पिच्युटरी की खराबी से होनेवाले मेदोरोग (Obesity) में पूर्णग्रंथितत्व का प्रयोग उपयोगी होता है। एतदर्थ इसको थायरायड एक्स्ट्रक्ट (प्रत्येक ½ ग्रेन) के साथ प्रयुक्त करते हैं।

शरीरसमवर्त-क्रिया (Metabolism)—ऑक्सिटोसिन की यकृत पर क्रिया होने से पिच्युटरी इंजेक्शन से ग्लाइकोजन (मधुजनि) ग्लूकोज के रूप में परिणित होता (Glycogenolysis) तथा इस प्रकार रक्तगत शर्करा की प्रतिशतक मात्रा में वृद्धि होती है। अतएव इन्सुलिन के मात्राधिक्य के कारण उत्पन्न रक्तगत शर्करा की कमी (Hypoglycaemia) में पिच्युटरी इंजेक्शन लाभप्रद हो सकता है।

पिच्युटरी के व्यावसायिक (या कम्पनियों द्वार निर्मित) योग :—

१—पिटोसिन (Pitocin)। इसमें केवल गर्भाशय संकोचक तत्व (Oxytocic) होता है।

२—ओरास्थिन (Orasthin)। इसमें भी गर्भाशयसंकोचक (Oxytocic) तत्व होता है।

३—पिट्रेसिन (Pitressin)।

४—टोनेफिन (Tonephin)।

इन दोनों में आन्त्रसंकोचक तत्व होता है। ½ से १ सी० सी० मात्रा में अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा (Subcutaneously)।

५—एड्रिनो-पिच्युटरी (Adreno-pituitary)। इसे इवेटमीन (Eevatmine) भी कहते हैं। इसमें एड्रिनेलीन तथा पोस्टीरियर पिच्युटरी सत्व दोनों ही होते हैं। तमक-श्वास (Bronchial asthma) का दौरा रोकने के लिए प्रयुक्त होता है।

६—ओरेस्थिन Orasthin (oxytocin)–Hoechst—३ युनिट (I. U.) एवं १० युनिट (I. U.) के १ सी० सी० के एम्पूल्स।

हिस्टामिनी फॉस्फास एसिडस्, I. P., B. P.
(हिस्टामीन फॉस्फेट)

रासायनिक संकेत : $C_5H_9N_3, 2H_3PO_4$.

नाम—हिस्टामिनी फॉस्फास एसिडस् Histaminae Phosphas Acidus (Histam. Phosph. Acid.)—ले०; हिस्टामीन एसिड फॉस्फेट (Histamine Acid Phosphate); हिस्टामीन फॉस्फेट Histamine Phosphate—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह हिस्टामीन का डाइ-एसिड फॉस्फेट (4-2'—aminoethyliminazole होता है, जो फॉस्फोरिक एसिड एवं हिस्टामीन की परस्पर क्रिया से प्राप्त होता है। हिस्टामीन प्रकृति में अनेक द्रव्यों में पाया जाता है। यह अनेक जान्तव एवं वानस्पतिक धातुओं (Tissues) में जीवाणुओं (Bacteria) की क्रिया से प्रोटीन के वियोजन (एमिनो-एसिड्स में) के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है। अनेक शल्य-कर्म एवं विस्तृत क्षेत्र में दग्धव्रण (Burn) होने पर हिस्टामीन जैसे तत्वों की उत्पत्ति होकर उनके रक्तपरिभ्रमण में पहुँचने पर स्तब्धता (Shock) आदि भयंकर उपद्रव होते हैं। अनेक जन्तुओं के आन्त्रिक श्लैष्मिक-कला (Intestinal mucosa), यकृत्, प्लीहा, हृदय एवं फुफ्फुस आदि से हिस्टामीन स्वतन्त्र रूप से (Isolated) प्राप्त किया जाता है। आजकल यह कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषणद्वारा (Synthetically) भी बनाया जाता है। रासायनिक दृष्टि से हिस्टाडीन (Histadine) से कार्बनडाइ-ऑक्साइड (CO_2) के अणुओं के पृथक्करण करने से हिस्टामीन प्राप्त होता है।

वर्णन—हिस्टामीन फॉस्फेट के रंगहीन एवं गंधहीन लम्बे त्रिपार्श्विक क्रिस्टल्स (Long prismatic Crystals) होते हैं, जो ४ भाग जल में घुलनशील होते हैं। अल्कोहल् (९५%) में यह अल्पतः विलेय होता है।

इसका संरक्षण अच्छी तरह डाट-बन्द पात्रों में करना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—$\frac{१}{१२०}$ से $\frac{१}{६०}$ ग्रेन (०·५ से १ मि० ग्रा०) अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

हिस्टामीन के गुण-कर्म शिरागत इंजेक्शन द्वारा पूर्ण रूप से लक्षित होते हैं; किन्तु अधस्त्वक् सूचिकाभरण या पेशीगत इंजेक्शन से भी यह पर्याप्त मात्रा में सक्रिय होता है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर इसका क्रिया-व्यापार प्रायः नहीं के बराबर होता है। अट्रोपीन द्वारा इसकी क्रियाओं पर विरोधी प्रभाव नहीं लक्षित होता।

बाह्य—त्वचा पर साधारण खरोंच लगाकर हिस्टामीन का विलयन (१००० में १) लगाने से प्रतिक्रियास्वरूप तीन प्रकार के लक्षण दिखाई पड़ते हैं, जिन्हें "लीविस का त्रिलयिक लक्षण Lewis' Triple response" कहते हैं। प्रथम उस स्थान पर वैवर्ण्य (Pallor) उत्पन्न होता है तदनु केशिकाओं के विस्फार (Dilatation of the capillaries) के कारण रक्तिमा तथा साथ ही शीतपित्त की भाँति चकत्ता पैदा होता है। जिन व्यक्तियों में हिस्टामीन के प्रति संवेदनाशीलता की प्रवृत्ति होती है, उनमें ½ से १ मि० ग्राम के एक इंजेक्शन मात्रा से इस प्रकार के लक्षण सर्वत्र शरीर की त्वचा पर हो सकता है।

इसके अतिरिक्त हिस्टामीन के प्रभाव से आमाशय, आंत, श्वासनलिका एवं सगर्भ अथवा अगर्भ गर्भाशय (Pregnant or non-pregnant uterus) आदि की अनैच्छिक पेशियों पर संकोचक प्रभाव लक्षित होता है। हिस्टामीन की किया लालाग्रंथि, आमाशयिकग्रंथि अग्न्याशयिकग्रंथि एवं अश्रुग्रंथि आदि ग्रन्थियों पर भी होता है, जिससे इनके स्रावों में वृद्धि होती है।

विषाक्त प्रभाव—सामान्यतया शरीर में विशेषता वृक्कों एवं आंतों की धातु (Tissues) में हिस्टामिनेस (*Histaminase*) नामक किण्व (*Enzyme*) पाया जाता है जो आवश्यकता पड़ने पर हिस्टामीन को निष्क्रिय करता रहता है। अतएव मात्रातियोगजन्य लक्षणों की सम्भावना कम रहती है। इस प्रकार का संकट कभी-कभी शिरागत सूचिकाभरण द्वारा हो सकता है। ऐसी अवस्था में अनावधानिक स्तब्धता (Anaphylactic shock) के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

हिस्टामीन के द्वारा अनेक कुप्रभावों एवं उपद्रवों की आशंका होने से चिकित्सा में इसका प्रयोग बहुत सीमित रूप से किया जाता है। हिस्टामीन एसिड फॉस्फेट का प्रयोग विशेषतः आमाशयिक रस की अनम्लता Achylia gastrica" रोग के निदान के लिए किया जाता है। परीक्षणार्थ पहले आहार देकर तुरंत ½ से १ सी० सी० (१००० में १ का सॉल्यूशन) का इंजेक्शन दिया जाता है। प्रत्येक २० मिनट के बाद आमाशयगत आहार को यन्त्रविशेष से आचूषित कर (Aspirated) बाहर निकाल कर इसकी अम्लता का परीक्षण किया जाता है। यदि इस प्रकार अम्ल की मात्रा में वृद्धि नहीं पाई जाती तो यह वास्तविक अनम्लता रोग का द्योतक होता है, और चिरकालीन आमाशय प्रदाह (Chronic gastritis) का संदेह मिट जाता है।

कभी-कभी इसका प्रयोग संधिशोथ (Rheumatoid arthritis), आस्टिओ-आरथ्राइटिस (Osteo-arthritis) एवं इसी प्रकार की अन्य विकृतियों में भी किया जाता है।

एतदर्थ औषधि का इन्जेक्शन, एवं मर्दन (Inunction) अथवा आयोनाइजेशन के रूप में व्यवहार किया जाता है। ०·१ मि० ग्रा० से उत्तरोत्तर मात्रा ०·५ मि० ग्रा० तक बढ़ाई जाती है और सप्ताह में २ बार इसका इन्जेक्शन देते हैं। कभी-कभी विशिष्ट प्रकार के शिरःशूल में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

(ऑफिशल-योग)

१—इन्जेक्शिओ हिस्टामिनी फॉस्फेटिस एसिडाई Injectio Histaminae Phosphatis Acidi Inj. Histam. Phosph. Acid.)—ले०; इन्जेक्शन ऑव हिस्टामीन एसिड फॉस्फेट (Injection of Histamine Acid Phosphate)—अं०। मात्रा—(B. P. Dose)—$\frac{१}{१२०}$ से $\frac{१}{६०}$ ग्रेन (०·५ से १ मि० ग्रा०)। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो १ सी० सी० (मि० लि०) में $\frac{१}{६०}$ ग्रेन के बल का सॉल्यूशन देना चाहिए।

(नॉट् ऑफिशल)

हिस्टाडीन हाइड्रोक्लोराइड (Histadine Hydro·chloride)। पर्याय—लरोस्टिडीन (Larostidine), l-histadine monohydrochloride (—रासायनिक)।

वर्णन एवं प्रयोग—यह हिस्टाडीन (जो हिस्टामीन से मिलता जुलता एक एमिनो-एसिड है) का मॉनोहाइड्रोक्लोराइड होता है। मात्रा—३ ग्रेन (०·२ ग्राम)। इसका व्यवहार चिकित्सा में ४ प्रतिशत बल के विलयन (सॉल्यूशन) के रूप में होता है। ५ सी० सी० की मात्रा में प्रतिदिन एक इन्जेक्शन के क्रम से ३–४ सप्ताह तक इसका प्रयोग अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा आमाशय या ग्रहणी के व्रण (Gastro-duodenal ulcer) में उपयोगी बतलाया जाता है। किन्तु एक तो औषधि कीमती पड़ती है, दूसरे इस चिकित्सा क्रम में कभी-कभी अनेक उपद्रव भी उत्पन्न होते हैं; तथा औषधि बन्द कर देने पर रोग के पुनरावृत्ति (Relapse) की भी सम्भावना अधिक होती है, अतएव इसका प्रयोग बहुत विश्वसनीय एवं निरापद नहीं है।

अशोक

Ashoka (Ashok.) I. P.

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल)

Sub-Family : Caesalpiniaceae (पूतिकरञ्ज-उपकुल)

अशोक, सराका इन्डिका (Saraca indica Linn.) नामक वृक्ष के काण्ड का शुष्क किया हुआ छाल* या त्वक् (Dried stem bark) होता है।

नाम। वृक्ष—अशोक, गन्धपुष्प (Having odorous flowers), अङ्गनाप्रिय (Dear to women), ताम्रपल्लव (Having Copper coloured leaves) सं०; अशोक—बं०; असोक—हिं०; अशोपल्व, अशुपल—गु०; अशोकम्—मल०; अशोघम् (ग) अचोकम्—ता०; ओसोको (Osoko)—उड़िया; उसंगिद—बा—को०, हो०; अशोक—बम्बई, महाराष्ट्र।

* आयुर्वेद में छाल के अतिरिक्त अशोक के पुष्पों एवं बीजों का भी व्यवहार औषधि के रूप में होता है।

उत्पत्ति-स्थान--पुष्पों की सुन्दरता के लिए समस्त भारतवर्ष के बागों एवं वाटिकाओं में इसके लगाए हुए वृक्ष मिलते हैं। पूर्वी बंगाल में इसके स्वयंजात (Wild) वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं, गोया कि यह वहां का आदिवासी पौधा मालूम होता है। दक्षिण भारत में, कनाड़ा के जंगल में भी इसके वृक्ष जंगली (Wild) स्वरूप से पाये जाते हैं। उत्तर प्रदेश में कुमायूँ में तथा बिहार में रामनगर की पहाड़ियों एवं चम्पारन तथा सिंगभूमि की घाटियों में भी इसके जंगली वृक्ष काफी मात्रा में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त मलाया, ब्रह्मा एवं लंका में भी अशोक पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

वर्णन वृक्ष—अशोक के मध्यमकद के सदाहरित (Evergreen) वृक्ष होते हैं, जो फूलने पर अत्यन्त दर्शनीय होते हैं। पत्तियाँ समपक्षवत् (Pinnate), जिनमें पत्रक (Leaflets) ६–१२ की संख्या में अभिमुखक्रम (Opposite) से निकले होते हैं और आकार में अंडाकार चिकने तथा चर्मल (Coriaceous) होते हैं। पुष्प गुच्छों में तथा नारंगरक्तवर्ण के होते हैं। अशोक के पुष्पों में विशेषता यह होती है, कि इनमें आभ्यान्तरकोष या दलपत्रों (Petals) का अभाव होता है और वाह्यकोष या पुटचक्र के पुटपत्र ही रंगहीन होकर पुष्प बन जाते हैं। वाह्यदल के अतिरिक्त कोणपुष्पक (Bracteoles) भी रंगीन होते हैं। फलियाँ (Pods) काले रंग की ४"–१०" लम्बी तथा १½"–२" चौड़ी, चपटी तथा दोनों अग्रों (Ends) की ओर नुकीली (Tapering) होती हैं।

काण्डत्वक् या छाल (Stem bark)—छाल के टुकड़ों के सूखने पर इनके किनारों के सिकुड़ने से ये टुकड़े नालीदार (Channolled) हो जाते हैं। बाहर से यह छाल काली आभा लिए खाकस्तरी रंग की (Greenish grey) अथवा पीताभखाकस्तरी (Yellowish-grey) होती है अन्दर की ओर ताजी अवस्था में हल्के भूरेरंग की होती है, किन्तु सूखी हुई छाल में यह रक्ताभ-भूरेरंग की (Reddish-brown) होती है। शुष्कावस्था में छाल के बाहरी तल पर अनुलम्ब दिशा में झुर्रियाँ होती हैं (Wrinkled longitudinally) तथा बड़े-बड़े अर्थात् अनुप्रस्थ दिशा में दरारें होती हैं (Transversely cracked), इनके अतिरिक्त इतस्ततः द्वितीयश्वसनरन्ध्र के छोटे गोल-गोल चिन्ह (Circular lenticels) भी पाये जाते हैं।

सूक्ष्मदर्शकयंत्र से देखने पर छाल की रचना में निम्न विशेषतायें (Microscopic characters) दिखाई पड़ती हैं।

वाह्यवल्क (Periderm), फिलेम (Phellem), त्वचैधा फिलोजन (Phellogen) एवं उपत्वचा (Phelloderm) से निर्मित होता है। सेकेन्डरी कॉर्टेक्स (Secondary Cortex) दृढ़भित्तिक या अश्म-कोषाओं (स्टोन सेल्स Stone cells) के दो स्तरों का होता है, जिसमें स्क्लेरीड्स (Sclereids) के पुन्ज भी पाये जाते हैं। तनुभित्तिक ऊति (पेरेन्काइमेटस टिशू Parenchymatous tissue) पीतवस्तु (Yellow masses) एवं प्रिज्मेटिक क्रिस्टल्स का होता है। आनन्तर्य या द्वितीय अधोवाही (Secondary phloem), अधोवाही तनुभित्तिक (Phloem parenchyma), चालनी-नाल (Sieve tubes), सखिकोशा (Companion cells) एवं अधोवाही तंतु (Phloem fibres) के पुन्जों (Groups) से निर्मित होता है। इसके अतिरिक्त क्रिस्टल फाइबर्स (Crystal fibres) भी पाये जाते हैं।

रासायनिक संघटन—अशोक की छाल में निम्न तत्व पाये गये हैं—(१) टैनिन; (२) हीमेटॉक्सिलिन (Haematoxylin); (३) अल्प मात्रा में एक उत्पत तैल तथा (४) लौह युक्त आर्गेनिक (Organic) स्वरूप का एक तत्व ।

गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग ।

अशोक की क्रिया प्रत्यक्षतः गर्भाशयिक पेशियों पर होती है, तथा स्वतन्त्रनाड़ियों (**Sympathetic**) के द्वारा भी यह अपना कार्य करता है । यह गर्भाशय की आकुंचन क्रिया के बल (**Tone**) को बढ़ाता है, किन्तु उक्त प्रभाव अर्गट या पोस्टीरियर पिच्युटरी की भाँति प्रबल नहीं होता । इसके अतिरिक्त यदि गर्भाशय उत्तेजना एवं तीव्र आकुञ्चन की स्थिति में हो तो अशोक गर्भाशय पर संशामक या अवसादक प्रभाव (**Depressant effect**) भी करता है । अतः गर्भाशय के अनेक रक्तस्रावी रोगों में रक्तस्राव को रोकने के लिए अर्गट के स्थान में इसका प्रयोग किया जा सकता है । इस प्रकार यह **रक्तप्रदर (Menorrhagia, metrorrhagia)** एवं **प्रसवोत्तर रक्तस्राव (Post partum haemorrhage)** में बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है । इसके लिए **अशोकारिष्ट** एक प्रसिद्ध आयुर्वेदीय योग है इसकी २ तो० मात्रा बराबर पानी के साथ मिलाकर भोजनोत्तर ली जाती है ।

गर्भाशय पर अवसादक या संशामक प्रभाव करने के कारण **लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट (Liquid Extract)** का प्रयोग **कष्टार्त्तव (Dysmenorrhoea)** तथा अन्य ऐसे रोगों में जो गर्भाशय में अनियमित आकुञ्चन (**Contractions**) के कारण उत्पन्न हों लाभकारी होता है ।

योग (Preparations) :—

(१) डिकॉक्टम् अशोकी Decoctum Asokāe (Dec. Asok.); पर्य्याय : डिकॉक्टम् सराकी Decoctum Saracāe I. P. C.—ले०; डिकॉक्शन ऑव अशोक Decoction of Asoka—अं०; अशोक क्वाथ ।

निर्माण-विधि—अशोक का जवकुट छाल (Coarse powder) ५ औंस (२½ छटाँक) लेकर ५० औंस (लगभग १॥ सेर) परिस्रुत जल (Distilled water) में उबालें २० औंस शेष रहने पर उतारकर छानलें । मात्रा—½ से १ औंस (१। तोला से २॥ तो०) ।

(२) एक्स्ट्रैक्टम् अशोकी लिक्विडम् Extractum Asokāe Liquidum (Ext. Asok. Liq.) I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव अशोक Liquid Extract of Asoka—अं०; अशोक का प्रवाही घनसत्व । मात्रा—१ से २ ड्राम ।

(३) अशोकारिष्ट । मात्रा—१ से २ तो० भोजनोत्तर बराबर जल के साथ ।

(४) अशोकघृत (भै० र०) ।

(व्यावसायिक योग)

(१) अशोकाविन (Asoka Cordial with Vitamines) Asokavin (Smith Stanistreet & CO.) —यह गाढ़े भूरे रंग की पेय औषधि है । इसकी ३ औंस और ६ औंस की शीशियाँ आती हैं । इसमें निम्न औषधियाँ पड़ती हैं—अशोक, लोध एवं हायोसायमस तथा वलेरियन के लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट, विटामिन बी, विटामिन 'के K', सिरप फिकोरम् को० (B. P. C.)

सोडियम् सेलिसिलेट, अट्रोपीन सल्फ०, कोडीनफास्फेट आदि। मात्रा—२ या ३ चाय के चम्मचभर थोड़ा पानी मिलाकर दिन में २–३ बार।

एब्रोमा Abroma (Abrom.), I. P. C.

(उलटकम्बल)

Family : Sterculiaceae स्टर्कुलिएसी

(मुचकुन्द-कुल)

एब्रोमा या उलटकम्बल, एब्रोमा ऑगस्टा Abroma augusta Linn. नामक पौधे की ताजी या सुखाई हुई मूल-त्वक् (जड़ की छाल) होती है।

नाम। पौधा—पिशाच कार्पास, पीवरी—सं०; ओलटकम्बल—बं०, गु०; उलटकम्बल—हिं०; गुनखिआकराई Gunakhiakarai—आसाम; डेविल्स-कॉटन Devil's Cotton—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष के समस्त उष्ण प्रदेशों में उलटकम्बल के स्वयंभूत (Wild) या कर्षित (Cultivated) पौधे मिलते हैं। उत्तर प्रदेश से सिक्कम से लेकर खसिया की पहाड़ियों (२०००-३००० फुट की ऊँचाई) तक एवं आसाम तथा बंगाल में इसके जंगली (Wild) पौधे भी बहुतायत से पाये जाते हैं।

वर्णन वृक्ष—ओलटकम्बल के सदाहरित बड़े क्षुप (Shrubs) या छोटे वृक्ष (Small tree) होते हैं। पत्तियाँ—लट्वाकार-आयताकार (Ovate-oblong), अथवा हृदयाकार (Orbicular-Cordate), तथा प्रायः ३॥ इंच तक लम्बी होती हैं। किनारा सरल (Entire) नीचे की कोई-कोई पत्तियाँ खण्डयुक्त (Lobed) होती हैं तथा उनका तट सूक्ष्म-दन्तुर (Serrulate) होता है। पुष्प (Flowers)—गाढ़े नीलारुण (Dark Purple) रंग का। फल (Fruit)—पांच स्पष्ट खण्डों अथवा कोनों वाला स्फोटी प्रकार का (5-Celled Capsule with 5 truncated wings) तथा ऊपर की ओर कमल के फल की तरह जैसे कटा हुआ मालूम होता है।

मूल-त्वक् (Root-bark)—ओलटकम्बल के जड़ की हवा में सुखाई हुई छाल प्रायः ½ से १ मि० मि० मोटी, रेशेदार (Fibrous) तथा रंग में बाहर से मटमैले भूरे रंग की (Dull-brown) होती है। इस पर अनुलम्ब दिशा में झुर्रियाँ पड़ी होती (Longitudinally wrinkled) हैं और जगह-जगह छोटी-छोटी ग्रंथियां (Small warty markings) होती हैं। जड़ को ३–४ दिन तक ठंडे पानी में भिगोने से इसका चिकना लुआबी हिस्सा (Slimy mucilage) पृथक प्राप्त हो जाता है और रेशेदार जड़ अलग हो जाती है। औषधीय दृष्टि से यही लुआब ही सक्रिय होता है। ओलटकम्बल की जड़ स्वाद रहित एवं गंधहीन तथा चिकनी एवं चिमड़ी (Tough) होता है।

रासायनिक संघटन—जड़ की छाल में काफी मात्रा में लुआबी द्रव्य (Mucilaginous matter) पाया जाता है। इसके अतिरिक्त कार्बोहाइड्रेट, रेजिन्स तथा ०·०१ प्रतिशत एक अल्कलायड स्वरूप का तत्व पाया जाता है।

मात्रा—ताजा लुआबी रस (Fresh viscid Sap) २ ग्राम (३० ग्रेन) या २ माशा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

ओलटकम्बल का प्रयोग आर्तव-प्रवर्त्तक (Emmenagogue) तथा गर्भाशय-बल्य (Uterine tonic) के रूप में किया जाता है। इसका ताजा लुआबी रस श्रोणिगत अंगों में अत्यधिक रक्तसंचय के कारण उत्पन्न अथवा नाड़ीविकृतिजन्य कष्टार्तव (Congestive and neuralgic dysmenorrhoea) में बहुत उपयोगी होता है। यह अनियमित मासिक धर्म को नियमित करता है। इसके आर्त्तव प्रवर्त्तक के रूप में औषधीय प्रयोग सर्वप्रथम बंगाल प्रान्त में हुआ, और देशी चिकित्सकों में अब भी इसका काफी प्रचलन है। एतदर्थ इसकी छाल को काली मिर्च (४-६ दाने) के साथ जल से पीसकर मासिक धर्म के १ सप्ताह पूर्व प्रतिदिन दिया जाता है, जब तक आर्त्तव-प्रवृत्ति होने लगे। जब महीना आना शुरू हो जाय तो औषधि बन्द कर दी जाती है।

योग (Preparations) —

१—एक्स्ट्रैक्टम् एब्रोमी लिक्विडम् Extractum Abromāe Liquidum (Ext. Abrom. Liq.), I. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव एब्रोमा Liquid Extract of Abroma, लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव ओलटकम्बल Liquid Extract of Olatkambal—अं०; उलटकम्बल का प्रवाही घनसत्व। मात्रा—३० से ६० मिनम् (बूंद या २ से ४ मि० लि०।

६—सक्कस एब्रोमी—Succus Abromāe (Succ. Abrom.) I. P. C.—ले०; जूस ऑव एब्रोमा Juice of Abroma, जूस ऑव ओलटकम्बल Juice of Olatkambal—अं०; उलट-कम्बल का स्वरस। मात्रा—½ से १ फ्लुड ड्राम या २ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद)।

(प्रजननग्रंथिपोष यौगिक-Gonadotrophins)

गोनेडोट्रॉफिनम् कोरिऑनिकम् (I. P., B. P.)

नाम—गोनेडोट्रॉफिनम् कोरिऑनिकम् Gonadotrophinum Chorionicum (Gonado. Chorion.)—ले०; कोरिऑनिक गोनेडोट्रॉफिन Chorionic Gonadotrophin—अं०।

पर्याय—एन्टुइट्रिन 'एस' Antuitrin S; गोनान Gonan, फॉल्यूटीन Follutein; प्रेग्नील Pregnyl; प्रोलान Prolan; फाइसोस्टेब Physostab.।

वर्णन—कोरिऑनिक गोनेडोट्रॉफिन एक शुष्क विशोधित योग (Dry Sterile preparation) होता है, जो गर्भवती स्त्रियों के मूत्र से प्राप्त किया जाता है। यह सफेद या हल्के पीले रंग के चूर्ण के रूप में होता है। प्रत्येक मिलिग्राम (mg.) में ४०० युनिट की शक्ति होती है। यह जल में विलेय (Soluble) होता है अर्थात् पानी में घुल जाता है। संग्रह (Storage) इसका संग्रह विशेष सावधानी से अच्छी तरह डाट बंद पात्रों में करना चाहिए ताकि सूक्ष्म-विकारी जीवाणुओं (Micro-organisms) का भी इसमें प्रवेश न हो सके और ऐसे स्थान में पात्रों को रखना चाहिए ताकि प्रकाश न पहुँचे एवं नमी न लगे। इसका संग्रह विशेषतया ठंढी जगह में (तापक्रम २०° से अधिक न हो) करना चाहिए। इस प्रकार शीत प्रधान देशों में २ वर्ष तक किन्तु उष्ण देशों में केवल १ वर्ष तक इसकी सक्रियता बनी रहती है।

मात्रा—५०० से १००० युनिट सप्ताह में २ बार।

गोनेडोट्रॉफिनम् सेरिकम् (I. P., B. P.)

नाम--गोनेडोट्रॉफिनम् सेरिकम Gonadotophinum Sericum (Gonadotr, Seric.)—ले०; सीरम गोनेडोट्रॉफिन Serum Gonadotrophin--अ० ।

पर्याय—एन्टोस्टेब (Antostab); जेस्टिल Gestyl; गोनेडिल (Gonadyl); सेरोगन (Serogan) ।

वर्णन—यह गर्भवती घोड़ियों के रक्तरस या सीरम (Serum) से प्राप्त किया जाता है, और सफेद चूर्ण के रूप में होता है जो जल में घुलनशील होता है । प्रत्येक मिलिग्राम (mg.) में १०० युनिट औषधि होती है । इसका संग्रह भी पूर्व योग की ही भाँति करना चाहिए । इसकी शीशियों के लेबिल पर निर्माण तिथि (Date of manufacture), मात्रा युनिट में तथा वीर्यकाल अर्थात् वह तिथि जिसके बाद औषधि निर्वीर्य या निष्क्रिय हो जायगी । चिकित्सक को इसका ध्यान रखना चाहिए और उस अवधि के पश्चात् औषधि का प्रयोग न करें । मात्रा—२०० से १००० युनिट सप्ताह में २ बार ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

कोरिऑनिक गोनेडोट्रॉफिन की क्रिया पीतांगजनक एवं पीतांगोत्तेजक अन्तःस्राव के रूप में (Luteinizing hormone and luteotrophin) होती है । और सीरम गोनेडोट्रॉफिन डिम्बकोष या बीजकोष उत्तेजक हार्मोन (प्रोलन 'ए' Prolan A or FSH) की भाँति कार्य करता है । उक्त अन्तःस्राव के प्रभाव से ही यौवनजन्य परिवर्तन होते हैं । तथा आर्तव प्रारम्भ होने पर परिपक्व डिम्ब के निर्माण एवं पीतांगजनन (Corpus luteum formation) में सहायक होता है । कहने का तात्पर्य यह है, कि आर्तवचक्र (Menstrual cycle) को सामान्यरूप से चालू रखने के इन अन्तःस्रावों का बहुत कुछ हाथ होता है । प्रोलन 'ए' के द्वारा ओस्ट्रन (Oestrone) हार्मोन के निर्माण को भी उत्तेजना मिलती है । इनका प्रयोग चिकित्सा में प्रारम्भिक अनार्तव (Primary amenorrhoea) तथा उपद्रव रूप से उत्पन्न अनार्तव (Secondary amenorrhoea) में बहुत सफल होता है ।

सीरम गोनाडोट्रॉफिन का उपयोग स्त्रियों में अप्रगल्भ डिम्बग्रंथि (Infantile ovary) की चिकित्सा के लिए किया जाता है । इससे डिम्बग्रंथि की वृद्धि होती तथा डिम्ब निर्माण होने लगता है । ओस्ट्रोजन (Oestrogen) के निर्माण में भी सहायता मिलती है । गर्भाशय की श्लैष्मिक कला पर भी इसका उत्तेजक प्रभाव पड़ता है । इसे चिकित्सा क्रम में सीरम गोनाडोट्रॉफिन देने के बाद कोरिऑनिक गोनाडोट्रॉफिन भी दिया जाता है । प्रजननावयवों की समुचित वृद्धि न होने के कारण जब यौवन के लक्षण प्रगट होने में अतिविलम्ब हो रहा हो (Delayed puberty) अथवा प्रारम्भिक अनार्तव एवं प्रगल्भ डिम्ब का निर्माण न होने के कारण उत्पन्न वन्ध्यता (Sterility) में ओस्ट्रोजन चिकित्सा क्रम (Oestrogen therapy) के साथ पूरक चिकित्सा (Supplement) के रूप में सीरम गोनाडोट्रॉफिन का उपयोग किया जाता है । जिन स्त्रियों में बार-बार गर्भस्राव (Habitual abortion) का इतिहास हो; उनमें इसका सूचिकाभरण (Intramuscular injection) बहुत सफल सिद्ध होता है । एतदर्थ जिस महीने में गर्भस्राव हुए हों उनके एक मास पूर्व ही, इन्जेक्शन

प्रारम्भ कर देना चाहिए। १५०० युनिट की मात्रा सप्ताह में २ बार देनी चाहिए और इस चिकित्साक्रम को गर्भावस्था के ५ वें या ७ वें महीने तक चालू रखना चाहिए। निकटसम्भावी गर्भस्राव (Threatened abortion) की आशंका होने पर इसका सप्ताह में २ बार न देकर प्रतिदिन इन्जेक्शन देना चाहिए।

सीरम गोनाडोट्रॉफिन का प्रयोग प्रजननावयों की विकृति से होने वाले अनेक पुरुष रोगों में भी किया जाता है। गूढ़ाण्डता (Crypto-orchidism) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ गोनेडोट्रॉफिनाइ कोरिऑनिकाइ Injectio Gonadotrophini Chorionichi (Inj. Gonadotr. Chorion.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव कोरिऑनिक गोनेडोट्रॉफिन Injection of Chrionic Gonadotrophin—अं०। यह वॉटर फॉर इन्जेक्शन में बनाया हुआ कोरिऑनिक गोनेडोट्रॉफिन का विशोधित (Sterile) विलयन होता है। इसमें ०·५ प्रतिशत (w/v) संरक्षण द्रव्य फिनोल होता है। इसका प्रयोग निर्माण के बाद तत्काल ही करना चाहिए। मात्रा—५०० से १००० युनिट सप्ताह में दो बार पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा (Intramuscularly)।

२—इन्जेक्शिओ गोनेडोट्रॉफिनाइ सेरिकाइ Injectio Gonadotrophini Serici (Inj. Gonadtr. Seric)—I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सीरम गोनेडोट्रॉफिन Injection of Serum Gonadotrophin—अं०। इसका निर्माण उसी समय करना चाहिए जब इसका प्रयोग करना हो। एतदर्थ निश्चित मात्रा की औषधि का वॉटर फार इन्जेक्शन में, जिसमें ०·५ प्रतिशत (w/v) फिनोल होता है। विलयन बनाया जाता है। मात्रा—२०० से १००० युनिट सप्ताह में २ बार पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injeetion) द्वारा।

व्यावसायिक योग :—

(१) एन्टोस्टेब Antostab (C. I.) (Roots)—यह सीरम गोनाडोट्रॉफिन का योग है। इसके ५०० (I.U.) तथा १५०० (I. U.) युनिट प्रति सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं। दोनों के ३-२ एम्पूल्स के बक्स आते हैं। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होते हैं।

नैसर्गिक ओस्ट्रीन-यौगिक (Natural Oestrogens)

ओस्ट्रोनम् (ओस्ट्रोन), I. P.—(ले०)।

Oestronum (Oestron.)

रासायनिक संकेत : $C_{18}H_{22}O_2$.

नाम—ओस्ट्रोन Oestrone; एस्ट्रोन Estrone।

पर्याय—किटोहाइड्रॉक्सीओस्ट्रीन Ketohydroxyoestrin; फॉलिक्युलिन Folliculin; थीलिन Theelin; किटोडेस्ट्रिन Ketodestrin।

वर्णन—ओस्ट्रोन रासायनिक दृष्टि से 3-hydroxy—17-Keto—1 : 3 : 5—oestratrisne इसके रंगहीन तथा गंधहीन क्रिस्टल होते हैं, जो हवा में भी स्थिर या स्थायी (Stable in air) होते हैं। विलेयता—जल में तो यह बहुत कम घुलता (Slightly Soluble) है, किन्तु अल्कोहल्

ईथर, एसिटोन, डायॉक्सन (Dioxan) तथा अल्कली हाइड्रॉक्साइड्स के विलयन में तरह घुलनशील है। मात्रा (I. P. Dose)—१ से १० मि० ग्रा० (१/६० से १/६ ग्रेन) प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा ०·१ से १ मि० ग्रा० (या १/६०० से १/६० ग्रेन)।

ओस्ट्रेडिऑल Oestradiol (Oestradiol), I. P.—(ले०)।

रासायनिक संकेत : $C_{१८}H_{२४}O_{२}$.

नाम—एस्ट्रेडिऑल Estradiol—अं०।

पर्याय—डाइहाइड्रोथीलिन Dihydrotheelin; ओवोसाइक्लिन Ovocyclin; गायनिस्ट्रिल Gynoestryl।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह a-3, 17 B—dihydroxy-1 : 3 : 5 (10) estatrene होता है। इसके सफेद रंग के अथवा हल्के पीलेरंग के क्रिस्टल अथवा क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा हवा में भी स्थायी (Stable in air) होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः नहीं घुलता, किन्तु अल्कोहल्, एसिटोन, डायोक्सेन (Dioxane) तथा स्थिर अल्कली हाइड्रॉक्साइड विलयन में घुलनशील होता है। वानस्पतिक तेलों (Vegetable oils) में अंशतः विलेय (Sparingly Soluble) होता है। मात्रा (I. P. Dose)। (१) प्रारम्भिक मात्रा (Initial dose)—०·५ मि० ग्रा० (१/१२० ग्रेन) दिन में ३ बार; (२) धारक मात्रा (Maintenance dose)—०·१ से ०·२ मिलिग्राम (या १/६०० से १/३२० ग्रेन)।

ओस्ट्रेडिऑलिस मॉनोबेंजोआस Oestradiolis Monobenzoas (Oestr-adiol. Menobenz.) I. P., B. P.—ले०; ओस्ट्रेडिओल मॉनोबेंजोएट Oestradiol Monobenzoate—अं०।

पर्याय—ओवोसाइक्लिन 'बी' Ovocyclin B; डाइहाइड्राक्सीस्ट्रीन मॉनोबेंजोएट Dihydroxyoestrin Monobenzoate; प्रोजिनोल-बी-ओलिओजम् Progynol B. oleosum; इस्ट्रेडिऑल बेंजोएट Estradiol benzoate।

रासायनिक संकेत : $C_{२५}H_{२८}O_{3}$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 3-benzoyloxy-17-hydroxy-1 : 3 : 5 : (10)-oestratriene होता है।

वर्णन—इसके रंगहीन तथा गंधहीन क्रिस्टल होते हैं। जो हवा में भी स्थायी होते हैं। विलेयता—यह जल तथा जल में बनाए हुए अल्कलीहाइड्रॉक्साइड्स के विलयन (Solution) में नहीं घुलता। अल्कोहल् (९५%) में कुछ-कुछ घुलता है, किन्तु एसिटोन तथा स्थिर तेलों (Fixed oils) में अच्छी तरह घुलनशील होता है। मात्रा— १ से ५ मिलिग्राम (१/६० से १/१२ ग्रेन) प्रतिदिन पेशीगत इंजेक्शन द्वारा।

ओस्ट्रेडिओलिस डाइप्रोपिओनास Oestradiolis Dipropionas (Oest-radiol. Diprop.) I. P.—ले०; ओस्ट्रेडिऑल डाइप्रोपिओनेट Oestradiol Dipropionate, इस्ट्रेडिओल डाइप्रोपिओनेट Estradiol Dipropionate—अं०

पर्याय—ओवोसाइक्लिन पी Ovocyclin P.; डाइहाइड्रॉक्सीस्ट्रीन डाइप्रोपिओनेट Dihydroxyoestrin Dipropionate ।

रासायनिक संकेत : $C_{24} H_{32} O_4$.

वर्णन—इसके रंगहीन एवं गंधहीन क्रिस्टल्स होते हैं ।

विलेयता—ओस्ट्रेडिऑल मॉनोबैंजोएट की भांति ।

मात्रा—$\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{12}$ ग्रेन या १ से ५ मि० ग्रा० पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रतिदिन।

एथिनील ईस्ट्रेडिऑल (I. P., B. P.)

Ethinyloestradiol (Ethinyl oestradio.)

रासायनिक संकेत : $C_{20} H_{24} O_2$

पर्याय—एथिनीस्ट्रिल Ethinoestryl; एस्टिजिन Estigyn; एथिडॉल Ethidol; एटिसाइक्लिन Eticyclin ।

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह 17—ethynyl-3 : 17-dihydroxy-1 : 3 : 5—oestratriene होता है, और पोटासियम् एसेटिलाइड (Potassium acetylide), ओस्ट्रोन तथा लिक्विड अमोनिया की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है ।

वर्णन—इसका सफेद रंग का सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो जल में प्रायः अविलेय होता है, किन्तु एसिटोन, अल्कोहल (९५%), क्लोरोफॉर्म, डायॉक्सन Dioxan सॉल्वेंट ईथर तथा अल्कली हाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन में घुलनशील होता है । मात्रा—०·०१ से ०·१ मि० ग्रा० या १/६००० से १/६०० ग्रेन प्रतिदिन ।

(२) रासायनिक संश्लेषण द्वारा कृत्रिम रूप से निर्मित ओस्ट्रीन यौगिक (Synthetic oestrogens) ।

स्टिलबिस्ट्रॉल (I. P., B. P.)

Stilboestrol (Stilboestr.)—ले०, अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{18} H_{20} O_2$.

पर्याय—डाइएथिलस्टिलबिस्ट्रॉल Diethylstilboestrol; क्लिनेस्ट्रॉल Clinestrol ।

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह 3 : 4-di-p-hydroxyphenyl-3-hexene होता है ।

वर्णन—इसका रंगहीन क्रिस्टल या क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है ।

विलेयता—जल में तो अत्यल्प मात्रा में विलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) तथा सॉल्वेंट ईथर, एवं अल्कलीहाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन में घुलनशील होता है ।

मात्रा—०·१ से ५ मि० ग्रा० या १/६०० से $\frac{1}{12}$ ग्रेन प्रतिदिन ।

डायनेस्ट्रोल (I. P., B. P.)
Dienoestrol (Dienoestr.)

रासायनिक संकेत : $C_{१८} H_{१८} O_{२}$.

पर्याय—डिहाइड्रॉस्टिलवेस्टरॉल Dehydrostilbestrol; डाइनेस्ट्रॉल Dienestrol।

वर्णन—इसका रंगहीन एवं गंधहीन मणिभीय चूर्ण (Crystalline powder) होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल (९०%) एसिटोन तथा सालवेंट ईथर में घुल जाता है। वेंजीन (Benzene) में भी कुछ-कुछ घुल जाता है। सोडियम् हाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन में भी घुल जाता है।

मात्रा—०.५ से १० मिलिग्राम (१/१२० से १/६ ग्रेन प्रतिदिन।

हेक्सॉस्ट्रॉल (I. P., B. P. C.)—ले०, अं०।
Hexoestrol (Hexoestr.)

रासायनिक संकेत : $C_{१८} H_{२२} O_{२}$

पर्याय—सिन्थोवो Syathovo।

वर्णन—इसका रंगहीन एवं गंधहीन क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble), क्लोरोफॉर्म में अंशतः विलेय (Slightly Soluble), अल्कोहल् (९५%) तथा एसिटोन में विलेय (Soluble) तथा सालवेंट ईथर में सुविलेय होता है। मात्रा—१ से ५ मिलिग्राम या १/६० से १/१२ ग्रेन प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

ओस्ट्रीन वर्ग की औषधियों (Oestrogens) का प्रयोग बीजग्रंथि के अन्तःस्राव की कमी के कारण होने वाली व्याधियों में स्थानापन्न चिकित्सा (Replacement therapy) के रूप में किया जाता है यथा :—

(१) रजोनिवृत्ति के समय होने वाले उपद्रवों (Menopausal Syndrome) के निवारण के लिए। इस समय स्त्रियों के जीवनक्रम में एकाएक परिवर्तन होने के कारण, चेहरे का लाल हो आना, शिर में चक्कर आना, तथा अवसाद का अनुभव (Feeling of depression) आदि उपद्रव उठ खड़े होते हैं। एतदर्थ स्टिलविस्ट्रॉल तथा एथिनिलिस्ट्रेडिऑल बहुत उपयुक्त होते हैं। प्रायः अल्प मात्रा में (०.१ मि० ग्रा० या १/६०० से १/६० ग्रेन) ही औषधि सेवन अधिक उपयुक्त समझा जाता है।

(२) डिम्बग्रंथि की क्रिया ठीक न होने वाले आर्तव सम्बन्धी विकृतियों में—यथा आनुषंगिक अनार्तव (Secondary amenorrhoea), आक्षेप युक्त रजः कृच्छ्रता (Spasmodic dysmenorrhoea)। रक्तप्रदर (प्रोजेस्टरान के अभाव से उत्पन्न) आदि। इसके अतिरिक्त बीजग्रंथि की क्रियाहीनता (Ovarian deficiency) के कारण होने वाली अन्य विकृतियों में भी यह योग सफल सिद्ध होते हैं। साधारण अवस्थाओं में एथिनिलोस्ट्रेडिऑल की टिकियों का सेवन मुखद्वारा किया जाता है या ओस्ट्रेडिऑल मानोबेंजोएट के इंजेक्शन दिए जाते हैं।

(३) डिम्बग्रंथि की क्रिया हीनता के कारण यौवन के लक्षण प्रगट होने में बहुत विलम्ब हो रहा हो तथा तज्जन्य प्रारम्भिक नष्टार्तव (Primary amenorrhoea) की अवस्था में ओस्ट्रेजॉन्स का प्रयोग बहुत सफल सिद्ध होता है।

इसके अतिरिक्त निम्न अवस्थाओं में भी इनके प्रयोग से उपकार होता है :—

ओस्ट्रीन के प्रभाव से गर्भाशयिक पेशियों को बल मिलता है। इसकी कमी से गर्भाशयिक पेशियों में अक्षमता होती है। इस कारण उत्पन्न गर्भाशय दौर्बल्य (Uterine inertia) एवं लीन गर्भस्राव (Missed abortion) आदि रोगों में भी ये उपयोगी सिद्ध होते हैं। इसके अतिरिक्त स्तन प्रदेश पर मालिश (Inunction) के रूप में इनका प्रयोग करने से स्तन ग्रंथियों की वृद्धि में सहायता मिलती है।

पुरुषों में पौरुषग्रंथि के कर्कटार्बुद (Carcinoma of the prostate) तथा स्त्रियों के स्तन ग्रंथि के कर्कटार्बुद में भी ओस्ट्रीन चिकित्सा क्रम उपयोगी बताया जाता है। एतदर्थ प्रतिदिन १५-२० मि० ग्रा० स्टिलबिस्ट्रॉल दिया जाता है। और २ ग्राम औषधि पहुँच जाने पर निश्चित रूप से रोगी को लाभ की अनुभूति होने लगती है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली ओस्ट्रोनाइ Tabellae Oestroni (Tab. Oestron.) I. P.—ले०; टॅबलेट ऑव ओस्ट्रोन Tablets of Oestrone—अं०। मात्रा—ओस्ट्रोन की दैनिक मात्रा—१ से १० मि० ग्रा० ($\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{6}$ ग्रेन)। वक्तव्य—यदि प्रतिटिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो १ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ ओस्ट्रोडिओलिस डाइप्रोपिओनेटिस Injectio Oestrodiolis Dipropionatis (Inj. Oestrodiol. Diprop,), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव ओस्ट्रेडिऑल डाइप्रोपिओनेट Injection of Oestradiol Dipropionate—अं०। यह ओस्ट्रेडिऑल डाइप्रोपिओनेट का एथिल ओलिएट अथवा अन्य उपयुक्त तैल में बनाया हुआ विशोधित (Sterile) विलयन होता है। मात्रा—१ से ५ मि० ग्राम ($\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{12}$ ग्रेन) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रतिदिन। वक्तव्य—यदि इन्जेक्शन में मात्रा का निर्देश न हो तो १ मि० लि० या सी० सी० (१५ मिनम् या बूंद) में १ मिलिग्राम ($\frac{1}{60}$ ग्रेन) के बल का विलयन देना चाहिए।

३—इन्जेक्शिओ ओस्ट्रेडिऑलिस मॉनोबेंजोएटिस Injectio Oestradiolis Monobenzoatis (Inj. Oestradiol. Monobenz.), B. P., I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव ओस्ट्रेडिऑल मानोबेंजोएट Injection of Oestradiol Monobenzoate—अं०; अस्ट्रेडिऑल मानोबेंजोएट का इन्जेक्शन या सुई—हिं०। मात्रा—१ से ५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{12}$ ग्रेन) प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

४—टॅबेली एथिनिलोस्ट्रेडिऑलिस Tabellae Aethinyloestradiolis (Tab. Aethinyloestradiol.) B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव एथिनिलिस्ट्रेडिऑल Tablets of Ethinyloestradiol—अं०; एथिनिलोस्ट्रेडिऑल की टिकिया—हिं०। मात्रा—प्रतिदिन ०·०१ से ०·१ मिलिग्राम इथिनिलोस्ट्रेडिऑल। यदि प्रतिटिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो ०·०२ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

५—टॅबेली स्टिलबिस्ट्रॉलिस Tabellae Stilboestrolis (Tab. Stilboestr.) B, P.,

I. P.—ले०; टॅवलेट्स ऑव स्टिलविस्ट्रॉल Tablets of Stilboestrol—ग्रं० । पर्याय—टॅवलेट्स ऑव डाइ-एथिल-स्टिलविस्ट्रॉल Tablets of Diethylstilboestrol; स्टिविस्ट्रल की टिकिया—हिं० ।

६—टॅवेली डायनिस्टॉलिस Tabellae Dienoestrolis (Tab. Dienoestr.) B. P., I. P.—ले०; टॅवलेट्स ऑव डायनिस्ट्रॉल Tablets of Dienoestrol—ग्रं०; डायनिस्ट्रल की टिकिया—हिं० । मात्रा—(प्रतिदिन डायनिस्ट्रल) ०.५ से १ मि० ग्रा० (१/१२० से १/६० ग्रेन)। यदि नुस्खे में प्रतिटिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो १ मिलिग्राम की टिकिया देनी चाहिए ।

७—टॅवेली हेक्सॉस्टॉलिस Tabellae Hexoestrolis (Tab. Hexoestr.) I. P.—ले०; टॅवलेट्स ऑव हेक्सॉस्ट्रॉल Tablets of Hexoestrol—ग्रं०; हेक्सास्ट्रल की टिकिया—हिं० । मात्रा—(प्रतिदिन हेक्सास्ट्रॉल) १ से मिलिग्राम (१/६० से १/१२ ग्रेन)। यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो १ मिलिग्राम की टिकिया दी जानी चाहिए ।

व्यावसायिक यौगिकः—

(१) डायनिस्ट्रॉल टॅवलेट्स Dienoestrol (B. D. H.)—इसकी ०·१ मि० ग्रा०, ०·३ मि० ग्रा० तथा १ मि० ग्रा० एवं ५ मि० ग्रा० की टॅवलेट्स या टिकिया आती हैं । मुखद्वारा (Orally) सेवन किया जाता है ।

(२) डायलोफॉर्म टॅवलेट्स एवं डायलोफॉर्म एलिक्जिर 'Dyloform' Tablets and 'Dyloform' Elixir (B. D. H.)—इसकी (१) मुख द्वारा सेवन के लिए अथवा जिह्वाधः प्रयोग (Oral or sublingual administration) के लिए ०·०१ मि० ग्रा० तथा ०·०५ मिलिग्राम की टिकिया (Tablets) आती हैं । (२) एलिक्जिर पीने की दवा है । इसकी ४ औंस की शीशियाँ आती हैं । चाय के चमचभर (Tea spoonful) औषधि में ०·०२ मि० ग्रा० एथिनीलेस्ट्रेडियॉल (Ethinyloestradiol B. P.) होता है ।

ओस्ट्रोफॉर्म Oestroform (B. D. H.)—यह ओस्ट्रेडियॉल मॉनोवेंजोएट का यौगिक है जो नैसर्गिक साधनों से प्राप्त किया जाता है । (१) पेशीगत सूचिकाभरण के लिए एम्पूल्स—०·१, १, २, ५ मि० ग्रा० के १ सी० सी० के एम्पूल्स । ६ एम्पूल्स एवं २५ एम्पूल्स के बक्स आते हैं । (२) मौखिक प्रयोग के लिए टॅवलेट्स—०·१ मि० ग्रा०, ०·५ मि० ग्रा० तथा १ मि० ग्रा० के टॅवलेट्स आते हैं । (३) स्थानिक प्रयोग के लिए आयण्टमेंट (Ointment) या मलहम । २० ग्राम के ट्यूब्स (Tubes) आते हैं ।

(४) ओस्ट्रोफॉर्म एक्वियस 'Oestrofom' Aqueous' (B. D. H.).

(५) स्टिलबिस्ट्राल बी० डी० एच० Stilboestrol (B. D. H.)—यह रासायनिक संश्लेषण द्वारा कृत्रिम रूप से बनाया जाता है ।

(६) डायनिस्ट्रॉल टॅवलेटस Dienoestrol-C-(Boots)—

(७) ईस्ट्रोमेनीन Oestromenine (E. Merck.)—यह भी रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा बनाया हुआ आस्ट्रोजेनिक यौगिक है । इसकी (१) टॅवलेट्स (२) एम्पूल्स तथा (३) आयण्टमेंट आता है ।

(८) प्रोफोलिओल Profoliol-B (c.)— (Schering)—इसकी इन्जेक्शन के लिए एम्पूल्स आती हैं ।

(९) स्टिलबिडॉन Stilbindon तथा स्टिलबिडॉन स्ट्रांग Stilbindon strong (Indo Pharma)--पहले की १-५ टॅवलेट्स प्रतिदिन मुखद्वारा तथा दूसरे की मात्रा कम (१ से १ टॅवलेट) होनी चाहिए। यह डाइएथिलस्टिलविस्ट्रॉल के यौगिक हैं।

(१०) एटिसाइक्लिन Eticyclin (Ciba)--यह सीवा कम्पनी द्वारा निर्मित जिह्वाधः प्रयोग के लिए एथिनिल ईस्ट्रेडिऑल का यौगिक है। इसकी जिह्वाधःगुटिका (Eticyclin "Lingucts") आती हैं। इनको जिह्वा के नीचे गालों में रखा जाता है। इसका रस चूसना नहीं चाहिए। यह धीरे-धीरे वहीं से शोषित हो जाता है। इसका प्रयोग स्त्रियों के ओस्ट्रोजन अभाव से होनेवाला सभी विकृतियों में तथा पुरुषों में प्रॉस्टेटग्रन्थि के कर्कटार्बुद (Carcinoma of the prostate) रोग में लक्षणों के निवारण के लिए (Palliative treatment) किया जाता है। इसके ०·०१ मि० ग्रा० तथा ०·०५ मि० ग्रा० के लिंगुएट्स आते है।

(११) फेनो साइक्लिन Fenocyclin (Ciba)--यह भी रासायनिक संश्लेषण द्वारा कृत्रिम रूप से निर्मित ओस्ट्रोजन पदार्थ (Synthelic oestrogen) है। इसकी ०·१ मि० ग्रा० तथा १ मि० ग्रा० की टॅवलेट्स आती हैं।

(१२) ओवोसाइक्लिन Ovocyclin (Ciba)--इसके (१) १ मि० ग्रा० तथा ५ मि० ग्रा० के एम्पूल्स आते हैं। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होते हैं; (२) टॅवलेट्स--०·१ मि० ग्रा० तथा १ मि० ग्रा० की (३) क्रिस्टयूल्स (Crystules)--१० मि० ग्रा० के। एक-एक या ५-५ क्रिस्टयूल्स एम्पूल्स में रख कर आते हैं; (४) आवोसाइक्लिन आयण्टमेंट--१ ग्राम आयण्टमेंट में ०·१ मि० ग्रा० ओस्ट्रेडिऑल होता है। २५ ग्रा० मलहर के ट्यूब्स (Tubes) आते हैं।

प्रोजेस्टेरॉनम् (प्रोजस्टेरॉन), I. P., B. P.

Progesteronum (Progesterne.) ले०।

रासायनिक संकेत : $C_{21}H_{30}O_2$.

पर्याय—प्रोजस्टरॉन Progesterone अं०; प्रोजेस्टिन Progestin; जेस्टोन Gestone; प्रोल्युटन Proluton; लाइपो-ल्युटिन Lipo-Lutin; ल्युटोसायक्लिन Lutocylin; प्रेग्नेनेडिओन Pregnenedione।

वर्णन—प्रोजस्टरॉन रासायनिक दृष्टि से 4—Pregnene-3 : 20—dione होता है। कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषण द्वारा यह कतिपय स्टेरोल्स (Sterols) तथा स्टेरायड सपोजेनिन्स Steroid sapogenins से बनाया जा सकता है। प्रोजस्टरॉन के रंगहीन तथा गंधहीन क्रिस्टल होते हैं। हवा में खुला रहने पर भी यह स्थायी (Stable) होता है। विलेयता—जल में प्रायः नहीं घुलता, किन्तु अल्कोहल् (९०%), सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म, एसिटोन तथा बेंजीन एवं स्थिरतैलों (Fixed oils) में फौरन घुल जाता है। लाइट पेट्रोलियम् में भी अंशतः विलेय (Moderately soluble) होता है।

मात्रा--५ से २० मि० ग्रा० या $\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा।

एथिस्टेरनॉम् (एथिस्टेरॉन), I. P., B. P.
Aethisteronum (Aethisteron.)—ले० ;
(Ethisterone—अं०)

रासायनिक संकेत : $C_{21}H_{28}O_2$.

पर्याय—प्रोजेस्टरल Progestoral; ऑरेल्युटन Oraluton; प्रेग्नेनिनोलोन Pregneninolone; एथिनिलटेस्टोस्टेरोन Ethinyltestosterone; एन्हाइड्रोहाइड्रॉक्सीप्रोजेस्टरॉन Anhydro-hydroxy-progesterone।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 17—ethynyl-4—androsten-17—ol-3 - one. होता है। इसका सफेद या क्रीम-सफेद (Creamy-white) रंग का सूक्ष्म मणिभीय (क्रिस्टलाइन) चूर्ण (*Microcrystalline powaer*) होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद रहित होता है। विलेयता—जल में तो अविलेय (Insoluble) होता है। अल्कोहल् (९५%) तथा स्थिर तैलों में अंशतः विलेय (Sparingly soluble) होता है। एसिटोन तथा क्लोरोफार्म में भी थोड़ा-थोड़ा घुलता (Slightly soluble) है। मात्रा—२५ से १०० मि० ग्रा० प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

प्रोजेस्टरॉन तथा एथिस्टरॉन दोनों ही क्रिया की दृष्टि से समान हैं। किन्तु दोनों के प्रयोग मार्ग में अन्तर तथा विशेषता होती है। प्रोजेस्टरान का प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है, किन्तु एथिस्टरान का सेवन मुख द्वारा करने पर भी यह उसी प्रकार सक्रिय होता है। प्रोजेस्ट्रिन नामक अन्तःस्राव की कमी से होनेवाले विकारों में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। यह गर्भाशय के तालबद्ध आकुंचन गति (Rhythmic contractions) को कम करता है। अतएव सम्भावी एवं बार-बार होनेवाले गर्भस्राव (Threatened and Habitual abortion) में इसका प्रयोग बहुत सफल पाया जाता है। सम्भावी गर्भस्राव (Threatened abortion) में इसका प्रयोग करने के पूर्व यह निश्चय कर लेना चाहिए कि बच्चा जीवित है या मर गया है। जब निश्चित हो जाय कि गर्भ जीवित है तो उसकी रक्षा का उपाय करना चाहिए। और एतदर्थ आवश्यकतानुसार ५ से २० मि० ग्रा० तक प्रोजेस्टरॉन देना चाहिए, जब तक कि रक्तस्राव तथा पेड़ू की वेदना बन्द न हो जाय। जिन औरतों में बार-बार गर्भस्राव या गर्भपात का इतिहास हो और फिरंग (Syphilis) आदि विशिष्ट व्याधियों का प्रमाण न मिलता हो तो, उसके निवारण के लिए प्रोजेस्टरॉन बहुत उपयोगी पाया जाता है। इसके लिए, जिस महीने में पहले के गर्भस्राव या गर्भपात का इतिहास हो, उसके १ महीने पूर्व चिकित्सा प्रारम्भ करे और पहले सप्ताह में १–२ मि० ग्रा० की मात्रा २ बार दे। क्रमशः इस मात्रा को उत्तरोत्तर बढ़ाकर १० मि० ग्रा० तक ले जावे और सप्ताह में २ बार के बजाय एक दिन के अन्तर से दे।

उपद्रव स्वरूप उत्पन्न नष्टार्तव रोग (Secondary Amenorrhoea) में ओस्ट्रेडिऑल के साथ प्रोजेस्टरॉन के चिकित्साक्रम से बहुत लाभ होता है। इसके लिए जितने दिन के बाद मासिक धर्म होता है। उसके ६–७ दिन पहले चिकित्सा प्रारम्भ करना चाहिए। पहले ३ दिन, प्रतिदिन ओस्ट्रेडिऑल डाइप्रोपिओनेट का इन्जेक्शन (मात्रा—१ मि० ग्रा०) देना चाहिए और उसके बाद ३ इन्जेक्शन प्रोजेस्टरॉन (२ मि० ग्रा० प्रतिदिन) का देना चाहिए।

निस्सरण--प्रोजेस्टरॉन शोषणोपरान्त प्रेग्नेनडिऑल (Pregnanediol) के रूप में वियोजित होता है और मूत्र के साथ ग्लाइक्युरोनिक एसिड (Glycuronic acid) के साथ संयुक्त होकर उत्सर्गित होता है।

(ऑफिशल या अधिकृत योग)।

१--इन्जेक्शिओ प्रोजेस्टेरोनाइ Injectio Progesteroni (Inj. Progesteron.), I. P., B. P.--ले०; इन्जेक्शन ग्राव प्रोजेस्टरॉन Injection of Progesterone--अं०; प्रोजेस्टरॉन की सूई या इन्जेक्शन--हिं०। यह प्रोजेस्टरॉन का एथिल ओलिएट या किसी उपयुक्त स्थिर तैल में बनाया हुआ विशोधित विलयन (Sterile Solution) होता है। मात्रा--५ से २० मि० ग्रा० प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

२--टैबेली एथिसटेरॉनाइ Tabellae Aethis-teroni (Tab. Aethis-teron.) I. P., B. P.--ले०; टैबलेट्स ग्राव एथिस्टरॉन Tablets of Ethisterone--अं०; एथिस्ट्रा की टिकिया-हिं०। मात्रा--२५ से १०० मि० ग्रा० प्रतिदिन यदि नुस्खे में प्रतिटिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो २५ मि०ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

प्रोजेस्टरॉन एवं तत्समकार्य कर व्यावसायिक यौगिकः—

(१) ल्यूटोसाइक्लिन Lutocyclin (Ciba)--(१) एम्पूल्स (Ampoules)--२ मि० ग्रा०, ५ मि० ग्रा० तथा १० मि० ग्रा० के एक-एक सी० सी० के तीन-तीन एम्पूल्स के बक्स आते हैं। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होते हैं। (२) क्रिस्ट्यूल्स (Crystules) ५० मि० ग्रा० के; (३) इम्प्लांट्स (Implants)--१०० मिलिग्राम के १-१ इम्प्लांट के ट्यूब आते हैं।

(२) एथिस्टरॉन Ethisterone (C१) (Boots) ५ मिलिग्राम एवं १० मि० ग्रा० की टिकियाँ (टबलेट्स) आती हैं। इनका सेवन मुखद्वारा किया जाता है।

(३) ल्युटिओस्टैब Luteostab (Boots)--यह पीतांग (Corpus Luteum) के अन्तः स्राव प्रोजेस्टरॉन का तैलीय विलयन (Oily Solution) होता है, जो पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है। इसके २ मि० ग्रा०, ५ मि० ग्रा० एवं १० मि० ग्रा० के १-१ सी० सी० के ६-६ एम्पूल्स के बक्स आते हैं।

(४) यूनि-ट्राइ स्टेरोन Uni-tri-Steron (Unichem Lab Bombay)--इसके २ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं, जिनमें २५ मि० ग्रा० प्रोजेस्टेरोन, २५ मि० ग्रा० टेस्टोस्टेरोन एवं २.५ मि० ग्रा० इस्ट्रैडिओल बेंजोएट। क्रियाव्यापार सम्बन्धी विकृति से होने वाले गर्भाशयिक रक्तस्राव (Functional Uterine bleeding) में विशेष उपयोगी है।

अण्डकोष (Testicles) के अन्तःस्राव को यौगिक (Androgens)।

टेस्टॉस्टेरोनम् (टेस्टॉस्टेरोन) I. P., B. P.

Testosteronum (Testoster.)--ले०।

(Testosteron--अं०)।

रासायनिक संकेत : $C_{१९}H_{२८}O_{२}$

प्राप्ति-साधन--रासायनिक दृष्टि से यह 4-androsten 17-ol-3-one होता है।

वर्णन—इसका गंधहीन सफेद रंग का क्रिस्टलाइन पाउडर होता है। जल में तो प्राय: सर्व अविलेय (Insoluble) होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) में विलेय (५ भाग में १ भाग) होता है। मात्रा—इम्प्लान्टेशन (Implantation) अर्थात् त्वचाध: प्रयोग के लिए सकल मात्रा (Total dose)—०·१ से ०·६ ग्राम (या १½ से १० ग्रेन)।

टेस्टॉस्टेरॉनाइ प्रोपिओनास (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_{22} H_{32} O_3$

नाम—टेस्टॉस्टेरॉनाइ प्रोपिओनास Testosteroni Propionas (Testosterone. Prop.), I. P., B. P.—ले०; टेस्टॉस्टेरॉन प्रोपिओनेट Testosterone Propionate—अं०,।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 17-propionoxy-4-anprosten-3-one होता है, जो टेस्टोस्टेरीन तथा प्रोपिओनिक एन्हाइड्राइड (Propionic anhydrid) की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

पर्याय—टेस्टोविरॉन Testoviron; पेरान्ड्रेन Perandren; नियो-हॉम्ब्रिओल Neo-Hombreol।

वर्णन—इसका गंधहीन, सफेद रंग का क्रिस्टलाइन पाउडर होता है; जो जल में तो प्राय: अविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%), एसिटोन तथा स्थिर तैलों में घुल जाता है। मात्रा—५ से २५ मि० ग्रा० या १/१२ से ⅜ ग्रेन प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

मेथिलटेस्टॉस्टेरॉनम् (I. P., B. P.)

Methyltestosterouum (Methyltestosteron.)—ले०;

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{30}O_2$.

नाम—मेथिलटेस्टॉस्टेरॉन Methyltestosterone; ग्लॉसो-स्टेराण्ड्रिल Glassosterandryl; नियोहोम्ब्रिओल Neo-Hombreol (M); ओराविरॉन Oraviron।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 17-methyl-4-androsten-17-ol-3-one होता है।

वर्णन—इसका रंगहीन तथा स्वादहीन सफेद या क्रीम-सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो जल में तो अविलेय, किन्तु अल्कोहल् (९५%), एसिटोन तथा स्थिर तैलों में घुलनशील होता है। मात्रा—(१) मनुष्यों के लिए—२५ से ५० मि० ग्रा० (⅜ से ¾ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) स्त्रियों के लिए—५ से २० मि० ग्रा० (१/१२ से ⅓ ग्रेन) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

पुरुषों में टेस्टॉस्टेरॉन का प्रयोग अंडकोष (Testes) के अन्तःस्राव के प्रभाव के परिणाम स्वरूप उत्पन्न व्याधियों में स्थानापन्न या पूरक चिकित्सा (Replacement therapy) के रूप में किया जाता है। उक्त अन्तःस्राव की कमी के कारण हिजड़ेपन (Eunuchoidism) के लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं, तथा यौवन के परिवर्तन नहीं प्रगट होते। कभी-कभी इसकी कमी के कारण नपुंसकता (Sterility) भी हो सकती है। किन्हीं व्यक्तियों में अंडकोष वृषणों (Scrotum) में नहीं पहुँचता। उपर्युक्त अवस्थाओं में टेस्टॉस्टेरॉन का

प्रयोग बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त शरीर समवर्त क्रिया (Metabolism) तथा अस्थियों के विकास में भी इससे उत्तेजना मिलती है। अतः पिच्युटरी ग्रंथि के विकृति के परिणामस्वरूप होनेवाले बौनेपन (Dwarfism) में भी इससे लाभ हो सकता है।

टेस्टोस्टेरॉन का चिकित्सा में अनेक स्त्री रोगों में भी उपयोग किया जाता है। गर्भाशय पर इसकी क्रिया प्रोजेस्टरॉन की भाँति होती है। अतएव **क्रियाव्यापार की विकृति से होने वाले गर्भाशयिक रक्तस्राव** (Functional uterine bleeding) तथा पीयूषग्रंथि के अग्रिय खण्ड के अन्तःस्राव की विकृति के कारण (ओस्ट्रीन अधिकस्राव या अधिक क्रियाशीलता से) होने वाले **रक्तप्रदर** (Menorrhagia) में भी इसका प्रयोग बहुत सफल होता है। रजोनिवृत्तिकाल में होने वाले उपद्रवों (Menopausal syndrome) में पहले वर्णन किया गया है, कि ओस्ट्रीन के यौगिक बहुत लाभप्रद सिद्ध होते हैं; किन्तु किन्हीं रोगियों में केवल ओस्ट्रीन-यौगिकों से चिकित्सा करने पर कोई विशेष लाभ नहीं दिखता। ऐसी अवस्थाओं में ओस्ट्रीन-यौगिकों के साथ-साथ एन्ड्रोजन्स का प्रयोग बहुत सफल होता है। सम्भवतः इस प्रकार प्रयुक्त होने पर यह ओस्ट्रेजन्स की क्रियाशीलताको बढ़ाता है।

वक्तव्य—**एन्ड्रोजन्स चिकित्साक्रम में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यह पूरक चिकित्सा है। अतएव अत्यधिक मात्रा में इसका प्रयोग करने से पुरुषों में अंडकोषों की क्रिया इतनी मन्द हो सकती है, कि शुक्राणुओं का निर्माण होना ही बन्द हो सकता है। इसी प्रकार स्त्रियों में इसके अधिक प्रयोग से पुरुषत्व के लक्षण—यथा मोंछ का निकलना, स्वर या आवाज का पुरुषवत् हो जाना आदि—उत्पन्न होने लग सकते हैं।**

प्रयोग-विधि टेस्टोस्टेरॉन के योग (Preparations) तीन प्रकार से प्रयुक्त किए जाते हैं:—(१) इम्प्लान्ट या पेलेट (Pellets) के रूप में त्वचाधः प्रयोग। इस प्रकार प्रयोग तब किया जाता है, जब इसका प्रभाव अधिक समय तक स्थायी रखना हो; (२) पेशीगत-सूचिकाभरण (Intramuscular injection) के रूप में एतदर्थ **टेस्टॉस्टेरान प्रोपिओनेट** (पेरान्ड्रेन) का प्रयोग करते हैं। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर यह बिल्कुल निष्क्रिय होता है; (३) मुखद्वारा (Orally) टॅबलेट्स या टिकिया के रूप में। एतदर्थ मेथिल टेस्टोस्टेरान का प्रयोग किया जाता है। इन्जेक्शन एवं टबलेट्स का मौखिक सेवन गर्भाशय से होने वाले रक्तस्रावों में तात्कालिक प्रयोग के लिए तथा निकट भविष्य में होनेवाली क्रिया के लिए करते हैं। अतः मासिक धर्म के समय होने वाले अधिक रक्तस्राव प्रकार के रक्तप्रदर (Menorrhagia) में १५ दिन पूर्व चिकित्सा प्रारम्भ करके १० मिलिग्राम की मात्रा सप्ताह में ३ बार दी जाती है। इस प्रकार ६ इन्जेक्शन्स देने पड़ेंगे। यदि रक्तस्राव काल में औषधि का प्रयोग करना हो तो यह मात्रा २५ मि० ग्रा० तक बढ़ाई जा सकती है। किन्तु कुल मिलाकर १५० मि० ग्रा० से अधिक नहीं देना चाहिए। स्थानापन्न चिकित्सा (Replacement therapy) के रूप में प्रयुक्त करने के लिए १० से ५० मि० ग्रा० की मात्रा सप्ताह में १ बार अथवा आवश्यकता पड़ने पर २ बार भी दिया जा सकता है।

(ऑफिशल या अधिकृत योग)

१—पेलेटी टेस्टॉस्टेरॉनाइ Pelletae Testosteroni (Pellet. Testoster.) I. P.—ले०; टेस्टॉस्टेरॉन पेलेट्स Testosterone Pellets; इम्प्लान्ट्स ऑव टेस्टॉस्टरॉन Implants of Testosterone

—अं० । मात्रा (Total implantation dose)—०·१ से ०·६ ग्राम (१½ से १० ग्रेन) यदि इम्प्लान्ट्स में मात्रा का निर्देश न हो तो ०.१ ग्राम या १½ ग्रेन मात्रा के इम्प्लान्ट्स देने चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ टेस्टॉस्टेरोनाइ प्रोपिओनेटिस Injectio Testosteroni Propionatis (Inj. Testosteron. Propion.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव टेस्टॉस्टरॉन प्रोपिओनेट Injection of Testosterone Propionate—अं०, पेरेण्ट्रिन की सुई या इन्जेक्शन—हिं० । यह उपयुक्त तैल में बनाया हुआ टेस्टॉस्टेरॉन का विशोधित विलयन होता है । मात्रा—५ से २५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{3}{8}$ ग्रेन) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा । यदि मात्रा का निर्देशन हो तो १ सी० सी० (मि० लि० या १५ बूंद) में १० मि० ग्रा० के बल का विलयन (Solution) देना चाहिए।

३—टॅबेली मेथिल टेस्टॉस्टरॉनाइ Tabellāe Methyltestosteroni (Tab. Methyltestosteron.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव मेथिल टेस्टॉस्टरॉन Tablets of Methyltestosterone—अं०; ग्लासोस्टांडिल की टिकिया—हिं० । मात्रा । (१) मनुष्य के लिए—२५ से ५० मि० ग्रा० ($\frac{3}{8}$ से $\frac{3}{4}$ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) स्त्री के लिए—५ से २० मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन) प्रतिदिन । यदि मात्रा को निर्देश न हो तो ५ मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

टेस्टॉस्टेरॉन के व्यावसायिक योग :—

(१) पेरान्ड्रेन Perandren (Ciba)—इसकी (१) ५, १० एवं २५ मि० ग्रा० की एम्पूल्स; (२) ५ मि० ग्रा० की जिह्वा-गुटिका (Linguets); (३) ५० मि० ग्रा० की माइक्रो, क्रिस्ट्यूल्स Micro-Crystules; तथा (४) मलहम (Ointment) आते हैं।

(३) टेस्टॉस्टेरॉन प्रोपिओनेट Testosterone Propionate (Boots)—१० मि० ग्रा० एवं २५ मि० ग्रा० के एक-एक सी० सी० के एम्पूल्स के तीन-तीन एम्पूल्स या ६—६ एम्पूल्स के बक्से आते हैं। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होते हैं।

(४) ओरेटन Oreton (c)—Schering—इसका बक्कल टॅबलेट्स (Buccal Tablets (Cl) तथा माउथ टबलेट्स (M. Tablets (Cl) आती हैं।

(५) ओरेविरॉन Oraviron [Schering C (l)]—यह मेथिल टेस्टॉस्टेरॉन का मौखिक सेवन के लिए उपयुक्त यौगिक है। इसकी ५ मि० ग्रा० तथा १० मि० ग्रा० की टॅबलेट्स आती हैं।

(६) मेथिल टेस्टॉस्टेरॉन Methyl Testosterone [Boots (Cl)]—यह रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा बनाया हुआ एन्ड्रोजनिक योग है। इसकी ५ मि० ग्रा० की टिकिया आती हैं। इनका जिह्वाधः प्रयोग (Sublingual administration) किया जाता है।

१—गर्भाशय पर संशामक प्रभाव करनेवाली ओषधियाँ।

(नॉट्-ऑफिशल)

वाइबरनम् (Viburnum) B. P. C.

Family : Caprifoliaceāe (केप्रिफोलिएसिई)

पर्याय—ब्लैक हॉ Black Haw ।

वाइबरनम्, वाइबरनम् प्रूनिफोलियम् Viburnum prunifolium Linn. नामक पौधे की जड़ अथवा काण्ड (Stem) की शुष्क की हुई छाल होती है।

उत्पत्ति-स्थान—संयुक्तराष्ट्र, उत्तरी अमरीका (U. S. A.) ।

वर्णन—वाइबरनम् के क्षुप (Shrub) या छोटे वृक्ष होते हैं, जो लगभग २४-२८ फुट तक

ऊँचे होते हैं। इसकी सूखी छाल नलीदार मुड़े हुए टुकड़ों (Curved pieces or quills) के रूप में प्राप्त होते हैं, जो २ से ६ सेंटीमीटर लम्बे १-३ सेंटीमीटर चौड़े तथा १—३ मिलिमिटर मोटे होते हैं। बाहर से छाल खाकस्तरी भूरे रंग से रक्ताभ-भूरे रंग की होती है, जिसपर लम्बाई की दिशा में झुर्रियाँ पड़ी होती हैं। पुरानी छाल में दरारें (Fissures) सी पाई जाती हैं। अन्दर के तल पर उक्त छाल लाल या लालिमालिए भूरे रंग की होती है, जिस पर सूक्ष्म रेखायें (Striated) होती हैं। वाइबरनम् की छाल में वलेरियनकी सी हल्की गंध आती है तथा स्वाद में यह तिक्त एवं कषैली होती है।

वक्तव्य—"वाइबरनम् Viburnum" सम्भवतः व्युत्पन्न है पुरानी लेटिन भाषा से जिसके अर्थ हैं "बांधना to bind, to tie" और "प्रूनिफोलियम् Prunifolium" का अर्थ होता है "प्लूम की तरह leaves like plum"। वाइबरनम् की कतिपय प्रजातियों (Species) की शाखायें कोमल तथा लचीली (Flexible) होती हैं अतएव इसी आधार पर उक्त वनस्पति का जातीय नाम (Generie name) तथा पत्तियों के आकार के आधार पर इसका प्रजातिक नाम (Specific name) रखा प्रतीत होता है।

रासायनिक संघटन—वाइबरनम् की छाल में निम्न घटक पाये जाते हैं—(१) वाइबरनिन् (Viburnin) नामक एक ग्लाइकोसाइड (Glycoside); (२) एक राालीय तत्त्व या रेजिन (Resin) तथा (३) वलेरिआनिक (Valerianic), टैनिक एवं गैलिक एसिड।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वाइबरनम् की प्रधान क्रिया **गर्भाशय पर संशामक** के रूप में (**Uterine Sedative**) होती है। गर्भावस्था में यह गर्भाशयिक संकोचों (**Uterine Contractions**) को रोकता है। अतएव **आदती गर्भपात** (**Habitual abortion**) के रोगियों में इसके प्रयोग से गर्भाशय पर संशामक प्रभाव होकर अस्वाभाविक संकोच बन्द हो जाते और इस प्रकार गर्भस्राव से रक्षा होती है। किन्तु फिरंग (**Syphilis**) या वृक्कशोफ (**Nephritis**) आदि विशिष्ट रोगों के कारण होने वाले गर्भस्राव में इससे विशेष लाभ होने की सम्भावना नहीं रहती। इसके अतिरिक्त वातिक स्वभाव (**Neurotic**) की स्त्रियों तथा योषापस्मार की रोगिणियों (**Hysterical**) में भी वाइबरनम् के प्रयोग से उपकार होता है। किन्हीं स्त्रियों में वायु-विकार के कारण अकालिक गर्भ संकोच होने से नाभि में पीड़ा एवं रक्तप्रदर से विकार हो जाते हैं ऐसी स्थिति में भी वाइबरनम् का प्रयोग उपयोगी हो सकता है।

वाइबरनम् के योग :—

(१) एक्स्ट्रैक्टम् वाइबरनाइ लिक्विडम् Extractum Viburni Liquidum, B. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव वाइबरनम् Liquid Extract of Viburnum—अं०; वाइबरनम् का द्रवाही घनसत्व। मात्रा १ से २ ड्राम (४ से ८ मि० लि०) या ३० से ६० मिनम् (बूंद)।

(२) एलिक्जिर वाइबरनाइ एट हाइड्रेस्टिस Elixir Viburni et Hydrastis, B. P. C.—ले०; एलिक्जिर ऑव वाइबरनम् एण्ड हाइड्रेस्टिस—अं०। यह स्वाद में अच्छा होता है। इसमें वाइबरनम् एवं हाइड्रेस्टिस के लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट के अतिरिक्त धनियाँ का तेल एवं कारवी तैल तथा ग्लिसरिन भी पड़ता है। मात्रा—३० से ६० मिनम् या बूंद (२ से ४ मि० लि०)।

परिच्छेद २

कैंथेरिडिनम् (नॉट् ऑफिशल)

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{12}O_4$

नाम--कैंथेरिडिनम् Cantharidinum, B. P. C,—ले०; कैंथेरिडिन Cantharidin—अं०; ज़रारीहीन--अ०; तेलिनी मक्खी का सत—हिं० ।

यह एक प्रकार का सत होता है, जो कैंथेरिस जाति की विदेशीय मक्खी की विभिन्न प्रजातिओं (Species) अथवा भारतवर्ष में पाए जाने वाली तेलिनी मक्खी (Mylaberis chicorii, fabr) अथवा Mylabris की विभिन्न प्रजातिओं से पाई जाती है ।

N. O. Coleoptera (स्निग्धमक्षिकादि-कुल)

नाम--कैथेरिस Catharis—ले०; केथेरिडीज Catharides, स्पेनिशफ्लाइ Spanish fly, ब्लिस्टिरिंग फ्लाई Blistering fly, लीटा Lytta—अं० ।

भारतीय मक्खी केनाम—माइलेब्रिस शिकोरिआइ Mylabris chicorii—ले०; टेलिनी फ्लाइ Talini fly—अं०; तेलनी, तेलिन, तेलनी मक्खी--हिं० ।
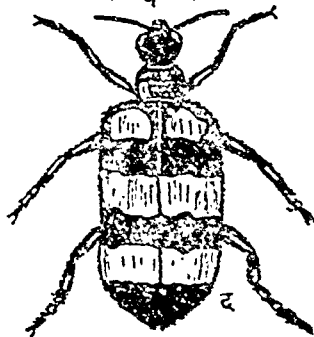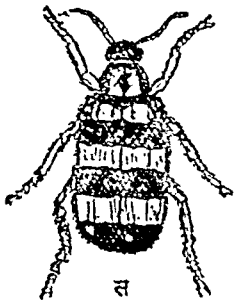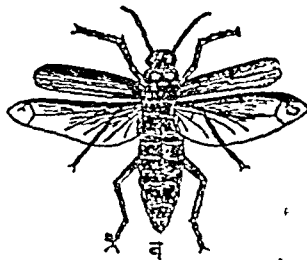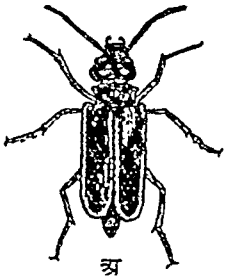
चित्र ३५— तेलनी मक्खी

वक्तव्य--इसके लेटिन व अंगरेजी दोनों नाम व्युत्पन्न हैं यूनानी नाम 'कन्तेरेलीस' जिसका अर्थ है 'गिलाफ़ से ढका हुआ पंख वाला जन्तु ।'

उत्पत्ति-स्थान–विदेशी मक्खी स्पेन, इटली, हंगरी तथा रूस आदि यूरोपीय देशों में पाई जाती है । रूस में पाई जानेवाली मक्खी सबसे उत्तम समझी जाती है ।

वर्णन—यह भौंरे की तरह की एक मक्खी है, जो ½ से १ इंच लम्बी और ¼ इंच चौड़ी होती है । इसके ऊपरी दो आवरणों पर सुन्दर चमकदार हरा रंग या ताम्रवर्ण होता है जिसके नीचे भूरे झिल्ली की तरह पतले एवं स्वच्छ २ और पर होते हैं ।

इसका चूर्ण गहरे भूरे रंग का होता है, जिसमें सब्ज रंग के चमकदार कण पाये जाते हैं। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की अरुचिकर गंध होती है।

कैंथेरिडिन—इसके श्वेतवर्ण के गंधहीन एवं चमकदार मणिभ (Crystals) होते हैं। जल में अत्यल्प मात्रा में विलेय होता है। अल्कोहल् (९०%) में भी केवल अंशतः (११०० भाग में १ भाग) ही विलेय होता है; किन्तु क्लोरोफॉर्म, एसिटोन तथा स्थिरतैलों (Fixed oils) में अपेक्षाकृत अधिकमात्रा में घुल जाता है।

गुण कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—स्थानिक प्रयोग से कैंथेरिडिन क्षोभक, रक्तिमोत्पादक, तथा सद्रवविस्फोटोत्पादक या आवलाजनक (Vesicant) होता है। किन्तु इसकी क्रिया धीरे-धीरे होकर २–३ घंटे में लक्षित होती है। पहले उस स्थान में चुनचुनाहट (tingling) एवं जलन का अनुभव होता है, तदनु लालिमा होकर आवले (Vesicles) उत्पन्न होते हैं।

आभ्यन्तर—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली में भी बाह्यवत् होती है, जिसके परिणामस्वरूप मुख, कण्ठ तथा आमाशय में जलन एवं वेदना होती तथा वमन एवं पतले दस्त आने लगते हैं। दस्त-कै में भी रक्त मिला होता है। त्वचा द्वारा अथवा आमाशयान्त्र द्वारा शोषित हो, दोनों प्रकार से शोषित होने के बाद शरीर से उत्सर्ग मूत्र मार्ग द्वारा होता है। अतएव निस्सरण के समय वृक एवं मूत्राशय पर किंचित् उत्तेजक प्रभाव करने के कारण यह मूत्रल (Diuretic) भी होता है और मूत्राशय पर इसके प्रभाव से बार-बार मूत्रोत्सर्ग की इच्छा होती है। मात्राधिक्य होने पर अनेक घातक कुप्रभाव लक्षित होते हैं यथा शुक्लमेह, शोणितमेह, वस्तिशोथ जिससे पेड़ू प्रदेश में तीव्र वेदना होती है और स्त्रियों में तो कभी-कभी गर्भपात तक हो सकता है अल्प मात्रा में चिरकाल तक प्रयोग करने से इसके कुप्रभाव के परिणामस्वरूप चिरकालज-विषमयता (Chronic poisoning) के लक्षण प्रगट होने लगते हैं, जो बहुत कुछ फास्फोरस के चिरकालज विषमयता के लक्षणों से मिलते-जुलते हैं।

प्रयोग—आजकल कैंथेरिडिन का आभ्यन्तर प्रयोग प्रायः बिल्कुल नहीं किया जाता और बाह्यतः प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) के रूप में भी इसका प्रयोग नहीं के बराबर ही होता है। आधुनिक युग में कैंथेरिडिन का मुख्य उपयोग केशवर्धक तैलों में डालने के लिए किया जाता है। कैंथेरिडीन हेयर ऑयल अथवा अन्य नामों से इस प्रकार के विभिन्न कम्पनियों के बने तेल बाजार में मिलते हैं।

(अनधिकृत या नॉन्-ऑफिशल योग)

१—एम्प्लास्ट्रम् कैंथेरिडिनाइ इन मास्सा Emplastrum Cantharidini in massa—ले०; ब्लिस्टरिंग प्लास्टर Blistering Plaster—अं०। ०·२% कैंथेरिडिन होता है।

२—लाइकर एपिस्पेस्टिकस Liquor Epispasticus—ले०; ब्लिस्टिरिंग लिक्विड Blistering Liquid—अं०। ०·४% कैंथेरिडिन होता है।

(२) त्वचा पर मार्दवकर एवं स्नेहन प्रभाव करने वाली औषधियाँ—

ओलियम् ऑलिव्ही (Oleum Olivae), B. P.

Family : Oleaceae (पारिजातादि-कुल)

यह एक स्थिर तैल होता है, जो ओलिया यूरोपिया (Olea europaea) नामक वनस्पति के पक्वफलों से प्रपीड़न (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है। अतएव पहले वनस्पति का ही वर्णन किया जायगा।

ओलिया यूरोपिया (Olea europaea Linn.) B. P.

N. O. Oleaceae (पारिजातकादि वर्ग)

उत्पत्ति-स्थान—जैतून भूमध्यसागरीय आवहवा (जलवायु) में होने वाला पौधा है। भूमध्यसागर के तटीय प्रान्तों में यह बहुतायत से पाया जाता है। आजकल अमेरिका के केलिफोर्निया प्रान्त एवं दक्षिण आस्ट्रेलिया तथा जहाँ-तहाँ अन्य देशों में भी इसकी खेती की जाने लगी है।

चित्र ३६—जैतून के वृक्ष की शाख।

वर्णन—जैतून के छोटे-छोटे वृक्ष होते हैं। इसका अष्टि-फल (ड्रूप Drupe) प्रायः २–३ सेंटीमीटर लम्बा एवं कच्ची अवस्था में हरे रंग का होता है। इसके कच्चेफल का अचार एवं तरकारी बनाते हैं। पकने पर फल नीलापन लिए लालरंग (Purple)के हो जाते हैं। पकनेपर इसका मध्यस्तर (Mesocarp) तैल से भर जाता है। तेल निकालने के लिए फलों का संग्रह जाड़े के अन्त एवं वसन्त के प्रारम्भ से (दिसम्बर से अप्रेल) में करते हैं। फलों को संग्रह करने के लिए सीढ़ी लगाकर हाथ से तोड़ा जाता है अथवा पेड़ को हिलाकर या पीटकर नीचे गिरे फलों को बटोर लेते हैं। इन फलों में से कच्चे फलों को अलग कर दिया जाता है, और पके हुए फल तैल निकालने के लिए अलग संग्रहीत कर कारखानों में भेज दिया जाता है। कारखाने में फलों को पहले मशीन में चक्की द्वारा पिसला जाता है, जिससे गूदा तो पिसलजाय किन्तु गुठली (endocarp or the Stone) टूटने न पाये। इन पिसले हुए फलों को पुनः गोल-गोल थैलों में कसकर भर दिया जाता है और थैले एक के ऊपर एक करके रख दिये जाते हैं। इन थैलों पर मशीन द्वारा दबाव दिया जाता है, जिससे गाढ़ा तैल (Crude oil) निकल आता है, नालियों द्वारा इस तैल से हौज में संग्रहीत किया जाता है और उसमें पानी मिलाया जाता है, जिससे स्वच्छ एवं शुद्ध तैल पृथक होकर पानी पर तैरने लगता है। अब इस तैलीय भागको पृथक कर लिया जाता है। इसे "वर्जिन ऑयल Virgin oil" कहते हैं। औषधीय प्रयोग के लिए यही उपयुक्त होता है।

फुजले से प्रपीड़न द्वारा दूसरे दर्जे का तेल अलग प्राप्त करते हैं और शेष कार्यों के लिए यह व्यवहृत किया जाता है।

तेल के नाम--ओलियम् ऑलिवी Oleum olivae (ol. oliv.)--ले०; ऑलिव ऑयल (Olive oil)--अं०; ज़ैत--अ०; रोगन ज़ैतून--फा०; जैतून का तेल--हिं०।

वर्णन--यह एक स्थिर तैल होता है; जो प्रधानतः पूर्ववर्णित यूरोप देशीय जैतून (Olea europoea) के पके फलों से शीत प्रीड़प न (Cold expression) विधि के द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह किंचित् हरापन लिए पीले रंग का होता है, जिसमें हल्की-सी गंध होती है और स्वाद में तैलीय होता है।

रासायनिक संगठन—(१) ऑलीईन (Olein) जो ऑलीइक एसिड का ग्लिसेराइड होता है ९३%; (२) लीनोलीन (Linolein) जो लीनोलीक एसिड का ग्लिसेराइड (Glyceride) होता है ७%; पामेटिन (Palmitin), एक स्थिर तैल जो पामेटिक एसिड एवं ग्लिसेरिल (Glyceryl) का यौगिक होता है, तथा (४) एरेकिन (Arachin) आदि।

टिप्पणी—इसमें कभी-कभी विनौले के तेल (Cotton seed oil) तिल-तैल (Sesame oil) तथा मूंगफली के तैल (Arachis oil) आदि कम मूल्य के तैलों का मिलावट कर देते हैं।

मात्रा—आधा से १ औंस (।।-२।। तो०)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वाह्य—वाह्य प्रयोग से यह त्वचा पर मृदुकर (Emollient), स्नेहन (Lubricating), एवं संशमन (Soothiug) प्रभाव करता है। शरीर पर मर्दन (Massage) करने से त्वचागत लसीका वाहनियों द्वारा इसका शोषण हो जाता है और अंग-प्रत्यंगों को शक्ति प्रदान करता है। त्वचा पर मर्दन करने से यह श्वयथुविलयन भी करता है। अनेक लिनिमेंट एवं मलहमों में यह आधार-द्रव्य (Basis) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। त्वचा के रूक्ष रोगों (यथा सोरिएसिस Psoriasis, जिरोडर्मा Xeroderma आदि) में यह मार्दवकर के रूप में प्रयुक्त होता है। रूक्ष एवं स्निग्ध दग्ध (Burn and Scald) में संशामक प्रभाव एवं दग्धावयव के रक्षण के लिएइसका मलहम या लिनिमेंट बनाकर प्रयुक्त करते हैं। एतदर्थ लिनिमेंट कैल्सिस (Lin. Calcis)चूने का पानी १ भाग जैतून का तेल २ भाग) एक उत्तम योग है। शीतला (Small pox) एवं लोहित ज्वर (Scarlatina) दानों पर जब खुरण्ड निकलने लगते हैं, तो किसी उपयुक्त जीवाणुनाशक द्रव्य (फिनोल ४-५%) के साथ जैतून के तेल को लगाया जाता है। पक्षवध (Hemiplegia), आमवात (Rheumatism) एवं गृध्रसी (Sciatica) आदि रोगों में विलयन एवं संशमन हेतु शरीर पर इसका मर्दन करते हैं। त्वाची लसीका वाहिनियों (Cutaneous lymphatica) द्वारा इसका शोषण होने से निर्बल व्यक्तियों विशेषतः निर्बल एवं कृश शिशुओं में इसका शरीर पर मालिश करने से शरीर में शोषित होकर यह उनके शरीर को पुष्ट करता तथा कृशता को दूर करता है। व्रणशोधन-रोपण एवं संधानके लिए इसको मरहमों में मिलाकर व्रणों पर लगाते हैं।

आभ्यन्तर—फॉस्फोरस को छोड़कर अन्य प्रदाह कारक (Irritant) विषों में जैतून के तेल का प्रयोग स्नेहन-द्रव्य (Demulcent) के रूप में महास्रोतस् (Alimentary Canal) में होने वाली वेदना, दाह एवं शोथ को नष्ट करने के लिए आंतरिक रूप से किया

जाता है। अल्प मात्रा में प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र में यह कॉड-लिवर ऑयल (मछली के तैल) की भाँति इमल्सन में परिणित होकर आंत्रों द्वारा शोषित होता तथा शोषणोपरान्त पोषण का कार्य (Nutrient) करता है। अतएव क्षयकारक रोगों में इसका प्रयोग इमल्सन के रूप में करने से यह पुष्टिकर प्रभाव करता है। अनेक देशों में खाद्य के रूप में इसके सेवन का प्रचलन है। अधिक मात्रा (२॥-५ तो०) में यह आंतों का स्नेहन करता तथा साथ ही सारक (Mid laxative) प्रभाव भी करता है, जिससे शुष्क मल मुलायम होकर बिना कष्ट के पाखाना साफ हो जाता है। अतएव प्रकुपित अर्श (Inflamed piles), मलाशय-व्रण (Rectal ulcer) एवं गुदचीर (Anal fissure) आदि रोगों में तथा मलविबन्ध (Constipation) की अवस्थाओं में—विशेषतः जब मल शुष्क हो जाता है यथा अहिफेन (अफीम) के सेवन से उत्पन्न मलविबन्ध (कब्ज) में इसका सेवन बहुत उपयोगी है। सारक प्रभाव के लिए इसको वस्ति (Enema) के रूप में (आधा सेर गरम म्युसिलेज ऑव स्टार्च में २ छटांक जैतून का तेल) भी प्रयुक्त कर सकते हैं। जब मल शुष्क होकर सुद्दे (Faecal impaction) पड़ जाते हैं तथा आंत्रावरोध (Intestinal obstruction) में भी जैतून के तेल का प्रयोग (२ छटांक से ८ छटांक) तक लाभप्रद होता है। गुदमार्ग द्वारा ईथर एवं पैराल्डिहाइड का प्रयोग करने एवं अधस्त्वचीय मार्ग द्वारा (Hypodermic) ईथर एवं कैम्फर (कपूर) का प्रयोग करने के लिए भी जैतून का प्रयोग माध्यम द्रव्य (Vehicle) के रूप में किया जाता है।

जैतून के मुख द्वारा सेवन करने से यह आमाशय की अम्लता को कम करता है, तथा पित्ताशय पर संकोचक प्रभाव करने से यह अप्रत्यक्षतया पित्तविरेचक (Indirect cholagogue) प्रभाव करता है। अतएव आमाशयिक-व्रण (Gastric ulcer) अथवा आमाशयिक व्रण के न होते हुए भी इसके लक्षणों से युक्त अग्निमांद्य (Dyspepsia) में इसका सेवन लाभप्रद होता है। पित्ताशय पर उक्त प्रभाव करने के कारण जैतून के तैल का प्रयोग अनेक पित्ताशय रोगों यथा पित्ताशय शोथ (Cholecystitis), पित्ताश्मरी (Cholelithiasis) तथा पित्ताशय निर्बलता (Atony of the gall-bladder) आदि में करने से उक्त उपद्रवों की शान्ति होती है। चूंकि कोलेस्टेरीन (Cholesterine), जो कि पित्ताश्मरी (Gallstones) का एक मुख्य घटक होता है, जैतून के तैलों में शरीरतापक्रम (९८° फा०) पर विलीन हो जाता है, अतएव पित्ताशरी-विलयन एवं तज्जन्यशूल-निवारण के लिए जैतून के तैल का प्रयोग बहुत उपयुक्त समझा जाता है। एतदर्थ इसका सेवन अधिक समय तक निरन्तर करना पड़ता है और अल्पमात्रा से प्रारम्भ कर उत्तरोत्तर मात्रावृद्धि करते जाना चाहिए। साधारणतया २ रोगियों में १० से २० औंस तक तैल प्रतिदिन सेवन कराना पड़ा है। इससे पित्त पतला होकर उसका उत्सर्ग आँतों में बहुत अधिक मात्रा में होता है जिससे कालान्तर से पथरी भी आन्त्रों के मार्ग से बाहर उत्सर्गित हो जाती है। कहा जाता है कि ब्ल्यूपिल (Blue pill) के सेवन के १२ घंटे उपरान्त ६ औंस जैतून का तैल देने से भी पित्ताश्मरी का उत्सर्ग हो जाता है।

प्रयोग-विधि—जैतून का आभ्यन्तरिक प्रयोग अकेले कैप्स्यूल (Capsule) में रखकर अथवा इमल्सन के रूप में किया जाता है। इमल्सन बनाने के लिए १ औंस जैतून के तेल में १८० ग्रेन

बबूल के गोंद का चूर्ण और २ औंस जल मिलाने से उत्तम इमल्सन बन जाता है। एक्सट्रैक्ट ऑव माल्ट (यव्य सत्व) के साथ भी यह अच्छी तरह मिल जाता है।

ओलियम् गॉसिपाई सेमिनिस् (B. P.)

(बिनौले का तेल)

नाम—ओलियम् गॉसिपाइ सेमिनिस् Oleum Gossypii Seminis (Ol. Gossyp. Sem.)—ले०; कॉटन सीड ऑयल Cotton Seed oil—अं०; बिनौले का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—बिनौले का तेल एक स्थिर तैल होता है, जो कपास (Gossypium herbaceum Linn. : Family : Malvaceae (कार्पास-कुल) अथवा कपास की अन्य जातियों (जिनकी खेती की जाती है) के बीजों को कोल्हू या मशीन में पेरकर (प्रपीड़न expression द्वारा) प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह पीताभ (Pale yellow) अथवा पीले रंग का प्रायः गंधहीन द्रव होता है। प्रायः स्वाद रहित अथवा हल्के गिरी का सा गंध होता है। यह जमने पर अर्ध-घन स्वरूप का (Semidrying) हो जाता है। विलेयता—अल्कोहल् (९५%) में अंशतः घुलता है। सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा हल्के पेट्रोलियम् (Light petroleum) में मिल जाता (Miscible) है। वक्तव्य—बिनौले के तेल को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में सुरक्षित कराना चाहिए।

मात्रा (I. P. C. Dose)—१५ से ३० मि० लि० (½ से १ औंस)।

रासायनिक संघटन—इसमें प्रधानतः लिनोलीक एसिड (Linoleic acid : ३९·३५%), ओलिइक एसिड (Oleic acid : ३३·१५%), पामिटिक एसिड (Palmitic acid : १९·१%), स्टियरिक एसिड (Stearic acid : १·९%) आदि के ग्लिसराइड्स (Glycerides) होते हैं। इसके अतिरिक्त अल्पमात्रा में फॉस्फोलिपिन्स (Phospholipins : लेसिथिन आदि), फाइटॉस्टेरॉल्स (Phytosterols) तथा रंजककण भी पाये जाते हैं (I. P. C.)।

प्रयोग।

बिनौले के तेल का प्रयोग जैतून के तेल के स्थान में किया जा सकता है। बाह्य-प्रयोग से मार्दवकर (Emollient) तथा आभ्यन्तर प्रयोग से स्नेहन (Demulcent) होता है। आभ्यन्तर सेवन से (साधारण मात्रा में) यह पोषक (Nutritive) तथा अधिक मात्रा में रेचक क्रिया करता है। आजकल व्यवसाय में इसका प्रयोग बनस्पति-घी Hydrogenated vegetable oil) बनाने के लिए भी किया जाता है।

ओलियम् लाइनी (I. P., B. P.)

(अलसी या तीसी का तेल)

नाम—ओलियम् लाइनी Oleum Lini (Ol. Lini.)—ले०; लिनसीड ऑयल Linseed oil, ऑयल ऑव फ्लेक्स सीड Oil of Flax Seed, रॉ लिन सीड ऑयल Raw Linseed Oil—अं०; तीसी का तेल, मीठा तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—तीसी का तेल भी एक स्थिर तेल (Fixed oil) होता है, जो तीसी (लाइनम् युसिटेटिसिमम् Linum usitatissimum L.: Family : Linaceae) के पके बीजों को मशीन में पेरकर (Cold expression) प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह पीताभ-भूरेरंग (Yellowish-brown) का द्रव होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है। हवा में खुला रहने से यह गाढ़ा हो जाता है, रंग भी गाढ़ा हो जाता है और गंध अधिक उग्र हो जाती है। इस गाढ़े तेल का पतला लेप कर देने से जनकर वार्निश की तरह चमकीला लगने लगता है। जिन वर्तनों में बराबर यह तेल रखा जाता है, उन पर इसी तरह मोटा पर्त-सा बन जाता है। विलेयता—अल्कोहल (९५%) में तीसी का तेल अंशतः विलेय होता है। सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा लाइट पेट्रोलियम् में भी यह मिश्रित हो जाता (Miscible) है।

रासायनिक-संघटन—इसमें लिनोलीक एसिड तथा लिनोलेनिक एसिड के ग्लिसराइड्स (Glycerides) होते हैं। इसमें १०% के लगभग घन मेदसाम्ल (Solid fatty acids) यथा स्टियरिक एवं पामिटिक एसिड आदि होते हैं।

मात्रा (I. P. C. Dose)—१ से २ औंस (३० से ६० मि० लि०)।

लाइनम् कन्ट्यूजम् Linum Contusum (Linum. Contus.) B. P. C. —ले०। पर्याय—लाइनी सेमिना कन्ट्यूजा **Lini Semina Contusa**; लिनसीड मील **Linseed Meal**। तीसी का पुल्टिस—हिं०।

वर्णन—यह तीसी के बीजों का मोटा चूर्ण होता है, जो भूरापन लिए पीले रंग का होता है। इसमें दूसस्ततः बीज के छिलके के छोटे कण दिखाई पड़ते हैं। इसको जब प्रयोग करना हो ताजा बनाना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

गर्म पानी में बनाए हुए तीसी के पुल्टिस का प्रयोग उग्र शोथों के विलयन के लिए अथवा फोड़े को पकाने के लिए किया जाता है। इसके प्रयोग से दोनों ही कार्य होते हैं। यदि फोड़ा बैठने को होता है, तो यह उसके बैठने में भी सहायता करता है, अथवा जब बैठने को नहीं होता तो पकाता है। इसके प्रयोग से स्थानिक रक्तवाहिनियाँ विस्फारित होती तथा तन्तुओं में तनाव की कमी होती है, जिससे वेदना की शान्ति एवं सूजन के तनाव का शमन होता है। एतदर्थ पुल्टिस सहता गर्म होना चाहिए। आभ्यन्तर सूजन तथा न्यूमोनिया, ब्रांकाइटिज, ब्रांको-न्यूमोनिया, वाह्य हृदयावरण शोथ (**Pericarditis**) आदि—में यह प्रतिक्षोभक (**Counter-irritant**) क्रिया द्वारा शोथ का विलयन करता है। आभ्यन्तर शोथ के लिए इसमें तीसी का $\frac{1}{16}$ भाग सरसों का चूर्ण भी मिला देने से और सक्रिय हो जाता है।

दग्ध व्रण (**Burn and Scald**) में तीसी के तेल का प्रयोग कैरन ऑयल (**Carron oil**) के रूप में बहुत उपयोगी होता है। मलाशय की शुद्धि के लिए विशेषतः जब मल-कण्ड बन जाता है तो इसका एनिमा (आधा सेर की मात्रा में) दे सकते हैं।

बीजों को थोड़े से जल में भिगोने से उसके वाह्य चोल (**Testa**) का लबाबी अंश जल में आ जाता है। इसका उपयोग आयुर्वेदीय एवं यूनानी चिकित्सा में (कास रोग में) अनुपान के लिए किया जाता है। इस कार्य के लिए बीजों को समूचा काढ़ों में भी मिलाते हैं। इस प्रकार यह श्वास प्रणाली पर मार्दवकर एवं स्नेहन कार्य करता है, जिससे बलगम आसानी से निकलता है।

(योग)

१—यह सोल्यूशिओ क्रिसोलिस सेपोनेटस् नामक ऑफिशल योग का एक उपादान है।

२—लोशिओ केल्सियाइ हाइड्रॉक्साइडाइ ओलिओसा Lotio Calcii Hydroxidi Oleosa (Lot. Calc. Hydrox. Oleos.) I. P. C.—ले०, ऑयली सॉल्यूसन ऑव केल्सियम् हाइड्रॉक्साइड Oily Solution of Calcium Hydroxide। पर्याय—लिनिमेंटम् केल्सियाइ हाइड्रॉक्साइडाइ कम् ओलियो लाईनी Linimentum Calcii Hydroxidi Cum Oleo Lini; लाइमवाटर एण्ड ऑयल Lime water and Oil.

१० औंस तिल तैल तथा १० औंस केल्सियम् हाइड्रॉक्साइड सॉल्यूशन परस्पर मिलाकर खूब हिलाये और इसे पात्र में रखलें। इसका प्रयोग दग्ध पर लगाने के लिए किया जा सकता है।

बादाम

N. O. Rosaceae (वातादादिवर्ग)

(१) मीठा एवं (२) कड़ुआ, भेद से बादाम २ प्रकार का होता है।

मीठा बादाम (Sweet Almond)

नाम वृक्ष—मीठे बादाम का पेड़—हिं०; दरख्ते बादामे शीरी—फा०; शज्रतुल्लौजुल्-हलो—अं०; प्रुनस् एमिग्डेलस् डल्सिस **Prunus amygdalus var. dulcis**—ले०; स्वीट आमंड ट्री **Sweet almond tree**—अं०। बीज—मीठा बादाम, बदाम—हिं०; मिष्ठ-वाताद, मधुर वाताम—सं०; एमिग्डेला डल्सिस **Amygdala dulcis**—ले०; स्वीट आमंड **Sweet almond**—अं०।

कड़ुआ बादाम (Bitter Almond)

नाम वृक्ष—कड़ुवे बादाम का पेड़—हिं०; दरख्ते बादाम तल्ख—फा०; शज्रतुल्लौजुल्-मुर्र—अ०; प्रुनस् एमिग्डेलस् अमारा (**Prunus amygdalus var. amara**—ले०; बिटर आमंड ट्री **Bitter almond tree**—अं०। बीज—कड़ुआ बादाम, कड़वा बदाम—हिं०; बादामे तल्ख—फा०; लौजुल् मुर्र—अ०; एमिग्डेला अमारा **Amygdala amara**—ले०; बिटर आमंड **Bitter almond**—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—पश्चिम एशिया एवं कुर्रम की घाटी में बादाम के स्वयंजात पौधे पाये जाते हैं। भारतवर्ष में काश्मीर, पंजाब तथा बलूचिस्तान, अफगानिस्तान, फारस एवं भूमध्य सागर के तटीय प्रान्तों में मेहनत से इसकी खेती की जाती है।

वक्तव्य—मीठे-कड़वे के भेद से बादाम का वर्णन आयुर्वेदीय ग्रंथों में नहीं मिलता। सुश्रुत संहिता सूत्र अ० ४६ में फलों के प्रसंग में अखरोट, पिस्ता आदि अन्य मेवों के साथ वाताम* नाम से बादाम का उल्लेख मिलता है। इसीसे मिलता-जुलता पाठ चरकसंहिता†

---

* वातामा भोडाभिषुक निचुलपिचुनिकोचकोरुमाण प्रभृतीनि ॥ १८७ ॥
पित्तश्लेष्महराण्याहुः स्निग्धोष्णानि गुरूणि च ।
बृंहणान्यनिलघ्नानि बल्यानि मधुराणि च ॥ १८८ ॥ (सु० सं० अ० ४६)

† वातामभिषुकाक्षोट..............बलप्रदाः ॥ (च० सू० अ० २७)

(सू० अ० २७) में भी मिलता है। भावप्रकाश निघण्टु‡ में आम्रादि फल वर्ग (वर्ग ७) में बादाम का स्वतंत्र रूप से वर्णन है, और इसके वाताद वातवैरी (वायुनाशक होनेके कारण), नेत्रोपमफल इत्यादि पर्य्याय बादाम के लिए उल्लिखित है।

यूनानी निघण्टुकारों ने बादाम के मीठे एवं कड़वे भेदों का उल्लेख अवश्य किया है और उनके गुणकर्म एवं आमयिक प्रयोगों का भी विस्तृत विवेचन किया है। भारतवर्ष में बादाम का अधिक प्रचार मुसलमानों के जमाने में हुआ, और फारस एवं अफगानिस्तान से भारतीय बाजारों में आने वाले व्यावसायिक द्रव्यों में बादाम भी एक महत्त्व का द्रव्य रहा है। मख़ज़नुल अद्विया नामक फारसी भाषा में लिखित निघण्टु ग्रंथ में मीठे बादाम के भी २ भेदों का उल्लेख मिलता है। एक मोटे छिलके वाला (thick shelled) तथा दूसरा पतले एवं भंगुर छिलके वाला जो अब भी बाजार में कागजी बादाम के नाम से मिलता है। इसका मूल भी मोटे छिलके वाले बादाम की अपेक्षाकृत अधिक होता है।

वर्णन। वृक्ष—बादाम के मध्यम कद के वृक्ष होते हैं। पत्तियाँ खाकस्तरी (Greyish), आयताकार-भालाकार (oblong-lanceolate), पत्तियों के किनारे सूक्ष्म दन्तुर (Serrulate)। पुष्प सफेद होते हैं, जिनपर कहीं-कहीं लाल दाग होते, और नई पत्तियों के निकलने के पूर्व ही पुष्पागम होता है। फल (Drupe) मखमली (Velvety) होता है और सूखने पर फलत्वक् (Pericarp) दो खण्डों में पृथक् हो जाता है, और गुठली जिसमें गिरी होती है (बाजार में उपलब्ध होने वाला बादाम) पृथक प्राप्त हो जाती है। यह गुठली (Stone) किंचित चपटी होती है, जिसपर अनेक झुर्रीयुक्त रेखायें (Wrinkles) होती हैं और जगह-जगह सूक्ष्म छिद्र होते हैं।

बीज—बादाम के बीज (Seeds) पार्श्वों में चपटे (Laterally Compressed), लगभग ३ सेंटीमीटर लम्बे एवं १·२५ सेंटीमीटर चौड़े तथा आकार में आयताकार (oblong) होते हैं। इनपर लालिमा लिए भूरेरंग का एक पतला आवरण (Scurfy Coat) चढ़ा होता है, जो बीजों को पानी में भिगोने पर आसानी से पृथक् हो जाता है। बीजभ्रूण (Embryo) दो सफेद गूदेदार चपटे एवं उन्नतोदर (Plano-Convex) पत्रकों (Cotyledous) के रूप में होता है। इनमें एक मीठा स्थिर तैल काफी मात्रा में पाया जाता है, जिसे बादाम का तैल कहते हैं। उत्तम बादाम की गिरी में एक विशिष्ट प्रकार का रुचिकारक मीठा एवं गिरी का स्वाद होता है। कड़ुआ बादाम आकार प्रकार में इसी प्रकार का होता है, केवल स्वाद में कड़वा (Bitter) होता है।

रासायनिक-संघटन—मीठे बादाम में (१) प्रोटीन, (२) ४५ से ५० प्रतिशत स्थिर तैल (बादाम का तैल Almond oil) तथा (३) इमल्सिन (Emulsin) या सिनेप्टोन (Synaptone) नामक किण्व (mixture of enzymes) पाया जाता है।

---

‡ वातादो वातवैरी स्यान्नेत्रोपमफलस्तथा।
वाताद उष्णः सुस्निग्धो वातघ्नः शुक्रकृद् गुरुः ॥ १२३ ॥
वातादमज्जा मधुरो वृष्यः पित्तानिलापहः।
स्निग्धोष्णः कफकृन्नेष्टो रक्तपित्तविकारिणाम् ॥ १२४ ॥
(भा० प्र० आम्रादिफल वर्गः)

कड़वे बादाम में इमल्सिन के अतिरिक्त (२) अमिग्डेलिन (Amygdalin $C_{20}H_{27}NO_{11}$) नामक एक ग्लूकोसाइड (Glucoside) पाया जाता है, जो इसका प्रधान घटक है। जल की उपस्थिति में इमल्सिन नामक उपरोक्त किण्व (Ferment) की प्रतिक्रिया से अमिग्डेलिन निम्नतत्त्वों में वियोजित हो जाता है—(१) बेंजोइक एल्डिहाइड Benzoic Aldehyde (कड़वे बादाम का तेल Oil of bitter almonds); (२) हायड्रोसायनिक एसिड तथा (३) ग्लूकोज। इसमें हायड्रोसायनिक एसिड नामक तत्व अत्यन्त विषाक्त होता है।

वक्तव्य—कड़वे बादाम में पाया जाने वाला उक्त अमिग्डेलिन नामक ग्लूकोसाइड कड़वे बादाम के अतिरिक्त किसी-किसी मीठे बादाम में तथा इस जाति एवं कुल के अन्य पौधों (पीच Peach, एप्रिकाट Apricot आदि) के बीजों में भी पाया जाता है। कभी-कभी मीठे बादाम में अमिग्डेलिन युक्त बादाम के आ जाने से अज्ञानवश उसका सेवन होने से घातक परिणाम होते देखा गया है।

ओलियम् अमिग्डेली (B. P.)
Oleum Amygdalae (Ol. Amygdal.)
(बादाम का तेल)

नाम—ओलियम् अमिग्डेली एक्सप्रेसम् **Oleum Amygdalae Expressum U. S. P.**; आमण्ड ऑयल **Almond Oil**—अं०, रोग़न बादाम–फा०।

प्राप्ति-साधन—बादाम का तैल उक्त दोनों प्रजातियों (Species) के बीजों से प्रपीड़न (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—बादाम का तेल स्वच्छ एवं गंधहीन तथा हल्के पीले रंग का होता है, जिसमें एक रुचिकारक गिरी का स्वाद (Agreeable and nuttytaste) होता है। पोस्त बीजों के तेल (Poppy seed oil) की अपेक्षा यह अधिक गाढ़ा द्रव होता है। हवा में खुला रहने से तेल में बिगड़ने (Rancid) की सी एक अरुचिकारक गंध आने लगती है और इसका विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) भी बढ़ जाता है।

संघटन—इसमें प्रधानतः ओलीन (Olein) एवं लिनोलीन (Linolein) नामक तत्व होते हैं।

मात्रा—½ से १ औंस या १५ से ३० मि० लि० (लगभग १।–२॥ तो०)।

ओलियम् एमिग्डेली वोलेटाइल प्योरिफिकेटम् (B. P.)
(Oleum Amygdalae Volatile Purificatum (Oil. Amygdal. Vol. Purif.)—ले०।

नाम—प्योरिफाइड वोलेटाइल ऑयल ऑव बिटर आमण्ड्स **Volatile oil of Bitter Almonds**—अं०; कड़वे बादाम का उत्पत् तैल।

वर्णन—यह रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग (पीताभ वर्ण) का द्रव होता है, जो कड़वे बादाम की खली (स्थिर तैल निकालने के बाद बची हुई खली) जल में मिला कर और इस द्रव के परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। परिस्रवण के बाद प्राप्त तैल से

हायड्रोसायनिकएसिड अलग कर दिया जाता है। यह २ भाग अलकोहल (७०%) में विलय होता है। इसको अच्छी तरह डाटबंद पात्र में रखना चाहिए और प्रकाश तथा अधिक गर्मी से बचाना चाहिए। यह काडलिवर ऑयल के इमल्सन बनाने के काम आता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—बादाम का तेल स्नेहन (Demulcent) एवं मार्दवजनक (Emollient) होता है। बालों के सुगधिन्त तैल बनाने के लिए एवं मलहमों (Ointments) के लिए यह एक उत्तम आधार-द्रव्य (Basis) है। बाह्य प्रयोग के लिए विशेषतः कड़वे बदाम का तैल प्रयुक्त करते हैं। चेहरे की झाईं को दूर करने एवं रंग निखारने के लिए इसका लेप की भाँति उपयोग करते हैं, अथवा इसे उबटन में डालते हैं। मस्तिष्क की रूक्षता के निवारण के लिए अथवा मेध्य प्रभाव (मस्तिष्क के बल-दर्धन) के लिए इसका शिर पर मालिश किया जाता है। अनेक त्वचा-रोगों (Excoriations etc.) में दाह एवं शोथ को शमन करने के लिए इसका लेप करते हैं।

बदाम का बाहरी कड़ा छिलका (Pericarp) जलाकर प्राप्त भस्म (राख) मंजनों (Dentifrices) का एक परमोपयुक्त आधारद्रव्य होता है। इससे दाँत स्वच्छ चमकदार एवं मजबूत हो जाते हैं।

आभ्यन्तर—मीठा बादाम एक उत्तम पोषक (Nutritive) द्रव्य है। ६ माशा से १ तो० की मात्रा में यह मृदुसारक (Laxative) का काम करता है। मलावरोध (या मल के अत्यंत कड़े होने) में इसकी वस्ति उपयोगी होती है। कड़वे बादाम के शोधित उड़नत् तैल का उपयोग कॉडलिवर ऑयल को रुचिकारक बनाने के लिए किया जाता है।

ओलियम् एरेकिस (I. P., B. P.)

(मूंगफली का तेल)

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल)

नाम—ओलियम् एरेकिस Oleum Arachis (Ol. Arach.)—ले०; एरेकिस ऑयल (Arachis Oil), ग्राउण्ड नट ऑयल (Ground-nut Oil), पी-नट ऑयल (Pea-nut oil), नट ऑयल (Nut oil)—अं०; मूगफली का तेल, चिनियाबादाम का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—मूंगफली का तेल भी एक स्थिर तेल (Fixed oil) होता है, जो मूंगफली एरेकिस हाइपोजिआ Arachis hypogea Linn. (Family : Leguminosae) के बीजों की गिरी से प्रपीड़न द्वारा (Expression) अर्थात् मशीन में पेर कर प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह हल्के पीले रंग के द्रव रूप में होता है, जिसमें हल्की गिरी-सी गंध (Faint nut-like odour) आती है। स्वाद में यह गिरी-सा (Nutty) होता है—५° तापक्रम पर यह जम जाता है। विलेयता—अल्कोहल् (९५%) में अल्पतः घुलता है तथा साल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म एवं लाइट पेट्रोलियम् में भी मिल जाता है।

रासानिक संघटन—इसमें प्रधानतः ओलीन (Olein) पाया जाता है। इसके अतिरिक्त लिनोलिक एसिड (Linolic acid), पामिटिक एवं स्टियरिक एसिड के भी ग्लिसराइड्स पाये जाते हैं।

मूंगफली के तेल में ४·८ प्रतिशत एरेकिडिक (Arachidic) तथा लिग्नोसेरिक एसिड (Lignoceric) भी पाया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मूंगफलीका तेल, जैतून के तेल अथवा बादाम के तेल का उत्तम प्रतिनिधि (Substitute) द्रव्य है। बाह्य प्रयोग में आने वाले सभी लिनिमेंट, आयण्टमेंट, प्लास्टर एवं सोप आदि योगों में जिनमें जैतून का तेल वा बादाम का तेल पड़ता है। इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने वाली अनेक औषधियों के विलयन (सॉल्यूशन) अथवा निलम्बन (सस्पेन्सन Suspension) बनाने के लिए मूंगफली का तेल प्रयुक्त होता है।

मूंगफली में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं वसा (Fats) आदि सभी पोषक घटक पाये जाते हैं, अतएव यह एक उत्तम खाद्य है। भारतवर्ष में मूंगफली (भुनी हुई) बहुत खाई जाती है। गुजरात प्रान्त में घी के स्थान में मूंगफली के तेल का ही व्यवहार खाद्यपदार्थों के बनाने के लिए किया जाता है। इसका इमल्सन बालकों को पोषणार्थ दिया जाता है। मछली के तेल को पतला करने के लिए भी इसको उसमें मिलाते हैं।

(नॉट्-ऑफिशल)

१—लिनिमेंटम् केल्सिस् Linimentum Calcis (Lin. Calc..), I. P. C.—ले०; लिनिमेंट ऑव लाइम Liniment of Lime—अं०। पर्याय—लिनिमेंटम् केल्सियाइ हाइड्रॉक्साइडाइ Linimentum Calcii Hydroxidi, लिनिमेंट ऑव केल्सियम् हाइड्रॉक्साइड Liniment of Calcium Hydroxide.।

ओलियम् सिसेमाई (I. P., B. P.)

(तिल्ली का तेल)

नाम—ओलियम् सिसेमाइ Oleum Sesami (Ol. Sesam.)—ले०; सिसेम ऑयल Sesame Oil, जिंजेली ऑयल (Gingelly Oil), तिल ऑयल (Til Oil)-अं०; तिल तैल—सं;० तिल्ली का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—तिल्ली का तेल भी एक स्थिर तैल होता है, जो तिल्ली (सिसेमम इन्डिकम् Sesamum indicum Linn. (Family : Pedaliaceae) के पके बीजों को मशीन में पेरकर (Expression) प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह हल्के पीले एवं कुछ-कुछ धुंधले (Limpid) द्रव के रूप में होता है, जिसमें एक हल्की सुगन्ध होती है। विलेयता—पूर्ववर्णित अन्य स्थिर तेलों की भाँति। वक्तव्य—आयुर्वेदीय चिकित्सा में औषधीय प्रयोग के लिए तिलतैल सर्वोत्तम माना जाता है। अतएव आयुर्वेद के सभी औषधीय तैल तिलतैल में ही बनाये जाते हैं। व्यवहार में भी सिर पर अभ्यंग करने के लिए इसका व्यवहार किया जाता है। अतएव अपेक्षाकृत यह मंहगा मिलता है। अतएव इसमें मिलावट (Adulteration) भी खूब होता है। इसके लिए प्रायः मूंगफली का तेल, बिनौले का तेल या तीसी आदि का तेल प्रयुक्त करते हैं।

मात्रा—½ से १ औंस (१५ से ३० मि० लि०), I. P. C.

रासायनिक संघटन—(१) सिसेमिन (Sesamin : $C_{20}H_{18}O_{6}$—१ प्रतिशत) तथा सिसेमोलिन (Sesamolin : $C_{20}H_{18}O_{7}$—०·३ प्रतिशत); (२) इसमें लगभग ७० प्रतिशत ओलीक एसिड एवं लिनोलीक एसिड के ग्लिसराइड्स पाये जाते हैं; (३) सिसेमोल (Sesamol) तथा (४) १२–१४ प्रतिशत स्टियरिन एवं पामिटिन आदि।

गुण तथा प्रयोग।

तिल्ली का तेल भी जैतून के तेल का उत्तम प्रतिनिधि द्रव्य है। अतएव लिनिमेंट, आय-एटमेंट तथा प्लास्टर आदि के बनाने में जैतून के तेल (ओलिव ऑयल) के स्थान में इसका प्रयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग अधस्त्वक् एवं पेशीगत इंजेक्शन द्वारा दी जाने वाली अनेक औषधियों का विलयन (सॉल्यूशन) बनाने के लिए भी किया जाता है।

अनेक प्रान्तों में तिल्ली के तेल का उपयोग खाने के लिए भी किया जाता है।

ओलियम् कोकोइस (I. P.)

Oleum Cocois (Ol. Cocois)—ले०;

(नारियलका तेल या गरी का तेल)

Family : Palmae (ताड़-कुल)

नाम—कोकोनट ऑयल Coconut Oil—अं०; नारिकेल-तेल—बं०; नारयल-नु तेल—गु०; नरियर का तेल या गरी का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—यह एक वसा (Fat) है, जो नारियल (कोकोसन्युसिफेरा **Cocos nucifera Linn.**) नामक ताड़-जातीय वृक्ष के फलों की गिरी (kernel) से प्रपीडन (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—नारियल का तेल प्रायः रंगहीन अथवा पीताभवर्ण (Pale yellow) का स्वच्छ, पारदर्शी (Transparent) द्रव होता है, जो २०° तापक्रम पर जम जाता है। १५° तापक्रम पर यह काफी कड़ा हो जाता है। इसमें गरी की सी गन्ध आती है और स्वाद में मीठे तेल की भाँति तथा रुचिकारक (Bland and agreeable) होता है। विलेयता—अल्कोहल् (९५%) में ६०° तापक्रम पर तो २ भाग में १ भाग के अनुपात से, किन्तु इससे कम तापक्रम पर विलेयता भी कम हो जाती है। किन्तु ईथर, क्लोरोफॉर्म एवं कार्बन-डाई सल्फाइड में तुरन्त घुल जाता है।

रासायनिक संघटन—नारियल के तेल में ९१ प्रतिशत तक सचुरेटेड फेटी एसिड्स (Saturated Fatty acid) तथा उनके ग्लिसराइड्स (Glycerides) होते हैं और शेष (९ प्रतिशत) अनसचुरेटेड फेटी एसिड्स (Unsaturated Fatty acid) होते हैं, जिनमें ५ से ८·२ प्रतिशत तक ओलीइक एसिड (Oleic acid) तथा १ से २·६ तक प्रतिशत तक लिनोलिईक एसिड (Linoleic acid) होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सुगंधित गरी के तेल का व्यवहार शिर के बालों में लगाने के लिए किया जाता है। इससे बाल चिकने चमकीले तथा बढ़ने वाले होते हैं। त्वचा पर मलने से इसका त्वचा द्वारा शीघ्रता पूर्वक शोषण हो जाता है तथा यह काफी जल सोखता है। अतएव मलहम बनानेके लिए गरी

का तैल एक उत्तम आधारद्रव्य (Base) माना जाता है। त्वचा पर चिकनाई एवं मुलायमियत लाने के लिए यह मालिश के हेतु (Massage) बहुत उपयुक्त है। विटामिन 'डी' के अभाव से होने वाली व्याधियों के रोगियों को आहार के साथ नारियल का तेल देने से केल्सियम् एवं फास्फोरस के प्रचूषण (Absorption) एवं धातुओं में उसके स्थिरीकरण (Retention) में सहायता मिलता है।

योग (Prepartions)।

१—लाइकर सेपोनिस ओलियाइ कोकोइस Liquor Saponis Olei Cocois (Liq. Sap. Ol. Cocois.), I. P. C.—ले०; सॉल्यूशन ऑव कोकानेट ऑयलसोप Solution of Coconut oil soap—अं०।

२—अंग्वण्टम् ओलियाइ कोकोइस Unguentum Olei Cocois (Ung. Ol. Cocois) I. P. C.—ले०; कोकोनेट ऑयल आयण्टमेंट Coconut Oil Ointment अं०। कोकोनेट ऑयल २ औंस, ह्वाइट सॉफ्ट पाराफिन १ औंस। दोनों को पिघलाकर मिलावें और चलाते रहें जबतक ठण्ढा न हो जाय।

मधुरी (ग्लिसरिन) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत—$C_3H_8O_3$.

नाम—ग्लिसेरिनम् Glycerinum (Glycer.)—ले०; ग्लिसेरी (रि) न, ग्लिसरिन Glycerine, ग्लिसेरोल Glycerol—अं०; मधुरी—सं०; ग्लिसरिन—हिं०।

निर्माण-विधि—यह वसा या चर्बी (Fats) एवं स्थिर तैलों (Fixed oils) के जलांशन (Hydrolysis) द्वारा प्राप्त की जाती है। जब क्षारों (Alkalies) के साथ स्थिर तैलों को मिलाकर साबुन बनाया जाता है, तो इसी क्रिया में ग्लिसरिन भी प्राप्त होती है अर्थात् साबुन-निर्माण में ग्लिसरिन भी प्राप्त हो जाती है। पाश्चात्य देशों में साबुन बनाते समय ही, साबुन के कारखाने वाले ग्लिसरिन को भी पृथक कर लेते हैं और उसका भी व्यवसाय करते हैं। इस प्रकार सस्ते दामों पर ही ग्लिसरिन प्राप्त होती है। औषध्यर्थ ग्लिसरिन का व्यवहार बहुत होता है।

वर्णन—यह एक रंगहीन, स्वच्छ और प्रायः निर्गन्ध किन्तु गाढ़ा (Syrupy) द्रव होता है, जो स्वाद में मधुर एवं चखने के बाद मुँह में किंचित् उष्णता का अनुभव होता है। इसमें आर्द्रता को ग्रहण करने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) होती, तथा यह जल एवं अल्कोहल् (९०%) में तो मिश्रित हो जाती है किन्तु सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म एवं स्थिर-तैलों में अविलेय होती है। इसकी प्रतिक्रिया (Reaction) क्लीव (Neutral) होती है।

मात्रा—६० से १२० मिनिम् (बूंद) या १ से २ ड्राम।

यह तमाम ग्लिसेरिनी (Glycerini) योगों में लेमिली में, केटाप्लामा केओलिनाइ, जिलेटिनम् जिंसाई (Gelat. Zinci) एवं अन्य अनेकानेक योगों में पड़ती है। इसमें अनेक महत्वपूर्ण भौतिक विशेषतायें (Physical properties) होती हैं, जिसके कारण इसका उपयोग औषधि-योजन (Dispensing) एवं औषधि निर्माण (Pharmaceutical Purposes) में बहुत किया जाता है। गुटिका-निर्माण में यह एक उपयुक्त सामन्य माध्यम द्रव्य (Excipient) होती है।

गुदवर्ति, योनिवर्ति, जेलीज (Jellies), ग्लाइको-जिलेटिन योगों (Glyco-gelatin preparations) के निर्माण में तथा मलहम बनाने में इसका बहुत प्रयोग होता है। अनेक क्षारोदों (Alkaloids), सक्रियतत्त्व, अम्ल, क्षार, ग्लाइकोसाइड्स एवं आयडीन आदि के विलायक (Solvent) के रूप में भी इसका व्यवहार किया जाता है। त्वचा एवं बालों के लोशन्ज (Skin and hair-lotions) के बनाने में भी इसका उपयोग करते हैं। मिक्सचर बनाने में रुचिकारक द्रव्य (Flavouring agent) के रूप में शर्बत (सिरप्स) के स्थान में इसका भी प्रयोग किया जाता है। मिक्सचर के संरक्षण (Preservation) हेतु भी इसको प्रयुक्त कर सकते हैं।

गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग।

बाह्य—त्वचापर लगाने से यह जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic), मार्दवकर (Emollient) एवं स्नेहन प्रभाव (Demulcent) करती है। जल के साथ मिलाकर (ग्लिसरिन १ भाग, जल ३ भाग) त्वचा पर लगाने से यह उसको मुलायम रखती या साथ ही संशामक प्रभाव भी करती है, किन्तु ग्लिसरिन लगाने से यह श्लैष्मिक कलाओं एवं सम्भवतः त्वचा पर भी क्षोभक (Irritant) प्रभाव करती है। ग्लिसरिन को त्वचा पर जिस जगह लगायें, आर्द्रता को शोषण करती और इस प्रकार उस स्थान को तर रखती तथा स्वयं उड़ती नहीं। अनेक औषधियाँ—यथा अल्कलायड्स, टैनिक एसिड, आयोडीन, ब्रोमीन, सेलिसिन एवं अनेक लवण (Salts)—इसमें विलीन (Soluble) हो जाती है, अतएव त्वचा एवं व्रणों पर उक्त औषधियों को लगाने के लिए ग्लिसरिन एक उत्तम आधार-द्रव्य (Basis) है।

मार्दवकर के रूप में जल में मिलाकर (१ भाग ग्लिसरिन में ३ भाग जल) इसको ओष्ठ-विदार (Chapped lips), हाथ-पैर के तलवों की बिवाई पर तथा त्वचा की रूक्षता-खरता-एवं वेदना तथा विस्फोट युक्त त्वचा-विकारों-कक्षा रोग (Herpes), विचर्चिका आदि में लगाने से बहुत लाभ होता है। एतदर्थ ग्लिसेरिनम् कम् एक्वा रोजी (Glycerinum cum aqua rosae ग्लिसरिन २ भाग, अर्क गुलाब Aqua rose ३ भाग) एक उपयुक्त योग है। ग्लिसरिन में बोरिक एसिड मिलाकर (Boro-glycerin बोरो ग्लिसरिन) को प्रयोग अनेक अवस्थाओं में किया जाता है। मुख-पाक (Apthous) अर्थात् मुंह के निनावा में सींक में इसका फाया लेकर जिह्वा एवं मुंह के अन्दर तमाम विकृत स्थल पर लगाते हैं। कर्ण-गुहा (Meatus of the ear) में यदि रूक्षता हो या विदार (Fissures) हों तो इसको कर्ण बिन्दु के रूप में प्रयुक्त करने से लाभ होता है। यदि एक बार मुख-दूषिकायें (Acnes) या मुंहासे निकलकर ठीक हो गए हों तो गुलाबजल में ग्लिसरिन एवं फ्रायर्सबाल्ज़म ग्लिसरिन ५ भाग, फ्रायर्सबाल्जम Friar's balsam ५ भाग, गुलाबजल २० भाग) मिलाकर लगाने से पुनः मुखदूषिका-प्रकोप की आशंका नहीं रहती। यदि रक्ताधिक्य (Congestion) के कारण गर्भाशय के आकार में वृद्धि हो गई हो और उससे अत्यधिक स्राव निकलता हो तो तूलिकावर्त्ति (रुई की बत्ती) को ग्लिसरिन में भिगोकर गर्भाशय-द्वार (Os uteri) में उसका पूरण करने से उक्त विकार का शमन हो जाता है। प्रसवोत्तर-काल में भी कभी-कभी यह क्रिया करनी पड़ती है। व्रण शय्या (Bed-Sore) बनने की आशंका हो तो घाव होने के पूर्व ग्लिसरिन धीरे धीरे मल देने से व्रणशय्या नहीं होने पाती।

आभ्यन्तर—उग्र ज्वरों एवं अन्य अवस्थाओं में जब ओठ, दांत एवं मसूढ़ों पर मल (Sordes) जम जाता है, और दातून का प्रयोग प्रायः ऐसी अवस्थाओं में निषिद्ध होता है, तो फोया द्वारा उनपर ग्लिसरिन लगा देने से सफाई हो जाती है। ग्रसनिका-शोथ (Pharyngitis) के कारण जो सूखी खांसी आती है, उसमें पानी में ग्लिसरिन मिलाकर उससे गण्डूष (गरगरा) करने से शोथ का शमन होकर तथा मार्दवकर एवं स्नेह प्रभाव होने से उक्तकासका शमन होता है। अधिक मात्रा में सेवन करने से यह सारक (Laxative) होती है। अतएव मलविबन्ध (कब्ज) में इसको अकेले या एरण्डतैल के साथ देते हैं (१ से २ ड्राम ग्लिसरिन)। एरंड तैल के साथ देने से एक तो यह उसके अरुचिकारक गंध का निवारण करती दूसरे उसकी क्रिया में भी सहायता करती है। यदि मलाशयमें मल एकत्रित हो और शुष्क हो गया है तो उसके शोधन के लिए (अर्थात् जब यह अभीष्ट हो कि आन्त्रों की गति पर किसी प्रकार का प्रभाव किए बिना मलाशय में जो मल हो उसका शोधन हो जाय) तो ऐसी स्थिति में ग्लिसरिन की वत्ति का प्रयोग किया जाता है, अथवा मलाशय में ग्लिसरिन (४ ड्राम तक) की पिचकारी की जाती है। लह क्रिया एक विशेष प्रकार के पिचकारी (ग्लिसरिनसिरिज Glycerine Syringe) द्वारा सम्पन्न की जाती है।

टिप्पणी—अर्श (ववासीर) के कब्ज के निवारण के लिए ग्लिसरिन की पिचकारी का प्रयोग निषिद्ध है अथवा मल-संचय यदि मलाशय (Rectum) के ऊपर हो तो भी यह प्रयोग व्यर्थ होता है।

उत्सर्ग (Elimination)—शरीर से ग्लिसरिन का निस्सरण प्रोपिओनिक एसिड (Propionic acid), फॉर्मिक एसिड (Formic acid) तथा अन्य अम्लों (Acid) के रूप में होता है। जो लोग ग्लिसरिन का सेवन करते हैं, उनके मूत्र में एक ऐसा घटक पाया जाता है, जो वास्तव में तो शर्करा नहीं होता किंतु, फेहलिंग सॉल्यूशन (Copper tests) द्वारा परीक्षण करने पर या अन्य शर्करा की परीक्षाओं के करने पर परीक्षा अस्त्यात्मक-सी मिलती है।

ऑफिशल योग

१—सपोजिटोरिया ग्लिसेरिनाइ Suppositoria Glycerini (Supp. Glycer.) I. P., B. P.—लै०; सपोजिटरीज ऑव ग्लिसरिन, ग्लिसरिन सपोजिटरी—अं०; ग्लिसरिन की गुदवर्ति या बत्ती—हि०। इसमें ७० प्रतिशत (w/w) ग्लिसरिन होती है।

(नॉन्-ऑफिशल)

१—पेस्टामैगनीसियाइ सल्फेटिस Pasta Magnesii Sulphatis (Past. Mag. Sulph.), B. P. C.—लै०; मैगनीसियम् सल्फेट पेस्ट, मोरिसन्स पेस्ट (Morison's Paste)—अं०। इसमें ५५% ग्लिसरिन होती है।

अ (ए) केसिया (बबूल का गोंद) I. P., B. P.

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल)

Subfamily : Mimoseae (बब्बूलादि-उपकुल)

नाम—अकेसिई गम्माइ Acaciae Gummi (Acac. Gumm.)—लै०; अकेसिया (Acacia), इण्डियन अकेसिया (Indian Acacia) गम अरेबिक

(Gum Arabic), गम सेनेगल (Gum Senegal), गम अकेसिया (Gum Acacia)--अं०; बब्बूल निर्यास—सं०; बबूल या कीकर का गोंद—हिं०।

प्राप्ति-साधन--अकेसिया, शुष्क गोंदीय निर्यास (Dried gummy exudation) होता है, जो बबूल [अकेसिया अरेबिका Acacia arabica) (Lam.) willd; D. C.; अकेसिया सेनेगल Acacia senegal Willd.] तथा बबूल की कतिपय अन्य उपजातियों (Species) के तने (Stem) एवं शाखाओं (Branches) से संग्रहीत किया जाता है।

वक्तव्य—बबूल आयुर्वेदीय एवं यूनानी चिकित्सा पद्धति की एक प्रसिद्ध औषधि है। इसके प्रायः सभी अंगों (यथा छाल, पत्ती, फली, गोंद आदि) का व्यवहार चिकित्सा में बहुत किया जाता है। इनके अनेक प्रसिद्ध योग भी हैं। विस्तार के लिए देखें यूनानी द्रव्यगुणविज्ञान (लेखक श्री हकीम दलजीत सिंह जी) अथवा आयुर्वेदीय द्रव्यगुण के ग्रन्थ। एलोपैथी में प्रायः इसके गोंद का ही व्यवहार है।

उत्पत्ति-स्थान—अकेसिया अरेबिका के स्वयंजात वृक्ष प्रायः समस्त भारतवर्ष के जंगलों में पाये जाते हैं। जहाँ वर्षा अधिक होती है तथा नमी या आर्द्रता भी अधिक होती है, ऐसे जंगलों में इसके वृक्ष नहीं पाये जाते। गांवों के आसपास इसके लगाये हुए वृक्ष (प्रायः खेतों में भी) मिलते हैं। जलाने के लिए इसकी लकड़ी (Fuel wood) बहुत उत्तम समझी जाती है। एकेसिया सनेगा के वृक्ष अपेक्षाकृत छोटे होते हैं, और सिंध की पथरीली पहाड़ियों पर, दक्षिण-पूर्वी पंजाब एवं अरावली की पर्वत श्रेणियों पर बहुतायत से पाये जाते हैं।

वर्णन—(१) अकेशिया अरेबिका--का गोंद विभिन्न आकार प्रकार के अनियमित एवं टूटे हुए बड़े अश्रुवत टुकड़ों (Tears) के रूप होता है, जिनपर अनेक सूक्ष्म दरारें (Minute fissures) होती हैं, और सूखने पर यह भंगुर (Brittle) होता है। टुकड़े को तोड़ने पर टूटा हुआ तल (Fractured surface) चमकदार (Glossy) होता है, और भिन्न-भिन्न टुकड़ों में भिन्न-भिन्न रंग का या रखने पर कालन्तर से विभिन्न प्रकार के रंग दीखते (Iridescent) हैं। यह गंधहीन एवं स्वाद में गोंदीय या लबाबी (Mucilaginous) होता है।

(२) अकेशिया सनेगल—इसके गोलाकार (Rounded) या अंडाकार (Oval) तथा विभिन्न लम्बाई के अश्रुवत टुकड़े होते हैं, जो व्यास (Diameter) में ½ से ६ सेंटीमीटर तक होते हैं। यह प्रायः गंधहीन तथा हल्के पीले रंग (Yellowish tint or pale amber) तथा अपारदर्शक (Opaque) होते हैं। स्वाद में लबाबी होता है।

विलेयता—(१) गम अकेसिया अपने दूने वजन के बराबर जल में पूर्णतः घुल जाता है, जिससे गाढ़ा चिपचिपा (Viscous) एवं चिकना तथा लसदार (अंडे की सफेदी की भांति) विलयन बनता है। पर यह अल्कोहल (९५% में अविलेय होता है।(२) गम सनेगल तौल में बराबर जल की मात्रामें पूर्णतः घुलनशील है, जिससे चिपचिपा (Viscous) एवं पारभासी (Translucent) विलयन तैयार होता है। किन्तु गम अरेबिक की भांति यह विलयन लसेदार (Glairy) नहीं होता। जब इसमें और पानी मिला कर रख दिया जाय तो गम अकेसिया की भाँति नीचे तलछट (Gummy deposit) भी नहीं होता। गम अकेसिक की भाँति यह भी अल्कोहल (९५%) में नहीं घुलता।

रासायनिक संघटन—बबूल के गोंद में प्रधानतः अरेबिन (Arabin) तथा अरेबिक एसिड (Arabic acid) पाया जाता है, जो केल्सियम्, पोटासियम एवं मैगनीसियम् के लवण के रूप में पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त श्वेतसार पाचक किण्व (Ferments) भी पाये जाते हैं।

एकेसिई पल्विस Acaciāe Pulvis (Acac. Pulv.)–ले०; पाउडर्ड अकेसिया Powdered Acacia—अं०; बबूल के गोंद का चूर्ण—हिं०।

यह श्वेत वर्ण का चूर्ण होता है, जिसमें अतिसूक्ष्म कोणिक टुकड़े (Angular microscopic fragments) होते हैं। जल में भिगोने पर उक्त टुकड़े घुलकर विलीन हो जाते हैं।

असंयोज्य पदार्थ (Incompatibles)—फेरिक साल्ट्स, लेड सबएसिटेड, बोरेक्स, सल्फ्यूरिक एसिड तथा डिहाइड्रेटेड अल्कोहल्।

गुण-कर्म एवं प्रयोग।

अकेसिया का प्रधान उपयोग भैषज्य कल्पना अथवा फार्मेसी में किया जाता है। आभ्यन्तर प्रयोग के इमल्सन्स बनाने में यह बहुत प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग जल में न घुलने वाली औषधियों का निलम्बन (Suspension) बनाने में तथा अनेक टॅबलेट्स, पिल्स एवं मुख गुटिका (ट्रॉकिश Troches), मुखचक्रिका (Lozenges) के निर्माण में किया जाता है।

औषधीय रूप में इसका प्रयोग स्नेहन (Demulcent) के रूप में मुंह में निनावा होने पर अथवा श्वासनलिका में क्षोभक प्रभाव होने की अवस्था में किया जाता है। एतदर्थ गोंद का एक टुकड़ा मुंह में रखकर धीरे-धीरे चूसना चाहिए। इसके अतिरिक्त सोडियम् क्लोराइड के साथ इसका सिरागत इंजेक्शन अत्यधिक रक्तस्राव जन्य आत्ययिक अवस्था में किया जाता है। इससे रक्तराशि एवं रक्तभार का स्तर सहसा गिरने नहीं पाता जिसके परिणाम स्वरूप सम्भावी स्तब्धता (Shock) का निवारण होता है। किन्तु यदि सुविधा हो तो इसके बजाय उक्त अवस्था में रक्त का अन्तःक्षेप (Blood transfusion) अधिक उपयुक्त होता है।

(ऑफिशल योग)

१—म्युसिलेजो अकेसिई Mucilago Acaciāe (Mucil. Acac.) I. P., B. P.—ले०; म्युसिलेज ऑव गम अकेसिया Mucilage of Gum Acacia—अं०।

निर्माणविधि—अकेसिया ८ औंस (८०० ग्राम); क्लोरोफॉर्म वाटर १२ फ्लुइड औंस (६०० मि० लि०)। पहले गोंद को थोड़े से जल में मिलाकर बन्द पात्र में क्लोरोफॉर्म जल में मिलाकर रख दें। घुल जानेपर छान लें। जब इसका प्रयोग करना हो ताजा बनाना चाहिए। इसमें ४० प्रतिशत अकेसिया होता है।

२—पल्विस ट्रॅगाकान्थी कम्पोजिट्स Pulvis Tragacanthae Compositus (Pulv. Trag. Co.) I. P., B. P.—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव ट्रॅगाकान्थ Compound Powder of Tragacanth—अं०। इसमें २० प्रतिशत अकेसिया होता है। मात्रा (B. P. Dose)—१० से ६० ग्रेन (०·६ से ४ ग्राम) या ५ से ३० रत्ती।

३—सिरपस् अकेसिई Syrupus Acaciāe (Syr. Acac.) I. P.—ले०; सिरप ऑव अकेसिया Syrup of Acacia—अं०। मात्रा—६० से २४० मिनम् या बूंद (४ से १६ मि० लि०) या १ से ४ ड्राम।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ सोडियाइ क्लोराइडाइ एट अकेसिई Injectio Sodii Chloridi et Acaciāe—ले०; इन्जेक्शन ऑव सोडियम् क्लोराइड एण्ड अकेसिया Injection of Sodium Chloride and Acacia—अं० । इसमें ६ प्रतिशत अकेसिया होता है ।

ट्रैगाकान्था Tragacantha (Trag.), I. P., B. P.

(गोंद कतीरा)

Family : Leguminosāe (शिम्बी-कुल)

नाम—गर्मेज़ू Garmezu; चित्रल गम Chitral Gum; हॉग गम Hog Gum; गम ट्रैगाकान्थ Gum Tragacanth; अंजिरा—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—टॅगाकान्थ एक शुष्क गोंदीय निर्यास (Dried gummy exudation) होता है, जो निम्न वनस्पतियों से प्राप्त किया जाता है :—

(१) एस्ट्रॅगलस् स्ट्रोबिलिफेरस् Astragalus strobiliferus Royle. इससे जो टॅगाकान्थ प्राप्त होता है, उसे व्यवसाय में चित्रल गम Chitral Gum कहते हैं ।

(२) एस्ट्रॅगलस् गम्मिफर Astragalus gummifer Labill, तथा इसकी अन्य उपजातियाँ । इससे प्राप्त होने वाले टॅगाकान्थ को व्यवसाय में "पर्सियन टॅगाकान्थ Persian Tragacanth" कहते हैं। ब्रिटिश फॉर्माकोपिआ तथा इन्डियनफॉर्माकोपिआ में इसी का उल्लेख है ।

वक्तव्य—टॅगाकान्थ में मिलावट के लिए इससे मिलते जुलते अनेक अन्य गोंदों का व्यवहार होता है। उपर्युक्त वृक्षों से प्राप्त होने वाला टॅगाकान्थ एक दूसरे का स्थानापन्न हो सकते हैं। निम्न कोटि का ट्रैगाकान्थ व्यवसाय में "हॉग गम Hog Gum, हॉग टॅगाकान्थ Hog Tragacanth; या करामानिया गम Caramania Gum, के नाम से पुकारा जाता है। भारतवर्ष में स्टर्कुलिएसी-कुल का एक वृक्ष (स्टर्कुलिया युरेन्स) Sterculia Urens Royle) बहुतायत से पाया जाता है। इससे भी एक गोंद प्राप्त होता है, जिसे "स्टर्कुलिया गम Sterculia Gum, या इन्डियन ट्रैगाकान्थ Indian Tragacanth" कहते हैं। स्वरूपतः यह विदेशी ट्रॅगाकान्थ से मिलता-जुलता है। अतएव मिलावट के लिए इसका भी व्यवहार किया जाता है। इसका स्थानिक नाम कुल्ली का लासा या गोंद है ।

इतिहास—सावफरिस्तुस (थियोफ्रेस्टस) तथा दीसकूरीदूस (Dioscorides) को ट्रैगाकान्थ का ज्ञान भली-भांति था ।

उत्पत्ति-स्थान—एस्ट्रॅगलस गम्मिफर के वृक्ष फारस तथा उत्तरी सीरिया तथा टर्की में बहुतायत से पाये जाते हैं। एस्ट्रॅगलसस्ट्रोबिलि फेरस के वृक्ष पश्चिमी हिमालय में तथा उत्तरी कुर्रम में पर्याप्त होते हैं। चित्रल में (५००० फुट तक) यह बहुतायत से मिलता है। यहाँ गोंद का संग्रह काफी मात्रा में होता है। इसी कारण इसका एक नाम भी इस स्थान के नाम पर रख दिया गया है।

गोंद का संग्रह—टॅगाकान्थ के बहुशाखी गुल्म (Shrubs) होते हैं, जो बहुत कांटेदार होता है। इसकी शाखाओं पर चीरा लगा दिया जाता है, और उससे गोंद स्रावित होकर सूखता है। शुष्क होने पर इसका संग्रहकर लिया जाता है। प्रथम बार चीरा लगाने पर बिल्कुल सफेद रंग का गोंद निकलता है, परन्तु दोबारा चीरा देने पर यह गोंद पीताभ या पीले रंग का निकलता है।

वर्णन—ऑफिशल ट्रगाकान्थ पतले स्फीताकार टुकड़ों (Thin flattened flakes) के रूप में होता है, जो प्रायः २½ सेंटीमीटर लम्बे तथा १ सेंटीमीटर चौड़े होते हैं। बाहरी सतह पर अनेक केन्द्रापसारी उन्नत रेखायें (Concentric ridges) होती हैं, जो रुक-रुक कर गोंद के निकलने के कारण बन जाती हैं। रंग में ये टुकड़े सफेद या पीताभ-श्वेत तथा किंचित् पारभासी (Translucent) होते हैं। ट्रगाकान्थ प्रायः गंधहीन एवं स्वाद रहित होता है, तथा तोड़ने पर यह खट से टूट जाता (Fracture short) है। विलेयता—जल में भिंगोने पर यह अधिक तो नहीं घुलता, परन्तु जल के साथ फूल कर जिलेटिन की तरह हो जाता है।

रासायनिक-संगठन—ट्रॅगाकान्थ का जो भाग जल में विलेय होता है उसमें प्रधानतः पॉलीअरेबिनन-ट्राइगैलेक्टन-गेड्डिक एसिड (Polyarabinan-trigalactan-geddic acid) होता है। जो भाग जल में नहीं घुलता उसमें प्रधानतः बसोरिन [Bassorin ($C_{11}H_{20}O_{10}$) n] होता है। इस पर बेरियम् हाइड्रॉक्साइड की प्रतिक्रिया होने से यह २ समरूपिक घटकों (Isomers) में वियोजित हो जाता है, यथा (१) a-tragacanth-xylan-bassoric acid तथा (२) b-tragacanhan-xyla-bsssoric acid। इनका जलांशन (Hydrolysis) होने पर ट्रॅगाकान्थोज (Tragacanthose), जाइलोज (Xylose) तथा बसोरिक एसिड (Bassoric acid) उत्पन्न होते हैं। ट्गाकान्थ के जल-विलेय भाग में ट्रगाकान्थिन (Tragacanthin) नामक तत्त्व भी होता है। इन घटकों के अतिरिक्त ट्रगाकान्थ में स्टार्च भी पाया जाता है।

ट्रॅगाकान्थीन पाल्विस Tragacanthae Pulvis (Trag. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड ट्रॅगाकान्थ Powdered Tragacanth—अं०। ट्रॅगाकान्थ का चूर्ण हिं०।

वर्णन—यह श्वेतवर्ण का अति सूक्ष्म कणदार चूर्ण होता है। जल के सम्पर्क से ये कण घुल कर विलीन हो जाते हैं।

गुण एवं प्रयोग।

ट्रगाकान्थ का प्रधान उपयोग भैषज्य-कल्पना (Pharmacy) में किया जाता है। इसका मुख्य उपयोग मिश्रण (मिक्चर) में कणदार चूर्णों के निलम्बन (Suspension) के लिए किया जाता है। इमल्शन बनाने के लिए भी यह प्रयुक्त होता है। किन्तु इस कार्य के लिए बबूल का गोंद (गम अकेसिया) इसकी अपेक्षा श्रेष्ठतर होता है। दूसरे ट्रॅगाकान्थ फॉर्माकोपिआ के अनेक मुख-गुटिकाओं (Troches) के निर्माण के लिए आधार-द्रव्य के रूप में भी प्रयुक्त होता है। औषधि के लिए यह मार्दवकर एवं स्नेह (Demulcent) के रूप में ग्रसनिका शोथ (फैरिंजाइटिस Pharyngitis) में प्रयुक्त किया जाता है। इसके लिए गोंद का एक टुकड़ा मुख में रख कर चूसा जाता है। जिलेन्थम् (Unna's Gelanthum) के रूप में इसका प्रयोग अनेक त्वचा रोगों में स्थानिक क्रिया के लिए भी किया जाता है।

(ऑफिशल योग I, P., B. P. Preparations)

१—म्युसिलेजो ट्रॅगाकान्थी Mucilago Tragacanthae (Mucil. Trag.)—ले०; म्युसिलेज ऑव ट्रॅगाकान्थ Mucilage of Tragacanth—अं०। इसमें १¼ प्रतिशत ट्रॅगाकान्थ होता है।

२—पल्विस ट्रॅगाकान्थी कम्पोजिटस् Pulvis Tragacanthae Compositus (Pulv. Trag. Co.)—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव ट्रॅगाकान्थ Compound Powder of Tragacanth—अं०। इसमें ट्रॅगाकान्थ १५% होता है।

मात्रा (B. P. Dose)—१० से ६० ग्रेन (०·६ से ४ ग्राम)।

(नान् ऑफिशल योग)

१—लिनिमेंटम् एक्सिकेन्स Linimentum Exsiccans—लै० । पर्याय—बसोरिन पेस्ट Bassorin Paste । इसमें ट्रागाकान्थ ५ भाग, ग्लिसरिन २ भाग, अल्कोहल् (९०%) १० भागजल इतना मिलायें कि सब मिल कर १०० भाग हों । इसको त्वचा पर लगाने से शैत्य का अनुभव होता है । शीघ्र ही वह विलयन शुष्क हो जाता है । इसमें कोई भी औषधि मिलाकर लगाई जा सकती है ।

२—जिलेंथम् (Unna's Gelanthum) ।

एमाइलम् (स्टार्च : निशास्ता), I. P., B. P.

नाम—एमाइलम् Amylum (Amylum)—लै०; स्टार्च (Starch)—अं०; श्वेतसार—सं०; शेतसार—बं०; निशास्ता—उर्दू, हिं० ।

प्राप्ति-साधन—स्टार्च बहुशर्करेय (Polysaccharide) या पॉलिसकेराइड के दाने या ग्रेन्यूल्स होते हैं, जो (१) मक्का (Zea mays Linn. Family : Gramineae) के बीजों से; (२) चावल से (Oryzasativa L. Family Gramineae); (३) गेहूँ से (Triticum sativum L.) अथवा आलू (Solanum tubero sum Linn.) (Family : Solanaceae) से प्राप्त किए जाते हैं ।

वर्णन—स्टार्च सफेद रंग के बारीक चूर्ण के रूप में होता है, अथवा इसके कणाकार छोटे-बड़े दानेदार टुकड़े (Irregular angular masses) होते हैं, जिनको पीस कर आसानी से बारीक चूर्ण बनाया जा सकता है । यह प्रायः गंधहीन होता है । विलेयता—यह ठंडे जल तथा अल्कोहल् (९५%) में प्रायः अविलेय होता है ।

असंयोज्य पदार्थ—आयोडीन ।

गुण एवं प्रयोग ।

बाह्य—स्टार्च प्रायः अवधूलन चूर्णों डस्टिंग पाउडर्स (Dusting Powders) में पड़ता है । त्वचा पर लगाने से यह आर्द्रता का शोषण करता है । यथा रक्षात्मक आवरण बनाता (Protective and absorbent) है । अतः अनेक त्वग् रोगों (यथा आर्द्र विचर्चिका (Weeping eczema) आदि में इसका प्रयोग किया जाता है । सुगन्धित स्टार्च को बच्चों के शरीर पर त्वचा की रक्षा के लिये मलते हैं । हाथ-पैर में विदारिका रोग (या त्वचा फटने पर) ग्लिसेरिनम् एमिलाइ का लेप करने से लाभ होता है ।

आभ्यन्तर—आयोडीन द्वारा विषाक्त प्रभाव (Iodine poisoning) में स्टार्च अगद (Antidote) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है । वस्ति के रूप में प्रयुक्त होनेवाले अनेक चूर्णों एवं तैलों का निलम्बन बनाने के लिए म्युसिलेज ऑव स्टार्च (Mucilage of starch) (४० में १ के अनुपात से) प्रयुक्त होता है । बार्लीवाटर (Barley water) के रूप में स्टार्च स्नेहन (Demulcent) कार्य के लिए तथा बच्चों के पोषणार्थ दूध में मिलाकर दिया जाता है ।

(ऑफिशल योग)

१—ग्लिसेरिनम् एमिलाइ (Glycerinum Amyli Glycer. Amyli)—लै०; ग्लिसरिन ऑव स्टार्च Glycerine of Starch—अं० । इसमें ८½ प्रतिशत गेहूँ का निशास्ता या श्वेतसार होता है । वक्तव्य—जब प्रयोग करना हो इसको ताजा बनाना चाहिए ।

इसके अतिरिक्त स्टार्च 'पेस्टा जिंसाइ ऑक्साइडाइ कम्पोजिटस्' नामक योग में पड़ता है ।

प्रकरण ३

मलहर (मलहम) के आधार द्रव्य।

सेपो एनिमेलिस Sapo Animalis (Sap. Animal.) I. P., B. P. C. --ले०; कर्ड सोप Curd Soap--अं०। पर्याय--सोडियम् स्टियरेट Sodium stearate।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन--यह विशोधित घन जान्तव वसा (Purified solid animal fats) तथा सोडियम् हाइड्रॉक्साइड को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है। हल्का पीलापन लिए सफेद रंग का या खाकस्तरी-सफेद रंग का घन (Solid) या चूर्ण (Powder) होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। गरम करने पर खूब मुलायम हो जाता है तथा सूखने पर कड़ा होता है, जो आसानी से चूर्णित किया जा सकता (horny and pulverisable) है। विलेयता—ठंढे पानी में तो नाममात्र को घुलता (Sparingly soluble) है, किन्तु गरम पानी में पूर्णतः घुल जाता (Completely Soluble) है। अल्कोहल् (९०%) में भी प्रायः पूरा-पूरा घुलता है। यह रालीयद्रव्यों (Resinous substances) एवं उत्पत् तैलों की गोली बनाने के लिए उत्तम आधारद्रव्य (Pill-excipient) होता है। 'एक्स्ट्रॅक्टम् कोलोसिन्थिडिस कम्पोजिटम्' में भी पड़ता है।

सेपोड्युरस् Sapo Durus (Sap. Dur.) I. P., B. P. C.—ले०; हार्ड सोप (Hard Soap)—अं०।

पर्याय—केस्टाइल सोप (Castile Soap); ऑलिव ऑयल सोप (Olive oil Soap); सोडियम् ओलिएट (Sodium oleate)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह वानस्पतिक तेलों एवं उनसे प्राप्त मेदसाम्ल (Fatty acids) तथा सोडियम् हाइड्रॉक्साइड को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है। सुखाने पर यह काफी कड़ा एवं चूर्ण बनाने योग्य हो जाता है। हार्ड सोप पीताभ श्वेत या खाकस्तरीश्वेत (Greyish white) वर्ण के घनत्व (Solid) या चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—यह जल में घुलनशील होता है; अल्कोहल् (९०%) में भी प्रायः पूर्णतः घुल जाता है। गर्म अल्कोहल् में और भी क्षिप्रतापूर्वक घुलनशील (readily soluble) है। 'अंग्वएटम् जिंसाइ ओलिएटिस्' में हार्ड सोप भी पड़ता है।

सेपो मोलिस Sapo Mollis (Sap. Moll.) I. P., B. P.—ले०; सॉफ्ट सोप (Soft Soap)—अं०।

पर्याय—ग्रीन सोप (Green soap) पोटासियम् ओलिएट (Potassium oleate)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह उपयुक्त वानस्पतिक तेलों अथवा उनसे प्राप्त मेदसाम्लों तथा पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड को मिलाकर बनाया जाता है। इसमें कम से कम ४४% मेदसाम्ल (Fatty acids) होते हैं। मुलायम सोप पीताभ-श्वेत से लेकर हरे रंग का या भूरे रंग का चिकना (Unctuous) पदार्थ होता है, जो जल तथा अल्कोहल् (९०%) में घुल जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सोप एक स्वच्छताजनक (Detergent) पदार्थ है, त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से यह त्वचा को मुलायम करता है, तथा खुरण्ड (incrustations) एवं पपड़ी आदि को साफ करने में सहायक होता है। इसके लिए ईथर एवं सोप का योग बहुत उपयुक्त होता है। इस रूप में इसका व्यवहार त्वचा की खुरण्डयुक्त पुरानी बीमारियों में प्रचुरता से व्यवहार किया जाता है। त्वचा की मालिश की दवाओं या लिनिमेंट्स एवं मलहमों के लिए यह एक उत्तम आधार-द्रव्य (Basis) है। सोप लिनिमेंट साधारण प्रतिक्षोभक (Counter-irrritant) प्रभाव भी करता है। अतएव मोच (Sprain) एवं चोट-चपेट तथा आमवात की शोथ एवं शूल युक्त संधियों पर लगाने से गम्भीर सूजन का विलयन करता है। इसके अतिरिक्त तेज लिनिमेंट्स में मिलाने के लिए भी व्यवहृत होता है। आभ्यन्तरिक प्रयोग (५ से १५ ग्रेन की मात्रा में) से यह सारक क्रिया (Laxative) करता है। अतएव तेज जुलाबों में इसको मिलाया जाता है। जल में मिलाकर (२० भाग में १ भाग) एनिमा या वस्ति देने से मलाशय में संचित कड़े मल (impacted faeces) को आसानी से निकाल देता है। इसकी वत्ती (सपोजिटरी) बना कर गुदा में प्रविष्ट करने से भी यही क्रिया होती है। बच्चों के लिए इसका प्रचुरता से व्यवहार किया जाता है।

भैषज्यकल्पना (Pharmrcy) में सोप का प्रयोग अनेक गुटिका (पिल्स Pills), प्लास्टर (Plasters) के निर्माण में आधार-द्रव्य (Basis) के रूप होता है। इसके अतिरिक्त त्वचा पर स्थानिक प्रयोग के लिए व्यवहृत लोशन्स, मलहम एवं लिनिमेंट्स में भी यह पड़ता है।

(ऑफिशल योग)

१—लिनिमेंटम् सेपोनिस Linimentum Saponis (Lin. Sap.), I. P., B. P.—ले०; लिनिमेंट ऑव सोप Liniment of Soap—अं०। साफ्ट सोप ८० ग्राम; कम्फर ४० ग्राम; ऑयल ऑव रोजमरी १५ मि० लि० (सी० सी०), परिस्नुत जल १७० मि० लि०। अल्कोहल् (९०%) आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० तैयार औषधि के लिए। पहले साफ्ट सोप कम्फर (कपूर) तथा रोजमरी के तेल को ६०० मि० लि० अल्कोहल् में घोल लें। अब इसमें डिस्टिल्ड वाटर मिलायें। अन्त में अल्कोहल् की इतनी मात्रा मिलायें की तैयार औषधि १००० मि० लि० प्राप्त हो। ७ दिन तक इसे पड़ा रहने दें। फिर छान लें।

(नॉन्-ऑफिशल योग B. P. C. Preparations)

१—लाकर सेपोनिस ईथेरियस Liquor Saponis Aethereus (Liq. Sap. Aether.)—ले०; ईथेरियल सोल्यूशन ऑव सोप, ईथर सोप (Ether Soap)—अं०। ओलिइक एसिड (Oleic acid) ३½ फ्लुइड औंस, अल्कोहल् (९०%) १½ फ्लुइड औंस, लेवेंडर ऑयल १० बूंद, पोटा-

सियम् हाइड्रॉक्साइड एवं जल आवश्यकतानुसार, सालवेंट ईथर आवश्यकतानुसार १० फ्लुइड औंस तैयार औषधि के लिए। इसका उपयोग शस्त्रकर्म के पूर्व उस स्थान के विशोधन के लिए किया जाता है।

२--एनिमा सेपोनिस् Enema Saponis (Enem. Sap.)—ले०; एनिमा ऑव सोप या सोप एनिमा—अं०। साफ्ट सोप १ औंस, जल २० फ्लुइड औंस में मिलाकर वस्ति के लिए प्रयुक्त करें। ५% सोप होता है।

३—स्प्रिटस् सेपोनेटस् Spiritus Saponatus (Sp. Sap.)—ले०; स्प्रिट ऑव सोप, सोप स्प्रिट—अं०। साफ्ट सोप ६½ औंस, अल्कोहल् (९०%) १० फ्लुइड औंस तैयार दवा के लिए। सोप ६५% होता है।

पाराफिनम् ड्युरम् Paraffinum Durum (Paraff. Dur.), I. P., B. P.—ले०, हार्ड पाराफिन Hard Paraffin--अं०।

प्राप्ति-साधन—यह घन हाइड्रोकार्बन्स (Solid hydrocarbons) का मिश्रण होता है, जो पेट्रोलियम् तथा शेल ऑयल (Shale oil) से प्राप्त किया जाता है। स्वरूप—यह रंगहीन या श्वेत किन्तु गंधहीन एवं स्वादहीन पारभासी (Translucent) टुकड़े (Mass) के रूप में होता है, जो स्पर्श में किंचित् चिकना होता है। जलाने पर चमकदार ज्वाला के साथ जलता है। विलेयता—सॉलवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में यह सुविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् (९०%) तथा जल में नहीं घुलता (Insoluble)।

यह निम्न मलहर योगों में पड़ता है—(१) अंग्वण्टम् अल्कोहोलियम् लेनी; अंग्वण्टम् पाराफिनाइ तथा अंग्वण्टम् सिम्प्लेक्स।

पाराफिनम् मोली एल्बम् Paraffinum Molle Album (Paraff. Moll, Alb.) I. P., B. P.—ले०; ह्वाइट सॉफ्ट पाराफिन (White Soft Paraffin) पेट्रोलियम् जेली (Petroleum Jelly)--अं०; सफेद मृदु पाराफिन—हिं०। सफेद वैसेलिन।

प्राप्ति-साधन—यह अर्ध-घन (Semi-solid) हाइड्रोकार्बन्स का मिश्रण होता है, जो पेट्रोलियम् से प्राप्त करके विरञ्जित (Bleached : रंग उड़ा देना) कर लिया जाता है। स्वरूप—यह श्वेतवर्ण के रंगहीन एवं गंधहीन, पारभासी (Translucent) मृदु पिण्ड (Soft mass) के रूप में होता है। जो स्पर्श में साबुन की तरह चिकना होता है।

यह निम्न मलहर योगों में पड़ता है—(१)अंग्वण्टा अल्कोहोलियम् लेनी (Ung. Alcoh. Lan.); अंग्वण्टम् इमल्सिफिकन्स (Ung. emulsificans); अंग्वण्टम् ह्वाइड्रार्जिराइ (Ung. Hydrorg.); अंग्वण्टम् पाराफिनाई (Ung. Paraff.); अंग्वण्टम् सिम्प्लेक्स (Ung. Simp.) तथा अंग्वण्टम् जिंसाइ ओलिएटिस (Ung. Zinc-oleat.)।

पाराफिनम् मोली फ्लेवम् Paraffinum Molle Flavum (Paraff. Moll. Flav.), I. P., B. P.—ले०; यलो सॉफ्ट पाराफिन Yellow Soft Paraffin—अं०; पीतमृदु पाराफिन--हिं०। पीली वैसेलिन।

प्राप्ति-साधन--यह भी अर्ध-घन हाइड्रोकार्बन्स का मिश्रण होता है तथा पेट्रोलियम् से प्राप्त किया जाता है।

स्वरूप—इसका हल्के पीले से पीले रंग का पारभासी मृदुपिंड होता है, जो स्पर्श में साबुनवत् चिकना होता है। इसमें कोई गंध या स्वाद नहीं पाया जाता। विलेयता—श्वेत मृदु पाराफिन की भाँति।

यह निम्न मलहर योगों में पड़ता है:—(१) अंग्वण्टम् अल्कोहोलियम् लेनी (Ung. Alcohol. Lan.); अंग्वण्टम् डायथ्रेनोलिस (Ung. Diathranolis); अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराइ नाइट्रेटिस डायल्यूटम् (Ung. Hydrarg. Nit. Dil.); अंगवण्टम् पाराफिनाई (Ung. Paraff.); अंगवण्टम् सिम्प्लेक्स (Ung. Simp.)।

पाराफिनम् लिक्विडम् Paraffinum Liquidum (Paraff. Liq.), I.P., B. P.—ले०; लिक्विड पाराफिन (Liquid Paraffin) - अं०; लिक्वड पैराफिन–हिं०।

प्राप्ति-साधन—यह द्रव-हाइड्रोकार्बन्स का मिश्रण होता है, जो पेट्रोलियम् से प्राप्त किया जाता है। यह तेल की तरह एक द्रव होता है, जो पारदर्शक होता है तथा इसमें कोई रंग, गंध या स्वाद नहीं पाया जाता। विलेयता--सॉल्वेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में तो विलेय होता है, किन्तु जल तथा अल्कोहल् (९०%) में नहीं घुलता। मात्रा—½ से १ औंस या ८ से ३० मि० लि०।

यह अंग्वण्टा अल्कोहोलियम् लेनी (Ung. Alcoh. Lan.) तथा अंग्वण्टम् इमल्सिफिकेन्स (Ung. emulsificans) में पड़ता है।

पाराफिनम् लिक्विडम् लीवि Paraffinum Liquidum Leve (Paraff. Liq. Lev.) I. P., B. P. —ले०; लाइट लिक्विड पाराफिन Light Liquid Paraffin—अं०; लघु पाराफिन—सं०, हिं०।

यह द्रव के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल (९० प्रतिशत) में नहीं घुलता, किन्तु सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में घुलनशील होता है। स्थिर तैलों (Mixed oils) एवं उड़नशील तैलों में भी कुछ-कुछ घुल जाता (Miscible) है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मलहम बनाने के लिए पाराफिन एक उत्तम आधार द्रव्य है। अनेक त्वचा रोगों में, जिनमें त्वचा में खरता एवं रूक्षता उत्पन्न होती है, पाराफिन का प्रयोग त्वचा को मृदु बनाने के लिए किया जाता है।

मुखद्वारा सेवन किए जाने पर पाराफिन आंतों पर सारक (Laxative) कार्य करता है। और इस रूप में चिकित्सा में इसका व्यवहार बहुत किया जाता है। आदती कब्ज (Habitual Constipation) के रोगियों के लिए यह एक उत्तम औषधि है। एतदर्थ इसकी आधे से १ औंस मात्रा एक बार में ही दी जाती है इससे एक दस्त साफ हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह आंतों को मुलायम (Lubricant) भी करता है। अनेक गले एवं स्वरयन्त्र के रोगों में कोकेन, मेंथोल तथा एफेड्रीन आदि औषधियों को पहले पाराफिन

(Light liquid paraffin) में घोलकर, तब उक्त घोल का प्रयोग सीकर (स्प्रे Spray) के रूप में किया जाता है।

सावधानी—निरन्तर अधिक काल तक पाराफिन का मुखद्वारा सेवन नहीं करना चाहिए, क्योंकि इससे आहार का पाचन एवं शोषण समुचित रूप से न होने के कारण अनेक आवश्यक उपादानों (यथा विटामिन ए आदि) की शरीर में कमी हो सकती है।

(ऑफिशल योग)

१—इमल्सिओ पाराफिनाइ लिक्विडाइ Emulsio Paraffini Liquidi (Emuls. Paraff. Liq.) I, P., B. P.—ले०; इमल्सन ऑव लिक्विड पाराफिन Emulsicn of Liquid Paraffin—अं०; पैराफिन इमल्सन—हिं०।

निर्माण-विधि—लिक्विड पाराफिन ५०० मि० लि० (सी० सी०), बबूल के गोंद का चूर्ण (Acacia in powder) १२५ ग्राम, ट्रागाकान्थ का चूर्ण ५ ग्राम, ग्लिसरिन १२५ मि० लि०, सोडियम् बेंजोएट ५ ग्राम, वेनिलिन (Vanillin) ½ ग्राम, क्लोरोफॉर्म २½ मि० लि०, परिस्रुत जल १००० मिलिग्राम तैयार औषधि के लिए। इस प्रकार लिक्विड पाराफिन की मात्रा ५०% होती है। पहले एक खरल में लिक्विड पाराफिन क्लोरोफॉर्म, बबूल का गोंद (अकेसिया), ट्रागाकान्थ तथा वेनिलिन मिलाकर परस्पर घोंटे (Triturate)। जब क्रीम की तरह इमल्सन बन जाय तब उसमें, ५० मि० लि० में ग्लिसरिन तथा सोडियम् बेंजोएट को मिलाकर इस विलयन को मिला दें। अब इसमें इतना परिस्रुत जल मिलावें कि सब औषधि १००० मि० लि० तैयार हो जाय। मात्रा—८ से ३० मि० लि० (या ¼ से १ फ्लुइड औंस)।

२—अंग्वण्टम् पाराफिनाइ Unguentum Paraffini (Ung. Paraff.), I. P., B. P.—ले०; पाराफिन आयण्टमेंट Paraffin Ointment—अं०; पैराफिन का मलहम—हिं०। इसमें हार्ड पाराफिन ३ भाग, सफेद मोम (White beeswax) २ भाग, सेटॉस्टियरिल अल्कोहल् (Cetostearyl alcohaol) ५ श्वेत या पीत मृदु पाराफिन (White or yellow Soft Paraffin) ९० भाग होता है। वक्तव्य—जब सफेद रंग का मलहम बनाना हो तो श्वेत मृदु पाराफिन (White Soft Paraffin) और जब रंगीन मलहम बनाना हो तो पीत मृदु पाराफिन (Yellow Soft Paraffin) मिलाना चाहिए।

पाराफिन आयन्टमेंट निम्न ऑफिशल योगों में पड़ता है:—

(१) बोरिक एसिड आयन्टमेंट I. P., B. P.
(२) आयण्टमेंट ऑव स्माल माइरोबलॉन, I. P.

३—अंग्वण्टम् सिम्प्लेक्स Unguentum Simplex (Ung. Simp.), I. P., B. P.—ले०; सिम्पुल आयण्टमेंट Simple Ointment—अं०। ऊनवसा (Wool fat) ५, हार्ड पाराफिन ५, सफेद या पीत मृदु पाराफिन ८५।

एसिडम् ओलिकम् (ओलिक एसिड), I. P., B. P.

Acidum Oleicum (Acid. Oleic.)—ले०; Oleic Acid—अं०।
रासायनिक संकेत : $C_{17}H_{33}COOH_3$
पर्याय—हाइड्रोजन ओलिएट (Hydrogen Oleate)।

प्राप्ति-साधन—यह वसा (Fats) तथा स्थिर तैलों (Fixed oils) के जलांशन द्वारा (Hydrolysis) प्राप्त किया जाता है। स्वरूप—यह रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार का स्वाद एवं गंध पाया जाता है। खुला रहने पर गाढ़े रंग का हो जाता है। विलेयता—यह जल में तो अविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् (९०%) सालवेंट ईथर, क्लोरोफार्म तथा बेंजीन में अच्छी तरह घुल जाता है।

यह ओलिक एसिड निम्न योगों का उपादान है—(१) हाइड्रॉर्जिरम् ओलिएटम् (Hydrarg. Oleat.); (२) इन्जेक्शिओ ईथेनोलेमिनी ओलिएटिस (Inject. Aethanolamin Oleat.)।

ईथेलिस ओलिआस Aethylis Oleas (Aethyl. obas), I. P., B. P. —ले; एथिल ओलिए (Ethyl Oleate)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{20} H_{38} O_2$ ।

यह एक हल्के पीले रंग का तेल होता है, जो ओलिक एसिड का अल्कोहल् के साथ ईस्टरीकरण (Esterification) द्वारा प्राप्त होता है। इसमें एक तीव्र अरुचिकारक गंध एवं स्वाद होता है। यह जल में तो अविलेय होता है किन्तु वानस्पतिक तेलों में मिल जाता (Miscible) है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

ओलिक एसिड का प्रयोग भी विशेषतः मलहम बनाने के लिए आधार द्रव्य के रूप में किया जाता है। तैल, चर्बी आदि अन्य द्रव्यों की अपेक्षा यह त्वचा में अधिक मात्रा में प्रविष्ट होता है। ऐसे मलहम बनाने के लिए जिनमें प्रधान औषधि अल्पमात्रा में मिलानी हो, यह विशेष रूप से उपयोगी होता है। अतएव इसका उपयोग अल्कलायड्स एवं धात्वीय लवण (Metallic Salts) के मलहम बनाने के लिए किया जाता है। किन्तु इसका उपयोग आँखों में लगाने वाले मलहमों में नहीं करना चाहिए।

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर यह पित्तस्राव पर उत्तेजक प्रभाव करता है। अतएव प्रतिदिन सुबह खाली पेट पर इसकी ८ से १५ बूंद कैप्स्यूल में रखकर सेवन करने से यकृत शूल (Hepatic Colic) में उपकारी होता है एवं पित्ताश्मरी के विलयन में सहायक होता है।

एथिल-ओलिएट अनेक स्थिर तेलों की अपेक्षा कम गाढ़ा तथा चिपचिपा (Viscous) होता है, अतएव पेशीगत इन्जेक्शन अथवा त्वचाधः इन्जेक्शन (Subcutaneous injection) के लिए औषधियों के विलयन (सॉल्यूशन) या निलम्बन (Suspension) बनाने के लिए मूंगफली के तेल (Arachis oil) के स्थान में अधिक उपयुक्त समझा जाता है। इसमें बनाये हुए विलयन को इन्जेक्शन करने के पहिले गरमाने की जरूरत नहीं होती। यह निम्न इंजेक्शनों के बनाने के लिए प्रयुक्त होता है।

(१) इन्जेक्शन ऑव डी-ऑक्सीकार्टोन एसिटेट (Injection of deoxycortone acetate)

(२) इन्जेक्शन ऑव मेनॉफ्थोन (Menaphthone)

(३) इन्जेक्शन ऑव ओस्ट्रेडिओल मॉनोबेंजोएट

(४) इन्जेक्शन ऑव प्रोजेस्टेरॉन

(५) इन्जेक्शन ऑव टेस्टॉस्टेरॉन।

वसा (फैट्स Fats)

(नॉट्-ऑफिशल)

एडेप्स Adeps (शूकर-वसा), B. P. C.

Family : Suidāe

नाम—एडेप्स Adeps, एडेप्स प्रिपेरेटस् Adeps Praeparatus--ले०; लाड (Lard), प्रिपेयर्डलार्ड (Prepared Lard)--अं०; शूकर-वसा-सं०; सूअर की चर्बी--हिं० ।

प्राप्ति-साधन—यह सूअर (सूस स्क्रोफा Susscrofa L.) नामक जानवर की साफ की हुई अन्दर की चर्बी होती है। स्वरूप—यह हल्के पीले रंग की, चिमड़ी (Tenacious) तथा स्पर्श में चिकनी (Unctuous) होती है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है। विलेयता—यह जल में अविलेय (Insoluble), अल्कोहल् (९०%) में अंशतः विलेय, किन्तु सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा लाइट पेट्रोलियम् (Light Petroleum) में सुविलेय होता है।

रासायनिक संघटन--(१) ओलिईन (Olein) ६० प्रतिशत (२) स्टियरिन (Stearin) तथा (३) पामिटिन ।

लार्ड निम्न योगों में पड़ता है—(१) अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराई नाइट्रेटिस फोर्टे (Ung. Hydrarg. Nit. Fort.) तथा (२) अंग्वण्टम् फिनोलिस (Ung. Phenol.) ।

एडेप्स लेनी Adeps Lanae (Adeps Lan.), I. P. B. P. ले०; ऊल फैट (Wool Fat), एन्हाइड्रस लेनोलिन (Anhydrous lanolin)—अं०; ऊर्णा-वसा—सं०; ऊन की चर्बी—हिं० ।

प्राप्ति साधन एवं वर्णन—यह ऊन की साफ की हुई चर्बी होती है, जो भेड़ों के ऊन से प्राप्त किया जाता है। ऊन की चर्बी या ऊलफैट हल्के पीले रंग का, चिमड़ा (tenacious), तथा स्पर्श में चिकना (unctuous) होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है। गरम करने से ४०° तापक्रम पर पिघल जाती है। विलेयता—सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में सुविलेय (Freely soluble) होता है। अल्कोहल् (९५%) में मुश्किल से नाम मात्र को घुलता है और जल में तो अविलेय (Insoluble) ही होता है।

रासायनिक संघटन--मेदसाम्लों के ईस्टर्स (fatty acid esters); अल्कोहल्, मेदसाम्ल एवं हाइड्रोकार्बन्स ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

सूअर की चर्बी त्वचा पर लगाने से अच्छी तरह शोषित होती है, अतएव मलहम बनाने के लिए हो सकती है। किन्तु प्रकाश तथा हवा के प्रभाव से बिगड़ जाता (Rancid) है, जिससे इसमें दुर्गन्धि आने लगती है। इसमें बेंजोइन मिला देने से (बेंजोइनेटेड लार्ड) इस दोष का निराकरण हो जाता है। अल्कलायड् का मलहम बनाने के लिए इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। सूअर एवं ऊन दोनों की चर्बी त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से मार्दवकर (Emollient) प्रभाव करते हैं लेनोलिन त्वचा में अधिक तीव्रता पूर्वक प्रविष्ट होता है, और साथ ही क्षोभक भी नहीं होता, अतएव तेज दवाइयों का मलहम बनाने के लिए अधिक उपयुक्त होता है।

लेनोलिन पानी को काफी जज्ब करता है, अतएव इमल्शन (water-in-oil emulsions) बनाने के लिए बहुत उपयुक्त होता है। ऊन की चर्बी में लिक्विड पाराफिन मिला देने से इसका शोषण और भी सुगमता से होता है।

(एडेप्स या शूकर वसा के योग)

(नॉट-ऑफिशल)

१—एडेप्स बेंजोइनेटस् Adeps Benzoinatus (Adeps. Benz.), B. P. C.—ले०; बेंजोइनेटेड लार्ड (Benzoinated Lard)—अं०। लोबान (Siam Benzoin) का चूर्ण ८७½ ग्रेन, लार्ड १० औंस, चर्बी को पिघलाकर बेंजोइन मिला दें। ६५° तापक्रम पर १ घंटे तक दोनों को परस्पर हिलाते रहें। फिर छानकर रख लें। इसमें २% बेंजोइन होता है।

(एडेप्स लेनी या ऊनकी चर्बी के योग)

(ऑफिशल)

१—एडेप्स लेनी हाइड्रोसस Adeps Lanæ Hydrosus (Adeps Lan. Hydros.), B. P.—ले०, हाइड्रस ऊलफैट (Hydrous Wool fat), लेनोलिन Lanolin—अं०। ऊन की चर्बी ७० ग्राम, परिस्रुत जल (Distilled water) ३० मि० लि०। ऊन की चर्बी को पिघलाकर उसमें थोड़ा-थोड़ा करके परिस्रुत जल मिलावें और बराबर हिलाते रहें। ७०% ऊलफैट।

२—अंग्वएटम् सिम्प्लेक्स (Ung. Simplex) या सिम्पुल आयण्टमेंट में 'ऊलफैट' पड़ता है।

अल्कोहोलिआ लेनी Alcoholia Lanæ (Alcoh. Lan.), I. P., B. P.—ले०; ऊल अल्कोहल्स (Wool Alcohols)—अं०। पर्याय—हार्टोलन वैक्स (Hartolan Wax)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह भेड़ के ऊन की चर्बी से प्राप्त कोलेस्टरोल (Cholesterol) एवं अल्कोहल्स का मिश्रण होता है। इसमें कम से कम २८ प्रतिशत कोलेस्टेरोल होता है। ऊल अल्कोहल्स सुनहरा रंग लिए भूरे रंग का घन (Solid) होता है, जो ठंडा होने पर भुरभुरा या भंगुर (Brittle) होता है, किन्तु गरम करने पर नम्य (Plastic) हो जाता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है। तोड़ने पर मोम की तरह मुलायम एवं टूटा हुआ तल चमकदार (Fracture smooth and shiny)। विलेयता—जल में अविलेय (Insoluble); अल्कोहल् (९५%) में साधारण मात्रा में घुलनशील, किन्तु उबलते हुए डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् के २५ भाग में घुल जाता है। साल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा लघु पेट्रोलियम् (Light petroleum) में अच्छी तरह घुल जाता है।

अल्कोहल् सेटोस्टियरिलिकम् Alcohol Cetostearylicum (Alcoh. Cetostearyl.) I. P., B. P.—ले०; सेटोस्टियरिल अल्कोहल् Cetostearyl Alcohol—अं०।

वर्णन—इसके सफेद या क्रीम रंग के छोटे-छोटे चिकने पिण्डक (Unctuous mass), या सफेद पपड़ीदार हल्के टुकड़े (Flakes) या दाने होते हैं। गर्म करने पर यह स्वच्छ या हल्के पीले रंग के द्रव में परिणित हो जाता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है। विलेयता—

यह जल में नहीं घुलता, किन्तु सॉलवेंट ईथर में अच्छी तरह घुल जाता है, और अल्कोहल् (९५%) में अपेक्षाकृत कम घुलता है।

यह निम्न योगों में पड़ता है:—

(१) इमल्सिफाइंग वैक्स; (२) पाराफिन आयण्टमेंट; (३) सिम्पुल आयण्टमेंट।

सोडियाइ एट लॉरिलिस सल्फास Sodii et Laurylis Sulphas (Sod. et Lauryl. Sulph.) I. P., B. P.—ले०; सोडियम् लॉरिल सल्फेट Sodium Lauryl Sulphate—अं०।

यह हल्के पीले रंग अथवा सफेद चूर्ण या मणिभ के रूप में होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है। १५·५° तापक्रम पर १० भाग जल में विलेय होता है, जिससे धुँधले रंग का (Opalescent) विलयन प्राप्त होती है। अल्कोहल् (९०%) में अंशतः विलेय होता है।

यह सेरा इमल्सिफिकेन्स में पड़ता है।

प्रयोग।

ऊल अल्कोहल्स—ऊलफैट (ऊन की चर्बी) की भाँति ऊल अल्कोहल्स भी मार्दवकर (Emollient) तथा त्वचा-रक्षक (Protective) कार्य करता है। यह वाशेबुल आयण्टमेंट (Washable Ointment) का उत्तम आधार-द्रव्य (Base) होता है। चर्बी में घुलने वाले द्रव्यों यथा मेन्थॉल एवं कर्पूर (कॅम्फर) आदि का मलहम बनाने के लिए उत्तम होता है।

सेटोस्टिरिल अल्कोहल्—इससे अच्छा ऑयल-इन-वाटर इमल्सन बनता है। अतएव जल में घुलने वाले द्रव्यों का मलहम बनाने के लिए यह बहुत उपयुक्त होता है। इसका प्रधान उपयोग सोडियम् लॉरिल सल्फेट के साथ मिला कर इमल्सिफाइंग वैक्स बनाने के लिए किया जाता है। इसके साथ चेहरे पर लगानेवाले क्रीम (Cosmetic cream) आदि बनाए जाते हैं।

सोडियम् लॉरिल सल्फेट—यह त्वचा पर लगाने से पूतिजनक (Detergent) होता है। इसके विलयन का उपयोग शल्यकर्म (Surgery) में स्वच्छताजनन के लिए किया जाता है। सेटोस्टिरिल अल्कोहल् के साथ मिलाकर वाशेबुल आयण्टमेंट तथा सौन्दर्यजनक क्रीम (Cosmetic snow or Creams) बनाने के काम में प्रयुक्त होता है।

(ऊल अल्कोहल्स के ऑफिशल योग)

१—अंग्वण्टम् अल्कोहोलिकम् लेनी Unguentum Alcoholicum Lanae (Ung. Alcoh. Lan.) I. P., B. P.—ले०; आयण्टमेंट ऑव ऊल अल्कोहल्स—अं०। पर्याय—एन्हाइड्रस यूसेरिन (Anhydrous Eucerin)। ऊल अल्कोहल्स ६० ग्राम, हार्डपाराफिन २४० ग्राम, सफेद या पीला वैसेलिन (white or Yellow Soft parffian) १०० ग्राम, लिक्विड पाराफिन ६०० ग्राम। इसका उपयोग अंग्वण्टम् एक्वोजम् या हाइड्रस आयण्टमेंट के निर्माण में किया जाता है।

२—अंग्वण्टम् एक्वोजम् Unguentum Aquosum (Ung. Aquos.) I. P., B. P.—ले०; हाइड्रस आयण्टमेंट (Hydrous Ointment)—अं०। पर्याय—हाइड्रस यूसेरिन। आयण्टमेंट ऑव ऊल अल्कोहल् तथा परिस्रुतजल बराबर-बराबर मात्रा में मिला कर बनाया जाता है।

सेवम् प्रिपेरेटम् (भेड़ की चरबी) I. P.

Family : Bovidæ.

नाम—सेवम् प्रिपेरेटम् Sevum Preparatum (Sev. Preparat.)—ले०; प्रिपेयर्ड सुएट Prepared Suet—अं०; भेड़ की चरबी—हिं० ।

यह ओविस एरीज़ (Ovis aries) अर्थात् भेड़ के शरीर के अन्दर की साफ की हुई चरबी होती है। इसमें (१) ओलीईन Olein (३०%) तथा (२) स्टियरिन एवं (३) पामिटिन होता है। यह शूकरवसा (Lard) का उत्तम प्रतिनिधि द्रव्य है। हवा में देरतक खुला रहने से बिड़ग (Rancid) जाता है। और बिगड़ने पर प्रयोग के योग्य नहीं होता।

सेराफ्लेवा (पीला मोम) B. P. C.

Family : Apidæ.

नाम—सेरा फ्लेवा Cera Flava (Cera. Flav.)—ले०; यलो बीज़-वैक्स Yellow beeswax—अं०; पीत मधूच्छिष्ट—सं०; पीला मोम—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—यह एपिस मेलिफिका (Apis mellifica, Linn. Family : Apidae) नामक मधुमक्खी अथवा एपिस जाति की अन्य मक्खियों के छत्तों (Honey-Comb) से प्राप्त किया जाता है। छत्तों से शहद निचोड़ लेने के बाद, उनको गर्म पानी में पिघलाया जाता है। पूर्णतः पिघल जाने के बाद इसको ठंढा होने के लिए छोड़ दिया जाता है। परिणामतः मोम (Wax) घन पिण्ड के रूप में जल के ऊपर तैरता हुआ प्राप्त होता है। मधु के छत्ते से मधु के निकल जाने पर अवशिष्ट भाग ही मोम के रूप में प्राप्त होता है। अतएव संस्कृत में इसका नाम 'मधूच्छिष्ट' (अर्थात् मधु के बाद बचा हुआ अंश) रखा गया है। मोम वस्तुतः मधुमक्खी के शरीर से उत्सर्गित होकर छत्ते में जमा होता है।

उत्पत्ति-स्थान—पूर्वी-पश्चिमी अफरीका, चिल्ली, मोरक्को, भारतवर्ष, जमेका द्वीप, केलिफोर्निया, फ्रांस तथा इटली ।

वर्णन—यह पीताभ-भूरे रंग का घन द्रव्य होता है, जो जल में अविलेय, अल्कोहल् (९०%) में अंशतः विलेय तथा सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म एवं स्थिर व उत्पत् तैलों में अपेक्षाकृत अधिक विलेय होता है। इसमें मधु जैसी किन्तु हल्की गंध आती है। ठंढा होने पर कुछ कुछ भंगुर (Brittle) होता है किन्तु गरमाने पर लचीला (Plastic) हो जाता है।

रासायनिक संघटन—७२% मिरिसिल पामिटेट (Myricyl Palmitate) तथा १५% सेरोटिक एसिड (Cerotic acid) ।

सेरा अल्बा (सफेद मोम), I. P., B. P.

नाम—सेरा अल्बा Cera Alba (Cera Alb.)—ले०; व्हाइट बीज़वैक्स White beeswax—अं०; श्वेत या विरञ्जित मधूच्छिष्ट—सं०; सफेद मोम—हिं० ।

सफेद मोम, पीले मोम को ही विरञ्जित (Bleached) करके प्राप्त किया जाता है। यह पीताभ-श्वेत रंग के पारभासी (Translucent) घन के रूप में होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है।

वक्तव्य—उक्त दोनों प्रकार के मोम का उल्लेख इन्डियन फॉर्माकोपिअल लिस्ट (I. P. L.) में भी है।

सेरा इमल्सिफिकेन्स Cera Emulsificans (Cera Emulsif.) I. P.,—ले०; इमल्सिफाइंग वैक्स Emulsifying wax—अं०।

इसमें सेटोस्टियरिल अल्कोहल् ९० ग्राम, सोडियम् लॉरिल सल्फेट १० ग्राम तथा परिस्रुत जल ४ मिलिमिटर होता है। यह सफेद या हल्के पीले रंग का मोम-सम घन (Waxy solid) होता है, जो गरम करने पर नम्य या लचीला (Plastic) हो जाता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है। जल में यह नहीं घुलता अपितु इमल्सन बनता है। अल्कोहल् में अंशतः विलेय होता है। अनेक योगों के निर्माण में इसका उपयोग किया जाता है।

लैनेट वैक्स Lanette wax Sx. (नॉट ऑफिशल) यह ९० भाग स्टियरिल एवं सेटिल अल्कोहल्स तथा १० भाग उक्त अल्कोहल्स के सल्फेट एवं फॉस्फेट का मिश्रण होता है। जल में तैल (Oil in water) प्रकार के इमल्सन-निर्माण में इसका बहुत उपयोग किया जाता है।

गुण एवं प्रयोग—मोम का उपयोग भैषज्य कल्पना में विभिन्न औषधीय प्लास्टर्स एवं आयण्टमेंट्स के निर्माण में किया जाता है। 'इन्जेक्शिओ पेनिसिलिनाइ ओलियोजा' में भी मोम मिलाया जाता है। इससे पेनिसिलिन का शोषण धीरे धीरे होता है, जिससे इसका प्रभाव भी देर तक रहता है। मोम में बराबर मात्रा में हार्ड पाराफिन तथा लकड़ी का बुरादा मिलाकर (Columbia wax) इसका उपयोग रेडियम् की सुइयाँ ढालने के लिए सांचा (Moulds) बनाने के काम में लाया जाता है।

ओलियम् थिओब्रोमेटिस् (I. P., B. P.)

Oleum Theobromatis (Ol. Theobrom.)

(कोकोबटर)

Family : Sterculiaceae (पिशाचकार्पास-कुल)

पर्याय—थियोब्रोमा ऑयल Theobroma Oil; कोकोआ बटर Cocoa Butter; कोकाओ बटर Cocao Butter—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह एक घन-वसा (जमने वाला तेल) होता है जो थियोब्रोमा कोकाओ Theobroma cocao Linn. नामक वृक्ष के भुने हुए बीजों (Roasted seeds) के चूर्ण से प्रपीड़न द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वक्तव्य—उक्त वनस्पति का जातीय नाम (Generic name) व्युत्पन्न है यूनानी से जो २ शब्दों से बना है, यथा 'थियोस' जिसका अर्थ होता है 'खुदा'। दूसरा शब्द है 'ब्रोमा' जिसका अर्थ होता है "ग़िज़ा या आहार"। पूरे शब्द का अर्थ हुआ 'ग़िज़ाए खुदा या परमेश्वर का आहार।' चूंकि लोग इसको अच्छे आहार के रूप में देवताओं को चढ़ाते थे, अतएव इसका ऐसा नामकरण हो गया।

उत्पत्ति-स्थान—यह अमेरिका का आदिवासी पौधा है, किन्तु अब लंका, जावा आदि द्वीपों तथा अन्यत्र भी इसकी खेती की जाती है। इसके ३०-४० फुट ऊँचे सुन्दर वृक्ष होते हैं।

फल अंडाकार जिसमें पीलापन लिए किंचित खट्टा गूदा होता है। इसी गूदे में बादामी शक्ल के ३४ बीज होते हैं।

वर्णन। तैल (Cacao Butter)—यह पीताभ-श्वेत रंग का जमा हुआ वसा (Solid Fat) होता है, जिसमें काकाओं की ही भाँति हल्की एवं रुचिकारक गंध होती है। स्वाद विशिष्ट प्रकार का। यह कुछ-कुछ भंगुर (Brittle) होता है, किन्तु २५° तापक्रम पर मुलायम हो जाता है। मनुष्य शरीर तापक्रम से भी कम तापक्रम पर यह पिघल जाता है। विलेयता—अल्कोहल (९०%) में तो थोड़ा-थोड़ा ही घुलता है, किन्तु उबलते हुए डीहाइड्रेटेड अल्कोहल (Dehydrated alcohol) मॉलवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा लाइटपेट्रोलियम् में सुविलेय (Freely Soluble) होता है।

प्रयोग।

चूंकि कोकोबटर शरीर तापक्रम से भी कम तापक्रम पर पिघल जाता है, अतएव सपॉजिटरी (Suppositories) अर्थात् गुदवर्ती, बूजीज (Bougies) एवं पेसरीज (Pessaries) बनाने के लिए यह एक उत्तम आधार द्रव्य (Vehicle) होता है।

ओलियम् वेजिटेबिलम् हाइड्रोजिनेटम् (I. P)

Oleum Vegetabilum Hydrogenatum (Ol. Vegetab. Hydrogenat.)—ले०।

नाम—वेजिटेबिल ऑयल Vegetable oil—अं०; वनस्पति घी—हिं।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह वानस्पतिक तेल से बनाया जाता है। एतदर्थ मूंगफली का तेल अथवा बिनौले का तेल (Cotton-Seed oil) प्रयुक्त होता है। जो अधिक दानेदार होता है, इसका व्यवहार बनस्पती घी के रूप में तथा पतला प्रकार का प्रयोग भैषज्य कल्पना (Pharmaceutical purposes) के लिए किया जाता है। यह प्रायः सफेद रंग का अर्धघन या मृदु-घन (Soft Solid) होता है, जो ३०° से ४०° तक के बीच में उष्णता पहुँचने पर पिघलकर रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग के पारभासी द्रव Translucent liquid के रूप में परिणित हो जाता है। इसमें कोई गंध नहीं होती या गिरियोंकी सी हल्की गंध (Faintly nutlike) हो सकती है। स्वाद मीठे तेल की भांति (Bland)।

प्रयोग।

वानस्पती घी या हाइड्रोजिनेट वेजिटेबिल ऑयल का प्रयोग आहार के रूप में किया जाता है। चिकित्सा में इसका उपयोग मलहम बनाने के लिए आधार द्रव्य (Ointment base) के रूप में किया जाता है।

ओलियम् गार्सिनिई (I. P.)

Oleum Garcinae (Ol. Garcin.)—ले०

(कोंकम बटर)

Family : Guttiferae (नागकेशर-कुल)

पर्याय—गोआ बटर Goa Butter; कोकम बटर Kokam Butter; कोकम फैट Kokam Fat या मैंगॉस्टीन ऑयल Mangosteen Oil—अं०।

प्राप्ति-साधन—कोकम बटर भी एक घन वानस्पति तैल होता है, जो दक्षिण भारत के कोंकण एवं मलाबार प्रान्त के एक प्रसिद्ध वृक्ष कोकम या गार्सिनिआ इन्डिका Garcinia indica Chois के बीजों के पीड़न (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह मोम जैसा जम जाता है। इसे कोकम का घी या तेल कहते हैं। यह सफेद या हल्का खाकस्तरी सफेद रंग का वसा (Fat) होता है, जिसमें बहुत हल्की-सी गंध या स्वाद होता है।

उपयोग—पाश्चात्य वैधक में इसका भी उपयोग मलहम बनाने के लिए आधार द्रव्य (Base) के रूप में किया जाता है।

एसिडम् स्टियरिकम् (I. P)

Acidum Stearicum (Acid Stearic)—ले०

पर्याय—स्टियरिक एसिड Stearic acid—अं०।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से इसमें $C_{17}H_{35}COOH$ तथा $C_{15}H_{31}COOH$ होता है। यह सफेद या हल्के पीले रंग के, कुछ-कुछ चमकदार क्रिस्टलाइन चूर्ण या घन (Crystalline Solid) के रूप में होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध तथा स्वाद (Slight tallow-like) होता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble), किन्तु अल्कोहल् (९०%) में विलेय (घुलनशील होता है या घुल जाता है) और क्लोरोफॉर्म तथा ईथर में सुविलेय (Freely Soluble) होता है।

प्रयोग—स्टियरिक एसिड का उपयोग भैषज्य-कल्पना में टॅबलेट् बनाने में तथा पिल्स या गोलियों पर आवरण (Enteric Coating) बनाने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त वैनिशिंग क्रीम (Vanishing Cream) के लिए यह एक उत्तम आधारद्रव्य होता है।

ओलियम् रिसिनाइ सल्फेटम् Oleum Ricini Sulphatum (Ol. Ricin. Sulphat.), B. P. C.—ले०; सल्फेटेड कस्टर ऑयल (Sulphated Castor Oil)—अं०।

पर्याय—सल्फोनेटेड कॅस्टर ऑयल (Sulphonated Castor Oil)।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—यह कॅस्टर-आयल में सल्फ्यूरिक एसिड आदि मिलाकर रासायनिक पद्धति द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ४८·५% चर्बी का हिस्सा (Fatty matter) होता है। इसी प्रकार का एक व्यावसायिक योग 'Turkey red oil' के नाम से मिलता है। किन्तु इसमें वसा का भाग अपेक्षाकृत अधिक (५० से ७५% तक) होता है। विलेयता—यह जल में मिल जाता (Miscible) है।

गुण एवं प्रयोग—त्वचा पर लगाने से सल्फेटेड कॅस्टर ऑयल इसको मुलायम तथा साफ करता है। शोथयुक्त श्लैष्मिक कला पर लगाने से ठंढा होता है। इमल्सन बनाने में उपयोगी होने के कारण इसको जल में तैलीय मलहम या क्रीम (Oil-in-water type creams and emulsions) बनाने के लिए व्यवहृत होता है। उड़नशील तेल एवं जल में अविलेय जीवाणु-नाशक द्रव्यों को जल में मिलाने के लिए सल्फेटेड कस्टर ऑयल मिलाया जाता है। स्थानिक प्रयोग के लिए आयोडीन, फिनोल, रिसार्सिनोल एवं नेफ्थालीन आदि को सल्फेटेड कस्टर ऑयल में मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है।

ट्राइ-इथेनोलेमिना Triethanolamina (Triethanolamin.) B. P. C.—ले०; ट्राइ-इथेनोलेमीन (Tri-ethanolamine)—अं० ।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह tri (3-hydroxyethyl) amine, ($CH_2OH.\ CH_2$) $_3$ N, तथा di (2-hydroxyethyl) amine तथा 2-hydroxyethylamine आदि का मिश्रण होता है। ट्राइ-इथेनोलेमीन स्वच्छ एवं रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। जल तथा अल्कोहल् में मिल जाता (Miscible) है।

मॉनोसेटिल ईथर (Monocetyl Ether)। पर्याय—सेटोमेक्रोगोल १००० (Cetomacrogal 1000) B. P. C.; पॉलीएथिलीनग्लाइकोल १००० (Polyethylene glycol 1000)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह सेटिल या सेटोस्टियरिल अल्कोहल् तथा एथिलीन ऑक्साइड की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। सेटोमेक्रोगोल १००० मलाई के रंग के मोम की तरह चिकना पिण्ड (Waxy unctuous mass) होता है, जो पिघलाने पर भूरापन लिए पीले रंग के स्वच्छ द्रव के रूप में उपलब्ध होता है। स्वाद में साबुन की तरह (Soapy) तथा गंध में उग्र एवं चर्बी की तरह (Acrid and fatty)। विलेयता—जल, अल्कोहल तथा एसिटोन में घुल जाता है।

मानोस्टियरिन इमल्सिफिकेन्स Monostearin emulsificans (Monostear. Emulsif.), B. P. C.—ले०; सेल्फ-इमल्सिफाइंग मानोस्टियरिन (Self emulsifying Monostearin)—अं०। पर्याय—Glyceryl Monostearate self-Emulsifying।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह प्रधानतः mono-di, and tri-glyceryl esters of stearic and palmitic acids का मिश्रण होता है। सफेद या मलाई के रंग का जमा हुआ वसा (Fat) होता है, जो देखने में मोम जैसा लगता है। गंध एवं स्वाद में वसा की तरह (Fatty)। गर्मजल में वितरित होकर फैल जाता (Dispersible) है। गरम डिहाइड्रेटेड अल्कोहल्, गरम बेंजीन, गरम लिक्विड पाराफिन एवं गरम मीठे तेल (Vegetable oils) में घुल जाता है।

असंयोज्य पदार्थ—इसमें सोप (soap) का अंश होने से यह एसिड्स अयनवियोज्य लवण (Ionisable salts) तथा जिंक ऑक्साइड एवं गुरुधातुओं के आक्साइड्स (Oxides of heavy metal) के साथ असंयोज्य होता है।

प्रयोग—ट्राइ-इथेनोलेमीन—तैल-में-जलीय इमल्शन (emulsions of the oil-in-water type) बनाने के लिए यह एक उपयुक्त इमल्सिफाइंग एजेंट है। इसका इमल्शन बहुत टिकाऊ (Stable) होता है। इसको स्टियरिक एसिड एवं ओलिइक एसिड तथा अन्य मेदसाम्लों (Fatty acids) के साथ मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। इमल्शन बनाते समय बहुत जोर से हिलाना नहीं चाहिए, अन्यथा बहुत झाग उठता है। स्थिर तेलों का इमल्शन बनाने के लिए, तेल का २ से ४% मात्रा ट्राइ-इथेनोलेमीन लेना चाहिए। मेदसाम्ल मिलाने के लिए ट्राइ-इथेनोलेमीन की २ से ५ गुनी तक मात्रा ले सकते हैं। लिक्विड पाराफिन के लिए ५% (w/w) तक इथेनोलेमीन लिया जाता है।

सेटोमेक्रोगोल १०००--यह भी एक इमल्सिफाइंग एजेंट है। इसमें इमल्सन उद्जन-अयन संकेन्द्रण की भिन्नता होने पर भी विकृत नहीं होता। (Stable over a wide phtrange)। उड़नशील तेलों का जल में विलयन बनाने के लिए भी सेटोमेक्रोगोल का उपयोग किया जाता है। एतदर्थ उत्तत् तैल का दस गुना सेटोमेक्रोगोल लेना चाहिए। सेटोमेक्रोगोल इमल्सिफाइंग वैक्स (Cetomacrogol Emulsifying wax) का प्रयोग बाह्य प्रयोग के इमल्सन्स के निर्माण के लिए किया जाता है।

सेल्फ-इमल्सिफाइंग मानोस्टियरिन—इसका उपयोग तैल, वसा एवं वैक्सघटित पदार्थों का इमल्सन बनाने के लिए किया जाता है। भैषज्यकल्पना में क्रीम बनाने के लिए भी उपयुक्त होता है। इसका इमल्सन गर्मी से बिगड़ता नहीं अर्थात् तापसाही (Thermostable) होता है। हल्के इमल्सन के लिए ०.५% तथा क्रीम एवं मलहम के लिए ५ से २०% मात्रा प्रयुक्त की जाती है। तैयार इमल्सन को स्थायी बनाने के लिए भी इसको ०.५% मात्रा में मिलाया जाता है। औषधि निर्माण में विभिन्न पाउडस, ग्रेन्यूल्स एवं टैबलेट्स पर इसके सोल्यूशन का आवरण किया जाता है। इससे दवा नहीं। इसके लिए उपयुक्त उड़नशील विलायक द्रव्य (Suitable volatile Solvent) में इसका विलयन बनाकर उसको छिड़कते हैं।

(नॉट्-ऑफिशल)

१--सेरा सेटोमेक्रोगोलिस् इमल्सिफिकेन्स Cera Cetomacrogolis Emulsificans (Cera Cetomacrogol·Emulsif.), B. P. C.—ले०; Cetomacrogol Emulsifying wax; Non-ionic Emulsifying wax—अं०। सेटोमेक्रोगोल (१०००), २ औंस ८७ ग्रेन, सेटोस्टियरिल अल्कोहल् १२ औंस ३५० ग्रेन।

प्रकरण ४

ओलियम् टेरिबिन्थिनी (I. P., B. P.)

Oleum Terebinthinæ (Ol. Terebinth.)—ले०।

(तारपीन का तेल)

Family : Pinaceæ (देवदार्वादि-कुल)

पर्याय—ओलियम् टेरिबिन्थिनी रेक्टिफिकेटम् Oleum Terebinthinæ Rectificatum—ले०; ऑयल ऑव टर्पेन्टीन Oil of Turpentine; रेक्टिफाइड ऑयल ऑव टर्पेन्टीन—अं०; गंधाबिरोजे का तेल, तारपीन का तेल—हिं०; रोग़न नारज़द (तारपीन) —फा०; तार्पिन—बं०।

प्राप्ति-साधन—चीड़ (Pinus) की निम्न प्रजातिओं अथवा इनके अलावा अन्य कतिपय प्रजातिओं (Species) के तने पर चीरा लगाने से एक सुगंधित तैल-रालीय निर्यास (Oleo-resin) प्राप्त होता है, जिसे अंगरेजी में टर्पेन्टीन (Turpentine) तथा संस्कृत में श्रीवास, सरल द्रव एवं हिन्दी में तथा भारतीय बाजारों में गंधा बिरोजा नाम से पुकारते हैं। इसी से पुनः पुनः परिस्रावण (Distillation) द्वारा रेक्टिफाइड टर्पेन्टीन ऑयल प्राप्त करते हैं। सामान्यतया तारपीन का तेल चीड़ की निम्न प्रजातिओं से प्राप्त किया जाता है:—

(१) पाइनस लॉगिफोलिआ Pinus longifolia Royle.

(२) पाइनस खसिया Pinus khasiya Royle.

(३) पाइनस एक्ससेल्सा P. excelsa Wall.

वक्तव्य—आयुर्वेद एवं यूनानी में सरल या चीड़ (P. longifolia Royle) की (१) लकड़ी या बुरादा तथा इसके तने से पाये जाने वाले (२) तैलीय-राल (Oleo-resin of the Pine) इससे प्राप्त होने वाले (३) तारपीन के तेल तीनों का ही व्यवहार चिकित्सा में होता है।

उत्पत्ति-स्थान—हिमालय के ढालुओं पर २,००० से ६,००० फुट की ऊंचाई पर, अफगानिस्तान से लेकर पूर्व में भूटान, आसाम, खसिया, एवं ब्रह्मा तक इसके वृक्ष पाये जाते हैं।

वर्णन—तारपीन का विशुद्ध तेल (Rectified Turpentine oil) एक रंगहीन स्वच्छ द्रव के रूप में होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगन्ध पाई जाती है; स्वाद में तीक्ष्ण (Pungent) एवं तिक्त होती है। विलेयता—अल्कोहल्, सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा ग्लेसियल एसेटिक एसिड में घुल जाता है। मात्रा—३ से १० बूंद (०·२ से ०·६ मि० लि०); कृमिघ्न मात्रा (Anthelmintic Dose)—२ ड्राम से ४ ड्राम (८ से १६ मि०)।

टर्पिनिओल Terpineol (Terpineol) I. P., B. P.—ल०; टर्पिनिओल Terpineol--अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{18}O$.

वर्णन—यह रंगहीन तथा किंचित् गाढ़ा एवं चिपचिपा द्रव होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की गंध एवं स्वाद पाया जाता है । विलेयता--जल में तो बहुत थोड़ी मात्रा में घुलता (Slightly Soluble) है, किन्तु अल्कोहल् (७०%) में २ भाग में १ भाग के अनुपात से तथा सॉल्वेंट ईथर में विलेय (Soluble) होता है ।

टर्पिनी हाइड्रास Terpini Hydras (Terpin Hydr.), I. P.—ले०; टर्पिन हाइड्रेट Terpin Hydrate—अं० ! पर्याय--टर्पीन हाइड्रेट Terpene Hydrate ।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{20}O_{2}, H_{2}O$.

वर्णन--रासायनिक दृष्टि से टर्पिन हाइड्रेट, टर्पिन का मॉनोहाइड्रेट (Monohydrate of terpin) होता है, जो ऑयल ऑव टर्पेन्टिन तथा सल्फ्युरिक एसिड की परस्पर क्रिया से प्राप्त किया जाता है । इसके शोधन के लिए अल्कोहल् से इसका पुनः क्रिस्टलाइन्जेशन (Recrystallisation करते हैं । इसका रासायनिक संघटनP-menthane-1 : 8-diol, $C_{10}H_{18}(OH)_{2}$ है । टार्पिन हाइड्रेट के रंगहीन, चमकदार राम्बिक प्रिज्म (Rhombic prism) या रंगहीन चूर्ण होता हैं । इसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि पाई जाती है । स्वाद में कुछ-कुछ तीता होता है । विलेयता—ठंडे पानी में तो यह अत्यल्प घुलता है, किन्तु अपेक्षाकृत उबलते पानी में कुछ अधिक विलेय होता है । अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है । ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में मुश्किल से घुलता (Sparingly Soluble) है; उड़नशील तेलों में अंशतः विलेय (Slightly Soluble) तथा लाइट पेट्रोलियम् में तो अविलेय (Insoluble) ही होता है । मात्रा—०·२ से ०·६ ग्राम या ३ से १० ग्रेन (१½ से ५ रत्ती) ।

टेरिबीनम् Terebenum (Tereben.) B. P. C.—ले०; टेरिबीन Terebene—अं० ।

वर्णन---यह रंगहीन या हल्के पीले रंग का द्रव होता है । जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि पाई जाती ह; स्वाद में तारपीन की तरह (Terebinthinate) । विलेयता---जल में तो प्रायः अविलेय सा होता है, किन्तु डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् (Dehydrated alcohol), सालवेंट ईथर एवं क्लोरोफॉर्म में मिल जाता (Miscible) है । मात्रा—०·३ से १ मि० लि० या ५ से १५ मिनम् या बूंद ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

वाह्य—स्थानिक प्रयोग से तारपीन का तेल क्षोभक (Irritant), रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) तथा प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) होता है । प्रतिक्षोभक होने से त्वचा पर इसकी मालिश करने से उस क्षेत्र में स्थित गम्भीर शोथ का विलयन करता है । अतएव लिनिमेंट के रूप में इसका व्यवहार ब्रांकाइटिस (Bronchitis), संधिशूल (Arthritis and Gointpain), पेशीशूल (Muscular pain) तथा कटिशूल

(Lumbago) आदि रोगों में किया जाता है। सेंक के रूप (Turpentine Stupe) में उदराध्मान (Tympanitis) में इसका प्रयोग बहुत लाभकारी होता है। इसके लिये गर्म पानी में तारपीन का तेल मिलाकर मोटे कपड़े की ३-४ तह बनाकर कपड़े को पानी में भिगोकर और निचोड़ कर उसी कपड़े से सेंक दिया जाता है। गर्म पानी में तारपीन का तेल मिलाकर उसका भाप सूंघने (Vapour inhalation) से यह कफनिस्सारक (Expectorant) तथा श्वासमार्ग पर जीवाणुनाशक (Antiseptic) प्रभाव करता है।

आभ्यन्तर—अन्य उत्पत् तैलों की भांति तारपीन का तेल भी आभ्यन्तर प्रयोग से वातानुलोमन (Carminative) होता है, एतदर्थ इसका व्यवहार नहीं किया जाता। स्फीतकृमि (Tape worm) पर तारपीन की विशिष्ट कृमिघ्न (Anthelmintic) क्रिया होती है, किन्तु अब इस रूप में इसका प्रयोग नहीं किया जाता, क्योंकि इसके लिए अनेक उत्तम योग आजकल बाजार में उपलब्ध हैं। सूत्रकृमि या चूर्ण कृमि (Thread worm) में (६० से १२० बूंद) जल (१ पाइंट) और साबुन मिलाकर वस्ति (Enema) दी जाती है।

शोषण तथा उत्सर्ग—अन्य उत्पत् तैलों की भाँति मुखद्वारा सेवन किए जाने पर इसका भी शोषण आंतों से होता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्र में प्रदाह (Gastro-enteritis) पैदा करता है। शरीर से इसका निस्सरण श्वासमार्ग, त्वचा एवं वृक्कों द्वारा होता है। श्वासमार्ग से उत्सर्गित होने के कारण श्वासनलिकाओं की श्लैष्मिक कला (Bronchial mucous membrane) के स्राव को बढ़ाता (और इस प्रकार कफनिस्सारक) है तथा जीवाणुनाशक (Antiseptic) प्रभाव भी करता है। वृक्कों द्वारा उत्सर्गित होने के कारण मूत्र मार्ग पर क्षोभक क्रिया करता है, जिससे मात्राधिक्य के कारण शुक्लिमेह (एल्ब्युमिन्यूरिया Albuminuria) एवं शोणितमेह (हीमेचूरिया Haematuria) का उपद्रव हो सकता है।

टेरिबीन—गुण-कर्म में यह बिलकुल तारपीन के तेल की ही तरह है, किन्तु इसकी सुगन्धि विशेष रुचिकारक होती है। कमरे में थोड़ा सा टेरिबीन छिड़क देने से सारी दुर्गन्धि दूर हो सकती है। श्वासप्रणालिका शोथ (Bronchitis) एवं श्वासनलिका विस्तार (Bronchiectasis) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ इसका सेवन मुखद्वारा (Orally) या धूम्राघ्राणन (Inhalation) के रूप में दोनों ही प्रकार से होता है। मुखद्वारा सेवन के लिए इसको बतासे में डालकर, अथवा जिलेटिन कैप्स्यूल (Gelatin Capsules) में रखकर कर सकते हैं। इसकी मुख गुटिकाएं एवं वटिकाएँ (Lozenges and Pastilles) भी आती हैं। आघ्राणन के लिए मुखनासिका-यन्त्र (Oronasal inhaler) में १ पाइंट गर्म जल में ५ बूंद टेरिबीन डालकर उससे जो भाप निकले उसको सूंघना चाहिए।

टर्पीन हाइड्रेट—कफनिस्सारक एवं श्वास प्रणालिका पर जीवाणुनाशक प्रभाव करने के कारण तपेदिक (T. B.), चिरकालीन खांसी (Chronic bronchitis) एवं रक्तष्ठीवन (Haemoptysis) में उपयोगी है।

योग (Preparations)।

१—लिनिमेंटम् टेरिबिन्थिनी Linimentum Terebinthinae (Lin. Terebinth.), I. P., B. P.—ज्ञे०; लिनिमेंट ऑव टर्पेन्टीन Liniment of Turpentine—ऍं० । निर्माण-विधि—तारपीन

का तेज ६५० मि० लि० या सी० सी०, कॅम्फर ५० ग्राम, साफ्ट सोप ९० ग्राम, परिस्रुत जल आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० तैयार लिनिमेंट के लिए। कम्फर (कपूर) को रेक्टिफाइड टर्पेन्टाइन तेल में घोल लें। एक खरल में १०० सी० सी० जल लेकर उसमें साफ्टसोप डालकर घोंटे। अब इसमें तारपीन के तेल में बनाये हुए कम्फर सॉल्यूशन को थोड़ा-थोड़ा मिलाते जाँय और उसको घोंटते जाँय। अन्त में इनका एक गाढ़ा इमल्सन बन जायगा। इसमें अब डिस्टिल्ड वाटर इतना मिलायें कि सब तैयार दवा की मात्रा १००० मि० लि० हो जाय।

२—एलिक्जिर टर्पिनी हाइड्रेटिस Elixir Terpini Hydratis (Elix. Terpin. Hydr.) I. P.—ले०; एलिक्जिर ऑव टर्पिन हाइड्रेट Elixir of Terpin Hydrate—अं०। मात्रा—४ मि० लि० या ६० मिनम् (१ ड्राम)।

(नॉट्-ऑफिशल)

१—एलिक्जिर डाइमॉर्फिनी एट टर्पिनियाइ Elixir Diamorphinae et Terpini (Elix. Diamorph. et. Terpin), B. P. C.—ले०; एलिक्जिर ऑव डायामार्फीन एण्ड टर्पिन Elixir of Diamorphine and Terpin–अं०। पर्याय–डाइमॉर्फीन एण्ड टर्पीन एलिक्जिर Diamorphine and Terpin Elixir। इसमें डाइमार्फीन $\frac{1}{20}$ ग्रेन, टर्पिन हाइड्रेट $\frac{1}{2}$ ग्रेन, अल्कोहल् (९०%) २५० मि० लि०, ग्लिसरिन १८३·३ मि० लि०, पानी ६६·७ मि० लि० सिरप ऑव वाइल्ड चेरी (Syrup of wild cherry) आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० के लिए। मात्रा—३० से ६० बूंद ($\frac{1}{2}$ से १ ड्राम)।

२—एनिमा टेरिबिन्थीन Enema Terebinthinae(Enem. Terebinth.), B. P. C.—ले०; एनिमा ऑव टर्पेन्टीन, टर्पेन्टीनएनिमा—अं०। तारपीन का तेल १ औंस, एनिमा ऑव सोप २० फ्लुइड औंस। मात्रा–६०० मि० लि० या २०फ्लुइड औंस की मलाशय में वस्ति (Rectal injection) दी जाती है।

३—लिनिमेंटम् एल्बम् Linimentum Album (Lin. Alb.), B. P. C.—ले०; ह्वाइट लिनिमेंट, ह्वाइट (White) एम्ब्रोकेशन (Embrocation)-अं०। ओलिईक एसिड ४०० मिनम्, डायल्यूट सोल्यूशन ऑव अमोनिया २१६ मिनम्, अमोनियम् क्लोराइड ५५ ग्रेन, तारपीन का तेल २$\frac{1}{2}$ फ्लुइड औंस, जल ६$\frac{1}{2}$ फ्लुइड औंस। तारपीन का तेल २५%।

ओलियम् यूकेलिप्टाइ (यूकेलिप्टस का तेल)
Oleum Eucalypti (Ol. Eucalyp.) I. P., B. P.
Family : Myrtaceae (लवंग-कुल)—ले०

नाम—ऑयल ऑव यूकेलिप्टस Oil of Eucalyptus—अं०; यूकेलिप्टस का तेल—हिं०।

प्राप्ति साधन—युकेलिप्टस का तेल एक उड़नशील तेल (Volatile oil) होता है, जो युकेलिप्टस को विभिन्न प्रजातियों (Species) के ताजेपत्तों से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसके लिए मुख्यतया युकेलिप्टस ग्लोब्युलस (Eucalyptus globulus Labill) की पत्तियों का व्यवहार होता है। ब्रिटिश फॉर्माकोपिआ (B. P.) के

अनुसार इसमें कम से कम ७०% (w/w) तथा इन्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) के अनुसार ६० प्रतिशत (w/w) सिनिओल (Cineole: $C_{10}H_{18}O$) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—युकेलिप्टस ऑस्ट्रेलिया का आदि वासी पौधा है। आजकल भारतवर्ष में नीलगिरी, देहरादून तथा अन्य अनेक पहाड़ी स्थानों में इसके वृक्ष सफलतापूर्वक लगाये गए हैं।

वर्णन—युकेलिप्टस के ऊंचे-ऊंचे वृक्ष होते हैं। पत्तियाँ शाखाओं पर होती हैं। बाह्यवल्कल के पृथक् हो जाने के कारण सम्पूर्ण वृक्ष का तना सफेद एवं चिकना हो जाता तथा देखने में सुन्दर लगता है। पत्तियों को मसलकर सूंघने से उनसे युकेलिप्टस के तेल की सुगन्धि आती है।

तेल—युकेलिप्टस का तेल रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो सुगन्धित होता है। इसमें किंचित कपूर-जैसी गंध (Camphoraceous) भी आती है। स्वाद में तीक्ष्ण (Pungent) एवं कपूर जैसा। बाद में मुंह में ठंडा लगता है। विलेयता—यह ५ भाग अल्कोहल (७० प्रतिशत) में विलेय होता। युकेलिप्टस के तेल को अच्छी तरह डाटबंद पात्र में तथा ठंडी जगह में रखना चहिए। इसको प्रकाश से बचाना चाहिए। मात्रा—१ से ३ बूंद या मिनम् (०·०६ से ०·२ मि० लि०)।
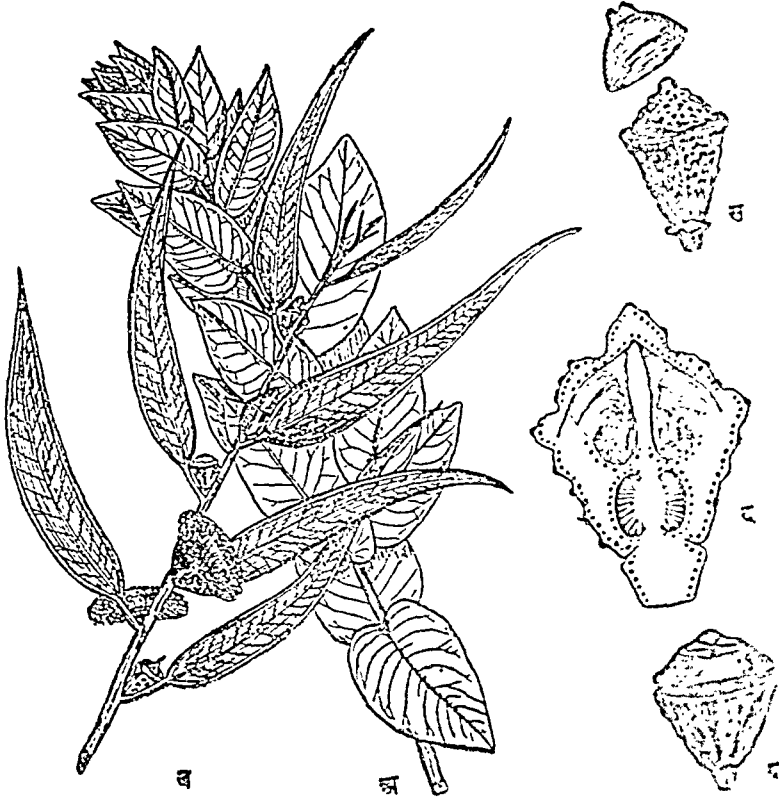
चित्र ३७—इस चित्र में यूकेलिप्टस ग्लोब्यूलस (Eucalyptus globulus) के विभिन्न अंगों को दिखाया गया है।

(अ) कोमल पत्तियों (Young leaves) को धारण करने वाली नई शाख; (ब) पुष्प-धारक शाख; (स) कलिका (Bud); (द) कलिका का अनुलम्ब-विच्छेद; (य) फल।

रासायनिक-संघटन—युकेलिप्टस के तेल में प्रधानतः (१) युकेलिप्टोल (सिनिओल—लगभग ६२ प्रतिशत) पाया जाता है। इसके अतिरिक्त (२) फिलेंड्रीन (Phellandrene)—यह एक टर्पीन (Terpene) होता है, तथा ब्यूटरिक एवं वलेरिआनिक एल्डिहाइड्स पाये जाते हैं।

युकेलिप्टोल Eucalyptol (Eucalyp.), I. P., B. P. पर्याय—सिनिओल (Cineole)।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{18}O$.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह यह anhydride of menthane—1 : 8-diol होता है। यह युकेलिप्टस तेल का प्रधान उपादान होता है। युकेलिप्टोल एक रंगहीन द्रव होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि पाई जाती है, तथा किंचित् कपूर जैसी गंध भी आती है। स्वाद में तीक्ष्ण एवं शैत्यजनक। विलेयता—यह २ भाग अल्कोहल् (७० प्रतिशत) में विलेय होता है। मात्रा—१ से ६ बूंद (मिनम्)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

त्वचा पर लगाने से युकिलिप्टस का तेल भी अन्य उड़नशील तेलों की भाँति उत्तेजक (Stimulant) रक्तिमा या लाली पैदा करने वाला (Rubefacient) तथा प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) होता है। इसके अतिरिक्त यह साधारण जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) तथा दुर्गन्धिनाशक (Deodorant) भी होता है। इस क्रिया के इसका उपयोग प्रतिश्याय (Nasal catarrh) तथा इन्फ्लुएन्जा की प्रारम्भिक अवस्थाओं में आघ्राण(Vapour or inhalation) के रूप में किया जाता है। एतदर्थ गरमजल में युकेलिप्टस का तेल, मेंथॉल एवं टिंक्चर बेंजोइन मिलाकर उससे जो भाप निकलता है, उसका आघ्राण किया जाता है। जुकाम या प्रतिश्याय तथा गले की खराबी में सतपिपरमिंट (मेन्थॉल) के साथ बनी हुई मुखचक्रिकाओं (Lozenges) को मुँह में रख कर चूसते हैं। युकेलिप्टस के तेल या इसके साथ अन्य उपयुक्त औषधियाँ मिलाकर उसका आघ्राण अनेक श्वसन संस्थान के रोगों में उपयोगी पाया जाता है। अतएव गर्म पानी में युकेलिप्टस का तेल मिला कर भाप आघ्राण श्वासनलिकाशोथ (Bronchitis), कुक्कुरखाँसी (Whooping cough) एवं प्रतिश्याय में किया जाता है। इसका प्रयोग सीकरयंत्र (Atomiser) के द्वारा भी कर सकते हैं। इस प्रकार के प्रयोग के लिए ब्रिटिश फॉर्माकोपिअल कोडेक्स के नेबुला युकेलेप्टोलिस कम्पोजिटा तथा वेपर मेंथोलिस एट युकेलिप्टाई उत्तम योग हैं।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—नेबुला युकेलिप्टोलिस कम्पोजिटा Nebula Eucalyptolis Composita (Neb. Eucalyp. Co.), B. P. C.। निर्माण-विधि—यूकेलिप्टोल ८० मि० लि०, कपूर (कम्फर) तथा सत-पिपरमेंट (मेन्थल) प्रत्येक १० ग्राम, सत अजवायन (थाइमल) १ ग्राम। लाइट लिक्विड पाराफिन (Light Liquid Paraffin) की इतनी मात्रा में मिलावें जिससे तैयार औषधि १००० मि० लि० प्राप्त हो।

२—वेपर मेंथोलिस एट युकेलिप्टाइ Vapour Mentholis et Eucalypti, B. p. C.। निर्माण-विधि—मेन्थल ८ ग्रेन, युकेलिप्टस का तेल ६० बूंद (मिनम् या १ ड्रम), लाइट मैगनीसियम् कार्बोनेट ३० ग्रेन। सबको इतने जल में मिलावें कि तैयार औषधि १ औंस प्राप्त हो।

३—नेबुला युकेलिप्टाइ Nebula Eucalypti (Neb. Eucalyp.), I. P. C.—ले०; युकेलिप्टस स्प्रे Eucalyptus Spray। युकेलिप्टस के तेल का सीकर। निर्माण-विधि—ऑयल ऑव युकेलिप्टस १ फ्लुइड औंस (५० मि० लि०) तथा लाइट लिक्विड पाराफिन (Light Liquid Paraffin) २० फ्लुइड औंस (१००० मि० लि०) तैयार औषधि के लिए। दोनों को परस्पर मिलावें।

४—अंगवण्टम् युकेलिप्टाइ Unguentum Eucalypti (Ung. Eucalyp.), I. P. C.—ले०, युकेलिप्टस आयण्टमेंट Eucalyptus Oiniment—अं०। ऑयल ऑव युकेलिप्टस १७५ ग्रेन (१० ग्राम), हार्ड पाराफिन १ औंस तथा (२६२½ ग्रेन) ह्वाइट सॉफ्ट पाराफिन २ औंस (५० ग्राम)। पाराफिन को गरम कर पिघलावें, फिर तेल मिलाकर हिलाते रहें ठंढा होने पर रखलें।

ओलियम् कजुपुटाइ (कायपुटी का तेल) I. P.

Family : Myrtaccae (लवंग-कुल)

नाम—ओलियम् कजुपुटाइ Oleum Cajuputi (Ol. Cajuput), I. P—. ले०; ऑयल ऑव कजुपुट Oil of Cajuput—अं; कायपुटी का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—कायपुटी का तेल, एक उड़नशील तैल (Volatile oil) होता है, जो मेलाल्युकाल्युकोडेंड्रान (Melaleuca leucodendron Linn.) नामक वृक्ष अथवा मेलाल्युका की अन्य प्रजातियों की ताजी पत्तियों एवं कोमल शाखाओं (Twigs) से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। प्रथम परिस्रवण में तेल में भबके (Still) के ताम्रांश के आ जाने से तेल का रंग किंचित् हरा या नीलापन-लिए हरा होता है। अतएव विशुद्ध तैल प्राप्त करने के लिए इसको जल में मिलाकर पुनः परिस्रवण कर विशोधित किया जाता है।

उत्पत्ति-स्थान—मलायाद्वीपसमूह।

वर्णन—कायपुटी के गुल्म स्वभाव के सदाहरित छोटे वृक्ष होते हैं।

कायपुटी का तेल रंग हीन अथवा पीले रंग का द्रव होता है। गंध रुचिकारक एवं किंचित् कपूर की तरह। स्वाद में सुगन्धित, तिक्त एवं कपूर-सम (की तरह)। विलेयता—२ भाग अल्कोहल् (८० प्रतिशत) में घुलजाता है।

रासायनिक-संघटन—इसमें प्रधानतः (१) सिनिओल (Cincole : $C_{10}H_{18}O$) ५० से ६० प्रतिशत तक पाया जाता है। इसके अतिरिक्त (२) एक क्रिस्टेलाइन टर्पिनिओल (Crystalline turpeneole) तथा अनेक एल्डिहाइड पाये जाते हैं।

मात्रा (I. P. Dose)—१ से ३ मिनम् या बूंद।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वाह्यतः त्वचा पर लगाने से यह रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) एवं प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) होता है। इस कार्य के लिए शोथ एवं दर्द युक्त स्थलों पर इसको के

तेल में तथा लिनिमेंट कम्फर या लिनिमेंट टरपेंटाइन में मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। अल्प मात्रा (१-२ बूंद) में मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर लालाजनक (Sialogogue) दीपन (Stomachic) तथा वातानुलोमन (Carminative) होता है। एतदर्थ इसको चीनी में डालकर या बताशे में रखकर सेवन किया जा सकता है।

ओलियम् ग्रेमिनिस साइट्रेटाइ (I. P.)
Oleum Graminis Citrati (Ol. Gram. Citrat.)
Family : Gramineae (तृण-कुल)

नाम--ऑयल ऑव लेमन ग्रास Oil of Lemon Grass, इन्डियन ऑयल ऑव वर्बिना Indian Oil of Verbena--अं० जम्बीरतृणतैल--सं०, हिं०।

प्राप्ति-साधन--यह एक उत्पत्तैल (Volatile oil) होता है, जो सिम्बोपोगन फ्लेक्सुओसस् Cymbopogon Flexuosus Stapf. नामक तृणजातीय क्षुद्र वनस्पति से परिस्रवणद्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ७५% (v/v) एल्डिहाइड्स् (या साइट्रल Citral : $C_{10}H_{16}O$.) होता है।

वक्तव्य—उक्त वनस्पति के अतिरिक्त ऑयल ऑव लेमन ग्रास दूसरी प्रजाति सिम्बोपोगन साइट्रेटस Cymbopogon citratus Stapf. से भी प्राप्त किया जाता है।

वर्णन--यह लाली लिए हुए पीले या भूरे रंग का द्रव होता है, जिसमें वर्बिना की सी उग्र गंध आती है। विलेयता--३ भाग अल्कोहल् (७०%) में पूर्णतः घुल जाता है। रखने पर कुछ दिनों के बाद यह विलेयताकम हो जाती है।

रासायनिक-संघटन—इसमें प्रधानतः (७० से ८०% तक) एल्डिहाइड्स (साइट्रल Citral) पाया जाता है। इसके अतिरक्त जिरेनिओल (Geraniol), टर्पीन (Terpene), लाइमोनीन (Limonene) तथा डाईपेंटीन (Dipentene) आदि तत्व भी पाये जाते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य प्रयोग से लेमनग्रासआयल साधारण क्षोभक (mildoirritant) तथा रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) होता है। तिल तैल या कड़वे तैल में मिलाकर इसका प्रयोग मालिश (Embroctaion) के लिए पेशीशूल (Myalgia), चिरकालीन आमवातजन्य संधिशूल एवं कटिशूल (Lumbago) आदि व्याधियों में करते हैं। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग सुगन्धित तैलादि (Perfumery) के निर्माण में भी किया जात है।

ओलियम् रोजमेरिनी (ऑयल ऑव रोजमरी), I. P., B. P.
Family : Labiatae (तुलसी-कुल)

नाम—ओलियन् रोजमेरिनी Oleum Rosmarini (Ol. Rosmarin)—ले०; ऑयल ऑव रोजमरी Oil of Rosemary—अं०; रोजमरी का तेल हिं०।

प्राप्ति-साधन—रोजमरी का तेल एक उड़नशील तेल होता है, रोजमेरिनस् ऑफिशिनेलिस् (Rosemarinus officinalis Linn.) नामक तुलसी जातीय विदेशीय वनस्पति के जल के साथ विस्रवणद्वारा प्राप्त किया जाता है। एवदर्थ वनस्पति का संग्रह पुष्पागम होने के बाद किया जाता है। इसमें कम से कम २ प्रतिशत (w/w) बोर्निल एसिटेट (Bornyl acetate) तथा ९ प्रतिशत बोर्निओल (Borneol : $C_{10}H_{8}O$.) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिण यूरप; दक्षिण फ्रांस।

वर्णन। वनस्पति—रोजमरी के सदाहरित गुल्म (Shrubs) होते हैं, जो ४-५ फुट तक ऊँचे होते हैं। पुष्पागम एप्रिल से जून के बीच होता है।

तेल (Oil of Rosemary)—यह रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें रोजमरी की सी सुगंधि होती है। स्वाद में मुँह में गर्मी का अनुभव होता है, यथा कर्पूर की भाँति। विलेयता—१ भाग अल्कोहल् (९० प्रतिशत) में घुल जाता है। रोजमरी के तेल को अच्छी तरह डाटबन्द शीशी में रखना चाहिए, इसका संग्रह ठण्डी जगह में करना और प्रकाश से इसकी रक्षा करनी चाहिए।

रासायनिक-संघटन—(१) बोर्नि-ओल (Borneol) ८ से १६ प्रतिशत; (२) वोर्निल एसिटेट तथा अन्य ईस्टर २ से ५ प्रतिशत। इसके अतिरिक्त अल्प मात्रा में कम्फर, सिनिओल, पाइनीन (Pinene) तथा कम्फीन (Camphene) आदि।
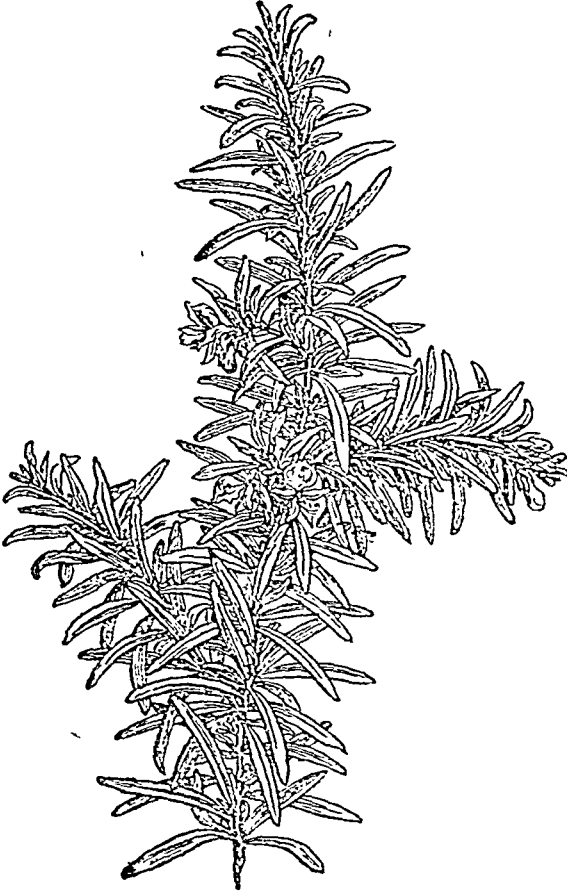
चित्र—३९ रोजमरी का पौधा (Rosmarinus officinalis)।

गुण एवं प्रयोग।

औषधि में रोजमरी के तेल का मुखद्वारा सेवन प्रायः नहीं होता। शिर की त्वचा पर मालिश करने से यह उत्तेजक (Stimulant) एवं रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) क्रिया करता है और इस कर्म के द्वारा केशवर्धक होता है। अतः इसका प्रयोग गंजत्व (Baldness) रोग में केशवर्धक तेल (Hair oil) अथवा केशवर्धक-धावन (Hair wash) के रूप में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। केशवर्धक योगों में यह एक उपादान होता है।

यह लिनिमेंटम् सेपोनिस् नामक ऑफिशल योग में पड़ता है।

(नॉट-ऑफिशल)

१—स्पिरटस रोजमेरिनी Spritus Rosmarini (Spt. Rosmarin.)—ले०। ऑयल ऑव रोजमरी १ भाग; अल्कोहल् (९० प्रतिशत ९ भाग) इसका प्रयोग हेयर-लोशन (Hair-Lotion) के रूप में किया है।

केप्सिकम् (लालमिर्च) I. P.

Capsicum (Capsic.)—ले० ।

Family : Solanaceae (कण्टकारी-कुल)

प्राप्ति साधन—केप्सिकम् , लालमिर्च की निम्न प्रजातियों के सुखाये हुए पक्वफ होते हैं:—

(१) केप्सिकम् Capsicum frutescens Linn.

(२) केप्सिकम एनम् Capsicum. annum Linn.

वर्णन—इसमें कम से कम १२ प्रतिशत नॉन वोलेटाइल ईथर एक्स्ट्रेक्टिव पाया जाता है लालमिर्च में एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में अत्यन्त तीक्ष्ण (Intense pungent) होता है ।

रासायनिक-संघटन—लालमिर्च में निम्न घटक पाये जाते हैं—(१) ०·१४ से ०·२२ प्रतिश केप्सेसिन (Capsaicin) नामक रंगहीन तथा क्रिस्टलाइन स्वरूप का तीक्ष्ण तत्व (Punge principle), जो उच्चतापक्रम पर बाष्प में परिवर्तित हो जाता है । यह वाष्प अत्यन्त तीक्ष्ण हो है । (२) एक द्रव स्वरूप का अल्कलायड (३) केरोटिनायड रंजकतत्व (Carotenoid pigmen (४) एक वसामय तत्व (Fatty oil) ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

केप्सिकम् एक तीव्र क्षोभक तथा रक्तिमोत्पादक तत्व है । इसके टिंचर का प्रयोग वातानुलो एवं क्षुधावर्धक प्रभाव के लिए किया जाता है ।

(ऑफिशल योग)

१—टिंक्चुरा केप्सिकाइ Tinctura Capsici (Tinct. Capsic.), I. P.—ले०; टिंच ऑव केप्सिकम् Tincture of Capsicum—अं०; लालमिर्च का टिंचर—हिं० । मात्रा—०·३ १ मि० लि० या ५ से १५ मिनम् या बूंद ।

मिर्हा (बोल) I. P.

Myrrha (Myrrh.), (ले०); Myrrh—(अं०) ।

Family : Burseraceae (गुग्गुल्वादि-कुल)

नाम—बोल, बीजाबोल, हीराबोल—हिं०; बोल गंधरस—सं०; मुर्र, मुर—अ०; बोल फा०. द०, हिं०; गंधरस बोल—बं०; हिराबोल—म०; हीराबोल—गु०; बीजाबोल—पं०, मा०

वक्तव्य—बोल के लेटिन एवं अंग्रेजी नाम सम्भवतः अरबी एवं हेब्रु (Hebrew) श 'मुर Mur' से व्युत्पन्न हैं, जिसका अर्थ होता है 'तिक्त या Bitter'

प्राप्ति-साधन—मिर्हा या बोल एक तैलीय रालयुक्त गोंद (Oleo-gum-resir होता है, जो कॅम्मिफरा मोलमोल (Commiphora molmol Engler (Comn phera myrrh Holmes) नामक वृक्ष के काण्डस्कन्ध पर चीरा लगाकर प्राप्त किया ज है । न्यूनाधिक मात्रा में बोल कॅम्मिफरा जाति के अन्य प्रजातिओं (Species) से भी व का संग्रह किया जाता है ।

उत्पत्ति-स्थान—बोल या मिर्रह् का प्रधानतः संग्रह उत्तरी-पूर्वी अमेरीका के सोमालीलैंड (**Somaliland**) नामक प्रान्त से होता है। यहाँ से इसका आयात अरब के अदन बन्दरगाह पर होता है, जहाँ से यह या तो सीधे यूरोप भेजा जाता है, अथवा पहले हिन्दुस्तान के बम्बई शहर में आता है और फिर यहाँ से इसका निर्यात यूरोपीय देशों को होता है। इसके अतिरिक्त बोल का न्यूनाधिक संग्रह अफरीका के अबीसीनिया प्रान्त, दक्षिण अरब, फारस एवं श्याम आदि देशों में भी होता है।

४१
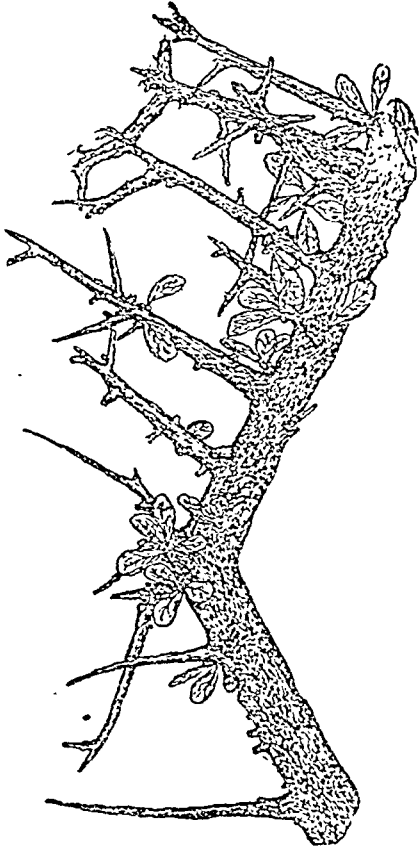
वर्णन—बोल के गोल-गोल अथवा अन्य आकार प्रकार के छोटे-बड़े अश्रुवत्दाने (Tears) या इनके परस्पर मिल जाने से छोटी-बड़ी डलियाँ (Masses) होती हैं। बाहर से यह लाली लिए भूरे या पीले रंग की, शुष्क तथा एक प्रकार के सूक्ष्म चूर्ण से धूसरित (Covered by a fine powder) होती हैं। बोल के टुकड़े तोड़ने में भंगुर (Brittle) होते हैं। टूटा हुआ तल (Fractured Surface) अनियमित रूप रेखा का, किंचित् पारभासी, गाढ़े भूरे रंग का होता है, जिसपर जगह-जगह सफेद दाग (Whitish mark) दीखते हैं। बोल में एक प्रकार की सुगंधि पाई जाती है, तथा स्वाद में यह सुगन्धित तिक्त एवं कड़ुआ या चरपरा (Acrid) होता है।

रासायनिक संघटन—बोल या मिर्रह में (१) २५ से ४० प्रतिशत रेजिन (२)५७ से ६१% गम या गोंद (Gum) तथा (३) २½ से ८ प्रतिशत मिर्रहोल नामक उड़नशील तैल (Volatile oil) एवं (४) एक तिक्त सत्व (Bitter principle) होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

गुण-कर्म। अन्य ओलिओ रेजिन्स की भांति बाह्य प्रयोग से मिर्रह या बोल भी स्थानिक जीवाणुनाशक तथा व्रणों पर उत्तेजक प्रभाव करता है। मुख-द्वारा सेवन किए जाने पर मुख, गाल, आमाशय एवं आन्त्र भी पूर्वोक्त प्रभाव लक्षित होता है। महास्रोतस् (**Alimentary Canal**) पर यह दीपन-पाचन (**Stomachic**) तथा वातानुलोमन (**Carminative**) क्रिया करता है। मिर्रह रक्तगत श्वेतकायाणुओं की संख्या एवं उनके जीवाणुभक्षण (**Phago-**

cytosis) क्रिया में वृद्धि करता है। निस्सरण (Elimination) शोषणोपरान्त बोल का शीरर से निस्सरण विशेषतः श्वास नलिकाओं एवं मूत्रप्रजनन मार्ग के द्वारा होता है, जिससे उत्सर्गित होते समय यह उक्त दोनों मार्गों पर जीवाणुनाशक एवं उत्तेजक प्रभाव करता है। इस प्रकार मिर्र्ह या बोल कफोत्सारि (Expectorant), आर्तवप्रवर्तक (Emmenagogue) तथा गर्भाशयोत्तेजक (Uterine Stimulant) होता है।

आमयिक प्रयोग—स्थानिक क्रिया के लिए गण्डूष (Mouth-wash) के रूप में इसका प्रयोग अनेक मुखरोगों में उपयोगी होता है। एतदर्थ १ औंस जल में टिंक्चर मिर्र्ह २ ड्राम मिलाकर प्रयुक्त करते हैं। इस विलयन में लाइकर आयोडाइ मिटिस् अथवा टंकण (Borax) मिलादेने से इसकी क्रियाशीलता और भी बढ़ जाती है। इस रूप में इसका प्रयोग मुखपाक या मुँह के निनावा रोग (Aphthous), जिह्वाव्रण (Ulcerated tongue), गलशैथिल्य (Relaxed throat) एवं मसूढ़े के रोग (Spongy Gums) में किया जाता है। जीवाणुनाशक कफनिस्सारक (Disinfecting expectorant) के रूप में इसका प्रयोग चिरकालीन ब्रांकाइटिज (Chronic Bronchitis) एवं श्वासनलिका-विस्फार (Bronchiectasis) रोग में तथा आर्तव प्रवर्त्तक होने के कारण मुसब्बर एवं लौह के साथ नष्टार्तव (Amenorrhoea) तथा कष्टार्तव (Dysmenorrhoea) आदि रोगों में किया जाता है। दीपन-पाचन एवं वातानुलोमन क्रिया के लिए इसको जुलाबों में सहायक औषधि के रूप में मिलते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—टिंक्चुरा मिर्र्ही Tinctura Myrrhäe (Tinct. Myrrh.) I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव मिर्र्ह् Tincture of Myrrh—अं०; टिंक्चर बोल—हिं। मात्रा—२ से ४ मि० लि० या ३० से ६० मिनम् या बूंद (½ से १ ड्राम)।

बलसॅमम् टोलूटेनम् (बल्सम ऑव टोलू) I. P., B. P.

Family : Leguminosäe (शिम्बी-कुल)

नाम—बल्समम् टोलूटेनम् Balsamum Tolutanum (Bals. Tolu.)—ले०; टोलू बल्सम् Tolu Balsam—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह घन अथवा अर्ध-घन स्वरूप का बल्सम् (Solid or Semi-Solid Balsam) होता है जो माइरॉक्सिलॉन बल्सेमम् नामक वृक्ष Myroxylon balsamum (Linn.) Hams. [पर्याय—माइरॉक्सिलॉन टोलुइफेरा Myroxylon toluifera H. B. & K.] के तने (Trunk) पर चीरा लगाकर प्राप्त किया जाता है। टोलू के ऊँचे वृक्ष (७० फुट तक ऊँचा) होते हैं। इसका काण्ड-स्कन्ध (Turnk) भी काफी ऊँचा (३०-४० फुट) होता है। शाखायें उसके ऊपर निकलती हैं। इसी काण्ड में चीरा लगा दिया जाता है। क्षत के परिणाम स्वरूप उसके परिसरीय क्षेत्र में नये काष्ठ धातु की उत्पत्ति होती है, जिसमें अनेक ओलिओ-रेजिन वाहक प्रणालियाँ (Oleo-resin ducts) होती है। इन्हीं द्वारा उक्त बल्सम का स्रवण होता है। बल्सम् ऑव टोलू में ३५ से ५० प्रतिशत बल्समिक एसिड्स होते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—कोलम्बिआ (Colombia) तथा सानसलवेडर (San Salavador)। वक्तव्य—टोलू, कार्टेजिना (Cartagena) के पास एक नगर है। उसके समीपवर्ती प्रान्त में उक्त वृक्ष बहुतायत से पाया जाता है। अतएव शहर के नाम पर इस वल्सम् (वलसम्) का भी नामकरण कर लिया गया है।

वर्णन—पहले टोलू वलसम् मृदु, अर्ध-घन तथा चिपचिपा स्वरूप का तथा रंग में भूरापन लिए पीले रंग का होता है, जो बाद में भूरे रंग का तथा घन हो जाता है। कालान्तर से यह और कड़ा एवं अन्ततः भंगुर (Brittle) हो जाता है। इसके पतले पर्त पारदर्शक होते हैं। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि पाई जाती है, जो वनीला (Vanilla) से बहुत मिलती-जुलती है। स्वाद सुगन्धित होता है। विलेयता—यह अल्कोहल् (९० प्रतिशत) सॉलवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा फिक्स्ड अलकलीज (Fixed alkalies) के विलयन (सॉल्यूशन) में घुलनशील होता है।

रासायनिक संघटन—(१) बेंजोइक एसिड ८ प्रतिशत (२) सिनेमिक एसिड १२ से १५ प्रतिशत; (३) रेजिन ८० प्रतिशत तथा (४) ७½ प्रतिशत एक तैलीय द्रव जिसमें बेंजील सिनेमेट (Benzyl Cinnamate) तथा बेंजिल बेंजोएट (Benzyl benzoate) होता है। (५) १½ से ३ प्रतिशत एक अत्यन्त सुगंधित उड़नशील तैल।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वलसम् ऑव टोलू कफनिस्सारक (Expectorant) होता है। सिरप टोलू का व्यवहार बहुधा खांसी के मिक्सचर (Cough Mixture) में किया जाता है। कासघ्न प्रभाव के साथ-साथ यह मिश्रण को रोचक भी बना देता है। कासनाशक प्रभाव के लिए टिंक्चर (टिंक्चर ऑव टोलू) का भी व्यवहार किया जा सकता है। चूंकि इसमें रेजिन होता है, अतएव म्युसिलेज ऑव ट्रागाकान्थ के साथ इसका इमलसन भी बना लेना चाहिए। दूसरे यह स्वाद में तिक्त भी होता है। अतएव टिंक्चर की अपेक्षा सिरप अधिक उपयुक्त समझा जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—सिरपस् टोलूटेनस् Syrupus Tolutanus (Syr. Tolu) I. P., B. P.—ले०; सिरप ऑव टोलू Syrup of Tolu—अं०। टोलू शर्बत या शर्बत टोलू। इसमें २½ प्रतिशत टोलू होता है। मात्रा—३० से १२० मिनम् (२ से ८ मि० लि०) या ½ से २ ड्राम।

२—टिंक्चुरा टोलुटेना Tinctura Tolutana Tinct. Tolu, I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव टोलू Tincture of Tolu, टिंक्चर ऑव वलसम् ऑव टोलू Tincture of Balsam of Tolu—अं०। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

३—कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव बेंजोइन में वलसम् ऑव टोलू भी पड़ता है।

नुस्खे:—

(१)	सिरप टोलू	३० बूंद
	सिरप सिल्ला	३० बूंद
	इन्फ्युजन सनेगा	½ औंस
	एक्वा क्लोरोफॉर्म	½ औंस

सब मिलाकर १ मात्रा; ऐसी दिन में ३ बार। चिरकालीन खासी (Chronic Bronchitis) में उपयोगी है।

(२) टिंक्चर ओपियाई कम्फोरेटा — २० बूंद
सिरप केल्सियाई हाइपोफॉस्फेटिस् — २० बूंद
सिरप टोलू — २० बूंद

सबको परस्पर मिलावें। १ अवलेह की तरह चाटें। ऐसी दिन में तीन बार। प्रयोग नं० १ की भांति।

(३) टेरिबीन — १० बूंद
म्युसिलेज ट्रागाकान्थ — आवश्यकतानुसार
सिरप टोलू — १ ड्राम
एक्वा क्लोरोफॉर्म — १ औंस तक

सब मिलाकर १ मात्रा। उपयोग—चिरकालीन कास (क्रानिक ब्रांकाइटिस)।

वलेरिआना (तगर), I. P.

Valeriana (Valerian.)—ले०; वलेरिअन (Valerian)—अं०।

Family : Valerianeae (जटामांसी-कुल)

नाम—(१) वलेरिआनी राइजोमा Valerianae Rhizoma,—ले०; वलेरियन राइजोमा Valerian Rhizome, वलेरिअन रूट Valerian Root—अं०। (२) वलेरिआनी इन्डिकी राइजोमा Valerianae Indicae Rhizoma—ले०; इन्डियन वलेरियन राइजोम Indian Valerian Rhizome—अं०; तगरमूल।

प्राप्ति-साधन—१९५३ की ब्रिटिश फॉर्माकोपिआ से तो यह औषधि निकाल दी गई है, किन्तु इन्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) में यह अधिकृत औषधि है। तदनुसार इसका प्राप्ति-साधन निम्नलिखित हैं :—

(१) वलेरियाना ऑफिशिनेलिस् Valeriana officinalis Linn. (विदेशी तगर)।

(२) वलेरिआना वालिचियाइ Valeriana wallichii DC. (भारतीय तगर)।

वलेरियाना या वलेरियन उक्त वनस्पतियों का सुखाया हुआ मूलस्तम्भ (Rhizome and root or Rootstock) होता है।

उत्पत्ति-स्थान। वलेरिआना ऑफिशिनेलिस—यह यूरोप का आदिवासी पौधा है। इङ्गलैंड, हॉलेंड, बेलजियम्, फ्रांस तथा जर्मनी आदि यूरोपीय देशों में इसके स्वयंजात (Wild) पौधे पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त उक्त देशों में तथा संयुक्तराष्ट्र अमरीका (U. S. A.) में इसकी खेती भी की जाती है। भारतवर्ष में काश्मीर में भी (८,०००–९,००० फुट की ऊँचाई पर) जहाँ-तहाँ इसके पौधे पाये जाते हैं।

वलेरिआना वालिचियाइ—यह हिमालय प्रदेश में काश्मीर से भूटानतक (४०००–१२,००० फुट की ऊँचाई पर) पर्याप्त रूप से स्वयंजात मिलता है। खसिया की पहाड़ियों (४,०००–६,००० फुट की ऊंचाई पर) भी इसके पौधे पाये जाते हैं।

वर्णन । राइज़ोम (Rhizome)—राइज़ोम के टुकड़े प्रायः ४ से ८ सेंटीमीटर लम्बे तथा ५–१० मिलिमिटर मोटे होते हैं। विदेशीय तगर के टुकड़े अपेक्षाकृत छोटे होते हैं। आकार में यह चपटे एवं रम्भाकार (Sub-cylindrical) एवं किञ्चित् वक्र (टेढ़े–Slightly curved) होते हैं। ऊर्ध्वतल पर पत्तियों के टूटे हुए चिन्ह (Leaf-Scars) तथा अधस्तल पर छोटे-छोटे गोल चिन्ह होते हैं, जो टूटी हुई जड़ों को कारण बनते हैं। इस पर इतस्ततः लगी हुई सूत्राकार जड़ें भी पाई जाती हैं। अग्र या शीर्ष (Apex) पर टूटे हुए पर्णवृन्त
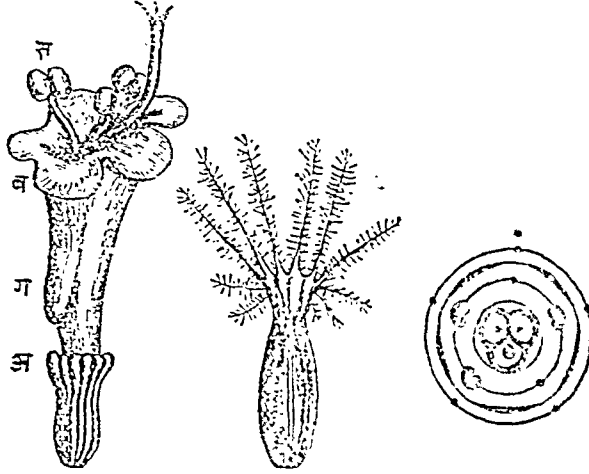
चित्र ४२—वलेरिअन ऑफिसिनेलिस (पौधा एवं भौमिक काण्ड या राइजोम) तथा पुष्प एवं पुष्प चित्र (Floral diagram)।
(अ) वलेरिअन का पुष्प।
(व) आभ्यन्तर कोष (Corolla)
(ग) मधुग्रंथि (Nectary)।

(Remains of petioles) लगे होते हैं। बाहर से देखने में यह रंग में मटमैले पीताभ-भूरे (Dull yellowish-brown) से लेकर गाढ़े भूरे रंग के होते हैं। तोड़ने से यह टुकड़े खट से टूट जाते हैं, तथा टूटे हुए तल पर वत्सनाग के टूटे हुए तल की भांति (Short and horny) लगते हैं। मूल (Root)—जड़ें प्रायः ६–७ सेंटीमिटर लम्बी तथा १–२ मिलिमिटर मोटी होती हैं। बाहरी छिलका गाढ़े रंग का तथा अन्दर का काष्ठीयभाग फीके रंग का होता है।

संग्रह एवं संरक्षण (Storage)—इसको ठंडी जगह में रखना चाहिए तथा नमी से बचाना चाहिए।

रासायनिक संघटन—वलेरियन में महत्त्व का घटक इसमें पाया जाने वाला उड़नशील तैल (Volatile oil) होता है, जो १ प्रतिशत की मात्रा में पाया जाता है। तैल में प्रधानतः बोर्निल आइसोवलेरेट (Bornyl isovalerate), फॉर्मेट (Formate), ब्यूटिरेट (Butyrate) एवं एसिटेट (Acetate) होते हैं। इनके अतिरिक्त इसमें पाइनीन (l-pinene) कम्फीन (l-Camphene) एवं लाइमोनीन (l-limonene) नामक तत्त्व भी होते हैं। ताजे तैल में तो सुगन्धि नहीं होती, किन्तु हवा में खुला रहने से कालान्तर से उसमें तगर (वलेरियन) की विशिष्ट सुगन्धि उत्पन्न होती है।

वलेरियानी पल्विस Valerianae Pulvis (Valerian. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड वलेरियन (Powdered Valerian)—अं० । तगर चूर्ण। यह हल्के भूरे या खाकस्तरी-भूरे रंग का (Greyish-brown) होता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

वलेरिआन की क्रिया विशेषतः इसमें पाये जाने वाले उत्पत्तैल (Volatile oil) के ही कारण होती है । अन्य उड़नशील तैलों के सामान्य गुण-कर्म के अतिरिक्त यह विशेषरूप से नाड़ी-संशामक (Nervous sedative) तथा वातानुलोमन होता है । इसका प्रयोग विभिन्न अन्य औषधियों के साथ हिस्टीरिया (Hysteria) रोग में बहुत उपयोगी होता है । इसके लिए क्लोरलहाइड्रेट अथवा पोटासियम् ब्रोमाइड के साथ इसका प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है ।

वलेरियन के योगः—

(१) जिंसाइ वलेरिआनस Zinci Valerianas (Zinc. Valerian.), B. P. C.—ले०; जिंक वलेरिएनेट (Zinc Valerianate)—अं० । यह सफेद चूर्ण होता है, जो जल में बहुत कम घुलता है । मात्रा—१ से ३ ग्रेन । या ६० से २०० मि० ग्राम ।

(२) टिंक्चुरा वलेरिआनी अमोनिएटा Tinctura valerianae Ammoniata (Tict. valerian. Ammon.), I. P.—ले०; अमोनिएटेड टिंक्चर ऑव वलेरिअन Ammoniated Tincture of Valerian—अं० । टिंक्चर वलेरिन । मात्रा (I. P. Dose)—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०) ।

(३) एक्स्ट्रैक्टम् वलेरिआनी Extractum Valerianae (Ext. Valerian.), I. P. C., B, P. C.—ले०; एक्स्ट्रैक्ट ऑव वलेरिअन Extract of Valerian—अं० । सत वलेरिअन या तगर का सत । इसको अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए । मात्रा—१ से ५ ग्रेन (०.०६ से ०.२ ग्राम) या ½ से २½ रत्ती ।

(४) एक्स्ट्रैक्टम् वलेरिआनी लिक्विडम् Extractum Valerianae Liquidum (Ext. Valerian. Liq.), I. P.C., B. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव वलेरिअन Liquid Extract of Valerian—अं०; वलेरिअन (तगर) का प्रवाही घनसत्व । मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०.३ से १ मि० लि०) ।

(५) टिंक्चुरा वलेरिआनी सिम्प्लेक्स Tinctura Valerianae Simplex (Tinct. Valerian. Simp.) I. P. C.—ले०; सिम्पुल टिंक्चर ऑव वलेरिअन Simple Tincture of Valerian—अं० । पर्याय—टिंक्चुरी वलेरिआनी Tincturi Velerianae । टिंक्चुरी वलेरिआनी । मात्रा—१ से २ फ्लुइड ड्राम (४ से ८ मि० लि०) ।

६—इनफ्युजम् वलेरिआनी कन्सन्ट्रेटम् Infusum Valerianae Concentratum (Inf. Valerian. Conc.), I. P. C., B. P.C—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव वलेरियन Concentrated Infusion of Valerian—अं० । मात्रा—३० से ६० मिनम् (बूंद) या २ से ४ मि० लि० ।

७—इन्फ्युजम् वलेरियानी रिसेन्स Infusum Valerianae Recens (Inf. Valerian. Rece.) I. P. C.—लै०; फ्रेश इन्फ्युजन ऑव वलेरिअन Fresh Infusion of Valerian—अं० । वलेरिअन या तगर का अभिनव फाण्ट—सं०, हिं० । मात्रा—½ से १ औंस (१५–३० मि० लि०)

निर्माण-विधि—वलेरिअन या तगर का यवकुट चूर्ण ½ औंस (१½ तोला), डिस्टिल्ड वाटर २० औंस (लगभग ½ सेर) । पानी को गरम करें । जब उबलने लगे चूर्ण को उसमें छोड़ दें और बर्तन ढँक दें । १५ मिट के बाद उसे उतार कर छान लें । इसे प्रयोग करने के समय ताजा तैयार किया जाता है । यदि ऐसी सुविधा न हो तो इन्फ्युजम् वलेरिआनी कन्सन्ट्रेटम् में ७ गुना पानी मिलाकर काम में लाया जा सकता है ।

८—मिस्चुरा पोटासियाई ब्रोमाइडाई एट वलेरिआनी Mistura Potasii Bromidi et Valerianae (Mist. Pot. Brom. et. Valerian.), B. P. C.—लै०; मिक्सचर ऑव पोटासियम् ब्रोमाइड् एण्ड वलेरिअन Misture of Potasium Bromide and Valerian, पोटासियम् ब्रोमाइड एण्ड वलेरिअन मिक्श्चर Potassium Bromide and Valerian Mixture—अं० । ½ औंस मिक्सचर में १० ग्रेन पोटासियम् ब्रोमाइड, २½ ग्रेन अमोनियम् बाइकार्बोनेट, ३० बूंद कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन आव वलेरियन और बाकी जल होता है ।

वलेरियन के नुस्खेः—

(१) अमोनियम् ब्रोमाइड　१० ग्रेन
टिंक्चर एसाफेटिडा (Tinct. Asafaet.)　१० बूंद
टिंक्चर वलेरियन अमोनिएट } प्रत्येक　३० बूंद
स्प्रिट अमोनिया एरोमेटिक }
जल—　आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए ।

ऐसी १ खुराक प्रतिदिन ३–४ बार देना चाहिए । हिस्टीरिया में बहुत उपयोगी है ।

(२) पोटासियम् ब्रोमाइड　७½ ग्रेन
क्लोरल हाइड्रेट　७½ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्ट वलेरिअन लिक्विड　१५ बूंद
एक्स्ट्रॅक्ट ग्लिसिरहाइजा लिक्विड　१० बूंद
(मुलेठी का प्रवाहीघनसत्व)
स्प्रिट ऑरेन्शाइ　२० बूंद
जल　आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए

इसे ब्रोमो-वलेरियन एलिक्जिर कहते हैं । नाड़ी-संशामक है ।

ॲसेफिटिडा (हींग) I. P.

Asafoetida (Asafoet.),— लै०; अं०) ।

Family : Umbelliferae (गर्जर-कुल)

नाम—हींग—हिं०; हिंगु, वाह्लीक—सं०; हिंग—गु०, म०; हिंगु—बं०; इंगु—ते०; हिल्तीत—अ०; अंगोज, अंगजद, अंगुश्तगंदः—फा० ।

प्राप्ति-साधन—ॲसेफीटिडा एक तैलीयरालदार गोंद (Oleo-gum-resin) होता है, जो उच्छत्रक-कुल के फेरुला जाति की विभिन्न प्रजातिओं (Species) के भौमिक काण्ड

(राइज़ोम) तथा मूल पर चीरा लगाने से प्राप्त होता है। हींग प्राप्त करने के लिए निम्न प्रजातिओं का उपयोग विशेषरूप से किया जाता है:—

(१) फेरुला नॉर्थेक्स **Ferula narthex Boiss.**

(२) फेरुला फीटिडा **Ferula foetida Bunge Regal.**

वक्तव्य—यूनानी वैद्यक में हींग के अतिरिक्त इसके फल अथवा बीजों का भी व्यवहार होता है। इसे अंजुदान कहते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—फेरुला नार्थेक्स के पौधे काश्मीर, अफगानिस्तान तथा पश्चिमी तिब्बत में पाये जाते हैं। फेरुला फीटिडा फारस, तुर्किस्तान, कन्धार तथा अफगानिस्तान में स्वयं-जात पाया जाता है।

वर्णन—हींग के गोल-गोल या चपटे अश्रुवत दाने (Rounded or flattened), जो प्रायः १२ से २५ मि० लि० व्यास (Diameter) के होते हैं; अथवा इन दोनों के मिले हुए ढेले या टुकड़े (Masses of agglutinated tears) होते हैं, जो खाकस्तरी सफेद से पीताभवर्ण के (Greyish-White to dull yellow) होते हैं। हींग के ढेलों को तोड़ने पर ताजे टूटे हुए तल पीताभ रंग के तथा धुँधले या पारभासी (Translucent) अथवा दूध की तरह सफेद एवं अपारदर्शक (Opaque) होते हैं, थोड़ी देर के बाद यह रंग बदल कर गुलाबी रंग का और अन्ततोगत्वा लाली लिए भूरे रंग का हो जाता है। गंधकाम्ल (Sulphuric acid) के सम्पर्क में आने पर हींग का रंग चमकीला लाल या लाली लिए भूरा हो जाता है, जो जल से धोने पर बदल कर बनफ़शई रंग (Violet) का हो जाता है। हींग में लहसुन की भाँति (Alliaceous) तीव्र एवं स्थायी गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में तिक्त एवं चरपरा (Acrid) होता है।

रासायनिक-संघटन—हींग में लगभग ४०–६४ प्रतिशत रेज़िन (Resin) तथा २५ प्रतिशत तक गोंदीय भाग (Gum) एवं ६ से १७ प्रतिशत तक उड़नशील तैल (Volatile oil) पाया जाता है। हींग की गंध एवं इसके गुण-कर्म प्रधानतः इसी उत्पत् तैल के कारण होते हैं। उत्पत् तैल में टर्पीन (Terpenes), डाइसल्फाइड्स (Disulphides : $C_7H_{14}S_2$ and $C_{11}H_{20}S_2$) तथा नीलाद्रव (Blue liquid : $(C_{10}H_{16}O)^n$. आदि संघटक पाये जाते हैं। रेजिन में ॲसा-रेज़िनोटैनोल (Asaresinotannol), ॲसारेज़िनोल (Asaresinol), फेरुलिक एसिड ईस्टर (Ferulic acid ester) तथा स्वतंत्ररूप से फेरुलिक एसिड (१·२२ प्रतिशत तक) आदि तत्व पाये जाते हैं।

मात्रा—२ से १५ ग्रेन या ०·२ से १ ग्राम (१½ से ७½ रत्ती)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

हींग का व्यवहार अति प्राचीनकाल से होता आ रहा है। चिकित्सा के अतिरिक्त इसका दैनिक व्यवहार मसाले आदि में किया जाता है। हींग उद्वेष्टहर (**Antispasmodic**), वातानुलोमन (**Carminative**), कफनिस्सारक (**Expectorant**) तथा नाड़ी-उत्तेजक (**Nervine stimulant**) होता है। वलेरिअन (तगर) की भाँति हींग का भी प्रयोग हिस्टीरिया (योषापस्मार) में उपयोगी सिद्ध होता है। हींग का प्रधान उपयोग वातानुलोमन के रूप में किया जाता है। अतः यह उदरगत वायु विलोम होने पर (**Intestinal flatulence**)

या पेट फूलने पर प्रयुक्त किया जाता है। एतदर्थ इसके टिंक्चर का व्यवहार गुदमार्ग अथवा वस्ति (Enema) के रूप किया जाता है। किंतु जल के साथ टिंक्चर मिलाने से रेजिन का भाग पृथक् होकर अधःक्षिप्त हो जाता है। अतः इसको निलम्बित करने के लिए इसमें म्युसिलेज ऑव ट्रगाकान्थ मिला देना चाहिए। बच्चों के पेट फूलने पर हींग को पानी में घोलकर पेट पर लगाने से आराम होता है। इसप्रकार आध्मान युक्त आंत्रशूल (Flatulent Colic) के अतिरिक्त उद्वेष्ठहर होने के कारण यह श्वास या दमा (Asthma), कुक्कुरखांसी (Whooping Cough), हृच्छूल (Angina pectoris) आदि उद्वेष्ठ युक्त व्याधियों में भी उपयोगी होता है शोषणोपरान्त हींग के उत्पत् तैल का शरीर से निस्सरण फुफ्फुसों द्वारा होता है, अतएव यह उत्तेजक कफनिस्सारक (Stimulant expectorant) का भी कार्य करता है। जिन स्त्रियों में रजःकृच्छ्रता एवं कब्ज की शिकायत होती है अथवा जिन हिस्टीरिया के रोगियों में ये उपद्रव होते हैं, उनमें 'एलो एण्ड असेफीटिडा पिल' बहुत उपयुक्त होता है।

योग (I. P. & I. P. C. Preparstions):—

(१) टिंक्चुरा ॲसेफिटिडी Tinctura Asafoetidae (Tinct. Asafoet,) I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव ॲसेफीटिडा Tincture of Asafoetida—अं०; हींग का टिंचर—हि०। २० प्रतिशत हींग होता है। मात्रा—२ से ४ मि० लि० या ३० से ६० बूंद या मिनम् (½ से १ ड्राम)।

(२) पिल्युला ॲसेफीटिडी Pilula Asafoetidae (Pil. Asafoet.), I. P. C.—ले०; पिल्स ऑव ॲसेफिटिडा Pills of Asafetida—अं०; हींग की गोलियाँ—हि०। हींग २०० ग्रेन, हार्डसोप का सूक्ष्म पाउडर ७५ ग्रेन। जल के साथ लुग्दी बनाकर इससे १०० गोलियाँ बनावे मात्रा—१ से २ पिल या गोली।

(३) पिल्युला एलोज एट ॲसेफीटिडी Pilula Aloes et Asafoetidae (Pil. Aloes et. Asafoet.), I. P. C.—ले०, पिल्स ऑव एलोज एण्ड ॲसेफीटिडा Pills of Aloes and Asafetida—अं०। मात्रा—१ से गोली।

केरिओफाइलम् (लवंग) I. P., B. P.

Caryophyllum (Caryoph.)—ले०।

Family : Myrtaceae (लवंग-कुल)

नाम—लवंग, लौंग—हि०; लवङ्ग, देवकुसुम सं०; लवंग—म०, गु०; लवंगम्—तै०; किराबु—ता०; करयापू—मल०; कराम्बु (Kara'mbu)—सिंह०।

केरिओफाइलम् Caryophyllum, केरिओफाइलस् Caryophyllus—ले०; क्लोव Cloves—अं०।

प्राप्ति-साधन—क्लोव्स (Cloves), यूजिनिया केरिओफाइलस् Eugenia Caryophyllus (Spreng) Sprague नामक वृक्ष के सुखाई हुई पुष्प कलिकायें (Dried flower buds) होती हैं। १०० ग्राम लौंग में कम से कम १६ सि० सि० (सी० सी०) ऑयल ऑव क्लोव (लौंग का तेल) होना चाहिए।

उत्पत्ति-स्थान—लौंग मोलक्का द्वीपसमूह (Molucca Islands) का आदिवासी पौधा है। आजकल जेंजिबर (Zanzibar) एवं पेम्बा (Pemba) में काफी मात्रा में

इसकी खेती की जाती है। इसके अतिरिक्त मेडागास्कर, मारिशस (Mauritius) एवं लंका तथा दक्षिण भारत में भी इसकी खेती की जाने लगी है।

इतिहास—ईसा के २६६ वर्ष पूर्व भी चीनियों को लौंग का ज्ञान था। भारतवासियों को भी इसका ज्ञान अतिप्राचीन काल से था। चरक संहिता में "लवङ्ग" नाम से इसका उल्लेख है। भारतवर्ष के अन्य सभी भाषा-भाषी प्रान्तों में लवङ्ग का रूपान्तरित नाम सर्व-साधारण व्यवहार में प्रचलित है। भारतवर्ष से इसका प्रचार अरब आदि देशों में हुआ। लौंग भी मसाले का एक उपादान है। अरबीनाम 'करन्फुल' सम्भवतः लौंग के मलयालम अथवा सिंहलीज नाम का अरबीकृत रूप मालूम होता है।

वर्णन। वृक्ष—लौंग के छोटे कद के सदाहरित वृक्ष होते हैं। इसमें सालभर फूल निकलते हैं। यह वृक्ष देखने में अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक लगता है। पुष्प शाखाग्रों पर गुच्छों में निकलते हैं और अत्यन्त सुगन्धित होते हैं। पत्तियों को मसलकर सूंघने से भी लौंग की विशिष्ट सुगन्धि आती है।

चित्र—४३ लवंग की शाख।

लौंग या क्लोव्स (Cloves)—औषधीय कार्य के लिए बाजार से जो लौंग प्राप्त होता है, वह १० से १७½ मिलिमीटर लम्बा, गाढ़े भूरे रंग का अथवा मटमैले लाल रंग (Dusky red) का होता है। लौंग में एक डंठल होता है, जिसके ऊपर मुण्डाकार रचना दिखलाई पड़ती है। डंठल का भाग (Hypanthium) का बना होता है, जो चतुष्कोणा-कार, किंचित् चपटा एवं सिलिंड्रिकल (Subcylindrical, slightly flattened and four-sided) होता है। डंठल के ऊर्ध्व भाग में दो कोष्ठों वाली अधःस्थ गर्भाशय (2-celled inferior ovary) होता है, जिसमें अनेक बीजाभव (Ovules), मध्यस्थ प्लेसेन्टा के दोनों तरफ लगे होते हैं। डंठल का अन्त ४ पुटपत्रों (Sepals) में होता है, जिनके स्थालक में लौंग का मुण्डाकार भाग होता है। यह भाग पुष्प की शेष रचनाओं से बनता है। लौंग में एक विशिष्ट प्रकार की उग्र मसालेदार सुगंधि होती है। स्वाद में तीक्ष्ण एवं सुगन्धित।

वक्तव्य—लौंग का संग्रह ठंढे एवं सूखे जगह में करना चाहिए।

करिओफिलाइ पल्विस् Caryophylli Pulvis (Caryoph. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड क्लोव Powdered Clove—अं०; लौंग का चूर्ण। यह गाढ़े भूरे रंग का होता है। इसमें कम से कम १४ प्रतिशत (v/w) ऑयल ऑव क्लोव (लौंग का तेल) होता है। पाउडर्ड क्लोव निम्न ऑफिशल योगों में पड़ता है :—

(१) पल्विस क्रेटी एरोमेटिकस्।

(२) पल्विस क्रेटी एरोमेटिकस् कम् ओपिओ।

वक्तव्य—लौंग के चूर्ण को अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखकर ठण्डी जगह में इसका संग्रह करना चाहिए।

ओलियम् केरियोफिलाई (लौंग का तेल) I. P., B. P.

नाम—ओलियम् केरियोफिलाइ Oleum Caryophylli (Ol. Caryoph.)—ले०; ऑयल ऑव क्लोव Oil of Clove—अं०; लौंग का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—ऑयल ऑव क्लोव या लौंग का तैल, लौंग (Cloves) से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ८५ से ९० प्रतिशत (v/v) यूजिनोल (Eugenol : $C_{10}H\quad O_2$.) होता है।

वर्णन—लौंग का ताजा तेल तो रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, किन्तु वायु में खुला रहने से अथवा रखने पर भी कुछ समय के बाद गाढ़े रंग का हो जाता है। यह तैल गंध एवं स्वाद में लौंग की तरह होता है। विलेयता—यह २ भाग अल्कोहल् (७० प्रतिशत) में घुल जाता है। वक्तव्य—लौंग के तेल को अच्छी तरह डाटबंद शीशियों में रखकर ठंडी जगह में रखना चाहिए और प्रकाश से इसको बचाना चाहिए।

मात्रा—१ से ३ मिनम् या बूंदें (०·०६–०·२ मि० लि०)। असंयोज्य पदार्थ (Incompatibles)—मिनरल एसिड्स (Mineral acids), चूने का पानी (लाइम वाटर Lime Water), लौह के लवण (Iron Salts) तथा जिलेटिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

लौंग की क्रिया भी प्रधानतः इसमें पाये जाने वाले उड़नशील तैल (लौंग का तेल) के कारण ही होती है। इसके इन्फ्युजन को मिक्सचर रुचिकारक बनाने के लिए (Aromatic

vehicle) मिलाते हैं। लौंग के तेल को बाह्यतः त्वचा पर लगाने से अन्य उत्पत् तैलों की भांति रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) एवं स्थानिक वेदनास्थापक (Analgesic) क्रिया होती है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर लौंग का तेल आमाशयान्त्र प्रणाली पर उद्वेष्टहर (Spasmolytic) तथा वातानुलोमन (Carminative) प्रभाव करता है। एतदर्थ यदि तेल को अकेले देना हो तो इसे चीनी (थोड़ी सी) में डालकर अथवा बतासे में डालकर या जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर दे सकते हैं। कभी-कभी लौंग के तेल (Cloveoil) को दंत मंजन चूर्णों (Dentri frices) में (१ से ३ प्रतिशत) भी मिलाते हैं। इससे एक तो यह एन्टिसेप्टिक (Antiseptic) प्रभाव करता है, दूसरे यह मसूढ़ों पर भी उत्तेजक प्रभाव करता है और साथ ही मंजन सुगन्धित भी हो जाता है। शूलयुक्त दंतकोटर (Cavities) या खोखले दांतों की वेदना में रूई का फोया लौंग के तेल में भिगोकर रखने से यह वेदनाहर (Analgesic) प्रभाव करता है।

केरिया फाइलम् या क्लोव (लवंग) के योगः—

(नाट्-ऑफिशल)

१—एक्वा केरियोफिलाइ डेस्टिलेटा Aqua Caryophylli Destillata (Aq. Caryoph. Dest.), I. P. C.—ले०; डिस्टिल्ड क्लोव वाटर Distilled Clove Water—अं०। अर्कलवंग या लौंग का अर्क—हिं०। लौंग ½ औंस (३। तो०), ४० औंस (१। सेर) जल में डालकर भवका द्वारा अर्क खींचे। इस प्रकार २० औंस (१००० मि० लि०) अर्क प्राप्त करें और ठंडा होने पर छान लें। मात्रा—१५ से ३० सि० लि० (½ से १ औंस) या १। से २॥ तोला।

२—एक्वा केरियोफिलाइ कन्सन्ट्रेटा Aqua Caryophylli Concentrata (Aq. Caryoph. Conc.), I. P. C.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड क्लोव वाटर Concentrated Clove Water—अं०। संकेन्द्रित अर्कलवंग। मात्रा—५ से १५ मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

३—इन्फ्युजम् केरियोफिलाइ Infusum Coryophylli (Inf. Caryoph.), I. P. C.—ले०; इन्फ्युजन ऑव क्लोव Infusion of Clove—अं०। कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव क्लोव २½ औंस में २० औंस डिस्टिल्ड वाटर मिलाने से तैयार होता है। किन्तु निर्माण के बाद १२ घंटे के अन्दर इसका प्रयोग कर लेना चाहिए। मात्रा— ½ से १ औंस (१५ से ३० मि० लि०)।

४—इन्फ्युजम् केरियोफिलाइ कन्सन्ट्रेटम् Infusum Caryophylli Concentratum (Inf. Caryoph. Conc.) I. P. C.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव क्लोव Concentrated Infusion of Clove—अं०। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

कोरिएन्ड्रम् (धनियाँ) I. P., B. P.
Coriandrum (Cori nd.)—ले०।
Family : Umbeiliferae (गर्जर-कुल)

नाम—धनियाँ—हिं०; धान्यक, छत्रा, कुस्तुम्बुरु, वितुन्नक—सं०; धनिया, धनेल—पं०; धने—बं०; धणे—म०; धाणा—गु०; कोरिएन्ड्राइ फ्रक्टस Coriander Fruit, Coriandri Fructus—ले०; कोरिएन्डर Coriander,—अं०।

प्राप्ति-साधन—कोरिएन्डर या धनियाँ, कोरिएन्ड्रम् सटाइवम् (Coriandrum sativum Linn.) नामक पौधे के शुष्क पक्वफल या सुखाये हुए पके फल (Dried

ripe fruits) होते हैं। इसमें कम से कम ०·३ प्रतिशत (v/w) धनिया का तैल (Volatile oil) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—धनियाँ सर्वत्र होता है। शाक-सब्जी की खेती करने वाले इनकी खेती (खेती करते) हैं। हरी धनियाँ का प्रयोग सब्जी में तथा चटनी बनाने के लिए किया जाता है। सूखे फल मसाले में पड़ते हैं।

वक्तव्य—धनियाँ आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सकों की एक प्रसिद्ध औषधि है। चरक संहिता (सू० अ० २७) सुश्रुत संहिता एवं सभी आयुर्वेदीय निघण्टुओं में इसका वर्णन मिलता है।

वर्णन। फल—धनियाँ का फल प्रायः गोलाकार (Sub globular) तथा व्यास में २ से ४ मिलिमिटर होता है। बाहर से भूरापन लिए पीले रंग का अथवा भूरे रंग का होता है। कभी-कभी फलों के आधार पर पुटपत्र से अवशेष (Remains of sepals) तथा फलों के शीर्ष पर कुक्षिवृन्त (Styles) के अवशेष लगे होते हैं। फलों पर अनुलम्बन दिशा में ८–१० रेखायें होती हैं। धनियाँ के फलों में एक विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि पाई जाती है तथा स्वाद में विशिष्ट प्रकार का स्वाद (Characteristic) तथा मसालेदार (Spicy)।

संग्रह (Storage)—धनियाँ को ठण्डी जगह में रखना चाहिए जहाँ नमी की आशंका न हो, अन्यथा यह खराब हो जाता है।

रासायनिक-संघटन—धनिये का प्रधान घटक, जिसके कारण औषधीय प्रयोग है, वह है इसका उत्पत् तैल (Volatile oil)। यह ½–१ प्रतिशत की मात्रा में पाया जाता है। इसमें (४५–६५ प्रतिशत) कोरिएन्ड्रोल Coriandrol ($C_{10}H_{18}O$.) होता है।

मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०·३ से १ ग्राम)।

कोरिएन्ड्राइ पल्विस् Coriandri Pulvis (Coriand. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड कोरिएन्डर Powdered Coriander—अं०; धनिये का चूर्ण। यह हल्के भूरे रंग का चूर्ण होता है। इसमें कम से कम ०·२ प्रतिशत (v/w) धनियाँ का उत्पत् तैल होता है। कोरिएन्डर पाउडर निम्न योगों में पड़ता है:—(१) टिंक्चुरा रिह्याइ कम्पोजिटा तथा (२) टिंक्चुरा जेंशिआनी कम्पोजिटा।

संग्रह (Storage)—धनियाँ का चूर्ण खूब अच्छी तरह डाटबन्द शीशियों या अन्य ढक्कन-युक्त पात्रों में रखना चाहिए, ताकि इसका उड़नशील तेल उड़ने न पावे। इन शीशियों या पात्रों को ठण्डी जगह में रखना चाहिए।

ओलियम् कोरिएन्ड्राइ (धनिये का तेल) I. P., B. P.

नाम—ओलियम् कोरिएन्ड्राइ Oleum Coriandri (Ol. Coriand.)—ले०; ऑयल ऑव कोरिएन्डर Oil of coriander—अं०। धनिये का तेल।

वर्णन—यह एक उड़नशील तेल होता है, जो धनिये के शुष्क एवं पके फलों से परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह एक रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो स्वाद एवं गंध में धनिये के की भाँति होता है। विलेयता—२ भाग अल्कोहल् (७०%) में विलेय होता है। धनिये का तेल निम्न आफिशल योग में पड़ता है।

(१) एक्स्ट्रैक्टम् सेन्नी लिक्विडम् (Extractum Sennae Liquidum) ।

(२) एलिक्जिर कस्करा सगरेडा (Elixir. Case. Sagr.) ।

मात्रा—१ से ३ या चिनम् बूंद० (०.०६ से ०.२ मि० लि०) । संग्रह (Storage)—धनिये के तेल को खूब अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखकर ठंढी जगह में संग्रह करना चाहिए और उसे प्रकाश से बचाना चाहिए । पुराना होने पर तेल का स्वाद खराब होने लगता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

धनियाँ सुगन्धित (**Aromatic**), उत्तेजक (**Stimulant**), वातानुलोमन (**Carminative**), दीपन-पाचन (**Stomachic**), पित्तशामक, मूत्रल तथा वाजीकर (**Aphrodisiac**) होता है । किन्तु पाश्चात्य वैद्यक में इसका प्रयोग विशेषतः इसके सौगन्धिक गुण एवं वातानुलोमन होने के कारण किया जाता है । रेचक औषधियों के साथ इसे मरोड़ (**Griping**) के उपद्रव को कम करने के लिए मिलाते हैं । धनियाँ दाहशामक (**Refrigerant**) तथा हृद्य भी होती है । आयुर्वेद एवं यूनानी चिकित्सा में धनिये का प्रचुर प्रयोग होता है ।

कार्डेमोमाइ फ्रक्टस (छोटी इलायची) I. P., B. P.
Cardamomi Fructus (Cardam. Fruct.)
Family : Zingiberaceae (आर्द्रक-कुल)

नाम—दि लेसर या मलाबार कारडेमॅम् **The Lesser or Malabar Cardamom**—अं०; छोटी इलायची (इलाची, लाची), गुजराती इलायची, सफेद इलायची—हिं०; एला, सूक्ष्मैला, क्षुद्रैला—सं०; हील ववा, हील उन्सा, इलायची खुर्द—फा०; काकुलः सिगार, शूशमीर—अं०; मलावारी इलायजी—बम्बई ।

प्राप्ति-साधन—कार्डेमम् फ्रूट, एलिटेरिआ कार्डेमोमम् (**Elettaria cardamomum Maton var. minus cula Burkill**) नामक वनस्पति के फल होते हैं, जिनको पकने के पूर्व संग्रहीतकर सुखा लिया जाता है । इसके बीजों में कम से कम ४ प्रतिशत उड़नशील तेल (इलायची का तेल) होता है । **औषधि में इन्हीं बीजों का व्यवहार होता है ।**

उत्पत्ति-स्थान—कनाडा, दक्षिण भारत में मैसूर, कुर्ग ट्रावन्कोर तथा कोचीन आदि में इलायची के स्वयंजात (Wild) पौधे प्रचुरता से पाये जाते हैं । लंका तथा दक्षिण भारत में दकन प्रायद्वीप (Deccan Peninsula) के उन प्रान्तों में जहाँ काफी, चाय एवं रबर की खेती की जाती है, छोटी इलायची की भी खेती की जाती है ।

वर्णन । फल (Fruit)—छोटी इलायची के फल अण्डाकार (Oval) या आयताकार लम्ब गोल (Oblong) तथा २ सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं । रंग में ये फल पीताभ-हरित् से खाकस्तरी-हरित वर्ण के (Green to pale buff) होते हैं । वाह्य तल पर साधारण सिकुड़े हुए (Shrunken), तथा शीर्ष के ओर का अग्र किंचित् चोंच की भांति मुड़ा हुआ (Shortly beaked at the apex) । वाह्यतल प्रायः चिकना अथवा अनुलम्ब दिशा में सूक्ष्म रेखाओं से युक्त (Longitudinally striated) । फल ३ कोष्ठों वाला (3—Celled) तथा प्रत्येक

कोष्ठ में बीजों की दो पंक्तियां होती है। बीज (Seeds) लाली लिए हुए हल्के या गाढ़े रंग के (Pale to dark reddish-brown) लगभग चार मिलिमिटर लम्बे तीन मि० मि० चौड़े रूप रेखायें अनियमित रूप से कोणाकार (Irregularly angular) तथा बाह्यतल अनुप्रस्थ दिशा में किंचित् झुर्रीदार (transversely wrinkled), बीज का अनुप्रस्थ विच्छेद करने पर कटा हुआ तल (Transversely nut surface) का बाह्य आवरण भूरे रंग का तथा अन्दर का गूदेदार भाग सफेद रंग का (Brown testa covering a white starchy perisperm) होता है। वक्तव्य—औषधार्थ इलायची के बीजों का ही व्यवहार होता है। अतः जब औषधि बनानी हो बीजों को निकालकर ताजा ही व्यवहार में लाना चाहिए।

वक्तव्य—आयुर्वेदीय एवं यूनानी निघण्टुओं में छोटी-बड़ी भेद से २ प्रकार की इलायची का वर्णन मिलता है। बड़ी इलायची का ज्यादा उपयोग मसाले में किया जाता है। पाश्चात्य वैद्यक में औषधीय प्रयोग के लिए केवल छोटी इलायची (जिसका वर्णन अभी किया गया है) का ही व्यवहार होता है, किन्तु आयुर्वेद यूनानी में दोनों ही इलायची व्यवहृत होती हैं। बड़ी इलायची को लेटिन में Amomum subulatum Roxb. तथा अंग्रेजी में दि ग्रेटर कार्डेमम (The Greater Cardamom) कहते हैं। संस्कृत, हिन्दी, अरबी एवं फारसी भाषाओं में इसको क्रमशः, स्थूलैला तथा बृहदेला, बड़ी इलायची, काकुलेकुबार एवं हील कलाँ कहते हैं। इसके पौधे भी छोटी इलायची की तरह होते हैं नैपाल के पर्वती भागों में तथा दक्षिण भारत के समुद्र तट के समीपवर्ती भागों में स्वयं जात होते है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

इलायची के बीज उत्तेजक, दीपन तथा **वातानुलोमन** होते हैं। अतएव रेचक औषधियों के साथ मरोड़ के उपद्रव के निराकरण के लिए इलायची के बीज मिलाते हैं। इसके अतिरिक्त वातानुलोमन होने से उदर-अध्मान (Flatulence) में भी इसका प्रयोग किया जाता है। **टिंक्चर कार्ड० को०** का उपयोग मिक्सचर्स को रंगीन एवं रुचिकारक बनाने के लिए किया जाता है।

(ऑफिशल)

१—टिंक्चुरा कार्डेमोमाइ कम्पोजिटा Tinctura Cardamomi Composita (Tinct. Cardam. Co. : टिंक्चर कार्ड० को०)—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव कार्डेमम् Compound Tincture of Cardamom—अं०। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

२—छोटी इलायची के बीज (Cardamom Seeds) इण्डियन फार्माकोपिया (I. P.) के निम्न योगों में पड़ते हैं :—

(१) पल्विस् क्रेटी एरोमेटिकस् Pulvis Cretae Aromaticus।

(२) पल्विस् क्रेटी एरोमेटिकस् कम् ओपियो (Pulv. Cret. Aromat. Cum Opio.)।

(३) टिंक्चुरा रिहाइ कम्पोजिटा (Tinct. Rhei Co.)।

(४) टिंक्चुरा पिक्रोर्हाइजी कम्पोजिटा (Tinctura Picrorhizae Composita)।

(५) एक्स्ट्रैक्टम् कोलोसिन्थिडिस् कम्पोजिटम् (Extractum Colocynthidis Compositum)। इनमें प्रथम तीन योग ब्रिटिशफार्माकोपिया (१९५३) में भी ऑफिशल हैं।

(नॉट्-ऑफिशल)

३—टिंक्चुरा कार्डेमोमाइ एरोमेटिका Tinctura Cardamomi Aromatica (Tinct. Cardam. Aromat.), I. P. C.—ले०; एरोमेटिक टिंक्चर ऑवकार्डेमम् Aromatic Tincture of Cardamom—अं० । पर्याय—कार्मिनेटिव टिंक्चर Carminative Tincture । मात्रा—२ से १० मिनम् (०·१२ से ०·६ मि० लि०) ।

कैरम् Carum (Carum) I. P., B. P.—ले० ।

(विलायती कृष्णजीरक या स्याहजीरा)

Family : Umbelliferae (गर्जर-कुल)

पर्याय—करुइ फ्रक्टस **Carui Fructus**—ले०; केरावे **Caraway**, केरावे फ्रूट **Caraway Friut**, केरावे सीड्स **Caraway Seeds**—अं० ।

प्राप्ति-साधन—कारम् या कारावे, केरम् केरवी (**Carum carvi Linn.**) नामक वनस्पति के सुखाये हुए पक्वफल (**Dried ripe fruits**) होते हैं। इसमें कम से कम ३½ प्रतिशत (v/w) उत्पत् तैल या उड़नशील तेल (**Volatile oil**) होता है।

नाम—विलायती जीरा—हिं०, म०, गु०; कुरूया, करोया, कमूने रूमी, कमूने अरमनी—अ०; करोया, कुरूया, ज़ीरए रूमी; ज़ीरए अरमनी, शाहजीरा—फा०; विलायती जीरा—बं०; करोया—द० ।

उत्पत्ति-स्थान—यूरोप और ईरान। केरम् केरवी के छोटे-छोटे द्विवर्षायु खड़े पौधे (**Erect biennial herbs**) होते हैं जो मध्य एवं उत्तरी यूरोप में सर्वत्र स्वयंजात पाये जाते हैं। उक्त प्रान्तों में इसकी प्रचुर मात्रा में खेती भी की जाती है। हालैंड (**Holland**) में यह काफी मात्रा में बोया जाता है। जब फल पक जाते हैं तो पौधों को काटकर उन्हें पीटकर फलों को पृथक प्राप्त किया (**Obtained by threshing**) जाता है। भारतवर्ष में इसका आयात प्रधानतः इंगलैंड तथा लेवांट (**Levant**) से होता है।

भारतवर्ष में काश्मीर में स्याहजीरे की प्रचुरता से खेती की जाती है। इसके अतिरिक्त यह चम्बा (**Chamba**), कुमांयू तथा गढ़वाल में भी बोया जाता है। उक्त प्रदेशों में यह कहीं-कहीं जंगली (**Wild**) रूप से भी पाया जाता है।

वर्णन—यह अनुलम्बाकार क्रीमोकार्प प्रकार का फल (An elongated cremocarp) होता है। किन्तु दोनों मेरिकार्प (Meriocarps) फलवृन्त (Pedicel) से प्रायः पृथक रहते हैं। मेरिकार्प लगभग ७ मि० मि० तक लम्बे तथा २ मि० मि० तक चौड़े होते हैं, ये किंचित् वक्राकार एवं दोनों अग्रों की ओर उत्तरोत्तर नुकीले (Slightly curved and tapering towards both ends) होते हैं। फलों (बीजों) का वाह्यतल चिकना एवं भूरे रंग का तथा इस पर अनुलम्बन दिशा में ५ पीताभवर्ण की हल्की रेखायें (Primary ridges) होती हैं। विलायती स्याहजीरे में एक विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि एवं स्वाद होता है।

प्रतिनिधि द्रव्य एवं मिलावट (**Substitutes and Adulterants**)—मंहगा होने के कारण स्याहजीरे में अनेक प्रकार की व्यावसायिक गड़बड़ियाँ मिलती हैं। कभी-कभी,

जिन बीजों से तेल निकाल लिया गया है, उनको मिला दिया जाता है। ऐसे बीजों के रंग में फर्क हो जाता है (काले पड़ जाते हैं) तथा बाहर से सिकुड़े हुए (Shriuelled appearance) होते हैं। इनमें उत्पत् तैल निकल जाने के कारण सुगंधि भी कम पाई जाती है। भारतवर्ष में मिलावट के लिए प्रायः रंगे हुए सोआ के बीजों (Dill friuts) का व्यवहार किया जाता है। औषधीय दृष्टि से लीवेंट प्रान्त का स्याहजीरा निकृष्ट कोटिका होता है, अतएव इसका उपयोग भी मिलावट के लिए होता है।

कारी पल्विस Cari Pulvis (Cari Pulv.) पाउडर्ड करावे Powdered—Caraway—अं०; स्याहजीरे का चूर्ण—हिं०। यह हल्के भूरे रंग (Fawn to brown) का चूर्ण होता है। वक्तव्य—करावे पाउडर या (स्याहजीरे के चूर्ण) को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखकर (ताकि इसका उड़नशील तेल उड़ने न पावे) ठंढे स्थान में रखना चाहिए।

ओलियम् कारी (स्याहजीरे का तेल) I. P.

Oleum Cari (Ol. Cari.),—ले०।

पर्याय—ओलियम् कारुवी Oleum Carui—ले०; ऑयल ऑव करावे Oil of Caraway—अं०। स्याहीजीरे का तेल—हिं०।

वर्णन—ऑयल ऑव करावे या स्याहजीरे का तेल एक उड़नशील तेल होता है, जो कारम् कारवी नामक उपरोक्त वनस्पति के सुखाये हुए पके फलों (या जिनको व्यवहार में बीज भी कह देते हैं) अर्थात् स्याहीजीरे से परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ५३ प्रतिशत से लेकर ६३ प्रतिशत तक कारवोन (Corvone : $C_{10}H_{14}O$.) पाया जाता है।

स्याहजीरे का तेल एक रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो स्वाद एवं गंध में स्याहजीरे की भाँति होता है। विलेयता—८ भाग अल्कोहल् (८० प्रतिशत) में विलेय (घुलनशील) होता है।

मात्रा—(I. P. Dose) १ से ३ बूंद या मिनम् (०·०६ से ०·२ मि० लि०)।

वक्तव्य—स्याहजीरे के तेल को अच्छी तरह डाटबंद शीशियों में रखकर, उनका संग्रह ठंढी जगह में करना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

रासायनिक संघटन—(१) कारवोन (Carvone); (२) टर्पीन (Terpene) या डी-लाइमोनीन (d-limonene) इसे कारवीन (Carvene) भी कहते हैं। (३) साइमीन (Cymene)।

(ऑफिशल योग)

१—टिंक्चर कार्ड० को० (Tinct. Cardam. Co.)

(नॉट-ऑफिशल)

१—एक्वा कारी डेस्टिलेटा Aqua Cari Destillate (Aq. Cari Dest.) I. P. C.—ले०; डिस्टिल्ड करावे वाटर Distilled Caraway Water—अं०; स्याहजीरे का अर्क—हिं०। मात्रा—½ से १ औंस (१५ से ३० मि० लि०)।

२—एक्वा कारी कन्सन्ट्रेटा Aquna Cari Concentrata (Aq. Cari Conc.), I. P. C.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड करावे वाटर Concentrated Caraway Water—अं०। मात्रा—५ से १५ मिनम् या ०·३ से १ मि० लि०।

क्युमिनम् Cuminum (Cumin.) I. P.—ले०;

(श्वेत जीरा)

Family : Umbelliferae (गजर-कुल)

प्राप्ति-साधन—क्युमिन (Cumin—अं०) या सफेद जीरा, क्युमिनम् साइमिनम् Cuminum cyminum Linn. नामक वनस्पति के पक्वफल (Ripe fruit) होता है। (व्यवहार में जीरे के फलों के लिए लोग बीज का भी प्रयोग कर देते हैं, किन्तु वस्तुतः यह फल ही होता है)।

नाम—जीरा, सफेद जीरा—हिं०; जीरक, अजाजी, जरण—सं०; जीरा सुफेद, चिट्टा जीरा—पं०; जीरो अच्छो—सिंध; जीरे—बं०; जिरें—म०; जीरु—गु०; जीरिगे—कना०; जीलकरी—ते०; चीरकम्—ता०; जीरकम्—मल०; जीर (ह्) जीरा—फा०; कमून—अं०।

वक्तव्य—'जीरा' शब्द का प्रयोग व्यवहार में फलों के लिए तथा इसके पौधे के लिए दोनों ही के लिए होता है।

उत्पत्ति-स्थान—भारतवर्ष में बंगाल तथा आसाम को छोड़कर प्रायः सभी प्रान्तों में इसकी खेती की जाती है। मिस्र (Egypt) तथा उत्तरी अमेरीका के भूमध्यसागर तटीय प्रान्तों एवं दक्षिण-पूर्वी यूरोप के भूमध्यसागरतटीय प्रदेशों में प्रचुरता से इसकी खेती की जाती है।

वर्णन। फल—जीरे का फल ४ से ६ मिलिमिटर (mm.) लम्बे तथा २ मिलिमिटर तक चौड़े तथा आकारतः लम्ब-गोलाकार (Ellipsoid and elongated) होते हैं, जो अग्रों की ओर क्रमशः पतले (कम चौड़े) होते जाते (Tapering at the ends) हैं। रंग में ये खाकस्तरी लिए हल्के भूरे रंग के होते हैं। फलों पर अनुलम्ब दिशा में अनेक उन्नत रेखायें (Ridges) होती हैं। जीरे में विशिष्ट प्रकार की गंध एवं स्वाद पाया जाता है, जो बहुत कुछ (Anise) से मिलता-जुलता है। जीरे के परिस्रवण द्वारा एक उत्पत् तैल प्राप्त किया जाता है, जिसे जीरे का तेल (Oleum cumini) कहते हैं।

मात्रा (I. P. Dose)—५ से १५ ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम) या २½ रत्ती से १ माशा।

रासायनिक संघटन—(१) उत्पत् तैल (Essential oil) २½ से ४ प्रतिशत; (२) १० प्रतिशत स्थिर तेल (Fatty oil) तथा (३) ६ से ७ प्रतिशत पेंटोसन (Pentosan)।

ओलियम् क्युमिनाइ (जीरे का तेल), I. P.

(Oleum Cumini)

नाम—ओलियम् क्युमिनाइ Oleum Cumini (Ol. Cumin.) I. P.—ले०; ऑयल ऑव क्युमिन Oil of Cumin—अं०; सफेद जीरे का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—जीरे का तेल, जीरे के पक्व फलों से परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम १६% (w/w) क्युमिन एल्डिहाइड (Cuminic aldehydes : $C_{10}H_{12}O$. होता है।

वर्णन—जीरे का तेल ताजी अवस्था में रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो रखने पर गाढ़े रंग का (Darker on keeping) हो जाता है। इसमें विशिष्ट प्रकार की गंध होती है, जो कुछ-कुछ अरुचिकर (Unpleasant) होती है। स्वाद में किञ्चित् तिक्त एवं मसालेदार (Spicy) विलेयता—११ भाग अल्कोहल् (८० प्रतिशत) में विलेय होता है। मात्रा (I. P. Dose)— १ से ३ बूंद या मिनम् (०·०६ से ०·०२ मि० लि०)।

वक्तव्य—जीरे के तेल को शीशे की डाटवाली शीशियों में रखकर ठण्डी जगह में रखना चहिए तथा प्रकाश से बचाना चाहिए।

रासायनिक संघटन—जीरे के तेल में २० से ४० प्रतिशत जीरे का एल्डिहाइड या क्युमिनिक एल्डिहाइड (Cuminic aldehyde : $C_{10}H_{12}O$ (p-isoprophyl-benzaldehyde होता है। इसके अतिरिक्त इसमें पी-साइमीन (p-cymene), क्युमीन (cumene), पाइनीन (Pinene), डाइपेंटीन (Dipentene) आदि तत्त्व भी पाये जाते हैं।

योग :—

१—एक्वा क्युमिनाइ Aqua Cumini (Aq. Cumin), I. P.—ले०; क्युमिन वाटर Cumin Water—अं०; अर्कजीरा—हिं०। 1000 मि० लि० या सी० सी० में २ मिलिलिटर (३० बूंद) जीरे का तेल मिलाने से बनता है। मात्रा (I. P. Dose)—१५ से ३० मि० लि० (½ से १ औंस)।

एनिथम् Anethum (Aneth.), I. P.

(सोया)

Family : Umbelliferae (गर्जर-कुल)

पर्याय—एनिथाइ फ्रक्टस् Anethi Fructus—ले०; डिल Dill, डिल फ्रूट Dill Fruit—अं०; सोया, सोया के फल (बीज)—हिं०।

प्राप्ति-साधन—डिल (सोया या सोआ), एनिथम् ग्रेविओलेन्स (Anethum graveolens Linn.) नामक वनस्पति के शुष्क पक्वफल या सुखाये हुए पके फल (Dried ripe fruits) होते हैं।

वक्तव्य—सोया के देशी भेद को एथिनम् सोआ Anethum sowa Kurz कहते हैं।

नाम—सोया, सोआ—हिं०; शतपुष्पा, अतिच्छत्रा—सं०; शिबित्त—अ०; सुदाब (?) —फा०; शलुफा—बं०; सुवा—गु०, पं०; शेपु—म०।

उत्पत्ति-स्थान—सोया की समस्त भारतवर्ष में खेती की जाती है। जाड़े के दिनों में अन्य शाक-सब्जियों के साथ सोआ भी मिलता है। यूरोप में विशेषतः भूमध्यसागर तटीय भागों में सोआ प्रचुरता से बोया जाता है।

वर्णन। फल (बीज)—सोया का बीज चौड़ा अंडाकार (Broadly oval) तथा पृष्ठतल की ओर चपटा (Compressed dorsally) होता है। मेरिकार्प (Mericarps) प्रायः पृथक से होते हैं और ४ मि० मि० लम्बे, २-३ मि० मि० चौड़े तथा १ मि० मि० मोटे होते हैं।

रासायनिक-संघटन--सोया के फलों ३-३½ प्रतिशत (१) उत्पत् तैल (Oleum anethi) होता है।

एनिथाइ पल्विस् Anethi Pulvis (Aneth. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड डिल Powdered Dill—अं०। सोया का चूर्ण--हिं०। यह हल्के भूरे रंग का होता है।

(ऑफिशल)

ओलियम् एनिथाइ (Oleum Anethi) I. P., B. P.

(सोया का तेल)

नाम—ओलियम् एनिथाइ Oleum Anethi (Ol. Aneth.)—ले०; ऑयल ऑव डिल Oil of Dill—अं०; सोआ का तेल--हिं०। इसमें कम से कम ४३ प्रतिशत से लेकर ६३ प्रतिशत (w/w) तक कार्वोन (Carvone : $C_{10}H_{14}O$) होता है।

वर्णन--यह उत्पत् तेल होता है, जो सोया के फलों के परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है। ताज़ी अवस्था में यह रंगहीन या हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो रखने पर कालान्तर से गाढ़े रंग का हो जाता है। इसमें सोआ की विशिष्ट गंध पाई जाती है, और स्वाद में पहले मधुर एवं सुगन्धित, किन्तु बाद में कड़वा (Pungent) एवं तीक्ष्ण मालूम होता है। विलेयता--१५.५° तापक्रम पर बराबर मात्रा अल्कोहल् (९०%) में विलेय होता है, किन्तु ८० प्रतिशत अल्कोहल् के १० भाग में १ भाग के अनुपात से विलेय होता है। मात्रा (I. P. Dose)—१ से ३ बूंद या मिनम् (०.०६ से ०.२ मि० लि०)।

वक्तव्य --सोया के तेल को अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखकर ठंढी जगह में रखना चाहिए और इसे प्रकाश से बचाना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

एक्वा एनिथाइ कन्सन्ट्रेटा Aqua Anethi Concentrata (Aq. Aneth. Conc.) I.P., B.P. --ले०; कन्सट्रेटेड डिल वाटर Concentrated Dill water—अं०। मात्रा--५ से १५ मिनम् (०.३ से १ मि० लि०)।

(नॉन ऑफिशल)

१—एक्वा एनिथाई डेस्टिलेटा Aqua Anethi Desfillata (Aq. Aneth. Dest.), I. P. C.-ले०; डिस्टल्ड डिल वाटर Distilled Dill water —अं०; अर्क सोआ—हिं० मात्रा--½ से १ औंस (१५ से ३० मि० लि०) या १। तोला से २॥ तोला।

२—Infusum Anethi (Inf, Aneth.), I, P, C,--ले०; इन्फ्युजम् ऑव एनिथम् Infusion of Anethum—अं०; सोया का फाण्ट या सोया की चाय--हिं०। मात्रा—१५ से ३० मि० लि० या ½ से १ औंस।

एनिसम् (Anisum Anis.), I. P.

Family : Umbelliferae (गर्जर-कुल)

पर्याय—एनिसीड Aniseed; एनिस फ्रूट Anise Fruit—अं०।

प्राप्ती-साधन—एनिस, पिम्पिनेल्ला एनिसम् Pimpinella anisum Linn नामक वनस्पति के पक्व एवं सुखाये हुए फल होते हैं। इसमें कम से कम २% (v/w) उत्पत् तैल (Volatile oil) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—एनिस, यूनान, मिश्र तथा एशिया-माइनर का आदिवासी पौधा है। इसके अतिरिक्त स्पेन, बल्गेरिया तथा दक्षिणी रूस में इसकी प्रचुरता से खेती होती है।

वर्णन—एनिस के एकवर्षायु छोटे-छोटे पौधे होते हैं। फल—एनिस का फल अंडाकार (ovoid) पार्श्वों में किंचित् चपटा क्रीमोकार्प (Cremocarp) होता है, जो ३ से ५ मि० मि० लम्बा तथा २ मि० मि० चौड़ा होता है। फलों में वृन्त (Pedicel) लगा हुआ होता है। रंग में ये हरिताभ-खाकस्तरी (Greenish-grey) या भूरे रंग के होते हैं। फलों में एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि होती है, तथा स्वाद में ये मीठे एवं सुगन्धित होते हैं।

रासायनिक संघटन—एनिस में (१) उत्पत् तैल १½ से ४ प्रतिशत तक होता है; इसके अतिरिक्त १५ से २० प्रतिशत एक स्थिर तैल (Fixed oil), लगभग १८% प्रोटीन तथा कोलीन, शर्करा म्युसिलेज एवं स्टार्च आदि तत्त्व पाये जाते हैं। उत्पत् तैल में ८४–८७ प्रतिशत तक एनिथोल (Anethole) तथा १२–१५ प्रतिशत मेथिल चविकोल (Methyl chavicol) होता है।

ओलयम् एनिसाइ Oleum Anisi (Ol. Anis.)

Family Umbelliferae (गर्जर-कुल)

नाम—ओलियम् एनिसाइ Oleum Anisi (Ol. Anis.)—लै०; ऑयल ऑव एनिसीड Oil of Aniseed, ऑयल ऑव एनिस Oil of Anise—अं०।

प्राप्ति-साधन—ऑयल ऑव एनिस भी एक उड़नशील तैल होता है, जो निम्न वनस्पतियों के शुष्क पक्वफलों से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

(१) पिम्पिनेल्ला एनिसम् Pimpinella anisum Linn.

(२) इलिसियम् वेरम् Illicium verum Hook. f. (Family : Magnoliaceae) : स्टारएनिस Star anise—अं०।

उत्पत्ति-स्थान— फारस तथा यूरोप। यह मिस्र तथा लेवेंट (Levant) का आदिवासी पौधा है। वहाँ से यूरोपीय देशों यथा फ्रांस, जर्मनी, स्पेन, इटली आदि देशों में प्रचारित हुआ। फारस में प्रचुरता से इसकी खेती की जाती है। भारतवर्ष में इसका आयात प्रधानतः फारस से ही होता है। आजकल भारतवर्ष में उत्तरप्रदेश, पंजाब एवं उड़ीसा प्रान्त में यहाँ वहाँ यह बोया जाने लगा है।

वक्तव्य—एनिस का उल्लेख आयुर्वेदीय ग्रंथों में नहीं मिलता। यह यूनानी या मिस्री चिकित्सा पद्धति की एक प्रसिद्ध औषधि है। फारसी में इसे 'राज़ियानह् Raziannh' कहते हैं, जिसका अरबीकृत रूप 'राज़ियानज Razianaj' है। भारतवर्ष में तथा भारतीय चिकित्सा में इसका प्रचार मुसलमानों द्वारा हुआ। यह औषधि प्रधानतः फारस से बम्बई के बाजार में आती है, जहाँ इसका बाजारू नाम 'एरवादोस Ervados' भी है। यह नाम सम्भवतः इसके पुर्तगाली नाम 'हर्बा दोसी Herba doce' का अपभ्रंश है।

वर्णन—एनिस का तेल रंगहीन अथवा हलके पीले रंग के द्रव के रूप में होता है, जिसमें एनिस के फलों की विशिष्ट गंध आती है। स्वाद में मधुर एवं सुगन्धित। ठंडा होने से यह मणिभीय स्वरूप में परिणित हो जाता (Crystalises) है। विलेयता—३ भाग एल्कोहल

(६० प्रतिशत) में विलेय होता है। विलयन किंचित् धुंधला (Opalescent) हो सकता है। मात्रा—१ से ३ बूंद या मिनम् (०·०६ से ०·२ मि० लि०)।

वक्तव्य—एनिस के तेल को अच्छी तरह डाटवन्द पात्रों में रख कर ठंढी जगह में संग्रह करना चाहिए और इसे प्रकाश से बचाना चाहिए। यदि तेल जम गया हो तो प्रयोग के पूर्व इसको गर्म कर पिघला लेना चाहिए।

रासायनिक-संघटन—इसमें (१) ८०–९० प्रतिशत एनिथोल (Anethole); (२) एनिसिक एल्डिहाइड (Anisic aldehyde) तथा (३) १२–१५ प्रतिशत मेथिल चविकोल (Methyl chavicol) पाया जाता है।

योगः—

१—एनिस का तेल निम्न ऑफिशल योगों में पड़ता है:—

(१) एलिक्जिर कॅस्करी सगरेडी (Elix. Case. Sagr.)।

(२) टिंचुरा ओपियाई कम्फोरेटा (Tinct. Opii. Camph.)।

(नॉट-ऑफिशल)

२—एक्वा एनिसाइ कन्सन्ट्रेटा Aqua Anisi Concentrata (Aq. Anis.), I. P. C.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड एनिस वाटर Concentrated Anise Water—अं० मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

३—एक्वा एनिसाइ डेस्टिलेटा Aqua Anisi Destillata (Aq. Anis. Dest.), I. P. C.—ले०; डिस्टिल्ड एनिस वाटर Distilled Anise Water—अं०।

४—एलिक्जिर एनिसाइ Elixir Anisi (Elix. Anise.), I. P. C,—ले०; एलिक्जिर एनिस Elixir of Anise—अं०। मात्रा—२ से ८ मि० लि० (½ से २ फ्लुइड ड्राम) या ३० से १२० बूंद।

५—स्प्रिटस एनिसाइ Spiritus Anisi (Sp, Anis.), I. P. C.—ले०; स्प्रिट ऑव एनिस Sperit of Anis—अं०। मात्रा—५ से २० बूंद या मिनम् (०·३ से १·२ मि० लि०)।

फिनिक्युलम् Foeniculum (Foenic.) I. P.—ले०; (सौंफ)

Family : Umbelli ferae

पर्याय—फिनिक्युलाइ फ्रक्टस् Foeniculi Fructus—ले०; फेनेल Fennel, फेनेल फ्रूट Fennel Fruit—अं०; (बड़ी) सौंफ—हिं०; मिश्रेया, मिशि, मधुरिका—सं०; सौंफ—पं०; मौरी—बं०; बड़ीशेप—मं०; वडफ—सिं०; वरियाली—गु०; बादयान—क०; राज़ियान (ह्) बादियान—फा०; राज़ियानज—अ०।

प्राप्ति-साधन—फेनेल या सौंफ, फिनिक्युलम् वलगेयर (Phoeniculum vulgare Mill.) नामक पौधे के लगाये हुए पौधों (Cultivated plants) शुष्क किए हुए पक्क फल (Dried ripe fruits) होते हैं। इसमें कम से कम १·४ प्रतिशत (v/w) उड़नशील तेल (Volatile oil) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—समस्त भारतवर्ष में (६००० फुट की ऊँचाई तक) इसकी खेती की जाती है। विदेशीय सौंफ की अपेक्षा देशी सौंफ के बीज (फल) छोटे होते हैं। औषधि के अतिरिक्त इनका उपयोग मसाले में तथा ठण्डाई में डालने के लिए भी करते हैं।

वक्तव्य—अरबी एवं फारसी निघण्टुओं में इसके 'राज़ियानज' एवं 'राज़ियानह्' नाम 'एनिस' नामक औषधि के लिए भी दिए गए हैं। किन्तु दोनों पृथक्-पृथक् चीजें हैं। बाजार में इसका 'बादियान' नाम अधिक चालू है। सौंफ का उल्लेख आयुर्वेदीय निघण्टुओं में भी विस्तार से है।

वर्णन—सौंफ के फल लगभग १० मि० मिटर लम्बे तथा ४ मिलिमिटर चौड़े तथा आकार में लम्बगोल होते हैं, किन्तु चौड़ाई क्रमशः आधार एवं अग्र की ओर कम होता है (Tapering slightly towards base and apex)। बाहर की ओर अनुलम्बन दिशा में धारियों या रेखाओं के कारण पंचकोणीय (5-sided) मालूम होता है। फलों के आधार पर प्रायः पुष्पवृन्त (Pedicel) लगा होता है, तथा इसी प्रकार शीर्ष (Apex) पर कुक्षिवृन्त का अवशेष लगा होता (Crowned with a conical stylopode) है। सौंफ को सूंघने पर मीठी सुगन्धि आती है। स्वाद में यह मधुर एवं सुगन्धित होता है। संग्रह (Storage)—ठंडी जगह में रखना चाहिए जहाँ नमी न हो।

रासायनिक-संघटन—सौंफ के बीजों में १ से २·९ प्रतिशत एक उड़नशील तैल (Volatile oil) तथा ८ से १५½ प्रतिशत स्थिरतैल (Fixed oil) पाया जाता है। उड़नशील तैल में ६० प्रतिशत तक एनिथोल (Anethol : anise camphor $C_{16}H_{12}O$.) पाया जाता है। इसके अतिरिक्त फेंचोन (d-fenchone), मेथिल चविकोल (Methyl chavicol) आदि तत्व भी पाये जाते हैं।

फिनिक्युलाइ पल्विस Foeniculi Pulvis (Foenic. Pulv.)—लै०; पाउडर्ड फेनेल Powdered Fennel—अं०; मिश्रेया चूर्ण—सं०; सौंफ का चूर्ण—हिं०। यह हरिताभ-पीत (Greenish-yellow) से पीताभ-भूरे (Yellowish-brown) रंग का होता है। पाउडर्ड फेनेल या सौंफ का चूर्ण पल्विस ग्लिसर्हाइजा कम्पोजिटस् (पल्व० ग्लिसर्हाइज़ा को० Pulv. Glycyrhizae Co.) नामक ऑफिशल योग में पड़ता है।

संग्रह—पाउडर्ड फेनेल या सौंफ के चूर्ण को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए ताकि इसका सुगन्धित तैल न उड़ने पावे। इन पात्रों का संग्रह ठण्डी जगह में करना चाहिए।

ओलियम् फिनिक्युलाइ (सौंफ का तेल), I. P.

Oleum Foeniculi (Ol. Foenic) (लै०)।

नाम—ऑयल ऑव फेनेल Oil of Fennel—अं०; सौंफ का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—सौंफ का तेल एक उड़नशील तैल होता है, जो सौंफ के फलों को जल के साथ परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें सौंफ का गंध एवं स्वाद पाया जाता है, विलेयता—यह १ भाग अल्कोहल् (९० प्रतिशत) तथा ८ भाग अल्कोहल् (८० प्रतिशत) में विलेय होता है। मात्रा (I. P. Dose)—१ से ३ मिनिम् (०·०६ से ०·२ मि० लि०)।

कृष्णजीरक, जीरक, सोआ, सौंफ एवं एनिस आदि के गुण-कर्म-एवं प्रयोगः—

उक्त सभी, द्रव्य सुगन्धित (Aromatic), उत्तेजक (Stimulant), एवं वातानुलोमन (Carminative) तथा एन्टिसेप्टिक होते हैं। कुछ द्वारा इनका प्रयोग उदराध्मान

(Flatulence) एवं आन्त्रशूल (Intestinal Colic) के निवारण के लिए भी किया जाता है। एनिस (Anise) का प्रयोग कफनिस्सारक मिक्सचर में मिलाने के लिए भी किया जाता है। दन्तमंजनों एवं मुखधावनद्रवों को रुचिकारक बनाने के लिए भी इसको मिलाते हैं।

योग :—

१—एक्वा फिनिक्युलाइ कन्सन्ट्रेटा Aqua Foeniculi Concentrata (Aq. Foenic. Conc.), I. P.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड फेनेल वाटर Concentrated Fennel Water—अं०। मात्रा—०·३ से १ मि० लि० (५ से १५ मिनम्)।

२—एक्वा फिनिक्युलाइ डेस्टिलेटा Aqua Foeniculi Destillata (Aq. Foenic. Dest.) I. P. L.—ले०; डिस्टिल्ड फेनेल वाटर Distilled Fennel Water—अं०; अर्क सौंफ, सौंफ का अर्क—हिं०; अर्क वादियॉन—फा०, उर्दू०।

३—इन्फ्युजम् फिनिक्युलाइ Infusum Foeniculi (Inf. Foenic.), I. P. C.—ले०; फ्रेश इन्फ्युजन ऑव फेनेल Fresh Infusion of Fennel—अं; सौंफ का अभिनव फाण्ट—सं०, हिं०। मात्रा—१५ से ३० मि० लि० (½ से १ फ्लुइड औंस)।

लाइमोनिस् कॉर्टेक्स सिक्केटस् (B. P.)

(नीबू का सूखा छिलका)

Family : Rutaceae (जम्बीर-कुल)

नाम—लाइमोनिस् कॉर्टेक्स सिक्केटस् Limonis Cortex Siccatus (Limon. Cort. Sicc.)—ले०; ड्राइड लेमन पील Dried Lemon Peel—अं०; नीबू का सूखा छिलका—हिं०; शुष्कजम्बीर त्वक्—सं०।

प्राप्ति-साधन—यह साइट्रस् लाइमनं Citrus limon (L.) Burm. f. नामक वृक्ष के पके अथवा पकने से पूर्व संग्रहीत फलों के फलभित्ति या पेरिकार्प (Pericarp) का वाह्यावरण होता है, जिसको फलों से पृथक कर सुखाकर रख लिया जाता है। इसमें कम से कम २½ प्रतिशत (v/w) उड़नशील तेल होता है।

वर्णन—यह फीते के आकार के अथवा छोटे बड़े भिन्न-भिन्न आकार के टुकड़ों के रूप में होता है। वाहरी तल पीले रंग का तथा कुछ खुरदुरा होता है। इसमें फलभित्ति के अन्तस्तल का सफेदपर्त (White Spongy part) जहां तक हो सके कम से कम होना चाहिए। सूखे हुए टुकड़ों को तोड़ने पर खट से टूट जाते (Fracture Short) हैं। छिलके में उड़नशील तेल होने के कारण इनको सूंघने पर एक सुगन्धि आती है और स्वाद में सुगन्धित तथा तिक्त (Aromatic and bitter) होता है।

सुखाया हुआ नीबू का छिलका इन्फ्युजम् जेन्शिआनी कम्पोजिटम् कन्सन्ट्रेटम् (Inf. Gent. Co. Conc.) नामक ऑफिशल योग में पड़ता है।

लाइमोनिस् कॉर्टेक्स रिसेन्स Limonis Cortex Recens (Limon. Cort. Rec.), I. P., B. P.—ले०; फ्रेश लेमन पील Fresh Lemon Peel—अं०; नीबू का ताजा छिलका—हिं०।

ओलियम् लाइमोनिस् Oleum Limonis (Ol. Limon.). I. P., B. P. —ले०; लेमन ऑयल Lemon Oil—अं०; नीबू का तेल—हिं० ।

वर्णन—यह एक उड़नशील तेल होता है, जो नीबू के ताजे छिलकों (Fresh Lemon Peel) से मशीन में दबाकर (By expression) प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ४ प्रतिशत नीबू के एल्डिहाइड अर्थात् साइट्रल (Citral : $C_{10}H_{16}O$.) होता है। यह (नीबू का तेल) हल्के पीले रंग का अथवा हरापन लिए पीले रंग का (Greenish-yellow) द्रव होता है जिसमें नीबू की सी सुगंधि होती है तथा स्वाद में चटपटा एवं किंचिद् तिक्त होता है। विलेयता—१२ भाग अल्काहल् (६०%) में घुलनशील है।

वक्तव्य—नीबू के तेल (Lemon Oil) को अच्छी तरह डाटबंद पात्र में भरकर ठण्ढी जगह में संग्रह करना चाहिए और इसे प्रकाश से बचाना चाहिए।

नीबू का तेल निम्न योगों में पड़ता है :—

(१) स्प्रिट० अमोन० एरोमट० (Sp. Ammon. Aromat.) नामक ऑफिशल (B. P.) योग में।

(२) टिंक्चुरा वलेरिआनी अमोनिएटेड (Tinct. Valerian. Ammoniat.) नामक इन्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) के ऑफिशल योग में।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—नीबू तथा नारंगी का छिलका उत्तेजक तथा वातानुलोमन होता है अतएव उदर-आध्मान में प्रयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त औषधियों को स्वादिष्ट बनाने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। नीबू के रस में काफी मात्रा में विटामिन 'सी' पाया जाता है। अतएव यह उत्तम स्कर्वीनिवारक है।

(ऑफिशल योग)

१—सिरपस् लाइमोनिस् Syrupus Limonis (Syr. Limon.) I. P., B. P.—ले०; सिरप ऑव लेमन Syrup of Lemon अं०; शर्बत जम्बीर—सं०; नीबू का शर्बत—हिं०। इसमें ५ प्रतिशत नीबू का ताजा छिलका पड़ता है। नीबू के शर्बत को रखने के पूर्व पात्रों (Containers) को उबलते जल से खूब अच्छी तरह धो लेना चाहिये। फिर इन पात्रों का संग्रह ठंडी जगह में रखना चाहिए। मात्रा—२ से ८ मि० लि० (३० से १२० मिनम् या बूंद)।

२—टिंक्चुरा लाइमोनिस् Tinctura Limonis (Tinct. Limon.), I. P., B. P.—ले०; टिंक्चर ऑव लेमन Tincture of Lemon—अं०; नीबू का निष्कर्ष—सं०; नीबू का टिंचर—हिं०। इसमें २५ प्रतिशत नीबू का ताजा छिलका (Fresh Lemon Peel) पड़ता है। मात्रा—२ से ४ मि० लि० (३० से ६० मिनम् या बूंद)।

ओलियम् ऑरन्शाइ फ्लोरिस (I. P.)

Oleum Aurantii Floris (Ol. Aurant. Flor)

Family : Rutaceae (जम्बीर-कुल)।

नाम—ओलियम् निरोली Oleum Neroli; ऑयल ऑव निरोली Oil of Neroli ऑयल ऑव ऑरेञ्ज फ्लावर Oil of Orange Flower।

प्राप्ति-साधन—यह एक उड़नशील तैल है, जो कड़वी नारङ्गी **Citrus aurantium var. bigaradia Hook. f.** नामक वृक्ष के पुष्पों को जल के साथ परिस्रवित कर (**Distillation**) प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह एक हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जो प्रकाश में खुला रहने से भूरापन लिए लाल रंग का (Brownish-red) हो जाता है। इसमें विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि पाई जाती है और स्वाद में सुगन्धित एवं तिक्त होता है। विलेयता—अल्कोहल् (८०%) में अपने से दूने भाग में विलेय होता है, इस विलयन में और अल्कोहल (८०%) मिलाने से सॉल्यूशन धुँधला हो जाता है। इस अल्कोहोलिक विलयन में नीलापन लिये बैंगनी रंग की आभा (violet blue fluorescence) होती है।

योग :—

१—एक्वा ऑरन्शाइ फ्लोरिस Aqua Aurantii Floris (Aq. Aurant. Flor.) I. P.—ले०; ऑरेन्ज फ्लावर वाटर Orange Flower Water—अं०। नीबू का अर्क—हिं०। यह प्रायः रंगहीन स्वच्छ (Opalescent) द्रव होता है जो साइट्रस ऑरन्शियम् Citrus Aurantium var. bigaradia के पुष्पों को जल से परिस्रवित कर प्राप्त किया जाता है।

ओलियम् मेन्थी पिपरेटी (पेपरमिंट तैल), B.P.

Family : Labiatae (तुलसी-कुल)

नाम—ओलियम् मेन्थी पिपरेटी **Oleum Menthae Piperetae (Ol. Menth. Pip.)**—ले०, ऑयल ऑव पेपरमिंट **Oil of Peppermint,** पिपरमिन्ट ऑयल **Peppermint Oil**—अं०; पिपरमिंट का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—पिपरमिंट का तेल भी एक उड़नशील तेल (**Volatile Oil**) होता है, जो मेन्था पिपरेटा (**Mentha Piperata Linn.**) नामक पुदीना प्रजाति की वनस्पति के ताजे पुष्पिताग्रों (**Fresh flowering tops**) से परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है। यदि आवश्यकता हो तो इसे पुनः विशोधित (**Rectified**) कर लिया जाता है। इसमें (कम से कम) ४ प्रतिशत से लेकर ९ प्रतिशत (w/w) तक मेथिल एसिटेट (**Methyl acetate** : $C_{12}H_{22}O_{2}$) तथा ४५ प्रतिशत (w/w) मेंथॉल (**Menthol** : $C_{10}H_{20}O$) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—ब्रिटेन, जापान एवं संयुक्तराष्ट्र अमरीका (U. S. A.)। मेन्था पिपरेटा विदेशी पौधा है। इसके पौधे पुदीने की तरह ही होते हैं। पत्तियों को मसल कर सूँघने से सत पिपरमिंट के तेल की सुगन्धि आती है। भारतवर्ष में बगीचों में इसके लगाये हुए पौधे मिलते हैं। पेपरमिंट का पौधा यूरोप में सर्वत्र स्वयंजात रूप से पाया जाता है। इङ्गलैण्ड, फ्रांस, इटली, रूस, जर्मनी तथा अमेरिकामें इसकी विस्तृत खेती भी की जाती है।

वर्णन—पिपरमिंटका तेल रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का या हरिताभ-पीत (**Greenish yellow**) वर्ण का द्रव होता है, जिसमें पिपरमिंट की सुगन्धि आती है। स्वाद में पहले तीक्ष्ण (**Pungent**) तथा सुगन्धित और अन्त में मुँह में ठण्डक (**Sensation of Cold**) मालूम होती है। विलेयता—१ भाग में ४ भाग अल्कोहल् (७० प्रतिशत) में विलेय होता है। मात्रा—(B. P. Dose) —१ से ३ मिनम् (०·०६ से ०·२ मि० लि०)।

वक्तव्य—पिपरमिंट के तेल को अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों (शीशियों) में रख कर ठण्डी जगह में संग्रह करना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिये।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्यतः स्थानिक प्रयोग से पेपरमिंट का तेल वेदनाहर (Analgesic) प्रभाव करता है। मुख-द्वारा सेवन किये जाने पर यह वातानुलोमन (Carminative) क्रिया करता है। यह आमाशयस्त्रगत आध्मान एवं शूल (Gastric and Intestinal flatulence and Colic) का निवारण करता है। इसकी सुगन्धि अत्यन्त रुचिकारक होती है। वातानुलोमन क्रिया के लिए इसको चीनी में मिलाकर या बताशे में रखकर प्रयुक्त किया जा सकता है। मिक्सचर में मिलाने के लिए कन्सन्ट्रेटेड पेपरमिंट वाटर अथवा स्प्रिट ऑव पेपरमिंट का व्यवहार कर सकते हैं। पेपरमिंट की मुख—चक्रिकाओं (Peppermint Lozenges) का प्रयोग वातानुलोमन क्रिया एवं उनके रुचिकारक स्वाद के लिये किया जाता है पेपरमिंट के तेल में साधारण जीवाणुनाशक गुण (Mild antiseptic properties) भी होता है। अतएव इसका उपयोग दन्तमंजन (Dental paste), चूर्ण (Dental Powder) तथा मुखधावन द्रव (Mouth-washes) के निर्माण में भी किया जाता है।

(ऑफिशल योग B. P. Preparations)

१—एक्वा मेन्थी पिपरिटी कन्सन्ट्रेटा Aqua Menthae Piperitae Concentrata (Aqu. Menth. Conc.)—ले०; कन्सन्ट्रेटेड पिपरमिन्ट वाटर Concentrated Pippermint water—अं०। इसमें पिपरमिंट का तेल २ प्रतिशत होता है। मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

२—इमल्सिओ मेन्थी पिपरिटी Emulsio Menthae Piperitae (Emuls. Menth. Pip.)—ले०; इमल्सन ऑव पिपरमिंट Emulsion of Peppermint—अं०। इसमें १० प्रतिशत पिपरमिंट का तेल होता है। मात्रा (B. P. Dose)—५ से ३० बूंद या मिनम् (०·३ से २ मि० लि०)।

३—स्पिरिटस् मेन्थी पिपरिटी (Spiritus Menthae Piperitae (Sp. Menth. Pip.)—ले०; स्प्रिट ऑव पिपरमिंट Spirit of Peppermint—अं०। इसमें भी पिपरमिंट का तेल १०% होता है। इसे इसेन्स ऑव पिपरमिंट Essence of Peppermint भी कहते हैं। मात्रा—(B. P. Dose)—५ से ३० बूंद या मिनम् (०·३ से २ मि० लि०)।

इसके अतिरिक्त ऑयल ऑव पिपरमिंट निम्न ऑफिशल योगों में भी पड़ता है:—

(१) केटाप्लाज्मा केओलिनाइ (Kataplasma kaolin.) या केओलिन पुल्टिस (Kaolin Poultice)।

(२) टॅबेली सोडियाइ बाइकार्बोनेटिस् कम्पोजिटी (Tab. Sod. Bicarb. Co.)।

सिन्नेमोमम् Cinnamomum (Cinnam.) I. P., B. P.

(दालचीनी)

नाम—सिन्नेमोमम् Cinnamomum, सिन्नेमोमाई कॉर्टेक्स Cinnamomi Cortex—ले०; सिन्नेमन Cinnamon, सिन्नेमन बार्क Cinnamon Bark—अं०;

दालचीनी—हिं०, म०; त्वक्, गुड़त्वक्—सं०; दारुचिनि—बं०; दारचीनी—फा०; दारसीनी, क़िर्फा—अ०।

प्राप्ति-साधन—दालचीनी या सिन्नेमन, सिन्नेमोमम् जेलानिकम् Cinnamomum zeylanicum Nees. नामक वृक्ष की अग्रशाखाओं का शुष्क किया हुआ अन्तस्त्वक् या सुखाई हुई अन्दर की छाल (Dried inner bark of the shoots) होती है, जिसे व्यवसाय में कलमीदालचीनी, सिंहली दालचीनी या सिलोन सिन्नेमन (Ceylon Cinnamon) कहते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—सिंहल (लंका) एवं दक्षिण भारत।

वर्णन—दालचीनी की छाल एक दूसरे पर इकहरी या दुहरी लिपटी हुई (Single or double quills) होती है, जो लम्बाई में ३–४ फुट तक लम्बी तथा व्यास (Diameter) में १ सेंटीमीटर तक होती है। बाहरी छिलका मटमैले पीताभ-भूरे रंग का (Dull yellowish-brown) का होता है, तथा इसपर अनुलम्बन दिशा में अनेक हल्की लहरदार धारियाँ (सूक्ष्म रेखायें) होती हैं, तथा इतस्ततः छोटे-छोटे चिन्ह (Small scars) अथवा छिद्र होते हैं। अन्तस्तल (Inner surface) वाह्यतल की अपेक्षा गाढ़े रंग का होता है, तथा इसपर अनुलम्ब दिशा में सूक्ष्म रेखाओं का जाल-सा होता है। यह छाल प्रायः ½ मिलिमिटर मोटी होती है और तोड़ने पर आसानी से टूट जाती (Brittle) है। इसमें कम से कम १ प्रतिशत (v/w) उड़शील तेल दालचीनी का तेल होता है। संग्रह (Storage)—दालचीनी का संग्रह सूखी एवं ठण्ढी जगह में करना चाहिये।

सिन्नेमोमाइ पल्विस Cinnamomi Pulvis (Cinnam. Pulv.)—लै०; पाउडर्ड सिन्नेमन Powdered Cinnamon—अं०; दालचीनी का चूर्ण।

वर्णन—दालचीनी का चूर्ण मटमैले पीताभ-भूरेरंग का होता है। इसमें कम से कम ०.७% दालचीनी का तेल (v/w) होता है। संग्रह (Storage)—दालचीनी के चूर्ण को अच्छी तरह डाट-बन्द पात्र में रखना चाहिए ताकि इसका उड़नशील तेल उड़ने न पावे। इन पात्रों को ठंढी जगह में सुरक्षित करना चाहिए।

ओलियम् सिन्नेमोमाइ Oleum Cinnamomi (Ol. Cinnam.) I. P. B. P.—लै०; ऑयल ऑव सिन्नेमन Oil of Cinnamon, सिन्नेमन ऑयल Cinnamon Oil—अं०; दालचीनी का तेल—हिं०; रोगन दारचीनी—फा०।

प्राप्ति-साधन—यह दालचीनी (सिन्नेमन) से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ५५ से ६८ प्रतिशत (w/w) तक सिन्नेमिक एल्डिहाइड (Cinnamic aldehyde C_9H_8O) होता है।

वर्णन—दालचीनी का तेल ताजी अवस्था में एक पीले रंग का द्रव होता है, जो रखने पर कालान्तर से लाली लिए भूरे रंग का (Reddish-brown) हो जाता है। इसमें दालचीनी की गंध एवं स्वाद होता है। दालचीनी के तेल को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखकर ठण्ढी जगह में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए। मात्रा—१ से ३ बूंद या मिनम् (०.०६ से ०.२ मि० लि०)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सिन्नेमन या दालचीनी वातानुलोमन तथा ग्राही (Carminative and as-

tringent) होता है। अतएव अतिसार (Diarrhoea) में उपयोगी होता है। सिन्नेमन पाउडर 'एरोमेटिक पाउडर ऑव चाक' एवं 'एरोमेटिक पाउडर ऑव चाक विद् ओपियम्' नामक योगों में पड़ता है।

(ऑफिशियल)

१—एक्वा सिन्नेमोमाइ कन्सन्ट्रेटा Aqua Cinnamomi Concentrata (Aq. Cinnam. Conc.) ले०—कन्सन्ट्रेटेड वाटर Concentrated Cinnamon Water—अं०; दालचीनीका अल्कोहलघटित अर्क। इसमें २ प्रतिशत दालचीनी का तेल होता है। मात्रा—५ से १५ बूँद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

दालचीनी (त्वक्) इण्डियन फॉर्माकोपिया (I. P.) के निम्न योग में पड़ती है—

(१) टिंक्चुरा कटेच्यु Tinctura Catechu।

दालचीनी का चूर्ण ब्रिटिश फार्माकोपिया (B.P.) के निम्न योगों में पड़ता है—

(१) पल्विस् क्रेटी एरोमेटिकस् (Pulv. Cret. Aromat.)।

(२) पल्विस् क्रेटी एरोमेटिकस् कम् ओपिओ (Pulu. Cret. Aromat. C OPio.)।

(३) टिंक्चुरा कार्डेमोमाइ कम्पोजिटस् (Tinct. Card. Co.)।

(नॉट्-ऑफिशल)

१—टिंक्चुरा सिन्नेमोमाइ Tincture Cinnamomi (Tinet. Cinnam.), I. P. C.—ले०; टिंचुर ऑव सिन्नेमन Tincture of Cinnamon—अं०; दालचीनी का निष्कर्ष—सं०, हि०। मात्रा–½ से १ फ्लुइड ड्राम (२ से ४ मि० लि० = ३० से ६० बूँद)।

२—टिंक्चुरा सिन्नेमोमाइ कम्पोजिटा Tinctura Cinnamomi Composita (Tinct. Cinnam. Co.)—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव सिन्नेमन Compound Tincture of Cinnamon अं०। मात्रा—१ से २ ड्राम।

सिन्नेमोमम् कॅसिया (I. P.)

(तज)

Family : Lauraceae (कर्पूर-कुल)

नाम—सिन्नेमोमम् कॅसिआ Cinnamomum Cassia (Cinnam. Cass.)—ले०; कॅसिया सिन्नेमन Cassia Cinnamon–अं०। पर्याय—चायनीज कॅसिया Chinese Cassia चाइना सिन्नेमन China Cinnamon। तज—हिं०, गु०; सलीखा, क़िर्फ़ा—अ०।

प्राप्ति-साधन—तज या कॅसिआ सिन्नेमन, सिन्नेमोमम् कॅसिआ Cinnamomum cassia Blume नामक वृक्षका शुष्क काण्डत्वक् (Stem bark) या सुखाया हुआ तने का छाल होता है।

उत्पत्ति-स्थान—चीन, बर्मा (आवा Ava) लंका तथा दक्षिण भारत।

वक्तव्य—तज (China Cinnamon) का ज्ञान प्राचीन काल से था। भारतवर्ष में भी इस जाति के अनेक वृक्ष स्वयंजात होते हैं। प्रसिद्ध 'तेजपत्र' या तेजपात भी इसी जाति के

एक वृक्ष के पत्र होते हैं। सिंहली दालचीनी (सिन्नेमोमम् जिलेनिका) का ज्ञान बहुत पीछे हुआ है। इसका अधिक प्रचार अट्ठारहवीं शताब्दी में हुआ है। यूरप में दारचीनी तथा चीनी-तज का प्रचार अरबों के जरिये हुआ। अरबी में इसे 'किरफातुद्दारसीनी Kirfat-ed-dar-sini' या संक्षेप में 'क़िर्फ़ा' कहते हैं, जिसका अर्थ होता है "The bark par excellence।" दक्षिण भारतके मलाबार प्रान्त में तज की भारतीय जातियाँ स्वयंजात पाई जाती हैं। इनकी छाल बम्बई बाजार में 'कल्फा Kalfah' के नाम से प्रसिद्ध है, जो अरबी नाम 'क़िर्फ़ा' का ही अपभ्रंश मालूम होता है। हिन्दी नाम 'तज' संस्कृत 'त्वक्=Bark' का अपभ्रंश है। फारसी नाम 'दारचीनी' का अर्थ होता है "China tree" अर्थात् 'चीनीवृक्ष', जो इसके उत्पत्ति स्थान का द्योतक है। अरबी नाम 'दारसीनी' इसके उपरोक्त फारसी नामका अरबी रूपान्तर मात्र है। सम्भवतः कॅसिआ सिन्नेमन का प्रचार थलमार्ग द्वारा चीन से फारस में हुआ, और तदनन्तर अरबों ने इसका ज्ञान प्राप्त कर आगे यूरोप में प्रचारित किया। बाद के निघण्टुकारों ने उत्कृष्टता के तर-तम भेद से सिंहली, चीनी एवं भारतीय सिन्नेमन का विवेचन किया है। और अब सबसे उत्तम दालचीनी लंका द्वीप में होने वाली प्रजाति 'सिन्नेमोमम् जेलानिकम्' से प्राप्त होने वाली ही मानी जाती है। अब दालचीनी या दारचीनी शब्द का व्यवहार इसी की छाल के लिए किया जाता है।

(कॅसिआ सिन्नेमन)

वर्णन—तज (कॅसिया सिन्नेमन) के ५ से ४० सेन्टीमीटर (२" से १६") लम्बे, व्यास १२ से १८ मिलिमिटर तथा १ से ३ मिलिमिटर मोटे टुकड़े होते हैं जो एक ओर को मुड़े हुए अथवा नालीदार (Single quills or channelled) होते हैं। रंगमें टुकड़े मटमैले भूरे रंग (Dirty brown) के होते है। असली दालचीनी की अपेक्षा इसकी छालमें कार्क (Cork) का अंश अधिक पाया जाता है। तोड़ने पर ये टुकड़े खट से टूट जाते (Fracture Short) हैं। टूटे हुए टुकड़े का बाह्य भाग भुरभुरा (Granular) किन्तु अन्दर का भाग तन्तुल (Fibrous) होता है। तज के टुकड़ों से एक विशिष्ट प्रकार की तथा मीठी सुगन्धि पाई जाती है। स्वाद में भी यह किंचित् मधुर होता है।

तज का संग्रह अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में करना चाहिए।

रासायनिक संगठन —तज में ०.८% उत्पत् तेल (Volatile oil) तथा ४% रेजिन (Resin), १४.६% गोंदीय सार (Gummy extractives) एवं टैनिन, ६४.२ प्रतिशत लिग्निन (Lignin), एवं बसोरिन (Bassorin) १६.३ प्रतिशत जल तथा अल्प मात्रा में एक रंजक तत्व (Colouring matter) पाया जाता है।

मात्रा—(I. P. L. Dose) ५ से २० ग्रेन (०.३ से १.२ ग्राम) या २॥ से १० रत्ती।

ओलियम् कॅसिई Oleum Cassiae (Ol. Cass), I. P.—लें० ऑयल ऑव कॅसिआ Oil of Cassia—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह एक उड़नशील तेल होता है, जो सिन्नेमोमम् कॅसिआ Cinnamomum Cassia (Linn.) Blume. नामक वृक्ष के कोमल पत्तियों एवं टहनियों (Twigs) को जल के साथ परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त कर पुनः भपके से उड़ाकर साफ किया जाता (Rectified by distillation) है। इसमें कम से कम ७५

प्रतिशत (75% by volume) सिन्नेमिक एल्डिहाइड (Cinnamic aldehyde : C_9H_8O.) होता है।

वर्णन—यह पीताभ या भूरापन लिए तैलीय द्रव होता है, जो रखने से गाढ़े रंग का तथा गाढ़ा हो जाता है। इसमें विशिष्ट प्रकार का गंध एवं स्वाद पाया जाता है।

विलेयता—यह बराबर मात्रा अल्कोहल् (९५%) तथा ग्लेसियल एसेटिक एसिड में विलेय होता है किन्तु ७०% बल के अल्कोहल् में दुगने परिमाण में घुल जाता है। मात्रा—१ से ३ बूंद।

ओलियम् सिन्नेमोमाइ फोलियाइ Oleum Cinnamomi Folii (Ol. Cinnam. Fol.), I. P.—ले०; सिन्नेमन लीफ ऑयल Cinnamon Leaf Oil—अं०।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह सिन्नेमोमम् कॅसिआ अथवा कॅसिआ की अन्य प्रजातियों से परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ७० से ९०% (v/v) तक यूजिनॉल (Eugenol $C_{10}H_{12}O_2$) पाया जाता है। यह गाढ़े भूरे रंग का स्वच्छ द्रव होता है, जिससे दालचीनी एवं लौंग से मिलती-जुलती उग्र सुगन्धि पाई जाती है। विलेयता—तिगुने अल्कोहल् (००%) में विलेय होता है। मात्रा—१ से ३ बूंद।

योग

(१) एक्वा कॅसिई कन्सन्ट्रेटा Aqua Cassiae Concentrata (Aq. Cassi. Conc.), I. P. L.—ले०; कन्सन्ट्रेटेड कॅसिआ वाटर Concentrated Cassia Water—अं०। मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

(२) एक्वा कॅसिई डेस्टिलेटा Aqua Cassiae Destillata (Aq. Cassi. Dest.), I. P L.—ले०; डिस्टिल्ड कॅसिआ वाटर Distilled Cassia Water—अं०; अर्क तज—हिं०। मात्रा—½ से १ फ्लुइड औंस (१५ से ३० मि० लि०)।

ओलियम् लवेंडुली (लवेंडर का तेल)

Family : Labiatae (तुलसी-कुल)

नाम—Oleum Lavendulae (Ol. Lavand.)—ले०; लवेंडर ऑयल Lavender Oil—अं०; लवेंडर का तेल।

प्राप्ति-साधन—लवेंडर ऑयल (लवेंडर का तेल) भी एक उड़नशील तेल (Volatile oil) होता है, जो लवेंडुला की निम्न प्रजातियों (Species) के पुष्पिताग्रों (Fresh flowering tops) से परिस्रवण (Distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है—

(१) लवेंडुला इन्टर मीडिया Lavandula intermedia Loisel. (इंग्लिश लवेंडर ऑयल प्रायः इसी प्रजाति से प्राप्त किया जाता है)।

(२) लवेंडुला ऑफिशिनेलिस Lavandula officinalis Chaix (अन्य देशों में लवेंडर ऑयल इस प्रजाति से प्राप्त किया जाता है)।

अंग्रेजी लवेंडर ऑयल में (कम से कम) ७ प्रतिशत से १४ प्रतिशत (w/w) तथा विदेशी लवेंडर ऑयल में कम से कम ३५ प्रतिशत (w/w) लिनेलिल एसिटेट (Linalyl acetate : $C_{12}H_{20}O$.) पाया जाता है।

वर्णन—लवेंडर का तेल रंगहीन या हल्के पीले रंग का या पीताभ-हरित (yellowish-green) वर्ण का द्रव होता है, जिससे लवेंडर के फूलों की भाँति सुगन्धि आती है। स्वाद में तीक्ष्ण (Pungent) एवं किंचित् तिक्त होता है। विलेयता—अंग्रेजी तेल, ३ भाग अल्कोहल् (८० प्रतिशत) में तथा विदेशी लवेंडर ऑयल ४ भाग अल्कोहल् (७० प्रतिशत) में विलेय होता है। संग्रह (Storage)—अन्य उड़नशील तेलों की भाँति।

रासायनिक संघटन—(१) लिनेलोल (Linalol : एक अल्कोहल् होता है) तथा इसका एसेटिक ईस्टर (Acetic ester) जिसे लिनेलिल एसिटेट (Linalyl acetate) कहते हैं, इस तेल के मुख्य घटक होते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें (२) पाइनीन (Pinene : $C_{10} H_{16}$) तथा (३) लाइमोनीन (Limonene), जिरेनिओल (Geraniol) तथा सेस्क्विटरपीन (Sesquiterpene) भी पाये जाते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

लवेंडर ऑयल मुख द्वारा सेवन किए जाने पर वातानुलोमन होता है, किन्तु चिकित्सा में इसका प्रायः रुचिकारक द्रव्य (**Flavouring agent**) के रूप में होता है। लवेंडरके तेल का उपयोग सौगन्धिक योगो के अरुचिकारक गंध को दूर करने के लिए किया जाता है। वातानुलोमन एवं आंतों की मरोड़ को दूर करने के लिए इसके कम्पाउण्ड टिंक्चर का प्रयोग किया जा सकता है, अथवा तेल को थोड़ी सी चिनी या बतासे में रखकर कर सकते हैं।

योगः—

१—ऑयल ऑव लवेंडर निम्न ऑफिशल योग में पड़ता है :—

(१) लिनिमेंटम् कम्फोरी अमोनिएटम् (Lint. Camph. Ammon.)।

(नॉन्-आफिशल)

१—टिंक्चुरा लवेंडुली कम्पोजिटस् Tinctura Lavendulāe Compositus (Tinct. Lavand. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्टर ऑव लवेंडर Compound Tincture of Lavander—अं०।

मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

मिरिस्टका Myristica (Myrist.) I. P., B. P.

(जातीफल—जायफल (जायफर)

Fymily : Myristicaceae (जातीफल-कुल) :—

नाम—जायफल (र)—हिं०, बं०; जातीफल—सं०; जयफल—पं०; जायफल—म०, गु०; जौजबुवा—अ०; जौजबुया—फा०; नटमेग **Nutmeg**—अं०।

प्राप्ति-साधन—मिरिस्टिका या नटमेग अर्थात् जायफल, मिरिस्टिका फ्रगरेन्स Myristica fragrans Houtt नामक वृक्ष के बीजों की सुखाई हुई गिरीमय गुठली (Dried kernels of the Seed) होती है। इसमें कम से कम ५ प्रतिशत (v/w) उड़नशील तेल (जायफल का तेल) होता है।

उत्पत्ति-स्थान—जायफल मोलक्का द्वीपसमूह (Molucca islands) का आदिवासी वृक्ष है। इसके अतिरिक्त सुमात्रा, जावा, सिंगापुर, पेनंग तथा मलाया द्वीपसमूह में

भी इसके जंगली वृक्ष पाये जाते हैं। आजकल लंका तथा दक्षिण भारत में नीलगिरी तथा अन्य पहाड़ी स्थानों में इसके वृक्ष लगाने का प्रयास किया जा रहा है।

इतिहास—जायफल का उल्लेख आयुर्वेदीय संहिताओं एवं निघण्टुओं में प्राचीन काल से मिलता है। औषधि के अतिरिक्त जायफल का प्रयोग मसाले में भी होता है। देशी चिकित्सा एवं मसाले में जायफल के (Arillus) का भी प्रयोग होता है। इसे संस्कृत में जातिकोश या जातिपत्री तथा हिन्दी में जावित्री कहते हैं। सर्वप्रथम इस औषधि का प्रवेश पूर्वी द्वीपसमूह से भारतवर्ष में हुआ। भारतवर्ष से इसका प्रचार फारस एवं फारस से अरब तथा यूरोपीय देशों में हुआ। अरबों को जायफल का ज्ञान सम्भवतः फारस से हुआ प्रतीत होता है, जैसा कि इसके अरबी नाम "ज़ौजबुवा" से प्रतीत होता है, जो जायफल के फारसी नाम "जौजबुया" का अरबीकृत रूप है। "जौजबुया" का अर्थ होता है 'सुगन्धित गुठली Fragrant nut'। १२ वीं शताब्दी के अन्त में जायफल एवं जावित्री का प्रचार यूरोप में हुआ। जावित्री का व्यावसायिक नाम "Mace" है। यूरोप में औषधीय एवं मसाले के रूप में अब भी इन दोनों वस्तुओं की काफी खपत है।

वक्तव्य—दक्षिण भारत के कोंकण, कनाड़ा तथा उत्तरी मलाबार में जायफल की एक दूसरी प्रजाति जिसे "मिरिस्टिका मलाबारिका Myristica malabarica Lamk", कहते हैं प्रचुरता से पाई जाती है। इसके फल को जायफल के वजन पर 'रामफल' तथा (Arillus) को 'रामपत्री' कहते हैं। इन्हें 'भारतीय जायफल' एवं 'भारतीय जावित्री' कह सकते हैं। बम्बई के बाजार में यह देशी जायफल तथा जावित्री काफी मात्रा में आते हैं। आकार में यह दोनों वास्तविक जायफल एवं जावित्री से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं। किन्तु सक्रियता की दृष्टि से यह असली जायफल की अपेक्षा हीन कोटिका है। इसका उपयोग व्यवसायी लोग मिलावट के लिए करते हैं।

वर्णन—जायफल २ से ३ सेंटीमीटर लम्बा तथा लगभग २ सेन्टीमीटर चौड़ा और आकार में अंडाकार (Ellipsoid) होता है। बाहर से रंग में खाकस्तरी-भूरे (Greyish-brown) या भूरे (Brown) रंग का होता है तथा बाहरी तल पर इतस्ततः गाढ़े भूरे रंग के छोटे-छोटे चकत्ते या बिन्दु पड़े होते हैं। इसके अतिरिक्त हल्की खातोदर

चित्र ४२—जायफल के फल

रेखाओं का जाल-सा (Slightly furrowed reticulately) दिखाई देता है। जायफल के एक सिरे पर हल्के रंग क चकत्ता (Light coloured area) होता है, जो रेडिकिल

(Radicle) का द्योतक होता है। दूसरे सिरे पर चलेजा (Chalaza) होता है। एक परिखा रेडिकिल वाले सिरे से चलेजा वाले सिरे तक जाती दीखती है। जायफल में एक विशिष्ट प्रकार की उग्र सुगंधि होती है। स्वाद में तीक्ष्ण (Pungent) एवं सुगन्धित होती है।

रासायनिक-संघटन—जायफल में (१) ५ से १५ प्रतिशत उड़नशील तेल (Volatile Oil) पाया जा है, जो इसका प्रधान सक्रिय तत्व होता है। (२) २५ से ४० प्रतिशत एक स्थिर तेल (Fixed oil) पाया जाता है।

मिरिस्टिकी पल्विस Myristicae Pulvis (Myrist. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड नटमेग Powdered Nutmeg—अं०; जातीफल चूर्ण—सं०; जायफल का चूर्ण—हिं०। यह लालिमा लिए भूरे रंग का (Reddish-brown) होता है।

ओलियम् मिरिस्टिकी Oleum Myristicae (Ol. Myrist.)—ले०; नटमेग ऑयल Nutmeg Oil, मिरिस्टिका ऑयल Myristica Oil—अं०; जायफल का तेल—हिं०।

प्राप्ति-साधन—यह जायफल से परिस्रवण द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—जायफल का तेल रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें जायफल की-सी स्वाद एवं गंध होती है। विलेयता—१ भाग ३ भाग अल्कोहल् (९० प्रतिशत) में विलेयता होता है।

मात्रा—१ से ३ बूंद या मिनम् (०·०६ से ०·२ मि० लि०)।

रासायनिक-संघटन—(१) मिरिस्टिसिन (Myristicin) एवं (२) डी-कम्फीन (d-camphene) नामक टर्पीन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

वाह्य—जायफल के उत्पत् एवं स्थिर तेलों का व्यवहार पामेड (Pomade) तथा हेयर लोशन (Hair-lotions) में मिलाने के लिए किया जाता है। जैतून के तेल तथा सोपलिनिमेंट में मिलकर इसका प्रयोग चिरकालीन आमवात में मालिश के लिए किया जाता है। जल के साथ इसको पीस कर प्रलेप के रूप में शिरःशूल तथा नाड़ीशूल में प्रयुक्त करते हैं।

आभ्यन्तर—आभ्यन्तर प्रयोग से यह दीपन-पाचन तथा वातानुलोमन होता है। अतः अग्निमान्द्य (Dyspepsia), तथा उदराध्मान (पेट फूलने पर) में उपयोगी है। दंतशूल में जायफल के तेल में रुई का फोया भिगोकर दंत कोटर में स्थापित करने से दर्द की शान्ति होती है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर मस्तिष्क पर तीव्र उत्तेजक प्रभाव (Cerebral stimulant) करता है।

योग :—

१—जायफल का चूर्ण (पाउडर्ड नटमेग) निम्न ऑफिशल योगोंमें पड़ता है :—

(१) पल्विस क्रेटी एरोमेटिकस Pulvis Cretae Aromaticus (Pulv. Cret. Aromat.)

(२) पल्विस क्रेटी एरोमेटिकस कम् ओपिओ (Pulv. Crct. Aromat. C. Opio.)।

जायफल का तेल निम्न योगों का उपादान है :—

(१) स्प्रिट अमोनिया एरोमेटिक (Sp. Ammon Aromat.)।

(२) टिंक्चुरा वलेरियानी अमोनिएटा (Tinct. Valerian. Ammon.)।

(नॉट-ऑफिशल)

१—स्पिरिटस् मिरिस्टिको Spiritus Myristicae (Sp. Myrist.) I. P. C.—ले०; स्प्रिट ऑव नटमेग Spirit of Nutmeg—अं०। मात्रा—५ से २० बूँद या मिनम् (०·३ से १·२ मि० लि०)।

जिंजिबर (सोंठ या सुखाया हुआ अदरक)

Family : Zingiberaceae (आर्द्रक-कुल)।

नाम—जिंजिबर Zingiber (Zingile)—ले०; जिंजिर Ginger—अं०। व्यवसाय में इसे "Unbleached Jamaica Ginger" कहते हैं।

प्राप्ति-साधन—जिंजिबर (अदरक या सोंठ), जिंजिबर ऑफिशिनेल Zingiber officinale Roscoe नामक वनस्पति का भौमिक काण्ड या राइजोम (Rhizome) होता है, जिसका बाहरी छिलका पृथक कर सुखा कर रख लिया जाता है।

उत्पत्ति-स्थान—भारत वर्ष तथा अन्य पूर्वी देश।

वर्णन—राइजोम (Rhizome) पार्श्वों की ओर से चपटा (Laterally compresseel) होता है। जिसमें अनेक छोटी चपटी एवं गोल, अभिलट्वाकार (Obovate), तिरछी (Oblique) शाखायें निकली होती हैं। प्रत्येक शाखा के सिरे ((Apex) पर एक खातोदर चिन्ह (Depressed scar) होता है। बाहर से चमड़े के रंग (Buff coloured) का होता है तथा अनुलम्ब दिशा में अनेक रेखायें (Longitudinal striations) होती हैं। तोड़ने पर खट से टूट जाता (Fracture short) है, किन्तु टूटे हुए तल पर अनेक तन्तु निकले (Projecting fibres) हैं। अनुप्रस्थ काट से कटा हुआ तल (Transversely cut Surface) को लेंस द्वारा परीक्षण करने से बाहर से मोटाई का लगभग ⅓ भाग कॉर्टेक्स (Cortex) का होता है। उसके अन्दर इन्डोडर्मिस (Endodermis) का स्तर दिखाई देता है, जो अन्दर की ओर के स्टील (Stele) भाग को कॉर्टेक्स से पृथक करता है। इसके अतिरिक्त इस पर इतस्ततः अनेक हल्के भूरे रंग के बिन्दु (Greyish points) तथा पीताभ-बिन्दु (Yellowish points) दीखते हैं, जो क्रमशः वाहिनी-पूलों (Fibro-Vascular bundles) एवं स्रावी कोशाओं (Secretion cells) के द्योतक होते हैं। जिंजर में एक रुचिकारक सुगन्धि होती है तथा स्वाद में रुचिकर एवं तीक्ष्ण (Agreeable and pungent) होती है।

जिंजिबरिस् पल्विस् Zingiberis Pulvis (Zingib. Pulv.)—ले०; पाउडर्ड जिंजर Powdered Ginger—अं०; शुण्ठी चूर्ण या सोंठ का चूर्ण। यह हल्के पीले रंग का चूर्ण होता है। पाउडर्ड जिंजर, पल्विस रिहाई कम्पोजिटस् (Pulv. Rhei. Co.) नामक ऑफिशल योग में पड़ता है।

मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०·३ से १ ग्राम) या २॥ से ७॥ रत्ती।

रासायनिक संघटन—जिंजर में (१) १ से ३ प्रतिशत की मात्रा में एक सुगन्धित उत्पत तैल Aromatic volatile oil) पाया जाता है; जिसमें कम्फीन (Camphene) फिलैंड्रीन (Phellandrene), सिनिओल (Cineol) साइट्रल (Citral) बोर्निओल (Borneol) तथा जिंजिबेरीन

(Zingiberene) आदि तत्व पाये जाते हैं। जिंजर की तीक्ष्णता (२) जिंजेरोल (Gingerol) तथा (३) शोगेओल (Shogaol) : ($C_{17}H_{24}O_3$) नामक तत्वों के कारण होती है। (४) रेज़िन (Resin) तथा स्टार्च (Starch)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

जिंजर या अदरक एक तीव्र सुगन्धित उत्तेजक द्रव्य है। इस रूप में इसकी क्रिया लाल मिर्च तथा इलायची की भांति होती है। भोजन के साथ अदरक खाने से यह लालास्रावजनक-(**Sialagogue**) तथा रुचिकारक होता है। सोंठ की बुकनी का नस्य (**Snuff**) लेने से यह शिरोविरेचक (**Errhine**) होता है चिकित्सा में इसका प्रयोग विशेषतः दीपनपाचन (**Stomachic**) वातानुलोमन (**Carminative**) तथा रुचिकारक द्रव्य (**Flavouring agent**) के रूप में किया जाता है। इसका तैलीय-राल (**Oleo-resin**) जिसका व्यावसायिक नाम जिंजेरिन (**Gingerin**) है, रेचक गुटिकाओं में आँतों के मरोड़ (**Griping**) के निवारण के लिए दोषनिवारक के रूप में प्रयुक्त होता है।

योग :-

(ऑफिशल)

१—टिंक्चुरा जिंजिबरिस फॉर्टिस Tinctura Zingiberis Fortis (Tinct. Zingib. Fort.) —ले०; स्ट्रांग टिंक्चर ऑव जिंजर Strog Tincture of Ginger, इसेन्स ऑव जिंजर Essence of Ginger—अं०; अदरक का तीव्रबल निष्कर्ष—सं०, हिं०। मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से ०·६ मि० लि०)।

२—टिंक्चुरा जिंजिबरिस् मिटिस् Tinctura Zingiberis Mitis (Tinct. Zingib. Mit.)—ले०; वीक टिंक्चर ऑव जिंजर Weak Tincture of Zinger, टिंक्चर ऑव जिंजर Tincture of Ginger—अं०। अदरक या सोंठ का निष्कर्ष—सं०। मात्र—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०)।

३—सिरपस् जिंजिबरिस Syrupus Zingiberis (Syr. Zingib.)—ले०; सिरप ऑव जिंजर Syrup of Ginger—अं०; शर्बत जंजबील। मात्रा—३० से १२० बूंद या मिनम् (२ से ८ मि० लि०) या ½ से २ ड्राम।

(नॉट-ऑफिशल)

१–ओलियोरेजिन जिंजिबरिस Oleoresina Zingiberis (Oleores. Zingib.) I. P. C.—ले०; ओलियोरेजिन ऑव जिंजर Oleoresin of Ginger—अं०। पर्याय—जिंजेरिन Gingerin। यह टॅबेली जिंजिबरिस कम्पोजिटा (Tab. Zingib. Co.) में पड़ता है। मात्रा—¼ से १ ग्रेन (०·०१६ से ०·०६ ग्राम)।

२—टॅबेली जिंजिबरिस कम्पोजिटा Tabellae Zingiberis Composita (Tab. Zingib. Co.), I. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड टॅबलेट्स ऑव जिंजर Compound Tablets of Ginger—अं०।

पर्याय—जिंजर मिंट टॅबलेट्स Ginger Mint Tablets। मात्रा—१ से २ टॅबलेट।

कम्फॅरा Camphora (Camph.) I. P., B. P.

(कर्पूर)

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{16}O$.

Family : Lauraceae (कर्पूर-कुल)

नाम—कॅम्फर **Camphor**—अं०; कर्पूर—सं०; कपूर—हिं०; काफ़ूर—अ०; कापूर—फा०; काफ़ूर—यू० ।

प्राप्ति-साधन—कपूर रासायनिक दृष्टि से एक किटोन (Ketone) होता है, जो

(अ) नैसर्गिक रूप से (**Natural Camphor**) निम्न वनस्पतियों से प्राप्त किया जाता है, और ऊर्ध्वपातन (Sublimation) द्वारा शुद्ध किया जाता है—

(१) सिन्नेमोमम् कॅम्फोरा (Cinnamomum Camphora (Linn.) Nees. (कर्पूर-कुल);

(२) कपूरिया तुलसी ऑसिमम् किलिमन-ऑस्केरिकम् Ocimum Kiliman-Oscharicum Guerke (Family : Labiatae तुलसी-कुल) ।

आजकल **(ब) कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा** (**Synthetic Camphor**) भी बनाया जाता है । इसमें कम से कम ९६% $C_{10}H_{16}O$. होता है ।

वर्णन—कपूर के रंगहीन या सफेद क्रिस्टल, दाने (Granules) क्रिस्टलाइन टुकड़े (Crystalline masses), या टिकिया (Blocks) या भुरभुरे टुकड़े (Pulverulent masses) होते हैं । भुरभुरे टुकड़ो को 'कपूर का फूल Flowers of Camphor' कहते हैं । कपूर में एक विशिष्ट प्रकार की तीक्ष्ण (Penetrating) सुगन्धि होती है । जिह्वा पर रखने से तीक्ष्ण और सुगंधित होता है तथा बाद में जिह्वा पर या मुँह में ठंढक का अनुभव होता है । थोड़े से अलकोहल् (९५%), सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफार्म के साथ चूर्ण करने से आसानी से इसका चूर्ण बन जाता (Readily pulverisable) है । विलेयता—जल में तो यह बहुत कम घुलता है, किन्तु अलकोहल् (९५%), सालवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा स्थिर वानस्पतिक तेलों (Fixed Vegetable oils) में सुविलेय (Freely soluble) होता है । संरक्षण (Storage)—कपूर को अच्छी तरह डाट बन्द पात्रों में रखकर ठंढी जगह में रखना चाहिए ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

बाह्य—त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से यह रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) तथा स्थानिक वेदनाहर (Local anodyne) प्रभाव करता है । इसके अतिरिक्त यह साधारण जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) भी होता है । प्रतिक्षोभक एवं स्थानिक वेदनाहर होने के कारण इसका उपयोग मालिश की दवाओं (लिनिमेंट Liniment) में पेशीशूल (Myalgia), मोच (sprains), आमवात (Muscular Rheumatism) व्याधियों में किया जाता है । फुफ्फुसावरण शोथ (Pleurisy) एवं श्वासनलिका शोथ (Bronchitis) से होने वाले पार्श्व शूल या छाती के दर्द में कड़वे तेल में मिलाकर अथवा तारपीन के तेल में मिलाकर मालिश करने से सूजन एवं दर्द दोनों का शमन होता है । सतपिपर मिंट (मेंथाल) या क्लोरल हाइड्रेट के साथ कर्पूर मिलाने से

द्रव बनजाता है (अमृत धारा) इस द्रव का उपयोग शिरःशूल में मस्तक पर लगाने के लिए तथा दंतशूल में दर्द युक्त दांत के खोखले में रूई का फोया भिगो कर रखा जाता है। अनेक दंत मंजनों में भी कपूर मिलाया जाता है।

आभ्यन्तर—मुख-द्वारा सेवन किए जाने पर भी अन्ननलिका पर रक्तिमोत्पादक प्रभाव होता है। अल्प मात्रा में प्रयुक्त होने पर मुँह में तीता स्वाद एवं जलन-सा अनुभव होता है, और आमाशय में उष्णता की अनुभूति होती है। यह आमाशयिक स्राव एवं पुरःसरणगति Peristalsis) में वृद्धि करता है। इस प्रकार कपूर दीपन (Stomachic) एवं वातानुलोमन (Carminative) होता है। किन्तु अधिक मात्रा में सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली में प्रदाह (Gastroenteritis) करता है, जिसके परिणाम स्वरूप वमन तथा अतिसार (कै-दस्त) का उपद्रव हो जाता है। आमाशयगत उत्क्लेश कारक प्रभाव के कारण प्रत्यक्षिप्त रूप से (Reflexly) यह श्वासप्रणालिकाओं के स्राव में वृद्धि करता है। अतः यह कफनिस्सारक (Expectorant) भी होता है। अन्य उत्पत तेलों की भाँति यह प्रत्याक्षिप्तरूप से श्वसन को भी उत्तेजित करता है, इंजेक्शन के रूप में प्रयुक्त होने पर यह क्रिया और भी तीव्र होती है। अर्ककपूर (कम्फर वाटर) का उपयोग घरेलू चिकित्सा में उदर के आध्मान एवं शूल (Flatulence and Colic) में किया जाता है। स्प्रिट कम्फर का प्रयोग हिस्टीरिया (योषा पस्मार) रोग में उत्तेजक प्रभाव (Reflex stimulant) के लिये करते हैं। गर्मियों में अजीर्ण एवं वायुविकृति से होने वाले अतिसार (Flatulent diarrhoea) में पल्वक्रिटाकम् औषियों के साथ देने से बहुत लाभ होता है।

रक्तसंवहन—आमाशय पर स्थानिक क्रिया से यह प्रत्याक्षिप्त रूप से हृदय पर उत्तेजक प्रभाव (Cardiac stimulant) करता है। अतएव आशुकारी हृदयोत्तेजक (Diffusible stimulant) के रूप में इसका उपयोग अनेक ऐसी आत्ययिक अवस्थाओं में किया जाता है, जब हृदय की खराबी न होने पर भी हृदय की गति के अवरोध की आशंका होती है। कपूर त्वचा की रक्तवाहिनियों को विस्फारित करता है (Dilates the blood vessels of the skin) और इसके सेवन से अलकोहल् की भाँती शरीर में गर्मी (उष्णता) का अनुभव होता है। इसके इस गुण का उपयोग सर्दी लगने में किया जाता है। उपर्युक्त दोनों प्रकार के गुण आयुर्वेदीय कस्तूरी भैरव योग के सेवन से उपलब्ध हो सकते हैं। त्वचागत रक्तवाहिनियों के विस्फारित होने से रक्तभार (Blood pressure) गिर जाता है। इस प्रकार कपूर साधारण स्वेदल (Diaphoretic) एवं संतापहर (Antipyretic) भी होता है। अन्य उत्पत् तैलों की भांति कपूर के प्रयोग से भी साधारण श्वेतकायाणूत्कर्ष (Leucocytosis) होता है। पहले न्यूमोनिया में हृदय को बल देने के लिए कपूर का जैतून के तेल में बनाया हुआ विलयन अवस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त किया जाता था। किन्तु अब एतदर्थ कोरामीन तथा लेप्टाजोल आदि उत्तम औषधियाँ उपलब्ध होने लगी हैं। अतएव अब उसका स्थान इन्हीं औषधियों ने ले लिया है।

श्वसन—कपूर श्वसन (Respiration) पर उत्तेजक प्रभाव करता है तथा साथ ही श्वासनलिकाओं के स्राव को (Bronchial Secretion) बढ़ाकर कफनिस्सारक

(Expectorant) प्रभाव करता है । अतएव खाँसी के निवारण के लिए अनेक कफमिक्सचर (Cough mixtures) में मिलाकर ब्रांकाइटिस (Bronchitis) एवं ब्रांको न्युमोनिया (Broncho-pneumonia) आदि व्याधियों में प्रयुक्त किया जाता है। एतदर्थ कम्फर के टिंक्चर का व्यवहार करते हैं। उग्र खाँसी (Distressing Cough) में कम्फोरेटेड टिंक्चर ऑव ओपियम् का प्रयोग करने से खाँसी का भी शमन होता है तथा रोगी को निद्रा भी आ जाती है। मस्तिष्क एवं सुषुम्नाशीर्षगत केन्द्र (Cerebral Cortex and Medullary Centres)—मस्तिष्कगत क्रिया के कारण कपूर अल्कोहल् की भाँति उत्तेजक (Excitant) तथा उल्लासकारक (Exhilarant) होता है। किन्तु मात्राधिक्य के कारण प्रलाप (Mental excitement), शिरोभ्रम (Giddiness), कम्प (Tremors) एवं आक्षेप (Clonic Convulsions) आदि उपद्रव पैदा करता है।

अल्प मात्रा में कपूर सुषुम्नाशीर्षगत केन्द्रों पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे श्वसन में तीव्रता (Quickening of respiration) तथा रक्तभार में क्षणिक वृद्धि (Temporary rise of blood pressure) होता है, किन्तु अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने से इसके ठीक विपरीत प्रभाव होकर उक्त केन्द्रों पर क्रियाघातक प्रभाव (Paralytic effect) होता है। मृत्यु श्वसन भेद (Respiratory failure) के कारण होती है।

वक्तव्य—कपूर सेवन से विषाक्त प्रभाव होने पर तुरन्त आमाशय का प्रक्षालन करना चाहिए। शरीर को गरम पानी के बोतलों के द्वारा गरम रखना चाहिए और श्वसनोत्तेजक औषधियाँ (Respiratory stimulants) का सेवन करना चाहिए।

शोषण तथा निस्सरण—कपूर, त्वचा, श्लैष्मिक कला तथा त्वचाधः धातुओं (Sub-cutaneous tissue) द्वारा शीघ्रतापूर्वक शोषित होता है। शोषणोपरान्त यह कम्फरोल (Camphorol) के रूप में वियोजित होकर प्रधानतः मूत्र के साथ ग्लाइक्युरोनिक एसिड के साथ संयुक्त होकर उत्सर्गित होता है। इसके अतिरिक्त इसका निस्सरण पसीना, मल (Faeces) एवं श्वासनलिकास्राव से भी होता है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्वा कम्फॉरी *Aqua Camphorae* (Aq. Camph.) I. P., B. P.—ले०; कॅम्फर वाटर Camphor Water—अं०; कपूर जल या अर्क कपूर—हिं०। १००० मि० लि० परिस्रुत जल (Distilled Water) में १ ग्राम (०·१ प्रतिशत) कपूर या कम्फर (Camphor) होता है। मात्रा—½ से १ औंस (१५ से ३० मि० लि०) या १। तोला से २॥ तोला।

२—लिनिमेंटम् कॅम्फॉरी Linimentum Camphorae (Lin. Camph.) I. P., B. P.—ले०; लिनिमेंट ऑव कॅम्फर Liniment of Camphor—अं०। पर्याय—कम्फोरेटेड ऑयल Camphorated Oil। इसमें २० प्रतिशत (w/w) कॅम्फर या कपूर होता है। निर्माण विधि—कॅम्फर (Camphor) २०० ग्राम; मूँगफली का तेल (Arachis Oil) ८०० ग्राम। मूँगफली के तेल में मिलाकर बन्द पात्र में रख दें। संग्रह (Storage)—लिनिमेंट ऑव कम्फर को अच्छी तरह डाटबन्द पात्र (Well-closed container) में रखकर ठण्डी जगह में इसका संरक्षण करना चाहिए।

३—लिनिमेंटम् कॅम्फोरी अमोनिएटम् Linimentum Camphorae Ammoniatum (Lin,

Camph. Ammon.) I.P., B. P.—ले०; अमोनिएटेड लिनिमेंट ऑव कम्फर Ammoniated. Linement of Camphor लिनिमेंट कम्फोरी कम्पोजिटस् (Lin. Camphor. Co.)—अं० ।

४—लिनिमेंटम् सेपोनिस Linimentum Saponis (Lin. Sap,) I. P., B. P.—ले०; लिनिमेंट ऑव सोप Liniment of Soap—अं० ।

५—लिनिमेंटम् टरविन्थिनी Linimentum Terebinthinae (Lin. Terebinth.) I. P., B. P.—ले०; लिनिमेंट ऑव टर्पेनटाइन Liniment of Turpentine—अं० ।

६—टिंक्चुरा ओपियाइ कम्फोरेटा Tinctura Opii Camphorata (Tinct. Opii.) Camph.); टिंक्चुरा कम्फोरी कम्पोजिटा Tinctura Camphorae Composita (Tinct. Camph. Co.) I. P., B. P.—ले०; कम्फोरेटेड टिंक्चर ऑव ओपियम् Camphorated Tincture of Opium—अं० । पर्याय—पेरागोरिक Paregoric पेरागोरिक इलिक्जिर Paregoric Elixir —अं० । मात्रा—२० से ६० बूंद ।

(नॉट्-आफिशल)

१—लिनिमेंटम् क्लोरोफॉर्माइ Linimentum Chloroformii, B. P. C.—ले०; लिनिमेंट ऑव क्लोरोफॉर्म Liniment of chloroform—अं० । इसमें लिनिमेंट केम्फर तथा क्लोरोफॉर्म बराबर मात्रा में होते हैं ।

२—कम्फोरी मॉनोब्रोमेटा Camphorae Monobromata (Camph. Monobrom.) । इसके रंगहीन त्रिपार्श्विक कण (Prisms) होते हैं, जो जल में अविलेय (Insoluble) होते हैं । यह निद्राजनक (Hypnotic) तथा नाड़ी-संशामक (Nervous sedative) होता है । अतएव हिस्टीरिया, लासक (Chorea) सकम्पप्रलाप (Delirium tremens) आदि नाड़ी संस्थान के रोगों में उपयोगी होता है । दूसरे विशेष उपयोगी शुक्रमेह (Spermatorrhoea) रोग में किया जाता है । मात्रा—२ से ८ ग्रेन (०·१२ से ०·५ ग्राम) या १ से ४ रत्ती ।

३—लिंक्टस् ओपियाई कम्फोरेटस् को० Linctus opii Camphoratus Co., B. P. C.—ले० । मात्रा—३० से १२० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०) ।

४—नेरिस्टिली क्लोरब्यूटोलिस् (Naristillae Chlorbutolis) B.P. C. । कर्पूरादि नासाबिन्दु। क्लोरब्यूटॉल (Chlorbutol) ४ ग्रेन, कम्फर (कपूर) ६ ग्रेन, ऑयल सिन्नेमन ४ मिनम् (बूंद)।

कर्पूर-घटित उपयोगी नुस्खेः—

(१) पोटासियम् एसिटेट	१५ ग्रेन
टिंक्चर इपेकाक०	१० बूंद
सिरप सिल्ला	२० बूंद
सिरप टोलू	१ ड्राम

एक्वा कम्फर आवश्यकतानुसार १ औंस तैयार औषधि के लिए ।

यह एक उत्तम कफनिस्सारक (Expectorant) मिश्रण है ।

(२) कम्फर	१ ग्रेन
पल्व० क्रीटा एरोमेटिक कम् ओपिओ	२० ग्रेन

यह ग्रीष्मकालीन अतिसार के लिए परमोपयुक्त है ।

(३) कम्फर — ½ औंस

डिहाइड्रेटेड अलकोहल् — ½ औंस

इसमें से २ से ५ बूंद औषधि चीनी या बताशे में रखकर देनी चाहिए। इसे रयूबीनी का सॉल्यूशन (Rubini Solution) भी कहते हैं। आशुकारी उत्तेजक (Diffusible Stimulant) होता है।

मेन्थॉल (Menthol) I. P., B. P.

(सत पुदीना, सत पिपरमिंट)

Family : Labiatae (तुलसी-कुल)

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{20}O$.

प्राप्ति-साधन—मेन्थॉल (१) नैसर्गिक रूप से पेपरमिन्ट ऑयल (Peppermint oil) से अथवा मेंथा प्रजाति† की अन्य वनस्पतियों से प्राप्त होनेवाले सुगन्धित तैलों से अथवा आजकल रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से (Synthetically) बनाया जाता है। रासायनिक दृष्टि से यह P–menthan–3–ol होता है। प्रकाशपरावर्तन की दृष्टि से निम्न प्रकार के मेंथॉल उपलब्ध होते हैं:—

(१) नैसर्गिक वाम प्रकाशावर्ती मेन्थाल Natural (—) Menthol।

(२) कृत्रिम ,, ,, ,, Synthetic (—) Menthol।

(३) रेसिमिक मेन्थॉल Synthetic (±) Menthol।

वर्णन—मेन्थॉल के सूच्याकार (Acicular) या त्रिपार्श्व (Prismatic) क्रिस्टल्स होते हैं, जिसमें पिपरमिंट की सी तीक्ष्ण गंध होती है। स्वाद में गर्म (Warm) एवं सुगंधित होता है, किन्तु बाद में मुँह में ठण्डक की अनुभूति (Sensation of cold) होती है। विलेयता—अल्कोहल् (९०%), सॉलवेन्ट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में सुविलेय (Very Soluble) होता है; लाइट लिक्विड पाराफिन तथा उड़नशील तेलों (Essential Oils) में भी अच्छी तरह घुल जाता है। पानी में बहुत कम घुलता (Slightly Soluble) है।

निम्न विशिष्ट प्रजातिओं से प्राप्त किया जाता है :—

(१) Mentha arvensis DC. var piperascens Holmes. (जापान)

(२) Mentha arvensis DC. var glabrata Holmes (चीन)।

(३) M. piperita Linn. (अमरीका)

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य—त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से मेन्थॉल रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) तथा वेदनाहर (Analgesic) प्रभाव करता है। मेन्थाल-यष्टिका (Stick or Cone) अथवा लिनिमेंट के रूप में अन्य सहायक औषधियों के साथ वेदनाहर क्रिया के लिए इसका प्रयोग नाड़ीशूल (Neuralgia), शिरःशूल (Headache), कटिशूल (Lumbago) तथा आमवात (Rheumatism) आदि वेदनायुक्त अवस्थाओं में किया जाता है।

---

† जापान, चीन एवं अमरीका में।

अल्कोहल् में बनाया हुआ इसका विलयन या सॉल्यूशन (८ भाग में १ भाग) कण्डू (Pruritus) में प्रयुक्त किया जाता है। ऑयल ऑव युकेलिप्टस के साथ बनायी हुई मेन्थॉल की मुखगुटिकाओं (Pastilles) का प्रयोग ग्रसनिकाशोथ (Pharyngitis) एवं श्वासनलिका प्रसेक (Bronchial Catarrh) में किया जाता है। अकेले मेन्थॉल अथवा थायमॉल एवं मेन्थॉल का लिक्विड पाराफिन में बनाया हुआ विलयन (१ से २ प्रतिशत) नासाग्रसनिका मार्ग के प्रसेक (Naso-pharyngeal Catarrh) में सीकर (Spray) के रूप में प्रयुक्त करने से बहुत लाभ होता है। बराबर मात्रा में मेन्थॉल, कम्फर एवं क्लोरल हाइड्रेट को परस्पर मिलाने से द्रव बन जाता है (अमृतधारा)। इस द्रव में भिगोया हुआ रूई का फाया शूलयुक्त दन्तकोटर में रखने से वेदना का शमन होता है। कर्पूर की अपेक्षा मेन्थल में जीवाणुनाशक क्रिया (Antiseptic) अधिक प्रबल होती है।

आभ्यन्तर—अल्प मात्रा (½ ग्रेन) में मुखद्वारा सेवन किए जाने पर यह आमाशय पर संशामक (Gastric Sedative) प्रभाव करता है। अतः इस कर्म के कारण इसका प्रयोग वमन (Vomiting) तथा हिक्का (Hiccough) के शमन के लिए किया जाता है।

(योग)

ब्रिटिश फार्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में मेन्थॉल-घटित निम्न योगों का उल्लेख है:—

१—नेरिस्टिली क्लॉरब्युटॉलिस कम् मेंथॉली Naristillae Chlorbutolis cum Menthol (Narist. Chlorbutol, C. Menthol.)—ले०; नेजल ड्राप्स ऑव क्लॉरब्युटॉल विथ मेंथॉल Nasal Drops of Chlorbutol with Menthol, क्लॉरब्युटॉल एण्ड मेथॉल नेजल ड्राप्स Chlorbutol and Menthol Nasal Drops—अं०। क्लॉरब्युटॉल (Chlorbutol) ४ ग्रेन, मेन्थॉल ४ ग्रेन, कॅम्फर ६ ग्रेन, दालचीनी का तेल (सिन्नेमन ऑयल) ४ बूंद, मूँगफली का तेल (Arachis oil) १२० बूंद तथा लिक्विड पाराफिन इतना मिलायें कि सब मिलकर १ औंस दवा तैयार हो।

२—नेबुला मेन्थॉलिस् एट थायमोलिस् कम्पोजिटा Nebula Mentholis et Thymolis Composita—स्प्रे ऑव मेंथाल एण्ड थायमोल कम्पाउण्ड Spray of Menthol and Thymol Compound—अं०।

३—वेपर मेंथॉलिस एट बेंजोइनी Vapor Mentholis et Benzoini (Vap. Menthol. et Benzoin)—ले०; इन्हेलेशन ऑव मेंथॉल एण्ड बेंजोइन Inhalation of Menthol and Benzoin मेंथॉल एण्ड बेंजोइन इनहेलेशन Menthol and Benzoin Inhalation—अं०। सत पिपरमिंट का प्रधान आघ्रापन—हिं० (नवीन)। मेंथॉल ८ ग्रेन, इनहेलेशन ऑव बेंजोइन १ औंस। दोनों को परस्पर मिलावें।

४—वेपर मेथॉलिस एट युकेलिप्टाइ Vapor Mentholis et Eucalypti (Vap. Menthol et Eucalyp.) ले०; मेंथॉल एण्ड युकेलिप्टस इन्हेलेशन Menthol and Eucalyptus Inhalation—अं०। मेंथॉल ८ ग्रेन, युकेलिप्टस का तेल ६० बूंद, लाइट मैगनीसियम् कार्बोनेट (Ligh Magnesium Carbonate) ३० ग्रेन, जल १ औंस तक।

मेंथॉल के उपयोगी नुस्खे—

(१) मेंथॉल	१० ग्रेन
लिनिमेंट एकोनाइट	१२० बूंद
लिनिमेंट बेलाडोना	१८० ,,
लिनिमेंट सेपोनिस्	१८० ,,

सबको परस्पर मिलावें। स्थानिक वेदनाहर प्रभाव के लिए पेंट के रूप में प्रयुक्त करें।

(२) मेंथाल	५ ग्रेन
क्लारब्यूटॉल	५ ग्रेन
युकेलिप्टोल	६० बूंद
पाराफिन लिक्विड लीवी (लाइट या लघु)	१ औंस तक

स्प्रे (Spray) के रूप में नासाकण्ठ मार्ग की व्याधियों में प्रयुक्त करने के लिए उत्तम योग है।

(३) मेंथाल	½ ग्रेन
क्लारब्यूटॉल	२½ ग्रेन
एक्स्ट्रॅक्ट बेलाडोना सिक्कम्	⅛ ग्रेन

बबूल का गोंद तथा सिरप ग्लूकोज आवश्यकतानुसार सबको मिलाकर गोली (Pill) बनावें। घंटे-घंटे पर ऐसी १–१ गोली दें। वमन तथा हिक्का के लिए उत्तम है।

थायमोल Thymol (Thymol) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_{10} H_{14} O$.

नाम—यमानी सत्व—सं०; सतअजवायन—अजवाइन का फूल (Flowers of Ajowan)—हिं०।

प्राप्ति-साधन—सत अजवायन या थायमोल एक क्रिस्टलाइन फिनोल (Crystalline phenol) है, जो रासायनिक दृष्टि से 3-methyl-6-isopropyl phenol होता है। नैसर्गिक रूप में यह निम्न वनस्पतियों से प्राप्त होने वाले उड़नशील तेल (Volatile oil) से प्राप्त किया जाता है। आजकल यह कृत्रिम रूप से पाइपेरिटोन (Piperitone) मेंथॉन (Menthone) पी-सायमीन (P-Cymene) के रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा (Synthetically) भी बनाया जाता है। जिन वनस्पतियों के उत्पत् तैल से यह प्राप्त किया जाता है, उनके नाम निम्नलिखित हैं :—

(१) थायमस् वल्गेरिस् Thymus vulgaris Linn.

(२) मोनारडा पंक्टेटा Monarda punctata Linn.

(३) ट्रेकिस्परमम् एमिआइ Trachyspermum ammi (L) sprague.

नं० (१) एवं (२) की वनस्पतियाँ तुलसी-कुल (Family : Labiatae) की तथा नं० ३ की वनस्पति गाजर-कुल (Family : Umbelliferae) की है। थायमस् वल्गेरिस के तेल (Thyme oil) से लगभग २० से ३० प्रतिशत तक थायमोल प्राप्त होता है।

और मोनारडा तथा ट्रेकिस्परम् से क्रमशः ६० प्रतिशत एवं ४५ से ५५ प्रतिशत तक सत अजवायन प्राप्त होता है।

वक्तव्य—थायमोल पहले यमानी (सं०) या अजवायन (हिं०) [Carum copticum Benth. Fam. Umbelliferae] से प्राप्त किया गया था। अधुना अर्थात् यह कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषण पद्धति से अथवा उपर्युक्त अन्य वनस्पतियों से प्राप्त होता है, किन्तु हिन्दी नाम पूर्व परम्परागत ही चला आ रहा है।

(२) **थायमस् वल्गेरिस्** को अरबी में **'हाशा'** और **'सातर'** तथा यूनानी में थायमस् (Thymus) कहते हैं, प्राचीन अरबों ने जिसका उच्चारण **'सोमस'** किया है। प्रचलित भाषा में इसे **'पहाड़ी पुदीना'** कहते हैं।

वर्णन—थायमोल के रंगहीन क्रिस्टल होते हैं, जिनमें पहाड़ी पुदीने की (Thyme-like) उग्र सुगन्धि होती है। स्वाद में यह तीक्ष्ण (Pungent) एवं सुगन्धित होता है। ठण्डे पानी में डालने से ये क्रिस्टल्स नीचे बैठ जाते हैं, किन्तु पानी को गरम करने (४५°) से पुनः थायमोल क्रिस्टल्स पिघलकर ऊपर जल के सतह पर आ जाते हैं। विलेयता—१५·५° तापक्रम पर १००० भाग जल में १ भाग अल्कोहल् (९०%) में १ भाग, सॉल्वेंट ईथर १·५ में १ भाग तथा ०·६ भाग क्लोरोफॉर्म में १ भाग घुलता है।

मात्रा—३० से १२० मि० ग्रा० (milligrams : mg.) या ½ से २ ग्रेन (¼ से १ रत्ती)। कृमिघ्न मात्रा (Anthelmintic Dose)—१ से २ ग्राम या १५ से ३० रत्ती (७ से १५ रत्ती)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

थायमल एक घन उत्पत् तैल (Solid volatile oil) है। इसमें जीवाणुनाशक (Bactericide) क्रिया फिनोल से भी तीव्र होती है; किन्तु जल में अत्यल्प घुलनशील होने के कारण इस रूप में इसका प्रयोग बहुत कम ही हो सकता है। थायमॉल के इस गुण का उपयोग **मुख धावन** (Mouth wash) या **नासासीकर** (Nasal spray) के लिये किया जाता है। मुखधावन के लिए ब्रिटिश फार्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में उल्लिखित जल-विलेय टिकियों (Solution Tablets or Solvelles) का उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए २ औंस गरम पानी में १ टिकिया डाल दे। टिकिया जल में घुल जायगी और मुखधावन द्रव (Mouth wash) तैयार हो गया। एन्टिसेप्टिक होने के कारण थायमल-घटित मलहम का प्रयोग अनेक त्वचा-रोगों-यथा विचर्चिका (Eczema), सोरिएसिस (Psoriasis) बेवाइ (Broken Chilblains) आदि में भी किया जाता है। किन्तु ध्यान रहे कि थायमोल त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से तीव्र क्षोभक प्रभाव करता है। थायमल का उपयोग अन्य औषधियों के साथ दंत चिकित्सा (Dentistry) में भी किया जाता है। फिनोल एवं कपूर (कम्फर) के साथ मिलाकर दंतकोटरों को भरा जाता है। केविटी-फिलिंग (Cavity-filling) में पूर्व-कर्म स्वरुप जिंक आक्साइड के साथ मिलाकर रक्षात्मक पूरण (Protective cap to the dentine prior to filling) के लिए प्रयुक्त करते हैं।

पहले सत अजवायन (थायमल) का एक मुख्य उपयोग कृमिघ्न के रूप (Anthelmintic for hookworm infestation) में अंकुशमुख कृमि के उपसर्ग में किया जाता था। एतदर्थ रोगी को ५-१५ ग्रेन की ३ मात्रायें जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर १-१ घंटे के अन्तर से प्रातः काल खाली पेट पर दी जाती है। और ४-५ घंटे के बाद रेचन के लिए मैग० सल्फ० की एक मात्रा दी जाती है। इस चिकित्सा क्रम में रोगी को बिस्तरे पर ही आराम से रहना चाहिए। तथा गर्भवती स्त्रियों में एवं रक्ताल्पता अधिक होने पर एवं हृदय रोग से पीड़ितों में थायमल प्रायः नहीं देना चाहिए अथवा देना हो तो अपेक्षाकृत कम मात्रा में और सावधानी से देना चाहिए। आजकल अनेक अच्छी एवं निरापद कृमिघ्न औषधियाँ उपलब्ध होने लगी हैं अतएव थायमल का प्रयोग इसलिए प्रायः नहीं किया जाता।

थायमल के योग (Preparations)

(१) थायमल केटाप्लाज्मा केओलिनाइ (केओलिन पुल्टिस) में पड़ता है।

(२) ग्लिसेरिनम् थायमोलिस कम्पोजिटम् Glycerinum Thymolis Compositum (Glycer. Thymol. Co.) B. P. C. ले०; ग्लिसरिन ऑव थायमोल कम्पाउण्ड Glycerin of Thymol, Compound, कम्पाउण्ड ग्लिसरिन ऑव थायमोल Compound Glycerin of Thymol—अं०। पर्याय—ग्लिसेरिनम् थायमोलिस अल्केलिनम् Glycerinum Thymolis Alkalinum।

(३) नेरिस्टिली मेंथॉलिस एट थायमोलिस Naristillae Mentholis et thymolis (Narist. Menthol. et. thymol.) B. P. C.—ले०; नेसल ड्राप्स ऑव मेंथॉल एण्ड थायमॉल Nasal Drops of Menthol and Thymol मेंथाल एण्ड थायमॉल नेसल ड्राप्स Menthol and Thymol Nasal Drops—अं०। यमानी सत्वादि नासाबिन्दु—हिं०। इसमें मेंथॉल २ ग्रेन, थायमॉल १ ग्रेन, युकेलिप्टाल १ बूँद तथा लिक्विड पाराफिन आवश्यकतानुसार १ औंस तैयार औषधि के लिए। मेंथाल, थायमाल तथा युकेलिप्टाल को पहले खरल में घोंटे और बाद में लिक्विड पाराफिन मिला दें।

(४) सॉल्वेल्ली थायमोलिस कम्पोजिटी Solvellae Thymolis Compositae (Solv. Thymol. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड सॉल्यूशन-टॅबलेट्स ऑव थायमोल Compound Solution-Tablets of Thymol—अं०। थायमल की जल-विलेय टिकिया—हिं०। प्रत्येक सॉल्यूशन-टॅबलेट में सोडियम् बाइकार्बोनेट ५ ग्रेन, बोरेक्स (Borax) ५ ग्रेन, फिनोल $\frac{1}{2}$ ग्रेन, थायमल (Thymol) $\frac{1}{10}$ ग्रेन तथा अमरन्थ (Amaranth) $\frac{1}{500}$ ग्रेन होता है। वक्तव्य—जब प्रयोग करना हो उसी समय १ टिकिया को २ औंस गरम जल में घोलना चाहिए।

(५) नेबुला मेंथॉलिस एट थायमॉलिस कम्पोजिटा Nebula Mentholis et thymolis Composita (Neb. Menthol. et. Thymol. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउन्ड स्प्रे ऑव मेंथॉल एण्ड थायमॉल Compound Spray of Menthol and Thymol, मेंथॉल एण्ड थायमॉल कम्पाउण्ड स्प्रे Menthol and Thymol Compound Spray—अं०। मेंथाल ४३$\frac{3}{4}$ ग्रेन थायमाल ८$\frac{3}{4}$ ग्रेन कम्फर (कपूर) ४३$\frac{3}{4}$ ग्रेन, फिनोल ८७$\frac{1}{2}$ ग्रेन लघुलिक्विड पाराफिन (Light Liquid paraffin) आवश्यकतानुसार १० फ्लुइड औंस तैयार औषधि के लिए।

थायमल या सत अजवायन के अन्य नुस्खे

(१) थायमल	२ ग्रेन।
बेन्जोइक एसिड	१० ग्रेन।
बोरिक एसिड	२० ग्रेन।
युकेलिप्टस का तेल	३० बूँद।
पिपरमिंट का तेल	२० ,, ।

अल्कोहल (९० प्रतिशत) इतना मिलायें कि सब मिल कर १ औंस हो जाय। इसमें से १५ बूँद औषधि १ छटांक जल में मिलाकर मुख-धावन Mouth wash) के लिए गरगरा करें।

(२) कम्फर (कपूर) २ भाग।

मेंथॉल	२ भाग।
क्लोरेटोन	२ ,,
थायमल	०·२ ,,

लिक्विड पाराफिन लीवी (Liquid paraffin Lev.) १०० भाग।

कण्ठ में सीकर (Spray) के लिए उत्तम योग है।

अध्याय ११

रामबाण औषधियाँ या रस-औषधियाँ (किंवा सफल औषधियाँ)।
(Chemotherapeutic Agents)

सामान्यविज्ञानीय परिच्छेद १

प्रकरण १

रासायनिक यौगिकों (Chemical compounds) द्वारा औपसर्गिक व्याधियों (Infectious diseases) की विशिष्ट चिकित्सा (Specific treatment) को किमोथेरापि (Chemotherapy) कहते हैं। और इस हेतु प्रयुक्त द्रव्यों, यौगिकों वा औषधियों को किमोथेराप्युटिक एजेन्ट्स (Chemotherapeutic agents) या रस-औषधियाँ कहते हैं। कार्य-क्षेत्र की दृष्टि से इनको सामन्यकायिक-उपसर्गनाशक औषधियाँ (Systemic anti-infectives) भी कह सकते हैं, अनेक व्याधियों में जो औषधियाँ प्रयुक्त होती हैं, उनसे केवल लाक्षणिक (Symptomatic) लाभ ही पहुँचता है। कहने का तात्पर्य यह कि इस प्रकार की औषधियाँ विकृतिजनक मूल कारणों का विनाश नहीं करतीं। हाँ, सूक्ष्म विकारी-जीवाणुओं (Micro-organisms) अथवा पराश्रयी कीटाणुओं द्वारा होनेवाली अनेक औपसर्गिक व्याधियों में आज ऐसे यौगिक उपलब्ध हैं, जो अपनी विशिष्ट क्रिया उक्त विकारी-जीवाणुओं पर करते हैं और इस प्रकार मूल कारण का पूर्णतः विनाश या उन्मूलन करने से चिकित्सा की वास्तविकता को चरितार्थ करते हैं। फिरंग रोग में आर्सेनिक के यौगिक, अमीबिक प्रवाहिता में इमेटीन तथा मलेरिया में क्विनीन एवं कालाज्वर में एन्टिमनी के यौगिकों की क्रिया इसी प्रकार होती है। इस अर्थ में 'किमोथेरापि' शब्द का व्यवहार सर्वप्रथम एहरलिक (Ehrlick) नामक जर्मन वैज्ञानिक ने किया था। किमोथेराप्युटिक एजेन्ट्स में प्रतिविषों (Antitoxins) या जीवाणुनाशक (Antibacterial) द्रव्यों की भाँति अधिकतम विशिष्ट घातक क्रिया जीवाणुओं पर (Parasitotropic action) होती है। साथ ही शरीर धातुओं (Body-tissues) पर इनकी घातक क्रिया न्यूनतम (Minimum organotropic property) होती है। इस प्रकार जिस किमोथेराप्युटिक द्रव्य में उक्त विशेषता जितनी ही अधिक होगी, वह उतना ही श्रेष्ट किमोथेराप्युटिक द्रव्य समझा जायगा। संक्षेपतः इसका संकेत (Index) निम्न प्रकार हो सकता है—

$$\frac{\text{maximum tolerated dose}}{\text{minimum curative dose}}$$

उपरोक्त नियम के अनुसार यह संकेत जितना ही अधिक होगा; इसका तात्पर्य या फल यह समझना चाहिए कि उस यौगिक या द्रव्य में जीवाणुनाशक क्रिया या उस जीवाणु के कारण होने वाले उपसर्ग को शमन करने की शक्ति उतनी ही अधिक है। प्रतिविष एवं जीवाणुनाशक वैक्सीन एवं सीरम द्वारा भी जीवाणुविशेषजन्य उपसर्ग का शमन होता है, किन्तु उनके द्वारा जीवाणुओं एवं उसके विषों को निष्क्रिय करने वाले शारीरिक साधनों के संगठनों में सहायता मिलती है और किमोथेराप्युटिक द्रव्य शरीर में किये जाने पर सीधे जीवाणुओं पर आक्रमण कर उनको नष्ट करने में समर्थ होते हैं। अतएव प्रतिविष अथवा जीवाणुनाशक सीरम-वैक्सीन चिकित्सा (Immunotherapy) एवं रसौषधियों द्वारा विशिष्ट चिकित्सा (Chemotherapy) में यही परस्पर भेद समझना चाहिए। इन औषधियों के आविष्कार से आज चिकित्सा-क्षेत्र में क्रान्ति-सी हो गई है। अब अनेक ऐसी भयङ्कर व्याधियों का, जिन्होंने मानव समाज को अपने चंगुल में जकड़ रखा था, समूल नष्ट करना अत्यन्त सुगम हो गया है।

वास्तव में किमोथेराप्युटिक एजेन्ट्स शरीर में किस प्रकार जीवाणुओं का विनाश करते हैं, इस विषय में अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त जन्तु के शरीर में भी कुछ ऐसी प्रक्रियायें होती हैं, जो इन औषधियों को सहायता करती हैं। क्योंकि देखा जाता है कि जन्तु के शरीर के बाहर तो अनेक किमोथेराप्युटिक औषधि जीवाणुओं को मारने में समर्थ नहीं होती, किन्तु जन्तु के शरीर के अन्दर उनकी जीवाणुनाशक क्रिया अनुभव से देखी जाती है। औषधियों की इस सहायता में शरीरगत जालकान्तस्तरीय संस्थान (Reticulo-endothelial System) विशेष रूप से सहायक होता है। जन्तु शरीर में जीवाणुनाशन क्रिया में किमोथेराप्युटिक औषधियों को निम्न प्रकार से सहायता मिलती है :—(१) शरीर में प्रविष्ट होने के बाद जन्तु शरीर इन औषधियों का संग्रह धातुओं (Tissues) में करता है, यहाँ से यह धीरे-धीरे रक्तप्रवाह में उत्सर्गित होता रहता है। इस प्रकार औषधि का शरीर से सहसा जल्दी निस्सरण नहीं होने पाता और जीवाणुओं को प्रभावित करने के लिए शरीर में अधिक समय तक बना रहता है। (२) औषधि के जीवाणु-उपसृष्ट क्षेत्र में पहुँचाता है; (३) कभी-कभी शरीर में पहुँचने के बाद यह औषधियाँ ऐसे यौगिकों में रूपान्तरित होती हैं, जो जीवाणुओं के लिए और घातक हो जाते हैं तथा (४) जीवाणुभक्षण (Phagocytic action) क्रिया एवं प्रतियोगी पदार्थों (Antibodies) की उत्पत्ति में सहायता होती है, जिससे जीवाणुओं का नाश अधिक सुगम हो जाता है। संक्षेपतः ये यौगिक शरीर में उन सभी द्रव्यों एवं प्रक्रियाओं को रोकते हैं, जो विकारी-जीवाणुओं की वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं।

किमोथेराप्युटिक औषधियों या सामान्यकायिक उपसर्गनाशक औषधियों का वर्गीकरण:—

(अ) विषज्वरहर या मलेरियानाशक औषधियाँ (Antimalarial remedies or Drugs used in Malaria)

(१) क्विनोलीन यौगिक (Quinoline derivatives):—

(अ) सिंकोना तथा इसके अल्कलायड्स (विशेषतः क्विनीन)।

(ब) 8—aminoquinolines पामाक्विन, पेंटाक्विन तथा प्रिमाक्विन ।

(स) 4—aminoquinolines : क्लोरोक्वीन, अमोडियाक्वीन ।

(२) पीत रंजक यौगिक (Acridine derivative) : मेपाक्रीन ।

(३) बाइग्वनाइड-यौगिक (Biguanide derivative) : प्रोग्वानिल (पेल्युड्रिन) ।

(४) पाइरामिडीन-यौगिक (Pyramidine deivative) : पाइरिमिथामीन (डेराप्रिम) ।

(ब) लीशमनीयतानाशक द्रव्य (Drugs used in Leishmaniasis):—

(१) गुरु धात्वीय यौगिक (Heavy metals) : एन्टीमनी के ऑर्गेनिक-यौगिक ।

(२) एरोमेटिक डाइएमाइडीन्स (Aromatic Diamidines) स्टिलबामेडिन, पेंटामिडिन, प्रोपेमिडिन ।

(३) उष्ण कटिबंधीय लीशमन पिडक (Leishmania tropica) नाशक—बरबेरीन (दारुहरिद्रासत्व), मेपाक्रीन ।

(स) निद्राज्वर नाशक औषधियाँ (Drugs used in Trypanosomiasis) ।

(१) गुरुधात्वीय यौगिक (Heavy metals) : आर्गेनिक आर्सेनिक-यौगिक (Organic Arsenicals) ।

(अ) ट्राइवेलेंट यौगिक—आक्सोफेनार्सीन, मेलारसन, ब्युटारसन आदि ।

(ब) पेंटावलेन्ट यौगिक—ट्रिपार्समाईड, सोडियम् , अमिनारसोन ।

(२) एरोमेटिक डाइ-एमाइडीन्स—स्टिलबामेडीन, पेंटामिडीन ।

(३) यूरिया यौगिक (Urea substitution Compound) : सुरामिन ।

(द) फिरंगनाशक औषधियाँ (Antisyphilitics):—

(१) गुरुधात्वीय-योग (Heavy metals) : आर्सेनिक (संखिया), बिस्मथ, पारद (मरकरी) ।

(२) आयोडाइड्स (Iodides) : पोटासियम् एवं सोडियम् आयोडाइड ।

(३) एन्टीबायोटिक समुदाय की फिरंगनाशक औषधियाँ :—पेनिसिलिन, टेट्रासायक्लिन समुदाय के यौगिक एवं क्लोरोमायसिटिन आदि ।

(य) अमीबिक-उपसर्ग में प्रयुक्त औषधियाँ (Drugs used in Amoebiasis) :—

(१) इमेटीन समुदाय—इपेकाक्वाना, इमेटीन, इमेटीनबिस्मथ आयोडाइड ।

(२) आर्सेनिक के आर्गेनिक यौगिक—कारबारसोन, एसिटार्सोल थायोकारबरसोन, बिस्मथ ग्लाइकोलिल आर्सेनिलेट (मिलिबिस), आर्सेथिनोल (बेथारसन) ।

(३) हेलोजिनेटेड ऑक्सीक्विनोलीन्स (Halogenated oxyquinolines) : चिनियोफोन, आयडोहाइड्रॉक्सीक्विनोलीन एवं डाइ-आयडोहाइड्रॉक्सीक्विनोलीन आदि ।

(४) 4—aminoquinolines : क्लोराक्वीन, अमोडियाक्वीन ।

(५) एन्टीबायोटिक्स—टेट्रासायक्लीन-यौगिक, फ्युमेजिलिन, बेसिट्रेसिन पेनिसिलिन आदि ।

(६) अन्य अमीबानाशक औषधियाँ—कुर्ची (कुटज त्वक्) एवं उसके अल्कलायड्स, मल्को-नेमाइड्स, बिस्मथकार्बोनेट, कामोफोर्म ।

(फ) तृणाण्वीय या बैक्टीरियाजन्य उपसर्गनाशक औषधियाँ (Drugs used in Bacterial invasion) :—

(१) सल्फोनेमाइड समुदाय के यौगिक ।

(२) एन्टीबायोटिक समुदाय के यौगिक ।

(ज) यक्ष्मानाशक औषधियाँ (Drugs used in Tuberculosis) :—

(१) एन्टीबायोटिक्स—स्ट्रेप्टोमाइसिन, वायोमाइसिन तथा टेट्रासायक्लिन समुदाय के यौगिक ।

(२) पारा-अमिनो-सेलिसिलिक यौगिक—सोडियम् एमिनो सेलिसिलेट, केल्सियम् एमिनोसेलिसिलेट।

(३) आइसो निकोटिनिक एसिड हाइड्रेजाइड—आइसेनिएजिड ।

(४) थायोसेमिकार्बाजोन्स (Thiosemicarbazones)—थायोसिटेजोन (Thiocetazone) ।

(ह) कुष्ठनाशक औषधियाँ (Drugs used in Leprosy) :—

(१) सल्फोन्स—डेप्सोन, सोलेप्सोन ।

(२) थायोसेमिकार्बाजोन्स—थायोसिटेजोन ।

(३) आइसो निकोटिनिक एसिड हाइड्रेजाइड—आइसोनिएजिड ।

(४) एन्टीबायोटिक्स—स्ट्रेप्टोमाइसिन ।

(५) चालमूगरा एवं हिडनोकार्पस तैल (oil), उनके मेदसाम्ल (Fatty acids), लवण (Salts) तथा एथिल ईस्टर्स (Ethyl esters) ।

प्रकरण २

मलेरिया या विषम ज्वर नाशक औषधियाँ :—

भारतवर्ष में विषमज्वर या मलेरिया एक अभिशाप है। यहां काफी संख्या में मलेरिया से मृत्यु होती है। बंगाल आदि प्रान्तों में तो सामूहिक रूप से जनस्वास्थ्य की खराबी का कारण मलेरिया है। 'आवश्यकता आविष्कार की जननी' है, इस सिद्धान्त के अनुसार काफी अनुसन्धान एवं खोज के बाद **विशिष्ट औषधि के रूप में क्विनीन** का निर्माण हुआ। इससे विषमज्वर के नियंत्रण एवं निमूर्लन में बहुत मदद मिली है। किन्तु आवश्यकतानुसार क्विनीन की उपलब्धि न होने के कारण वैज्ञानिकों की प्रवृत्ति मलेरिया नाशक अन्य कृत्रिम औषधियों (Synthetic antimalarial drugs) की ओर हुई। और इस दिशा में बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की गई है। इन प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप सन् १६२५ ई० में पामाक्विन (प्लेज्मोक्वीन) का संश्लेषण किया गया। यद्यपि यह अघातक तृतीयक एवं चतुर्थक ज्वर के कीटाणुओं की अमैथुनी स्वरूपों (Asexual forms of benign and quartan malaria) पर उत्तम विनाशक प्रभाव करती है, किन्तु दवा विषैली होने से चिकित्सा व्यवहार में इसकी उपयोगिता इस रूप में बहुत सीमित ही रही। हां प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् के व्यवायक कीटाणुओं (gametocytes) पर यह औषधि अल्प मात्राओं में भी विनाशक सिद्ध हुई। अतएव रोग के अनागत प्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई। आगे चलकर सन् १६३२ ई० में एटेब्रिन या मेपाक्रीन का संश्लेषण किया गया, जो सभी प्रकार के मलेरिया जीवाणुओं के अमैथुनी अवस्थाओं पर उत्तम सक्रिय औषधि सिद्ध हुई। किन्तु इसमें भी एक दोष है, कि व्यवायकों पर तथा घातक मलेरिया के कीटाणुओं पर अथवा धातुगत कीटाणुओं (ex-erethrocytic form) पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सन् १६४४ ई० में रासायनिक संश्लेषण द्वारा पेल्युड्रिन (Paludrine) का निर्माण हुआ, जिसकी क्रिया विशेषतः प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् की शरीर धातुगत अवस्थाओं (Tissue-phage) पर होती है। इसके बाद अमेरिकन वैज्ञानिकों ने क्लोरोक्वीन, अमोडियाक्वीन आदि (4–amino quinoline derivative) एवं पेन्टाक्वीन, प्रेमाक्वीन आदि (8–aminoquinoline derivatives) अन्य मलेरिया नाशक श्लिष्ट यौगिकों का निर्माण किया। इस प्रकार हमने देखा विभिन्न मलेरिया नाशक औषधियों में मलेरिया कीटाणुओं की विभिन्न अवस्थाओं यथा मैथुनी अवस्था (Sexual forms), अमैथुनी अवस्था (Asexual forms) एवं धातुगत अवस्था (Tissue phage) में से कोई यौगिक किसी अवस्था विशेष में सक्रिय होता है तो दूसरा यौगिक दूसरी अवस्था में। विषमज्वर नाशक औषधियों का उपयोग चिकित्सा व्यवहार में निम्न उद्देश्यों से किया जाता है :—(१) **अनागतबाधा प्रतिषेध के लिए (As a true prophylactic)**— इस उद्देश्य के लिए प्रयुक्त यौगिकों की क्रिया स्पोरोज्वाइट्स (Sporozytes) पर अथवा

रक्तकणों में प्रविष्ट होने के पूर्व की अवस्थाओं (**Pre-erythrocytic forms**) पर होती है। **प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् उपसर्ग में पामाक्विन** तथा **पेंटाक्विन** की क्रिया इसी प्रकार होती है, किन्तु इसका प्रयोग विषाक्त मात्रा में करना पड़ता है **प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् उपसर्ग में पेल्युड्रिन** एवं **डेराप्रिम** (पाइरीमेथामीन) इसी प्रकार के कार्य करते हैं। कि प्लाज्मोडियम् वाइवेक्स उपसर्ग में इसकी क्रिया मामूली होती हैं। (२) **लक्षणों के दबाने के लिए (As a suppressant)**—इन औषधियों की क्रिया मलेरिया कीटाणुओं की रक्तकणों में होने वाली अवस्थाओं पर होता है। अतएव इनके प्रयोग से दौरे का निरोध तो हो जाता है, किन्तु रोग का निमूर्लन नहीं होता और इन रोगियों को काटने पर मच्छर भी उपसृष्ट हो सकता है, जिससे रोग का प्रसार भी हो सकता है। **प्लाज्मोडियमवाइवेक्सजन्य विषमज्वर (Vivax malaria)** में **क्विनीन, मेपाक्रीन, क्लोरोक्वीन, अमोडियाक्वीन, पेल्युड्रीन** तथा डेराप्रिम का प्रयोग रोग दबाने के लिए (**Suppressive therapy**) के लिए किया जा सकता है। प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् के विभिन्न प्रकार के उपसर्गों में उपयुक्त औषधियों के प्रयोग से तत्काल रोग का शमन होता है। (३) **रोगमुक्ति या रोगोन्मूलन के लिए (As curative)**—विभिन्न मलेरिया नाशक औषधियों में इस प्रकार की क्रिया मलेरिया कीटाणु की किसी श्रेणी (**Strain**) पर किसी और यौगिक का। कभी-कभी इस कार्य के लिए विभिन्न यौगिकों को परस्पर मिलाकर भी प्रयुक्त करते हैं। (४) **व्यवायक कीटाणुओं के नाश के लिये (As gametocytocidal drug)**—इन औषधियों का उपयोग व्याधि के प्रसार को रोकने के लिए किया जाता है। क्योंकि व्यवायकों का नाश होने से मच्छर जब रोगी को काटता है, तो मलेरिया कीटाणु से वह उपसृष्ट नहीं होता और इस प्रकार मच्छर के शरीर में होने वाले परिवर्तन भी नहीं होते। जिससे कीटाणुओं का जीवन (क्रिया कलाप) आगे नहीं चलने पाता। मलेरिया कीटाणुओं की विभिन्न अवस्थाओं पर क्रिया की दृष्टि से इन औषधियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :—

(१) (Pre-erythrocytic forms) **पर कार्य कर औषधियाँ पेल्युड्रिन, प्राइमेथामीन--इनका उपयोग अनागत व्याधि प्रतिषेध के लिए किया जा सकता है।**

(२) **रुधिरकायाणु बाह्यस्वरूपों** (Exo-erythrocytic forms) **पर कार्य करने वाली—पामाक्वीन, पेंटाक्वीन।**

(३) **अमैथुनी स्वरूप** (Asexual forms) **पर कार्य करने वाली या विभक्तक कायाणु नाशक** (Schizonticides)—**क्लोरोक्वीन, अमोडियाक्वीन, मेपाक्रीन, क्विनीन, पेल्युड्रीन, प्राइमेथामीन।**

(४) व्यवायक नाशक (Gametocytocidals)—**पामाक्वीन, पेन्टाक्वीन, प्राइमाक्वीन तथा उपयुक्त विभक्तककायाणुनाशक द्रव्य।**

प्रकरण ३

लीशमनीयतानाशक औषधियाँ (Leishmanicidal remedies) :—

इसमें विशेषतः २ व्याधियों का समावेश होता है :—(१) लीशमन-डोनोवन पिण्ड (Leishmania donovani) के उपसर्ग से होने वाले कालज्वर (Kala-azar) रोग तथा (२) उष्णकटिबन्धीयलीशमनिया (L. tropica) के उपसर्ग से होने वाले प्राच्य-व्रण (Oriental sore)। रोग का वाहक फ्लेबोटोमस अर्जे-न्टिपीस नामक मरुमक्षिका (Sandfly) होती है। मक्षिका कालज्वरी को काटकर स्वयं उप-सृष्ट होती है, और इसके पश्चात् दूसरे स्वस्थ मनुष्य को काट कर उपसर्ग को फैलाती है। इस प्रकार जीवाणुओं का एक जीवन-चक्र मक्षिका के अन्दर होती है, तथा दूसरा मानव-शरीर में। अभी तक किसी ऐसी औषधि का आविष्कार नहीं हो सका है, जिससे मक्षिकागत जीवाणुओं को नष्ट किया जा सके। कालाज्वर के चिकित्सा में विशेष सफलता (१) एन्टीमनी के यौगिकों (Antimony Compounds) द्वारा मिलती है। एन्टीमनी के अतिरिक्त अब (२) अनेक एरोमेटिक डाइएमाइडीन्स (Aromatic diamidines) समुदाय के यौगिकों का भी निर्माण किया है, जो कालज्वर के विशेष-विशेष अवस्थाओं में सफलतापूर्वक प्रयुक्त किए जाते हैं। चिकित्सा में एन्टीमनी यौगिकों का उपयोग कालज्वर के अतिरिक्त अनेक व्याधियों में भी किया जाता है, यथा वंक्षणीयकणिकार्बुद (Granuloma inguinale) देहली-व्रण (Delhi boil), अफ्रिकन निद्राज्वर (African sleeping sickness), विल्हार्जिआ-उपसर्ग (Bilharziasis), श्लीपद (Filariasis) आदि। इसी प्रकार डाइएमाइडीन्स का उपयोग लीशमनीयता के अतिरिक्त तर्कुटीतनुता (Trypanosomiasis) में भी विशिष्ट औषधि के रूप में किया जाता है। उष्णकटिबन्धीय लीशमनिया उपसर्ग जन्य प्राच्यव्रण के लिए दारुहरिद्रासत्व का सल्फेट लवण (बरबेरीन सल्फेट Berberine Sulphate) विशिष्ट औषधि के रूप में सिद्ध हुआ है।

रासायनिक दृष्टि से एन्टीमनी-यौगिकों के दो स्थूल वर्ग किए जा सकते हैं :—(१) ट्राइवेलेन्ट कम्पाउण्ड्स (Trivalent Compounds) या त्रिबन्धीय यौगिक तथा (२) पेन्टावेलेंट कम्पाउण्ड्स (Pentavalent compounds) या पंचबन्धीय यौगिक। सोडियम् पोटासियम् एन्टीमनीटारट्रेट्स (Sodium and Potassium antimony-tartrates) अर्थात् टारटार एमेटिक्स (Tartar emetics), स्टिबोफेन या फोवादिन (Fouadin), एन्थिओमेलीन (Anthiomaline) या लिथियम् एन्टी-मनी थायोमलेट तथा सोडियम्एन्टीमनी थायोग्लाइकोलेट आदि एन्टीमनी के ट्राइवेलेन्ट

यौगिक है। किन्तु चिकित्सोपयोग की दृष्टि में एन्टीमनी के पेंटावेलेंट-यौगिक अधिक उपयोगी एवं साथ ही साथ कम विषैले होते हैं। अब प्रायः इन्हीं का व्यवहार होता है। बाजार में अनेक बने बनाये व्यवसायिक योग उपलब्ध है। यूरिया स्टिबामीन (Urea Stibamine), स्टिबोसन, नियोस्टिबोसन (Neostibosan) एवं सोलूस्टिबोसन (Solustibosan), स्टिबेटिन (Stibatin) आदि एन्टीमनी के पेन्टावेलेंट-यौगिक हैं।

एरोमेटिक डाइ-एमाइडीन समुदाय के यौगिकों में ३ यौगिक विशेष महत्त्व के हैं:— (१) स्टिलबामेडीन (Stilbamidine), पेंटामेडीन (Pentamidine), एवं प्रोपेमेडीन (Propamidine)।

प्रकरण ४

फिरंगनाशक औषधियाँ :—

फिरंग या आतशक (Syphilis) एक कुप्रसंगज व्याधि है, जो फिरंग चक्राणुओं (Treponema pallida : Spirochaeta Pallida) के उपसर्ग से होता है। फिरंग रोग में नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं, जिनका वर्गीकरण विभिन्न अवस्थाओं (Stage) में किया जाता है। अतएव फिरंग की विभिन्न अवस्थाओं एवं उपद्रव को दृष्टिकोण में रखते हुए व्याधिका पूर्ण रूप से उन्मूलन करने के लिए कई औषधियों की आवश्यकता स्वाभाविक ही है। पहले विशिष्ट औषधि के रूप में केवल **पारद** या मरकरी (Mercury) का प्रयोग होता था। फिरंग के चक्राणु का विनिश्चय हो जाने पर उस पर घातक प्रभाव करने वाले यौगिकों के अन्वेषण का प्रयास होने लगा। इसके परिणाम स्वरूप सर्वप्रथम साल्वर्सन (Salvarson : 606th Compound) का निर्माण हुआ। इसको आर्सफिनामीन (Arsphenamine) या आर्सेनोबेंजोल (Arsenobenzol) भी कहते हैं। बाद में इसके **परिष्कृत यौगिक नियोसाल्वर्सन** (Neosalvarson) या नियोआर्सफिनामीन का निर्माण हुआ। उपर्युक्त दोनों ही **आर्सेनिक के यौगिक** है। लेकिन अकेले आर्सेनिक के यौगिकों से हीं सभी उपद्रवों की शान्ति नहीं होती थी। अतएव बीच-बीच में इसके साथ पारद के यौगिकों का मौखिक सेवन कराया जाता था। सन् १६१८ ई० विस्मथ (Bismuth) के फिरंगनाशक गुणों की स्थापना हुई, और फिरंग की चिकित्सा में इसने पारद का स्थान ले लिया। साथ ही आर्सेनिक के फिरंग-नाशक यौगिकोंका भी परिष्कार हुआ, और अब **मेफारसाइड** (Mepharside) या **ऑक्सो-फेनार्सीन** (Oxophenarsine) नाम का आर्सेनिक यौगिक सर्वोत्कृष्ट समझा जाता है। **आर्सेनिक एवं विस्मथ** के साथ-साथ फिरंग के गोंदार्बुदों (Gummata) के विलयन के लिए **आयोडाइड्स** (विशेपतः पोटासियम् आयोडाइड) की भी आवश्यकता रहती है। किन्तु **पेनिसिलिन के आविष्कार ने फिरंग के चिकित्सा-क्रम में आद्योपान्त** उलट-फेर कर दिया है। **अब फिरंग के लिए पेनिसिलिन सर्वोत्तम विशिष्ट औषधि समझी** जाती है। साथ ही यह कम विषैला तथा निरापद भी होता है। संक्षेपतः फिरंग की पूर्ण चिकित्सा के लिए (१) **आर्सेनिक, बिस्मथ एवं आयोडाइड्स** अथवा (२) पेनिसिलिन एवं आयोडाइड्स का व्यवहार किया जाता है। पारद इस रूप में गौण हो गया है, फिरंग व्रणों पर स्थानिक उपचार के लिए तथा कतिपय अन्य अवस्थाओं में भी यदा-कदा आवश्यकतानुसार पारद के यौगिकों का भी उपयोग किया जाता है। पेनिसिलिन एन्टीबायोटिक समुदाय की प्रधान औषधि है, अतएव इसका वर्णन उसी प्रकरण में किया जायगा। इसके अतिरिक्त आर्सेनिक, विस्मथ एवं **पारद** तथा **आयोडाइड्स** की विवेचना इस परिच्छेद में होगी।

आर्सनिक के यौगिक—फिरंग की चिकित्सा में प्रायः आर्सेनिक के ऑर्गेनिक-यौगिकों (Organic Compound) का व्यवहार किया जाता है। इन्-ऑर्गेनिक यौगिकों की अपेक्षा आर्सेनिक के ऑर्गेनिक यौगिक कम विषैले होते हैं। अतएव अपेक्षाकृत अधिक मात्राओं में भी इनका प्रयोग किया जा सकता है। आर्गेनिक कम्पाउण्ड्स के भी २ स्थूल विभाग किए जा सकते हैं :—(१) ट्राइवेलेन्ट यौगिक या कम्पाउण्ड्स (Trivalent Compounds) तथा (२) पेंटावेलेंट यौगिक या कम्पाउण्ड्स। फिरंग में पेंटावेलेन्ट कम्पाउण्ड्स की अपेक्षा ट्राइवेलेन्ट कम्पाउण्ड्स ही अधिक सक्रिय होते हैं। फिरंग नाशक ट्राइवेलेन्ट यौगिक में आर्सफिनामीन, नियोआर्सफिनामीन तथा ऑक्सोफेनार्सीन (Oxophenarsine) विशेष महत्त्व के हैं। इनमें भी तर-तम भेद से ऑक्सोफेनार्सीन सर्वोत्कृष्ट समझा जाता है। पेन्टावेलेन्ट यौगिकों में केवल ट्रिपारसेमाइड (Tryparsamide) का व्यवहार फिरंग में किया जा सकता है। शेष एसिटार्सोल (Acetarsol) एवं कारबार्सोन (Carbarsone) आदि प्रयोग अमीबिक-उपसर्ग में किया जाता है।

आयोडाइड्स (Iodides)—आयोडाइड-यौगिक भी २ प्रकार के होते हैं:— (१) निरिन्द्रिय Inorgamic iodides) तथा (२) सेन्द्रिय-आयोडाइड्स (Organic iodides)। सेन्द्रिय आयोडाइड्स प्रोटीन, तैल, मेदसाम्ल (Fatty acids) आदि सेन्द्रिय द्रव्यों के आयोडाइड यौगिक होते हैं। चिकित्सा में ऐसे यौगिकों का उपयोग क्ष-किरण चित्रण के लिए क्ष-किरण अप्रवेश्य द्रव्य (Cantrast medium) के रूप में किया फिरंगनाशक प्रभाव के लिए केवल निरीन्द्रिय आयोडाइड्स (Inorganic iodides) का ही व्यवहार होता है।

प्रकरण ५

अमीबिक-उपसर्ग (Amoebic infection) में प्रयुक्त औषधियाँ :—

यह प्रोटोजुअल-उपसर्ग जन्य प्रधानतः पचन संस्थान की व्याधि है, जिसमें मल के साथ लाल आँव आती है। यह प्रधानतः अन्तः कामरूपीय धातुनाशी (Entamoeba hystolitica) के उपसर्ग से होता है। सर्वप्रथम विकृत आंतों की भित्ति में होती है, जिसके प्रगति हो जाने पर अमीबा रक्तप्रवाह के साथ यकृत, फुफ्फुस एवं मस्तिष्क आदि में अन्य स्थानिक उपसर्ग (Metastatic infection) करके विद्रधि पैदा करते हैं। इस प्रकार इसकी २ अवस्थायें हैं—(१) आंत्रगत स्थिति (Intestinal phase) तथा (२) धातुगत स्थिति (Tissue phase)। इसी आधार पर औषधियों का भी वर्गीकरण २ समुदायों में किया जा सकता है। अभी तक ऐसी कोई सक्रिय औषधि नहीं उपलब्ध हो सकी है, जो अमीबा की दोनों स्थितियों पर कार्यकर हो।

(अ) प्रधानतः आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग पर कार्य कर औषधियाँ—इमेटीन-बिस्मथ आयोडाइड, कुर्ची-बिस्मथ आयोडाइड, आर्सेनिक के आर्गेनिक यौगिक (पेंटावेलेंट) हेलोजिनेटेड आक्सीक्विनोलीन्स (Halogenated oxyquinolines), एन्टीबायोटिक्स।

(ब) धातुगत अमीबिक-उपसर्ग (Tussue phase of infection) में क्रियाशील औषधियाँ:—इमेटीन (Emetine), क्लोराक्वीन (Chloroquine) एमोडियाक्वीन (Amodiaquine) आदि। एतदर्थ इमेटीन का प्रयोग इंजेक्शन द्वारा किया जाता है। इमेटीन का वर्णन इपेकाक्वाना के साथ किया जा चुका है।

द्रव्यगुणकर्मविज्ञानीय परिच्छेद २

प्रकरण १

(विषमज्वर नाशक औषधियाँ Antimalarial Drugs)

सिंकोना Cinchona (Cinchon.), I. P.

Family : Rubiaceāe (मञ्जिष्ठादि-कुल)

पर्याय—सिंकोनी रुब्री कॉर्टेक्स Cinchonāe Rubrāe Cortex (ले०); रेड सिंकोना बार्क Red Cinchona Bark; पेरुविअन बार्क Peruvian Bark; जेसुट्स बार्क Jesuit's Bark; (क्विना-क्विना Quina-Quina); सिंकोना की छाल—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—सिंकोना, निम्न विभिन्न प्रजातिओं के वृक्षों को सुखाई हुई छाल होती है, जिसमें कम से कम ६% सिंकोना के टोटल अल्कलायड्स होते हैं, जिसमें आधा क्विनीन एवं सिंकोनिडीन होता है :—

(१) सिंकोना केलिसेया	Cinchona calisaya weddell.
(२) सिंकोया लेजेरिआना	C. ledgerian Moens.
(३) सिंकोना ऑफिशिनेलिस	C. officinalis Linn.
(४) सिंकोना सक्सिरुब्रा	C. succirubra Paron.

इसके अतिरिक्त नं० १ एवं २ तथा ३ एवं ४ की मिश्रित प्रजातिओं (Hybrids) की छाल का भी ग्रहण किया जा सकता है। छाल को प्राप्त करने के लिए या तो वृक्ष गिरा दिये जाते हैं "uprooting Method" अथवा डालियाँ छांट ली जाती हैं "Coppicing Method"। छाल को पृथक करने के बाद धूप में सुखाया जाता है, अथवा कृत्रिम गर्मी (Artificial heat) द्वारा सुखाते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—सिंकोना दक्षिणी अमरीका का आदि वासी पौधा है। वहां पर इसके स्वयंजात वृक्ष प्रचुरता से पाये जाते हैं। अब जावा, लंका, ब्रह्मा तथा भारतवर्ष में अनेक जगहों पर इसके वृक्ष लगाए गए हैं। भारतवर्ष में भिन्न-भिन्न स्थलों में सिंकोना की विशिष्ट प्रजातिओं के उपज के लिए अनुकूलता पाई गई है। इस प्रकार नीलगिरी तथा सिक्कम की पहाड़ियों (१५००–३००० फुट) पर सिंकोना केलिसेया; बंगाल तथा दक्षिण भारत में एनामलाइ, तिन्नेवली, आदि स्थानों में तथा आसाम में खसिया तथा जेन्तिआ की पहाड़ियों पर (३०००–६००० फुट) सिंकोना केलिसेया बंगाल तथा दक्षिण भारत में एनामलाइ, तिन्नेवली आदि स्थानों में तथा आसाम में खसिया तथा

जेन्तिया की पहाड़ियों पर (२०००–६००० फुट) सिंकोना लेजेरिआना; ऊटकमंड (Ootacumund : ६०००–८०००) फुट में सिंकोना ऑफिसिनेलिस; सिक्कम में सिंकोना सक्सिरुब्रा।

इतिहास—यूरोप में सिंकोना की छाल का प्रचार सर्व-प्रथम जेसुटमिशनरी के द्वारा सत्रहवीं शताब्दी में हुआ। इसीसे इसका एक पर्याय 'Jesuit's Bark' भी रखा गया है। दक्षिण अमरीका के पेरू (Peru) प्रान्त में स्पेन के उपनिवेश के गवर्नर की स्त्री (काउन्टेस ऑव सिंकोन (Countess of Cinchon) इस छाल के प्रयोग द्वारा ज्वर के आक्रमण से मुक्त की गई थी इसीसे इसका नाम 'Peruvian Bark' पड़ गया। किन्तु दक्षिणी अमरीका में सिंकोना वृक्षों के उद्भव स्थान का खोज १८ वीं शताब्दी में फ्रांसीसी वैज्ञानिकों द्वारा किया गया। सन् १६७७ ई० में यह 'लन्दन फॉर्माकोपिआ' में ग्रहण किया गया, और सम्भवतः उसी समय ईस्ट इंडिया कम्पनी द्वारा इसका प्रचार भारतवर्ष में हुआ। मख्जनुल अद्विया नामक फारसी निघण्टु ग्रंथ (सन् १७७०) में 'वर्क' नाम से सम्भवतः सिंकोना का वर्णन किया गया है। वर्क 'बार्क Bark' से बहुत मिलता जुलता है। धीरे-धीरे भारतवर्ष में भी सिंकोना एवं क्विनीन की मांग बढ़ने लगी। अतः सरकारी तौर पर भिन्न-भिन्न स्थानों में सिंकोना प्रजातियों के लगाने का प्रयास किया जाने लगा अब अनेक स्थानों में सिंकोना के वृक्ष सफलता पूर्वक लगाये गये हैं।
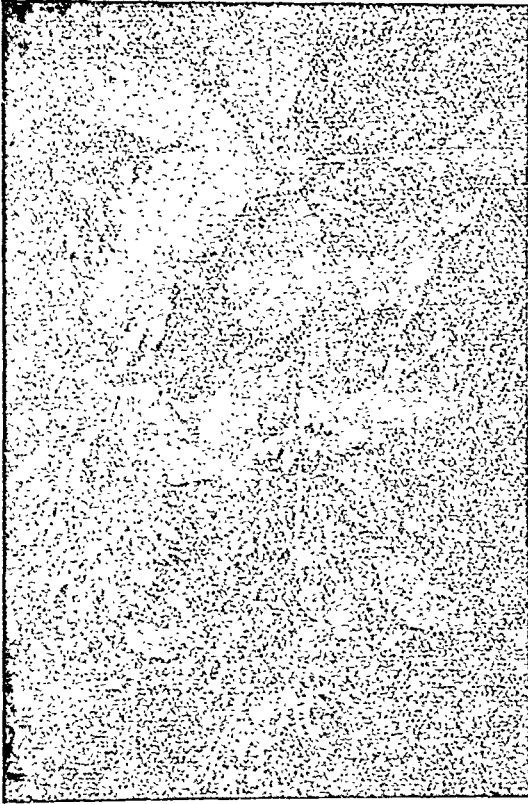
चित्र ४३—सिंकोना केलिसेया।

वर्णन। वृक्ष—सिंकोना केलिसेया के ऊँचे-ऊँचे वृक्ष होते हैं। पत्तियाँ—चिकनी एवं ऊर्ध्वतल पर चमदार कुण्ठिताग्र (Obtuse), रूपरेखा में आयताकार-भालाकार (Oblong-lanceolate) अथवा आयताकार-लट्वाकार (Oblong-orate) होती हैं। पुष्प हल्के लाल रंग के (Pale flesh- colouered) शाखाग्रों पर मञ्जरियों में (Terminal pyramidal panicles) में निकले होते हैं। इस प्रजाति से प्राप्त छाल को व्यवसाय में 'The yellow Cinchona' कहते हैं। सिंकोना लेजेरिआना के वृक्षों की अधिकतम ऊँचाई १८–२० फुट (६ मीटर) तक होती है। इसके पुष्प बहुत खुशबूदार तथा पीताभ-श्वेत

(Yellowish white) वर्ण के होते हैं। सिंकोना ऑफिशिनेलिस के पुष्प जैसा कि इसके प्रजातिनाम (Specific name) से प्रगट होता है लाल रंग के होते हैं। इसकी छाल को व्यवसाय में 'Pale Cinchona' कहते हैं। सिंकोना सक्सिरुब्रा के भी अपेक्षाकृत ऊँचे-ऊँचे वृक्ष होते हैं। इसके पुष्प गुलाब के रंग के 'Rose coloured'। छाल का अन्तस्तल लालिमा लिए भूरे रंग का होता है। व्यवसाय में इसे Red Cinchona' कहते हैं।

छाल। काण्डत्वक (Stem Bark)--सिंकोना की छाल में एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में यह अत्यन्त तिक्त तथा किंचित् कसैली (Astringent) होती है।

उक्त छाल की कलमें या मुड़े हुए टुकड़े (Quilled or curved pieces) होते हैं, जो ३० सेंटीमीटर या कभी कभी इससे भी अधिक लम्बे तथा २ से ६ मि० मि० मोटे होते हैं। बाहर से यह भूरापन लिए खाकस्तरी रंग (Dull brownish grey) या खाकस्तरी रंग के होते हैं। बाहरी तल प्रायः खुरदुरा होता है, और इस पर अनेक दरारें (Transverse fissures) पड़ी होती हैं। अनुलम्ब दिशा में भी दरारें तथा झुर्रियाँ पड़ी होती हैं। अन्तस्तल सूक्ष्मधारीदार (Striated) तथा रंग में हल्का पीलापन लिए भूरे रंग से लाली लिए भूरे रंग तक होता है। तोड़ने पर इन टुकड़ों का बाहरी भाग तो खट से टूटता है किन्तु अन्तः भाग रेशेदार (Fracture short in the external layers but fibrous in the inner layers) होता है। मूलत्वक् या जड़ की छाल (Root Bark) —इसके टुकड़े अपेक्षाकृत छोटे (२ से ७ सेंटीमीटर) खातोदर (Channelled), टेढ़े-मेढ़े (Curved) या अन्दर की ओर लपेटे हुए (turosted) होते हैं। इसके दोनों तलों का रंग काण्ड-त्वक् के अन्तस्तल से मिलता-जुलता है। तोड़ने पर रेशेदार (Fracture fibrous) होता है।

रासायनिक संघटन—सिंकोना में न्यूनाधिक मात्रा में लगभग २० अल्कलायड्स पाये जाते हैं, जिनमें औषधीय उपयोग की दृष्टि से क्विनीन, क्विनीडीन (Quinine, Quinidine) सिंकोनीन Cinchonine) तथा सिंकोनिडीन (Cinchonidine) विशेष महत्त्व के हैं और अपेक्षाकृत अन्य अल्कलायड्स के अधिक प्रतिशत मात्रा में पाये जाते हैं। सिंकोना की विभिन्न प्रकार की छालों में इन अल्कलायड्स की सम्मिलित सकल मात्रा (Percentage of total alkaloids) ५ से १०% तक होती है। इन क्षारोदों या अल्कलायड्स के अतिरिक्त सिंकोनाबार्क में क्विनोविन (Quinovin) नामक एक ग्लाइकोसाइड तथा सिंकोना रेड, सिंकोटेनिक (Cinchotannic), क्विनोविक, क्विनिक एवं ऑक्जेलिक एसिड (Quinovic, quinic and oxalic acids) तथा रंजक तत्व वैक्स एवं फैट (Fat) आदि भी पाये जाते हैं।

असंयोज्य पदार्थ—अमोनिया, चूने का पानी (लाइम वाटर Lime water) धात्वीय-लवण (Metallic salts) सैलिसिलेट्स, अयोडाइड्स एवं जिलेटिन।

सिंकोना फेब्रिफ्यूज Cinchona Febrifuge (Cinchon. Febri.) I. P. & I. P. L.।

प्राप्ति-साधन—सिंकोना फेब्रिफ्यूज अल्कलायड्स का मिश्रण (Mixture of alkaloids) होता है, जो सिंकोना लेजेरियाना तथा सिंकोना सक्सिरुब्रा नाम प्रजातिओं (Species) या सिंकोना की अन्य प्रजातिओं से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ७ प्रतिशत एन्हाइड्रस क्विनीन (Anhydrous) होता है और सिंकोना के अल्कलायड्स (क्विनीन, क्विनीडीन, सिंकोनीन एवं सिंकोनिडीन) की टोटल मात्रा ५० प्रतिशत होती है।

वर्णन—सिंकोना फेब्रिफ्यूज का चूर्ण होता है, जो या तो प्रायः रंगहीन या पीलापन लिए हल्के खाकस्तरी रंग (Pele yellowish-grey) या हल्के भूरे रंग का होता है। उक्त चूर्ण प्रायः गन्ध-हीन तथा स्वाद में अत्यन्त तीता होता है। विलेयता—ठंडे पानी में प्रायः अविलेय; ईथर, बेंज़ीन तथा लाइट पेट्रोलियम में केवल अंशतः घुलता है (Partially Soluble); किन्तु गरम अल्कोहल (Warm alcohol 95%) तथा क्लोरोफार्म में पूर्णतः घुल जाता है (Almost completely soluble)।

मात्रा (I. P. Dose)—१० से २० ग्रेन (०·६ से १·२ ग्राम)।

टोटा क्वीना Totaquina (Totaquin.)—ले०; टोटाक्वीन (Totaquine) B. P.—अं०।

प्राप्ति-साधन—टोटाक्वीन अल्कलायड्स का मिक्सचर होता है, जो सिंकोना सक्सि-रुबा तथा सिंकोना रोबस्टा Cinchona robusta Howard एवं सिंकोना की अन्य उपयुक्त प्रजातियों से प्राप्त किया जाता है। इसमें सिंकोना के अल्कलायड्स (क्विनीन, क्विनीडीन, सिंकोनीडीन एवं सिंकोनीन) की टोटल मात्रा कम से कम ७०% होता है, जिसमें क्विनीन कम से कम ५% अवश्य होता है।

वर्णन—स्वरूप एवं विलेयता सिंकोना फेब्रिफ्यूज की भाँति।

मात्रा (B. P. Dose)—५ से १० ग्रेन (२½ से ५ रत्ती)।

क्विनीनी सल्फास Quininae Sulphas (Quinin. Sulph.), I.P., B.P. (ले०); क्विनीन सल्फेट (Quinine sulphate)—अं०।

रासायनिक संकेत: $(C_{20}H_{24}O_2N_2)_2$, $(H_2So_2, H_2O.)$

वर्णन—क्विनीन सल्फेट, सिंकोना की विभिन्न प्रजातियों की छाल में पाये जाने वाले अल्कलायड क्विनीन का सल्फेट लवण होता है। इसमें क्रिस्टलीकरण के जल के २ अणु (Two molecules water of Crystallisation) होते हैं। इसमें ८२ से ८४ प्रतिशत तक क्विनीन ($C_{20}H_{24}O_2N_2$) होता है। क्विनीन सल्फेट के सफेद रंग के सूक्ष्म सूच्याकार क्रिस्टल्स (Fine Needle like Crystals) होते हैं, जो प्रायः गन्धहीन तथा चमकरहित एवं स्वाद में अत्यन्त तिक्त होते हैं। प्रकाश के प्रभाव से इसमें हल्की भूरी आभा (Brown tint) आ जाती है। अतएव इसको अच्छी तरह डाट बन्द पात्रों में रखना चाहिए और इसे प्रकाश से बचाना चाहिए। विलेयता—२५° तापक्रम पर ८१० भाग जल तथा ९६ भाग अल्कोहल (९०%) में घुलता है इसी प्रकार क्लोरोफार्म तथा ईथर में भी अल्प मात्रा में घुलता है। किंतु दो भाग क्लोरोफार्म एवं १ भाग डिहाइड्रेटेड अल्कोहल के मिश्रण में अच्छी तरह घुल जाता है।

मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम या २½ से ५ रत्ती)।

असंयोज्य पदार्थ—क्षार (Alkalies) तथा उनके कार्बोनेट्स, एवं कषाय फाण्ट (Astringent infusions)।

क्विनीनी बाइसल्फास Quininae Bisulphas (Quinin. Bisulph.), I. P., B. P.—ले०; क्विनीन बाइसल्फेट, क्विनीन एसिड सल्फेट—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{24}O_2N_2$, H_2SO_4 $7H_2O$.

प्राप्ति-साधन—क्विनीन बाइसल्फेट, सिंकोना की विभिन्न प्रजातियों से प्राप्त होने वाले

क्विनीन नामक अल्कलायड का एसिड सल्फेट लवण होता है। इसमें ५८ से ६८ प्रतिशत तक क्विनीन ($C_{20}H_{24}O_2N_2$) होता है।

वर्णन—इसकी रंगहीन अथवा पारदर्शी या अपारदर्शी छोटी-छोटी सुइयाँ (transparent or opaque small needles) होती हैं, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होती हैं। शुष्क हवा में खुला रहने से यह प्रस्फुटित हो जाता है (Effloresces) तथा प्रकाश के प्रभाव से पीले रंग का हो जाता है। अतएव इसका संरक्षण अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करना चाहिए और इसे प्रकाश से बचाना चाहिए। विलेयता—यह १० भाग जल तथा २२ भाग अल्कोहल् (९०%) में घुल जाता है। मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम)।

क्विनीनी हाइड्रोक्लोराइडम् Quininae Hydrochloridum (Quinin. Hydrochlor.) I. P., B. P.—ले०; क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड Quinine Hydrochloride—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{24}O_2N_2$, HCl, $2H_2O$.

वर्णन—यह क्विनीन का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है। इसमें ८१ से ८२ प्रतिशत तक क्विनीन ($C_{20}H_{24}O_2N_2$) होता है। क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड की रंगहीन चमकदार सुइयाँ होती हैं, जो प्राय: गंधहीन तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होती हैं। गरम हवा के प्रभाव से यह प्रस्फुटित हो जाता है। विलेयता—३२ भाग पानी तथा २ भाग अल्कोहल् (९०%) घुलता है।

मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम)।

क्विनीनीडाइहाइड्रोक्लोराइडम् Quininae Dihydrochloridum (Quinin. Dihydrochlor.) I. P., B. P.—ले०; क्विनीन डाइहाइड्रोक्लोराइड Quinine Dihydrochloride, क्विनीन एसिड हाइड्रोक्लोराइड Quinine Acid Hydrochloride—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{24}O_2N_2$, 2HCl.

वर्णन—क्विनीन नामक अल्कलायड का डाइहाइड्रोक्लोराइड लवण होता है। इसमें ७६ से ८२ प्रतिशत तक क्विनीन ($C_{20}H_{24}O_2N_2$) होता है। इसका सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो गंध रहित तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। विलेयता—०·६ भाग जल तथा १२ भाग अल्कोहल् (९०%) में घुलता है।

मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम)।

क्विनीनी एट एथिलिस् कार्बोनास (Quinin. et. Aethyl. Carb.) I. P.—ले०; क्विनीन एथिल कार्बोनेट Quinine Ethyl Carbonate—अं०। पर्याय—यूक्विनीन Euquinine—अं०; मीठा क्विनीन—हिं०।

रासायनि संकेत : $C_{20}H_{23}O_2N_2 . CO_2C_2H_5$.

वर्णन—क्विनीन एथिल कार्बोनेट में ८० से ८२ प्रतिशत तक क्विनीन ($C_{20}H_{24}O_2N_2$) होता है। इसकी सूक्ष्म एवं सफेद रंग की बहुत हल्की सुइयाँ होती हैं, जो प्रायः परस्पर पिंडित होती हैं (Fine soft with matted needles), जो प्राय: गंधहीन तथा स्वाद रहित होती है। अन्य क्विनीन यौगिकों की तरह यह तीता नहीं होता, व्यवहार में इसे मीठी क्विनीन कह देते हैं। प्रकाश में खुला रहने पर इसका रंग विकृत हो जाता है। विलेयता—जल में तो बहुत कम घुलत

है, किन्तु अल्कोहल् (६०%) में घुल जाता है। डायल्यूट एसिड्स (Dilute Acids) में तुरन्त घुल जाता है। मात्रा—५ से १० ग्रेन (०·३ से ३·६ ग्राम)।

सिंकोना के गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग।

आभ्यन्तर प्रयोग से सिंकोना की छाल तिक्तबल्य (Bitter tonic), ज्वरहर (Febrifuge) तथा कषाय (Astringent) होता है। ज्वर-नाशक क्रिया में यह विशेषतः पर्यायज्वर हर (Antiperiodic) होता है। अकेले छाल (Crude bark) का प्रयोग करने से आमाशय तथा आंतों में यह क्षोभक प्रभाव करता है।

पर्यायज्वर-नाशक के रूप में सिंकोना फेब्रिफ्यूज का प्रयोग मलेरिया या विषमज्वर में किया जाता है। इस रूप में यह अघातक तृतीय ज्वर (Benign tertian infection) या अतरिया बुखार में विशेष उपयोगी है। इसको क्षारों (Alkalies) के साथ व्यवहृत करते हैं इस प्रकार इसकी क्रियाशीलता क्विनीन की भांति होती है, और साथ ही यह उसकी अपेक्षा सस्ता भी होता है। सिंकोना की विषमज्वरनाशक क्रिया इसमें पाये जाने वाले क्विनीन अल्कलायड् के कारण होती है, जो इसमें पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। किन्तु सिंकोना में एक दोष भी है, कि इसके चिकित्साक्रम में वमन उपद्रव की अधिक आशंका रहती है। इसके निवारण के लिए औषधि सेवन के पूर्व १० बूंद एड्रिनेलीन क्लोराइड सॉल्यूशन का व्यवहार कर सकते हैं और औषधि का सेवन भोजन् के २-३ घंटे के बाद तथा कैचेट्स में रखकर या टॅबलेट के रूप में अथवा मिक्सचर के रूप में किया जाता है। मिक्सचर बनाने के लिए इसको घोलने के लिए साइट्रिक एसिड अथवा अन्य मन्दबल या डायल्यूट खनिज अम्लों (Dilute mineral acids) का व्यवहार करते हैं। ज्वरनाशक प्रभाव के लिए सिंकोना को क्विनीन के साथ सहायक औषधि के रूप में भी इसका व्यवहार किया जा सकता है।

तिक्तबल्य के रूप में इसका प्रयोग उग्र ज्वर से मुक्त होने के पश्चात् (During Convalescence from an acute febrile attack) अकेले अथवा अन्य तिक्तबल्य वनौषधियों (Vegetable bitters) के साथ किया जाता है। इससे रोगी को भूख बढ़ती है। एतदर्थ टिंक्चुरा सिंकोनी कम्पोजिटस् एक उत्तम योग है। इसमें एरोमेटिक स्प्रिट ऑव अमोनिया मिलाने से और भी गुणकारी हो जाता है।

टोटाक्वीन की क्रिया भी सिंकोना की ही भाँति होती है। रासायनिक संघटन एवं शक्ति प्रमाणीकरण (Standardization) की दृष्टि से टोटाक्वीन, सिंकोना की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय हैं।

क्विनीन के गुण-कर्म।

बाह्य—क्विनीन अल्कलायड सूक्ष्म दण्डाणुओं एवं कायाणुओं पर घातक प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त क्विनीन तथा इससे व्युत्पन्न यौगिक (Derivatives) स्थानिक संज्ञाहर (Anaesthetic) प्रभाव भी करते हैं। श्लैष्मिक कलाओं (Mucous membranes), पेशियों एवं अधस्त्वग् धातुओं (Subcutaneous tissues) पर स्थानिक क्रिया से यह क्षोभक (Irritant) प्रभाव करता है। यही कारण है, कि त्वचा के नीचे अथवा पेशी में क्विनीन का इन्जेक्शन करने से उस स्थान पर दर्द होता है, और फोड़ा

बनने की आशंका अधिक रहती है। शिरामार्ग द्वारा सूचिका भरण करने पर भी यही क्षोभक एवं धातु नाशक प्रभाव होता है, जिससे शिरा-स्कन्दन (Venous thrombosis) आदि भयानक उपद्रव हो सकते हैं।

आभ्यन्तर। मुख—जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है, क्विनीन अत्यन्त तिक्त होता है। अम्लों में घोलकर इसका विलयन सेवन करने पर भी लालारस की क्षारीय प्रतिक्रिया के कारण क्विनीन अल्कलायड प्रक्षिप्त होकर मुख को अत्यन्त तीता बना देता है। तिताई की दृष्टि से क्विनीन टैनेट अपेक्षाकृत कम तीता होता है, और यूक्विनीन तो प्रायः बिल्कुल ही तीता नहीं होता, इसीलिए व्यवहार में इसे मीठा क्विनीन भी कह देते हैं। स्वाद में तिक्त रस के कारण, अन्य तिक्त औषधियों की भाँति क्विनीन भी रसवहानाड्यग्रों (Gustatory nerves) पर उत्तेजक प्रभाव करता है, जिससे प्रत्याक्षिप्त रूपेण यह लाला-स्राव को बढ़ाता है।

आमाशयान्त्र—क्विनीन आमाशय से ज्यों का त्यों ग्रहणी (Duodenum) में पहुँचता है, जहां क्षारीय रस के सम्पर्क में आने पर यह प्रक्षिप्त होकर पृथक हो जाता है। वहां पित्त के सम्पर्क में आने पर यह पुनः उसमें विलीन होकर तब प्रचूषित या शोषित (Absorbed) होता है। क्विनीन टैनेट एवं यूक्वीनोन का शोषण अपेक्षाकृत मन्दगति से होता है, क्योंकि पहले ग्रहणी के क्षारीयरस की क्रिया से इनका जलांशन (Hydrolysis) होता है, तब यह प्रचूषित होते हैं। अधिक काल तक सिंकोना अल्कलायड्स् का सेवन, पाचन में गड़बड़ी करता है, जिसमें सिंकोनीन में यह दोष विशेष रूप से पाया जाता है। अल्प मात्राओं (१ से २ ग्रेन) में यह दीपन-पाचन (Stomachic) तथा तिक्तबल्य (Bitter tonic) प्रभाव करता है। अधिक मात्राओं (१५ से ४० ग्रेन) में क्रिया ठीक इसके विपरीत होती है। इसके अतिरिक्त आमाशयान्त्र पर स्थानिक क्षोभक प्रभाव एवं शोषणोपरान्त केन्द्रित प्रभाव के कारण यह हृल्लास (Nausea) तथा वमन (Vomiting) का उपद्रव पैदा करता है। इसके अतिरिक्त मात्राधिक्य के कारण प्रवाहिका तथा अतिसार आदि के भी उपद्रव हो सकते हैं। आंतों में मरोड़ तथा ऐंठन भी हो सकती हैं।

रक्त—अल्प मात्रा में क्विनीन का प्रयोग होने से शोषणोपरान्त रक्त में पहुँचने पर प्लीहा में संकोच होकर लसकायाणुओं की संख्या में वृद्धि (Lymphocytosis) होती है। अधिक मात्राओं में स्थिति ठीक इसके विपरीत होती है अर्थात् रक्तगत श्वेत कायाणुओं की संख्या में ह्रास होता है। यह प्रभाव विशेषतः लसकायाणुओं पर होता है। परन्तु इस अवस्था के बाद पुनः श्वेत-कायाणुओं की संख्या में वृद्धि (Leucocytosis) होती है।

साधारण मात्राओं में रक्तगत लालकणों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता किन्तु मात्राधिक्य के कारण शोणितांशन (Haemolysis) हो सकता है। साधारण चिकित्सा क्रम में भी कतिपय रोगियों में जो शोणवर्त्तु लिमेह (Haemoglobinuria) का उपद्रव हो जाता है, वह सम्भवतः वैयक्तिक स्वभाव (Idio-syncrasy) के कारण होता है।

हृदय एवं रक्तसंवहन—मुखमार्गद्वारा अधिक मात्राओं में भी सेवन किए जाने पर भी हृदय तथा रक्तसंवहन पर कोई विशेष घातक प्रभाव नहीं होता, किन्तु शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर घातक परिणामों की आशंका अधिक रहती है। उक्त प्रभाव हार्दिक पेशी पर इसकी प्रत्यक्ष क्रिया से तथा

केन्द्रिक प्रभाव (Central effect) से होता है। हार्दिक पेशियों में दौर्बल्यता उत्पन्न होकर रक्तभार सहसा गिर जाता है तथा परिसरीय रक्तवाहिनियाँ विस्फारित होती (Peripheral vaso-dilatation) हैं। मात्राधिक्य के कारण परिसरीय स्वतन्त्र नाड्यग्रों। (Peripheral autonomic neuromotor junctions) का आघात होता है।

श्वसन—अल्प मात्राओं में तो इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, किन्तु विषाक्त मात्राओं में श्वसन अत्यन्त मन्द तथा दुर्बल हो जाता है। अन्ततोगत्वा इसका अवरोध तक हो जाता है।

ऐच्छिक पेशियाँ (Skeletal muscles)—पेशियों पर इसकी क्रिया नियोस्टिग्मीन के प्रत्यनीक (Antagonis tic to neostigmine) होती है। इसका उपयोग पेशियों की सहज अवल्यता या थामसन के रोग (Myotonia Congenita : Thomsen's disease) में किया जाता है। एतदर्थ २½ ग्रेन से १५ ग्रेन औषधि-प्रतिदिन २ या ३ बार दी जाती है।

नाड़ी-संस्थान—अल्प मात्राओं में तो क्विनीन नाड़ी संस्थान पर बल्य प्रभाव (Nervine tonic) करता है। किन्तु अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर पहले तो केन्द्रिक नाड़ी मंडल पर उत्तेजक प्रभाव होता है, किन्तु बाद में उसका अवसाद होकर एक विशेष लक्षण समूह पैदा होता है, जिसे क्विनीन विषमयता या सिंकोनिज्म (Cinchonism) कहते हैं। इन लक्षणों में कानों भनभनाहट (Ringing in the ears), वाधिर्य (Deafness) तथा दृष्टि दौर्वल्य प्रधान है। कभी-कभी दृष्टि दौर्वल्य का उपद्रव अत्यधिक प्रबल होता है और रोगी में रंगान्धता तक (Colour Blindness) उत्पन्न हो जाती है। साधारणतया ये उपद्रव अल्पकालिक होते हैं और औषधि का सेवन बन्द कर देने पर अपने आप ठीक हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त शिर में भारीपन, आक्षेप (Convulsion) तथा प्रलाप (Delirium) आदि उपद्रव भी होते हैं।

साधारण मात्राओं में भी क्विनीन पेशियों एवं सन्धियों पर वेदनाहर प्रभाव करता है। अतएव अन्य वेदनाहर औषधियोंके साथ इसका व्यवहार उन रोगों में भी किया जाता है।

गर्भाशय—गर्भाशय पर क्विनीन गर्भपातक (Ecbolic) क्रिया करता है। किन्तु इसकी उक्तक्रिया सगर्भ गर्भाशय पर (Gravid uterus) और विशेषतः प्रसव-काल में अधिक होता है। गर्भावस्था के अतिरिक्त काल में यह आर्त्तव प्रवर्त्तक क्रिया करता है। अधिक मात्राओं (१५ से ३० ग्रेन) में तो प्रयुक्त करने से गर्भाशयिक आक्षेप इतना प्रबल (Intermittent uterine contractions) होता है, कि यदि जरायु दुर्बल हो तो गर्भाशय ग्रीवा द्वार सहसा विस्फारित होकर सहसा प्रसव (Precipitate labour) हो सकता है। गर्भवती स्त्रियों के मलेरिया से पीड़ित होने पर गर्भपात की आशंका बहुत रहती है। ऐसी स्थिति में क्विनीन का प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु दैनिक मात्रा ३० ग्रेन से अधिक किसी भी हालत में नहीं होनी चाहिए।

ज्वर हर प्रभाव—स्वस्थावस्था में तो क्विनीन का तापक्रम पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता, किन्तु ज्वरावस्था में यह क्रिया लक्षित होती है। विषमज्वर की अवस्थाओं में क्विनीन की तापहर या ज्वरनाशक क्रिया विशेष रूप से लक्षित होती है। विषम ज्वर में इसकी विशिष्ट क्रिया विषमज्वर कायाणुओं पर घातक प्रभाव होने के कारण होती है और अन्य ज्वरावस्थाओं में यह साधारण तापहर प्रभाव करता है जो तापनियंत्रक केन्द्रगत क्रिया तथा प्रांतिक

रक्तवाहिनियों के विस्फारित होने के कारण होती है। **विषमज्वर में क्विनीन की विशिष्ट क्रिया**—मलेरिया या विषमज्वर के लिए क्विनीन रामबाण औषधि समझी जाती है। नलिका-परीक्षण में देखा जाता है, कि १०,००० में १ के बल के क्विनीन सॉल्यूशन में भी विषमज्वर-कायाणुओं (Plasmo dium) की गति रुक जाती है। क्विनीन के सेवन से परिसरीय रक्त परिभ्रमण में विषमज्वर कायाणुओं का अदर्शन हो जाता है जब विषमज्वर कायाणु रक्तकणों में प्रविष्ट हो जाते हैं (स्पोरोज्वाइट्स तथा क्रिसेन्टस) तो इन पर क्विनीन का कोई प्रभाव नहीं होता। ऐसी अवस्था में क्विनीन का सेवन किये जाने पर भी मच्छरों द्वारा रोगी का खून चूसे जाने पर उपसर्ग के प्रसार में रुकावट नहीं होती। रोग प्रतिषेध की दृष्टि से आवश्यक है, कि औषधि कायाणुओं की धातुगत अवस्थाओं (Pre-erythrocytic forms or during the tissue phase) पर घातक प्रभाव करे। घातक तृतीय ज्वर के कायाणुओं पर पेलुड्रिन इस प्रकार की क्रिया करती है।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर ग्रहणी (Duodenum) से **इसका क्षिप्रतापूर्वक शोषण होता है। शोषणोपरान्त रक्तपरिभ्रमण में यह क्विनीन बेस** (Quinine base) **के रूप में पाया जाता है। क्विनीन के घुलनशील लवणों का शोषण अपेक्षाकृत अधिक क्षिप्रतापूर्वक होता है। वैसे विभिन्न व्यक्तियों में यह प्रचूषण किंचित् न्यूनाधिक हो सकता है। औषधीय प्रयोग की दृष्टि से क्विनीन के सेवन के लिए मुखमार्ग अधिक उपयुक्त है। गुद मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर इसका शोषण भी मन्द गति से होता है और साथ ही यह क्षोभक प्रभाव भी करता है। यही स्थिति अधस्त्वक् सूचिकाभरण करने से भी होती है। शोषणोपरान्त रक्तपरिभ्रमण में यह रक्त रसगत प्रोटीन के साथ संयुक्त हो जाता है और अधिशोषण** (Adsorption) **के द्वारा रक्तकायाणुओं से संसक्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ अंश यकृत, हृदय, वृक्क एवं मस्तिष्कगत धातुओं में भी संसक्त हो जाता है।**

क्विनीन का अधिकांश भाग यकृत में वियोजित (Metabolised) **किया जाता है। अधिक से अधिक ५% औषधि शुद्ध रूप में उत्सर्गित होती है। शरीर से क्विनीन का निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है। मूत्र की आम्लिक प्रतिक्रिया में यह उत्सर्ग और भी तीव्रतापूर्वक होता है। शरीर में न्यूनाधिक मात्रा में इसका संग्रह अधिवृक्कों तथा प्लीहा में अवश्य होता है।**

सह्यता—कतिपय व्यक्तियों में वैयक्तिक विशेषता (Idiosyncrasy) **के कारण औषधि के प्रति असह्यता पाई जाती है। जिससे अल्प मात्रा में भी सिंकोनिज्म के उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।**

क्विनीन के आमयिक प्रयोग।

(१) **विषमज्वर या मलेरिया**—मलेरिआ या विषमज्वर में क्विनीन का प्रयोग निम्न विभिन्न उद्देश्यों के रूप में किया जाता है :—

(१) **रोग-प्रतिषेध के लिए** (Prophylactic treatment)—इससे मलेरिया के पराश्रयी कायाणुओं की मानव शरीर में धातुगत अवस्थाओं (Pre-erythrocytic phase) का नाश होता है।

(२) **ज्वर के दौरे के लाक्षणिक निवारण के लिए** (Suppressive treatment)—इससे मलेरिया-कायाणुओं की मानव शरीर में रक्तकायाणुगत-अवस्थाओं (Ery-

throcytic stage of parasites) का विनाश होकर औषधि के सेवन-काल में ज्वर का आक्रमण नहीं होता।

(३) ज्वर एवं उसके कारण केनिर्मूलन के लिए (Curative treatment) इससे रक्तकायाणुगत होने वाली विभक्तक-अवस्था (Erythrocytic Schizogny of the parasites) का नाश होकर ज्वर का उन्मूलन हो जाता है।

(४) व्यवायक-कायाणुओं (Gametocytes) के निर्मूलन के लिए—इससे पुनः मच्छरों के उपसृष्ट होने का डर नहीं रहता और इस प्रकार रोग के प्रसार का निवारण होता है।

मलेरिया ज्वर का आवेग उस समय आता है, जब अंशुकेत या मेरोज्वाइट्स (Merozoites) रक्तकणों के फटने के बाद रक्तरस में स्वतंत्र होते हैं, तथा पुनः दूसरे रक्तकणों में प्रविष्ट होने का प्रयास करते हैं। इसी अवस्था में क्विनीन की सक्रियता भी मलेरिया-कायाणुओं पर सबसे अधिक होती है। अतएव औषधिका प्रयोग ज्वर आने के सम्भावित काल से २-३ घंटे पूर्व ही प्रारम्भ कर देना चाहिए। एतदर्थ १० ग्रेन की एक मात्रा अथवा १०-१० ग्रेन की २ मात्रायें २-२ या ३-३ घंटे के अन्तर से दें। इस प्रकार शोषणोपरान्त रक्त में क्विनीन का काफी संकेन्द्रण हो जाता है, जिससे मेरोज्वाइट्स के स्वतंत्र होते ही औषधि पूर्णतः उनको आक्रान्त कर लेती है। कभी-कभी एक दौरे में बुखार नहीं रुकता, जिससे दूसरे दौरे के पूर्व काफी मात्रा में औषधि पुनः देनी पड़ती है। ऐसी स्थिति में ज्योंही दौरे का बुखार उतर जाय औषधि देना शुरू कर दें, ताकि दूसरे दौरे के पूर्व ही २०-२५ ग्रेन औषधि अन्दर पहुँच जाय। प्रायः प्रयोगों द्वारा यह देखा गया है, कि मलेरिया के रोगियों में विबन्ध (Constipation) का उपद्रव भी होता है और पेट साफ हो जाने पर औषधि की क्रिया अधिक तीव्र होती है तथा ज्वर भी कुछ दुर्बल पड़ जाता है। एतदर्थ या तो मिक्सचर में ही मैग० सल्फ० मिला दिया जाता है, अथवा क्विनीन देने के पूर्व कैलोमल की एक मात्रा दे दी जाती है। किन्तु मैग० सल्फ० अधिक निरापद है। उग्र अवस्थाओं में ५-७ दिन चिकित्साक्रम के बाद औषधि बन्द कर दी जाती है, और यदि पुनः रोग के लक्षण दीखें तो पूर्ववत् चिकित्सा क्रम दोहराया जाता है। रोग की पुनरावृत्ति (Relapses) को रोकने के लिए क्विनीन का प्रयोग लौह एवं संखिया यौगिकों के साथ करना अधिक उपयोगी एवं उपयुक्त समझा जाता है।

कतिपय विद्वानों का मत है कि अकेले क्विनीन की अपेक्षा क्षारों (सोडियम् बाइकार्बोनेट आदि) तथा मैग० सल्फ० के साथ चिकित्सा करने से अधिक सफलता मिलती है।

सेवन-विधि—जैसा पहले वर्णन किया जा चुका है, साधारणतया मुखमार्ग द्वारा क्विनीन का सेवन (Oral administration) अधिक उपयुक्त तथा निरापद समझा जाता है। आमतौर से क्विनीन मिक्सचर अधिक चालू है। जिन रोगियों में आमाशयिक क्षोभ की आशंका हो अथवा क्विनीन मिक्सचर के प्रति घृणा हो इसका सेवन फेनायमान मिश्रण (Effervescent Mixture) के रूप में कर सकते हैं। क्विनीन सल्फेट को विलीन करने के लिए हाइड्रोब्रोमिक एसिड (१ ग्रेन के लिए २ मिनम् एसिड) का प्रयोग किया जाता है। इससे वमन की प्रवृत्ति का भी शमन होता है। बालकों में यूक्विनीन (Euquinine)

तथा एरिस्टोचिन का व्यवहार कर सकते हैं। यदि वमन आदि उपद्रव अधिक प्रबल हों जिससे दवा कै हो जाती हो और पचती ही न हो अथवा ऐसी अन्य अवस्थाओं में जिनमें मुखद्वारा क्विनीन का प्रयोग निषिद्ध हो, इसका प्रयोग **पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा** किया जाता है। किन्तु इस मार्ग का अवलम्बन खूब सोचविचार कर आवश्यक होने पर ही करना चाहिए, क्योंकि इसमें अनेक दोष तथा उपद्रव होते हैं। एक तो औषधि का शोषण मन्द गति से होता है, दूसरे उस स्थान पर वेदना भी अधिक होती है, और धातुओं पर घातक प्रभाव पड़ने के कारण विद्रधि बनने की आशंका बहुत होती है। घातक तृतीयज्वर [जिसमें उग्र वमन का उपद्रव हो तथा संन्यास (Coma) की आशंका हो] तथा मस्तिष्कगत मलेरिया (Cerebral malaria) प्रकारों में जहाँ औषधि के तात्कालिक प्रभाव की आवश्यकता हो, क्विनीन का प्रयोग **शिरामार्ग द्वारा** किया जाता है। एतदर्थ क्विनीन का डाइहाइड्रोक्लोराइड लवण अधिक उपयुक्त समझा जाता है। १० ग्रेन क्विनीन डाइहाइड्रोक्लोराइड १० से २० सी० सी० समबल लवण जल (Physiological Saline Solution) में विलीन कर उक्त सॉल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है। इन्जेक्शन खूब धीरे-धीरे (कम से कम १० मिनट में) करना चाहिए, क्योंकि इस मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर इसका प्रत्यक्ष प्रभाव हृत्पेशी पर पड़ता है और घातक परिणामों का भय रहता है। यदि रोगी का रक्तभार आवश्यकता से कम हो तो सुरक्षा की दृष्टि से ½ सी० सी० एड्रिनेलीन सॉल्यूशन का अधस्त्वक् मार्ग द्वारा सूचिकाभरण कर देना चाहिए। ८ घण्टे से पहले दूसरा इंजेक्शन नहीं लगाना चाहिए और दैनिक मात्रा ३० ग्रेन से कदापि अधिक नहीं होनी चाहिए। शिरागत सूचिका भरण का प्रयोग केवल आत्ययिक अवस्थाओं में ही करना चाहिए। घातक प्रकार के मलेरिया में क्विनीन की अपेक्षा निवाक्वीन तथा मेपाक्रीन आदि अधिक उपयुक्त समझे जाते हैं। **गर्भवती स्त्रियों में क्विनीन का प्रयोग (Quinine in Pregnancy)**—चूंकि क्विनीन एक गर्भपातक औषधि भी है, अतएव गर्भवती स्त्रियों में विषमज्वर होने पर इसका प्रयोग करने में भयभीत होना स्वाभाविक ही है। किन्तु स्मरण रहे कि क्विनीन देने की अपेक्षा गर्भवती स्त्रियों में विषमज्वर का इलाज न करने से गर्भपात की आशंका तथा खतरा और भी अधिक होता है। अतएव सतर्कतापूर्वक क्विनीन का प्रयोग करने में कोई आपत्ति नहीं है। **हाँ एक बार में मात्रा ५ ग्रेन (२½ रत्ती) से अधिक कदापि नहीं होनी चाहिए।** जिन स्त्रियों में क्विनीन के सेवन से गर्भस्राव या गर्भपात होने का पूर्व-इतिहास हो उनमें विशेष सावधानी की आवश्यकता है। ऐसे स्थिति में इसका सेवन पोटासियम् ब्रोमाइड आदि गर्भाशय संशामक औषधियों के साथ होना चाहिए। यदि क्विनीन का प्रयोग उपयुक्त न मालूम होता हो तो ऐसी अवस्था में मेपाक्रीन या क्लोरोक्वीन का सेवन कर सकते हैं।

चिरकालीन विषमज्वर तथा विषमज्वरजन्य प्लीहोदर (प्लीहावृद्धि)—चिरकालीन विषमज्वर की अवस्था में, जिसमें ज्वर की पुनरावृत्ति की प्रवृत्ति हो तथा रोगी में रक्ताल्पता (Anaemia) एवं प्लीहोदर (Enlargement of Spleen) के उपद्रव हों, तो **क्विनीन का सेवन संखिया (आर्सेनिक) एवं लौह के यौगिकों के साथ** किया जाता है। इससे सभी उपद्रव शांत होते हैं। एतदर्थ औषधि **मिक्सचर के रूप में** अथवा **गोलियों के रूप में** प्रयुक्त होती है। इस कार्य के लिए **फेरी-एट क्विनीन साइट्रस** एक उत्तम यौगिक है।

क्विनीन-विषाक्तता (या उपद्रव)—**वैयक्तिक स्वभाव वैशिष्ट (Idiosyncrasy) के कारण**

कभी-कभी अल्प मात्रा में भी अनेक उपद्रव उठ खड़े होते हैं यथा--कानों में भनभनाहट (Ringing in tha ears) तथा सामयिक बधिरता, कान में आवाज होना, शिरोभ्रम, प्रकाश संत्रास (Photo-Phobia) दृष्टि-दोष यथा द्विधा दृष्टि (Diplopia), नक्तान्ध्यता (Night blindness), स्कोटोमा (Scotoma), एम्ब्लयोपिया (Amblyopia) तथा दृष्टि नाड़ीक्षय (Optic atrcphy) आदि दर्शनेन्द्रिय सम्बन्धी विकृतियाँ। इसके अतिरिक्त मूत्राशय प्रदाह (Irritation of the bladder), जलन के साथ बार-बार थोड़ा-थोड़ा मूत्र का आना, शोणितवर्तुलिमेह (Haemoglobinuria), अमूत्रता (Anuria) आदि मूत्र संस्थान सम्बन्धी उपद्रव एवं गर्भवती स्त्रियों में गर्भाशयिक संकोच तथा कभी-कभी गर्भपात का उपद्रव होता है। त्वचा पर भी शीतपित्ती आदि उपद्रव तथा खुजली एवं पचन संस्थान में वमन, हृल्लास (Nausea), उदर शूल एवं अतिसार आदि उपद्रव तथा शिरःशूल, शिरोभ्रम, प्रलाप एवं संन्यास तथा कभी-कभी भीषण निपात (Collapse) आदि नाड़ी संस्थान सम्बन्धी उपद्रव होते हैं।

प्रयोग निषेध--निम्न व्याधियों या विकृतियों से पीड़ित व्यक्तियों में क्विनीन का प्रयोग निषिद्ध है—मध्यकर्ण की उग्र एवं अनुग्र व्याधियों में, आमाशयान्त्र प्रदाह (Gastroenteritis), उग्र रक्ताल्पता तथा मस्तिष्कगत रक्ताधिक्य की उग्रावस्था के रोगियों में त्वचागत शीतपित्ती (Urticaria) या लाल चकत्ते (Erythema) के उपद्रव में एवं कालमेह ज्वर (Black water fever) के रोगियों में। इसके अतिरिक्त जिन व्यक्तियों में वैयक्तिक-असह्यता का पूर्व इतिहास मिलता हो उनमें भी इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

क्विनीन के अन्य आमयिक प्रयोग

(१) दीपन-पाचन (Stomachic) एवं तिक्तबल्य (Bitter tonic) के रूप में अल्पमात्रा में इसका प्रयोग ज्वर निवृत्ति-काल विशेषतः विषमज्वर के निवृत्ति-काल (Convalescent period) में किया जाता है। एतदर्थ इसको खनिज-अम्लों (Mineral acids) एवं अन्य तिक्तबल्य औषधियों के साथ प्रयुक्त करना अधिक श्रेयस्कर है।

(२) यूरिथेन के साथ मिला कर क्विनीन का प्रयोग कुटिल शिराओं (Vari cose veins) की चिकित्सा के लिए किया जाता है। इसके लिए इञ्जेक्शियो क्विनीनी एट युरिथेनाइ (Injection Ouininãe et Urethani) एक उत्तम योग है। इसका स्थानिक क्रिया के लिये कुटिल शिराओं में इंजेक्शन किया जाता है। उक्त दोनों औषधियों का परस्पर संयोग स्थानिक संज्ञाहर प्रभाव भी करता है। जिस कुटिल शिरा में इंजेक्शन करना हो उसके निचले सिरे पर सूई प्रविष्ट की जाती है और ३० सेकण्ड तक सूचिका को शिरा में रखने के बाद निकाल लिया जाता है और उस स्थान को कोलिडिअन एवं रूई से बन्द कर उस पर पट्टी बाँध दी जाती है। इस प्रकार कई बार क्रिया दुहराई जाती है और मात्रा ½ सी० सी० से प्रारम्भ कर २–३ सी० सी० तक ले जाई जाती है।

प्रयोग निषेध—गर्भावस्था में, रजःस्राव काल (Menstruation) में तथा जिन रोगियों में उग्र शिराशोथ (Acute phlelitis), गम्भीर शिरास्कन्दन (Deep thrombosis), त्वचा रोग, हृद्रोग एवं वृक्कागत विकृतियों का उपद्रव हो उनमें यह चिकित्साक्रम निषिद्ध है।

(३) फेनाजोन, फेनासेटीन एवं सोडियम् सेलिसिले की भाँति क्विनीन साधारण ताप-

हर एवं वेदना स्थापक (Antipyretic and analgesic) भी होता है। अतएव ५ से १० ग्रेन की मात्रा में इसका मुख द्वारा सेवन शिरःशूल, पेशीशूल (Myalgia), सन्धिशूल (Arthralgia) एवं नाड़ीशूल आदि व्याधियों में अन्य वेदनाहर एवं सन्तापहर औषधियों के साथ किया जाता है।

(४) नाड़ी बल्य (Nervine tonic) के रूप में इसका व्यवहार अनेक नाड़ी रोगों में किया जाता है। इसके लिए क्विनीन का व्यवहार स्टिक्नीन तथा लौह के यौगिकों के साथ किया जाता है। इस रूप में प्रयुक्त करने के लिए ईस्टन्स शिरप एक उत्तम योग है।

(५) गर्भाशयोत्तेजक (Ecbolic) प्रभाव के लिए इसका प्रयोग प्रसवकालिक गर्भाशय दौर्बल्य (Uterine inertia) में किया जाता है। एतदर्थ १० ग्रेन की एक मात्रा दी जाती है और १–२ घण्टे के बाद पुनः ऐसी १ मात्रा देने से काम चल जाता है।

(६) पेशीक्षय (Myotonia congenita and atrophia) में ५ से १० ग्रेन की मात्रा में क्विनीन दिन में २–३ बार देने से लाभ होता है। गम्भीर पेश्यवसन्नता रोग (Myasthenia gravis) में क्विनीन का प्रयोग निदान के लिए किया जाता है।

(सिंकोना तथा क्विनीन के योग)

१—सिंकोना—

१—एक्स्ट्रॅक्टम् सिंकोनी Extractum Cinchonae (Ext. Cinchon.), I. P.—ले०; एक्स्ट्रॅक्ट ऑव सिंकोना Extract of Cinchona—अं०; सिंकोना का घन सत्व—हिं०। इसमें सिंकोना के अल्कलायड् की सकल मात्रा १०% होती है। संरक्षण—सिंकोना एक्स्ट्रॅक्ट को अच्छी तरह डाट बंद चौड़े मुँह की शीशियों में बन्द कर ठंढी जगह में रखना चाहिए—मात्रा २ से ८ ग्रेन (०·१२ से ०·५ ग्राम)।

२—टिंक्चुरा सिंकोनी Tinctura Cinchonae (Tinct. Cinchon.)—ले०; टिंक्चुर ऑव सिंकोना Tincture of Cinchona—अं; टिंक्टर सिंकोना—हिं०। इसमें १ प्रतिशत (w/v) अर्थात् ६० बूंद में ३/५ ग्रेन सिंकोना के अल्कलायड्स होते हैं। मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०) या १/२ से १ ड्राम।

३—टिंक्चुरा सिंकोनी कम्पोजिटा Tinctura Cinchonae Composita (Tinct. Cinichon. Co.) I. P.—ले०; कम्पाउण्ड टिंक्चर ऑव सिंकोना Compound Tincture of Cinchona—अं०। इसमें कम से कम ०·५% सिंकोना-अलकलायड्स की टोटल मात्रा होती है। मात्रा—३० से ६० मिनम् (२ से ४ मि० लि०।

४—एक्स्ट्रॅम् सिंकोनी लिक्विडम् Extractum Cinchonae Liquidum (Ext. Cinchon. Liq.), B. P. C.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव सिंकोना, सिंकोना लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट—अं०। इसमें ५% सिंकोना के टोटल अल्कलायड्स होते हैं। मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)।

५—सिंकोनिनी सल्फास Cinchonnäe Sulphas. (Cinchon. Sulph.)—ले०; सिंको-नीन सल्फेट Cinchonine Sulphate—अं० । यह सफेद रंग के त्रिपार्श्विक चमकदार क्रिस्टल्स के रूप में होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। मात्रा—१ से १० ग्रेन (०·०६ से ०·६ ग्राम) ।

६—सिंकोनिडिनी सल्फास Cinchonidinae Sulphas. (Cinchonidin. Sulph.)—ले०; सिंकोनिडीन सल्फेट Cinchonidine Sulphate—अं० । इसके रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, जो १०० भाग जल में विलेय होते हैं । मात्रा—१ से १० ग्रेन (०·०६ से ०·६ ग्राम) ।

२—क्विनीन बाइ-सल्फेट, हाइड्रोक्लोराइ एवं डाइहाइड्रोक्लोराइड

१—टॅबेली क्विनीनी बाइसल्फेटिस् Tabellae Quininae Bisulphatis (Tab. Quinin. Bisulph.), I. P., B. P.—ले०; टबलेट्स ऑव क्विनीन बाइसल्फेट, टबलेट्स ऑव क्विनीन एसिड सल्फेट—अं०; कुनैन (बाइसल्फेट) की टिकिया—हिं० । इसमें प्रति टिकिया या टॅबलेट में कुनैन की मात्रा प्रायः ५२ से ६८% तक होती है । मात्रा—(क्विनीन बाइसल्फेट)—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम) । यदि इस बात का निर्देश न हो कि प्रति टॅबलेट क्विनीन की मात्रा कितनी होनी चाहिए तो ५ ग्रेन क्विनीन के हिसाब से टॅबलेट्स देनी चाहिए ।

२—टॅबेली क्विनीनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Quininae Hydrochloridi (Tab. Quinin. Hydrochlor.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड Tablets of Quinine Hydrochloride—अं०; कुनैन (हाइड्रोक्लोराइड की टिकिया)—हिं० । इसमें प्रति टिकिया एन्हाइड्रस क्विनीन (जलरहित क्विनीन) की मात्रा ७३ से ९१½% तक होती है । मात्रा (क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड)—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम) । वक्तव्य—इति प्रति टॅबलेट क्वीनीन की मात्रा का निर्देश न हो तो ५ ग्रेन क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड की टिकिया देनी चाहिए ।

३—इन्जेक्शिओ क्विनीनी एट यूरिथेनी Injectio Quininae et Urethani (Inj. Quininyet Urethan.), I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव क्विनीन एण्ड यूरिथेन Injection of Quinine and Urethane—अं० । इसमें १२½% क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड तथा ६⅔% यूरिथेन ($C_3H_7NO_2$) होता है । मात्रा—८ से ७५ बूंद या मिनम् (०·५ से ५ मि० लि०) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा (Sclerosing agent) के रूप में ।

४—इन्जेक्शिओ क्विनीनी डाइहाइड्रोक्लोराइडाइ Injectio Quininae Dihydrochloridi (Inj. Quinin. Dihydrochlor.), I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव क्विनीन डाइहाइड्रोक्लोराइड—हिं० । यह 'वाटर फॉर इंजेक्शन' में बनाया हुआ क्विनीन डाइहाइड्रोक्लोराइड का विशोधित विलयन (Sterile Solution) होता है, जो एक स्वच्छ हल्के पीले रंग का द्रव होता है । इसमें ९२% से १०५% तक क्विनीन डाइहाइड्रोक्लोराइड ($C_{20}H_{24}O_2N_2$, 2HCl.) होता है । मात्रा (क्विनीन डाइहाइड्रोक्लोराइड)—५ से १० ग्रेन (०·३ से ०·६ ग्राम) शिरामार्ग द्वारा । यदि मात्रा या बल का निर्देशन हो तो १५ बूंद में ५ ग्रेन के बल का सॉल्यूशन देना चाहिए । इंजेक्शन के पूर्व इस विलयन में इसका १० गुना लवण जल 'Injection of Sodium Chloride' मिलाकर इसे पतला कर लेना चाहिए, और धीरे-धीरे इसका इन्जेक्शन करना चाहिए ।

(नॉट-ऑफिशल)

१—लाइकर क्विनीनी अमोनिएटस् Liquor Quininae Ammoniatus (Liq. Quinin. Ammon.), B. P. C., टिंक्चुरा क्विनीनी अमोनिएटा Tinctura Quininae Ammoniata—ले०; अमोनिएटेड टिंक्चर ऑव क्विनीन Ammoniated Tincture of Quinine अमोनिएटेड सॉल्यूशन ऑव क्विनीन Ammoniated Solution of Quinine—अं० । इसमें २ प्रतिशत (w/v) क्विनीन सल्फेट तथा १ प्रतिशत (w/v) अमोनिया अर्थात् ६० बूंद में १⅓ ग्रेन क्विनीन होता है । मात्रा—३० से ६० बूंद या मिनम् (२ से ४ मि० लि०) या ½ से १ ड्राम ।

२—ईस्टन्स सिरप Easton's Syrup । पर्याय—सिरपस फेरी फॉस्फेटिस कम् क्विनीना एट स्ट्रिक्नीना Syrupus Ferri Phosphatis Cum Quinina et Strychnina B. P. C.—ले० । ६० बूंद में क्विनीन की मात्रा ⅘ ग्रेन होती है । मात्रा—३० से ६० बूंद ।

३—क्विनीनी हाइड्रोब्रोमाइडम् Quininae Hydrobromidum (Quinin. Hydrobrom.)—ले०; क्विनीन हाइड्रोब्रोमाइड Quinine Hydrobromide—अं० । इसके सफेद रंग के सूच्याकार क्रिस्टल्स (White acicular crystals) होते हैं, जो ५५ भाग उबलते जल में विलेय होते हैं । मात्रा—१ से १० ग्रेन (६० से ६०० मि० ग्रा०) ।

४—क्विनीनी सेलिसिलास Quininae Salicylas—ले०; क्विनीन सेलिसिलेट Quinine Salicylate—अं० । इसके सिल्की (Silky) क्रिस्टल्स होते हैं, जो जल में मुश्किल से घुलते हैं । मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से ३०० मि० ग्रा०) या ½ से २½ रत्ती । विशेष प्रयोग—इसका प्रयोग आमवात, नाड़ीशूल (Neuralgia), सर्दी-जुकाम तथा इन्फ्लुएन्जा में किया जाता है । उक्त अवस्थाओं में वेदनाहर (Analgesic) क्रिया करता है ।

५—क्विनीनी वेलेरिआनेस Quinini Valerianas—ले०; क्विनीन वलेरिएनेट Quinine Valerianate—अं० । इसके रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, जिनमें वलेरिअन की गंध आती है और स्वाद में ये तिक्त होते हैं । विलेयता—पानी तथा अल्कोहल् में घुल जाता है । इसका प्रयोग वातिक शिरःशूल (Nervous Headache) तथा हिस्टीरिया में किया जाता है । मात्रा—१ से ३ ग्रेन (६० से २०० मि० ग्रा०) ।

६—एरिस्टोचिन Aristochin । पर्याय—एरिस्टोक्विनीन Aristo-quinine । यह सफेद रंग के स्वादहीन चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में अविलेय होता है । मात्रा—१ से १० ग्रेन (०·०६ से ०·६ ग्राम) ।

७—क्विनीनी टैनास Quininae Tannas—ले०; क्विनीन टैनेट Quinine Tannate—अं० । यह भी स्वादहीन होने से बालकों के लिए अधिक उपयुक्त है । मात्रा—१½ से १५ ग्रेन ।

क्विनीन के उपयोगी नुस्खे—

(१)	क्विनीन हाइड्रोक्लोर०	७ ग्रेन ।
	साइट्रिक एसिड	१५ ग्रेन ।
	सिरप लेमन	३० बूँद ।
	एक्वा क्लोरोफॉर्म आवश्यकतानुसार	१ औंस तक ।

यह क्विनीन का फेनायमान मिश्रण है ।

(२)	सोडा बाइकार्ब०	२० ग्रेन।
	सोडियम् साइट्रेट	२० ग्रेन।
	जल	१/२ औंस तक।

वक्तव्य—उक्त दोनों नुस्खों की एक-एक मात्रा लेकर परस्पर मिलावें। जब फेन उठने लगे तो पी जायँ।

(३)	क्विनीन सल्फ०	२ ग्रेन।
	फेरी सल्फ०	२१/२ ,,
	पल्व० रिहाई	५ ,,
	पल्व इपेकाक०	१/६ ,,
	सोडा बाइकार्ब०	२१/२ ,,

सबको परस्पर मिलाकर (१) चूर्णरूप (Powder) में अथवा (२) जिलेटिन की डिब्बी (Cachet) में रख कर पानी से निगल लें। विषमज्वर में रक्ताल्पता एवं प्लीहोदरका उपद्रव होने पर विशेष उपयोगी है।

(४)	आर्सेनिक ट्राइऑक्साइड	१/२४ ग्रेन।
	क्विनीन सल्फ०	२ ,,
	पल्व इपेकाक०	१/६ ,,
	फेरी सल्फ०	१ ,,
	एक्स्ट्रॉक्ट नक्सवॉमिका (कुचिलेकाघनसत्व)	१/४ ,,
	पिल्युला रिहाई कम्पोजिटस्	११/२ ,,
(५)	क्विनीन हाइड्रोक्लोर	५ ग्रेन।
	फिनासेटिन	२१/२ ,,
	कफीन साइट्रस	२ ,,

यह ज्वरनाशक एवं वेदनास्थापक योग है।

(६)	एसिड हाइड्रोक्लोर० डिल०	१० बूँद।
	फेरी एट क्विनीन साइट्रस	१० ग्रेन।
	लाइकर आर्सेनिकेलिस	३ बूंद।
	टिंक्चर नक्स वॉमिका	७१/२ बूंद।
	मैग० सल्फ०	६० ग्रेन (१ ड्राम)।
	ग्लिसरिन	२० बूंद।
	एक्वामेन्था पिप०	१ औंस।

यह क्विनीन, आर्सेनिक एवं लौह घटित योग है।

पामाक्विनम् (पामाक्विन) I. P., B. P.

Pamaquinum (ले०); Pamaquin (अं०)

रासायनिक संकेत : $C_{४२}H_{४५}O_{७}N_{3}$.

पर्याय—पामाक्विन नेफ्थोएट Pamaquin Naphthoate; प्लाज्मोचिन Plasmochin ; प्लाजमोक्वीन Plasmoquine।

प्राप्ति-साधन--पामाक्विन प्रथम विषमज्वरनाशक कृत्रिम औषधि है, जिसका निर्माण सन् १०२५ में रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा किया गया था। रासायनिक दृष्टि से यह अमिनो-क्विनोलीन व्युत्पन्न यौगिक है। इसमें ४३ से ४५ प्रतिशत तक 8—(4—diethylamino—1—methylbutylamino)—6—methoxyquinoline तथा ५३ से ५७ प्रतिशत तक 2:2′—dihydroxy—1:1′—dinaphthylmethane 3:3′—dicarboxylic acid होता है।

वर्णन--प्लाज्मोक्वीन का पीले रंग का या नारंगपीत (orange-yellow) वर्ण का चूर्ण होता है, जो स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। विलेयता—यह जल में तो नहीं घुलता, किन्तु २० भाग अल्कोहल (९५ प्रतिशत) में विलेय होता है।

मात्रा—१० से २० मि० ग्रा० (⅙ से ⅓ ग्रेन)।

गुणकर्म तथा प्रयोग

पामाक्विन एक संश्लिष्ट यौगिक (a synthetic & aminoquinoline derivative) है, जिसका प्रयोग मलेरिया के लिये किया जाता है। पामाक्विन तथा इस वर्ग की अन्य औषधियाँ मलेरिया के प्रतिषेध एवं पुनरावृत्ति (Relapses) के निवारण के लिए परमोपयुक्त समझी जाती हैं। यह चारों प्रकार के मलेरिया व्यवायक कायाणुओं (Gametocytes) पर घातक प्रभाव करता है। इसके प्रयोग से मनुष्य के रक्त में मैथुनीचक्र के विभिन्न कायाणुओं के रहते हुए भी मच्छर द्वारा दष्ट होने पर मच्छर मलेरिया से उपसृष्ट नहीं होता। और इस प्रकार यह मलेरिया के उपसर्ग को रोकने में सहायक होता है। इस प्रकार अनागत बाधा प्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए ⅓ ग्रेन (२० मि० ग्रा०) की दैनिक मात्रा पर्याप्त होती है। इस प्रकार ३ दिन तक औषधि का सेवन करने से काम चल जाता है। किन्तु पामाक्विन एक तीव्र विषाक्त औषधि है और शरीर से इसका निस्सरण भी बहुत देर में होता है। मेपाक्रिन के साथ इसका प्रयोग करने से इसकी विषाक्तता और भी बढ़ जाती है। अतएव मेपाक्रिन तथा पामाक्विन इन दोनों का प्रयोग साथ-साथ नहीं करना चाहिए। पामाक्विन की क्रिया विशेषतः मलेरिया कायाणुओं की धातुगत अवस्थाओं (Tissue-phase) पर होता है। किन्तु विषैली होने के कारण अब इसका प्रयोग केवल मलेरिका के पुनरावर्तव (Recurrence) के निवारण के लिए ही किया जाता है। क्विनीन के साथ मिलाकर इसका उपयोग मलेरिया के उन्मूलन तथा पुनरावर्तन–निवारण दोनों ही उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। तदर्थ १० मि० ग्रा० (⅙ ग्रेन) पामाक्विन तथा १० ग्रेन क्विनीन सल्फेट : ऐसा एक मात्रा दिन में तीन बार एक सप्ताह तक दी जाती है। पामाक्विन का उपयोग अन्य सहायक उपायों के साथ मलेरिया की सामूहिक चिकित्सा (Mass treatment) एवं जनस्वास्थ्य रक्षा के लिए भी किया जाता है।

विषाक्तता—जैसा पहले कहा जा चुका है, पामाक्विन एक विषैली औषधि है, जिससे इसके चिकित्साक्रम में विषाक्तता की सम्भावना अधिक रहती है। विशेषतः जिन रोगियों का यकृत विकृत होता है, अथवा जिनमें औषधि के प्रति वैयक्तिक असह्यता होती है, उनमें विषाक्तता की सम्भावना भी अधिक होती है और लक्षण भी भयंकरता का स्वरूप ग्रहण करते हैं। ऐसी स्थिति में फौरन चिकित्सा बन्द कर देनी चाहिए और रोगीको ग्लूकोज तथा एड्रिनेलीन का इन्जेक्शन देना चाहिए।

(योग)

१—टॅबेली पामाक्विनी Tabellae Pamaquini (Tab. Pamaquin) B. P. C.—लै०; टॅबलेट्स ऑव पामाक्विन Tablets of Pamaquin, पामाक्विन टॅबलेट्स Pamaquin Tablets—अं०; प्लाज्मोक्वीन की टिकिया—हिं०। यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देशन न हो तो २० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ ग्रेन) प्लाज्मोक्वीन की टिकिया देनी चाहिए। मात्रा (पामाक्विन)—१० से २० मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन)।

(नॉट ऑफिशल)

पेंटाक्वीन Pentaquine : S N 13276.—रासायनिक दृष्टि से यह भी पामाक्वीन की भाँति एमिनो-क्विनोलीन व्युत्पन्न मलेरियानाशक कृत्रिम यौगिक होता है। इसका रासायनिक स्वरूप 6—Methoxy-8-(5 isopropylaminoamylamino) quinoline, a 8—aminoquinoline derivative है।

मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा यह क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है; जिससे रक्त में इसका औषधीय मात्रा में संकेन्द्रण शीघ्रतापूर्वक होता है, जो पामाक्वीन की अपेक्षा अधिक स्थायी भी होता है, क्योंकि शरीर में इसका समवर्त (Metabolism) मन्द गति से होता है। प्रत्येक ८–८ घंटे पर लगातार औषधि सेवन से यह रक्त रक्तगत संकेन्द्रण बराबर स्थायी रखा जा सकता है। शरीर धातुओं में रूपान्तरित इसके यौगिक तीव्र मलेरिया कायाणु नाशक (Plasmodicidal) प्रभाव करनेवाले होते हैं और औषधि का केवल १५% भाग मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है। इसकी क्रिया पामाक्विन की भांति होती है. किन्तु पामाक्विन की अपेक्षा यह कम विषैली है। औपशमिक मात्राओं (Therapeutic doses) में भी प्ला० वाइवेक्स की सभी धातुगत अवस्थाओं पर तथा व्यवायक कायाणुओं पर पामाक्वीन की अपेक्षा अधिक प्रबल प्रभाव करता है। अतएव क्विनीन के साथ सहयोगी औषधि के रूप में इसे मिलाकर उक्त मलेरिया कायाणुजन्य उग्रावस्थाओं एवं पुनरावर्तन की स्थिति में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी है।

उपद्रव—कभी-कभी सावधानी न रखने से तथा मात्रा का समुचित नियन्त्रण न करने से अनेक पचन संस्थान सम्बन्धी उपद्रव तथा शोणवर्तुलिमेह, शोणांशविक रक्ताल्पता (Haemolytic anaemia) आदि भयंकर उपद्रव उत्पन्न होते हैं। कभी कभी यकृत के विकृत होने के कारण तज्जन्य लक्षण भी दिखाई पड़ते हैं।

मात्रा—$\frac{1}{2}$ ग्रेन (३० मि० ग्रा०) मूलयौगिक या डाइफास्फेट लवण ४० मि० ग्रा० ($\frac{2}{3}$ ग्रेन) तथा २ ग्राम (३० ग्रेन) क्विनीन परस्पर मिलाकर कई मात्राओं में विभक्त करके ८–८ घण्टे पर देना चाहिए। प्रायः २ सप्ताह तक इस चिकित्साक्रम को चालू रखने से प्ला० वाइवेक्सजन्य उपसर्ग का उन्मूलन हो जाता है।

प्रिमाक्वीन Primaquine : S N 13272 : यह भी एमिनोक्विनोलीन वर्ग की विषमज्वर नाशक औषधि है। इसका रासायनिक स्वरूप 8—(4-amino-1-methylbutyl amino)—6-methoxyquinoline, a 8-aminoquinoline derivative है।

प्रिमाक्वीन की क्रिया भी पामाक्वीन की भांति होती है। किन्तु यह उसकी अपेक्षा चौगुनी सक्रिय और साथ ही कम विषैली है। प्ला० वाइवेक्स नामक मलेरिया कायाणु के मानवशरीर

धातुगत विभिन्न अवस्थाओं पर घातक प्रभाव करने के लिए यह एक उत्तम औषधि है। इसका प्रधान उपयोग क्विनीन या क्लोरोक्वीन के साथ प्ला० वाइवेक्स जन्य उपसर्ग की उग्र एवं अनुग्र सभी अवस्थाओं में स्थायी-लाभ (Radical cure) के लिए किया जाता है।

विषाक्तता—औषधीय मात्राओं में तो कोई खास उपद्रव नहीं होते, किन्तु मात्रातियोग होने पर पामाक्वीन की भांति सभी उपद्रव हो सकते हैं, हालां कि उपद्रवों की उग्रता तब भी पामाक्विन की अपेक्षा होते कम ही हैं।

मात्रा—१० से २० मि० ग्रा० मूल यौगिक अर्थात् ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन) अथवा १५ से ३० मि० ग्रा० ($\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन) डाइफास्फेट लवण प्रतिदिन मुखद्वारा २ सप्ताह तक। १५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{4}$ ग्रेन) प्रिमाक्वीन मूल यौगिक (Base) क्लोरोक्वीन या क्विनीन की सामान्य मात्रा के साथ प्रतिदिन १४ दिन तक उग्र अवस्था में दे सकते हैं।

मेपाक्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Mepacrinae Hydrochloridum

(Mepacr. Hydrochlor.) I. P., B. P.—ले०; मेपाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{23}H_{30}ON_3CL, 2HCL, 2H_2O$.

पर्याय—क्विनाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड Quinacrine Hydrochloride, U. S. P.; अटेब्रिन Atebrin।

प्राप्ति-साधन—पामाक्विन के बाद मेपाक्रीन दूसरी विषमज्वरनाशक औषधि है, जिसका निर्माण रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से किया गया था। रासायनिक दृष्टि से यह 2-Chloro-5-(4-diethylamino-1-methylbutylamino)-7-methoxyacridine का डाइहाइड्रोक्लोराइड (Dihydrochloride) लवण होता है। यह 4—diethylamino-1-methylbutylamine एवं 2 : 5-dichloro—7 Methoxyacridine की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त यौगिक (Base) को डाइहाइड्रोक्लोराइड में परिवर्तित करने से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९ % मेपाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड ($C_{23}H_{30}ON_3CL, 2HCL, 2H_2O$.) होता है।

वर्णन—यह चमकीले पीले रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—४० भाग जल में घुल जाता है, और इसका जलीय विलयन पीले रंग का होता है। जलके अतिरिक्ति यह अल्कोहल् में भी घुल जाता है।

मात्रा। (१) रोग प्रतिषेध के लिए (Prophylactic Dose)—०·१ ग्राम ($\frac{1}{2}$ ग्रेन) प्रतिदिन।

(२) रोगनिवारक मात्रा (Therapeutic)— ०·२ से ०·५ ग्राम या ३ से ८ ग्रेन प्रतिदिन (विभक्त मात्राओं में)। वक्तव्य—०·५ ग्राम बराबर होता है लगभग ४ ग्राम मूल यौगिक (Base) के : 2—chloro—5—(4—diethylamino—1—methylbutylamino)—7—methoxyacridine।

मेपाक्रिनी मिथेनोसल्फोनास Mepacrinae Methanosulphonas

(Mepacr. Methanosulph.), B. P.—ले०; मेपाक्रीन मिथेनसल्फोनेट Mepacrine Methanesulphonate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{23}H_{30}ON_3\ Cl, 2CH_3\text{-}SO_3\ H, H_2O$.

पर्याय—अटेब्रिन म्युसोनेट Atebrin Musonate।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 2—chloro—5—(4—diethylamino —1—methylbutylamino)—7—methoxyacridine dimethane sulponate होता है। इसमें कम से कम ६६ प्रतिशत $C_{23}H_{30}ON_3$ Cl, $2CH_3.SO_3H$. होता है।

वर्णन—इसके चमकीले पीले रंग के क्रिस्टलाइन घन (Solid) होते हैं, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होते हैं। विलेयता—३ भाग जल तथा ३६ भाग अल्कोहल् (६०%) में घुलता है।

मात्रा—०·१ ग्राम से ०·३ ग्राम (१½ से ५ ग्रेन) पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मेपाक्रीन एक तीव्र विषमज्वरनाशक औषधि है, और यह सभी प्रकार के मलेरिया कायाणुओं की अमैथुनी अवस्थाओं (Asexual forms) पर घातक प्रभाव करती है। किन्तु घातक तृतीयकज्वर कायाणु की क्रिसेन्ट-अवस्था (Crescents) तथा शरीरधातुगत अवस्थाओं (Pre-erythrocytic tissue forms) पर कोई प्रभाव नहीं करती। क्विनीन की अपेक्षा मेपाक्रीन में औषधीय प्रभाव ५ गुना अधिक होता है, तथा साथ ही यह उसकी अपेक्षा कम विषैला है। मलेरिया की उग्रावस्था में लाक्षणिक चिकित्सा (Suppresive) तथा व्याधि को दूर करने के लिए उत्तम औषधि है। अघातक तृतीयक एवं चातुर्थक विषमज्वरजनक मलेरिया कायाणुओं पर क्विनीन तथा मेपाक्रीन की क्रिया एक-सी होती है। अतएव ऐसी अवस्था में अन्य दूसरी बातों का विचार कर औषधि का चुनाव करना चाहिए। अथवा कभी-कभी ऐसा भी होता है कि चातुर्थक ज्वर के किन्हीं रोगियों में इसके विपरीत मेपाक्रीन से लाभ नहीं होता। ऐसी स्थिति में आवश्यकतानुसार दोनों एक दूसरे के स्थान में प्रयुक्त की जा सकती हैं। घातक मलेरिया (Malignant malaria) के रोगियों में, जिनमे अत्यधिक वमन आदि का उपद्रव होने पर मुख द्वारा औषधि का सेवन सम्भव न हो, उनमें इसका पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयोग कर सकते हैं। किन्तु ऐसी स्थिति में अधिक श्रेयस्कर यह होता है कि पहले १–२ क्विनीन का शिरागत इंजेक्शन दें और बाद में मुखद्वारा मेपाक्रीन दें। गर्भिणी स्त्रियों में तथा जिन रोगियों में क्विनीन के प्रति वैयक्तिक असह्यता हो उनमें मेपाक्रीन का प्रयोग अधिक उपयुक्त तथा सफल होता है। यद्यपि कालमेहज्वर (Black waterfever) के लिए भी यह उपयुक्त बतलाया जाता है, किन्तु कभी-कभी इन रोगियों में मिथीमोग्लोबिन्यूरिया (Methaemoglobinuria) का भयंकर उपद्रव उठ खड़ा होता है।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर अथवा पेशीगत सूचिकाभरण करने पर भी मेपाक्रीन शीघ्रतापूर्वक शोषित हो जाता है। यहाँ तक कि अतिसार के रोगियों में भी यह शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त इसका अधिकतम भाग (८० से ९०%) रक्तरस-प्रोटीन के साथ संयुक्त हो रक्तप्रवाह में घूमता है। अंशतः यकृत, प्लीहा, फुफ्फुस, वृक्क, अधिवृक्क एवं श्वेतकायाणुओं में भी संचित एवं संकेन्द्रित होता है। शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ, किन्तु अत्यन्त मन्द गति से होता है। इसके अतिरिक्त थोड़ी मात्रा में इसका उत्सर्ग पसीना, दूध, पित्त एवं लालास्राव के साथ भी हो जाता है। मूत्र की आम्लिक प्रतिक्रिया औषधि के निस्सरण में सहायक होती है।

प्रयोग विधि—मेपाक्रीन का प्रयोग प्रायः मुखमार्ग से ही किया जाता है। आत्ययिक अवस्था में मिथेनसल्फोनेट को ३ सी० सी० परिस्रुतजल (water for injection) में विलीनकर पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा दे सकते हैं। किन्तु मात्रा १०० मि० ग्रा० या ०·१ ग्राम या १½ ग्रेन से अधिक कदापि नहीं देना चाहिए। मुखद्वारा सेवन करने के लिए ०·१ ग्राम की गोली प्रतिदिन ३ बार भोजनोपरान्त ५ दिन तक देनी चाहिए। इसका दूसरा चिकित्साक्रम यह है कि ३ ग्रेन मेपाक्रीन १५ ग्रेन सोडाबाइकार्ब के साथ मिलाकर १ ग्लास जल के साथ ६–६ घंटे पर दें। इसके बाद प्रतिदिन १½ ग्रेन मात्रा ३ बार करके ६ दिन तक दें। प्रतिदिन प्रातः मेग० सल्फ० रेचन के लिए दें। इस प्रकार सप्ताहभर में टोटल मात्रा २·८ ग्राम (४२ ग्रेन) दी जाती है। रोग प्रतिषेध के लिए १½ ग्रेन की एक मात्रा प्रतिदिन सप्ताह में ६ दिन तक दी जाती है। अथवा ६ ग्रेन की मात्रा भोजनोपरान्त सप्ताह में २ बार दें। रोग दबाने के लिए (Suppressive treatment) ४ सप्ताह तक औषधि लेनी पड़ती है।

अन्य आमयिक प्रयोग—विषमज्वर के अतिरिक्त आन्त्रगत जिआर्डिआ उपसर्ग (Giardia infection of the Intestine) तथा स्फीतकृमि (Taenia Saginata) में भी मेपाक्रीन उपयोगी होता है। पहली अवस्था में १½ ग्रेन की मात्रा दिन में ३ बार ५ दिन तक ली जाती है। स्फीतकृमि के लिये १२ ग्रेन औषधि को ४ मात्राओं में विभक्त कर प्रातः प्रारम्भ कर १५–१५ मिनट के अन्तर से लें और ३–४ घंटे के बाद मैग० सल्फ० द्वारा रेचन करें।

विषाक्तता—विषाक्तता होनेपर हृल्लास, वमन, अतिसार, उदरशूल आदि पचन संस्थान के उपद्रव होते हैं। इसके अतिरिक्त त्वचा का रंग पीला हो जाता है तथा शिरःशूल, प्रलाप, नाना प्रकार के त्वचाशोथ (Dermatitis), रक्त में अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis), अचयिक रक्ताल्पता (Aplastic anaemia) आदि उपद्रव होते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—टबेली मेपाक्रिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Mepacrinae Hydrochloridi (Tab. Mepacr. Hydrochlor.) B. P., I. P.—ले०; टॅब्लेट्स ऑव मेपाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड Tablets of Mepacrine Hydrochloride— अं०; मेपाक्रीन की टिकिया—हिं० प्रत्येक टिकिया में मेपाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड की कम से कम मात्रा ८८ प्रतिशत (I. P.) या ९२·५% (B. P.) होता है। मात्रा—(१) रोगप्रतिषेध के लिए —०·१ ग्राम (१½ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) रोगनिवारक—०·२ से ०·५ ग्राम (३ से ८ ग्रेन) प्रतिदिन विभक्त मात्राओं में। यदि प्रतिटिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो प्रतिटिकिया में ०·१ ग्राम (१½ ग्रेन) मेपाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड देना चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ मेपाक्रिनी मिथेनो सल्फोनेटिस Injectio Mepacrinae Methanosulphonatis (Inj. Mepacr. Methanosulph.) B. P.—इन्जेक्शन ऑव मेपाक्रीन मिथेनसल्फोनेट— अं०; मेपाक्रीन मिथेनसल्फोनेट की सूई या इंजेक्शन—हिं०। यह मेपाक्रीन मिथेनसल्फोनेट का परिस्रुतजल (Water for injection) में बना हुआ विशोधित विलयन (Sterile Solution) होता है। मात्रा (मेपाक्रीन मिथेन सल्फोनेट)—०·१ ०·३ से ग्राम (१½ से ५ ग्रेन) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

वक्तव्य—मेपाक्रीन मिथेन सल्फोनेट का इन्जेक्शन रखा रहने से बिगड़ जाता है। अतएव इसका प्रयोग निर्माण के बाद ही करना चाहिए।

व्यावसायिक योग:—

(१) मेपाक्रीन टॅवलेट्स (I. C. I.)—०·१ ग्राम की टिकियाँ (१००० की शीशियाँ) आती हैं।

(२) मेपाक्रीन मिथेनोसल्फोनेट (I. C. I.)—०·१२ ग्राम तथा ०·३६ की एम्पूल्स (Ampoules) आती हैं। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है।

(३) मेटोक्विन Metoquin (Winthrop)—मेपाक्रीन का यौगिक है। टॅवलेट्स आती हैं।

क्लोरोक्विनी फॉस्फास Chloroquināe Phosphas (Chloroquin. Phosph.), B. P. Add., B. P. C.—ले०; क्लोरोक्वीन फॉस्फेट Chloroquine Phosphate—अं०।

रासायनिक संघटन : $C_{18}H_{32}O_8N_3P_2Cl$.

पर्याय—अरालेन Aralen; S N 7618.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 7-Chloro 4-(4-diethylamino-1-Methylbutylamino) quinoline का diphosphate (डाइफॉस्फेट लवण होता है। इस प्रकार यह 4:7-dichloroquinoline का 4—amino—1—diethyl aminopentane के साथ परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त यौगिक को डाइफॉस्फेट में परिवर्तित करने से प्राप्त होता है।

वर्णन—यह सफेद या प्रायः सफेद चूर्ण होता है। जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल में सुविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) में थोड़ा-थोड़ा घुलता है और क्लोरोफॉर्म तथा साल्वेंट ईथर में बिल्कुल नहीं घुलता।

मात्रा—(१) मलेरिया या विषम ज्वर प्रतिषेध के लिए प्रति सप्ताह ०·५ ग्राम या ८ ग्रेन; चिकित्सा के लिए प्रारम्भिक मात्रा १ ग्राम (१५ ग्रेन), तथा बाद में (Subsequent doses) ०·५ ग्राम या ८ ग्रेन प्रतिदिन। (२) अमीबा-उपसर्ग नाशन के लिए ०·५ से १ ग्राम (८ से १५ ग्रेन) प्रतिदिन।

क्लोरोक्विनी सल्फास Chloroquināe Sulphas (Chloroquin. Sulph.) B. P. Add., B. P. C.—ले०; क्लोरोक्वीन सल्फेट Chloroquine Sulphate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{18}H_{28}O_4N_3SCl$.

पर्याय—निवाक्वीन Nivaquine।

प्राप्ति-साधन—यह भी रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा प्राप्त विषज्वर नाशक कृत्रिम यौगिक है, जो रासायनिक दृष्टि से 7-Chloro-4-(4-diethylamino-1-methylbutylamino)—quinoline का सल्फेट (Sulphate) लवण होता है।

वर्णन—यह सफेद रंग का या प्रायः सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त एवं अरुचिकारक होता है। विलेयता—३ भाग जल में तो घुल जाता है,

परन्तु अल्कोहल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है। ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में भी अल्प मात्रा में ही घुलता है (Sparingly Soluble)।

मात्रा (१) विषमज्वर—०·४ ग्राम (६ ग्रेन) प्रति सप्ताह रोग प्रतिषेध के लिए; चिकित्सा के लिए प्रारम्भ में ०·८ ग्राम या १२ ग्रेन, इसके बाद ०·४ ग्राम (६ ग्रेन) प्रतिदिन; (२) अमीबा-उपसर्ग में—०·४ ग्राम से ०·८ ग्राम (६ से १२ ग्रेन) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

(१) विषमज्वर—क्लोरोक्विन रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से निर्मित एक क्विनोलीन-व्युत्पन्न (घटित) यौगिक (Synthetic quinoline derivative) है, जो मलेरिया के लिए एक उत्तम एवं अपेक्षाकृत अधिक निरापद औषधि सिद्ध हुई है। यह प्ला० फेल्सिपेरम् (P. falciparum) तथा प्ला० वाइवेक्स (P. vivax) प्रकार के मलेरिया कायाणुओं के सभी रक्तकायाण्विक अवस्थाओं (Erythrocytic stages) पर घातक प्रभाव करती है, अतः मलेरिया के लाक्षणिक निवारण एवं रोगोन्मूलन के लिए एक उत्तम औषधि (Suppressive and Curative agent) है। किन्तु साथ ही ध्यान रहे कि मलेरिया कायाणुओं के धातुगत-अवस्थाओं (Exo-erythrocytic stages) पर तथा व्यवायक कायाणुओं पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता; अतएव रोग प्रतिषेध (Causal prophylactic) की दृष्टि से इसका कोई उपयोग नहीं है। लाक्षणिक निवारण की दृष्टि से यह मेपाक्रीन से भी उत्तम है, और साथ ही उसकी अपेक्षा कम विषैली है। इसके द्वारा मेपाक्रीन की भाँति त्वचा का रंजन भी नहीं होता और क्विनीन की भाँति विषमयता (Cinchonism) की सम्भावना कम रहती है। अघातक तृतीय ज्वर पर इसकी क्रिया क्विनीन या मेपाक्रीन की ही भाँति विश्वस्त रूप से होती है। क्लोरोक्विन विषमज्वर के विभक्तकों (Schizonts) पर विशेष प्रभावकारी है।

मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा इसका क्षिप्रता पूर्वक शोषण होता है। प्रायः अधिकांश मात्रा शोषित हो जाती है। बहुत थोड़ी मात्रा मल के साथ उत्सर्गित होती है। शोषणोपरान्त लगभग ५५% औषधि रक्तगत प्रोटीन के साथ संयुक्त हो जाती है। औषधि का अधिक भाग शरीर में वियोजित एवं समवर्तित (Metabolised) हो जाता है। केवल १० से २० प्रतिशत औषधि अपरिवर्तित रूप में मूत्र के साथ उत्सर्गित होती है। शरीर समवर्त क्रिया में इसका परिवर्तन जिन यौगिकों में होता है, वे तीव्र मलेरिया-कायाणु नाशक होते हैं। मूत्र की प्रतिक्रिया आम्लिक होने पर औषधि का उत्सर्ग अधिकाधिक होता है। शोषणोपरान्त औषधि का अधिकतम संकेन्द्रण यकृत में होता है। इसके अतिरिक्त वृक्क, प्लीहा, फुफ्फुस एवं श्वेत कायाणुओं (W. B. C.) में भी यह संकेन्द्रित होता है। प्रति लिटर रक्त में १० माइक्रोग्राम के बल का संकेन्द्रण मलेरिया कायाणुओं के अमैथुनी चक्र (Asexual cycle) को रोकने के लिए पर्याप्त होता है। औषधि सेवन के कतिपय घंटे बाद ही रक्त में औषधीय प्रभाव करने के लिए पर्याप्त संकेन्द्रण हो जाता है, जो हफ्तों तक बना रहता है।

प्रयोग विधि—साधारणतया इसका सेवन भी मुख द्वारा ही किया जाता है। विषमज्वर की उग्रावस्था में प्रारम्भिक दिन की मात्रा ०·८ ग्राम (सल्फेट) या १ ग्राम (फास्फेट) से करते हैं; और ६-८ घंटे बाद इसकी आधी मात्रा एक बार और देते हैं; और बाद में २ दिन तक लगातार प्रति-

दिन ०·४ ग्राम (सल्फेट) या ०·५ ग्राम (फास्फेट) देते हैं। आत्ययिक अवस्थाओं (Emergencies) में अथवा यदि मुख द्वारा औषधि का सेवन (अत्यधिक वमन आदि के कारण) सम्भव न हो तो इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा अथवा शिरागत इन्जेक्शन द्वारा कर सकते हैं। क्लोरोक्वीन फास्फेट की ०·३ ग्राम (४½ ग्रेन) मात्रा ४-४ या ६-६ घंटे पर पेशीगत दी जाती है। शिरागत इन्जेक्शन के लिए क्लोरोक्विन सल्फेट के ५% बल के विलयन की ५ सी० सी० मात्रा (जिसमें ०·२ ग्राम या ३ ग्रेन मूल औषधि होती है) १० से १५ सी० सी० विशोधित लवण जल (Sterile normal Saline) के साथ मिलाकर शनैः शनैः दी जाती है। प्ला० वाइवेक्स के पुनरावर्तन के निवारण के लिए ०·४ ग्राम सल्फेट या ०·५ ग्राम फास्फेट सप्ताह में एक बार दिया जाता है। क्लोरोक्विनीन का प्रयोग बालकों तथा स्त्रियों में भी किया जा सकता है।

अमीबा-उपसर्ग (Amoebiasis)—जैसा कि विषमज्वर के प्रसंग में कहा जा चुका है, कि शोषणोपरान्त क्लोरोक्विन का अधिकतम संकेन्द्रण यकृत में पाया जाता है, और चूँकि इस औषधि की क्रिया मलेरियाकायाणुओं के अतिरिक्त एन्टमीबा हिस्टोलिटिका पर भी होता है; अतएव इसका उपयोग चिकित्सा में यकृतगत अमीबिक उपसर्ग में किया जाता है। किन्तु अमीबाजन्य आंत्रगत विकृतियों में इसकी कोई क्रिया होती है या नहीं यह संदेहास्पद है। अतएव आंत्रप्रणाली के अतिरिक्त अन्य अंगों में होनेवाली अमीबाजन्य विकृतियों में यथा—अमीबा जन्य यकृत्-शोफ (Amoebic Hepatitis), यकृत विद्रधि (Liver abscess), फुफ्फुसगत अमीबा उपसर्ग (Pulmonary amoebiasis)—यह एक उपयोगी औषधि है।

एतदर्थ इसका सेवन प्रायः मुखद्वारा तथा प्रारम्भिक २ दिन ०·८ ग्राम (सल्फेट) अथवा १ ग्राम (फास्फेट) मात्रा में तथा इसके बाद प्रतिदिन १ बार इसकी आधी मात्रा २–३ सप्ताह तक देते हैं। क्लोरोक्विन की अमीबानाशक क्रिया इमेटिन की अपेक्षा हीन कोटि की परन्तु अमीबानाशक आर्सेनिक-यौगिकों एवं ऑक्सीक्विनोलीन यौगिकों की अपेक्षा तीव्रतर होती है। कभी-कभी इस चिकित्साक्रम को दुहराना पड़ता है, अथवा सहायता के लिए इसके साथ इमेटीन के चिकित्साक्रम का भी अवलम्बन करना पड़ता है। चूँकि यकृत आदि अन्य अंगों में अमीबा उपसर्ग का मूल कारण आन्त्रगत अमीबा उपसर्ग होता है, अतएव निर्मूलन की दृष्टि से यदि ऑक्सी क्विनोलीन्स या आर्सेनिक यौगिकों के साथ क्लोरोक्विन मिलाकर प्रयुक्त किया जाय तो अधिक सफलता मिल सकती है।

(३) मानवीय जिआर्डिएससि (Human giardiasis)—किन्हीं-किन्हीं रोगियों में उक्त रोग में क्लोरोक्विन के चिकित्साक्रम से सफलता देखी गई है।

विषाक्तता—साधारणतया अन्य विषमज्वर हर औषधियों की अपेक्षा यह कम विषैला है। किन्तु कभी-कभी जब व्याधि की उग्ररूपावस्था में अधिक मात्रा में औषधि प्रयुक्त करनी पड़ती है या अधिक काल तक इसके सेवन से कतिपय कुलक्षण प्रगट होते हैं, जिनका ध्यान चिकित्सक को रखना चाहिए। इनमें ये लक्षण मुख्य हैं—शिरोभ्रम, सिर में दर्द, भूख कम लगना, अतिसार, दृष्टिदोष तथा त्वचा पर नाना प्रकार के चकत्तों एवं विस्फोट का निकलना।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबलेटस ऑव क्लोरोक्वीन फॉस्फेट Tablets of chloroquine Phosphate, B. P. Add.—ग्रं०; ग्रारालेन की टिकिया (हिं०)। मात्रा—क्लोरोक्वीन फास्फेट की भाँति।

२—टॅबलेट्स ऑव क्लोरोक्वीन सल्फेट Tablets of chloroquine Sulphate, B. P. Add.—ग्रं०; निवाक्वीन की टिकिया (हिं०) मात्रा—क्लोरोक्वीन सल्फेट की भाँति।

वक्तव्य—यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो क्लोरोक्वीन फास्फेट की ४ ग्रेन (०·२५ ग्राम) की टिकिया देनी चाहिए; तथा क्लोरोक्वीन सल्फेट की ०·२ ग्राम या ३ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए।

व्यावसायिक योग—

निवाक्वीन Nivaquine (M. B.)—इसकी २०० मि० ग्रा० की टॅबलेट्स (जिसमें १५० मि० ग्रा० क्लोरोक्वीन होता है) तथा ५ सी० सी० के एम्पूल्स आते हैं।

एमोडिआक्विनी हाइड्रोक्लोराइडम् Amodiaquinae Hydrochloridum (Amodiaquin. Hydrochlor.), B. P. C.—ले०; एमोडियाक्वीन हाइड्रोक्लोराइड Amodiaquine Hydrochloride—ग्रं०।

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{24}ON_3$ cl, $2H_2O$.

पर्याय—कामोक्विन Camoquin; फ्लेवोक्विन Flavoquin; SN10751.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 7—Chloro—4—(3—diethylaminomethyl—4—hydroxyanilino) quinoline dihydrochloride dihydrate होता है यह २२ भाग पानी तथा ७० भाग अल्कोहल् में तो घुल जाता है; किन्तु ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में प्रायः अविलेय (Insoluble) होता है। यह पीले रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है।

मात्रा—(१) रोगोन्मूलक (Therapeutic)—६ से १० ग्रेन (०·४ से ०·६ ग्राम की एक मात्रा (Single dose) मुखद्वारा; अथवा प्रारम्भ में ०·६ ग्राम (१० ग्रेन) और इसके बाद ०·४ ग्राम (६ ग्रेन) प्रतिदिन १ बार २ दिन। लक्षण निवारक या रोग दबाने के लिए (Suppressive) ०·२ से ०·४ ग्राम (३ से ६ ग्रेन) सप्ताह में १ बार अथवा ०·६ ग्राम (१० ग्रेन) पक्ष में (Every two weeks) १ बार।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

रासायनिक दृष्टि से यह क्लोरोक्विन वर्ग की औषधि है। यह सभी प्रकार के मलेरिया-कायाणुओं की रक्तारवीय अवस्थाओं (Erythrocytic stages) पर घातक प्रभाव करती है। क्लोरोक्विन की भाँति यह भी मलेरिया के लाक्षणिक एवं रोगोन्मूलक चिकित्सा के लिए एक उत्तम औषधि है. मलेरिया के अतिरिक्त अमीबिक यकृत्-शोफ (Amoebic Hepatitis) तथा जिआरडियसिस (Giardiasis) में भी उपयोगी है। साधारणतया इसका प्रयोग मुखद्वारा ही किया जाता है। किन्तु घातक मलेरिया में पेशीगत तथा शिरागत सूचिकाभरण द्वारा भी प्रयुक्त किया जा सकता है। यों तो अन्य मलेरियानाशक औषधियों की अपेक्षा यह कम विषैला है, किन्तु हृल्लास, वमन, अतिसार, तथा शिरःशूल आदि उपद्रव हो सकते हैं।

न्यावसायिक योग—

एमोडियाक्विन टॅब्लेट्स Amodiaquin Tabs (Albert & Davids)—५ ग्राम की टॅबलेट्स आती हैं।

प्रोग्वानिलाइ हाइड्रोक्लोराइडम् (I. P., B. P.)
(पेल्युड्रिन)

रासायनिक संकेत : $C_{11} H_{16} N_5$ CL HCL.

नाम—प्रोग्वानिलाइ हाइड्रोक्लोराइडम् Proguanili Hydrochloridum (Proguan. Hydrochlor.)—ले०; प्रोगुआनिल हाइड्रोक्लोराइड Proguanil Hydrochloride-अं०।

पर्याय—क्लोरग्वानाइड हाइड्रोक्लोराइड Chlorguanide Hydrochloride; पेल्युड्रिन Peludrin।

वर्णन—यह भी रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा निर्मित कृत्रिम यौगिक है, जिसका प्रयोग आजकल विषमज्वर (मलेरिया) के लिए बहुत किया जाने लगा है। यह सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है जो प्रायः गन्धहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—११० भाग जल में घुलता है; गरम जल में अपेक्षाकृत अधिक विलेय होता है। ४० भाग अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में भी घुल जाता है, किन्तु क्लोरोफार्म तथा ईथर में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है।

मात्रा—०.१ से ०.४ ग्राम या (१½ से ६ ग्रेन) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

पेल्युड्रिन भी एक मलेरियानाशक औषधि है, जो रासायनिक दृष्टि से बाइगुवानाइड समुदाय का यौगिक है। इसके मलेरियानाशक प्रभाव का पता अभी हाल ही में चला है। प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् (P. falci parum) के धातुगत अवस्थाओं (Exoerythrocytic stages : tissue phase) तथा रक्तकायाणुगत अवस्थाओं (Erythrocytic stages) दोनों स्थितियों में घातक प्रभाव करता है। अतएव इस कायाणु से होनेवाले विषमज्वर पर यह रोगप्रतिषेधक (Causal prophylactic), लक्षणनिवारक (Suppressive) तथा रोगोन्मूलक (Curative) तीनों प्रकार के प्रभाव करता है। प्लाज्मोडियम् वाइवेक्स (P. vivax) उपसर्ग में इसकी क्रिया केवल रक्तगत अवस्थाओं में होती है, अतएव इस उपसर्ग में रोग प्रतिषेधक के रूप में यह व्यर्थ है। किन्तु इसकी रक्तगत अवस्थाओं पर क्रियाशील होने के कारण लक्षण निवारण तथा रोगोन्मूलन में कुछ हद तक अवश्य समर्थ है। किन्तु कुछ समय के बाद पुनरावर्तन हो सकता है। व्यवायक कायाणुओं पर यह घातक प्रभाव तो नहीं करती किन्तु उनको इस रूप का अवश्य कर देती है कि मच्छरों में उनका उपसर्ग नहीं होता। शोषणोपरान्त यकृत में पहुँचने पर इसका रूपान्तर एक तीव्र मलेरिया-कायाणुनाशक यौगिक में हो जाता है। यह विभक्तक कायाणुओं पर तीव्र घातक प्रभाव करता है, जिससे अंशुकेत या मेरेज्वाइट्स (Merozoites) की उत्पत्ति नहीं होने पाती। व्यवायक कायाणुओं (Gametocytes) के सम्पर्क में आने पर औषधि की क्रिया विशेषतः स्त्री व्यवायक कायाणुओं (Female gametocytes) पर होती है, जिससे मच्छरों में आगे चलकर इनके क्रियाकलाप का अवरोध होता है।

औषधि-सह्यता (Drug-resistance)—कभी-कभी औषधि का प्रयोग अल्प मात्राओं में करने पर मलेरिया कायाणुओं के कतिपय समूहों में औषधि के प्रति सह्यता उत्पन्न हो जाती है।

शोषण तथा उपसर्ग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर पेल्युड्रिन का शोषण मन्दगति से अवश्य होता है, किन्तु औषधि पूर्णतः शोषित हो जाती है। औषधि सेवन के ४ घण्टे उपरान्त रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण हो जाता है। मलेरियानाशन के लिए रक्त में प्रति १०० सी. सी. में ०·०१ से ०·१ मि० ग्रा० संकेन्द्रण (कन्सन्ट्रेशन) पर्याप्त होता है। औषधि के ४० से ६० प्रतिशत अंश तक का निस्सरण वृक्कों द्वारा तथा लगभग १० प्रतिशत भाग मल के साथ उत्सर्गित होता है। शेष भाग शरीर में जारित (Metabolised) हो जाता है।

विषाक्तता—साधारण अवस्थाओं में तो कोई विशेष उपद्रव नहीं होते; किन्तु कभी-कभी वमन, अतिसार तथा पेट में दर्द आदि उपद्रव हो जाते हैं। इसको निवारण के लिए औषधि का सेवन काफी जल के साथ करना चाहिए। मात्रातियोग के कारण कभी-कभी शोणितमेह हिमेचूरिया (Haematuria) तथा मूत्र में निर्मोक (Cylindruria) का उपद्रव हो जाता है।

प्रयोग

विषमज्वर—क्विनीन तथा मेपाक्रीन की भाँति पेल्युड्रिन भी अघातक एवं घातक तृतीय ज्वर के कायाणुओं के असैथुनी चक्र (Asexual forms) पर घातक प्रभाव करती है। जहाँ क्विनीन का प्रयोग सम्भव न हो, इसको दे सकते हैं। रोग के उग्र आक्रमण में रोगोन्मूलन के लिए ०·३ ग्राम (४½ ग्रेन) दिन में एक बार या आवश्यकतानुसार २ बार ५ से १० दिन तक (या आवश्यकतानुसार कम) या ०·१ से ०·२ ग्राम (१½ से ३ ग्रेन) मात्रा दिन में तीन बार दी जाती है। इस चिकित्साक्रम से प्ला० फे० के उपसर्ग का तो पूर्णतः नाश होता है, किन्तु प्ला० वाइवेक्स में पुनरावर्तन की सम्भावना रहती है। पुनरावर्तन को रोकने के लिए ०·३ ग्राम (या ४½ ग्रेन) की एक गोली प्रति चौथे दिन देनी चाहिए।

प्रयोग-विधि—प्रायः इसका प्रयोग मुख द्वारा ही किया जाता है। किन्तु यदि वमन आदि का उपद्रव अत्यन्त उत्कट हो तथा रोग का आक्रमण घातक स्वरूप का हो और पेल्युड्रिन देने का ही निश्चय हो, तो शिरामार्ग द्वारा भी इसका प्रयोग कर सकते हैं। इसके लिए पेल्युड्रिन लेक्टेट के ५% बल के जलीय विलयन का प्रयोग किया जाता है। इसकी दो सी०सी० मात्रा (जिसमें ०·१ ग्राम औषधि हो) पर्याप्त है। इसको पतला (Dilute) करने के लिए नार्मलसेलाइन सॉल्यूशन (लवण जल) नहीं मिलाना चाहिए, क्योंकि इससे अधःक्षेप होने का डर रहता है। इन्जेक्शन बहुत धीरे-धीरे करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली प्रोगुआनिलाइ हाइड्रोक्लोराइडाइ Tabellae Proguanili Hydrochloridi (Tab. Proguan. Hydrochlor.) I.P., B.P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव प्रोगुआनिल हाइड्रोक्लोराइड Tablets of Proguanil Hydrochloride—अं०; पेल्युड्रिन की टिकिया—हिं०। मात्रा—०·१ से ०·४ ग्राम (१½ से ६ ग्रेन) प्रतिदिन। यदि प्रति टिकिया मात्रा का उल्लेख न हो तो ०·१ ग्राम टिकिया देनी चाहिए।

व्यावसायिक योग

(१) पेल्युड्रिन टॅबलेट्स (I. C. I.)—१ टॅबलेट प्रतिदिन। इसकी ०·०२५ ग्राम तथा ०·१ ग्राम की टॅबलेट्स आती हैं।

(२) पेल्युड्रिन एण्ड पामाक्विन टॅबलेट्स (I. C. I.) ।

(३) एम्पूल्स पेल्युड्रिन लेक्टेट (I. C. I.)—२ सी० सी० (०·१ ग्राम) के सोल्यूशन। शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

पाइरीमिथामिना Pyrimethamina (Pyrimethamin.), B. P. C.—ले०; पाइरिमिथामीन Pyrimethamine—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_{13}N_4Cl$.

पर्याय—डेराप्रिम Daraprim; मेलोसाइड Malocide।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 2 : 4—diamino-5-P—chlorophenyl-6—ethylpyrimidine होता है।

वर्णन—सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—ठण्डे जल में तो यह नहीं घुलता किन्तु गरम पानी में थोड़ा-थोड़ा घुल जाता है; और मन्दबल गरम गंधकाम्ल (Warm dilute Sulphuric acid) में तो सुविलेय (अच्छी तरह घुलनशील) होता है।

मात्रा। (१) रोगोन्मूलक (Therapeutic)—प्रारम्भिक (Initial) मात्रा—$\frac{3}{4}$ से १$\frac{1}{2}$ ग्रेन (५० से १०० मि० ग्रा०); मुखद्वारा बाद में (Subsequent doses)—$\frac{3}{8}$ ग्रेन (२५ मि० ग्रा०) प्रतिदिन के हिसाब से २ दिन तक; लक्षणनिवारक मात्रा (Suppressive dose) तथा रोग प्रतिषेधात्मक मात्रा (Prophylactic dose)—$\frac{3}{8}$ ग्रेन (२५ मि० ग्रा०) सप्ताह में एक बार।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

डेराप्रिम भी एक मलेरियानाशक औषधि है, जिसका प्रयोग रोगदबाने के लिए (Suppressant) तथा रोग प्रतिषेध (Causal propylactic) के लिए किया जा सकता है एतदर्थ युवा पुरुष को सप्ताह में २५ मि० ग्रा० की एक मात्रा पर्याप्त होती है। बालकों में यह मात्रा अपेक्षाकृत कम होगी। ५ से १२ वर्ष के बालक के लिए १२ मि० ग्रा० (सप्ताह में १ बार) तथा ५ वर्ष से कम आयु वालों के लिए ६$\frac{1}{2}$ मि० ग्रा० पर्याप्त होती है। मलेरिया कायाणुओं की रक्तकण के बाहर होने वाली अवस्थाओं (Pre-erythrocytic Stage) पर यह घातक प्रभाव करता है। प्लाज्मोडियम् वाइवेक्स (P. vivax) तथा प्लाज्मोडियम् फेल्सिपेरम् (P· falciparum) के व्यवायक-कायाणुओं (Gametocytes) पर यह घातक प्रभाव करता है, जिससे मच्छर के शरीर में होने वाले अग्रिम परिवर्तनों को रोकता है, और इस प्रकार मलेरिया का उपसर्ग के प्रसार के रोकने में सहायक है। अप्रगल्भ विभक्तक कायाणुओं (Immature Schizonts) पर इसकी क्रिया बहुत मन्द होती है। अतएव ज्वर के दौरे को रोकने के लिए यह औषधि अकेले पर्याप्त नहीं है एतदर्थ इसको क्विनीन के साथ प्रयोग करना पड़ता है। डेराप्रिम का प्रधान कार्य मलेरिया कायाणु के विभजन अवस्था पर होता है। यह कायाणु-विभजन (Schizogony) का निरोध करता है। कायाणु-विभजन में न्यष्ठीला विभजन के लिए जिस रासायनिक तत्व की आवश्यकता होती है, उसी का प्रतियोगी द्रव्य (Antagonistic) की यह उत्पत्ति करता है। इसीसे उपरोक्त कायाणु विभजन क्रिया का निरोध करता है।

व्यावसायिक योग:—

(१) डेराप्रिम टॅबलेट्स Daraprim Tabs. (B. W. & Co.)—प्रतिदिन २ टॅबलेट करके ३ दिन तक।

प्रकरण २

(लीशमनोयतानाशक औषधियाँ : Drugs used in Leishmaniasis)

(अ) गुरुधात्वीय यौगिक (Heavy metals)

(१) एन्टीमनी के त्रिबन्धीय यौगिक (Trivalent antimony compounds)—

एन्टिमोनियाइ एट पोटासियाइ टारट्रास (B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_4H_4O_7Sb\,K, \frac{1}{2}\,H_2O$.

नाम—एन्टिमोनियाइ एट पोटासियाइ टारट्रास Antimonii et Potassii Tartras (Antim. et Pot. Tart.)—ले०; एन्टिमनी पोटासियम् टारट्रेट Antimony Potassium Tartrate, पोटासियम् एन्टिमोनिल टारट्रेट Potassium Antimonyl tartrate, टारटार इमेटिक Tartar emetic—अं० ।

प्राप्ति-साधन—यह एन्टिमोनियस् ऑक्साइड (Antimonious oxide) एवं पोटासियम् एसिड टारट्रेट (Potassium acid tartrate) की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है, जिसमें कम से कम ९९%–$C_4H_4O_7Sb\,K, \frac{1}{2}H_2O$ होता है ।

वर्णन—इसके पारदर्शी एवं रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा सफेद दानेदार चूर्ण के रूप में होता है जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में मधुर होता है । खुला रहने पर यह प्रस्फुटित (Efflorescent) हो जाता है । विलेयता—साधारण तापक्रम पर १७ भाग जल में तथा उबलते हुए ३ भाग जल में ही घुल जाता है । इसके अतिरिक्त २० भाग ग्लिसरोल में भी घुल जाता है, किंतु अल्कोहल् (९५%) में अविलेय (Insoluble) होता है ।

मात्रा—२ से ८ मि० ग्रा० ($\frac{1}{32}$ से $\frac{1}{8}$ ग्रेन); वामक मात्रा (Emetic dose)—३० से ६० मि० ग्रा० ($\frac{1}{2}$ से १ ग्रेन); शिरामार्ग द्वारा (Intravenously) ३० से १२० मि० ग्रा० ($\frac{1}{2}$ से २ ग्रेन) ।

एन्टिमोनियाइ एट सोडियाइ टारट्रास (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_4H_4O_7Sb\,Na$.

नाम—Antimonii et Sodii Tartras (Antim. et. Sod. Tart.) —ले०; एन्टिमनी सोडियम् टारट्रेट Antimony Sodium Tartrate, सोडियम् एन्टिमोनिल टारट्रेट Sodium Antimonyl Tartate—अं० ।

प्राप्ति-साधन—यह एन्टिमोनियस ऑक्साइड तथा सोडियम् एसिड टारट्रेट की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है, जिसमें कम से कम ९६ प्रतिशत सोडियम् एन्टिमोनिल टारट्रेट होता है ।

वर्णन—यह रंगहीन तथा पारदर्शक अथवा मटमैले सफेद रंग की पपड़ीदार टुकड़ों (Scales) के रूप में अथवा चूर्ण के रूप में होता है; जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में मधुरता लिए (Sweetish) होता है। खुला रहने से आर्द्रता सोखने की प्रवृत्ति पाई जाती है अर्थात् उन्दचूष (Hygroscopic) होता है। विलेयता—१·४ भाग जल में तो घुल जाता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) में अविलेय होता है।

मात्रा—पोटासियम् एन्टिमनी टारट्रेट की भाँति।

एन्टिमोनियाइ सोडियाइ थायोग्लाइकोलास Antimonii Sodii Thioglycollas (Antimon. Sod. Thioglycol.), I. P.—ले०, एन्टिमनी सोडियम् थायोग्लाइकोलेट Antimony Sodium Thioglycollate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_4H_4O_4Na\ S_2Sb$.

प्राप्ति-साधन तथा वर्णन—इसमें ३५·५ से ३८·५ प्रतिशत एन्टिमनी (Sb.) होता है। यह सफेद या हल्के गुलाबी रंग के चूर्ण के रूप में होता है, जो प्राय: गंधहीन होता है। कभी-कभी इसमें मरकाप्टन की सी (Mercaptan-like) हल्की गंध आती है। प्रकाश के प्रभाव से इसका गुलाबी रंग उड़ जाता है। विलेयता—जल में तो यह अच्छी तरह घुल जाता (Freely soluble) है; किन्तु अल्कोहल् (९०%) में अविलेय होता है। मात्रा—(I. P. Dose)—२० से ८० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ से १$\frac{1}{3}$ ग्रेन); (U. S. P. Dose)—$\frac{3}{4}$ से १$\frac{1}{2}$ ग्रेन (५० से १०० मि० ग्रा०)।

लिथियम् एन्टिमनी थायोमलेट Lithium Antimony Thiomalate (नॉट-ऑफिशल)। पर्याय—एन्थिओमेलीन Anthiomaline इसमें १६% एन्टिमनी होता है।

(२) पेंटावेलेंट यौगिक (Pentavalent Compounds)।

यूरियास्टिबामिनम् (I. P., I. P. L.)
Urea Stibaminum (Urea Stibam.)

पर्याय—यूरिया स्टिबामीन Urea Stibamine; स्टिब्यूरिया Stiburia।

प्राप्ति-साधन—P-aminophenylstibinic acid तथा यूरिया (Urea) की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ३८ से लेकर ४२ प्रतिशत तक एन्टिमनी होता है।

वर्णन—यूरिया स्टिबामीन हल्के खाकस्तरी रंग (Pale greyish) या हल्के भूरे या गुलाबी रंग का विरूपिका (Amorphous) तथा शुष्क चूर्ण होता है। यह चूर्ण अत्यन्त चिकना एवं सूक्ष्म होता है। विलेयता—जल में घुल जाता है; किन्तु डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् में केवल अंशतः घुलता है। क्लोरोफार्म, ईथर, एसिटोन तथा लाइट पेट्रोलियम् में तो बिल्कुल ही नहीं घुलता।

मात्रा (I. P. Dose)—$\frac{3}{4}$ से ३ ग्रेन (०·०५ से ०·२ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

वक्तव्य—यूरियास्टिबामीन के एम्पूल्स का संरक्षण बड़ी सावधानी के साथ करना चाहिए। यदि एम्पूल्स की औषधि का रंग काफी विकृत हो तो उसका व्यवहार नहीं करना चाहिए।

(नॉट-ऑफिशल)

एथिल स्टिबामीन Ethylstibamine।

पर्याय—नियोस्टिबोसन Neostibosan।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह diethylamine P—aminophenylstibinate होता है। इसमें ४१ से ७४% तक एन्टीमनी होता है।

सोडियाइ स्टिवोग्लूकोनास Sodii Stibogluconas (Sod. Stiboglucon.) B. P. C.—ले०; सोडियम् स्टिवोग्लुकोनेट Sodium Stibogluconate—श्रं०।

पर्याय—सोलूस्टिवोसन Solustibosan।

वर्णन—सोडियम् स्टिवोग्लूकोनेट भी एक पेंटावेलेंट एण्टिमनी योगिक है, जो प्रायः रंगहीन तथा गन्धहीन विरूपिक चूर्ण ("एमार्फस पाउडर) के रूप में प्राप्त होता है। इसमें ३० से ४० प्रतिशत तक एन्टीमनी होता है। विलेयता—जल में तो यह विलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् तथा ईथर में नहीं घुलता। मात्रा (B. P. C. Dose)—१० से ३० ग्रेन (०'६ से २ ग्राम) पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

स्टिवामीन ग्लुकोसाइड (Stibamine Glucoside)

पर्याय—नियोस्टम स्टिवामीन ग्लुकोसाइड (Neostam stibamine glucoside)।

वर्णन—यह रासायनिक दृष्टि से Sodium P-amino benzene stibonate nitrogen glucoside यौगिक है, जो स्टिवामीन तथा ग्लूकोज की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त होता है। हल्के क्रीम रङ्ग या काली आभा लिये (Light buff coloured) गन्धहीन एवं विरूपिक (Amorphous) चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में घुल जाता है।

मात्रा—२ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर भार के हिसाब से व्यवहार में इसका ४०% बल का ताजा विलयन शिरागत मार्ग अथवा पेशीमार्ग द्वारा प्रयुक्त होता है। इंजेक्शन्स प्रायः एक दिन के अन्तर से दिये जाते हैं और पूरे चिकित्साक्रम में सकल मात्रा २'५ से ३ ग्राम की दी जाती है।

सोडियम् एन्टिमनी ग्लूकोनेट Sodium Antimony Gluconate। पर्याय—स्टिवाटिन (Stibatin)।

वर्णन—यह औषधि द्रव के रूप में होती है और रासायनिक दृष्टि से पेंटावलेंट एन्टिमनी ग्लूकोनेट (एन्टिमनी हेक्जोनेट antimony hexonate) होता है। एक सी० सी० दवा में १०० मि० ग्रा० (mg.) एन्टिमनी होता है।

मात्रा—१ से ५ सी० सी० (उत्तरोत्तर बढ़ाकर) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा १० दिन तक।

गुण-कर्म।

बाह्य—स्थानिक प्रयोग से त्वचा पर एन्टिमनी के लवण क्षोभक प्रभाव करते हैं। क्रिया उग्र होने पर चेचक की भाँति नाना प्रकार के विस्फोट निकलते हैं।

आभ्यन्तर—आमाशयान्त्र प्रणाली—त्वचा की भाँति आमाशय में भी यह क्षोभक प्रभाव करता है। अधिक मात्रा में (१ से २ ग्रेन) आमाशय पर प्रत्यक्ष क्षोभक क्रिया द्वारा वामक (Emetic) प्रभाव करता है। अन्य मार्गों द्वारा भी अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर केन्द्रिक प्रभाव (Central action on the Medulla) अर्थात् वामक केन्द्र पर इसकी क्रिया होकर वमन का उपद्रव होता है। मात्रातियोग या विषाक्त मात्राओं में आमाशयान्त्र प्रदाह (Gastroenteritis) उत्पन्न करता है।

हृदय तथा रक्तसंवहन—विषाक्त मात्राओं में विशेषतः शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर हृदय पर अवसादक प्रभाव (Depressant) करता है। रक्तभार (B. Pressure) गिर जाता है।

श्वसन—आमाशय पर क्षोभक प्रभाव करने के कारण प्रत्याक्षिप्त रूपेण यह कफ-निस्सारक (Expectorant) प्रभाव करता है। बलगम की मात्रा बढ़ जाती है और आसानी से निकलता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर श्वसन को भी अवसादित करता (Depresses) है।

तापक्रम—स्वेदल या पसीनाजनक (Diaphoretic) होने के कारण ज्वरावस्था में तापक्रम को कम करता है। उक्त स्वेदल क्रिया विशेषतः परिसरीय रक्तवाहिनियों (Peripheral uessels) के विस्फारित होने तथा रक्तसंवाहन के अवसादित होने के कारण होती है।

नाड़ी-संस्थान—अवसादक प्रभाव होता है।

विशिष्ट-क्रिया (Chemotherapeutic action)—लीशमनिया तथा ट्रिपेनोसोम्स पर एन्टिमनी के यौगिकों की विशिष्ट क्रिया होती है। अतएव इनके उपसर्ग से होनेवाली (कालाजार तथा ट्रिपेनोसोमिएसिस आदि) व्याधियों में इनका प्रयोग रामबाण औषधि के रूप में में किया जाता है। एतदर्थ एन्टिमनी के ट्राइवेलेंट तथा पेंटावेलेन्ट दोनों प्रकार के यौगिक प्रयुक्त होते हैं। किन्तु पेंटावेलेंट यौगिक ट्राइवेलेंट यौगिकों की अपेक्षा कम विषैले होते हैं; क्योंकि शरीर से इनका निस्सरण क्षिप्रतापूर्वक होता है। जैसा कि डाक्टर ब्रह्मचारी क प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि यूरियायास्टिबामीन का इन्जेक्शन करने के बाद २४ घंटे के अन्दर औषधि का ३० से ४० प्रतिशत भाग उत्सर्गित हो जाता है, जबकि उक्त काल में टारटार इमेटिक का केवल ६ प्रतिशत भाग ही मुश्किल से उत्सर्गित होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि उक्त जीवाणुओं पर एन्टिमनी का प्रत्यक्षघातक प्रभाव नहीं होता, अपितु यह क्रिया या तो शरीरगत धातुओं के सम्पर्क आने पर यह ऐसे यौगिकों में रूपान्तरित होता है, जो उक्त पराश्रयी कायाणुओं के लिए घातक सिद्ध (Parasiticidal) होते हैं, या इनसे ऐसी पदार्थों का उत्सर्ग होता है जिनमें उक्त कायाणुओं के नष्ट करने की क्षमता उत्पन्न होती है। नलिका परीक्षण (In vitro) में १०० में १ केवल का टारटार इमेटिक का संकेन्द्रण कालज्वर के जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए पर्याप्त होता है। शरीर में तो यह संकेन्द्रण १०,००० में १ से अधिक नहीं हो सकता इसी प्रकार २००,००० में १ के संकेन्द्रण में ट्रिपेनोसोम्स (Trypanosomes) नष्ट हो जाते हैं।

शोषण तथा उत्सर्ग—आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा एन्टिमनी का शोषण बहुत मंद गति से होता है। इसीलिए चिकित्सा में इसका प्रयोग इन्जेक्शन द्वारा किया जाता है। शोषण की भांति निस्सरण (Excretion) भी मन्द गति से होता है। ट्राइवेलेंट यौगिकों की अपेक्षा पेंटावेलेंट यौगिकों का उत्सर्ग जल्दी एवं अधिक मात्रा में होता है। एन्टीमनी का निस्सरण प्रधानतः वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ होता है। अल्प मात्रा में आमाशयांत्र प्रणाली से भी होता है। औषधि के कुछ अंश का संचय यकृत में होता है। अतएव लगातार अधिक समय तक औषधि का सेवन करने से आर्सेनिक की

भाँति यह शरीर समवर्त-क्रिया (Metabolism) को विकृत करता है, जिससे यकृत आदि में मेदापक्रांति (Fatty degeneration) उपद्रव हो सकता है। औषधि का निस्सरण सामान्यतः २४ घंटे में होता है।

आमयिक प्रयोग।

वाह्य—टारटार इमेटिक के १ से २ प्रतिशत बल के मलहम का उपयोग स्थानिक क्रिया के लिए प्राच्यव्रण (Oriental Sore) तथा लीशमनिआ ब्रजिलिएन्सिस (Leishmania braziliensis) के उपसर्ग होनेवाले नासा तथा कण्ठ की श्लैष्मिक कला की सव्रणता (Ulceration) अर्थात् एस्पंडिया रोग (Espundia) में बहुत उपयोगी होता है।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र-प्रणाली—पहले विषाक्त द्रव्य सेवन करने के बाद आमाशय का प्रक्षालन करने के लिए वामक (Emetic) के रूप में इसका उपयोग किया जाता था। अब यह अल्पमात्रा में इपेकाक्वाना के साथ मिलाकर खाँसी में कफनिस्सारक के रूप में व्यवहृत होता है।

विशिष्ट उपयोग—चिकित्सा में एन्टिमनी यौगिकों का प्रयोग विशिष्ट औषधि के रूप में निम्न उष्णकटिबन्धीय व्याधियों में किया जाता है—

(१) लीशमनीयता (Leishmaniasis); (२) निद्राज्वर या ट्रिपेनोसोमिएसिस (Trypanosomiasis), बिल्हार्जिएसिस (Bilharziasis) एवं श्लीपद (Filariasis)।

एन्टिमनी यौगिकों का सबसे महत्त्वपूर्ण उपयोग चिकित्सा में लीशमनीयता (कालज्वर आदि) के उन्मूलन के लिए किया जाता है। इसके लिए इसके दो प्रकार के यौगिक उपलब्ध होते हैं:—(१) ट्राइवेलेंट कम्पाउण्ड्स (Trivalent Compounds)–यथा सोडियम् एण्ड पोटासियम् एन्टिमनी टारट्रेट, स्टिबोफेन, एन्टिमनी सोडियम् थायोग्लाइकोलेट, एन्थिओमेलिन आदि; (२) पेंटावेलेंट कम्पाउण्ड्स (Pentavalent Compounds) यथा यूरिया स्टिबामीन, नियोस्टिबोसन, सोलूस्टिबोसन, स्टिबेटिन तथा नियोस्टम स्टिबामीन ग्लूकोसाइड आदि। चिकित्सोपयोग की दृष्टि से पेंटेवेलेंट यौगिक अधिक सक्रिय तथा कम विषैले होते हैं।

ट्राइवेलेंट कम्पाउण्ड्स—सोडियम् तथा पोटासियम् एन्टीमनी टारट्रेट का प्रयोग २% बल के सॉल्यूशन के रूप में शिरागत मार्ग द्वारा किया जाता है। पहले मात्रा ०·५ मि० लि० (½ सी० सी०) से प्रारम्भ की जाती है और उत्तरोत्तर प्रति सप्ताह इतनी ही मात्रा बढ़ाकर ४ या ५ सी० सी० तक लायी जाती है। इस प्रकार पूरे चिकित्सा-क्रम में एन्टीमनी की टोटल मात्रा २ या ३ ग्राम दी जाती है। यह इन्जेक्शन सप्ताह में २ या ३ बार दिए जाते हैं। इसका प्रयोग करते समय विषाक्त प्रभावों एवं औषधि के प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न उपद्रवों की तरफ सतर्कता रखनी चाहिए। इसीलिए कोई-कोई २% बल के सॉल्यूशन के स्थान में १% बल के साल्यूशन का प्रयोग अधिक श्रेयष्कर समझते हैं। सिरा में इन्जेक्शन देते समय ध्यान रखना चाहिए कि गलती से औषधि शिरा के अतिरिक्त इधर उधर के बाह्य धातुओं में नहीं जानी चाहिए अन्यथा वहाँ उग्र पीड़ा तथा शोथ आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं। बालकों तथा दुर्बल व्यक्तियों में प्रारम्भिक मात्रा ½ सी० सी० (०·५ मि० लि०) न देकर इसका भी आधा अर्थात् ¼ सी० सी० (०·२५ मि० लि०) ही देनी चाहिए। युवा व्यक्तियों की अपेक्षा बालक इसको

अधिक बरदाश्त कर लेते हैं। लीशमनीयता के अतिरिक्त सोडियम् एन्टिमनी टारट्रेट का प्रयोग बिल्हार्जिएसिस (Bilharziasis) रोग में भी बहुत उपयोगी होता है। इसके लिए पूरे चिकित्सा-क्रम में २५ से ३० ग्रेन की टोटल मात्रा अपेक्षित होती है। ½ ग्रेन से प्रारम्भ कर प्रत्येक अग्रिम इन्जेक्शन में ½-½ ग्रेन मात्रा बढ़ाते जाते हैं। इस प्रकार २ ग्रेन तक मात्रा लाई जाती है। बालकों में ¼ ग्रेन से प्रारम्भ करना चाहिए। औषधि लवणजल (Normal Saline) में घोलकर शिरागत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त की जाती है। ये इन्जेक्शन १-१ दिन के अन्तर से दिये जाते हैं।

एन्टिमनी सोडियम् थायोग्लाइकोलेट—यह टारटार इमेटिक की अपेक्षा कम विषैला तथा अधिक क्रियाशील होता है। यह कालज्वर, वंक्षणीयलसकणिकार्बुद (Granuloma venerum) तथा सिस्टो सोमा-उपसर्ग (Schistosomiasis) में उपयोगी होता है। एतदर्थ ¾ से १½ ग्रेन (५० से १०० मि० ग्रा०) की मात्रा १० से २० सी० सी० परिस्रुत जल (Water for Injection) में घोलकर पेशीगत या शिरामार्ग द्वारा दी जाती है। इसके इंजेक्शन तीसरे या चौथे दिन (Every 3 rd. or 4 th. day) दिए जाते हैं।

एन्थिओमेलीन—इसमें वमन की प्रवृत्ति कम पाई जाती है, अतएव अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में दिया जा सकता है। इसका ६% बल का विलयन या सॉल्यूशन आता है। १ सी० सी० (मि० लि०) में ६० मि० ग्रा० औषधि होती है। ट्रिपैनो सोमिएसिस, लीशमनीयता, श्लीपद, बिल्हार्जिएसिस, वंक्षणीयलसकणिकार्बुद (Lymphogranuloma) में उपयोगी है। (१) बिल्हार्जिएसिस—इसके लिए एक दिन के अन्तर से (On alternate days) १० इन्जेक्शन का चिकित्साक्रम है। मात्रा—६% बल के सॉल्यूशन की २ सी० सी० मात्रा का इंजेक्शन किया जाता है। (२) वंक्षणीयलसकणिकार्बुद (Lymphogranuloma Inguinale)—०·५ सी० सी० से प्रारम्भ कर उत्तरोत्तर मात्रा बढ़ाकर २ सी० सी० तक लाई जाती है। कुल १२ से १५ इन्जेक्शन देने पड़ते हैं। (३) श्लीपद—२ सी० सी० से ४ सी० सी० तक की एक मात्रा। ऐसे १० इन्जेक्शन। इन सभी अवस्थाओं में उपर्युक्त मात्रा से भी कम मात्रा से प्रारम्भ करना अधिक श्रेयस्कर है।

पेन्टावेलेन्ट कम्पाउण्ड्स—

यूरिया स्टिबामीन—इसका प्रयोग केवल शिरागत इन्जेक्शन द्वारा किया जाता है। दवा शुष्क चूर्ण के रूप में बन्द एम्पूल्स में आती है। प्रयोग के समय डिस्टिल्ड वाटर में सॉल्यूशन ताजा बनाकर प्रयुक्त किया जाता है। यह लीशमनीयता (Leishmaniasis), श्लीपद (Filariasis) एवं सिस्टोसोमजन्य उपसर्ग (सिस्टोसोमिएसिस Schistosomiasis) में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। कालज्वर (Kala-azar) में इसका इंजेक्शन प्रतिदिन, एक दिन के अन्तर से (On alternate days) अथवा सप्ताह में २ बार (Twice weekly) करके दिया जाता है। प्रारम्भ में ५० मि० ग्रा० की मात्रा दी जाती है, और उत्तरोत्तर ५० मि० ग्रा० बढ़ाकर ०·२ ग्राम तक लाई जाती है। प्रत्येक इंजेक्शन में यही मात्रा देते हैं। पूरे कोर्स (चिकित्साक्रम) में २ से २½ ग्राम औषधि दी जाती है।

नियोस्टिबोसन—इसका प्रयोग शिरागत तथा पेशीगत दोनों ही मार्गों द्वारा इन्जेक्शन के रूप में किया जा सकता है। अतएव बच्चों के लिए प्रयोग की सुविधा की दृष्टि से यह एक बहुत उपयुक्त औषधि है। शिरागत इन्जेकशन के लिए ५% सॉल्यूशन तथा पेशीगत इन्जेक्शन के लिए २५% तक का सॉल्यूशन प्रयुक्त कर सकते हैं। यह औषधि भी शुष्क चूर्ण के रूप में ०·०५, ०·१, ०·२

तथा ०·३ ग्राम की मात्रा में बन्द एम्पूल्स में आती है। इसको प्रयोग के समय क्रमशः १ सी० सी०, २ सी० सी०, ३ सी० सी० तथा ४ सी० सी० परिस्रुत जल में सोल्यूशन बनाकर प्रयुक्त करना चाहिए। नियोस्टिबोसन के चिकित्सा क्रम की २ विधियाँ चलती हैं। एक में तो सप्ताह में दो बार इन्जेक्शन दिया जाता है। प्रथम बार ०·१ ग्राम, द्वितीय बार ०·२ ग्राम तथा तत्पश्चात् ०·३ ग्राम के १० इन्जेक्शन देते हैं। दूसरी विधि में प्रतिदिन १ इन्जेक्शन करके ११ दिन तक लगातार इन्जेक्शन्स दिए जाते हैं। प्रथम मात्रा ०·१ ग्राम की देकर देख लें कि रोगी में औषधिके प्रति असह्यता तो नहीं है। फिर ०·३ ग्राम प्रतिदिन करके १० दिन तक इन्जेक्शन दिये जाते हैं।

सोल्यूस्टिबोसन—यह औषधि द्रव रूप में आती है और अपेक्षाकृत कम विषैली तथा पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर भी उस स्थान पर अधिक पीड़ा नहीं होती। अतएव बालकों, दुर्बल व्यक्तियों एवं स्त्रियों तथा कोमल प्रकृतिवालों के लिए अधिक उपयुक्त है। चिकित्सा क्रम नियो-स्टिबोसन के समान है।

स्टिबेटिन—यह औषधि भी द्रव रूप में आती है। इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है। किन्तु इससे उस स्थान पर काफी पीड़ा होती है। मात्रा आदि सोल्यूस्टिबोसन की भाँति।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ एन्टिमोनियाइ एट पोटासियाइ टार्ट्रेटिस Injectio Antimonii et Potassii Tartratis (Inj. Antim. et. Pot. Tart.), B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव एन्टिमनी पोटासियम् टार्ट्रेट, इन्जेक्शन ऑव पोटाशियम् एन्टिमोनिल टार्ट्रेट—अं०; टारटार इमेटिक की सुई—हिं०। वर्णन—यह परिस्रुत जल (Water for injection) में एन्टिमनी पोटासियम् टार्ट्रेट का विशोधित विलयन (Sterile Solution) होता है, जिसमें ९४% से लेकर १०५% तक टारटार इमेटिक होता है। मात्रा—½ से २ ग्रेन (३० से १२० मि० ग्रा०) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा। वक्तव्य—यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो १ सी० सी० में ⅓ ग्रेन के बल का विलयन देना चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ एन्टिमोनाइ एट सोडियाइ टार्ट्रेटिस Injectio Antimonii et Sodii Tartratis (Inj. Antim et. Sod. Tart.), I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सोडियम् एन्टिमनी टार्ट्रेट, इन्जेक्शन ऑव सोडियम् एन्टिमोनिल टार्ट्रेट—अं०। मात्रा—½ से २ ग्रेन (३० से १२० मि० ग्रा०) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा। यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो १ सी० सी० में १ ग्रेन (६० मि० ग्रा०) के बल का विलयन देना चाहिए।

३—इन्जेक्शिओ एन्टिमोनियाइ सोडियाइ थायोग्लाइकोलेटिस Injectio Antimonii Sodii Thioglycollatis (Inj. Antim. Sod. Thioglycoll.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव एन्टिमनी सोडियम् थायोग्लाइकोलेट—अं०। मात्रा—⅜ से ¾ ग्रेन (२५ से ५० मि० ग्रा०)।

कालाजार (Kala-azar) या कालज्वर में प्रयुक्त एन्टीमनी के व्यावसायिक योग :—

(१) यूरिया स्टिबामिन Urea Stibamine (Brahmachari Institute : B. R. I.)।
(२) 'स्टिबिनाल १००' 'Stibinol 100' (B. R. I.)
(३) नियोस्टिबोसन Neostibosan (Bayer)

(४) सालूस्टिबोसन Solustibosan (Bayer) इसका जलीय विलयन (Solustibosan Solution) तथा तैलीय विलयन (Solustibosan Oleosum) दोनों आते हैं।

(५) स्टिबेटिन Stibatin (Glaxo)

(६) पेन्टोस्टम् Pentostam : Stibogluconate (B. W. & Co.)

(७) मायोस्टिबिन Myostibin (E. I. P.)। १ सी० सी० से मात्रा प्रारम्भ कर ५ सी० सी० तक बढ़ावें। इन्जेक्शन प्रतिदिन तथा पेशीगत दिये जाते हैं।

(८) युनिस्टिबिन Unistibin (U. D. H.) यह भी पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होता है।

(९) कार्बो-स्टिबेमाइड Carbo-Stibamide (S. P. W.)

(१०) एन्थिओमेलीन Anthiomaline (M. & B.)

स्टिबोफेनम् (स्टिबोफेन) I. P., B. P.

Stibophenum (Stibophen,)—ले०; Stibophen—अं०

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_4O_{16}S_4$ Sb Na_5, $7H_2O$.

पर्याय—फोवादिन Fouadin; निओ-एन्टिमोसन Neoantimosan।

प्राप्ति-साधन—स्टिबोफेन रासायनिक दृष्टि से pentasodium-antimonybis-catechol—3 : 5—disulphonate. होता है। यह एन्टीमनी का एक ट्राइवेलेन्ट यौगिक (Trivalent Compound) है। इसमें १५·६ से लेकर १६ प्रतिशत तक ट्राइवेलेन्ट एन्टीमनी (Sb.) तथा १६·५% से लेकर १६·९% तक गंधक या सल्फर (S.) होता है।

वर्णन—स्टिबोफेन रंगहीन तथा सूक्ष्म एवं किंचित् चमकदार क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल में तो यह अच्छी तरह घुल जाता (Freely soluble) है; किन्तु डिहाइड्रेटेड अल्कोहल, साल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म, एसिटोन तथा लाइट पेट्रोलियम् में प्राय: अविलेय (Almost insoluble) होता है। क्लीव प्रतिक्रिया का इसका जलीय विलयन (Neutral solution in water) पहले तो रंगहीन होता है, किन्तु बाद में इसमें पहले पीली आभा (Yellowish tint) प्रगट होती है जो बाद में गाढ़े पीले रंग (Lemon-yellow colour) की हो जाती है। जब विलयन रंगहीन होता है, उसी समय यदि लिटमस के विलयन में इसको आम्लिक बना दिया जाय तो उसमें उपर्युक्त रंग सम्बन्धी परिवर्तन नहीं होता।

मात्रा—१½ से ५ ग्रेन (०·१ से ०·३ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

स्टिबोफेन, एन्टीमनी का एक ट्राइवेलेन्ट यौगिक है। कालाजार में तो यह विशेष उपयोगी सिद्ध नहीं होता, और उसके लिए अब एन्टीमनी के अनेक उत्तम पेन्टावेलेन्ट यौगिक उपलब्ध होने लगे हैं, किन्तु सिस्टोसोमा (Schistosoma) जाति के विभिन्न प्रजातियों (S. haematobium; S. japonicum; S. mansoni आदि) के उपसर्ग से होनेवाले बिल्हार्जिएसिस (Bilharziasis) रोग में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके अतिरिक्त यह वंक्षणीय-लसकणिकार्बुद (Granulomainguinale) तथा श्लीपद रोग (Filariasis) में भी

लाभप्रद होता है। वंक्षणीयलसकग्रंथिकार्बुद में इसको सल्फोनेमाइड्स के साथ देने से विशेष गुणकारी होता है। मुख्यतः इसका प्रयोग शिरागत इंजेक्शन द्वारा किया जाता है। किन्तु नितम्ब प्रदेश की पेशियों में भी इसका गम्भीर सूचिकाभरण किया जा सकता है। बिल्हार्जिएसिस में निम्न चिकित्साक्रम अधिक उपयुक्त एवं उपयोगी पाया जाता है—प्रथम दिन ६·३ प्रतिशत (w/v) बल के विलयन की १½ सी० सी० मात्रा; द्वितीय दिन ३·५ सी० सी० तथा तीसरे दिन ५ सी० सी०। इसके पश्चात् यही मात्रा १ दिन के अन्तर से दी जाती है। टोटल मात्रा ४० से ७५ सी० सी० (मि० लि०) दी जाती है। ५ सी० सी० औषधि में एन्टीमनी की मात्रा लगभग ४२½ मि० ग्रा० होती है। साधारणतया कम मात्राओं में भी मूत्र तथा मल से अंडे (ova) नष्ट हो जाते है। मूत्राशय एवं मलाशय के उपसर्ग में तथा यकृत की विकृति में एन्टीमनी-यौगिकों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

उत्सर्ग—शरीर से स्टिबोफेन का निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है। सामान्यतः इस चिकित्साक्रम में विषाक्तता के लक्षण नहीं प्रगट होते। किन्तु कभी-कभी खाँसी, हृल्लास-वमन उदरशूल आदि उपद्रव लक्षित हो सकते हैं। और निरन्तर अधिक काल तक औषधि का सेवन करने से यकृत भी विकृत हो सकता है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ स्टिबोफेनाई Injectio Stibopheni (Inj. Stibophen.), I. P., B. P. —ले०; इन्जेक्शन ऑव स्टिबोफेन—अं०। इसमें ०·८० प्रतिशत से लेकर ०·९२ प्रतिशत तक ट्राइवेलेन्ट एन्टिमनी (Sb.) होता है। मात्रा (B. P. Dose)—१½ से ५ मि० लि०।

वक्तव्य—५ मि० लि० या सी० सी० सॉल्यूशन में ०·३ ग्राम स्टिबोफेन होता है (B. P.)।

२—एरोमेटिक डाइएमाइडीन्स।

स्टिलबामेडिन आइसेथिओनेट Stilbamidine Isethionate (नॉट आफिशल)। पर्याय—M. & B. 744.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 4 : 4-diamidino-stilbene di-(B-hydroxyethane-sulphonate) होता है। यह सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल में घुल जाता है। मात्रा—१ से २ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर भार के लिए शिरामार्ग द्वारा (Intravenously) इन्जेक्शन खूब धीरे-धीरे देना चाहिए। शिरामार्ग के अतिरिक्त पेशीगत इंजेक्शन द्वारा भी प्रयुक्त किया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

स्टिलबामेडिन 'एरोमेटिक डाइएमाइडीन aromatic diamidine' वर्ग का यौगिक है, जो एन्टीमनी का यौगिक न होते हुए भी लीशमनीयता एवं ट्रिपेनोसोमिएसिस पर विशिष्ट क्रिया (Chemotherapeutic effect) करते हैं। अतएव उक्त व्याधियों की चिकित्सा में इनका भी उपयोग यूरियास्टिबामीन आदि लीशमनीयता नाशक एन्टीमनी कम्पाउण्ड्स की भाँति रामबाण औषधि के रूप में किया जाता है। इस वर्ग की औषधियाँ विकारी जीवाणुओं के सम्पर्क में आकर उनके शारीरिक समवर्त क्रिया में विकृति उत्पन्न करती हैं जिससे उनकी वृद्धि रुककर घातक प्रभाव होता है। इसी प्रकार यह दण्डाणुनाशक (Bactericidal), फुफुंदीनाशक (Fungicidal); ट्रिपेनोसोमनाशक (Trypanosomidal) क्रिया भी

करते हैं। उक्त जीवाणु-सम्बन्धी साक्षात् क्रिया के अतिरिक्त (इसके प्रभाव से शरीरधातुगत हिस्टामीन भी स्वतंत्र होता (Releases tissue-bound histamine) है, जिससे धमनिकायें (Arterioles) विस्फारित होती हैं। परिणामतः शिरामार्ग द्वारा औषधि प्रविष्ट किए जाने पर रक्तनिपीड़ (Blood Pressure) काफी गिर जाता है। हिस्टामीन को स्वतंत्र करने के कारण यह यौगिक शरीर की अनैच्छिक पेशियों पर उत्तेजक प्रभाव भी करते हैं।

शोषण तथा उत्सर्ग—महास्रोतस् (Alimentary tract) तथा सूचिकाभरण के स्थल (Parenteral sites of injection) से औषधि का शोषण क्षिप्रतापूर्वक होता है। शीघ्रतापूर्वक शोषण होने के कारण औषधि प्रयोग के आधा घंटे बाद ही रक्तप्रवाह में औषधि का अधिकतम संकेन्द्रण पाया जाता है। किन्तु साथ ही धातुओं द्वारा इसका अधिशोषण (Absorption to tissue proteins) तथा शरीर में जारण या समवर्त (Metabolisation) भी उतनी जल्दी होता है, जिससे रक्तगत संकेन्द्रण शीघ्र ही कम भी हो जाता है। प्रयुक्त औषधि का लगभग १०% भाग २ घंटे के अन्दर मूत्र के साथ उत्सर्गित हो जाता है।

आमयिक प्रयोग—स्टिलबामेडिन का प्रयोग सभी प्रकार के आशयिक लीशमनीयता (Visceral Leishmaniasis) में उपयुक्त एवं उपयोगी है। विशेषतः जिन रोगियों में एन्टीमनी-यौगिकों के प्रति सह्यता उत्पन्न हो गई हो तथा जिनमें साथ ही यक्ष्मा का उपद्रव हो, उनमें इसका प्रयोग विशेष रूपेण उपयुक्त है। सूडान में होनेवाले कालज्वर (Sudan variety of Kala-azar) में यह बहुत उपयोगी पाया गया है। इसके लिए १ मि० ग्रा० प्रति-किलोग्राम शरीर भार के हिसाब से १० सी० सी० परिस्रुत शीतल जल में विलीन कर शनैः शनैः दी जाती है। ऐसी ८ से १२ इंजेक्शन दिन रात में दिए जाते हैं। आवश्यकता पड़ने पर ७–८ दिन के अन्तर से चिकित्सा-क्रम दुहराया जाता है। पूरे चिकित्सा क्रम में युवा व्यक्ति के लिए २·५ ग्राम तक की टोटल मात्रा अपेक्षित होती है। दूसरा तरीका इकट्ठे अधिक मात्रा का होता है, जिसमें औषधि १०० से २५० सी० सी० ५% ग्लूकोज या नार्मलसेलाइन सॉल्यूशन मे विलीन कर शिरामार्ग द्वारा बूँद-बूँद करके (Slow intravenous drip) दी जाता है। इस प्रकार की चिकित्सा-क्रम में प्रथम मात्रा ५० मि० ग्रा० तथा दूसरी मात्रा १०० मि० ग्रा० की और तीसरी मात्रा १५० मि० ग्रा० की होती है। आवश्यकता पड़ने पर यह मात्रायें दुहराई जाती हैं।

विषाक्तता—स्टिलबामेडिन एक तीव्र विषाक्त यौगिक है। अतएव इसके प्रयोग से तत्काल एवं कालान्तर से भी (Immediate and Delayed) विषाक्तता के लक्षण उत्पन्न होते हैं। तात्कालिक लक्षण प्रायः हिस्टामीन के कारण होते हैं और घण्टे आध घण्टे के बाद स्वयं लुप्त हो जाते हैं। तात्कालिक लक्षण ये होते हैं—चेहरेका लाल हो जाना, हृल्लास, शिर दर्द, नाड़ी का अति तीव्र होना, सारे शरीर से पसीना आना तथा खुजली लगना, बार-बार पेशाब तथा पतले द्रव आना, रक्तभार का सहसा कम होना तथा सन्यास (Syncope) होना। चिरकालीन उपद्रव कभी-कभी औषधि प्रयोग के २-५ महीने बाद भी लक्षित होते हैं। इसमें प्रायः त्रिधारा-नाड़ी की विकृति (Trigeminal neuropathy) होती है। कभी-कभी इन्जेक्शन के क्षेत्र में शिरास्कन्दन हो जाता है।

कालाजार के अतिरिक्त स्टिलबामेडिन मानवीय ट्रिपेनोसोमिएसिस (Human Trypanosomiasis) में भी उपयोगी पाया गया है। एतदर्थ औसतन ८·८ मि० ग्रा०

प्रति किलोग्राम शरीर भार के अनुपात से मात्रा अपेक्षित होती है। इसके लिए प्रतिदिन ताजा सॉल्यूशन बनाना चाहिए और उसकी प्रतिक्रिया क्षीव या साधारण अम्ल होनी चाहिए। इसको प्रकाश से बचाना चाहिए अन्यथा विकृत होने पर प्रयुक्त करने से घातक परिणाम हो सकता है। ट्रिपेनोसोमिएसिस के अतिरिक्त यह मांसार्बुदोत्कर्ष (Myelomatosis) तथा सामान्यकायिक एक्टिनोमाइक्रोसिस तथा ब्लेसोमाइकोसिस (Systemic actinomyosis and generalised blasomycosis) में भी उपयोगी कहा जाता है। स्थानिक क्रिया के लिए इन कायाणुओं से उपसृष्ट व्रणों की चिकित्सा में भी यह प्रयुक्त किया जाता है।

पेन्टामिडिन आइसेथियोनेट (B. P. C.)

रासायनिक संकेत : $C_{23}H_{36}O_{10}N_4S_2$

पर्याय—पेन्टामिडिनी आइसेथियोनास Pentamidinae Isethionas (Pentamid.Isethion.)-ले०; पेन्टामेडीन आइसेथियोनेट Pentamidine Isethionate-अं०; पेन्टामिडिन—हिं०।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 1 : 5—di (P-amidinophenoxy) pentane di—2—hydroxy ethanesulphonate होता है।

वर्णन—यह सफेद या किंचित् मटमैला-सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। खुला रहने से इसमें आर्द्रता सोखने की प्रवृत्ति पाई जाती (Hygroscopic) है। विलेयता—१० भाग जल तथा ग्लिसरिन में घुल जाता है। किन्तु अलकोहल् में थोड़ा-थोड़ा (अंशतः) घुलता है; और ईथर, क्लोरोफॉर्म एवं लिक्विड पाराफिन में तो बिल्कुल अविलेय होता है।

मात्रा—२½ से ६ ग्रेन (०·१५ से ०·३ ग्राम) पेशीगत या शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

ट्रिपेनोसोमिएसिस की चिकित्सा के लिए डाइएमिडीन्स यौगिको में पेन्टामिडिन सबसे उपयुक्त समझा जाता है। एतदर्थ यह रोगप्रतिषेध (Prophylaxis) तथा रोगनिवारण (Treatment) दोनों ही रूप में प्रयुक्त होता है। किन्तु साथ ही ध्यान रहे कि उक्त व्याधि में जब बिमारी बढ़ जाती है, और मस्तिष्क-सुषुम्ना भी प्रभावित हो गये हों तो यह औषधि व्यर्थ है। क्योंकि शोषणोपरान्त मस्तिष्क सुषुम्ना द्रव (Cerebro-spinal fluid) में इसका संकेन्द्रण बिल्कुल नहीं पाया जाता। ऐसी स्थिति में ट्रिपारसेमाइड (Tryparsamide) आदि औषधियों के प्रयाग की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त कालाजार के जिन रोगियों में एन्टिमनी का प्रभाव न हो रहा हो (Refractory to antimony) उनमें भी पेन्टामिडिन का प्रयोग बहुत सफल रहता है।

प्रयोग विधि—निद्राज्वर (Sleeping sickness or Trypanosomiasis) में ०·३ ग्राम की १ मात्रा प्रतिदिन ७-१० दिन तक पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा दी जाती है। इंजेक्शन के लिए १० प्रतिशत बल का सॉल्यूशन प्रयुक्त करना चाहिए। रोगप्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए ०·३ ग्राम की एक मात्रा प्रति चौथे पाँचवे महीने ली जाती है। कालज्वर (Leishmaniasis) में ०·३ ग्राम की प्रतिदिन एक मात्रा इन्जेक्शन द्वारा देते हैं। ऐसे १२-१५ इन्जेक्शन देने पड़ते हैं। इन्जेक्शन प्रतिदिन एक के क्रम से अथवा एक दिन के अन्तर से (On alternate days) दिये जाते हैं।

यदि पेशीगत सूचिकाभरण में उस स्थान पर बहुत दर्द होता है, और इस दृष्टि से शिरागत इन्जेक्शन अधिक अच्छा है, किन्तु इसमें एक बहुत बड़ा दोष यह है, कि रक्तभार एकाएक बहुत गिर जाता है। इसका निवारण एड्रिनेलीन या मेथिलएम्फिटामीन के इन्जेक्शन द्वारा किया जा सकता है।

प्रोपेमिडिन आइसेथियोनेट Propamidine Isethionate (नॉट-ऑफिशल)। पर्याय—M. & B 782.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 4 : 4'—Diamidino-aw-diphenoxy propane di—(B-hydroxy ethane sulphonate) होता है। यह भी डाइ-एमिडीन समुदाय का यौगिक है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—यह भी निद्राज्वर (Trypanosomiasis) तथा कालज्वर या लीशमनीयता (Leishmaniasis) में उपयोग होता है। इसके अतिरिक्त यह मालादण्डाणु (Streptococcus haemolyticus) तथा गोलदण्डाणु (Staphylococcus aureus) पर भी जीवाणुस्तम्भक (Bacterio. static) प्रभाव करता है। और इसकी यह क्रिया पारा-अमिनोबेंजोइक एसिड तथा पूय आदि की उपस्थिति में भी कम नहीं होती। अतएव इसका प्रयोग उक्त दण्डाणुओं के स्थानिक उपसर्ग में भी बहुत उपयोगी है। अतएव ०·१५ प्रतिशत के जेली (Jelly) के रूप में इसका उपयोग दूषित व्रणों (Septic Wounds) एवं जले हुए स्थल पर (Burns) लगाने के लिए किया जाता है। पाराफिन, जल एवं लेनेट वेक्स (Lanette Wax : Sx) के साथ बनाया हुआ इसका क्रीम ताजे जले हुए स्थल (Fresh burns) पर लगाने के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। इसके अतिरिक्त मोरेक्स-एक्सेन-फेल्ड के दण्डाणु के उपसर्ग से होनेवाले नेत्राभिष्यंद (Angular Conjunctivitis due to Morax—Axenfield diplobacillus) में ०·१% वलका सोल्यूशन बहुत उपयोगी है। एतदर्थ पहले बोरीक लोशन से आंख धोकर नेत्र में उक्त सॉल्यूशन का आश्च्योतन करना चाहिए।

बरबेरिनी सल्फास (दारुहरिद्रासत्व) I. P.

रासायनिक संकेत : $C_{२०}H_{१८}O_{५}N, H_{२}SO_{४}$.

नाम—बरबेरिनी सल्फास Berberinae Sulphas (Berberine. Sulph.) —ले०; बरबेरीन सल्फेट Berberine Sulphate—अं०; दारुहल्दी का सत हिं०।

प्राप्ति-साधन—यह दारुहरिद्रिन (बरबेरीन Berberine) नामक क्षारोद या अल्कलायड का एसिड सल्फेट लवण होता है। बरबेरीन नामक अल्कलायड प्रधानतः निम्न वनस्पतियों से प्राप्त किया जाता है :—

(१) दारुहरिद्रा या बरबेरिस एरिस्टाटा Berberis aristata DC. (Family: Berberidaceae दारुहरिद्रा-कुल);

(२) ममीरा या कॉप्टिस टीटा Coptis teeta Wall. (Family : Ranunculaceae वत्सनाभ-कुल।

वर्णन—बरबेरीन सल्फेट के चमकीले पीले रंग के क्रिस्टल्स होते हैं या गाढ़े पीले रंग के चूर्ण के रूप में होता है। स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल् (९०%) में अत्यल्प मात्रा में घुलनशील (Sparingly Soluble) होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बरबेरीन सल्फेट का मुख्य उपयोग उष्णकटिबन्धीय लीशमन पिण्ड (Leishmania tropica) के उपसर्ग से होनेवाले व्रण में किया जाता है। इसे प्राच्य व्रण Oriental Sore), उष्णकटिबन्धज व्रण (Tropical Sore) या दिल्ली-व्रण (Delhi Boil) कहते हैं। एतदर्थ ६ सी० सी० में $\frac{2}{3}$ से १ ग्रेन बरबेरीन सल्फेट का विलयन प्रयुक्त होता है। उक्त विलयन की एकबार में १$\frac{1}{2}$ से २ सी० सी० मात्रा का व्रण के चारों ओर त्वचा के नीचे सूचिकाभरण (Infiltration) किया जाता है। इस प्रकार ३ बार सूचिकाभरण करने से पूर्णतः रोगोन्मूलन हो जाता है। इसके अतिरिक्त परमबललवणजल (Hypertonic Saline) से व्रणोपचार (Dressing) भी करना चाहिए।

सिंकोना, चिरायता आदि की भाँति बर्बेरीन एक तिक्त द्रव्य होने के कारण साधारण विषमज्वर नाशक (Antiperiodic in malaria) भी होता है। किन्तु आजकल जब कि मलेरिया के लिए अनेक उत्तम औषधियाँ उपलब्ध हैं, रोगनिवारक (Curative agent) के रूप में इसका कोई विशेष महत्त्व नहीं है। किन्तु इसका उपयोग नैदानिकीय प्रयोगके लिए किया जा सकता है। इसके प्रयोग से मलेरिया-कायाणु अधिकाधिक मात्रा में परिसरीय रक्तपरिभ्रमण में आ जाते हैं। और उस समय का रक्त-प्रलेप (Blood-film) का परीक्षण करने से मलेरिया कायाणुओं की उपस्थिति सरलतापूर्वक देखी जा सकती है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शियो बर्बेरिनी सल्फेटिस Injectio Berberinae Sulphatis (Inj. Berberin. Sulph.) I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव बर्बेरीन सल्फेट—अं०। सतदारुहल्दी की सूई—हिं०। मात्रा—व्रण के चारों ओर त्वचा के नीचे अनेक स्थलों पर सूचिकाभरण करते हैं। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो २ सी० सी० (मि० लि०) में २० मि० ग्रा० या १ सी० सी० में $\frac{1}{6}$ ग्रेन बलका विलयन देना चाहिए।

प्रकरण ३

निद्राज्वर में प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ

Trypanocidal Remedies : Drugs used in Trypanosomiasis (African sleeping sickness)

(१) पेंटावलेंट आर्सेनिक कम्पाउण्ड्स—ट्रिपार्समाइड, कोकोडिलेट्स तथा अटॉक्सिल आदि (इनका वर्णन आर्सेनिक के प्रकरण में किया जायगा ।)

(२) एरोमेटिक डाइ-एमिडीन्स—स्टिलबामेडिन, पेंटामिडिन तथा प्रोपेमिडिन (इनका वर्णन पीछे कालज्वर या लीशमनीयतानाशक विशिष्ट औषधियों के साथ किया जा चुका है ।

(३) सुरामिन (Suramin) ।

सुरामिनम् (सुरामिन) I. P., B. P.

Suraminum (Suramin)—ले०; Suramin—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{51}H_{34}O_{23}N_6S_6Na_4$.

पर्याय—सुरामिन सोडियम् Suramin Sodium; जर्मेनिन Germanin; Bayer "२०५"; मोरानिल Moranyl; एन्ट्रिपोल Antrypol; फोर्न्यू "३०९" Fourneau "309" ।

प्राप्ति-साधन—सुरामिन रासायनिक दृष्टि से Symmetrical 3''—urea of the sodium salt of 1—(3—benzamido – 4—methylbenzamido) naphthalene—4 : 6 : 8—trisulphonic acid होता है । इसमें कम से कम ९५ प्रतिशत सुरामिन होता है ।

वर्णन—यह सफेद या गुलाबी लिए सफेद अथवा हल्के क्रीम रंग का चूर्ण होता है, प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में क्षारीय (alkaline) एवं किंचित् तिक्त होता है । खुला रहने से आर्द्रता को सोखता (Hygroscopic) है । विलेयता—२०° तापक्रम पर १ भाग से कम जल में घुल जाता है किन्तु अल्कोहल् (९५%) में नहीं-घुलता (Almost insoluble) है । सालवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म; एवं बेंजीन में तो बिल्कुल अविलेय (Insoluble) होता है ।

मात्रा—(I. P. & B. P. Dose) १ से २ ग्राम (१५ से ३० ग्रेन) सिरागत सूचिकाभरणद्वारा ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

(ट्रिपेनोसोमा गेम्बिएन्स (T. gambiense) एवं ट्रिपेनोसोमा रोडेसिएन्स (Trypanosoma rhodesience) दोनों प्रजातियों से होनेवाले निद्राज्वर (Slee-

ping Sickess) के लिए यह एक उत्तम एवं विशिष्ट औषधि है। किन्तु रोग निवारक (Curative agent) के रूप में औषधि का महत्व केवल रोग की प्रारम्भिक अवस्था में ही है। क्योंकि मस्तिष्क सुषुम्ना के आक्रान्त होने पर औषधि का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। रोग-प्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए यह एक उत्तम एवं विश्वसनीय औषधि है। एतदर्थ २ ग्राम (३० ग्रेन) की मात्रा में औषधि का सेवन करने से ३ मास तक व्यक्ति के उपसृष्ट होने का भय नहीं रहता। रोगनिवारण या चिकित्सा के लिए १ ग्राम की एक मात्रा सप्ताह में एक बार दी जाती है। इसका १०% परिस्रुतजल में बनाया सॉल्यूशन शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार ५ से १० इंजेक्शन (या टोटल १० ग्राम मात्रा) दिये जाते हैं। अकेले सुरामिन की अपेक्षा सुरामिन एवं ट्रिपारसेमाइड (Tryparsamide) की सम्मिश्रित चिकित्सा-क्रम (Combined therapy) अधिक श्रेयष्कर समझा जाता है। इसमें पहले १ ग्राम सुरामिन की ३ से ५ मात्रायें ५ से ७ दिन के अन्तर से दी जाती हैं। इसके बाद २ ग्राम ट्रिपार-सेमाइड की ५ से १० मात्रायें सुरामिन की भाँति ५-७ दिन के अन्तर से दी जाती हैं।

मुखद्वारा सेवन किए जानेपर आमाशयान्त्रप्रणाली से सुरामिन का शोषण अत्यल्प मात्रा में होता है। अतएव इसका प्रयोग अन्य मार्गों से किया जाता है। शोषणोपरान्त रक्त में एक स्तर तक इसका संकेन्द्रण कई महीनों तक बना रहता है। सुरामिन का रोगप्रतिषेधक क्रिया सम्भवतः इसी गुण के कारण होती है। इसकी ट्रिपेनोसोमनाशक क्रिया (Tripanocidal action) किस प्रकार होती है, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। सम्भवतः जालकान्तस्तरीय कोषाओं(Rediculo-endothelial cells) पर इसका कुछ ऐसा प्रभाव होता है कि उनमें ट्रिपेनोसोम के भक्षण (Phagocytosis) की प्रवृत्ति बढ़ जाती है।

निद्राज्वर के अतिरिक्त सुरामिन ऑंकोसर्का (Onchocerca) नामक श्लीपद कृमि के उपसर्ग (Onchocerciasis) में भी उपयोगी पाया गया है। इसके लिए प्रति सप्ताह १ ग्राम की मात्रा इंजेक्शन द्वारा ७-८ सप्ताह तक दी जाती है। इसके अतिरिक्त सुरामिन का प्रयोग (pemphigus) में भी करते हैं।

विषाक्तता—कभी-कभी इन्जेक्शन के बाद ही हृल्लास, वमन, उदरशूल, शीतपित्त, तथा हाथ-पैर के तलवों में परम स्पर्शसंवेदनशीलता (Paraesthesia) तथा कभी-कभी स्तब्धता (Shock) एवं बेहोशी हो जाती है। बाद में परिसरीय नाड़ीशोथ (Peripheral neuritis), दृष्टिदोष (Amblyopia), वृक्कशोथ तथा शुक्तिमेह, शोणितमेह आदि विकार तथा रक्त में कणिक-कायाणूत्कर्ष एवं रक्ताल्पता के उपद्रव होते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ सुरामिनाइ Injectio Suramini (Inj. Suramin), I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सुरामिन—अं०। मात्रा—सुरामिन की भाँति १ से २ ग्राम शिरागत मार्गद्वारा।

प्रकरण ४

(फिरंगनाशक औषधियाँ)

आर्सेनिक (संखिया)

(आर्सेनिक के निरिन्द्रिय त्रिवन्धीय यौगिक Inorganic trivalent Compounds.)

आर्सेनियाइ ट्राइऑक्साइडम् (I. P., B. P.)

Arseni Trioxidum (Arsen. Trioxid.)—ले०;

Arsenic Trioxide (आर्सेनिक ट्राइऑक्साइड)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $As_2 O_3$.

पर्याय—एसिडम् आर्सेनिओसम् Acidum Arseniosum—(ले०); आर्सेनियस एसिड Arsenious acid—(अं०); आर्सेनिक Arsenic; सफेद आर्सेनिक white Arsenic; सोमल—सं०; संखिया—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—यह खनिज आर्सेनिक (Arsenical ores) से प्राप्त किया जाता है । इसमें कम से कम ९९·८ प्रतिशत संखिया ($As_2 O_3$.) होता है ।

वर्णन—यह सफेद रंग के चूर्ण के रूप होता है, जिसको हाथ में रखकर अनुभव करने से गुरु (भारी या वज़नी) मालूम पड़ता है । इसके छोटे बड़े टुकड़े (Irregular lumps) भी होते हैं, जिनको तोड़ने पर टूटा हुआ तल चमकदार (Vitreous fracture) मालूम होते हैं । टुकड़ों का परीक्षण करने पर स्तरित (Stratified) मालूम होते हैं । आर्सेनिक पिण्ड पारदर्शी तथा अपारदर्शी (Transparent and opaque) दोनों प्रकार के उपलब्ध होते हैं ।

विलेयता—६० भाग जल में धीरे-धीरे विलम्ब से घुलता है । उक्त जल में हाइड्रोक्लोरिक एसिड या क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स का विलयन मिलाने पर तेजी से घुल जाता है । अल्कोहल (९५%) में भी अंशतः घुलता है । इसी प्रकार तापक्रम २०° पर ग्लिसरोल में भी अल्पतः घुलनशील होता है; किन्तु गरम ग्लिसरोल में तुरन्त घुल जाता (Readily soluble) है ।

मात्रा—१ से ५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{12}$ ग्रेन) ।

असंयोज्य पदार्थ—चूने का पानी, लौह के लवण, मैगनीसिया तथा कषाय द्रव्य (Astringents) ।

फेराइ आर्सनास (Ferri Arsenas), I. P.—ले०; आयरन आर्सिनेट Iron Arsenate—अं० ।

पर्याय—आर्सेनिएट ऑव आयरन Arseniate of Iron; आर्सिनेट ऑव आयरन ।

वर्णन—यह हरे रंग का विरूपिकचूर्ण (Greenish amorphous powder) होता है, जो गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। विलेयता— जल में तो नहीं घुलता किन्तु हाइड्रोक्लोरिक एसिड में फौरन घुल जाता है।

मात्रा—४ से १६ मि० ग्रा० ($\frac{1}{16}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन)।

गुण-कर्म।

वाह्य—आर्सेनिक शरीरकोषाओं अर्थात् अधस्त्वचीय धातुओं पर विषाक्त प्रभाव (Cytotoxic action) करता है। उक्त क्रिया वृद्धिशील धातुओं (Prolipherating tissues) पर अधिक स्पष्टतया लक्षित होती है। त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से आर्सेनिक क्षोभक (Irritant) प्रभाव करता है। अक्षत त्वचा पर तो यह क्रिया मन्द तथा अधिक समय में होती है, किन्तु छिली हुई त्वचा (Denuded surface) तथा श्लैष्मिक कलाओं पर अधिक स्पष्ट तथा क्षिप्रतापूर्वक होती है। अक्षत त्वचा पर भी कालान्तर से शोथ एवं धातुनाश या कोथ (Sloughing) उत्पन्न हो सकता है।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र-प्रणाली—मुख द्वारा अल्प मात्रा में प्रयुक्त होने पर तो आमाशयान्त्र-प्रणाली की श्लैष्मिक कला पर केवल रक्तमयता तथा लालिमा पैदा करता है, किन्तु अधिक मात्रा में सेवन करने से तीव्र अमाशयान्त्र-प्रदाह (Gastro-enteritis) उत्पन्न करता है। विषाक्तता की स्थिति में हैजे की भाँति वमन तथा चावल के धोवन के समान पतले दस्त (Rice-water stool) आने लगते हैं। यही स्थिति अधस्त्वक् मार्ग द्वारा आर्सेनिक प्रयुक्त होने पर भी होता है।

शरीर-समवर्त क्रिया (Metabolism)—अल्प मात्रा में अधिक काल तक आर्सेनिक का सेवन करने से यह शरीर पर बल्य प्रभाव (Tonic) करता प्रतीत होता है। किन्तु अब इसे भी इसकी विषाक्तता का श्री गणेश ही माना जाता है। आर्सेनिक एक तीव्र विषैली औषधि और अधिक काल तक इसका सेवन करने से कामला आदि व्याधि तथा यकृत, वृक्क, हृदय एवं पेशियों आदि में मेदापजनन (Fatty degeneration) का भयंकर उपद्रव उत्पन्न होता है।

नाडीसंस्थान—चिरकालीन विषमयता की अवस्था में परिसरीय नाड़ियों में शोथ (Peripheral neuritis) तथा इतस्ततः सीमित क्षेत्र में अंगघात (Paralysis) का उपद्रव होता है।

हृदय, रक्त एवं रक्त संवहन—विषमयता की अवस्था में शरीर की केशिकाओं (Capillaries) पर आर्सेनिक की प्रत्यक्ष क्रिया होनेके कारण ये विस्फारित होती हैं, जिससे रक्तभार (Blood Pressure) गिर जाता है और हृदयकी पेशियों पर अवसादक प्रभाव पड़ता है।

वृक्क—विषाक्त मात्राओं (Toxic doses) में वृक्कों पर भी विनाशक प्रभाव होता है, जिससे मूत्रमें अल्ब्युमिन (शुक्लिक), निर्मोक (Casts) तथा रक्तकण (Blood cells) पाये जाते हैं।

सह्यता (Tolerance)—वास्तव में आर्सेनिक के प्रति शरीर कोषाओं में कोई सह्यता नहीं उत्पन्न होती है।

शोषण तथा निस्सरण—आर्सेनिक के जल-विलेय लवण श्लैष्मिक कलाओं से तथा इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर सूचिकाभरण के स्थल से तथा स्थानिक प्रयोग से त्वचा से अच्छी तरह शोषित हो जाते हैं। मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर प्रधानतः इनका निस्सरण (Excretion) आँतों द्वारा तथा अधस्त्वचीय मार्ग द्वारा (Hypodermi cally) प्रयुक्त होने पर वृक्कों द्वारा होता है। शरीरसे इसका उत्सर्ग अत्यन्त मंद गति से तथा अंशतः होता है। अतः यह संचायी स्वरूप की (Cumulative) औषधि है। शरीर में इसका संचय यकृत, वृक्क, प्लीहा, आमाशयान्त्र भित्ति, फुफ्फुस तथा बालों में होता है। बहिस्त्वचा (Epidermis) तथा अस्थियों में भी कुछ अंश संचित होता है।

संखियाजन्य विषाक्तता—व्यवहार में संखिया विषमयता की दोनों स्थितियाँ मिलती हैं—(१) उग्र स्वरूप की विषमयता (Acute Poisoning) तथा (२) चिरकालज विषमयता (Chronic Poisoning)। उग्र विषमयता सहसा अधिक मात्रा में इसका सेवन करने से होती है। प्रायः अपराधी परहत्या करने के लिए भोजन में संखिया मिलाकर दे देते हैं। अनेक कीटनाशक (Insecticides) तथा चूहा मारने की दवा में आर्सेनिक पड़ता है। कभी-कभी धोखे से इसको लोग खा जाते हैं और उग्र विषाक्तता के शिकार बन जाते हैं। साधारणतया आर्सेनिक की विषाक्त मात्रा (Toxic dose) १½ ग्रेन या १०० मि० ग्रा० होती है। चिरकालज विषमयता प्रायः उन लोगों में होती है, जिनको बहुत दिनों से संखियाघटित योगों द्वारा चिकित्सा की जा रही हो, अथवा ऐसे खानों में काम करनेवाले मजदूरों में होता है, जिनमें संखियाघटित खनिज निकलते हैं।

लक्षण। (१) उग्रविषाक्तता—मुखद्वारा संखिया सेवन से उत्पन्न उग्र विषाक्तता में कालरा की तरह लक्षण एवं उपद्रव लक्षित होते हैं। खाली पेट पर अकेले संखिया का सेवन करने से विषाक्त लक्षण अपेक्षाकृत जल्दी तथा भोजन में मिलाकर लिए जाने पर कुछ देर से (१–२ घंटे के बाद) प्रगट हो सकते हैं। (२) चिरकालज विषाक्तता—औषधि के रूप में अधिक काल तक संखियाघटित योगों का सेवन करने पर कमजोरी, सुस्ती (Languor), क्षुधानाश तथा वमन एवं अतिसार होता है। कभी-कभी अतिसार के बजाय विबन्ध भी होता है। नाक, कण्ठ एवं श्वसनिका तथा नेत्र में लाली तथा रक्तमयता तथा श्लैष्मिक कला में शोथ हो जाता है। इसके अतिरिक्त त्वचा में भी अनेक विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं। त्वचा का वर्ण काला पड़ जाता (Arsenical melanosis) है तथा नाना प्रकार के दाने या चकत्ते (Skin rashes) निकलते हैं। अन्ततः सीस विषमयता (Lead poisoning) की भाँति मस्तिष्कावरणशोथ (Encephalitis) तथा शाखा की नाड़ियों में शोथ एवं अंगघात (Paralysis of the extremities) हो सकती है। खान में काम करनेवालों में ये लक्षण विशेष प्रगट होते हैं।

चिकित्सा—आर्सेनिक विषमयता के निवारण के लिए डाइमर्केप्रोल या "बाल" (B A L) रामबाण अगद (Antidote) है। उग्र विषाक्तता की स्थिति में "बाल" के अतिरिक्त वामक द्रव्यों द्वारा अथवा आमाशय नलिका द्वारा उदर का प्रक्षालन करना चाहिए। किन्तु इसका प्रयोग बड़ी सतर्कता से करें। स्नेहन द्रव्यों (Demulcents) का प्रयोग करना चाहिए। केस्टर ऑयल (रेंड़ी का तेल) भी दे सकते हैं। गरम पानी की बोतलें रोगी के इधर-उधर लगा दें। द्रवांश की कमी (Dehydration) होने पर लवणजल का शिरागत अन्तः संक्रमण (Transfusion) करें।

आमयिक प्रयोग।

बाह्य—आर्सेनिक का बाह्यतः स्थानिक प्रयोग दाहक (Caustic) के रूप में विभिन्न चर्मगत ग्रंथिमय वृद्धियों—यथा त्वचागतयक्ष्मज विकार (Lupus), फिरंगाबुर्द (Condyloma) अपस्तरीयवातकार्बुद (Epithelioma) तथा चर्मकील या मस्सा (Warts) आदि—को नष्ट करनेके लिए किया जाता है। किन्तु अब इनका विनाश शल्यकर्म, रेडियम एवं क्ष-किरण चिकित्सा द्वारा किया जाता है। ल्युपस (Lupus erythematosus) में आर्सेनिक ट्राइऑक्साइड तथा बबूलका गोंद बराबर-बराबर लेकर कोकेन हाइड्रोक्लोराइड सॉल्यूशन में पेस्ट बनाकर इसको लगाते हैं। १-२ दिन के बाद पट्टी उतार देनी चाहिए, एक समय में १ वर्ग इंच से बड़ी पट्टी नहीं लगानी चाहिए।

आभ्यन्तर। विषमज्वर—चिरकालज विषमज्वर के रोगियों में क्विनीन के साथ सहायक औषधि के रूप में आर्सेनिक का प्रयोग बहुत उपयोगी है। एतदर्थ लाइकर आर्सेनिकलिस को क्विनीन मिक्सचर में मिलाकर देते हैं। क्विनीन एवं लौह के साथ अल्प मात्रा में आर्सेनिक मिलाकर देने से मलेरिया जन्य दुःस्वास्थ्य (Cachexia) एवं रक्ताल्पता आदि उपद्रवों का भी निवारण होता है।

रक्तजनन संस्थान—मलेरिया के कारण उपद्रव स्वरूप उत्पन्न रक्ताल्पता (Macrocytic as well as microcytic or secondary anaemia) में अल्प मात्रा में आर्सेनिक का सेवन उपयोगी बतलाया जाता है।

चूँकि संखिया रक्त के श्वेत कायाणुओं की संख्या में कमी करती है, अतएव अस्थिमज्जा के श्वेतमयता रोग (Leukaemia) में यह उपयोगी बतलायी जाती है। यह क्रिया चिरकालज स्वरूप (Chronic myelocytic leukaemia) में विशेषरूपेण लक्षित होती है। एतदर्थ फाउलर सॉल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है। ५ बूँद की मात्रा दिन में तीन बार देते हैं। और प्रतिदिन १ बूँद मात्रा बढ़ाई जाती है। इस प्रकार १० बूँद तक मात्रा लाई जाती है। आवश्यकता होने पर मात्रा कुछ और भी बढ़ा सकते हैं। किन्तु विषाक्त लक्षण प्रगट होने पर अथवा यदि श्वेतकायाणुओंकी संख्या में कमी हो गई हो, तो चिकित्सा फौरन बन्द कर देनी चाहिए। १ सप्ताह के बाद पुनः पिछली अधिकतम मात्रा से चिकित्सा आरम्भ की जाती है और अभीष्ट संख्या तक कमी हो जाने पर बन्द कर दी जाती है।

त्वचा—बहिस्त्वचा (Epidermis) की विकृति से होनेवाली कतिपय चिरकालीन त्वचा रोगोंमें आर्सेनिक उपयोगी पाया जाता है इसी आधार पर इसका प्रयोग सोरिएसिस (Psoriasis), लिचेन (Lichen), चिरकालीन विचर्चिका एवं पेम्फिगस (Pemphigus) परिसर्पयुक्त त्वचाशोथ (Dermatitis herpetiformis) आदि रोगों में व्यवहृत होता है।

तमक श्वास (Bronchial Asthma)—आर्सेनिक के प्रयोग से चिरकालीन तमक श्वास तथा उष्ण कटिबन्धीय उपसिप्रियता (Tropical eosinophilia) में भी लाभ होता है।

(ऑफिशल)

१—लाइकर आर्सेनिकलिस Liquor Arsenicalis (Liq. Arsen.) B. P., सोल्यूशियो आर्सेनिकलिस Solutio Arsenicalis (Sol. Arsen.) I. P.—ले०; आर्सेनिकल सोल्यूशन

Arsenical Solution—अं० । पर्याय—फाउलर सॉल्यूशन Fowler's Solution । इसमें १०% (w/v) के बराबर आर्सेनिक ट्राइऑक्साइड (अथवा ०.५ मि० लि० या ८ मिनम् में $\frac{1}{१२}$ ग्रेन या ०.००५ ग्राम) होता है । फाउलर सॉल्यूशन स्वच्छ रंगहीन द्रव के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् नमकीन (Saline) होता है । मात्रा—२ से ८ मिनम् या बूँद (०.१२ से ०.५ मि० लि०) ।

(नॉट ऑफिशल)

१—लाइकर आर्सेनाइ एट हाइड्रार्जिराइ आयोडाइडाइ Liquor Arseni et Hydrargyri Iodidi—ले० । पर्याय—डोनोवान सॉल्यूशन Donovan's Solution—अं० । मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०.३ से १ मि० लि०) । वक्तव्य—यह १०% बल का सॉल्यूशन होता है । १५ बूंद में प्रत्येक औषधि की $\frac{1}{७}$ ग्रेन मात्रा होती है ।

२—आर्सेनियाइ ट्राइ-आयोडाइडम् Arseni Tri-iodidum (Arsen. Tri-iod.)—ले० । पर्याय—आर्सेनियाइ आयोडाइडम् Arsenii Iodidum; आर्सेनियस आयोडाइड Arsenious Iodide । यह नारंगवर्ण के छोटे-छोटे क्रिस्टल्स के रूप में होता है, जो १८ भाग जल, ४२ अल्कोहल् (९०%) तथा ईथर, क्लोरोफॉर्म एवं कार्बन डाइ-सल्फाइड में घुल जाता है ।

मात्रा—$\frac{1}{१६}$ से $\frac{1}{४}$ ग्रेन (४ से १६ मि० ग्रा०) ।

३—सोडियाइ आर्सेनास एन्हाइड्रस Sodii Arsenas Anhydrous सफेद चूर्ण जो जल में घुल जाता है । मात्रा—$\frac{1}{४०}$ से $\frac{1}{१०}$ ग्रेन (१.५ से ६ मि० ग्रा०) ।

ऑर्गैनिक आर्सेनिक कम्पाउण्ड्स ।

(अ) त्रिबन्धीय यौगिक (Trivalent Compounds)

ऑक्सोफेनार्सिनी हाइड्रोक्लोराइडम् (I. P., B. P.)

Oxophenarsinae Hydrochloridum (Oxophenarsin. Hydrochlor)—ले० ।

रासायनिक संकेत : $C_6H_6O_2NAs, HCl$.

पर्याय—ऑक्सोफेनारसीन हाइड्रोक्लोराइड Oxophenarsine Hydrochloride—अं०; मेफार्सन Mepharsen; मेफार्साइड Mepharside ।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 3—amino—4—hydroxyphenylarsenic oxide का hydrochloride यौगिक होता है । इसमें २९.५ प्रतिशत से ३२ प्रतिशत तक ट्राइवलेंट आर्सेनिक (Trivalent arsenic : As.) तथा टोटल आर्सेनिक (As.) ३०% से ३२% तक होता है । १४.८ प्रतिशत से १६ प्रतिशत तक क्लोरीन (Cl.) होता है ।

वर्णन—यह सफेद रंग के या मटमैले सफेद रंग के गंधहीन चूर्ण के रूप में होता है । विलेयता—जल तथा क्षारीय हाइड्राक्साइड्स एवं कार्बोनेट्स तथा मन्दबल खनिज अम्लों (Dilute mineral acids) के विलयन में घुल जाता (Soluble) है । संग्रह (Storage)—इसको अच्छी तरह डाटबन्द (Hermetically-closed) सफेद शीशे के पात्र में रखना चाहिए, जो पहले अच्छी तरह विशोधित कर लिये गये हों, तथा उसमें की हवा बिल्कुल निकाल दी गई हो । इसका संग्रह २०° तापक्रम से अधिक गर्म जगह में नहीं करना चाहिए ।

मात्रा—२० से ६० मि० ग्रा० (⅓ से १ ग्रेन) शिरामार्गद्वारा ।

ऑक्सोफेनार्सिनी टारट्रास Oxophenarsinae Tartras (Oxophenarsin. Tart.) B. P.—ले०; ऑक्सोफेनार्सीन टारट्रेट Oxophenarsine Tartrate—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_6H_6O_2NAs, C_4H_6O_6, 2H_2O$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 3—amino—4—hydroxyphenylarsenic oxide hydrogen tartrate होता है । इसमें १६ प्रतिशत से लेकर १६·६ प्रतिशत तक ट्राइवेलेंट आर्सेनिक होता है (आर्सेनिक की अधिकतम टोटल मात्रा १९·६% होती है) ।

वर्णन—सफेद या किंचित् मटमैले सफेद रंग का गंधहीन चूर्ण होता है । विलेयता—२५ भाग जल, अल्कोहल (९५%), अल्कली हाइड्राक्साइड्स एवं कार्बोनेट्स के विलयन में तथा डायल्यूट मिनरल एसिड्स में घुल जाता है । मात्रा—४५ से ९० मि० ग्रा० (¾ से १½ ग्रेन) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा ।

संग्रह—इसका संग्रह अच्छी तरह डाटबन्द शीशियों में २०° तापक्रम से कम गरम जगह में करना चाहिए ।

नियोआर्सफेनामिना (नियोआर्सफेनामीन) I. P., B. P.

Neoarsphenamina (Neoarsphenamin.)—ले०; Neoarsphenamine (अं०) ।

पर्याय—नोवार्सेनोबेंजॉल Novarsenobenzol; नोवार्सेनोबेंजीन Novarsenobenzene; नियोसाल्वर्सन; 914. ।

प्राप्ति-साधन–यह 3 : 3′-diamino-4 : 4′–dihydroxyarsenobenzene तथा Sodium formaldehydesulphoxylate की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है । रासायनिक दृष्टि से इसमें प्रधानतः Sodium 3 : 3′ diamino-4 : 4′—dihydroxyarsenobenzene—N—methylene Sulphoxylate होता है । नियोसाल्वर्सन में १८ प्रतिशत से २१ प्रतिशत तक आर्सेनिक (As.) होता है ।

वर्णन—नियोसाल्वर्सन पीले रंग के शुष्क चूर्ण के रूप में होता है, जो बहुत मुलायम होता है । यह प्रायः गंधहीन होता है । विलेयता—जल में घुल जाता है; किन्तु डिहाइड्रेटेड अल्कोहल तथा साल्वेंट ईथर में नहीं घुलता ।

मात्रा (B. P. Dose)—०·१५ से ०·६ ग्राम (२½ से १० ग्रेन) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा ।

संरक्षण—नियोसाल्वर्सन का चूर्ण सावधानी पूर्वक अच्छी तरह विशोधित एवं बन्द शीशे के पात्र (Hermetically sealed glass containers) में वितरित किया जाता है । इसका संग्रह ठण्ढी जगह में (१५° तापक्रम से कम) करना चाहिए । यदि चूर्ण का रंग विकृत हो गया हो तो इसका अर्थ यह है कि औषधि खराब हो गई है तथा प्रयोग के योग्य नहीं है ।

सल्फार्सफेनामिना (सल्फार्सफेनामीन) I. P, B. P.

Sulpharsphenamina (Sulpharsphenamin.) ले०; Sulpharsphenamine—अं० ।

पर्याय—सल्फार्सेनोबेंजीन Sulpharsenobenzene; "सल्फार्सेनॉल Sulfarsenol"।

प्राप्ति-साधन—यह 3 : 3'—diamino-4 : 4'—dihydroxyarsenobenzene dihydrochloride तथा formaldehyde एवं Sodium hydrogen Sulphite की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें प्रधानतः disodium 3 : 3'—diamino-4 : 4'—dihydroxyarsenobenzene—NN'—bis (methylene Sulphite) होता है। इसमें १८ प्रतिशत से २१ प्रतिशत तक आर्सेनिक (As.) होता है।

वर्णन—यह पीले रंग का शुष्क एवं चिक्कण चूर्ण होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर ½ भाग जल में तो घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल् (९५%) तथा सालवेंट ईथर में अविलेय होता है।

मात्रा—०·१ से ०·६ ग्राम (१½ से १० ग्रेन) अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

वक्तव्य—इसका संग्रह, संरक्षण एवं शीशियों में वितरण नियोसाल्वर्सन की भाँति।

(ब) पेंटावलेंट कम्पाउण्ड्स (Pentavalent Compounds)

ट्रिपार्सेमाइडम (ट्रिपार्सेमाइड) I. P., B. P.

Tryparsamidum (Tryparsamid.)—ले०; Tryparsamide—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_8H_{10}O_4N_2$ As Na, ½H_2O.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह Sodium P-Carbamylmethylaminophenylarsonate hemihydrate होता है। इसमें २५·१ से २५·५% तक आर्सेनिक (As) होता है।

वर्णन—यह रंगहीन एवं गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। विलेयता—१·५ भाग जल में तो घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल (९५%), सालवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा बेंजीन में या तो बिल्कुल नहीं घुलता अथवा यदि घुलता भी है तो अत्यल्प मात्रा में। संरक्षण—इसको अच्छी तरह बन्द छोटे-छोटे पात्रों में रखकर ठण्ढी जगह में संग्रह करना चाहिए। और प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—१ से २ ग्राम (१५ से ३० ग्रेन), अधस्त्वक्, पेशीगत या शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म।

आर्सेनिक के आर्गेनिक कम्पाउण्ड्स शरीर में पहुँचते ही फिरंग के चक्राणुओं पर घातक प्रभाव नहीं करते। कहने का तात्पर्य यह है, कि फिरंग रोग पर इसकी विशिष्ट क्रिया अप्रत्यक्षया (Indirectly) होती है। शरीर में पहुँचने पर पहले ये शरीरगत धातुओं में—विशेषता यकृत में आर्सिनो ऑक्साइड या मेफार्सन में (Amino-Oxyphenyl arsenoxide : arsenoxide or mapharsen) परिवर्तित हो जाते हैं। इस रूप में सल्फाड्रिल समुदाय के तत्वों के साथ संयुक्त होकर फिरंग-चक्राणुओं (Spirochaetes) की समवर्तक्रिया (Metabolic process of the organism) का निरोध करते हैं। इस प्रकार आर्सेनिक यौगिकों की फिरंगचक्राणुनाशक विशिष्ट क्रिया के लिए मध्यस्थ द्रव्य (Chemo-receptor for arsenic) के रूप में सल्फाड्रिल समुदाय के तत्व कार्य करते हैं।

शोषण तथा शरीर से निस्सरण—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर अधिकांश ऑर्गेनिक आर्सेनिक कम्पाउण्ड्स आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा अत्यल्प मात्रा में शोषित होते हैं। अतएव औषधीय प्रभाव के लिए मुखमार्ग उपयुक्त नहीं है। इसके अतिरिक्त सल्फार्सफेनामीन को छोड़कर बाकी सभी यौगिक शरीर धातुओं पर स्थानिक क्षोभक प्रभाव करने के कारण (Local tissue irritants) पेशीमार्ग भी इनके लिए उपयुक्त नहीं है। **अतएव इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करने के लिए शिरामार्ग ही सबसे उपयुक्त होता है।** ट्राइवेलेंट कम्पाउण्ड्स में मेलारसन ऑक्साइड तथा पेंटावेलेंट कम्पाउण्डस में एसिटार्सल, कारबार्सन एवं ट्रिपार्सल का प्रयोग मुख-मार्ग द्वारा किया जा सकता है। शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर थोड़े समय बाद ही रक्तगत-संकेन्द्रण कम हो जाता है, क्योंकि जालकान्तस्तरीय धातुओं (Reticulo-endothelial tissue) द्वारा इसका ग्रहण एवं संग्रह यकृत, प्लीहा, फुफ्फुस एवं वृक्क आदि अंगों में किया जाता है। **इस प्रकार आर्सेनिक एक संचायी स्वभाव की औषधि है।** कालान्तर से इसके संचायी विषाक्तप्रभाव (Cumulative effect) होने की आशंका रहती है। शरीर में वियोजित होने के बाद, शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः मूत्र एवं मल (Faeces) के साथ तथा अल्प मात्रा में पसीना, लालास्राव तथा दूध पिलानेवाली औरतों के दूध के साथ होता है। मूत्र की अपेक्षा अधिक मात्रा का उत्सर्ग मल के साथ होता है। इसका कारण यह है कि **औषधि का अधिकतम उत्सर्ग पित्त के साथ होता है। अतएव औषधि का संचायी प्रभाव यकृत पर अधिक होता है।** पोटासियम् आयोडाइड का सेवन करने से आर्सेनिक के उत्सर्ग में सहायता मिलती है। ट्राइवेलेंट कम्पाउण्ड की अपेक्षा पेंटावेलेंट कम्पाउण्ड्स का उत्सर्ग अधिक सुगमता से स्वयं हो जाता है। यहाँ तक कि २४ घंटे के अन्दर ८५% तक औषधि उत्सर्गित हो जाती है। उत्सर्ग की मात्रा एवं गति भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की देखी जाती है। वृक्कों के विकृत होने पर भी उत्सर्ग की मात्रा बहुत कम हो सकती है। मूत्र में आर्सेनिक की अनुपस्थिति रोगी में औषधि के प्रति असह्यता, कामला एवं त्वचाविकार (Dermatitis) के खतरे का द्योतक समझना चाहिए।

आर्सेनिक के विषाक्त प्रभाव—आर्सेनिक या संखिया एक तीव्र विषैली औषधि है। अतएव जब फिरंग की चिकित्सा के लिए आर्सेनिक के ऑर्गेनिक यौगिकों का प्रयोग करना हो, और चिकित्सा क्रम लम्बा हो तथा कई इंजेक्शन्स देने अपेक्षित हों तो काफी सतर्कता बरतनी चाहिए। सॉल्यूशन बनाने के लिए जल विशोधित (Pyrogen free) तथा ताजा होना चाहिए। एम्पूल की दवा को भी देख लेना चाहिए—यदि उसका रंग विकृत हो तथा सॉल्यूशन बनाने पर **सॉल्यूशन का रंग विकृत हो तो उसका प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए। नियोसाल्वर्सन के इन्जेक्शन** में इस बात का ध्यान रखना विशेष रूप से आवश्यक है। शिरागत सूचिकाभरण करते समय ध्यान रहे कि औषधि शिरा के अतिरिक्त परिसरीय धातुओं में बिल्कुल नहीं जानी चाहिए। सल्फार्सेनाल तथा ट्रिपार्सेमाइड के अतिरिक्त अन्य **यौगिकों के विलयन इधर-उधर परिसरीय धातुओं में जाने पर उग्र वेदना तथा धातुनाश एवं कोथ** (Tissue necrosis and sloughing) उत्पन्न करते हैं। आर्सेनिक चिकित्साक्रम में विषाक्तता उत्पन्न होने में निम्न कारण विशेष रूप से सहायक होते हैं—(१) यदि यौगिक स्वभावतः अधिक विषैला है; (२) प्रयोग सम्बन्धी असावधानी (Errors in technique)

तथा (३) यदि रोगी में आर्सेनिक के प्रति अत्यधिक संवेदनशीलता (Susceptibility) है। इसके निवारण के लिए रोगी की पहले अच्छी तरह परीक्षा करले कि कोई आशयिक विकृति (Visceral disease) तो नहीं है, दूसरे औषधिका चुनाव सोच-विचारकर करें तथा प्रयोग के समय काफी सावधानी बरतनी चाहिए और चिकित्सा के कोर्स में विषाक्त प्रभावों के प्रति सतर्क रहे।

आर्सेनिक के प्रयोग में विषाक्त लक्षण कभी-कभी इंजेक्शन के साथ-साथ तत्काल लक्षित होते हैं (Immediate reactions) कभी कुछ घंटों के बाद (Early toxic symptoms or later manifestations) प्रगट होते हैं। कभी-कभी ये घातक उपद्रव कुछ दिनों के बाद (Severe late reactions) भी प्रगट होते हैं।

(१) तात्कालिक उपद्रव—ये उपद्रव इन्जेक्शन के तत्कालबाद कुछ मिनटों में ही प्रगट होते हैं। ऐसी स्थिति में वास्तव में स्तब्धता के (Shock) लक्षण प्रगट होते हैं। इनको नाइट्रिट्वायड-प्रतिक्रिया (Nitritoid Reactions) कहते हैं। और प्रायः रोगियों में अधिक होता है, जिनमें शरीर में कहीं यक्ष्मा दूषितक्षेत्र (Tubercular lesion) होता है, या यदि औषधीय सॉल्यूशन की मात्रा अधिक होती है। यथा साल्वर्सन के इन्जेक्शन में। उक्त प्रतिक्रिया सम्भवतः रक्तगत प्रोटीन में कुछ परिवर्तन हो जाने के कारण, जिससे ऊर्णीभवन एवं पुंजीकरण (Flocculation and agglutination) का उपद्रव होता है; अथवा फिरंगचक्राणुओं के नष्ट होने पर उनके शरीर से कोई विषैले पदार्थ के निकलने से अथवा हिस्टामीन की भाँति कोई तत्व रक्त में स्वतंत्र होने के कारण होता है। ऑक्सोफेनार्सीन तथा ट्रिपार्सेमाइड के प्रयोग से इस प्रकार का उपद्रव अपेक्षाकृत कम होता है।

(२) कभी-कभी विषाक्तता के उपद्रव कुछ घंटों के बाद प्रगट होते हैं (*Later manifestations*)—ज्वर हो आना, ठण्ढ लगना, शिरःशूल, वमन तथा सम्पूर्ण शरीर में दर्द का मालूम होना, मूत्र की परीक्षा करने पर निर्मोक (Cast) तथा अल्ब्युमिन की उपस्थिति पाई जाती है। प्रायः ये उपद्रव चिकित्सा बन्द करने से अपने आप लुप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त त्वचा पर पित्ती उठना तथा लाल-लाल चकत्तों का निकलना (Urticarial and erythematous eruptions) या कभी-कभी त्वचाशोथ (Exfoliative dermatitis) आदि उपद्रव भी होते हैं। त्वचागत उपद्रव उन रोगियों में अधिक होता है जिनमें पहले से कोई त्वचा-विकृति हो या शरीर में अन्यत्र कहीं दूषितक्षेत्र (Septic focus) हो। कभी-कभी फिरंग चक्राणुओं के शरीर से ऐसे पदार्थ निकलते हैं, जिससे रोगी के शरीर में वर्तमान विभिन्न फिरंगजन्य विकृतियों एवं लक्षणों में सहसा उग्रता (Jarisch Herx-heimer reaction) उत्पन्न हो जाती है। फिरंग की तृतीयावस्था में ऐसी स्थिति उत्पन्न होने से रोगी को आक्षेप या प्रलाप का उपद्रव हो जाता है। ऐसी स्थिति में चिकित्सा बन्द कर देनी चाहिए।

(३) कभी-कभी कुछ दिनों बाद उक्त उपद्रवों के अतिरिक्त कतिपय अन्य घातक लक्षण प्रगट होते हैं, जो विशेषतः मस्तिष्कविकृतिजन्य या यकृत विकार के कारण होते हैं। आर्सेनिक विषाक्तताजन्य मस्तिष्कीय लक्षणों (Arsenical encephalopathy) में प्रधानतः शिरःशूल, वमन, श्वासकृच्छ्रता, अपस्मार की भाँति आक्षेप, मूत्रघात तथा बेहोशी संन्यास और अन्तः मृत्यु तक हो जाती है। कभी-कभी मस्तिष्क में रक्तस्राव (Haemorohagie encephalopathy) भी होती है। ट्रिपार्सेमाइड के चिकित्साक्रम में १०% रोगियों में दृष्टिनाड़ीघात (Optic atrophy) का उपद्रव भी होता है।

यकृत एवं रक्तगत विकृतियों में कामला (Jaaudice) यकृत का तीव्र पीतक्षय (Acute yellow atrophy of the liver), अपचयिक रक्ताल्पता (Aplastic anaemia), पर्प्युरा (Purpura haemorshagica), अकणिक कायाणूत्कर्ष आदि उपद्रव उत्पन्न घातक स्वरूप धारण कर लेते हैं।

चिकित्सा—नाइट्रिट्वायड-प्रतिक्रियाजन्य उपद्रवों के निवारण के लिए अट्रोपीन सल्फ० एवं एड्रिनेलीन क्लोराइड उपयुक्त औषधियाँ हैं। एतदर्थ यदि आर्सेनिक के इन्जेक्शन के पूर्व $\frac{1}{100}$ ग्रेन अट्रोपीन सल्फ० का इंजेक्शन कर दिया जाय तो इन उपद्रवों की आशंका नहीं रहती। उपद्रव प्रगट हो जाने पर $\frac{1}{2}$ सी० सी० एड्रिनेलीन का अधस्त्वक् इन्जेक्शन दे देने से उनका निवारण हो जाता है। वमन आदि के निवारण के लिए इन्जेक्शन के २–३ घंटे पूर्व एवं पश्चात् खाने को न दें। विषाक्तता के लक्षण प्रगट होने पर पहली बात यह है, कि चिकित्साक्रम बिल्कुल बन्द कर देना चाहिए "BAL" के प्रयोग से प्रायः सभी विषाक्तताजन्य लक्षणों का निवारण हो जाता है।

आमयिक प्रयोग।

चिकित्सा में आर्सेनिक के ऑर्गैनिक यौगिकों का मुख्य उपयोग निम्न व्याधियों की विशिष्ट चिकित्सा के लिए किया जाता है:—(१) फिरंग (Syphilis), अमीबिक प्रवाहिका (Amoebiasis), तन्द्राज्वर अर्थात् तर्कुटीतनुता (Trypanosomiasis), मुखपाक (Vincent's angina), परंगी (Yaws), आवर्तकज्वर (Relapsing fever) तथा मूषकदंशज्वर (Rat bite fever)।

फिरंग—इन यौगिकों की क्रिया फिरंग के चक्राणुओं पर तत्काल होती है। अतएव फिरंग की प्रथमावस्था में पहले तात्कालिक प्रभाव के लिये इनका इंजेक्शन देना चाहिए। इसके बाद बिस्मथ का प्रयोग करना चाहिए। इसकी क्रिया धीरे-धीरे होती है, किन्तु चिरस्थायी होती है। इस प्रकार के चिकित्साक्रम से व्याधि का उन्मूलन होकर अग्रिम अवस्थाओं के उपद्रवों से रक्षा हो जाती है। फिरंग की द्वितीयावस्था में आर्सेनिक के इंजेक्शन से सभी त्वचागत एवं श्लैष्मिक कलाओं की विकृतियों का शमन होता है। तृतीयावस्था में आर्सेनिक के साथ-साथ गोंदार्बुदों (Gummata) के विलयन (Resolution) के लिए आयोडाइड्स का भी सेवन होना चाहिए। अब फिरंग के लिए विशिष्ट औषधि के रूप में पेनिसिलिन का प्रयोग किया जाने लगा है। व्यवहार की दृष्टि से ऑक्सोफेनारसीन अन्य यौगिकों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त तथा निरापद है। यह अपेक्षाकृत कम विषैला होता है और शरीर से इसका निस्सरण भी जल्दी से होता है। अतएव संचायी प्रभाव की सम्भावना अपेक्षाकृत कम होती है। इसके प्रयोग में 'नाइट्रिट्वायड प्रतिक्रिया' की आशंका अन्य यौगिकों की अपेक्षा बहुत कम होती है। पेशीगत मार्ग द्वारा प्रयुक्त करने के लिए 'सल्फार्सेनॉल अधिक उपयुक्त है, क्योंकि इससे स्थानिक वेदना आदि उपद्रव नहीं होते। अतएव बच्चों में प्रयोग के लिए यह यौगिक अच्छा है।

आर्सेनिक यौगिकों के चिकित्सा का सिद्धान्त यह है, कि सहसा अधिक मात्रा में औषधि प्रयुक्त करके थोड़े समय के लिए रक्त में इसके संकेन्द्रण को बढ़ाने की अपेक्षा रक्त में अल्प मात्रा में अधिक समय तक इसका संकेन्द्रण बनाये रखना ज्यादा अच्छा है। अतएव मात्रा कम करके अधिक काल पर्यन्त इंजेक्शन्स देते रहना चाहिए। मस्तिष्क-सुषुम्नागत फिरंग (Cerebrospinal syphilis) में नियोसाल्वर्सन एवं बिस्मथ का मिश्रित चिकित्साक्रम देना चाहिए।

कभी-कभी आर्सेनिक के इन्जेक्शन का प्रयोग फिरंग के नैदानिकीय प्रयोजन के लिए भी दिया जाता है। इसके लिए ०·३ ग्राम या ०·४५ ग्राम का एक इंजेक्शन (Single injection) देकर लगातार ७ दिन तक रक्त की परीक्षा "वासरमैन W. R." के लिए करना चाहिए। दूसरा तरीका यह है कि ५ दिन के अन्तर से आर्सेनिक के २ इंजेक्शन देकर, दूसरे इंजेक्शन के १४–१५ दिन बाद "वासरमैन प्रतिक्रिया" का परीक्षा करें।

प्रयोग-विधि—साल्वर्सन तथा नियोसाल्वर्सन का प्रयोग सदैव शिरागत इंजेक्शन द्वारा ही करना चाहिए। 'सल्फार्सेनाल' का प्रयोग पेशीमार्ग द्वारा कर सकते हैं। फिरंग के चिकित्साक्रम में सप्ताह में १ बार करके ६ इन्जेक्शन्स देने के बाद बिस्मथ के इन्जेक्शन देने चाहिए। जैसा कि अभी वर्णन किया गया है कि फिरंग की प्रथमा एवं द्वितीया अवस्था में जब ऑर्गानिक आर्सनिक यौगिक देना हो, ऑक्सोफेनार्सीन सबसे अच्छा है। इसकी ४० से ६० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार करके १० सप्ताह तक इन्जेक्शन देना चाहिए। लेकिन उक्त मात्रा प्रयुक्त करने के पहले निश्चय कर लेना चाहिए कि रोगी को आर्सेनिक अच्छी तरह सह्य है या नहीं। इसलिए कम मात्राओं से प्रारम्भ करना अधिक श्रेयस्कर है। यथा युवा पुरुष में ४० मि० ग्रा०, स्त्रियों में अपेक्षाकृत और भी कम मात्रा (३० मि० ग्रा०) और बच्चों की प्रारम्भिक मात्रा ०·५ (½) मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से निश्चित करें। १० इन्जेक्शन देने के बाद ६–८ सप्ताह का अन्तर देकर तब आगे चिकित्साक्रम चालू करें। आर्सेनिक के साथ-साथ पेशीमार्ग द्वारा बिस्मथ का भी प्रयोग होना चाहिए। ०·१ से ०·२ ग्राम सप्ताह में एक या आवश्यकतानुसार दो बार दें।

प्रयोग-निषेध (Contra-indications)—फिरंग में आर्सेनिक का चिकित्साक्रम देना हो तो निम्न अवस्थाओं में इसका प्रयोग वर्जित है:—(१) मधुमेह एवं वृक्कशोफ के रोगियों में; (२) जिनमें आर्सेनिक के प्रति वैयक्तिक स्वभाव के कारण असह्यता (Idiosyncrasy) हो; (३) इन्जेक्शन्स भोजन के बाद या आमाशय भरा होने पर या जब रक्तचाप बढ़ा हो उस समय न दें; (४) यकृद् विकार या हृद्रोग में इसका प्रयोग नहीं होना चाहिए। (५) नेत्र नाड़ी (Optic nerve) रेटिना (Retina) या त्वचा विकार के रोगियों में भी काफी सतर्कता की जरूरत है; (६) यक्ष्मा आदि फुफ्फुसीय रोग में भी इसका व्यवहार न करें।

फिरंग के अतिरिक्त आर्सेनिक मानवशरीरगत ट्रिपेनोसोमा-उपसर्ग (Human Trypanosomiasis) में बहुत उपयोगी होता है। ट्रिपार्सेमाइड इसके लिए सबसे उपयुक्त है। इसके लिए १ से ३ ग्रेन मात्रा १०% बलके सॉल्यूशन के रूप में सप्ताह में एक बार पेशीगत या शिरागत मार्ग द्वारा दिया जाता है। बच्चों में मात्रा १ ग्रेन (६० मि० ग्रा०) प्रति किलोग्राम शरीरभार के लिए तथा युवकों में यही मात्रा ⅔ ग्रेन (४० मि० ग्रा०) प्रति किलोग्राम शरीरभार के हिसाब से होनी चाहिए। पूरे चिकित्साक्रम में २४ ग्राम तक औषधि की आवश्यकता होती है। रोग की द्वितीयावस्था में, जब नाड़ी संस्थान विकृत होता है, मात्रा अपेक्षाकृत अधिक (बालक, नवयुवक, युवक के लिए क्रमशः १½ ग्रेन, १⅙ ग्रेन एवं १ ग्रेन प्रति किलोग्राम शरीर भार के लिए) देनी पड़ती है।

परंगी रोग (Yaws) एवं पुनरावर्तक ज्वर (Relapsing fever) में भी आर्सेनिक के यौगिक सफल सिद्ध होते हैं। परंगी में नियोसाल्वर्सन ०·४ से ०·६ ग्राम या ऑक्सोफेनार्सीन ४० से ६० मि० ग्रा० शिरामार्ग द्वारा सप्ताह में १–२ बार करके ४ से ६ सप्ताह तक देने से रोग

निमू॑ल हो जाता है। पुनरावर्तक ज्वर में ज्वर के प्रारम्भ में नियोसाल्वर्सन ०·६ ग्राम या ऑक्सो-फेनार्सीन ६० मि० ग्रा० के शिरागत १ इन्जेक्शन मात्र से काम चल जाता है। कदाचित ही १–२ इंजेक्शन और लगाने पड़ते हैं। जब ज्वर उतर रहा हो उस अवस्था में औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

उष्णकटिवन्धीय उषसिप्रियता या इयोसिनोफिलिआ (Tropical eosinophilia)—अनुभवों द्वारा इसमें भी आर्सेनिक का प्रयोग लक्षणों के शमन में बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके लिए एसेटिलार्सन (Acetylarsan) के प्रयोग का बहुत प्रचलन है। इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा सप्ताह में २ बार करके ६ से ८ सप्ताह तक किया जाता है। मुखद्वारा सेवन करने के लिए एसिटार्सोल या कारबारसोन दे सकते हैं। ४ ग्रेन की मात्रा प्रतिदिन २ बार करके १० दिन देने से काम चल जाता है। अथवा नियोसाल्वर्सन ०·३ से ०·४ ग्राम या ऑक्सोफेनार्सीन ३० से ४० मि० ग्रा० शिरागतमार्ग द्वारा सप्ताह में १ बार करके ६ सप्ताह तक भी दे सकते हैं।

अमीबिक-उपसर्ग में मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आर्सेनिक के आर्गेनिक यौगिक विशिष्ट-रूप से लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। इसका वर्णन आगे किया जायगा।

विंसेंट एन्जाइना (Vincent angina) में शिरामार्ग द्वारा या ५ से १०% बल के साल्यूशन का स्थानिक प्रयोग लाभप्रद है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ नियोआर्सफेनामिनी Injectio Neoarsphenaminae (Inj. Neoarsphenamin.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव नियोआर्सफेनामीन Injection of Neoarsphenamine—अं०। नियोसाल्वर्सन का इन्जेक्शन—हिं०। यह नियोसाल्वर्सन का इन्जेक्शन के लिए उपयुक्त परिस्रुत जल (Water for Injection) में बनाया हुआ विलयन या सॉल्यूशन होता है, जो प्रयोग के समय ताजा बनाया जाता है। भिन्न-भिन्न मात्राओं के बन्द एम्पूल्स आते हैं। जब इन्जेक्शन देना हो, इसका मुंह तोड़कर उसमें अभीष्ट मात्रा में परिस्रुतजल पिचकारी द्वारा प्रविष्ट कर विलयन बनाया जाता है।

मात्रा—०·१५ से ०·६ ग्राम (२½ से १० ग्रेन) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

२—इन्जेक्शिओ सल्फार्सफेनामिनी Injectio Sulpharsphenaminae (Inj. Sulpharsphenamin.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सल्फार्सफेनामीन—अं०; सल्फार्सेनॉल का इन्जेक्शन या सुई—हिं०।

वक्तव्य—इसका निर्माण एवं प्रयोग भी ताजा ही करना चाहिए जैसा नियोसाल्वर्सन के इन्जेक्शन के बारे में कहा गया है। सॉल्यूशन बनाने के ५ मिनट के अन्दर ही प्रयुक्त कर देना चाहिए अन्यथा इसके विकृत होने तथा विषाक्तता पैदा करने की आशंका रहती है।

मात्रा—०·२ से ०·६ ग्राम (२½ से १० ग्रेन) सल्फार्सेनाल अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

३—इन्जेक्शिओ ट्रिपार्समाइडाइ Injectio Tryparsamidi (Inj. Tryparsamid.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव ट्रिपार्समाइड—अं०। मात्रा—१५ से ३० ग्रेन ट्रिपार्समाइड अधस्त्वक्, पेशीगत या शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

(१) ट्राइवेलेन्ट यौगिक ।

आर्सेनोबेंजॉल Arsenobenzol; साल्वर्सन; आर्सफेनामिना; 606 ।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह Dioxy-diaminoarseno-benzene Dihydrochloride होता है। इसका हल्का पीले रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। खुला रहने से इसमें आर्द्रता सोखने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) होती है। हवा में खुला रहने से इसका चूर्ण या जलीय विलयन जारित (Oxidised) होकर विकृत हो जाता है। ऐसी स्थिति में यह विषैला हो जाता है। अतएव प्रयोग के योग्य नहीं रहता। विलेयता—जल, अल्कोहल तथा ग्लिसरीन में घुलनशील होता है। वक्तव्य—इसमें कम से कम ३०% आर्सेनिक होता है। मात्रा—०·३ ग्राम (५ ग्रेन) शिरामार्ग द्वारा ।

आर्सफेनामिना आर्जेन्टिका Arsphenamina Argentica—ले०; सिल्वर आर्सफेनामीन—अं० ।

पर्याय—सिल्वर साल्वर्सन Silver Salvarsan ।

वर्णन एवं उपयोग—इसमें १५ से २१ प्रतिशत तक आर्सेनिक तथा १२ से १३ प्रतिशत रजत या चाँदी (सिल्वर) होता है। क्रियाशीलता की दृष्टि से ०·१ ग्राम सिल्वर साल्वर्सन बराबर होता है ०·२ ग्राम आर्सफेनामीन तथा ०·३ ग्राम नियोआर्सफेनामीन (नियोसाल्वर्सन के)। मात्रा—०·१ से ०·६ ग्राम (१½ से १० ग्रेन) १ प्रतिशत बल के सॉल्यूशन के रूप में शिरागत सूचिकाभरण द्वारा। इन्जेक्शन कम से कम ४ दिन के अन्तर से देना चाहिए। केन्द्रिकनाडीसंस्थानगत फिरंग (Syphilis of the Central Nevous System) में विशेष उपयोगी होता है।

डाइक्लोरोफेनार्सिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Dichlorophenarsinae Hydrochloridum—ले० ।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 3—amino—4—hydroxyphenyl-dichloroarsenine hydrochloride होता है। इसमें २५ से २७ प्रतिशत तक आर्सेनिक (Trivalent arsenic) होता है। यह सफेद रंग के अथवा रंगहीन चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में घुल जाता है। मात्रा—४५ से ६८ मि० ग्रा० (¾ से १ $\frac{1}{20}$ ग्रेन) शिरामार्ग द्वारा। प्रयोग—इसके गुणकर्म तथा प्रयोग ऑक्सोफेनार्सीन की भाँति है।

मेलार्सेन ऑक्साइड Melarsen Oxide ।

वर्णन—यह सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में तो केवल थोड़ा-थोड़ा घुलता है, किन्तु प्रोपेलीन अल्कोहल् में घुलनशील होता है। मात्रा—३ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के लिए उपयुक्त मात्रा प्रतिदिन मुख द्वारा १ से २ सप्ताह तक। शिरागतमार्ग द्वारा प्रयुक्त करने के लिए मात्रा १ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के लिए लेनी चाहिए। प्रयोग—तन्द्राज्वर (Trypanosomiasis) में विशेषतः जिन रोगियों में ट्रिपार्समाइड से लाभ न हो रहा हो, यह विशेष उपयोगी है। मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर भी औषधि अच्छी तरह शोषित होती तथा उपद्रव भी न होते।

ब्युटार्सन (Butarsen) या पारा-आर्सेनोफेनिल ब्युट्रिक एसिड। यह भी तन्द्राज्वर में उपयोगी है।

मात्रा—०·५ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर भार के लिए। औषधि प्रतिदिन या १ दिन के अन्तर से पेशीगत या शिरागत सूचिकाभरण द्वारा दी जाती है। १२–१४ इन्जेक्शन्स दिये जाते हैं।

(ब) पेंटावलेंट नॉन-ऑफिशल योग।

सोडियाइ एमिनार्सोनास (Sodii Aminarsonas)।

पर्याय—सोआमिन Soamin; एटॉक्सिल Atoxyl; आर्सामिन Arsamin।

वर्णन—यह सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में साधारण नमकीन होता है। इसमें प्रायः २४ से २५·६ प्रतिशत तक आर्सेनिक होता है। विलेयता—जल में घुल जाता है।

प्रयोग—सोआमिन का अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा प्रयोग तमक श्वास (Bronchial Asthma) में बहुत किया जाता है, विशेषतः जिन रोगियों में इयोसिनोफिलिया (Eosinophilia) का उपद्रव हो। इसके लिए १ ग्रेन से मात्रा क्रमशः बढ़ाकर ३ ग्रेन तक लायी जाती है। सप्ताह में २ बार इसका अधस्त्वक् इंजेक्शन करते हैं। बाजार में इसकी टिकिया आती है। उसको चम्मच में थोड़ा परिस्रुतजल में रखकर पाँच मिनट तक उबालते हैं। इससे सोआमिन घुल भी जाती है, और सॉल्यूशन विशोधित (Sterilised) भी हो जाता है। तमक श्वास के अतिरिक्त यह निद्राज्वर (Trypanosomiasis) में भी उपयोगी पाया जाता है। इसके लिए मात्रा ३ ग्रेन से प्रारम्भ कर ७ ग्रेन तक ले जाते हैं। औषधि का प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा १०% बल के विलयन के रूप में किया जाता है। इंजेक्शन्स ५–५ या ७–७ दिन के अन्तर से दिये जाते हैं। एक कोर्स में कुल १०० ग्रेन औषधि दी जाती है। आवश्यकता पड़ने पर १ मास के अन्तर से दूसरा कोर्स भी दे सकते हैं। निद्राज्वर की प्रारम्भिक अवस्थाओं में ही उपयोगी होती है।

इन व्याधियों के अतिरिक्त केकोडिलेट्स के साथ इनका प्रयोग अन्य व्याधियों की चिकित्सा में भी किया जाता है, यथा—फिरंगीखंजता (Locomotor ataxia), पुनरावर्तकज्वर (Relapsing fever), चिरकालीन त्वचा रोग आदि।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन या ६० से २०० मि० ग्रा०, अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा (Hypodermically) या पेशीगत गम्भीर सूचिकाभरण द्वारा। वक्तव्य—इन्जेक्शन का सॉल्यूशन विशोधितजल (Sterile water) में बनाना चाहिए। आर्सेनिक का यौगिक होने के कारण अधिक मात्रा में या अधिक काल पर्यन्त औषधि का प्रयोग करना हो तो विषाक्तता को भी ध्यान में रखना चाहिए।

सोडियाइ केकोडिलास Sodii Cacodylas—ले०; सोडियम् केकोडिलेट Sodium Cacodylate—अं०।

पर्याय—सोडियम् डाइमेथिल आर्सोनेट Sodium Dimethylarsonate—रासायनिक नाम।

वर्णन—सफेद रंग के गंधहीन तथा पसीजनेवाले त्रिपार्श्विक क्रिस्टल्स (Prisms) होते हैं या दानेदार चूर्ण के रूप में होता है।

प्रयोग—उन सभी अवस्थाओं में इसका प्रयोग किया जा सकता है, जहाँ आर्सेनिक का निर्देश हो। चिरकालज त्वचा रोगों (Chronic skin affections) में विशेष रूप से उपयोगी होता है।

सेवनविधि तथा मात्रा—१ से २ ग्रेन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। अधस्त्वक् मार्ग द्वारा (Hypodermically) ¼ से १ ग्रेन (१६ से ६० मि० ग्रा०)। मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ाकर २ ग्रेन तक लायी जाती है। इसका प्रयोग इकट्ठा १ मात्रा (Maximum single dose) में भी किया जाता है। मुखद्वारा या गुदमार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर वृक्कशोथ पैदा कर सकता है, जिससे पेशाब थोड़ा-थोड़ा आने लगता है।

एसेटिलार्सन Acetylarsan। पर्याय—डाइएथिलामीन एसेटार्सोल Diethylamine Acetarsol।

वर्णन तथा प्रयोग—रासायनिक दृष्टि से यह diethylamine 3—actyl—amino-4—hydroxyphenyl arsonate होता है, जो सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता-जल में घुल जाता है। प्रयोग—एसेटिलार्सन एक पेंटावलेंट आर्सेनिक कम्पाउण्ड है। सोमामिन की अपेक्षा कम विषैला होता है तथा शरीर से इसका निस्सरण भी तेजी से होता है। बालकों तथा स्त्रियों के लिए बहुत उपयुक्त है। बाजार में इंजेक्शन के लिए इसके सॉल्यूशन के एम्पूल्स आते हैं। बालकों (Child dose) तथा युवकों (Adult) के लिए पृथक्-पृथक् एम्पूल्स आते हैं। इसका प्रयोग फिरंग (Syphilis), परंगी (Yaws) तथा उष्णकटिबन्धीय इओसिनोफिलिया (Tropical eosinophilia) में बहुत सफल तथा उपयुक्त होता है।

मात्रा—१ से ३ सी० सी० सप्ताह में २ बार पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। युवकों के लिए जो एम्पूल्स आते हैं, उनमें २३·६% बल का सॉल्यूशन तथा बालकों के लिए ९·४% बल का सॉल्यूशन होता है।

नियोक्रिल (Neocryl)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह Sodium Succinanilomethylamide—P—arsonate होता है। सफेद रंग तथा क्रिस्टलाइन स्वरूप का होता है जो जल में फौरन घुल जाता है। मात्रा—१ से ३ ग्राम (१५ से ४५ ग्रेन)। विशोधित जल में बनाये हुए १५ से २०% बल का विलयन शिरामार्ग द्वारा सप्ताह में १ बार दिया जाता है।

प्रयोग—नियोक्रिल का प्रयोग निद्राज्वर (Trypanosomiasis) तथा फिरंग (Syphilis) दोनों ही व्याधियों में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। विशेषतः निद्राज्वर की प्रथमावस्था में इसके सेवन से व्याधि का उन्मूलन हो जाता है, और साथ ही ट्रिपार्समाइड की अपेक्षा यह कम विषैला होता है। फिरंग में तो यह उसकी तीनों ही अवस्थाओं में उपयोगी है। नाड़ी फिरंग (Neuro-Syphillis) में भी यह बहुत लाभकारी सिद्ध हुआ है। फिरंग की प्रथमावस्था में नियोक्रिल तथा बिस्मथ का सम्मिश्रित चिकित्सा क्रम विशेष उपयुक्त होता है।

एल्डार्सन (Aldarsone)। पर्याय—फेनार्सोन सल्फाक्सिलेट Sulfoxylate।

रासायनिक दृष्टि से यह Sodium 3-amino--4—hydroxyphenyl arsonate--N—methanal Sulfoxylate होता है, और सफेद रंग के गंधहीन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है जो जल में घुल जाता है।

मात्रा। (१) फिरंग के लिए—१ ग्राम (१५ ग्रेन), १० सी० सी० विशोधित परिस्रुत जल में सॉल्यूशन बनाकर सप्ताह में १ बार सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है। इस प्रकार के पूरे चिकित्सा-क्रम में ४०-५० इंजेक्शन्स देने पड़ते हैं। (२) ट्राइकोमोनस कीटाणु के उपसर्ग से होनेवाले योनिशोथ (Trichomonal Vaginitis)—में इसका स्थानिक प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ चूर्ण को योनि में प्रधमन (Insufflation) करते हैं अथवा इसकी सपॉजिटरी प्रयुक्त करते हैं।

प्रयोग—एल्डार्सन आर्सेनिक का पेंटावलेंट यौगिक है, और नाड़ी-फिरंग तथा ट्राइकोमोनस के उपसर्ग से होनेवाले योनिशोथ में बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है।

आर्सेनिक के व्यवसायिक योग :—

(१) स्टोवार्सोल Stovarsol (May & Baker)—$\frac{1}{4}$ ग्रेन या $\frac{1}{2}$ ग्रेन तथा ४ ग्रेन की टॅबलेट्स् (Tablets) या टिकिया आती हैं। ४ ग्रेन की टिकिया भोजनोत्तर दिन में २ बार ४ दिन तक।

(२) एसेटिलार्सन Acetylarsan (May & Baker)—इसकी (१) लड़कों के लिए (Child dose) २ सी० सी० की एम्पूल्स तथा (२) युवा के लिए (Adult dose) ३ सी० सी० की एम्पूल्स आती हैं।

(३) एसेटार्सोल वेजाइनल कम्पाउण्ड Acetarsol Vaginal Compound या S. V. C. (M. & B.)—इसकी टिकिया तथा पाउडर आता है। श्वेतप्रदर तथ ट्राइकोमोनस वेजिनालिस के उपसर्ग से उत्पन्न योनिप्रदाह (Vaginals) में टिकिया रखी जाती हैं या चूर्ण का प्रधमन (Insufflation) किया जाता है।

बिस्मथ के यौगिक।

बिस्मथम् प्रेसिपिटेटम् Bismuthum Praecipitatum (Bism. Praecip.), I. P., B. P.—लै०; प्रेसिपिटेटेड बिस्मथ Precipitated Bismuth —अं०।

रासायनिक संकेत : Bi.

प्राप्ति-साधन—यह बिस्मथ ट्राइक्लोराइड, हाइड्रोक्लोरिक एसिड तथा हाइपोफास्फोरस एसिड की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९८$\frac{1}{2}$ प्रतिशत बिस्मथ धातु (Metallic bismuth) होता है।

वर्णन—मटमैले खाकस्तरी रंग का चूर्ण होता है, जो वैसे पानी में घुलता तो नहीं (Insoluble) लेकिन आसानी से मिल जाता (Easily diffusible) है।

मात्रा—०.१ से ०.२ ग्राम (१$\frac{1}{2}$ से ३ ग्रेन) या १०० से २०० मि० ग्रा० पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

बिस्मथाइ ऑक्सीक्लोराइडम् Bismuthi Oxychloridum (Bism. Oxychlor.), I. P., B. P.—लै०; बिस्मथ ऑक्सीक्लोराइड Bismuth Oxychloride, बिस्मथ सबक्लोराइड Bismuth Subchloride—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह बिस्मथ नाइट्रेट सॉल्यूशन या हाइड्रोक्लोरिक एसिड की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ७९.० से ८१.० प्रतिशत तक बिस्मथ (Bi.) तथा कम से कम १२.५ प्रतिशत क्लोरीन (Cl.) होता है।

वर्णन—यह सफेद या मटमैले सफेद रंग के विरूपिक (amorphous) या सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। हवा में खुला रहने पर भी स्थायी (Stable in air) होता है, अर्थात् विकृत नहीं होता। विलेयता—जल में तो यह नहीं घुलता, किन्तु डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड में घुल जाता है।

मात्रा—०·६ से २ ग्राम (१० से ३० ग्रेन)। पेशीगत सूचिकाभरण ०·१ से ०·२ ग्राम (१½ से ३ ग्रेन) या १०० से २०० मि० ग्रा०।

विस्मथाइ कार्बोनास Bismuthi Carbonas (Bism. Carb.) I. P., B. P.—ले०; **विस्मथ कार्बोनेट Bismuth Carbonate**—अं०।

पर्याय—विस्मथ ऑक्सीकार्बोनेट **Bismuth Oxycarbonate**; विस्मथ सब कार्बोनेट **Bismuth Subcarbonate**—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह विस्मथ नाइट्रेट तथा एक सॉल्युबुल कार्बोनेट की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह सफेद या क्रीम रंग लिए सफेद वर्ण का चूर्ण होता है जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। हवा में खुला रहने पर भी विकृत नहीं होता। विलेयता—जल तथा क्लीव प्रतिक्रिया के सेन्द्रिय विलायक द्रव्यों (Neutral organic Solvents) में तो नहीं घुलता किन्तु नाइट्रिक एसिड तथा हाइड्रोक्लोरिक एसिड में घुल जाता है और फेन या झाग सा उठता (Soluble with effervescence) है।

मात्रा—०·६ से २ ग्राम (१० से ३० ग्रेन)।

विस्मथाई सेलिसिलास Bismuthi Salicylas (Bism. Salicyl.), B. P—ले०; **विस्मथ सेलिसिलेट**, विस्मथ सबसेलिसिलेट—अं०।

वर्णन—यह सफेद या मटमैले सफेद रंग का सूक्ष्म क्रिस्टलाइन (Microcrystalline) चूर्ण होता है, जो गंधहीन, स्वादहीन तथा हवा में खुला रहने पर भी स्थायी होता है। विलेयता—जल में नहीं घुलता।

मात्रा—०·६ से २ ग्राम (१० से ३० ग्रेन)।

विस्मथाइ एट सोडियाइ टारट्रास Bismuthi et Sodii Tartras (Bism. et Sod. Tart.) I. P., B. P.—ले०; **विस्मथ सोडियम् टारट्रेट, सोडियम् विस्मथिलटारट्रेट Sodium Bismuthyltartrate, सोविटा Sobita**—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह विस्मथ हाइड्रॉक्साइड तथा सोडियम् एसिड टारट्रेट की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ३५·० प्रतिशत से ४२·० प्रतिशत तक विस्मथ (Bi.) होता है।

वर्णन—सफेद रंग के चूर्ण के रूप में अथवा हल्के पीले पपड़ीदार टुकड़ों (Scales) के रूप में होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर १ भाग से कम जल में घुल जाता है।

मात्रा—१ से ३ ग्रेन (६० से २०० मि० ग्रा०) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

विस्मथाई सबगैलास Bismuthi Subgallas (Bism. Subgall.), I. P., B. P.—ले०; **विस्मथ सबगैलेट Bismuth Subgallate**—अं०।

पर्याय—बेसिक बिस्मथ गैलेट Basic Bismuth Gallate; बिस्मथ ऑक्सीगैलेट Bismuth Oxygallate; डरमेटॉल Dermatol।

प्राप्ति-साधन—यह बिस्मथहाइड्रॉक्साइड (Freshly precipitated bismuth hydroxide) तथा गैलिक एसिड की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह नीबू के समान पीले रंग का चूर्ण होता है जो गंधहीन, स्वादहीन तथा हवा में स्थायी होता है। विलेयता—जल, सॉलवेंट ईथर तथा डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् में तो नहीं घुलता; किन्तु गरम खनिज अम्लों (Hot mineral acids) में फौरन घुल जाता है, किन्तु विलयन में यह वियोजित हो जाता है। अल्कली हाइड्रोक्साइड्स के साथ बनाया हुआ इसका जलीय विलयन स्वच्छ पीले रंग का होता है जो बाद में गाढ़े लाल रंग का हो जाता है।

गुण-कर्म।

बाह्य—अक्षत त्वचा पर विस्मथ-साल्ट्स की कोई क्रिया नहीं होती किन्तु व्रणों (Wounds) पर लगाने से ये स्राव को सुखाते तथा व्रणित क्षेत्र पर रक्षात्मक आवरण (Protective covering) करके रोपण (Healing) में सहायक होते हैं। छिली हुई त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से संशामक, साधारण ग्राही तथा जीवाणुवृद्धिरोधक (एन्टिसेप्टिक) प्रभाव करते हैं।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र-प्रणाली—मुख द्वारा विस्मथ लवणों के सेवन से जिह्वा काली पड़ जाती है तथा इनसे मुँह में धात्वीय स्वाद का अनुभव नहीं होता। आमाशय की श्लैष्मिक कला पर **संशामक** (Sedative) प्रभाव करते हैं, जिससे ये वमनशामक (Antiemetic) तथा ग्राही क्रिया करते हैं। यही क्रिया आँतों पर भी होती है, जिससे ये **मलविबन्ध** (Constipation) उत्पन्न करते तथा आँतों पर **साधारण एन्टिसेप्टिक** क्रिया भी होती है। इनका उत्सर्ग मल के साथ सल्फाइड के रूप में होता है, जिससे मल का रंग सीस के प्रयोग की भाँति काला पड़ जाता है।

शोषण तथा शरीरगत रूपान्तर एवं समवर्त—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर विस्मथ लवणों का शोषण नहीं होता, अपितु आमाशय में ऑक्सीक्लोराइड तथा आँतों में सल्फाइड के रूप में परिवर्तित होकर मल के साथ उत्सर्गित हो जाते हैं। यही कारण है कि क्ष-किरण परीक्षण (X'ray examination) के लिए अधिक मात्राओं में भी प्रयुक्त होने पर विषाक्तता के लक्षण नहीं प्रगट होते। इसलिए सामान्यकायिक **या सार्वदैहिक प्रभाव** (Systematic effect) के लिए **इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण के द्वारा करना पड़ता है**। हालाँकि पेशीगत सूचिकाभरण किये जाने पर भी रक्त प्रवाह में इसका शोषण मन्द गति से होता है। इस प्रकार प्रयुक्त विस्मथ का शोषण कई बातों पर निर्भर करता है, यथा **इन्जेक्शन का स्थल** एवं स्थान, प्रयुक्त औषधि की **मात्रा** तथा **प्रकार**। विस्मथ के **अविलेय यौगिक** (Insoluble Compounds) इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त किये जाने पर शारीरिक धातुगत प्रोटीन के सम्पर्क में आने पर **विलेय-यौगिकों** (Soluble Compounds) में रूपान्तरित हो जाते हैं; और इस प्रकार इनका शोषण सुलभ हो जाता है। इस प्रकार विस्मथ के अविलेय यौगिक "धातु विलेय tissue-soluble" होते हैं। इसके **जल-विलेय यौगिक** (Water-soluble Compounds) भी धातुओं (Tissues) के सम्पर्क में आने पर अविलेय यौगिकों की भाँति शोषित होते हैं। विस्मथ के **तैलीय-निलम्बन** (Oily suspensions) धातु विलेय न होने

के कारण बड़ी मुश्किल से तथा देर से शोषित होते हैं। जल-विलेय यौगिकों के तैलीय-निलम्बन, अविलेय-यौगिकों की अपेक्षा अवश्य क्षिप्रतर गति से शोषित होते हैं।

शोषणोपरान्त यह शरीर के सभी धातुओं एवं द्रवों में पाये जाते हैं। शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ और लगभग १०% भाग वृहदन्त्र (Large bowel) से उत्सर्गित होता है। अल्प मात्रा में यह आँसू, लालास्राव, स्तन्य में भी पाया गया है। अपरा के द्वारा यह गर्भ के रक्त संवाहन में भी पहुँच सकता है। विस्मथ लवणों में यकृत, वृक्क, प्लीहा तथा अस्थि मज्जा आदि में संचित होनेकी भी प्रवृत्ति पायी जाती है। अतएव इनके द्वारा विषाक्तता के लक्षण उत्पन्न होने की आशंका हो सकती है। रक्तगत अम्लोत्कर्ष (Acidosis) की स्थिति संचित धातु को स्थानान्तरित करने (Mobilisation) तथा वृक्कों द्वारा अधिकाधिक उत्सर्गित कराने में सहायक होता है।

विस्मथजन्य विषाक्त प्रभाव—सतर्क रहने पर पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर साधारणतः विषाक्तता की आशंका नहीं रहती। यद्यपि विस्मथ के कतिपय लवण जलविलेय होते हैं, परन्तु शिरामार्ग द्वारा इनका प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए। पेशी में इन्जेक्शन करने पर सूचिकाभरण के स्थल पर क्षोभ एवं दर्द होता है। इसके निवारण के लिए या तो पहले १% वल के प्रोकेन सॉल्यूशन का इन्जेक्शन करके तब विस्मथ का इन्जेक्शन देना चाहिए अथवा इन्जेक्शन करने के बाद हथेली से हल्के हाथ मर्दन करने से तथा बाद में बोरिक का सेंक करने से भी काम चल जाता है। तैलीय निलम्बनों द्वारा दर्द तथा चुनचुनाहट कम तो अवश्य होते हैं, परन्तु इसमें दोष यह होता है कि इसका शोषण मन्दगति से होने के कारण उस स्थान पर गिल्टी (Local induration) बनने की सम्भावना अधिक रहती है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, कि विस्मथ के लवणों में शारीरिक अंगों में सञ्चय की प्रवृत्ति (Cumulative tendency) पाई जाती है, अतएव निरन्तर अधिक काल तक इनका इन्जेक्शन देने से चिरकालज विषाक्तता (Chronic poisoning) की सम्भावना हो सकती है। इसके निवारण के लिए प्रतिसप्ताह एक से अधिक इंजेक्शन नहीं देना चाहिए। और एक बार के चिकित्सा-क्रम में १० इन्जेक्शन के बाद औषधि बन्द कर देना चाहिए। यदि अधिक मात्रा की जरूरत हो तो १ माह का विश्राम-काल देने के बाद ही पुनः इन्जेक्शन दें। इससे संचित विस्मथ धीरे-धीरे उत्सर्गित हो जायगा। किन्तु कभी-कभी इस प्रकार की सावधानी बरतने पर भी विषाक्तता के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में मुखपाक (Stomatitis), मसूढ़े में शोथ अर्थात् दन्तवेष्टपाक (Gingivitis), अतिसार तथा वृक्कशोथ (Nephritis) एवं कभी-कभी यकृत के विकृत होने पर कामला (Jaundice) भी लक्षित होता है। विषाक्तता होने पर श्वास दुर्गन्धित हो जाता है, यथा मसूढ़े पर नीली रेखा दिखाई देती है। यदि सतर्कता न की जाय तो त्वचा पर नाना प्रकार के विस्फोट (Skin rashes) तथा त्वचाशोथ (Exfoliative Dermatitis) भी होता है। क्ष-किरण परीक्षण के लिए कभी-कभी अधिक मात्रा में विस्मथ सबनाइट्रेट का प्रयोग करने पर नाइट्राइट-विषमयता हो जाती है।

चिकित्सा—विषाक्तता होने पर औषधि का सेवन फौरन बन्द कर देना चाहिए। डाइमर्केप्राल (Dimercarprol : BAL) इसका अगद या प्रतिविष (Anti dote) है। साथ मुखगत विकृतियों के लिए जीवाणुनाशक एवं संशामक घोलों का गरगरा या कुल्ली करानी चाहिए।

आमयिक प्रयोग।

बाह्य—स्थानिक संशामक, ग्राही एवं जीवाणुनाशक क्रिया के लिए **डस्टिंग पाउडर, लोशन** तथा आयन्टमेंट के रूप में इसका प्रयोग व्रणोपचार तथा अनेक त्वचा रोगों यथा त्वचा रोग (Intertrigo), परिसर्प (Herpes) एवं विचर्चिका (Eczema) आदि में किया जाता है। इस कार्य के लिए बिस्मथ सबगैलेट अधिक उपयुक्त होता है। लिक्विड पाराफिन में बनाया हुआ १०% बल का मलहम विचर्चिका, दग्धव्रण (Burn) तथा जनेन्द्रिय के व्रण (Chancroids) में प्रयुक्त होता है। गुदवर्ति (सपॉजिटरी) के रूप में इसको शोथयुक्त खूनीबवासीर (Bleeding piles) में प्रयुक्त करते हैं। बिस्मथ-आयडोफॉर्म- पेस्ट (B. I. P. P.) के रूप में यक्ष्मज नाड़ीव्रण एवं भगंदर में व्रणोपचार के लिए बहुत उपयुक्त है। किन्तु लिक्विड पाराफिन के कारण इसका कुछ हद तक निवारण हो जाता है, क्योंकि यह उनके शोषण को रोकता है।

आभ्यन्तर। फिरंग (Syphilis)—बिस्मथ फिरंग की रामबाण औषधि है, और आजकल तो इसने इस रूप में पारद का भी स्थान ले लिया है! क्योंकि एक तो इसमें फिरंग-नाशक क्रियाशीलता पारद की अपेक्षा अधिक है, दूसरे यह निरापद (Safer) भी है। प्रायः आर्सेनिक एवं बिस्मथ की मिश्रित चिकित्सा-पद्धति अधिक उपयुक्त है। आजकल पेनिसिलिन भी फिरंग की विशिष्ट औषधि समझी जाती है। जिन रोगियों में पेनिसिलिन तथा आर्सेनिक का प्रयोग व्यर्थ सिद्ध हुआ हो अथवा जिनको संखिया सह्य न होता हो, अथवा जिनमें हृदय एवं केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान भी विकृत हो चुका हो, **ऐसे रोगियों में अकेले बिस्मथ के प्रयोग से भी व्याधि का उन्मूलन** हो जाता है। एतदर्थ बिस्मथ का प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा होता है, ताकि रक्त में औपशयिक मात्रा में बिस्मथ का संकेन्द्रण बना रहे। यदि मूत्र में प्रतिदिन २ मि० ग्रा० बिस्मथ का निस्सरण हो रहा हो, तो रक्तगत संकेन्द्रण औषधीय प्रभाव के लिए पर्याप्त समझना चाहिए। चूँकि यकायक अधिक मात्रा में बिस्मथ का प्रयोग सम्भव नहीं है, अतएव इस चिकित्सा-क्रम को अपेक्षाकृत अधिक समय तक चलाना पड़ता है। नये उपसर्ग (Fresh infection) में तो बिस्मथ की अपेक्षा आर्सेनिक का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है, किन्तु फिरंग की द्वितीयावस्था (Second stage) तथा नाड़ी-फिरंग (Neuro-syphilis) में संखिया के साथ-साथ बिस्मथ का चिकित्साक्रम बहुत उपयोगी है

जैसा कि पहले कहा जा चुका है फिरंग की चिकित्सा के लिए बिस्मथ का प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है। प्रारम्भ में मात्रा ०·२ से ०·२४ ग्राम या ०·१ से ०·२ ग्राम से शुरू की जाती है। इन्जेक्शन्स सप्ताह में १ बार या अधिक से अधिक २ बार दिये जाते हैं। पूरे चिकित्सा क्रम में २ से ३ ग्राम टोटल मात्रा अपेक्षित होती है। १० इन्जेक्शन लग चुकने के बाद १ माह का विश्राम काल देने के बाद ही दूसरा कोर्स देना चाहिए। बिस्मथ के इन्जेक्शन में एक कठिनाई पड़ती है कि सूई के स्थान में तन्तूत्कर्ष (Fibrosis), विद्रधि, तथा गिल्थी (Induration) बनने की सम्भावना रहती है और दर्द भी होता है। बिस्मथ का इंजेक्शन हमेशा नितम्ब प्रदेश में करना चाहिए। पोटासियम् बिस्मथ टारट्रेट से उपर्युक्त उपद्रव अपेक्षाकृत कम होते हैं। बिस्मथ के जल विलेय यौगिक यद्यपि क्षिप्रतापूर्वक शोषित होते हैं, किन्तु इनसे विषाक्तता की सम्भावना भी अधिक

होती है। इस प्रकार धात्वीय विस्मथ (Metallic Bismuth) तथा ऑक्सीक्लोराइड अधिक उपयुक्त होते हैं, क्योंकि एक तो यह निरापद (Safe) हैं, दूसरे इनका शोषण समानगति से होता है। इन्जेक्शिओ विस्मथाई तथा इन्जेक्शिओ विस्मथाई ऑक्सीक्लोराइड ग्लूकोज में बनाए हुए निलम्बन होते हैं, अतएव इनका शोषण क्षिप्रतापूर्वक होता है। इन्जेक्शिओ विस्मथाइ सेलिसिलेटिस तैलीय निलम्बन होता है। इन्जेक्शन देते समय सूई को खड़ा (Perpendicularly) प्रविष्ट करनी चाहिए ताकि इन्जेक्शन देने के पूर्व उसमें से रक्त न निकले।

फिरंग के अतिरिक्त विस्मथ के यौगिक परंगी (Yaws) में भी विशिष्ट औषधि का कार्य करते हैं। एतदर्थ ०·१ से ०·२ ग्राम औषधि का १०% विलयन सप्ताह में दो बार पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है। पूरे चिकित्साक्रम में युवा रोगी के लिए १ ग्राम की टोटल मात्रा अपेक्षित होती है। कतिपय त्वचा रोगों में भी विस्मथ इन्जेक्शन कभी-कभी उपयोगी सिद्ध होते हैं।

अन्य उपयोग :—

आमाशयान्त्र प्रणाली—मुख द्वारा विस्मथ का प्रयोग आमाशय की श्लैष्मिक कला पर रक्षात्मक एवं संशामक क्रिया के लिए (As a gastric, protective and sedative) किया जाता है। इस रूप में इसका प्रयोग आमाशयि प्रदाहयुक्त व्याधियों यथा आमाशयार्ति (Gastrodynia), आमाशयिक व्रण एवं हृदयप्रदेश की जलन (Pyrosis) आदि व्याधियों में उपयोगी है।

आन्त्र पर संशामक एवं ग्राही प्रभाव करने के कारण विस्मथ लवणों का मौखिक सेवन सभी प्रकार के अतिसार में उपयोगी होता है, चाहे वह उग्र स्वरूप का (Acute) या चिरकालज (Chronic) हो। बच्चों के लिए विस्मथ सेलिसिलेट अधिक उपयुक्त होता है। कभी-कभी ग्राही प्रभाव को बढ़ाने के लिए इसको ग्रे पाउडर के साथ मिलाकर दिया जाता है। सव्रण बृहदन्त्र शोथ (Ulcerative Colitis) में विस्मथ सबगैलेट बहुत लाभकारी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त विस्मथ-लवण सादे आँव (Mucous diarrhoea) तथा प्रवाहिका (Dysentery) में भी बहुत लाभ करते हैं। इसके लिए इसको एरण्ड तैल के साथ प्रयुक्त करते हैं। प्रवाहिका में इसको डोवर पाउडर के साथ प्रयुक्त किया जाता है।

पहले विस्मथ का प्रयोग आमाशयान्त्र प्रणाली के क्ष-किरण परीक्षण के लिए किया जाता था, किन्तु अब इसके स्थान में बेरियम सल्फेट (बेरियम् मील) के प्रयोग का प्रचलन अधिक है, क्योंकि यह सस्ता भी है और क्रिया की दृष्टि से उससे कम नहीं है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ विस्मथाइ Injectio Bismuthi (Inj. Bismuth.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव विस्मथ *Injection of Bismuth*—अं०। पर्याय—विस्मोस्टैब Bismostab—व्यवसायिक नाम। यह वास्तव में परिस्नुत जल में बनाया हुआ प्रेसिपिटेटेड विस्मथ का निलम्बन (Suspension) होता है। रखा रहने पर द्रवांश ऊपर पृथक-सा तथा विस्मथ नीचे तलस्थित सा मालूम होता है। अतएव जब इंजेक्शन देना हो शीशी हिलाकर दवा खींचनी चाहिए। मात्रा—०·५ से से १ मि० लि० (८ से १५ मिनम्) या ½ से १ सी० सी० पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। इसमें १ मि० लि० (सी० सी०) में ०·२ ग्राम या ३ ग्रेन प्रेसिपिटेटेड विस्मथ होता है।

२—इन्जेक्शियो बिस्मथाइ ऑक्सीक्लोराइडाइ Injectio Bismuthi Oxychloridi (Inj. Bism. Oxychlor.) I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव बिस्मथ ऑक्सीक्लोराइड—अं० । इसमें २ मि० लि० या ३० मिनम् (बूँद) में ०·२ ग्राम या ३ ग्रेन बिस्मथ ऑक्सीक्लोराइड होता है। मात्रा—१ से २ मि० लि० (१५ से ३० मिनम् या बूँद) या १ से २ सी० सी० पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

३—इंजेक्शियो बिस्मथाइ एट सोडियाइ टारट्रेटिस Injectio Bismuthi et Sodii Tartratis (Inj. Bism. et. Sod. Tart.) I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव बिस्मथ सोडियम् टारट्रेट Injection of Bismuth Sodium Tartrate; इन्जेक्शन ऑव सोडियम् बिस्मुथिल टारट्रेट—अं०। मात्रा—इतना विलयन जिसमें बिस्मथ सोडियम् टारट्रेट ६० से २०० मि० ग्रा० (१ से ३ ग्रेन) हो। यदि मात्रा का उल्लेख न किया गया हो तो १ मि० लि० (सी० सी०) में ६० मि० ग्रा० (१ ग्रेन) के बल का विलयन देना चाहिए।

(नॉट ऑफिशल)

१—सपॉजिटोरिया बिस्मथाइ सबगैलेटिस Suppositoria Bismuthi Subgallatis (Supp. Bism. Subgall.) B. P. C.—ले०; बिस्मथ सबगैलेटिस सपॉजिटरीज—अं०; बिस्मथ सबगैलेट की गुदवर्ति या बत्ती—हिं०। प्रत्येक गुदवर्ति में ५ ग्रेन बिस्मथ सबगैलेट होता है।

२—पेस्टा बिस्मथाइ सबनाइट्रेटिस एट आयडोफॉर्माइ Pasta Bismuthi Subnitratis et Iodoformi (Past. Bism. Subnit. et Iodof.), B. P. C.—ले०; पेस्ट ऑव बिस्मथ सबनाइट्रेट एण्ड आयडोफॉर्म—अं०।

पर्याय—पेस्टा बिस्मथाइ एट आयडोफॉर्माइ—ले०; बिस्मथ एण्ड आयडोफॉर्म पेस्ट—अं०; B. I. P. P.।

निर्माण विधि—बिस्मथ सबनाइट्रेट १ भाग, आयडोफॉर्म २ भाग, १५० तापक्रम पर १ घंटे तक गरम करके ठंडा किया हुआ लिक्विड पाराफिन १ भाग। इसको विशोधित तथा पिचकनेवाली टिनट्यूबों (Sterilised collapsible tubes) में रखकर ठण्डी जगह में संग्रह करना चाहिए। प्रयोग—इसका उपयोग स्थानिक प्रभाव के लिए व्रणोपचार (Wound dressing) एवं उग्र अस्थिशोथ (Acute osteitis) में किया जाता है। कभी-कभी इससे आयडोफार्म-विषमयता (Iodoform poisoning) का उपद्रव होता है।

३—बिस्मथाइ ऑक्सीआयडोगैलास Bismuthi Oxyiodogallas (Bism. Oxyiodogall.), B. P. C.—ले०; बिस्मथ ऑक्सीआयडोगैलेट (ऑक्सीआयडोसबगैलेट)—अं०।

पर्याय—एरोल (Airol)।

वर्णन—यह खाकस्तरी (Greyish) या हरापन लिए खाकस्तरी रंग (Greyish-green) का चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। प्रयोग—इसका प्रयोग डस्टिंग पाउडर अथवा १०% बल के मलहम के रूप में जले हुए स्थान पर तथा व्रणों पर रक्षात्मक कार्य (Protective agent) के लिए किया जाता है। सपॉजिटरी (२ या ३ ग्रेन) के रूप में इसको बवासीर या अर्श (Haemorrhoids) में प्रयुक्त करते हैं।

४—बिस्मथाइ ट्राइब्रोमोफेनास (Bismuthi Tribromophenas)। पर्याय—जेरोफॉर्म (Xeroform)।

यह हरापन लिये पीले रंग का चूर्ण होता है। बाह्यतः इसका प्रयोग आयडोफॉर्म के स्थान में डस्टिंग पाउडर के रूप में तथा मुख द्वारा अतिसार तथा प्रवाहिका में जीवाणुनाशक (Antiseptic) क्रिया के लिए प्रयुक्त होता है। मात्रा—०·३ से १ ग्राम (५ से १५ ग्रेन)।

५—बिस्मथाई सबनाइट्रस Bismuthi Subnitras (Bism. Subnit.) B. P. C.—ले०; बिस्मथ सबनाइट्रेट बिस्मथ ऑक्सी नाइट्रेट—अं०। यह सफेद रंग के सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादहीन होता है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल में तो नहीं घुलता, किन्तु डायल्यूटनाइट्रिक एवं हाइड्रोक्लोरिक एसिड में घुल जाता है। असंयोज्य पदार्थ—कार्बोनेट्स, बाइकार्बोनेट्स, आयोडाइड्स, टैनिन एवं सल्फर। मात्रा—५ से २० ग्रेन (०·३ से १·२ ग्राम)। प्रयोग–बिस्मथ कार्बोनेट की भाँति, किन्तु अन्य बिस्मथ लवणों की अपेक्षा अधिक ग्राही (Astringent) होता है। इसके प्रयोग में कभी-कभी नाइट्राइट-विषमयता की सम्भावना रहती है।

६—पल्विस बिस्मथाइ कम्पोजिटस (Pulv. Bism. Co.) B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड पाउडर ऑव बिस्मथ। बिस्मथ कम्पाउण्ड पाउडर—अं०। बिस्मथ कार्ब० १ भाग, केल्सियम् कार्ब० ३ भाग, हेवी (गुरु Heavy) मैग० कार्ब० ३ भाग, सोडियम् कार्ब० १ भाग। सबको परस्पर मिलावें। मात्रा—१५ से ६० ग्रेन (१ से २ ग्राम)।

७—लाइकर बिस्मथाइ एट अमोनियाइ साइट्रेटिस Liquor Bismuthi et Ammonii Citratis —ले०। बिस्मथ सबनाइट्रेट ७० भाग, साइट्रिक एसिड ५२ भाग, डायल्यूट सॉल्यूशन ऑव अमोनिया आवश्यकतानुसार (u. s.); परिस्रुत जल आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० के लिए। मात्रा—२ से ४ मि० लि० (½ से १ ड्राम) या ३० से ६० बूँद। प्रयोग—यह अम्ल विरोध (Antacid) क्रिया के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

८—ट्रॉकिस्काइ बिस्मथाइ कम्पोजिटी Trochisci Bismuthi Compositi (Troch. Bism. Co.), B. P.—ले०; कम्पाउण्ड लॉजेन्जेज ऑव बिस्मथ—अं०। प्रत्येक मुखचक्रिका (Lozenge) में २¼ ग्रेन बिस्मथ कार्बोनेट, २¼ ग्रेन मैग० कार्ब० (Heavy magnesium Carbonate) तथा ४½ ग्रेन केल्सियम् कार्ब० होता है।

९—इंजेक्शिओ बिस्मथाइ सेलिसिलेटिस Injectio Bismuthi Salicylatis (Inj. Bism. Salicyl.) B. P. C.—ले०; बिस्मथ सेलिसिलेट इंजेक्शन—अं०। यह विशोधित मूँगफली के तेल (Sterilised arachis oil) में बनाया जाता है। इसमें १०% बिस्मथ सेलिसिलेट तथा इसके अतिरिक्त कैम्फर (कपूर), फिनोल आदि द्रव्य होते हैं। मात्रा—०·६ से १·२ मि० लि० (१० से २० मिनम् या बूंद) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा। २० मिनम् में २ ग्रेन बिस्मथ सेलिसिलेट होता है।

बिस्मथ के व्यावसायिक योग :—

हाइड्रेर्जिरम् (मरकरी) I. P., B. P.

(पारद)

रासायनिक संकेत : Hg.

नाम—पारद, रस—सं०; पारा—हिं०, उर्दू, द०, बम्ब०; पारा—म०; पारो—गु०; ज़ी (ज़ै) बक, ऐनुल् हयात—अ०; सीमाब, जीव, फा०; हाइड्रार्जिरम् Hydrargyrum—ले०; मर्क्युरी, मर्करी Mercury, क्विक सिल्वर Quick Silver—अं०।

प्राप्ति-साधन—मरकरी एक द्रव-धातु (Liquid Metal) है, जो खनिज मर्क्युरिक सल्फाइड (Native mercuric Sulphide) से प्राप्त किया जाता है। इसमें ९९·५ प्रतिशत मरकरी (Hg.) होता है।

वर्णन—यह चाँदी के रंग का चमकदार सफेद रंगका वजनी द्रव (Heavy liquid) होता है, जो अत्यन्त चञ्चल (Extremely mobile) होता है, और जमीन पर गिरने से मोती के समान छोटे-छोटे दानों में विभक्त हो जाता (Easily divisible into small globules) है। गरम करने पर बहुत जल्दी वाष्प निकलने लगता (Readily volatilises) है। विलेयता—जल, अल्कोहल् (९५%) तथा हाइड्रोक्लोरिक एसिड में तो नहीं घुलता; किन्तु नाइट्रिक एसिड तथा उबलते हुए गंधकाम्ल (Boiling Sulphuric acid) में तुरन्त और पूर्णतः घुल जाता (Readily and Completely Soluble) है।

हाइड्रार्जिरम् अमोनिएटम् (B. P.) या
हाइड्रार्जिरम् एमिनोक्लोराइडम् (I. P.)

रासायनिक संकेत : NH_2HgCl.

नाम—Hydrargyrum Ammoniatum (Hydrarg. Ammon.), B. P., Hydrargyrum Aminochloridum (Hydrarg. Aminochlor.), I. P.—ले०; अमोनिएटेड मरकरी Ammoniated Mercury, एमिनोक्लोराइड ऑव मरकरी Aminochloride of Mercury—अं०। पर्याय—ह्वाइट प्रेसिपिटेट White Precipitate।

प्राप्ति-साधन—यह अमोनिया तथा मर्क्युरिक क्लोराइड की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ९७ प्रतिशत से १००·५ प्रतिशत तक अमोनिएटेड मरकरी पाया जाता है।

वर्णन—यह सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा हवा में स्थायी (Stable in air) होता है। विलेयता—जल, अल्कोहल् (९५%) तथा साल्वेंट ईथर में तो नहीं घुलता; किन्तु गरम हाइड्रोक्लोरिक एवं एसेटिक एसिड में फौरन घुल जाता है। संरक्षण—इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

हाइड्रार्जिराइ ऑक्साइडम् फ्लेवम् Hydrargyri Oxidum Flavum (Hydrarg. Oxid. Flav.), I. P., B. P.—ले०; यलो ऑक्साइड ऑव मरकरी Yellow Oxide of Mercury, यलो मर्क्युरिक ऑक्साइड Yellow Mercuric Oxide—अं०; पारे का पीला ऑक्साइड—हिं०।

रासायनिक संकेत : HgO.

प्राप्ति साधन—यह मर्क्युरिक क्लोराइड तथा सोडियम् हाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन (Aqueous Solution) को परस्पर मिलाकर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९·२ प्रतिशत पारे का पीला ऑक्साइड (Hg O.) होता है।

वर्णन—यह नारंग-पीतवर्ण का (Orange yellow) विरूपिक (Amorphous) चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल् (९५%) में तो नहीं घुलता; किन्तु नाइट्रिक एसिड (शोरकाम्ल) में फौरन घुल जाता है। इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

हाइड्रार्जिरम् ओलिएटम् Hydrargyrum Oleatum (Hydrarg. Oleat.), I. P., B. P.—लै०; ओलिएटेड मरकरी Oleated Mercury—अं० ।

वर्णन—यह हल्के पीले रंग का चिकना पदार्थ होता है, जो पीला मर्करी ऑक्साइड २० भाग, लिक्विड पाराफिन ५ भाग, ओलिईक एसिड (Oleic acid) ७५ भाग को परस्पर खरल में घोंटकर प्राप्त किया जाता है। इसमें लगभग २०% पारे का पीला ऑक्साइड होता है।

हाइड्रार्जिराइ परक्लोराइडम् Hydrargyri Perchloridum (Hydrarg. Perchlor.), B. P. हाइड्रार्जिराइ बाइक्लोराइडम् Hydrargyri Bichloridum (Hydrarg. Bichlor.), I. P.—लै०; मर्क्युरिक क्लोराइड Mercuric Chloride—अं०; रसकपूर—आयु० ।

रासायनिक संकेत : Ng Cl_2.

पर्याय—कोरोसिव सब्लिमेट Corrosive Sublimate, परक्लोराइड ऑव मरकरी Perchloride of Mercury ।

प्राप्ति-साधन—यह मरकरी तथा क्लोरीन की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९.५ प्रतिशत मर्क्युरिक क्लोराइड होता है।

वर्णन—इसके रंगहीन या सफेद रंग के क्रिस्टलाइन टुकड़े (Rhombic crystalline masses) होते हैं, जो वजनी होते हैं। अथवा सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। गरम करने से यह पिघलकर पहले रंगहीन द्रव के रूप में परिणित हो जाता है, जिसे यदि और गरम किया जाय तो सफेद रंग का घना वाष्प (Volatises as a dense white cloud) निकलता है। विलेयता—१५ भाग जल तथा ३ भाग अल्कोहल् (९५%) एवं साल्वेंट ईथर तथा ग्लिसरोल में घुल जाता है।

असंयोज्य पदार्थ (Incompatibles)—क्षार तथा क्षारीय कर्बोनेट (Alkalies and their Carbonates), पोटासियम् आयोडाइड, चूने का पानी (लाइम वाटर), टारटार इमेटिक, सिल्वर नाइट्रेट, अल्ब्युमिन, लेडएसिटेट, साबुन (Soaps) तथा वानस्पतिक कषायद्रव्य (Vegetable astringents) ।

हाइड्रार्जिराइ सबक्लोराइडम् Hydrargyri Subchloridum (Hydrarg. Subchlor.) I. P., B. P.—लै०; मर्क्युरस क्लोराइड Mercurous Chloride—अं० ।

रासायनिक संकेत : Hg Cl.

पर्याय—केलोमल Calomel; सबक्लोराइड ऑव मरकरी Subchloride of Mercury; Hydrargyri Chloridum Mite, U. S. P. ।

प्राप्ति-साधन—यह मर्क्युरस सल्फेट तथा सोडियम् क्लोराइड को परस्पर मिलाकर गरमकर ऊर्ध्वपातन (Sublimation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ९९.६ प्रतिशत कैलोमल (Hg Cl.) पाया जाता है।

वर्णन—केलोमल मटमैले सफेद (Dull white) रंग का वजनी चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा प्रायः स्वादहीन होता है। काफी गरम करने से वाष्पीभूत होता (Volatises) है। खरल में घोंटने से पीले रंग का हो जाता है। विलेयता—जल, अल्कोहल् (९५%) साल्वेंट ईथर, तथा

ठण्ढे डायल्यूट मिनरल एसिड्स में अविलेय (Insoluble) होता है। संरक्षण—इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—½ से ३ ग्रेन (३० से २०० मि० ग्रा०)।

हाइड्रार्जिराइ ऑक्सीसायनाइडम् Hydrargyri Oxycyanidum (Hydrarg. Oxycyanid.), I. P., B. P.—ले०; मरक्युरिक ऑक्सीसायनाइड—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह मरक्युरिक ऑक्साइड एवं मरक्युरिक सायनाइड तथा जल की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें १४·५ से १६·५ प्रतिशत तक Hg O. तथा ८३·५ से ८५·५ तक $Hg(CN)_2$ होता है।

वर्णन—यह सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। २०° तापक्रम पर ३५ भाग जल में पूर्णतः घुल जाता है।

फेनिल हाइड्रार्जिराइ नाइट्रास Phenyl hydrargyri Nitras (Phenylhydrarg. Nitras) I. P., B. P.—ले० फेनिलमरक्युरिक नाइट्रेट—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_6H_5Hg\,OH, C_6H_5Hg\,NO_3$.

प्राप्ति-साधन—इसमें कम से कम ९८%, $C_{12}H_{11}O_4\,N\,Hg_2$ होता है।

वर्णन—फेनिल मरक्युरिक नाइट्रेट के सफेद रंग के चमकदार पपड़ीदार टुकड़े (Plates) होते हैं, अथवा सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में हल्काधात्वीय (Weakly metallic) तथा कसैला (Astringent) होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर १५०० भाग जल में तथा उबलते हुए पानी में १६० भाग में घुलता है। १००० भाग अल्कोहल् (९५%) में भी घुल जाता है। ग्लिसरोल तथा स्थिर तेलों (Fixed oils) में अपेक्षाकृत अधिक घुलनशील होता है।

गुण-कर्म।

बाह्य—अक्षत त्वचा पर पारद एवं इसके लवणों का स्थानिक प्रयोग करने से, ये शोषित होकर ओलिएट या अल्ब्युमिनेट यौगिक के रूप में रूपान्तरित हो जाते हैं। इस प्रकार ये जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) एवं जीवाणुनाशक (Bactericidal) प्रभाव करते हैं। रूप में मरक्युरिक क्लोराइड या कोरोसिव सब्लिमेट की क्रियाशीलता सबसे अधिक होती है। यहाँ तक कि इसके अधिक संकेन्द्रित विलयन के प्रयोग से सूजन (Inflammation) एवं धातुकोथ (Sloughing) तक हो सकता है। पारद के अमोनिएट, नाइट्रेट, ओलिएट एवं ऑक्साइड लवण उत्तम पराश्रयीजीवाणुनाशक क्रिया (Parasiticide) करते हैं। पारद के आर्गेनिक यौगिक (Organic mercurials), अकार्बनिक लवणों (Inorganic salts) की अपेक्षा अधिक तीव्र जीवाणुनाशक प्रभाव करते हैं और साथ ही कम विषैले तथा कम क्षोभक होते हैं।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्रप्रणाली—लालास्राव के साथ ही उत्सर्गित होने के कारण पारद के सेवन से, चाहे इसका प्रयोग मुख द्वारा किया गया हो, चाहे इन्जेक्शन द्वारा, अत्यधिक लालास्राव (Salivation) मुखपाक (Stomatitis) का उपद्रव होता है। इसके अतिरिक्त मुख में धात्वीय स्वाद (Metallic taste) का भी अनुभव होता है। उक्त उपद्रव अत्यधिक मात्रा में पारद के सेवन किये जाने (Excessive therapeutic use)

एवं चिरकालीन विषमयता के द्योतक होते हैं। जिन व्यक्तियों में वैयक्तिक स्वभाव है, उनमें अल्प-मात्रा में पारद का सेवन किये जाने पर भी उक्त उपद्रव लक्षित हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में औषधि तत्काल बन्द कर देनी चाहिए। अट्रोपीन के प्रयोग से इन लक्षणों का शमन होता है। पारद के अनेक यौगिक (केलोमल, ब्ल्यूपिल, ग्रेपाउडर) मुख द्वारा सेवन किये जाने पर रेचक (Purgative) कर्म करते हैं। इस क्रिया में ८ से १० घंटे तक का समय लग जाता है। पारद उक्त रेचक यौगिक साथ ही पित्तविरेचक (Cholagogue) क्रिया भी करते हैं, जिससे सञ्चित पित्त का उत्सर्ग शीघ्रतापूर्वक आँतों में हो जाता है। दस्त पतला तथा गाढ़े हरे रंग का (Calomel motions) होता है। इसका कारण यह है कि एक तो पारद स्वयं आँतों में जीवाणुवृद्धिरोधक (एन्टिसेप्टिक) प्रभाव करता है, जिससे आन्त्रगत दण्डाणुओं की वृद्धि रुक जाती है; दूसरे पित्त के रंजक कणों का रूपान्तर स्टर्कोबिलिन (Stercobilin) में नहीं होने पाता। रेचक प्रभाव के कारण बिलिवर्डिन (Biliverdin) का रूपान्तर बिलिरुबिन (Bilirubin) में नहीं होने पाता।

वृक्क—देखो "पारद के मूत्रल यौगिक Mercurial Diuretics"।

विशिष्ट क्रिया (Chemotherapeutic action)—पारद फिरंग(Syphilis) की विशिष्ट औषधि है। पारद की फिरंगनाशक क्रिया व्याधि की प्रथमावस्था एवं द्वितीयावस्था में विशेष रूप से होती है। पारद फिरंग के चक्राणुओं (Spirochaeta or Treponema pallida) पर प्रत्यक्ष घातक प्रभाव करता है। उक्त क्रिया सम्भवतः कीटाणुओं के शरीर में उत्पन्न होनेवाले उन किण्वों (Sulphydryl activated enzyme systems of spirochaetes) पर अवरोधक प्रभाव करने के कारण होती है, जो चक्राणुओं के जीवन एवं वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं।

शोषण तथा उत्सर्ग—त्वचा एवं श्लैष्मिक कलाओं द्वारा पारद के लवणों का शोषण शीघ्रतापूर्वक होता है। अतएव मुखद्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा, स्थानिक प्रयोग से त्वचा से तथा वाष्प (Vapour) के रूप में प्रयुक्त होने पर श्वसनमार्ग की श्लैष्मिक कला से शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त रक्तप्रवाह से शीघ्रतापूर्वक पृथक होकर वृक्क, यकृत एवं आन्त्रभित्ति आदि में अल्ब्युमिनेट के रूप में संचित हो जाता है। इन संग्रह स्थलों से इसका स्थानान्तरण एवं शरीर से निस्सरण धीरे-धीरे बहुत पीछे तक होता रहता है। एक मात्रा सेवन करके औषधि बन्द कर देने पर भी यद्यपि अल्पतः निस्सरण कुछ घण्टों बाद ही प्रारम्भ हो जाता है, परन्तु पूर्णतः उत्सर्गित होने में कई दिन लग जाते हैं। पारद के ऑर्गेनिक कम्पाउण्ड्स का उत्सर्ग प्रधानतः वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ तथा इन-ऑर्गेनिक यौगिक आँतों द्वारा मल के साथ उत्सर्गित होते हैं। इनके अतिरिक्त पारद का निस्सरण लालास्राव (Saliva), स्वेद, आमाशयिक रस, पित्त, तथा स्तन्य द्वारा भी होता है। किन्तु आँतों में उत्सर्गित होने पर कुछ अंश पुनः शोषित हो जाता है। गर्भवती स्त्रियों में माता द्वारा सेवन किये जाने पर गर्भ (Foetus) में भी पारद का कुछ अंश पहुँच जाता है।

पारदजन्य विषाक्तता (Mercurial poisoning) :—

(१) उग्रविषाक्तता (Acute poisoning)—यह स्थिति उस समय उत्पन्न होती है, जब पारद के विलेयलवणों का अत्यधिक मात्रा में धोखे से या अनजान से सेवन कर लिया जाता है।

परक्लोराइड ऑव मरकरी (कोरोसिव सब्लिमेट) में यह सम्भावना अधिक होती है। कभी-कभी जान-बूझकर ऐसे यौगिक का सेवन आत्महत्या के लिए भी किया जाता है। कभी-कभी जब ऐसे सॉल्यूशन का प्रयोग योनिप्रक्षालन एवं गर्भाशय धावन के लिए किया जाता है, तो कुछ द्रव वहाँ रुक जाता है, और शोषित होकर विषाक्तता पैदा करता है। मुखद्वारा पारद सेवन के कारण उत्पन्न विषाक्तता में मुख, गला एवं आमाशयान्त्रप्रणाली पर दाहक प्रभाव होता है। पेट में दर्द होता है। वमन एवं पहले दस्त आने लगते हैं, कभी-कभी पाखाने में खून भी आता है। मुँह में धात्वीय स्वाद मालूम होता है और बहुत लार निकलता है। पेशाब में अल्ब्युमिन एवं निर्मोक (Cast) आने लगता है। कभी-कभी अमूत्रता (Anuria) की स्थिति उत्पन्न होती है। नाड़ी तीव्र एवं दुर्बल पड़ जाती है; श्वसन जल्दी-जल्दी होने लगता है। अन्ततः प्रलाप, संन्यास (Coma) एवं निपात् (Collapse) होकर रोगी का प्राणान्त हो जाता है।

चिकित्सा—उग्र विषाक्तता का निदान होते ही अंडे की सफेदी (Egg albumin) तथा दूध आदि अल्ब्युमिनस पदार्थ देने चाहिए। इससे धातु अक्षोभक यौगिक (Non-corrosive albuminate) के रूप में परिवर्तित होकर अधःक्षिप्त हो जाता है। इसके बाद आमाशयका प्रक्षालन (Lavage) करना चाहिए। अमूत्रता के निवारण के लिए मुखद्वारा काफी मात्रा में पानी का सेवन करना चाहिए। यदि यह सम्भव न हो तो शिरामार्ग द्वारा ग्लूकोज सॉल्यूशन का इंजेक्शन करना चाहिए। **अगद या प्रतिविष के रूप में "बाऽल BAL" का इन्जेक्शन देना चाहिए।** इसके लिए १०% के सॉल्यूशन की ३ सी० सी० मात्रा का ४–४ घण्टे पर इन्जेक्शन (पेशींगत) करना चाहिए। इस प्रकार ४–५ इंजेक्शन देने की आवश्यकता पड़ती है।

चिरकालज विषमयता (Hydrargyrism or Mercurialism)—ऐसी स्थिति कभी दुर्घटना (Accident) के परिणाम स्वरूप और प्रायः उन लोगों में होती है जो पारद के कारखानों में काम करते हैं, या पारदीय बाष्प का अधिक कालतक आघ्राणन करते हैं। वाष्पाघ्राणजन्य विषमयता में भिन्न प्रकार के लक्षण उत्पन्न होते हैं, जिनको 'पारदजन्य अंगघात Mercurial Paralysis" कहते हैं। इसमें दुःस्वास्थ होकर पहले चेहरे की बाद में शाखाओं की पेशियों में कम्प तथा दुर्बलता का अनुभव होता है। आगे बढ़कर पेशियों में क्षोभनशीलता और भी बढ़ जाती है (Mercurial Erethismus)। तथा निद्रानाश एवं प्रालम्भ आदि उपद्रव भी हो जाते हैं। कभी-कभी छोटे बच्चों में दाँत निकलने के लिए "दंतोद्भेदन चूर्ण Teething powder" के सेवन से पारद विषमयता हो जाता है।

सामान्य चिरकालज विषमयता में श्वास का दुर्गन्धित होना, मुँह में धात्वीय स्वाद का अनुभव, अधिक मात्रा में लार का निकलना, मसूढ़ों में सूजन एवं दर्द आदि लक्षण प्रगट होते हैं। त्वचा पर अनेक प्रकार के विस्फोट निकलते हैं।

चिकित्सा—'सामान्यतः क्रिया योगो निदानपरिवर्जनम्' के न्याय से कारण का पता लगाकर उसका निवारण करना। मुँह की सफाई का ध्यान रखना चाहिए। मुखद्वारा लवण विरेचन एवं मूत्रल औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। इससे संचित पारद का निस्सरण होकर लक्षणों का शमन होता है।

आमयिक-प्रयोग ।

फिरंग (Syphilis)—किसी जमाने में पारद; फिरंग के लिए एक मात्र रामबाण औषधि समझा जाता था । किन्तु बाद में इसका स्थान आर्सेनिक, बिस्मथ एवं पेनिसिलिन ने ले लिया है । अब प्रायः विशिष्ट औषधि के रूप में इन्हीं तीनों द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है । फिरंग में पारद की उपयोगिता एवं व्यवहार सीमित रह गया है । तथापि बाह्यरूप से फिरंगज व्रणोपचार के लिए अब भी पारदयौगिकों की उपयोगिता काफी है । फिरंगज कठिन व्रण (Chancre) एवं तुण्डार्बुद (Condyloma) तथा फिरंगजन्य अन्य व्रणितस्थल पर लगाने के लिए पारद का मलहम एवं लोशन (धावनद्रव) बहुत उपयोगी पाया जाता है । एतदर्थ हाइड्रार्ज० परक्लोराइड लोशन या आयण्टमेंट ऑव ओलिएटेड मरकरी अथवा आयण्टमेंट ऑव अमोनिएटेड मरकरी का व्यवहार किया जता है । किन्तु इसके साथ-साथ आर्सेनिक, बिस्मथ या पेनिसिलिन आदि विशिष्ट फिरंगनाशक औषधियों का आभ्यन्तर प्रयोग करने से ही व्रण शीघ्रता पूर्वक ठीक होते हैं । वक्तव्य—पहले पारद का प्रयोग फिरंग रोग में नाना प्रकार से किया जाता था । 'हचिन्सन की गोलियों Hutchinson's Pills' के रूप में इसका प्रयोग मुख द्वारा करते थे । बच्चों के सहज फिरंग में 'ब्ल्यू आयण्टमेंट' का मर्दन किया जाता था । इसके अतिरिक्त पारद को इन्जेक्शन द्वारा भी प्रयुक्त करते थे ।

नेत्र—पारद के पीतनेत्राञ्जना (Yellow Ointment or Oculentum Hydrargyri Oxidi) का प्रयोग अनेक नेत्र रोगों में उपयोगी होता है—यथा, नेत्राभिष्यंद (Conjunctivitis), पक्ष्मकोप (Blepharitis) कनीनिका शोथ (keratitis), सव्रण शुक्र (Corneal ulcer) एवं अव्रण शुक्र या फूला (Corneal opacity) आदि सव्रण शुक्र में इसको अट्रोपीन के साथ (Oculentum atropinæ cum Hydragyri Oxido) प्रयुक्त करते हैं । अव्रण शुक्र में उत्तरोत्तर अधिकाधिक प्रतिशत (%) बल के मलहम के प्रयोग से फूला साफ हो जाता है । ऑक्सीसायनाइड लोशन (५०० में १ के बल का) का उपयोग नवजात नेत्रपाक (Opthalmia neonatorum) में तथा ५००० से १०,००० में १ के बल का लोशन साधारण नेत्राभिष्यंदयुक्त श्वेतपटल के अर्जुन-रोग (Phlyctenular Conjunctivitis and keratitis) में स्थानिक प्रयोग के लिए उस स्थान पर केलोमल का सूक्ष्म चूर्ण छिड़कते हैं । किन्तु इसके साथ मुख द्वारा पोटासियम् आयोडाइड का प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा आँसू के साथ नेत्रों में उत्सर्गित होने के बाद यह आयोडाइड ऑव मरकरी यौगिक बनकर भयंकर नेत्रपाक उत्पन्न कर सकता है ।

अन्य बाह्य उपयोग—चिकित्सा में अनेक पारद-यौगिकों का बाह्य उपयोग एन्टिसेप्टिक (जीवाणुवृद्धि रोधक), जीवाणुनाशक (Disinfectant) एवं पराश्रयी कीटाणुनाशक (Paraciticide) के रूप में किया जाता है । आक्सीसाइनायड ऑव मरकरी एवं परक्लोराइड ऑव मरकरी के धावन द्रव या सॉल्यूशन का उपयोग शस्त्रचिकित्सा एवं प्रसूति-चिकित्सा (Surgical and Obstetric practice) में प्रचुरता से किया जाता है । धातुओं (Metals) पर कोई क्रिया न करने के कारण २०० में १ के बल का ऑक्सीसायनाइड ऑव मरकरी सॉल्यूशन शस्त्रों (Surgical instruments) के विसंक्रमण (Steri-

lization) के लिए बहुत उपयुक्त है। सर्जन के हाथ एवं रोगी की त्वचा तथा वस्त्र आदि के विशोधन के लिए 'बिनआयोडाइड स्प्रिट लोशन Biniodide spirit lotion' बहुत प्रयुक्त होता है। यह हाइड्रार्ज० आयोडाइड० १ ग्राम तथा पोटासियम् आयोडाइड १ ग्राम, अल्कोहल् (७०%) १००० सी० सी० में मिलाकर बनाया जाता है। परक्लोराइड ऑव मरकरी का सॉल्यूशन भी प्रचुरता से कमरे एवं वस्त्र आदि के विशोधन के लिए बरता जाता है। व्रण-धावन के लिए फेनिल मर्क्युरिक नाइट्रेट का सॉल्यूशन भी अच्छा है।

खुजली के पराश्रयीकीट (Acarus scabei) एवं जूँ (Lice), दद्रु तथा अन्य पराश्रयी कीटों के विनाश के लिए स्थानिक प्रयोग के लिए साइट्रिन आयण्टमेंट (ung. Hydrarg. Nitratis), तथा ओलिएटेड मरकरी आयण्टमेंट अथवा अमोनिएटेड मरकरी आयण्टमेंट (White Precipitate ointment) बहुत उपयुक्त होते हैं।

चिरकाजल संधिशोथ एवं अस्थ्यावरणशोथ (Periostitis) तथा इस प्रकार की अन्य शोथावस्थाओं के विलयन के लिए स्काट्स आयण्टमेंट, अथवा रेड आयोडाइड ऑव मरकरी आयण्टमेंट को उस स्थान पर मलना चाहिए।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र प्रणाली—मुखगत फिरंगज व्रण में परक्लोराइड ऑव मरकरी लोशन से मुखधावन करने से बहुत लाभ होता है। बच्चों के वमन एवं अतिसार में अल्प मात्रा में ग्रे पाउडर तथा केलोमल के मौखिक सेवन से लाभ होता है। वमन में ग्रे पाउडर $\frac{1}{12}$ ग्रेन से $\frac{1}{8}$ ग्रेन की मात्रा में ३-३ घंटे पर मुख द्वारा दिया जाता है। इसी प्रकार अतिसार में केलोमल या ग्रे पाउडर दोनों में से किसी एक का प्रयोग कर सकते हैं। इसका प्रयोग उग्र (Acute) अनुग्र (Subacute) तथा चिरकालीन (Chronic) सभी प्रकार के अतिसार में कर सकते हैं। कभी-कभी दुराग्रही स्वरूप के हिक्का (Obstinate Hiccough) रोग में अल्प मात्रा में केलोमल देने से लाभ होता है। ब्लू पिल या केलोमल का प्रयोग रेचन के लिए भी किया जाता है।

सर्वांगशोफ एवं जलोदर—देखो पारद के मूत्रल यौगिक।

(पारद या मरकरी के ऑफिशल योग)

१—अंग्वण्टम् हाइड्राजिराइ Unguentum Hydrargyri (Ung. Hydrarg.), I. P., B. P.—ले०; आयण्टमेंट ऑव मरकरी Ointment of Mercury—अं०। **पर्याय—ब्लू आयण्टमेंट** Blue Ointment। पारे का नीला मलहम—हिं०। इसमें ३०% पारद (Mercury), **ओलिएटेड** मरकरी १·५ प्रतिशत, ऊन की चर्बी (Wool fat), सफेद मोम (White beeswax) तथा सफेद मृदु पाराफिन (White Soft paraffin) आदि द्रव्य पड़ते हैं। इसका उपयोग "डायल्यूट आयण्टमेंट ऑव मरकरी" के निर्माण में किया जाता है। वक्तव्य—यदि नुस्खे में 'मरकरी आयण्टमेंट' 'मरक्यूरियल आयण्टमेंट' या 'ब्लू आयण्टमेंट' लिखा हो और इस बात का निश्चय न हो कि 'आयण्टमेण्ट ऑव मरकरी' ही चाहिए, तो डायल्यूट आयण्टमेंट ऑव मरकरी देना चाहिए।

२—अंग्वण्टम् हाइड्राजिराइ डायल्यूटम् Unguentum Hydrargyri Dilutum (Ung. Hydrarg. Dil.), B. P.—ले०; डायल्यूट आयण्टमेंट ऑव मरकरी—अं०। इसमें १०% मरकरी होता है। यह सिम्पुल आयण्टमेंट में ३३·३% आयण्टमेंट ऑव मरकरी मिलाकर बनाया जाता है।

३—अंग्वएटम् हाइड्रार्जिराइ कम्पोजिटम् Unguentum Hydrargyri Compositum (Ung. Hydrarg. Co.), I. P.—ले०; कम्पाउण्ड आयण्टमेंट ऑव मरकरी—अं० ।

पर्याय—स्काट्स आयण्टमेंट या ड्रेसिंग (Scot's Ointment or Dressing) । मरकरी आयएटमेंट ४०, पीला मोम (Yellow beeswax) २४, मूंगफली का तेल (Arachis oil) २४ तथा कपूर (कम्फर) १२ । इसमें मरकरी १२% होता है ।

(नॉट-ऑफिशल)

१—पिल्युला हाइड्रार्जिराइ (इन मास्सा) Pilula Hydrargyri in Massa (Pil. Hydrarg. in Mass.), B. P. C.—ले०; पिल-मास ऑव मरकरी (Pill-Mass of Mercury), मरकरी पिल मास—अं० । पर्याय—ब्लूपिल Blue Pill । इसमें पारद की मात्रा ३३% होती है । मात्रा—४ से ८ ग्रेन (०·२५ से ०·५ ग्राम) ।

२—पिल्युला हाइड्रार्जिराइ कम् क्रेटा एट ओपियाई Pilula Hydrargyri cum Creta et Opii—ले०; पर्याय—हचिसन्स पिल Hutchinson's Pill । १२ गोलियाँ (पिल्स) बनाने के लिए ग्रे पाउडर १२ ग्रेन, डोवर्स पाउडर १२ ग्रेन, कम्पाउण्ड पाउडर ऑव एकेशिया १ ग्रेन तथा सिरप ऑव लिक्विड ग्लूकोज आवश्यकतानुसार । मात्रा—१ गोली ।

३—हाइड्रार्जिरम् कम् क्रेटा Hydrargyrum Cum Creta (Hydrarg. C. Cret.), B. P. C.—ले०; मरकरी विथ चाक—अं० । पर्याय—ग्रे पउडर Grey Powder । इसमें ३३% मरकरी होता है । यह खाकस्तरी लिये नीले रंग का चूर्ण (Greyish blue) होता है । मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से ३०० मि० ग्रा०) ।

४—टैबेली हाइड्रार्जिराइ कम् क्रेटा Tabellāe Hydrargyri Cum Creta (Tab. Hydrarg. C. Cret.), B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव मरकरी विथ चाक Tablets of Mercury with Chalk—अं० । पर्याय—टॅबलेट्स ऑव ग्रे पाउडर । ग्रे पाउडर की टिकिया—हिं० । मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से ३०० मि० ग्रा०) ।

(यलो ऑक्साइड ऑव मरकरी के ऑफिशल योग)

१—ऑक्युलेंटम् हाइड्रार्जिराइ आक्साइडाइ Oculentum Hydragyri Oxidi, I. P., B. P.—ले०; आई आयण्टमेंट ऑव मरक्युरिक ऑक्साइड Eye Ointment of Mercuric Oxide–अं०; आँख का पीला मलहम—हिं० । इसमें १% मरकरी का पीत ऑक्साइड होता है ।

२—आक्युलेंटम् एट्रोपिनी कम् हाइड्रार्जिराइ ऑक्साइडो Oculentum Atropināe cum Hydrargyri Oxido—ले०; आई आयएटमेंट ऑव एट्रोपीन विथ मरक्युरिक ऑक्साइड Eye Ointment of Atropine with Mercuric Oxide—अं० । इसमें एट्रोपीन तथा यलो ऑक्साइड ऑव मरकरी दोनों १% होते हैं ।

३—अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराइ नाइट्रेटिस फोर्ट Unguentum Hydrargyri Nitratis Forte, अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराइ नाइट्रेटिस I. P., B. P.—ले०; स्ट्रांग आयएटमेंट ऑव मरक्युरिक नाइट्रेट, मरक्युरिक नाइट्रेट आयण्टमेंट—अं० ।

पर्याय—साइट्रीन आयण्टमेंट Citrine Ointment । इसमें ६·७% मरकरी होता है ।

४—अंग्वएटम् हाइड्रार्जिराइ नाइट्रेटिस डायल्यूटम् Unguentum Hydrargyri Nitratis Dilutum (Ung. Hydrarg. Nit. Dil.), I. P., B. P.—ले०; डायल्यूट आयएटमेंट ऑव

मरक्युरिक नाइट्रेट, डायल्यूटेड मरक्युरिक नाइट्रेट आयण्टमेंट--अं० । इसको बनाने के लिए स्ट्रांग आयण्टमेंट ऑव मरक्युरिक नाइट्रेट २० भाग, पीत मृदु पाराफिन (Soft yellow paraffin) ८० भाग लेना चाहिए । इसमें १२% मरकरी होता है ।

(ओलिएटेड मरकरी अमोनिएटेड तथा मरकरी के)

ऑफिशल योग—

१—अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराइ ओलिएटाइ (Ungnentum Hydrargyri Oleatic Ung. Hydrarg. Oleat. I. P., B. P.—ले०; आयण्टमेंट ऑव ओलिएटेड मरकरी Ointment of Oleated Mercury—अं० । यह सिम्पुल आयण्टमेंट के साथ मिलाकर बनाया जाता है । इसमें मरकरी २५% होता है ।

२—अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराइ अमोनिएटाइ (Unguentum Hydrarg. Ammon.), I. P., अंग्वण्टम् हाइड्रार्जिराइ एमिनो क्लोराइडाइ Unguentum Hydrargyri Amino chloridi (Ung. Hydrarg. Amino chlor.) I. P.—ले०; आयण्टमेंट ऑव अमोनिएटेड मरकरी Ointment of Ammoniated Mercury या आयण्टमेंट ऑव एमिनोक्लोराइड ऑव मरकरी—अं० । पर्याय—व्हाइट प्रेसिपिटेड आयण्टमेंट White Precipitate Ointment । इसमें अमोनिएटेड मरकरी २.५% होता है ।

(हाइड्रार्ज० परक्लोर० एवं सबक्लो० के ऑफिशल योग)

१—लाइकर हाइड्रार्जिराइ परक्लोराइडाइ Liquor Hydrargyri Perchloridi (Liq. Hydrarg. Perchlor.) I. P., सोल्योशिओ हाइड्रार्जिराइ बाइक्लोराइडाइ Solutio Hydrargyri Bichloridi Sol. Hydrarg. Bichlor. , I. P.—ले०; सॉल्यूशन ऑव मरक्युरिक क्लोराइड—अं० । इसमें ०.१ प्रतिशत या ६० बूँद में $\frac{1}{16}$ ग्रेन मरकरी परक्लोराइड होता है ।

२—टॅबेली हाइड्रार्जिराइ सबक्लोराइडाइ Tabellae Hydrargyri Subchloridi (Tab. Hydrarg. Subchlor.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव मरक्युरस क्लोराइड Tablets of Mercurous chloride—अं० । पर्याय—टॅबलेट्स ऑव कैलोमल ।

मात्रा—½ से ३ ग्रेन (३० से २०० मि० ग्रा०) मात्रा का निर्देश न होने पर १ ग्रेन की टिकिया देनी चाहिए ।

पारद के (नॉन-ऑफिशल) अन्य उपयोगी यौगिक :—

हाइड्रार्जिराइ आयोडाइडम् रुब्रम् Hydrargyri Iodidum Rubrum (Hydrarg. Iod. Rub.), B. P. C.—ले०; रेड मरक्युरिक आयोडाइड (Red Mercuric Iodide), मरक्युरिक आयोडायड (Mercuric Iodide), बिन-आयोडाइड ऑव मरकरी—अं० ।

रासायनिक संकेत : $Hg. I_2$

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—यह मरक्युरिक क्लोराइड तथा पोटासियम् आयोडाइड के सॉल्यूशन को समान मात्रा में लेकर परस्पर मिलाने से रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त होता है । मरक्युरिक क्लोराइड गाढ़े लाल रंग (Scarlet-red) के चूर्ण में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादहीन होता है । विलेयता—जल में तो यह प्रायः अविलेय-सा (Almost insoluble) होता है, किन्तु

पोटासियम् आयोडाइड के विलयन (साल्यूशन) में अच्छी तरह घुलनशील होता है। इसके अतिरिक्त २०० भाग अल्कोहल् (९५%), १५० भाग ईथर, ५० भाग एरण्ड तैल तथा २३० भाग जैतून के तेल (Olive oil) में भी घुल जाता है।

संरक्षण—इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—$\frac{1}{60}$ से $\frac{1}{15}$ ग्रेन (२ से ४ मि० ग्रा०)।

(गुरुधातुजन्य विषाक्तता निवारक औषधियाँ (Heavy metal antagomists)

डाइमर्केप्रालम् (डाइमर्केप्रॉल) : "बाऽऽल BAL"

Dimercaprolum (Dimercap.), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : CH_2 (SH). CH (SH). CH_2 OH.

पर्याय—डाइमर्केप्रॉल Dimercaprol; ब्रिटिश एन्टी-ल्युसाइट British Anti-Lewisite; बाऽल B. A. L.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से डाइमार्केप्रॉल, 2 : 3—dimercapto propanel होता है। डाइमर्केप्रॉल को प्राप्त करने के लिए पहले एलिल अल्कोहल् (Allyl alcohol) और ब्रोमीन की प्रतिक्रिया से 2 : 3—dimercapto propanol प्राप्त किया जाता है। अब इसकी एवं सोडियम् हाइड्रोजन सल्फाइड की परस्पर प्रतिक्रिया से डाइमर्केप्रॉल प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९% (w/w) $C_3 H_8 O S_2$ होता है।

वर्णन—बाऽल् (B. A. L.) एक स्वच्छ या हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें किंचित् लहसुन-की सी (Alliaceous) गंध आती है। विलेयता—२०° तापक्रम पर यह २० भाग जल में घुलनशील होता है। अल्कोहल् (९०%) तथा मेथिल अल्कोहल् में भी घुल जाता है इसके अतिरिक्त बेंजिल बेंजोएट (Benzyl benzoate) के साथ मिलाने से भी मिल जाता (Miscible) है। स्थिर तेलों (Fixed oils) में अविलेय होता है। किन्तु बेंजिल बेंजोएट में बनाये हुए मिश्रण में स्थिर तेल मिलाने से सॉल्यूशन-सा बन जाता है।

मात्रा—प्रथम दिन २०० मिलिग्राम या ३ ग्रेन निम्नांकित मात्राओं (Divided doses) में—इसके पश्चात् रोगी की अवस्था के अनुसार। मार्ग—पेशिगत सूचिकाभरण द्वारा (By intramuscular injection)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाऽऽल (B. A. L.) का आविष्कार द्वितीय महायुद्ध में आर्सेनिक गैस (Lewisite) के अगद के रूप में किया गया था। इसके प्रयोग से मूत्र के साथ आर्सेनिक से निस्सरण शीघ्रतापूर्वक होने लगता है। अतएव आर्सनिक या संखियाजन्य विषमयता के लिए यह एक उत्तम अगद या प्रतिविष है। संखिया के अतिरिक्त यह एन्टीमनी, बिस्मथ, स्वर्ण (Gold) तथा पारद (Mercury) जन्य विषमयता में भी उपयोगी सिद्ध होता है। संखिया या पारद के प्रयोग के कुपरिणामस्वरूप उत्पन्न त्वक्शोफ (Dermatitis) में बाऽऽल (BAL) के प्रयोग से तत्काल लाभ होता है।

प्रयोग-विधि—श्लैष्मिक कलाओं पर "बाल" तीव्र क्षोभक प्रभाव करता है, अतएव इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) द्वारा करना चाहिए। शिरागत सूचिकाभरण द्वारा इसका प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए। गम्भीर विष-

मयता की अवस्थाओं में प्रारम्भ में २ दिन तक प्रत्येक ४–४ घंटे पर औषधि दी जाती है। तीसरे दिन यह संख्या घटाकर दिन में केवल ४ बार और उसके बाद १० दिन तक या जब तक लक्षण शान्त न हो जायँ दिन में २ बार देना चाहिए। साधारण प्रकार की विषमयता में निम्न चिकित्साक्रम उपयुक्त है--प्रथम २ दिन औषधि ४–४ घंटे पर दी जाती है, इसके बाद तीसरे दिन केवल २ बार और इसके बाद १० दिन तक प्रतिदिन १ बार। यदि आवश्यकता हो तो एक बार के बजाय २ बार या १० दिन के बजाय अधिक दिनों तक भी चिकित्साक्रम को चलाया जा सकता है। इस चिकित्साक्रम में औषधि की मात्रा प्रतिकिलोग्राम (kg.) शरीर भार के लिए ५ मिलिग्राम (mg.) के हिसाब से अपेक्षित होता है। स्वर्ण-विषमयता (Gold poisoning) में भी यही मात्रा पर्याप्त होती है, किन्तु पारद-विषमयता (Mercurial poisoning) में यह मात्रा अपेक्षाकृत अधिक रखनी पड़ती है।

सावधानी--"बाऽऽल" के चिकित्साक्रम में कभी-कभी मात्राधिक्य (प्रति किलो ग्राम शरीर पर ८ मि० ग्रा० से अधिक देने से) अनेक उपद्रव या विषाक्त-लक्षण (Toxic effects) लक्षित होते हैं--यथा शिर में दर्द, वमन या कै, मुँह तथा आँखों में जलन होना तथा शरीर में इतस्ततः दर्द होना। कभी-कभी थोड़े समय के लिए रक्तभार में वृद्धि सी हो जाती है तथा गले में अवरोध का अनुभव होता है। स्थानिक प्रयोग से त्वचागत अनूर्जिक उपद्रव (Cutaneous allergic reaction) हो सकता है।

(ऑफिशल योग)

१--इन्जेक्शिओ डाइमर्कैप्रोलाइ Injectio Dimercaproli (Inj. Dimercapr.), I.P., B, P,--ले०; इन्जेक्शन ऑव डाइमर्कैप्रॉल Injection of Dimercaprol, इंजेक्शन ऑव "बाऽऽल" Injection of BAL--अं०; "बाल" का इन्जेक्शन--हिं० डाइमर्कैप्रॉल ५ ग्राम, बेंजिल बेंजोएट ९·६ मि० लि०, मूँगफली का तेल (Arachis oil) आवश्यकतानुसार १०० मि० लि० तैयार औषधि के लिए। "बाऽऽल" का इन्जेक्शन एक पीले रंग का चिपचिपा (Viscous) द्रव होता है, जिससे एक तीक्ष्ण अरुचिकारक (Pungent and offensive) गंध आती है। प्रयोग-विधि--शिरागत सूचिकाभरण द्वारा। मात्रा--प्रथम दिन ४ मि० लि० (सी० सी०) तक विभाजित मात्राओं में (In divided doses) तदनु रोगी की अवस्था के अनुसार।

सोडियाइ थायोसल्फास (ले०), I. P.
Sodii Thiosulphas (Sod. Thiosulph.)

रासायनिक संकेत : $Na_2S_2O_3, 5H_2O$.

नाम--सोडियम् थायोसल्फेट Sodium Thiosulphate--अं०।

वर्णन--सोडियम थायोसल्फेट के पारदर्शी तथा सूच्याकार त्रिपार्श्विक क्रिस्टल (Monoclinic prismatic crystals) होते हैं, जो गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् नमकीन होते हैं। सूखी गरम हवा के प्रभाव से ये क्रिस्टल्स प्रस्फुरित (Efflorescent) होते तथा नमी से पसीजते (Deliquescent) हैं। मात्रा--७ से १५ ग्रेन या $\frac{1}{2}$ से १ ग्राम ($\frac{1}{2}$ से १ माशा)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

"बाऽऽल" के आविष्कार के पहले सोडियम थायोसल्फेट संखिया, बिस्मथ तथा पारद एवं स्वर्ण आदि जन्य विषमयता के लिए सर्व प्रसिद्ध अगद औषधि थी। इसके अतिरिक्त इसका

प्रयोग "सायनायड विषमयता (Cyanide Poisoning" में भी किया जाता है। एतदर्थ पहले सोडियम् नाइट्राइट विलयन (१% सॉल्यूशन १० सी० सी० से ५० सी० सी० तक—शिरागत सूचिकाभरण द्वारा शनैः शनैः) का प्रयोग किया जाता है। इसके बाद सोडियम् थायोसल्फेट सॉल्यूशन (२५ से ५०% बल का—२५ सी० सी० मात्रा तक) का इन्जेक्शन दिया जाता है। इससे सायनाइड, थायोसायनेट में परिणित हो जाता है।

(योग)

१—इन्जेक्शिओ सोडियाइ थायोसल्फेटिस Injectio Sodii Thiosulphatis (Inj. Sod, Thiosulph.) I. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव सोडियम् थायोसल्फेट Injection of Sodium Thiosulphate—अं०। मात्रा—५ से १५ ग्रेन (०·३ से १ ग्राम)। मार्ग—अधस्त्वक् अथवा पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

पोटसियाइ आयोडाइडम् (पोटासियम् आयोडाइड) I. P., B. P. Potassii Iodidum (Pot. Iod.)—ले०; (Potassium Iodide—अं०)।

रासायनिक संकेत : ki.

प्राप्ति-साधन—यह पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड सॉल्यूशन तथा आयोडीन की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९% पोटासियम् आयोडाइड (ki) होता है।

वर्णन—पोटासियम् आयोडाइड के रंगहीन तथा पारदर्शक (Transparent) अथवा किंचित् अपारदर्शक (Somewhat opaque) क्रिस्टल्स या सफेद दानेदार चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन एवं किंचत् तिक्त होता है। विलेयता—०·७ भाग जल, २२ भाग अल्कोहल् (९५%) तथा २ भाग ग्लिसरोल में घुल जाता है।

मात्रा (Dose)—०·३ से २ ग्राम (५ से ३० ग्रेन) (२) अवटुका ग्रन्थि विषाक्तता (Thyrotoxicosis) में—३० से ६० मि० ग्रा० (½ से १ ग्रेन)।

असंयोज्य पदार्थ (Incompatibles)—बिस्मथ सबनाइट्रेट, स्पिरिट ईथर नाइट्रोसाइ; फेरिक-साल्ट्स के विलयन, डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड, लाइकर स्ट्रिक्नीन० हाइड्रोक्लोर०, पोटासियम् क्लोरेट, अल्कलायड्स के लवण (Alkaloidal salts) तथा स्टार्च युक्त पदार्थ।

वक्तव्य—पोटासियम् आयोडाइड निम्न योगों में पड़ता है:—(१) टिंक्चर आयोडीन फोर्ट० तथा (२) मिटिस एवं (३) ल्यूगॉल सॉल्यूशन।

सोडियाइ आयोडाइडम् Sodii Iodidum (Sod. Iod.) I. P., B. P.—ले०; सोडियम् आयोडाइड Sodium Iodide—अं०।

रासायनिक संकेत : Na I.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह सोडियम् हाइड्रॉक्साइड सॉल्यूशन एवं आयोडीन की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९% सोडियम् आयोडाइड (Na I.) होता है। सोडियम् आयोडाइड सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन एवं किंचित् तिक्त होता है। नमी में खुला रहने से पसीजता (Deliquescent) है। विलेयता—०·६ भाग जल तथा २ भाग अल्कोहल् (९५%) में घुल जाता है।

मात्रा—०·३ से २ ग्राम (५ से ३० ग्रेन)। अवटुकाग्रन्थि विषाक्तता (Thyrotoxicosis) में ३० से ६० मि० ग्रा० (½ से १ ग्रेन)।

(नॉट ऑफिशल)

अमोनियाइ आयोडाइम् Ammonii Iodidum (Ammon. Iod.)—ले०; अमोनियम् आयोडाइड Ammonium Iodide—अं०।

वर्णन—यह छोटे-छोटे (सूक्ष्म) घनाकार क्रिस्टल्स (Cubical crystals) अथवा सफेद दानेदार चूर्ण के रूप में होता है। खुला रहने से आर्द्रता को सोखना (Hygroscopic) होता है। मात्रा—२ से ६ ग्रेन (०·१२ से ०·४ ग्राम)।

गुण-कर्म

शोषण एवं शारीरिक धातुओं में वितरण—आयोडाइड्स की क्रिया आयोडीन की ही भाँति होती है, किन्तु आमाशयान्त्र प्रणाली पर यह आयोडीन की अपेक्षा कम क्षोभक प्रभाव करते हैं। किन्तु अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर आमाशय में क्षोभक प्रभाव करने के कारण हृल्लास (Nausea) एवं वमन का उपद्रव करते हैं। आमाशयिक रस की क्रिया से आयोडीन का कुछ अंश स्वतन्त्र होकर किण्वों की क्रिया (Enzymatic processes) पर अवरोधक प्रभाव हो सकता है। आयोडाइड्स का शोषण आँतों द्वारा होता है। शोषणोपरान्त अयनिक रूप में (Ionic form) में रक्त प्रवाह में तथा शारीरिक धातुओं के कोशा-परिसरीयद्रव (Extra-cellular fluid) में पाया जाता है। कभी-कभी मेदसाभों (Lipoids) के साथ संयुक्त होकर सेन्द्रिय लवण के रूप में भी पाया जाता है। क्लोराइड की भाँति यह रक्तकणों में भी प्रविष्ट होता है। **आयोडाइड्स शरीर धातुगत अत्यधिक क्लोराइड्-संचय को स्थानान्तरित करने में भी सहायक होता है।** शोषित आयोडाइड्स का कुछ भाग ग्रैवेयक ग्रंथि (Thyroid gland) में थाइरॉक्सीन (Thyroxine) के रूप में संचित होता है। शरीरगत आयोडीन का ६०% भाग इसी ग्रंथि में पाया जाता है। इसकी मात्रा में न्यूनाधिक्य होने से ग्रैवेयक ग्रंथि के अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। ब्रह्मवारि (Cerebro-spinal fluid) में आयोडाइड्स अत्यल्प मात्रा में प्रविष्ट होते हैं।

मूत्रप्रणाली पर आयोडाइड्स की क्रिया **लवण-मूत्रल द्रव्यों** (Saline Diuretics) की भाँति होती है।

श्वसनमार्ग में यह श्वास प्रणालिकाओं के स्राव को बढ़ाते तथा श्लेष्मा या कफ को पतला करते हैं। इस प्रकार कफनिस्सारक (Expectorant) प्रभाव करते हैं।

फिरंगनाशक प्रभाव (Antisyphilitic action)—फिरंग-चक्राणुओं (Spirochaetes of syphilis) पर यह प्रत्यक्ष घातक (Parasiticide) प्रभाव नहीं करता। **आयोडाइड्स की क्रिया फिरंग की तृतीयावस्था में फिरंगज गोंदार्बुदों** (Gumma) **पर होता है।** आयोडाइड्स तान्त्विक धातुओं (Fibrous tissues) के विलयन एवं शोषण (Resolution) में सहायक होते हैं। आयोडाइड्स ट्रिप्सिन के साथ संयुक्त होकर गलित धातुओं (Necrotic tissue) के द्रावण में सहायक होते हैं अथवा इनकी क्रिया से प्रोटीन को गलानेवाले किण्वों (Proteolytic ferments) की उत्पत्ति होती है, जिनसे गोंदार्बुदों के तन्वीय धातुओं का पाचन एवं शोषण हो जाता (digest and absorb gummatous tissue) है।

निस्सरण (Excretion)—आयोडाइड्स का उत्सर्ग प्रधानतः मूत्र के साथ होता है। कुछ अंश लाला (Saliva),आमाशयिकरस, पित्त, पसीना, स्तन्य तथा शारीरिक द्रव्यों एवं परिस्रावों (Effusions) के साथ होता है। प्रयोग के थोड़ी देर बाद ही इसका उत्सर्ग लालास्राव के साथ होता और मुँह में धात्वीय स्वाद (Metallic taste) का अनुभव होने लगता है। प्रयुक्त मात्रा का ७५% से भी अधिक भाग उत्सर्गित हो जाता है।

आयोडीन-विषमयता (आयोडिज्म Iodisms)—आयोडीन के चिकित्साक्रम में कभी-कभी विषमयता के लक्षण प्रगट होते हैं। यह विषाक्तता उस समय होता है, जब औषधि का सेवन अधिक मात्रा में निरंतर चिरकाल तक किया जाता है, अथवा कभी-कभी अल्प मात्रा में सेवन किये जाने पर भी वैयक्तिक स्वभाव वैशिष्टय (Idiosynerasy) के कारण भी होता है। ये लक्षण प्रायः त्वचा एवं श्लैष्मिक कलाओं पर क्षोभजन्य (प्रदाहजन्य) लक्षणों की भाँति होते हैं।

तरुण स्वरूप की विषमयता (Acute) औषधि सेवन के तत्काल बाद या ४-५ घंटों के बाद प्रगट होती है। ऐसी स्थिति में नजला, गले के अन्दर सूजन (जिससे श्वास लेने में तकलीफ होती है), त्वचा पर जगह-जगह त्वचाधः रक्तस्राव, ज्वर, संधिशूल आदि होते हैं। लसीका ग्रंथियाँ भी सूज जाती (गिल्टी) हैं। चिरकालीन विषमयता में त्वचा पर नाना प्रकार के विस्फोट (Eruptions) निकलते हैं, मुँह का स्वाद बिगड़ जाता है, मसूड़े एवं दाँतों में दर्द होता है, नाक से पानी बहता है, छींके अधिक आती हैं। आँख लाल हो जाती है तथा पलकें सूज आती हैं।

चिकित्सा—विषाक्तता होने पर औषधि का प्रयोग फौरन बन्द कर देना चाहिए। आयोडीन का उत्सर्ग कराने के लिए सोडियम्क्लोराइड मुख द्वारा ३० ग्रेन दिन में ३ बार जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर मुख द्वारा दें, अथवा १०० से २०० सी० सी० लवण जल (Normal saline) शिरामार्ग द्वारा प्रतिदिन दें। इसके अतिरिक्त सोडियम् बाइकार्बोनेट, स्प्रिट अमोनिया एरोमेटिक, तथा अमोनियम् बाइकार्बोनेट आदि का भी प्रयोग किया जाता है। त्वचागत विस्फोटों के शमन के लिए लाइकर आर्सेनिकालिस (फाउलर-सॉल्यूशन) दे सकते हैं। रोगी को काफी मात्रा में पानी-पीने को देना चाहिए।

आमयिक प्रयोग।

फिरंग—फिरंग में आयोडाइड्स का प्रयोग प्रायः सहायक औषधि के रूप में किया जाता है। इसकी विशेष क्रिया फिरंगज गोंदार्बुदों (**Gumma**) पर होता है, जिससे तद्गत फिरंग चक्राणुओं पर अन्य फिरंगनाशक औषधियों (पारद, आर्सेनिक तथा बिस्मथ) की क्रिया अच्छी तरह से होती है। इसके लिए इसका प्रयोग अन्य-अन्य फिरंगनाशक औषधिओं के साथ-साथ अथवा चिकित्साक्रम के बीच-बीच में किया जाता है। एतदर्थ २० से ३० ग्रेन की मात्रा दिन में ३ बार दी जाती है।

श्वसन संस्थान—पुरानी खाँसी (**Chronic bronchitis**) में तथा ऐसी अन्य अवस्थाओं में जब बलगम आसानी से न निकलता हो, तथा श्वासप्रणालिकाओं की श्लैष्मिक कला में साधारण शोथ भी हो तो आयोडाइड्स का प्रयोग उपयोगी होता है। किन्तु तरुण श्वासनलिका शोथ (**Acute Bronchitis**) में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। तमक-श्वास (**Bronchial asthma**) में इसे स्ट्रेमोनियम् तथा एफेड्रीन का साथ प्रयुक्त किया जाता है।

रक्तसंवहन-संस्थान—फिरंगजन्य कतिपय हृदय एवं रक्तसंवहन संस्थान के रोगों में—यथा धमनीखरोत्कर्ष (Anteriosclerosis), रक्तभाराधिक्य (High Blood Pressure), हृच्छूल (Angina Pectoris) आदि—आयोडाइड्स का प्रयोग उपयोगी बतलाया जाता है।

गलगण्ड तथा अन्य ग्रैवेयक ग्रंथि रोग—इसका वर्णन ग्रैवेयक ग्रंथि पर कार्य करने वाली औषधियों के प्रकरण में किया जायगा।

गुरुधातुजन्य विषमयता (**Metallic Poison**)—आयोडाइड्स का प्रयोग गुरुधातुओं विशेषतः **सीस एवं पारदजन्य चिरकालज विषमयता** में शरीर में संचित धातु के उत्सर्ग के लिए किया जाता है। इसके लिए एक तो आयोडाइड्स का सेवन मैग० सल्फ० के साथ करना चाहिए ताकि स्थानान्तरित धातु पुनः आँतों द्वारा शोषित न हो सके; दूसरे अल्प मात्रा में इसको देना चाहिए ताकि संचित धातु का निस्सरण धीरे-धीरे तथा थोड़ा-थोड़ा करके हो। सहसा अधिक मात्रा में देने से उग्र विषाक्तता की सम्भावना हो सकती है।

अल्प मात्राओं में आयोडाइड्स का प्रयोग त्वचागत विभिन्न फंगस-उपसर्ग में यथा एकटिनोमाइसीजजन्य विकृति (**Actinomycosis**), स्पोरोट्राइकम् शेन्कियाइ (**Sporotrichum Schenckii**) नामक फंगस की विकृति में (**Sporotrichosis**) तथा ब्लेस्टोमाइसीज डर्मेटिटिडिस (**Blastomyces dermatitidis**) की विकृति में (**Blastomycosis**) आदि व्याधियों में भी उपयोगी बतलाया जाता है।

इसके अतिरिक्त कभी-कभी आयोडाइड्स के प्रयोग से सूजाकजन्य संधिशोथ (**Gonorrhoeal arthritis**), चिरकालज आमवात (**Chronic Rheumatism**) तथा तन्तुशोथ (**Fibrositis**) में बहुत लाभ होता है। इन अवस्थाओं में भी आयोडीन का प्रभाव तन्त्वीय धातुओं के गलाने एवं विलयन में सहायक होने के कारण (**Resolvent action**) ही होती है।

प्रयोग-विधि—पोटासियम् आयोडाइड का सेवन काफी जल या दूध के साथ तथा भोजन के १ घंटे बाद करना चाहिए। आयोडाइड्स की अनेक द्रव्यों के साथ असंयोज्यता होती है। अतः उन द्रव्यों के साथ इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रकरण ५

आम प्रवाहिका या अमीबिक-प्रवाहिका में कार्य करनेवाली विशिष्ट औषधियाँ :—

एसिटार्सोल (Acetarsol) B. P.

रासायनिक संकेत : $C_8 H_{10} O_5 NAs$.

पर्याय—एसिटार्सोन Acetarsone; स्टोवार्सल Stovarsol।

प्राप्ति साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 3—acetamido—4—hydroxy phenyl arsonic acid होता है। इसमें २७·१ प्रतिशत से २७·५ प्रतिशत आर्सेनिक (As.) होता है।

वर्णन—स्टोवार्सल सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् खट्टा होता है। विलेयता—ठंडे पानी में प्रायः अविलेय (Almost insoluble), उबलते पानी में साधारणतः घुल जाता है। डायल्यूट क्षारों (Dilute alkalies) में घुलनशील होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) तथा डायल्यूट एसिड्स में नहीं घुलता।

मात्रा—१ से ४ ग्रेन। (६० से २५० मि० ग्रा०)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

एसिटार्सल या स्टोवार्सल की क्रियाशीलता प्रायः मुख मार्ग द्वारा सेवन किये जाने पर होती है। चिरकालज अमीबिक प्रवाहिका (Chronic amoebic dysentery) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। विशेषतः उस अवस्था में जब कि रोगी के मल में कामरूपीय जीवाणु (Amoeba) कोष्ठावस्था में निकलता है, तथा अन्य औषधियों के सेवन से लाभ होता प्रतीत न हो रहा हो। एतदर्थ ४ ग्रेन की मात्रा दिन में दो बार भोजनोपरान्त करके ७ से १० दिन तक दी जाती है। यदि पुनः दूसरा कोर्स देना हो तो १-२ सप्ताह के अन्तर से देना चाहिए।

कामरूपीय प्रवाहिका के अतिरिक्त स्टोवार्सल का प्रयोग आन्त्रगत जियार्डिआ कृमि-उपसर्ग (Giardiasis or Lambliasis) में भी किया जाता है। इसके लिए एक सप्ताह का चिकित्सा-क्रम अपेक्षित होता है। ट्राइकोमोनास वेजिनालिस के उपसर्ग से होनेवाले योनिप्रदाह (Vaginitis) में स्टोवार्सल का स्थानिक प्रयोग योनिवर्ति (Pessary) अथवा प्रधमन-चूर्ण (Insufflation powder) के रूप में किया जाता है। प्रधमन के लिए इसको केओलिन (Light kaolin) एवं सोडियम् बाइ-कार्बोनेट (बराबर-बराबर तथा एसिटार्सोल १२·५ %) के साथ मिलाकर एक बार में इस चूर्ण की ६० ग्रेन या ४ ग्राम मात्रा (जिसमें एसिटार्सोल ८ ग्रेन होता है) प्रयुक्त करते हैं। सव्रण मुखपाक (Vincent angina) में इसका स्थानिक प्रयोग तथा मुख द्वारा भी सेवन किया जाता है।

निस्सरण एवं विषाक्तता—शोषणोपरान्त एसिटार्सल का निस्सरण मन्द गति से होता है। अतएव इसमें संचय की प्रवृत्ति (Cumulative tendency) पायी जाती है। संखिया का यौगिक होने से औषधि विषैली है और तज्जन्य विषाक्तता की ओर चिकित्सक का ध्यान होना चाहिए। विषाक्तता होने पर प्रायः आमाशयान्त्र एवं त्वचागत उपद्रव लक्षित होते हैं। अतएव वमन, अतिसार एवं त्वचा पर नाना प्रकार के विस्फोट तथा कभी-कभी निस्तरण (Exfoliative Dermatitis) का उपद्रव होता है। यकृत एवं वृक्क के रोगियों में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

व्यावसायिक योग :—

(१) स्पाइरोसिड Spirocid (Hoechst.) इसकी ०·२५ ग्राम (युवा के लिए) तथा ०·०१ ग्राम (बच्चों के लिए) की टॅवलेट्स आती हैं।

(२) ओरार्सन Orarsan (Boots)—४ ग्रेन की गोलियाँ मुख द्वारा दी जाती हैं। यह भी एसिटार्सोल का यौगिक है।

(३) स्टोवार्सल Stovarsol (M. B.) ४ ग्रेन की गोलियाँ।

कारबरसोनम् (कारबरसोन) I. P., B. P.

Carbarsonum (Carbarson.)—ले०; Carbarsone—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_7 H_9 O_4 N_2 As$.

प्राप्ति-साधन—कारबरसोन भी संखिया का यौगिक है। रासायनिक दृष्टि से यह P—ureidophenyl-arsonic acid होता है और P—aminophenylarsonic acid तथा urea को परस्पर मिलाकर गरम करने से प्राप्त किया जाता है। इसमें २८·१ प्रतिशत से २८·८ प्रतिशत तक आर्सेनिक होता है।

वर्णन—कारबरसोन सफेद चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित अम्ल या खट्टा होता है। विलेयता—क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स तथा कार्बोनेट्स के विलयन (सॉल्यूशन) में अच्छी तरह घुल जाता है; किन्तु जल तथा अल्कोहल् (९५%) में थोड़ा-थोड़ा घुलता है; और क्लोरोफॉर्म तथा सालवेंट ईथर में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है।

मात्रा—२ से ४ ग्रेन (०·१२ से ०·२५ ग्राम)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

अमीबिक प्रवाहिका के लिए कारबरसोन एक रामबाण औषधि समझा जाता है। इसकी क्रिया प्रायः स्टोवर्सल की ही भाँति होती है, किन्तु इसमें क्रियाशीलता स्टोवर्सल की अपेक्षा ८ गुनी होती है, और साथ ही उसकी अपेक्षा कम विषैला है। किन्तु इस औषधि की क्रिया अन्तः कामरूपीय धातुनाशी (Entamoebia histolytica) की औद्भिदावस्था (Vegetative stage) पर विशेष नहीं होती। हाँ यह विशेष रूप से जीवाणु की आन्त्रगत अवस्थाओं (Intestinal phase) पर क्रिया करता तथा जीवाणु की कोष्ठावस्था (Cysts) का निर्मूलन करता है। अतः व्याधि की पूर्णतः चिकित्सा के लिए पहले इमेटीन का एक कोर्स देकर कारबरसोन का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। प्रतिदिन ४ ग्रेन कारबरसोन जिलेटिन कैप्स्यूल में रखकर भोजनोपरान्त २ बार करके ७ से १० दिन तक दिया जाता है। यदि आवश्यकता हो तो १०-१५ दिन के अन्तर से औषधि का दूसरा कोर्स भी दिया जा सकता है। जिन रोगियों में मौखिक सेवन से लाभ न हो रहा हो (Obstinate cases) तो उनमें कारबरसोन का प्रयोग

वस्ति के रूप में भी किया जा सकता है। इसके लिए पहले साधारण वस्ति (Enema) द्वारा मलाशय का शोधन करने के पश्चात् २% सोडियम् लेकर उसमें ३० ग्रेन कार्बरसोन मिला दें और एक दिन के अन्तर से ५ दिन तक देने से कार्य हो जाते हैं।

स्टोवार्सल की भाँति योनिप्रदाह (Trichomonal vaginitis) में इसका स्थानिक प्रयोग किया जाता है। मुख द्वारा इसका सेवन उष्णकटिबन्धीय उपसिप्रियता (Tropical eosinophilia) तथा बच्चों के जन्मजात या सहज फिरंग (Congenital Syphilis) रोग में भी उपयोगी होता है।

निस्सरण एवं विषाक्तता—शोषणोपरान्त शरीर से औषधि का निस्सरण प्रधानतः मूत्रमार्ग से होता है। अपेक्षाकृत औषधि कम विषैली होने से लगातार अधिक समय तक भी इसका प्रयोग किया जा सकता है। साधारणतया विषाक्तता की सम्भावना बहुत कम होती है। किन्तु कभी वमन, अतिसार एवं पेट में दर्द तथा त्वचा पर शीतपित्ती आदि का उपद्रव हो जाता है। यकृत एवं वृक्क के रोगियों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(योग)

१—टॅबलेट्स ऑव कारबरसोन Tablets of Carbarsone, B. P. Add.—अं०; कारबरसोन की टिकिया—हिं०।

मात्रा—(कारबरसोन) २ से ४ ग्रेन। साधारणतया ४ ग्रेन की टिकिया दी जाती है।

व्यावसायिक योगः—

(१) ल्यूकार्सोन Leucarsone (M. B.) यह कारबार्सोन का यौगिक है। ४ ग्रेन की गोलियाँ आती हैं।

(२) कारबार्सोन Carbarsone (B. W. & Co.)।

(३) कारबार्सोन Carbarsone (S. P. W.)। पाउडर आता है।

चिनियोफोनम् सोडियम् (चिनियोफोन सोडियम्) I, P., B. P.

Chiniofonum Sodium (Chiniofon. Sod.)—लै०; Chiniofon Sodium—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_9H_5O_4NI\ S\ Na$.

पर्याय—क्विनोक्सिल Quinoxyl; यात्रिन Yatren।

प्राप्ति-साधन—चिनियोफोन सोडियम् रासायनिक दृष्टि से Sodium 8—hydroxy—7—iodoquinoline 5—Sulphonate होता है। इसमें कम से कम ३३.३% I होता है।

वर्णन—यह प्रायः सफेद या हल्के क्रीम रंग का या गुलाबी रंग लिये क्रीम रंग का चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में पहले तिक्त किन्तु बाद में अनुरस मधुर (Sweetish after taste) होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर ३० भाग जल में घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल (९५%) साल्वेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में अविलेय (Insoluble) होता है। वक्तव्य—इसके सॉल्यूशन को गरम करने से वियोजित (Decompose) हो जाता है।

मात्रा। ०.१ से ०.५ ग्राम (१½ ग्रेन से ८ ग्रेन) या १०० से ५०० मि०ग्रा०; (२) गुदवस्ति (Rectal injection) के लिए—१ से ५ ग्राम (१५ से ७५ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

चिनियोफन भी अमीबिक प्रवाहिका के लिए एक विशिष्ट औषधि समझा जाता है। यह एक उत्तम अमीबानाशक द्रव्य (Amoebicidal remedy) है और तरुण एवं चिरकालज दोनों ही प्रकार के अमीबा-उपसर्ग (Acute and Chronic amoebiasis) में कार्य करता है। इसकी क्रिया अमीबा के औद्भिद् एवं कोष्ठीय दोनों ही रूपों (vegetative and Cystic forms) पर होती है। किन्तु उक्त क्रिया केवल आन्त्रगत जीवाणुओं पर ही होती है। अतएव व्याधि के पूर्णतः उन्मूलन में यह इमेटीन की स्थानापन्न औषधि नहीं हो सकती अपितु सहायक औषधि के रूप में ही प्रयुक्त की जा सकती है। चिनियोफन आइडॉक्सीक्विनोलीन समुदाय की औषधि (Idoxyquinoline derivative) है और अमीबा पर यह प्रत्यक्ष घातक प्रभाव करती है।

सेवन-विधि—अमीबिक डिसेन्टरी में इसका सेवन मुख द्वारा गोलियों (Pills) के रूप में किया जाता है किन्तु जिन रोगियों में अकेले मौखिक सेवन से लाभ न हो रहा हो उनमें इसके साथ-साथ बस्ति के रूप (Retention enema) में गुदामार्ग द्वारा भी दी जाती है। चूँकि आमाशयिक रस के द्वारा इसके वियोजित (Decompose) होने का डर रहता है, अतएव मौखिक सेवन के लिए इसको आँतों में गलनेवाली गोलियों (Enteric-coated pills) के रूप में प्रयुक्त करते हैं। ४ से ८ ग्रेन (०.२५ से ०.५ ग्राम) दिन में तीन बार एक या दो सप्ताह तक दिया जाता है। यदि चिकित्साक्रम को पुनः दुहराने की आवश्यकता हो तो ८–१० दिन के अन्तर से ही प्रारम्भ करना चाहिए। गुदामार्ग द्वारा प्रयुक्त करने के लिए चिनियोफोनम् पाउडर के २½% घोल का प्रयोग किया जाता है। पहले इसकी १ औंस मात्रा दी जाती है, जो उत्तरोत्तर बढ़ाकर ७–८ औंस तक लायी जाती है। बस्ति देने पर कोशिश यह किया जाता है कि औषधि ४–६ घंटे तक मलाशय एवं आन्त्र कुण्डलिका (Sigmoid colon) में रहे।

चिनियोफोनम् सॉल्यूशन देने के पूर्व २% सोडियम् बाई कार्बोनेट के विलयन की बस्ति देकर मलाशय को स्वच्छ कर लेना चाहिए। प्रारम्भ में चिनियोफोनम् सोल्यूशन की बस्ति प्रतिदिन कई बार देनी पड़ती है, परन्तु बाद में १ बार प्रतिदिन से भी काम चल जाता है। जिन रोगियों में इमेटीना-बिस्मथ आयोडाइड कार्य नहीं करता उनमें उक्त चिनियोफोनम् एनिमा विशेष उपयुक्त होता है। जिन रोगियों को आयोडीन सह्य न हो (Iodine intolerant cases) तथा जिनका यकृत विकृत हो उनमें चिनियोफोनम् का प्रयोग निषिद्ध है।

शोषण एवं निस्सरण—मुख द्वारा सेवन किये जने पर लगभग १३ प्रतिशत औषधि का शोषण आँतों द्वार शीघ्रतापूर्वक हो जाता है। शेष औषधि मल के साथ धीरे-धीरे उत्सर्गित होती रहती है। शोषणोपरान्त ६० प्रतिशत भाग अपरिवर्तित रूप में मूत्र के साथ उत्सर्गित हो जाता है। शेष भाग शरीर में वियोजित होकर इस प्रकार स्वतंत्र आयोडीन का संग्रह ग्रैवेयक ग्रंथि में होता है।

व्यवसायिक योग :—

(१) एब्लोचिनAblochin (I. C. I.)—इसका (१) पाउडर (१० एवं ५० ग्राम की शीशियाँ) तथा (२) टॅबलेट्स् (०.२५ ग्राम की २५ एवं १०० टॅबलेट्स की शीशियाँ) आती हैं। २ से ४ टॅबलेट दिन में ३ बार ७–१० दिन तक मुख द्वारा। आवश्यकतानुसार १ सप्ताह के बाद

चिकित्साक्रम दुहराया जा सकता है। २ प्रतिशत सोल्यूशन की ८ औंस मात्रा (२) धारकवस्ति (Retention enema) के रूप में भी दी जाती है।

डाइ-आयडोहाइड्रॉक्सीक्विनोलिनम् (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_9H_5ONI_2$.

नाम--Di-Iodohydroxyquinolinum (Di-iodohydroxyquinolin.)—ले०; डाइ-आयडोहाइड्रॉक्सीक्विनोलीन (Di-iodohydroxyquinoline)—अं०।

पर्याय—डाइडोक्विन (Diodoquin); एम्बिक्विन (Embequin)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 8—*hydroxy*—*5 : 7*—*di-iodoquinoline* होता है। इसमें ६१·५ प्रतिशत से ६४ प्रतिशत तक आयोडीन (I) होता है।

वर्णन—यह हल्के पीले रंग से पीलापन लिये भूरे रंग का अतिसूक्ष्म क्रिस्टलाइन (Micro-crystalline) चूर्ण होता है जो प्रायः गन्धहीन एवं स्वादहीन होता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) तथा अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) एवं सालवेंट ईथर में भी थोड़ा-थोड़ा घुलता है (Sparingly soluble)।

मात्रा—१ से २ ग्राम (१५ से ३० ग्रेन) प्रतिदिन।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

डाइडोक्विन के सामान्य गुण-कर्म चिनियोफोन से मिलते-जुलते हैं, किन्तु इसमें आयोडीन की मात्रा चिनियोफोन की अपेक्षा अधिक होती है। आन्त्रगत अमीवा-उपसर्ग (Intestinal amoebiasis) के लिए यह उत्तम औषधि है। विशेषतः व्याधि की चिरकालज अवस्था (Chronic stage) में यह बहुत उपयोगी है। व्याधि की तरुणावस्था (Acute condition) में इमेटीन का ही प्रयोग अपेक्षित होता है। अथवा यदि चाहें तो इमेटीन के साथ इसको सहायक औषधि के रूप में दे सकते हैं। इस वर्ग की अन्य औषधियों की अपेक्षा इसमें विषैला प्रभाव बहुत कम होता है। डाइडोक्विन का सेवन मुख द्वारा १० से १२ ग्रेन की मात्रा में दिन में ३ बार करके १५–२० रोज तक किया जाता है। यदि चिकित्साक्रम दुहराने की आवश्यकता हो तो २–३ सप्ताह के अन्तर से ही पुनः प्रारम्भ करना चाहिए। आन्त्र द्वारा इसका शोषण अत्यल्प मात्रा में होता है, इसलिए विषैले प्रभाव की सम्भावना प्रायः नहीं होती; किन्तु कभी-कभी हृल्लास (Nausea), वमन, अतिसार, शिरःशूल गुद-कण्डू (Pruritus ani) तथा ज्वर आदि उपद्रव प्रगट होते हैं। त्वचा पर विस्फोट (Skin rashes) भी निकलते हैं। यकृत विकार एवं आयोडीन के प्रति असह्यता (Iodine intolerant) के रोगियों में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

(योग)

१—टॅबलेट्स ऑव डाइ-आयडोहाइड्रॉक्सीक्विनोलीन Tablets of Di-iodohydroxyquinoline, B. P. Add.—अं०। डाइडोक्विन की टिकिया—हिं०। मात्रा–१ से २ ग्राम प्रतिदिन। मात्रा-निर्देश न हो तो ०·३ ग्राम की टिकिया देनी चाहिए।

क्विनायडोक्लोरम् (क्विनायडोक्लोर), I. P.

Quiniodochlorum (Quiniod.)—ले०;

Quiniodochlor—अं०;

रासायनिक संकेत : $C_9 H_4 N, OHI. Cl$.

अन्य नाम—आयडोक्लोरहाइड्रॉक्सीक्विनोलीन Iodochlorhydroxyquinoline U. S. P.।

पर्याय—एन्टरोक्विनोल Entero-quinol; एन्टरोवायोफार्म Entero-Vioform।

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह 5-Chloro-7-iodo-8-hydroxyquinoline होता है। इसमें ३७·५ प्रतिशत से ४१·५ प्रतिशत तक आयोडीन तथा ११·५ प्रतिशत से १२·२ प्रतिशत तक क्लोरीन होता है।

वर्णन—खाकस्तरी रंग लिए हुए पीले रंग (Greyish yellow) का चूर्ण होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की सुगंधि आती है। प्रकाश में खुला रहने से विकृत हो जाता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (Almost-insoluble) होता है; अल्कोहल (९० प्रतिशत) में भी अल्प मात्रा में ही घुलता (Sparingly Soluble) है। गरम ग्लेशियल एसेटिक एसिड में घुल जाता है।

मात्रा—०·२५ ग्राम (४ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

एन्टरोवायोफॉर्म के गुण-कर्म तथा प्रयोग डाइडोक्विन या चिनियोफोन की ही भांति होते हैं। चिरकालीन अमीबिक उपसर्ग (Chronic amoebiasis) में विशेषतः अमीबा की कोष्ठावस्था (Cysts) में बहुत लाभप्रद होता है। एतदर्थ एन्टरोवायोफार्म की ०·२५ ग्राम या ४ ग्रेन की टिकिया दिन में ३ बार करके १० दिन तक दी जाती है। यदि दूसरा कोर्स देना आवश्यक हो तो १० दिन औषधि बन्द करके पुनः पूर्ववत् १० दिन का चिकित्साक्रम दिया जाता है। यदि एनिमा के रूप में प्रयुक्त करना हो, तो २०० सी० सी० जल में ८ गोली मिलाकर उक्त विलयन की वस्ति करनी चाहिए।

व्यावसायिक योगः—

एन्टरोवायोफार्म Entero-Vioform (Ciba)—इसमें वायोफार्म (Vioform : iodochlorhydroxyquinoline) तथा सेपेमीन (Sapamine) होता है। इसकी ०·२५ ग्राम की टॅबलेट्स आती है। २० टॅबलेट्स की ट्यूब (Tube) तथा १०० की शीशियाँ (Bottles) आती हैं। मात्रा—१–२ टिकिया दिन में ३ बार भोजनोत्तर पानी से निगल लें। एक कोर्स १० दिन का होता है। १ सप्ताह के बाद आवश्यकता पड़ने पर दूसरा कोर्स दें। इसके अतिरिक्त धारक एनिमा द्वारा ४ से ८ टिकिया (बच्चों को २-४ टिकिया) २०० सी० सी० जल में विलयन बनाकर एनिमा दें।

कुरची (Kurchi), I. P.

Family : Apocynaceae (करवीर-कुल)

नाम—हालेरीना Holarrhena, कोनेसियाइ बार्क Conessi Bark; टेलिचरी-बार्क Tellicherry Bark—अं; कुटजत्वक्-सं०; कुड़ेकी छाल, कड़वे कुड़े या कुरैया की छाल—हिं०।

प्राप्ति-साधन–कुरची, सितकुटज या कड़वे कुटज (कोरया) अर्थात् होलेरीना एन्टिडिसेन्टेरिका Holarrhena antidysenterica Wall. नामक वनस्पति के काण्ड की सुखाई हुई छाल (Dried stem-bark) होता है जिसे ८ से १२ वर्ष के पुराने वृक्षों से प्राप्त किया जाता है। उक्त छाल से काष्ठीय भाग को पृथक् करके (Freed from attached wood)

इसके छोटे-छोटे टुकड़े करके (Peeled into small pieces) अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में संगृहीत किया जाता है। इसमें कम से कम २ प्रतिशत कुर्ची के टोटल अल्कलायड्स होते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—कुटज के छोटे वृक्ष होते हैं, जो समस्त भारतवर्ष के जंगलों में स्वयंजात रूप से पाये जाते हैं।

वक्तव्य—कुटज या कुड़ा आयुर्वेद का एक प्रधान औषध-द्रव्य है। इसके प्रवाहिका-नाशक गुण से भारतीय चिकित्सक बहुत पहले से परिचित हैं। आयुर्वेद एवं यूनानी निघण्टुओं में दो प्रकार के कुटज का उल्लेख है—(१) सित (सफेद) तथा (२) असित (काला)। यूनानी चिकित्साशास्त्र में यही भेद कड़वे तथा मीठे भेद से प्रसिद्ध हैं। सित या कड़वा कुटज या कुड़ा उपर्युक्त वनस्पति ही है। मीठे कुटज से प्रायः एपोसाइनेसी कुल के राइटिआ जाति की निम्न दो उपजातियों का ग्रहण होता है—(१) राइटिआ टोमेन्टोसा Wrightia tomentosa Roem., तथा (२) राइटिया टिंक्टोरिया W. tinctoria Br. आयुर्वेद में कुटज की छाल के अतिरिक्त इसके बीजों (इन्द्रयव) का भी प्रचुर प्रयोग होता है। यूनानी चिकित्सा में कड़वे कुटज का प्रयोग तो प्रवाहिका में और मीठे कुटज के बीजों का प्रयोग पौष्टिक योगों में होता है। ध्यान रहे कि मीठे कुटज की प्रजातिओं में कुरची के अल्कलायड्स प्रायः नहीं या अत्यल्प मात्रा में पाये जाते हैं। अतएव रक्तप्रवाहिका में प्रयोग की दृष्टि से यह व्यर्थ-सा है। आज कल अज्ञानवश इनका उपयोग कड़वे कुटज की छाल में मिलावट (Adulteration) के लिए करते हैं। उपर्युक्त तीनों वृक्षों की आकृति कुछ मिलती जुलती है। अतः यह भ्रम प्रचलित हो गया है।

वर्णन। छाल (Stem Bark)—कड़वे कुटज की छाल या कुर्ची में कोई गंध तो नहीं होता, किन्तु यह स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। बाह्यतः यह कृष्णाभ भूरे रंग का या भूरे रंग का अथवा सफेदीमायल भूरे रंग का (Whitish-brown or buff to brownish in colour होता है।

बाह्यतल पर गहरी दरारें (Deep cracks) पड़ी होती हैं और अत्यन्त खुरदरा होता है। अन्तस्तल प्रायः चिकना होता है। मोटाई में छाल ६ से १२ मिलिमिटर होती है। लम्बाई एवं चौड़ाई दोनों ही दिशाओं में छाल टेढ़ी-मेढ़ी (Curved both longitudinally and transversely)। छाल तो तोड़ने पर भुरभुरा टूटता है (Fracture brittle) और टूटे हुए तल पर पीताभ वर्ण के दाग (Yellowish specks) दिखलाई पड़ते हैं।

रासायनिक संघटन—कुर्ची बार्क में अनेक अल्कलायड्स पाये जाते हैं, जिनमें निम्न विशेष महत्व के हैं, (१) कोनेसीन (Conessine : $C_{24}H_{40}N_2$) तथा कुर्चिसीन (Kurchisine); (२) कोनेसिमीन, आइसो कोनेसिमीन, होलेरीन Holarrhine, होलेरिनीन (Holarrhenine : $C_{24}H_{38}N_2$) तथा कुर्चीन आदि। कोनेसीन एक विरूपिक चूर्ण (Amorphous powder) के रूप में होता है जो जल, अल्कोहल् तथा डायल्यूट मिनरल एसिड्स में घुल जाता है। कुर्चिसीन सफेद रंग का होता है, जो स्वाद में अत्यंत तिक्त और अविलेय (Insoluble) होता है।

कुर्चिन विस्मथाइ आयोडाइडम् Kurchin Bismuthi Iodidum (Kurch Bism. Iod.), I. P.—ले०; कुर्चिन बिस्मथ आयोडाइड Kurchin Bismuth Iodide।

वर्णन—यह ईंट के रंग का या गाढ़े लाल रंग का (Reddish-orange to dark-red) पाउडर या चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त एवं कटु होता है। इसमें २३ प्रतिशत से लेकर २७ प्रतिशत तक कुर्चीवर्क के टोटल अल्कलायड्स तथा १८ से २४ प्रतिशत तक बिस्मथ होता है। विलेयता—जल एवं अल्कोहल् (९५%) तथा हाइड्रोक्लोरिक एसिड में अंशतः विलेय (Sparingly Soluble) होता है। संरक्षण—कुर्चिन बिस्मथ आयोडाइड को खूब अच्छी तरह से डाटबन्द पात्रों में, जिसमें हवा भी प्रविष्ट न हो सके (dry air-tight containers) में रखना चाहिए।

मात्रा (I. P. Dose)—०·३ से ०·६ ग्राम (५ से १० ग्रेन)।

गुण-कर्म एवं प्रयोग।

एन्टमीबा हिस्टोलिटिका (E. histolytica) के उपसर्ग से होनेवाले अमीबिक प्रवाहिका (लाल आँव) में कुर्ची एक तीव्र प्रभाव कर औषधि है। इसके कोनेसीन नामक अल्कलायड में अमीबानाशक प्रभाव इतना तीव्र होता है कि २८०,००० में १ के बल के विलयन में भी उक्त अमीबा शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। क्षारीय प्रतिक्रिया (Alkaline medium) में यह प्रभाव और भी तीव्र होता है और ८ मिनट के अन्दर ही अमीबा नष्ट हो जाते हैं। क्षारीय प्रतिक्रिया के अभाव में उक्त घातक प्रभाव के लिए १८ मिनट का समय लग जाता है। इपेका-क्वाना एवं उसके अल्कलायड इमेटीन के ज्ञान के पूर्व कुर्ची ही इस व्याधि के लिए एक मात्र विशिष्ट औषधि थी। रोग की तरुणावस्था (Acute stage) में कुर्ची के प्रवाही घनसत्व (लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट) का प्रयोग बहुत उपयोगी है। इसके लिए इसको अकेले या बिस्मथ एवं एरण्डतैल (Castor-oil), एक्स्ट्रॅक्ट ऑव बेल या डिकॉक्शन ऑव इसबगोल के साथ मिला कर प्रयुक्त किया जाता है। इस अवस्था में बार्क (छाल) का प्रयोग डिकाक्शन या क्वाथ के रूप में तथा इसके बीजों (इन्द्रजव) का प्रयोग चूर्ण के रूप में इसबगोल चूर्ण के साथ मिलाकर किया जा सकता है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर कुर्ची—अल्कलायड्स आमाशय में कोई कुप्रभाव (Untoward effect) नहीं करते, जिससे हृल्लास (Nausea) या वमन आदि के उपद्रवों की आशंका नहीं रहती। इसके अतिरिक्त औषधीय मात्राओं में (Therapeutic doses) में ये गर्भवती स्त्रियों के गर्भाशय पर भी कोई प्रभाव नहीं करते। अतएव गर्भवती स्त्रियों में भी इनका सेवन किया जा सकता है। अमीबिकडिसेन्टरी के जिन रोगियों में इमेटीन के प्रयोग से लाभ नहीं होता, उनमें कोनेसीन का मुख-द्वारा सेवन बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके लिए ०·१ से ०·५ ग्राम प्रतिदिन कई मात्राओं में विभक्त करके दिया जाता है। पूरे चिकित्साक्रम में ५ ग्राम के टोटल मात्रा की अपेक्षा होती है। यकृतगत-अमीबिक उपसर्ग (Hepatic amoebiasis) में यह विशेष कार्य नहीं करता और उलटे अनेक नाड़ी संस्थान के विकार उत्पन्न करता है।

व्याधि की चिरकालीन अवस्था में जिसमें अमीबा कोष्ठावस्था (Cystic stage) में होते हैं। आंत्रगत अमीबिक उपसर्ग के लिए इमेटीन बिस्मथ आयोडाइड की अपेक्षा कुर्ची-बिस्मथ आयोडाइड का प्रयोग अधिक उपयुक्त एवं उपयोगी होता है। इसके लिए प्रतिदिन ४ से ८ ग्रेन कुर्ची-बिस्मथ आयोडाइड की मात्रा दिन में २ बार करके ७–१० दिन तक दी जाती है। यदि

चूर्ण देना हो तो जिलेटिन कप्स्यूल्स में रखकर देना चाहिए अथवा टॅवलेट्स का भी व्यवहार किया जा सकता है। कुर्ची-विस्मथ आयोडाइड के चिकित्साक्रम में इसके सेवन के ½ घंटा पूर्व क्षारीय मिश्रण (**Alkaline mixture**) जिसमें ३० ग्रेन सोडा बाईकार्ब० तथा २० ग्रेन सोडियम् साइट्रेट पड़ा हो देने से **विशेष लाभ एवं** सफलता मिलती है। इमेटीन की अपेक्षा कुर्ची के प्रयोग में २ विशेषतायें ऐसी हैं जो इमेटीन में नहीं हैं। एक तो यह इमेटीन की भाँति हृदय पर अवसादक (**Depressant**) प्रभाव नहीं करती दूसरे इमेटीन की तरह इसमें **संचायी प्रवृत्ति (Cumulative tendency)** नहीं पाई गयी। कभी-कभी कुर्ची के प्रयोग से शिरोभ्रम, चेहरे का लाल हो जाना आदि उपद्रव भी प्रगट हो सकते हैं, किन्तु औषधि की मात्रा कम कर देने से अथवा कुछ दिनों के लिए औषधि का प्रयोग बन्द कर देने से ये लक्षण स्वयं लुप्त हो जाते हैं।

व्याधि के पूर्णतः उन्मूलन के लिए ज्यादा अच्छा यह होता है कि कुर्ची विस्मथ आयोडाइड का एक कोर्स देने के बाद कारबरसोन या अन्य उपयुक्त अमीबानाशक औषधि का एक कोर्स १० दिन का दिया जाता है। यह भी दिन में २ बार करके दिया जाता है। साधारण अवस्थाओं में दोनों चिकित्साक्रमों में १ सप्ताह का अन्तर कर देना अधिक उपयुक्त है।

(ऑफिशल योग)

१—एक्स्ट्रॅक्टम् कुर्ची लिक्विडम् Extractum Kurchi Liquidnm (Ext. Kurch. Liq.), I. P.—ले०; लिक्विड एक्स्ट्रॅक्ट ऑव कुर्ची Liquid Extract of Kurchi—अं०; कुर्ची का प्रवाही घनसत्व—सं०। इसमें १% (w/v) कुर्ची के टोटल अल्कलायड्स होते हैं।

मात्रा—८ से १६ मि० लि० (१२० से २४० मिनम् या बूँद) या २ से ४ ड्राम या ६ माशा से १। तो०।

व्यावसायिक योग

एनाबीन Anabin (B. C.)—इसकी गोलियाँ आती हैं। यह कुर्ची-विस्मथ आयोडाइड का यौगिक है। २ से ४ गोली प्रतिदिन जल से।

(नॉट ऑफिशल)

आर्सेनिक-घटित कतिपय अन्य यौगिक

आर्सथिनोल (Arsthinol) या बेलारसन Balarsen।

वर्णन—यह आर्सेनिक का ट्राइवेलेंट कम्पाउण्ड है, जो सफेद या रंगहीन अतिसूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Micro-Crystalline powder) के रूप में होता है। विलेयता—जल एवं अल्कोहल में अंशतः विलेय (Slightly soluble) है।

प्रयोग एवं सेवन-विधि—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर परंगी (Yaws) एवं आंत्रगत अमीबिक उपसर्ग में उपयोगी भी है। दैनिक मात्रा १० मि० ग्रा० (⅙ ग्रेन)प्रतिकिलोग्राम शरीरभार के लिए (अधिकतम दैनिक मात्रा ०·५ ग्राम या ८ ग्रेन) भोजनोपरान्त दियाजाता है इस प्रकार ५ दिन का चिकित्साक्रम होता है। आवश्यकता पड़ने पर १—२ सप्ताह का अन्तर देकर पुनः दुहराया जा सकता है। यह साधारणतया कम विषैला है, परन्तु कभी-कभी अन्य आर्सेनिक यौगिकों की भाँति विषाक्तता हो सकती है।

थायोकारबरसोन (Thiocarbarsone) ।

वर्णन—यह भी आर्सेनिक का ट्राइवेलेंट यौगिक है, जिसमें आर्सेनिक (Trivalent arsenic) की मात्रा २९ % होती है। यह सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में अविलेय (Insoluble) होता है।

प्रयोग एवं सेवन-विधि—यह आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग में बहुत लाभप्रद है। कारबरसोन की अपेक्षा १० गुनी सक्रियता इसमें होती है और साथ ही उसकी अपेक्षा कम विषैला है। औषधि का सेवन प्रायः मुख द्वारा ही किया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर मौखिक सेवन के साथ-साथ वस्ति या धारक एनिमा (Retention enema) भी दिया जाता है।

मात्रा—५० से १०० मि० ग्रा० (¾ से १½ ग्रेन) दिन में तीन बार १० दिन तक। औषधि मुख द्वारा दी जाती है। आवश्कयता पड़ने पर ८ से १५ ग्रेन रात्रि में लगातार ४–५ दिन तक प्रतिदिन १ बार धारकवस्ति के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

मिलिबिस (Milibis) या बिस्मथ ग्लाइकोलिल आर्सेनिलेट Bismuth Glycollyl Arsanilate। यह बिस्मथ के साथ पेंटावेलेंट आर्सेनिक कम्पाउण्ड है, जिसमें आर्सेनिक (Pentavalent arsenic) १५ प्रतिशत तथा ४२ प्रतिशत बिस्मथ होता है।

वर्णन—मांस के रंग का या पीताभ सफेद रंग का गंधहीन एवं अरवेदार (Amorphous) चूर्ण होता है, जो जल तथा अल्कोहल में अंशतः विलेय (Slightly soluble) होता है।

प्रयोग—मुख द्वारा औषधि का सेवन आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग में तथा स्थानिक प्रयोग से ट्राइकोमोनस के उपसर्ग से होनेवाले योनिप्रदाह (Vaginitis) में उपयोगी है। एतदर्थ सपॉजिटरी के रूप में प्रयुक्त होता है। चूँकि मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आंत्रों से इसका शोषण अल्पतम मात्रा में होता है इसलिये विषाक्तता (Toxicity) की सम्भावना कम रहती है, और औषधि का अधिकांश मल के साथ उत्सर्गित होता है। फिर भी चिकित्सक को आर्सेनिक विषमयता को ध्यान में रखना ही चाहिए।

मात्रा—आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग में ८ ग्रेन (०·५ ग्राम) दिन में ३ बार ७–१० दिन तक।

न्यासायिक योग :—

(१) मिलिबिस Milibis (Winthrop)—२ गोली प्रतिदिन ३ बार ७ दिन तक।

(नॉट-ऑफिशल)

अन्य यौगिक :—

केमोफॉर्म Camoform। यह रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा निर्मित एक कृत्रिम यौगिक (Synthetic organic basic bisphenol Compound) है, जो सफेद रंग का तथा क्रिस्टलाइन होता है। यह फौरन जल में घुल जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—यह एक उत्तम एवं तीव्र अमीबानाशक (Amoebicidal) औषधि है। मुख-द्वारा सेवन किए जाने पर लगभग ७० से ८० प्रतिशत तक औषधि का शोषण आमाशयान्त्र-प्रणाली से हो जाता है। शोषणोपरान्त केवल ५% औषधि का निस्सरण मूत्र के साथ होता है। बाकी औषधि शरीरगत विभिन्न धातुओं में संग्रहीत हो जाती हैं। आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग की तरुण एवं चिरकालीन दोनों ही अवस्थाओं में यह अच्छा कार्य करता है। आन्त्रगत अमीबा (E. H.) नष्ट

होते तथा सभी लक्षणों का शमन होता है। अमीबिक उपसर्गजन्य यकृच्छोफ (Amoebic hepatitis) में भी यह औषधि कार्य करती है। मात्रा—युवा व्यक्ति के लिए ८ ग्रेन (०.५ ग्राम) मात्रा दिन में ३ बार मुख द्वारा ५ से ७ दिन तक दी जाती है। आवश्यकता पड़ने पर ३ सप्ताह के बाद पुनः चिकित्साक्रम दुहराया जा सकता है। साधारणतया विषमयता के लक्षण नहीं प्रगट होते और औषधि अच्छी तरह सह्य हो जाती है।

(नॉट्-ऑफिशल)

फ्युमेजिलिन (Fumagillin)। यह एक एन्टीबायोटिक द्रव्य है, जो एस्पर्जिलस् फ्युमिगेटस् (Aspergillus fumigatus) की कतिपय श्रेणियों (Strains) से प्राप्त किया जाता है।

मात्रा—३० से ६० मि० ग्रा० (½ से १ ग्रेन) मुख द्वारा, कई मात्राओं में विभक्त करके दिया जाता है।

गुण कर्म तथा प्रयोग—इसकी घातक क्रिया प्रत्यक्षतया आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग (Directly amoebicidal in intestinal amoebiasis) में होती है। तृणाणुओं (Bacteria), छत्राणुओं (Fungi) एवं विषाणुओं (Viruses) पर इसकी कोई क्रिया नहीं होती। आन्त्र के बाहर अन्य धातुगत एवं अंगगत अमीबिक उपसर्ग में यह औषधि कार्य नहीं करती। आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग के लिए इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। प्रायः चिकित्सा क्रम १० से १४ दिन का होता है जिसमें प्रतिदिन आवश्यकतानुसार ३० से ६० मि० ग्रा० औषधि कई मात्राओं में विभक्त करके दी जाती है। इसके प्रयोग से एन्टमीबा हिस्टोलिटिका के ट्रोफोज्वाइट्स (Trophozoites) एवं कोष्ठा-वस्था (Cysts) दोनों ही का नाश होता है।

परिच्छेद ३

शुल्वौषधियाँ (Sulpha-drugs), एन्टिबायोटिक्स (Antibiotics) एवं राजयक्ष्मा तथा कुष्ठ में प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ:—

चिकित्सा-जगत में जीवाणुनाशक द्रव्यों के आविष्कार से काफी प्रगति हुई है। किन्तु पहले रक्त में विकारी जीवाणुओं का सार्वदैहिक उपसर्ग होनेपर चिकित्सकों को किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाना पड़ता था और रोगी को जीवन से हाथ धोना पड़ता था। किन्तु अब इस वर्ग की अनेक परिष्कृत यौगिकों का निर्माण हो जाने से चिकित्सा-विज्ञान में बहुत उन्नति हुई है। सर्वप्रथम इस वर्ग के "प्रोन्टोसिल Prontosil" नामक यौगिक का निर्माण किया गया था। बाद में परीक्षण द्वारा यह सिद्ध हुआ कि इस यौगिक का सेवन करने पर शरीर में यह P-amino benzene sulphonamide (Sulphanilamide) नामक यौगिक के रूप में वियोजित होता है, और इसकी जीवाणुनाशक शक्ति इसी यौगिक के कारण होती है। परिणामतः प्रयत्नों द्वारा वियना के वैज्ञानिकों ने सन् १९०८ ई० में इसका स्वतंत्र रूप से निर्माण करने में सफलता प्राप्त की। अब इस वर्ग की अनेक औषधियाँ बाजार में उपलब्ध हैं और चिकित्सा-व्यवसाय में उपयोगिता एवं व्यवहार की दृष्टि से इनका मुख्य स्थान हो गया है। शुल्वौषधियों का वर्गीकरण निम्न ३ समुदायों में किया जा सकता है:—

(१) सल्फाथाएजोल (Sulphathiazole), सल्फाडायजीन (Sulphadiazine), सल्फाडाएमेडीन (Sulphadimidine), सल्फासिटेमाइड (Sulphacetamide), सल्फापायरिडीन (Sulphapyridine), सल्फामेराजीन, सल्फाग्वानिडीन (Sulphaguanidine) तथा सल्फाफ्युरेजोल (Sulphafurazole) एवं सल्फासोमिडीन आदि। इस वर्ग के यौगिकों का शोषणोपरान्त सल्फानिलेमाइड में रूपान्तर नहीं होता। क्रियाशीलता की दृष्टि से ये यौगिक, मूल यौगिक अर्थात् सल्फानिलेमाइड की अपेक्षा उत्कृष्ट होते हैं।

(२) इस समुदाय में प्रान्टोसिल (Prontosil), रुबियाजोल (Rubiazol) एवं प्रोसेप्टासीन (Proseptasine) आदि यौगिक आते हैं, जो प्रयुक्त होने पर शोषणोपरान्त एमिनो-बेंजीन सल्फेनिमाइड (सल्फानिलेमाइड) नामक मूल यौगिक में वियोजित होकर अपनी क्रिया करते हैं। अतएव सक्रियता के तर-तम भेद से प्रथम वर्ग की औषधियों की अपेक्षा हीन कोटिके हैं।

(३) इसमें सक्सिनिलसल्फाथाएजोल (Succinylsulphathiazole) एवं फ्थेलिलसल्फाथाएजोल (Phthalylsulphathiazole) नामक यौगिकों का समावेश होता है। इसके अतिरिक्त फ्थेलिलसल्फासिटेमाइड (Phthalylsulphacetamide) तथा सल्फाग्वानिडीन भी इसमें समाविष्ट किये जा सकते हैं। इनका उपयोग विशेषतः आमाशयान्त्र प्रणाली पर स्थानिक क्रिया के लिए किया जाता है।

प्रतिजैविक-द्रव्य या भूतघ्न औषधियाँ अर्थात् एन्टिवायोटिक्स (Antibiotics) :—

परीक्षण द्वारा देखा गया कि अनेक सूक्ष्म विकारी जीवाणुओं (Micro-organisms) की उपस्थिति से दूसरे विकारी जीवाणुओं की वृद्धि रुक जाती है। जीवाणुओं की परस्पर इस प्रत्यनीक क्रिया को **प्रतिजैविक-क्रिया या एन्टीवायोसिस** (Antibiosis) कहते हैं। और जिन रासायनिक तत्वों के कारण इस क्रिया का सम्पादन होता है, उसके लिए **प्रतिजैविक-द्रव्य या एन्टीबायोटिक** (Antibiotic) संज्ञा दी गई। अब **एन्टीबायोटिक** संज्ञा उन रासायनिक तत्वों या द्रव्यों के लिए दी जाती है, जो सूक्ष्मजीवाणुओं (यथा बैक्टीरिया, फंगस या एक्टिनोमाइसीज) से अथवा उनके संवर्धन से प्राप्त किए जाते हैं तथा जिनमें दूसरे जीवाणुओं के नष्ट करने की विशिष्ट शक्ति होती है। चिकित्सोपयोग के लिए उपलब्ध इस प्रकार का सर्वप्रथम यौगिक 'पेनिसिलिन' है। जब वैज्ञानिकों ने देखा कि पेनिसिलिन भी सभी जीवाणुओं पर क्रिया नहीं करता, तब इस प्रकार के अन्य यौगिकों के निर्माण का प्रयत्न हुआ, जिसके परिणामस्वरूप एक्टिनोमाइसोज की प्रजाति विशेष (Streptomyces grisens) से **स्ट्रेप्टोमाइसीन** नामक प्रसिद्ध दूसरा एन्टिवायोटिक पृथक् किया गया। इसके बाद अमेरिका के लीडरले (Lederle) कम्पनी ने **स्ट्रेप्टोमाइसीज ऑरोफेसिएन्स** (Streptomyces aureofaciens) से **ऑरियोमाइसिन** (Aureomycin) नामक एक तीसरे एन्टिवायोटिक का निर्माण किया। इसके बाद पार्क डेविस कम्पनी (P. D. & Co.) ने **क्लोरोमाइसिटिन** (Chloromycetin) नामक एन्टीबायोटिक यौगिक का पृथक्करण किया। इसके बाद इन यौगिकों के रासायनिक स्वरूप की ओर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। और अब **रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा** भी (Synthetically) भी इनका निर्माण व्यावसायिक पैमाने पर किया जाता है।

क्लोरोमाइसेटिन, ऑरियोमाइसिन तथा **ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन** की क्रिया बहुत-कुछ मिलती-जुलती है। इनका प्रयोग मुख द्वारा भी किया जा सकता है। जहाँ पेनिसिलिन तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन काम नहीं करते उन अवस्थाओं में यह यौगिक कार्य करते हैं। अतएव **कुक्कुर खांसी** (Whooping Cough) **आन्त्रिक एवं उपांत्रिक ज्वर** (Typhoid & Paratyphoid fevers) एवं **रिकेटसिया-उपसर्ग** तथा विषाणुजन्य न्युमोनिया तथा वंक्षणीय कणार्वुद में ये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

प्रकरण १

सल्फेनिलेमाइडम (सल्फेनिलेमाइड) I. P., B. P.
Sulphanilamidum (Sulphanilamid.)
Sulphanilamide (अं०)

रासायनिक संकेत : $C_6 H_8 O_2 N_2 S$.

पर्याय—प्रांटोसिल एल्बम् Prontosil Album; स्टेप्टोसाइड Streptocide; सल्फोनेमाइड पी० Sulphonamide P. प्रान्टिलिन Prontylin ; काल्सुलेनाइड Colsulanyde, सल्फानिल Sulphanil ।

प्राप्ति-साधन—सल्फेनिलेमाइड रासायनिक दृष्टि से P aminobenzene suphonamide होता है, और एसेटिल सल्फानिलिक एसिड (Acetyl sulphanilic acid) के एमाइड (Amide) एवं हाइड्रोक्लोरिक एसिड की परस्पर जलांशन-प्रतिक्रिया (Hydrolysis) के द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ९९% से १००.५% तक $C_6 H_8 O_2 N_2 S$ पाया जाता है।

वर्णन—यह रंगहीन क्रिस्टल या क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् तिक्त और बाद में मधुर (अनुरस Sweet after-taste) होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर १७० भाग जल तथा अल्कली हाइड्राक्साइड्सके जलीय विलयन (Aqueous solutions of alkali hydroxides) में घुलनशील होता है। अल्कोहल (९५%) में अत्यल्प घुलता (Sparingly soluble) है और सॉल्वेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में तो बिल्कुल नहीं घुलता। संरक्षण-इसको अच्छी तरह डाट बंद पात्रों में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए। मात्रा—प्रारम्भिक मात्र (Initial dose) ४५ ग्रेन या ३ ग्राम; बाद में (Subsequent dose) १५ से २३ ग्रेन या १ से १.५ ग्राम ४-४ घंटे के अन्तर से।

(योग)

१—टॅबेल्ली सल्फोनलेमाइडाई Tabellae Sulphanilamidi (Tab. Sulphanilamid.)I. P. B.P.— ले०; टॅबलेट्स ऑव सल्फेनिलेमाइड Tablets of Sulphanilamide—अं०; सल्फेनिलेमाइड की टिकिया— हि०। मात्रा। (प्रारम्भिक १५ ग्रेन; बाद में १५ से २३ ग्रेन ४-४ घंटे के अन्तर से।

सल्फोनेमाइड-समुदाय की औषधियों के गुण-कर्म।

सल्फानिलेमाइड, सल्फोनामाइड्स का एक सार्वभौम नमूना या प्रतिनिधिद्रव्य (Typical example) है। सल्फोनामाइड्स के प्रायः सभी सामान्य गुणकर्म इसमें पाये जाते हैं। अतएव सल्फानिलेमाइड के सम्बन्ध में वर्णित गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग साधारण रूप से सभी सल्फोनामाइड्स के लिए समझना चाहिए। सल्फोनामाइड्स के ज्ञान से चिकित्सक समुदाय ने औपसर्गिक व्याधियों पर बहुत बड़ी विजय प्राप्त की। सल्फोनेमाइड्स की क्रिया प्रणाली के

विषय में वैज्ञानिकों में बहुत मतभेद रहा है, और अनेकानेक सिद्धान्त इस विषय में वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित किए जा रहे हैं। ध्यान रहे कि सल्फोनामाइड्स विकारी जीवाणुओं पर घातक प्रभाव (Bacterioidal effect) करने की अपेक्षा प्रायः जीवाणु स्तम्भक (Bacteriostatio) प्रभाव अधिक करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि साधारण तथा मानव रक्त में इनका जितना संकेन्द्रण (Concentration) सम्भव है, उस मात्रा में ये जीवाणु की अत्यधिक वृद्धि (Multiplioation) को ही रोकने में समर्थ होते हैं, और उनको निर्मूल नहीं कर पाते। जीवाणुओं की वृद्धि रुक जाने पर अवशिष्ट जीवाणुओं का नाश रक्तगत श्वेत कायाणुओं द्वारा होता है, जो जीवाणुभक्षक (Phagooytes) का कार्य करते हैं। दूसरे जीवाणुओं के उपसर्ग के प्रतिक्रिया में शरीर की नैसर्गिक रक्षक शक्ति को भी उत्तेजना मिलती है, जिसके परिणाम स्वरूप रक्त में अनेक प्रतियोगी पदार्थ (Antibodies or immune bodies) उत्पन्न होते हैं। अतएव इन सब परिस्थितियों को उत्पन्न कराने के लिए चिकित्साक्रम को एक निश्चित काल तक तथा एक निश्चित स्तर पर स्थायी रखना पड़ता है, अन्यथा जीवाणु पुनः प्रबल होकर अपनी वृद्धि कर सकते हैं।

शोषण—सल्फाग्वानिडीन, सक्सिनिल सल्फाथायजोल, फ्थैलिलसल्फाथायजोल एवं फ्थैलिल सल्फासिटेमाइड को छोड़कर बाकी सभी सल्फोनामाइड यौगिक आमशयान्त्रप्रणाली द्वारा शोषित होते हैं। इनमें कोई जल्दी से एवं अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में तथा दूसरे मन्दगति से तथा कम मात्रा में अवश्य शोषित हो सकते हैं। ४ घंटे से लेकर २४ घंटे के अन्दर सभी शोषित हो जाते हैं। खाली पेट पर तथा जल में विलीन करके इनका सेवन करने से शोषण भी जल्दी होता है। इन औषधियों के साथ क्षारों का प्रयोग करने से इनके शोषण में सहायता मिलती है। अतएव सल्फोनामाइड यौगिकों के साथ क्षारों (Alkalies) का भी प्रयोग किया जाता है। याद रहे कि जल में विलेयता से इनके शोषणगति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सल्फाडायजीन यद्यपि जल में प्रायः बिल्कुल नहीं घुलता, परन्तु आंतों द्वारा इसका शोषण अच्छी तरह हो जाता है, जब कि सल्फाग्वानिडीन जल-विलेय होने पर भी बड़ी मन्द गति से तथा अल्प परिमाण में प्रचूषित होता है। इसी प्रकार सल्फाडायजीन की अपेक्षा सल्फामेराजीन का शोषण अधिक होता है। गुदमार्ग द्वारा प्रयुक्त किये जाने पर इनका शोषण अत्यल्प होता है।

रक्तगत संकेन्द्रण (Blood Concentration)—सल्फोनामाइड चिकित्सा-क्रम (Sulphonamide therapy) में एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है, कि इसकी क्रिया समुचित रूप से होने के लिये रक्त में एक निश्चित स्तर तक इसका संकेन्द्रण होना आवश्यक है। सामान्यतया प्रति १०० मि० लि० (सी० सी०) रक्त में १० मि० ग्रा० का संकेन्द्रण औषधीय प्रभाव के लिए पर्याप्त होता है। उक्त रक्तगत संकेन्द्रण विभिन्न यौगिकों के शोषण एवं निस्सरण (Exoretion) गति पर निर्भर करता है। अतएव जिन यौगिकों का उत्सर्ग या निस्सरण मन्द गति से होता है, उनका सेवन अधिक काल के अन्तर से भी करने से कार्य चल जाता है। इसी प्रकार जिन यौगिकों का शोषण अधिक मात्रा में हो जाता है, उनकी मात्रा अपेक्षाकृत कम देनी पड़ती है। सामान्यतः २ ग्राम (३० ग्रेन—२ माशा) की मात्रा में औषधि प्रयोग प्रारम्भ करने से ४ घंटे के अन्दर प्रति १०० मि० लि० रक्त में ६ मि० ग्रा० औषधि का संकेन्द्रण प्राप्त हो जाता है। शोषणोपरान्त सल्फोनामाइड यौगिकों का निर्विषीकरण

(Detoxication) यकृत में एसिटिलीकरण (Acetylation) के द्वारा होता है। इस प्रकार उत्पन्न एसेटिल-यौगिक मूत्र में घुलकर उत्सर्गित हो जाते हैं। कभी-कभी किन्हीं-किन्हीं सल्फोनामाइड यौगिकों के एसेटिल यौगिक मूत्र में अपेक्षाकृत कम घुलते हैं। ऐसे यौगिकों के अधिक सेवन से रक्तमेह (Haematuria), मूत्राल्पता (Oliguria) एवं अमूत्रता (Anuria) आदि भयंकर उपद्रव होने की आशंका अधिक रहती है। इस दृष्टि से सल्फाडायजीन में सबसे कम सम्भावना होती है। इस प्रकार सल्फोनामाइड औषधियों के मात्रा-क्रम का निर्धारण निम्न बातों के आधार पर किया जाता है :—(१) शोषणगति एवं मात्रा (Rate of absorption); (२) धातुओं में उनकी प्रसरण गति (Rate of diffusion); (३) उत्सर्ग गति तथा (४) यकृत द्वारा उनके एसेटिलीकरण की मात्रा (Extent of acetylation)।

शोषणोपरान्त ये यौगिक शरीर के विभिन्न स्रावों या रसों में पाये जाते हैं, यथा पित्त, अग्न्याशयिकरस (Pancreatic juice), आमाशयिक रस, मूत्र, पसीना, आंसू तथा लाला स्राव आदि। यही नहीं मस्तिष्कसुषुम्नाद्रव में भी यह पहुँच जाता है। सामान्यतः मस्तिष्कसुषुम्नाद्रव में रक्त की अपेक्षा तृतीयांश संकेन्द्रण होता है। किन्तु इसकी विकृतियों में (यथा मेनिंजाइटिस में) यह संकेन्द्रण अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है।

सल्फोनामाइड यौगिकों की क्रियाशीलता को कम करनेवाले द्रव्य—पाबा (P-amino benzoic acid PABA), पूय या पस (Pus), गलित धातु (Necrotic tissues) तथा वियोजित प्रोटीन (Protein breakdown products) की उपस्थिति में इन यौगिकों की क्रियाशीलता मन्द पड़ जाती है। निकोटिनिक एसिड से विशेषतः सल्फापाइरिडीन नामक यौगिक की क्रियाशीलता रुक जाती है। दूसरी बात इन यौगिकों के सम्बन्ध में यह है, कि कभी-कभी इस चिकित्सा-क्रम में जीवाणु औषधि-सह्य (Resistant) हो जाते हैं। इसके निवारण के लिए पहले ही भारी मात्रा (Loading doses) से चिकित्सा प्रारम्भ करना चाहिए।

निस्सरण (Excretion or Clearance)—सल्फोनामाइड्स का निस्सरण प्रधानतः वृक्कों द्वारा होता है। अतः अधिकाधिक मूत्रजनन (Diuresis) होने से इनके उत्सर्ग में सहायता मिलती है। शोषणोपरान्त इनका निस्सरण भी जल्दी ही होता है। इसीलिए थोड़े-थोड़े समय के बाद बराबर औषधि देनी पड़ती है, ताकि रक्त में इसका उचित कन्सन्ट्रेशन बना रहे। सल्फाथायजोल का निस्सरण सबसे अधिक तीव्रता एवं शीघ्रता से होता है। शोषणोपरान्त औषधि का कुछ भाग तो ज्यों का त्यों उत्सर्गित होता है। कुछ भाग शरीर धातुओं में जारित (Oxidised) हो जाता है। शेष का निर्विषीकरण यकृत द्वारा किया जाता है। अर्थात् यह एसिटिल-यौगिक में रूपान्तरित होकर उत्सर्गित होता है।

सल्फोनामाइड्स की विषाक्तता (Toxicology)

सल्फा-ड्रग के प्रचार ने चिकित्साजगत में क्रांति-सी कर दी है। लेकिन ध्यान रहे कि ये औषधियाँ काफी विषैली होती हैं, और इनके चिकित्सा क्रम में अनेक भयंकर उपद्रव उठ खड़े होते हैं। सावधानी न रखने से कभी-कभी लेने के देने पड़ जाते हैं। यह अवश्य है कि उपद्रवों के तर-तम भेद विभिन्न यौगिकों के साथ भिन्न-भिन्न स्तर का होता है। सल्फापायरिडीन यौगिक सल्फाडायजीन एवं सल्फामेराजीन की अपेक्षा अधिक विषाक्तता करता है। उत्क्लेश (Nausea)

वमन (Vomitting) तथा क्षुधानाश (Anorexia) आदि पचनसंस्थानिक उपद्रव प्रायः सभी यौगिकों के सेवन में होते हैं। इनके लिए चिकित्सा बन्द करने की आवश्यकता नहीं होती। ज्वर (Drug fever) एवं त्वचा पर विस्फोट आदि (Drug rash) उपद्रव भयंकर स्थिति के द्योतक होते हैं और इनकी उपस्थिति में चिकित्सा क्रम फौरन बन्द कर देना चाहिए।

(१) त्वचा (Skin rash)—ये विस्फोट नाना स्वरूप के होते हैं, और चिकित्सा प्रारम्भ करने के प्रायः ८ या ६ दिन बाद प्रगट होते हैं। वैसे ३ सप्ताह के भीतर कभी भी दिखाई पड़ सकते हैं। त्वचागत यह परिवर्तन औषधि-असह्यता का द्योतक होता है। प्रायः यह दाने खुले हुए क्षेत्रों (Exposed surfaces) में निकलते हैं तथा सामान्यतया ललाई लिए हुए तथा अलग-अलग (Discrete pepulo erythematous) अथवा रोमान्तिका ज्वर (Measles) के दानों की भाँति (Morbiliform) होते हैं। इसके अतिरिक्त कभी ददोड़ों या शीतपित्ति की तरह (Urticarial) या लोहितज्वर की भाँति (Scarlatiniform) या रक्तस्रावी प्रकार के (Purpuric) होते हैं। कभी-कभी इस प्रकार का उपद्रव त्वचा पर सल्फोनामाइड आयण्टमेंट का व्यवहार करते समय भी लक्षित होता है। ऐसी स्थिति में रोगी को नीललोहितातीत-किरणों (Ultra-violet rays) का प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा धूप से भी बचना चाहिए। इसके अतिरिक्त निकोटिनिक एसिड (५० मि० ग्रा० की मात्रा में दिन में ४ बार) का सेवन मुख द्वारा करना चाहिए।

(२) ज्वर—सल्फोनामाइड चिकित्सा क्रम में दूसरा भयंकर उपद्रव ज्वर (Drug fever) होता है। यह प्रायः ६–७ दिन के बाद और त्वचागत परिवर्तन के पूर्व प्रगट होता है। ऐसी स्थिति में चिकित्सा क्रम फौरन बन्द कर देना चाहिए।

(३) आमाशयान्त्र—आमाशयिक क्षोभ के कारण हृल्लास, वमन, अतिसार आदि उपद्रव प्रगट होते हैं। ऐसी स्थिति में चिकित्सा बन्द करने की आवश्यकता नहीं है। एतदर्थ औषधि की मात्रा कम कर देनी चाहिए तथा प्रत्येक बार औषधि लेने के बाद सोडियम् बाइकार्बोनेट या द्राक्षशर्करा का सेवन होना चाहिए। कभी-कभी तीव्रयकृच्छोफ (Acute Hepatitis) तथा यकृत का पीत क्षय (Yellow atrophy of the liver) आदि भयंकर उपद्रव भी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में औषधि प्रयोग के ७–८ दिन बाद कामला (Jaundice) प्रगट होती है। कामला का चिन्ह भयंकर स्थिति का द्योतक है, और ऐसी स्थिति में फौरन चिकित्सा बन्द होनी चाहिए।

(४) मूत्रवह संस्थान—(१) वृक्क—मूत्रजनन तथा मूत्रोत्सर्ग काफी मात्रा में न होने से मूत्राघात, अल्पमूत्रता (Oliguria) अथवा कभी-कभी रक्तमेह (हीमेचूरिया) का उपद्रव हो जाता है। इस वृक्कीय उपद्रवों के निवारण के लिए निम्न उपाय करने चाहिए :—(१) रोगी को खूब पानी पिलाना चाहिए। यदि अत्यधिक वमन होने के कारण अथवा अन्य कारणों से रोगी पानी पीने में असमर्थ हो तो लवण-जल (Normal Saline) शिरागत मार्ग से दें; (२) मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय रखने के लिए सोडियम्-बाई-कार्बोनेट देना चाहिए।

(२) मूत्र की प्रतिक्रिया में अम्लोत्कर्ष (Acidosis) इसके निवारण के लिए मुखद्वारा क्षारों (Alkalies) का प्रयोग करना चाहिए। एतदर्थ सोडियम् बाइकार्बोनेट या सोडियम् साइट्रेट का व्यवहार किया जाता है।

(३). रक्तसंस्थान (Haemopoietic System)—(१) श्वेत कायाणुओं

की संख्या में कमी (Leucopenia) या अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) ऐसी स्थिति की आशंका प्रायः उस समय होती है, जब सल्फोनामाइड यौगिकों का सेवन अधिक काल तक करना होता है। यह उपद्रव सामान्यतया चिकित्सा प्रारम्भ करने के ४—२१ दिन बाद उत्पन्न होता है। श्वेतकायाणुओं की संख्या घटकर २००० प्रति घन मि० मि० (c. mm.) तक आ जाती है। साधारण अवस्थाओं में तो क्षारों के प्रयोग से इसका निवारण हो जाता है। किन्तु अकणिककायाणूत्कर्ष की स्थिति में चिकित्सा फौरन बन्द कर देनी चाहिए और रोगी को काफी पानी तथा द्रव देना चाहिए। आवश्यकता हो तो रक्त-संक्रमण (Blood-transfusion) करें। अब ऐसी स्थिति में पेनिसिलिन का प्रयोग बहुत उपयोगी माना जाता है।

रक्तगत दूसरा भयंकर चिन्ह है नीलिमा का उत्कर्ष (Cyanosis) सल्फानिलेमाइड के प्रयोग में इसकी आशंका अधिक रहती है। इसके निवारण के लिए प्रति किलोग्राम शरीर भार के लिए १½ मि० ग्रा० के हिसाब से मेथिलीनब्ल्यू (Methylene blue) का व्यवहार किया जाता है। एतदर्थ इसका मौखिक अथवा शिरागत इंजेक्शन द्वारा प्रयोग करते हैं। मुख द्वारा सेवन के लिए घंटे-घंटे पर २ ग्रेन की मात्रा तथा शिरागत इंजेक्शन के लिए १०% सॉल्यूशन की १० से २० सी० सी० की मात्रा पर्याप्त होती है।

आमयिक प्रयोग।

एक युग था जब कि सल्फानोमाइड यौगिकों ने चिकित्सा-जगत में क्रांति-सी कर दिया था। औपसर्गिक विकारी जीवाणुओं से होनेवाली अनेक भयंकर व्याधियों की चिकित्सा में इनसे अद्भुत सहायता प्राप्त हुई। बाद में इनके निर्माण में और भी सुधार हुआ और विशिष्ट-विशिष्ट जीवाणुओं के लिए विशिष्ट योग निर्मित किए गये, जिनमें एक तो अपेक्षाकृत विषाक्तता के निवारण का उपाय किया गया दूसरे बैक्टीरिया विशेष पर उनकी संवरणात्मक क्रिया (Selective action) को बढ़ाने का उपाय किया गया। विज्ञान ने और भी अपना चमत्कार दिखलाया और पेनिसिलिन आदि एन्टीबायोटिक औषधियों (Antibiotics) का निर्माण किया गया। वस्तुतः अब एन्टीबायोटिक्स का ही प्रयोग-प्रधान औषधि के रूप में किया जाने लगा है। सल्फोनेमाइड्स का व्यवहार सहायक के रूप में किया जाता है। सल्फोनामाइड्स का व्यवहार (१) स्थानिक क्रिया (Topical action) के लिए तथा (२) सामान्य-कायिक प्रभाव दोनों ही कार्यों के लिए किया जाता है। एतदर्थ चिकित्सा क्रम प्रारम्भ करने के पूर्व औषधि का चुनाव सोच-विचारकर कर लेना चाहिए। इसके लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए :—(१) उपस्थित व्याधि का विशिष्ट कोपक जीवाणु कौन है, (२) चुनी हुई शुल्वौषधि की विलेयता, विषाक्तता एवं इसके प्रति रोगी की सह्यता एवं असह्यता।

मिश्रित चिकित्सा-क्रम (Combination Therapy)—अब अकेले एक यौगिक की अपेक्षा समान गुण-कर्मवाले कई यौगिकों को परस्पर मिलाकर प्रयुक्त करने का प्रचलन हो गया है। इससे एक तो औषधि की क्रियाशीलता बढ़ जाती है, दूसरे विषाक्तता में भी कमी आ जाती है। प्रायः देखा जाता है, कि सल्फाडायजीन, सल्फाथाएजोल एवं सल्फामेरा-जीन को परस्पर मिलाकर देने से वृक्कगत उपद्रव अपेक्षाकृत बहुत कम होते हैं। अनेक रोगों में अकेले सल्फोनामाइड का प्रयोग करने के बजाय एन्टीबायोटिक (पेनिसिलिन आदि) के साथ मिश्रित चिकित्सा-क्रम से विशेष लाभ होता है। न्युमोनिया में इसी आधार पर सल्फोनामाइड के

साथ-साथ पेनिसिलिन का भी प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार ग्रंथिक प्लेग (Bubonic Plague) में अकेले सल्फाडायजीन या सल्फाथायजोल का प्रयोग करने के बजाय स्ट्रेप्टोमायसिन के साथ इनका प्रयोग करने से अधिक सफलता मिलती है।

निषिद्ध-अवस्थायें (Contra-indications)—यदि रोगी में सल्फोनामाइड्स के प्रति **परम संवेदनशीलता (Hypersensitiveness)** का इतिहास हो तो प्रायः इनका पुनः प्रयोग नहीं करना चाहिए और यदि करे भी तो बड़ी सतर्कता रखने की जरूरत है। साधारणतया यदि इस चिकित्सा-क्रम में रक्त परीक्षण से **श्वेत कायाणुओं की संख्या में तीव्र कमी आ रही हो (Leucopenia)** अथवा **अकणिककायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis)** का उपद्रव हो अथवा **रक्तस्रावी रक्तक्षय (Haemolytic anaemia)** के चिन्ह पाये जाते हों, **तो शुल्वौषधियों का प्रयोग बिल्कुल निषिद्ध है।**

स्थानिक प्रयोग (Topical application)—

त्वचा पर स्थानिक क्रिया के लिए विभिन्न अवस्थाओं में यथा **दग्ध (Burns)** व्रण एवं **घावों (Wounds)** की चिकित्सा में किया जाता है। इसके लिए इसका व्यवहार **लोशन या धावन-द्रव (Lotion), पाउडर (Powder), आयण्टमेंट (मलहम)** या **क्रीम (Cream)** आदि के रूप में किया जाता है। इन अवस्थाओं में स्थानिक प्रयोग के साथ-साथ मुख द्वारा भी औषधि का सेवन करने से क्रिया और भी तीव्रतर हो सकती है। कभी-कभी त्वचा पर स्थानिक क्रिया के लिए इनका प्रयोग करने से भी रोगी में असह्यता के उपद्रव हो जाते हैं, जिससे त्वचा पर विभिन्न प्रकार के विस्फोट निकलते हैं। अतएव स्थानिक चिकित्सा-क्रम में भी इस बात को ध्यान में रखना चाहिए।

आमाशयान्त्र प्रणाली पर स्थानिक क्रिया के लिए (यथा बैसिलरी अतिसार, हैजा एवं प्रवाहिका आदि रोगों में) प्रायः **सल्फाग्वानिडीन एवं सल्फासक्सीडीन** आदि यौगिकों का व्यवहार किया जाता है। इसी प्रकार **नेत्र पर स्थानिक क्रिया के लिए** विभिन्न नेत्र रोगों की चिकित्सा के लिए **सल्फासिटेमाइड** विशिष्ट रूप से कार्यकर होता है।

विभिन्न औपसर्गिक रोगों में सल्फोनामाइड्स का प्रयोग

प्लेग (Plague) या ग्रन्थिक ज्वर—इसमें विशेषतः सल्फाडाइजिन तथा सल्फाथाएजोल का प्रयोग किया जाता है। प्लेग में सल्फानिलेमाइड्स का प्रयोग **चिकित्सा** के लिए **(Curation)** तथा **रोगनिषेध** दोनों ही कार्यों के लिए करते हैं। रोग प्रतिषेध के लिए २ से ४ ग्राम (३० से ६० ग्रे०, प्रतिदिन दी जाती है। इसको कई मात्राओं में विभक्त करके देते हैं। इस प्रकार ५–६ दिन औषधि का सेवन करने से प्लेग के आक्रमण का भय नहीं रहता। अब सल्फोनेमाइड्स की अपेक्षा **सल्फाडाइजिन एवं स्ट्रेप्टोमाइसिन** की **मिश्रित चिकित्सा-क्रम विशेषरूप से सफल एवं उपयोगी** सिद्ध हुआ है। केवल जिन रोगियों में यह औषधियाँ सह्य हो जाती हैं और उनका विशेष प्रभाव नहीं होता, उन रोगियों में प्लेग विरोधी सीरम Anti plague Serum) देने की आवश्यकता पड़ती है।

मेनिंगोकोक्काइजन्य उपसर्ग (Meningococcal Infection)—यह जीवाणु के उपसर्ग से मस्तिस्कसुषुम्नाज्वर औपसर्गिक रोग होता है। इस व्याधि में सल्फोनेमाइडस का व्यवहार **चिकित्सा (treatment)** एवं **रोग** प्रतिषेध (Prophylaxis)

दोनों ही रूप में किया जाता है। एतदर्थ सल्फाडाइजिन एवं सल्फाडाइमाइडीन अधिक उपयुक्त होते हैं। मुख द्वारा सेवन करने से भी औषधि काफी मात्रा में शोषित होकर मस्तिष्क सुषुम्ना द्रव में पहुँच जाती है अतएव सुषुम्नान्तर्गत मार्ग (Intrathecally) औषधि देने की जरूरत नहीं पड़ती। शीघ्रता पूर्वक प्रभाव करने के लिए यह चिकित्सा-क्रम बहुत उपयुक्त है:—सल्फाडाइजिन सोडियम् (१ ग्राम की मात्रा में) का शिरा में इंजेक्शन दे दें। और इसके बाद मुख द्वारा ४–४ घंटे पर १ ग्राम औषधि देते रहें। जब ज्वर खतम हो जाय और ३–४ दिन तक निर्ज्वरावस्था बनी रहे, तो औषधि की मात्रा कम कर देनी चाहिए। यदि उक्त चिकित्सा-क्रम से रोग काबू में न आता हो तो सल्फोने माइड्स के साथ-साथ पेनिसिलिन का पेशीगत एवं सुषुम्नागत इंजेक्शन (Intramuscular and Intrathecal injection) करना चाहिए।

मूत्रमार्गगत उपसर्ग—अब सल्फोनेमाइड्स का प्रयोग विशेषतः निम्नजीवाणुओं के उपसर्ग में किया जाता है :—(१) ई० कोलाइ (E. coli); (२) सालमोनेला (Salmonella) (३) एच० इन्फ्लुएन्जा (H. influenza) तथा (४) गोलाणु (Staphylo coccus)। एतदर्थ सल्फाडाइजिन अथवा सल्फाथायजोल अधिक उपयुक्त होता है। इनका प्रयोग अकेले अथवा दोनों को परस्पर मिलाकर किया जाता है। प्रतिदिन २ से ४ ग्राम (३० से ६० ग्रेन) की मात्रा कई मात्राओं में विभक्त करके दी जा रही है। सल्फोनेमाइड्स के प्रयोग के साथ-साथ मूत्र की प्रतिक्रिया को क्षारीय बनाये रखने के लिए सोडियम्-बाइकार्बोनेट या सोडियम् साइट्रेट का मुख द्वारा सेवन होना चाहिए।

अन्य प्रयोग—उपर्युक्त रोगों के अतिरिक्त सल्फोनेमाइड्स का प्रयोग निम्न व्याधियों में भी विशिष्ट रूप से सफल सिद्ध होता है :—

(१) मालादण्डाणुजन्य न्युमोनिया (Streptococcal pneumonia); (२) (Erysipelas); (३) मध्यकर्ण शोथ (Otitis media); (४) कर्णमूल शोथ (Mastoiditis), रक्तगत उपसर्गमयता या सेप्टीसीमिया (Septicaemia) एवं प्रसवोत्तर उपसर्ग (Puerperal Sepsis)। उक्त अवस्थाओं में यदि स्थिति अधिक भयंकर हो तो सल्फोनेमाइड्स के साथ-साथ पेनिसिलिन के इंजेक्शन भी देने चाहिए।

विशेष—प्रायः सल्फोनेमाइड्स का प्रयोग मुख द्वारा किया जाता है। किन्तु गम्भीर स्थिति में तथा यदि रोगी अचेतनावस्था में हो, जिससे मुख द्वारा औषधि का सेवन सम्भव न हो तो, इसका पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा किया जाता है। सामान्यतः मुखद्वारा औषधि सेवन में पहली मात्रा अपेक्षाकृत अधिक (Loading dose) देनी चाहिए। इसके बाद विशिष्ट योग के निस्सरण एवं शोषण गति का विचार करके उपयुक्त मात्रायें ३–३ या ४–४ घंटे पर देनी चाहिए।

सल्फाडाइआजीना (सल्फाडाइ-आजीन) I. P., B. P.

Sulphadiazina (Sulphadiazine.)—ले०;

Sulphadiazine—अं०;

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{10}O_2N_4S$

प्राप्ति साधन—सल्फाडायजीन रासायनिक दृष्टि से २—(P-aminobenzene sulp-

honamido) pyrimidine होता है। इसमें ९९% से १०१% तक $C_{10}H_{10}O_2 N_4S$ होता है।

वर्णन—यह सफेद या पीताभ-सफेद (Yellowish-white) या गुलाबी लिए सफेद (Pinkish-white) रंग का चूर्ण होता है, जो खुला रहने से प्रकाश के प्रभाव से गाढ़े रंग का होने लगता (Darkens on exposure to light) है। सल्फाडायजीन का चूर्ण प्रायः गंधहीन तथा स्वाद-रहित होता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble), अल्कोहल (९५%) तथा एसिटोन में अंशतः विलेय (Sparingly soluble), किन्तु मन्दबल खनिज अम्लों (Dilute Mineral acids) तथा अल्कली हाइड्रॉक्साइड एवं कार्बोनेट्स के जलीय विलयन में तुरंत घुल जाता (Readily soluble) है।

मात्रा—(१) प्रारम्भिक (Initial Dose)–४५ ग्रेन या ३ ग्राम (लगभग २॥ माशा); (२) तत्पश्चात् (Subsequent dose)–१५ से २३ ग्रेन (१ से १½ ग्राम) ४–४ घंटे के अन्तर से।

सल्फाडाइआजीना सोडियम Sulphadiazina Sodium (Sulphadiazin. Sod.), I. P.—ले०; सल्फाडाइआजीन सोडियम् Sulphadiazine Sodium सॉल्युबुल सल्फाडाइआजीन Soluble Sulphadiazine—अं०। जल में घुलनेवाला सल्फाडायजीन—हिं०।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_9O_2N_4SNa$.

वर्णन—यह सल्फाडायजीन का सोडियम् लवण होता है। यह सफेद या हल्का पीलापन लिए सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः स्वादरहित तथा गंधहीन होता है। विलेयता—जल में घुलनशील होता है; किन्तु अल्कोहल (९५%) में बहुत कम घुलता है। आर्द्र हवा (Humid air) में खुला रहने से, कार्बनडाइ-ऑक्साइड गैस को सोखता है, जिससे विलेयता अपेक्षाकृत कम हो जाती है।

मात्रा—१५ से ३० ग्रेन (१ से २ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण (Intravenous injection) द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्यतः सल्फाडायजीन का प्रयोग अवधूलचूर्ण या डस्टिंगपाउडर (Dusting powder) के रूप में व्रणों एवं जले हुए स्थलों पर छिड़कने के लिए किया जाता है।

मुख द्वारा (Orally) इसका प्रयोग निम्न विशिष्ट विकारी कीटाणुओं के उपसर्ग में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है:—रक्तस्रावी मालादण्डाणु (हिमोलिटिक स्ट्रेप्टोकोकस Haemolytic Streptococcus), न्यूमोकोकस या न्युमोनिया का दण्डाणु, मेनिंगोकोकस (मस्तिष्कसुषुम्नाज्वर का दण्डाणु), गोनोकोकस (सूजाक या पूयमेह का दण्डाणु) तथा एस्केरिशिआ कोलाई (Escherichia Coli)। इसके अतिरिक्त सल्फाडायजीन तथा सिर्थेजोल दोनों हीं ग्रंथिक प्लेग (Bubonic plague) में बहुत उपयोगी समझे जाते हैं। एतदर्थ ६० ग्रेन या १ ड्राम से प्रारम्भ करते हैं। बाद में ४-४ घंटे पर ३० ग्रेन (२ ग्राम) और फिर मात्रा घटाकर १ ग्राम पर ले आते हैं। अब इसके साथ स्ट्रेप्टोमाइसीन का भी प्रयोग किया जाता है।

सावधानी—इस चिकित्साक्रम में रोगीको काफी पानी पिलाना चाहिए। विषाक्तता की अवस्था में ५ से १०% ग्लूकोज विलयन का शिरागत इंजेक्शन किया जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—टैबेली सल्फाडाइ-आजीनी Tabellae Sulphadiazinae (Tab. Sulphadiazin.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव सल्फाडायजीन Tablets of sulphadiazine—अं०; सल्फाडायजीन की टिकिया—हिं० ।

मात्रा—प्रारम्भ में ४५ ग्रेन; बाद में १५ से २३ ग्रेन प्रति ४ घंटेके बाद ।

२—इन्जेक्शिओ सल्फाडायजीनी सोडियाइ Injectio Sulphadiazinae Sodii (Inj. Sulphadiazin. Sod.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सल्फाडायजीन सोडियम् (Injection of Sulphadiazine Sodium)—अं० । सल्फाडायजिन की सुई—हिं० । यह सल्फाडायजीन सोडियम् का विशुद्ध परिस्रुत जल (water for injection) में बनाया हुआ तथा विशोधित (Sterile) सॉल्यूशन होता है, जिसमें से कार्बनडाइऑक्साइड पूर्णतः पृथक् कर दिया जाता है ।

मात्रा—८ से ३० ग्रेन (०.५ से २ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा ।

सल्फाथाएजोलम् (सल्फाथाएजॉल या सिबाजॉल)

Sulphathiazolum (Sulphathiazol.) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत $C_9H_9O_2N_3S_2$.

पर्याय—सल्फाथियाजॉल Sulphathiazole, सिबाजोल (जॉ); थियाजेमाइड Thiazamide.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २-(p-aminobenzenesulphonamido) thiazole होता है । सिबाजॉल सफेद या पीलापन लिए सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादरहित होता है । विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय ; अल्कोहल् (९५%) में थोड़ा-थोड़ा घुलता है, किन्तु मन्दबल खनिज अम्लों तथा अल्कली हाइड्रॉक्साइड्स एवं कार्बोनेट्स के जलीय विलयन में घुलनशील होता है । मात्रा—(१) प्रारम्भिक (Initial dose)—४५ ग्रेन या ३ ग्राम, (२) बाद में १५ से २३ ग्रेन प्रत्येक ४ घंटे के बाद ।

सल्फाथाएजोलम् सोडियम् Sulphathiazolum Sodium (Sulphathiazol. Sod.) I. P., B. P.—ले०; सल्फाथाएजॉल सोडियम् Sulphathiazole Sodium; सॉल्यूबुल सल्फाथाएजॉल Soluble Sulphathiazole—अं० । जल में घुलनेवाला सिबाजॉल—हिं० ।

वर्णन—इसका सफेद रंग का या पीलापन सफेद रंग का अतिसूक्ष्म-क्रिस्टलाइन पाउडर (Micro-crystalline Powder) होता है, जो हवा में खुला रहने से गाढ़े रंग का होने लगता है । यह प्रायः गन्ध एवं स्वादरहित होता है। विलेयता-३ भाग जल तथा २० भाग अल्कोहल् (९५%) में घुल जाता है । मात्रा—१५ से ३० ग्रेन (१ से २ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा ।

गुण-कर्म का प्रयोग ।

सामान्यतः सल्फाथायजोल की क्रिया भी सल्फानिलेमाइड की ही भाँति होती है, किन्तु आँतों द्वारा इसका शोषण अपेक्षाकृत क्षिप्रतापूर्वक (जल्दी से) तथा उसी प्रकार शरीर से निस्सरण भी जल्दी होता है । अतएव शीघ्र उत्सर्ग होने के कारण रक्त में इसका कन्स-

न्ट्रेशन निश्चित स्तर तक बनाए रखना मुश्किल होता है। रक्तगत अधिकतम संकेन्द्रण (प्रति १०० सी० सी० रक्त में ५ से १० मि० ग्रा० तक) औषधि सेवन करने के बाद ४ से ६ घंटे के अन्दर हो जाता है।

न्यूमोकोकस के उपसर्ग से होनेवाले न्यूमोनिया, तथा स्टेफिलोकोकाइ के उपसर्ग से होनेवाले विभिन्न भयंकर रोगों में यथा, मधुमेहपिडिका (कारबन्कल Carbuncle), बड़े विद्रधि (Large boils) एवं अधस्त्वचीय धातुशोथ (Cellulitis) तथा सूजाक (गोनोकोकल उपसर्ग) एवं E. coli का उपसर्ग। गोनोकोकल एवं स्टेफिलोकोकल उपसर्ग में अब इन औषधियों के स्थान में पेनिसिलिन का प्रयोग किया जाता है। उपयुक्त अवस्थाओं में मुखद्वारा सल्फाथायजोल की टिकियाँ दी जाती हैं; अथवा आवश्यकता पड़ने पर सल्फाथायजोल सोडियम् का शिरागत सूचिकाभरण (Intravenous injection) किया जाता है। एतदर्थ इसके ५ से १०% बल का सॉल्यूशन प्रयुक्त होता है। एक बार में २ ग्राम मात्रा में सल्फाथायजोल सोडियम् दिया जाता है। मुख द्वारा औषधि का सेवन करने से मस्तिष्कसुषुम्नाद्रव में इनका काफी कन्सन्ट्रेशन नहीं हो पाता। अतएव मेनिंगोकोकल उपसर्ग में यह विशेष उपयोगी नहीं होता। सल्फाथायजोल का इंजेक्शन शिरागत मार्ग से ही करना चाहिए। अधस्त्वक् मार्ग से (Subcutaneously) अथवा सुषुम्नांतरगत मार्ग से (Intrathecally) इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। बाह्यतः स्थानिक प्रयोग के लिए भी सल्फाथायजोल का प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ यह पाउडर (Powder), मलहम (Ointment) तथा पेस्ट (Paste) के रूप में व्यवहृत होता है।

विषाक्तता (Toxic Symptoms)—सल्फाथायजोल के प्रयोग में विषाक्त लक्षणों के प्रगट होने की सम्भावना भी काफी होती है। प्रायः ज्वर हो जाता है तथा त्वचा पर चकत्ते या दाने (Skin-rash) निकल आते हैं। कभी-कभी आंख लाल हो जाती (congestion of the conjunctiva) है। उपर्युक्त लक्षणों के निवारणार्थ इस चिकित्साक्रम में रोगी को खूब पानी पीना चाहिए और साथ में क्षारों (Alkalies) का व्यवहार करना चाहिए। कभी-कभी वृक्कों पर घातक प्रभाव होकर रक्तमेह (हीमेचूरिया Haematuria) का उपद्रव हो जाता है। ऐसी अवस्था में औषधि का प्रयोग तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। कभी श्वेत कायाणुओं पर प्रभाव होकर कणिका कायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) का उपद्रव होता है। स्थानिक प्रयोग से भी रोगी में औषधि के प्रति असह्यता के लक्षण प्रगट हो सकते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली सल्फाथायजोलाइ (Tabellae Sulphathiazoli (Tab. Sulphathiazol.), I. P., B. P.—ले०; टॅब्लेट्स ऑव सल्फाथायजोल Tablets of Sulphathiazole—अं०। सिबाजॉल की टिकिया—हिं०।

संरक्षण—सिबाजॉल की टिकिया को अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—(१) प्रारम्भिक ४५ ग्रेन, (२) उसके बाद १५ से २२ ग्रेन प्रत्येक ४ घंटे के बाद।

२—इन्जेक्शिओ सल्फाथायजोलाइ सोडियाइ Injectio Sulphathiazoli Sodii (Inj.

Sulphathiazol. Sod.),I.P.,B.P.–ले०; इन्जेक्शन ऑव सल्फाथायजॉल सोडियम् (Injection of Sulphathiazole Sodium)—अं०; सिबाजॉल का इंजेक्शन—हिं० ।

मात्रा—१५ से ३० ग्रेन या १ से २ ग्राम शिरागत सूचिकाभरण द्वारा ।

व्यावसायिक योग :—

(१) सिबाजोल टॅबलेट्स (Ciba)—०·५ ग्राम की टिकिया आती है ।

(२) सिबाजोल पाउडर (,,)—(२०%) बलका २०, १००, ५०० ग्राम की पैकिंग आती है ।

(३) सिबाजोल आयण्टमेंट (,,)—(५%) ४० ग्राम मलहम की ट्यूब आती है ।

(४) ,, नेत्रमलहर (Eye-ointment)—१०% बल का ५ ग्राम मलहम की ट्यूब आती है ।

(५) ,, एम्पूल्स ,, ५ सी० सी० का एम्पूल्स आती है ।

सल्फाडाइमाइडिना (सल्फाडाइमाइडीन) I. P., B. P.

Sulphadimidina (Sulphadimidin.)—(ले०)

Sulphadimidine (अं०)

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_{14}O_2N_4S$.

पर्याय—सल्फामेथाजीन Sulphamethazine, सल्फामेजाथीन (Sulpha mezathine. ।

वर्णन—यह रासायनिक दृष्टि से २—(p—aminobenzenesulphonamido—)—4 : 6 – dimethylpyrimidine होता है । इसका सफेद या सफेदी लिए क्रीम रङ्ग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त या तीता (Bitter) होता है । विलेयता –जल में तो प्रायः अविलेय होता है ; १२० भाग अल्कोहल (९५%) में घुल जाता है; मन्दबल खनिज अम्लों (Dilute mineral acids) तथा अल्कली (क्षारीय) हाइड्रॉक्साइड्स एवं कार्बोनेट्स के जलीय विलयन में भी घुलनशील होता है । मात्रा—(१) प्रारम्भिक ४५ ग्रेन या ३ ग्राम; (२) बाद में १५ से २३ ग्रेन या १ से १½ ग्राम प्रत्येक ६ घंटे के बाद ।

सल्फाडाइमाइडिना सोडियम् Sulphadimidina Sodium (Sulpha diamidin. Sod.) I. P., B. P.–ले०; सल्फाडाइमाइडीन सोडियम् Sulphadimidine Sodium—अं०

वर्णन—यह सफेद या क्रीम रंग का चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त एवं क्षारीय होता है । विलेयता—२½ भाग जल में घुल जाता है; अल्कोहल (९५%) में मुश्किल से से अंशतः विलेय होता है ।

मात्रा–१५ से ३० ग्रेन (१ से २ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण (Intravenous Injection) द्वारा ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

सामान्यतः सल्फाडाइमाइडीन की क्रिया सल्फोनेमाइड्स की ही भाँति होती है किन्तु सल्फाडाइजीन की अपेक्षा आंतों द्वारा इसका शोषण तो शीघ्रतापूर्वक होता है, पर उत्सर्ग

(Excretion) मन्दगति से होता है। परिणामतः ४ ग्राम (६० ग्रेन या १ ड्राम) की प्रारम्भिक मात्रा से भी ३–४ घंटे के अन्दर रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण (कन्सन्ट्रेशन : प्रति १०० सी० सी० रक्त में १० मि० ग्रा०) हो जाता है। इसके बाद १–१½ ग्राम ४–६ घंटे के अन्तर से या २ ग्राम ६–६ घंटे के अन्तर से दिया जाता है। उत्सर्ग के समय यह मूत्र में घुल जाता है। अतः सल्फापाइरीडीन, सल्फाथाएजोल तथा सल्फाडायजीन आदि की भाँति मूत्रघात (Anuria) तथा शोणितमेह (Haematuria) आदि के उपद्रव भी इसके प्रयोग से अपेक्षाकृत कम होते हैं। न्यूमोकोकस (न्यूमोनिया में), स्ट्रेप्टोकोकस एवं E. Coli के उपसर्ग में इसका प्रयोग विशिष्ट रूपेण उपयोगी है। मेनिंगोकोकस के उपसर्ग (यथा मेनिनजाइटिस) में यह विशेष लाभ नहीं करता।

प्रयोग-विधि—सल्फाडाइमाइडीन की टॅबलेट्स मुख द्वारा जलके साथ दी जाती हैं। सल्फाडाइमाइडीन सोडियम् का प्रयोग **शिरागत सूचिकाभरण** (Intravenous Injection) द्वारा **अथवा पेशीगत सूचिकाभरण** द्वारा किया जाता है। सल्फाडाइमाइडीन स्थानिक प्रयोग के लिए व्रणों पर छिड़कने के लिए डस्टिंग पाउडर (Dusting Powder) के रूप में तथा जले हुए जगह पर लगाने के लिए क्रीम (Cream) के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेल्ली सल्फाडाइमाइडिनी Tabellae Sulphadimidinae (Tab. Sulphadimidin.), I. P., B. P. —ले०; टॅबलेट्स ऑव सल्फाडाइमाइडीन Tablets of Sulphadimidine.—अं०। सल्फाडाइमाइडीन की टिकिया—हिं०।

मात्रा—(१) प्रारम्भिक ४५ ग्रेन; (२) तदनु १५ से २२ ग्रेन प्रत्येक ६ घंटे के बाद।

२—इन्जेक्शिओ सल्फामाइडिनी सोडियाइ Injectio Sulphadimidinae Sodi; (Inj. Sulphadimidin. Sod.)—I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सल्फाडाइमाइडीन सोडियम् Injection of Sulphadimidine Sodium—अं०; सल्फाडाइमाइडीन का इंजेक्शन—हिं०।

मात्रा—१५-३० ग्रेन (१ से २ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा।

सल्फासिटेमाइडम् (सल्फासिटेमाइड), B. P. C.

Sulphacetamidum (Sulphacetamid.)–ले०; Sulphacetamide –अं०।

रासायनिक संकेत : $C_8H_{10}O_3N_2S$.

पर्याय—एल्ब्युसिड Albucid.

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह (N—p—aminobbenzene sulphonacetamide) होता है, जो सफेद या हल्का पीलापन लिए सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। यह प्रायः गन्धहीन होता है तथा स्वाद में अम्ल एवं किंचित् नमकीन होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर १५० भाग जल में घुलता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल (१५ भाग), एसिटोन (७ भाग), खनिज अम्ल (Mineral acids) एवं क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स तथा कार्बोनेट्स के जलीय विलयन (Aqueous Solution) में भी घुल जाता है। किन्तु साल्वेंट ईथर में अविलेय होता है।

सल्फासिटेमाइडम् सोडियम् Sulphacetamidum Sodium (Sulphacetamid. Sod.), I. P., B. P.–ले०; सल्फासिटेमाइड सोडियम्; सॉल्युबुल सल्फा-

सिटेमाइड (Soluble Sulphacetamide)—अं० । जलविलेय या पानी में घुलनेवाला सल्फासिटेमाइड—हिं० ।

रासायनिक संकेत : $C_8H_9O_3N_2SNa, H_2O$.

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह (Sodium p—aminobenzene Sulphonacetamide monohydrate) होता है । इसमें कम से कम ६६ प्रतिशत सल्फासिटेमाइड सोडियम् होता है ।

वर्णन—सल्फासिटेमाइड सोडियम् सफेद या हल्का पीलापन लिए सफेद रंग का सूक्ष्म-क्रिस्टलाइन (Micro-crystalline) चूर्ण होता है, अथवा इसके क्रिस्टल्स होते हैं । यह प्रायः गन्धहीन और स्वाद में हल्का तीता होता है । विलेयता—१½ भाग जलमें घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल (९५%) तथा एसिटोन में नाममात्र को घुलता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

सल्फासिटेमाइड चूंकि पानी में घुलनशील होता है, अतएव सोल्यूशन या नेत्राञ्जन अथवा नेत्र-मलहर (आँख का मलहम : Eye-ointment) के रूप में इसका प्रयोग स्थानिक क्रिया के लिए अनेक नेत्र रोगों में किया जाता है । अतएव नेत्राभिष्यंद या आँख आने (Conjunctivitis) पर १०% का सोल्यूशन २-२ घंटे पर अथवा ३०% सोल्यूशन दिन में २ बार अथवा ६ से १०% का मलहम प्रयुक्त करते हैं । इसके अतिरिक्त शुक्लव्रण (Corneal ulcer) एवं पक्ष्मकोप (Blepharitis) आदि नेत्ररोगों में व्याधिप्रतिषेध (Prophylaxis) एवं रोग निवारण (curative) दोनों उद्देश्यों से किया जाता है ।

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आंतों से क्षिप्रतापूर्वक इसका शोषण होता है और इसी तरह शरीर से उत्सर्ग भी जल्दी होता है । एक मात्रा में सेवन की हुई औषधि का ८० से ९०% भाग ४८ घंटे के अन्दर उत्सर्गित हो जाता है । इसका निस्सरण वृक्कों द्वारा मूत्रमार्ग से होता है । मूत्र-प्रजनन मार्ग में ई० कोलाई (E. Coli) का उपसर्ग (Infection) होने पर यह विशेषरूप से उपयोगी सिद्ध होता है । इसके लिए इसको ०·५ से १ ग्राम (८ से १५ ग्रेन) की मात्रा में दिन में ३ बार करके ७–१० दिन तक दिया जाता है ।

(ऑफिशल योग)

१—आक्युलेंटम् सल्फासिटेमाइडाइ (Oculentum Sulphacetamidi (Oculent. Sulphacetamid.)—ले०; आइ-ऑयण्टमेंट (Eye-Ointment) ऑव सल्फासिटेमाइड—अं० । सल्फासिटेमाइड का आंख का मलहम—हिं० । इसमें ६% सल्फासिटेमाइड होता है ।

(नॉन्-आफिशल)

१—गट्टी सल्फासिटेमाइडाइ फोर्टीस Guttae Sulphacetamidi Fortes (Gutt. Sulphacetamid. Fort.), B. P. C. —ले०; स्ट्रांग आइ-ड्राप्स ऑव सल्फासिटेमाइड Strong Eye drops of Sulphacetamide—अं० । सल्फासिटेमाइड १३१ ग्रेन, १ औंस सॉल्यूशन ऑव आइ-ड्राप्स (Solution of Eye drops) में विलीन कर बनाते हैं । ३०% सल्फासिटेमाइड ।

२—गट्टी सल्फासिटेमाइडाइ मिटिस (Mites), -B. P. C. —ले०; वीक (Weak) आइ-ड्राप्स

ऑॅव सल्फासिटेमाइड—अं०; सल्फासिटेमाइड सोडियम् ४४ ग्रेन १ औंस सॉल्यूशन फॉर ग्राइड्राप्स में विलीन कर (मिलाकर) बनाते हैं। १०% सल्फासिटेमाइड।

व्यावसायिक योग:—

(१) स्टेरामाइड आइ-आयण्टमेंट Steramide Eye-Ointment (W.B.)—१०% सल्फासिटेमाइड सोडियम्। १ ड्राम की ट्यूब आती हैं। (२) स्टेरामाइड स्किन-आयण्टमेंट (Skin-Ointment) —१०%। (३) स्टेरामाइड सोडियम् (पाउडर)।

आमाशयान्त्र प्रणाली पर जीवाणुनाशक प्रभाव करनेवाली शुल्वौषधियाँ:—

सल्फाग्वानिडीना (सल्फाग्वानिडीन), I. P., B. P.

Sulphaguanidina (Sulphagu anidin.) ले०;

Sulphaguanidine (अं०)।

रासायनिक संकेत: $C_7H_{10}O_2N_4S, H_2O$।

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह p—aminobenzene sulphonylguanidine monohydrate होता है। यह डाइसायनडाइएमाइड (dicyandiamide) एवं p—aminobenzene sulphonamide की परस्पर क्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसमें ९९% से १०१% तक $C_7H_{10}O_2N_4s$, होता है।

वर्णन—सल्फाग्वानीडीन सफेद सूच्याकार (Needlelike) क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन एवं स्वादरहित होता है। प्रकाश में खुला रहने पर धीरे-धीरे इसका रंग बदलने लगता (Darkens on exposure to light) है। विलेयता—२०° तापक्रम पर तो १००० भाग जल में किन्तु १००° तापक्रम पर १० भाग जल में विलेय होता है। अल्कोहल् (९५%) तथा एसिटोन में नाममात्र को घुलता (Sparingly soluble) है। क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स (Alkali hydroxides) के जलीय विलयन (Aqueous solution) में अविलेय होता है। डायल्यूट मिनरल एसिड्स में फौरन घुल जाता (Readily soluble) है।

मात्रा—४५ से ९० ग्रेन या ३ से ६ ग्राम।

सक्सिनिलसल्फाथाएजौलम् (सक्सिनिलसल्फाथाएजोल) I. P., B. P.

Succinyl Sulphathiazolum (Succinylsulphathiazol)—ले०।

Succinylsulphathiazole (अं०)।

रासायनिक संकेत : $C_{13}H_{13}O_5N_3S_2, H_2O$.

पर्याय—सल्फासक्सीडीन Sulphasuxidine; कोलिस्टेटिन Colistatin।

वर्णन—यह सफेद या पीलापन लिए सफेद चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। हवा में खुला रहने पर तो यह स्थायी (Stable) होता है, किन्तु प्रकाश के प्रभाव से धीरे-धीरे इसका रंग अवश्य विकृत होने लगता (Darkens) है। विलेयता - जल में तो प्रायः अविलेय ('Almost insoluble) होता है; अल्कोहल् (९५%) तथा एसिटोन में नाममात्र को घुलता (Sparingly soluble) है; क्लोरोफॉर्म में अविलेय (Insoluble), किन्तु क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स

के जलीय विलयन में तथा सोडियम् वाइकार्बोनेट के विलयन में घुल जाता (Soluble) है। सोडियम् वाई-कार्बोनेट के विलयन में मिलाने पर कार्बन-डाइ-ऑक्साइड गैस निकलती है।

मात्रा—४५ से ९० ग्रेन (३ से ६ ग्राम)।

फ्थैलिलसल्फाथाएजोलम् (थैलेजॉल), I. P.

Phthalylsulphathiazolum (Phthalylsulphathiazol.) ले०।

Phthalylsulphathiazole (अं०)।

रासायनिक संकेत : $C_{17}H_{13}O_5N_3S_2$।

पर्याय—सल्फाथेलिडीन Sulphathalidine; थैलेजॉल Thalazole, थेलिस्टेटिल Thalistatyl.

वर्णन—यह एक सफेद या पीलापन लिए सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है तथा स्वाद में किंचित् तिक्त होता है। प्रकाश में बहुत दिनों तक खुला रहने पर इसका रंग धीरे-धीरे विकृत होने लगता (Darkens) है। विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble); अल्कोहल् (९०%) में भी १००० भाग में घुलता है, किन्तु अल्कली (क्षारीय) हाइड्रॉक्साइड्स तथा कार्बोनेट्स के विलयन में घुल जाता है। मात्रा—८ से ३० ग्रेन (०·५ से २ ग्राम)।

थैलामिड (Thalamyd), I. P.

फ्थैलिलसल्फासिटेमाइडम् Phthalylsulphacetamidum (Phthalylsulphacetamid.) ले०;

Phthalylsulphacetamide (अं०)।

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_{14}O_6N_{2}S$.

वर्णन—यह सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् नमकीन (Saline) होता है। विलेयता—उबलते जल में घुल जाता है; सोडियम् कार्बोनेट के विलयन में तुरंत घुल जाता है और उससे CO_2 गैस निकलता है। डायल्यूट मिनरल एसिड्स में नहीं घुलता। मात्रा—प्रतिदिन १३५ ग्रेन या ९ ग्राम विभाजित मात्राओं (Divided doses) में।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

इन शुल्वौषधियों की विशिष्ट क्रिया अन्त्र पर होती है। शिगा, फ्लेक्शनर या सोनी (Shiga, Flexner or Sonne) आदि जीवाणुओं से होने वाले बैसिलरी प्रवाहिका (Bacillary dysentery) रोग में यह रामबाण औषधि का कार्य करती हैं। इसके अतिरिक्त बृहदन्त्रशोथ (Ulcerative Colitis), हैजा (Cholera) तथा उग्र अतिसार या पेट झरना (Acute diarrhoea) में भी इनकी क्रिया अद्भुत रूप से होती है। बृहदन्त्र पर शस्त्रकर्म करने के पूर्व तथा पश्चात् होने वाले उपसर्ग (Infection) के निवारण के लिए भी इनका व्यवहार किया जाता है। एतदर्थ सल्फाथेलिडीन अधिक उपयुक्त होता है। बैसिलरी अतिसार में पहले ३ दिन तक सल्फाग्वानिडीन की ४५ ग्रेन की मात्रा दिन में ३–४ बार दी जाती है। इसके बाद दिन में २ बार देते हैं। यदि व्याधि उग्र स्वरूप की हो तो इस चिकित्साक्रम के साथ-साथ एन्टिडिसेन्टेरिक सीरम भी दिया जाता है।

सक्सिनिल सल्फाथाएजोल की क्रिया भी सल्फाग्वानिडीन की ही भांति होती है; किन्तु सल्फाग्वानिडीन की अपेक्षा इसमें विषाक्त प्रभाव कम होते हैं। उग्र स्वरूप के बैसिलरी प्रवाहिका में प्रथम दिन ४-४ घंटे पर इसकी ६ ग्राम (९० ग्रेन) मात्रा दी जाती है। इसके बाद ७ दिन तक दिन में ४ बार इसकी ३ ग्राम (४५ ग्रेन) मात्रा दें। बृहदन्त्र पर शस्त्रकर्म (Colonic Surgery) में भी आपरेशन के पूर्व तथा पश्चात् ई कोलाइ (E. Coli), परफ्रिंजेंस (Bl. Perfringens) एवं मालादण्डाणुओं (Streptococci) के उपसर्ग के निवारण हेतु इसका प्रयोग किया जा सकता है।

थैलामाइड विशेषतः शिगेला (Shigella) के दण्डाणुओं के उपसर्ग से होनेवाले बैसिलरी प्रवाहिका में उपयोगी होता है। इसके अतिरिक्त इसका प्रयोग हैजा आदि अन्य सभी व्याधियों में किया जाता है, जिनके सल्फाग्वानिडीन आदि के प्रयोग का निर्देश है। आन्त्रगत शस्त्रकर्म में इसका प्रयोगक्रम निम्न प्रकार होता है—प्रति किलोग्राम शरीर-भार के लिए ३ ग्रेन के हिसाब से मात्रा निर्धारित कर शस्त्रकर्म के पूर्व तीन दिन तक तथा पश्चात् २ दिन तक देना चाहिए।

ऑफिशल योग

१—टॅबेली सल्फाग्वानीडीनी Taballae Sulphaguanidinae (Tab. Sulphaguanidin.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव सल्फाग्वानीडीन (Tablets of Sulphaguanidine)—इं०; सल्फाग्वानीडीनकी टिकिया—हिं०।

मात्रा—४५ से ९० ग्रेन (३ से ६ ग्राम)।

२—टॅबेली सक्सिनिल सल्फाथाएजोलाइ Tabellae uccinyl Ssulphathiazoli (Tab. Succinyl sulphathiazol.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव सक्सिनिल सल्फाथाएजोल Tablets of Succinyl sulphathiazole—अं:; सक्सिनिल सल्फाथाएजोल की टिकिया—हिं०।

मात्रा—४५ से ९० ग्रेन (३ से ६ ग्राम)।

३—टॅबेली फ्थैलिलसल्फाथाएजोलाइ Tabellae Phthalyl sulphathiazoli (Tab. Phthalylsulphathiaz.), I. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव फ्थैलिलसल्फाथाएजोल Tablets of Phthalyl-sulphathiazole—अं०।

मात्रा—८ से ३० ग्रेन (०.५ से २ ग्राम)।

व्यावसायिक योग :—

(१) स्टेरागन Sterogan (W. B.)—०.५ ग्राम (७½ ग्रेन) की टॅबलेट्स।

(२) सल्फासक्सीडीन Sulphasuxidine (Sharp & Dohme)—यह सक्सिनिलसल्फाथाएजोल का योग है। ०.५ ग्राम की टॅबलेट्स आती हैं।

(४) सल्फाथोलिडीन Sulphatholidine (Sharp & Dohme)—यह फ्थैलिल-सल्फाथाएजोल का योग है। ०.५ ग्राम की टॅबलेट्स आती हैं।

[ब्रिटिश फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में उल्लिखित सल्फॉनेमाइट वर्ग की अन्य औषधियाँ—]

सल्फापाइरिडीना Sulphapyridina (Sulphapyridin), B. P. C.–ले०; सल्फापाइरिडीन Sulphapyridine—अं० ।

पर्याय—डजेनन Dagenan; एम० बी० ६९३ (M. B. 693)।

रासायनिक संकेत $C_{11}H_{11}O_2N_3S$.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—(P-aminobenzenesulphonamido) Pyridine होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर ३००० भाग जल में तथा उबलते हुए जल के १०० भाग में और अल्कोहल के ४०० भाग में विलेय होता है। इसके अतिरिक्त यह खनिज अम्लों (Mineral acids) तथा क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स के तीव्रबल विलयन (Strong solutions of alkali hydroxides) में भी घुल जाता है।

मात्रा—(१) प्रारम्भ (Initial dose) में—४५ ग्रेन या ३ ग्राम; (२) बाद में (Subsequent doses)—१५ से २२ ग्रेन या १ से १½ ग्राम प्रत्येक ४ घंटे के बाद।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

एम० बी० ६९३ (M. B. 613) की विशिष्ट क्रिया न्यूमोनिया के जीवाणुओं पर होती है। पहले यह न्यूमोनिया की विशिष्ट औषधि समझी जाती थी। किन्तु इसके प्रयोग से हृल्लास (Nausea), क्षुधानाश (Anorexia), वमन (Vomiting) आदि विषाक्तता के उपद्रवों की अधिक सम्भावना होती थी। अब इसके स्थान में अनेक अन्य औषधियाँ निकल आई हैं,जो न्यूमोनियाँ पर विशिष्ट क्रिया भी करती और विषाक्त प्रभाव भी अपेक्षाकृत कम होता है। अब इसका प्रधान उपयोग त्वचा रोग (Dermatitis herpetiformio) में किया जाता है। एतदर्थ प्रारम्भ में ४५ से ६० ग्रेन या ३ से ४ ग्राम औषधि प्रतिदिन मुख द्वारा दी जाती है। जब दाने निकलने बन्द हो जायँ तो यह मात्रा घटाकर प्रतिदिन ८ से १५ ग्रेन देना चाहिए। औषधि का सेवन मुख से किया जाता है और अन्य सल्फा-औषधियों की भांति इसके चिकित्सा-क्रम में भी काफी जल का सेवन करना चाहिए।

(नॉट्-ऑफिशल)

१—टॅबेली सल्फापाइरिडीनी Tabellae Sulphapyridinae (Tab. Sulphapyridin.) B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव सल्फापाइरिडीन Tablets of Sulphapyridine; सल्फापाइरिडीन टॅबलेट्स Sulphapyridine tablets–अं०। एम० बी० "६९३" M. B, 693 की टिकिया—हिं०।

मात्रा—पूर्ववत्।

सल्फ.मेराजिना Sulphamerazina (Sulphamerazin.), B. P. C.—ले०; सल्फामेराजीन Sulphamerazine—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{11}H_{12}O_2N_4S$.।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—(p-aminobenzene Sulphonamido)—4—methylpyrimidine होता है। इसका सफेद या क्रीम के रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है। प्रकाश में खुला रहने से रंग विकृत हो सकता है। विलेयता-क्षार (Alkalies) एवं अम्लों (Acids) में तो घुल जाता है, किन्तु अल्कोहल् में अंशतः विलेय (Slightly Soluble) होता है। जल, ईथर एवं क्लोरोफॉर्म में और भी कम घुलता (Very slightly Soluble) होता है।

मात्रा–(१) प्रारम्भिक (Initial Dose) ४५ ग्रेन (३ ग्राम), (२) बाद में (Subsequent doses)–१५ से २२ ग्रेन (१ से १½ ग्राम) प्रति ८ घण्टे के बाद।

सल्फामेराजिना सोडियम् Sulphamerazina Sodium (Sulpham-erazin. Sod.), B. P. C.—ले०; सल्फामेराजीन सोडियम् Sulphamerazine Sodium, सॉल्युबुल सल्फामेराजीन Soluble Sulphamerazine—अं०; जल-विलेय या जल में घुलनेवाला सल्फामेराजीन—हिं० ।

रासायनिक संकेत $C_{11}H_{11}O_2N_4SNa$.

प्राप्ति-साधन—यह सल्फामेराजीन एवं सोडियम् हाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन की परस्पर प्रतिक्रिया से अधःक्षेपण (Precipitation) द्वारा प्राप्त किया जाता है ।

वर्णन—इसका सफेद या पीलापन लिए सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन एवं स्वाद में तिक्त होता है । प्रकाश में खुला रहने से रंग विकृत (Darkens) हो सकता है ।

विलेयता—ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में तो प्रायः अविलेय होता है, किन्तु जल (३·५ भाग में) घुल जाता (Soluble) है । अल्कोहल् में भी साधारण मात्रा में घुलता (Slightly Soluble) है ।

मात्रा—४५ ग्रेन या ३ ग्राम शिरागत सूचिकाभरण (Intravenous Injection) द्वारा ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

सल्फामेराजीन के गुण-कर्म बिल्कुल सल्फानिलेमाइड से मिलते-जुलते हैं । किन्तु इसका शोषण आँतों से अन्य शुल्बौषधियों की अपेक्षा जल्दी (क्षिप्रतर rapidly) किन्तु निस्सरण (Excretion) मन्द गति से होता है । अतएव अपेक्षाकृत कम मात्राओं में तथा अधिक कालान्तर (Interval) से प्रयुक्त करने पर भी रक्त में इसका संकेन्द्रण (Concentration) काफी मात्रा में बना रहता है । दूसरे इसके प्रयोग से विपाक्त लक्षण भी कम होते हैं । तीसरी विशेषता सल्फामेराजीन में यह है, कि यह क्लीवप्रतिक्रिया एवं आम्लिक प्रतिक्रिया के मूत्र (Neutral and acid urine) में घुलनशील (Soluble) होने के कारण मूत्रमार्ग में एसकेरीशिआ कोलाइ (Escherichia Coli) नामक जीवाणु का उपसर्ग होने पर इसका प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है । साथ ही इसके चिकित्साक्रम में क्षारीय मिश्रण (Alkalies) देने की आवश्यकता नहीं रहती । एतदर्थ प्रारम्भ में ५५ या ६० ग्रेन की मात्रा दी जाती है और बाद में प्रति ८ घंटे पर केवल १५ ग्रेन देते रहने से रक्त में इसका काफी कन्सन्ट्रेशन बना रहता है । बालकों के लिए मात्रा का निर्धारण सल्फानिलेमाइड के प्रकरण में उल्लिखित सामान्य नियम के अनुसार करना चाहिए । यह तो हुआ सल्फामेराजीन का विशिष्ट उपयोग । इसके अतिरिक्त सल्फानिलेमाइड की भाँति न्यूमोकोकस, स्ट्रेप्टोकोकस तथा मेनिंगोकोकस के उपसर्ग में तथा जिन-जिन अवस्थाओं में सल्फानिलेमाइड के प्रयोग का निर्देश हो, इसका भी प्रयोग किया जा सकता है ।

प्रयोग-विधि—चूँकि सल्फामेराजीन का शोषण मुख द्वारा सेवन किये जानेपर आंतों से भी काफी मात्रा में हो जाता है, अस्तु सल्फामेराजीन सोडियम् के प्रयोग की सामान्यतया आवश्यकता नहीं पड़ती । किन्तु यदि आवश्यकता हो और मौखिक सेवन से काफी मात्रा में औषधि का रक्तगत कन्सन्ट्रेशन न हो रहा हो तो पहले इसका प्रयोग शिरागत सूचिकाभरण (इंजेक्शन) द्वारा करें । एतदर्थ ५% बल का सॉल्यूशन प्रयुक्त किया जा सकता है । प्रारंम्भिक मात्रा ४५ ग्रेन (३ ग्राम) की होती है । इसी प्रकारकी एक मात्रा १२ घंटे के बाद और दें और तब दवा का सेवन मौखिक मार्ग से करते रहें । सावधानी—चूँकि इंजेक्शन के लिए प्रयुक्त सल्फामेराजीन का विलयन क्षारीय

(Alkaline) होता है अतएव इंजेक्शन देते समय शिरा (Vein) के सिवाय इधर-उधर औषधि नहीं जानी चाहिए, अन्यथा शोथ एवं वेदना आदि की आशंका अधिक रहती है। इसका प्रयोग गुदमार्ग से अथवा स्थानिक रूप से (Rectal or Local use) तथा सुषुम्नांतरगत (Intrathecally) नहीं करनी चाहिए।

(नॉट ऑफिशल)

१—टॅबेली सल्फामेराजिनी Tabellae Sulphamerazinae (Tab. Sulphamerazin.) B. P. C.—ले०, टॅबलेट्स ऑव सल्फामेराजीन या सल्फामेराजीन टॅबलेट्स—अं०। सल्फामेराजीन की टिकिया—हिं०।

मात्रा—सल्फामेराजीन की भाँति। वक्तव्य—चिकित्सक को नुस्खे में प्रति टिकिया मात्रा लिख देनी चाहिए।

सल्फाफ्युरेजोलम् Sulphafurazolum (Sulphafurazol.), B. P. C.—ले०; सल्फाफ्युरेजोल Sulfafurazole—अं०।

पर्याय-गॅन्ट्रिसिन Gantrisin.

रासायनिक संकेत : $C_{11}H_{13}O_3N_3S$.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 5—(p—aminobenzene Sulphonamido)—3 : 4—dimethylisoxazole होता है। यह सफेद या पीलापन लिए सफेद रंग के गंधहीन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—जल में तो नाममात्र के लिए घुलता (Sparingly soluble) है। ५० भाग अल्कोहल् तथा सोडियम् बाइकार्बोनेट के ५% बल के सॉल्यूशन में (३० भाग में १) घुल जाता है।

मात्रा—(१) प्रारम्भिक मात्रा (Initial dose)—३ ग्राम (४५ ग्रेन), (२) बाद में (Subsequent doses)—१५ से २३ ग्रेन (१ से १½ ग्राम) प्रत्येक ४ घंटे के बाद।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सामान्यतया सल्फाफ्युरेजोल में भी सल्फानिलेमाइड की ही भाँति गुण-कर्म पाये जाते हैं और इसका प्रयोग भी उसी की भाँति होता है। विशेषता इसमें यह है, कि एक तो इसमें विषाक्त प्रभाव अपेक्षाकृत कम पाये जाते हैं, दूसरे आम्लिक मूत्र (Acid urie) में यह काफी घुलनशील होता है। अतएव मूत्रमार्ग के रोगों के लिए यह बहुत उपयुक्त होता है। एतदर्थ ६ ग्राम या ६० ग्रेन की दैनिक मात्रा रक्तगत संकेन्द्रण (Concentration) प्रति १०० मि०लि० में १० से २० मि० ग्रा० के लिए पर्याप्त होती है। सल्फाफ्युरेजोल की ०·५ ग्राम (८ ग्रेन) की टॅबलेट्स या टिकिया आती हैं। इनका सेवन मुख द्वारा किया जाता है।

सल्फासोमाइडिना Sulphasomidina (Sulphasomidin.), B. P. C.—ले०; सल्फासोमाइडीन Sulphasomidine—अं०।

पर्याय—एल्कोसिन Elkosin; सल्फाडाइमेटीन।

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_{14}O_2N_4S$.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 4—(p-aminobenzene sulphonamido)—2 : 6—Dimethylpyrimidine होता है। यह सफेद या सफेदीमायल क्रीम रंग का सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण

होता है, जो गंधहीन तथा स्वादरहित होता है। प्रकाश में खुला रहने से धीरे-धीरे इसका रंग विकृत होने लगता है (Darkens in colour)। विलेयता—डायल्यूट मिनरल एसिड्स एवं क्षारीय हाइ-ड्रॉक्साइड्स के सॉल्यूशन में तो यह क्षिप्रतापूर्वक विलेय अर्थात् फौरन घुल जाता (Readily sol-uble) है; किन्तु जल तथा अल्कोहल में केवल अंशतः विलेय (Slightly soluble) होता है; ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में अपेक्षाकृत और भी कम घुलता है।

मात्रा—(१) प्रारम्भिक—४५ ग्रेन या ३ ग्राम; बाद में १ से १½ ग्राम या १५ से २२ ग्रेन प्रति ४ घंटे के बाद।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सल्फासोमाइडीन के गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग भी सामान्यतया सल्फानिलेमाइड की ही भाँति हैं। किन्तु उनमें भी यह विशेषरूप से सल्फाडाइमाइडीन से मिलता-जुलता है। सल्फानिलेमाइड के पाइरीमीडीन यौगिकों में यह सबसे अधिक घुलनशील (Soluble) होता है। १०० सी० सी० जल में लगभग ०·३ ग्राम (५ ग्रेन) तक तथा ५·५ से ७·५ प्रतिक्रिया (PH) पर १०० सी० सी० मूत्र में ०·३६ से १ ग्राम तक घुल जाता है। यह अन्य सल्फोने-माइड यौगिकों की अपेक्षा सबसे अधिक निरापद (non-toxic) होता है, तथा वृक्कगत उपद्रव भी नहीं होते। १० ग्राम (१५० ग्रेन) तक प्रतिदिन देने से भी प्रायः विपाक्त लक्षण नहीं प्रगट होते। ८ ग्राम प्रतिदिन सेवन करने से रक्त में प्रति १०० सी० सी० (मि० लि०) में १५ मिलि-ग्राम तक संकेन्द्रण पाया जाता है। मस्तिष्क-सुषुम्ना द्रव (Cerebrospinal fluid) में औषधि का संकेन्द्रण ½ से ⅓ (मुक्त की अपेक्षा) के बीच पाया जाता है। इसका प्रयोग विशेषतः कण्ठशालूक (Tonsillitis), स्वरयंत्रशोथ (Laryngitis), ग्रसनिका शोथ (Pha-ryngitis) तथा नासाकोटर शोथ (Sinusitis) एवं मूत्रमार्ग के रोगों में किया जाता है।

प्रयोग विधि—इसकी ०·५ ग्राम (८ ग्रेन) की टैबलेट्स या टिकिया आती हैं, जिनका सेवन मुख से जल के साथ किया जाता है।

सल्फामाइलन Sulfamylon।

पर्याय—मेफेनाइड Mafenide; मार्फेनिल Mar fanil; मेफेनाइड Maphe-nide; मेसुडिन mesudin।

प्रयोग।

अन्य सल्फोनामाइड औषधियों की अपेक्षा इसमें विशेषता यह होती है, कि इसकी क्रिया पर पूय या मवाद (Pus) तथा पी—एमिनोबेंजोइक एसिड (p—amino benzoic acid) का निरोधक प्रभाव (Inhibitory effect) नहीं पड़ता। अतएव उन अवस्थाओं में स्थानिक प्रयोग (Topical application) के लिए यह बहुत उपयुक्त होता है। १% साल्यूशन का प्रयोग स्थानिक क्रिया के लिए मध्यकर्णशोथ (Otitis Media) में बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है।

(नॉट-ऑफिशल)

सल्फाट्रायड (Sulphatriad) एवं टर्फोनिल (Terfonyl)।

सल्फाडायजीन, सल्फाथायजोल एवं सल्फामेराजीन को बराबर-बराबर मात्रा में मिलाने से सल्फाट्रायड बनता है। इसी प्रकार सल्फाडायजीन, सल्फामेराजीन एवं सल्फाडाइमाइडीन को परस्पर बराबर-बराबर मात्रा में मिलाने से टर्फोनिल प्राप्त होता है। सल्फोनेमाइडस के इन मिश्रित योगों की विशेषता यह होती है, कि आंतों से इनका शोषण जल्दी एवं अधिकतम मात्रा में होता है। अतएव अकेले किसी योग का प्रयोग करने की अपेक्षा मिश्रित योगों का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। मूत्रमें ये काफी मात्रा में घुल जाते हैं, अतएव मूत्रगत अल्ब्युमिन्यूरिया या क्रिस्टल्यूरिया (Crystilluria) आदि उपद्रवों की आशंका अपेक्षाकृत कम होती है। इनके अलग-अलग घटकों का प्रयोग जिन-जिन अवस्थाओं में किया जाता है, उन-उन अवस्थाओं में इन मिश्रित योगों का प्रयोग भी कर सकते हैं। मात्रा—प्रारम्भिक मात्रा ३ से ४ ग्राम द्वारा, इसके बाद प्रति ६-६ घंटे पर १ ग्राम।

इर्गाफेन (Irgafen)—

रासायनिक दृष्टि से यह N-3 : 4-Dimethyl benzoyl Sulphonamide होता है, जो सफेद रंग के स्वादहीन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। जल में थोड़ा-थोड़ा घुल जाता है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आंतों से अच्छी तरह शोषित हो जाता है, किन्तु इसका निस्सरण (Excretion) मन्दगति से होता है। अतएव सल्फाडायजीन की अपेक्षा रक्तगत संकेन्द्रण अधिक मात्रा में पाया जाता है। शरीर में अपेक्षाकृत इसकी कम मात्रा का ही निर्विषीकरण (Acetylation) हो पाता है। अतएव इसके प्रयोग से सल्फोनेमाइडजन्य विषमयता की आशंका भी अधिक रहती है। इसका उपयोग सल्फाडायजीन की ही भाँति किया जा सकता है; परन्तु इसमें एक विशेषता है, कि सल्फाडायजीन की अपेक्षा मात्रा कम देनी पड़ती है और सेवन-काल भी अधिक रखा (६–६ या ८–८ घंटे पर) जा सकता है।

पारा-नाइट्रो सल्फाथाएजोल (Paranitro Sulphathiazole)

पर्याय–निसल्फेजाल (Nisulphazole)। इसका प्रयोग विशेषतः चिरकालज सव्रण बृहदन्त्रशोथ (Chronic ulcerative Colitis) तथा मलाशयशोथ (Proctitis) में गुदमार्ग द्वारा स्थानिक–क्रिया के लिए किया जाता है।

२—(एन्टीबायोटिक्स Antibiotics)

पेनिसिलिनम् Penicillinum (Penicil.), I. P.
(Amorphous Penicillin, B. P.)
(पेनिसिलिन)

प्राप्ति-साधन—पेनिसिलिन या ॲमारफस (विरूपिक) पेनिसिलिन, पेनिसिलियम् नोटेटम् Penicillium notatum या तत्सम्बन्धी अन्य सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा उत्पादित एन्टीमाइक्रोबियल एसिड का सोडियम्, पोटासियम् या कैल्सियम् साल्ट (लवण) होता है। इसमें प्रति मिलिग्राम (m. g.) ११०० युनिट की शक्ति होती है। इस प्रकार पेनिसिलिन या एमारफस पेनिसिलिन तीन प्रकार का होता है :—

(१) एमॉरफस पेनिसिलिन केल्सियम् साल्ट (Calcium salt.)
(२) ,, ,, पोटासियम् साल्ट (Potassium Salt.)
(३) ,, ,, सोडियम् साल्ट (Sodium salt.)

वर्णन—पेनिसिलिन हल्के पीले रंग का या हल्के भूरे रंग का विरूपिक (एमॉर्फस Amorphous) तथा उन्दचूष या नमी को सोखनेवाला (Hygroscopic) चूर्ण (Powder), बड़े कण (Larger particles), छोटे-छोटे ढेले (Masses) के रूप में अथवा सफेद सूक्ष्म दानों (White granules), हल्की पपड़ियों (Scales) या केवल विरूपिक चूर्ण (Amorphous powder) के रूप में होता है। शुद्ध रूप में कैल्सियम् साल्ट प्रायः विरूपिक चूर्ण (एमॉर्फस पाउडर) के रूप में होता है। यह प्रायः गंधहीन (Odourless) होता है। १५° तापक्रम के ऊपर प्रायः पेनिसिलिन का सॉल्यूशन बिगड़ जाता है। अम्लों (Acids), क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स तथा आक्सीडायजिंग द्रव्यों (Oxidising Agents) की क्रिया से पेनिसिलिन निष्क्रिय हो जाता है।

विलेयता—जल तथा समबल लवणजल (Physiological saline) में यह खूब अच्छी तरह घुल जाता है; अल्कोहल् में भी साधारणतया घुलनशील तो होता है, किन्तु अल्कोहोलिक विलयन निष्क्रिय सा होता है। स्थिर तैलों (Fixed oils) तथा लिक्विड पाराफिन में यह अविलेय होता है।

संरक्षण—पेनिसिलिन का संग्रह ठंढी जगह (रेफ्रिजरेटर) में करना चाहिए। किसी भी हालत में तापक्रम १५ से अधिक नहीं होना चाहिए। दूसरे पेनिसिलीन साल्टस, विशेषतः सोडियम् साल्ट नमी को सोखते हैं, अतएव आर्द्रता से भी इसको बचाना चाहिए।

मात्रा—आवश्यकतानुसार।

वक्तव्य—जब नुस्खे पर केवल पेनिसिलीन लिखा हो तो बेंजिल पेनिसिलिन (Benzyl penicillin) ही देना चाहिए।

बेंजिल पेनिसिलिनम् (ले०), I. P., B. P. Benzylpenicillinum (Benzylpenicil.)—ले०; (बेंजिल पेनिसिलिन Benzylpenicillin-अं०)

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_{17}O_4N_2SNa$, (सोडियम् साल्ट)
$C_{16}H_{17}O_4N_2SK$ (पोटासियम् साल्ट)

पर्याय—क्रिस्टलाइन पेनिसिलिन 'जी' Crystalline Penicillin G; पेनिसिलिन 'जी' Penicillin G.

वर्णन—बेंजिल पेनिसिलिन, पेनिसिलियम् नोटेटम् या तत्सम्बन्धी अन्य सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा उत्पादित एन्टीमाइक्रोबिअल एसिड का क्रिस्टलाइन पोटासियम् साल्ट (Crystalline Potassium salt) या क्रिस्टलाइन सोडियम् साल्ट (Crystalline Sodium Salt) होता है। इसमें पेनिसिलिन्स की सकल मात्रा (Total penicillins) कम से कम ९३ प्रतिशत तथा बेंजिल पेनिसिलिन ८५% होता है। बेंजिल पेनिसिलिन २ प्रकार का उपलब्ध होता है—(१) बेंजिल पेनिसिलिन का सोडियम् साल्ट Benzyl penicillin (Sodium Salt) तथा (२) पोटासियम् साल्ट Benzyl penicillin (Potassium Salt)। सोडियम् साल्ट के प्रतिमिलिग्राम (per m.g.) कम से कम १५५० युनिट्स की शक्ति तथा पोटासियम् साल्ट के प्रति मिलिग्राम में कम से कम १,४८० युनिट्स की शक्ति होती है। बेंजिल पेनिसिलिन के दोनों ही साल्ट सफेद रंग के सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (White finely crystalline Powder) के रूप में प्राप्त होते हैं, जो जल में सुविलेय (Very Soluble) होता है। परन्तु स्थिर तैलों तथा लिक्विड पाराफिन में नहीं घुलता।

मात्रा—आवश्यकतानुसार, जिसका निर्धारण चिकित्सक करता है।

संरक्षण—पेनिसिलिन की शीशियों (Phials) का संग्रह शुष्क एवं ठंढी जगह में करनी चाहिए।

लेबिल (Labelling)—लेबिल में निम्न बातों का निर्देश रहता है—(१) आया कि शीशी में बेंजील पेनिसिलिन सोडियम् साल्ट है या पोटासियम् साल्ट है; (२) उस शीशी में सकहयुनिट का मात्रा (Number of units) क्या है; (३) प्रति मि० ग्रा० औषधि में युनिट मात्रा क्या है ; (४) निर्माता (Manufacturer) का नाम, पता एवं लाइसेन्स नं० ; (५) निर्माण-तिथि (Date of manufacture) तथा (६) औषधि की सक्रिय अवधि (Date of expiry of potency)।

वक्तव्य-शीशी पर सक्रिय अवधि की जो तिथि लिखी हुई हो, उसके बाद निर्वीर्य हो जाने के कारण प्रयोग के योग्य नहीं रहती। **अतएव उस तिथि के बाद उसका इस्तेमाल कदापि नहीं करना चाहिए।**

प्रोकेनी बेंजिल पेनिसिलिनम्

Procainae Benzylpenicillinum (Procain Benzylpenicil.), I. P., B. P.—(ले०); (प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन Procaine Benzylpenicillin)—अं०।

पर्याय—प्रोकेन पेनिसिलिन 'जी' Procaine penicillin G ; पेनिसिलिन 'जी' प्रोकेन Pencillin G Procaine.

रासायनिक संकेत : $C_{13}H_{20}O_2N_2$, $C_{16}H_{18}O_2S$, H_2O.

वर्णन—प्रोकेन पेनिसिलिन (प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन) का श्वेत क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है। यह २५० भाग जल में विलेय होता है। प्रति मि० ग्रा० में कम से कम ९५० युनिट पेनिसिलिन तथा ३७½% से ४०½% प्रोकेन (Procaine) होता है।

मात्रा—५००,००० युनिट से १,०००,००० युनिट पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म

साधारण संकेन्द्रण (Concentration) में पेनिसिलिन जीवाणु स्तम्भक (Bacteriostatic) तथा अधिक मात्रा में यह जीवाणुनाशक (Bactericidal) दोनों प्रकार की क्रियायें करता है। यद्यपि जीवाणुओं पर इसकी क्रिया की दृष्टि से पेनिसिलिन सल्फोनेमाइड्स के समान है, किन्तु इसमें अनेक विशेषतायें भी हैं, जो सल्फोनेमाइड्स में नहीं पाई जातीं। एक तो पारा-अमिनोबेंजोइक एसिड (PABA) की उपस्थिति अथवा पेप्टोन्स तथा पूय की उपस्थिति से पेनिसिलिन की सक्रियता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता; किन्तु सल्फोनेमाइड्स की क्रिया उपर्युक्त द्रव्यों के कारण मन्द पड़ जाती है अथवा रुक जाती है। दूसरे सल्फोनेमाइड्स वस्तुतः विकारी जीवाणुओं की संख्यावृद्धि (Multiplication or rate of growth) को रोकते हैं; किन्तु पेनिसिलिन के प्रभाव से जीवाणुओं की संख्यावृद्धि तो रुकती ही है; परन्तु साथ ही उपस्थित जीवाणु मर भी जाते हैं। तीसरे पेनिसिलिन शरीर के नैसर्गिक प्रतियोगी पदार्थों (Antibodies) अथवा रक्त के श्वेत कायाणुओं की जीवाणुभक्षण क्रिया (Phagocytosis) में भी किसी प्रकार की विकृति नहीं करता। अनेक जीवाणु जिनपर सल्फोनेमाइड्स का प्रभाव

नहीं होता (Sulphonamide resistant organisms), पेनिसिलिन के प्रभाव से मर जाते हैं।

सल्फोनेमाइड्स अथवा अन्य रसौषधियों (Chemotherapeutic agents); यथा—आर्सेनिक, विस्मथ आदि के साथ पेनिसिलिन का व्यवहार करने से पेनिसिलिन की क्रियाशीलता बढ़ जाती (Synergistic effect) है।

प्रयोगों द्वारा देखा गया है, कि अनेक ऐसे विकारी जीवाणु भी हैं, जिनपर पेनिसिलिन का कोई प्रभाव नहीं (**Penicillin resistant bacteria or organisms**) पड़ता। अनेक जीवाणु जो पेनिसिलिन के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं (**Penicillin-Sensitive organisms**), किन्तु कभी पेनिसिलिन का प्रयोग करने पर भी उनपर प्रभाव होता नहीं दीखता (**Penicillin fast**)। इसका कारण यह होता है, कि अनेक पेनिसिलिन-ग्रस्त (**Penicillin-Sensitive**) जीवाणु एक प्रकार के किण्व (**Enzyme**) का उत्पादन करते हैं, जो पेनिसिलिन की जीवाणुनाशकक्रिया का अवरोध करता है। इस किण्व को पेनिसिलिनेज (**Penicillinase**) कहते हैं।

शोषण तथा शोषणोपरान्त शरीरगत परिवर्तन एवं विभिन्न धातुगत वितरण— विभिन्न मार्गों द्वारा प्रयुक्त पेनिसिलिन का शोषण भी भिन्न-भिन्न मात्राओं में होता है। (१) **मुख (Oral Administration)**—मुख द्वारा पेनिसिलिन का प्रयोग मुख एवं कण्ठगत स्थानिक प्रभाव के लिए अथवा आमाशयान्त्र से शोषित होने के बाद सामान्यकायिकप्रभाव (Systematic effect) के लिए किया जा सकता है। मुखगत स्थानिक प्रभाव के लिए **पेस्टिलीज या लॉजेन्जेज** (Pastilles or Lozenges) अर्थात् मुख चक्रिकाओं या **गुटिकाओं** के रूप में किया जाता है। आमाशय में आमाशयिक रस के अम्लों के कारण अधिकांश पेनिसिलिन नष्ट हो जाता है। इस प्रकार सामान्यकायिकप्रभाव के लिए मुख-मार्ग से प्रयुक्त करने के लिए निश्चित मात्रा का चौगुनी या पचगुनी मात्रा लेने से ही औषधीय प्रभाव की सम्भावना की जा सकती है। **अब मौखिक प्रयोग के लिए पेनिसिलिन के ऐसे यौगिकों के निर्माण का प्रयत्न किया गया है, जो आमाशयिक रस के प्रभाव से नष्ट नहीं होते और शोषणोपरान्त इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त औषधि की ही भांति कार्य करते हैं।** ऐसे यौगिकों के निर्माण में ट्राइसोडियम् साइट्रेट आदि पदार्थ प्रयुक्त किये जाते हैं। (२) इन्जेक्शन **(Parenteral administration)—अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने** पर पेनिसिलिन शीघ्रतापूर्वक तथा अधिकाधिक मात्रा में शोषित होता है, और १५ से ३० मिनट के भीतर रक्त में इसका अधिकतम संकेन्द्रण हो जाता है। प्रोकेन पेनिसिलिन 'जी' का शोषण अपेक्षाकृत मन्दगति से होता है। औषधीय प्रभाव के लिए प्रति सी० सी० (मि० लि०) रक्त में पेनिसिलिन का ०'३ से ०'५ युनिट संकेन्द्रण होना आवश्यक है। **अतएव औषधीय प्रयोग के लिए पेनिसिलिन का प्रयोग प्रायः इंजेक्शन द्वारा ही अधिक उपयुक्त होता है। अन्य मार्ग**—यों तो सपॉजिटरी (५ से १० लाख युनिट की मात्रायें) के रूप में प्रयुक्त होने पर सार्वदैहिक प्रभाव के लिए पर्याप्त शोषण हो सकता है, किन्तु सार्वदैहिक **प्रभाव के लिए गुदमार्ग द्वारा इसका प्रयोग विश्वस्त नहीं हो सकता।** फुफ्फुसावरणगत अवकाश (pleural cavity), उदर्याकला (Peritoneum) तथा परिहृदयावरण

(**Pericardium**) में इसका प्रयोग करने से काफी मात्रा में शोषण हो जाता है। किन्तु संधिगुहाओं अथवा सुषुम्नान्तर्गत मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर शोषण होता तो अवश्य है, परन्तु सार्वदैहिक प्रभाव करने के लिए यह पर्याप्त नहीं होता। **योनिमार्ग द्वारा (Intravaginal administration)** प्रयुक्त होने पर भी शोषण अच्छा होता है, किन्तु सार्वदैहिक प्रभाव के लिए यह मार्ग भी विश्वस्त नहीं है।

निस्सरण—पेनिसिलिन का निस्सरण शीघ्रतापूर्वक तथा वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ होता है।

विषाक्तता—**पेनिसिलिन एक रसौषधि** (Chemotherapeutic agent) होते हुए भी **इसमें विषाक्तता अत्यल्प मात्रा में पायी जाती है। कभी-कभी इस प्रकार का उपद्रव उन व्यक्तियों में हो सकता है, जिनमें इसके प्रति परम संवेदनशीलता या असह्यता** (Hypersensitivity) **तथा अलर्जी** (Allergic tendency) **की प्रवृत्ति होती है।**

पेनिसिलिन के आमयिक प्रयोग

पेनिसिलिन के आविष्कार ने चिकित्सा-जगत में क्रान्ति पैदा कर दी है। शल्य-चिकित्सा में भी इससे अब अद्भुत सहायता मिलती है। अनेक पूयजनक एवं औपसर्गिक रोग जो पहले असाध्य थे, पेनिसिलिन के कारण साध्य हो गये हैं। अब पेनिसिलिन की सेवन-विधि एवं यौगिकों के निर्माण में भी काफी सुधार हो गया है। किन्तु पूयोत्पादक रोगों में प्रारम्भ में ही इसका प्रयोग उपयोगी होता है, अन्यथा पूय बन जाने पर या विद्रधि या व्रण बन जाने पर शस्त्रकर्म द्वारा चिकित्सा आवश्यक हो जाती है। उपयोगी होने का यहाँ यह अर्थ नहीं समझना चाहिए कि आँख मूंदकर अंधाधुंध पेनिसिलिन का प्रयोग करने लगें। पेनिसिलिन का प्रयोग करने में निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है—इसका प्रयोग उन्हीं अवस्थाओं में करें, जिनमें उन-उन व्याधियों के जनक जीवाणुओं पर पेनिसिलिन की विशिष्ट क्रिया होती है। पेनिसिलिन का पूर्ण प्रभाव होने के लिए पर्याप्त मात्रा में तथा कालतक औषधि का प्रत्यक्ष संसर्ग जीवाणुओं से होना चाहिए। अतएव प्रयोग के पूर्व सेवन-मार्ग, मात्रा तथा चिकित्सा-काल आदि विषयों का निर्धारण चिकित्सक को विवेचना करके पहले समझ लेना चाहिए।

पेनिसिलिन का प्रभाव कतिपय को छोड़कर प्रायः सभी वातपी (Aerobic) तथा वातभी (Anaerobic) ग्राम-पाजिटिव जीवाणुओं पर होती है। ग्राम-निगेटिव जीवाणुओं पर सामान्यतया पेनिसिलिन का प्रभाव नहीं पड़ता। किन्तु **उनमें सूजाक के जीवाणु (N. gonorrhoeae)** पर इसका **विशिष्ट घातक प्रभाव होता है।** इसके अतिरिक्त **मस्तिष्कसुषुम्नाज्वर के जीवाणु (Meningococcus) पर भी साधारण प्रभाव करता है।**

स्थानिक प्रयोग।

स्थानिक प्रयोग में पेनिसिलिन का प्रत्यक्ष संसर्ग विकारी जीवाणुओं से कराया जाता है। स्थानिक क्रिया के लिए इसका प्रयोग विभिन्न कल्पों के रूप में होता है :—

(१) **साधारण विलयन या सॉल्यूशन**—इस रूप में प्रति मि० लि० (या सी०सी०) में २५० से १००० युनिट के बल का विलयन स्थानिक व्रणों के धावन या धोने के लिए

(Irrigating wounds) किया जाता है। इसी प्रकार इसका लोशन अनेक नेत्ररोगों—यथा, नेत्राभिष्यंद (Conjunctivitis), शुक्लव्रण (Corneal ulcer), नवजात (पूयमेहजन्य) नेत्रपाक (Ophthalmia neonatorum), तथा पद्मकोर (Blepharitis) आदि—में प्रयुक्त किया जाता है। इसके लिए औषधिका प्रयोग दिन में अनेक बार करना चाहिए ताकि औषधि का स्थानिक प्रभाव क्षीण न होने पावे। नेत्र धोने के बाद अथवा नेत्र-धावन (Eye wash or Lotion) के अतिरिक्त नेत्ररोगों में पेनिसिलिन का नेत्राञ्जन (Oculentum or Eye ointment) भी प्रयुक्त किया जाता है। इसी प्रकार कर्णपाक (Otorrhoea) आदि कर्णरोगों में कर्ण-विन्दु (Ear drop) के रूप में इसका प्रयोग होता है। गम्भीर अवस्थाओं में स्थानिक प्रयोग के साथ-साथ पेनिसिलिन के इन्जेक्शन भी देने चाहिए। (२) **पेनिसिलिन क्रीम एवं पेनिसिलिन आयण्टमेंट**—का प्रयोग अनेक त्वचा-विकारों में स्थानिक प्रभाव के लिए किया जाता है। (३) **अवधूलन चूर्ण या डस्टिंग पाउडर**—इसका प्रयोग भी स्थानिक प्रयोग के लिए व्रणों आदि पर छिड़कने के लिए करते हैं। (४) **मुखगुटिका** (Pastilles and Lozenges)—इनका प्रयोग मुख एवं कण्ठ में स्थानिक प्रयोग के लिए करते हैं। इसके लिए मुखगुटिका या मुखचक्रिका को मुँह में रखकर धीरे-धीरे चूसा जाता है। (५) **आघ्राणन या नासासीकर** (Inhalation या Aerosol therapy)—श्वसनमार्ग के अनेक औपसर्गिक रोगों में नेबुलाइजर (Nebulizer) द्वारा प्रयुक्त किया जाता है।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित विशिष्ट व्याधियों की स्थानिक चिकित्सा के लिए भी पेनिसिलिन प्रयुक्त होता है :—

(१) **मस्तिष्कसुषुम्नाज्वर**—इसमें यद्यपि इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त करने से भी काम चल जाता है, लेकिन पूरी औषधि मस्तिष्कसुषुम्ना-अवकाश में नहीं पहुँचती। अतएव मस्तिष्क-सुषुम्नाद्रव में इसका काफी संकेन्द्रण करने के लिए सुषुम्नामार्गगत इन्जेक्शन (१ मि० लि० में १००० युनिट के बल का विलयन) श्रेयष्कर होता है। (२) **पूयोरस** (Empyema)—इसी प्रकार पूयोरस में पूय का आचूषण (Aspiration of the pus) का लवणजल (Saline Solution) में बनाये हुए पेनिसिलिन का विलयन (३०,००० से ५०,००० युनिट पेनिसिलिन का ३० से ५० सी० सी० में बनाया हुआ विलयन) प्रविष्ट करने से तेजी से लाभ होता है। इसके साथ-साथ प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण भी करना चाहिए। **सपूय सन्धिशोथ** (Suppurative Arthritis)—पूय निकालने के बाद १० सी० सी० समबल लवण-जल (Isotonic saline) में २०,००० युनिट पेनिसिलिन का विलयन इंजेक्ट करने से बहुत लाभ होता है। (४) **श्वासनलिकाविस्फार** (Bronchiectasis)—इसमें पेशीगत सूचिकाभरण के साथ-साथ आघ्राणन द्वारा भी इसका व्यवहार करते हैं।

सार्वदैहिक प्रयोग (Systemic Treatment)

निम्न औपसर्गिक रोगों में पेनिसिलिन का प्रयोग विशिष्टरूपेण उपयोगी है :—

(१) **गोलदण्डाणुओं के उपसर्ग से होनेवाले रोग** (Staphylococcal Infection)—मधुमेहपिड़िका (Carbuncle), धातुशोथ या सेलुलाइटिस (Cellulitis), अस्थिमज्जाशोथ (Osteomyelitis) एवं न्यूमोनिया आदि रोगों में।

(२) फुफ्फुसगोलाणुजन्य उपसर्ग (न्युमोकोकल इन्फेक्शन्स Pneumococcal Infections)—न्युमोकोकाइजन्य उपसर्ग के लिए एन्टीबायोटिक औषधियों में पेनिसिलिन सबसे अच्छी समझी जाती है। श्वसनमार्ग की व्याधियों में पेनिसिलिन का प्रयोग सबसे अधिक लाभप्रद सिद्ध होता है। साधारण अवस्थाओं में तथा बच्चों में मुख द्वारा इसका प्रयोग करने से भी काम चल जाता है। न्युमोनिया (फुफ्फुसपाक) में प्रायः ३००,००० से ५००,००० युनिट की मात्रा प्रतिदिन २-३ बार देनी पड़ती है, जिससे साधारणतया ५-७ दिन में रोगी चंगा हो जाता है। पूयोरस (Empyema), मस्तिष्कावरणशोथ (Meningitis), बाह्यहृदयावरण शोथ (Pericarditis) तथा संधिशोथ (Arthritis) आदि व्याधियों में पेनिसिलिन इंजेक्शन के साथ-साथ स्थानिक उपचार (Combined local and systemic therapy) करने से विशेष लाभ होता है। न्युमोकोकस के उपसर्ग से होनेवाली अन्यआंगिक विकृतियों में जहां सल्फोनेमाइड व्यर्थ पड़ जाते हैं, पेनिसिलिन बहुत उपयोगी होती है।

(३) पूयमेहगोलाणुजन्य उपसर्ग (गोनोकोकल इन्फेक्शन्स Gonococcal Infections)—पूयमेहगोलाणु (या गोनोकोकाइ gonococci) के उपसर्ग (Infection) से होनेवाली विकृतियों में पेनिसिलिन का प्रयोग जादू का काम करता है। अतएव गोनोकोकाइजन्य मूत्रस्रोतशोथ (Urethritis), पौरुषग्रंथिशोथ या अष्ठीलाग्रंथिशोथ (Prostatitis), अधिवृषणिका शोथ (Epididymitis), स्त्रियों की बीजवाहिनी शोथ (Salpingitis) एवं श्रोणिगत विद्रधि (Pelvic abscess) तथा गोनोकोकल संधिशोथ (Gonorrhoeal arthritis) एवं नेत्राभिष्यंद में पेनिसिलिन का प्रयोग अद्भुत गुणकारी है। व्याधि की तरुणावस्था (Acute) अथवा चिरकालज स्वरूप दोनों ही अवस्थाओं में यह समानरूप से लाभ करती है। कभी-कभी तो ३००,००० युनिट की एक मात्रा मात्र का इंजेक्शन करने से रोगी को ऐसा प्रतीत होने लगता है कि रुपये में पन्द्रह आना रोग साफ हो गया है। तरुण सूजाक (Acute gonorrhoea) में इसका प्रयोग इंजेक्शन द्वारा अथवा यदि इंजेक्शन देना अभीष्ट न हो तो, मुख द्वारा पेनिसिलिन टॅबलेट्स (२४ घंटे में १,०००,००० से २,०००,००० युनिट) देने से भी काम चल जाता है। सूजाकजन्य संधिशोथ में ५-७ दिन तक प्रतिदिन ३००,००० युनिट की २-४ इंजेक्शन सार्वदैहिक प्रभाव के लिए तथा साथ ही स्थानिक प्रभाव के लिए संधि के अन्दर भी इंजेक्शन (Intra-articular injection) देने से बहुत लाभ होता है। गोनोकोकसजन्य नवजात नेत्रपाक (Ophthalmia neonatorum) में २-३ दिन तक प्रति दिन ६-६ घंटे पर अथवा आवश्यकतानुसार ३-३ घंटे पर १०,००० युनिट पेनिसिलिन का प्रयोग करना चाहिए। साथ ही आँख में पेनिसिलिन का साल्यूशन भी डालना चाहिए। उक्त व्याधि के अनागतबाधाप्रतिषेध (prophylaxis) के लिए भी इसका प्रयोग कर सकते हैं। एतदर्थ पेनिसिलिन आयण्टमेंट का प्रयोग कर सकते हैं। इसी प्रकार कुसंगज पूयमेह या सूजाक के बचाव के लिए भी पेनिसिलिन का प्रयोग विश्वासप्रद है। एतदर्थ प्रसंग के २ घंटे के अन्दर ही ३००,००० या ४००,००० युनिट पेनिसिलिन मुखद्वारा या १००,००० युनिट का एक इन्जेक्शन ले लेने से आगे उपसर्ग या उपद्रव का भय जाता रहता है।

(४) मूत्रमार्गगत अन्य उपसर्ग—मूत्रमार्गगत कोलाई (E. Coli) उपसर्ग में तो, पेनिसिलिन

की अपेक्षा सल्फोनेमाइड्स का प्रयोग अधिक लाभप्रद होता है। किन्तु वृक्कगत गोल्दण्डाणु एवं मालादण्डाणु-उपसर्ग (Staphylococcal and Streptococcal infections of the kidneys) तथा परिवृक्कीय-विद्रधि (Perinephric abscess) में पेनिसिलिन ही अधिक उपयोगी एवं उपयुक्त सिद्ध होती है। इसके लिए प्रतिदिन १,०००,००० से २,०००,००० युनिट पेनिसिलिन का व्यवहार करना चाहिए।

(५) तृणाण्वीय हृदन्तः शोथ (वैक्टीरियल इन्डोकार्डाइटिज Bacterial endocarditis)—अनुग्र (Subacute) स्वरूप के हृदन्तःशोथ में प्रायः स्ट्रेप्टोविरिडेन्स (Streptoviridans) नामक दण्डाणु का उपसर्ग पाया जाता है और उक्त जीवाणु पर पेनिसिलिन घातक प्रभाव करती है। अतएव इस आधार पर उक्त रोग में पेनिसिलिन उपयोगी है। इसके लिए प्रतिदिन १,०००,००० युनिट या आवश्यकतानुसार और भी अधिक मात्रा देनी पड़ती है और चिकित्सा क्रम को काफी दिनों तक (४ से ८ सप्ताह) चालू रखना पड़ता है। उक्त व्याधि में पेनिसिलिन का अकेले प्रयोग करने के बजाय इसके साथ-साथ मुख द्वारा प्रोबेनेसिड (Probenecid) का भी सेवन करना चाहिए। अथवा ६,०००,००० युनिट पेनिसिलिन तथा २ ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन का दैनिक चिकित्सा-क्रम भी अपनाया जा सकता है।

(६) रोहिणी या डिफ्थीरिया (Diphtheria)—डिफ्थीरिया के जीवाणु (C. diphtheriae) पर भी पेनिसिलिन घातक प्रभाव करती है, किन्तु रोग का आक्रमण हो जाने पर उसके विषाक्त प्रभावों एवं गलगत झिल्ली के निष्क्रिय करने एवं गलाने में समर्थ नहीं है। अस्तु विशिष्ट औषधि के रूप में तो एन्टिटॉक्सिक सीरम का ही व्यवहार होना चाहिए। हाँ रोग का उपशम हो जाने पर नासा-ग्रसनिका मार्ग (Nasopharynx) से जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए पेनिसिलिन का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिये प्रतिदिन २००,००० से ५००,००० युनिट दिन में दो बार देना चाहिए। इस प्रकार ७-१० दिन तक पेनिसिलिन देनी पड़ती है। इससे रोग के पुनराक्रमण (Secondary infection) का भी भय निकल जाता है।

(७) वात-कर्दम (Gas-gangrene)—इस व्याधि में पेनिसिलिन का उपयोग सहायक औषधियों के रूप में किया जा सकता है। विशिष्ट चिकित्सा के लिए तो गैस-गैंग्रीन के प्रतिविष सीरम (Anti-serum) का ही व्यवहार होना चाहिए आवश्यकता पड़ने पर शस्त्रचिकित्सा भी की जा सकती है। साथ में सहायक औषधि के रूप में पेनिसिलिन का व्यवहार किया जा सकता है। इसके लिए पेनिसिलिन का स्थानिक प्रयोग भी करते हैं और साथ-साथ इसके इन्जेक्शन भी दिये जाते हैं। १ सी० सी० में ५००० युनिट का घोल दिन में ३ बार उस स्थान पर लगाना चाहिए और ३ लाख से ५ लाख युनिट दिन में २ बार इंजेक्शन द्वारा देनी चाहिए।

(८) मालादण्डाणु-उपसर्ग (Streptococcal infection)—स्ट्रेप्टोकोकाइ के उपसर्ग के परिणाम स्वरूप होने वाली अनेक व्याधियों में पेनिसिलिन रामबाण औषधि का कार्य करती है। स्ट्रेप्टो-हिमोलिटकस एवं विरिडेन्स प्रकार के मालादण्डाणुओं पर तो यह क्रिया और भी तीव्र स्वरूप की होती है। यहाँ तक कि जब जिन रोगियों में सल्फोनेमाइड के प्रयोग से कोई लाभ न हो रहा हो, उनमें भी पेनिसिलिन अच्छा कार्य करती है। एतदर्थ साधारण मात्राओं में यथा ३००,००० से ५००,००० युनिट की मात्रा प्रतिदिन २-३ बार करके ७ से १० दिन तक दी जाती है। पेनिसिलिन का प्रयोग निम्नव्याधियों में बहुत उपयोगी है—विसर्प

(Erysipelas). कण्ठशालूक (Tonsillitis), मध्यकर्ण शोथ (Otitis media), कर्णमूलशोथ (Mastoiditis), प्रसवोत्तर दोषमयता (puerperal Sepsis), अस्थिमज्जा शोथ (Osteomyelitis), फुफ्फुस पाक, पूयोरस, उदर्याकला शोथ (Peritonitis). हृदयावरण शोथ. हृदन्तः शोथ तथा मस्तिष्कावरण शोथ। इसके अतिरिक्त लोहित (Scarlet fever) में भी पेनिसिलिन का प्रयोग विशिष्टरूप से उपयोगी है।

(६) मस्तिष्कसुषुम्नाज्वर एवं मेनिंगोकोकसजन्य अन्य उपसर्ग (Meningococcal Infections)—साधारणतया मेनिंगोकोकल उपसर्ग में सल्फोनेमाइड्स का ही प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है, किन्तु किन्हीं रोगियों में जब सल्फोनेमाइड्स के प्रयोग से लाभ नहीं होता, तो पेनिसिलिन से सफलता मिलती है। एतदर्थ इसको पेशीगत एवं सुषुम्नान्तर्गत दोनों मार्गों से इन्जेक्शन करना चाहिए। मेनिंगोकोकस के उपसर्ग से होनेवाली दोषमयता (Septicaemia), संधिशोथ (Arthritis) एवं हृदन्तः शोथ में पेनिसिलिन के साथ-साथ सल्फाडायजीन का मिश्रित चिकित्साक्रम अधिक सफल सिद्ध होता है।

फिरंग (Syphilis)—आजकल फिरंग की चिकित्सा के लिए आर्सेनिक एवं बिस्मथ आदि के स्थान में पेनिसिलिन अधिक उत्तम एवं सुगम समझा जाता है। इसका कारण यह है, कि पेनिसिलिन चिकित्सा-क्रम में अनेक विशेषतायें हैं; यथा यह गुरुधात्वीय योगों की अपेक्षा कम विषैला है, इसका प्रयोग अधिक सरल एवं सुविधाजनक है तथा समय में निश्चित लाभ की आशा रहती है। अतएव विभिन्न प्रकार एवं अवस्था के फिरंग रोग में पेनिसिलिन प्रचुरता से व्यवहृत होता है।

सहज फिरंग (Acquired Syphilis) की प्रारम्भिक (Early) अवस्था में, चाहे व्याधि प्रथमावस्था (Primary stage) की हो अथवा द्वितीयावस्था (Secondary stage) की हो, निम्न चिकित्साक्रम बहुत सफल है :—(१) प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन का जलीयनिलम्बन (Aqueous Suspension) ६ लाख युनिट मात्रा में प्रतिदिन पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा १० दिन तक देनी चाहिए, (२) प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन का तैलीय विलयन, जिसमे २% अलुमिनियम् मानोस्टियरेट मिला होता है (PAM) ६ लाख युनिट की मात्रा सप्ताह में २ बार करके ४ सप्ताह तक, अथवा (३) बेंजाथीन पेनिसिलिन की २,४००,००० युनिट मात्रा पेशीगत इंजेक्शन द्वारा सप्ताह में १ बार करके २ सप्ताह तक (अर्थात् इसके दो इंजेक्शन) दें। यदि इस चिकित्साक्रम से पूर्ण लाभ न हो तो इसको दुहराया जा सकता है और आवश्यक होने पर साथ में बिस्मथ आदि का भी प्रयोग कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त गुप्त फिरंग (Latent Syphilis) में भी उक्त चिकित्सा-क्रमों में से कोई क्रम अपनाया जा सकता है। अथवा त्वचा में फिरंगजगोंदार्बुद का उपद्रव (Gummatous lesions of the skin) होने पर अथवा अस्थिगत फिरंग में भी उक्त चिकित्साक्रम बहुत उपयोगी हैं।

यकृत् एवं मस्तिष्क आदि में फिरंगज गोंदार्बुद (Visceral gumma) होने पर तथा हृदय एवं रक्तवाहिनियोंके फिरंगजविकृतियों (Cardiovascular Syphilis) में पहले बिस्मथ एवं आयोडाइड चिकित्साक्रम को देना चाहिए, फिर पेनिसिलिन का कोर्स देना चाहिये और यदि आवश्यकता पड़े तो पुनः पेनिसिलिन कोर्स को दुहराया जा सकता है। बिस्मथ का

(०'२ ग्राम या ३ ग्रेन) प्रयोग सप्ताह में १ या २ बार पेशीगत इंजेक्शन द्वारा किया जाता है। और इस प्रकार १२ सप्ताह तक बिस्मथ इंजेक्शन्स दिये जाते हैं। साथ में दिन में ३ बार करके १५ से ६० ग्रेन पोटासियम् आयोडाइड मुख द्वारा दिया जाता है।

नाड़ी फिरंग की प्रारम्भिक अवस्थाओं (Early neurosyphilis) में १०-१५ दिन तक प्रतिदिन ६ लाख युनिट प्रोकेन पेनिसिलिन का पेशीगत इंजेक्शन करना चाहिए। अथवा प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन के तैलीय विलयन (PAM) का ६ लाख युनिट सप्ताह में २ बार पेशीगत सूचिकाभरणद्वारा प्रयुक्त करने से भी काम हो जाता है। इस क्रम से ५-७ सप्ताह तक पेनिसिलिन का इंजेक्शन करना चाहिए। यही कार्य प्रति सप्ताह एक बार करके ३-४ सप्ताह तक २,४००,००० युनिट बेंजाथीन पेनिसिलिन (पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा) देने से भी होता है। इसके साथ प्रायः आर्सेनिक तथा बिस्मथ आदि गुरुधातुओं के प्रयोग की आवश्यकता नहीं पड़ती। यदि आवश्यकता हो तो पेनिसिलिन का उक्त कोर्स दुहराया जा सकता है।

नाड़ी फिरंग की चिरकालज अवस्था (Late neurosyphilis) में नाड़ी-संस्थान में अनेक स्थायी विकृतियाँ हो जाती हैं। यथा फिरंगज सर्वांगवात (General paresis), फिरंगी खञ्जता (Tabes dorsalis) तथा दृष्टिनाड़ीवात (Optic atrophy) आदि। वैसे तो एक बार नाड़ीधातु के नष्ट हो जाने पर उसे पुनः जीवित करना तो सम्भव नहीं है, फिर भी ऐसी अवस्था में पेनिसिलिन के प्रयोग से कम से कम आगे नई कोई विकृति पैदा होने की आशंका नहीं रहती तथा विकृत धातुओं में भी कभी-कभी क्रिया सम्बन्धी सुधार हो जाता है। सामान्यतः पेनिसिलिन के साथ आर्सेनिक आदि के प्रयोग की आवश्यकता नहीं पड़ती, परन्तु किन्हीं रोगियों में जिनमें पेनिसिलिन का चिकित्साक्रम व्यर्थ सिद्ध होता है, बिस्मथ आदि के प्रयोग से लाभ होते देखा गया है।

गर्भवती फिरंगिणी रोगियों (Pregnant Syphilitics) में भी पेनिसिलिन का प्रयोग बराबर किया जा सकता है। इससे एक तो गर्भ के जीवन की रक्षा हो सकती है, दूसरे जन्मजात (Congenital) फिरंग होने का भी भय नहीं रहता। गर्भावस्था के अन्तिम महीनों में यदि पेनिसिलिन का प्रयोग करना हो तो प्रतिदिन ६ लाख युनिट प्रोकेन पेनिसिलिन का पेशीगत इंजेक्शन १० दिन तक देने से पूरा काम हो जाता है। अथवा ६ लाख युनिट की मात्रा में प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन का तैलीय विलयन सप्ताह में २ बार करके ५ सप्ताह तक देना पर्याप्त होता है। प्रसव के समय प्रोकेन पेनिसिलिन के साथ क्रिस्टलाइन पेनिसिलिन मिलाकर १,२००,००० युनिट मात्रा में दे देनी चाहिए।

जन्मजात फिरंग (Congenital Syphilis) में भी पेनिसिलिन ही सर्वोत्तम औषधि मानी जाती है। प्रारम्भिक अवस्था (Early congenital Syphilis) में (जन्म से २ वर्ष आयु तक) १ लाख युनिट प्रति किलोग्राम शरीरभार के अनुसार प्रोकेन पेनिसिलिन की जो मात्रा अपेक्षित हो, उसे ८ मात्राओं में विभक्त कर प्रतिदिन १ इंजेक्शन करके ८ दिन तक देना चाहिए। प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन का तैलीय विलयन (PAM) देना हो, तो भी यही मात्रा लगती है और ८ मात्राओं में विभक्तकर दी जाती है। अन्तर केवल यह है कि इसका इन्जेक्शन सप्ताह में २ बार ही देना चाहिए और इस प्रकार पूरे चिकित्साक्रम में ८ सप्ताह लगेंगे। २ वर्ष से अधिक आयु वालों (Late Congenital Syphilis) में ६ लाख

प्रोकेन पेनिसिलिन का सप्ताह में दो बार इंजेक्शन (पेशीगत) करना चाहिए और इस प्रकार १० इंजेक्शन (५ सप्ताह तक) का क्रम पर्याप्त होता है। जन्मजात नाड़ीफिरंग (Congenital neurosyphilis) में ६ लाख युनिट प्रोकेन पेनिसिलिन प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा १५ दिन तक देनी चाहिए। अथवा यदि तैलीय विलयन (PAM) देना हो तो ६ लाख युनिट सप्ताह में २ बार करके ५-७ सप्ताह तक दें। यदि अकेले पेनिसिलिन से अभीष्ट लाभ न हो रहा हो तो साथ में बिस्मथ आदि भी दें। इसी प्रकार जन्मजातफिरंगज नेत्र के अन्तरालीय स्वच्छमण्डल-शोथ (Interstitial keratitis) में पेनिसिलिन के इंजेक्शन के साथ-साथ नेत्र में कॉर्टिसोन (Cortisone) का स्थानिक प्रयोग (Topical application) भी करना चाहिए।

पेनिसिलिन के अन्य उपयोग—उपर्युक्त विभिन्न विशिष्ट उपयोगों के अतिरिक्त निम्न व्याधियों में भी पेनिसिलिन का प्रयोग बहुत उपयोगी माना जाता है—(१) अकणिककायाण्वपकर्ष (Agranulocytosis)—इसमें ३ लाख से ५ लाख की प्रतिदिन २-३ मात्रा ७ से १० दिन तक देने से अस्थि-मज्जा की स्थिति में सुधार होकर श्वेतकायाणुओं में भी सुधार होने लगता है। (२) एन्थ्रेक्स (Anthrax); (३) एक्टिनोमाइसीज का उपसर्ग (Actinomycosis); (४) मुख का सव्रणपाक (Vincent's stomatitis); (५) मूषिकदंशज्वर (Rat-bitefever); (६) आवर्तकज्वर (Relapsing fever); (७) परंगी (Yaws) एवं वंक्षणीय लसार्बुद (Lymphogranuloma inguinale) आदि।

अनागतबाधाप्रतिषेधार्थ पेनिसिलिन का उपयोग (Prophylactic use of penicillin)—पेनिसिलिन का उपयोग शस्त्रकर्म के पूर्व एवं पश्चात् उस स्थल में पूयजनक अथवा अन्य विकारी जीवाणुओं के उपसर्ग से बचाने के लिए किया जाता है। पेनिसिलिन के कारण आज आपरेशन में काफी सहायता मिलने लगी है। इसके अतिरिक्त अनेक औपसर्गिक रोगों में औपद्रविक उपसर्ग (Secondary infection) के निवारण के लिए भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

[पेनिसिलिन (बेंजिलपेनिसिलिन) के ऑफिशल योग।]

१—अंग्वण्टम् पेनिसिलिनाइ Unguentum Penicillini (ung. Penicil.) I. P., B. P.—ले०; आयण्टमेंट ऑव पेनिसिलिन (Ointment of Penicillin), पेनिसिलिन आयण्टमेंट Penicillin Ointment—अं०; पेनिसिलिन का मलहम—हिं०।

निर्माण-विधि—पेनिसिलिन या एमॉरफस पेनिसिलिन का केल्सियम् साल्ट या पोटासियम् साल्ट या बेंजिल पेनिसिलिन का सोडियम् साल्ट या पोटासियम् साल्ट—आवश्यकतानुसार मात्रा, लिक्विड पाराफिन ५ ग्राम (g.), श्वेत मृदु पाराफिन (White soft paraffin) ९५ ग्राम। पहले पेनिसिलिन को लिक्विड पाराफिन में घोंटकर हल कर लें। फिर थोड़ा-थोड़ा श्वेत मृदुपाराफिन मिलाते जाँय, यहाँ तक कि सब मिला दें।

वक्तव्य—यदि नुस्खे पर केवल पेनिसिलिन आयण्टमेंट लिखा हो और बल का निर्देश न हो तो प्रति ग्राम २००० युनिट के बल का (I. P.) अथवा १००० युनिट के बल का (B. P.) मलहम देना चाहिए।

२—ओक्युलेंटम् पेनिसिलिनाइ Oculentum Penicillini, I. P., B. P.—ले०; आई आयण्टमेंट ऑव पेनिसिलिन Eye ointment of penicillin—अं०; पेनिसिलिन का आंख का मलहम—हिं०। यह प्रायः प्रतिग्राम २००० युनिट के बल का होता है।

३—क्रिमोर पेनिसिलिनाइ Cremor penicillini (Crem. penicil.), I. P., B. P.—ले०; क्रीम ऑव पेनिसिलिन Cream of penicillin, पेनिसिलिन क्रीम Penicillin cream—अं०; पेनिसिलिन का क्रीम—हिं० । यह प्रायः प्रतिग्राम १००० युनिट के बल का होता है।

४—इन्जेक्शिओ पेनिसिलिनाइ Injectio penicillini (Inj penicil.), I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव पेनिसिलिन Injection of penicillin—अं०; पेनिसिलिन की सुई या इंजेक्शन—हिं० । भिन्न-भिन्न बलों का होता है। साधारणतया प्रति सी० सी० २५०,००० युनिट का होता है।

५—ट्रॉकिस्काइ पेनिसिलिनाइ Trochisci Penicillini (Troch. Penicil.), I. P., B. P.—ले०; लॉजेन्जेज ऑव पेनिसिलिन Lozenges of penicillin—अं० । पेनिसिलिन की मुख-चक्रिका या मुंह में रखने की टिकिया—हिं० । साधारणतया प्रति चक्रिका (१ ग्राम वजन की) में २००० युनिट (I. P.) या १००० युनिट (B. P.) होता है।

६—टॅबलेट्स ऑव पेनिसिलिन Tablets of Penicillin, B. P.—अं०; पेनिसिलिन की टिकिया या टॅबलेट—हिं० । प्रतिटिकिया २००० युनिट (B. P.) शक्ति की होती है।

(प्रोकेन पेनिसिलिन के ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ प्रोकेनी बेंजिल पेनिसिलिनाइ Injectio Procaiae Benzyl Penicillini (Inj. Procain Benzy. penicillin); I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन Injection of procaine Benzyl penicillin, इंजेक्शन ऑव प्रोकेन पेनिसिलिन 'जी' Injection of procaine penicillin. G.—अं०; प्रोकेन पेनिसिलिन का इन्जेक्शन –हिं० ।

मात्रा—५००,००० से १,०००,००० युनिट प्रतिदिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा (Intra. muscular injection) । यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो ३००,००० युनिट प्रति मि० लि० (सी० सी०) के बल का इन्जेक्शन देना चाहिए।

२—फॉर्टिफाइड इन्जेक्शन ऑव प्रोकेन पेनिसिलिन 'जी' Fortified Injection of procaine penicillin G., B. P.—अं० ।

पर्याय—इन्जेक्शन ऑव प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन विद् बेंजिल पेनिसिलिन (Injection of procaine Benzyl Penicillin with benzylpenicillin) । प्रति सी०सी० में ३००,००० युनिट प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन तथा १००,००० युनिट बेंजिल पेनिसिलिन होता है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—इंजेक्शिओ प्रोकेनी बेंजिल पेनिसिलिनाइ ओलियोसा (Injectio Procainae Benzylpenicillini Oleosa—ले०; इन्जेक्शन ऑव प्रोकेन पेनिसिलिन इन ऑयल–अं० । यह मूँगफली के तेल (Arachis oil) में बनाया हुआ प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन का इंजेक्शन होता है, जिसमें २% (W/V) अलुमिनियम् मानोस्टियरेट भी मिलाया जाता है। १ सी० सी० में ३००,००० युनिट पेनिसिलिन होता है।

मात्रा—आवश्यकतानुसार।

२—पेनिथामेटिस हाइड्रायोडाइडम् Penethamatis Hydriodidum (Penetham. Hydriodid.), B.P.C.—ले०; पेनिथामेट हाइड्रायोडाइड Penethamate Hydriodide—अं० ।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २–diethylaminoethyl ester of benzylpenicillin का hydriodide लवण होता है, जो सूक्ष्म एवं सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—

१०० भाग जल में घुलनशील होता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल् एवं एसिटोन में भी घुल जाता है।

प्रयोग—पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर फुफ्फुसों में तथा थूक (Sputum) में इससे पेनिसिलिन का संकेन्द्रण अन्य पेनिसिलिन योगों की अपेक्षा बहुत ज्यादा हो जाता है, जो इसकी विशेषता है। अतएव श्वसन संस्थान के रोगों में जहाँ पेनिसिलिन की आवश्यकता हो, वहाँ यह यौगिक अधिक उपयुक्त है। किन्तु जिन रोगियों को वैयक्तिक-प्रकृति के कारण पेनिसिलिन सह्य नहीं होता, उनमें इसके प्रयोग से अनूर्जा (Allergy) की प्रतिक्रिया की सम्भावना अधिक रहती है। इसका इन्जेक्शन शिरागत मार्ग अथवा सुषुम्नांतरगत मार्ग द्वारा नहीं करना चाहिए।

मात्रा—५००,००० से १,०००,००० युनिट पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

३—बेनिथामीन पेनिसिलिन (Benethamine Penicillin)।

पर्याय—बेनापेन (Benapen)। यह भी बेंजिल पेनिसिलिन का लवण होता है, जो सफेद, गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। जल में तथा अल्कोहल् में अत्यल्प मात्रा में घुलता (Very slightly soluble) है। जल में न घुलने के कारण इंजेक्शन के स्थल से बहुत धीरे-धीरे शोषित होता है, लेकिन प्रभाव ज्यादे देर तक (३ से ५ दिन) ठहरता है। धीरे धीरे शोषित होने के कारण इंजेक्शन के स्थान पर वेदना भी हो सकती है। विशेषतः अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर यह आशंका और भी अधिक होती है। शिरागत या सुषुम्नान्तर्गत मार्ग द्वारा इसका इंजेक्शन नहीं करना चाहिए।

मात्रा—आवश्यकतानुसार।

४—बेंजाथीन पेनिसिलिन Benzathine Penicillin.

पर्याय—पेनिड्युरल (Penidural); बिसिलिन (Bicillin); डिबेंसिल (Dibencil)।

वर्णन—यह भी बेंजिल पेनिसिलिन का लवण होता है, जो सफेद रंग के गंधहीन, स्वादहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। जल एवं अलकोहल् में अत्यल्प मात्रा में विलेय होता है। जलीय निलम्बन (Aqueous Suspension) के रूप में साधारण तापक्रम पर १–२ साल तक भी नहीं बिगड़ता। इंजेक्शन के स्थान से धीरे-धीरे शोषित होता है और इसका प्रभाव १–२ सप्ताह तक और मात्रा अधिक हो तो ४ सप्ताह तक बना रहता है। मुख द्वारा सेवन किये जाने पर भी यह आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा शोषित हो जाता है और शोषणोपरान्त इंजेक्शन की भाँति अपने गुण-कर्म करता है।

मात्रा—(१) मुखद्वारा (Orally)—२००,००० से ४००,००० युनिट (या आवश्यकतानुसार अधिक) ६–६ या ८–८ घंटे के अन्तर से। (२) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा–६००,००० युनिट प्रति सप्ताह या हर दूसरे सप्ताह।

५—क्लोरोप्रोकेन पेनिसिलिन 'ओ' (Chloroprocaine Penicillin 'O')—रासायनिक दृष्टि से यह २–Chloroprocaine and penicillin O का क्रिस्टलाइन साल्ट (Crystalline Salt) होता है, जो सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है और इसमें प्याज की-सी गंध एवं स्वाद पाया जाता है। जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है और साधारण तापक्रम पर ३ साल तक टिकाऊ (Stable) होता है। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर

रक्त में २४ घंटे तक इसका काफी संकेन्द्रण (Effective blood level) बना रहता है। पेनिसि-लिन 'जी' की अपेक्षा इसमें अनूर्जिक-प्रतिक्रिया (Allergic reaction) भी कम होती है।

मात्रा—३००,००० से ६००,००० युनिट पेशीगत इंजेक्शन द्वारा।

६—हाइड्रेबेमीन पेनिसिलिन (Hydrabamine Penicillin).

पर्याय—कम्पोसिलिन Compocillin।

यह भी बेंजिल पेनिसिलिन का लवण है, जो सफेद गंधहीन चूर्ण के रूप में होता है। जल एवं अल्कोहल में प्रायः अविलेय होता है। मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आंतों से शोषित होता है, जिससे रक्त में लगभग ६ घंटे तक इसका कन्सन्ट्रेशन बना रहता है।

मात्रा—३००,००० से ६००,००० युनिट मुख द्वारा (Orally) प्रति ६ घंटे के बाद।

पेनिसिलिन के विभिन्न व्यावसायिक योगः—

(१) होचेस्ट (Hoechst) कम्पनी द्वारा निर्मितः—

(१) हास्टेसिलिन (प्रोकेन-नोवोकेन-पेनिसिलिन) Hostacillin Aqueous. (२) हास्टे-सिलिन-इन-ऑयल Hostacillin in oil (P.A.M. "Hoechst.)। (३) ओमनेसिलिन Omnaci-llin (Aqueous)—यह भी प्रोकेन पेनिसिलिन का योग है। (४) पेनिसिलिन जी सोडियम् Penicillin G. Sodium (५) ओमनेमाइसिन Omnamycin—यह स्ट्रेप्टोपेनिसिलिन का यौगिक है। इसमें ओमनेसिलिन तथा ०.२५ ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट एवं ०.२५ ग्राम डाइहाइड्रो-स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट होता है।

क्लोरोमाइसेटिन (Chloromycetin)

क्लोरेम्फेनिकॉल (Chloramphenicol), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत $C_{11} H_{12} O_5 N_2 Cl_2$

प्राप्ति-साधन—क्लोरेम्फेनिकॉल Chloramphenicol (Chloramphen.), रासायनिक दृष्टि से D-(—)-threo—2-dichloroacetamido—I—P—nitrophenyl— I : 3-Propanediol होता है। यह एक एन्टिबायोटिक यौगिक है, जो (१) नैसर्गिक रूप से स्ट्रेप्टोमाइसीज वेनेजुली (Streptomyces venezuelae) का संवर्धन करके अथवा (२) रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिमरूप से (Synthetically) प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—क्लोरोमाइसेटिन के सफेद या खाकस्तरी-सफेद (Greyish-white), या पीलापन लिए सफेद रंग के क्रिस्टल्स या सुइयाँ (Needles) या लम्बे-लम्बे पत्राकार टुकड़े (Elongated plates) होते हैं। स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—जल में तो यह बहुत कम (४०० भाग में १ भाग) घुलता है। किन्तु अल्कोहल (९५%), प्रोपिलीन ग्लाइकोल (Propylene glycol), एसिटोन, सॉलवेंट ईथर तथा एथिल एसिटेट में अच्छी तरह घुलता (Freely soluble) है।

मात्रा—(१) युवा के लिए (Adult dose)—२३ से ६० ग्रेन या १½ से ४ ग्राम प्रतिदिन—कई मात्राओं में विभाजित करके (in divided doses); (२) बालक के लिए—¾ ग्रेन या ५० मि० ग्रा० (प्रति किलोग्राम (kg.) शरीर-भार के हिसाब से) प्रतिदिन विभाजित मात्राओं में।

कैप्स्यूल्स ऑव क्लोरेम्फेनिकॉल Capsules of chloramphenicol, B. P.। क्लोरोमाइसेटिन के कैप्स्यूल्स—हिं०। क्लोरोमाइसेटिन के साथ दुग्धशर्करा

(लेक्टोज) मिलाकर (दुग्धशर्करा की अधिकतम मात्रा उसका १/२ हो सकती है) जिलेटिन की डिब्बियों में भरकर दी जाती हैं।

मात्रा—इसमें क्लोरेमाइसेटिन की मात्रा पूर्वोक्त होनी चाहिए। यदि मात्रा का निर्देश न किया गया हो तो ०.२५ ग्राम क्लोरेमाइसेटिन के केप्स्यूल्स देने चाहिए।

गुण-कर्म।

क्लोरेमाइसेटिन, एन्टिबायोटिक समुदाय की एक प्रसिद्ध औषधि है। विकारी दण्डाणुओं के अतिरिक्त यह कतिपय विषाणुओं (Viruses) तथा रिकेट्सिई (Rickettsiae) पर भी प्रभाव करती है। ग्राम-निगेटिव जीवाणुओं (Gram-negative organisms) पर यह पेनिसिलिन तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन दोनों की अपेक्षा अधिक सक्रिय होती है। लेकिन ग्राम-पाजिटिव जीवाणुओं पर ऑरियोमाइसिन इसकी अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होता है। इसी प्रकार ग्राम-पॉजिटिव दण्डाणु (Gram-positive bacteria) तथा पूयमेह या सूजाक के जीवाणु (Gonococcus) पर इसकी अपेक्षा पेनिसिलिन अधिक सक्रिय प्रभाव करता है। ऑरियोमाइसिन की भाँति मुख द्वारा सेवन किये जाने पर भी क्लोरोमाइसिटिन अपना प्रभाव करता है। **क्लोरेमाइसिटिन की क्रिया विशेषतः ग्राम-निगेटिव जीवाणुओं पर होती है, जिनमें निम्नलिखित विशेषतः उल्लेखनीय हैं :—**

(१) टायफायड का जीवाणु; (२) कुकुर-खांसी का जीवाणु (H. pertussis); (३) इन्फ्लुएन्जा का जीवाणु (H. influenza); (४) पीतगोलाणु (Staphylococcus aureus); (५) पूयजनक मालादण्डाणु (Streptococcus pyogenes); (६) कालरा या हैजा का वक्राणु (V. Cholerae); (७) एन्टमीबा कोलाइ (E. Coli) तथा (८) शिगेला (Shigella), ब्रुसिल्ला (Brucella) आदि। इन सभी जीवाणुओं की वृद्धि प्रति १०० सी० सी० रक्त में १० मि०-ग्रा० क्लोरोमाइसिटिन का संकेन्द्रण होने पर पूर्णतः रुक जाती है।

शोषण, शरीरगत परिवर्तन एवं उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली द्वारा क्लोरेमाइसिटिन का शोषण क्षिप्रतापूर्वक होता है और सेवन के आधा घंटा बाद ही रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण हो जाता है। सेवन के २ घंटे उपरान्त तो औषधि की अधिकतम मात्रा रक्त प्रवाह में पहुँच जाती है। दस घंटे के बाद रक्तगत मात्रा कम होने लगती है। शोषणोपरान्त क्लोरोमाइसिटिन का अधिकतम संकेन्द्रण यकृत एवं वृक्क में पाया जाता है। मस्तिष्कसुषुम्नाद्रव (Spinal fluid), पित्त तथा दुग्ध में रक्त की अपेक्षा आधी मात्रा में संकेन्द्रण होता है। गर्भवती स्त्रियों में क्लोरेमाइसिटिन अपरामार्ग से गर्भ के रक्तप्रवाह में भी पहुँच जाता है। शोषणोपरान्त रक्तप्रवाह में पहुँचने पर औषधि का आधे से भी अधिक भाग (६०%) रक्तरस-प्राटीन (plasma protein) के साथ संयुक्त हो जाता है और मूत्र के साथ उत्सर्गित होता है।

क्लोरेमाइसिटिनजन्य विषाक्तता (Toxicity)—उपयोगी होने के साथ-साथ क्लोरेमाइसिटिन एक विषैली औषधि भी है। इसका विषैला प्रभाव विशेषरूप से रक्तोत्पादक अंगों पर पड़ता है, जिससे रक्तसंस्थान सम्बन्धी अनेक घातक लक्षण प्रगट होते हैं। इसके विषैल प्रभाव के ही कारण श्वेतकायाणुओं के कणिककायाणुओं की संख्या में ह्रास (Granulocytopenia) तथा अप्लास्टिक

रक्ताल्पता (Aplastic anaemia) आदि घातक उपद्रव उठ खड़े होते हैं। इसके अतिरिक्त वमन, जी मिचलाना, त्वचा पर विस्फोट (Skin rash) तथा जिह्वा का लाल हो जाना (Glossitis) आदि लक्षण भी प्रगट होते हैं। अतएव लगातार बहुत दिनों तक तथा अधिक मात्राओं में इसका सेवन नहीं कराना चाहिए।

आमयिक प्रयोग।

(१) आंत्रिक एवं उपान्त्रिक ज्वर (Typhoid and Paratyphoid fevers)—क्लोरोमाइसिटिन का मुख्य उपयोग टायफायड (आंत्रिक ज्वर) एव पाराटायफायड (उपांत्रिक ज्वर) की चिकित्सा में किया जाता है। एतदर्थ इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। प्रायः रोग के प्रारम्भ (१० दिन के पहले ही) में इसका प्रयोग करने से विशेष लाभ होता है। प्रारम्भ में २५० मि० ग्रा० की ३-४ कैप्स्यूल प्रतिदिन देना चाहिए। इसके बाद इसी मात्रा में ६-६ घंटे पर औषधि दी जाती है। सामान्यतः ४-५ दिन औषधि सेवन करने के पश्चात् ज्वर गिर जाता है, किन्तु पुनरावृत्ति (Relapse) को रोकने के लिए, ज्वर उतरने के बाद भी ६-७ दिन तक औषधि का सेवन होना चाहिए। १० वर्ष से कम आयु के बालकों में मात्रा $\frac{1}{2}$ या $\frac{1}{3}$ होनी चाहिए।

अन्य उपयोग—टायफायड एवं पाराटायफायड के अतिरिक्त क्लोरोमाइसिटिन अन्य अनेक व्याधियों में काम करती है—(१) कुकुर-खांसी (Whooping cough)—बच्चों के कुकास में क्लोरोमायसिटीन पामिटेट का मुख द्वारा सेवन कराने से अद्भुद् लाभ होता है। यह दवा शर्बत के रूप की तथा स्वाद में रुचिकारक होती है। (२) विभिन्न प्रकार के रिकेटसिया उपसर्ग (Rickettsial diseases); (३) वंक्षणीय कणार्बुद (Granuloma inguinale), कन्क्रायड (Chancroid) अर्थात् जननेन्द्रियव्रण; (४) इन्फ्लुएन्जा एवं फ्रीडलेंडर के जीवाणु के उपसर्ग से होनेवाले न्युमोनिया, मस्तिष्कावरणशोथ (Influenzal meningitis); (५) शिगेला (Shigella) एवं साल्मोनेल्ला (Salmonella) दण्डाणुओं से उत्पन्न तीव्र आमाशयान्त्र प्रदाह (Acute gastro-enteritis); (६) मूत्रमार्ग में, ई० कोलाई ए० ईरोजन्स (A. aerogenes), पी० वल्गेरिस (P. vulgaris) एवं के० न्युमोनी (K. pneumoniae) आदि जीवाणुओं के तरुण (Acute) वा चिरकालज उपसर्ग में जब अन्य एन्टीबायोटिक औषधियाँ कार्य नहीं करतीं, तो क्लोरोमाइसिटीन के प्रयोग से बहुत लाभ होता है। इसके लिए प्रतिदिन २-३ ग्राम औषधि कई मात्राओं में विभक्त करके दी जाती है। इस प्रकार ३ दिन तक औषधि देने के बाद मात्रा कम कर दी जाती है और प्रतिदिन १ ग्राम औषधि कई मात्राओं में विभक्त करके ५-७ दिन तक और दी जाती है। (७) दोषमय एवं फौफ्फुसीय प्लेग (Pneumonic and Septicaemic plagues) में स्ट्रेप्टोमाइसिन के साथ सहायक औषधि के रूप में क्लोरोमाइसिटिन देने से विशेष लाभप्रद सिद्ध होता है। (८) इसके अतिरिक्त कतिपय विषाणुजन्य व्याधियों (Viral diseases) में भी उपयोगी है। यथा—सिट्टाकोसिस (Psittacosi's)—विषाणुजन्य न्युमोनिया, कक्षापरिसर्प (Herpes zoster) आदि।

सेवन-विधि—क्लोरोमाइसिटिन का प्रयोग प्रधानतः (१) मुखद्वारा (Orally) और आवश्यकता पड़नेपर (२) पेशीगतसूचिकाभारण (Intramuscular injection) द्वारा तथा (३) स्थानिक प्रयोग (Topical application) के रूप में किया जाता है। मुख द्वारा इसका सेवन कैप्स्यूल्स (५०, १०० एवं २५० मि० ग्रा० की) के रूप में किया जाता

है। दैनिक टोटल मात्रा का निर्धारण रोग की उग्रता के अनुसार किया जाता है। टायफायड में प्रारम्भ में ५० मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से तथा बाद में २५० मि० ग्रा० ६–६ घंटे के अन्तर से देना चाहिए। जब ज्वर उतर जाये तो मात्रा २५ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के अनुसार कर देनी चाहिए। साधारणतः पूरे कोर्स में १० से १५ मि० ग्रा० औषधि की आवश्यकता पड़ती है। टायफायड में यदि बेहोशी या अत्यन्त दौर्बल्य के कारण मुख द्वारा औषधि का प्रयोग सम्भव न हो तो इसका प्रयोग पेशीगतसूचिकाभरणद्वारा कर सकते हैं। स्थानिक प्रयोग के लिए प्रोपिलिन ग्लाइकोल (Propylene glycol) में बनाया हुआ १०% सॉल्यूशन भी उपलब्ध होता है।

ऑरियोमाइसिनी हाइड्रोक्लोराइम् (I. P., B. P.)

Aureomycini Hydrochloridum (Aureomyc. Hydrochlor.)—ले०।

(आरियोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड Aureomycin Hydrocloride)—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह स्ट्रेप्टोमाइसीज ऑरियोफेसिएन्स (Streptomyces aureofaciens) के संवर्धन से प्राप्त एन्टीमाइक्रोबिअल तत्वों के हाइड्रोक्लोराइड्स का मिश्रण होता है। अथवा अन्य साधनों से प्राप्त उक्त तत्वों का हाइड्रोक्लोराइड होता है। इसमें प्रति ग्राम (per g.) कम से कम ६००, ००० युनिट की शक्ति (I. P.) या प्रति मिलिग्राम (per mg.) ९०० युनिट की शक्ति (B. P.) होती है।

वर्णन—ऑरियोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड के पीले रंग के क्रिस्टल्स होते हैं, जो गंधरहित तथा स्वाद में तिक्त होते हैं। हवा में भी यह स्थायी (Stable) होता है। विलेयता—७५ भाग जल तथा ५६० भाग अल्कोहल् (९५%) में घुलता है।

मात्रा—(१) युवक के लिए—१५ से ३० ग्रेन या १ से २ ग्राम प्रतिदिन कई मात्राओं में विभाजित करके; बालक के लिए १० से २० मि० ग्रा० या $\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से। यह एक दिन की मात्रा है, जो कई मात्राओं में विभाजित करके (Divided doses) दी जाती है।

गुण-कर्म।

इस समुदाय की औषधियाँ अनेक ऐसे दण्डाणु (Bacilli), या कोकाइ (Cocci) तथा विषाणुओं पर कार्य करती हैं, जिन पर पेनिसिलिन, क्लोरोमाइसेटिन या स्ट्रेप्टोमाइसिन का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। इस वर्ग की औषधियाँ अपना जीवाणुस्तम्भक कर्म प्रायः जीवाणुओं के प्रोभुजिनसंश्लेषणक्रिया (Protein synthesis) या कोषाओं में जारण की समवर्तक्रिया (Cellular oxidative metabolism) में विकृति करने के कारण करती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि ऑरियोमाइसिन आदि एन्टीबायोटिक द्रव्य एसिटेट-समवर्त (Acetate metabolism) का निरोध (Inhibition) करते हैं।

शोषण, शरीरगत परिवर्तन तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा इनका शोषण काफी मात्रा में होता है और सेवन के २–४ घंटे बाद रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण (Concentration) हो जाता है। रक्तगत यह संकेन्द्रण प्रायः ६ घंटे तक ज्यों का त्यों बना रहता है। अतएव इन औषधियों का प्रयोग प्रति ६–६

घंटे के अन्तर से होना चाहिए, ताकि रक्त में इनकी बराबर उपस्थिति बनी रहे। ६-६ घंटे के अन्तर से २५० मि० ग्रा० की मात्रा देने से दूसरी मात्रा से सेवनोपरान्त रक्त में प्रति १०० मि०-लि० (सी० सी०) मात्रा में १ से ३ माइक्रोग्राम (mcgrm.) की मात्रा में कन्सन्ट्रेशन पाया जाता है। २५० मि० ग्रा० के बजाय मात्रा ५०० मि० ग्रा० कर देने से संकेन्द्रण भी १ से ३ माइक्रोग्राम के स्थान में ३ से ५ माइक्रोग्राम हो जाता है। भोजन, दूध और प्रायः अधिकांश अम्लविरोधी द्रव्यों (Antacids) की उपस्थिति में भी आँतों द्वारा औषधि के शोषण में कोई गड़बड़ी नहीं पड़ती। एल्युमिनियम् के लवणों (Aluminium salts) की उपस्थिति में शोषण अपेक्षाकृत अवश्य कम होता है। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा इन औषधियों का प्रयोग करने से शोषण समुचित ढंग से नहीं होता; किन्तु शिरागत इंजेक्शन से रक्तगत संकेन्द्रण काफी रहता है।

शोषणोपरान्त, यह औषधियाँ वृक्क, प्लीहा एवं फुफ्फुस आदि विभिन्न अंगों में काफी मात्रा में पायी जाती हैं। इनका उत्सर्ग प्रायः वृक्कों द्वारा किन्तु मन्द गति से होता है। अतः औषधि बन्द कर देने पर भी रक्त में इनकी उपस्थिति विलम्ब तक बनी रहती है। औषधि का जो अंश आँतों द्वारा शोषित नहीं होता, उसकी उपस्थिति आँतों में पायी जाती है।

विषाक्त प्रभाव (Toxic effects)—अन्य एन्टिबायोटिक औषधियों की अपेक्षा ऑरियोमाइसिन के सेवन से विषाक्त प्रभाव कम होते हैं। किन्तु कभी-कभी मुखपाक (*Stomatitis*) का उपद्रव होता है और जिह्वा काली पड़ जाती है; जैसा कि विटामिन 'बी' के अभाव के कारण भी हो जाता है। अतः ऐसी परिस्थिति में विटामिन 'बी' का सेवन कराना चाहिए। स्त्रियों में कभी-कभी योनिमार्ग की श्लैष्मिक कला में शोथ (Vulvitis and vaginitis) हो जाता है। ऐसी स्थिति में मुख द्वारा ओस्ट्रोजन्स का सेवन कराने से उपद्रवों की शान्ति होती है।

आमयिक प्रयोग।

स्थानिक प्रयोग—टेट्रासाइक्लिन का साल्यूशन या मलहम ($\frac{1}{2}$%) ग्राम-पाजिटिव एवं ग्राम-निगेटिव जीवाणुओं के उपसर्ग से होनेवाले अनेक नेत्र, कर्ण एवं त्वचा रोगों में स्थानिक क्रिया के लिए प्रचुरता से बरता जाता है और इससे बहुत सफलता भी मिलती है। नेत्र रोगों में नेत्राभिष्यंद, पक्ष्मकोप, कनीनिकाशोथ (Keratitis), सव्रण शुक्र (Corneal ulcer) एवं चिरकालज अश्रुप्रपापाक (Chronic dacryocystitis) आदि में तो केवल स्थानिक प्रयोग से ही अर्थात्, इसका सॉल्यूशन नेत्रबिंदु के रूप में आँख में डालने से तथा मलहम नेत्राञ्जन (Oculentum) के रूप में आँख में लगाने से ही लाभ हो जाता है। किन्तु आँख के अंदर के अंगों की विकृति में—यथा तारामण्डलशोथ (Iritis), सिलियरी बाडी (Ciliary body), कोरॉयड (Choroid) एवं नेत्रगोलक के नाड़ीपटल (Retina) आदि की विकृति—आँख में दवा डालने या लगाने के साथ-साथ इसका प्रयोग सार्वदैहिक प्रभाव के लिए भी होना चाहिए। आँख पर जब कोई आपरेशन करना होता है, तो २-३ दिन पहले से प्रतिदिन आँख में आरियोमाइसिन का मलहम लगाने से नेत्र विसंक्रमित (Free from pathogenic organisms) हो जाता है और आपरेशन के बाद पूयजनक उपसर्ग होने का डर नहीं रहता। इसके अतिरिक्त विषाणुजन्य नेत्र विकृतियों, यथा रोहा या कुथूणक (Trachoma) में भी यह बहुत सफल सिद्ध होता है। इसके लिए

स्थानिक क्रिया के लिए तो प्रतिदिन ३-४ बार मलहम लगाना चाहिए और साथ ही सार्वदैहिक प्रभाव के लिए प्रतिदिन आवश्यकतानुसार १ से २ ग्राम औषधिका सेवन भी होना चाहिए। पुराने रोहों की अपेक्षा उग्रस्वरूप के नये रोहों में अधिक लाभ होता है।

पुराने मध्यकर्णशोथ (Otitis media) में कान में इसका सॉल्यूशन कर्णबिन्दु (Ear drops) के रूप में डालने से व्याधि का शमन होता है। सॉल्यूशन परिस्रुतजल में (०·५ से १%) अथवा लवणजल (Normal Saline) में मिलाकर बनाया जाता है। इसी प्रकार पूयोत्पादक विकारी जीवाणुओं के उपसर्ग से होनेवाले नाना प्रकार के त्वचा-विकारों में भी इसका स्थानिक प्रयोग किया जाता है। इसके लिए ३% सोल्यूशन या मलहम प्रयुक्त किया जाता है। ट्राइकोमोनस वेजिनालिस के उपसर्ग से होनेवाले योनिप्रदाह (Vaginitis) में भी इसके स्थानिक प्रयोग से बहुत लाभ होता है।

आभ्यन्तर। आमाशयान्त्र प्रणाली--(१) अमीबिक प्रवाहिका—एन्टमीबा हिस्टोलिटिकाजन्य आन्त्रगत उपसर्ग (Intestinal amoebiasis) में टेट्रासाइक्लिन समुदाय की औषधियों का मुख द्वारा सेवन करने से अमीबा की कोष्ठावस्था (Cysts) एवं औद्भिद् अवस्था (Vegetative forms) दोनों का ही विनाश हो जाता है। इसके अतिरिक्त आन्त्रगत अन्य विकारी जीवाणुओं का भी नाश करते हैं, जिससे अतिरिक्त उपसर्ग (Secondary infection) का निवारण होता है। फलतः अमीबा के कारण आंत्र की श्लैष्मिक कला में उत्पन्न व्रणों (Amoebic ulcers) का रोहण होने में भी सहायता मिलती है। रोग की उग्रावस्था में प्रतिदिन १ से २ ग्राम औषधि, कई मात्राओं में विभक्त करके (in divided doses) मुख द्वारा दी जाती है। इस प्रकार ७-१० दिन तक औषधि देनी चाहिए। इसके बाद रोग दुहरावे नहीं, इसके निवारण के लिए, अमीबिक प्रवाहिका-नाशक आर्सनिक के यौगिक अथवा ऑक्सीक्विनोलीन समुदाय की औषधियाँ दी जा सकती हैं। यकृद्गत अमीबिक उपसर्ग में एन्टीबायोटिक औषधियाँ कार्य नहीं करतीं।

(२) शिगेला, सालमोनेला एवं ई० कोलाईजन्य बेसिलरी प्रवाहिका (Bacillary dysentery) एवं आमाशयान्त्र प्रदाह (Infective gastro-enteritis) में भी टेट्रासाइक्लीन्स का मुख द्वारा सेवन बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। एतदर्थ प्रतिदिन १ से २ ग्राम औषधि ४ या ६ मात्राओं में विभक्त करके ६-६ घंटे पर या ४-४ घंटे के अन्तर से दी जाती है। उक्त मात्रा युवा व्यक्ति के लिए है। बच्चों में मात्रा का निर्धारण २० से ४० मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर भार के अनुसार करना चाहिए।

(३) टेट्रासाइक्लिन्स का उपसर्ग पित्त के साथ काफी मात्रा में होता है, अतएव इस गुण का उपयोग पित्ताशय एवं पित्तनलिका की अनेक औपसर्गिक विकृतियों में किया जाता है। अतएव पित्तनलिकाशोथ (Cholangitis) एवं पित्ताशयप्रदाह (Cholecystitis) में (तरुण एवं चिरकालज दोनों ही अवस्थाओं में) प्रतिदिन १ से २ ग्राम औषधि कई मात्राओं में विभक्त करके मुख द्वारा अथवा इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त की जाती है। इस प्रकार १०-१२ दिन तक औषधि का सेवन होना चाहिए।

(४) तरुण उदर्याकला प्रदाह (Acute peritonitis)--विशेषतः आन्त्रपुच्छ शोथ (Apperdicitis) अथवा आमाशयिक व्रण का भेदन हो जाने पर (Perforated

peptic ulcer) विभिन्न जीवाणुओं के मिश्रित उपसर्ग के परिणामस्वरूप होनेवाले पेरिटोनाइटिज में टेट्रासाइक्लिन्स का प्रयोग विशिष्ट औषधि के रूप में सफल होता है। इसके लिए पहले तो औषधि (प्रतिदिन १–२ ग्राम कई मात्राओं में विभक्त करके) का प्रयोग **शिरागत इन्जेक्शन** द्वारा करना चाहिए और जब रोग कुछ कब्जे में आ जाय तो बाद में मुख द्वारा औषधि (प्रतिदिन २ ग्राम) देते रहें। इसके अतिरिक्त यदि आमाशयान्त्र या प्रजननावयवों पर बड़ा आपरेशन करना हो तो आपरेशन के ३ दिन पूर्व तथा बाद में ५–७ दिन तक टेट्रासाइक्लिन्स का प्रयोग करने से विकारी जीवाणुओं के उपसर्ग का उपद्रव नहीं होने पाता। इसके लिए प्रतिदिन ३–४ ग्राम तक मात्रा देनी पड़ती है।

(५) उपर्युक्त उपसर्गों के अतिरिक्त बेलेन्टीडियम् जीवाणुओं के उपसर्ग (Balantidiasis) तथा चूर्णकृमि (Oxyuris vermicularis) उपसर्ग में भी कभी-कभी यह उपयोगी सिद्ध होता है।

श्वसन-संस्थान के रोग कुकुरखांसी या कुकास (Whooping cough) में **टेट्रासाइक्लिन्स का प्रयोग बहुत सफल होता है।** एतदर्थ औषधि **मुख द्वारा** तथा ७–१० दिन तक दी जाती है। दैनिक मात्रा का निर्धारण २० से ४० मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के अनुसार करनी चाहिए। इसको कई मात्राओं में विभक्त करके देना चाहिए। बच्चों में प्रयोग की सुविधा की दृष्टि से बाजार में इसके अनेक स्वादिष्ट शर्बत की भांति बने-बनाये योग मिलते हैं। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में ही चिकित्सा प्रारम्भ कर देने से विशेष लाभ होता है। इसके अतिरिक्त श्वसन-संस्थान के अनेक अन्य उपसर्गजःरोगों में भी—यथा उग्रस्वरूप के **स्वरयंत्र एवं कण्ठनालीयुक्त श्वसनिका-प्रदाह** (Laryngo-tracheo bronchitis), ग्रसनिका-शोथ (Pharyngitis), नासाकोटर-शोथ (Sinusitis), मध्यकर्ण-शोथ, कर्णमूल-शोथ आदि—यह यौगिक बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। इन अवस्थाओं में ७–१० दिन का चिकित्सा-क्रम होता है, जिसमें प्रतिदिन १ से २ ग्राम औषधि ४–६ बराबर मात्राओं में विभक्त करके **मुख द्वारा** दी जाती है। श्वासनलिकाविस्फार (Bronchiectasis), फुफ्फुस-विद्रधि (Lung abscess) तथा पूयोरस (Empyema) आदि फुफ्फुस की **सपूय विकृतियों** (Suppurative lung-diseases) में भी टेट्रासाइक्लिन विशेषरूपेण लाभप्रद हैं। उपर्युक्त अवस्थाओंमें सामान्यकायिक सेवन (Systemic administration) के अतिरिक्त **इसका प्रयोग स्थानिक रूप से भी** होना चाहिए। इसके लिए ०.५% बल का सोल्यूशन एरोसल (aerosol) के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं।

तृणाणु-उपसर्गजन्य (Bacterial), विषाणुजन्य (Viral) अथवा रिकेटसिया उपसर्गजन्य (Rickettial) न्यूमोनिया में भी यह कार्य करते हैं। यद्यपि न्युमोनिक अवस्थाओं के लिए पेनिसिलिन ही सर्वोत्तम औषधि समझी जाती है, किन्तु जब पेनिसिलिन के प्रयोग से भी लाभ न हो रहा हो (Penicillin resistant) अथवा पेनिसिलिन से प्रभावित न होनेवाले जीवाणुओं के उपसर्ग से होनेवाली (Penicillin insensitive infections) न्युमोनिक अवस्था में टेट्रासाइक्लिन ही सर्वोत्तम सिद्ध होते हैं। सामान्यतः प्रतिदिन १ से २ ग्राम औषधि ४ मात्राओं में मुख द्वारा ७ दिन तक देनी पड़ती है। रोगी की स्थिति गम्भीर होने पर ½ ग्राम की २ मात्रा में प्रतिदिन शिरागत इंजेक्शन द्वारा दी जा सकती है।

मूत्र-प्रजनन संस्थान–मूत्रमार्ग के विभिन्न अंशों में उपसर्ग होने के कारण उत्पन्न प्रदाह में यदि सल्फोनामाइड्स तथा अन्य एन्टीबायोटिक के प्रयोग से लाभ न हो रहा हो तो टेट्रासाइक्लिन का चिकित्साक्रम कभी-कभी बहुत लाभ पहुँचाता है। अतएव गवीनीमुखयुक्त वृक्क-शोथ (Pyelonephritis), गवीनीमुख-शोथ (Pyelitis), वस्तिप्रदाह (Cystitis) मूत्रस्रोत-प्रदाह (Urethritis), अष्ठीलाग्रन्थि शोथ (Prostatitis) आदि व्याधियों में विशेषतः इनकी उग्रावस्था या तरुणावस्था (Acute) में टेट्रासाइक्लिन समुदाय की औषधियाँ व्यवहृत की जाती हैं। प्रतिदिन १ से २ ग्राम औषधि ४ बराबर मात्राओं में विभक्त कर ६–६ घंटे पर मुख द्वारा देनी चाहिए। यह क्रम ७–१० दिन तक चलाया जाता है। इसी प्रकार स्त्रियों के प्रजनन संस्थान के अनेक रोगों में भी यह प्रयुक्त किये जाते हैं। यथा बीजवाहिनीयुक्त डिम्बग्रंथिशोथ (Salpingo-oophoritis), प्रसवोत्तर दोषमयता (Puerperal sepsis), प्रसव के बाद होनेवाले गर्भाशयान्तः शोथ (Post partum endometritis) आदि।

कुप्रसंगज तथा जननेन्द्रिय सम्बन्धी अन्य उपसर्ग (Venereal infections)–यों तो पूयमेह या सूजाक (Gonorrhoea) के लिए नं० एक की औषधि तो पेनिसिलिन ही है। किन्तु पेनिसिलिनसह्य रोगियों (Penicillin resistant cases) में अर्थात् जिनमें पेनिसिलिन के प्रयोग से लाभ न हो रहा हो, तो उसमें इस समुदाय की औषधियाँ बहुत उपयोगी हैं। एतदर्थ प्रतिदिन २ ग्राम औषधि ६ मात्राओं में विभक्त करके ४–४ घंटे पर दी जाती है। इस प्रकार २ दिन तक औषधि लेने से व्याधि का नियंत्रण हो जाता है। **फिरंग** की प्रथम एवं द्वितीयावस्था (Primary and secondary syphilis) में टेट्रासाइक्लिन्स का प्रयोग सफल सिद्ध होता है। इसके लिए १० से १४ दिन का चिकित्साक्रम दिया जाता है। जिसमें प्रतिदिन २ से ६ ग्राम औषधि दी जाती है। इसके अतिरिक्त जननेन्द्रिय व्रण (Chancroid) में भी इन्हें प्रयुक्त करते हैं। डोनोवान बॉडी (Donovan body : klebsiella granulomatis) के उपसर्ग से होनेवाले **वंक्षणीय कणिकार्बुद** (Granuloma inguinale) में स्ट्रेप्टोमाइसिनसह्य रोगियों (streptomycin resistant cases) में ट्रेट्रासाइक्लिन्स से लाभ हो जाता है। इसके लिए २ ग्राम औषधि प्रतिदिन दी जाती है, और इस प्रकार १० से १५ दिन तक इसका सेवन करना पड़ता है। विषाणु उपसर्गजनित **वंक्षणीय लसकणिकार्बुद** (Lymphogranuloma venerum oringuinale or climatic bubo) के लिए तो ये विशिष्ट औषधि समझे जाते हैं। व्याधि की उग्रावस्था (Acute cases) में प्रतिदिन २ से ४ ग्राम औषधि मुख द्वारा दी जाती है और इस प्रकार ३–४ सप्ताह तक चिकित्सा चलानी पड़ती है। चिरकालीन अवस्था (Chronic cases) में औषधि १–२ मास तक लेनी पड़ती है। रोग यदि दुहरावे (Relapse) तो पुनः एक कोर्स दिया जाता है।

अन्य व्याधियाँ—उपर्युक्त विशिष्ट उपसर्गों के अतिरिक्त निम्न अवस्थाओं एवं विकृतियों में भी टेट्रासाइक्लिन्स के प्रयोग बहुत सफल सिद्ध होते हैं। विभिन्न प्रकार के रिकेटसिया-उपसर्ग (Rickettsial infection) में टेट्रासाइक्लिन विशिष्ट औषधि के रूप में व्यवहृत होते हैं। इसके लिए प्रथम १ ग्राम मात्रा से प्रारम्भ करते हैं। फिर १ दिन तक ३-३ घंटे पर ½ ग्राम की मात्रा देनी चाहिए। तत्पश्चात् २-३ दिन तक प्रतिदिन आवश्यकतानुसार १-२ ग्राम की दैनिक मात्रा कई मात्राओं में विभक्त करके

दी जाती है। उग्र अवस्था में ८-८ घंटे के अन्तर से ०.५ ग्राम औषधि शिरागत इंजेक्शन द्वारा देना चाहिए। ब्रुसेला मेलिटेंसिस के उपसर्ग (Brucellosis) में ½ ग्राम औषधि प्रति ६-६ घंटे पर मुख द्वारा देनी चाहिए। इस प्रकार २-३ सप्ताह तक औषधि का सेवन करना पड़ता है। उक्त व्याधि में अकेले टेट्रासाइक्लिन्स की अपेक्षा, स्ट्रेप्टोमाइसिन के साथ इनका व्यवहार अधिक सफल सिद्ध होता है। ट्युलेरीमिया (Tularaemia) में प्रतिदिन २ ग्राम की मात्रा ४ मात्राओं में विभक्त कर मुख द्वारा १-२ सप्ताह तक दी जाती है।

टेरामाइसिन यक्ष्मा के जीवाणुओं पर वृद्धिरोधक प्रभाव करता है, अतएव इसका उपयोग स्ट्रेप्टोमाइसिन अथवा आइसोनेजाइड के साथ सहायक औषधि के रूप में कर सकते हैं। इसके लिए प्रतिदिन २ से ५ ग्राम औषधि मुख द्वारा दी जाती है। हिमोलिटिकस एन्फ्लुएन्जी (H. influenzae) तथा मेनिंगोकाकाईजन्य अथवा न्युमोकोकस के उपसर्ग से होने वाले मस्तिष्कावरण प्रदाह (Meningitis) में यदि सल्फोनेमाइड्स एवं पेनिसिलिन के प्रयोग से जीवाणुओं पर कोई प्रभाव न पड़ रहा हो, तो टेट्रासाइक्लिन्स का प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है। इसके लिए प्रतिदिन २ से ४ ग्राम की मात्रा अथवा ५० से १०० मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से औषधि देनी पड़ती है। पूयजनक त्वचा विकृतियों (Pyogenic skin infections) में मुख द्वारा टेट्रासाइक्लिन्स का प्रयोग बहुत उपयोगी है। वातकर्दम (Gas gangrene), मधुमेहजन्य कर्दम (Diabetic gangrene), अधस्त्वक् शोथ (Cellulitis), मधुमेह पिड़िका (Carbuncle) एवं अस्थिमज्जाशोथ (Osteomyelitis) आदि व्याधियों में स्थानिक शस्त्रोपचार (Surgical treatment) के साथ-साथ टेट्रासाइक्लिन्स का मौखिक अथवा इंजेक्शन द्वारा प्रयोग करने से व्याधि के शमन में अद्भुत सहायता मिलती है। डिफ्थीरिया में पहले तो प्रतिविष सीरम का कोर्स देना चाहिए और बाद में टेट्रासाइक्लिन्स का सेवन करने से वाहक रोगियों के शरीर से जीवाणुओं के निर्हरण (Elimination) में बहुत सहायता मिलती है।

इसके अतिरिक्त छत्राणु-उपसर्ग (Actinomycosis), परंगी (yaws), आवर्तक ज्वर (Relapsing fever), मूषिकदंश ज्वर आदि रोगों में भी इनका प्रयोग बहुत उपयोगी है। इसके लिए प्रतिदिन २ ग्राम औषधि मुख द्वारा दी जाती है। इस प्रकार ५-७ दिन का चिकित्सा क्रम पर्याप्त होता है। कक्षा-परिसर्प (Herpes zoster), रोमान्तिका, चेचक आदि विषाणु जन्य व्याधियों (Virus diseases) में अन्य जीवाणुओं के उपसर्ग के उपद्रव का निवारण करने के लिए टेट्रासाइक्लिन्स उत्तम होते हैं।

व्यावसायिक योग :—

(१) ऑरियोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड (क्रिस्टलाइन) Aureomycin Hydrochloride (Crystalline)— [Lederle]

लीडरले कम्पनी द्वारा निर्मित निम्न व्यावसायिक योग बाजार में उपलब्ध होते हैं— (१) कैप्स्यूल्स (Capsules) (२५० मि० ग्रा०); (२) ट्रॉकीज (Troches)—१० मि० ग्राम की ट्राकी (मुख गुटिका) आती है। इसके अतिरिक्त स्थानिक प्रयोग के लिए ऑरियोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड (क्रिस्टलाइन) के (३) डेंटल पेस्ट (Dental paste) (प्रति ग्राम में १० मि० ग्रा० ऑरियोमाइसिन); (४) आयण्टमेंट या मलहम (प्रति ग्राम में ३० मि० ग्रा०); (५)

नेत्राञ्जन या आई आयन्टमेंट Eye ointment (प्रति ग्राम १० मि० ग्रा०); (६) कर्ण में प्रयोग करने के लिए Aureomycin Hydrochloride crystalline (Otic)—५० मि० ग्रा० सूखी दवा तथा इसके साथ घोलने का द्रव (Diluent) भी आता है; (७) स्पर्सायड्स् (Spersoids) तथा (८) योनिगत प्रयोग का चूर्ण (Vaginal powder) भी आता है ।

टेरामाइसिन डाइहाइड्रेट (B. P. Add.)

पर्याय--ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन डाइहाइड्रेट Oxytetracycline, Dihydrate B. P. Add. । पर्याय--टेरामाइसिन डाइहाइड्रेट Terramycin Dihydrate ।

प्राप्ति-साधन--यह स्ट्रेप्टोमाइसीज राइमोसस् Streptomyces Rimosus नामक सूक्ष्म जीवाणुओं के संवर्धन से प्राप्त होने वाला एक एन्टीमाइक्रोबिअल तत्व है । आजकल अन्य साधनों से भी प्राप्त किया जाता है ।

वर्णन--यह कषाय रंग लिए पीले रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् तिक्त होता है । विलेयता--जल में तो यह थोड़ा-थोड़ा ही घुलता है, किन्तु क्षारों (Alkalies) तथा डायल्यूट एसिड्स में तुरंत घुल जाता (Readily soluble) है ।

वक्तव्य--इसमें कम से कम ९६% ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन डाइहाइड्रेट होता है । और प्रतिमिलिग्राम (Per mg.) ८७० युनिट की शक्ति होती है ।

मात्रा--(१) युवा के लिए (Adult dose)--प्रतिदिन १ से ४ ग्राम (१५–६० ग्रेन) विभाजित करके कई मात्राओं में; (२) बालक के लिए--प्रतिदिन २० से ४० मि० ग्रा० प्रति० किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से, विभाजित मात्राओं में ।

टेरामाइसिन हाइड्रोक्लोराइड (B. P. Add.)
(Terramycin Hydrochloride)

पर्याय—ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड Oxytetracyclene Hydrochloride B. P. Add. ।

वर्णन—टेरामाइसिन हाइड्रोक्लोराइड पीले रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में हल्का तीता होता है । नमी में खुला रहने से आर्द्रता को सोखता (Hygroscopic) है । विलेयता—२ भाग जल एवं ४½ भाग अल्कोहल में घुलनशील होता है । इसका जलीय विलयन रखा रहने से कालान्तर में गंदला (Turbid) हो जाता है ।

वक्तव्य—इसमें कम से कम ९६% ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड होता है, और प्रति मिलिग्राम (per mg.) ८७० युनिट की शक्ति होती है ।

मात्रा—(१) शिरामार्ग द्वारा अन्तःक्षेपण (Intravenous infusion) करने के लिए अधिक से अधिक ०·१% (W/V) के संकेन्द्रण का विलयन प्रयुक्त करते हैं । युवा के लिए विलयनगत औषधि की दैनिक मात्रा १ से २ ग्राम ; बालक के लिए उक्त मात्रा १० से २० मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से ।

(२) पेशीगत सूचिकाभरण (Intramuscular injection) के लिए अधिक से अधिक ५% (W/V) बल का सॉल्यूशन प्रयुक्त होना चाहिए । युवा के लिए ०·२ से ०·४ ग्राम प्रतिदिन; बालक में यह मात्रा ५ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से होगी ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

टेरामाइसिन जीवाणुनाशक की अपेक्षा अधिक जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) प्रभाव करता है। इसका रासायनिक संघटन एवं स्वरूप बहुत-कुछ आरियोमाइसिन से मिलता-जुलता है, अतएव इसकी क्रिया-सरणी भी उसी से मिलती है। टेरामाइसिन से प्रभावित विकारी जीवाणु—ऑरियोमाइसिन की भांति यह भी ग्राम-निगेटिव तथा पॉजिटिव दोनों प्रकार के कोकाइ (Gram-negative and gram-positive cocci) एवं ग्राम-निगेटिव दण्डाणु (बेसिलाइ Bacilli) पर विशिष्ट प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त ब्रुसेला (Brucella), रिकेट्सीई (Rickettsiae), अनेक विषाणु (Viruses) यथा विशिष्ट प्रकार का न्यूमोनिया रोग (A typical pneumonia) लिंफोग्रेनुलोमा वेरेनम् एवं सिटाकोसिस (Psittacosis) के जीवाणुओं पर भी इसकी क्रिया होती है।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर भी यह काफी शोषित हो जाता है। मुख द्वारा २ ग्राम (३० ग्रेन) की दैनिक मात्रा (Daily dose) देने से रक्त में औषधीय प्रभाव के लिए पर्याप्त संकेन्द्रण हो जाता है। इसका शरीर से निरसरण प्रधानतः मूत्रमार्ग से होता है।

विषाक्त-प्रभाव—यह भी ऑरियोमाइसिन की भांति अपेक्षाकृत कम विषैली औषधि है। खाली पेट पर औषधि सेवन करने से उत्क्लेश (मिचली), वमन या पेट में दर्द (Colic) अथवा अतिसार (Diarrhoea) उत्पन्न हो जाता है। अतएव औषधि का प्रयोग हल्के आहार के साथ अथवा दूधके साथ करना चाहिए। कभी-कभी आरियोमाइसिन की भांति मुखपाक आदि उपद्रव भी हो जाते हैं।

सेवन-विधि—जिन-जिन अवस्थाओं में ऑरियोमाइसिन के प्रयोग का निर्देश है, उन सभी अवस्थाओं में टेरामाइसिन का प्रयोग किया जा सकता है। विशेषतः जब पेनिसिलिन, स्ट्रेप्टोमाइसिन या क्लोरेमाइसिटिन आदि एन्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग करने पर भी सफलता न मिलती हो, अथवा इनमें से किसी औषधि का अधिक काल तक सेवन करने से जीवाणु को औषधि सह्य हो गई हो और आगे लाभ न होता हो तो टेरामाइसिन का प्रयोग बहुत उपयुक्त होता है। ऑरियोमाइसिन की भांति निम्न जीवाणुओं के उपसर्ग में इसका प्रयोग बहुत पसन्द किया जाता है—ई० कोलाइ (E. coli), ए० ईरोजन्स (A. aerogenes), बैसिलरी अतिसार का जीवाणु (Shigella), ब्रुसेल का उपसर्ग (Brucellosis), के० न्युमोनिया (K. pneumoniae) इत्यादि।

टेरामाइसिन का सेवन प्रायः मुखद्वारा किया जाता है। एतदर्थ ६–६ घंटे के अन्तर से २५० मि० ग्राम० की मात्रा में औषधि केप्स्यूल्स में रख कर दी जाती है। इन केप्स्यूल्स को पानी से निगल लिया जाता है। औषधीय प्रभाव के लिए ४ ग्रा० की दैनिक मात्रा पर्याप्त होती है।

(योग)

१—टैबलेट्स ऑव ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन Tablets of Oxytetracycline, B. P. Add. टेरामाइसीन की टिकिया। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो ०·२५ ग्राम की टिकिया दी जाती है।

एक्रोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड (नॉट्-ऑफिशल)।

नाम—टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड (Tetracycline Hydrochloride)।

पर्याय—टेट्रासिन हाइड्रोक्लोराइड (Tetracyn Hydrochloride); एक्रोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड (Achromycin Hydrochloride)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से 4—Dimethylamino—1 : 4 : 4a : 5 : 5a : 6 : 11 : 12a - Octahydro—3 : 6 : 10 : 12 : 12a—Pentahydroxy-6 methyl—1 : 11—Dioxonaphthacene—2—Carboxyamide का हाइड्रोक्लोराइड (Hydrochloride) लवण होता है। यह (१) नैसर्गिकरूप से स्ट्रेप्टोमाइसीज की कतिपय प्रजातिओं के संवर्द्धन से (By the growth of certain Species of Streptomyces) अथवा (२) रासायनिक संश्लेषण पद्धतिद्वारा ऑरियोमाइसिन (Chlortetracycline) तथा टेरामाइसिन (Oxytetracycline) से हाइड्रोजन की उपस्थिति में कोयला (Charcoal) एवं पलेडियम् धातु (Palladium : Pd.) की सहायता से डिहलोजिनेशन (Dehalogenation) क्रिया द्वारा बनाया जाता है।

वक्तव्य—परमाण्विक संघटन (Molecular structure) की दृष्टि से ऑरियोमाइसिन, टेरामाइसिन एवं एक्रोमाइसिन तीनों एक-दूसरे से प्रायः बिल्कुल मिलते-जुलते हैं। केवल मात्र अन्तर यह होता है, कि ऑरियोमाइसिन में क्लोरीन का एक परमाणु अधिक होता है, और टेरामाइसिन में उसके स्थान पर OH समुदाय का परमाणु होता है, जब कि एक्रोमाइसिम में दोनों का अभाव होता है।

वर्णन—यह पीलेरंग का गंधहीन, स्वादमें किंचित् तिक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो पानी तथा अल्कोहल् में घुल जाता (Soluble) है। हवा में खुला रहने से तो इसमें कोई विकृति नहीं होती, किन्तु तीव्रबल क्षारीय एवं आम्लिक सॉल्यूशन (Below pH_2) में वियोजित होकर खराब हो जाता है।

मात्रा—युवा व्यक्ति के लिये (Adult Dose)—१ से २ ग्राम (१५ से ३० ग्रेन) की दैनिक मात्रा होती है, जो कई मात्राओं में विभक्त करके दी जाती है (२) बालकों के लिए १० से २० मि०ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से $\frac{1}{3}$ ग्रेन) प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के हिसाब से दैनिक मात्रा का निर्धारण करना चाहिए। इसे कई मात्राओं में विभक्त करके देना चाहिए।

प्रयोग—आरियोमाइसिन, टेरामाइसिन तथा टेट्रासायक्लीन (एक्रोमाइसिन) तीनों के ही साधारण गुण-कर्म एक से होते हैं। अपेक्षाकृत यह निम्न जीवाणुओं के उपसर्ग में प्रथम दो के बनिस्पत अधिक सक्रिय होता है—(१) बी० कोलाई (B. Coli), (२) शिगेला सोनियाइ (Shig. Sonnei) तथा प्रोटियस वल्गेरिस (Proteus vulgaris)। मूत्र में इसका संकेन्द्रण (कन्सन्ट्रेशन), टेरामाइसिन एवं ऑरियोमाइसिन की अपेक्षा बहुत अधिक होता है, अतएव मूत्रमार्ग के उपसर्ग में विशेषरूपेण उपयोगी (Resistance to Tetracycline) भी देर से उत्पन्न होती है।

सेवनविधि—प्रायः १ ग्राम की दैनिक मात्रा, ४ मात्राओं में विभक्त करके दी जाती है। इसका सेवन मुखद्वारा (Orally) पानी या दूध में मिलाकर किया जाता है। मौखिक सेवन के लिए २५० मि० ग्रा० के केपस्यूल्स आते हैं। शिरागत इन्जेक्शन के लिए १०० मि० ग्रा० की मात्रा आती है।

एन्टी-बायोटिक समुदाय की अन्य कतिपय (नॉन-ऑफिशल) औषधियाँ—
एरिथ्रोमाइसिन (Erythromycin)

पर्याय—इलोटाइसिन Ilotycin; एरिथ्रोसिन Erythrocin ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—यह स्ट्रेप्टोमाइसीज एरिथ्रियस (Streptomyces erythreus) के संवर्धन से प्राप्त किया जाता है। एरिथ्रोमाइसिन सफेद या हल्के पीले रंग के गंधहीन एवं स्वाद में तिक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में तो प्रायः बहुत कम घुलता है, किन्तु अल्कोहल् तथा ईथर में सुविलेय (Freely soluble) होता है। अम्लीय-विलयन (Acid solution) में तो इसकी क्रियाशीलता नष्ट हो जाती है, किन्तु क्षारीय विलयन में ज्यों कि त्यों बनी रहती है।

मात्रा—(१) युवा व्यक्ति के लिए (Adult dose) दैनिक मात्रा १ से २ ग्राम (१५ से ३० ग्रेन) होती है, जो कई मात्राओं में विभक्त करके (in divided doses) दी जाती हैं; (२) बालकों के लिए ३० से ६० मि० ग्रा० (½ से १ ग्रेन) प्रति किलोग्राम (Kg.) शरीर-भार के हिसाब से दैनिक मात्रा का निर्धारण किया जाता है, जो कई मात्राओं में विभक्त करके दी जाती हैं।

गुण-कर्म—साधारणतया इलोटाइसिन जीवाणु स्तम्भक (Bacteriostatic) प्रभाव करता है। किन्तु इससे प्रभावित (Sensitive) जीवाणुओं पर यह घातक (Bactericide) प्रभाव भी करता है। जिन गोलदण्डाणुओं (Staphylococci) की श्रेणियों (Strains) पर पेनिसिलिन का प्रभाव नहीं पड़ता (Resistant to penicillin) उनपर यह उत्तम जीवाणुनाशक प्रभाव करता है। दूसरे पेनिसिलिन से प्रभावित होने वाले जीवाणुओं के उपसर्ग में भी, जिन रोगियों को पेनिसिलिन सहा नहीं होती, और अनूर्जिक (Allergic) उपद्रवों की सम्भावना अधिक रहती है, उनमें भी एरिथ्रोमाइसिन एक उत्तम भूतघ्न औषधि (Antibiotic drug) होती है। चिकित्सा-व्यवहार की दृष्टि से यह इसकी विशेषता है। एरिथ्रोमाइसिन निम्न जीवाणुओं के उपसर्ग में उपयोगी हैं—माला दण्डाणु या स्ट्रेप्टोकोकाइ (Streptococci) गोल दण्डाणु या स्टेफिलोकोकाइ (Staphylococci); न्युमोकोकाइ; मेनिंगोकोकाइ, हेमोफिलस इन्फ्लुएन्जी (Hemophilus influenzae); रोहिणी या डिफ्थीरिया का जीवाणु (*Corynebacterium diphtheriae*) धनुर्वात या टिटेनस का जीवाणु (C. tetani); क्लास्ट्रिडियम् सेप्टिकम् (C. septicum); कुक्कुर खांसी का जीवाणु (H.pertussis) ब्रुसेला (Brucalla) तथा ट्रेपोनेमा की कुछ श्रेणियाँ। इनके अतिरिक्त मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आन्त्रगत ग्रामनिगेटिव जीवाणु भी इसकी स्थानिक क्रिया के परिणामस्वरूप नष्ट हो जाते हैं।

शोषण तथा निस्सरण—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आंतों से इसका शोषण अच्छी तरह हो जाता है। किन्तु आमाशय की अम्लता के कारण औषधि का कुछ भाग वियोजित होकर नष्ट हो जाता है। अतएव मौखिक सेवन के लिए प्रयुक्त इलोटायसिन टॅबलेट्स पर ऐसे द्रव्यों की कोटिंग या आवरण कर दिया जाता है जिन पर अम्लका तो प्रभाव नहीं पड़ता (Acid resistant) किन्तु क्षारीय प्रतिक्रिया से गल जावें। खाने के साथ या आंतों में आहार द्रव्य की उपस्थिति में औषधि का शोषण अपेक्षाकृत कम होता है। मुख द्वारा सेवन किये जाने के उपरान्त १–४ घंटे में रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण हो जाता है। किन्तु उत्सर्गित होने के कारण ४–६ घंटे में यह संकेन्द्रण कम हो जाता है। औषधि का निस्सरण सक्रिय रूप में ही प्रधानतः पित्त के साथ होता है। इस रूप में मूत्र के साथ केवल २०% औषधि ही उत्सर्गित होती है। मल के साथ इसका निस्सरण नाम-मात्र को होता है।

प्रयोग। स्थानिक--एरिथ्रोमाइसिन आयण्टमेंट का उपयोग ग्राम-पॉजिटिव कोकाई के उपसर्ग से होने वाले विभिन्न त्वचा रोगों में स्थानिक क्रिया के लिए किया जाता है। अतएव दूषित क्षत (Infected wounds), दग्धव्रण (Burns) एवं विचर्चिका तथा (Impetigo) आदि व्याधियों में यह बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। किन्तु इसका प्रयोग निश्चय बुद्धि से तथा आवश्यकता होने पर ही करना चाहिए, अन्यथा असह्यताजन्य नाना प्रकार के उपद्रव (Sensitisation Reactions) होने की वृथा आशंका रहती है।

आभ्यन्तर—चूँकि एरिथ्रोमाइसिन का प्रभाव भी प्रायः उन्हीं सब जीवाणुओं पर होता है, जिन पर पेनिसिलिन का होता है, अतएव साधारणतया प्रयोग की दृष्टि से पहला नम्बर तो पेनिसिलिन का ही है। हाँ यदि पेनिसिलिन के प्रति सह्यता उत्पन्न हो जाने के कारण जीवाणुओं पर कोई प्रभाव न हो रहा हो (Resistant to penicillin), तो इसका व्यवहार कर सकते हैं। स्ट्रेप्टोकोकाई-जन्य नासाकोटर-शोथ (Sinusitis), श्वसनिका-शोथ एवं स्टेफिलोकोकल दोषमयता (Staphylococcal Septicaemia) तथा न्युमोनिया, मेनिनजाइटिस एवं आन्त्रप्रदाह में स्टेफिलोकोकस का अतिरिक्त उपसर्ग होने पर इसका प्रयोग महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। न्युमोकोकाइजन्य न्युमोनिया में यह पेनिसिलिन की ही भांति प्रभावशाली है। डिफ्थीरिया में प्रतिविष सीरम देने के पश्चात् यदि कोई एन्टीबायोटिक देना हो तो इस कार्य के लिए यह सर्वोत्तम है। डिफ्थीरिया-वाहक रोगियों (Diphtheria carriers) में १०–१२ चिकित्सा क्रम देने से रोगी के शरीर से जीवाणुओं का पूर्णतः निर्हरण हो जाता है। एरिथ्रोमाइसिन से प्रभावित जीवाणुओं के उपसर्ग से होने वाली मूत्रमार्गीय विकृतियों में भी इसका प्रयोग बहुत उपयोगी है। उपर्युक्त व्याधियों एवं अवस्थाओं के अतिरिक्त एरिथ्रोमाइसिन, कुकुरखांसी, एक्टिनोमाइसीज उपसर्ग (Actinomycosis), विंसेंट का मुखपाक (Vincent's angina), आन्त्रगत अमीबिक उपसर्ग एवं वंक्षणीय लसकणार्बुद (Granuloma inguinale) आदि व्याधियों में भी उपयोगी सिद्ध होता है।

सेवन-विधि—एरिथ्रोमाइसिन का प्रयोग प्रायः मुख-मार्ग द्वारा किया जाता है। चूंकि आम्लिक प्रतिक्रिया में औषधि निष्क्रिय हो जाती है,अतएव मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशय में औषधि नष्ट न हो जाय इसके निवारण के लिए इसके टॅबलेट्स अम्लसाही द्रव्यों से आवरित कर दिये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इनमें ऐसे द्रव्य भी मिला दिये जाते हैं जिससे टिकिया केवल आंतों में पहुँचने पर गलती है (Enteric–coated acid–resistant tablets)। बालकों में मुख द्वारा सेवन के लिए इसके एथिलकार्बोनेट लवण (Erythromycin ethylcarbonate salt or buffered stearate salt) का निलम्बन (Suspension) प्रयुक्त किया जाता है। ६ से ८ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के अनुसार मात्रा दिन में ४ बार दी जाती है। शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त करने के लिए एरिथ्रोमाइसिन लेक्टोबायोनेट बहुत उपयुक्त है। मात्रा २ से ४ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीर-भार के अनुसार ली जाती है। किन्तु एक बार में ½ ग्राम से अधिक औषधि नहीं देनी चाहिए। इंजेक्शन प्रतिदिन २–३ बार दिया जा सकता है। शिरागत का सॉल्यूशन जल में या ५% ग्लूकोज सॉल्यूशन में बनाया जाता है। इसके लिए लवणजल (Normal Saline) नहीं प्रयुक्त करना चाहिए। प्रायः शिरागत इन्जेक्शन के लिए इसका १% का सोल्यूशन तथा पेशीगत इंजेक्शन के लिये ५% का सोल्यू-

शन अच्छा है। अथवा ½ ग्राम औषधि ५% ग्लूकोज सोल्यूशन की २५० सी० सी० मात्रा में मिला कर शिरामार्ग से बूँद बूँद करके (Intravenous drip) भी दी जा सकती है।

त्वचा पर लगाने के लिए १% वलका मलहम (१ ग्राम मलहम में १० मि० ग्रा० एरिथ्रोमाइसिन) प्रयुक्त कर सकते हैं।

अन्य एन्टीबायोटिक औषधियों के साथ देना हो, तो इसको केवल स्ट्रेप्टोमाइसिन के साथ प्रयुक्त कर सकते हैं। पेनिसिलिन तो इसका प्रतियोगी (Antagonistic) होता है, तथा क्लोरोमाइसिटिन एवं टेट्रासाइक्लिन के साथ देने से इसकी कोई क्रिया नहीं होती।

कारबोमाइसिन (Carbomycin)।
पर्याय—मेगनेमाइसिन (Magnamycin)।

वर्णन—कारबोमाइसिन नैसर्गिक रूप से स्ट्रेप्टोमाइसीज हेल्सटेडिवाइ की एक श्रेणी (a strain of Streptomyces helstedii) के संवर्धन (Culture) से प्राप्त किया जाता है। यह सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण (Crystalline monobasic powder) होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तीता होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः अल्प मात्रा में घुलता है, किन्तु क्लोरोफॉर्म में सुविलेय (Freely soluble) होता है।

मात्रा—(१) युवा के लिए— १ से २ ग्राम (१५ से ३० ग्रेन) प्रतिदिन मुखद्वारा। उक्त मात्रा को ४ मात्राओं में विभक्त करके ६-६ घंटे पर दिया जाता है। (२) ५० से १०० मि० ग्रा० (¾ से १½ ग्रेन) प्रति किलोग्राम शरीर-भार के अनुसार प्रतिदिन उक्त मात्रा को ४ बराबर मात्राओं में विभक्त कर ६-६ घंटे पर दिया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

इसके साधारण गुण-कर्म एरिथ्रोमाइसिन की ही भांति होते हैं, किन्तु उसकी अपेक्षा कारबोमाइसिन कम सक्रिय (less active) होता है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से शीघ्रतापूर्वक शोषित होता है, और एरिथ्रोमाइसिन की तरह आमाशय की अम्लता का इस पर कोई प्रभाव नहीं होता। शोषणोपरान्त, मस्तिष्क-सुषुम्नाद्रव या ब्रह्मवारि (C, S. fluid) को छोड़ कर प्रायः सभी शारीरिक द्रवों एवं धातुओं में इसका काफी संकेन्द्रण पाया जाता है। शरीर से इसका निस्सरण एरिथ्रोमाइसिन की भांति पित्त एवं मूत्र के साथ होता है।

स्टेफिलोकोकल उपसर्गों में जब अन्य एन्टिबायोटिक औषधियाँ, यथा पेनिसिलिन, टेट्रासाइक्लिन्स एवं एरिथ्रोमाइसिन आदि नहीं कार्य करतीं (resistant to other antibiotics), तो कार्बोमाइसिन बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ इसका प्रयोग मुख-द्वारा करने से भी काम चल जाता है। शिरागत इंजेक्शन देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। कार्बोमाइसिन से प्रभावित होनेवाले (Susceptib'e) न्युमोकोकाइ, स्ट्रेप्टोकोकाइ एवं स्टेफिलोकोकाइजन्य विभिन्न उपसर्गों, यथा न्युमोनिया, कण्ठशालूक (Tonsillitis), अधस्त्वक् शोथ (Cellulitis), विद्रधि (Abscess) एवं मूत्रमार्गीय उपसर्ग में भी इसका उपयोग सफल होता है। इसके अतिरिक्त यह अनेक ग्राम-पॉजिटिव बैक्टीरिया, एवं रिकेट्सिया उपसर्ग तथा विषाणुजन्य उपसर्गों में भी लाभकारी सिद्ध होता है।

नियोमाइसिन (Neomycin)

पर्याय--माइसिफ्रेडिन (Mycifradin)।

वर्णन—नियोमाइसिन भी एक भूतघ्न या एन्टीबायोटिक द्रव्य (Antibiotic) है, जो नैसर्गिक रूप से स्ट्रेप्टोमाइसीज फ्रेडिई (Streptomyces fradiae) के संवर्धन (Cultural filtrate) से प्राप्त किया जाता है। इस रूप से नियोमाइसिन को सर्वप्रथम सन् १९४९ ई० में वेक्समैन (Waksman) तथा लेशिवेलियर (Lechevalier) नामक वैज्ञानिकों ने पृथक् किया था। यह एक तापसाही यौगिक (Thermostable polybasic compound) होता है, जो जल में घुल जाता है। क्षारीय सॉल्यूशन में इसकी सक्रियता बराबर बनी रहती है।

नियोमाइसिन सल्फेट (Neomycin Sulphate)

यह नियोमाइसिन नामक एन्टीबायोटिक का सल्फेट लवण होता है, जो प्रायः सफेद या हल्के पीले रंग के, प्रायः गंधहीन तथा नमी को सोखनेवाले या उन्दचूष (Hygroscopic) क्रिस्टल्स के रूप में अथवा चूर्णरूप में होता है। यह जल में घुल जाता है। साधारण तापक्रम पर चूर्णरूप में २ वर्ष बना रहता है अर्थात् बिगड़ता नहीं।

मात्रा—(१) स्थानिक प्रयोग (Topical application) के लिए ½% का साल्यूशन या मलहम (आयण्टमेंट) प्रयुक्त होता है। (२) सार्वदैहिक प्रभाव के लिए मुखद्वारा (Orally) युवा व्यक्ति के लिए दैनिक मात्रा (Daily dose)—६ ग्राम (९० ग्रेन) ६ बराबर मात्राओं में विभक्त कर ४-४ घंटे पर दी जाती है। पेशीगत सूचिकाभरण के लिए (Intramuscularly) १० से १५ मि० ग्रा० (⅙ से ¼ ग्रेन) प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से दैनिक मात्रा निर्धारित की जाती है। इसको ४ मात्राओं में विभक्त करके देते है।

गुण-कर्म

मुखद्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से इसका शोषण अल्प मात्रा में होता है। प्राय: ९७% औषधि ज्यों की त्यों मल के साथ उत्सर्गित हो जाती है। शेष ३% औषधि का निस्सरण मूत्र के साथ होता है। पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा (Intramuscular injection) द्वारा प्रयुक्त होने पर क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता (Readily absorbed) है और रक्तगत संकेन्द्रण औषधीय मात्राओं में ६ से ८ घंटे तक बना रहता है। फुफ्फुसावरण के रसिकस्राव एवं मस्तिष्कसुषुम्नाद्रव (Pleural and cerebro-spinal fluid) में भी इसका संकेन्द्रण काफी मात्रा में पाया जाता है। औषधिका निस्सरण सक्रियरूप में क्षिप्रतापूर्वक वृक्कों द्वारा होता है। अन्तिम मात्राके बाद २४ घंटे में औषधि का निस्सरण हो जाता है।

नियोमाइसिन एक उत्तम जीवाणुनाशक (Bectericide) औषधि है। इसकी जीवाणुनाशक क्रिया ग्राम-पॉजिटिव एवं ग्राम-निगेटिव दोनों ही प्रकार के अनेक विकारी जीवाणुओं पर होती है। स्ट्रेप्टोकोकाइ की अपेक्षा स्टेफिलोकोकाई पर यह अधिक सक्रिय है। इसके अतिरिक्त प्रोटियस की कतिपय श्रेणियों (Strains of proteus) पर तथा स्युडोमोनस (Pseudomonas), साल्मोनेल्ला (Salmonella), इन्टरोकोकाई (Enterococci), ए० ईरोजन्स (A. aerogenes), के० न्युमोनिई (K. pneumoniae) और ई० कोलाई (E. Coli) पर भी यह घातक प्रभाव करता है। छत्राणुओं (Fungi) एवं विषाणुओं (Viruses) पर इसकी कोई क्रिया नहीं होती। इसके विषय में विशेष ज्ञातव्य यह भी

है, कि पूय (मवाद), वैकृतिकस्राव (Exudates), किण्व (एन्जाइम्स) तथा आमशयान्त्र रस (Gastro-intestinal Secretions) से इसकी क्रियाशीलता में कोई विकृति नहीं होती।

विषाक्तप्रभाव—मुखद्वारा सेवन किये जाने पर चूँकि आमशयान्त्र से इसका शोषण अत्यल्प मात्रा में होता है। अतएव इस मार्ग से औषधि सेवन किये जाने पर तो विषाक्तता की आशंका प्रायः नहीं होती। यों कभी-कभी पचन-संस्थान के कतिपय उपद्रव यथा क्षुधानाश (Anorexia), मिचली, वमन तथा अतिसार आदि लक्षित हो सकते हैं। किन्तु पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर कभी-कभी नाड़ीसंस्थान सम्बन्धी एवं वृक्क सम्बन्धी भयंकर उपद्रव (Neurotoxic and nephrotoxic) उठ खड़े होते हैं। वृक्क सम्बन्धी विकृतियों के परिणामस्वरूप मूत्र में अल्बुमिन एवं निर्मोक (Casts) पाये जाते हैं। मूत्र थोड़ा-थोड़ा (Oliguria) निकलता है और शरीरगत नाइट्रोजन-समवर्त विकृत हो जाता है। नाड़ीसंस्थान की विकृतियों में ८ वीं मूर्धजा (8th Cranial) नाड़ीकी विकृति के परिणामस्वरूप बधिरता (Deafness) हो सकती है। इसके अतिरिक्त हाथ-पैर में झुनझुनाहट, शिर में दर्द एवं चक्कर आना, स्थानिक वेदना एवं स्पर्शासह्यता (Tenderness) आदि उपद्रव लक्षित होते हैं। अतएव यथासम्भव इंजेक्शन द्वारा इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

आमयिक प्रयोग। स्थानिक—नियोमाइसिन के ०·५ प्रतिशत बल के (१ ग्राम तैयार औषधिमें ५ मि० ग्रा० नियोमाइसिन) सोल्यूशन तथा मलहम का उपयोग उपसर्गजन्य अनेक त्वचा-विकारों में किया जाता है। इस प्रकार दग्धव्रण में पूयोत्पादक जीवाणुओं का उपसर्ग होने पर (**Infected burns**) तथा इस प्रकार के उपसृष्ट सद्यः क्षत (**Wounds**) एवं व्रणों (**Ulcers**), विचर्चिका (**Eczema**), त्वचाशोथ (**Dermatitis**), (**Impetigo**) एवं पूयजनक फुन्सियों (**Furunculosis**) में भी इसके स्थानिक प्रयोग से बहुत लाभ होता है। एतदर्थ जल में बनाया हुआ सोल्यूशन (घोल) या मलहम दिन में १–२ बार लगाना चाहिए। इस प्रकार ५–७ दिन करने से व्याधि से मुक्ति मिल जाती है। इसके अतिरिक्त उक्त मलहम का उपयोग बाह्यकर्णशोथ (**Otitis externa**), नेत्राभिष्यन्द, पक्ष्मकोप (**Blepharitis**) एवं आँख की बिलनी (**Stye**) में भी कर सकते हैं।

चिरकालज श्वसनिकाशोथ (**Chronic Bronchitis**) तथा श्वासनलिका-विस्फार (**Bronchiectasis**) आदि श्वसन-मार्ग की व्याधियों में भी स्थानिक-क्रिया के लिए **नियोमाइसिन ईरोसल** (**Neomycin aerosol**) का व्यवहार किया जाता है। इसका चिकित्सा-क्रम ४ दिनों का होता है, जो ४-४ या ६-६ सप्ताह के अन्तर से दुहराया जाता है।

आभ्यन्तर—आमाशयान्त्रप्रणाली में निवास करनेवाले अनेक विकारी जीवाणुओं के नाश के लिए इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है विशेषतः आमाशयान्त्रप्रणालीगत आपरेशन में ऐसा करने से उपसर्ग का भय नहीं रहता। किन्तु अधिक दिनों तक इसका सेवन करने से, इससे प्रभावित होनेवाले आंत्रनिवासी विकारीजीवाणुओं का नाश तो अवश्य होता है, किन्तु कतिपय जीवाणुओं, यथा **मोनिलिया, ए० ईरोजन्स** एवं अविकारी किण्व (Non-pathogenic yeast) की अत्यधिक वृद्धि की सम्भावना रहती है, जो अभीष्ट नहीं होता। इसलिए, **मौखिक चिकित्साक्रम ३ दिन से अधिक नहीं चलाना चाहिए।** इसके लिए शुरू में १-१ घंटे के अन्तर से १ ग्राम औषधि मुखद्वारा दी जाती है। ऐसी ४ मात्रायें देने के बाद यह अन्तर

बढ़ाकर ४-४ घंटे पर दिया जाता है, और आवश्यकतानुसार चिकित्सा १-३ दिन तक चालू रखी जाती है। आमाशयान्त्रगत आपरेशन के बाद उपसर्ग को बचाने के लिए यदि अधिक मात्रा में इसके साल्यूशन का प्रयोग करना हो, तो लवण-जल में नियोमाइसिन सल्फेट का घोल (१%) बनाकर कथीटर द्वारा सीधे आंत में प्रविष्ट कर सकते हैं।

ई० कोलाइ तथा पी० मार्गनाइ (P. morganii) जीवाणुओं के उपसर्ग से होनेवाली प्रवाहिका (Diarrhoea) में भी इसका प्रयोग उपयोगी है। एतदर्थ युवा व्यक्ति के लिए ½ ग्राम (८ ग्रेन) की मात्रा दिन में तीनबार मुख द्वारा दी जाती है। कभी-कभी क्लोरोमाइसिटिन आदि टेट्रासाइक्लिन औषधियों के साथ इसका व्यवहार सहायक औषधि के रूप में किया जाता है।

वेसिट्रेसिन (Bacitracin)।

वेसिट्रेसिन एक एन्टिबायोटिक द्रव्य है, जो वेसिलस सबटिलिस (Bacillus subtilis) की एक श्रेणी (Strain) के संवर्धन से प्राप्त किया जाता है। यह सफेद रंग अथवा मटमैले (pale buff coloured) रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है अथवा एक हल्की-सी गंध पाई जाती है। नमी में खुला रहने से आर्द्रता को सोखने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) पाई जाती है। रासायनिक दृष्टि से यह एक प्रकार का पालिपेप्टाइड (Polypeptide) होता है। यह प्रायः १२ विभिन्न प्रकार के पालिपेप्टाइड्स का मिश्रण होता है, जिसमें वेसिट्रेसिन 'ए' (Bacitracin) औषधीय उपयोगिता की दृष्टि से सबसे अधिक सक्रिय और साथ ही सबसे कम विषैला होता है। इसके ठीक उलटा वेसिट्रेसिन 'एफ' (Bacitracin F) सबसे विषैला और औषधीय दृष्टिसे वेकार है। इसका सूखा चूर्ण साधारण तापक्रम पर टिकाऊ होता है और जल्दी नहीं बिगड़ता; किन्तु सॉल्यूशन में जल्दी विगड़ जाता है। विलेयता—जल में अच्छी तरह घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल में अपेक्षाकृत कम विलेय (Less soluble) होता है।

मात्रा—(१) स्थानिक प्रयोग के लिए (Topically)—१ ग्राम आयण्टमेंट में ५०० से १००० युनिट वेसिट्रेसिन; या १ मि० लि० (१ सी० सी०) सॉल्यूशन में ५०० से १००० युनिट बेसिट्रेसिन; (२) मुखद्वारा—प्रतिदिन ८०, ००० से १२०, ००० युनिट कई मात्राओं में विभक्त करके (in divided doses); (३) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा (Intramuscularly)—६-६ या ८-८ घंटे के अन्तर से १०, ००० से २०, ००० युनिट। बच्चों में २०० युनिट प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से।

गुणकर्म

इससे प्रभावित जीवाणुओंका समुदाय (In its antibiotic spectrum) बहुत-कुछ पेनिसिलिन की ही भाँति है। अतएव वेसिट्रेसिन ग्राम-पॉजिटिव जीवाणुओं एवं चक्राणुओं (Spirochetes) पर तीव्र घातक प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त गोनोकोकाइ, मेनिंगोकोकाइ एवं हिमोलिटिकस इन्फ्लुएन्जी H. influenzae) आदि ग्राम-निगेटिव समुदायके जीवाणुओं पर भी यह घातक प्रभाव करता है। पूय, रक्त एवं दूषित स्राव आदि पदार्थों की उपस्थिति से इसकी जीवाणुनाशक-क्रिया पर कोई असर नहीं पड़ता।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से इसका शोषण अत्यल्प मात्रा में होता है। अधिकांश औषधि अंत्र में वियोजित होकर मलके साथ उत्सर्गित हो जाता है। पेशीगत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर औषधिका शोषण अच्छा होता है और १-२ घंटे बाद

रक्त में अधिकतम संकेन्द्रण पाया जाता है। शोषण के उपरान्त शीघ्र ही औषधि का संकेन्द्रण फुफ्फुसावरण द्रव (Pleural fluid) एवं उदर्याकला द्रव (विशेषतः जलोदर-द्रव (Ascitic fluid) में काफी पाया जाता है। किन्तु स्वस्थावस्था में ब्रह्मवारि (C. S. fluid) में अल्प मात्रा में ही पहुँच पाती है। शरीरसे निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ किन्तु धीरे-धीरे होता है ।

विषाक्त प्रभाव—सामान्यकायिक प्रभाव के लिए प्रयुक्त होने पर बेसिट्रेसिन वृक्कों पर तीव्र विषाक्त प्रभाव (Nephrotoxic) करता है। यह इसमें दोष है, जिसके कारण सार्वदैहिक प्रभाव के लिए यह बहुत उपयोगी नहीं है। इंजेक्शन के स्थान पर कभी-कभी अधिक दर्द, गुल्थी बन जाना (Induration) तथा ददोड़े (Petechial rash) उत्पन्न होते हैं। कभी स्थानिक प्रयोग से भी अनूर्जा की प्रतिक्रिया (Allergic reaction) उत्पन्न होता है।

आमयिक प्रयोग

सार्वदैहिक क्रिया के लिए प्रयुक्त होने पर वृक्कों के लिए तीव्र विषैली (Nephro toxic) होने के कारण चिकित्सा-व्यवहार में इसका उपयोग प्रायः स्थानिक-प्रयोग के (Topical therapy) के लिए ही सीमिति रह गया है। ग्रामपॉजिटिव जीवाणुओं के उपसर्ग से होनेवाले नाना प्रकार के त्वचारोगों में यह बहुत उपयोगी औषधि समझी जाती है। एतदर्थ इसका प्रयोग सोल्यूशन या आयण्टमेंट (मलहम) के रूप में किया जाता है। सोल्यूशन बनाने के लिए १ मि० लि० या १ सी० सी० लवणजल (Normal Saline) में ५०० से १००० युनिट दवा मिलाई जाती है। मलहम बनाने के लिए भी यही मात्रा १ ग्राम मलहम के लिए प्रयुक्त होती है। बेसिट्रेसिन से प्रभावित होनेवाले जीवाणुओं के उपसर्ग से होने वाले विभिन्न नेत्रव्याधियों—यथा नेत्राभिष्यन्द, नेत्र श्लैष्मिक कलाशोथ (Keratitis), मण्डलशुक्र (Corneal ulcer), अश्रुप्रपापाक (Dacrocystitis) आदि में १सी० सी० में १००० युनिट बेसिट्रेसिन का जलीय विलयन स्थानिक प्रयोग से बहुत लाभप्रद है। इसी प्रकार नाक, कान, मुख, गला आदि के विभिन्न उपसर्गों में भी इसका स्थानिक प्रयोग (Topical application) किया जा सकता है। दूषित विद्रधि एवं मधुमेहपिड़िका (Carbuncle) में उक्त बल के जलीय विलयन (Aqueous solution) में २% प्रोकेन साल्यूशन मिलाकर विकृत क्षेत्र में आभरण (Infiltration) करने से बहुत उपकार होता है। मस्तिष्कान्तर्गत विद्रधि एवं औपसर्गिक (दूषित) मस्तिष्कावरणशोथ (Septic meningitis) में स्थानिक क्रिया के लिए बेसिट्रेसिन सॉल्यूशन सुषुम्नान्तर्गत मार्ग द्वारा अथवा मस्तिष्कगुहान्तर्गत (Intrave-ntriculas) मार्ग द्वारा प्रयुक्त करने से बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। इसके लिए प्रतिदिन १० सी० सी० तक सॉल्यूशन व्यवहृत किया जाता है। नासाकोटर एवं श्वासपथ की (Sino-respiratory) विभिन्न विकृतियों में बेसिट्रिसिन ईरोसल (Bacitricin aerosol) का व्यवहार स्थानिक क्रिया के लिए किया जा सकता है। इसके लिए १ सी० सी० में २५.० युनिट के बल का सॉल्यूशन व्यवहृत करते हैं।

मुख द्वारा—इसका सेवन आंत्रगत अमीबिक उपसर्ग एवं बेसिलरी प्रवाहिका में भी किया जाता है। इसके लिए ८०, ००० से १२०, ००० युनिट की दैनिक मात्रा को ४ मात्राओं में विभक्त कर ६-६ घंटे पर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त बच्चों के अतिसार (Infantile diarrhoea) में भी इसका प्रयोग कर सकते हैं।

पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा इसका प्रयोग सार्वदैहिक प्रभाव के लिए इससे प्रभावित जीवाणुओं के उपसर्ग, यथा अधस्त्वक्शोथ (Cellulitis) । न्यूमोनिया, दोषमयता (सेप्टीसिमिया Septicaemia), तरुण एवं चिरकालज अस्थिमज्जा शोथ (Acute and Chronic osteomyelitis), मेनिंजाइटिस तथा मस्तिष्कावद्रधि आदि—में कर सकते हैं । १०, ००० से २०, ००० युनिट दवा १ से २ सी० सी० प्रोकेन सॉल्यूशन (२%) में मिलाकर ८–८ घंटे पर देना चाहिए । औषधि अत्यन्त विषैली होने के कारण दैनिक अधिकतम मात्रा १००, ००० युनिट से अधिक कदापि नहीं होनी चाहिए । साथ ही रोगी को काफी पानी पिलाना चाहिए और मूत्र का परीक्षण करते रहना चाहिए । वृक्कगत विकृति का संकेत होते ही औषधि बन्द कर देनी चाहिए ।

टाइरोथ्राइसिन (Tyrothricin)

पर्याय–सोल्यूथ्राइसिन (Soluthricin) ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—टाइरोथ्राइसिन सफेद या मटमैले (Buff coloured) रंग का चूर्ण होता है, जो जल में तो अविलेय (Insoluble), किन्तु अल्कोहल् तथा एसिटोन में घुलनशील (Soluble) होता है । रासायनिक दृष्टि से यह पालिपेप्टाइड्स् (Polypeptides) का मिश्रण होता है । नैसर्गिक रूपसे यह बेसिलस ब्रविस (B. Brevis) से प्राप्त किया जाता है । औषधीय गुण-कर्म की दृष्टि से इसमें पाये जानेवाले दो पालिपेप्टाइड्स् विशेष महत्व के हैं—(१) ग्रेमिसिडिन (Gramicidin २०%) तथा (२) टायरोसिडिन (Tyrocidin—80%) । इसमें सबसे अधिक सक्रिय ग्रेमिसिडिन होता है, जो ग्राम-पाजिटिह्व बैक्टीरिया पर घातक प्रभाव करता है । टायरोसिडिन की क्रिया केवल कतिपय ग्राम-निगेटिह्व जीवाणुओं पर ही होती है ।

गुण-कर्म

ग्रेमिसिडिन ग्राम-पॉजिटिह्व बैक्टीरिया पर प्रधानतः जीवाणुस्तम्भक प्रभाव करता है । टायरोसिडिन अपने से प्रभावित होनेवाले ग्राम-निगेटिह्व बैक्टीरिया पर घातक (Bactericide) प्रभाव करता है । इस प्रकार स्थानिक प्रयोग से यह जीवाणुनाशक द्रव्यों (Disinfectants) की भाँति कार्य करता है । मुख द्वारा प्रयोग करने से प्रायः यह निष्क्रिय-सा ही होता है और इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर तीव्र विषाक्त प्रभाव करता है । अतएव औषधि का उपयोग प्रायः स्थानिक प्रयोग (Topical application) के ही लिए किया जाता है ।

विषाक्त-प्रभाव—टायरोथ्राइसिन में पाया जानेवाला टायरोसिडिन घटक बहुत विषैला होता है । रक्त के सम्पर्क में आने पर रक्तकणों को गलाता (Haemolytic) है । अतएव (शिरागत) इंजेक्शन के लिए अनुपयुक्त तो है ही, किन्तु स्थानिक प्रयोग से भी विशेषतः ताजे घाव पर लगाने से और भी रक्तस्राव हो सकता है । नासिका द्वारा टाइरोथ्राइसिन सॉल्यूशन का प्रयोग करने से गंधनाश (Anosmia) एवं गंधविपर्यय (Parosmia) की विकृति हो सकती है ।

आमयिक प्रयोग—टायरोथ्राइसिन का स्थानिक प्रयोग त्वचा, श्लैष्मिककला एवं शारीरिक गुहाओं में विकारी जीवाणुओं के उपसर्ग में किया जाता है । इस प्रकार यह दूषित क्षत (Infected wounds), व्रण (Ulcer), दग्धव्रण (Burn), विचर्चिका (Eczema), नेत्र की श्लैष्मिक-कला एवं स्वच्छमण्डलशोथ (Kerato-conjunctivitis) तथा सव्रणशुक्र (Corneal ulcer) एवं बहुपिडिकोद्भव (Furunculosis) आदि में उपयोगी

होता है। भगन्दर (Fistula) एवं नाड़ीव्रणों (Sinuses) के धावन के लिए भी इसका व्यवहार किया जा सकता है। किन्तु रक्त से इसका साक्षात् सम्पर्क नहीं होना चाहिए।

सेवनविधि—टायरोथ्राइसिन को निम्न विभिन्न रूपों में प्रयुक्त कर सकते हैं :—(१) जलीय विलयन (Aqueous Solution)—एतदर्थ १ मि० लि० या सी० सी० (१५ बूँद) परिस्रुत जल में ०'५ मि० ग्रा० औषधि मिलाकर प्रयुक्त कर सकते हैं; (२) चूर्ण (Dry Powder)—१०० ग्राम बोरिक एसिड में ५०० मि० ग्रा० टायरोथ्राइसिन मिलाकर प्रधमन (Insufflation) के रूपमें व्यवहृत कर सकते हैं; (३) मरहम या आयण्टमेंट (Ointment) १ ग्राम मलहम में ०'५ मि० ग्रा० टायरोथ्राइसिन; (४) मुखगुटिका (Troche) के रूप में कण्ठरोगों के लिए उपयुक्त है।

पॉलिमाइक्सिन (Polymyxin)।

पॉलिमाइक्सिन सामान्यरूप से उन सभी एन्टीबायोटिक द्रव्यों के लिए प्रयुक्त होता है, जो बेसिलस पॉलिमाइक्सा (Bacillus polymyxa) की विभिन्न श्रेणियों (स्ट्रेन्स Strains) से प्राप्त किए गए हैं। अब तक ५ पॉलिमाइक्सिन पृथक किए गए हैं, जिनको पालिमाइक्सिन 'अ', 'ब', 'स', 'द', 'य', (या Polymyxin A, B., C. D. E) कहते हैं। चिकित्साव्यवहार की दृष्टि से पॉलिमाइक्सिन 'बी' एवं पॉलिमाइक्सिन 'ई' विशेष महत्त्व के हैं। रासायनिक दृष्टि से सभी पालिमाइक्सिन मूलतः पॉलिपेप्टाइड (Basic polypeptides) हैं। प्रत्येक से संगठन में L—threonine तथा Xy—diaminobutyric acid होता है।

पॉलिमाइक्सिन 'बी सल्फेट Polymyxin B. Sulphate.

पर्याय—एरोस्पोरिन सल्फेट (Aerosporin sulphate)।

वर्णन—यह सफेद रंग के या मलाई के रंग के अनियमित रूपरेखा के पपड़ीदार पदार्थ (Irregular scalelike material) के रूप में होता है, जो जल में घुलनशील होता है।

मात्रा—(१) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा–१½ से २½ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के हिसाब से दैनिक मात्रा होती है, जो ३ मात्राओं में विभक्त करके दी जाती है। (२) मुखद्वारा—७५ से १०० मि० ग्रा० (१¼ से १½ ग्रेन) प्रतिदिन ४ बार दी जाती है।

गुण कर्म

यह ग्राम-निगेटिव बैक्टीरिया पर तीव्र घातक प्रभाव (Bactericidal) करता है। विशेषतः निम्न जीवाणु इससे प्रभावित होते हैं—ए० एरोजन्स (A. aerogenes), ई० कोलाइ, हिमोलिटिकस एन्फ्लुएन्जी, के० न्युमोनिई, एरोजिनोसा (Ps. aeruginosa), शिगेला आदि। रक्त, पूय तथा सीरम आदि की उपस्थिति में भी यह अपनी जीवाणुनाशक क्रिया पूरी सक्रियता के साथ करता है।

शोषण तथा निस्सरण—मुखद्वारा सेवन किए जाने पर आंतों से औषधि का शोषण यदि मन्द गति से तथा अल्पमात्रा में होता है। इस प्रकार यह आंतों पर अपनी स्थानिक क्रिया द्वारा अनेक विकारी जीवाणुओं का नाश करता है। सार्वदैहिक प्रभाव के लिए इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है। इस प्रकार प्रयुक्त होने पर जल्दी शोषित होता है तथा प्रयोग के ½ से २ घंटे बाद रक्त में इसका काफी संकेन्द्रण पाया जाता है। शरीर से औषधिका निस्सरण मुख्यतः वृक्कों द्वारा (६० %) होता है। शोषणोपरान्त मस्तिष्कसुषुम्ना-द्रव (C. S. fluid) में इसका संकेन्द्रण प्रायः बहुत कम मात्रा में पाया जा जाता है।

विषाक्त प्रभाव—कभी-कभी नाड़ीसम्बन्धी (Neurotoxic) तथा वृक्कसम्बन्धी (Nephrotoxic) होते हैं।

प्रयोग—०·१से ०·२५% बल का साल्यूशन या मलहम का प्रयोग **स्थानिक क्रिया** के लिए अनेक त्वचाविकृतियों में किया जाता है। एरोजिनोसा (**Ps. aeruginosa**) के उपसर्ग से उत्पन्न आँख की विकृति में ०·२% बल का मलहम उपयोगी है।

आंत्रप्रणाली में शिगेला एवं पायोसायनियस (Pyocyaneus) आदि इससे प्रभावित होनेवाले **जीवाणुओं के उपसर्ग** में औषधि का सेवन **मुखद्वारा** किया जाता है। एतदर्थ युवा एवं बड़े बच्चों में आवश्यकतानुसार प्रतिदिन ७५ से १०० मि० ग्रा० औषधि ६–६ घंटे पर करके ४ बार दी जाती है। छोटे बच्चों में २५ से ५० मि० ग्रा० औषधि प्रतिदिन ३ बार देने से काम चल जाता है।

इससे प्रभावित जीवाणुओं के कारण हुए **मूत्रमार्गगत उपसर्ग** में इसका पेशीगत इंजेक्शन करते हैं। एतदर्थ प्रतिदिन १½ से २½ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम भार के अनुसार जो मात्रा अपेक्षित हो, उसे ३–४ मात्राओं में विभक्त करके प्रयुक्त करना चाहिए। औषधि १% बल के प्रोकेन हाइड्रोक्लोराइड सॉल्यूशन में मिलाकर दी जाती है। ४० मि० ग्रा० को घोलने के लिए ½ सी० सी० प्रोकेन सोल्यूशन पर्याप्त है।

मस्तिष्कावरणप्रदाह (Meningitis) में पेशीगत इंजेक्शन के साथ-साथ औषधि का प्रयोग **सुषुम्नागत मार्ग द्वारा (Intrathecally)** भी दिया जाता है। एतदर्थ युवा के लिए ५ मि० ग्रा० की दैनिक मात्रा तथा बच्चों के लिए २ मि० ग्रा० की दैनिक मात्रा पर्याप्त है।

निस्टेटिन (Nystatin) पर्याय—माइकोस्टेटिन (Mycostatin)। यह भी एक भूतघ्न (एन्टीबायोटिक) द्रव्य है, जो स्ट्रेप्टोमाइसीज नूरसियाइ (Streptomyces noursei) से प्राप्त किया जाता है। हल्के पीले रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है।

मात्रा—५०० ००० युनिट प्रतिदिन ३-४ बार मुखद्वारा।

गुणकर्म तथा प्रयोग

इसकी विशिष्ट क्रिया केण्डिडा एल्बिकेन्स (Candida albicans) नामक छत्राणु (Fungus) पर होती है। अतएव इस एन्टिबायोटिक का चिकित्सोपयोग आन्त्र में स्वतंत्ररूप से उक्त छत्राणु का उपसर्ग होने पर अथवा टेट्रासाइक्लिन समुदाय की औषधियों के साथ उक्त छत्राणु के सहगामी उपसर्ग के निवारण के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त स्थानिक क्रिया के लिए इसका प्रयोग योनिगत छत्राणु-उपसर्ग (Monilial infection of the vagina) में किया जाता है। एतदर्थ इसका प्रयोग मलहम (आयण्टमेंट) के रूप में किया जाता है, अथवा इसकी स्वयं घुलनेवाली टिकिया (Soluble Tablets) योनि में रख ली जाती है। यह टिकिया स्वयं धीरे-धीरे गलती रहती है। यह क्रिया दिन में दो बार (सुबह-शाम) की जाती है।

प्रकरण ३

(अम्ल-साही जीवाणुओं (Acid-fast organisms) पर कार्यकर औषधियाँ)

यक्ष्मा-नाशक औषधियाँ (Antituberculosis Remedies)

स्ट्रेप्टोमाइसिनी हाइड्रो क्लोराइडम् (I. P., B. P.) ।

रासायनिक संकेत : $C_{21}H_{39}O_{12}N_7$ ३HCl.

नाम—स्ट्रेप्टोमाइसिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Streptomycini Hydrochloridum (Streptomyc. Hydrochlor.)—लै०; स्ट्रेप्टोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड Streptomycin Hydrochloride—अं० ।

प्राप्ति-साधन—यह स्ट्रेप्टोमाइसीज ग्रिसियस Streptomyces griseus द्वारा उत्पादित एन्टीमाइक्रोबिअल तत्व का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है। अब इसी से मिलते-जुलते अन्य तत्वों द्वारा (चाहे वह अन्य जीवाणुओं द्वारा अथवा अन्य साधनों द्वारा उत्पादित हों) भी बनाया जाता है।

वर्णन—यह श्वेत चूर्ण या घन (White Solid) के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन (या कभी-कभी एक हल्की-सी गंध आती है) तथा स्वाद में किंचित् तीता होता है।

विलेयता—जलमें यह खूब घुलता (Very soluble) है; किन्तु अलकोहल् (९५%), सॉलवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है। प्रति मिलिग्राम (Per mg.) कम से कम ६०० युनिट की शक्ति होती है।

मात्रा—इसका प्रयोग इंजेक्शन द्वारा किया जाता है। दैनिक मात्रा १ ग्राम (1 Grm. of streptomycin base) ।

वक्तव्य—जब केवल स्ट्रेप्टोमाइसिनम् या स्ट्रेप्टोमाइसिन लिखा हो तो स्ट्रेप्टोमाइसिन केल्शियम् क्लोराइड देना चाहिए (I. P.) ।

स्ट्रेप्टोमाइसिनी सल्फास (I. P., B. P.) ।

रासायनिक संकेत ($C_{21}H_{39}O_{12}N_7$)२, ३H_2SO_4

नाम—स्ट्रेप्टोमाइसिनी सल्फास Streptomycini Sulphas (Streptomyc. Sulph.)—लै०; स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट (Streptomycin Sulphate)—अं० ।

वर्णन—यह पूर्वोक्त साधनों द्वारा प्राप्त एन्टीमाइक्रोबिअल तत्वों का सल्फेट लवण होता है। स्वरूप पूर्ववत् । विलेयता पूर्ववत् ।

मात्रा—पूर्ववत् ।

स्ट्रेप्टोमाइसिनी एट केल्सियाईक्लोराइडम् (I. P., B. P.) ।

रासायनिक संकेत ($C_{21}H_{39}O_{12}N_7$ ३HCl.)२, $CaCl_2$.

नाम—स्ट्रेप्टोमाइसिनी एट केल्सियाई क्लोराइडम् Streptomycini et Calcii Chloridum (Streptomyc. et Cal. Chlorid.)—लै०; स्ट्रेप्टोमाइसिन केल्सियम् क्लोराइड (Streptomycin Calcium Chloride)—अं० ।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—पूर्ववत्। यह नमी को सोखता (Hygroscopic) है।

मात्रा— पूर्ववत्।

वक्तव्य—(१) जब केवल स्ट्रेप्टोमाइसिन लिखा हो, तो स्ट्रेप्टोमाइसिन- केल्सियम् क्लोराइड देना चाहिए।

(२) शीशी पर लिखी हुई सक्रिय-अवधि को बतानेवाली तिथि (The date of expiration) के बाद औषधि प्रयोग के योग्य नहीं रहती।

डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिनम् (I. P., B. P.)।

रासायनिक संकेत : $C_{२१}H_{४१}O_{१२}N_{७}$, ३Hcl (क्लोराईड);

$(C_{२१}H_{४१}O_{१२}N_{७})_{२}$, $३H_{२}So_{४}$. (सल्फेट)।

नाम—डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिनम् Dihydrostreptomycinum (Dihydrostreptomyc.)—ले०; डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिन (Dihydrostreptomycin)—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह स्ट्रेप्टोमाइसिन के हाइड्रोजिनेशन (Hydrogenation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसके २ प्रकार के लवण प्राप्त किए जाते हैं—(१) हाइड्रोक्लोराइड (Dihydrostreptomycin Hydrochloride) तथा (२) सल्फेट (Dihydrostreptomycin sulphate)।

वर्णन—स्वरूप, विलेयता एवं मात्रादि पूर्ववत्।

गुण-कर्म।

जिन जीवाणुओं में स्ट्रेप्टोमाइसिन के प्रति असह्यता होती है, साधारण मात्राओं में स्ट्रेप्टोमाइसिन उनकी वृद्धि को रोकता (Bacteriostatic) है और अधिक संकेन्द्रण (कन्सन्ट्रेशन) में उनपर घातक प्रभाव (Bactericide) भी करता है। रासायनिक दृष्टि से स्ट्रेप्टोमाइसिन एक कार्बोहाइड्रेट व्युत्पन्न यौगिक (Carbohydrate derivative) होता है, जो अम्लीय-जलांशन (Acid hydrolysis) पर स्ट्रेप्टिडिन (Streptidine) एवं स्ट्रेप्टोबायोसेमीन (Streptobiosamine) नामक घटकों में वियोजित होता है। सम्भवतः स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फाड्रिल ग्रुप के साथ संयुक्त होकर जीवाणुओं की समवर्त क्रिया का निरोध करता है, जिससे उनकी वृद्धि नहीं होने पाती।

राजयक्ष्मानिरोधक-क्रिया (Antituberculous action)—औषधीय मात्राओं में स्ट्रेप्टोमाइसिन राजयक्ष्मा के कीटाणुओं की वृद्धि को रोकता (Tuberculostatic) है। इस क्रिया में रोगी के शरीर के क्षमताजनक साधनों (Defence mechanisms) की भी आवश्यकता होती है। स्ट्रेप्टोमाइसिन के प्रयोग में एक दोष भी है, कि लगातार कुछ दिनों तक सेवन करने के उपरान्त जीवाणुओं को औषधि सह्य हो जाती है और फिर उन पर औषधि का कोई प्रभाव नहीं होता। अतः देखा गया है, कि लगातार सेवन के बजाय बीच-बीच में स्ट्रेप्टोमाइसिन का इन्जेक्शन देने से अधिक लाभ होता है। लगातार २ माह के सेवन से ही जीवाणुओं को औषधि सह्य हो जाती है और ४ माह में तो यह सह्यता पूर्णतः दिखने लगती है। अतएव लगातार प्रतिदिन स्ट्रेप्टोमाइसिन का इन्जेक्शन देने के बजाय सप्ताह में २-३ इन्जे-

क्शन देना और साथ-साथ आयोनिएजिड (Ioniazid) के उपयोग से इस दोष का निवारण हो जाता है।

शोषण तथा निस्सरण—मुख द्वारा सेवन करने से आमाशयान्त्र-प्रणाली द्वारा स्ट्रेप्टोमाइसिन का शोषण नहीं होता। अधस्त्वक् एवं पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होने पर यह क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाता है। पेशी-मार्ग द्वारा औषधि प्रयुक्त होने पर रक्त में पर्याप्त संकेन्द्रण होने में आधे से २ घंटा लग जाता है। यह क्रिया अधस्त्वक् सूचिकाभरण से कुछ विलम्ब से (१ घंटे में) तथा शिरागत इन्जेक्शन द्वारा बहुत जल्दी (केवल १५ मिनट में) हो जाती है। पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा १२–१२ घंटे पर औषधि प्रयुक्त करने से रक्त में इसका बराबर संकेन्द्रण बना रहता है। शोषणोपरान्त रक्तप्रवाह में पहुँचने पर अधिकांश भाग प्लाज्मा-प्रोटीन के साथ संयुक्त (Bound to plasma proteins) हो जाता है। रक्तकणों में बहुत अल्प मात्रा में घुस पाता है। वृक्क, यकृत्, पित्ताशय, ग्रैवेयक ग्रंथि एवं पेशियों में भी इसका काफी संकेन्द्रण पाया जाता है। मस्तिष्क-सुषुम्ना-द्रव में स्वस्थावस्था में तो इसका संकेन्द्रण बहुत कम मात्रा में हो पाता है, किन्तु वैकृतिक अवस्थाओं यथा मस्तिष्कावरणशोथ (Meningitis) में अपेक्षाकृत अधिक संकेन्द्रण पाया जाता है। उदर्याकला के रसिक स्राव (Peritoneal fluid) में स्वस्थ एवं वैकृतिक दोनों ही अवस्थाओं में पर्याप्त मात्रा में संकेन्द्रित होता है।

स्ट्रेप्टोमाइसिन का निस्सरण प्रधानतः वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ होता है। प्रायः ७०% औषधि ज्यों की त्यों २४ घंटे के अन्दर उत्सर्गित हो जाता है। अल्प मात्रा में इसका उत्सर्ग यकृत् द्वारा पित्त के साथ होता है, जिससे पित्ताशयिक नलिका (Cysticduct) के द्वारा यह पित्ताशय में पहुँच जाती है। औषधि का कुछ अंश मल के साथ भी उत्सर्गित होता है।

विषाक्त प्रभाव (Toxic effects)—थोड़े समय तक औषधि का प्रयोग करने से तो साधारणतया विषाक्तता की कोई सम्भावना नहीं होती; किन्तु अधिक समय तक इसका प्रयोग करने से अनेक उपद्रव लक्षित होते हैं, जिनमें निम्न प्रधान हैं:—

(१) अनूर्जिक प्रतिक्रिया (Allergic reactions)—साधारण अवस्था में चेहरा लाल हो जाता है, शिरःशूल, नेत्राभिष्यंद, प्रकाशसंत्रास (Photophobia), आंसू का अधिक निकलना (Lachrymation) तथा रक्तभार में भी थोड़ी कमी (Slight fall) हो जाती है। गम्भीर-अवस्था (Severe Cases) में किन्हीं रोगियों में त्वचा पर विस्फोट निकलते हैं, जो शीतपित्ती की तरह (Urticarial) अथवा लालिमायुक्त दानों की तरह (Maculopaulor) होते हैं। कभी-कभी निस्तरणयुक्त त्वचाशोथ (Exfoliative dermatitis) भी होता है। रक्त में भी अनेक प्रकार के परिवर्तन होते हैं, यथा उषसिप्रियता (Eosinophilia), अकणिककायाणूत्कर्ष, अपचयिक रक्ताल्पता (Aplastic anaemia) तथा घनास्रि-कायाणु-अपकर्ष (Thrombocytopenia) आदि कभी-कभी वाहिनी-नाड़ीशोथ (Angioneuroticoedema) तथा श्वास (Bronchial asthma) का भी उपद्रव हो जाता है। उपर्युक्त लक्षण प्रायः चिकित्सा-क्रम के दूसरे सप्ताह में प्रगट होते हैं, जो औषधि बन्द कर देने पर स्वयं शमन हो जाते हैं।

(२) नाड़ीसंस्थान सम्बन्धी उपद्रव (Neurotoxic reactions)—काफी दिनों तक लगातार स्ट्रेप्टोमाइसिन का सेवन करने से मस्तिष्क की ८वीं नाड़ी (Eighth Cranial nerve) पर घातक प्रभाव हो सकता है, जिससे शिरोभ्रम (Vertigo) एवं श्रवणसम्बन्धी विकृति भी हो

जाती है। श्रवणसंबन्धी विकृति डिहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिन के प्रयोग से अधिक होती है। पहले तो कानों में कर्ण-क्ष्वेड (Tinnitus) की विकृति होती है और इसके बाद धीरे-धीरे बधिरता का उपद्रव (Deafness) हो जाता है। यदि प्रारम्भ में ही औषधि बन्द कर दी जाय तो आगे भयंकर उपद्रवों से रक्षा हो जाती है।

(३) स्थानिक उपद्रव—पेशीगतसूचिकाभरण से उस स्थान पर कभी-कभी बहुत दर्द होता है और गुत्था (Induration) बन जाती है। सुषुम्नान्तर्गत सूचिकाभरण के बाद मस्तिष्क, सुषुम्ना एवं उनके आवरण सम्बन्धी (Meningeal) अनेक उपद्रव लक्षित होते हैं।

(४) वृक्क सम्बन्धी उपद्रव (Nephrotoxic reactions)—कभी-कभी वृक्क-शोथ Nephritis) का उपद्रव होता है, जिससे मूत्र में अल्ब्युमिन, निर्मोक (Casts) तथा कभी-कभी रक्त भी पाया जाता है।

आमयिक प्रयोग।

स्ट्रेप्टोमाइसिन एन्टीबायोटिक समुदाय की एक महत्त्वपूर्ण औषधि है। यह अधिकांश ग्राम-निगेटिह्व एवं अम्ल-साही (Acidfast) सूक्ष्म-जीवाणुओं पर उत्तम जीवाणुवृद्धिरोधक (Bacteriostatic) एवं जीवाणुनाशक (Bactericide) प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त अनेक ग्राम-पाजिटिह्व जीवाणुओं पर भी जिनपर पेनिसिलिन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता (Penicillin insensitive) यह घातक प्रभाव करता है। यक्ष्मा के जीवाणुओं (M. tuberculosis) के उपसर्ग से हानेवाली विकृतियों में स्ट्रेप्टोमाइसिन रामबाण औषधि है। इसके अतिरिक्त यह निम्न जीवाणुओं के उपसर्ग में भी उत्तम कार्य करता है—(१) प्लेग का जीवाणु (P.pestis); (२) हिमोफिलस इन्फ्लुएन्जो (H. influenzae); (३) पास्च्युरेल्ला ट्युलारेंसिस (P. tularensis); (४) ई० कोलाइ (E. coli); (५) बेसिलस एन्थ्रेसिस (B. anthracis); (६) ए० ईरोजन्स (A. aerogenes); (७) के० न्यूमोनिई (K. pneumoniae); (८) शिगेला (Shigella); (९) लेप्टोस्पाइरा (Leptospira); (१०) डोनोवानिया ग्रेन्युलोमेटोसिस (Donovania granulomatosis) एवं (११) पूयमेह का जीवाणु (N. gonorrhoeae)।

स्टेफिलोकोकस, स्ट्रेप्टोकोकस, न्युमोकोकस तथा मेनिंगोकोकस उपसर्ग में वैसे तो उत्तम पेनिसिलिन ही है; किन्तु यदि पेनिसिलिन का प्राभाव न पड़ रहा हो (Penicillin resistant strains), तो स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग उपयागी सिद्ध होता है।

यक्ष्मा (Tuberculosis)—यक्ष्मा में स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग अकेले नहीं किया जाता। इसके साथ आइसोनेजिड (Isoniazid) या सोडियम्-अमिनोसेलिसिलेट दिया जाता है। अपेक्षाकृत आइसोनेजिड का प्रयोग अधिक उपयुक्त है। उग्र स्वरूप के श्यामाकीय फुफ्फुसीय यक्ष्मा (Miliary Tuberculosis) अथवा बेसिलस ट्यूबरक्युलोसिस के उपसर्ग से होनेवाले मस्तिष्कावरणशोथ (Tubercula meningitis) में आवश्यकतानुसार तीनों औषधियों का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

फुफ्फुसीय यक्ष्मा (Pulmonary tuberculosis) में स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग फुफ्फुसधातुगत विकृति को रोकने के लिए थूक से यक्ष्मा के कीटाणुओं का निर्हरण (Elimina-

tion) करने के लिए तथा सार्वदैहिक विषमयता के उपद्रवों (General toxaemic Symptoms) के शमन के लिए किया जाता है। किन्तु फुफ्फुसगत कोटरों (Cavities) को बन्द होने में यह विशेष सहायक नहीं होता। यक्ष्मा के कीटाणुओं के उपसर्ग से होनेवाले उग्र फुफ्फुसपाक (Pneumonic). श्वसनीफुफ्फुसपाक (Broncho-pneumonic) अथवा श्यामाकीय विकृतियों (Miliary lesions) अथवा यक्ष्माजन्य फुफ्फुसावरणशोथ (Tubercular Bronchitis), यक्ष्मज जलोरस (Hydrothorax) वा पूयोरस (Empyema) आदि विभिन्न श्वससंस्थानिक यक्ष्मज विकारों में स्ट्रेप्टोमाइसिन विशिष्ट औषधि है। जब फुफ्फुसीय यक्ष्मा में तन्तुकिलाटीय (Fibrocasious) विकृति के कारण फुफ्फुसधातु गल गया होता है तथा बड़े कोटर बन जाते हैं, जिससे शस्त्रचिकित्सा की जरूरत पड़ती है, तो पहले स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग कर देने से रोगी शस्त्रचिकित्साको बर्दाश्त करने के लिए अधिक समर्थ एवं उपयुक्त हो जाता है। **उग्रस्वरूप के श्यामाकीय फुपफुस यक्ष्मा (Acute miliary Tuberculosis)** में प्रारम्भ से ही स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ पहले प्रतिदिन १ ग्राम की मात्रा दो बार दी जा सकती है। किन्तु जब ज्वर उतर जाय तो मात्रा कम कर देनी (१ ग्राम प्रतिदिन) चाहिए। **राजयक्ष्मज पूयोरस (Tubercular empyema)** में स्ट्रेप्टोमाइसिन के इंजेक्शन के साथ-साथ इसका स्थानिक प्रयोग भी करना चाहिए। इसके लिए आवश्यकतानुसार ½ ग्राम से २ ग्राम की मात्रा फुफ्फुसावरणीय गुहा (Pleural cavity) में स्थानिक रूप से दे सकते हैं। **राजयक्ष्माजन्य मस्तिष्कावरण शोथ (Tubercular meningitis)** में प्रतिदिन स्ट्रेप्टोमाइसिन के पेशीगत इंजेक्शन के साथ-साथ इसका प्रयोग सुषुम्नान्तर्गत मार्ग द्वारा (Intrathecally) भी होना चाहिए। अब स्ट्रेप्टोमाइसिन के साथ-साथ आइसोनेजिड का भी व्यवहार किया जाता है। इस मिश्रित चिकित्साक्रम से बहुत लाभ एवं सफलता प्राप्त होती है।

मूत्रप्रजननसंस्थान के यक्ष्मज विकारों (Genito-urinary tuberculosis) में भी स्ट्रेप्टोमाइसिन बहुत सफल सिद्ध होता है। यदि विकृति उभयपार्श्विक (Bilateral) हो तो चिकित्सा अधिक समय (१–२ वर्ष) तक जारी रखनी पड़ती है।

स्वरयंत्र एवं अन्त्र की श्लैष्मिक कला में यक्ष्मजविकार (Tuberculous Lesions of the larynx and the intestinal tract) होने पर अथवा यक्ष्मज **उदर्याकलाप्रदाह (Tuberculous peritonitis)** अथवा यक्ष्मज हृदयावरण-शोथ **(Tuberculous pericarditis)** तथा यक्ष्मज नाड़ीव्रण (Sinus) एवं भगन्दर **(Fistula)**, **लसीकाग्रन्थिशोथ (Tub. Lymphadenitis** तथा अस्थि एवं **संधिगत यक्ष्मज विकार (Tuberculosis of the bone and joint)** में भी स्ट्रेप्टोमाइसिन-चिकित्सा बहुत उपयोगी है। इसी प्रकार **त्वचागत यक्ष्मज विकारों (Skin tuberculosis)** में भी इसका प्रयोग बहुत आशाप्रद होता है।

राजयक्ष्मा के रोगियों में यदि बड़ा आपरेशन करना है, तो आपरेशन के पहले एवं बाद में स्ट्रेप्टोमाइसिन का इंजेक्शन देने से शरीर में अन्यत्र राजयक्ष्मा के उपसर्ग से बचत हो जाती है।

अन्य व्याधियाँ—यक्ष्मा के अतिरिक्त भी स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग अनेक व्याधियों में

विशिष्ट औषधि की भाँति सफल सिद्ध होता है—(१) **प्लेग**—ग्रंथिक, फुफ्फुसीय एवं दोषमय तीनों प्रकार के प्लेग (Bubonic, pneumonic and Septicaemic plague) में स्ट्रेप्टोमाइसिन विशिष्ट औषधि की भाँति कार्य करती है। इसके लिए आवश्यकतानुसार प्रतिदिन २ ग्राम से लेकर ८ ग्राम औषधि देनी पड़ती है। दिन भर में जितनी औषधि देनी हो, ४ मात्राओं में विभक्त करके ६–६ घंटे पर देनी चाहिए। (२) **बेसिलरी न्युमोनिया एवं मस्तिष्कावरणशोथ**—विभिन्न प्रकार के विशिष्ट तृणाणुओं या बेसिलस (K. pneumoniae and H. influenzae) के उपसर्ग से होनेवाले फुफ्फुसपाक (न्युमोनिया) एवं मस्तिष्कावरणप्रदाह (मेनिन्जाइटिस) में स्ट्रेप्टोमाइसिन के चिकित्साक्रम से बहुत सफलता मिलती है। मस्तिष्कावरणशोथ में इसका प्रयोग पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा एवं सुषुम्नान्तर्गत मार्ग (Intrathecally) दोनों ही विधियों द्वारा करना चाहिए। बच्चों के लिए पेशीगत मार्ग के लिए मात्रा ४० मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीरभार के हिसाब से लेनी चाहिए और इसको प्रतिदिन कई मात्राओं में विभक्त करके देना चाहिए। सुषुम्नान्तरगत मार्ग के लिए १ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम भार के हिसाब से लेकर दिन में १ बार प्रयुक्त करने से काम चल जाता है। प्रायः मेनिंजाइटिज में स्ट्रेप्टोमाइसिन के साथ-साथ मुखद्वारा सल्फाडायजिन अथवा टेट्रासायक्लिन्स (Tetracyclines) का भी सेवन कराना चाहिए। इससे कई गुनी अधिक सफलता मिलने की आशा रहती है। (३) **आंत्रगत उपसर्ग** (Intestinal infection)—स्ट्रेप्टोमाइसिन से प्रभावित होनेवाले (Streptomycin Sensitive) शिगेला आदि जीवाणुओं के आन्त्रगत उपसर्ग में स्ट्रेप्टोमाइसिन का मौखिक प्रयोग निश्चितरूपेण लाभप्रद होता है। एतदर्थ ½ से १ ग्राम औषधि प्रति ६–६ घंटे पर दी जाती है। शोषण मन्दगति से होने के कारण आँतों में स्थानिक क्रिया के लिए इसके अधिकाधिक संकेन्द्रण (Concentration) होने में सहायता मिलती है। बृहदन्त्र पर शस्त्रकर्म करने के पूर्व मुखद्वारा स्ट्रेप्टोमाइसिन देने से सम्भावी उपसर्ग की आशंका नहीं रहती। उदर्याकलाशोथ में भी प्रतिदिन ३–४ ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन विभाजित मात्राओं में पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा दिया जाता है। इससे अन्य औदरिक अंगों में उपसर्ग का उपद्रव नहीं होने पाता। इस प्रकार औषधि ५–१० दिन तक देनी पड़ती है। (४) **मूत्रमार्गगत उपसर्ग** (Urinary tract infection)—मूत्रमार्ग में ई० कोलाई, पी० वल्गेरिस एवं अन्य जीवाणुओं (Ps aeruginosa, Str. faecalis) आदि द्वारा होनेवाले तरुण (Acute) या चिरकालज (Chronic) उपसर्ग में भी स्ट्रेप्टोमाइसिन उपयोगी है, विशेषतः जब सल्फोनामाइड्स के प्रयोग से कोई लाभ न हो रहा हो। इसके लिए १½ से २ ग्राम की दैनिक मात्रा, २–३ मात्राओं में विभक्त करके पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा दी जाती है। इस प्रकार एक सप्ताह तक चिकित्सा-क्रम चालू रखना पड़ता है। इसके साथ-साथ रोगी को खूब पानी पीने को देना चाहिए और साथ ही क्षारीय मिश्रण (Alkaline mixture) का भी प्रयोग होना चाहिए। (५) **वंक्षणीय लसकणार्बुद** (Granuloma inguinale) **एवं फिरङ्गीय व्रण** (Chancroid)—वंक्षणीय लसकणार्बुद में ६–६ घंटे के अन्तर से १ ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा ५ से १० दिन तक तथा फिरङ्गीय व्रण (Chancroid)

में प्रतिदिन १ मि० ग्रा० स्ट्रेप्टोमाइसिन का इन्जेक्शन ७-१० दिन तक देने से बहुत लाभ होता है।

कुष्ठ (Leprosy)—सल्फोन-चिकित्सा के साथ-साथ प्रतिदिन ½ से १ ग्राम पेनिसिलिन का इन्जेक्शन देने से जल्दी लाभ होता है।

(Tularaemia)—१ से २ग्राम की मात्रा दिन में १ या २ बार ७ से १० दिन तक।

अनुग्र तृणाण्वीय हृदन्तःशोथ (Subacute bacterial endocarditis)—विशेषतः स्ट्रेप्टोकोकस विरिडेन्स फीकालिस (Str. viridans faecalis) के उपसर्ग से होनेवाली व्याधि में प्रतिदिन ½ ग्राम ६–६ घंटे पर २१ दिन तक देना चाहिए।

प्रयोगविधि एवं मात्रा—सार्वदैहिक प्रभाव के लिए स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग प्रायः पेशीगत-सूचिकाभरणद्वारा (Intramuscular injection) किया जाता है। पेशीगतइन्जेक्शन के लिए नितम्ब प्रदेश अथवा बाहु के ऊपरी भाग में सामने की ओर अंसच्छदा (Deltoid) पेशी में उपयुक्त स्थान होता है। युवा पुरुष के लिए औसत दैनिक मात्रा (Average daily dose) १ से २ ग्राम होती है। इंजेक्शन लगाते समय उक्त मात्रा को २ से ४ सी० सी० लवणजल (Normal Saline) अथवा परिस्रुतजल (Water for injection) में घोलकर ताजा सॉल्यूशन व्यवहृत करना चाहिए। चूँकि शरीर से इसका निस्सरण धीरे-धीरे होता है, इसलिए रक्त में स्ट्रेप्टोमाइसिन का बराबर संकेन्द्रण बनाये रखने के लिए प्रतिदिन जो मात्रा देनी अभीष्ट हो, उसको २ मात्राओं में विभक्त करके १२–१२ घंटे के अन्तर से २ इन्जेक्शन देना पर्याप्त होता है। अन्त्र की श्लैष्मिक कला पर स्थानिक प्रयोग के लिए इसका सेवन मुखद्वारा (Orally) किया जाता है। एतदर्थ ½ से १ ग्राम औषधि ६–६ घंटे के अन्तर से दी जाती है। मस्तिष्कसुषुम्नाज्वर (Meningitis) आदि में जब मस्तिष्कसुषुम्ना-द्रव (ब्रह्मवारि–Cerebro-spinal fluid) में औषधि का काफी संकेन्द्रण अभीष्ट होता है, तो पेशीगतइन्जेक्शन के साथ-साथ इसको सुषुम्नान्तर्गत मार्ग (Intrathecal route) से भी देते हैं। इसके लिए दैनिक मात्रा १ मि० ग्रा० प्रति पौंड शरीर-भार के हिसाब से दी जाती है; किन्तु अधिकतम दैनिक मात्रा १०० मि० ग्रा० से अधिक नहीं होनी चाहिए। प्रति सी० सी० द्रव में १० से २० मि० ग्रा० का संकेन्द्रण औषधीय क्रिया के लिए पर्याप्त होता है। इसके लिए २५ से १०० मि० ग्रा० औषधि ५ से १० सी० सी० समबल लवण-जल (Isotonic Saline Solution) में घोलकर एक बार में ही प्रयुक्त कर दी जाती है। यक्ष्मज पूयोरस (Tubercular empyema) एवं विद्रधि-कोटरों (Abscess cavities) में स्थानिक क्रिया के लिए इसका सॉल्यूशन (½ से १ ग्राम ५ सी० सी० लवणजल में घोलकर) इन्जेक्शन कर दिया जाता है। श्वसनमार्ग के रोगों में बाष्पका आघ्राणन (Inhalation) किया जाता है। इसके लिए १ सी० सी० जल में ५० से १०० मि० ग्रा० औषधि के अनुपात का जलीय घोल गरम कर उसके वाष्प को सूँघा जाता है। इसके अतिरिक्त व्रणों के उपचार के लिए भी स्ट्रेप्टोमाइसिन सॉल्यूशन (प्रति सी० सी० में २५ से ५० मि० ग्रा०) का व्यवहार किया जाता है।

वक्तव्य—डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिन सामान्यतः गुण-कर्म में मौलिक स्ट्रेप्टोमाइसिन की ही भाँति होता है; किन्तु मानवीय यक्ष्मा में स्ट्रेप्टोमाइसिन की अपेक्षा कम प्रभावशाली होता है और ज्यादे दिन प्रयोग करने से ८ वीं शीर्षजा नाड़ी (8th cranial nerve) जन्य विकृति इसमें अधिक उग्र स्वरूप की होती है, जिससे रोगी बहरा हो सकता है। अतएव यक्ष्मा में मूल स्ट्रेप्टोमाइसिन ही

उत्तम होता है। स्ट्रेप्टोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड या केल्सियम् क्लोराइड की अपेक्षा स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट के पेशीगत इन्जेक्शन में दर्द कम होता है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ स्ट्रेप्टोमाइसिनी एट केल्सियाई क्लोराइडाइ Injectio Streptomycini et Calcii Chloridi, I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव स्ट्रेप्टोमाइसिन-केल्सियम् क्लोराइड Injection of Streptomycin Calcium Chloride—अं०। यह स्ट्रेप्टोमाइसिन केल्सियम् क्लोराइड का वॉटर-फॉर-इन्जेक्शन में बनाया हुआ एवं विशोधित (Sterile) सॉल्यूशन (Solution) या विलयन होता है।

प्रयोग विधि—इंजेक्शन द्वारा।

मात्रा—१ ग्राम मौलिक स्ट्रेप्टोमाइसिन (1 grm. Streptomycin base) के बराबर।

वक्तव्य—यदि बल का निर्देश न हो, तो १ मि० लि० (सी० सी०) में २·२५ ग्राम का सॉल्यूशन देना चाहिए।

२—इन्जेक्शिओ स्ट्रेप्टोमाइसिनी हाइड्रोक्लोराइडाई Injectio Streptomycini Hydro. Chloridi (Inj. Streptomyc. Hydrochlor.), I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव स्ट्रेप्टोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड (Injection of Streptomycin Hydrochloride)—अं०। स्ट्रेप्टोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड का इन्जेक्शन या सूई—हिं०। प्रयोग-विधि एवं मात्रादि पूर्ववत्।

३—इंजेक्शिओ स्ट्रेप्टोमाइसिनी सल्फास Injectio Streptomycini Sulphas (Inj. Streptomyc. Sulph.), I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट Injection of Streptomycin Sulphate—अं०। प्रयोगविधि एवं मात्रादि पूर्ववत्।

४—इन्जेक्शिओ डाइहाइड्रो स्ट्रेप्टोमाइसिनी Injectio Dihydrostreptomycini (Inj. Dihydrostreptomycin), I. P., B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिन-अं०।

सोडियाइ पारा-एमिनोसेलिसिलास (I. P., B. P.)

Sodii-Para-aminosalicylas (Sod. para-amino salicyl.)—ले०।

रासायनिक संकेत : $C_7H_6O_3NNa, 2H_2O$.

पर्याय—सोडियम्-एमिनोसेलिसिलेट Sodium Amino-salicylate—(अं०); सोडियम् "पास" Sodium PAS.।

प्राप्ति-साधन—सोडियम्-एमिनोसेलिसिलेट 4—amino-2—hydroxy benzoic acid का सोडियम् साल्ट होता है, जो उक्त द्रव्य के साथ सोडियम् बाइकार्बोनेट की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९% तथा अधिक से अधिक १०१% $C_7H_6O_3NNa$ होता है।

वर्णन—इसके सफेद या प्रायः सफेद रंग के क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में मधुर एवं नमकीन होता है। विलेयता—२ भाग जल में घुल जाता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल् ९५% में भी साधारणतया घुलनशील होता है। किन्तु सालवेंट ईथर तथा क्लोरोफार्म में प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है।

मात्रा—प्रतिदिन १० से १५ ग्राम या १५० से २२५ ग्रेन कई मात्राओं में विभाजित करके (Individed dsoes) देवें।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

सोडियम "पास" (Sodium PAS) या "पास" (PAS) यक्ष्मा के दण्डाणु (Bacillus tuberculosis) पर जीवाणु-स्तम्भक प्रभाव (Bacteriostatic) करता है। अतएव इसका उपयोग फुफ्फुसगत यक्ष्मारोग या तपेदिक (Pulmonary tuberculosis) में किया जाता है। इसके प्रयोग से तपेदिक के सभी लाक्षणिक उपद्रवों की शान्ति होती है। बोखार ठीक हो जाता है। थूक का परीक्षण करने से कीटाणु नहीं मिलते तथा फोटो (x'ray) लेने से परीक्षण करने पर फुफ्फुस साफ होते दीखते हैं। रक्त के अवक्षेपण गति (Sedimentation rate) में भी काफी कमी आ जाती है। किन्तु यह (Acute miliary tuberculosis) तथा यक्ष्म-कीटाणुओं के कारण उत्पन्न मस्तिष्कावरणशोथ (Meningitis) में विशेष लाभप्रद सिद्ध नहीं होता। अत्र प्रायः इसका प्रयोग स्ट्रेप्टोमाइ-सिन के साथ सहयोगी औषधि के रूप में किया जाता है।

शोषण तथा उत्सर्ग—"पास PAS" या सोडियम् एमिनो सेलिसिलेट मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आंत्रों द्वारा अच्छी तरह शोषित हो जाता है। शोषणोपरान्त रक्तप्रवाह के साथ-साथ विभिन्न शारीरिक धातुओं (Tissues) में विभिन्न संकेन्द्रण में वितरित होता है। शरीर से औषधि का निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है।

विषाक्तता (Toxicity)–एसिड यौगिक की अपेक्षा सोडियम् लवण कम विषाक्त होता है। एसिड के प्रयोग से कभी-कभी क्षुधानाश (Anorexia), हृल्लास (Nausea), वमन तथा कभी-कभी अतिसार (Diarrhoea) तक का उपद्रव हो जाता है। कभी-कभी सेलिसिलेट विषाक्तता के लक्षण (Salicylate poisoning) के लक्षण प्रगट होते हैं।

सेवन-विधि—"पास PAS" का प्रयोग प्रायः सोडियम् साल्ट के रूप में मुखमार्ग द्वारा (Orally) किया जाता है। साधारणतया इसकी ३ ग्राम (४५ ग्रेन) की मात्रा ४–४ घंटे के अन्तर से दी जाती है। औषधीय प्रभाव के लिए रक्त में प्रति १०० मि० लि० में १० मिलि ग्राम का संकेन्द्रण होना चाहिए। एतदर्थ प्रथम मात्रा ४ ग्राम की देनी चाहिए और इसके बाद ६–६ घंटे के अन्तर पर ३ ग्राम की मात्रा दें। "पास PAS" का सेवन प्रायः कैचेट्स (जिलेटिन की डिब्बियों) या कप्स्यूलस में रखकर किया जाता है। आजकल इसके ग्रेन्यूलस (Granules) या दानेदार चूर्ण भी आता है। इसका जलीय विलयन बनाकर रख देने से थोड़े समय के बाद बिगड़ जाता है। अतएव यदि इस रूप में प्रयुक्त करना हो तो ताजा सॉल्यूशन ही व्यवहृत करना चाहिए।

व्यावसायिक योग :—

(१) एमिनासिल Aminacyl (P. A. S.) [Wander]—सोडियम् "पास PAS" होता है। चूर्ण तथा एम्पूल्स।

(२) एमिनासिल (केल्सियम् पास) Aminacyl calcium PAS (Wander)—शूगर कोटेड पिल्स (Sugar-coated pills) या ड्रेजा (Dragees) आते हैं।

(३) एमिनासिल (केल्सियम् 'पास' ग्रेन्यूल्स) [Wander]।

(४) सोडियम् "पास" Sodium P.A.S. (W. B.) । पाउडर एवं शूगर-कोटेड या एन्टेरिक-कोटेड टॅवलेट्स ।

(५) एमिनोक्स Aminox (P.A.S.—Sodium "Hoechst")—इसकी (१) ग्रेन्यूल्स, (२) टॅब्लेट्स या शूगर-कोटेड पिल्स (ड्रेजा—Dragees) तथा (३) पाउडर आती है ।

आइसोनिएजाइड (I. P., B. P. C.)

Isoniazidum (Isoniaz.)—ले०; Isoniazid (अं०).

रासायनिक संकेत : $C_6H_7ON_3$.

पर्याय—आइसोनिकोटिनिक एसिड हाइड्रेजाइड Isonicotinic Acid Hydrazide; कान्टिनाजिन Continazin; माइवसन Mybasan; नाइड्रेजाइड (Nydrazid); आइसोनेजाइड—हिं० ।

प्राप्ति-साधन—आइसोनेसाइड, रासायनिक दृष्टि से Pyridine 4—Carboxyhydrazide या आइसोनिकोटिनो हाइड्रेजाइड (Isonicotino hydrazide) होता है, जो Pyridine—4—Carboxylic acid, एथिल अल्कोहल् एवं हाइड्रेजीन (Hydrazine) की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९८·५% तथा अधिक से अधिक १००·½% $C_6H_7ON_3$ होता है ।

वर्णन—इसके रंगहीन मणिभ या क्रिस्टल्स अथवा सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् तीता होता है। विलेयता—यह ८ भाग पानी तथा १८ भाग अल्कोहल् (९५ %) में तो घुल जाता है, किन्तु क्लोरोफॉर्म तथा ईथर में अत्यल्प मात्रा में (नाम मात्र) घुलता है ।

मात्रा—(I. P. Dose)—२ से ४ मिलिग्राम प्रति किलोग्राम शरीरभार के हिसाब से प्रतिदिन । (२) B. P. C. Dose : ०·१५ से ०·४ ग्राम या २½ से ६ ग्रेन प्रतिदिन विभाजित मात्राओं में ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

आइसोनेजाइड यक्ष्मा के कीटाणुओं पर जीवाणु-स्तम्भक प्रभाव (Bacteriostatic against Mycobacterium tuberculosis) करता है। उक्त प्रभाव करने के लिए प्रति मि० लि० (सी० सी०) में ०·०२ से ०·०६ माइक्रोग्राम (mcgrm.) का संकेन्द्रण पर्याप्त होता है। ३०० मि० ग्रा० प्रतिदिन सेवन करने से रक्तगत संकेन्द्रण प्रति मिलिलिटर (सी० सी० = १५ बूंद रक्त) में २·८ माइक्रोग्राम का कन्सन्ट्रेशन प्राप्त होता है। प्रति किलोग्राम शरीरभार के लिए ३ मि० ग्रा० मात्रा के हिसाब से औषधि सेवन करने से घंटे भर में ही रक्त में ज्यादा से ज्यादा औषधि का सन्केन्द्रण (Concentration) हो जाता है। इस रूप में प्रतिदिन १५० से ३०० मिलिग्राम औषधि कई मात्राओं में विभक्त कर सेवन कराई जाती है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर भी आंतों से औषधि शीघ्रतापूर्वक शोषित होकर शरीरगत धातुओं एवं द्रवों में पहुँच जाती है। शोषणोपरान्त मस्तिष्क-सुषुम्नाद्रव (Cerebrospinal fluid) में भी यह काफी मात्रा में पहुँचती है। शरीर से औषधि का निस्सरण प्रधानतः वृक्कों द्वारा मूत्र के साथ होता है। मौखिक सेवन के लिए आइसोनेसाइड की टॅवलेट्स (१०० मि० ग्रा० की) या टिकिया आती हैं।

चिकित्सा में आइसोनेजाइड का उपयोग विभिन्न प्रकार के यक्ष्मारोगों में किया जाता है। विशेषतः फुफ्फुसीय यक्ष्मा (Pulmonary tuberculosis) में यह बहुत लाभ करता है। किन्तु इसके अतिरिक्त यह ट्युबरक्युलर मेनिनजाइटिस तथा प्रजनन संस्थानगत यक्ष्मविकारों में भी उपयोगी होता है। इसके प्रयोग से रोगी को भूख लगने लगती है, शरीर का भार बढ़ने लगता है तथा ज्वर, खांसी आदि सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। एतदर्थ आइसोनेजाइड की टिकिया मुख द्वारा दी जाती है। मात्रा का निर्धारण रोगी के शरीर-भार के अनुसार किया जाता है। सामान्यतया प्रति किलोग्राम शरीरभार के लिए ३ मि० ग्रा० के अनुसार जितनी मात्रा में प्रतिदिन औषधि का सेवन किया जाना चाहिए, उसको २–३ मात्राओं में विभक्त कर दिन भर में २–३ बार दी जाती है। आवश्यकतानुसार यह मात्रा बढ़ाई भी जा सकती है। ट्युबरक्युलर मेनिनजाइटिस में प्रति-किलोग्राम शरीरभार के लिए १० मि० ग्रा० तक औषधि दी जाती है। किन्तु इन अवस्थाओं में आइसोनेजाइड का अकेले व्यवहार नहीं करना चाहिए। प्रायः इसके साथ-साथ "पास (PAS)" या स्ट्रेप्टोमाइसिन के इन्जेक्शन्स देने चाहिए।

आइसोनेजाइड का व्यवहार त्वचागतयक्ष्मविकार (Lupus vulgaris) में भी उपयोगी पाया जाता है। एतदर्थ १५० से ३०० मिलिग्राम आइसोनेजाइड मुख द्वारा कई मात्राओं में विभक्त करके प्रतिदिन देना चाहिए और साथ ही साथ सप्ताह में १ बार उस स्थान पर त्वचागत इन्जेक्शन (Intradermal injection) करना चाहिए। एतदर्थ ५० से ४०० मि० ग्रा० औषधि २ से ५ मि० लि० परिस्रुत जल (Water for injection) में विलीन कर उक्त सॉल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है।

विषाक्तता (Toxicity)—आइसोनेजाइड के व्यवहार से विषाक्त प्रभाव प्रायः बहुत कम होते हैं। कभी-कभी जब औषधि का सेवन निरंतर अधिक काल तक (२–४ सप्ताह से ज्यादा) किया जाता है, तब कब्ज, मूत्रकृच्छ्र, मुख में खुश्की का अनुभव, शिर में चक्कर आना तथा प्रान्तीय नाड़ीसंस्थान में परम संवेदनशीलता (Peripheral neuropathy and hyperreflexia) आदि उपद्रव लक्षित होते हैं। इसी प्रकार निरन्तर बहुत दिनों तक औषधि का सेवन करने के उपरान्त एकाएक औषधि का सेवन बन्द कर देने पर भी अनेक उपद्रव (Withdrawl Symptoms) पैदा होते हैं; यथा शिरदर्द, निद्रानाश तथा स्वभाव का चिड़चिड़ापन आदि।

(योग)

१—टॅबेली आइसोनिएजिडाइ Tabellae Isoniazidi (Tab. Isoniazid.), B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव आइसोनिएजिड Tablets of Isoniazid, आइसोनिएजिड टॅबलेट्स Isoniazid Tablets—अं०; आइसोनेजाइड की टिकिया—हिं०।

मात्रा—पूर्ववत्। यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो ५० मि० ग्रा० की टिकिया देनी चाहिए।

व्यावसायिक योग :—

(१) पेलेजाइड Pelazid (Glaxo)—यह आइसोनिएजाइड का यौगिक है। ५० मि० ग्रा० तथा १०० मि० ग्रा० की टॅबलेट्स आती हैं।

थिआसिटेजोन (Thiacetazone), B. P. C.

थिआसिटेजोनम् Thiacetazonum (Thiacetazon.)--ले० ।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{12}ON_4S$.

पर्याय–एमिथिओजोन **Amithiozone, B. P. C.**; थिओसेमिकार्बेजोन **Thiosemicarbazone**; माइविजोन **Myvizone**; कान्टेबेन **Conteben**; टिबिओन **Tibione; TB1/698**; बेंजथिओजोन ।

प्राप्तिसाधन---रासायनिक दृष्टि से थिआसिटेजोन, p-acetamido benzaldehyde thiosemicarbazone होता है, जो p-acetamidobenzaldehyde एवं thiosemicarbazide तथा अल्कोहल् की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त द्रव्य के डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् द्वारा पुनः स्फटिकीकरण (Recrystallisation) करने से प्राप्त होता है ।

वर्णन–यह श्वेत रंग का या हल्के पीले रंग का सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Microcrystalline powder) होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है, तथा स्वाद में हल्का होता है । प्रकाश में खुला रहने से रंग बिगड़ने लगता (Darkens on exposure to light) है । विलेयता—जल में तो यह नहीं घुलता (Insoluble), किन्तु अल्कोहल् में कुछ-कुछ घुल जाता है ।

मात्रा--१० से २०० मि० ग्रा० ($\frac{1}{6}$ से ३ ग्रेन) प्रतिदिन ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

थियासिटेजोन यक्ष्मा के जीवाणु (**M. tuberculosis**) तथा कुष्ठ के जीवाणुओं (**Mycobacterium leprae**) दोनों ही अम्लसाही जीवाणुओं पर जीवाणुस्तम्भक प्रभाव करता है । यक्ष्मा में यह "पास **PAS**" की अपेक्षा अधिक सक्रिय, किन्तु स्ट्रेप्टोमाइसिन की अपेक्षा हीन कोटि की औषधि है । परन्तु इसमें विषाक्तता अपेक्षाकृत अधिक होने के कारण इसका व्यावहारिक उपयोग बहुत सीमित ही है । मिलियरी टुबरक्युलोसिस (**Miliary tuberculosis**) तथा यक्ष्माजन्य मस्तिष्कावरणशोथ (ट्युबरक्युलर मेनिनजाइटिस) में तो यह विशेष लाभ नहीं करता, किन्तु **आर्द्र-आभरण स्वरूप के फुफ्फुसीय यक्ष्मा (Exudative tuberculous lesions of the lungs)** एवं **आंत्रक्षय (Intestinal tuberculosis)** में यह बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है । अस्थि एवं संधिगत यक्ष्मा में इसके प्रयोग का बहुत संतोषजनक परिणाम नहीं है । एतदर्थ दैनिक मात्राके निर्धारण प्रति किलोग्राम शरीर-भार के लिए २–३ मि० ग्रा० के अनुसार किया जाता है । लेकिन प्रारम्भ में प्रायः कम मात्रा से (१० से २५ मिलिग्राम **milligrams**) प्रतिदिन शुरू कर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाते हुए, यदि उपद्रव न लक्षित हों तो २०० मि० ग्रा० तक ले जाँय । बालकों के लिए पहले सप्ताह में प्रति किलोग्राम शरीरभार के लिए $\frac{1}{2}$ मिलिग्राम के हिसाब से, दूसरे सप्ताह में १ मि० ग्रा० के हिसाब से तथा उसके बाद २ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीरभार के हिसाब से देना चाहिए । उपद्रवों एवं लक्षणों के शान्त हो जाने पर भी औषधि कई महीनों तक (कभी-कभी १ वर्ष या इससे भी अधिक) चालू रखनी पड़ती है ।

कुष्ठ (**Leprosy**) में २५ मि० ग्रा० प्रतिदिन से प्रारम्भ कर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाकर ४–८ सप्ताह में १५० मिलिग्राम प्रतिदिन तक बढ़ाई जाती है । कुष्ठ में इसकी क्रिया सल्फोन्स

की भांति होती है। वल्कि जिन रोगियों में सल्फोन्स का सेवन कराने पर भी लाभ न होता हो, तो उनमें थिआसिटेजोन का सेवन कराने से लाभ होता है। लेकिन विषाक्तता के लक्षण दिखने पर औषधि का प्रयोग बन्द कर देना चाहिए।

विषाक्तता (Toxicity)--निम्न लक्षणों का प्रगट होना औषधि की विषाक्तता का द्योतक होता है-क्षुधानाश (Anorexia), शिरःशूल (Headache), तबीयत का गिरना (Malaise), वमन (Vomiting), नेत्राभिष्यन्द (Conjunctivitis), त्वचा पर लाल चकत्तों का निकलना (Toxic erythema), पाण्डु या पीलिया, अकणिक कायाणूत्कर्ष (Agranulocytosis) एवं मस्तिष्कशोफ (Cerebral oedema) । थिआसिटेजोन एक विषैली औषधि है। अतः विषाक्त लक्षणों के उत्पन्न होने पर औषधि का प्रयोग बन्द होना चाहिए।

(योग)

१---टॅबेली थिआसिटेजोनाइ Tabellae Thiacetazoni (Tab. Thiacetazon.)-B. P. C. —ले०; टॅब्लेट्स ऑव थिआसिटेजोन Tablets of Thiaeetazone या थिआसिटेजोन टॅब्लेट्स Thiacetazone Tablets---अं०; थिआसिटेजोन की टिकिया--हिं०।

मात्रा--१० से २०० मि० ग्रा० (⅙ से ३ ग्रेन) थिआसिटेजोन प्रतिदिन। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो २५ मि० ग्रा० थिआसिटेजोन देना चाहिए।

वायोमाइसिन सल्फेट (Viomycin Sulphate)।

पर्याय—वायोसिन सल्फेट Viocin Sulphate; विनाक्टेन सल्फेट (Vinactane Sulphate)।

वर्णन—यह स्ट्रेप्टोमाइसीज प्युनिसियस (Streptomyces puniceus) की कतिपय श्रेणियों (Strains) से प्राप्त भूतघ्न या एन्टीबायोटिक तत्व का सल्फेट लवण होता है, जो सफेद या हल्के पीले रंग का गंधहीन चूर्ण होता है। नमी में खुला रहने से इसमें आर्द्रता सोखने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) पाई जाती है। विलेयता-जल में घुलनशील होता है।

मात्रा—२ ग्राम (३० ग्रेन) सप्ताह में २ वार, पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा (Intramuscularly)।

गुण-कर्म

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर अथवा स्थानिक प्रयोग से औषधि का शोषण अत्यल्प मात्रा में होता है और औषधीय प्रयोग की दृष्टि से उक्त मार्ग विशेष महत्व के नहीं हैं। किन्तु पेशीगत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर औषधि क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाती है। मस्तिष्कसुषुम्नाद्रव एवं फुफ्फुसावरण के रसिक-स्राव (Pleural fluid) एवं उदर्याकला के रसिक स्राव ((Peritoneal fluid) में औषधि का संकेन्द्रण अल्प मात्रा में ही होता है। शरीर से वायोमाइसिन का निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है।

वायोमाइसिन एक जीवाणुस्तम्भक द्रव्य (Bacteriostatic) है। इसका उक्त प्रभाव विशेषतः यक्ष्मा के जीवाणुओं (M. tuberculosis) पर लक्षित होता है। स्ट्रेप्टोमाइसिन एवं आइसोनेजिड आदि यक्ष्मानाशक औषधियों की अपेक्षा इसमें विशेषता यह है, कि यक्ष्मा-जीवाणु की जिन श्रेणियों (Strains) पर स्ट्रेप्टोमाइसिन आदि कार्य करती हैं, उनपर तो वायोमाइसिन कार्य करती ही है, किन्तु उक्त जीवाणु की जो श्रेणियाँ स्ट्रेप्टोमाइसिन आदि

से प्रभावित नहीं होती (Resistant) उनपर भी यह क्रियाशील होता है। वायोमाइसिन में यक्ष्मानाशक प्रभाव स्ट्रेप्टोमाइसिन तथा आइसोनेजिड की अपेक्षा तो कम, किन्तु सोडियम् अमिनो सेलिसिलेट की अपेक्षा अधिक होता है। अतएव स्ट्रेप्टोमाइसिन एवं आइसोनेजिड के बाद सभी प्रकार के यक्ष्मजविकारों में चिकित्सार्थ वायोमाइसिन ही दूसरे नम्बर की औषधि है। वायोमाइसिन के चिकित्साक्रम में इसके साथ-साथ सहायक औषधि के रूप में सोडियम् अमिनो सेलिसिलेट का भी व्यवहार किया जाता है।

यक्ष्मा के रोगियों में जब कोई आपरेशन करना होता है, तो शस्त्र-कर्म के पूर्व एवं बाद में भी वायोमाइसिन का प्रयोग किया जाता है। इससे यक्ष्मा के उपसर्ग से बचाव (Prophylaxis) होता है।

साइक्लोसेरीन Cycloserine।

पर्याय—सेरोमाइसिन (Seromycin); ऑक्सेमाइसिन (Oxamycin)।

वर्णन—यह भी एक भूतघ्न या एन्टीबायोटिक द्रव्य है, जो (१) स्ट्रेप्टोमाइसीज आरकिडेसियस् (Streptomyces orchidaceus), गेरिफेलस् (Streptomyces garyphalus) एवं स्ट्रेप्टोमाइसीज लेवेंडुली से प्राप्त किया जाता है। रासायनिक दृष्टि से यह D—4—amido—3—Isoxazolidone होता है। विलेयता—जल में घुल जाता है।

मात्रा—०·२५ से ०·५ ग्राम प्रतिदिन। औषधि कई मात्राओं में विभक्त करके तथा मुखद्वारा दी जाती है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशयान्त्र-प्रणाली द्वारा साइक्लोसेरिन क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है और शोषणोपरान्त ब्रह्मवारि (C. S. fliud) एवं फुफ्फुसावरण-स्राव (Pleural fluid) में काफी संकेन्द्रण (Concentration) में पाया जाता है। औषधि का निस्सरण (Excretion) प्रधानतः मूत्र के साथ होता है।

साइक्लोसेरीन एक उत्तम यक्ष्माजीवाणुस्तम्भक द्रव्य (Tuberculostatic) है। इसमें भी यह विशेषता पाई जाती है, कि यक्ष्माजीवाणु की जिन श्रेणियों (Strains) पर स्ट्रेप्टोमाइसिन या आइसोनेजिड की क्रिया नहीं होती, उनपर भी यह सक्रिय होता है। इस क्रिया के लिए प्रति मि० लि० (सी० सी०) में औषधि का १० से २० माइक्रोग्राम (mcgm.) का संकेन्द्रण पर्याप्त होता है। यक्ष्मा की चिकित्सा के लिए यह औषधि अकेले पर्याप्त नहीं है। इसके लिए इसको आइसोनेजाइड के साथ सहायक औषधि के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं।

(यक्ष्मानाशक स्वर्ण-यौगिक)

सोडियाइ ऑरोथायोमलास

Sodii Aurothiomalas (Sod. Aurothiomal.), B. P.

पर्याय—सोडियम् ऑरोथायोमलेट Sodium Aurothiomalate (अं०); मायोक्राइसिन Myocrisin.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह प्रधानतः ऑरोथायमेलिक एसिड (Aurothiomalic acid) का सोडियम् साल्ट होता है, जो गोल्ड आयोडाइड सॉल्यूशन (Gold iodide Solution),

सोडियम् थायोमलेट एवं सोडियम् क्लोराइड की परस्पर रासायनिक क्रिया से अधःक्षेपण (Precipitation) द्वारा पृथक् प्राप्त किया जाता है। इसमें कम-से-कम ४४½% स्वर्ण (Au.) तथा १०·८ से ११·३% सोडियम् (Na.) होता है।

वर्णन—यह हल्के पीले रंग के बारीक चूर्ण के रूप में होता है, जिसमें एक हल्की गंध होती है। नमी में खुला रहने से यह आर्द्रता को सोखता (Hygroscopic) है। विलेयता—यह जल में खूब अच्छी तरह घुल जाता (Very soluble) है।

मात्रा—(B. P. Dose) मायोक्राइसिन का प्रयोग सप्ताह में एक बार पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है। प्रारम्भ में १० मि० ग्रा० (⅙ ग्रेन) से मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ाकर १०० मि० ग्रा० (१½ ग्रेन) तक दी जाती है।

(नॉटआफिशल)

ऑरियाइ एट सोडियाइ थायोसल्फास

Auri et Sodii Thio Sulphas (Au. et. Sod. Thiosulph.)—ले०; सोडियम् ऑरोथायोसल्फेट—अं०।

पर्याय—सेनोक्राइसिन Sanocrysin. इसके लम्बे-लम्बे सफेद रंग के सूच्याकार क्रिस्टल्स होते हैं जो जल में अच्छी तरह घुल जाते हैं।

मात्रा—२५ मिलिग्राम से १ ग्राम (⅖ ग्रेन से १५ ग्रेन)। इसको १० सी० सी० परिस्रुत जल में बनाया सॉल्यूशन या विलयन शिरागत सूचिकाभरण द्वारा तीन-तीन या चार-चार दिन के अन्तर से प्रयुक्त किया जाता है।

केल्सियम् ऑरोथायोमलेट Calcium Aurothiomalate

(नॉटऑफिशल)

यह स्वर्ण एवं केल्सियम् का यौगिक है। हल्के पीले रंग का चूर्ण होता है, जो जल में नहीं घुलता (Insoluble in water)। यह स्वर्ण के अन्य यौगिकों की अपेक्षा कम विषैला होता है। इसका तैल में बनाया हुआ निलम्बन (*Suspension in oil*) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा, रियुमेट्वायड आर्थ्राइटिस (Rheumatoid Arthritis) में प्रयुक्त होता है।

सॉल्गेनॉल (Solganol)—इसमें ३६½ प्रतिशत स्वर्ण होता है।

मात्रा—$\frac{1}{१२}$ से ८ ग्रेन (०.००५ से ०.५ ग्राम) शिरागत सूचिकाभरण द्वारा सप्ताह में २ बार। प्रारम्भिक मात्रा से शुरू करके उत्तरोत्तर मात्रा बढ़ाई जाती है। लेकिन रोगी की प्रतिक्रिया को देखते रहना चाहिए और उसी के अनुसार मात्रा घटानी-बढ़ानी चाहिए।

सॉल्गेनॉल 'बी' Solganol-B तथा साल्गेनॉल 'बी' ओलियोसम् Solganol Boleosum—सॉल्गेनॉल 'बी', ऑरोथायोग्लूकोज का जलीय विलयन होता है तथा सॉल्गेनॉल 'बी' ओलियोसम् इसका तैलीय निलम्बन (Oily Suspension) होता है। इसका प्रयोग पेशीगत या अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है।

मात्रा—५ मि० ग्रा० से १०० मि० ग्रा० ($\frac{1}{१२}$ ग्रेन से १½ ग्रेन) तक। यह विषैली औषधि है और कभी-कभी भयंकर प्रतिक्रिया होती है। अतएव निर्दिष्ट मात्रा की अपेक्षा कम मात्रा ही प्रयुक्त करनी चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

स्वर्ण का चिकित्सा में उपयोग बहुत प्राचीन काल से होता आ रहा है। पहले पाश्चात्य वैद्यक में आर्सेनिक के साथ स्वर्ण का उपयोग आतशक या फिरंगरोग (Tertiary Syphilis) एवं नाड़ीदौर्बल्य (Neurasthenia) में किया जाता था। फिर एक समय ऐसा था, जब स्वर्णयौगिकों का व्यवहार यक्ष्मा की विशिष्ट औषधि के रूप में किया जाता था। आयुर्वेद में भी स्वर्ण भस्म एवं तद्घटित योगों का प्रयोग राजयक्ष्मा एवं नाड़ीसंस्थान के विभिन्न रोगों में अब भी बराबर किया जाता है। किन्तु स्ट्रेप्टोमाइसिन एवं "पास PAS" आदि अनेक अन्य विश्वस्त एवं अधिक सक्रिय औषधियों के ज्ञान के साथ अब पाश्चात्य वैद्यक में स्वर्ण का उपयोग राजयक्ष्मा की चिकित्सा में प्रायः नहीं-सा किया जाता।

आजकल चिकित्सा में स्वर्ण के यौगिकों का मुख्य उपयोग **संधिशोथ (Rheumatoid Arthritis)** एवं कतिपय त्वचारोगों—**ल्युपस (Lupus)** एवं **ल्युपस एरिथिमेटस (Lupus erythematous)** में किया जाता है। यद्यपि अब संधिशोथ (Rheumatoid Arthritis) के लिए कार्टिसोन (Cortisone ACTH) नामक एक दूसरी उत्तम औषधि भी निकल आई है। किन्तु इनसे केवल लक्षणों का ही शमन होता है। वास्तव में व्याधि को निर्मूल करने में यह बिल्कुल सहायक नहीं होते। इसके लिए ५ से १० मि० ग्रा० की मात्रा से प्रारम्भ करके ५० से १०० मि० ग्रा० तक मात्रा बढ़ाई जाती है। किन्तु १ मात्रा ०·५ ग्राम (८ ग्रेन) से अधिक किसी भी हालत में नहीं होनी चाहिए। **औषधि का प्रयोग सप्ताह में एक बार पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा किया जाता है।** सकल मात्रा (Total dose) १ ग्राम हो जाने पर ३ महीने के लिए चिकित्साक्रम बन्द कर देनी चाहिए। इस प्रकार पूर्णतः रोगनिवृत्ति के लिए इस प्रकार के २ या ३ चिकित्साक्रम देने पड़ते हैं। ल्युपस में भी इसी प्रकार औषधि सप्ताह में १ बार पेशीगत या शिरागत मार्ग द्वारा दी जाती है।

प्रयोग-निषेध (Contraindications)—**वृक्क रोग, यकृत् शोफ** (Hepatitis) **एवं वृद्ध रोगियों तथा जिन रोगियों को क्ष-किरण** (Radiation) **का प्रयोग किया गया हो, उनमें स्वर्ण के यौगिकों का व्यवहार बड़ी सतर्कता से करना चाहिए अथवा यथासम्भव नहीं करना चाहिए।**

शोषण तथा उत्सर्ग—स्वर्ण के जलविलेय यौगिक पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त किए जाने पर भी शीघ्रतापूर्वक शोषित हो जाते हैं। इसका शरीर से निस्सरण प्रधानतः वृक्कों द्वारा तथा अल्प मात्रा में मल (Faeces) के साथ भी होता है। इन्जेक्शन के बाद २-४ घंटे तक इसका निस्सरण तेजी से होता है, किन्तु बाद में उत्तरोत्तर यह क्रिया मन्द पड़ती जाती है। इस प्रकार अन्य गुरु धातुओं की भाँति **स्वर्ण में भी संचय की प्रवृत्ति (Cumulative tendency)** पाई जाती है।

विषाक्त प्रभाव—**स्वर्ण के लवण बहुत विषैले होते हैं और इसके चिकित्साक्रम में कभी-भी इनके प्रगट होने की सम्भावना हो सकती है। विषाक्तता होने पर त्वचा में अनेक विकार लक्षित होते हैं, यथा—त्वचा पर जगह-जगह लाली** (Erythema), **खुजली या कभी-कभी शीतपित्त** (पित्ती या ददोड़े urticaria) **तथा तीव्र त्वचाशोथ** (Exfoliative dermatitis) **तक हो सकता है। यकृत में विषाक्त शोथ** (Toxic hepatitis) **तथा श्वेतकायाणुओं की संख्या में कमी तथा घातक रक्ताल्पता** (Aplastic anaemia) **भी हो सकते हैं। वृक्कों की विकृति के कारण**

शुक्लिमेह (एल्ब्युमिन्यूरिया Albuminuria) का भी उपद्रव हो सकता है। इसके अतिरिक्त आमाशय में प्रदाह तथा प्रान्तिक नाड़ीशोथ (Peripheral neuritis) का भी उपद्रव हो सकता है। उक्त उपद्रवों के लक्षित होने पर चिकित्सा फौरन बन्द कर देनी चाहिए।

चिकित्सा—शिरागत केल्सियम् ग्लूकोनेट (१०% बल का विलयन १० सी० सी० की मात्रा में) देना चाहिए अथवा सोडियम् थायोसल्फेट मुख द्वारा या आवश्यकता होने पर शिरागत इन्जेक्शन द्वारा भी दे सकते हैं। अब ऐसी अवस्था में डाइमर्कैप्रोल या "बाल BAL" का प्रयोग किया जाता है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ ऑरोथायोमलेटिस Injectio aurothiomalatis (Inj. Aurothiomal.), B. P.—ले०; इंजेक्शन ऑव ऑरोथायोमलेट (Injection of Aurothiomalate), मायोक्राइसिन इंजेक्शन Myocrisin Injecion—अं०; मायोक्राइसिन की सुई या इंजेक्शन—हिं०।

मात्रा—मायोक्राइसिन की भाँति। यह पेशीगतसूचिकाभरण द्वारा प्रयुक्त होता है। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो १ सी० सी० में १० मि० ग्रा० (⅙ ग्रेन) के बल का विलयन देना चाहिए।

प्रोमिन Promin

पर्याय—प्रोमेनाइड Promanide।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह P–P' Diamino diphenyl—Sulphone—N–N'—di. dextrose sulphonate का सोडियम् लवण होता है। यह सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में सुविलेय (Freely soluble) होता है।

मात्रा—२ से ५ ग्राम (३० से ७५ ग्रेन) शिरागतसूचिकाभरण द्वारा।

इसका ४०% बल का सॉल्यूशन—५ से १२½ मि० लि० (सी० सी०)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर प्रोमिन बहुत विषैला प्रभाव करता है; अतएव चिकित्सा-व्यवहार की दृष्टि से इस रूप में इसका प्रयोग नहीं किया जाता है। कुष्ट (Leprosy) में इसका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ इसका व्यवहार शिरागत इन्जेक्शन द्वारा (Intravenously) किया जाता है। चिकित्साक्रम १ ग्राम की दैनिक मात्रा से शुरु करते हैं और प्रति सप्ताह एक-एक ग्राम बढ़ाते हैं। इस प्रकार मात्रा बढ़ाते हुए ५ ग्राम तक बढ़ाई जाती है। सप्ताह में ६ दिन तक प्रतिदिन एक इंजेक्शन दिया जाता है। इस प्रकार आवश्यकतानुसार २ सप्ताह से ४ माह तक चिकित्साक्रम चालू रखने के बाद २ सप्ताह के लिए बन्द कर देते हैं। विश्रामकाल के बाद पुनः जैसी आवश्यकता हो २-३ वर्ष तक चिकित्सा को चलाना पड़ता है।

कुष्ठ एवं यक्ष्माजन्य व्रणों एवं नाड़ीव्रणों (Abscesses and sinuses) में इसका स्थानिक प्रयोग भी किया जाता है। इसके लिए इसके ५% बल का जेली (5 Percent jelly) व्यवहृत होता है।

डाएसोन Diasone

पर्याय—Diasone-sodium; सल्फॉक्सोन-सोडियम् Sulfoxone Sodium.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह डाइसोडियम् फार्मेल्डिहाइड सल्फॉक्सिलेट डाइएमिनोडाइफेनिल-सल्फोन (Disodium Formaldehyde sulfoxylate Diaminodiphenyl sulphone) होता है। इसका हल्के पीले रंग का चूर्ण होता है, जो जल में नाममात्र को घुलता (Sparingly soluble) है।

मात्रा—प्रारम्भिक मात्रा (Initial Dose)—०·३ ग्राम (४ ग्रेन) से प्रारम्भ कर उत्तरोत्तर मात्रा बढ़ाकर ०·९ ग्राम (१४ ग्रेन) तक लाई जाती है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

डाएसोन भी सल्फोन समुदाय की औषधि है, जिसका प्रयोग कुष्ठ की चिकित्सा में किया जाता है। मौखिक चिकित्सा-क्रम ०·३ ग्राम (५ ग्रेन) से प्रारम्भ की जाती है। ऐसी १ मात्रा प्रतिदिन एक दिन के अन्तर से सप्ताह में ३ बार दी जाती है। औषधि केप्स्यूल में रखकर दी जाती है। मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ाकर ६ केप्स्यूल्स प्रतिदिन तक दी जाती है। तीन सप्ताह के बाद १ सप्ताह के लिए औषधि बन्द कर दी जाती है। इस प्रकार रोगी में सह्यता हो जाने पर आवश्यकतानुसार मात्रा और भी बढ़ाई जा सकती है। दूसरा चिकित्साक्रम इस प्रकार है:— ५ ग्रेन औषधि दिन में १ बार एक सप्ताह तक; दूसरे सप्ताह में उक्त मात्रा प्रतिदिन २ बार तथा इसके बाद उक्त मात्रा प्रतिदिन ३ बार दी जाती है।

प्रॉमिजोल Promizole

वर्णन—यह रासायनिक दृष्टि से 4–Aminophenyl–२'–Aminothiazol–5'–sulphone होता है। यह जल में तो बहुत कम घुलता है, किन्तु डायल्यूट एसिड्स तथा ऑर्गेनिक सॉल्वेंट्स (Organic solvents) में अच्छी तरह घुल जाता है।

प्रयोग।

प्रॉमिजोल रासायनिक दृष्टि से डाएसोन से बहुत-कुछ मिलता-जुलता है। यह भी कुष्ठ की चिकित्सा में बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। यह प्रोमिन तथा डाएसोन दोनों की अपेक्षा कम विषैला होता है। अतएव औषधीय प्रयोग के लिए उनकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त है। इस चिकित्सा-क्रम से ६ माह में काफी लाभ होता है। प्रारम्भ में चिकित्साक्रम ०·५ ग्राम (८ ग्रेन) की दैनिक मात्रा (Daily dose) से शुरू किया जाता है। उक्त मात्रा दिन में तीन बार में (तीन मात्राओं में विभक्त करके) दी जाती है। मौखिक प्रयोग के लिए इसकी टॅबलेट्स (Tablets) या टिकियाँ आती हैं। इस तरह रोगी को कतिपय सप्ताह तक इसी चिकित्साक्रम पर रखा जाता है। इसके बाद मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ाई जाती है और आवश्यकतानुसार ५ से ८ ग्राम तक लाई जाती है। बालकों को उक्त मात्रा १ से ४ ग्राम तक होती है, जिसको कई मात्राओं में विभाजित कर देते हैं।

डेप्सोनम् Dapsonum (Dapson.), B. P. C. (ले०)। (डेप्सोन Dapsone—अं०) या डी० डी० एस्०.

रासायनिक संकेत : $C_{12}H_{12}O_2N_2S$.

पर्याय—डाइएमिनो-डाइफेनिल-सल्फोन Diamino-diphenyl-sulphone; D. D. S.

प्राप्ति-साधन–डेप्सोन रासायनिक दृष्टि से Di (4—aminophenyl-) Sulphone होता है। यह दो रूप में प्राप्त होता है, एक १७८·५° पर तथा दूसरा १८०·५° पर पिघलता है।

वर्णन—डेप्सोन या डी० डी० एस० सफेद रंग का या क्रीम रंग लिए हुए सफेद रंग का गंधहीन चूर्ण होता है, जो जल में प्रायः नहीं घुलता (Insoluble), किन्तु अल्कोहल्, एसिटोन तथा डायल्यूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड में घुलनशील होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

डेप्सोन भी कुष्ठ में व्यहृत होनेवाली सल्फोन समुदाय की औषधियों में से एक है। यह कुष्ठ के जीवाणुओं पर जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) प्रभाव करता है। मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आंतों से अच्छी प्रकार शोषित होता है और इसका उत्सर्ग भी धीरे-धीरे होता है। अतएव यह शरीरगत धातुओं में काफी समय तक स्थिर रहता है। अतएव डेप्सोन कुष्ठ (Lepromatous and tuberculoid leprosy) की चिकित्सा के लिए एक उत्तम औषधि है।

विषाक्तता (Toxicity)—कभी-कभी डेप्सोन के चिकित्साक्रम से अनेक उपद्रव भी लक्षित होते हैं, जिनका ध्यान चिकित्सक को रखना चाहिए। त्वचागत विकृति (Drug dermatitis), कुष्ठीय प्रतिक्रिया (Lepra reaction), नाड़ीविकृति (Leprous neuritis), तारामण्डलशोथ (Iritis) आदि विकृतियाँ लक्षित होती हैं। इसके अतिरिक्त कभी-कभी मात्रातियोग (Overdosage) के कारण यकृत्-शोफ (Hepatitis) तथा मनोविकृति (Psychoses) तथा रक्ताल्पता (Hypochromic anaemia) आदि उपद्रव भी होते हैं। चिकित्सा—ऐसी स्थिति में औषधि फौरन बन्द कर देनी चाहिए। इससे उपद्रवों की शान्ति हो जाती है। त्वचागत विकृति की शान्ति के लिए एन्टीहिस्टामिनिक समुदाय की औषधियों का सेवन करना चाहिए। रक्ताल्पता के लिए पाण्डुहर लौह के यौगिक तथा विटामिन "बी" के यौगिक देने चाहिए।

मात्रा तथा सेवन-विधि—मुख द्वारा सेवन किये जाने पर भी इसका शोषण काफी मात्रा में हो जाता है; अतएव प्रायः इसका मौखिक प्रयोग (Orally) ही किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसको पेशीगत या अधस्त्वक् इन्जेक्शन (Intramuscularly or Subcutaneously) भी देते हैं। इसके लिए मूँगफली के तेल (Arachis oil) में बनाया हुआ २५% बल का निलम्बन (Suspension) प्रयुक्त किया जाता है। इसकी ०·५ से १·२५ ग्राम मात्रा सप्ताह में २ बार दी जाती है।

मौखिक सेवन के लिए २५ मि० ग्रा० से मात्रा प्रारंभ करते हैं। सप्ताह में ६ दिन औषधि दी जाती है। इस मात्रा को उत्तरोत्तर बढ़ाते हुए ४-६ सप्ताह के बाद १०० मि० ग्रा० तक लाया जा सकता है। परन्तु किसी भी हालत में दैनिक मात्रा २०० मि० ग्रा० से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि सप्ताह में २ दिन के चिकित्साक्रम (Bi-weekly treatment) से औषधि देनी हो तो १०० मि० ग्रा० से मात्रा शुरू करें। १५ दिन के बाद १०० मि० ग्रा० और बढ़ावें। इस प्रकार अधिकतम मात्रा ३०० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार दी जाती है। चूँकि इसका शोषण शीघ्रतापूर्वक होता है और उत्सर्ग धीरे-धीरे होता है, इसलिए विषाक्तता के निवारण के लिए औषधि का प्रयोग अपेक्षाकृत अल्प मात्राओं से ही प्रारम्भ करना श्रेयस्कर है।

(योग)

१—टॅबेली डेप्सोनाइ Tabellae Dapsoni (Tab. Dapson.), B. P. C.—लै०; टॅबलेट्स ऑव डेप्सोन Tablets of Dapsone, डेप्सोन टॅबलेट्स Dapsone Tablets—अं०; डेप्सोन

की टिकिया—हिं० । यदि प्रति टिकिया मात्रा का निर्देश न हो तो ०·१ ग्राम की टिकिया देनी चाहिऐ ।

२—इन्जेक्शिओ डेप्सोनाइ Injectio Dapsoni (Inj. Dapson.), B. P. C. —ले०; इंजेक्शन ऑव डेप्सोन; डेप्सोन इंजेक्शन—अं० । डेप्सोन की सूई या इंजेक्शन—हिं० ।

व्यावसायिक योगः—

(१) एव्लोसल्फोन Avlosulfon (I. C. I.)—यह पाउडर (१०० ग्राम की शीशियाँ) तथा टॅबलेट्स् (१½ ग्रेन या ०·१ ग्राम की १०० तथा १००० टिकियों की शीशियाँ) आती हैं । २०% तैलीय निलम्बन (Oily Suspension) का अधस्त्वक् सूचिकाभरण भी किया जाता है ।

(२) क्रायोसल्फोन Cryosulfon (D. D. S.)—I. C. I.—(१) गोलियाँ तथा (२) इन्जेक्शन ।

सोलेप्सोन Solapsone, B. P. C. (सोलेप्सोनम् Solapsonum (Solapson)—ले०)

रासायनिक संकेत : $C_{30}H_{28}O_{14}N_2S_5Na_4$.

पर्याय—सल्फेट्रॉन Sulphetrone ।

प्राप्ति-साधन—सोलेप्सोन रासायनिक दृष्टि से 4 : 4′—di—[3-phenyl—1 : 3-disulphopropylamino] diphenyl sulphone का हाइड्रेटेड टेट्रासोडियम् साल्ट (Hydrated tetrasodium salt) होता है ।

वर्णन—यह प्रायः सफेद रंगका विरूपिक चूर्ण (Amorphous powder) होता है । विलेयता—यह जल में अच्छी तरह घुल जाता है ।

मात्रा—(१) १½ से ३ ग्राम (२३ से ४५ ग्रेन) प्रतिदिन ; (२) १ से २½ ग्राम (१५ से ४० ग्रेन) सप्ताह में २ बार अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर शोषणोपरान्त यह डेप्सोन के रूप में वियोजित होता है । इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त होने पर मानोसब्सीच्युटेड सल्फोन (Mono-Substituted Sulphone) के रूप में वियोजित होता है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव कुष्ठ के दण्डाणुओं (M. leprae) पर होता है । अतः कुष्ठ की चिकित्सा के लिए यह एक उपयोगी औषधि है । मौखिक सेवन के लिए ८ ग्रेन (या ½ ग्राम) से मात्रा प्रारम्भ की जाती है । ऐसी प्रतिदिन ३ मात्रायें दी जाती हैं । उत्तरोत्तर यह मात्रा ३ ग्राम (४५ ग्रेन) प्रतिदिन तक बढ़ाई जाती है । परन्तु मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर औषधि का शोषण काफी मात्रा में नहीं होता । अतएव मौखिक सेवन के लिए यह बहुत उपयुक्त नहीं है ।

सोलेप्सोन प्रायः इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त किया जाता है । इसके लिए ब्रिटिश फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स में उल्लिखित "Injection of Solapsone Strong" एक उपयुक्त यौगिक है । प्रारम्भ में इसकी १ सी० सी० (१ मि० लि०) मात्रा सप्ताह में २ बार दी जाती है । प्रति सप्ताह १ सी० सी० मात्रा बढ़ाई जाती है । इस प्रकार अधिकतम वृद्धि ४–५ सी० सी० तक की जाती है । उक्त मात्रायें सप्ताह में २ बार दी जाती हैं ।

(योग)

१—टॅबेली सोलेप्सोनाइ Tabellae Solapsoni (Tab. Solapson.), B. P. C.—ले०; टॅबलेट्स ऑव सोलेप्सोन या सोलेप्सोन टॅबलेट्स—अं०; सोलप्सोन की टिकिया—हिं० ।

मात्रा—(सोलेप्सोन) १½ से ३ ग्राम (२३ से ४५ ग्रेन) प्रतिदिन । यदि प्रति टिकिया सोलप्सन की मात्रा का निर्देश न हो तो ½ ग्राम सोलप्सोन की टिकिया देनी चाहिए ।

२—इन्जेक्शिओ सोलेप्सोनाइ फॉर्टिस Injectio Solapsoni Fortis (Inj. Solapson. Fort.)—B. P. C.—ले०; इंजेक्शन ऑव सोलेप्सोन (स्ट्रांग) Injection of solapsone, strong; स्ट्रांग इंजेक्शन ऑव सोलेप्सोन Strong Injection of solapsone—अं० ।

मात्रा—२ से ५ मि० लि० (सी० सी०) सप्ताह में २ बार अधस्त्वक् या पेशीगत ।

(वानस्पतिक कुष्ठ-हर औषधियाँ)

ओलियम् हिड्नोकार्पाइ (हिड्नोकार्पस ऑयल), I.P., B.P.

(तुवरक का तेल)

Family : Flacourtiaceae (फ्लेकोर्शिएसी-प्राचीनामलककुल)

नाम—ओलियम् हिड्नोकार्पाइ Oleum Hydnocarpi (Ol. Hydnocarp.)—ले०; हिड्नोकार्पस ऑयल Hydnocarpus Oil—अं०; तुवरक तैल—सं०; कवा का तेल, चालमुगरा का तेल—हिं० ।

प्राप्तिसाधन—हिड्नोकार्पस ऑयल, जमा हुआ एक स्थिर तेल (Fatty oil) होता है, जो हिड्नोकार्पस वाइटिआना Hydnocarpus wightiana Blume नामक वृक्ष के ताजे पके हुए बीजों से प्रपीडन (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है। इण्डिअन फॉर्माकोपिआ (I, P.) के अनुसार इसकी दूसरी प्रजाति हिड्नोकार्पस लॉरफोलिआ (H. laurifolia (Dennst.) Sleumer) से भी प्राप्त किया जाता है तथा इन दोनों प्रजातियों के अतिरिक्त यदि अन्य प्रजातियों से प्राप्त तैल स्वरूप एवं भौतिक गुणों (Physical properties) में उपर्युक्त तैल से मिलता-जुलता हो तो इसका भी प्रयोग 'हिड्नोकार्पस ऑयल' के नाम से किया जा सकता है ।

नाम—तुवरक, कटुकपित्थ-सं०; कडुकवीठ, कडुकवठी-म०; गरुडफल-क०; मरुत्रापि, निरडिमुट्टु-ता०; अडविबादामु-ते०; कोडि, मरवेट्टि, नीर्वेट्टि-मलया० ।

उत्पत्ति-स्थान—दक्षिण भारत के कोंकण, मलाबार आदि प्रान्तों में प्रचुरता से स्वयंजात (wild) एवं लगाया हुआ (Cultivated) दोनों रूपों में पाया जाता है ।

वर्णन—हिड्नोकार्पस ऑयल या तुवरक का तेल प्रायः हल्के पीले रंग का (Yellowish) या पीले रंगका (Yellow) अथवा भूरापन लिए पीले रंग का (Brownish Yellow) होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है तथा स्वाद में किंचित् कड़वा (Acrid) होता है। २० अंश या इससे कम तापक्रम पर यह मटमैले सफेद रंग का घी के समान जमे हुए रूप में प्राप्त होता है।

रासायनिक संघटन—इसमें चालमूगरिक एसिड ($C_{18}H_{32}O_2$: 26·9%) एवं हिड्नोकार्पिक एसिड (Hydnocarpic acid : $C_{16}H_{28}O_2$: ४८·६%) के ग्लिसराइड्स (Glycerides) पाये

जाते हैं। इसके अतिरिक्त पामिटिक एसिड तथा ओलिईक एसिड एवं अन्य मेदसाम्लों (फैटी एसिड्स Fatty acids) के भी ग्लिसराइड्स पाये जाते हैं।

मात्रा (I. P. Dose)—०·३ से १ मि० लि० या ५ से १५ बूँद या मिनम्, जो उत्तरोत्तर बढ़ाकर ४ मि० लि० या ६० बूंद (मिनम्) अथवा १ ड्राम तक जाई जा सकती है। अधस्त्वक् तथा पेशीगत इंजेक्शन के लिए २ मि० लि० या ३० बूंद (२ सी० सी०) से मात्रा प्रारम्भ कर ५ मि० लि० या ५ सी० सी० तक ले जाते हैं।

वक्तव्य—यदि इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त करना हो, तो सादे तेल का प्रयोग नहीं करना चाहिए। वल्कि इंजेक्शन के लिए प्रयुक्त संस्कारित हिड्नोकार्पस ऑयल अर्थात् 'इंजेक्शन ऑव हिड्नोकार्पस ऑयल Injection of Hydnocarpus Oil' का व्यवहार करना चाहिए।

ओलियम हिड्नोकार्पाइ ईथिलिकम् Oleum Hydnocarpi Aethylicum (Ol. Hydnocarp. Aeth.), I. P., B. P.—ले०; एथिल ईस्टर्स ऑव हिड्नोकार्पस् ऑयल (Ethyl esters of Hydnocarpus Oil)।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से इसमें प्रधानतः चालमूग्रिक एवं हिड्नोकार्पिक एसिड्स (Chaulmoogric and hydnocarpic acids) के एथिल इस्टर्स (Ethyl esters) होते हैं। जिनको प्राप्त करने के लिए हिड्नोकार्पस ऑयल में एथिल अल्कोहल् या व्यावसायिक अल्कोहल् (Industrial alcohol) अर्थात् मेथिलेटेड स्प्रिट मिलाकर हिड्नोकार्पस ऑयल के मेदूसाम्लों (Fatty acids) का ईस्टरीकरण (esterification) किया जाता है। यह रंगहीन या हल्की पीली आभायुक्त तैल होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है तथा स्वाद में हल्का कड़वा (Acrid) होता है। विलेयता—अल्कोहल् (९०%) में घुल जाता (soluble) है; सालवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा कार्बन-डाइ-सल्फाइड में भी मिश्रित हो जाता (Miscible) है। संरक्षण (storage)—एथिल ईस्टर्स ऑव हिड्नोकार्पस ऑयल का संरक्षण अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करके, इनका संग्रह ठण्डी जगह में करना चाहिए तथा प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—०·३ से १ मि० लि० (५ से १५ मिनम् या बूँद) से उत्तरोत्तर बढ़ाकर ४ मि० लि० (६० मिनम् या बूँद) अथवा १ ड्राम तक। इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करने के लिए इसका विशिष्ट योग 'इंजेक्शन ऑव एथिल ईस्टर्स ऑव हिड्नोकार्पस ऑयल' का व्यवहार करना चाहिए।

ओलियम् चालमूग्री Oleum Chaulmoograe (Ol. Chaulmoog.), I. P., B. P. C.—ले०; चालमूग्रा ऑयल (Chaulmoogra Oil)—अं०।

पर्याय—गाइनोकॉर्डिआ ऑयल Gynocardia Oil; चालमोगरा का तेल–हिं०।

प्राप्ति-साधन—चालमोगरे का तेल हिड्नोकार्पस् कुर्जियाइ (Hydnocarpus kurzii (King) warb. (टेरेक्टोजनस कुर्जियाइ Taraktogenos Kurzii King.) या हिड्नोकार्पस् की अन्य प्रजातियों के ताजे पके हुए बीजों से प्रपीड़न (Expression) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

उत्पत्तिस्थान—पूर्वी बंगाल, आसाम एवं बर्मा। पूर्वी बंगाल में सिलहट एवं चटगांव के वन्य-प्रदेशों में इसके स्वयंजात वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं। आसाम में भी प्रचुरता से चालमोगरा के वन्य वृक्ष उपलब्ध होते हैं।

वक्तव्य—इसी कुल की एक वनस्पति गायनोकार्डिआ ओडोरेटा Gynocardia odorata, R.Br. Family Flacourtiaceae) है, जो स्वरूपतः चालमोगरे के असली वृक्षों से बहुत-कुछ मिलता जुलता है और जहाँ जहाँ चालमूगरा के वृक्ष पाये जाते हैं, वहीं वहीं यह भी पाया जाता है। इसका उपयोग व्यावसायिक लोग अथवा संग्रहकर्ता चालमोगरे के मिलावट (Adulteration) के लिए करते हैं।

इतिहास—चालमोगरे का तेल प्रधानतः प्राचीनामलककुल की उपर्युक्त दोनों वृक्षों से प्राप्त किया जाता है। इनमें 'हिड्नोकार्पस् वाइटिआना' दक्षिण भारत में होता है, जो हिड्नोकार्पस ऑयल का प्रधान साधन है। चालमोगरे का वृक्ष उत्तर भारत के आसाम, बंगाल आदि प्रान्तों में होता है। कुष्ठ (Leprosy)रोग की चिकित्सा में चालमोगरे का व्यवहार अति प्राचीन काल से होता आ रहा है। सुश्रुतसंहिता (चि० अ० १४) में कुष्ठरोग के व्यवहार के लिए इसका नानाविध उल्लेख मिलता है। इसके बाद बौद्ध साहित्य एवं फारसी के प्रसिद्ध निघण्टु ग्रंथ (मध्यकालीन) 'मख्जनुलअद्विया' में भी इसका वर्णन किया गया है। चालमूगरा शब्द का व्यवहार बाद में स्थानिक लोगों द्वारा हुआ। आयुर्वेदीय साहित्य में इनके लिए 'तुवरक' शब्द का ही व्यवहार है। अतएव पृथक् रूप से समझने के लिए इनको 'उत्तर भारतीय तुवरक' एवं 'दक्षिण भारतीय तुवरक' ये दो संज्ञायें दी जा सकती हैं।

वर्णन—चालमोगरा एक जमनेवाला स्थिर तैल (Fatty oil) होता है, जो २५° तापक्रम पर पिघल कर द्रव-तैल के रूप में परिणत हो जाता है; तथा इससे कम तापक्रम पर जमी हुई अवस्था में प्राप्त होता है। गर्मियों में यह तेल द्रवावस्था में तथा जाड़े के दिनों में सर्दी के अनुसार जमी हुई या कुछ द्रव एवं कुछ जमे हुए रूप में मिलता है। द्रवावस्था में पीले रंग का अथवा भूरापन लिए पीले रंग का द्रव तैल होता है। जमी हुई अवस्था में मटमैले सफेद रंग का अर्ध-घन (Soft solid) होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है, जो बहुत-कुछ बिगड़े हुए मक्खन (Rancid butter) की भाँति होती है। स्वाद में किंचित् कटु (Acrid) होता है। विलेयता—अल्कोहल् (९० %) में तो थोड़ा-थोड़ा घुलता (Sparingly soluble); किन्तु बेंजीन, क्लोरोफॉर्म तथा ईथर में घुल जाता है।

रासायनिक संघटन—हिड्नोकर्पस ऑयल की भाँति।

मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०.३ से १ मि० लि०) उत्तरोत्तर बढ़ाकर ६० मिनम् (बूँद) या ४ मि० लि० या १ ड्राम तक। २ सी० सी० (३० बूँद या मिनम्) से ५ सी० सी० (७५ बूँद या मिनम्) तक अधस्त्वक् (Subcutaneous) या पेशीगत (Intramuscular) इंजेक्शन द्वारा।

गुण-कर्म।

बाह्यतः त्वचा पर चालमोगरा का तेल मलने से यह स्थानिक रक्तप्रवाह एवं नाड़ियों पर कुछ उत्तेजक (Stimulant) प्रभाव करता है। यदि अधिक देर तक यह क्रिया की जाय तो रक्तिमोत्पादक प्रभाव (Rubefacient) होता है।

आभ्यन्तर प्रयोग से हिडनोकार्पस् तेल या चालमोगरे का तेल आमाशयान्त्रप्रणाली पर क्षोभक (Irritant) प्रभाव करते हैं। यह कुष्ठ (Leprosy) की रामबाण औषधि माना जाता है। कुष्ठ के जीवाणुओं पर इसकी क्रिया किस प्रकार होती है, इसके समाधान में

विद्वानों ने विभिन्न मत उपस्थित किए हैं। कुछ लोगों का कहना है, कि हिडनोकार्पस कुष्ठ के अम्ल-साही जीवाणुओं (Acid-fast bacilli) पर प्रत्यक्ष घातक (Bactericidal) प्रभाव करता है। अन्य विद्वानों का मत है, कि यह रक्त में मेदपाची (Lipase) घटकों को बढ़ाता है, जिससे कुष्ठ के जीवाणुओं का मेदीय आवरण (Waxy or fatty Coating) गल जाता है, जिसके परिणामस्वरूप उक्त जीवाणुओं का विनाश सुलभ हो जाता है।

विषाक्त प्रभाव—(१) तात्कालिक प्रभाव (Immediate effects)—कभी-कभी इसके सेवन के उपरान्त आँखों के सामने अँधेरा सा लगना तथा सीने में सहसा दर्द एवं जकड़न का अनुभव होता तथा दम-घुटने-सा मालूम होता है। (२) स्थानिक प्रभाव—तैलीय स्वरूप में होने के कारण कभी-कभी इंजेक्शन के स्थान पर दर्द होना या शोषण ठीक न होने से गुत्थी बन जाना (Induration) एवं कभी-कभी विद्रधि (Abscess) या फोड़ा भी बन जाता है। प्रायः अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा इन उपद्रवों की आशंका अधिक रहती है। (३) सार्वदैहिक प्रभाव—कभी-कभी कुष्ठीय-प्रतिक्रिया (Laprous reaction) होती है, जिसके परिणामस्वरूप ज्वर होना, त्वचा पर विस्फोट (Eruption) निकलना, शाखा की नाड़ियों में दर्द (Neuritis) होना, जोड़ों में सूजन हो आना तथा नेत्र के तारामण्डल में शोथ (Iritis) हो जाना आदि उपद्रव लक्षित होते हैं। इसके अतिरिक्त शिरदर्द, अनुत्साह, निद्रानाश, क्षुधानाश तथा उदर में पीड़ा, ज्वर एवं सारे शरीर में गर्मी मालूम होना आदि सांस्थानिक उपद्रव भी शुरू होते हैं।

आमयिक प्रयोग।

सल्फोन समुदाय की औषधियों के आविष्कार के पूर्व हिड्नोकार्पस तैल या चालमोगरा का प्रयोग एक समान विशिष्ट औषधि के रूप में किया जाता था। एतदर्थ सादे तेल (Crude-oil) का व्यवहार तो स्थानिक प्रयोग के लिए चकत्तों (Patches) पर मालिश के लिए तथा सार्वदैहिक प्रभाव के लिए हिड्नोकार्पिक एसिड एवं चालमूग्रिक एसिड के एथिल ईस्टर्स ही व्यवहृत किए जाते हैं। क्योंकि सादे तेल के व्यवहार से नाना प्रकार के उपद्रव होते थे। इस रूप में इनका सेवन मुखद्वारा तथा अधस्त्वक्, पेशीगत एवं शिरागत इंजेक्शन द्वारा होता है। इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त करने के लिए उपर्युक्त मेदसाम्लों (Fatty acids) के सोडियम् लवण एवं ईस्टर्स अधिक उपयुक्त होते हैं। इंजेक्शन के लिए इसका ई० सी० सी० ओ० (E. C. C. O.) योग बहुत अच्छा है। इसमें निम्न घटक होते हैं:—हिड्नोकार्पस ऑयलके एथिल ईस्टर्स १ मि० लि० (१ सी० सी०), कर्पूर १ ग्राम, क्रियोजोट (यौबार परिस्रुत) १ मि० लि०, ज़ैतून का तेल २·५ मि० लि० (२½ सी० सी०)। इस मिश्रण का प्रारंभ ०·२५ मि० लि० (या ¼ सी० सी०) से किया जाता है। इंजेक्शन्स सप्ताह में २ बार दिए जाते हैं। प्रत्येक बार मात्रा ¼ सी० सी० बढ़ाकर २ से ५ मि० लि० तक लाई जाती है। इस प्रकार ५-६ महीने के चिकित्साक्रम से प्रायः सभी स्थानिक लक्षण नष्ट होते तथा रोगी को सार्वदैहिक लाभका अनुभव होता है।

अब कुष्ठ की चिकित्सा में प्रधान औषधि के रूप में तो सल्फोन्स का व्यवहार किया जाता है और हिडनोकार्पस तथा चालमूगरा का चिकित्सा-क्रम सहायक औषधि के रूप में दिया जाता है। किन्तु केवल सल्फोन्स के प्रयोग से कुष्ठार्बुदों (Lepromate) एवं कुष्ठज गिल्थियों

(Indurated areas) का विलयन नहीं होता। इसके लिए अब भी हिड्नोकार्पस एवं चालमूगरा ही विशिष्ट औषधि हैं।

सेवनविधि—हिड्नोकार्पस एवं चालमोगरा ऑयल का प्रधान प्रयोग अब कुष्ठजन्य त्वचा विकृतियों के लिए किया जाता है। इसके लिए चकत्तों के क्षेत्र में अधस्त्वक् सूचिकाभरण किया जाता है और मात्रा अधिक होने पर पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा औषधि का प्रयोग करते हैं। १/२ सी० सी० से मात्रा प्रारम्भ करते हैं। इन्जेक्शन सप्ताह में १ बार दिया जाता है। प्रति सप्ताह इतनी ही मात्रा बढ़ाकर उत्तरोत्तर १० से १५ सी० सी० तक मात्रा लाई जाती है। चकत्तों पर त्वचा के नीचे सूई को विभिन्न दिशाओं में घुमा-घुमाकर दवा प्रविष्ट करते हैं। सुनबहरी के चकत्तों (Anaesthetic patches) पर त्वचान्तरगत सूचिकाभरण (Intradermal injection) भी किया जाता है। इसके लिए विशिष्ट प्रकार की सूई (Intradermal needle) आती है। पेशी में इंजेक्शन देने के लिए नितम्ब-प्रदेश अधिक उपयुक्त होता है। यहाँ इन्जेक्शन देते समय दो बातों का ध्यान रखना चाहिए, एक तो गृध्रसी नाड़ी (Sciatic nerve) में आघात न पहुँचे, दूसरे दवा प्रविष्ट करने के पूर्व पिस्टन को जरा ऊपर खींचकर निश्चय कर लेना चाहिए कि सूई गलती से शिरा (Vein) में तो नहीं प्रविष्ट हो गई है। ऐसा होने पर पिस्टन बाहर की ओर जरा खींचने पर सिरिंज के अन्दर रक्त आने लगेगा।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ ओलियाइ हिड्नोकार्पाइ Injectio Olei Hydnocarpi (Inj. Ol. Hydnocarp.), I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव हिड्नोकार्पस ऑयल (Injection of Hydnocarpus oil)—अं०। हिड्नोकार्पस का इंजेक्शन या सूई—हिं०।

मात्रा—२ सी० सी० (३० मिनम् या २ मि० लि०) से ५ सी० सी० (७५ मिनम्) अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

२—इन्जेक्शिओ ओलियाइ हिड्नोकार्पाई ईथिलिकाइ Injectio Olei Hydnocarpi Aethylici (Inj. Ol. Hydnocarp. Aethyl.), I.P.,B.P.—ले०; इंजेक्शन ऑव एथिलेस्टर्स ऑव हिड्नोकार्पस ऑयल (Injection of Ethylesters of Hydnocarpus Oil)—अं०।

मात्रा—२ सी० सी० (३० मिनम् या २ मि० लि०) से ५ सी० सी० (७५ मिनम् या ५ मि० लि०) तक अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण (इंजेक्शन) द्वारा।

(नान्-ऑफिशल योग)

१—सोडियाइ हिड्नोकार्पास Sodii Hydnocarpas—ले०।

पर्याय—एलिपोल (Alepol)।

यह हल्के पीले रंग का चूर्ण होता है, जो रासायनिक दृष्टि से हिड्नोकार्पस ऑयल के कतिपय मेदसाम्लों (Fatty acids) का सोडियम् लवण होता है। इसमें हिड्नोकार्पस तैल की भाँति हल्की गंध पाई जाती है।

मात्रा—६० से २०० मि० ग्रा० (१ से ३ ग्रेन)। इसका ३% बल का सॉल्यूशन अधस्त्वक्, पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा व्यवहृत किया जाता है।

व्यावसायिक योग :—

(१) हिड्नोकार्पस सोप Hydnocarpus soap (Smith Stanistreet & Co.)—साबुन के रूप में स्थानिक प्रयोग किया जाता है।

(२) ल्युकोडर्मा Leucoderma (Bihar Chemical Works, Bhagalpur)—स्थानिक प्रयोग के लिए ।

(३) हिड्नोक्रिसोल Hydnocresol (Dragon)—मुख द्वारा सेवन के लिए ।

सोरेलिई फ्रक्टस् (सोरेलिआ फ्रूट्स), I. P.

Psoraleae Fructus (Psoral. Fruct.)-ले०; Psoralea Fruits—अं०; बाकुची या बावची बीज—हिं० ।

Family : Leguminosae—Papilionaceae.

पर्याय—सोरेलिई सेमिना Psoraleae Semina (Psoral. Sem.), I. P.L.—ले०; सोरेलिया सीड्स (Psoralea Seeds)-अं० । मलाया 'टी' Malaya Tea, बाचंग सीड Bawchang Seed—अं० (I. P. C.) ।

नाम—बाकुची, सोमराजी, अवल्गुजा—सं०; बावची, बकुची—हिं०, म०, गु०; हाकुच—बं०; भावजि—ते०; कार्कोकिल्—मलया०;

प्राप्ति-साधन—सोरेलिया फ्रक्टस् वास्तव में सोरेलिआ कॉरिलिफोलिआ Psoralea Corylifolia Linn. नामक क्षुपजातीय वनस्पति के पक्व फल (Ripe fruits) होते हैं । व्यवहार में बाकुची के इन फलों को 'बाकुची बीज' के नाम से भी पुकारते हैं । इसी लिए इनके लिए कहीं-कहीं अधिकृत रूप से भी 'सोरेलिआ सेमिना या सोरेलिआ सीड्स' नाम ग्रहण कर लिया गया मिलता है ।

उत्पत्ति-स्थान—बाकुची के क्षुप भारतवर्ष के समस्त मैदानी क्षेत्रों में स्वयंजात रूप में प्रचुरता से पाये जाते हैं ।

वर्णन—फल (Fruits or seeds)—बाकुची के (बीज कहे जानेवाले) फल प्रायः ३ मिलिमिटर से ४½ मि० मि० तक लम्बे तथा २ से ३ मिलिमिटर चौड़े तथा रूपरेखा में लम्बगोल-आयताकार (Ovoid-oblong) अथवा सेम के बीज से मिलते-जुलते (Bean-shaped) होते हैं । रंग में ये फल गाढ़े चाकलेट रंग से लेकर प्रायः काले (Almost black) रंग तक के होते हैं । फलका बाह्यावरण (Pericarp) अफल बहुधा बीज के आवरण के साथ लगा हुआ (Adhering to the seed coat) होता है । साधारणतया बाकुची के बीजों को सूंघने से कोई गंध नहीं मालूम पड़ती, किन्तु मुंह में रखकर चबाने से एक तीक्ष्ण सुगंधित तैल (Pungent essential Oil) की सुगधि आती है । स्वाद में तीता, अरुचिकारक एवं कटु या तीक्ष्ण (Acrid) होता है ।

रासायनिक संघटन—(१) दो क्रिस्टलाइन स्वरूप के तत्व सोरालेन (Psoralen) तथा आइसो-सोरालेन (Iso—psoralen), जो तेल में घुलजाते (Oil-sluble) हैं । बाकुची की त्वचाविकृतिनाशक (Antidermatitic) एवं कृमिघ्न क्रिया प्रायः इन्हीं तत्वों के मिश्रण से होती है । इनके अतिरिक्त (२) रेजिन (Resin); (३) एक उत्पत् तैल (Volatile oil) तथा (४) एक स्थिर तैल (Fixed oil) पाया जाता है ।

एप्लिकेशिओ सोरेलिई Applicatio Psoraleae(App. Psoral.), I. P.

—ले०; एप्लिकेशन ऑव सोरेलिआ Appliction of Psoralea, सोरेलिया एप्लिकेशन Psoralea application—अं० ।

पर्याय—लिनिमेंटम् सोरेलिई Linimentum Psoraleae (Lint. Psoral.),

I. P. L.—ले०; सोरेलिआ लिनिमेंट; वावची आयन्टमेंट—अं० । वाकुची प्लेर या वाकुची का तेल—सं०, हिं० ।

वर्णन—इसको प्राप्त करने के लिए ६० नं० की छलनी में छाना हुआ वाकुची का चूर्ण १पौंड लेकर जैतून के तेल में अथवा मूंगफली के तेल में मिलाकर रात भर पड़ा रहने दें। अब इस मिश्रण को टिंचर प्रेस (Tincture press) में डालकर प्रपीड़न द्वारा या पेर कर (Expression) तैल को पृथक् प्राप्त करें । अब एक वर्तन (शीशी) के मुँह पर रूई का फोया रखकर उसपर इस तैल में पुनः इतना जैतून या मूंगफली का तेल मिलायें कि तैयार औषधी २ पौंड की मात्रा में प्राप्त हो । इसका संग्रह अच्छी तरह बंद पात्र में रखकर ठंढी जगह में करना चाहिए ।

गुणकर्म तथा प्रयोग ।

बाकुची का आभ्यन्तरिक प्रयोग करने से कुष्ठ में लाभ होता है । प्राचीन काल से यह कुष्ठ की विशिष्ट औषधि समझी जाती है । बावची आयण्टमेंट का उपयोग श्वित्र (Leucoderma) के चकत्तों पर लगाने के लिए किया जाता है । इससे उस स्थल पर स्थानिक प्रभाव होकर त्वचा का रंग धीरे-धीरे बदल कर स्वाभाविक हो जाता है ।

व्यावसायिक योगः—

(१) ल्युडरमोल Ludermol (Smith Stanistret & Co.) यह वाकुची तैल का योग है, जिसका उपयोग स्थानिक प्रयोग के लिए मालिश के रूप में किया जाता है ।

(२) ल्युडरमोल (इंजेक्शन के लिए Injectable)—इसका क्रमिक मात्राओं में पेशीगत इंजेक्शन किया जाता है ।

(३) ल्युडरमोल आयण्टमेंट (S. S.)—स्थानिक प्रयोग के लिए ।

(४) ल्युडरमोल विद ऑलिव ऑयल Ludermol with olive oil (S. S.)—एम्प्यूल्स ।

अध्याय १२

जीवाणुवृद्धिरोधक (एन्टिसेप्टिक Antiseptics), जीवाणुनाशक (Disinfectants) एवं पराश्रयी कीटनाशक (Parasiticides) द्रव्य।

सामान्य विज्ञानीय परिच्छेद १

प्रकरण १

कुछ द्रव्य या औषधियाँ ऐसी होती हैं, कि जबतक विकारी जीवाणुओं (Micro organisms) से उनका सम्पर्क रहता है, वे जीवाणुओं पर घातक प्रभाव तो नहीं करतीं, किन्तु जब तक उनका सम्पर्क रहता है, जीवाणुओं की आगे वृद्धि नहीं होती। ऐसे द्रव्यों या औषधियों को **जीवाणुवृद्धिरोधक या एन्टिसेप्टिक द्रव्य** (Antiseptics) कहते हैं। अब ऐसे द्रव्यों के लिए बैक्टीरियास्तम्भक या **जीवाणुस्तम्भक** अथवा **बैक्टीरियोस्टेटिक द्रव्य** Bacteriostatics) भी कहते हैं। जो द्रव्य या औषधियाँ औपसर्गिक व्याधिजनक विकारी जीवाणुओं के सम्पर्क में आनेपर उनपर साक्षात् घातक प्रभाव करती हैं, उनको **जीवाणुनाशक** या डिसइन्फेक्टेन्ट्स (Disinfectants) कहते हैं। बैक्टीरियानाशक अथवा तृणाणुनाशक या **बैक्टीरिसाइड** (Bactericide) तथा जिरासियमनाशक या **जर्मिसाइड** (Germicide) शब्दों का प्रयोग भी इसी अर्थ में किया जाता है। त्वचापर पराश्रय करके विभिन्न प्रकार की स्थानिकविकृति पैदा करनेवाले सूक्ष्म कीटों पर घातक प्रभाव करनेवाले द्रव्यों को **प्रतिपराश्रयी** या एन्टीपैराशिटिक द्रव्य (Antiparasitics) वा **पराश्रयीकीटनाशक** (पैराशिटिसाइड Parasiticides) कहते हैं। यहाँ स्मरण रखने की बात है कि प्रायः जीवाणुनाशक या डिसइन्फेक्टेन्ट द्रव्य मन्दबल स्थिति में (Indilution) जीवाणुओं पर घातक प्रभाव करने के बजाय एन्टिसेप्टिक प्रभाव ही करते हैं। कुछ औषधियाँ ऐसी होती हैं, कि उनकी उक्त जीवाणुनाशक क्रिया सार्वदैहिक होती है। ऐसे द्रव्यों को **सार्वदैहिक या सामान्य कायिक उपसर्गनाशक औषधियाँ** (Systemic anti-infectives) कहते हैं। सल्फोनामाइड समुदाय के यौगिक एवं पेनिसिलिन आदि एन्टीबायोटिक समुदाय की औषधियाँ इसी प्रकार की हैं। कतिपय द्रव्य ऐसे भी हो सकते हैं, जो शरीर के किसी संस्थान विशेष पर प्रत्यक्षतया सम्पर्क में आनेपर अथवा शोषणोपरान्त उस मार्ग से उत्सर्गित होने के कारण एन्टीसेप्टिक अथवा जीवाणुनाशक प्रभाव करते हैं। जैसे कुछ द्रव्य मुखद्वारा सेवन किए जाने पर अपना एन्टिसेप्टिक प्रभाव विशिष्ट रूप से आंतों पर करते हैं। ऐसे द्रव्यों को "आंतोंपर एन्टिसेप्टिक प्रभाव करनेवाली

औषधियाँ Intestinal Antiseptics" करके पृथक् नाम दिया जा सकता है। इसी प्रकार अन्य कतिपय औषधियों का एन्टिसेप्टिक प्रभाव मूत्रमार्ग पर (Urinary antiseptics) लक्षित होता है। अन्य कतिपय द्रव्यों का श्वसनमार्ग पर (Pulmonary antiseptics) होता है। इसी प्रकार अन्य अंगसमुदाय एवं सांस्थानिक मार्गों के लिए भी समझना चाहिए।

जीवाणुनाशक द्रव्यों के बारे में एक प्रश्न उठता है, कि विकारी जीवाणुओं पर घातक प्रभाव करने के साथ-साथ शारीरिक धातुओं (Tissues पर भी न्यूनाधिक घातक प्रभाव होना स्वाभाविक ही है, यद्यपि यह अभीष्ट नहीं होता। इस प्रकार उत्तम जीवाणुनाशक द्रव्य में यह गुण होना चाहिए कि, यथासम्भव अधिकतम क्रिया तो जीवाणुओं पर ही (Parasitotropic) होना चाहिए और शरीर-धातुओं पर यह क्रिया कम से कम होना चाहिए। दूसरे इनकी क्रिया भी जल्दी से होनी चाहिए ताकि शारीरिक धातुओं से इनको सम्पर्क की आवश्यकता एवं सम्भावना कम से कम हो। तीसरे प्रयोग की सुविधा की दृष्टि से यदि ये पानी में घुलनशील हों अथवा इमल्सन के रूप में बनायी जा सकें तो और भी अच्छा है। इसके अतिरिक्त धातु (Metal) के गलाने का दुर्गुण इनमें नहीं होना चाहिए, ताकि सर्जरी के औजारों का विशोधन भी सुगमता से किया जा सके। उपर्युक्त बातों को दृष्टिकोण में रखते हुए एक्रिडीन समुदाय की एक्रिफ्लेवीन आदि द्रव्यों में ये विशेषतायें अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती हैं।

सार्वदैहिक जीवाणुनाशक औषधियों एवं संस्थान विशेष पर उक्त कार्य करनेवाले द्रव्यों का यथास्थान वर्णन किया जा चुका है, अब इस अध्याय का विषय है–"स्थानिक एन्टिसेप्टिक एवं जीवाणुनाशक द्रव्य Local Antiseptics and Disinfectants."। यहाँ इन्हीं का विस्तृत विवेचन किया जायगा।

प्रकरण २

स्थानिक एन्टिसेप्टिक एवं जीवाणुनाशक द्रव्य ।

स्थानिक जीवाणुवृद्धिरोधक एवं जीवाणुनाशक द्रव्यों का उपयोग चिकित्साव्यवहार में अनेक रूप से किया जाता है। सर्जरी में इनकी उपयोगिता सबसे अधिक है। दूषित व्रणों की सफाई के लिए तथा त्वचा के विसंक्रमण एवं औजारों तथा सर्जन के हाथ के विसंक्रमण के लिए इनका प्रचुरता से प्रयोग किया जाता है। चिकित्सा में, त्वचा में पराश्रयी कीटाणुओं एवं छत्राणुओं के उपसर्ग के परिणामस्वरूप होनेवाले नानाविधि रोगों में विशिष्ट औषधि के रूप में प्रचुरता से इनका व्यवहार सफलतापूर्वक किया जाता है। सामाजिक एवं व्यक्तिगत स्वास्थ्य-रक्षण तथा औपसर्गिक मरकों के अनागतबाधाप्रतिषेध के लिए भी ये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इस प्रकार कमरे, फर्नीचर, दूषित खाद्य, मल-मूत्र, दूषित वस्त्र एवं जल आदि के विशोधन के लिए प्रचुरता से इन द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार व्याधि एवं उपसर्गवाहक कीटों को मारने ने लिए अथवा कमरों से भगाने के लिए भी ये बहुत उयोगी सिद्ध होते हैं और इस प्रकार कीटों (Insects) से फैलनेवाली व्याधियों के रुकावट एवं बचाव में बहुत सहायक होते हैं। किन्तु इनमें कतिपय दोष या अवगुण भी हैं, जिनसे कभी-कभी अवांछित क्रियायें भी होती हैं, जैसे प्राय: स्थानिकजीवाणुनाशक द्रव्य जब क्षोभक होते हैं, तो व्रणोपचार में प्रयुक्त होने पर ये व्रण के रोपण (Healing) में विलम्ब एवं रुकावट करते हैं। इसी प्रकार कतिपय द्रव्य स्थानिक प्रयोग से भी शोषित होकर सामान्य-कायिक विषाक्त लक्षण उत्पन्न करते हैं। उत्तम जीवाणुनाशक द्रव्य में निम्न गुण होने चाहिए—(१) मानवधातुओं (Human Tissues) एवं विशोधित द्रव्यों में कोई खराबी न उत्पन्न करे; (२) जल में घुलन शील हो तथा जल के साथ किसी भी अनुपात में इमल्शन बनाया जा सके; (३) व्यवहार की दृष्टि से सस्ता हो तथा धातु पर खराबी पैदा करनेवाला न हो तथा कपड़े पर प्रयुक्त होने पर उसका रंग उड़ानेवाला एवं कपड़े को गलानेवाला न हो; (४) जीवाणुनाशक शक्ति तीव्र एवं जल्दी से होनेवाला एवं त्वचा पर लगाने से त्वचा में घुसनेवाला हो; (५) विभिन्न जीवाणुओं या कीटों पर विशिष्ट क्रिया करनेवाला हो; सेन्द्रिय द्रव्यों (Organic matter) एवं दूषित द्रव्यों के सम्पर्क में आनेपर निष्क्रिय होने का दोष नहीं होना चाहिए तथा (६) स्नेह को गलानेवाला होना चाहिए।

स्थानिक एन्टिसेप्टिक एवं जीवाणुनाशक द्रव्यों का वर्गीकरण:—

(१) तृणाणुनाशक या एन्टीबैक्टीरियल (Antibacterial) ।

(अ) ऑक्सीडायजिंग एजेन्ट्स (Oxidising agents) :—

हाइड्रोजन-परॉक्साइड, जिंकपरोक्साइड, पोटासियम् परमैंगेनेट (पोटास), पोटासियम् क्लोरेट, सोडियम् परबोरेट आदि ।

(ब) हेलोजन तथा उनके यौगिक (Halogens and their Compounds) :—

ब्लीचिंग पाउडर, क्लोरामीन, डेकिन-सॉल्यूशन, आयोडीन एवं आयडोफॉर्म आदि ।

(स) कोलतार-यौगिक (Coal-tar Compounds) :—

फिनोल (कार्बोलिक एसिड), क्रिसोल, क्लोरोक्रिसोल, क्लोरॉक्सीलेनोल, रिसर्सिनोल, ड्राइनाइट्रो-फिनोल, फिनॉक्सिथेनोल, हेक्सा क्लोरोफीन, कोलटार (पिक्स लिक्विड) लेलोस, बेटानेफ्थोल आदि।

(द) संश्लिष्ट सेन्द्रिय या कोलतार जीवाणुनाशक रंजक यौगिक(Synthetic organic or coal-tar dyes) :—

एक्रिफ्लेवीन, प्रोफ्लेवीन, एमिनाक्रीन, यूफ्लेवीन, स्कारलेट रेड, फ्लोरेसीनसोडियम् , ब्रिलिएण्ट ग्रीन, क्रिस्टलवायलेट, मेथिलीनब्ल्यू, मरक्युरोक्रोम आदि।

(य) अल्कोहल्स एवं एल्डिहाइड्स :—

एथिल अल्कोहल्, आइसो प्रोपिल अल्कोहल् तथा फार्मेल्डिहाइड आदि।

(फ) त्वचा-शोधक (Surface active-Compounds or detergents) :—

सेट्रिमाइड, बेंजाल्कोनियम्, बजाल्थोनियम् तथा इस वर्ग के अन्य यौगिक।

(च) एसिड्स एवं अल्कलीज (Alkalies) :—

बोरिक एसिड एवं बोरेक्स, सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट, बेंजोइक एसिड,सेलिसिलिक एसिड आदि।

(छ) अन्य विभिन्न यौगिक (Miscellaneous Compounds) : —

नाइट्रोफुराजोन, क्लोराफिल, उत्पत्तैल, डाइब्रोमो प्रोपेमिडिन आइसेथिओनेट आदि।

(ज) गुरुधात्वीय लवण एवं यौगिक :—

पारद (मरकरी), रजत (सिल्वर) के लवण, तूतिया (कॉपर सल्फेट), जिंक के लवण।

(२) प्रतिपराश्रयी एवं छत्राणुनाशक द्रव्य (Parasiticides and Fungicides) :—

(अ) विभिन्न प्रजाति के टीनिया (Tinea) नाशक द्रव्य:—

क्राइसेरोबिन, डाइथ्रेनोल, अन्डेसिलेनिक एसिड, केप्रिलिक एसिड, प्रोपिओनिक एसिड, मरकरी, आयोडीन, फिनोल, सेलिसिलिक एसिड, बोरिक एसिड, थायमोल, तथा फार्मेल्डिहाइड आदि।

(ब) खुजली (Scabies) नाशक :—

सल्फर, बेंजिल बेंजोएट, इकथेमोल, मिसल्फेन, स्टोरेक्स (लोबान), बलसम् ऑव पेरू, चन्दन का तेल।

(स) जूआँ नाशक :—

डाइकोफेन (डी० डी० टी०), गमक्सेन, बेंजिल बेंजोएट, मरकरी, डेरिस।

(३) कीटनाशक एवं कीट भगानेवाला :—

डाइकोफेन, गमक्सेन, डाइमेथिलफ्थेलट, डाइब्युटिलफ्थलेट, पेरिसग्रीन एवं डेरिस।

(४) शुक्रकीटनाशक (Spermatocides) :—

द्रव्य विज्ञानीय परिच्छेद २

(१) बैक्टीरियानाशक द्रव्य (Antibacterials) ।

फिनोल (Phenol) I. P., B. P.—ले०, अं० ।

रासायनिक संकेत : C_6H_5OH.

पर्याय—कार्बोलिक एसिड (Carbolic Acid) ।

प्राप्ति-साधन—फिनोल अलकतरे के तेल (Coal-tar oil) से प्राप्त किया जाता है, अथवा रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से बनाया जाता है। इसमें कम से कम ९८% C_6H_6O. होता है।

वर्णन—फिनोल या कार्बोलिक एसिड के रंगहीन अथवा हल्के गुलाबी रंग (Faintly pink) के सुई के आकार के क्रिस्टल्स अथवा कई क्रिस्टल्स के परस्पर मिलने से छोटे-छोटे ढेले के आकार के क्रिस्टलाइन टुकड़े (Crystalline masses) होते हैं। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती है और बहुत पसीजता है (Deliquescent)। यह बहुत दाहक या कॉस्टिक (Caustic) होता है। विलेयता—१२ भाग जल में तथा अल्कोहल् (९५%), सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म, ग्लिसरोल (Glycerol) एवं स्थिर तथा उड़नशील तेलों (Fixed and volatile oils) में घुल जाता (Soluble) है। संरक्षण—कारबोलिक एसिड को खूब अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखकर ठण्डी जगह में संग्रहीत करना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग

वाह्य—स्थानिक प्रयोग से फिनोल क्षोभक, दाहक एवं स्वापजनक (Anaesthetic) होता है। औषध्यर्थ इसको शुद्ध रूप में प्रयुक्त न करके इसके ३–४ प्रतिशत विलयन का व्यवहार किया जाता है, क्योंकि शुद्ध रूप में यह आवश्यकता से अधिक क्षोभक एवं दाहक होता है। इसके अतिरिक्त यह तीव्र प्रतिपराश्रयी (Parasiticide) एवं जीवाणुनाशक (Disinfectant) तथा दुर्गन्धिनाशक (Deodorant) होता है। इसके तैलीय-विलयन में जलीय-विलयन की अपेक्षा जीवाणुनाशक प्रभाव मन्दतर होता है। सोडियम्-क्लोराइड का संयोग होने से इसकी क्रिया बढ़ जाती है।

शुद्ध रूप में फिनोल का प्रयोग मोरी, नाबदान आदि के दूषित एवं दुर्गन्धित जल के विसंक्रमण (Disinfection) के लिए तथा आतुरालय की फर्श एवं मल-मूत्र पात्र तथा अन्य पात्रों के विशोधन के लिए किया जाता है। मन्दव्रण (Indolent ulcer) के रोहण में उत्तेजना पैदा करने के लिए तथा कोथयुक्त (Gangrenous) व्रणों की दुर्गन्धिनाशन के हेतु तथा मस्सों एवं व्रणों में अनावश्यक दानों को नष्ट करने के लिए कार्बोलिक एसिड का प्रयोग किया जाता है। शस्त्रकर्म में प्रयुक्त अस्त्र-शस्त्र तथा सर्जन के हाथों के विशोधन के लिए भी कार्बोलिक लोशन प्रयुक्त किया जाता है। स्वापजनक प्रभाव करने के कारण कान तथा नाक में फुन्सी होनेसे तीव्र वेदना को शान्त करने के लिए कर्ण-बिंदु (Ear-drop) एवं नासा-बिंदु (Nasal-drop) में यह एक उत्तम उपादान होता है। लिक्विफाइड फिनोल का प्रयोग कुटिल

शिराओं (Varicose veins) तथा अर्शांकुरों में भी किया जाता है। गर्भाशयमुख (Os) अथवा गर्भाशय-ग्रीवा (Cervix) की सव्रणता में अथवा चिरकालज गर्भाशयान्तः शोथ (Chronic endometritis) में फिनोल–कैम्फर अथवा आयोडाइज्ड फिनोल का प्रयोग उपयोगी होता है।

आभ्यन्तर—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर यह आमाशयान्त्र-प्रणाली पर क्षोभक प्रभाव करता है। यदि घोल बहुत गाढ़ा हो, तो क्षोभक से भी बढ़कर दाहक प्रभाव कर सकता है। आमाशयान्त्र से इसका शोषण बहुत क्षिप्रतापूर्वक होता है। अतएव अन्त्र पर जीवाणुनाशक प्रभाव के लिए चिकित्सा में इसका उपयोग नहीं किया जा सकता।

शोषण तथा उत्सर्ग—फिनोल का शोषण सभी तत्वों से क्षिप्रतापूर्वक होता है। शोषणोपरान्त जारण होकर इसका कुछ भाग हाइड्रोक्विनोन (Hydroquinone) तथा पाइरोकटेकिन (Pyrocatechin) में परिवर्तित हो जाता है। शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः मूत्र के साथ होता है।

विषाक्तता—कभी-कभी धोखे से कार्बोलिक एसिड के सॉल्यूशन अथवा फिनोल मिश्रित किसी योग को पी जाने से विषाक्तता हो सकती है। इससे तीव्र आमाशयान्त्र-प्रदाह के लक्षण, यथा वमन, गले में जलन तथा स्तब्धता (Shock) एवं विपात (Collapse) के भयंकर उपद्रव हो सकते हैं। मृत्यु श्वसनभेद (Respiratory failure) के कारण होती है। शोषणोपरान्त थोड़े समय मानसिक उत्तेजना की अवस्था होती है परन्तु शीघ्र ही मरीज अचेतनावस्था (Unconscious) में पाया जाता है। नाड़ी मन्द पड़ जाती है तथा शरीर ठण्डा हो जाता है। शीत प्रस्वेद (Cold Sweat) होने लगता है। मूत्र की मात्रा कम हो जाती है तथा पेशाब की परीक्षा करने पर निर्मोक (Cast), अल्ब्युमिन तथा हिमोग्लोबिन मिलते हैं।

चिकित्सा—स्टमक पम्प (आमाशय-नलिका) द्वारा आमाशय का प्रक्षालन करना चाहिए। एतदर्थ जैतून का तेल प्रयुक्त करना चाहिए, क्योंकि आमाशयगत फिनोल इसमें फौरन विलीन होकर बाहर निकाल लिया जा सकता है। चिकित्सा प्रायः लाक्षणिक की जाती है। गरम दोतल तथा उत्तेजक औषधियों का व्यवहार करें।

(ऑफिशल योग)

१—ग्लिसेरिनम् फिनोलिस Glycerinum Phenolis (Glycer. Phenol.), I. P., B. P.–लै० ; ग्लिसरिन ऑव फिनोल Glycerin of Phenol–अं०। यह ग्लिसरिन में बनाया हुआ कार्बोलिक एसिड या फिनोल का विलयन होता है। इसमें १६ % फिनोल होता है।

वक्तव्य—यदि विलयन बहुत गाढ़ा हो तो इसको ढीला करने के लिए पानी नहीं मिलाना चाहिए, अपितु और ग्लिसरिन ही मिलावें।

२—फिनोल लिक्वेफेक्टम् Phenol Liquefactum (Phenol Liq.), I. P., B. P.–लै०।

पर्याय—एसिडम् कार्बोलिकम् लिक्वेफेक्टम् Acidum Carbolicum Liquefactum–लै० ; लिक्वेफाइड फिनोल Liquefied Phenol–अं० ; कार्बोलिक एसिड का घोल या विलयन—हिं०।

यह परिस्रुतजल (Distilled water) में कार्बोलिक एसिड का बनाया हुआ सॉल्यूशन होता है, जिसमें ८० प्रतिशत (W/W) $C_6 H_6 O$) होता है।

वर्णन—उक्त द्रव प्रायः रंगहीन होता है। रखने पर कुछ समय के बाद हल्की गुलाबी आभा

(Pinkish hue) आ सकती है। इसमें कार्बोलिक एसिड की विशिष्ट प्रकार की गंध आती है। यह गंध कुछ-कुछ सुगन्धित भी होती है, बहुत दाहक (Caustic) होता है।

विलेयता—१५ भाग जल (I. P.) या ११ भाग जल (B. P.) मिलाने पर स्वच्छ सॉल्यूशन बन जाता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल् (९५ %), सॉलवेंट ईथर तथा ग्लिसरोल के साथ भी मिल जाता (Miscible) है।

वक्तव्य—(१) ठंढ के कारण लिक्विफाइड फिनोल रखा रहने से जम सकता है, या नीचे क्रिस्टल्स बैठ जाते हैं। अतएव प्रयोग के पूर्व इसको पिघला लेना चाहिए।

(२) यदि कोलोडिअन (Collodion), स्थिर तैल (Fixed oil) अथवा पाराफिन में फिनोल मिलाना हो तो फिनोल ही पिघलाकर मिलाना चाहिए न कि लिक्वेफाइड फिनोल।

(नॉट-ऑफिशल)

१—गारगरिज्मा फिनोलिस Gargarisma Phenolis (Garg. Phenol.), B. P. C.—ले० ; गॉर्गिल ऑव फिनोल Gargle of Phenol, फिनोल गॉर्गिल Phenol Gargle ; कार्बोलिक एसिड गॉर्गिल Carbolic Acid Gargle—अं० ; कार्बोलिक एसिड का गण्डूष या गरगरा—हिं०। इसमें ५% ग्लिसरिन ऑव फिनोल, सॉल्यूशन ऑव अमरन्थ (Amaranth) तथा जल १०० मि० लि० होता है।

२—ऑरिस्टिली फिनोलिस Auristillae Phenolis (Aurist. Phenol.), B. P. C.—ले०; ईयर-ड्रॉप्स ऑव फिनोल Ear-drops of Phenol, फिनोल-ईयरड्राप्स—अं० ; फिनोल का कर्णबिन्दु—हिं०। ग्लिसरिन ऑव फिनोल १८० बूंद (३ ड्राम) तथा ग्लिसरिन १० फ्लुइडऔंस को परस्पर मिलाने से बनता है। ३७·५ % ग्लिसरिन ऑव फिनोल होता है।

३—कॉल्युटोरियम् फिनोलिस अल्कलाइनम् Collutorium Phenolis Alkalinum (Collut. Phenol, Alk.),B. P. C.—ले० ; अल्कलाइन माउथवाश ऑव फिनोल Alkaline Mouth-Wash of Phenol—अं०। लिक्वेफाइड फिनोल १५० बूंद, सॉल्यूशन ऑव पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड १५० बूँद, साल्यूशन ऑव अमरेन्थ ५० बूँद, जल आवश्यकतानुसार १० औंस के लिए। सबको परस्पर मिलावें। प्रयोग के पूर्व १० गुने गरम पानी में मिलाकर प्रयुक्त करें। लिक्वेफाइड फिनोल तथा पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड का सॉल्यूशन प्रत्येक ३·१३ % होता है।

४—लोशिओ फिनोलिस Lotio Phenolis (Lot. Phenol.), B. P. C.—ले०; फिनोल लोशन—अं०, हिं०। लिक्वेफाइड फिनोल १२५ बूंद, सॉल्यूशन ऑव अमरेन्थ ५ मिनम्, जल १० औंस। जब प्रयोग करना है बराबर मात्रा में गरम पानी मिलाकर करें। इसमें २·६% लिक्वेफाइड फिनोल होता है।

५—अंग्वण्टम् फिनोलिस—ले० ; कार्बोलिक का मलहम—हिं०। ३% फिनोल।

६—फिनोल आयोडाइजेटम् Phenol Iodisatum—ले० ; आयोडाइज्ड फिनोल Iodised Phenol-अं०। आयोडीन १ भाग, लिक्वेफाइड फिनोल १० भाग।

क्रिसोल (Cresol), I. P., B. P.—ले०, अं०।

पर्याय—एसिडम् क्रेसिलिकम् Acidum Cresylicum; क्रेसिल हाइड्रेट।

वर्णन—यह क्रिसोल्स या दूसरे फिनोल्स का मिश्रण होता है, जो अलकतरे (Coal tar)

से प्राप्त किया जाता है। यह एक रंगहीन अथवा हल्का भूरापन लिए पीले रंग का द्रव होता है, जो पुराना होने पर या प्रकाश में खुला रहने पर गाढ़े रंग का हो जाता है। इसकी गंध फिनोल की ही तरह होती है, परन्तु कुछ अलकतरे की भी गंध आती (Tarry) है। इसके जलीय विलयन का स्वाद तीक्ष्ण (Pungent) होता है। विलेयता—५० भाग जल में पूर्णतः घुल जाता है; इसके अतिरिक्त अल्कोहल् (६५%), सॉलवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा ग्लिसरोल तथा स्थिर एवं उड़नशील तेलों में भी घुल जाता है।

क्लोरोक्रिसोल (Chlorocresol), I. P., B. P.—ले०, अं०।

पर्याय—पाराक्लोरोमेटाक्रिसोल Parachlorometacresol—रासायनिक।

रासायनिक संकेत : C_7H_7OCl.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 2—chloro-5-hydroxytoluene होता है। इसके रंगहीन अथवा हल्के रंग के क्रिस्टल्स होते हैं जिनमें विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है। विलेयता—२६० भाग जल में घुल जाता है। गरम पानी में अपेक्षाकृत अधिक घुलता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल् (६५%) में भी घुलता (०·४ भाग में) है। सालवेंट ईथर, टरपीन्स, स्थिर तेल तथा सोडियम् हाइड्राक्साइड के सॉल्यूशन में भी घुल जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

क्रिसोल में फिनोल के सामान्य गुण कर्म पाये जाते हैं। किन्तु यह फिनोल की अपेक्षा कम विषैला होता है, और साथ ही सक्रियता भी फिनोल की अपेक्षा तिगुनी होती है। क्रिसोल का स्थानिक प्रयोग जीवाणुनाशक (Bactericide) के रूप में किया जाता है। एतदर्थ यह धावनद्रव या लोशन (Lotion) अथवा मलहम (Ointment) के रूप में प्रयुक्त होता है। स्थानिक प्रयोग के लिए 'सॉल्यूशन ऑव क्रिसोल विद् सोप' इसका एक उत्तम योग है। इसके १ से २ प्रतिशत साल्यूशन का प्रयोग हाथ साफ करने के लिए या शस्त्रों की सफाई के लिए किया जाता है। काफी जल में मिलाकर इसका प्रयोग मुख की सफाई के लिए कुल्ली या गण्डूष के रूप में किया जा सकता है। ५०० गुने जल में मिलाकर इसका प्रयोग योनिधावन (Vaginal douche) के लिए भी किया जा सकता है। औषधि-निर्माण में इंजेक्शन की दवाइयों में अल्प मात्रा में क्रिसोल मिलाया जाता है। इससे औषधि के संरक्षण (Preservation) में सहायता मिलती है। इस कार्य के लिए क्रिसोल की अपेक्षा क्लोरोक्रिसोल अधिक उपयुक्त होता है। संरक्षण कार्य के लिए यह ०·१ प्रतिशत मात्रा में मिलाया जाता है। किन्तु शिरागतमार्ग अथवा सुषुम्नांतरगत मार्ग द्वारा प्रयुक्त होनेवाले इंजेक्शन में इसका व्यवहार नहीं होना चाहिए। जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) क्रिया के लिए क्लोरोक्रिसोल का १% जल का विलयन बहुत उपयुक्त होता है। आम्लिक विलयन (Acid solution) की अपेक्षा क्षारीय विलयन (Alkaline Solution) में क्लोरोक्रिसोल की क्रिया और भी तीव्र होती है।

(ऑफिशल योग)

सोल्यूशिओ क्रिसोलिस सेपोनेटस (Solutio Cresolis Saponatus (Sol. Cresol. Sap.), I. P., B. P.—ले०; सॉल्यूशन ऑव क्रिसोल विद सोप Solution of Cresol with Soap—अं०।

पर्याय—लाइकर क्रिसोलिस सेपोनेटस Liquor Cresolis Saponatus; लाइसोल Lysol। इसमें क्रिसोल ५०% होता है तथा इसके अतिरिक्त पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड, तीसी का तेल (Linseed oil) तथा परिस्रुत जल आदि उपादान पड़ते हैं।

क्लोरॉक्सिलेनोल (Chloroxylenol), I. P., B. P.—ले०, अं०।

रासायनिक संकेत : C_8H_9Ocl.

पर्याय—पारा क्लोरोमेटाक्सिलेनॉल Parachlorometaxylenol–रासायनिक।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 4-Chloro—3 : 5—xylenol होता ह और 3 : 5—xylenol एवं सल्फ्यूरिल-क्लोराइड (Sulphuryl-chloride) की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह सफेद रंग अथवा हल्का क्रीम-रंग लिए सफेद रंग के क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। गंध विशिष्ट प्रकार की। आँच देने से उड़ जाता है (Volatile steam)। विलेयता—३००० भाग जल में घुलता है। अपेक्षाकृत गरम पानी में अधिक घुलनशील होता है। इसके अतिरिक्त ६५% अल्कोहल के १ भाग में, सॉलवेंट ईथर, बेंजीन, टर्पीन, स्थिर तेल तथा क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स के विलयन में भी घुल जाता है।

एसिडम् रिसिनोलीकम् Acidum Ricinoleicum(Acid Ricinoleic.), I. P.—ले०; रिसिनोलीक एसिड Ricinoleic Acid—अं०।

प्राप्तिसाधन—यह मेदसाम्लों का मिश्रण (Mix ture of fatty acids) होता है, जो एरण्ड तेल (Castor oil) के जलांशन (Hydrolysis) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह पीले रंग का अथवा भूरापन लिए पीले रंग के चिपचिपे द्रव (Viscous Fluid) के रूप में होता है। इसमें विशिष्ट प्रकार की गंध एवं स्वाद पाया जाता है। विलेयता—यह जल में तो नहीं घुलता, किन्तु अल्कोहल् (९५%) तथा सॉलवेंट ईथर में घुल जाता है।

डाइक्लोरॉक्सिलेनोलिस Dichloroxylenolis, B, P. C.—ले०; डाइक्लोरॉक्सिलेनोल—अं०।

रासायनिक संकेत $C_8H_8Ocl_2$.

पर्याय—डाइक्लोरोमेटॉक्सिलेनोल Dichlorometaxylenol (B. P. C.)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २ : ४—Dichloro—m—xylenol होता है। सफेद या मलाई के रंग का क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है। गरम करने से वाष्पीभूत होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर केवल ५००० भाग में घुलता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल्, ईथर, टरपीन्स (Terpenes) एवं स्थिर तेलों तथा अल्कली हाइड्रॉक्साइड्स के सोल्यूशन में घुलता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

क्लोरॉक्सिलेनोल—यह विशेष रूप से स्ट्रेप्टोकोकस पर जीवाणुनाशक प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त इसकी जीवाणुनाशक क्रिया साधारणरूप से स्टेफिलोकोकस पर भी होती है।

यह जल में बहुत कम घुलता है, अतएव सॉल्यूशन के रूप में ही प्रयुक्त हो सकता है। इस सॉल्यूशन को २० गुने पानी में मिलाकर शस्त्र-कर्म अथवा स्त्रीरोगों में विशोधन एवं जीवाणु-नाशक प्रभाव के लिए भी प्रयुक्त किया जाता है।

रिसिनोलिक एसिड—पहले रिसिनोलिक एसिड का उपयोग क्लोरॉक्सिलेनोल बनाने में किया जाता था। सोडियम रिसियोलिएट एक उत्तम जीवाणुनाशक एवं पूतिहर (Detergent) यौगिक है।

डाइक्लोरॉक्सिलेनोल—इसमें जीवाणुनाशक क्रिया, क्लोरॉक्सिलेनोल से भी तीव्र होती है। इसका प्रयोग भी उसके समान समझना चाहिए। स्टेफिलोकोकस ऑरियस (Staphylococcus aureus) नामक गोलदण्डाणु पर यह क्रिया विशेषरूपसे लक्षित होती है।

(ऑफिशल योग)

१—सोल्यूशिओ क्लोरॉक्सिलेनोलिस Solutio Chloroxylenolis (Sol. Chloroxylenol.), I. P., B. P.—ले०; सॉल्यूशन ऑव क्लोरॉक्सीलेनोल Solution of Chloroxylenol—अं०।

पर्याय—रोक्सेनोल Roxenol.

निर्माण-विधि—क्लोरॉक्सिलेनोल ५० ग्राम, टर्पिनिओल १०० मि० लि० (सी० सी०), अल्कोहल् (९५%) २०० मि० लि०, रिसिनोलिक एसिड ५० ग्राम, सॉल्यूशन ऑव पोटासियम् हाइड्रॉक्साइड आवश्यकतानुसार, परिस्रुत जल इतना मिलावें कि तैयार औषधि की मात्रा १००० मि० लि० हो जाय। इसमें क्लोरॉक्सिलेनोल ५% होता है।

वर्णन—यह पीले रंग का या अम्बरी रंग का द्रव होता है, जिसमें टर्पिनिओल की गंध आती है। स्पर्श में यह चिकना होता है। इसमें १९ गुना जल मिलाने से दूधिया घोल याइमल्सन बन जाता है।

रिसॉर्सिनॉल (Resorcinol–ले०, अं०), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_6H_6O_2$.

पर्याय—रिसॉर्सिन Resorcin।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह m—dihydroxybenzene होता है, और सोडियम हाइड्राक्साइड एवं Sodium benzene—m—disulphonate की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त होता है।

वर्णन—इसके प्राय: रंगहीन सुच्याकार क्रिस्टल्स (Acicular Crystals) या चूर्ण होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है; स्वाद—पहले किंचित् मधुर और बाद में तीता होता है। गरम करने से ऊर्ध्वपातित किया जा सकता (Sublimes) है। विलेयता—१ भाग से कम जल में घुलता है; इसके अतिरिक्त १ भाग अल्कोहल् (९५%), सॉलवेंट इथर, ग्लिसरोल तथा स्थिर तेलों में भी घुल जाता है।

गुण तथा प्रयोग

त्वचा पर लगाने से रिसॉर्सिन जीवाणुवृद्धिरोधक तथा कण्डूहर (Antiseptic and antipruritic) प्रभाव करता है। एतदर्थ यह मलहम के रूप में प्रयुक्त

किया जाता है। इसके साथ जिंक-ऑक्साइड तथा सेलिसिलिक एसिड मिलाने से (१ औंस मलहम में १५ से २० ग्रेन) उत्तम मलहम योग बनता है। पहले त्वचा पर खुरण्ड एवं पपड़ी आदि को ग्लिसरिन के घोल से साफ करके तब मलहम लगाना चाहिए।

(नॉन-आफिशल योग)

१—अंग्वण्टम् रिसॉर्सिनोलिस कम्पोजिटम् Unguentum Resorcinolis Compositum (Ung. Resorcin. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड आयण्टमेंट ऑव रिसोर्सिनॉल Compound Ointment of Resorcinol—अं० ।

निर्माण-विधि—रिसार्सिनाल १७५ ग्रेन, बिस्मथ सबनाइट्रेट का सूक्ष्म चूर्ण ३५० ग्रेन, जिंक ऑक्साइड का सूक्ष्म चूर्ण १७५ ग्रेन, स्टार्च सूक्ष्म चूर्ण १ औंस, केड ऑयल ८११ ग्रेन, ऊन की चर्बी (Wool Fat) १ औंस, सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट ८$\frac{3}{4}$ ग्रेन, जल १७५ ग्रेन, हार्ड पाराफिन ८७$\frac{1}{2}$ ग्रेन, पीली वेसलीन (Yellow Soft Paraffin) ५ औंस २१० ग्रेन। रिसार्सिनोल तथा सोडियम् मेटाबाईसलफाइट को जल में घोलकर अलग रख लें। बिस्मथ सबनाइट्राइट, जिंक ऑक्साइड तथा स्टार्च को पहले थोड़ी सी मुलायम पीली वैसलीन में मिलावें और मिला देने के बाद इसमें ऊन की चर्बी और हार्ड पाराफिन को पिघलाकर मिला दें। अब इसमें रिसॉर्सिनाल तथा सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट के घोल को तथा केड आयल और अवशिष्ट साफ पाराफिन को मिला दें। इसमें रिसॉर्सिनोल ४%, बिस्मथ सबनाइट्रेट ८%, जिंक आक्साइड ४%, स्टार्च १०% तथा केड ऑयल ३ प्रतिशत होता है।

२—पेस्टा रिसार्सिनोलिस एट सल्फ्युरिस Pasta Resorcinolis et Sulphuris (Past. Resorcin. et. Sulphur.), B. P. C.—ले०; रिसार्सिनोल एण्ड सल्फर पेस्ट—अं० ।

निर्माण-विधि—रिसार्सिनोल का सूक्ष्म चूर्ण $\frac{1}{2}$ औंस, गंधक का सूक्ष्म चूर्ण (Precipitated Suphur finely sifted) $\frac{1}{2}$ औंस, जिंक ऑक्साइड का सूक्ष्म चूर्ण ३ औंस तथा इमल्सिफाइंग ऑयण्टमेंट ४ औंस। सबको परस्पर मिलावें। इसमें रिसार्सिनोल तथा गंधक, प्रत्येक ६·२५ प्रतिशत तथा जिंक ऑक्साइड ३७·५ प्रतिशत होता है।

३—ऑरिस्टिली रिसार्सिनोलिस Auristillae Resorcinolis—ले०; रिसार्सिनोल का कर्णबिन्दु हिं० ।

निर्माण-विधि— रिसार्सिनोल ४ ग्रेन, अल्कोहल (९५ प्रतिशत) ३६० बूंद तथा जल आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए।

४—पेस्टा रिसार्सिनोलिस कम्पोजिटस Pasta Resorcinolis Compositus—ले० ।

पर्याय—Lassar's stronger Paste of Resorcin—अं० ।

निर्माण-विधि—रिसार्सिन, जिंक आक्साइड तथा स्टार्च प्रत्येक २ ग्राम (३० ग्रेन), लिक्विड पाराफिन ४ ग्राम औषधि के लिए।

रिसार्सिनोल के उपयोगी नुस्खे:—

(१) रिसॉर्सिन १५ ग्रेन

बोरिक ग्लिसरिन १ औंस

उपयोग—गल प्रलेप (Throat paint) के लिए उत्तम है।

(२) रिसार्सिन ३० ग्रेन
कोरोसिव सब्लिमेट ½ ग्रेन
स्प्रिट ईथर ३० बूंद
मूंगफली का तेल ३० बूंद
लेवेंडर का तेल २ बूंद
एक्वा ऑरेन्शाइफ्लोरिस १ औंस ।

उपयोग—शिरके खुरण्ड (Dandruff) में उपयोगी है ।

ट्राइनाइट्रोफिनोल Trinitrophenol (Trinitrophen.), B. P. C.

पर्याय—पिक्रिक एसिड Picric Acid.

रासायनिक संकेत : $C_6H_3O_7N_3$.

प्राप्ति साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 2 : 4 : 6 Trinitrophenol होता है। इसमें कम से कम ९९ प्रतिशत ट्राइनाइट्रोफिनोल होता है।

वर्णन—पिक्रिक एसिड चमकीले पीले रंग के चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में अत्यंत तिक्त होता है। इस पर आघात करने से या तीव्र आंच में गरम करने से विस्फोट करता है (Explodes)। विलेयता—९० भाग जल, १० भाग अल्कोहल (९०%) तथा ५० भाग ईथर में घुलनशील होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—

पिक्रिक एसिड त्वचा एवं श्लैष्मिक कलापर स्थानिक क्षोभक (Irritant) प्रभाव करता है। यह जीवनमूल या कायाणु रस पर विषाक्त प्रभाव करता है तथा प्रोटीन के सम्पर्क में आने पर उसको प्रक्षिप्त करता (Precipitates protein) है। मुखद्वारा सेवन किए जाने पर वमनकारक होता है। इसके अतिरिक्त मूत्रकृच्छ्र (Strangury) या अमूत्रता (Anuria) की स्थिति पैदा करता है। शोषणोपरान्त त्वचा एवं श्लैष्मिक कलाओं का रंग कामला (Jaundice) की भांति पीला पड़ जाता है।

स्थानिक प्रयोग से एन्टिसेप्टिक प्रभाव करता है। इस रूप में यह फिनोल की अपेक्षा चौगुना सक्रिय है। पिक्रिक एसिड का चिकित्सा में मुख्य उपयोग जले हुए स्थल (Burns and Scalds) पर लगाने के लिए किया जाता है। एतदर्थ १% बल के घोल में भिगोया हुआ गाज या रूई ((Lint or Cotton wool) प्रयुक्त होता है। अल्कोहल् में बनाया हुआ ५% बलका घोल स्थानिक प्रयोग से स्थान को कड़ा बनाता तथा पसीना को रोकता है। अतएव इसका मलहम अनेक त्वचारोगों में यथा विचर्चिका, दद्रु, खुजली आदि में प्रयुक्त होता है। इसके रङ्ग को छुड़ाने के लिए उस स्थान पर थोड़ा सा पोटासियम् सल्फेट का चूर्ण छिड़क कर साबुन से धो देना चाहिए।

पिक्रिक एसिड का उपयोग मूत्रगत शर्करा एवं अल्ब्युमिन के परीक्षण में किया जाता है।

(नॉन्-आफिशल योग)

१—अंगवण्टम् ट्राइनाइट्रोफिनोलिस Unguentum Trinitrophenolis—ले०; आयण्टमेंट ऑव पिक्रिक एसिड—अं०। पिक्रिक एसिड २ भाग, जल २ भाग तथा मृदु पाराफिन ९६ भाग।

फिनोक्सिथेनोल Phenoxyaethenol (Phenoxyethanol), B. P. C.

पर्याय—B—henoxyethyl alcohol; फिनोक्सेटोल Phenoxetol ।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—Phenoxyethanol होता है, जो रंग हीन, कुछ गाढ़ा-गाढ़ा (Slightly Viscous) द्रव्य के रूप में प्राप्त होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की सुगन्धि होती है तथा स्वाद में गर्म तथा कषैला-कषैला (Warm astringent taste) होता है। विलेयता—जल, मूंगफली के तेल तथा जैतून के तेल में घुल जाता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल्, एसिटान तथा ग्लिसरिन में घुलता तो नहीं परन्तु मिल जाता (Miscible) है।

गुण एवं प्रयोग

फिनोक्सिथेनोल, स्युडोमोनस पायोसाइनिया (Pseudomonas pyocya nea) तथा प्रोटियस वल्गेरिस (Proteus vulgaris) नामक ग्राम-निगेटिव बैक्टीरिया के स्थानिक उपसर्ग में विशिष्टरूप से जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) एवं जीवाणुनाशक (Bactericide) प्रभाव करता है। ग्राम-पाजिटिव बैक्टीरिया पर भी इसका उक्त क्रिया साधारणरूप से होता है। अतएव व्रणों, जले हुए घावों तथा फोड़े या विद्रधि में उक्त जीवाणुओं का उपसर्ग होनेपर इसका स्थानिक प्रयोग बहुत लाभदायक है। एतदर्थ २·२% सॉल्यूशन अथवा २% क्रीम के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। सोल्यूशन का उपयोग प्रायः धावन (Irrigation) के रूप में अथवा व्रणोपचार (Dressing) के रूप में करते हैं। अन्य जीवाणुओं के साथ उपर्युक्त जीवाणुओं के मिश्रित उपसर्ग में इसको सल्फोनेमाइड, पेनिसिलिन अथवा एक्रिफ्लेविन आदि के साथ प्रयुक्त कर सकते हैं।

हेक्साक्लोरोफीन—Hexachlorophene (नाट्-आफिशल) ।

वर्णन—यह सफेद रंग का या पीली आभा लिए सफेद रंग का प्रायः गंधहीन अथवा फिनोल की हल्की गंधयुक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है। यह जल में तो नहीं घुलता, किन्तु अल्कोहल्, एसिटोन एवं ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में घुलजाता है। यह विशिष्ट रूप से ग्राम-पाजिटिव जीवाणुओं पर घातक प्रभाव करता है। इसको विभिन्न साबुनों, दुर्गन्धिनाशक क्रीम तेलों में १ से २% वल में मिला देते हैं। सर्जरी में शस्त्रकर्म के पूर्व तथा पश्चात् त्वचा की सफाई के लिए बहुत उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त जहाँ पसीना आदि होकर दुर्गन्धि होती है, ऐसे स्थानों पर इसके यौगिक लगाने से लाभ होता है।

पिक्स लिक्विडा Pix Liquida (Pix. Liq.), I. P., B. P.

(कोलतार)

पर्याय—टार Tar; कोलटार Coal Tar; उड-टार Wood Tar; चीड़ टार Chir tar; पिक्स पाइनी Pix Pini (U. S. P.) ।

प्राप्ति-साधन—टार एक बिट्यूमिनस द्रव (Bituminous liquid) होता है, जो चीड़-कुल के विभिन्न वृक्षों की लकड़ी से विच्छेदक-विस्रवण (Destructive distillation) द्वारा प्राप्त किया जाता है। व्यवसाय में इसको स्टाकहोम-टार (StockholmTar) कहते हैं। भारतवर्ष में यह प्रधानतः सरल या चीड़ (पाइनस लांगिफोलिआ Pinus longi

folia Roxb.) की लकड़ी से प्राप्त किया जाता है और व्यवसाय में चीड़तार Chir Tar (I. P.) कहा जाता है।

वर्णन - कालापन लिए भूरे रंग का अथवा काले रंग का अर्धघन द्रव (Semi-liquid) होता है; यह जल से भारी होता है। गंध एवं स्वाद विशिष्ट प्रकार का तथा जली हुई वस्तु की भाँति (Empyreumatic)। विलेयता—अल्कोहल् (९०%), सॉल्वेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म, स्थिर एवं उड़नशील तेलों में घुलजाता है।

रासायनिक संघटन—इसमें हाइड्रोकार्बन्स, फिनोल्स, एल्डिहाइड्स, किटोन्स, ईस्टर्स, मेथिल-पाइरिडीन्स तथा रेजिन एसिड्स आदि तत्व होते हैं।

पिक्स कार्बोनिस प्रिपरेटा—Pix Carbonis Praeparata (Pix. Carb. Praep.), I. P., B. P.—ले०; प्रिपेयर्ड कोलटार Prepared Coal Tar—अं०।

प्राप्ति-साधन—व्यावसायिक कोलतार को एक छिछले पात्र में रखकर ५०° तापक्रम पर १ घंटे तक गरम करते हैं और कोलतार को बराबर हिलाते या चलाते रहते हैं। इस प्रकार प्रिपेयर्ड कोलतार प्राप्त होता है।

वर्णन—यह प्रायः काले रंग का चिपचिपा द्रव होता है। इसमें जली हुई वस्तुसी उग्र गंध आती है। इसका पतला लेप करने पर भूरे रंग का मालूम होता है। विलेयता—अल्कोहल् (९०%) तथा सॉल्वेंट ईथर में तो अंशतः घुलता (Partially soluble) है, किन्तु क्लोरोफॉर्म तथा बेंजीन में पूर्णरूप से घुल जाता है।

सोल्यूशिओ पिसिस कार्बोनिस Solutio Picis Carbonis (Sol. Pic. Carbon.) अथवा लाइकर पिसिस कार्बोनिस Liquor Picis Carbonis (Liq. Pic. Carb.), I. P., B. P.—ले०; सॉल्यूशन ऑव कोलतार Solution of Coal tar —अं०। प्रिपेयर्ड कोलतार २०० ग्राम, क्विल्लाया चूर्ण १०० ग्राम, अल्कोहल् (९०%) आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० सॉल्यूशन के लिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

मलहम के रूप (५० से ६० प्रतिशत कोलतार या प्रिपेयर्ड कोलतार) तार का प्रयोग उत्तेजक जीवाणुवृद्धिरोधक या एन्टिसेप्टिक क्रिया के लिए अनेक त्वचा रोगों—पुराना एक्जिमा या विचर्चिका आदि में किया जाता है। सिरप ऑव टार का उपयोग पुरानी खांसी की चिकित्सा में किया जाता है।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—सिरपस पिसिस लिक्विडी Syrupus Picis Liquidae (Syr. Picis. Liq.)—ले० ; सिरप ऑव टार—अं०। टार ५ ग्राम, शर्करा ८५० ग्राम, अल्कोहल् (९० प्रतिशत) ५२.५ मि० लि०; जल १००० मि०लि०। इसका प्रयोग जाड़े की सर्दी की खाँसी (Winter Cough) तथा पुरानी ब्रोंकाइटिस (Chronic Bronchitis) में उपयोगी है।

मात्रा—४ से ८ मि० लि० (६० से १२० बूँद) या १ से २ ड्राम।

२—अंग्वण्टम् पिसिस लिक्विडी Unguentum Picis Liquidae (Ung. Picis. Liq.)—

ले०; आयण्टमेंट ऑव टार--अं० । इसमें टार ७०, पीला मोम (Yellow bees wax) २५ तथा शूकरवसा (Lard) ५ होता है ।

१—लाइकर पिसिस कार्बोनिस	३० बूँद
लाइकर प्लम्बाइ सबएसिटेटिस फोर्ट०	३० बूँद
हाइड्रार्ज अमोनिएटा	१५ ग्रेन
सफेद मृदु पाराफिन	१ औंस

सबको परस्पर मिलावें । इसको चिरकालज विचर्चिका (Chronic eczema) पर लगाने से बहुत लाभ होता है ।

सेलोल (Salol), B. P. C.

रासायनिक संकेत : $C_{13}H_{10}O_3$

पर्याय—फेनिल सेलिसिलेट Phenyl Salicylate ।

वर्णन--सेलोल के रङ्गहीन, पारभासी सूच्याकार मणिभ या क्रिस्टल्स (Translucent acicular Crystals) होते हैं अथवा यह सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Micro crystalline powder) के रूप में होता है । इसमें एक विशिष्ट प्रकार की (That of wintergreen) हल्की सुगन्धि एवं स्वाद होता है । विलेयता--जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है, किन्तु १५ भाग अल्कोहल् (९० प्रतिशत) तथा स्थिर एवं उड़नशील तेलों (Fixed and Volatile oils) में घुल जाता है ।

मात्रा--५ से २० ग्रेन (०·३ से १·२ ग्राम) ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

आमाशय में सेलोल की कोई क्रिया नहीं होती । हाँ आंतों में पहुँचने पर यह अग्न्याशयिक रस (Pancreatic juice) के मेद-पाचीकिण्व (Fat-splitting enzyme) की क्रिया से यह सेलिसिलिक एसिड एवं कार्बोलिक एसिड में वियोजित होकर आँतों पर एन्टिसेप्टिक कार्य करता है । चूँकि आमाशय में सेलोल का परिवर्तन नहीं होता, अतएव इसका उपयोग ऐसी गोलियों के आवरण के लिए किया जाता है, जिनकी क्रिया आमाशय में न होकर आंतों में होनी अभीष्ट होती है ।

(नॉट-आफिशल)

बेटानेफ्थोल Betanaphthol (Betanaph.) या नेफ्थोल (Nephthol) ।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_7OH$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह B—hydroxynaphthalene होता है और Sodium naphthalene—B—Sulphonate तथा Sodium hydroxide को परस्पर मिलाकर गरम करके प्राप्त किया जाता है ।

वर्णन--श्वेत या हल्का मटमैला सफेद क्रिस्टलाइन पपड़ीदार टुकड़ों या चूर्ण (Crystalline lamellae or powder) के रूप में होता है । इससे फिनोल जैसी गन्ध आती है तथा स्वाद में कटु और तीक्ष्ण (Pungent) होता है । विलेयता—ठण्ढे जल में १००० में १ भाग में, अल्कोहल् (९०%) में २ भाग में १ के अनुपात से तथा सालवेंट ईथर, ऑलिव आयल एवं ग्लिसरिन में विलेय (Soluble) होता है ।

असंयोज्य पदार्थ—केम्फर, फेरिक क्लोराइड, मेन्थाल, फेनाजोन एवं फिनोल।

मात्रा—५ से १० ग्रेन (०.३ से ०.६ ग्राम)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बेटानेफ्थाल एक तीव्र जीवाणुवृद्धिरोधक (एन्टिसेप्टिक) एवं जीवाणुनाशक (Disinfectant) द्रव्य है। इस रूप में इसकी क्रिया फिनोल से भी तीव्र होती है। मुखद्वारा सेवन किये जाने पर आमाशयान्त्र से क्षिप्रतापूर्वक शोषित होता है। जिह्वा पर सुन्नता (Numbness) मालूम होती है तथा आमाशय में उष्णता (feeling of warmth) का अनुभव होता है। अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर मिचली, वमन तथा अतिसार आदि उपद्रव पैदा करता है। केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान (Central nervous system) पर पहले कुछ उत्तेजक किन्तु बाद में अवसादक (Depressant) प्रभाव करता है। अधिक मात्राओं में प्रयुक्त होने पर हृदय पर भी अवसादक (Cardiac depressant) प्रभाव करता है। शोषणोपरान्त इसका कुछ भाग शरीर में वियोजित (Degraded) होता है और शेष मूत्र के साथ उत्सर्गित हो जाता है। **मलहम के रूप में इसका प्रयोग अनेक त्वचा रोगों में उपयोगी** होता है। एतदर्थ ३ से ५% बल का मलहम—शिर की तर गंज (Favus), खुजली (Scabies) तथा दद्रु (Ringworm) में उपयोगी है। १०% बल का मलहम गंधक के साथ मिलाकर अपरस या चम्बल (Psoriasis) में प्रयुक्त किया जाता है।

मुखद्वारा सेवन से अंकुशमुखकृमि (Ankylostome duodenale) के उपसर्ग में विशिष्ट क्रिया करता है। एतदर्थ १५ ग्रेन १–१ घंटे पर करके ३ मात्रायें दी जाती हैं। ३–४ घंटे के बाद मैग० सल्फ० द्वारा रेचन कराते हैं। अब अन्य उत्तम कृमिघ्न औषधियाँ भी उपलब्ध हैं।

ओलियम् केडिनम् (ज्युनिपर टार ऑयल), B. P. Oleum Cadinum (Ol. Cadin.)—ले०; केड ऑयल Cade oil, ज्युनिपर टार ऑयल Juniper Tar oil—(अं०)।

प्राप्ति-साधन—यह चीड़ कुल के ज्युनिपेरस ऑक्सीसेड्रस Juniperus oxycedrun L. नामक वृक्ष की लकड़ी का विच्छेदक-विस्रवण करने से प्राप्त होता है।

वर्णन—यह लाली लिए गाढ़े भूरे रंग का अथवा प्रायः काले रंग का तैलीय द्रव (Oily liquid) होता है, जिसमें जलने की सी गंध आती है और स्वाद में तिक्त, कटु (acrid) एवं सुगंधित होता है। विलेयता—जल में तो अत्यल्प प्रमाण में घुलता है, किन्तु अल्कोहल् (९०%) में अंशतः घुल जाता है। गरम अल्कोहल् (९०%) में पूर्णतः घुलनशील होता है। इसके अतिरिक्त सॉलवेंट ईथर में (३ भाग में) तथा क्लोरोफॉर्म में भी घुल जाता है। इसमें केडिनीन (Cadenene) नामक सेस्क्विटर्पीन पाया जाता है।

गुण-कर्म एवं प्रयोग

इसके २ से ४% बल का मलहम अकेले या रिसॉर्सिनाल के साथ मिलाकर विचर्चिका (एक्जिमा) एवं अपरस या चम्बल (Psoriasis) आदि त्वचा रोगों में प्रयुक्त होती है।

(२ आक्सीडायजिंग एजेन्ट्स)

सोल्यूशिओ हाइड्रोजनाइ परॉक्साइडाइ (I. P., B. P.) Solutio Hydrogenii Peroxidi (Sol. Hydrog. Perox.)।

पर्याय—सोल्यूशिओ हाइड्रोजनाइ डाइऑक्साइडाइ Solutio Hydrogenii Dioxidi, लाइकर हाइड्रोजनाइ परॉक्साइडाइ Liquor Hydrogenii Peroxidi—ले०; सॉल्यूशन ऑव हाइड्रोजन परॉक्साइड Solution of Hydrogen Peroxide—अं०; हाइड्रोजन पेराक्साइड—हिं० ।

वर्णन—यह हाइड्रोजन पेराक्साइड का जलीय विलयन (Aqueous Solution) होता है। इसमें २½% (W/V) से ३½% (W/V) तक H_2O_2 होता है। हाइड्रोजन परॉक्साइड का जलीय विलयन रंगहीन द्रव के रूप में होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में साधारण खट्टा (Acid) होता है। सेन्द्रिय पदार्थों (Oxidisable organic matter) तथा कतिपय धातुओं (Certain metals) के संपर्क में आने पर शीघ्र वियोजित होता (Decomposes) है। यह स्थिति इसके क्षारीय होने पर भी होती है। संग्रह एवं संरक्षण—हाइड्रोजन परॉक्साइड की शीशी पर अच्छी तरह शीशे का ही डाट लगा होना चाहिए, अन्यथा द्रव निर्बल हो जाता है। इसको प्रकाश से बचाना चाहिए और ठण्ढी जगह में रखना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

सेन्द्रिय द्रव्यों के सम्पर्क में आने पर इससे आक्सीजन शीघ्रतापूर्वक वियोजित होकर पृथक् होता है, जिसकी क्रिया उस द्रव्य की गंदगी एवं विकारी सूक्ष्म जन्तुओं पर होती है। अतः हाइड्रोजन परॉक्साइड तीव्र जन्तुघ्न (Germicide) प्रभाव करता है। किन्तु इसकी उक्त क्रिया केवल क्षणिक होती है। गंदे धातुओं (Tissues) यथा व्रण आदि के सम्पर्क में आनेपर ऑक्सीजन के पृथक् होने के कारण झाग उठता है, जिसमें गंदी धातुएँ तथा जन्तु आदि गल जाते हैं। अतएव हाइड्रोजन परॉक्साइड का प्रयोग गंदे व्रणों की सफाई के लिए किया जाता है। मुखपाक (Aphthous Stomatitis) में इसका प्रयोग मुखधावन के लिए किया जाता है। इसी प्रकार विंसेंट एन्जाइना (Vincent's Angina) रोग में भी व्यवहृत होता है। सेप्टिक टांसिलाइटिस में इसका प्रलेप करते हैं। दंतपूय (Pyorrhoea alveolaris) में इसके गण्डूष से बहुत लाभ होता है। इसी प्रकार कर्ण से पूयस्राव होने पर इसको कान में डालने से पूय साफ हो जाता है। योनि से दुर्गन्धित स्राव (Vaginitis due to prichomonas vaginalis) होने पर हाइड्रोजन परॉक्साइड के विलयन का डूश करते हैं।

(नान्-ऑफिशल योग)

१—ऑरिस्टिली हाइड्रोजेनाइ परॉक्साइडाइ Auristillae Hydrogenii Peroxidi (Aurist. Hydrog, Perox.), B. P. C.—ले०; हाइड्रोजन परॉक्साइड इयर-ड्राप Hydrogen Peroxide Ear-drops—अं०। हाइड्रोजन परॉक्साइड २ फ्लुइड ड्राम, जल १ औंस। इसमें २५% H_2O_2 होता है।

जिंसाइ परॉक्साइडम् (जिंक परॉक्साड), B. P.
Zinci Peroxidum (Zinc. Perox.),—(ले०)।

पर्याय—जिंक परॉक्साइड zinc Peroxide; मेडिसिनल जिंकपरॉक्साइड Medicinal Zinc Peroxide—अं० ।

प्राप्ति-साधन—यह जिंकपरॉक्साइड, जिंकऑक्साइड तथा जिंकहाइड्राक्साइड का मिश्रण होता है जो जिंकआक्साइड एवं हाइड्रोजन परॉक्साइड को परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ६०% Zn O२, होता है।

वर्णन—यह सफेद या हल्के पीले रंग के चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल में नहीं घुलता; इसी प्रकार सेन्द्रिय विलायक द्रव्यों (ऑर्गेनिक साल्वेंट्स Organic Solvents) में भी नहीं घुलता, किन्तु डायल्यूट मिनरल एसिड्स में विलेय होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

हाइड्रोजन परॉक्साइड की अपेक्षा जिंकपरॉक्साइड अधिक दुर्गन्धिनाशक (Deodorant) एवं जीवाणुनाशक (Disinfectant) प्रभाव करता है। यह वातभी जीवाणुओं (Anaerobic organisms) पर विशेषरूपेण सक्रिय होता है। कोथयुक्त घावों (Gangrenous ulcers) तथा मधुमेहियों के व्रणों एवं विद्रधियों पर इसकी पट्टी लगाई जाती है। चूंकि जिंकपराक्साइड जल में नहीं घुलता, इसलिए पहले पानी में इसका निलम्बन (suspension) बना लेते हैं और इसी द्रव में गॉज भिगोकर पट्टी लगाई जाती है। जल में बनाये हुए ४०% बल के निलम्बन की पट्टी वातभी विकारी दण्डाणुओं यथा स्ट्रेप्टोकोकस हीमोलिटिकस आदि से दूषित व्रणों पर पट्टी के लिए बहुत उपयुक्त होता है।

पोटासियाइ परमैंगेनास (पोटासियम् परमैंगेनेट), I. P., B. P.

Potassii Permanganas (Pot. Permang.)—(ले०)

रासायनिक संकेत : KMn O४.

पर्याय—पोटासियम् परमैंगेनेट Potassium Permanganate—अं०; पोटास—हिं०।

वर्णन—पोटास के गाढ़े बैंगनी या नीलारुण (Dark purple) रंग के चिकने त्रिपार्श्विक (Prismatic Crystals) होते हैं, जिनमें धात्वीय चमक या आभा (मिटेलिक लस्टर Metallic lustre) पाई जाती है। पोटास में वैसे कोई गंध नहीं होती। स्वाद में मधुर तथा कषाय या कसैला (Astringent) होता है। हवा में खुला रहने पर भी विकृत नहीं होता (Stable in air)। विलेयता—जल (१६ भाग) में अच्छी तरह घुल जाता है और इसका विलयन बैंगनी रंग का होता है, जो देखने में सुन्दर मालूम होता है।

मात्रा (I. P. Dose)—१ से ३ ग्रेन (६० से २०० मि० ग्रा० या ½ से १½ रत्ती)।

असंयोज्यता (Incompatibility)—यह आयोडाइड्स तथा प्रह्रासक द्रव्य (Reducing agents) एवं अनेक सेंद्रिय पदार्थों के साथ संयोज्य होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

हाइड्रोजन परॉक्साइड की भांति पोटासियम् परमैंगेनेट भी एक तीव्र जारक-द्रव्य (Oxidising agent) है। विकारीदण्डाणुओं (Bacteria) एवं विषों (Toxins) के सम्पर्क में आने पर यह उनको नष्ट करता है। पोटास की उक्त जारण-क्रिया (Oxidising action) आम्लिक, क्षारीय तथा क्लीव प्रतिक्रिया, तीनों ही प्रकार के सोल्यूशन में समान रूप

से होती है। हाइड्रोजन परॉक्साइड की भांति इससे भी ऑक्सीजन पृथक् होकर अपनी जारण क्रिया करता है और ऑक्सीजन निकल जाने पर यह व्यर्थ या निष्क्रिय हो जाता है। अतएव व्यवहार में इसका उपयोग जीवाणुनाशक (Disinfectant) तथा दुर्गन्धिनाशक (Deodorant) के रूप में किया जाता है। ठोस क्रिस्टल रूप में प्रयुक्त होने पर यह क्षोभक (Irritant) तथा दाहक (Caustic) कर्म करता है। मूल्य की दृष्टि से भी पोटास एक अत्यंत सस्ता जीवाणुनाशक द्रव्य है।

१००० में १ के बल का जलीय सोल्यूशन घावों एवं विद्रधि या फोड़ों के धावन एवं सफाई के लिए प्रयोग किया जाता है। ४००० में १ के बल का विलयन मुख-धावन (Mouth-wash) या कुल्ली (Gargle) करने के लिए परमोपयुक्त है। सस्ता होने के कारण प्रातः कालिक कुल्ली के लिए अस्पतालों में मरीजों को वितरण करने के लिए यह बहुत उपयुक्त है। १०,००० में १ के बल के सोल्यूशन का उपयोग योनिधावन (Vaginal Irrigation) तथा ५००० में १ के बल का घोल सूजाक में उत्तरबस्ति या मूत्रप्रणाली (मूत्रप्रसेक Urethra) के धावन के लिए बहुत उपयुक्त है। अपेक्षाकृत शक्तिशाली घोल (१०० में १ या ५०० में १ के बल का) हैजे आदि रोग में दूषित मल, वमन, पात्र, कपड़े आदि को विसंक्रमित (Disinfect) करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

अफीम, मॉर्फीन एवं फॉस्फोरसजन्य विषमयता में पोटास का प्रयोग अगद (Antidote) के रूप में किया जाता है। एतदर्थ इसके (५००० में १ के बल के) जलीय घोल से आमाशय का प्रक्षालन (Gastric lavage) किया जाता है। इसके अतिरिक्त सर्पदंश (Snake bite) में पोटाश के क्रिस्टल्स का उपयोग प्रारम्भिक चिकित्सा के रूप में किया जाता है। जिस जगह पर काटने की आशंका हो, चीरा लगाकर वहाँ का दूषित रक्त दबाकर निकाल दिया जाता है और पोटासके क्रिस्टल्स भर दिए जाते हैं; किन्तु काटने के तुरंत बाद ही लगाने से लाभ की आशा की जा सकती है।

(नॉन्-आफिशल योग)

१—लाइकर पोटासियाइ परमैंगेनेटिस Liquor Potassii Permanganatis—ले०। 1% पोटास होता है। स्वाद में अरुचिकारक होता है।

मात्रा—१२० से २४० बूँद या ८ से १५ मि० लि०।

२—केल्सियाइ परमैंगेनास Calcii Permanganas—ले०; केल्सियम् परमैंगेनेट Calcium Permanganate—अं०। इसके बैंगनी रंग के क्रिस्टल्स होते हैं, जो आर्द्रता में खुला रहने से पसीजते (Deliquescent) हैं। यह जल में घुलनशील होता है।

मात्रा—½ से १½ ग्रेन (३० से १०० मि० ग्रा०)

३—जिंक परमैंगेनेट Zinc Permanganate। इसके भूरापन लिए काले रंग के पसीजने वाले क्रिस्टल्स होते हैं जो जल में अच्छी तरह घुल जाते हैं। पोटासियम् परमैंगेनेट की अपेक्षा यह अधिक कसैला होता है। इसका प्रयोग प्रायः पोटासियम् परमैंगेनेट की ही भाँति किया जाता है।

सोडियाइ परबोरास (सोडियम् परबोरेट), (I. P.)

Sodii Perboras (Sod. Perbor.)--ले०; सोडियम् परबोरेट Sodium Perborate--अं० ।

रासायनिक संकेत $Na\ B\ O_3, 4\ H_2O$.

वर्णन--इसके पारदर्शी त्रिपार्श्विक क्रिस्टल्स (Transparent Prismatic Crystals) होते हैं अथवा सफेद रंग का चूर्ण होता है । इसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती है तथा स्वाद में नमकोन (Saline) होता है । विलेयता--पानी में घुल जाता है, परन्तु घोल बनाने में कुछ औषधि वियोजित होकर (Decomposition) नष्ट हो जाती है, किन्तु पानी को अपेक्षा बोरिक एसिड एवं साइट्रिक एसिड तथा ग्लिसरिन के घोल या सॉल्यूशन में अधिक घुलनशील होता है । मैगनीसियम् सल्फेट या अमोनियम् सल्फेट को उपस्थिति में भी इसकी घुलनशीलता बढ़ जाती है । इसमें ९६ प्रतिशत से १०३ प्रतिशत तक $Na\ B\ O_3\ 4H_2O$ होता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

सोडियम् परबोरेट की क्रिया भी हाइड्रोजन परॉक्साइड की ही भांति होती है । मुखपाक (Stomatitis) तथा दंतपूय (Gingivitis) में १ ग्लास पानो में १ चाय का चम्मच सोडियम् परबोरेट मिलाकर कुल्ला करने से बहुत लाभ होता है । जल और ग्लिसरिन के साथ पेस्ट बनाकर विंसेंट एन्जाइना (Vincent's Angina) में प्रयुक्त करते हैं । थोड़ी देर के बाद गरम पानी से कुल्ला करना चाहिए । दंतमंजनों में भी सोडियम् परबोरेट मिलाया जाता है ।

(३—हेलोजन्स तथा उनके यौगिक)

ब्लीचिंग पाउडर (Bleaching Powder (विरञ्जक चूर्ण), I. P., B. P.

नाम—केल्क्स क्लोरिनेटा Calx Chlorinata (Calx Chlorinat.)—ले०; क्लोरिनेटेड लाइम Chlorinated Lime—अं०; ब्लीचिंग पाउडर Bleaching Powder; विरञ्जक चूर्ण या रंग उड़ाने की बुकनी—सं०, हिं० ।

प्राप्ति-साधन--केल्सियम् हाइड्रॉक्साइड एवं क्लोरीन की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा क्लोरिनेटेड लाइम प्राप्त किया जाता है । इससे कम से कम ३०% (W/W) क्लोरीन प्राप्त होता है ।

वर्णन—यह एक गंदले (मटमैले) सफेद रंग का चूर्ण होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है । विलेयता—जल एवं अल्कोहल (९५%) में अंशतः घुलता (Partly soluble) है । हवा में खुला रहने से नम हो जाता है और इस प्रकार देर तक रहने से खराब हो जाता है । संरक्षण--इसका संग्रह अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करना चाहिए ।

क्लोरामिना (क्लोरामीन), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत $C_7\ H_7\ O_2\ NCL\ Sna, 3H_2O$.

नाम—क्लोरामीना Chloramina (Chloram.)—ले०; क्लोरामीन Chloramine, क्लोरामीन—टी Chloramine—T—अं० ।

प्राप्ति-साधन--क्लोरामीन रासायनिक दृष्टि से toluene--p—sulphon sodiochloroamide होता है । यह सोडियम् हाइपो क्लोराइट तथा toluene-p-sulphonamide की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है । इसमें ९८ प्रतिशत से १०३ प्रतिशत तक $C_7\ H_7\ O_2\ N\ CL\ S\ Na, 3H_2O$ होता है ।

वर्णन—इसके सफेद क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण होते हैं, जिसमें से क्लोरीन की गंध आती है। स्वाद में तिक्त एवं अरुचिकारक होता है। हवा में खुला रहने से क्लोरीन उड़ जाता है, जिससे क्रिस्टल्स प्रस्फुटित होकर (Effloresces) विकृत हो जाते हैं और पीलेरंग का पड़ जाता है। ९५° से १००° के भीतर तापक्रम पर गरम करने से क्रिस्टलीकरण के जल (Water of Crystallisation) के निकल जाने पर भी यह वियोजित नहीं होता। विलेयता—७ भाग ठंडे पानी तथा २ भाग उबलते पानी में घुलता है; अल्कोहल (९५ प्रतिशत) में भी (१२ भाग में) घुल जाता है, किन्तु सालवेंट ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा बेंजीन में अविलेय (Insoluble) होता है। संरक्षण—क्लोरोमीन का संग्रह अच्छी तरह डाटबंद शीशे के पात्रों में करना चाहिए तथा प्रकाश से बचाना चाहिए। शीशियों का संग्रह ठंढी जगह में करना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

क्लोरिनेटेड लाइम (ब्लीचिंग पाउडर) एक उत्तम तीव्र जीवाणुनाशक (Bactericide), दुर्गन्धिनाशक (Deodorant) तथा विरञ्जक (Bleaching) द्रव्य है। जब यह विकारी जीवाणुओं एवं पूतिजनक द्रव्यों के सम्पर्क में आता है, तो इसका क्लोरीन जीवाणुगत एवं सड़े-गले पदार्थों के प्रोटीन के साथ संयुक्त होकर सॉल्युबुल क्लोरामीन (Soluble Chloramines) में परिवर्तित हो जाता है। इसी के कारण यह उक्त क्रियायें करता है। अतएव इसका उपयोग मल, मूत्र तथा अन्य दूषित सेन्द्रिय पदार्थों (Infected organic materials) एवं जलाशयों के विसंक्रमण के लिए किया जाता है। अन्त्र में विकृति करनेवाले सभी जीवाणु इसके प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं। अतः पीने के पानी का शोधन करने के लिए यह बहुत उपयुक्त और साथ ही सस्ता भी है। एतदर्थ १,०००,००० भाग जल में ०·२५ भाग के हिसाब से ब्लीचिंग पाउडर का संकेन्द्रण पर्याप्त है। तालाब का पानी शुद्ध करने के लिए भी यह प्रयुक्त किया जा सकता है। ब्लीचिंग पाउडर द्वारा शोधित जल का जायका कुछ खराब-सा हो जाता है। इसको दूर करने के लिए सोडियम् थायो—सल्फेट (अल्प मात्रा में १–२ क्रिस्टल) मिलाया जा सकता है।

डेकिन साल्यूशन का प्रयोग व्रणों (Wounds) एवं जले हुए स्थल की सफाई के लिए किया जाता है। इसमें ३–४ गुना पानी मिलाकर इसका प्रयोग मुखपाक एवं कण्ठशालूक (टांसिलाइटिस) आदि रोगों में गण्डूष (Gargle) या कुल्ली करने के लिए किया जा सकता है।

बोरिक एसिड एवं क्लोरिनेटेड लाइम के साल्यूशन का (यूँसाल Eusol) के रूप में दन्तपूय (Pyorrhoea alveolaris) आदि मुखरोगों में गण्डूष के लिए तथा पैर के घाव एवं कोथ (Gangrene of the foot) आदि में किया जाता है।

यह एक उत्तम विरञ्जक द्रव्य भी है। प्रायः सभी रंग इसके लगाने से उड़ सकते हैं।

(नॉट ऑफिशल)

१—कोरिनेटेड लाइम एण्ड बोरिक एसिड सॉल्यूशन Chorinated Lime and Boric Acid Solution अथवा सॉल्यूशन ऑव क्लोरिनेटेड लाइम विद बोरिक एसिड Solution of Chlorinated Lime with Boric Acid, B. P. C.—अं०; लाइकर केल्सिस क्लोरिनेटी कम् एसिडो बोरिको Liquor Calcis Chlorinatae Cum Acido Borico (Liq. Calc. Chlorinat. C. Acid. Boric.)—ले०।

पर्याय—यूसोल (Eusol)। क्लोरिनेटेड लाइम् ५५ ग्रेन; बोरिक एसिड चूर्ण ५५ ग्रेन; जल १० औंस तक। २ सप्ताह तक यह सॉल्यूशन प्रयोग के योग्य रहता है।

(ऑफिशल योग)

१—सोल्यूशिओ सोडिई क्लोरिनेटी चिरर्गिकालिस Solutio Sodae Chlorinatae Chirurgicalis (Sol. Sod. Chlorinat. Chir,), I. P., B. P.—ले०; सर्जिकल सॉल्यूशन ऑव क्लोरिनेटेड सोडा Surgical so lution of Chlorinated Soda—अं०।

पर्याय—डेकिन का सॉल्यूशन Dakin's Solution; लाइकर सोडिई क्लोरिनेटी चिरर्गिकालिस Liquor sodae Chlorinatae Chirurgicalis।

इसमें से ०·५० प्रतिशत से ०·५५ प्रतिशत तक (W/V) क्लोरीन प्राप्त होता है। उपादान—क्लोरिनेटेड लाइम्, सोडियम् कार्बोनेट, बोरिक एसिड प्रत्येक आवश्यकतानुसार—परिस्रुत जल १०००.० मि० लि०।

२—हेलोजोनम् Halazonum (Halazon), B. P. C.—ले०; हेलोजोन (Halazone)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_7 H_5 O_4$ NSCl २.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह p-Carboxybenzenesulphon-dichloro amide होता है, जो सफेद या पीलापन लिए सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। इसमें क्लोरीन की तीव्र गन्ध आती है। २६·३ प्रतिशत सक्रिय क्लोरीन होता है। इसका संरक्षण अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करना चाहिए, ताकि नमी अन्दर न पहुँचे। विलेयता—पानी एवं अल्कोहल् में तो साधारण मात्रा में ही घुलता है, किन्तु अल्कली हाइड्रॉक्साइड्स के जलीय विलयन में अच्छी तरह घुल जाता है। प्रयोग—इसके टॅबलेट्स का प्रयोग पानी की सफाई के लिए किया जाता है। प्रत्येक टिकिया में ¼ ग्रेन (१५ मि० ग्रा०) हेलोजन तथा सोडियम् कार्ब० एवं सोडियम् क्लोराइड आदि होते हैं। ४० औंस पानी के लिए १ टिकिया पर्याप्त है।

३—डाइक्लोरामीना (Dichloramina)—ले०; डाइक्लोरामीन-टी Dchloramine-T. इसमें २८ से ३० प्रतिशत सक्रिय क्लोरीन होती है। यह हल्के पीले रंग के क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जिसमें क्लोरीन की गन्ध आती है। हवा में खुला रहने से वियोजित (Decomposes) हो जाता है और क्लोरीन निकल जाती है।

४—एन्टी-गैस आयण्टमेंट नं० १।

पर्याय—ब्लीच आयण्टमेंट (Bleach Ointment)। इसमें बराबर मात्रा में ब्लीचिंग पाउडर तथा श्वेतमृदुपाराफिन (White soft Paraffin) होते हैं। इसका प्रयोग लिक्विड मस्टर्ड-गैस के प्रतिविष (Antidote) के रूप में किया जाता है।

५—एन्टी-गैस आयण्टमेंट नं० २। यह वेनिशिंग क्रीम में क्लोरामीन-टी मिलाकर बनाया जाता है। मस्टर्ड-गैस (Mustard gas) प्रकोप में इसका प्रयोग रोगप्रतिषेध (Prophylaxis) एवं अगद दोनों ही रूप से व्यवहृत होता है।

६—क्लोरोएजोडिन Chloroazodin।

पर्याय—एजोक्लोरामिड Azochloramid। इसकी चमकीली पीले रंग की सुइयां या हल्के पत्रमय पपड़ीदार टुकड़े (Flakes) होते हैं। जल, अल्कोहल् तथा ग्लिसरिन में कुछ कुछ घुल

जाता है। किन्तु प्रकाश से या गर्मी से विलयन खराब हो जाता है। अन्य क्लोरामीन यौगिकों में यह सबसे अधिक जीवाणुनाशक क्रिया करता है।

आयोडम् (आयोडीन), I. P., B. P. Iodum (ले०); Iodine (अं०)।

रासायनिक संकेत : I.

प्राप्ति-साधन—आयोडीन नैसर्गिक रूप से प्राप्त होनेवाले आयोडाइड्स तथा आयोडेट्स (Iodates) से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९३ प्रतिशत I. होता है।

नामकरण—इसका लेटिन नाम आयोडम् तथा अंग्रेजी नाम आयोडीन दोनों व्युत्पन्न हैं इसके यूनानी (Greek) नाम आयोडीस (Iodes) से, जिसका अर्थ होता है "बैंगनी या बनफ्शई रंग"। इसको गरम करने पर बैंगनी रंग का बाष्प निकलता है।

वर्णन—आयोडीन के नीलिमा लिए काले रंग के त्रिपार्श्विक टुकड़े (Rhombic prisms) या चपड़े टुकड़े (Plates) होते हैं, जिसमें धात्वीय-आभा (Metallic lustre) होता है। हाथ में अनुभव करने से टुकड़े गुरु (Heavy) तथा अंगुलियों के बीच मसलने से भंगुर (Brittle) होते हैं। आयोडीन में एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती है तथा साधारण तापक्रम पर भी यह बहुत उड़नशील (Volatile) होता है। अतएव आयोडीन का संरक्षण खूब अच्छी तरह शीशे के डाट-बंद शीशियों में करना चाहिए। यदि मिट्टी के पात्र में अथवा शीशी के पात्र में इसको रखना हो तो पात्र का मुँह अच्छी तरह मोम से बंद कर देना (Well waxed bung) चाहिए। विलेयता—जल में तो यह केवल अंशतः विलेय होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) में अपेक्षाकृत अधिक घुलता है। क्लोरोफॉर्म, सालवेंट ईथर तथा ग्लिसरोल एवं कार्बन-डाइसल्फाइड में अच्छी तरह घुलता है। आयोडाइड्स के जलीय विलयन में फौरन् घुल जाता है।

असंयोज्य पदार्थ—क्षार (Alkalies) तथा क्षारीय कार्बोनेट्स (Alkali Carbonates); तारपीन का तेल तथा अन्य उड़नशील तेल (Volatile oils); टैनिन तथा वानस्पतिक कषाय द्रव्य (Vegetable astringents)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

बाह्य—बाह्यतः त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से यह मात्रा के न्यूनाधिक्य से क्षोभक (Irritant), रक्तिमोत्पादक (Rubefacient) एवं फफोलाजनक (Vesicant) प्रभाव करती है। त्वचा पर लगाने से वहाँ पीलापन लिए भूरा रंग पड़ जाता है, और बहिस्त्वचा छिल जाती है। रक्तिमाजनक एवं प्रतिक्षोभक होने से स्रावयुक्त शोथों पर लगाने से स्राव के शोषण एवं शोथ के विलयन में सहायक है। अतएव चिरकालीन संधिशोथ, लसीकाग्रंथिशोथ (गिल्टी) एवं फुफ्फुसावरणशोथ में उस क्षेत्र की त्वचा पर आयोडीन आयण्टमेंट या टिंक्चर आयोडीन लगाने से शोथ का विलयन होता है। इसके लिए 'नान्-स्टेनिंग आयण्टमेंट आव आयोडीन' में मेथिल सेलिसिलेट मिलाकर प्रयुक्त करना चाहिए। टिंक्चर आयोडीन फोर्ट० का प्रयोग एक ही स्थान पर दिन में दो बार से अधिक नहीं करना चाहिए अन्यथा वहाँ की त्वचा के जल जाने की आशंका रहती है। इसके अतिरिक्त त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से आयोडीन एन्टि-सेप्टिक, जीवाणुनाशक एवं पराश्रयी कीटनाशक (Antiparasitic) प्रभाव भी करती है। इसमें एन्टिसेप्टिक प्रभाव परक्लोराइड ऑव मरकरी से भी अधिक होता है। इसके इस क्रिया का उपयोग शल्यचिकित्सा (Surgery) में त्वचा के विसंक्रमण (Sterilisation of

the skin) के लिए किया जाता है। एन्टिसेप्टिक होने के कारण साधारण चोट-चपेट तथा ताजे घाव आदि पर टिंक्चर आयोडीन का प्रयोग बहुत किया जाता है। गर्भाशयान्तःशोथ (Endometritis) में स्थानिक प्रयोग के लिए आयोडाइज्ड फिनोल, आयोडीन का एक उत्तम योग है।

आभ्यन्तर--मन्दबल टिंक्चर आयोडीन (Liquor iodi mitis) का प्रयोग दन्त-चिकित्सा में मसूढ़ों के शोथ (Gingivitis) तथा दंतवेष्ठविद्रधि (Gum boil) में प्रलेप (Paint) के रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त गरारा (गार्गिल) के रूप में इसका प्रयोग पारदविषमयता से होनेवाले मुखपाक या मुख की अन्य सव्रणावस्था में करते हैं। एतदर्थ आधपाव जल में १ से २ ड्राम टिंक्चर आयोडीन (मन्दबल mitis) मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। मेंडलसपेंट को कण्ठशालूक या टांसिलाइटिज (Tonsillitis) तथा ग्रस-निकाशोथ (Granular pharyngitis) में कण्ठप्रलेप या पिगमेंट के रूप में बरता जाता है। बोरिक एसिड में आयोडीन मिलाकर मध्यकर्णशोथ (Otitis media) में इस चूर्ण का प्रधमन (Insufflation) किया जाता है।

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आमाशय में तथा आँतों में पहुँचने पर यह आयोडाइड के रूप में परिवर्तित होता है और इसी रूप में शोषित भी होता है। शोषणोपरान्त अधिकांश भाग थाइरॉक्सीन (Thyroxine) के रूप में ग्रैवेयकग्रंथि (थायराइड ग्लैंड) में संग्रहीत होता है। अतएव थायरॉयड के क्रियाव्यापार के साथ आयोडीन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। इसका अभाव होने पर गलगण्ड आदि रोग उत्पन्न होते हैं। इस विषय पर थायरॉयड पर कार्य करनेवाली औषधियों के प्रकरणमें विशेष प्रकाश डाला जा चुका है। शरीरसे आयोडीनका निस्सरण आयो-डाइड के रूप में मूत्र, स्तन्य, पसीना तथा श्वासमार्ग के द्वारा होता है। अल्कलायड्स को अधःक्षिप्त करने के कारण इसका उपयोग प्रतिविष के रूप में अल्कलायडल-विषमयता में किया जाता है। एतदर्थ २५० भाग जल में १ भाग स्ट्रांग टिंक्चर आयोडीन सॉल्यूशन का प्रयोग करते हैं।

अनेक आयोडीन-यौगिकों का उपयोग क्ष-किरण परीक्षण के लिए भी किया जाता है।

विषाक्तता--मुख द्वारा टिंक्चर आयोडीन या ऐसे ही अन्य आयोडीन का सेवन अत्यधिक मात्रा में करने से आयोडीन-विषाक्तता हो जाती है। ऐसी स्थिति में प्रयोग के बाद ही आमाशय में पीड़ा, वमन आदि उपद्रव उठ खड़े होते हैं। मुँह में धात्वीय स्वाद (Metallic taste) मालूम होता है। अतिसार शुरु हो जाता है और पाखाने में खून भी आ सकता है। वमन प्रायः आयोडीन के रंग का होता है अथवा यदि रोगी ने कार्बोहाइड्रेट-प्रचुर आहार लिया है, तो नीले रंग का हो सकता है। कहने का तात्पर्य यह है, कि आयोडीन-विषमयता में तीव्र आमाशयान्त्रप्रदाह (Gastroenteritis) की स्थिति उत्पन्न होती है और उपेक्षा होने पर निपात (Collapse) की स्थिति होकर श्वसन एवं हृदय की क्रियावरोध से मृत्यु तक हो जाती है।

चिकित्सा—आमाशयप्रक्षालन करना चाहिए। स्नेहन द्रव्य यथा अंडेकी सफेदी, स्टार्च आदि मुखद्वारा देना चाहिए। पानी में क्षार घोलकर पीने को देना चाहिए। अगद के रूप में सोडि-यम् थायोसल्फेट के ५% बलका सॉल्यूशन प्रयुक्त कर सकते हैं।

(ऑफिशल योग)

१—सोलूशिओ आयोडाइ एक्वोजा Solutio Iodi Aquosa (Sol. Iod. Aquosa), P; लाइकर आयोडाइ एक्वोसस Liquor Iodi Aquosus (Liq. Iod. Aquos.), लाइकर ोडाइ कम्पोजिटस Liquor Iodi Compositus (Liq. Iod. Co,), B. P.—ले० ; एक्वियस ूशन ऑव आयोडीन Aqueous Solution of Iodine—अं० ।

पर्याय—ल्यूगॉल्स सॉल्यूशन Lugol's Solution ; ल्यूगॉल की आयोडीन—हिं० । इसमें ५ शत (W/V) आयोडीन तथा १० प्रतिशत (W/V) सोडियम् आयोडाइड (I. P.) या सियम् आयोडाइड (B. P.) होता है ।

निर्माण-विधि—आयोडीन ५० ग्राम ; सोडियम् आयोडाइड (I. P.) या पोटासियम् आयो ड (B. P.) १०० ग्राम, परिस्रुत जल (DistilledWater) १००० मि० लि० तैयार धि के लिए। पहले १०० सी० सी० जल में सोडियम् या पोटासियम् आयोडाइड तथा आयो को विलीन (Dissolve) करें। फिर उसमें इतना परिस्रुत जल मिलादें कि तैयार औषधि मात्रा १००० सी० सी० या मि० लि० हो जाय। संरक्षण—ल्यूगॉल सोल्यूशन को अच्छी तरह के डाटवन्द शीशियों (Well-Closed glass-Stoppered bottles) में करना चाहिए।

मात्रा—५ से १५ बूंद या मिनम् (०·३ से १ मि० लि०)। १५ बूंद सोल्यूशन में आयोडीन मात्रा ½ ग्रेन तथा टोटल आयोडीन—स्वतंत्र एवं संयुक्त Free and Combined—की मात्रा न होती है।

२—सोलूशिओ आयोडाइ स्पिरिटुओसा फोर्टिस Solutio Iodi Spirituosa Fortis, ुरा आयोडाइ फोर्टिस Tinctura Iodi Fortis, लाइकर आयोडाइ फोर्टिस Liquor Iodi Fortis iq. Iod. Fort.), I. P., B. P.—ले० ; स्ट्रांग सोल्यूशन ऑव आयोडीन Strong Solution odine, स्ट्रांग टिंक्चर ऑव आयोडीन Strong Tincture of Iodine—अं० ; तीव्रबल टिंक्चर ोडीन—हिं० । इसमें १०% (W/V) आयोडीन तथा ६% (W/V) सोडियम् आयोडाइड P.) या पोटासियम् आयोडाइड (B. P.) होता है।

निर्माण-विधि—आयोडीन १०० ग्राम; सोडियम् आयोडाइड या पोटासियम् आयोडाइड ६० ; परिस्रुत जल (Distilled Water) १०० मि० लि० (सी० सी०) ; अल्कोहल् (९०%) श्यकतानुसार १००० मि० लि० के लिए। पहले परिस्रुत जलमें आयोडीन और सोडियम् पोटासियम् आयोडाइड को घोल लें फिर उसमें अल्कोहल् (९० %) इतना मिलावें कि तैयार धि की मात्रा १००० मि० लि० हो जाय।

३—सोलूशिओ आयोडाइ स्पिरिटुओजा मिटिस Solutio Iodi Spirituosa Mitis (Sol. . Spirit. Mit.), लाइकर आयोडाइ मिटिस Liquor Iodi Mitis (Liq. Iod. Mit.), I. P., P.—ले०; वीक सोल्यूशन ऑव आयोडीन Weak Solution of iodine, टिंक्चर ऑव आयोडीन cture of Iodine—अं० ; टिंक्चर आयोडीन—हिं० । इसमें २½ % (W/V) आयोडीन तथा % (W/V) सोडियम् या पोटासियम् आयोडाइड होता है।

निर्माण-विधि—आयोडीन २५ ग्राम ; सोडियम् आयोडाइड या पोटासियम् आयोडाइड ग्राम ; डिस्टिल्ड वाटर २५ मि० लि० ; अल्कोहल् (९० %) आवश्यकतानुसार १००० मि०

लि० के लिए। ३० बूंद या मिनम् टिंक्चर आयोडीन में ⅘ ग्रेन आयोडीन तथा १⅙ ग्रेन टोटल आयोडीन (स्वतंत्र तथा संयुक्त Free and Combined) होती है।

मात्रा—५ से ३० बूंद या मिनम् (०·३ से २ मि० लि०)।

(नॉट आफिशल)

अन्य योग (B. P. C. Preparations)।

१—कम्पाउण्ड पेंट ऑव आयोडीन (Compound Paint of Iodine), आयोडीन कम्पाउण्ड पेंट Iodine Compound Paint—अं०; पिगमेंटम् आयोडाइ कम्पोजिटम् Pigmeutum Iodi Compositum (Pig. Iod. Co.)—ले०।

पर्याय—मेन्डल्स पेंट Mandl's Paint—अं; मेंडल का कण्ठलेप या आयोडीन का कण्ठ-प्रलेप—हिं०। इसमें १·२५% आयोडीन, २·५% पोटासियम् आयोडाइड तथा अल्कोहल् (९०%) एवं ग्लिसरिन आदि होते हैं।

निर्माण-विधि—आयोडीन ५५ ग्रेन, पोटासियम् आयोडाइड ¼ औंस, जल ⅛ फ्लुइड औंस; पेपरमिंट का तेल (Peppermint oil) २० बूंद या मिनम्; अल्कोहल् (९०%) १८० मिनम्, जल आवश्यकतानुसार १० औंस तैयार औषधि के लिए। पेपरमिंट के तेल को अल्कोहल् में घोल लें। आयोडीन तथा पोटासियम् आयोडाइड को जल में घोलें और इसमें थोड़ा-सा ग्लिसरिन मिला दें। अब सबको परस्पर मिलाकर उसमें इतना ग्लिसरिन और मिलावें कि अभीष्ट मात्रा में औषधि तैयार हो जाय।

२—नॉन्-स्टेनिंग आयण्टमेंट ऑव आयोडीन Non-Staining Ointment of Iodine—अं०; अंग्वण्टम् आयोडाइ डेनिग्रिसेन्स Unguentum Iodi Denigrescens (Ung. Iod. Denig.)—ले०। विना दागवाला आयडीन मलहम—हिं०। इसमें ५% आयोडीन होता है। मूंगफली के तेल एवं मृदु पीली वैसलीन (Yellow Soft Paraffin) में बनाया जाता है।

३—नॉन-स्टेनिंग आयण्टमेंट ऑव आयोडीन विद मेथिल सेलिसिलेट Non-staining Ointment of Iodine with Methyl Salicylate—अं०; अंग्वण्टम् आयोडाइ डेनिग्रिसेन्स कम् मेथिलिस सेलिसिलेट Unguentum Iodi Denigrescens Cum Methylis Salicylate (Ung. Iod. Denig. C. Methyl· Salicyl.)—ले०। मेथिल सेलिसिलेट ½ औंस; नान्-स्टेनिंग आयण्टमेंट ऑव आयोडीन १० औंस। मलहम को मन्द आंच पर पिघलाकर उसमें मेथिल सेलिसिलेट मिला दें।

(नॉट-ऑफिशल)

आयडोफॉर्मम् (आयडोफार्म), B. P. C.

Iodoformum (Iodof.)-ले०; Iodoform-अं०।

रासायनिक संकेत : CHI_3.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—आयडोफार्म, रासायनिक दृष्टि से ट्राइ-आयडोमिथेन (Tri-iodo-methane) होता है। आयडोफार्म के चमकीले जम्बीरवर्ण (Shining lemonyellow) के छोटे-छोटे षट्कोणीय क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा चूर्ण के रूप में होता है। आयडोफार्म में एक विशिष्ट प्रकार की अरुचिकारक गंध एवं स्वाद होता है। खुला रहने से धीरे-धीरे उड़ जाता है। विलेयता—जल में

तो यह अत्यल्प मात्रा में घुलता है, किन्तु ८ भाग साल्वेंट ईथर, १० भाग क्लोरोफॉर्म, १०० भाग अल्कोहल् (९० प्रतिशत) तथा स्थिर एवं उड़नशीलतैलों (Fixed and volatile oils) में घुल जाता है। इनके अतिरिक्त ७½ भाग बेंजीन में भी घुलनशील होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य। साधारणतया त्वचा पर स्थानिक प्रयोग से आयडोफॉर्म की कोई विशिष्ट क्रिया नहीं होती, हाँ जिन व्यक्तियों में इसके प्रति असह्यता (Susceptibility) होती है, उनमें जिस स्थान पर लगाया गया हो वहाँ क्षोभक प्रभाव होकर दाने निकल आते हैं। औषधीय प्रयोग की दृष्टि से स्थानिक प्रयोग से यह साधारण **एन्टिसेप्टिक** तथा स्वापजनक (Anaesthetic) एवं दुर्गन्धिनाशक (Dedodrant) प्रभाव करता है। जब यह वैकृतिक धातुओं (Diseased tissues) के सम्पर्क में आता है, तो इससे आयोडीन वियोजित होकर पृथक् हो जाता है। उक्त क्रियायें प्रायः इसी आयोडीन के कारण होती हैं। शल्यचिकित्सा में इसका प्रयोग अनेक रूपों में एन्टिसेप्टिक प्रभाव के लिए किया जाता है। जैसे बिस्मथ आयडोफॉर्म पेस्ट, चूर्ण, आयण्टमेंट (मलहम), इमल्शन आदि। घावों एवं नासूर (Sinuses) तथा भगन्दर (Fistula) में वत्ती देने के लिए **ऑयडोफॉर्म गॉज** का व्यवहार किया जाता है। बिस्मथ-आयडोफॉर्म पेस्ट की अपेक्षा इसका दूसरा योग **जिंक आयडोफॉर्म पेस्ट** अधिक अच्छा होता है। बोरिक एसिड में आयडोफॉर्म मिलाकर इस चूर्ण का उपयोग कर्णस्राव (Otorrhoea) में प्रशमन करने के लिए करते हैं। १० में १ के बल का आयडोफॉर्मआयण्टमेंट गुदकण्डू (Pruritusani) में लगाने से लाभ होता है। शस्त्रकर्म करने के बाद उसके चारो ओर विसंक्रमण के लिए कम्पाउण्ड आयडोफार्म पेंट लगा देते हैं। ग्लिसरिन वॉटर में बनाये हुए आयडोफॉर्म के निलम्बन का उपयोग यक्ष्मज नाड़ीव्रण (Tubercular Sinuses) के प्रक्षालन एवं पूरण के लिए किया जाता है।

विषाक्त प्रभाव—निरन्तर अधिक काल तक ड्रेसिंग आदि में आयडोफार्म के प्रयोग से कभी-कभी इसका शोषण होकर चिरकालज विषमयता का रूप उत्पन्न होता है। किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में स्वभाववैशिष्ट्य के कारण आयडोफार्म के प्रति असह्यता होती है। विषाक्तता होने पर औषधि का प्रयोग फौरन् बन्द कर देना चहिए। सोडियम् बाई कार्बोनेट (१५ ग्रेन) जल में मिलाकर घंटे-घंटे पर देना चाहिए। रेचन के लिए 'मिल्क ऑव मैगनीसिया' १ ड्राम ३-३ घंटे पर दें। जब रेचन होने लगे तो ऐसी एक मात्रा प्रतिदिन दें। मानसिक उपद्रवों के शमन के लिए मुखद्वारा पोटासियम् ब्रोमाइड देना चाहिए।

नॉट-ऑफिशल

१—पिगमेंटम् आयडोफॉर्माई कम्पोजिटम् Pigmentum Iodoformi Compositum (Pig. Iod. Co.),B. P. C.–ले०; कम्पाउण्ड पेंट ऑव आयडोफार्म–अं०।

पर्याय—ह्वाइट हेड्स वार्निश White Head's Varnish। इसमें आयडोफॉर्म १० भाग, सुमात्रा बेंजोइन १०, लोबान (Storax) ७½, बलसम ऑव टोलू ५ तथा साल्वेंट ईथर आवश्यकतानुसार १०० भाग के लिए।

२—थाइमोलिस आयोडाइडम् (Thymolis Iodidum)।

पर्याय—एरिस्टोल (Aristol)। यह आयोडीन तथा थायमोल की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ४०% आयोडीन (जाम्बुकी) होती है।

वर्णन—लाली लिए भूरे रंग का चूर्ण होता है, जो जल एवं ग्लिसरिन में तो अविलेय (Insoluble) होता है; किन्तु कोलोडिअन, ईथर तथा तेलों में घुल जाता है।

उपयोग—विचर्चिका तथा अपरस (Psoriasis) में इसका प्रयोग मलहम (१०%), डस्टिंग पाउडर के रूप में अथवा कोलोडिअन में मिलाकर किया जाता है।

(४—कोलतार रंजक यौगिक अथवा संश्लिष्ट कृत्रिम रंजक यौगिक)।

(नॉट-ऑफिशल)

एक्रिफ्लेविना (एक्रिफ्लेविन), B. P. C.

Acriflavina (Acriflavin.)—ले०; Acriflavine—(अं०)।

वर्णन—एक्रिफ्लेविन नारङ्ग-लाल (Orange-red) या लाल रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो गन्धहीन तथा स्वाद में अम्ल (खट्टा) होता है। रासायनिक दृष्टि से यह 2: 8-diamino-10-methyl acridinium chloride hydrochloride ($C_{१४}H_{१४}N_3Cl$, Hcl) तथा 2 : 8—diamino acridine dihydrochloride ($C_{१३}H_{११}N_3$, 2HCl) का मिश्रण होता है। इसमें टोटल एक्रीडीन्स (Total acridines : $C_{१४}H_{१४}N_3Cl$, HCl) ९८ प्रतिशत होता है।

विलेयता—३ भाग जल तथा ५०० भाग नार्मल सेलाइन (लवण जल) में तथा इसके अतिरिक्त अल्कोहल् तथा ग्लिसरीन में भी घुलता है, किन्तु ईथर, क्लोरोफॉर्म, लिक्विड पॉराफिन, स्थिर एवं उत्पत् तेलों में प्रायः नहीं घुलता (Almost insoluble)।

प्रोफ्लेविनी हेमीसल्फास (प्रोफ्लेवीन), I. P., B. P.

Proflavinae Hemisulphas (Proflav. Hemisulph.)

रासायनिक संकेत : ($C_{१३}H_{११}N_3$)$_२$, $H_२So_४$, $H_२O$.

पर्याय—प्रोफ्लेवीन हेमीसल्फेट (Proflavin Hemisulphate), न्युट्रल प्रोफ्लेवीन सल्फेट (Neutral Proflavine Sulphate), प्रोफ्लेवीन (Proflavine) —अं०; प्रोल्फेविन—हिं०।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह २ : 8—Diamino acridine का न्युट्रल सल्फेट होता है। इसमें कम से कम ९८ प्रतिशत ($C_{१३}H_{११}N_3$)$_२$, $H_२So_४$ होता है।

वर्णन—यह नारंगी के रंग का अथवा लाल रंग का (Orange to red), नमी को सोखनेवाला या उन्दचूष (Hygroscopic) क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। प्रकाश में खुला रहने से खराब हो जाता है। विलेयता—जल में घुलनशील होता है, अपेक्षाकृत उबलते पानी में इसकी घुलनशीलता और अधिक होती है। ग्लिसरिन में भी घुलता है। अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में केवल अंशतः विलेय (Slightly Soluble) तथा सालवेंट ईथर एवं क्लोरोफॉर्म में बिल्कुल नहीं घुलता (Insoluble)। जल में बनाया हुआ संतृप्त-विलयन (Saturated Solution) गाढ़े नारंगी रंग (Deep orange) का होता है और पानी मिलाकर सॉल्यूशन को पतला कर देने पर हरी आभा (Green fluorescence) मिलती है।

संरक्षण—प्रोलफ़ेवीन को अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

एमिनाक्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Aminacrinae Hydrochloridum (Aminacrin. Hydrochlor.), I. P., B. P.—ले०। एमिनाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड Aminacrine Hydrochloride--अं०। एमिनाक्रीन--हिं०।

रासायनिक संकेत : $C_{13}H_{10}N_2$, Hcl, H_2O.

प्राप्ति-साधन—एमिनाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड, रासायनिक दृष्टि से 5—aminoacridin hydrochloride monohydrate होता है। इसमें कमसे कम ९८½ % $C_{13}H_{10}N_2$, HCl होता है।

वर्णन—यह हल्के पीले रंग का गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है जो स्वाद में किंचित् तिक्त होता है। विलेयता—३०० भाग जल, ग्लिसरोल तथा अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में घुल जाता है, किन्तु सॉलवेंट ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में अविलेय होता है (२०० भाग लवणजल (Saline Solution) में भी घुलता है।

एक्रिफ्लेवीन, प्रोफ्लेवीन तथा एमिनाक्रीन
गुण-कर्म तथा प्रयोग

उक्त दोनों द्रव्य तथा एक्रिडीन समुदाय के अन्य रंजक द्रव्य (Acridine dyes) साधारणतया ग्राम-निगेटिव तथा ग्राम पाजिटिव सभी प्रकार के जीवाणुओं पर जीवाणुनाशक एवं जीवाणुस्तम्भक प्रभाव करते हैं। लवणजल में (१०० में १ भाग) बनाया हुआ इसका सोल्यूशन दूषित व्रणों को साफ करने के लिए तथा इसी में भिगोया हुआ प्लोत या गाज भरने के लिए किया जाता है। कान से मवाद बहने पर इसके ५०० में १ बल के सोल्यूशन में बराबर मात्रा में अल्कोहल् मिलाकर इसका प्रयोग कर्ण-विन्दु के रूप में किया जाता है।

[एमिनाक्रीन एवं प्रोलफेवीन के ब्रिटिश फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में उल्लिखित कतिपय योग।]

१—क्रिमोर एमिनाक्रिनी Cremor Aminacrinae (Crem. Aminacrin.)—ले० ; क्रीम ऑव एमिनाक्रीन Cream of Aminacrine —अं०।

पर्याय—एमिनाक्रीन Aminacrine Cream ; आब्स्टेट्रिक क्रीम (Obstetric Cream) (अर्थात प्रसूति रोगों में उपयुक्त क्रीम)।

निर्माण-विधि—एमिनाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड १० ग्रेन, ग्लिसरिन ½ फ्लुइड औंस। स्टर्कुलिया चूर्ण १५० ग्रेन, क्लोरोक्रिसोल ५ ग्रेन, अल्कोहल् (९५ %) ½ फ्लुइड औंस तथा जल १० औंस तैयार औषधि के लिए। इसमें ०·२१ से ०·२६ % (W/W) एमिनाक्रीन होता है।

२—क्रिमोर प्रोफ्लेविनी Cremor Proflavinae (Crem. Proflav.)—ले०;—क्रीम ऑव प्रोफ्लेवीन Cream of Proflavine—अं०।

पर्याय—प्रोफ्लेवीन क्रीम; क्रिमोर फ्लेविनी Cremor Flavinae ; इमल्सन ऑव प्रोफ्लेविन Emulsion of Proflavine। इसमें ०·१० से, १२ प्रतिशत (w/w) प्रोफ्लेवीन हेमीसल्फेट

होता है। प्रोफ्लेवीन हेमीसल्फेट ४½ ग्रेन, क्लोरोक्रिसोल ४½ ग्रेन, श्वेत मोम (white Beeswax) १०० ग्रेन, ऊन की चर्बी (wool fat) ½ औंस, जल २ औंस १९२ मिनम् या बूंद तथा लिक्विड पाराफिन १० औंस के लिए।

३—कम्पाउण्ड पेंट ऑव क्रिस्टल वायोलेट Compound Paint of Crystal violet या पेंट ऑव क्रिस्टल वायोलेट कम्पाउण्ड Paint of Crystal Violet Compound—अं०; पिगमेंटम् वायोली क्रिस्टलाइनी कम्पोजिटम् Pigmentum Violae Crystallinae Compositum (Pig. Violac. Crys. Co.)—ले०।

पर्याय ट्रिपुल डाई Triple Dye; पिगमेंटम् ट्राइप्लेक्स Pigmentum Triplex. क्रिस्टल वायोलेट १० ग्रेन, ब्रिलिएण्ट ग्रीन (Brilliant green) १० ग्रेन, प्रोफ्लेवीन हेमीसल्फेट ५ ग्रेन जल आवश्यकतानुसार १० औंस तैयार औषधि के लिए, सब औषधियों का जल में विलयन है।

४—लाइकर प्रोफ्लेविनी Liquor Proflavinae (Liq. Proflavin.)—ले०; प्रोफ्लेवीन लोशन Proflavine Lotion—अं०। जल में बनाया हुआ प्रोफ्लेवीन सॉल्यूशन होता है, जिसमें ०·१% (w/v) प्रोफ्लेवीन होता है।

(नॉट-ऑफिशल)

यूफ्लेवीना Euflavina।

पर्याय—न्यूट्रल एक्रिफ्लेवीन Neutral Acriflavine।

वर्णन—नारंगी की तरह लाल रंगका या भूरापन लिए लाल रंगका चूर्ण होता है जिसमें एक हल्की गंध आती है तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। विलेयता—जल में साधारण मात्रा में घुलता है। गरम पानी में अपेक्षाकृत अधिक घुलता है।

फ्लोरेसीन सोडियम् (B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{10}O_5Na_2$.

नाम—फ्लोरेसीनम् सोडियम् Fluoresceinum Sodium (Fluoresc. Sod.)—ले०; सॉल्युबुल सोडियम् Soluble Sodium—अं०; पानी में घुलनेवाला फ्लोरेसीन—हिं०।

प्राप्ति-साधन—फ्लोरेसीन सोडियम् रासायनिक दृष्टि से, फ्लोरेसीन का डाई-सोडियम् साल्ट (Di-Sodium Salt of Fluorescein) होता है, जो रिसार्सिनॉल एवं फ्थैलिक एन्हाइड्राइड (Phthalic anhydride) की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९८½% $C_{20}H_{10}O_5Na_2$ होता है।

वर्णन—यह नारंगीवर्ण के लाल रंग का चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा प्रायः स्वादरहित होता है। नमी में खुला रहने से आर्द्रता को सोखता (Hygroscopic) है। विलेयता—१ भाग जल तथा ५ भाग अल्कोहल (९५%) में घुल जाता है।

गुण एवं प्रयोग

फ्लोरेसीन का मुख्य उपयोग नेत्रगत विकृतियों एवं रक्तवहसंस्थान की खराबियों में नैदानिक कार्यों (Diagnostic Purposes) के लिए किया जाता है। नेत्र में इसका सॉल्यूशन डालने से स्वस्थ कनीनिका एवं नेत्र की श्लैष्मिक कला पर तो कोई प्रभाव नहीं होता, किन्तु विकृत क्षेत्र

हरे रंग का हो जाता है। इसी प्रकार आंख में यदि कोई चीज पड़ गई हो (Foreign Bodies) तो उसके चारों ओर एक हरा वृत्त (Green ring) बन जाता है। इस प्रकार विजातीय द्रव्य का स्थान मालूम हो जाता है। एतदर्थ ३ प्रतिशत सोडियम् बाई-कार्बोनेट के साथ बनाया हुआ इसका २ % बल का सोल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है।

इसी प्रकार इसका उपयोग रक्तपरिभ्रमणकाल (Circulatory time) एवं मस्तिष्कगत अर्बुद (Subarachnoid Tumours) के निर्णय के लिए भी किया जाता है।

(नॉट ऑफिशल)

B. P. C. Preparation

१—फ्लोरेसिन आई-ड्राप्स Fluorescin eye-drops या आई ड्रॉप्स ऑव फ्लोरेसीन Eye Drops of Fluorescin—अं०; गट्टी फ्लोरेसिनाइ Guttae Fluoresceini (Gutt. Fluoresc.) —लें०; फ्लोरेसीन का नेत्रबिंदु—हिं०। इसमें २ प्रतिशत फ्लोरेसीन सोडियम् होता है।

ब्रिलिएन्ट ग्रीन (I. P., B. P.) (Brilliant Green)

रासायनिक संकेत : $C_{२७}H_{३४}O_{४}N_{२}S$.

पर्याय—विरिडेनिटेन्स Viride Nitens (Virid. Nit.)

प्राप्ति-साधन—ब्रिलिएण्ट ग्रीन रासायनिक दृष्टि से Di. (p—diethylamino) triphenyl—arbinol anhydride का सल्फेट लवण होता है। इसमें कम से कम ९६ %, $C_{२७}H_{३४}O_{४}N_{२}S$. होता है।

वर्णन—इसके छोटे-छोटे चमकीले, सुनहले रंग के क्रिस्टल्स होते हैं, जो ५ भाग जल तथा अल्कोहल् (९५%) में घुल जाते हैं। संग्रह (Storage)—इसका संग्रह अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में करना चाहिए।

क्रिस्टल वॉयोलेट (Crystal Violet) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_{२५}H_{३०}N_{३}Cl$.

नाम—वॉयोला क्रिस्टेलिना Viola Crystallina (Viola Crys.)—लें०; मेडिसिनल जेन्शनवॉयोलेट Medicinal Gentian Violet; मेथिल रोसेनिलीन क्लोराइड Methylrosaniline Chloride।

वर्णन—इसका हरापन लिए तामड़े रंग के (Greenish bronze) क्रिस्टल्स या क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—२०० भाग जल में घुल जाता है। अल्कोहल् में भी अच्छी तरह घुलता है; इसके अतिरिक्त क्लोरोफार्म तथा ३० भाग ग्लिसरोल में भी घुल जाता है, किन्तु सालवेंट ईथर में अविलेय है।

मात्रा (B. P. Dose)—१० मि० ग्रा० से ३० मि० ग्रा० ($\frac{१}{६}$ से $\frac{१}{२}$ ग्रेन)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

क्रिस्टल वायोलेट—अम्ल-साही (Acid-fast) एवं ग्रामनिगेटिव्ह जीवाणुओं (Gram-negative organisms) पर तो जेन्शन वायोलेट का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता; परन्तु ग्राम-पॉजिटिव्ह जीवाणुओं पर—विशेषतः गोलदण्डाणुओं (Staphylococci), रोहिणी या डिफ्थीरिया का

जीवाणु (C. diphtheriae) एवं (Ps. pyocyneus)—यह तीव्र जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) एवं जीवाणुनाशक (Bactericide) प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त यह अनेक विकारी छत्राणुओं या (Fungi) पर भी घातक प्रभाव करता है। ½ से २ प्रतिशत बल का सॉल्यूशन अनेक त्वचारोगों—यथा, दद्रु-उपसर्गयुक्त विचर्चिका (Eczemoid ringworm), त्वचा का परस्पर घर्षण (Intertrigo), शिर की भूसी के कारण होनेवाला त्वक्पाक (Seborrhoeic dermatitis) एवं (Impetigo) आदि—में स्थानिक प्रयोग के लिए बहुत उपयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग फोड़ा-फुन्सी, मधुमेहपिड़िका (कारबन्कल), शय्यावण; गुदकण्डू (Pruritus ani) एवं योनिकण्डू आदि व्याधियों में स्थानिक प्रयोग एवं व्रणोपचार के लिए किया जा सकता है। चिरकालीन चर्मनखान्तर पाक (Chronic paronychia) एवं मोनिलिया (कैन्डिडा) नामक छत्राणुओं के उपसर्ग से होनेवाले योनिप्रदाह (Monilial vaginitis) में १ से २% बल के जेन्शन वायोलेट सॉल्यूशन के प्रयोग से बहुत लाभ होता है। २% बल का सॉल्यूशन सीकर (Spray) के रूप में अथवा २% बल के जेली (Jelly) का प्रयोग दग्ध व्रणोपचार के लिए बहुत उपयुक्त है। इसके लिए ब्रिलिएण्ट ग्रीन एवं प्रोफ्लेवीन के साथ मिलाकर (ट्रिपुल डाई Triple Dye) प्रयुक्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त जेन्शन वायोलेट का उपयोग कृमिघ्न (Anthelmintic) प्रभाव के लिए भी किया जाता है।

ब्रिलिएण्ट ग्रीन—ब्रिलिएण्ट ग्रीन भी जेन्शन वायोलेट की भांति जीवाणुवृद्धिरोधक एवं जीवाणुनाशक होता है। इसके गुण-कर्म एवं प्रयोग भी उससे मिलते-जुलते हैं। जल में अथवा परमबललवण जल (Hypertonic Saline) में बनाये हुए इसके सॉल्यूशन का प्रयोग दूषित घाव एवं व्रण (Infected wounds and ulcers) के उपचार के लिए एन्टिसेप्टिक लोशन के रूप में बरता जाता है। इसके अतिरिक्त बालों की जड़ में होनेवाली फुन्सियों (यह प्रायः गोलद्वयाणुओंके उपसर्ग से होता है और दाढ़ी में ज्यादा होता है : Sycosis) अर्थात् लोमकूपपाक में अल्कोहल (७०%) में बनाये हुए ब्रिलिएण्ट ग्रीन के १ प्रतिशत बल के सॉल्यूशन का उपयोग स्थानिक प्रयोग के लिए किया जाता है। इसके लिए पहले उस स्थान पर ५ प्रतिशत बल का सेलिसिलिक एसिड का मलहम लगा देना चाहिए। अब पपड़ी पर खुरण्ड को साफ करके तथा ढीले बालोंको उखाड़ कर ब्रिलिएण्ट सॉल्यूशन का लेप कर देना चाहिए। यह क्रिया प्रतिदिन एक बार या अंतरे दिन की जा सकती है।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—स्कारलेट रेड (Scarlet Red), B. P. C.— अं०; रूब्रम स्कारलेटिनम् Rubrum Scarlatinum (Rubr. Scarlat.)—ले०।

पर्याय—Biebrich Scarlet R. Medicinal; Sudan IV.

रासायनिक संकेत : $C_{२४}H_{२०}ON_{४}$.

वर्णन—यह लाली लिए गाढ़े भूरे रंग का (Dark reddish brown) चूर्ण होता है, जो जल में तो अविलेय होता है; किन्तु अल्कोहल्, ईथर तथा वसा (Fats) में घुलनशील (Soluble) होता है।

प्रयोग—

स्वच्छ व्रण या साफ घाव पर लगाने के लिए इसके १ से ५ प्रतिशत बल का मल-

हम बहुत अच्छा होता है। आयण्टमेंट ऑव स्कारलेट रेड (Ointment of Scarlet Red, B. P. C.) में ५ प्रतिशत स्कारलेट रेड होता है। दग्धव्रण या शय्याव्रण (Bed sore) पर लगाने के लिए बोरिक एसिड में मिलाकर इसका प्रयोग डस्टिंग-पाउडर के रूप में भी कर सकते हैं।

२—मेलाकाइट ग्रीन (Malachite Green), बेंजाल्डिहाइड ग्रीन Begzaldehyde Green —अं०; विरिडे मेलाकाइटम् Viride Malachitum—ले० ।

इसके हरे रंग के पपड़ीदार टुकड़े (Green plates) होते हैं, जिनमें धात्वीय आभा आती है। यह १५ भाग जल तथा अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में घुल जाता है। इसका १ प्रतिशत बल का विलयन व्रणोपचार (Wound dressing) के लिए बहुत उपयुक्त होता है। इसके अतिरिक्त अनेक त्वचारोगों में भी प्रयुक्त होता है।

मेथिलीन ब्ल्यू (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_{18}N_3Cls, 3H_2O$.

पर्याय—मेथिलथायोनिनी क्लोराइडम् Methylthioninae Chloridum (methylthionin. Chlor.)—ले० ; मेथिलिन ब्ल्यू—अं०, हिं० ।

प्राप्ति-साधन—मेथिलिन ब्ल्यू रासायनिक दृष्टि से टेट्रामेथिथायोनीन क्लोराइड (Tetramethylthionine Chloride) होता है। इसमें कम से कम ८०% $C_{16}H_{18}N_3Cls$ होता है।

वर्णन—मेथिलिन ब्ल्यू हरापन लिए गाढ़े रङ्ग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जिसमें धात्वीय आभा या चमक (Metallic lustre) पाई जाती है। अथवा गाढ़े हरे रंग (Dull dark green) या भूरे रंग का चूर्ण होता है। उक्त क्रिस्टल्स या चूर्ण प्रायः गंधहीन होता है और हवा में भी खुला रहने से बिगड़ता नहीं। विलेयता—यह जल, अल्कोहल् (९० %) तथा क्लोरोफॉर्म में घुलनशील होता है।

मात्रा—१ से ५ ग्रेन (६० से ३०० मि० ग्रा०) ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

मेथिलिन ब्ल्यू साधारण जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) होता है। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर इसका उत्सर्ग मूत्र के साथ होता। अधिक मात्रा में प्रयुक्त करने पर आमाशयान्त्रप्रदाह की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। मेथिलिन ब्ल्यू का पहले चिकित्सा में अनेक अवस्थाओं में उपयोग किया जाता था। किन्तु अब उन-उन विकृतियों के लिए अधिक निरापद एवं सफल औषधियाँ निकल आयी हैं। अतएव, अब चिकित्सार्थ इसका व्यवहार बहुत सीमित रह जाता है।

मेथिलिन ब्ल्यू के ०·१ से ०·२ प्रतिशत बल के घोल का उपयोग मूत्राशयप्रदाह (Cystitis) में धावन के लिए किया जाता है। सल्फोनेमाइड्स के चिकित्साक्रम में कभी-कभी (Methaemoglobinaemia) का उपद्रव होता है। ऐसी स्थिति में भी इसका सेवन किया जाता है। एतदर्थ २ ग्रेन की मात्रा २-२ घंटे पर मुखद्वारा दी जाती है। अथवा १½ मि० ग्रा० प्रति किलोग्राम शरीरभार के हिसाब से अभीष्ट मात्रा का दैनिक सेवन होना चाहिए। गम्भीर अवस्था में मुखमार्ग का अवलम्बन न कर औषधि शिरागत इंजेक्शन द्वारा दी जाती है।

(नॉट-ऑफिशल)

मरक्युरोक्रोम (B. P. C.)

रासायनिक संकेत : $C_{20}H_{8}O_{6}Br_{2}HgNa_{2}$

नाम—मरक्युरोक्रोमम् Mercurochromum (Mercurochrom,) लै० ; मरक्युरोक्रोम Mercurochrome—अं० ।

पर्याय—मरब्रोमिन Merbromin, N. F.

वर्णन—इसके हलके हरे रंग के छोटे-छोटे पपड़ीदार टुकड़े या दाने (Greenish iridescent scales or granules) होते हैं, जो गंधहीन होते हैं।

विलेयता—१ भाग जल में घुल जाता है ; अल्कोहल् में अत्यल्प मात्रा में (नहीं के बराबर) घुलता है और ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में तो बिल्कुल ही नहीं घुलता। पानी के साथ बनाया हुआ इसका सॉल्यूशन या घोल गाढ़े लाल रंग का होता है और पानी मिलाने पर सॉल्यूशन डायल्यूट हो जाने पर हरी आभा (Green fluorescence) मिलती है।

असंयोज्यपदार्थ (Incompatibles)—अम्ल या एसिड्स प्रायः अल्कलायड्स के लवण, तथा अनेक स्थानिक संज्ञाहर द्रव्य (Many local anaesthetics)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

स्थानिक प्रयोग से मरक्युरोक्रोम साधारण जीवाणुवृद्धिरोधक (Antiseptic) प्रभाव करता है। इस प्रकार जीवाणुनाशक (Bactericidal) होने की अपेक्षा यह अधिक जीवाणुस्तम्भक (Baeteriostatic) है। जल के साथ इसका सुन्दर लाल रंग का घोल बनता है। इसको लगाने से चमड़े पर या कपड़े पर लाल रंग लग जाता है। लेकिन सॉल्यूशन लगाने से यह दाग छूट जाते हैं। इसके १ से ४ प्रतिशत का घोल जीवाणुनाशक प्रभाव के लिए घावों पर या चोट-चपेट पर लगाया जाता है। १ प्रतिशत घोल (जल में बनाया हुआ) बस्तिप्रदाह में धावन के लिए प्रयुक्त किया जाता है। स्टेफिलोकोकाइ तथा स्ट्रेप्टोकोकाई पर यह केवल साधारण जीवाणुनाशक क्रिया करता है। शल्य-कर्म में त्वचा के विसंक्रामणके लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है। एतदर्थ निम्न योग बहुत उपयुक्त है:—मरक्युरोक्रोम के २% सोल्यूशन में ३५ भाग और पानी, ५५ भाग अल्कोहल् तथा १० भाग एसिटोन मिलावें।

चूंकि यह पारद का यौगिक है, अतएव शिरामार्गद्वारा मरक्युरोक्रोम का प्रयोग करने से कभी-कभी पारद विषाक्तता (Mercurial Poisoning) के लक्षण प्रकट होते हैं।

(५—अल्कोहल्स एण्ड एल्डिहाइड्स)

सॉल्यूशिओ फॉर्मेल्डिहाइडी (फार्मेलिन), I. P., B. P.

Solutio Formaldehydi (Sol. Formaldehyd.) ।

रासायनिक संकेत : $CH_{2}O$.

पर्याय—लाइकर फॉर्मेल्डिहाइडी Liquor Formaldehydi (Liq. Formaldehyd.), B. P.—लै०; सॉल्यूशन ऑव फॉर्मेल्डिहाइड Solution of Formaldehyde; फार्मेलिन (Formalin)—अं० ।

प्राप्ति-साधन—सॉल्यूशन ऑव फार्मेल्डिहाइड, फार्मेल्डिहाइड एवं विभिन्न मात्रा में एथिल अल्कोहल् या मेथिल अल्कोहल् या दोनों को तथा जल मिलाकर बनाया जाता है। इसमें ३७% से ४१ प्रतिशत (w/v) तक CH_2O होता है।

वर्णन—यह एक रंगहीन द्रव के रूप में होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की तीक्ष्ण (Pungent) एवं क्षोभक (Irritating) गंध होती है। स्वाद में जलन (Burning) मालूम होती है। रखने पर कभी-कभी तल में सफेद प्रक्षेप (White Deposit) दिखाई देता है। विलेयता—यह जल तथा अल्कोहल् (९५%) में मिल जाता (Miscible) है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

वाह्य—फार्मेलिन एक संरक्षक (**Preservative**) द्रव्य होने के कारण इसका उपयोग विभिन्न प्रकार के संग्रहालयों (**Museums**) में नमूने (**Specimens**) के संरक्षण के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त फार्मेलिन एक तीव्र **जर्मिसाइड** (**Germicide**) एवं **फंगिसाइड** (फंगस पर घातक प्रभाव करनेवाला : **Fungicide**) द्रव्य है। फार्मेलिन का उपयोग शस्त्रकर्म में शस्त्रों (**Instruments**) के विसंक्रमण के लिए किया जाता है। इसका ५०० भाग जल के साथ बनाया हुआ विलयन मुखधावन के लिए या गरगरा (**Gargles**) के लिए बहुत उपयुक्त होता है। इससे मसूढ़े सख्त भी हो जाते हैं। कपड़े आदि पर फार्मेलिन से दाग नहीं पड़ते तथा धातुओं (**Metals**) पर भी इसकी क्रिया नहीं होती। अतएव फार्मेलिन का उपयोग कमरों की सफाई के लिए भी किया जाता है। एतदर्थ इसमें पोटासियम् परमैंगेनेट मिलाकर उस विलयन का कमरे में "स्प्रे या सीकर **Spray**" करते हैं। १००० घनफुट अवकाश के कमरे के लिए ५ औंस पोटासियम् परमैंगेनेट की आवश्यकता पड़ती है। इसके बाद १० से १० औंस फार्मेलिन (४० प्रतिशत) बराबर जल में मिलाकर दीवाल पर छोड़ दिया जाता है।

(नॉट-ऑफिशल)

पाराफार्मेल्डिहाइडम् Paraformaldehydum (Paraformaldehyd.), B. P. C.—ले०; पाराफॉर्मेल्डिहाइड—अं०।

पर्याय—पाराफॉर्म Paraform।

वर्णन—यह सफेद रंग के विरूपिक (Amorphous) चूर्ण अथवा छोटे-बड़े विभिन्न आकार के ढेलों (Amorphous masses) के रूप में होता है, जो आसानी से भुरभुरे (Friable) हो जाते हैं। वैसे तो यह गंधहीन होता है, किन्तु गरम करने पर इससे तीक्ष्ण गंध (Pungent odour) आती है। १००° तापक्रम पर गरम करने से उड़ने लगता (Volatilises) है। पानी में मिलाकर इस तापक्रम पर गरम करने से यह फार्मेल्डिहाइड में परिवर्तित हो जाता है। अतएव गरम पानी में बनाये हुए पाराफार्मेल्डिहाइड के गुणकर्म फार्मेल्डिहाइड की ही भाँति होते हैं।

विलेयता—जलमें तो नहीं घुलता, किन्त कॉस्टिक अल्कलीज (Caustic alkalies) के जलीय विलयन में घुल जाता है।

प्रयोग

जहाँ फार्मेल्डिहाइड का प्रयोग घनरूप (Solid form) में करने की आवश्यकता हो,

तो पाराफार्मेल्डिहाइड का प्रयोग किया जा सकता है। एतदर्थं इसका प्रयोग टिकिया (Tablets) या मुखगुटिका (Lozenges) के रूप में किया जाता है। कमरों के विसंक्रमण (Disinfection) के लिए इसकी टिकियाओं का प्रयोग करते हैं। दंतचिकित्सा (Dentistry) में दांतों के खोखलों के भरने के लिए मसालों में मिलाते हैं। कमरों के शोधन के लिए १००० घनफुट के लिए लगभग २० ग्राम पाराफार्मेल्डिहाइड की आवश्यकता पड़ती है।

(योग)

१—लॉजेन्जेज ऑव पाराफार्मेल्डिहाइड Lozenges of Parafomaldehyde, B. P. C.। प्रत्येक लाजेन्ज में ३/१० ग्रेन पारॉफार्मेल्डिहाइड पड़ता है।

(६—त्वचाविशोधक यौगिक)

सेट्रिमाइडम (सेट्रामाइड), I. P., B. P.

Cetrimidum (Cetramid.)—ले०; Cetramide—अं०।

पर्याय—सेटावलन Cetavlon।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह Cetyltrimethyl ammonium bromide होता है और इसमें कम से कम ८१½ प्रतिशत $C_{16}H_{33}(CH_3)_3N.Br.$ होता है।

वर्णन—यह सफेद या क्रीमरंग लिए सफेद रंग के अतिलघु एवं उमड़े हुए चूर्ण के रूप में (Voluminous free-flowing powder) होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है तथा स्वाद में तिक्त एवं साबुन की तरह (Bitter and soapy) होता है। विलेयता—१० भाग जल में घुलता है। अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) में पूर्णतः घुल जाता है।

असंयोज्यपदार्थ—सोप तथा अन्य एनिओनिक द्रव्य (Anionic reagents); क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स।

गुण एवं प्रयोग।

सेट्रिमाइड एक केटिओनिक समुदाय का तीव्र पूतिनाशक एवं जीवाणुनाशक पदार्थ (Cationic detergent and bactericidal) है। यह ग्राम-पाजिटिव एवं ग्राम-निगेटिव दोनों ही प्रकार के जीवाणुओं पर घातक प्रभाव करता है। जीवाणुनाशक शक्ति इसमें इतनी प्रबल है, कि अत्यल्प मात्रा में भी (In high dilutions) यह जीवाणुस्तम्भक अर्थात् जीवाणुवृद्धिरोधक (Bacteriostatic) प्रभाव करता है। इसके अतिरिक्त त्वचा पर लगाने से तेजी भी नहीं मालूम होती (Non-irritant)। इसका १ प्रतिशत दल का सोल्यूशन व्रणों की सफाई के लिए तथा शस्त्रकर्म के पूर्व त्वचा के विसंक्रमण के लिए (as a pre-operative Skin-cleanser) किया जाता है। इसके लिए सेट्रिमाइड लगाने के पूर्व पहले त्वचा को गरम पानी तथा साबुन से धो लेना चाहिए और इसके सूखने पर पहले अल्कोहल् लगाकर तब सेट्रिमाइड लगाना चाहिए। उक्त विलयन का उपयोग शस्त्रकर्म में प्रयुक्त होनेवाले शस्त्रों एवं पात्रों की स्वच्छता के लिए भी किया जा सकता है। इस कार्य के लिए प्रयुक्त विलयन में ½ प्रतिशत सोडियम् नाइट्राइट मिला देने से पात्रों पर मुर्चा या जंग लगने की आशंका नहीं रहती। संक्षेपतः सेट्रिमाइड के मुख्य चिकित्सोपयोग निम्न प्रकार से

हैं—(१) शस्त्रकर्म के पूर्व उस स्थल की सफाई एवं शोधन के लिए तथा सर्जन के हाथों की सफाई के लिए; (२) बिना रगड़े त्वचा के खुरंड एवं पपड़ी (Soales and Crusts) को दूर करने के लिए तथा (३) दूषित व्रणों, एवं दग्ध स्थलों तथा त्वचा छिल जाने पर (Abrasions) संशामक जीवाणुनाशक प्रलेप के रूप में।

सेट्रिमाइ वर्ग की अन्य औषधियाँ :—

(नॉट-आफिशल)

वेंजालकोनियम् क्लोराइड Benzalkonium Chloride.

पर्याय—जोफिरन Jephiran; रोक्कल Roccal.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह alkyl-benzyldimethyl ammonium Chloride होता है, जो सफेद या पीलापन लिए सफेद रंग का विरूपिक (Amorphous) चूर्ण होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगन्धि पाई जाती है तथा स्वाद में अत्यन्त तीता होता है। विलेयता—यह जल, अल्कोहल् तथा एसिटोन में तो घुल जाता है, किन्तु ईथर में अविलेय होता है।

लाइकर वेंजालकोनियाइ क्लोराइडाइ Liquor Benzalkonii Chloridi (Liq. Benzalkon. Chlor.), B. P. C.—ले०; सॉल्यूशन ऑव वेंजालकोनियम् क्लोराइड—अं०।

वर्णन—यह alkylbenzyldimethyl ammonium Chlorides का जलीय-विलयन होता है। जो स्वच्छ एवं रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग को शर्बत की तरह गाढ़ा द्रव होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की सुगंधि होती है तथा स्वाद में अत्यन्त तीता होता है। विलेयता—जल, अल्कोहल् एवं एसिटोन में मिल जाता (Miscible) ह

डोमिफेनिस ब्रोमाइडम् Domiphenis Bromidum (Domiphen. Brom.)., B. P. C.—ले०; डोमिफेन ब्रोमाइड Domiphen Bromide—अं०।

पर्याय—ब्रेडोसोल (Bradosol)।

वर्णन—डोमिफेन ब्रोमाइड रासायनिक दृष्टि से alkyldimethyl-2-Phenoxyethyl-ammonium bromides का मिश्रण होता है, जो रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग के पत्ते के समान छोटे-छोटे टुकड़ों (Flakes) के रूप में प्राप्त होता है। स्वाद में तीता तथा साबुन की तरह होता है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल् में (in less than 2 Parts) तथा एसिटॉन (in 30 parts) में घुल जाता है।

वेंजेथोनियम् क्लोराइड Benzethonium Chloride।

पर्याय—फेमेरोल क्लोराइड Phemerol Chloride; फेमेराइड Phemeride।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह Benzyldimethyl—p—(1 : 1 : 3 : 3—tetramethylbutyl)—phenoxyethoxyethyl—ammonium Chloride होता है, जो रंगहीन, गंधहीन एवं स्वाद में तिक्त क्रिस्टल्स के रूप में होता है।

मेथिल वेंजेथोनियम् क्लोराइड Methylbenzathonium Chloride।

पर्याय--डायाप्रीन क्लोराइड (Diaprene Chloride)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह Benzyl dimethyl २—[2—(P—1 : 1 : 3 : 3—tetramethylbutyl cresoxy) ethoxy] ethyl ammonium Chloride होता है, जो रंगहीन, गंधहीन, तिक्त क्रिस्टल्स के रूप में प्राप्त होता है। जल तथा अल्कोहल् में यह विलेय होता है।

सेटिल पाइरिडिनियम् क्लोराइड Cetyl Pyridinium Chloride।

पर्याय—सिपरिन क्लोराइड Ceepyrin Chloride।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह Monohydrate of the quarternary salt of pyridine and cetyl Chloride होता है। जो सफेद चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध होती है। विलेयता—जल, अल्कोहल् तथा क्लोरोफार्म तीनों में घुल जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

रासायनिक दृष्टि से उपर्युक्त सभी यौगिक क्वार्टरनरी अमोनियम् साल्ट (Quarternary ammonium salts) हैं, और क्रियात्मकता की दृष्टि से कोटिओनिक वर्ग के विशोधन एवं पूतिनाशक द्रव्य (Cationic detergents) हैं। इनके सामान्य गुण-कर्म एवं आमयिक प्रयोग सेट्रिमाइड की ही भांति समझना चाहिए। त्वचा पर लगातार अधिक दिनों तक प्रयोग करने से खुश्की पैदा करते हैं। इसके निवारण के लिए ऊन की चर्बी या ऊल-अल्कोहल् घटित क्रीम लगाना चाहिए। १०० में १ के बल से लेकर १००० में १ के बल के सॉल्यूशन का प्रयोग शस्त्रकर्म के पूर्व त्वचा की सफाई एवं सर्जन के हाथों के विशोधन के लिए उपयुक्त है। शस्त्रों (Surgical instruments) के विसंक्रमण (Sterilization) के लिए भी यह बहुत उपयुक्त है, क्योंकि इससे औजारों पर जंग या मुर्चा भी नहीं लगने पाता। १०,००० में १ के बल से लेकर २००० में १ के बल तक विभिन्न डायल्यूशन के सॉल्यूशन का उपयोग श्लैष्मिक-कला एवं छिली हुई त्वचा पर शस्त्रकर्म के पूर्व विशोधन के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इसका उपयोग नेत्रधावन एवं योनिप्रक्षालन (Irrigation of the eye and the vagina) भी किया जा सकता है। मूत्राशय को धोने के लिए इसे जल में मिलाकर (२०,००० में १) प्रयुक्त कर सकते हैं। इनके सॉल्यूशन (५००० में १) व्रण-धावन के लिए भी प्रयुक्त होते हैं। औजारों को धोने के लिए ½ प्रतिशत सोडियम् नाइट्राइट भी मिला दिया जाता है। इससे जंग या मुर्चा नहीं लगने पाता।

मेथिल बेंजेथोनियम् क्लोराइड का प्रयोग विशेषतः आन्त्रगत यूरिया-विघटक मृताश्रयी (Urea-splitting intestinal saprophytes) जीवाणुओं के क्रिया-निरोध के लिये किया जाता है। अतः बच्चों के नितम्बप्रदेश में बेसिलस अमोनियाजिनीस (B. ammoniagenes) के उपसर्ग से होनेवाले त्वचाशोफ (Dermatitis) में इसके घोल (२५,००० में १) से धोने से रोगमुक्ति होती है। इसके लिए २ लिटर गरम पानी में १½ ग्रेन (६० मि० ग्रा०) मेथिल बेंजेथोनियम् क्लोराइड मिलाकर प्रयुक्त करना चाहिए।

व्यावसायिक योग:—

(१) सिटेवलन Cetavlon (I. C. I.)—यह सेट्रिमाइड चूर्ण होता है। ५० तथा ५०० ग्राम की शीशियाँ आती हैं।

(२) सेट्रिमाइड कन्सन्ट्रेट (Cetrimide Concentrate I. C. I.)—यह २०% बल का जलीय विलयन होता है। १०० तथा ५०० सी० सी० की शीशियाँ आती हैं। १ भाग उक्त सोल्यूशन में १९ भाग जल मिलाने से १% सोल्यूशन बनता है।

(३) सेट्रिमाइड टिंक्चर (I. C. I.)।

(७--एसिड्स एवं क्षार)

बोरिक एसिड (I. P., B. P.)

रासायनिक संकेत : H_3BO_3.

नाम—एसिडम् बोरिकम् Acidum Boricum (Acid Boric.)--लें०; बोरिक एसिड Boric Acid; बोरेसिक एसिड Boracic Acid; आर्थोबोरिक एसिड Orthoboric Acid; टंकणाम्ल--सं०; बोरिक—हिं०।

प्राप्ति साधन—बोरिक एसिड, नैसर्गिक (खनिज) बोरेट्स तथा सल्फ्युरिक एसिड की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ९९.३% H_3BO_3 होता है।

वर्णन--इसके सफेद क्रिस्टल्स (मणिभ) होते हैं अथवा सफेद रंग के चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। स्वाद में यह पहले हल्का खट्टा (अम्ल) तथा तीता (तिक्त) होता है और बाद में (अनुरस) किंचित् मधुर (Sweetish after taste) होता है। बोरिक एसिड का चूर्ण अंगुलियों के बीच स्पर्श में चिकना (Touch unctuous)। हवा में खुला रहने पर यह विकृत नहीं होता (Stable in air) और १००° तापक्रम पर गरम करने से जलांश निकल जाता है, जिससे इसका कुछ अंश मेटाबोरिक एसिड (HBO_2) के रूप में परिवर्तित हो जाता है। विलेयता—जल (२० भाग में), अल्कोहल् (१६ भाग) तथा ग्लिसरोल (४ भाग) में घुलता है। ग्लिसरिन में सुविलेय (Freely soluble) होता है।

बोरेक्स (टंकण), I. P., B. P.

Borax (Borax)—लें०, अं०।

रासायनिक संकेत : $Na_2B_4O_7, 10H_2O$.

पर्याय—सोडियम् टेट्रा बोरेट Sodium Tetra borate (I. P.); प्योरिफाइड बोरेक्स Purified Borax, सोडियम् बोरेट Sodium Borate (B. P.); टंकण—सं०, हिं०।

प्राप्ति-साधन—बोरेक्स या टंकण नैसर्गिक साधनों से (Native borax) अथवा कृत्रिम रूप से रासायनिक पद्धति द्वारा खनिज केल्सियम् बोरेट्स (Native Calcium Borates) को सोडियम् कार्बोनेट के विलयन में उबालने से प्राप्त होता है। इसमें ९९ प्रतिशत से लेकर १०३ प्र० श० तक $Na_2B_4O_7, 10H_2O$ होता है।

वर्णन--बोरेक्स के पारदर्शी रंगहीन क्रिस्टल्स होते हैं या यह सफेद चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन तथा क्षारीय--खारा (Saline and alkaline) होता है। शुष्क हवा में खुला रहने से प्रस्फुटित होता (Effloresces) है और आंच पर गर्म करने से इसका क्रिस्टलीकरण का जल (Water of Crystallisation) निकल जाता है (और टंकण का खील या लावा प्राप्त होता है—आयुर्वेद में इसे शुद्ध टंकण कहा जाता है)।

असंयोज्यपदार्थ—खनिज अम्ल (Mineral acids), धात्वीय लवण (Most metallic salts), अल्कलायडल साल्ट्स एवं बबूल का गोंदिया घोल (Mucilage of acacia)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

बाह्य—बोरेक्स तथा बोरिक एसिड साधारण जीवाणुस्तम्भक कार्य करते हैं और साथ ही ठंढे होते हैं अर्थात् तेजी नहीं होती (Non-irritating), जिससे इनका प्रयोग नेत्र जैसे कोमल अंगों के लिए भी किया जा सकता है। बोरिक एसिड फंगस की वृद्धि को भी रोकता (Fungistatic) है। बाह्यतः स्थानिक प्रयोग के लिए चिकित्सा में इनका प्रचुर प्रयोग किया जाता है। जिंकसल्फेट के साथ अथवा अकेले बोरिक एसिड का लोशन (१ औंस परिस्रुत जल में १० ग्रेन बोरिक एसिड), नेत्राभिष्यंद आदि नेत्ररोगों में आँख धोने के लिए प्रयुक्त होता है। इसी प्रकार बोरिक लोशन (धावन-द्रव) का प्रयोग नाक-कान तथा मूत्राशय एवं योनि आदि के धोने के लिए (Irrigation) भी उत्तम होता है। बोरिक आयण्टमेंट का प्रयोग घाव, व्रण एवं जले स्थान पर लगाने के लिए किया जाता है। स्त्रियों के गुह्यांग की खुजली (Pruritus vulvae) में भी बोरिक मलहम लगाने से बहुत लाभ होता है। जिंक-ऑक्साइड एवं अन्य उपयुक्त सहयोगी द्रव्यों के साथ इसका प्रयोग डस्टिंग पाउडर के रूप में भी करते हैं। बोरिक गाज तथा बोरिक रूई का प्रयोग व्रण-बंधन (Dressing) में किया जाता है। निशास्ते या स्टार्च के साथ बोरिक एसिड की पुल्टिस (६% बोरिक) का प्रलेप विचर्चिका पर करने से खुरंड या पपड़ी आसानी से उतर जाती है। अल्कोहल् (६०%) में इसका घोल बनाकर कर्णस्राव (Otorrhoea) तथा मध्यकर्ण के चिरकालीन स्राव में कर्ण-बिंदु के रूप में प्रयुक्त करने से बहुत लाभ होता है।

(ऑफिशल योग)

१—अंग्वण्टम् एसिडाइ बोरिसाइ Unguentum Acidi Borici (Ung. Acid. Boric.) I. P., B. P.–ले०; आयण्टमेंट ऑव बोरिक एसिड Ointment of Boric Acid–अं०; बोरिक का मलहम–हिं०। यह पाराफिन आयण्टमेंट में बोरिक एसिड (१%) मिलाकर बनाया जाता है। बोरिक एसिड का बारीक चूर्ण १० ग्राम (g.); पाराफिन आयण्टमेंट ९० ग्राम। विधि—पहले पाराफिन आयण्टमेंट को पिघला लें, फिर बोरिक चूर्ण को उसमें चालकर डाल दें और हिलाते रहें, जब तक कि ठंढा न हो जाय।

२—ग्लिसेरिनम् एसिडाइ बोरिसाइ Glycerinum Acid Borici (Glycer. Acid. Boric); I. P.–ले०; ग्लिसरिन ऑव बोरिक एसिड Glycerin of Boric Acid–अं०।

पर्याय—बोरोग्लिसरिन ग्लिसराइट Boroglycerin Glycerite। इसमें बोरिक एसिड ३१ प्रतिशत (W/W) होता है।

निर्माण-विधि—बोरिक एसिड ३१० ग्राम, ग्लिसरिन आवश्यकतानुसार १००० ग्राम तैयार औषधि के लिए। पहले ४६० ग्राम ग्लिसरिन एक पात्र में लेकर १४०° से १५०° तक के तापक्रम पर गरम करें, फिर इसमें बोरिक एसिड मिलाकर शीशे के दण्ड से चलाते रहें। जब बोरिक एसिड खूब अच्छी तरह मिलजाय तो १५०° तापक्रम पर ही थोड़ी देर और गरम करें। इससे भार घनकर द्रवांश कुछ कम हो जायगा। जब वजन में कमी होकर ५२० ग्रा० होजाय तो उसमें और गरम ग्लिसरिन मिलावें ताकि तैयार औषधि १००० ग्राम प्राप्त हो सके।

३—ग्लिसेरिनम् बोरेसिस Glycerinum Boracis (Glycer. Borac.), I. P.—ले०; ग्लिसरिन ऑव बोरेक्स Glycerin of Borax—अं० । इसमें १० प्रतिशत (W/W) बोरेक्स या टंकण होता है।

निर्माण-विधि—बोरेक्स १२० ग्राम; ग्लिसरिन ८८० ग्राम। टंकण का चूर्ण बनाकर ग्लिसरिन में मिलाकर खरल में रगड़ें। फिर इसको गरम करें और बराबर चलाते रहें। जब सॉल्यूशन बन जाय उतारकर रख लें।

[ब्रिटिश फॉर्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में उल्लिखित बोरिक एसिड घटित कतिपय डस्टिंग-पाउडर के योग]

१—बोरिक एसिड एण्ड स्टार्च डस्टिंग पाउडर Boric Acid and Starch Dusting Powder। नाम—कान्सपर्सस एसिडाइ बोरिसाइ एट एमाइलाइ Conspersus Acidi Borici et Amyli (Conspers. Acid. Boric. et Amyli)—ले०; डस्टिंग पाउडर ऑव बोरिक एसिड एण्ड स्टार्च Dusting powder of Boric Acid and Strach—अं०; बोरिक एसिड तथा निशास्ते का अवधूलन चूर्ण—हिं०। बोरिक एसिड चूर्ण १ औंस; निशास्ते का चूर्ण ३ औंस परस्पर मिलाकर छान लें। इसमें २३.६ से २६.२ प्रतिशत तक बोरिक एसिड होता है।

२—बोरिक-टॉक डस्टिंग पाउडर Boric Talc Dusting Powder या टॉकम् बोरेटम् Talcum Boratum। नाम—कान्सपर्सस टॉकी बोरिसाइ Conspersus Talci Borici (Conspers. Talc. Boric.)—ले०; डस्टिंग पाउडर ऑव बोरिक टॉक Dusting Powder of Boric Talc—अं०, बोरिक एसिड पाउडर १ औंस, स्टार्च पाउडर १ औंस, विशोधित तथा विसंक्रमित टाक (Purified Talc, Sterilised) ८ औंस। बोरिक एसिड ९½% से १०½ प्रतिशत तक होता है।

३—जिंक ऑक्साइड एण्ड बोरिक एसिड डस्टिंग पाउडर Zinc Oxide and Boric Acid Dusting Powder अथवा डस्टिंग पाउडर ऑव जिंक ऑक्साइड एण्ड बोरिक एसिड—अं०; कान्सपर्सस जिंसाइ ऑक्साइडाइ एट एसिडाइ बोरिसाई Conspersus Zinci Oxide et Acidi Borici (Conspers. Zinc Oxide et. Acid Boric.)—ले०। इसमें जिंक आक्साइड तथा बोरिक एसिड दोनों बराबर-बराबर लिए जाते हैं।

४—सेलिसिलिक एसिड कम्पाउण्ड डस्टिंग पाउडर Salicylic Acid Compound Dusting Powder या कम्पाउण्ड डस्टिंग पाउडर ऑव सेलिसिलिक एसिड Compound Dusting Powder of Salicylic Acid—अं०; कान्सपर्सस एसिडाइ सेलिसिलिसाइ कम्पोजिटस Conspersus Acidi Salicylici Compositus (Conspers. Acid. Salicyl. Co.)—ले०।

पर्याय - पल्विस प्रो पेडिबस Pulvis Pro Pedibus। सेलिसिलिक एसिड पाउडर १३१ ग्रेन; बोरिक एसिड पाउडर १ औंस; शुद्ध एवं विसंक्रमित टॉक (Talc) ८ औंस २०६ ग्रेन। इसमें बोरिक एसिड १०% तथा सेलिसिलिक एसिड ३% होता है।

५—ऑरिस्टिली एसिडाइ बोरिसाइ Auristillae Acidi Borici (Aurist. Acid. Boric.), B. P. C.—ले०; बोरिक एसिड ईयर-ड्राप्स(Ear drops)—अं०; बोरिक का कर्णबिंदु—हिं०। बोरिक एसिड ८ ग्राम (१२० ग्रेन), अल्कोहल् (९५%) १०० बूँद या मिनम्, जल आवश्यकतानुसार १ औंस के लिए। अल्कोहल् के स्थान में मेथिलेटेड स्प्रिट भी काम में लाया जा सकता है। इसमें बोरिक एसिड १.८३ प्रतिशत होता है।

६—कॉल्युनेरियम् अल्केनिम् Collunarium alkalinum (Collun. Alk.), B. P. C.—लै०; अल्कलाइन नेजल वाश Alkaline Nasalwash—श्रं०; क्षारीय नासा-धावन—हिं० । बोरेक्स (टंकण) ६० ग्रेन, सोडाबाइकार्ब० ६० ग्रेन, फिनोल द्रव २५ बूँद, सुक्रोज १०० ग्रेन, जल १० औंस के लिए । इसको बराबर परिमाण में गरम पानी मिलाकर प्रयुक्त करना चाहिए ।

७—कॉलीरियम् एसिडाइ बोरिसाइ Collyrium Acidi Borici (Collyr. Acid. Boric.), B. P. C—लै०; बोरिक एसिड आई-लोशन (Eye-lotion)—श्रं०; बोरिक का पानी—हिं० । बोरिक एसिड १५० ग्रेन गरम करके ठण्डा किया हुआ डिस्टिल्ड वाटर १० औंस । प्रयोग के समय इसमें बराबर मात्रा में गुनगुना पानी मिलाकर प्रयुक्त करें ।

८—ऑक्युलेंटम् एसिडाइ बोरिसाइ Oculentum Acidi Borici (Oculent. Acid. Boric.), B. P. C.—लै०; बोरिक एसिड आई-आयण्टमेंट (Eye-Ointment)—श्रं०; आँख का बोरिक-मलहम—हिं० । बल का निर्देश न होने पर ४% का मलहम देना चाहिए ।

९—कॉलीरियम् बोरेसिस कम्पोजिटम् Collyrium Boracis Compositum (Collyr. Borac. Co.) B. P. C.—लै०; बोरेक्स कम्पाउण्ड आई-लोशन—श्रं०। बोरेक्स तथा सोडा-बाई-कार्ब० प्रत्येक ७० ग्रेन, परिस्रुत जल १० औंस । प्रयोग के समय इसमें बराबर मात्रा में गुनगुना पानी मिलाकर प्रयुक्त करें ।

(नॉट-ऑफिशल)

सोडियाइ मेटाबाइसल्फिस Sodii Metabisulphis (Sod. Metabisulphis), B. P. C.—लै० ; सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट—श्रं० ।

रासायनिक संकेत : $Na_2S_2O_5$.

पर्याय—सोडियम् पायरोसल्फाइट (Sodium Pyrosulphite) ।

प्राप्तिसाधन—सोडियम् हाइड्रॉक्साइड अथवा कार्बोनेट के गरम संकेन्द्रित (Concentrated) सॉल्यूशन या विलयन में सल्फर डाइ ऑक्साइड को मिलाकर ठंडा होने दिया जाता है । इस प्रकार सोडियम् मेटा बाइ सल्फाइट के क्रिस्टल्स प्राप्त होते हैं, जो रंगहीन त्रिपार्श्विक (Prismatic) क्रिस्टल्स के रूप में होते हैं । अथवा यह सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो रखा रहने से हल्का पीलापन धारण कर लेता है । इसमें गंधक की हल्की गंध पाई जाती है और स्वाद में अम्ल तथा नमकीन होता है । इसमें कम से कम ९० प्रतिशत सोडियम् मेटाबाइसल्फाइट होता है । विलेयता—२ भाग जल में घुल जाता है; अल्कोहल् में अपेक्षाकृत कम घुलता है ।

प्रयोग—

यह एन्टिसेप्टिक होता है । आहारद्रव्यों में मिलाने से उनमें खमीर नहीं उठने देता (Antifermentative) । अतएव एन्टीऑक्सिडेन्ट (Antioxidant) के रूप में अनेक इन्जेक्शन्स में (०·१%) यह मिलाया जाता है । इसका १०% का लोशन दाद-खाज एवं अन्य त्वचारोगों में उपयोगी है । ग्लिसरिन तथा पेपरमिंट के तेल में मिलाकर गल-प्रलेप के रूप में भी बरता जाता है ।

(८—बैक्टीरियानाशक अन्य यौगिक)

नाइट्रोफुराजोन Nitrofurazone (नॉट-आफिशल) ।

पर्याय—फुरासिन (Furacin) ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन--यह रासायनिक दृष्टि से 5—nitro—2—fural-dehyde semicarbazone होता है, जो जम्बीर पीतवर्ण (Lemon yellow) के गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है। स्वाद में किंचित् तिक्त (तीता) होता है। जल तथा अल्कोहल् में थोड़ा-थोड़ा घुल जाता (Slightly Soluble) है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

फुरासिन अनेक ग्राम-पाजिटिह्व तथा ग्राम-निगेटिह्व जीवाणुओं पर उत्तम जीवाणुस्तम्भक एवं जीवाणुनाशक दोनों प्रकार की क्रियायें करता है। रक्त एवं रक्तरस (Plasma) की उपस्थिति में इसकी क्रियाशीलता कम हो जाती है। इसके ०·२% शक्ति के सॉल्यूशन का प्रयोग दूषित (Infected) क्षत, व्रण एवं दग्ध आदि की चिकित्सा के लिए किया जाता है। कान से मवाद आने पर (Acute or Chronic otitis media) में इसको कर्णबिन्दु के रूप में प्रयुक्त करने से बहुत लाभ होता है। नेत्राभिष्यंद (Conjunctivitis), कृष्णमंडल शोथ (Keratitis) एवं सव्रणशुक्ल (Corneal ulcer) आदि नेत्ररोगों में भी इसका प्रयोग उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ १% मलहम अथवा ०.०२% सॉल्यूशन को घंटे-घंटे पर नेत्र में डालते हैं। लगातार १०–१५ दिन तक स्थानिक प्रयोग करते रहने से किन्हीं-किन्हीं रोगियों में अनूर्जा (Allergic skin reactions) उत्पन्न हो जाता है।

क्लोरेसियम् (Chloresium)—रासायनिक दृष्टि से यह क्लोरोफिल का यौगिक होता है, जो नीली स्याही के रंग का चमकदार चूर्ण होता है। पानी एवं अल्कोहल् में घुल जाता है।

प्रयोग—यह भी साधारण जीवाणुस्तम्भक प्रभाव करता है। ०·२% विलयन (सॉल्यूशन) या मलहम का प्रयोग स्थानिक रूप से व्रणोपचार में करते हैं। साथ ही यह व्रणरोपण में भी सहायक होता है।

पोटासियाइ हाइड्रॉक्सी क्विनोलिनी सल्फास Potassii Hydroxyquinolini Sulphas (Pot. Hydroxyquinolin. Sulph.), B. P. C.—ले०; पोटासियम् हाइड्रॉक्सी क्विनोलीन Potassium Hydroxy quinoline—अं०।

पर्याय—पोटासियम् ऑक्सीक्विनोलीन सल्फेट Potassium Oxyquinoline Sulphate.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह 8-hydroxy quinoline Sulphate तथा पोटासियम् सल्फेट Potassium Sulphate को बराबर-बराबर मात्रा में मिलाने (An equimolecular mixture) से प्राप्त होता है। पोटासियम् ऑक्सीकिनोलीन सल्फेट हल्के पीले रंग के सूक्ष्म क्रिस्टलाइन चूर्ण (Microcrystalline powder) के रूप में होता है, जिसमें एक हल्की गंध आती है तथा स्वाद में अत्यन्त तिक्त होता है। विलेयता—२ भाग जल में घुल जाता है, किन्तु ईथर में अविलेय होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

यह स्थानिक जीवाणुनाशक एवं पूतिहर या दौर्गन्ध्यनाशक (Deodorant) होता है। इसका प्रयोग प्रधानतः स्थानिक क्रिया के हेतु बाह्य प्रयोग के लिए किया जाता है। एतदर्थ इसका प्रयोग लोशन (धावन-द्रव) तथा सॉल्यूशन के रूप में किया जाता है। २०००

में १ से लेकर ५०० में १ के बल का सॉल्यूशन विचर्चिका में अन्य जीवाणुओं का उपसर्ग होनेपर (Secondarily infected eczema) तथा त्वचागत छत्राणु-उपसर्ग (Skin mycosis) में स्थानिक रूप से प्रयुक्त करने से बहुत लाभ होता है। इसका प्रयोग गर्भनिरोधन के हेतु शुक्राणुनाशक (Spermicide) के रूप में भी प्रयुक्त किया जाता है। इसके लिए तद्घटित क्रीम या जेली (Jelly) या योनिवर्ति का व्यवहार किया जाता है।

डाइब्रोमोप्रोपेमिडिनी आइसेथिओनास Dibromopropamidinae Isethionas (Dibromopropamidin Isethion.), B. P. C—ले०; डाइब्रोमोप्रोपेमिडीन आइसेथिओनेट Dibromopropamidine Isethionate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{21}H_{30}O_{10}N_4S_2Br_2$.

पर्याय—ब्रूलिडीन Brulidine।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 1 : 3—di (4—amidino-2-bromophenoxy)—Propane-di-2-hydroxyethane sulphonate होता है।

वर्णन—ब्रूलिडीन के सफेद या मटमैले सफेद रंग के क्रिस्टलाइन ढेले (Crystalline solid) होते हैं जो गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होते हैं। विलेयता—२ भाग जल, ६० भाग अल्कोहल तथा ग्लिसरिन में घुलजाता है, किन्तु ईथर, क्लोरोफॉर्म, स्थिर तैल एवं लिक्विड पाराफिन में अविलेय होता है। संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए ताकि इसमें नमी न पहुँच सके।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

ब्रूलिडीन एक उत्तम जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic), जीवाणुनाशक (Bactericide) एवं छत्राणुनाशक (Fungicide) औषधि है। डाइब्रोमोप्रोपेमिडीन आइसेथिओनेट की उक्त क्रियाएँ ग्राम-पॉजिटिव तथा ग्राम-निगेटिव दोनों प्रकार के बैक्टीरिआ पर होती है। कभी-कभी जिन जीवाणुओं पर पेनिसिलिन आदि एन्टीबायोटिक समुदाय की औषधियाँ भी निष्क्रिय सिद्ध हो जाती हैं, उन पर यह काम कर जाता है। दूसरी विशेषता इसमें यह है कि रक्त, मवाद तथा पाराअमिनोबेंजोइक एसिड आदि औषधियों का इसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, अर्थात् इनकी उपस्थिति में भी यह अपनी जीवाणुनाशक क्रिया उसी प्रकार करता है। व्रत (Wounds), व्रण (Ulcers) एवं दग्ध (Burns) आदि में जीवाणु-उपसर्ग के निवारण के लिए यह एक उत्तम द्रव्य है। एतदर्थ इसका प्रयोग ०·१५% क्रीम या ०·१% सोल्यूशन के रूप में किया जाता है।

२—प्रतिपराश्रयी द्रव्य (Parasiticides) एवं छत्राणुनाशक द्रव्य (Fungicides)।

सल्फरप्रेसिपिटेटम् (गंधक), I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : S.

नाम—सल्फर प्रेसिपिटेटम् Sulphur Praecipitatum (Sulphur Praecip.)—ले०, प्रेसिपिटेटेड सल्फर Precipitated Sulphur मिल्क आव सल्फर (Milk of sulphur)—अं०; गंधक—सं०, हि०।

प्राप्ति-साधन—पहले सल्फर तथा केल्सियम् ऑक्साइड को परस्पर मिलाकर उबाला जाता है। पुनः इस विलयन में हाइड्रोक्लोरिक एसिड मिलाने से प्रेसिपिटेटेड सल्फर प्राप्त होता है।

वर्णन—प्रेसिपिटेटेड सल्फर खाकस्तरी रंग लिए पीले रंग का अथवा हलका हरापन लिए पीले रंगका मुलायम चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधरहित तथा स्वादरहित होता है। अंगुलियों के बीच रगड़ने से बिल्कुल किरकिरापन नहीं होना (Free from grittiness) चाहिए। इसको जलाने से नीली लपट या ज्वाला के साथ जलता है और सल्फर डाई आक्साइड गैस निकलती है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल् (९० प्रतिशत) में तो प्रायः बिल्कुल नहीं घुलता, किन्तु कार्बन-डाइसल्फाइड में विलेय (Soluble) होता है।

मात्रा—१५ से ६० ग्रेन या १ से ४ ग्राम (१ माशा से ३ माशा)।

सल्फर सब्लिमेटम् (I. P. B. P.)

Sulphur Sublimatum (Sulphur Sublim.)—(ले०)।

पर्याय—सब्लाइम्ड सल्फर Sublimed Sulphur; फ्लावर्स ऑव सल्फर Flowers of Sulphur—अं०; ऊर्ध्वपातित गंधक के फूल—हिं०।

वर्णन—यह पीले रंग का सूक्ष्म तथा किंचित् कुरकुरा (Gritty) चूर्ण होता है, जिसमें एक हल्की गंध आती है, जो वैसे अरुचिकारक नहीं होती ; स्वादरहित। जलाने पर नीली ज्वाला के साथ जलता है तथा सल्फर डाई ऑक्साइड गैस की उत्पत्ति होती है। विलेयता—प्रायः जल में नहीं घुलता। इसी प्रकार अल्कोहल् (९० प्रतिशत) में भी नहीं घुलता, किन्तु कार्बन-डाइ-सल्फाइड में थोड़ा-थोड़ा घुल जाता है।

मात्रा—१५ ग्रेन से ६० ग्रेन (१ ग्राम से ४ ग्राम)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

बाह्य। बाह्यतः स्थानिक प्रयोग से गंधक साधारण प्रतिपराश्रयी (Antiparasitic or Parasiticide) एवं फंगसनाशक (Fungicide) होता है। इस क्रिया के लिए इसका प्रयोग अनेक त्वचारोगों में किया जाता है। एतदर्थ इसका मलहम (सल्फर आयण्टमेंट) एक उत्तम योग है। गंधक के मलहम का उपयोग चिकित्सा में दद्रु या दाद, खुजली (Scabies) एवं जूंआ को मारने के लिए किया जाता है। सेलिसिलिक एसिड के साथ बनाया हुआ गंधक का मलहम (Ointment of Salicylic acid and Sulphur, B. P. C.) (Psoriasis), विचर्चिका (Eczema) तथा (Lupus erythemate) आदि त्वचारोगों में प्रयुक्त करने से लाभ होता है। गंधक का प्रयोग कमरों एवं पुस्तक, फर्नीचर तथा गल्ले के बखारों के विशोधन के लिए भी किया जाता है। इसके लिए गंधक को कमरे में जलाया जाता है। इससे सल्फर-डाई-ऑक्साइड गैस निकलती है, जो आर्द्रता के जलांश के साथ सल्फ्यूरिक एसिड के रूप में जारित होती है और चूँकि सल्फूरिक एसिड विकारी कीटों एवं जीवाणुओं पर घातक प्रभाव करता है, अतएव गंधक जलाने से विशोधन का कार्य होता है। इस कार्य के लिए १०६० घन फुट आयतन के कमरे के लिए १ सेर गंधक पर्याप्त है।

आभ्यन्तर—मुखद्वारा सेवन किये जाने पर आँतों में यह सल्फाइड्स में परिवर्तित हो जाता है, जो आँतों पर, विशेषतः बृहदन्त्र—क्षोभक प्रभाव करता है, जिससे बृहदन्त्र की पुरस्सरण

गति (Peristalsis) में उत्तेजना मिलती है। इस प्रकार यह मृदुसारक (Laxative) का कार्य करता है। गंधक की इस क्रिया का उपयोग चिकित्सा में किया जाता है। गन्धक का चूर्ण दूध के साथ अथवा सिरप या मधु में मिलाकर अथवा अवलेह (confection) या सुन्चक्रिका (Lozenges) के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। लेक्जेटिव होने ही के कारण यह 'कम्पाउण्ड पाउडर ऑव ग्लिसराइजा' में भी मिलाया जाता है। इस रूप में गंधक का सेवन रात में सोते समय करना चाहिए। सेवन के १०-१५ घंटे के उपरान्त इसकी सारक क्रिया लक्षित होती है। दस्त प्रायः आसानी से बिना मरोड़ के होता है।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर इसका १० से ४० प्रतिशत तक शोषण होता है, जो सल्फाइड के रूप में श्वास, मूत्र एवं पसीने के साथ उत्सर्गित होता है।

(नॉट ऑफिशल)

३—सेलिसिलिक एसिड एण्ड सल्फर आयण्टमेंट Salicylic Acid and sulphur ointment, B. P. C.–अं०। अंग्वण्टम् एसीडाइ सेलिसिलिसाई एट सल्फ्युरिस Unguentum Acidi salicylici et sulphuris (Ung, Acid salicyl. et sulphur-) —ले०। सेलिसिलिक एसिड १२१ ग्रेन (३ प्रतिशत), सब्लाइम्ड सल्फर १२१ ग्रेन; हाइड्रस आयण्टमेंट ९ औंस १७५ ग्रेन।

(ऑफिशल योग)

१—अंग्वण्टम् सल्फुरिस Unguentum Sulphuris (Ung. Sulphur.), I. P., B. P, —ले०; आयण्टमेंट ऑव सल्फर Ointment of sulphur, सल्फर आयण्टमेंट Sulphur Ointment—अं०। गंधक का मलहम—हिं०। इसमें १० प्रतिशत सब्लाइम्ड सल्फर होता है।

(२) इसके अतिरिक्त सब्लाइम्ड सल्फर, कम्पाउण्ड पाउडर ऑव ग्लिसराइजा में पड़ता है।

सल्फर के नुस्खे :—

(१) सेलिसिलिक एसिड	१५ ग्रेन
सल्फर आयण्टमेंट	४ ड्राम
अमोनिएटेड मरकरी आयण्टमेंट	२ ड्राम
सिम्पुल आयण्टमेंट	२ ड्राम

सबको परस्पर मिलावें। खुजली, दाद तथा जूं के उपसर्ग में लगाने से लाभ होता है।

(२) प्रेसिपिटेटेड सल्फर	१ ड्राम (६० ग्रेन)
ग्लिसरिन	१ औंस
अर्क गुलाब	१० औंस

मुँहासे (Acne) में लगाने के लिए उत्तम है।

पोटासा सल्फ्युरेटा Potassa sulphurata (Potass. Sulphur.), B. P. C.—ले०; सल्फ्युरेटेड पोटाश (Sulphurated Potash)—अं०।

पर्याय—लिवर ऑव सल्फर (Liver of Sulphur)।

प्राप्ति साधन—रासायनिक दृष्टि से यह पोटासियम् पॉलीसल्फाइड्स (Potassium Polysulphides) एवं पोटासियम् सल्फाइट एवं थायोसल्फेट आदि अन्य पोटासियम् यौगिकों का मिश्रण होता है, जो २ भाग पोटासियम् कार्बोनेट एवं १ भाग सब्लाइम्ड सल्फर को परस्पर मिलाकर

कर प्राप्त किया जाता है। हवा में खुला रहने से यह वायुमंडल से नमी (Moisture) एवं कार्बन-डाइ-ऑक्साइड को शोषित कर ओषजनित हो जाता (Undergoes oxidation) है।

वर्णन—छोटे-बड़े घनकणों (Solid Fragments) के रूप में होता है, जो बाहर से हरापन लिये पीले रंग के तथा अन्दर से हल्के भूरे रंग (Liver brown) के होते हैं। किन्तु हवा में खुला रहने से यह रंग परिवर्तित होकर हरापन लिये पीले रंग का हो जाता है। इससे हाइड्रोजन सल्फाइड की गंध आती है तथा स्वाद में क्षारीय या खारा (Alkaline) होता है। संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में रखना चाहिए, ताकि अन्दर नमी न पहुँचे।

असंयोज्य पदार्थ—अम्लों के साथ असंयोज्य होता है।

(नॉट ऑफिशल)

केल्क्स सल्फ्युरेटा (Calx Sulphurata)—ले०; केल्सियम् सल्फाइड (Calcium Sulphide)—अं०।

यह हल्का खाकस्तरी रंग लिये सफेद रंग का चूर्ण होता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड की बू आती है।

मात्रा—¼ से १ ग्रेन या १६ से ६० मि० ग्रा०।

लाइकर केल्सिस सल्फ्युरेटी Liquor Calcis Sulphuratae (Liq. Calc. Sulphurat.)-ले०। लोशिओ केल्सिस सल्फ्युरेटा Lotio Calcis sulphurata; लेमिंक सॉल्यूशन Vleminckx's Solution.

इसमें केल्सियम् हाइड्रॉक्साइड २५ ग्राम, सब्लाइम्ड सल्फर ५० ग्राम, जल आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० के लिए। जल में उक्त द्रव्यों को मिलाकर उबालें ताकि सब परस्पर हल हो जावें।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

बाह्यतः स्थानिक प्रयोग से सल्फ्युरेटेड लाइम तथा सल्फ्युरेटेड पोटाश दोनों ही क्षोभक (Irritant), प्रतिक्षोभक (Counter-irritant) एवं पराश्रयी कीटनाशक (Parasiticide) होते हैं। केल्सियम् एवं बेरियम् के सल्फाइड्स लोमशातक (Depilatory) भी होते हैं। सल्फ्युरेटेड पोटास का मलहम (सल्फ्युरेटेड पोटास १ ड्राम, सोडाबाइकार्ब० १ ड्राम १ औंस सिम्पुल आयण्टमेंट में मिलावें।) खुजली एवं दाद में फायदा करता है। इसके लिए लेमिंक सॉल्यूशन अधिक उपयुक्त है। ३० गैलन पानी में ४ औंस सल्फ्युरेटेड पोटास मिलाकर इसमें स्नान करने से मुँहासा तथा खुजली में बहुत लाभ करता है। इसी प्रकार लेमिंक सॉल्यूशन (५ गैलन जल में १ औंस) में स्नान करने से विचर्चिका (Eczema) के कण्डू का शमन होता है।

आभ्यन्तर प्रयोग से आमाशय में सल्फाइड्स सल्फ्युरेटेड हाइड्रोजन में वियोजित होकर स्थानिक क्षोभक प्रभाव करते हैं। आंतों में पहुँचकर आंत की पुरस्सरण गति को बढ़ाते हैं, जिससे रेचन हो सकता है। डकार में सल्फाइड की गंध आती है।

बेंजिलिस बेंजोआस (बेंजिल बेंजोएट) Benzylis Benzoas (Benzyl. Benz.), I. P., B. P.—ले०; बेंजिल बेंजोएट Benzyl Benzoate—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_6H_5-Co-O-CH_2-C_6H_5$

प्राप्ति-साधन—बेंजिल बेंजोएट, बेंजिल अल्कोहल् (Benzyl alcohol) तथा बेंजोइक एसिड की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया (ईस्टरीकरण esterification) के द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम-से-कम ९९% $C_{14}H_{12}O_2$ होता है।

वर्णन—यह रंगहीन क्रिस्टल्स के रूप में अथवा रंगहीन तैलीय द्रव (Oily liquid) के रूप में प्राप्त होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की सुगंधि आती है तथा स्वाद में तीक्ष्ण जलन पैदा करनेवाला (Sharp and burning) होता है। विलेयता—जल तथा ग्लिसरोल में अविलेय होता है; अल्कोहल् (९५%), क्लोरोफॉर्म तथा सालवेंट ईथर में घुल जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

बेंजिल बेंजोएट खुजली के कीटाणुओं (Acarus scabiei) पर घातक प्रभाव (Acaricide) करता है। इसके अतिरिक्त यह जूंनाशक (Pediculocide) भी होता है। खुजली में पहले गरम पानी एवं साबुन से शरीर को खूब रगड़-रगड़ कर साफ करके सारे शरीर पर इसका लेप करना चाहिए (ग्रीवा के ऊपर के भाग में इसको नहीं लगाना चाहिए)। जब लेप सूख जाय पुनः उसी पर दूसरा लेप करें। २४ घंटे के बाद पुनः गरम पानी एवं साबुन से शरीर को साफ कर स्नान कर लेना चाहिए। प्रायः एक बार ऐसा करने से भी व्याधि निर्मूल हो जाती है। यदि आवश्यकता हो तो १-२ बार चिकित्साक्रम को दुहराना पड़ता है। इसी प्रकार जुंओंके उपसर्ग (Pediculosis) में भी प्रयुक्त हो सकता है।

मुखद्वारा सेवन किये जाने पर यह उद्वेष्टहर (Spasmolytic) प्रभाव करता है। अतः पहले पित्तशूल (Biliary Colic), आंत्रशूल (Intestinal Colic) एवं वृक्कशूल (Renal colic) तथा कुक्कुर खाँसी (Whooping Cough) एवं हिक्का (Hiccough) में इसका प्रयोग उपयोगी समझा जाता था। एतदर्थ कुक्कुरखाँसी एवं हिक्का में उपयोगी है। इसके लिए २०% अल्कोहोलिक सोल्यूशन के रूप में, अथवा ($\frac{1}{10}$ भाग) ट्रागाकान्थ के साथ बनाये हुए इमल्सन के रूप में या जिलेटिन की डिब्बियों में रखकर प्रयुक्त होता है।

(ऑफिशल योग)

१—एप्लिकेशिओ बेंजिलिस बेंजोआस (Applicatio Benzylis Benzoas (Appl. Benzyl. Benz.), I. P., B. P.—ले०; एप्लिकेशन ऑव बेंजिल बेंजोएट Application of Benzyl Benzoate—अं०; बेंजिल बेंजोएट का प्रलेप—हिं०।

निर्माण-विधि—बेंजिल बेंजोएट २५० ग्राम; इमल्सिफाइंगवैक्स २० ग्राम तथा जल आवश्यकतानुसार १००० ग्राम तैयार औषधि के लिए। इसमें बेंजिल बेंजोएट २५% (W/V) होता है।

व्यावसायिक योग :—

(१) नोवास्केबिअन Novascabian (Wander)—इसमें ३०% बेंजिल बेंजोएट होता है। ५०० सी० सी० की शीशियाँ (Bottles) आती हैं।

मिसल्फेनम् Mesulphenum, B. P. C—ले०; मिसल्फेन (Mesulphen)—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{14}H_{12}S_2$.

पर्याय—Dimethylthianthrene; Dimethyldiphenylene Disulphide (B. P. C.)।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से इसमें प्रधानतः (८५ से ९०%), 2 : 6—dimethylthianthrene होता है। यह पीले रंग का तेल की भाँति गाढ़ा द्रव होता है, जिसमें एक गंध आती है, जो अरुचिकारक नहीं होती। ठण्डक में रहने पर नीचे घन पदार्थ तलस्थित हो जाता है। प्रयोग के पूर्व इसे गरम कर मिला देना चाहिए। इसमें २५% सल्फर (Organically combined Sulphur) होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

इसका स्थानिक प्रयोग अनेक त्वचारोगों में किया जाता है। खुजली, जूंआ (Pediculosis), अपरस (Seborrhoea) एवं मुहांसा (Acne) में थोड़ी-सी दवा लेकर उस स्थान पर अच्छी तरह रगड़ कर लगा देना चाहिए। ऐसा ३–४ दिन करने से रोगशान्ति होती है।

इकथेमोल Ichthammol (Ichtham.), I. P., B. P.

पर्याय—अमोनियम् इक्थोसल्फोनेट Ammonium Ichtho-sulphonate ; इक्थिओल (Ichthyol)।

वर्णन—यह प्रायः काले रंग का द्रव होता है, जो गाढ़ा तथा चिपचिपा (Viscid) होता है और इसमें एक विशिष्ट प्रकार की उग्र गंध पाई जाती है। विलेयता—जल में घुल जाता (Soluble) है; अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) तथा सालवेंट ईथर में भी थोड़ा-थोड़ा घुलता है; ग्लिसरिन एवं स्थिर तेलों (Fixed oils) में भी मिल जाता (Miscible) है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

स्थानिक प्रयोग से इकथिओल मार्दवकर तथा जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) होता है। अनेक त्वचारोगों में इसका प्रयोग मलहम के रूप में किया जाता है। विसर्प (Erysipelas) तथा अपरस (Psoriasis) में इसके १० % बल के मलहम का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। ग्लिसरिन के साथ मिलाकर इसको लसार्बुदशोथ या गिल्टी पर (Lymphadenitis) लगाते हैं। वर्ति या पेसरी के रूप में इसको गर्भाशयग्रीवाशोथ (Cervicitis) में प्रयुक्त करते हैं। इकथेमोल में १० ½% गंधक होती है।

(नॉन्–ऑफिशल योग)

१—क्रिमोर जिंसाइ ऑक्साइडाइ एट इकथेमोलिस Cremor Zinci Oxidi et Ichthammolis (Cremor. Zinc. Oxid. Ictham.), B. P. C.–ले०; जिंक ऑक्साइड एण्ड इकथेमोल क्रीम–अं०। सेटोस्टियरिल अल्कोहल् १३१ ग्रेन, इकथेमोल २२७ ग्रेन, ऊन की चर्बी १ औंस, क्रीम ऑव जिंक-आक्साइड १० औंस। पहले सेटोस्टियरिल अल्कोहल् और ऊन की चर्बी को गरम कर पिघला लें। फिर खरल में 'क्रीम ऑव जिंक आक्साइड' मिलाकर खूब घोंटे। अब इसमें इकथिओल मिला दें।

२—अंग्वण्टम् इकथेमोलिस् Unguentum Ichthammolis (Ung. Ichtham.), B. P. C. —ले०; इकथेमोल आयण्टमेंट–अं०; इकथिओल का मलहम—हिं०। इकथेमोल १ औंस, ऊन की चर्बी (Wool fat) ४½ औंस, पीत मृदु पाराफिन (Yellow soft Paraffin) ४½ औंस। सबको परस्पर मिलावें। १० प्रतिशत इकथिओल होता है।

३—ग्लिसेरिनम् इकथेमोलिस Glycerinum Ichthammolis (Glycer. Ichtham.),

B. P. C—ले०; ग्लिसरिन ऑव इकथेमोल—अं०। ग्लिसरिन ९ औंस, इकथेमोल १ औंस। दोनों को परस्पर मिलावें। १० प्रतिशत इकथिओल होता है।

क्राइसेरोबिनम Chrysarobinum(Chrysarob.), I. P.

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल)

पर्याय—क्राइसेरोबिन Chrysarobin—अं०। गोवा पाउडर Goa Powder; रिंगवर्म पाउडर Ring-worm Powder ; ब्रेजिल पाउडर Brazil Powder.

प्राप्ति-साधन—क्राइसेरोबिन, क्राइसोफेनोलेन्थ्रेनॉल तथा इससे मिलते-जुलते अन्य रासायनिक तत्त्वों का मिश्रण होता है जो दक्षिणी अमरीका के अन्डिरा अरारोबा Andira araroba Aguiar नामक वृक्ष के तने के गूदे से प्राप्त किया जाता है। इसको बेंजीन के साथ गरम कर विलयन को छानकर वाष्पीभवन (Evaporation) द्वारा सुखा लेते हैं। शुष्क होनेपर जो पदार्थ प्राप्त होता है, उसका चूर्ण बना लिया जाता है। यही गोवापाउडर है। इसी से क्राइसोफेनिक एसिड प्राप्त किया जाता है।

उत्पत्तिस्थान—दक्षिणी अमरीका के ब्रेजिलप्रान्त में बाहिया (Bahia) नामक स्थान के जंगलों में इसके स्वयंजात बड़े-बड़े वृक्ष होते हैं।

वक्तव्य-गोवा पाउडर या अरारोबा (Araroba) भी एक विदेशी औषधि है, जिसका प्रवेश भारतवर्ष में पुर्तगालियों द्वारा किया गया। बम्बईप्रान्त के पुर्तगाली उपनिवेशों के ईसाई इसका प्रयोग एक चर्मरोग विशेष में, जिसे मराठी में गजकर्ण कहते हैं, करते थे। बम्बई के बाजार में यह गोवा पाउडर, ब्रेजिल पाउडर अथवा रिंगवर्म पाउडर नामों से बिकता था। उत्पत्तिस्थान के नामपर पुर्तगाली लोग इसको "बाहिया पाउडर Bahia Powder" भी कहते थे। गोवा पाउडर या अरोरोबा के ठीक वानस्पतिक साधन का निश्चय सन् १८७९ ई० में हुआ। ब्रेजिल के बाहिया प्रान्त के आदिवासी (जहां यह वृक्ष स्वयंजात होता है) इस औषधि का प्रयोग त्वचारोगों में बहुत प्राचीन काल से करते आरहे हैं। उक्त वृक्ष के काण्ड-स्कन्ध के अन्दर जगह-जगह यह चूर्ण एकत्रित पाया जाता है। इसको निकालने के लिए वृक्षों को काटकर गिरा दिया जाता है और उसमें से लकड़ी को चीरकर अन्दर एकत्रित चूर्ण को निकाल लेते हैं।

वर्णन—क्राइसेरोबिन पीले रंग के अथवा पीलापन लिये भूरे रंग के हल्के (Light) सूक्ष्म-क्रिस्टलाइन चूर्ण (Microcrystalline powder) के रूप में होता है। यह प्रायः गंधहीन तथा स्वादरहित होता है। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय (Almost insoluble); एल्कोहल् में भी केवल अंशतः घुलता (Slightly Soluble) है। किन्तु गरम क्लोरोफार्म, बेंजीन तथा फैट्स (Fats) में अच्छी तरह घुल जाता है। संरक्षण—प्रकाश के प्रभाव से इसका रंग बिगड़ने लगता है, अतएव क्राइसेरोबिन का संग्रह ऐसी जगह में करना चाहिए जहाँ साक्षात् प्रकाश का प्रभाव न हो सके।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

क्राइसेरोबिन भी एक प्रतिपराश्रयी (Parasiticide) द्रव्य है। दाद के कीटाणुओं पर इसकी विशेष घातक क्रिया होती है। मलहम के रूप में इसका प्रयोग दाद (Ringworm) एवं अपरस (Psoriasis) में किया जाता है। किन्तु इसमें एक दोष है कि त्वचा पर यह तीव्र क्षोभक प्रभाव भी करता है। अतएव यदि मलहम ज्यादा तेज (Concen-

trated) हुआ तो त्वचा में खुजली, शोथ, लाली तथा पूययुक्त विस्फोट (Pustular eruption) भी हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त कपड़े पर इसका दाग भी पड़ जाता है। अतएव मलहम लगाते समय ध्यान रखना चाहिए कि दवा केवल दाद के चकत्तों पर ही लगे। दूसरे शिर के दाद में यथासम्भव इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। अब इसके स्थान में अन्य दद्रु-नाशक औषधियों का व्यवहार किया जाता है।

(योग)

१—अङ्गवरटम् क्राइसेरोबिनाइ Unguentum Chrysarobini (Ung. Chrysarob.), I. P. —ले०; आयण्टमेंट ऑव क्राइसेरोबिन Ointment of Chrysarobin; क्राइसेरोबिन आयण्टमेंट Chrysarobin Ointment—अं०; क्राइसेरोबिन या गोवा पाउडर का मलहम—हिं०। पीला वैसलीन में इसका मलहम बनाया जाता है। क्राइसेरोबिन ५% होता है। क्राइसेरोबिन ५ ग्राम; पीला वैसलीन ९५ ग्राम। दोनों को परस्पर चाकू से रगड़कर मिलावें।

डाइथ्रेनॉल (Dithranol; I. P.; B. P.)

रासायनिक संकेत : $C_{14}H_{10}O_3$.

पर्याय—डाइऑक्सीएन्थ्रेनॉल Dioxyanthranol ; एन्थ्रालिन (Anthralin)।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 1 : 8—dihydroxyanthranol होता है और 1 : 8 dihydroxyanthraquinone का रासायनिक प्रह्रासन (Reduction) करके प्राप्त किया जाता है।

वर्णन—यह पीले रंग का गंधहीन एवं स्वादहीन चूर्ण होता है, जो जल में नहीं घुलता और अलकोहल (९५%) तथा साल्वेंट ईथर में भी केवल अंशतः घुलता (Slightly Soluble) है; किन्तु क्लोरोफॉर्म तथा स्थिर तेलों (Fixed oils) में विलेय (Soluble) होता है।

प्रयोग

डाइथ्रेनॉल भी क्राइसेरोबिन की भाँति एक पराश्रयी कीटनाशक द्रव्य (Parsiticide) है। इसका उपयोग मलहम के रूप में अनेक त्वचा रोगों, यथा—अपरस (Psoriasis), दाद (Ringworm) आदि—में किया जाता है। दाद में क्राइसेरोबिन के स्थान में डाइथ्रेनॉल का प्रयोग अधिक उपयुक्त समझा जाता है। क्योंकि एक तो यह अल्प मात्रा में ही काफी प्रभावशाली होता है, दूसरे उसकी भांति क्षोभक भी नहीं होता और न इसके प्रभाव से क्राइसेरोबिन की भाँति कपड़े ही रंगते हैं। इसके लिए इसका ०.१ से १ प्रतिशत बलका मलहम या २% पेंट (Paint) या प्रलेप का व्यवहार होता है। शिर के गंजा (खालित्य) रोग (Alopecia areata) में भी इसका प्रयोग उपयोगी माना जाता है। किन्तु इसके लिए चिरकाल तक इसका लगातार व्यवहार नहीं करना चाहिए, अन्यथा कभी-कभी बाल और भी गिरने लगते हैं।

वक्तव्य—(१) यदि त्वचा पर इसके दाग पड़ गये हों तो ब्लीचिंग पाउडर सॉल्यूशन लगावें और कपड़े पर दाग पड़े हों तो बेंजीन या ट्राइक्लोरोएथिलीन लगावें।

(२) किन्हीं-किन्हीं रोगियों में डाइथ्रेनोल के प्रति असह्यता या परमसंवेदनशीलता (Hypersensitiveness) पाई जाती है। अतएव पहले मलहम का प्रयोग करके इसकी परीक्षा कर लेनी चाहिए या इस बात को ध्यान में रखना चाहिए।

(आँफिशल योग)

१--अंग्वण्टम् डाइथ्रेनोलिस Unguentum Dithranolis (Ung. Dithranol.), I. P., B. P.--ले०; आयण्टमेंट ऑव डाइथ्रेनॉल Ointment of Dithranol--अं०। डाइथ्रेनाल का मलहम --हिं०। पीले वैसलीन में इसका मलहम बनाया जाता है। इसमें डायथ्रेनॉल ०'१% होता है। डाइथ्रेनॉल १ ग्राम, पीला वैसलीन ९९९ ग्राम। दोनों को परस्पर मिलावें।

२--स्ट्रांग आयण्टमेंट ऑव डाइथ्रेनॉल *Strong Ointment of Dithranol*, B. P.--अं०। डाइथ्रेनोल का तेज मलहम--हिं०। इसमें डाइथ्रेनॉल १% होता है।

व्यावसायिक योग :—

(१) डाइथ्रेनोल Dithranol (W. B.)-- पाउडर। १ औंस की शीशियाँ आती है।

(२) डेरोबिन Derobin (Glaxo)--(१) पाउडर। (२) आयण्टमेंट--१'२% डेरोबिन तथा सेलिसिलिक एसिड एवं कोलतार। पिचकनेवाली नलिकाओं (Collapsible tubes) में आते हैं।

पराश्रयी कीटनाशक एवं छत्राणुनाशक कतिपय मेदसाम्ल (Fatty acids) एवं उनके लवण:—

एसिडम् अन्डेसिनोइकम् Acidum Undecenoicum (Acid. Undecenoic.), B. P. C.--ले०; अन्डेसिनोइक एसिड--अं०।

रासायनिक संकेत : $CH_2 : CH [CH_2]_8 CO_2H$.

पर्याय--अन्डेसिलेनिक एसिड Undecylenic Acid (B. P. C.)।

प्राप्ति-साधन--रासायनिक दृष्टि से इसमें प्रधानतः undec--10--enoic--acid होता है, जो एरण्ड तेल के परिस्रवण (Vacuum distillation of Castor oil) द्वारा प्राप्त किया जाता है।

वर्णन--यह पीले रंग का द्रव या हलके पीले रंग के क्रिस्टलाइन ढेलों (Masses) के रूप में प्राप्त होता है। इसमें एक विशिष्ट प्रकार की गंध होती है। विलेयता--जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insolulble) होता है, किन्तु अल्कोहल्, ईथर, क्लोरोफोर्म तथा बेंजीन में मिल जाता (Miscible) है।

जिंसाइ अन्डेसेनोआस Zinci Undecenoas (Zinc. Undecen.), B. P. C.--ले०; जिंक अन्डेसेनोएट (Zinc Undecenoate)--अं०।

रासायनिक संकेत : $(C_{10}H_{18}CO_2)_2 Zn$.

पर्याय--जिंक अन्डेसेलिनेट Zinc Undecylenate।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन--रासायनिक दृष्टि से यह Zinc undec--10--enoate होता है, जो सोडियम् अन्डेसेनोएट एवं जिंक सल्फेट के साल्यूशन की परस्पर रासायनिक क्रिया से प्राप्त किया जाता है। सफेद या क्रीम के रंग का चूर्ण होता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

अंडेसिलेनिक एसिड एवं जिंक अंडेसेलिनेट दोनों ही अनेक प्रकार के छत्राणुओं (Fungi) पर घातक प्रभाव (Fungicide) करते हैं। अतएव त्वचा, नखोष्ठ एवं योनि

के विभिन्न छत्राणुजन्य उपसर्ग में इनका स्थानिक प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। इसके लिए अण्डेसिलेनिक एसिड (२ से १० प्रतिशत) एवं जिंक अन्डेसेलिनेट (१० से २० प्रतिशत) के प्रयोग मलहम, इमल्सन एवं डस्टिंग पाउडर (अवधूलन चूर्ण) के रूपमें किया जाता है। श्लैष्मिक-कलाओं (Mucous membranes) पर लगाना हो तो अन्डेसिलेनिक एसिड १ प्रतिशत पर्याप्त है। मलहम का प्रयोग सुविधा की दृष्टि से रात्रि में तथा पाउडर को दिन में प्रयुक्त करते हैं। कभी-कभी इसका सेवन मुखद्वारा भी कराया जाता है।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—अंग्वण्टम् जिसाइ अन्डेसिनोएटिस Unguentum Zinci undesenoatis (Ung. Zinc. Undecen.), B. P. C.—लै०; आयण्टमेंट ऑव जिंक अन्डेसेनोएट—अं०। जिंक अन्डेसेनोएट २ औंस, अन्डेसेनोइक एसिड ½ औंस इमल्सिफाइंग आयण्टमेंट आवश्यकतानुसार १० औंस के लिए। पहले इमल्सिफाइंग आयण्टमेंट को पिघलाकर अन्य दोनों द्रव मिलाकर हिलाते रहें, जब तक हल न हो जाँय। २०% जिंक अन्डेसेनोएट तथा ५% अन्डेसेनोइक एसिड।

२—डस्टिंग पाउडर ऑव जिंक अन्डेसेनोएट Dusting Powder of Zinc Undecenoate, B. P. C–अं०; कान्सपर्सस् जिंसाइ अन्डेसेनोएटिस Conspersus Zinci Undecenoatis (Consp- ers. Zinc. Undecen.)-लै०। जिंक अन्डेसेनोएट १ औंस, अन्डेसेनोइक एसिड ८७½ ग्रेन, प्युमिलो- पाइन ऑयल २२½ बूंद, स्टार्च ४ औंस १६६ ग्रेन, केओलिन (Light kaolin) १० औंस के लिए। जिंक अन्डेसेनोएट १०% तथा अन्डेसेनोइक एसिड २%।

एसिडम् ऑक्टोइकम् Acidum Octoicum (Acid. Octoic.), B.P.C. —लै०; आक्टोइक एसिड—अं०।

पर्याय—आक्टेनोइक एसिड Octanoic Acid; केप्रिलिक एसिड Caprylic Acid।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह नैसर्गिक रूप से पाये जानेवाले स्टियरिक वर्ग के मेदसाम्लों (Fatty acids) से अथवा नारियल के तेल से प्राप्त ऑक्टिल अल्कोहल् से बनाया जाता है। आक्टो- इक एसिड स्वच्छ रंगहीन द्रव के रूप में अथवा सफेद क्रिस्टलाइन पिण्डों (White crystalline masses) के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है तथा स्वाद में अम्ल होता है। विलेयता—ठंडे जल में तो प्रायः बिल्कुल नहीं घुलता, किन्तु गरम पानी में थोड़ा- थोड़ा घुल जाता (Sparingly Soluble) है। इसके अतिरिक्त प्रायः अधिकांश सेन्द्रिय विलायक द्रव्यों (Organic Solvents) में तथा ग्लेशियल एसेटिक एसिड में भी घुलनशील होता है। अल्कोहल् में यों घुलता तो नहीं किन्तु मिलजाता (Miscible) है।

सोडियम् आक्टोआस Sodium Octoas (Sod. Oct.), B. P. C.— लै०; सोडियम् आक्टोएट; सोडियम् केप्रिलेट (Sodium Caprylate) —अं०।

रासायनिक संकेत : $C_8H_{15}O_2Na$.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह आक्टोइक एसिड एवं सोडियम् कार्बोनेट की परस्पर रासाय- निक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो मलाई के रंग के दानों (Granules) के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—अल्कोहल् में तो अत्यल्प मात्रा में घुलता है, किन्तु जल में सुविलेय होता है।

नेप्रिलेट Naprylate ।

पर्याय—केप्रिलिक कम्पाउण्ड । यह सोडियम् केप्रिलेट (१० %) एवं जिंक केप्रिलेट (५%) का मिश्रण होता है । सफेद रंग के सूक्ष्म चूर्ण के रूप में होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की सुगंधि पाई जाती है । जल तथा अल्कोहल् में घुल जाता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

आक्टोइक एसिड तथा इसके उपर्युक्त दोनों यौगिक त्वचा पर छत्राणुनाशक (Fungicide) प्रभाव करते हैं, और साथ ही इनमें यह भी विशेषता है कि त्वचा पर लगते नहीं (Non—irritant) । अतएव चिकित्साव्यवहार की दृष्टि से अधिक उपयुक्त हैं । छत्राणु (Trychophyton) के उपसर्ग से पैर की अंगुलियों में होनेवाले सड़न (Dermatophytosispedis) में तथा इसी प्रकार के शिश्नेन्द्रिय-उपसर्ग (Cruris) में इसका ५ से १०% बल का मलहम या डस्टिंग पाउडर बहुत उपयुक्त है । मोनिलिया छत्राणुजन्य योनि एवं भगोष्ठप्रदाह (Monilial vulvo—vaginitis) में सोडियम् केप्रिलेट के ५ प्रतिशत सॉल्यूशन का डूश (योनि प्रक्षालन) कर सकते हैं । मलहम का भी प्रयोग कर सकते हैं या चूर्ण का प्रधमन (Insufflation) किया जाता है । छत्राणुजन्य मुखपाक (Monilial Stomatitis) में भी व्यवहृत किया जा सकता है । इसी प्रकार माइक्रोस्पोरोन (Microsporon) छत्राणु के उपसर्ग में भी लाभदायक है । त्वचा पर अन्यत्र छत्राणु-उपसर्ग (Fungal infection of the skin) में सोडियम् केप्रिलेट के १० से २० प्रतिशत बल के सोल्यूशन, पाउडर या मलहम का उपयोग उस स्थान पर लगाने के लिए किया जा सकता है ।

एसिडम् प्रोपिओनिकम् Acidum Propionicum (Acid propionic), B. P. C.—ले०; प्रोपिओनिक एसिड—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_2H_5 \cdot CO_2H$.

पर्याय—मेथिलएसेटिक एसिड Methylacetic acid.

वर्णन—यह रंगहीन अथवा हल्के रंग का द्रव होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है । यह जल, अल्कोहल्, क्लोरोफॉर्म तथा ईथर में मिल जाता (Miscible) है ।

सोडियाइ प्रोपिओनास Sodii Propionas (Sod. Propion.), B. P. C.—ले०; सोडियम् प्रोपिओनेट Sodium Propionate—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_3H_5O_2Na$.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह प्रोपिओनिक एसिड एवं सोडियम् कार्बोनेट की परस्पर रासायनिक क्रिया (By neutralising propionic acid with Sodium Carbonate) द्वारा प्राप्त किया जाता है । इसके रंगहीन पसीजनेवाले (Deliquescent) क्रिस्टल्स होते हैं, अथवा सफेद दानेदार चूर्ण के रूप में पाया जाता है, जो प्रायः गंधहीन अथवा हल्के गन्धयुक्त होता है । विलेयता—१ भाग जल तथा २५ भाग अल्कोहल् में घुलता है ।

प्रोप्रिओन जेल (Proprion Gel) या प्रोपिओनेट कम्पाउन्ड (Propionate Compound)—यह केल्सियम् प्रोपिओनेट (१०%) एवं सोडियम् प्रोपिओनेट का मिश्रण होता है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

पैर, जंघा एवं श्लैष्मिक कलाओं पर छत्राणु (Dermatophyton) जन्य स्थानिक उपसर्ग में प्रोपिओनिक एसिड एवं उनके लवण बहुत उपयोगी होते हैं। एतदर्थ प्रोपिओनिक एसिड का २·५ से ३·५ प्रतिशत का मलहम या ०·२५ प्रतिशत का डस्टिंग पाउडर अथवा सोडियम् प्रोपिओनेट का १० प्रतिशत का मलहम या डस्टिंग पाउडर प्रयुक्त किया जाता है। त्वचा पर अन्य छत्राणु-उपसर्ग होने पर इनको अकेले या अन्य उपयुक्त छत्राणुनाशक द्रव्यों के साथ मिलाकर व्यवहृत कर सकते हैं। योनि एवं भगोष्ठ में मोनिलिआ छत्राणु का उपसर्ग (Monilial Vulvo-Vaginitis) होने पर 'प्रोपिओन जेल' को पानी में मिलाकर प्रयुक्त कर सकते हैं।

सेलिसिलेनिलाइड Salicylanilide या सेलिसिलेनिलाइडम् Salicylanilidum. (नॉट-ऑफिशल)।

वर्णन—यह सेलिसिलिक एसिड तथा एनिलाइन की परस्पर रासायनिक क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो सफेद या हल्के रंग के गंधहीन क्रिस्टल्स के रूप में होता है। यह जल, अल्कोहल्, ईथर, क्लोरोफॉर्म तथा बेंजीन में घुल जाता है। यह एक उत्तम छत्राणुनाशक (Antimycotic) द्रव्य है। इसके ५% मलहम का उपयोग शिर के दाद (Ringworm of the Scalp) में भी कर सकते हैं। व्याधि को निर्मूल करने के लिए लगातार काफी दिनों तक औषधि लगानी चाहिए। जहाँ-जहाँ दाद के मण्डल हों वहाँ का बाल साफ कर देना चाहिए और प्रतिदिन एक बार मलहम लगाना चाहिए।

(३–कीटनाशक एवं लार्वानाशक द्रव्य Insecticides and Larvicides)।

डाइकोफेनम् (डाइकोफेन) : डी० डी० टी०।

Dicophanum (Dicophan.), B. P.—ले०; Dicophane—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{14}H_9Cl_5$.

पर्याय—डाइक्लोरो—डाइफेनिल—ट्राइक्लोरोथेनम् टेक्निकम् Dichloro—Diphenyl—Trichloroethanum Technicum (D. D. T. Tech.), I. P.—ले०; टेक्निकल डाइक्लोरो—डाइफेनिल—ट्राइक्लोरोथेन Technical Dichloro—Diphenyl—Trichloroethane—अं०; Technical D. D. T.; क्लोरोफिनोथेनम् टेक्निकम् Chlorophenothanum Technicum (Ph. Int.)।

प्राप्ति-साधन—डाइकोफेन, सल्फ्युरिक एसिड (गंधकाम्ल) क्लोरोबेंजीन (Chlorobenzene), क्लोरल या क्लोरल हाइड्रेट की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें ९½% से ११½% तक क्लोरीन (Hydrolysable Chlorine) तथा कम से कम ७५% 1 : 1 : 1—trichloro—2 : 2—di—(P—Chloro—Phenyl)—ethane, $C_{14}H_9Cl_5$ होता है।

वर्णन—इसके सफेद या मटमैले सफेद (Nearly white) क्रिस्टल्स या चूर्ण या छोटे-छोटे दाने (Small granules) होते हैं, जो प्रायः गंधहीन या एक विशिष्ट प्रकार की हल्की सुगंधियुक्त होते हैं। विलेयता—जल में प्रायः अविलेय; बेंजीन तथा कार्बन टेट्राक्लोराइड में फौरन् घुल जाता है। (Readily soluble); इसके अतिरिक्त ५० भाग अल्कोहल् (९५%) तथा १० भाग स्थिर तेलों में भी घुलता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

डी० डी० टी० (D. D. T.) एक उत्तम कीटनाशक एवं लार्वानाशक द्रव्य (Insecticide and Larvicide) है। कीटों द्वारा डी० डी० टी० के सेवन किये जाने पर अथवा उनके बाह्य शरीर के सम्पर्क में आने पर दोनों ही प्रकार से यह कीड़ों पर घातक प्रभाव करता है। उड़नशील न होने के कारण डी० डी० टी० का प्रभाव देर में होता है, किन्तु स्थायी होता है। डेरिस तथा पाइरेथ्रम आदि द्रव्य अपनी कीटनाशक क्रिया तत्काल करते हैं। अतः दोनों के परस्पर योग से बनाया हुआ मिश्रण अधिक उपयोगी हो सकता है। बड़े मच्छड़ों, मक्खी, खटमल, पिस्सू आदि को नष्ट करने के लिए यह एक उत्तम कीटनाशक द्रव्य है। इसके लिए डी० डी० टी० का तैलीय विलयन (Oil Solution), इमलशन, चूर्ण (Dust) या जलीय निलम्बन (Suspensions in water) प्रयुक्त किये जाते हैं। आर्थिक दृष्टि से सर्वसाधारण प्रयोग के लिए जलीय निलम्बन अधिक उपयुक्त है। विशोधित टॉक (Talc) या अन्य उपयुक्त निष्क्रिय द्रव्यों के साथ डी० डी० टी० के २ से १० प्रतिशत बल का अवधूलन चूर्ण (Dusting Powder) शरीरगत जुँए आदि को नष्ट करने के लिए बहुत उपयोगी है। कपड़ों पर इसका अवधूलन करने से उसमें कीड़े आदि नहीं लगते। यही कार्य १ से २ प्रतिशत डाइकोफेन (D D T) के प्रयोग से भी हो सकता है। कमरे में मक्खियों को नष्ट करने के लिए पाराफिन ऑयल में ०·२५ प्रतिशत डी० डी० टी० के मिश्रण का छिड़काव करने से काम चल जाता है। इस कार्य के लिए प्रति वर्गफुट १०० मि० ग्रा० डाइकोफेन की आवश्यकता होती है। कमरे की इस प्रकार सफाई के लिए दूसरा उपाय यह है कि जिस प्रकार सफेदी करते समय चूने आदि में तूतिया मिलाया जाता है, उसी प्रकार सफेदी करते समय डी० डी० टी० मिलाकर सफेदी या पेंट वा वार्निश करने से मक्खियों का भय नहीं रहता। सिर के जूँ तथा चिल्लर आदि को नष्ट करने के लिए डी० डी० टी० के २ प्रतिशत बल का इमलशन प्रयुक्त किया जा सकता है। कीटनाशक होने से चिकित्सा में डी० डी० टी० का उपयोग खुजली रोग (Scabies) में किया जा सकता है। इसके लिए इसका आयल-इन-वाटर इमलशन (जिसमें बेंजिल बेंजोएट ११.१ प्रतिशत तथा D D T १ प्रतिशत होता है) अधिक उपयुक्त है।

(योग—नॉट ऑफिशल)

१—डाइकोफेन एप्लिकेशन Dicophane Application या एप्लिकेशन ऑव डाइकोफेन Application of Dicophane, B. P. C.—अं०; एप्लिकेशिओ डाइकोफेनाइ Applicatio Dicophani (Applicat. Dicophan.)—लै०।

पर्याय—डी० डी० टी० एप्लिकेशन DDT Application।

निर्माण-विधि—डाइकोफेन ८७½ ग्रेन, इमलसिफाइंग वैक्स १७५ ग्रेन, जाइलिन (Xylene of Commerce) १½ फ्लुइड औंस; जम्बीरतृणतैल (Citronella oil) २४ बूंद तथा जल आवश्यतानुसार १० औंस के लिए। पहले वैक्स को पिघलाकर रखलें। डाइकोफेन एवं जम्बीरतैल को जाइलिन में घोल लें और इसको पिघले हुए वैक्स में मिलावें। अब अभीष्ट मात्रा जल को गरम कर उसमें मिला दें।

बेनहेक्साक्लोर Benhexachlor (Benhexachl.), I. P.

रासायनिक संकेत : $C_6H_6Cl_6$.

पर्याय—गम्मा बेंजीन हेक्साक्लोराइड Gumma Benzene Hexachloride, B. P. ; बेंजीनहेक्साक्लोराइड Benzenehexachloride; गमेक्सेन Gammexane ।

वर्णन—यह सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध (Slightly musty) पाई जाती है । विलेयता—जलमें अविलेय ; डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् (१९ भाग में), सालवेंट ईथर (५½ भाग), एसिटोन (२ भागमें) तथा बेंजीन के ३ भाग में घुलजाता है ।

प्रयोग

गमेक्सिन अन्य सभी कीटनाशक द्रव्यों की अपेक्षा अधिक तीव्र कीटनाशक द्रव्य है । इसका प्रभाव साधारणतया अनेक कीटों पर होता है । मक्खी, मच्छर, जूं, चिल्लर, खटमल (Bed-bugs), पिस्सू तथा कनखजूरा (Cockroach) आदि पर इसका उत्तम कीटनाशक प्रभाव पड़ता है । इसके लिए अकेले इसको या पाइरेथ्रम आदि अन्य कीटनाशक द्रव्यों के साथ मिलाकर अवधूलन (Dust) या छिड़काव या सीकर (Spray) के रूप में प्रयुक्त करते हैं । इस क्रिया के लिए इसका प्रयोग धूपन के रूप में भी किया जा सकता है । स्प्रे के लिए मिट्टी के तेल में बनाया हुआ गमेक्सेन (०·१ से ०·५ प्रतिशत) का घोल बहुत उपयुक्त है ।

गमेक्सेन का व्यवहार चिकित्सा में पराश्रयीकीटनाशक (Parasiticide) के रूप में खुजली (Scabies) की चिकित्सा में किया जाता है । जुंओं को मारने के लिए भी यह एक उत्तम द्रव (Pediculoside) है । इसके लिए इसका १% बल का क्रीम अथवा मलहम या अल्कोहोलिक साल्यूशन (१%) का व्यवहार किया जाता है । सारे शरीर पर या जहाँ-जहाँ खुजली हो इसका प्रलेप कर दिया जाता है । २४ घंटे के बाद साबुन से सफाई कर दी जाती है । सामान्यतः ऐसे एक प्रलेप से ही कार्य चल जाता है, किन्तु यदि आवश्यकता हो तो प्रक्रिया दुहराई भी जा सकती है ।

व्यावसायिक योगः—

(१) (अ) गमेक्सेन डस्ट Gammexane Dust (I. C. I.) तथा (ब) गमेक्सेन धूम्रवर्तिका Gammexane Smoke Generators (I. C. I.) ।

लोरेक्सेन Lorexane (I. C. I.)—यह गमेक्सेन का अल्कोहोलिक सोल्यूशन होता है । शिर के जूं साफ करने (Pediculosis capitis) के लिए उपयुक्त है ।

डाइब्युटिलिस फ्थैलास (डाइब्युटिल फ्थैलेट) Dibutylis Phthalas (Dibutyl. Phthal.), I. P.—ले०; Dibutyl Phthalate (B. P.)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_{22}O_4$.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह benzene—o-dicarboxylic acid का di—n—butylestr यौगिक होता है । n-butylalcohol एवं फ्थैलिक एसिड या फ्थैलिक एन्हाइड्राइड (Phthalic anhydride) की परस्पर रासायनिक प्रतिक्रिया द्वारा (esterification) प्राप्त किया जाता है । इसमें ९९ प्रतिशत से १००½ प्रतिशत तक (W/W) $C_{16}H_{22}O_4$ पाया जाता है ।

वर्णन—यह स्वच्छ तथा रंगहीन अथवा हल्के रंग का द्रव होता है, जो प्रायः गंधहीन अथवा कभी हल्का गंधयुक्त होता है। विलेयता—जल में अत्यल्प मात्रा में घुलता है। अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) तथा सालवेंट ईथर में मिल जाता (Miscible) है।

डाइमेथिल फ्थैलेट Dimethyl Phthalate, B. P.—अं०, डाइमेथिलिस फ्थैलास Dimethylis Pthalas –ले०।

रासायनिक संकेत : $C_{10}H_{10}O_4$.

वर्णन—यह रंगहीन या हल्के रंग का द्रव होता है जो प्रायः गंधहीन या हल्के गंध का होता है। विलेयता—२५० भाग जल में घुलता है। इसके अतिरिक्त अल्कोहल् (९५ प्रतिशत) तथा सालवेंट ईथर में भी मिल जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

डाइब्युटिल एवं डाइमेथिल थैलेट दोनों ही रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा निर्मित कृत्रिम यौगिक (Synthetic Compounds) हैं, जिनका प्रयोग कीटों को भगाने एवं मारने के लिए किया जाता है। इसके लिए डाइमेथिल फ्थैलेट अधिक उपयुक्त है, क्योंकि इसकी क्रिया मच्छरों पर भी होती है। किन्तु डाइब्युटिल यौगिक का प्रभाव मच्छरों पर नहीं होता। मच्छरों के अतिरिक्त ये जूँ, खटमल, पिस्सू आदि मारने के लिए भी प्रयुक्त होते हैं। मच्छरों को भगाने के लिए डाइमेथिल थैलेट का ३५ प्रतिशत बल का घोल या माल्यूशन अथवा क्रीम प्रयुक्त किया जाता है। पहनने के कपड़ों पर ५ प्रतिशत घोल का छिड़काव करने से कपड़ों में कीड़े नहीं लगते। अतएव विशेषतः ऊनी एवं रेशमी कपड़ों के संरक्षण के लिए यह बहुत उपयुक्त है। कपड़ों के संरक्षण के लिए डाइब्युटिलथैलेट अधिक अच्छा पड़ता है, क्योंकि इसका प्रभाव डाइमेथिल की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है।

पेरिस ग्रीन (Paris Green), I. P.

पर्याय—कुप्राइ एसिटो आरसेनिटम् Cupri Aceto-arsenitum (Cupr. Aceto—Arsen.), I. P.—ले०; एसिटो-आरसेनाइट ऑव कापर Aceto-Arsenite of Copper—अं०।

वर्णन—पेरिस ग्रीन चमकीला नीली आभा लिए हरे रंग का या गाढ़े हरे रंग का चूर्ण होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः यह नहीं घुलता; किन्तु मन्दबल अम्लों (Weak acids) में पूर्णतः विलेय (Completely Soluble) होता है।

वक्तव्य-पेरिस ग्रीन आरसेनिक तथा कापर (संखिया और ताम्र) का यौगिक है। इसमें ५० प्रतिशत से ५८ प्रतिशत तक आरसेनियस ऑक्साइड (Arsenious oxide : As_2O_3) तथा ३० प्रतिशत तक कापर ऑक्साइड (Copper oxide : CuO.) होता है।

प्रयोग

पेरिस ग्रीन भी एक कीटनाशक द्रव्य है, किन्तु कीटनाशक क्रिया की अपेक्षा इसमें लार्वा-नाशक प्रभाव (Larvicide) अधिक होता है। पेरिस ग्रीन की उक्त क्रिया विशेषतः एनो-फेलीज जाति के मच्छरों के लार्वा पर होता है। इसके लिए इसको किसी उपयुक्त निष्क्रिय

द्रव्य के साथ मिलाकर उक्त चूर्ण का नालियों, मोरियों या गढ़ों में, जहाँ मच्छर अधिक हों, छिड़काव किया जाता है। निष्क्रिय सहयोगी द्रव्य के रूप में आटा, टॉक (Talc), लकड़ी का सूक्ष्म बुरादा (Saw-dust), चीनी मिट्टी, बुझाया चूना (Slaked lime), फ्रेंच चाक (French Chalk) पाउडर आदि द्रव्यों का व्यवहार किया जा सकता है। नालियों आदि में छिड़कने के लिए १०० में १ के बलका संकेन्द्रण काफी होता है। छिड़कने पर चूर्ण पानी पर तैरता है। लार्वा इसको खाते हैं और अन्तिम गति को प्राप्त होते हैं।

पाइरेथ्रम (अकरकरा), I. P.

Pyrethrum (Pyreth.)—ले०

Family : Compositae (मुण्डक-कुल)।

पर्याय—पाइरेथ्राइ फ्लॉस Pyrethri Flos (Pyreth. Flos.)—ले०; पाइरेथ्रम फ्लावर्स Pyrethrum Flowers—अं० (B. P. C.); इन्सेक्ट फ्लावर्स Insect Flowers (कीटनाशक पुष्प); डालमेशिअन इन्सेक्ट फ्लावर्स Dalmatian Insect Flowers (B. P. C., I. P. C.)।

प्राप्ति-साधन—पाइरेथ्रम्, क्राइसेन्थमम् सिनेरेरिफोलियम् Chrysanthemum cinerariae folium Vis, नाम क्षुद्र वनस्पति के सुखाये हुए पुष्प (अविकसित, अर्ध विकसित या पूर्ण विकसित) होते हैं। इसमें अधिक से अधिक ५ प्रतिशत पुष्पों के साथ काण्ड का भाग (Naturally adhering stems) हो सकता है। इण्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) के अनुसार इसमें कम से कम ०.७ प्रतिशत टोटल मात्रा में इसके अल्कलायड्स अर्थात् पाइरेथ्रिन्स Pyrethrins (Pyrethrin I and Pyrethrin II) पाये जाते हैं।

उत्पत्ति-स्थान—यूरोप के यूगोस्लाविया राज्य (Yugoslavia) में अकरकरा की उक्त प्रजाति स्वयंजात होती है (Indigenous)। इसके अतिरिक्त केनिया (Kenya), जापान, पूर्वी तथा मध्य अफ्रीका एवं ब्रेजिल आदि भिन्न-भिन्न देशों में इसकी खेती की जाती है। भारतवर्ष में भी कश्मीर, नीलगिरी, मयूरभंज (उड़ीसा), कुमायूँ, आसाम तथा ट्रावन्कोर आदि प्रान्तों में भी सफलतापूर्वक इसकी खेती की जाने लगी है।

वर्णन—पाइरेथ्रम् के छोटे-छोटे बहुवर्षायु शाक-जातीय पौधे (Herbaceous perennial) होते हैं। इसमें हरापन लिए हल्के पीले रंग के पुष्प-मुण्डक (Capitula or Flower heads) लगते हैं। इन पुष्पों में एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है; जिह्वा पर रखने से स्वाद में तिक्त होता है और थोड़ी देर बाद साधारण सुन्नता-सी (Slight numbing Sensation) अनुभूत होती है।

संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाटबन्द पात्रों में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए। औषधि में २ वर्ष तक वीर्य रहता है। अर्थात् इस अवधि के बाद औषधीय प्रयोग की दृष्टि से यह बेकार हो जाती है। किन्तु पुष्पों का सत्व (Extracts of Pyrethrum Flowers) यदि ठीक प्रकार से बनाया जाय तो अनन्त काल तक सक्रिय बना रहता है। इसको भी अच्छी तरह डाटबन्द शीशियों में रखकर ठण्ढी जगह में रखना चाहिए और प्रकाश से बचाना चाहिए।

रासायनिक संघटन—पाइरेथ्रम में ०·४ से २ प्रतिशत तक पाइरेथ्रिन्स (Pyrethrin I $C_{21}H_{28}O_3$: Pyrethrin II $C_{22}H_{28}O_5$) पाये जाते है। ये दोनों ही रासायनिक दृष्टि से ईस्टर्स (Esters) होते है। पहले में एसिड घटक क्राइसेन्थिमिक एसिड Chrysanthemic acid (Chrysanthemum monocarboxylic acid) तथा दूसरे में पाइरेथिक एसिड Pyrethic acid (Monomethyl ester of Crysanthemum dicarboxylic acid) होता है।

पाइरेथ्रम का कीटनाशक प्रभाव इसमें पाये जानेवाले २ ईस्टर-समुदायों (Two groups of esters) के कारण होता है—

(1) Pyrethrin I and Cinerin I
(2) Pyrethrin II and Cinerin II

उक्त दोनों वर्गों के एसिड घटकों का उल्लेख पहले किया जा चुका है। इनके अल्कोहल घटक (Alcohol Component) इस प्रकार हैं—पाइरेथ्रिन्स में कीटो—अल्कोहल पाइरेथोलोन (Keto-alcohol Pyrethrolone) और सिनेरिन्स में कीटो—अल्कोहल सिनेरोलोन (Keto-alcohol cinerolone)। पाइरेथ्रिन्स तथा सिनेरिन्स दोनों ही अल्कोहल, बेंजीन, क्लोरोफॉर्म, लाइट मिनरल ऑयल्स में घुल जाते हैं। मन्दबल क्षारों (Weak alkalies) द्वारा शीघ्रतापूर्वक इनका जलांशन (Hydrolysis) हो जाता है और गर्मी तथा प्रकाश के प्रभाव से ये विकृत हो जाते हैं। उक्त सक्रिय तत्वों की अधिकतम मात्रा पुष्प के (Cypselae) में पाई जाती है। थोड़ी मात्रा पुष्पाधः पत्रावलि (Involucre) में तथा नाममात्र को दलपत्रों (Corollas) में। साधारणतया दोनों समुदायों के तत्वों की टोटल मात्रा बराबर बराबर ही पाई जाती है। परन्तु ऐसे पुष्प ज्यादा पाये जाते हैं, जिनमें द्वितीय समुदाय के तत्व अपेक्षाकृत प्रथम से कुछ अधिक मात्रा में पाया जाता है। उपर्युक्त सक्रिय तत्वों के अतिरिक्त पाइरेथ्रम् में क्राइसेन्थिन Chrysanthin : $C_{16}H_{22}O_5$), पामिटिक एसिड, लिनोलिक एसिड तथा अल्प मात्रा में उत्पत् तैल भी पाये जाते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

पाइरेथ्रम भी एक उत्तम कीटनाशक द्रव्य (Insecticide) है। अनेक कीटनाशक चूर्णों एवं घोलों (Lotions) में इसको मिलाया (एक्स्ट्रैक्ट) जाता है। इस रूप में इसका व्यवहार कृषि को हानि पहुँचानेवाले कीटों को मारने के लिए भी किया जाता है। डाइकोफेन एवं डेरिस के साथ मिलाने से एक उत्तम कीटनाशक योग बनता है, जिसका प्रयोग घरेलू मच्छरों एवं मक्खियों आदि को नष्ट करने के लिए तथा भगाने के लिए किया जा सकता है। एतदर्थ इसके लोशन (०·४ से ०·६ प्रतिशत) का छिड़काव या सीकर (Syray) किया जाता है।

पाइरेथ्रम आयण्टमेंट लगाने से खुजली के कीट (सारकॉप्टिस स्केबियाइ Sorcoptis Scabiei) तथा उनके अंडे आदि नष्ट हो जाते हैं। अतएव उक्त मलहम का उपयोग खुजली (Scabies) की चिकित्सा में किया जाता है। मलहम लगाने के थोड़ी देर बाद जब औषधि का असर हो जाय, तो पानी तथा साबुन से उस स्थान की अच्छी तरह सफाई कर देना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—सोलूशिओ पाइरेथ्राइ Solutio Pyrethri (Sol. Pyreth.), I. P.—ले०; पाइरेथ्रम्

सोल्यूशन Pyrethrum Solution—अं०; पाइरेथ्रम लोशन—हिं०। यह किरोसिन (Kerosene) में बनाया हुआ पाइरेथ्रम का एक्स्ट्रैक्ट होता है। इसमें कम से कम १ प्रतिशत (W/W) पाइरेथिन्स होते हैं।

२—अंग्वयटम् पाईरेथ्राइ Unguentum Pyrethri (Ung, Pyreth.). I. P.—ले०; पाइरेथ्रम् आयण्टमेंट Pyrethrum Ointment—अं०; पाइरेथ्रम् का मलहम—हिं०। पाइरेथ्रम् पुष्प-चूर्ण १० ग्राम; पाराफिन आयण्टमेंट ७० ग्राम। खरल में घोंटकर परस्पर मिलावें। १० प्रतिशत पाइरेथ्रम पाउडर होता है।

डेरिस Derris (Derr.), I. P.

(किरताना (Worm-killer)—म०)

Family : Leguminosae (शिम्बी-कुल); Sub-Family : Papilionaceae (अपराजिता उपकुल)

पर्याय—इण्डियन ट्यूबा रूट Indian Tuba Root; Cachari-Ruphang-doukha (I. P.)—हिं०।

प्राप्ति-साधन—डेरिस, शिम्बी-कुल की निम्न लता-जातीय वनस्पतियों का सुखाया हुआ भौमिक-काण्ड (राइज़ोम Rhizome) एवं जड़ या मूल (Root) होता है:—

(१) डेरिस फेरुजिनिया Derris Ferruginea Benth.

(२) डेरिस एलिप्टिका Derris elliptica (Roxb.) Benth. इसको मलयालम भाषा में "टूबा Tubah" कहते हैं। औषधीय प्रयोग के लिए प्रायः द्विवर्षायु पौधों की जड़ एवं भौमिक-काण्ड का संग्रह करना चाहिए। इसमें कम से कम २% रोटेनोन (Rotenone) होना चाहिए।

प्रतिनिधि-द्रव्य (Substitutes)—डेरिस की उपर्युक्त प्रजातियों के अतिरिक्त निम्नलिखित अन्य प्रजातियाँ (Species) भी भारतवर्ष में पाई जाती हैं। इनकी जड़ों में भी रोटेनोन नामक तत्व पाया जाता है, किन्तु उपर्युक्त प्रजातियों की अपेक्षा कम मात्रा में पाया जाता है। अतएव इण्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) में प्रतिनिधिरूप से इनके ग्रहण का भी निर्देश है।

डेरिस की अन्य भारतीय प्रजातियाँ—(१) डेरिस स्कैन्डेन्स Derris scandens Benth. ; (२) डेरिस युलिजिनोसा D. uliginosa Benth. ; (३) डेरिस रोबस्टा D. robusta ; (४) डेरिस पेनिक्युलेटा D. paniculata ; (५) डेरिस इन्वाल्युटा D. involuta। इनमें डेरिस युलिजिनोसा प्रजाति दक्षिण भारत एवं लंका आदि में प्रचुरता से पाई जाती है। पूर्वी हिमालय प्रदेश में भी यह पाया जाता है। इसको बंगला में 'पानलता Panlata" तथा मराठी में "किरताना Kirtana i. e. worm-creeper" कहते हैं। जम्वेसी द्वीप के निवासी इसकी छाल का प्रयोग मछलियों को मारने के लिए करते हैं। दक्षिण भारत के लोग डेरिस के कीटनाशक प्रभाव से बहुत कालसे परिचित हैं, जैसा कि इसके मराठी नाम से स्वयं प्रगट होता है। तंजौर के वैद्य डेरिस का औषधीय प्रयोग बहुत दिनोंसे करते आरहे हैं।

उत्पत्ति-स्थान—डेरिस की उपर्युक्त दोनों प्रजातियाँ पूर्वी हिमालय प्रदेश एवं आसाम तथा ब्रह्मा के उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों (Tropical zone) में स्वयंजात पाई जाती हैं।

वर्णन—डेरिस की कड़े तनेवाली या काष्ठीय आरोही लतायें (Woody climbers) होती हैं, जिसकी शाखा-प्रशाखायें मुरचई रङ्ग के रोम से आलिप्त होती हैं। इसी आधार पर प्रजातिक नाम "फेरुजिनिआ ferruginea" रखा गया है। इसकी पुष्पवाहक शाखायें भी मुरचई मृदुरोमश रोम (Ferruginous Pubescence) से आलिप्त होती हैं। इसमें गुलाबी रंग के पुष्प आते हैं।

इसकी जड़ प्रायः भौमिक-काण्ड या राइजोम के साथ लगी होती है; और काफी कड़ी होती है। बाहर से जड़ें हल्के खाकस्तरी रंग की होती हैं और लम्बाई की दिशा में झुर्रियाँ (Longitudinal wrinkles) पड़ी होती हैं। गोलाई की दिशा में दागों का चक्र (Transve rsebroken rings formed of lenticels) होते हैं। जड़ के अन्दर का काष्ठ हल्के पीले रंग का होता है। जड़ों को सूँघने से एक हल्की सुगन्धि मालूम होती है तथा चबानेसे कुछ-कुछ चुनचुनाहट जिह्वा पर (feeling of numbness when Chewed) मालूम होती है। संरक्षण—इन जड़ों का संग्रह अच्छी तरह डाटबंद पात्रों में करना चाहिए।

रासायनिक संघटन—डेरिस में अनेक क्रिस्टलाइन स्वरूप के विषाक्त तत्व पाये जाते हैं, जिनमें रोटेनोन (Rotenone) मुख्य है। डेरिस एलिप्टिका में १० प्रतिशत तक रोटेनोन पाया जाता है। इसके अतिरिक्त टेफ्रोसिन (Tephrosin), टॉक्सिकेरोल (Toxicarol) तथा डेग्युलिन (Deguelin) आदि तत्व भी पाये जाते हैं। डेरिस के सक्रिय तत्व क्लोरोफॉर्म, ईथर, बेन्जीन, एसिटोन, कार्बन टेट्राक्लोराइड तथा कतिपय अन्य सेन्द्रिय विलायक (Organic Solvents) में घुल जाते हैं। अल्कोहल् एवं मिनरल ऑयल्स या खनिज तेलों (Mineral oils) में साधारण मात्रा में तथा पानी तथा मन्दबल एसिड्स एवं क्षारों में बिल्कुल नहीं घुलते।

डेरिस युलिजिनोसा या 'किरतान' में केप्रोइक एसिड (Caproic acid), सेरिल अल्कोहल् तथा एक तीव्र स्वरूप का रेजिन पाया जाता है। रेजिन का जो भाग क्लोरोफार्म में घुलता है, उसमें बेहेनिक एसिड (behenic acid) तथा एक क्रिस्टलाइन तत्व (Crystalline anhydroderride : $C_{33}H_{२८}O_{९}$) पाया जाता है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

डेरिस एक तीव्र कीटनाशक (Insecticide) द्रव्य है। कृषि में इसका प्रयोग टिड्डियों (Warble flies) को भगाने के लिए किया जाता है। इसके अतिरिक्त ऐसे अन्य कीटोंको मारनेके लिए भी कृषक लोग इसका व्यवहार करते हैं, जो वृद्धिशील छोटे-छोटे पौधोंकी पत्तियों एवं शाखाओं को खा जाते हैं, जिनके कारण पौधा मर जाता है। एतदर्थ टॉक (Talc) एवं केओलिन (Kaolin) के साथ मिलाकर उक्त चूर्ण का अवधूलन (Dust) किया जाता है। दक्षिण भारत के कृषक डेरिस का इस रूप में व्यवहार पहले से ही करते आ रहे हैं। चिकित्सा में डेरिस का प्रयोग खुजली (Scabies) में किया जाता है। इसके लिए "एप्लिकेशन ऑव डेरिस Application of Derris" तथा "डेरिस क्रीम Derris Cream" उत्तम योग हैं। तंजौर के चिकित्सक "डेरिसघटित सिद्ध तैल एवं घृत" का बाह्य एवं आभ्यन्तर प्रयोग लकवा या फालिज (Paralysis) तथा आमवात (Rheumatism) आदि व्याधियों में करते हैं।

(योग)

१—एप्लिकेशिओ डेरिडिस Applicatio Derridis (Applicat. Derrid.), I. P.—ले०; डेरिस एप्लिकेशन Derris Application या एप्लिकेश ऑव डेरिस—अं० ;

निर्माण-विधि—डेरिस चूर्ण ९५ ग्राम, हार्डसोप ६'९ ग्राम तथा परिस्रुत जल आवश्यकतानुसार १००० मि० लि० तैयार औषधि के लिए। परिस्रुत जल को पहले गरम करें। इसमें हार्डसोप डाल दें। जब यह घुल जाय तो डेरिस पाउडर मिलाना चाहिए और फिर इतना परिस्रुत जल और मिलावें कि सब तैयार औषधि की मात्रा १००० मि० लि० हो जाय। वक्तव्य—जब प्रयोग करना हो इसको ताजा बनाना चाहिए।

२—डेरिस क्रीम Derris Cream। इसमें १% रोटेनोन तथा ७% डेरिस एक्स्ट्रैक्ट होता है।

४—शुक्रकीटनाशक द्रव्य (Spermatocides)।

आजकल गर्भनिरोधक द्रव्यों (Contraceptives) पर बहुत ध्यान दिया जाने लगा है। अनेक रासायनिक द्रव्यों का स्थानिक प्रयोग शुक्रकीटों को मारने के लिए किया जाता है। इन द्रव्यों का प्रयोग प्रायः लोशन, क्रीम या जेली के रूप में किया जाता है। प्रायः ५% बल का क्रीम या जेली योनि में स्त्री-प्रसंग के १ घण्टे पूर्व प्रविष्ट कर दिया जाता है और वहाँ ६ घण्टे तक पड़ा रहने दिया जाता है। इस कार्य के लिए प्रधानतः निम्न द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है—लैक्टिक एसिड (१ से २%), बोरिक एसिड (२ से ३%), फेनिल मरक्यूरिक एसिटेट ०.०२%, हेक्सिलरिसार्सिनोल (०'०३ %) रिसिनोलिक एसिड (०'७%) तथा हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन बेंजोएट (०'०२%) आदि। जेली या क्रीम के अतिरिक्त इनका व्यवहार कैप्स्यूल्स तथा सपोजिटरी के रूप में भी किया जाता है। अथवा पेसरी, टेम्पून्स (Tampons) या फेनायमान टैबलेट्स (Effervescent Tablets) के रूप में भी प्रयुक्त कर सकते हैं। इनका प्रयोग स्त्री-प्रसंग के १५ मिनट पूर्व किया जाता है और डूश कम से कम ६ घण्टे बाद किया जाता है, ताकि शुक्रकीटों पर औषधि की क्रिया होने के लिए काफी समय उपलब्ध हो सके।

अध्याय १३

वैक्सीन एवं सीरम-चिकित्सा।

(Vaccine and Serum Therapeutics or Immune Therapy)

परिच्छेद १

इस अध्यायमें विभिन्न मसूरी या वैक्सीन्स (Vaccines), लसिका या सीरम (Serum (एक वचन; Sera बहु व०) तथा प्रतिविष (Antitoxins) एवं टाक्सायड्स Toxoids) आदि का विवेचन किया जायगा। इनका प्रयोग चिकित्सा-व्यवहार में रोगनिवारण के लिए, कतिपय औपसर्गिक रोगों के अनागतबाधाप्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए तथा कतिपय विषों (Toxins) एवं टॉक्सायड्स का उपयोग उन-उन उपसर्गों के निदान के लिए किया जाता है। अधुना यद्यपि शुल्बौषधियों (Sulpha-drugs) एवं एन्टिबायोटिक्स (Antibiotics यथा पेनिसिलिन आदि) के आविष्कार ने चिकित्साजगत में क्रांति कर दी है, जिससे अनेक प्रतिविषों का महत्त्व नगण्य हो गया है, फिर भी अनेक अब भी अपना महत्त्व ज्यों का त्यों रखते हैं। यथा रोहिणी (डिफ्थीरिया) तथा धनुर्वात (टिटेनस) रोग की शान्ति के लिए इनका प्रतिविष (Antitoxin) अब भी उसी प्रकार उपयोगी समझा जाता है। विभिन्न औपसर्गिक रोगों के मरक (Epidemics) का निरोध करने के लिए अब भी अनेक वैक्सीन प्रचुरता से व्यवहृत होते हैं।

स्मरण रहे कि रोगाक्रान्त होने पर शरीर स्वयं उसके प्रतिकार का प्रयत्न करता है, जिसके परिणामस्वरूप रक्त में प्रतियोगी पदार्थों (Antibodies) की उत्पत्ति होती है। यही प्रतियोगी पदार्थ आक्रमणकारी विकारी जीवाणुओं एवं तज्जन्य विषों का सामना करते तथा उनको निष्क्रिय या नष्ट करते हैं। जो प्रतियोगी पदार्थ जीवाणुओं के विषों को निष्क्रिय करते हैं, उन्हें प्रतिविष प्रतियोगी पदार्थ (Antitoxins) कहते हैं। डिफ्थीरिया एवं टिटेनस (धनुर्वात) आदि से उपसृष्ट होने पर इसी प्रकार के प्रतियोगी पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार जो प्रतियोगी पदार्थ विकारी जीवाणुओं पर क्रिया करते तथा उनको नष्ट करते हैं अथवा उनकी वृद्धि को रोकते हैं उन्हें जीवाणुनाशक प्रतियोगी पदार्थ (Antibacterial antibodies) कहते हैं। शरीर-धातुओं (Tissues) में इन प्रतियोगी पदार्थों को पैदा करने की प्रेरणा जिन तत्वों से मिलती है, उनको प्रतियोगीजन (Antigen एन्टिजेन) कहते हैं। व्यवहार में देखा जाता है, कि एक ही प्रकार का उपसर्ग, उग्रता में भी समान होने पर विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न कोटि की विकृति पैदा करता है। और यह भी देखने को मिलता है, कि किसी रोगी में तो पैदा होता

है कि उपसर्ग का कोई प्रभाव लक्षित नहीं होता। इसका कारण यह होता है, कि उस व्यक्ति में उस रोग के सामना करने की शक्ति है। इस शक्ति को पारिभाषिक शब्दों में **रोगक्षमता** या इम्युनिटी (Immunity) कहते हैं। जब यह रोगक्षमता केवल एक निश्चित दर्जे की तथा आंशिक स्वरूप की (limited and partial) होती है, तो इसको **रोग-सह्यता** (Tolerance) कहते हैं। मलेरिया आदि प्रोटोजुअल उपसर्ग से होनेवाली व्याधियों में उक्त रोगक्षमता एक विशिष्ट प्रकार की होती है। इसमें रोगी के शरीर में विकारी कीटाणुओं के रहते हुए भी रोगी में रोग के आक्रमण को रोकने की क्षमता पाई जाती है। इस प्रकार की क्षमता को **प्रिम्युनिशन** (Premunition) या **इन्फेक्शन इम्युनिटी** (Infection immunity) कहते हैं। वैक्सीन एवं सीरम-चिकित्सा की मूलभित्ति यही रोगक्षमता है। अतएव इस चिकित्सा को समझने के पूर्व रोगक्षमता का स्पष्ट चित्रण आवश्यक है।

रोगक्षमता के मुख्यतः दो भेद किए जा सकते हैं, यथा (१) **सहज या जन्मजात** (Natural) तथा (२) जन्मोत्तर (Acquired)। सहज या जन्मजात क्षमता जन्तु-जातिगत या एक ही जाति की विभिन्न प्रजातियों (Species) या श्रेणियों में पाई जाती है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार की क्षमता वंशगत या व्यक्तिगत भी देखी जाती है। यथा मुर्गियों में धनुर्वात के प्रजातिगत क्षमता (Species Immunity) पाई जाती है। इसी प्रकार जन्तुओं (Animals) में फिरंग, रोमान्तिका, मस्तिष्कसुषुम्नाज्वर एवं कुष्ट आदि के प्रति नैसर्गिक क्षमता पाई जाती है। इसके विपरीत कतिपय रोग केवल जन्तुओं में होते हैं, किन्तु मनुष्यों में नहीं पाये जाते। मनुष्य जाति में भी हबशी लोगों (Negroes) को पीतज्वर नहीं होता; इसे समूहगत (Racial) क्षमता कहते हैं। इसी प्रकार व्यक्तिगत रोगक्षमता भी पाई जाती है।

जन्मोत्तर क्षमता (Acquired immunity) भी **सक्रिय** (Active) एवं **निष्क्रिय** (Passive) भेद से २ प्रकार की होती है। सक्रिय क्षमता की उत्पत्ति में जन्तुशरीर की धातुयें (Tissues) स्वयं सक्रिय भाग लेती हैं। निष्क्रिय क्षमता में जन्तुशरीर का कोई सक्रिय भाग नहीं होता, अपितु दूसरे जन्तुओं में पहले कृत्रिम रूपसे रोगोत्पादन करके प्रतियोगी पदार्थ पैदा किए जाते हैं। अब इन बने-बनाये प्रतियोगी पदार्थों (readymade antibodies) को दूसरे जन्तुओं के शरीर में प्रविष्ट कर दिया जाता है। जैसा कि पहले कहा गया है, कि रोग का आक्रमण होने पर शरीरधातुओं में प्रतिक्रिया होकर प्रतियोगी पदार्थ बनते हैं और इस प्रकार सक्रिय क्षमतोत्पत्ति की प्रक्रिया जन्तुशरीर में होती है। किसी-किसी व्याधि में यह क्षमता चिरकालीन अथवा स्थायी भी होती है। यही कारण है, कि चेचक (Small Pox), त्वङ्मसूरिका (Chicken Pox) आदि में एक बार रोग का आक्रमण होने पर प्रायः दुबारा रोगाक्रमण नहीं होता। इसी प्रकार थोड़े-बहुत काल के लिए क्षमता सभी व्याधियों के आक्रमण के बाद उत्पन्न होती है। इस प्रकार व्याधिजन्य सक्रिय क्षमता को **नैसर्गिक सक्रिय क्षमता** (Natural active immunity) कहते हैं। इस नैसर्गिक प्रक्रिया का उपयोग चिकित्सा-शास्त्र में **कृत्रिम सक्रियक्षमता** (Artificial active immunity) पैदा करने के लिए किया जाता है। इसके लिए व्यक्ति में कृत्रिम रूप से व्याधि की स्थिति उत्पन्न कराके शरीर-धातुओं को प्रतियोगी पदार्थ उत्पन्न करने के लिए उत्तेजित किया जाता है, किन्तु व्याधि की उग्रता बिल्कुल नहीं होती। एतदर्थ जो प्रतियोगीजन (antigens) या द्रव्य प्रयुक्त किए

जाते हैं, उनको वैक्सीन (Vaccine) कहते हैं, और इनको प्रविष्ट करने की क्रिया को वैक्सिनेशन (Vaccination) कहते हैं। इस चिकित्साक्रम को 'वैक्सीन चिकित्सा Vaccine Therapy' कहते हैं। इस चिकित्सा का उपयोग विभिन्न व्याधियों के अनागत प्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए किया जाता है। कतिपय व्याधियों में यथा मूत्रमार्ग में ई० कोलाइ का उपसर्ग, स्टेफिलोकोकल उपसर्गजन्य फुन्सी तथा चिरकालज दुराग्रही प्रतिश्याय आदि में रोगी के शरीर से ही विकृत धातुओं को लेकर उनका संवर्धन कर वैक्सीन तैयार किया जाता है। इस वैक्सीन का प्रयोग उन-उन व्याधियों की चिकित्सा के लिए किया जाता है। इनको स्वजनितवैक्सीन (Autogenous vaccine) कहते हैं। वैक्सीन बनाने के लिए रोगजनक विकारी जीवाणुओं को संस्कारित करके अथवा तज्जन्य विभिन्न पदार्थों का उपयोग किया जाता है—

(१) सजीव उग्र जीवाणु (Living virulent organisms) ;

(२) सजीव किन्तु निर्बल या संस्कारित जीवाणु (Living attenuated organisms)—इनका व्यवहार मसूरिका मसूरी एवं बी० सी० जी० (B. C. G.) वैक्सीन आदि के निर्माण में किया जाता है।

(३) मृत जीवाणुओं का निलम्बन (Dead suspension of the organisms)—टायफायड, पाराटायफायड, प्लेग, कालरा (हैजा), कुकुरखांसी, इन्फ्लुएन्जा एवं अस्थिमज्जाशोथ आदि अधिकांश वैक्सीन इसी प्रकार बनाये जाते हैं। स्वजनित वैक्सीन भी इसी प्रकार बनाया जाता है; किन्तु इसके लिए रोगीके शरीर से ही जीवाणु प्राप्त किये जाते हैं।

(४) विष (Toxins)—रोहिणी (डिफ्थीरिया), धनुर्वात (टिटेनस) एवं वातकर्दम (Gas gangrene) आदि के जीवाणु जो बहिर्विष पैदा करते हैं, उनके लिए वैक्सीन बनाने के लिए इसी बहिर्विष का उपयोग किया जाता है।

(५) विषाभ-द्रव्य या टाक्सायड्स (Toxoids)–यह जीवाणुओं के विषोंकी विषाक्तता को नष्ट करके या कम करके बनाया जाता है, जिससे दूसरे प्राणियों में इनको प्रविष्ट करने से इनमें विषाक्त प्रभाव तो नहीं होता, किन्तु प्रतियोगी पदार्थों के उत्पन्न करने की शक्ति (antigenic property) ज्यों की त्यों रहती है। डिफ्थीरिया टाक्सायड एवं टिटेनस टाक्सायड इसी प्रकार के पदार्थ हैं। कभी-कभी कई टाक्सायड्स को अथवा एक टाक्सायड् को दूसरे वैक्सीन के साथ मिलाकर प्रयुक्त किया जाता है। इसकी विशेषता यह होती है, कि एक ही इनोक्युलेशन से कई व्याधियों के प्रतिक्षमता उत्पन्न हो जाती है।

निष्क्रिय क्षमता भी नैसर्गिक (Natural passive immunity) एवं कृत्रिम (Acquired passive immunity) भेद से २ प्रकार की है। चिकित्सा-व्यवहार की दृष्टि से कृत्रिम क्षमता ही विशेष महत्त्व की है। एतदर्थ व्याधित जन्तुओं एवं व्यक्तियों का प्रतियोगी पदार्थयुक्त सीरम प्रयुक्त किया जाता है। एतदर्थ निम्न प्रकार के सीरम व्यवहृत होते हैं:— (१) प्रतिविष सीरम (Antitoxic Sera); यथा—डिफ्थीरिया सीरम्, टिटेनस एन्टिटॉक्सिक सीरम तथा वातकर्दम सीरम (Gas-gangrene Serum) आदि; (२) प्रतितृणाणिवक सीरम (एन्टिबैक्टीरियल सीरम Antibacterial Serum)—एन्टि-

डिसेन्ट्रिक सीरम, एन्टीटायफायड, एन्टीकोलरा, एन्टीमेनिंगोकोकेल सीरम आदि। (३) प्रति-विषाणुक सीरम (Antiviral Serum)—इनको रोगोत्तरकालिक सीरम (Anti-convalescent Serum) भी कहते हैं। रोमान्तिका, अस्थिमज्जाशोथ आदि में रोगोत्तर-काल में रोगी का सीरम लेकर दूसरे व्यक्तियों में क्षमता के लिए प्रयुक्त होता है, किन्तु इनकी उपलब्धि सीमित होने से व्यावहारिक उपयोगिता भी सीमित है।

वैक्सीन तथा सीरम का वर्गीकरण

(अ) निष्क्रियक्षमतोत्पादन (Passive immunisation) के लिए प्रयुक्त :—

डिफ्थीरिया एन्टिटॉक्सिन (रोहिणी का प्रतिविष), टिटेनस एन्टिटॉक्सिन (धनुर्वात का प्रति-विष), वातकर्दम के प्रतिविष (Gasgangrene antitoxins) तथा लोहित ज्वर प्रतिविष (Scarlet ever antitoxin) ।

(ब) सक्रिय क्षमतोत्पादन (Active immunisation) के लिए:—

(१) प्रतिदण्डाणुक वैक्सीन्स (Antibacterial vaccines) :—बी० सी० जी० वैक्सीन, कालरा-वैक्सीन, प्लेग-वैक्सीन, टायफायड-पाराटायफायड वैक्सीन, कुक्कुरखाँसी का वैक्सीन (Whooping Cough Vaccine) आदि।

(२) विषाणुक (Viral) तथा रिकेट्शियल (Rickettsial) वैक्सीन्स—चेचक की मसूरी (Small pox Vaccine), पीत ज्वर की वैक्सीन, रेबीज वैक्सीन (Rebies Vaccine), टायफस वैक्सीन (Typhus Vaccine) आदि।

(३) विष (Toxins)—एवं विषाभ द्रव (Toxoids) : डिफ्थीरिया टाक्सायड, टिटेनस टाक्सायड, स्टेफिलोकोकस टाक्सायड, लोहितज्वर विष (Scarlet fever toxin) ।

(स) निदान के लिए प्रयुक्त द्रव्य (Preparations used for diagnostic purposes):—

डिक परीक्षा का विष (Dick Test toxin), डिक-कन्ट्रोल (Dick Control), शिक परीक्षा का विष (Schick Test Toxin) तथा शिक-कण्ट्रोल (Schick Control), ओल्ड ट्युबर-क्युलिन (Old Tuberculin) आदि।

वैक्सीन के प्रकार—

(१) सामान्य या साधारण मसूरी या वैक्सीन (Ordinary Vaccine)—यह समबललवण-जल (Normal saline) में बनाया हुआ मारित दण्डाणुओं (Killed bacteria) का निलम्बन (Suspension) होता है। एतदर्थ कन्दुक (Autoclave) में बैक्टीरिया ताप द्वारा मारे जाते हैं अथवा जीवाणुनाशक द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी स्वजनितपाचक किण्वों द्वारा इनका स्वयं द्रावण (Autolysis) होता है। (२) सीरम के मिश्रण द्वारा संस्कारित वैक्सीन (Sensitised vaccine or Sero–Vaccine)—इसमें बैक्टीरियल इमल्सन में उपयुक्त प्रतियोगी पदार्थयुक्त या क्षम सीरम (Immune serum) मिलाकर बनाया जाता है। इससे सीरम के क्षम पदार्थ वैक्सीन के मृतबैक्टीरिया के साथ संयुक्त हो जाते हैं। (३) निर्विषीकृत वैक्सीन (Detoxi-cated Vaccine)—इसमें जीवाणुओं के अन्तर्विष को पृथक् कर दिया जाता है और केवल बैक्टी-रिया सेल का उपयोग वैक्सीन बनाने के लिए किया जाता है। (४) फॉर्मेलीन संस्कारित वैक्सीन (Formolised Vaccine) या टॉक्सायड्स (Toxoids) अथवा एनाटॉक्सिन (Anatoxins)—

अन्तर्विषों में फ़ॉर्मलीन की उपयुक्त मात्रा मिलाने से उनकी विषाक्तता तो नष्ट हो जाती है, किन्तु प्रतियोगी पदार्थजनक शक्ति ज्योंकी त्यों बनी रहती है। इस प्रकार संस्कारित विषों को टाक्सायड या एनाटॉक्सिन भी कहते हैं। (५) प्रतियोगीजन वैक्सीन (Immunogens)-इसमें न तो जीवाणुओं की सेल ही होती है और न उनका विष ही। इसमें केवल क्षमताजनक पदार्थ (Immunogens) या प्रतियोगीजन ही होते हैं। इसकी विशेषता यह होती है कि इसके प्रयोग से वैक्सीन-प्रतिक्रिया अल्पतर होती है। अतएव इनका प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में तथा व्याधि की उग्र (Acute) एवं अनुग्र (Subacute) अवस्थाओं में किया जा सकता है। (६) वसांशरहित जीवाणुसत्व (Diaplyte vaccine)।

वैक्सीन-निर्माण विधि—

वैक्सीना वैक्टेरिएलिया (Vaccina Bacterialia), B. P.—लै०; वैक्टीरियल वैक्सीन (Bacterial Vaccine)—अं०।

यह मृत वैक्टीरिया या वैक्टीरियासत्व या वैक्टीरियाव्युत्पन्न द्रव्यों का विसंक्रमित निलम्बन (Sterile Suspension) होता है अथवा सजीव वैक्टीरिया का निलम्बन होता है। जिस वैक्टीरिया का वैक्सीन बनाना होता है, उनकी उपयुक्त श्रेणियों (Strains) का चुनाव करके घन माध्यम द्रव्यों (Solid media) पर उनका संवर्धन किया जाता है। इसके बाद लवणजल या अन्य उपयुक्त द्रवमाध्यम में संवर्धन करके निलम्बन (Suspension) बनाते हैं। पुनः इसको विशिष्ट पद्धति द्वारा ताप देकर या जीवाणुस्तम्भक द्रव्य मिलाकर विसंक्रमित किया जाता है। प्रति सी० सी० जीवाणुओं की संख्या की गणना कर ली जाती है।

विषाणिवक वैक्सीन (Virus Vaccine) बनाने के लिए विषाणुओं (Viruses) का संवर्धन सजीवकोशाओं पर किया जाता है एतदर्थ जीवित अण्डा, धातु-संवर्धन (Tissue Culture) या जान्तव शरीर में किया जाता है।

वक्तव्य—सूचकपत्र (Label) पर निम्न बातों का उल्लेख होना चाहिए—(१) पात्र में वितरित वैक्सीन की मात्रा (Total amount) तथा प्रति मि० लि० या सी० सी० में प्रत्येक प्रजाति के जीवाणुओं की संख्या; (२) मिलाये गए जीवाणुस्तम्भक (Bacteriostatic) या जीवाणुनाशक (Bactericide) द्रव्य की प्रतिशत मात्रा; (३) वैक्सीन का नाम, प्रयुज्य मात्रा तथा सक्रिय-काल आदि का भी निर्देश होना चाहिए।

सेवन-विधि—वैक्सीन का प्रयोग प्रधानतः (१) अधस्त्वक् या चर्माधः सूचिकाभरण या अन्तःरोपण द्वारा (Subcutaneous Injection or Inoculation) अथवा अन्तर्त्वक् या त्वचान्तरगत (Intradermal injection) द्वारा किया जाता है। कभी-कभी अवशिष्ट-प्रोटीन प्रयोग के रूप में इसका शिरागत इन्जेक्शन भी किया जाता है।

मात्रा-क्रम—पहले रोगी की वैयक्तिक प्रकृति (Idiosyncrasy) तथा औषधि के प्रति संवेदनशीलता की परीक्षा के लिए निर्दिष्ट मात्रा से भी कम मात्रा में प्रयुक्त करना चाहिए। इसके बाद औषधि ३–३ या ४–४ दिन के अन्तर से इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त होती है। अन्तिम मात्रा में प्रयुक्त मि० लि० १००० दशलक्ष निर्विष जीवाणु या प्रति मि० लि० १०० लक्षण सक्रिय जीवाणुओं के बल का निलम्बन दिया जा सकता है। मात्राक्रम प्रायः इस प्रकार रखते है—०·१ मि० लि०,

०.२ मि० लि०, ०.४ मि० लि०, ०.८ मि० लि० तथा १ मि० लि० । जिन रोगियों में औषधि के प्रति असह्यता की सम्भावना हो उनमें मात्रा अपेक्षाकृत कम रखना चाहिए, यथा ०.१ मि० लि०, ०.१५ मि० लि०, ०.२ मि० लि०, ०.३ मि० लि०, ०.४५ मि० लि० तथा ०.७५ मि० लि० एवं १ मि० लि० होनी चाहिए ।

मात्रा का निर्धारण—मात्रा के निर्धारण में निम्न बातोंको ध्यान में रखना चाहिए—(१) जीवाणुओं की विषाक्तता—न्युमोकोकस, गोनोकोकस, स्ट्रेप्टोकोकस आदि विषाक्त दण्डाणुओं के लिए ५० से १०० लाख की प्रारम्भिक मात्रा पर्याप्त है । कम विषाक्त जीवाणुओं के लिए मात्रा १००० से ५००० लाख तक हो सकती है । (२) व्याधि की अवस्था—उग्रावस्था में मात्रा अपेक्षाकृत कम होनी चाहिए । (३) मात्रानिर्धारण का सामान्य नियम $\frac{\text{वय}}{\text{वय}+१२}$ है । भारतीयोंको वैक्सीन को अपेक्षाकृत अधिक मात्रा सह्य होती है ।

वैक्सीनप्रयोगजन्य प्रतिक्रियायें (Reactions):—(१) स्थानिक (Local); दूषित क्षेत्र गत (Focal) तथा (३) सार्वदैहिक या सामान्यकायिक (General) स्वरूप की होती हैं । स्थानिक क्रिया विशेष महत्त्व की नहीं होती । मात्राधिक्य से कभी-कभी इन्जेक्शन के स्थान पर कभी-कभी पीड़ा तथा शोथ आदि साधारण उपद्रव हो सकते हैं, शरीर में कहीं दूषित क्षेत्र होने पर उस स्थान पर उग्र लक्षण प्रगट होते हैं । वैसे यह महत्त्व का है और इस पर ध्यान देना चाहिए । सामान्यकायिक लक्षण प्रायः अनागतव्याधिप्रतिषेध के लिए प्रयुक्त होने पर होते हैं । इसमें ज्वर होता है तथा सारे शरीर में पीड़ा, शिरःशूल आदि का उपद्रव होता है, किन्तु सामान्यतया ये लक्षण १–२ दिन में अपने आप शान्त होते हैं ।

सीरम या क्षम-लसीका (Serum Therapy)—इसका प्रयोग कृत्रिम निष्क्रिय क्षमतोत्पादन के लिए किया जाता है । इसमें किसी दूसरे मनुष्य या उपयुक्त जानवर की लसीका जिसमें विशिष्ट व्याधि के प्रतियोगी पदार्थ होते हैं, प्रयुक्त होती है । इसको **एन्टिसीरम (Antiserum**—एक व०), **एन्टिसीरा (Antisera**—बहु० व०) कहते हैं । वैक्सीन की भाँति यह भी निम्न प्रकारों का होता है :—(१) **एन्टिटॉक्सिन या एन्टीटॉक्सिक सीरा (Antitoxin or Antitoxic Sera)**—यह बहिर्विष उत्पन्न करनेवाले जीवाणुओं के बहिर्विषों (Exo toxins) को निष्क्रिय करने के लिए प्रयुक्त होता है । डिफ्थीरिया एवं टिटेनस का एन्टीटॉक्सिन या एन्टीटॉक्सिक सीरम इसी प्रकार का होता है । (२) **एन्टीबैक्टीरियल सीरम (Antibacterial Sera)**—इसका प्रभाव पूरे जीवाणुशरीर पर होता है । (३) **प्रतिविषाण्विक सीरम या एन्टीवाइरल सीरम (Antiviral serum)**—यह उपयुक्त जन्तुओं में विभिन्न विषाणुओं द्वारा कृत्रिम रूप से व्याधि उत्पन्न करके अथवा विषाणु-उपसर्ग से पीड़ित व्यक्ति के रोगमुक्त होने पर उसके रक्त से प्राप्त किया जाता है ।

सेवनविधि—(१) अधस्त्वक् या पेशीगत मार्ग (Subcutaneously or intramuscularly)—सामान्यतया सीरम को अधस्त्वक् या पेशीगत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त करते हैं । इसके लिए नितम्ब प्रदेश, उदर का अधः प्रदेश अथवा ऊरु के सम्मुख भाग के मध्य में अथवा बाहु के ऊर्ध्व-प्रदेश के सम्मुख में इंजेक्शन दिया जाता है । अधिक मात्रा में देना हो तो आधी दवा एक ओर तथा

आधी दूसरी ओर देते हैं। इन्जेक्शन देने के बाद टिंक्चर बेंजोइन को० में रूई का फोया भिगोकर उस स्थान पर रख देना चाहिए।

(२) शिरागत इंजेक्शन (Intravenously)—इसका अवलम्बन उस समय किया जाता है, जब रोगी की हालत खराब होती है अथवा प्रारम्भ में इंजेक्शन नहीं दिया गया हो। एतदर्थ औषधि को तीनगुने समबल लवणजल (Narmal saline) में मिलाकर प्रयुक्त करते हैं।

(३) सुषुम्नांतर्गतमार्ग (Intrathecally)—इसका प्रयोग प्रायः धनुर्वात का प्रतिविष प्रयुक्त करने के लिए किया जाता है। इसके लिए कटिवेध (Lumbar puncture) करके, जितनी मात्रा में सीरम प्रविष्ट करना हो, उतनी मात्रा मस्तिष्कसुषुम्नाजल या ब्रह्मवारि (Cerebro-spinal fluid) को निकाल-ली जाती है और फिर धीरे-धीरे सीरम प्रविष्ट किया जाता है। आसानी से अन्दर प्रविष्ट होने के लिए सीरम का पात्र कुछ ऊंचाई (९ से १२ इंच) पर होना चाहिए। सीरम को शरीर तापक्रम के बराबर गरम कर लेना चाहिए। आवश्यकता होने से रोगी को सामान्य-कायिक संज्ञाहरण द्वारा बेहोश कर लेते हैं।

सीरम प्रयोगजन्य प्रतिक्रियायें (Serum reactions)—यह प्रतिक्रियायें स्थानिक (Local reaction) तथा सार्वदैहिक (General) दोनों स्वरूप की होती हैं। स्थानिक प्रतिक्रिया में इन्जेक्शन के स्थान में शोथ, सड़न तथा कोथ (necrosis) आदि का उपद्रव (Arthus pheno-menon) होता है। सार्वदैहिक लक्षण अनवधानिक स्वरूप की (Anaphylaxis) अथवा लसिका-प्रतिक्रिया या लसीका-रोग (Serum Sickness) की भाँति हो सकती है। अनवधानिक प्रतिक्रिया में पहले सीरम इंजेक्शन का इतिहास होता है, जिसके कारण रोगी में असह्यता उत्पन्न हो जाती है और दूसरे इंजेक्शन के तत्काल बाद श्वासकृच्छ्र, श्यावोत्कर्ष (Cyanosis) तथा बेहोशी होती है और कभी-कभी यह घातक परिणाम में अन्त होता है। लसीका रोग में प्रतिक्रिया १ सप्ताह बाद तक हो सकती है, जिसमें शीतपित्त (Urticarial rashes), संधिशूल, एवं लसग्रंथियों में शोथ (Adenitis) आदि उपद्रव होते हैं। सीरमरोग की प्रतिक्रियायें प्रथम इंजेक्शन पर ही होती हैं तथा एनाफायलेक्सिस की भाँति पूर्व सीरम-इंजेक्शन का इतिहास नहीं होता।

चिकित्सा—अनवधानिक स्तब्धता (Anaphylactic Shock) के अनागत प्रतिषेध (Pro-phylaxis) के लिए सीरम प्रयुक्त करने के १ घंटा पूर्व मुख द्वारा या इंजेक्शन द्वारा हिस्टामीन विरोधी औषधि (Antihistaminic drug) का व्यवहार करना चाहिए। दूसरे सीरम भी इकट्ठा एक ही बार में नहीं इंजेक्ट करना चाहिए। पहले ०.२५ सी० सी० अधस्त्वक् मार्ग द्वारा दें, फिर ½ सी० सी० और तब १ सी० सी०। यदि १ घंटे के अन्दर कोई प्रतिक्रिया लक्षित न हो तो शेष सीरम बहुत धीरे-धीरे इंजेक्ट करें। सीरम के साथ-साथ ५ से ७ बूंद एड्रिनेलीन (१०० में १) का भी इंजेक्शन दें।

यदि प्रतिक्रिया का आक्रमण हो गया हो, तो लसीका-रोग (Serum Sickness)जन्य प्रतिक्रिया के शमन के लिए ½ सी० सी० एड्रिनेलीन सोल्यूशन (१००० में १ के बल का) का फौरन पेशीगत इन्जेक्शन दें। साथ ही मुख द्वारा या इन्जेक्शन द्वारा एन्टीहिस्टामिनिक औषधियाँ Anti-histaminic drugs) का प्रयोग करें। तत्काल प्रभाव के लिए इनको इन्जेक्शन द्वारा भी प्रयुक्त कर सकते हैं। संधिशूल आदि अन्य उपद्रवों के लिए मुख द्वारा सेलिसिलेट्स तथा एस्प्रिन आदि का

प्रयोग करें। इसके लिए कार्टिकोट्राफिन का प्रयोग इंजेक्शन द्वारा या मुख द्वारा कार्टिसोन (Cortisone) का प्रयोग करने से भी १-२ दिन के अन्दर लसीकारोग की सभी प्रतिक्रियायों का शमन होता है।

अनवधानिक प्रतिक्रिया—(Anaphylactic reaction) होने पर अधिक सतर्कता बरतने की जरूरत है, क्योंकि इससे असावधानी होने पर घातक परिणाम होने की आशंका अधिक रहती है। इसके लिए फौरन ½ से १ सी० सी० एड्रिनेलीन सोल्यूशन का पेशीगत इंजेक्शन करें। यदि स्थिति काबू में आवे तो १०-१५ मिनट के बाद पुनः एक इंजेक्शन दें। सुषुम्ना शीर्षोत्तेजक औषधियों (Analeptics) का इन्जेक्शन करना चाहिए। एतदर्थ लेप्टाजोल या कोरामीन १ से २ सी० सी० पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त कर सकते हैं। श्वास का कष्ट अधिक होने पर कृत्रिम श्वसन करावें तथा आक्सीन दें। यदि रक्तभार बहुत कम हो गया हो तो ५०० से १००० सी० सी० तक रक्त या रक्तरस (Plasma) का अन्तःसंक्रमण (Transfusion) करें।

अनवधानिक प्रतिक्रिया या अनवधानता एवं अनूर्जा (**Anaphylaxis and Allergy or Hypersensitivity**) :—

सीरम-चिकित्सा में तथा अन्य इंजेक्शनचिकित्सा में जिसमें विशेषतः विजातीय प्रोभुजिन का प्रयोग होता है, उपर्युक्त दोनों प्रतिक्रियायें विशेष महत्व की होती हैं, जिनको ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

अनवधानिक प्रतिक्रिया (अनवधानता) या एनाफाइलेक्सिस (Anaphylaxis)—अनवधानता का प्रयोग पारिभाषिक रूप में कृत्रिमरूप से उत्पादित परमसूक्ष्मवेदनता की अवस्थाओं (**artificially induced conditions of hypersensitiveness**) के लिए किया जाता है। प्रायः देखा जाता है, कि कभी-कभी विजातीय विलेय प्रोभुजिन (**foreign soluble protein**) का प्रथम इंजेक्शन करने से तो कोई प्रतिक्रिया नहीं होती, किन्तु १०–१५ दिन बाद उसी प्रोटीन का अल्प मात्रा में भी सूचिकाभरण करने से घातक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। इस स्थिति को **अनवधानिक स्तब्धता (Anaphylactic shock)** कहते हैं। ऐसी स्थिति में तापक्रम गिर जाता है तथा श्वासावरोध **(Asphyxia)**, रक्तभार में सहसा कमी (**fall of blood-pressure**), त्वचा में शीतपित्तादि का उपद्रव तथा अतिसार आदि लक्षण प्रगट होते हैं। अतएव जिन रोगियों में ऐसा इतिहास हो, उनमें यदि पुनः सीरम का प्रयोग करना हो तो पहले उसकी सूक्ष्मवेदनता **(Sensitiveness)** की परीक्षा कर लेनी चाहिए। इसके लिए ०·१ मि० घोड़े की लसीका **(Horse serum)** या जो लसीका प्रयुक्त करनी हो उसका परीक्षण-सूचिकाभरण किया जाता है। यदि इंजेक्शन के १ घंटे के अन्दर कोई प्रतिक्रिया न हो तो समझना चाहिए कि रोगी में उस सीरम के प्रति सूक्ष्मवेदनता नहीं है।

अनूर्जता या परमसूक्ष्मवेदनता (Allergy or Hypersensitiveness)—यह प्रायः व्यक्तिगत स्वरूप की होती है। क्योंकि एक द्रव्य जो किसी व्यक्ति में प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है, दूसरे व्यक्तियों में प्रयुक्त किये जाने पर बिल्कुल निरापद सिद्ध होता है।

हिस्टामीन-प्रतियोगी द्रव्य या औषधियाँ:—(Antihistaminic Drugs or Histamine Antagonists)।

जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है, कभी-कभी इंजेक्शन-चिकित्सा में विशेषतः ऐसी

औषधियों के प्रयोग में जिनमें विजातीय प्रोटीन-घटित द्रव्य होते हैं, **अनवधानिक स्तब्धता** (**Anaphylactic shook**) तथा **अनूर्जिक** प्रतिक्रिया (**Allergic reaction**) का भयंकर उपद्रव होता है। ऐसी परिस्थिति में तत्काल समुचित उपाय न होने से फौरन घातक परिणाम होने की सम्भावना रहती है। परीक्षण द्वारा देखा गया है, कि ऐसी परिस्थिति में शरीर-धातुगत हिस्टामीन (**Histamine**) एवं **एसेटिलकोलीन** तथा हिपेरिन (**Heparin**) आदि तत्व धातुओं से पृथक् होकर रक्तप्रवाह में स्वतंत्ररूप से उपस्थित होते तथा अनवधानिक एवं अनूर्जिक प्रतिक्रियाओं को उत्पन्न करते हैं। इनको सामूहिक रूप से **हिस्टामीन-पदार्थ** (**H-substance**) कहते हैं। इस प्रकार शरीर-कोषाओं से पृथक् होनेवाले हिस्टामीन-पदार्थ जब केवल उन्हीं कोशाओंको प्रभावित करते हैं, तो इसको **हिस्टामीन की अन्तःप्रतिक्रिया** (**Intrinsic action**) तथा जब यह दूरस्थ शरीर-धातुओं एवं कोशाओं को प्रभावित करते हैं तो इसे **हिस्टामीन की वहिः प्रतिक्रिया** (**Extrinsic action**) कहते हैं। विशुद्ध हिस्टामीन प्रतियोगी द्रव्य प्रायः इसी वहिः प्रतिक्रिया का निवारण करते हैं। इस प्रकार का कुछ-कुछ कार्य एड्रिनेलीन, एफेड्रीन एवं अट्रोपीन आदि औषधियाँ भी करती हैं। किन्तु साथ ही साथ ये अनेक अन्य गुण-कर्म भी करते हैं। अतएव चिकित्साव्यवहार की दृष्टिसे केवल हिस्टामीनप्रतियोगी द्रव्य के रूप में इनका प्रयोग सदैव सम्भव नहीं है। परिणामतः वैज्ञानिकों की प्रवृत्ति ऐसे यौगिकों एवं औषधियों के खोज की ओर हुई, जिनका उपयोग केवल हिस्टामीन-प्रतियोगी-द्रव्य के रूप में किया जा सके और आज अनेक परिष्कृत योग उपलब्ध भी हो रहे हैं। रासायनिक दृष्टि से प्रायः अधिकांश एन्टिहिस्टामिनिक यौगिकों की रासायनिक संघटन एक-सा होता है। केवल **नाइट्रोजन, कार्बन एवं आक्सीजन** परमाणुओं के स्थानापन्न किये जाने से इनके ३ रासायनिक समुदाय किए जाते हैं—(१) **एथिलीन-डाएमीन व्युत्पन्न यौगिक** (**Ethylenediamine derivatives**)—यथा, मेपिरामीन (**Mepyramine**), एन्टेजोलीन (**Antazoline**), क्लोरसाइक्लिजीन (**Chlorcyclizine**), मेथाफेनिलीन (**Methaphoniline**), थान्जिलामीन (**Thonzylamine**) तथा ट्राइपिलिनामीन आदि। (२) **एल्किलामीन-व्युत्पन्न यौगिक** (**Alkylamine derivativeo**) तथा (३) **एमिनोएल्किल ईथर व्युत्पन्न यौगिक** (**Aminoalkyl ether derivatives**)—यथा डाइमेंहाइड्रिनेट (**Dimenhydrinate**), डाइफेनहाइड्रेमीन तथा डॉक्सिलेमीन आदि।

किन्तु इन सभी यौगिकों के सामान्यगुण-कर्म एक से होते हैं। इनमें तर-तम भेद केवल मस्तिष्कगत संशामक प्रभाव (**Sedation**) में होता है, यथा:—

(१) एन्टेजोलीन, थान्जिलेमीन तथा फेनिनडेमीन आदि—**सबसे कम संशामक प्रभाव** करते हैं।

(२) ट्राइपेलेनेमीन (**Tripelennamine**), मिथेफेनिलीन तथा मेपिरामीन आदि अपेक्षाकृत प्रथम वर्ग से अधिक संशामक प्रभाव करते हैं।

(३) डाइफेनहाइड्रेमीन, डॉक्सीलेमीन प्रोमेथेजीन, डाइमेनहाइड्रिनेट आदि—अपेक्षाकृत सबसे अधिक संशामक हैं।

मेपिरामिनी मेलिआस Mepyraminae Maleas (Mepyramin.

Maleas.), I. P., B. P.—ले०; मेपिरामीन मेलिएट (Mepyramine Maleate)—अं० ।

रासायनिक संकेत: $C_{21}H_{27}O_5N_3$.

पर्याय—नियोएन्टरजन (Neoantergan); एन्थिसन (Anthisan) ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह acid maleate of N—P—methoxy-benzyl N' N'—dimethyl—N—2—pyridylethylenediamine होता है । सफेद रंग के अथवा मलाई की तरह मटमैले सफेद (Creamy.white) के चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है । कभी-कभी इसमें विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है । विलेयता—२०° तापक्रम पर ½ भाग जल में घुल जाता है । इसके अतिरिक्त २'५ भाग अल्कोहल् तथा १'५ भाग क्लोरोफॉर्म में भी घुल जाता है ।

मात्रा—०'३ से ०'८ ग्राम (५ से १२ ग्रेन) प्रतिदिन कई मात्राओं में विभक्त करके (in divided doses) ।

टॅबेली मेपिरामिनी मेलिएटिस Tabellae Mepyraminae Maleatis, B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव मेपिरामीन मेलिएट (Tablets of Mepyramine Maleate)—अं०; एन्थिसन की टिकिया—हिं० ।

मात्रा—मेपिरामीन मेलिएट की भाँति । वक्तव्य—साधारणतया मेपिरामीन की टिकिया शर्करावगुण्ठित (Sugar-Coated) देनी चाहिए ।

प्रोमेथाजिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Promethazinae Hydrochloridum (Promethazin. Hydrochlor.), I. P., B. P.—ले०; प्रोमेथाजीन हाइड्रोक्लोराइड (Promethazine. Hydrochloride)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{17}H_{20}N_2S$, Hcl.

पर्याय—फेनर्जन (Phenergan) ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टिसे यह N—(2—di—methylamino—n—propyl) phenothiazine) का हाइड्रोक्लोराइड लवण होता है । जिसमें ८'५ प्रतिशत से ८'९ प्रतिशत तक नाइट्रोजन (N.) तथा १०'८ प्रतिशत से ११'२ प्रतिशत क्लोरीन होता है । प्रोमेथाजीन हाइड्रोक्लोराइड सफेद रंग का या मटमैली आभा लिए सफेद रंग का चूर्ण होता है, जो प्राय गंधहीन (कभी-कभी हल्की गंध युक्त) तथा स्वाद में अत्यंत तिक्त होता है । विलेयता—०'६ भाग जल, ९ भाग अल्कोहल् तथा २ भाग क्लोरोफार्म में विलेय (Soluble) है ।

मात्रा—२५ से ७५ मि० ग्रा० (⅜ से १⅛ ग्रेन) प्रतिदिन ।

टॅबेली प्रोमेथाजिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ Tablellae Promethazinae Hydrochloridi (Tab. Promethazin. Hydrochlor.), I. P., B. P.—ले०; टॅबलेट्स ऑव प्रोमेथाजीन हाइड्रोक्लोराइड, फेनर्जन (अं०) की टिकिया ।

मात्रा—फेनर्जन की भाँति ।

अन्य (नॉट्-ऑफिशल) एन्टिहिस्टामिनिक यौगिकः—

डाइफेनहाइड्रामिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Diphen hydraminae Hydrochloridum (Diphenhydramin. Hydrochlor.), B. P. C. & U. S. P.-

ले० ; डाइफेन हाइड्रामीन हाइड्रोक्लोराइड (Diphenhydramine Hydrochloride)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{17} H_{22} ONCl$.

पर्याय—वेनाड्रिल (Benadryl) ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—diphenylmethoxy—N N—dimethyl--ethylamine hydrochloride होता है, जो सफेद रङ्ग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। उक्त चूर्ण प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है तथा प्रकाश में खुला रहने से रंग विकृत हो जाता (Darkens) है। जिह्वा पर रखने से थोड़ी देर के बाद वहां सुन्नता-सी (local numbness) मालूम होती है। विलेयता—२०° तापक्रम पर १ भाग जल में घुलनशील होता है। इसके अतिरिक्त २ भाग अल्कोहल् एवं २ भाग क्लोरोफॉर्म तथा ५० भाग एसिटोन में भी घुलजाता है।

मात्रा—५० से १०० मि० ग्रा० ($\frac{3}{4}$ से १$\frac{1}{2}$ ग्रेन) प्रतिदिन (B. P. C.) या २५ मि० ग्रा० ($\frac{3}{8}$ ग्रेन) दिन में ३-४ वार (U. S. P.) । बच्चों के लिए २ मि० ग्रा० ($\frac{1}{30}$ ग्रेन) प्रति पौंड शरीर-भार के हिसाब से देना चाहिए।

ट्राइपेलिनेमीन हाइड्रोक्लोराइड Tripelennamine Hydrochloride (U. S. P.) ।

पर्याय—पाइरिबेंजामीन (Pyribenzamine) ।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह N—benzyl-'NN'—dimethyl—N—2-pyridylethylenediamine hydrochloride होता है, जो सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। प्रकाश में खुला रहने से चूर्ण गाढ़े रंग का हो जाता है। विलेयता—१ भाग जल तथा ६ भाग अल्कोहल् में घुलता है।

मात्रा—(U. S. P. Dose)—५० मि० ग्रा० ($\frac{3}{4}$ ग्रेन) दिन में ३-४ वार ।

एन्टेजोलिनी हाइड्रोक्लोराइडम् Antazolinae Hydrochloridum (Antazolin. Hydrochlor.), B. P. C.—ले०; एन्टेजोलीन हाइड्रोक्लोराइड (Antazoline Hydrochloride)—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{17}H_{20}N_3Cl$.

पर्याय—एन्टिस्टिन (Antistin); हिस्टोस्टेब (Histostab) ।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—(N—benzylanilinomethyl) iminazoline Hydrochloride होता है, सफेद रंग के पत्राकार क्रिस्टल्स (White feathery crystals) अथवा सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर ५० भाग जल में घुलता है। ९५ डिहाइड्रेटेड अल्कोहल् में घुल जाता है।

मात्रा—०·१ से ०·२ ग्राम (१$\frac{1}{2}$ से ३ ग्रेन)। सामान्यतया ०·१ ग्राम (१$\frac{1}{2}$ ग्रेन) की टिकिया दिन में २ वार दी जाती है। बच्चों को $\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ टिकिया दिन में ३ वार दी जाती है। $\frac{1}{2}$ से २ सी० सी० (२ सी० सी० में ०·१ ग्राम) पेशीगत अथवा शिरागत इन्जेक्शन द्वारा।

क्रिमोर एन्टेजोलिनी Cremor Antazolinae (Crem. Antazolit.), B. P. C.—ले०; क्रीम ऑव एन्टेजोलीन, एन्टिस्टिन का क्रीम—अं०, हिं० ।

इसमें २% एन्टेजोलीन हाइड्रोक्लोराइड (एन्टिस्टिन) होता है।

निर्माण-विधि—एन्टेजोलीन हाइड्रोक्लोराइड ८७½ ग्रेन, स्टियरिक एसिड ½ औंस, लिक्विड पाराफिन २ औंस, सेटोमाक्रोगोल इमल्सिफाइङ्ग वैक्स (Cetomacrogol Emulsifying wax) ३९४ ग्रेन, ग्लिसरीन ½ औंस तथा जल १० औंस के लिए।

टैबेली एन्टेजोलिनी Tabellae Antazolinae (Tab. Antazolin.), B. P. C.—ले०; टैबलेट्स ऑव एन्टेजोलीन (Tablets of Antazoline)—अं०। एन्टिस्टिन की टिकिया—हिं०।

फेनिनडामिनी टार्ट्रास Phenindaminae Tartras (Phenindamin. Tart.) B. P. C.—ले०; फेनिनडामीन टार्ट्रेट, फेनिनडामीन एसिड टार्ट्रेट —अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{23}H_{25}O_6N$.

पर्याय—थियोफोरिन (Theophorin)।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह 1 : 2 : 3 : 4—Tetrahydro – 2—methyl—9-phenyl 2—azafluorene hydrogen tartrate होता है, जो सफेद रंग के गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त (Voluminous) चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—२०° तापक्रम पर १०० भाग जल में घुलता है। अल्कोहल् ईथर तथा क्लोरोफॉर्म में प्रायः अविलेय होता है।

मात्रा—२५ से ५० मि० ग्रा० (⅓ से ¾ ग्रेन) प्रतिदिन।

डाइमेनहाइड्रिनेट Dimenhydrinate (U. S. P.)।

पर्याय—एनॉशिनम् (Anautinum); ड्रेमेमीन (Dramamine)।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से 8—Chlorotheophylline salt of (2—diphenylmethoxyethyl) benzy] pyridine malate होता है, जो सफेद एवं गंधहीन क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। यह बेनाड्रिल तथा थियोफिलीन का यौगिक होता है। विलेयता—जल में थोड़ा-थोड़ा घुलता है।

मात्रा—२५ से १०० मि० ग्रा० (⅓ से १½ ग्रेन) दिन में ३–४ बार।

क्लोरसाइक्लिजिनीहाइड्रोक्लोराइडम् Chlorcyclizinae Hydrochloridum (Chlorcyclizin. Hydrochlor.), B. P. C.—ले०; क्लोरसाइक्लिजीन-हाइड्रोक्लोराइड—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{18}H_{22}N_2Cl_2$.

पर्याय—हिस्टेनिन (Histanin)।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से ($\pm$)—1—(p—Chloro-benzhydryl) 4—methyl—piperazine hydrochloride होता है, जो सफेद रंग के गंधहीन तथा तिक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। विलेयता—१·६ भाग जल तथा १०·५ भाग अल्कोहल में घुलता है।

मात्रा—५० से १०० मि० ग्रा० (¾ से १½ ग्रेन)। यदि प्रतिदिन १ ही खुराक में दवा देनी हो तो ५० से १०० मि० ग्रा० दे सकते है।

ब्रोमेज़ीन हाइड्रोक्लोराइड Bromazine Hydrochloride। पर्याय—एम्बोड्रिल (Ambodryl)।

वर्णन—२-(4-Bromodiphenyl-methoxy) ethyldimethylamine hydrochloride होता है। उत्तम एन्टीहिस्टामिनिक यौगिक है।

मात्रा—२५ मि० ग्रा० ($\frac{२}{५}$ ग्रेन) दिन में ३-४ बार।

कारबिनोक्सेमीन मेलिएट (Carbinoxamine Maleate)।

पर्याय—क्लिस्टिन मेलिएट (Clistin Maleate)।

वर्णन—सफेद रंग के गंधहीन तथा तिक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जो जल तथा अल्कोहल् में घल जाता है।

मात्रा—४ से ८ मि० ग्राम ($\frac{१}{१६}$ से $\frac{१}{८}$ ग्रेन) प्रतिदिन ३-४ बार।

डोक्सिलेमीन सक्सिनेट (Dxylamine Succinate)।

पर्याय—डेकाप्रिन सक्सिनेट Decapryn Succinate)।

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह २—(a—2—dimethyl-amino-ethoxy-a-methyl-benzyl) pyridine succinate होता है। सफेद या मटमैले सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है, जिसमें विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है। जल तथा अल्कोहल् में विलेय होता है।

मात्रा—१२.५ से २५ मि० ग्रा० ($\frac{१}{५}$ से $\frac{२}{५}$ ग्रेन) दिन में २-४ बार।

मेथाफेनिलीन हाइड्रोक्लोराइड (Methaphenilene Hydrochloride)।

पर्याय—डाएट्रीन हाइड्रोक्लोराइड (Diatrine Hydrochloride)।

वर्णन—सफेद या हल्के पीले रंग का क्रिस्टलाइन पाउडर होता है, जिसमें एक विशिष्ट प्रकार की हल्की गंध पाई जाती है। विलेयता—जल तथा अल्कोहल में घुल जाता है। मात्रा—५० मि० ग्रा० ($\frac{३}{४}$ ग्रेन) दिन में २-४ बार।

थान्जिलेमीन हाइड्रोक्लोराइड (Thonzylamine Hydrochloride)।

पर्याय—नियोहेट्रामीन हाइड्रोक्लाराइड (Neohetramine Hydrochloride)।

वर्णन—यह भी एथिलीन डाएमीन व्युत्पन्न एन्टिहिस्टामिनिक यौगिक है, जो सफेद रंग के चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। जल तथा अल्कोहल् में घुल जाता है।

मात्रा—५० से १०० मि० ग्रा० ($\frac{३}{४}$ से १$\frac{१}{२}$ ग्रेन) प्रतिदिन ३-४ बार।

साइक्लिजीन हाइड्रोक्लोराइड (Cyclizine Hydrochloride।

पर्याय—मेराजीन (Merazine)।

वर्णन—सफेद रंग का गंधहीन तथा तिक्त क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो जल में घुल जाता है।

मात्रा—५० मि० ग्रा० ($\frac{३}{४}$ ग्रेन) दिन में ३-४ बार।

हिस्टामीन—प्रतियोगी द्रव्यों (Antihistamines) के गुण-कर्म।

हिस्टामीन प्रतियोगी गुण-कर्म—हिस्टामीन-प्रतियोगी द्रव्यों के प्रयोग से हिस्टामीन का विभिन्न धातुओं एवं अंगों पर कुप्रभाव नहीं होने पाता। हिस्टामीन के प्रभाव से होनेवाले श्वास-प्रणालिकाओं, आंत्र एवं गर्भाशय आदि के संकोच (Contraction) एवं उद्वेष्ट का

निवारण (relaxation) होता है। हिस्टामीन के कुप्रभाव से होनेवाले रक्त-निपीड़ ह्रास (Fall of blood-pressure) का भी निवारण होता है। मोटे तौर से अनवधानिक-प्रतिक्रिया (Anaphylactic reaction) जन्य सभी घातक उपद्रवों का प्रतिषेध एवं शमन होता है। केशिकाओं की अभिप्रवेश्यता (Permeability) भी अधिक नहीं होने पाती, किन्तु हिस्टामीन के प्रभाव से होनेवाले अत्यधिक आमाशयिक रस को नहीं रोकते।

केन्द्रिक नाड़ी संस्थान (Central Nervous System)—स्थानिक प्रयोग से प्रायः सभी एन्टीहिस्टामिनिक द्रव्य साधारण स्थानिकसंज्ञाहर प्रभाव (Local anaesthetic action) करते हैं। इस रूप में मेपिरामीन कहीं प्रोकेन से भी तिगुना सक्रिय है। मस्तिष्क के वाह्य वस्तु पर साधारणतया ये यौगिक अवसादक एवं संशामक क्रिया (Cortical depressant and sedative) करते हैं। डाइफेनिल हाइड्रेमीन आदि एमिनो-अल्किल व्युत्पन्न एन्टीहिस्टामिनिक यौगिकों में यह गुण-कर्म अपेक्षाकृत अधिक होता है। किन्तु औपशयिक मात्राओं (Therapeutic doses) में यह कभी-कभी इसके विपरीत मस्तिष्क पर उत्तेजक प्रभाव करते हैं, जिससे अनिद्रा आदि उपद्रव हो सकते हैं। साइक्लिजीन एवं डाइमेनहाइड्रिनेट आदि कतिपय यौगिक हल्लास (Nausea) एवं वमन का भी निवारण करते हैं।

शोषण तथा उत्सर्ग—मुख द्वारा प्रयुक्त होने पर आमाशयान्त्रप्रणाली से तथा अन्य पद्धतियों द्वारा (Parenterally) प्रयुक्त होने पर भी प्रयोगस्थल से क्षिप्रतापूर्वक शोषित हो जाते हैं। मुख द्वारा सेवन किए जाने पर भी सेवनोपरान्त आधे घंटे के अन्दर ही इनका प्रभाव लक्षित होने लगता है। इकट्ठे एक मात्रा में प्रयुक्त किये जाने पर इनका प्रभाव ४-६ घंटे तक बना रहता है। शोषणोपरान्त रक्तप्रवाह में भ्रमण करते हुए शरीर-धातुओं द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं। अधिकतर संकेन्द्रण फुफ्फुस, प्लीहा, वृक्क, यकृत एवं मस्तिष्क आदि अंगों में पाया जाता है। इनका अधिकांश भाग यकृत एवं वृक्कों में वियोजित हो जाता है, केवल अल्प मात्रा ही ज्यों की त्यों मूत्र के साथ उत्सर्गित होती हैं। निस्सरण २४ घंटे के अन्दर ही हो जाता है।

आमयिक प्रयोग

विभिन्न प्रकार के अनूर्जिक प्रतिक्रियाओं (Allergic reactions) एवं अनवधानिक प्रतिक्रियाओं (Anaphylactic reactions) में तात्कालिक शमन के लिए हिस्टामीन प्रतियोगी औषधियाँ बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इस प्रकार अनूर्जिक प्रतिक्रियाजन्य शीतपित्त (Urticaria), वाहिनी-नाड़ी-शोथ (Angioneurotic oedema), खुजली (Pruritus), (A topic and Contact dermatitis) एवं कीट-दंश (insect bite) में इनका प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। एतदर्थ आवश्यकतानुसार इनका स्थानिक प्रयोग किया जाता है अथवा औषधि का सेवन मुख द्वारा किया जाता है। गंधतृणज्वर (Hay fever), वाहिनी-नाड़ीजन्य नासाश्लैष्मिक-कलाशोथ (Vasomotor rhinitis), सीरम प्रतिक्रिया या रोग (Serum Sickness) एवं एन्टीबायोटिक्स तथा सल्फोनेमाइड्स की असह्यता (Drug-reactions) जन्य प्रतिक्रियाओं में भी इस वर्ग की औषधियाँ बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं। Motion Sickness) एवं Labyrinthine disorder) से होनेवाले हल्लास एवं वमन का नियंत्रण करने के लिए भी

इनका उपयोग किया जाता है। इसी प्रकार शल्यकर्मोत्तर हृल्लास तथा वमन एवं विकिरण-चिकित्साजन्य उक्त उपद्रव तथा गर्भावस्था की मिचली को रोकने के लिए भी यह उपयुक्त सिद्ध होते हैं। अन्य उपयुक्त औषधियों के साथ एन्टीहिस्टामिनिक औषधियों का (विशेषतः डाइफेन हाइड्रेमीन) प्रयोग (Parkinsonism) में भी किया जाता है।

उपद्रव (Side effects)—डाइफेन डाइड्रेमीन के चिकित्सा-क्रम में इसकी आशंका सबसे अधिक होती है, किन्तु क्लोरसाइक्लेजीन में इस प्रकार के उपद्रव सबसे कम होते हैं। अत्यधिक मानसिक अवसाद, शिरोभ्रम, कानों में भनभनाहट, शैथिल्य, शिरःशूल तथा गति में असामञ्जस्य आदि विकृतियाँ होती हैं। केन्द्रिक नाड़ीसंस्थान पर उत्तेजक प्रभाव होने से अनिद्रा तथा नाड़ी-आदि उपद्रव होते है। कभी क्षोभ, कभी रक्तभार में अत्यधिक ह्रास होता है। इसके अतिरिक्त पचन-संस्थान के भी अनेक उपद्रव हाते हैं। अस्थिमज्जा पर अवसादक प्रभाव होने पर श्वेत कायाणु-अपकर्ष (Leucopaenia) तथा अकणिककायाणूत्कर्ष का भयानक उपद्रव होता है।

सेवन-विधि—औषधीय प्रभाव की दृष्टि से इनका प्रयाग प्रायः मुख द्वारा करने से भी काम चल जाता है। वैसे इनका प्रयोग अधस्त्वक्, पेशीगत एवं शिरागत इंजेक्शन द्वारा भी किया जा सकता है।

वाह्य-प्रोटीन चिकित्साः—
(Non-Specific protein therapy)

प्रयोगों द्वारा सिद्ध हुआ है, कि प्रयोगी पदार्थों से युक्त विशिष्ट सीरम एवं वैक्सीन आदि का जो प्रयोग किया जाता है, उसमें शरीर में जो प्रतिक्रिया होती है, वहाँ विशिष्ट जीवाणु या विशिष्ट प्रतियोगीजन कारण नहीं है, अपितु उनका प्रोटीन इसकी उत्पत्ति में कारण होता है। इसी आधार पर विजातीय अविशिष्ट प्रोटीन का भी प्रयोग चिकित्सा में विशिष्टरूप में फलदायक पाया जाता है। धीरे-धीरे चिकित्सा में इस प्रकार के प्रोटीन का व्यवहार बढ़ने लगा और अब निम्न भिन्न-भिन्न रूपों में अविशिष्ट विजातीय प्रोटीन-सोल्यूशन का प्रयोग विशिष्ट चिकित्सा के लिए किया जाता है—(१) विसंक्रमित दुग्ध (Sterile milk), (२) पेप्टोन (Peptone) का क्रमिक अधिकाधिक मात्रा में (graduated doses) प्रयोग तमकश्वास (Bronchial asthma), शीत-पित्त एवं अर्धावभेद (Migraine) आदि में उपयोगी पाया जाता है। अविशिष्ट वेक्सीन (Non-specific Vaccine)—टी० ए० बी० (T. A. B.) वैक्सीन का प्रयोग विभिन्न व्याधियों तथा उग्र एवं अनुग्र संधिशोथ (Acute and Subacute arthritis), गृध्र-सी एवं (General paralysis of insane) में उपयोगी पाया जाता है; (४) कृत्रिम रूप से व्याधि उत्पन्न करके (artificially induced diseases) यथा (General paralysis of insane) में विषमज्वर पैदा कराया जाता है। (५) रक्त एवं सीरम—यथा श्वास, आदि में आत्मरक्त-प्रयोग (autohaemotherapy)। इसके लिए रोगी के शिरा से रक्त लेकर ५ से १० सी० सी० की मात्रा में उसी को पेशीगत इन्जेक्शन देते हैं। (६) वानस्पतिक एवं अन्य जन्तुओं से प्राप्त प्रोटीन—यथा परागसत्व (Pollen extract)।

चिकित्सा-व्यवहार में वाह्यप्रोटीन-चिकित्सा का उपयोग निम्नरूपों में किया जाता है:—

(१) विसूक्ष्मवेदनता (Desensitisation) उत्पन्न करने के लिए :—कतिपय रोगियों में देखा जाता है, कि विशिष्ट प्रोटीनों के प्रति अत्यधिक सूक्ष्मवेदनता (Sensitive-

ness) या वैयक्तिक प्रकृतिजन्य असह्यता (Idiosyncrasy) पाई जाती है, जिसके परिणामस्वरूप उन-उन प्रोटीनों का सेवन करने से श्वास, तृणपुष्पाख्यज्वर (Hay fever), शीतपत्ति एवं वाहिनीनाड़ीजन्यशोथ (Angioneurotic oedema) आदि व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। इसके निवारण के लिए पहले **वानपर्कट की पद्धति** (Von Pirquets reactions) द्वारा विनिश्चय कर लिया जाता है, कि किस रोगी में किस विशिष्ट प्रोटीन या आहारद्रव्य के प्रति असह्यता है। एतदर्थ अग्रबाहु पर हल्का चीरा लगाकर उन-उन द्रव्यों का शुष्कसत्व अल्प मात्रा में लगा दिया जाता है। जिसके प्रयोग से स्थानिक प्रतिक्रिया लक्षित हो उस द्रव्य के प्रति रोगी की सूक्ष्मवेदनता या असह्यता स्थापित हो जाती है। अब उस विशिष्ट प्रोटीन का या बाह्य प्रोटीन का (यथा पेप्टोन, दुग्ध आदि) क्रमिक मात्राओं में इंजेक्शन दिए जाते हैं, जिससे रोगी के शरीर में प्रतियोगी पदार्थ उत्पन्न होकर उस प्रोटीन के प्रति विसूक्ष्मवेदनता उत्पन्न हो जाती है, जिससे पुनः उस प्रोटीन के सेवन से उपयुक्त व्याधियों की उत्पत्ति नहीं होती।

(२) **अनुग्र (Sub-acute) एवं चिरकालीन (Chronic) संधिशोथ (Arthritis), तारामण्डलशोथ (Iritis), चिरकालीन पूयमेहज संधिशोथ (Chronic gonorrhoeal arthritis)** तथा स्त्री-प्रजननांगों के उपसर्ग में उक्त प्रोटीन-चिकित्सा से बहुत लाभ होता है। इसके लिए ताजे दूध का या लेक्टोलन, एओलन (Aolan) आदि व्यावसायिक योगों का व्यवहार कर सकते हैं। गाय या बकरी के ताजे दूध को ५ सी० सी० मात्रा में लेकर एक परख-नली में रखकर ४ मिनट तक खूब गरम करें। अब ठंढा होने पर ऊपर की मलाई हटाकर दूध सिरिंज में खींचकर पेशी में इंजेक्ट किया जाता है।

प्रयोग-निषेध—मदात्यय (Alcoholism) के रोगियों में तथा हृदय-रोगियों में एवं विमिश्र प्रकार के सम्मिश्रित उपसर्गों में यह चिकित्सा-क्रम निषिद्ध है।

जीवाणुभक्ष या बैक्टीरियोफेज-चिकित्सा :—
(Bacteriophage Therapy)

बैक्टीरियोफेज सूक्ष्मदर्शकातीत विषाणुस्वरूप के तत्व होते हैं, जो जीवाणुओं पर आक्रमण कर उनके शरीर का द्रावण (lysis) करते हैं। पहले चिकित्सार्थ इनका उपयोग आन्त्रिक-ज्वर (Typhoid) एवं प्रवाहिका (Dysentery) तथा आन्त्रगत अन्य जीवाणुओं के उपसर्ग में किया जाता था। किन्तु अब अनेक सफल रसौषधियों या विशिष्टौषधियों (Chemo-therapeutic agents) के सुलभ होने से बैक्टीरियोफेज का चिकित्सा-व्यवहार उपेक्षित-सा हो गया है।

सेवनविधि एवं मात्रा—बैक्टीरियोफेज का व्यवहार प्रायः खाली पेट पर तथा दिन में २-३ बार किया जाता है। फेज सेवन करने के एक घंटा पूर्व या पश्चात् कोई अम्ल या जीवाणुनाशक पदार्थ नहीं सेवन करना चाहिए। फेज को जल के साथ मुख द्वारा सेवन किया जाता है।

मात्रा—२ सी० सी० दिन में २-३ बार जल से मुखमार्ग द्वारा।

परिच्छेद २

(१) तृणाण्वीय उपसर्ग-प्रतिरोधक मसूरी या वैक्सीन
(Bacterial Vaccines)।

वैक्सिनम् टायफो--पाराटायफोसम् ए एट बी Vaccinum Typho-Paratyphosum A et B (Vaccin. Typho-paratyphos A et B)—ले०; टायफायड-पाराटायफायड ए एण्ड बी वैक्सीन, एन्टी टायफायड-पाराटायफोयड वैक्सीन—अं० ।

पर्याय--टी० ए० बी० वैक्सीन (T. A. B. Vaccine), I. P., B. P. ।

वर्णन—टी० ए० बी० वैक्सीन, टायफायड वेसिलस (Salmonella typhi) तथा सेलमोनेला पाराटायफाई ए एवं बी (S. paratyphi A. and S. paratyphi B.) का विसंक्रमित निलम्बन (Sterile Suspension) होता है, जिसके प्रति मि० लि० या सी० सी० मात्रा में १०,००० लक्ष टायफायड वेसिलाइ (S. typhi) तथा ५००० या ७,५०० लक्ष अलग-अलग पाराटायफायड वेसिलस ए एवं बी होते हैं। वैक्सीन में उक्त दण्डाणु (Bacteria) प्रायः मृतावस्था में होते हैं। यह वैक्सीन २ प्रकार का आता है--(१) अल्कोहल्-चढ़ित (Alcohol-treated Vaccines) तथा (२) अल्कोहल्-रहित (Vaccines other than alcohol treated) ।

मात्रा—रोग प्रतिषेध के लिए (Prophylactic) ब्रिटिश फॉर्माकोपिआ (B. P.) उल्लिखित मात्रा—(१) अल्कोहल्-चढ़ित वैक्सीन—प्रारम्भ में (पहली) मात्रा ०'२५ मि० लि० (¼ सी० सी०) तथा १ से ४ सप्ताह के बाद दूसरी मात्रा ०'५ मि० लि० (½ सी० सी०) की देनी चाहिए। इन्डियन फॉर्माकोपिआ (I. P.) में भी इसी मात्रा का उल्लेख है। (२) अल्कोहल्-रहित वैक्सीन। (१) ब्रिटिशफार्माकोपिआ के अनुसार (B. P. Dose)—पहली मात्रा ०'५ मि० लि० (½ सी० सी०) की तथा १ से ४ सप्ताह बाद दूसरी मात्रा १ सी० सी० (मि० लि०) की। (२) इन्डियन फार्माकोपिआ के अनुसार (I. P. Dose)—पहली मात्रा ०'२५ से ०'५ मि० लि० की तथा दूसरी मात्रा १ मि० लि० की होनी चाहिए।

मार्ग—अधस्त्वक् सूचिकाभरण (Subcutaneous injection) द्वारा।

वैक्सिनम टाइफो—पाराटाइफोसम् ए, बी, एट सी Vaccinum Typho—paratyphosum A, B et c. (Vacc. Typho-paratyphos A, B et C.)—ले०; टायफायड—पाराटायफायड ए, बी एण्ड सी वैक्सीन Typhoid-Paratyphoid A. B and C. Vaccine—अं० ।

पर्याय--टी० ए० बी० सी० वैक्सीन (T. A. B. C. Vaccine)।

वर्णन—टी० ए० बी० सी० वैक्सीन, सेलमोनेल्ला टाइफाइ (S. typhi) तथा सेलमोनेल्ला पाराटाइफाइ ए, बी एवं सी (S. paratyphi A., S. paratyphi B and S. paratyphi C) का

विसंक्रमित निलम्बन होता है, जिसके १ मि० लि० (सी० सी०) मात्रा में टायफायड बेसिलिस १०,००० लक्ष तथा पाराटाइफायड के तीनों उपर्युक्त जीवाणुओं में प्रत्येक की संख्या ५,००० लक्ष या ७,५०० लक्ष होती है। यह भी दो-प्रकार का आता है—(१) अल्कोहल् घटित (Alcohol-treated) तथा अल्कोहल् रहित (Vaccines other than alcohol treated)।

मात्रा—रोगप्रतिषेध के लिए—(१) अल्कोहल्घटित वैक्सीन—पहली मात्रा ०·२५ मि० लि० या ¼ सी० सी० तथा १ से ४ सप्ताह के बाद दूसरी मात्रा ०·५ मि० लि० (या सी० सी०) की देनी चाहिए। (२) अल्कोहलरहित वैक्सीन्स—पहली मात्रा ०·५ मि० लि० या ½ सी० सी० की तथा १ से ४ सप्ताह के बाद दूसरी मात्रा १ मि० लि० या १ सी० सी० की देनी चाहिए।

प्रयोग-विधि—अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा (Subcutaneous injection) द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

टी० ए० बी० तथा टी० ए० बी० सी० वैक्सीन का प्रयोग **टायफायड तथा पाराटायफायड के प्रतिषेध (Prophylaxis)** के लिए किया जाता है। मसूरी का प्रयोग इनाक्युलेशन (**Inoculation**) द्वारा किया जाता है। पहली मात्रा ½ सी० सी० की दी जाती है, और १ से ४ सप्ताह के बाद दूसरी मात्रा १ सी० सी० की दी जाती है। पहले इनाक्युलेशन के प्रतिक्रियास्वरूप कतिपय लक्षण उत्पन्न होते हैं। इनाक्युलेशन के स्थान पर सूजन तथा दर्द होता है, तथा उस स्थान की समीपवर्ती लसीकाग्रंथियाँ सूज जाती हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ज्वर या बुखार भी हो आता है और सिर में दर्द भी हो जाता है। इस मसूरी के प्रयोग से उत्पन्न रोगक्षमता (**Immunity**) १ वर्ष तक रहती है।

वक्तव्य—टायफायड एवं पाराटाफायड तथा कालरा के मिश्रित मसूरी का नाम भी T. A. B. C. होता है, जो इससे भिन्न है। अतएव इन दोनों का परस्पर भ्रम नहीं होना चाहिए।

टायफायड-पाराटायफायड ए एण्ड बी एण्ड कालरा वैक्सीन Typhoid-Paratyphoid A and B and Cholera Vaccine (T. A. B. and Cholera Vaccine), B. P. C.

यह मसूरी टायफायड (आन्त्रिकज्वर) के दण्डाणु या तृणाणु (S. typhi) तथा पाराटायफायड (उपांत्रिकज्वर) के जीवाणु (S. paratyphi A and B.) तथा मिश्रित विसूचिका-वक्राणुओं (Vibrio Cholerae) का विसंक्रमित एवं मिश्रित निलम्बन (Sterile mixed Suspension) होता है, जिसके १ मि० लि० या सी० सी० मात्रा में १,००० आंत्रिकज्वर के मृत जीवाणु एवं ५,००० या ७,५०० लक्ष उपांत्रिकज्वर के दोनों प्रकारों में से प्रत्येक प्रकार तथा ८०,००० लक्ष विसूचिका-वक्राणु होता है।

मात्रा—रोगप्रतिषेध के लिए पहली मात्रा ०·५ मि० लि० या ½ सी० सी० तथा १–४ सप्ताह बाद दूसरी मात्रा १ सी० सी०, अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा।

प्रयोग—इस वैक्सीन या मसूरी की विशेषता यह है, कि एक ही दवा से उक्त तीनों व्याधियों के उपसर्ग का प्रतिषेध किया जा सकता है। इससे उत्पन्न रोगक्षमता अल्पकालिक (**Short-lived immunity**) होती है। अतः यदि लगातार अधिक समय तक रोग के संक्रमण से बचने के लिए हर ६—१२ माह के बाद (प्रायः ६ठे महीने के बाद) पुनः सुई

(Inoculation) या टीका लेना पड़ता है। चूँकि छोटे बच्चों में हैजा का उपसर्ग प्रायः नहीं होता, अतएव १ वर्ष से कम वयवालों के लिए इसकी आवश्यकता नहीं है।

वैक्सिनम् कॉलेरेकम् Vaccinum Choleraicum (Vaccin. Choler.), I. P., B. P.—ले०; कॉलरा वैक्सीन Cholera Vaccine—अं०; हैजे का टीका—हिं० ।

वर्णन—कॉलरा-वैक्सीन या विसूचिका-मसूरी, विसूचिका-वक्राणुओं (Vibrio Choleræ) का विसंक्रमित निलम्बन (Sterile Suspension) होता है, जिसकी १ सी० सी० मात्रा में ८०,००० लक्ष विसूचिका-वक्राणु होते हैं।

मात्रा—रोगप्रतिषेध के लिए (Prophylactic)—प्रथम मात्रा ०'५ मि० लि० या ½ सी० सी० की तथा दूसरी मात्रा १ से २ सप्ताह बाद १ सी० सी० की अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा।

गुण-कर्म एवं प्रयोग

हैजे का टीका लगाने के बाद रोगक्षमता उत्पन्न होने में १ सप्ताह लग जाता है और इस प्रकार उत्पन्न क्षमता (Immunity) प्रायः ६ माह तक रहती है। इस प्रकार हैजे के मरक (Epidemic) से बचने के लिए यह अवधि पर्याप्त है।

वैक्सिनम् पेस्टिस फॉर्मोलिजेटम् Vaccinum Pestis Formolysatum (Vaccin. Pest. Formol.), I. P.—ले०; प्लेग वैक्सीन Plague Vaccie, B. P.

पर्याय—Formolised Anti-plague Vaccine, Hoffkine's Plague Vaccine—अं०; प्लेग की मसूरी याटीका—हिं० ।

वर्णन—यह लवणजल (Injection of Sodium Chloride : Normal Saline) में बनाया हुआ प्लेग के दण्डाणुओं (Pasteurella pestis) का निलम्बन होता है, जो हल्का भूरापन लिए गंदले द्रव (Brownish turbid liquid) के रूप में होता है। कभी कभी इस द्रव में कुछ फुजले (Flakes or clumps) भी दिखाई देते हैं। जीवाणुओं को मारने के लिए इसमें फार्मेल्डिहाइड (०'५ प्रतिशत w/v) मिलाया जाता है। संरक्षण—एन्टीप्लेग-वैक्सीन को ठंडी जगह में रखना चाहिए और निर्माण-तिथि से १८ महीने बाद यह प्रयोग के योग्य नहीं रह जाता। एन्टी-प्लेग वैक्सीन की १ सी० सी० मात्रा में २०,००० लक्ष प्लेग के दण्डाणु होते हैं।

मात्रा—रोगप्रतिषेध के लिए—(१) ब्रिटिश फॉर्माकोपिआ (B. P.) के अनुसार प्रथम मात्रा ०'५ मि० लि० (½ सी० सी०) तथा १ से ३ सप्ताह बाद दूसरी मात्रा १ मि० लि० (१ सी० सी०) की इन्जेक्शन द्वारा। (२) इन्डियन फॉर्माकोपिया (I. P.) के अनुसार प्रथम मात्रा १ मि० लि० तथा ७-१० दिन बाद दूसरी मात्रा भी १ मि० लि० की अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा दी जाती है। मरक (Epidemic) के समय यदि २ मात्राओं को देना सम्भव न हो तो १ ही मात्रा ३ मि० लि० (३ सी० सी०) की दी जा सकती है।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

टीका लगाने के लगभग १० दिन बाद रोगक्षमता उत्पन्न होती है, जो ६ माह तक रहती है। एक एम्पूल में वैक्सीन की अनेक मात्रायें होती हैं। एम्पूल तोड़ देने के बाद २४ घंटे के बाद

प्रयोग के योग्य नहीं रह जाता। अतएव एम्पूल खोलने पर इसका प्रयोग जल्दी ही कर देना चाहिए। ताजी अवस्था में प्लेग वैक्सीन में काफी तेजी होती है, और इन्जेक्शन (Inoculation) देने पर प्रतिक्रिया होने की सम्भावना अधिक रहती है। अतएव निर्माण-तिथि के बाद यदि ३ माह के अन्दर इसको प्रयुक्त करना हो तो, मात्रा अपेक्षाकृत कम दी जानी चाहिए।

वैक्सिनम पर्टसिस Vaccinum Pertussis (Vaccin. Pertussis.), I. P.—ले०; हूपिंगकफ-वैक्सीन Whooping Cough Vaccine, B. P.—अं०; कुक्कुरखांसी की मसूरी—हिं०।

वर्णन—यह लवणजल में बनाया हुआ कुक्कुरखांसी के दण्डाणुओं (Haemophilus pertussis or Whooping Cough bacilli) का निलम्बन होता है, जिसकी १ मि० लि० या १ सी० सी० मात्रा में १००,००० से २००,००० लक्ष तक कुक्कुरखांसी के दण्डाणु होते हैं। जीवाणुसंवर्धनावस्था में मारित रूप (Killed phase I.) में होते हैं। जीवाणुस्तम्भक (Batcerio-static) के रूप में इसमें ०·०१ प्रतिशत (W/V) थियोमरसलेट (Thiomersalate) होता है।

मात्रा—रोगप्रतिषेध के लिए २००,००० लक्ष जीवाणुयुक्त मसूरी या वैक्सीन की ४ सप्ताह के अन्तर से ३ मात्रायें दी जाती है (अधस्त्वक्‌मार्ग द्वारा)।

प्रयोग

कुक्कुरखांसी के वैक्सीन का प्रयोग रोग के प्रतिषेध के लिए सक्रिय क्षमता (Active immunity) उत्पन्न करने के लिए व्यवहृत होता है। चिकित्सा या रोगोन्मूलन (Curative agent) के रूप में इसका कोई महत्व नहीं है। कभी-कभी इस वैक्सीन के इनाक्युलेशन (इंजेक्शन) के बाद भयंकर कुपरिणाम लक्षित होते हैं। स्थानिक पीड़ा एवं शोथ आदि के अतिरिक्त मस्तिष्क के श्वेत वस्तु की विकृति (Encepalopathy) तथा जिस हाथ या पैर में इंजेक्शन दिया जाता है, उसमें पलित सुषुम्नाशोथ (Polio myelitis) तक उत्पन्न हो जाता है। अतएव इसका प्रयोग करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिए—(१) ६ माह से कम वय के बच्चों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए; (२) जिन बच्चों में नाड़ीसंस्थान की कोई आंगिक-विकृति (Organic nervous disease) हो या उसके कुटुम्ब में इसका इतिवृत्त मिलता हो, उनमें भी इसका प्रयोग नहीं होना चाहिए; (३) यदि उस क्षेत्र में पलितसुषुम्नाशोथ का इतिहास मिलता हो तो ऐसी स्थिति में भी प्रयोग न करें; (४) यदि बालक किसी विषाणुजन्य उपसर्ग का शिकार हुआ हो अथवा उससे रोगमुक्त होकर रोगोत्तर काल (Convalescent period) की स्थिति में हो; (५) व्याधि के संचयकाल (Incubation period) में भी इंजेक्शन नहीं करना चाहिए ; (६) यदि पहली मात्रा देने पर ही प्रतिक्रियास्वरूप कुपरिणाम लक्षित हुए हों तो आगे दूसरी मात्रायें नहीं देनी चाहिए।

बी० सी० जी० वैक्सीन (B. C. G. Vaccine), B. P.

(क्षय या राजयक्ष्मा का टीका)

पर्याय—वैक्सिनम् केलमेट—ग्वेरिन वेसिलस Vaccinum Calmette—Guerin Bacillus (Vacc.Calm-Guer. Bacil.), I. P.—ले०; वेसिलस केलमेट ग्वेरिन वैक्सीन Bacillus Calmette-Guerin Vaccine—अं०।

वर्णन—बी० सी० जी० वैक्सीन, उपर्युक्त माध्यम द्रव (Suitable medium) में बनाया हुआ केलमेट (Calmette) तथा ग्वेरिन (Guerin) के जीवित जीवाणुओं अर्थात् गव्यक्षय के जीवाणुओं का निलम्बन होता है। जीवाणु ऐसी स्थिति में रखे जाते हैं, कि मनुष्यों एवं प्रयोगशाला के जन्तुओं में प्रयुक्त होने पर किसी प्रकार की विकृति नहीं उत्पन्न करते। यह वैक्सीन बहुत जल्दी खराब होता है और निर्माण-तिथि के १४ दिन बाद प्रयोग के योग्य नहीं रहता। अतएव इसमें यह दोष है, कि प्रयोगशाला में, वैक्सीन बाहर भेजने के पूर्व, इसकी विशुद्धि (Sterility), उग्रता (Virulence) एवं विषाक्तता आदि का पूर्व-परीक्षण सम्भव नहीं होता। तथापि निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है—(१) उसमें ऐसे श्रेणी (Strain) के जीवाणु नहीं होने चाहिए कि गिनीपिग में प्रविष्ट कर परीक्षण करने पर उग्र राजयक्ष्मा उत्पन्न कर सकें; बाहर से (वायुमंडल से) यक्ष्मा-दण्डाणुओं का उपसर्ग वैक्सीन में न हो गया हो; अन्य विकारी जीवाणुओं का उपसर्ग न हो गया हो। इसके अतिरिक्त प्रयोगशाला में इसके संरक्षण (Preservtion) के प्रति काफी सतर्कता बरती जानी चाहिए। इसके निर्माणकेन्द्र संख्या में कम से कम होने चाहिए। इससे निर्माण का नियंत्रण किया जा सकता है और एकरूपिता स्थापित करने में सुविधा होती है।

वक्तव्य—इसके सम्पूल्स पर लगे सूचक-पत्र (Label) पर निम्न बातों का उल्लेख अवश्य होना चाहिए:—(१) कि वैक्सीन में गव्य-यक्ष्मा जीवाणुओं (Bacillus of Calmette and Guerin) की जीवित संवर्धन (Living culture) है; (२) निर्माण-तिथि; (३) १ मि० लि० में कितने मि० ग्रा० (Moist-weight) बेसिलाइ हैं; (४) विभिन्न वयवालों के लिए प्रयुक्त वैक्सीन की मात्रा क्या होनी चाहिए; (५) संग्रह एवं संरक्षण (Storage) विधि; (६) सूचक-पत्र पर उल्लिखित निर्माण-तिथि के १४ दिन के भीतर ही इसका प्रयोग हो जाना चाहिए तथा (७) एम्पूल खोल देने के बाद जो औषधि प्रयोग से बच जाय उसको फेंक देना चाहिए।

मात्रा—(I. P. &B. P. Dose)—इसका प्रयोग ०·१ मि० लि० (सी० सी०) की एक ही मात्रा में (Asa single dose) में त्वचान्तर्गत या अन्तस्त्वक् सूचिकाभरण (Intracutaneous injection) द्वारा। १ सी० सी० वैक्सीन में ०·०५ से ०·१ मि० ग्रा० (Moist weight) बेसिलाइ होते हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

बी० सी० जी० वैक्सीन के प्रयोग से राजयक्ष्मा के प्रति सक्रिय कृत्रिम रोगक्षमता (Active artificial immunity) पैदा होती है। इससे रोगी, आगे जीवन में कभी राजयक्ष्मा कीटाणुओं का प्रबल उपसर्ग होने पर उसका सामना करने में समर्थ हो जाता है। बी० सी० जी० वैक्सीन से उत्पन्न रोगक्षमता ३ से ५ वर्ष तक रहती है। इस वैक्सीन की उपयोगिता विशेषतः उन लोगों के लिए की जाती है, जो ऐसी परिस्थितियों में रहते हैं, जहाँ राजयक्ष्मा के उपसर्ग की आशंका या सम्भावना रहती है। अतः ऐसे कुटुम्ब के बालकों के लिए, जिनके कुटुम्ब में यक्ष्मा का इतिवृत्त हो, तथा यक्ष्मा के अस्पतालों एवं स्वास्थ्य-सदनों (Sanitoria) में काम करने वालों में इसका इनॉक्युलेशन उपयोगी हो सकता है। बी० सी० जी० वैक्सीन का प्रयोग अन्तस्त्वक् सूचिकाभरण (Intradermal injection) द्वारा किया जाता है अथवा जहाँ दवा लगानी हो, उस स्थल को साफ करके अभीष्ट मात्रा में वैक्सीन लेकर फैला दिया जाता है, और तब कई स्थलों पर सूचिका प्रविष्ट कर छिद्र बना दिया जाता (Multiple puncture)

है। अथवा तीसरी पद्धति यह भी है, कि वैक्सीन फैलाने के बाद चेचक के टीके की भाँति यंत्र विशेष से गुणा या धन का चिह्न बनाया जाता (Scarification) है। बी० सी० जी० वैक्सीन का प्रयोग करने के पूर्व व्यक्ति को परीक्षा ट्युबरक्युलिन परीक्षण-विधि द्वारा कर लेनी चाहिए। इसका प्रयोग केवल उन्हीं व्यक्तियों में करना चाहिए, जिनमें ट्युबरक्युलिन परीक्षा नास्त्यात्मक (Negative reactor) होती है। कभी-कभी टीका के स्थान पर शोथ एवं विद्रधि आदि का उपद्रव होता है।

वैक्सिनम् स्टेफिलोकाकिकम् Vaccinum Staphylococcicum (Vaccin. Staphylococcic.), I. P.—ले०; स्टेफिलोकोकस वैक्सीन Staphylococcus Vaccine—अं०। पूयजनक गोलदण्डाणुओं की मसूरी या वैक्सीन—हिं०।

वर्णन एवं उपयोग—यह स्टेफिलोकोकस ऑरियस (Staphylococcus aureus) नाम गोलदण्डाणु का विसंक्रमित निलम्बन होता है। इसके अतिरिक्त अन्य गोलदण्डाणुओं के मिश्रित-वैक्सीन (Mixed Vaccine) का भी उपयोग होता है। अब इस वैक्सीन के स्थान में स्टेफिलोकोकस टॉक्सायड (Staphylococcus Toxoid) का व्यवहार होने लगा है। स्टेफिलोकोकस वैक्सीन का प्रयोग उक्त जीवाणुओं के उपसर्ग से होनेवाली फुन्सियों (Furunculosis) के उपसर्ग में किया जाता है।

मात्रा—रोगशामक (Therapeutic)—१०० लाख से १०,००० लक्ष गोलदण्डाणु (Staphylococcus aureus), ३ से ७ दिन के अन्तर से (इंजेक्शन द्वारा)।

वैक्सिनम् ट्युबरक्युलिनम् Vaccinum Tuberculinum (Vacc. Tuberculin.), I. P—ले०; ट्युबरकिल वैक्सीन Tubercle Vaccine—अं०। यक्ष्मा की मसूरी या टीका—हिं०।

वर्णन तथा उपयोग—यह मानवीय यक्ष्माकीटाणुओं (Mycobacterium tuberculosis) का विसंक्रमित निलम्बन होता है। ध्यान रहे कि बी० सी० जी० वैक्सीन में जीवित गव्ययक्ष्मादण्डाणु होते हैं।

मात्रा—०·००००००१ मि० ग्रा० से ०·१ मि० ग्रा०, ३ से ७ दिन के अन्तर से इन्जेक्शन द्वारा।

(२) विषाणु-उपसर्ग एवं रिकेट्सिया-उपसर्ग-प्रतिषेधक मसूरी। (Virus and Rickettsial Vaccines]

वैक्सिनम् वैक्सिनिइ Vaccinum Vacciniae (Vaccin. Vacciniae.), I. P., B. p.—ले०; स्मालपॉक्स वैक्सीन Small-pox Vaccine—अं०। चेचक या मसूरिका की लस-मसूरी, चेचक का टीका—हिं०।

पर्याय—वैक्सिनम् एन्टिवेरिओलम् Vaccinum Antivariolum—ले०; वैक्सीन लिम्फ Vaccine Lymph.

प्राप्ति-साधन—मसूरिका या चेचक का लस (Vaccine lymph) प्राप्त करने के लिए पहले स्वस्थ जन्तुओं (यथा बछड़ा आदि) की त्वचा में मसूरिका-विषाणुओं (Vaccinia virus) का टीका लगाकर (Inoculation) पहले उनमें कृत्रिम रूप से मसूरिका का विस्फोट पैदा कराया जाता है। इस प्रकार का टीका प्रायः बछड़ों के उदर एवं जंघे की त्वचा में लगाया जाता है। टीका

लगाने के पहले एवं बाद में भी उस स्थान को गरम पानी तथा साबुन से अथवा विशोधित जल (Sterile water) से स्वच्छ करते रहते हैं। विस्फोटों में पीव आ जाने के बाद एक विशिष्ट प्रकार के चम्मच (Volkmann's Spoon) से उस पीव (Vaccinial material) को संग्रहीत कर लेते हैं। इसको पतला करने के लिए इसमें उचित मात्रा में ग्लिसरिन मिलाया जाता है, जिससे प्रति सी० सी० में जीवाणुओं की संख्या एक निश्चित स्तर तक रहती है। संरक्षण हेतु फिनोल (०·४% W/V) मिला देते है। इसके बाद लस को शीशे की नलिकाओं में वितरित कर उनका मुख अच्छी तरह बन्द कर दिया जाता है। वितरण के पूर्व प्रयोगशालाओं में परीक्षण द्वारा निश्चित कर लिया जाता है, कि इसमें बाह्य वायुमण्डल से एन्थ्राक्स वेसिलस (Bacillus anthracis), कोलाई वेसिलस (Bacterium Coli), टिटेनस के दण्डाणु (Clostridium tetani) एवं रक्तनाश मालादण्डाणुओं (B-haemolytic Streptococci) का उपसर्ग नहीं हुआ है।

वर्णन—मसूरिका का लस, रंगहीन गाढ़ेद्रव (Colourless viscid liquid) के रूप में होता है। ध्यानपूर्वक देखने से इसमें सफेद-सफेद अपारदर्शी (opaque) पदार्थ निलम्बन के रूप में दिखाई पड़ते हैं। १ मि० लि० (या १ सी० सी०) लस में अधिक से अधिक २०,००० जीवित सूक्ष्म जीवाणु (Micro-organisms) होते हैं। प्रयोग के लिए इसका वितरण एक मात्रिक (Holding one human dose) सूक्ष्म नलिकाओं (Glass capillary tubes) में अथवा सामूहिक प्रयोग के लिए बहुमात्रिक पात्रों (Multiple dose containers) में किया जाता है। इस क्रिया में विसंक्रमण एवं विशोधन का पूरा ध्यान रखा जाता है। प्रयोगशाला से बाहर भेजने के पूर्व लस का नमूना लेकर उसके वीर्य (Potency) का परीक्षण शशक (Rabbit) पर कर लिया जाता है।

संरक्षण एवं सूचक-पत्र सम्बन्धी विशेषता—मसूरिका के लस का संग्रह अत्यन्त शीत स्थान (0° C.) में करना चाहिए, अन्यथा इसकी क्रियाशीलता नष्ट हो जाती है। सूचक-पत्रक (Label) पर निम्न बातों का उल्लेख होना चाहिए—लस की निर्माण-तिथि (Date of manufacture); इसकी क्रियाशीलता (Potency) को बनाये रखने के लिए किन सावधानियों की आवश्यकता है, तथा निर्माता का नाम एवं पता।

मात्रा—०·०६ मि० लि० (या १ मिनम् अर्थात १ बूंद)। विधि—(Scarification) या (Multiple pressure method)।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

वैक्सीन-चिकित्सा में सबसे अधिक सफलता यदि किसी मरक को रोकने या निर्मूलन करने में मिली है, तो वह चेचक के टीके में मिली है। निर्दिष्ट रूप से इसका टीका लेने से प्रायः चेचक होने की आशंका नहीं के बराबर हो जाती है। इसीलिए पठित देशों में चेचक का टीका अनिवार्य कर दिया गया है। एतदर्थ प्रथम टीका बच्चा ३ महीने का हो जाय तो ३ से ६ महीने की आयु के भीतर लगवा देना चाहिए। इस प्रकार उत्पन्न रोगक्षमता ६—७ वर्ष तक रहती है। उसके बाद पुनः दूसरा टीका (Revaccination) लेना चाहिए। चेचक हो जाने पर यदि २-३ दिन के अन्दर टीका लगा दिया जाय तो इससे आक्रमण का शमन भी हो सकता है। टीका लगाने के बाद रोगक्षमता प्रायः एक सप्ताह के बाद उत्पन्न होती है।

प्रयोग-विधि–वैक्सिनेशन (Vaccinatjon) या टीका में चेचक के विषाणु त्वचा में प्रविष्ट किये जाते हैं। चेचक का टीका लगाने के लिए २ पद्धतियों का अवलम्बन किया जाता है—(Scarification) अथवा (Pressure inoculation)। इसमें दूसरी पद्धति (Multiple pressure technique) अधिक अच्छी समझी जाती है। इसका प्रयोग अधिक सुविधाजनक होता है, तथा रोगी को तकलीफ भी कम होती है। प्रथम टीका (Primary vaccination) लगाने के लिए प्रायः ऊर्ध्वबाहु (Outerside of the arm) अथवा ऊरु के पार्श्व तल का मध्य (near the middle of the lateral side of the thigh) अधिक उपयुक्त होता है। दुबारा टीका (Revaccination) के लिए अग्रबाहु का सम्मुख-तल (Ventral Surface of forearm) उपयुक्त होता है। जहाँ टीका लगाना हो उस स्थान को साबुन एवं गरम पानी से धोकर सुखा लें और सूखने पर ईथर का फोया लगावें। जब सूख जाय तो उस स्थान पर एक बिंदु लस डाल दें। अब टीका के दण्ड को, जिसके एक सिरे पर वृत्ताकार रेखा पर सुइयाँ लगी होता हैं, गोलाइ में हल्के हाथ घुमा दिया जाता है। यह क्रिया हल्के हाथ की जाती है और ध्यान रखा जाता है, कि खून न निकलने पावे। अथवा पहली पद्धति के अनुसार टीका लगाने के लिए लेनसेट (Lancet) के द्वारा धन (+) की तरह अथवा गुणित (×) की तरह निशान लगाये (Scarification) जाते हैं। टीका १ इंच के फासले से २ स्थानों पर लगाया जाता है। टीका की प्रतिक्रिया प्रथम टीका में ८ वें दिन तथा दूसरी टीका में तीसरे दिन लक्षित होती है। इस प्रतिक्रिया (दानों का निकलना) पर ही टीका की सफलता निर्भर करती है। यदि एक बार टीका लगाने पर प्रतिक्रिया न हो तो समझना चाहिए कि टीका सफल नहीं हुआ और दोबारा टीका लगा देना चाहिए।

टीकाजन्य प्रतिक्रियायें (Reactions of the smallpox-Inoculation)—(१) प्राथमिक प्रतिक्रिया (Primary reaction or Primary take)—यह स्थिति उन लोगों में होती है, जिनमें टीका के पूर्व चेचक के प्रति किसी प्रकार की रोगक्षमता उत्पन्न नहीं हुई रहती। टीका लगाने के ३–४ दिन बाद टीका के जगह पर सूजन होकर गाँठदार छोटा विस्फोट या उत्कर्णिक विस्फोट (Papule) निकलता है। इसके बाद ६ ठें या सातवें दिन इसमें पानी भर जाता है तथा फफोले के आकार का या उद्रविक (Vesicular) अवस्था को धारण करता है। दसवें या बारहवें दिन इसमें पूय या मवाद पड़ जाता (Pustular stage) है। इसके बाद मवाद अपने आप सूखकर वहाँ खुरण्ड (Crust) बन जाता है, जो २१ वें दिन के करीब अपने आप पृथक् हो जाता है। उक्त परिवर्तन टीका के स्थान पर चेचक या मसूरिका के विषाणुओं की स्थानिक वृद्धि के कारण होते हैं। इसके अतिरिक्त साधारण विषाणुमयता (Viraemia) की स्थिति भी हो सकती है।

(२) अनुग्रह-अवस्था (Vaccinoid Reaction)—यह स्थिति उन लोगों में होती है, जिनमें मसूरिका के प्रति कुछ रोगक्षमता पहले से मौजूद होती है। इसमें परिवर्तन तेजी से होते हैं, किन्तु उग्रता प्रथमावस्था की अपेक्षा कम, किन्तु तृतीय प्रकार की अपेक्षा अधिक होती है।

(३) तात्कालिक प्रभाव (Immediate Reaction)—यह स्थिति प्रायः मसूरिका के लस के प्रति अनूर्जा के परिणामस्वरूप (Allergic response) होती है। इसमें उपर्युक्त सभी अवस्थायें

होती हैं, किन्तु परिवर्तन बड़ी शीघ्रता से होते हैं, किन्तु कोई सामान्यकायिक विकृति (Constitutional disturbance) नहीं लक्षित होती।

प्रयोग-निषेध—ज्वर की अवस्था में, त्वचा पर दूषित क्षेत्र (Septic Skin) होने पर अथवा अनूर्जिक विचर्चिका (Allergic eczema) के रोगियों में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

वैक्सिनम् फेब्रिस फ्लेवी Vaccinum Febris Flavae (Vaccin. Febr. Flav.), I. P.—ले०; यलोफीवर वेक्सीन Yellw Fever Vaccine, B. P.—अं०। पीतज्वर मसूरी—हिं०।

वर्णन—यह मलाई के रंग का (Cream-Coloured) अथवा लाली लिए पीले रंग (Reddish-yellow) के शुष्क चूर्ण के रूप में होता है, अथवा सूक्ष्म एवं पतली पपड़ीदार टुकड़े या छोटे छोटे ढेलों (Solid Lumps) के आकार में होता है, जो जल एवं लवणजल में तुरंत घुल जाता है। इसको प्रयोग के समय विशोधित जल (Water for Injection) या लवणजल (Injection of Sodium Chloride) में घोलकर प्रयुक्त करते हैं।

मात्रा—रोगप्रतिषेध के लिए—कम से कम ५०० घातक मात्रायें (L D 50) [500 LD 50 Doses] अधस्त्वक् इंजेक्शन (Subcutaneous injection) द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

पीतज्वर-मसूरी के प्रयोग से, रोग के प्रति सक्रिय कृत्रिमक्षमता (Active artificial immunity) उत्पन्न होती है। यह क्षमता इंजेक्शन के प्रायः १० दिन बाद उत्पन्न होती तथा ६ वर्ष तक रहती है। पीतज्वर के प्रदेश से आनेवाले व्यक्तियों को आने के १२ दिन पूर्व इसका टीका अवश्य लगा देना चाहिए। यदि ऐसा न हुआ हो तो आने के बाद उस व्यक्ति का ६ दिन के लिए विलग्नीकरण करना चाहिए।

वेक्सिनम् टायफाइ इक्सेन्थिमेटिसाइ Vaccinum Typhi Exanthematici (Vaccin. Typh. Exanth.), I. P.—ले०; टायफस वैक्सीन, I. P., B. P.—अं०। तन्द्रिक-ज्वर-मसूरी या तन्द्रिक ज्वर का टीका—हिं०।

वर्णन—यह भी एक विषाणु-मसूरी (Viral vaccine) है, जो मृत टायफस रिकेटसिया विषाणुओं का विसंक्रमित निलम्बन (Sterile Suspension) होता है। टायफस वेक्सीन गंदले या धुँधले द्रव (Turbid Liquid) के रूप में होता है। देर तक रखा रहने से रिकेटसिया विषाणु सफेद रंग के चूर्ण के रूप में तलस्थित हो जाते हैं। किन्तु शीशी के हिलाने पर पुनः निलम्बन पूर्ववत् हो जाता है। संरक्षण (Storge)—टायफस वैक्सीन को अँधेरी जगह में ४° तापक्रम पर संग्रह करना चाहिए। इस प्रकार रखने से इसकी क्रियाशीलता (Potency) १ वर्ष तक बनी रहती है। इससे अधिक तापक्रम पर रखने से इसका वीर्य जल्दी नष्ट हो जाता है। विलयन जमना नहीं चाहिए।

सूचक-पत्रक (Label)—इसके सूचक-पत्रक पर निम्न बातों का उल्लेख होना

चाहिए—(१) प्राप्ति-साधन अर्थात् अंडे की जर्दी (Yolk sac) से अथवा अन्य किसी साधन से आदि; (२) निर्माण-तिथि तथा (३) संरक्षण सम्बन्धी निर्देश।

मात्रा—२·२५ से १ मि० लि० (¼ से १ सी० सी०) अधस्त्वक् इंजेक्शन द्वारा।

गुण तथा प्रयोग।

टायफस वैक्सीन के इंजेक्शन से जूँ के द्वारा प्रसारित मरक प्रकार के तन्द्रिक ज्वर (Epidemic-louse-borne typhus) तथा पिस्सू द्वारा प्रसारित अमरक प्रकार के तन्द्रिक ज्वर (Murine-flea-borne typhus) के प्रति रोगक्षमता उत्पन्न होती है। एतदर्थ १ सी० सी० की मात्रा में पहले एक इंजेक्शन दिया जाता है, और आवश्यकता होने पर ७-१० दिन बाद १ सी० सी० की दूसरी मात्रा भी दी जाती है।

वैक्सीनम् रेबीज कार्बोलिजेटम् Vaccinum Rabies Carbolisatum (Vaccin. Rabies Carbol.), I. P.—ले० कार्बोलाइज्ड एण्टी-रेबिक वैक्सीन Carbolised Anti-Rabic Vaccine—अं०।

पर्याय—कार्बोलाइज्ड रेबीज वेक्सीन Corbolised Rabies Vaccine; पाश्चर ट्रीटमेंट Pasteur Treatment; सेम्पलीज वैक्सीन Semple's Vaccine।

वर्णन—यह रेबीज के विषाणुओं (Virus of rabies) द्वारा उपसृष्ट उपयुक्त जन्तुओं के मस्तिष्क का लवणजल में बनाया हुआ विशोधित (Uncontaminated) निलम्बन होता है, जो सफेद या मटमैले सफेद रंग के धुँधले द्रव के रूप में होता है। इसमें फिनोल की हल्की बास या बू आती है।

मात्रा—(I. P. Dose)—२ से १० मि० लि० प्रतिदिन करके ७-१४ दिन तक अधस्त्वक् इंजेक्शन द्वारा। मात्रा का निर्धारण दंश (Bite) एवं रोग की गम्भीरता के आधार पर किया जाता है।

प्रयोग।

इसका प्रयोग मनुष्यों एवं जन्तुओं में होनेवाले रेबीज-विषाणुओं के उपसर्ग के प्रतिषेध (Prophylaxis of rabies) के लिए किया जाता है। कभी-कभी इस क्रम में अनेक उपद्रव लक्षित होते हैं, जिनको ध्यान में रखना आवश्यक है।

एन्टीटॉक्सिनम् डिफ्थेरिकम् Anitoxinum Diphthericum (Antitox. Diphtheric.), I. P.—ले०; डिफ्थीरिया एन्टीटॉक्सिन Diphtheria antitoxin, B. P.—अं०।

पर्याय—एण्टीडिफ्थीरिया सीरम् Antidiphtheria Serum; रोहिणी या डिफ्थीरिया प्रतिविष—हिं०।

प्राप्तिसाधन एवं वर्णन—डिफ्थीरिया एन्टिटॉक्सिन जान्तव सीरम या उससे व्युत्पन्न यौगिक होता है, जिसमें प्रतिविषवर्तुलि (Antitoxic globulins) या उसके यौगिक (Derivatives) होते हैं, जिनमें रोहिणी या डिफ्थीरिया के जीवाणु (Corynebactreium diphtheriae) के बहिर्विष (Toxins) को निष्क्रिय करने की विशिष्ट क्षमता होती है। सीरम पीले रंग का या पीला-

पन लिए भूरे रंग का होता है। प्रतिविषवर्तुलि (एन्टिटॉक्सिक ग्लोब्युलिन) का विलयन पीलापन लिए भूरे रंग का या हरिताभ-पीले रंग (Greenish-yellow) का होता है। दोनों के विलयन प्रारम्भ में पारदर्शक होते हैं, जो कालान्तर से पारभासी (opalescent) हो जाते हैं। इनका घन रूप (Solid forms) पीताभ-श्वेत (Yellowish-White) वर्ण का चूर्ण होता है, अथवा पीलापन लिए भूरे रंग के फ्लेक्स (Flakes) के रूप में होता है। १० गुने जल में विलीन करने पर विलयन उपरोक्त द्रव रूप की ही भाँति होता है।

मात्रा—(१) रोगप्रतिषेध के लिए (Prophylactic)—कम से कम ५०० से २००० युनिट; (२) चिकित्सा के लिए (Therapeutic)—१०,००० युनिट।

प्रयोग-विधि—इंजेक्शन द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

डिफ्थीरिया के प्रतिषेध (Prophylaxis) एवं चिकित्सा (Treatment) दोनों ही उद्देश्यों से यह बहुत उपयोगी है। किन्तु सफलता के लिए यह आवश्यक है, कि एन्टीटॉक्सिन का इन्जेक्शन रोग प्रारम्भ होते ही देना चाहिए। बल्कि रोग की आशंका होते ही, इंजेक्शन प्रारम्भ कर देना अधिक अच्छा है। इसके लिए लेबोरेटरी-रिपोर्ट की प्रतीक्षा में ही समय नहीं खो देना चाहिए। दूसरे जितनी जल्दी इन्जेक्शन प्रारम्भ कर देंगे, उतनी ही मात्रा कम देने पर भी काम चल जाता है। यदि रोग प्रारम्भ होने के दूसरे दिन तक चिकित्सा प्रारम्भ न की गई तो २०,००० से ४०,००० युनिट सीरम देना पड़ेगा, किन्तु यदि तीसरे दिन तक चिकित्सा प्रारम्भ न की गई हो, तो उतनी ही क्रियाशीलता के लिए ४०,००० से ६०,००० युनिट की आवश्यकता रहेगी, बल्कि रोग की गम्भीरता को देखकर १००,००० से २००,००० लाख युनिट तक देना पड़ता है। इन्जेक्शन पेशीगत मार्ग द्वारा अथवा शिरागत इन्जेक्शन द्वारा दोनों ही मार्गों में से आवश्यकतानुसार किसी मार्ग से दे सकते हैं। साधारण अवस्थाओं में पेशी में इन्जेक्शन दिया जाता है। यदि रोग गम्भीर हो या चिकित्सा में विलम्ब हो गया हो तो शिरामार्ग से इंजेक्शन दिया जाता है। यदि सीरम शिरामार्ग द्वारा देना हो तो उसमें तिगुना लवण-जल (Injection of Sodium Chloride) मिलाकर देना चाहिए। दूसरी बात ध्यान रखने की यह है, कि डिफ्थीरिया का प्रकोप बच्चों में अधिक प्रबल होता है। अतएव आयु के अनुसार मात्रा कम करके देने की भूल नहीं होनी चाहिए। प्रायः औषधि का प्रभाव प्रयोग के कम से कम २४ घंटे बाद लक्षित होता है। अतएव अभीष्ट प्रभाव न दीखने पर मात्रा दुहराई जा सकती है। लाभ होने पर रोगी में स्थानिक एवं सार्वदैहिक दोनों ही प्रकार के सुधार लक्षित होते हैं।

(डिफ्थीरिया के रोगप्रतिषेध (Prophylaxis) के लिए प्रयुक्त यौगिक)।

टॉक्सिनम् डिफ्थेरिकम् डिटॉक्सिकेटम् Toxinum Diphthericum Detoxicatum (Toxin. Diphtheric. Detoxicat.), I. P.—ले०; डिफ्थीरिया प्रोफाइलेक्टिक Diphtheria Prophylactic, I. P., B. P.—अं०।

वर्णन—डिफ्थीरिया प्रोफाइलेक्टिक, वास्तव में डिफ्थीरिया-विष (Diphtheria toxin) की विषाक्तता (Specific toxicity) को कम कर दिया जाता है, या उसका यौगिक होता है, जिसकी विषाक्तता

अथवा बिल्कुल नष्ट कर दिया जाता है। यह कार्य इसमें उपयुक्त रासायनिक द्रव्य (Chemical Substances) मिलाकर किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें डिफ्थीरिया प्रतिविष कभी मिलाया जाता है और कभी नहीं मिलाया जाता।

डिफ्थीरिया प्रोफाइलेक्टिक निम्न रूपों में प्राप्त होता है:—

(१) फॉर्मोलटॉक्सॉयड Formol Toxoid (F. T.) या एनाटॉक्सिन (Anatoxin)।

वर्णन—यह डिफ्थीरिया टॉक्सिन या उनके यौगिक का विलयन होता है, जो स्वच्छ, हल्के पीले रंग का या रंगहीन द्रव्यों के रूप में होता है। इसकी विषाक्तता फार्मल्डिहाईड सॉल्यूशन मिलाकर पूर्णतः नष्ट कर दी जाती है।

मात्रा— लेबिल पर निर्दिष्ट मात्रा के अनुसार पहली मात्रा दी जाती है। कम से कम ४ सप्ताह के बाद उतनी ही मात्रा फिर दी जाती है, अर्थात् दूसरी मात्रा—आवश्यकता पड़ने पर २ सप्ताह बाद तीसरी मात्रा दी जाती है।

प्रयोगविधि—पेशीगत या गम्भीर अधस्त्वक्सूचिकाभरण द्वारा (Intramuscular or deep Subcutaneous injection)।

(२) एलम् प्रेसिपिटेटेड टॉक्सायड Alum Precipitated Toxoid (A. P. T.)।

वर्णन—यह प्रायः रंगहीन द्रव में बनाये हुए सफेद या पीले रंग के सूक्ष्म कणों के निलम्बन के रूप में होता है। इसको बनाने के लिए फॉर्मोल टॉक्सायड में स्फटिका या एलम् मिलाने से प्राप्त प्रक्षेप (Precipitate) को लवण-जल (Injection of Sodium Chloride) में निलम्बित किया जाता है।

मात्रा—प्रथम मात्रा—०'२ से ०'५ मि० लि०; दूसरी मात्रा कम से कम ४ सप्ताह बाद ०'५ मि० लि० (½ सी० सी०) पेशीगत या गम्भीर अधस्त्वक्सूचिकाभरण द्वारा।

(३) प्योरिफायड टॉक्सायड, एल्युमिनम् फॉस्फेट Purified Toxoid, Aluminium Phosphate (P. T. A. P.)।

वर्णन—यह सूक्ष्म श्वेतकणों का प्रायः रंगहीन द्रव में निलम्बन होता है, जो प्योरिफायड फार्मोल टाक्सायड्, हाइड्रेटेड एलुमिनियम् फास्फेट तथा लवणजल (Injection of Sodium Chloride) को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है।

मात्रा—०'५ मि० लि० (½ सी० सी०) की २ मात्रायें ४ सप्ताह के अन्तर से दी जाती हैं।

प्रयोग-विधि—पेशीगत अथवा गम्भीर अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा।

(४) टॉक्सायड-एन्टीटॉक्सिन फ्लॉक्युलस Toxoid-Antitoxin Floccules (T. A. F.)।

वर्णन—यह भी एक रंगहीन द्रव में बनाये हुए सूक्ष्म सफेद रंग के कणों के निलम्बन के रूप में होता है।

मात्रा—(१) पहली मात्रा १ मि० लि० या १ सी० सी० की; (२) दूसरी मात्रा ४ सप्ताह बाद १ मि० लि० की तथा (३) तीसरी मात्रा २ सप्ताह बाद १ मि० लि० की पेशीगत या गम्भीर अधस्त्वक्सूचिकाभरण द्वारा।

(५) नेचुरल एडजुवेंट फैक्टर टॉक्सायड Natural Adjuvant Factor Toxoid (N. A. F. T.), I. P.

मात्रा—(१) पहली मात्रा ०·५ मि० लि० की तथा (२) दूसरी मात्रा ४ सप्ताह बाद ०·५ मि० लि० को अधस्त्वक्सूचिकाभरण द्वारा।

प्रयोग।

यदि सतर्कतापूर्वक प्रतिषेधक द्रव्यों (Prophylactic) का पहले से प्रयोग किया जाय तो डिफ्थीरिया से बचत (Prevention) हो सकती है। एतदर्थ या तो डिफ्थीरिया-प्रतिविष का प्रयोग कर सकते हैं, अथवा उपर्युक्त डिफ्थीरिया प्रतिषेधक यौगिकों (Diphtheria prophylactics) में से किसी का प्रयोग कर सकते हैं।

सीरम द्वारा डिफ्थीरिया-प्रतिषेध (Sero-prophylaxis)—जिन व्यक्तियों, विशेषतः बालकों में डिफ्थीरिया का उपसर्ग सम्भावी हो उनकी बचत के लिए (क्षमता उत्पन्न करने के लिए) एन्टिटॉक्सिन का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए १००० से २००० युनिट एन्टिटॉक्सिन अधस्त्वक् इंजेक्शन द्वारा दे सकते हैं। इससे तत्काल क्षमता उत्पन्न होकर ३ सप्ताह तक रहती है। किन्तु इसके पहिले 'शिक की परीक्षा' द्वारा रोगी का परीक्षण कर लेना चाहिए और परीक्षाफल पॉजिटिव या अस्त्यात्मक होने पर ही इनको देने की आवश्यकता है।

डिफ्थीरिया-प्रतिषेधक यौगिक (Diphtheria prophylactics)—इनके प्रयोग से सक्रिय क्षमता (Active immunity) पैदा होती है। इसका सामूहिक रूप से प्रयोग डिफ्थीरिया के मरक (Epidemic) के निवारण के लिए किया जाता है। क्षमता उत्पन्न हुई या नहीं इस बात का निर्णय 'शिक की परीक्षा' द्वारा किया जा सकता है। इन व्यक्तियों में पहले 'शिकपरीक्षा' पाजिटिव्ह थी, उनमें रोग-क्षमता उत्पन्न होने पर इन्जेक्शन के बाद 'शिकपरीक्षा' नास्त्यात्मक या निगेटिव्ह (Negative) हो जाती है। डिफ्थीरिया के प्रति सक्रिय रोगक्षमता उत्पन्न करने के लिए सर्वप्रथम फार्मोल टॉक्सायड का निर्माण किया गया था, किन्तु अधिक विषैला होने के कारण बाद में इसका परित्याग कर दिया गया और अब उसके स्थान में अन्य उपलब्ध अपेक्षाकृत कम विषैले यौगिकों का व्यवहार होने लगा है। इनमें एलम-प्रेसिपिटेटेड टॉक्सायड (A. P. T.) तथा प्योरिफायड टॉक्सायड, एलुमिनियम् फास्फेट (P. T. A. P.) का प्रयोग बच्चों के लिए टी० ए० एफ० (T. A. F.-ie. Toxoid Antitoxin Floccules) का प्रयोग युवा व्यक्तियों के लिए अधिक उपयुक्त होता है। ए० पी० टी० (A. P. T.) द्वारा उत्पन्न क्षमता अधिक स्थायी होती है, किन्तु इसके प्रयोग में स्थानिक उपद्रव यथा विद्रधि-निर्माण की आशंका अधिक रहती है। कुछ व्यक्तियों में प्रोटीन के प्रति अनूर्जिक प्रवृत्ति (Allergic tendency) पाई जाती है। अतएव प्रयोग के पूर्व इसका परीक्षण (Moloneytest) कर लेना चाहिए। जिनमें ऐसी प्रवृत्ति न हो उनको ए० पी० टी० (A. P. T.) अन्यथा होने पर टी० ए० एफ० (T. A. F.) दें।

आजकल क्षमतोत्पादन के लिए ऐसे योग मिलने लगे हैं, जिसमें एक ही यौगिक में एक से अधिक व्याधियों यथा डिफ्थीरिया के साथ टिटेनस एवं कुकुरखाँसी आदि के भी क्षमतोत्पादक घटक होते हैं।

(नॉन-ऑफिशल योग)

१—डिफ्थीरिया टॉक्सायड एण्ड परटसिस वैक्सीन कम्बाइण्ड Diphtheria Toxoid and Pertussis Vaccine Combined। यह उपयुक्त मात्रा में डिफ्थीरिया टॉक्सायड एवं कुकुरखांसी की मसूरी को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है।

मात्रा—तीन-तीन या चार-चार सप्ताह के अन्तर से अधस्त्वक् मार्ग द्वारा ०·५ से १ सी० सी० की ३ मात्रायें दी जाती हैं।

२—डिफ्थीरिया टॉक्सायड एण्ड परटिसिस वैक्सीन कम्बाइन्ड अलुमिनियम् हाइड्राक्साइड एडसॉर्ब्ड Diphtheria Toxoid and Pertussis Vaccine Combined Aluminium Hydroxide Adsorbed। यह डिफ्थीरिया टॉक्सायड एवं कुकुरकास वैक्सीन (Pertussis Vaccine) एवं अलुमिनियम् हाइड्राक्साइड का विसंक्रमित मिश्रण (Sterile mixture) होता है।

मात्रा—०·५ सी० सी० की ३ मात्रायें अधस्त्वक् इंजेक्शन द्वारा।

३—डिफ्थीरिया एण्ड टिटेनस टॉक्सायड्स एण्ड परटसिस वैक्सीन कम्बाइन्ड, एलम् प्रेसिपिटेटेड Diphtheria and Tetanus Toxoids and Pertussis Vaccine Combined Alum Precipitated, U. S. P.। यह डिफ्थीरिया एवं टिटेनस टॉक्सायड तथा परटसिस वैक्सीन के मिश्रण में एलम् मिलाने से प्राप्त प्रक्षेप का विसंक्रमित निलम्बन (Sterile Suspension) होता है।

मात्रा—०·५ से १ सी० सी० की ३ मात्रायें अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा।

४—डिफ्थीरिया एण्ड टिटेनस टॉक्सायड्स एण्ड परटसिस वैक्सीन कम्बाइन्ड, एलुमिनियम् हाइड्राक्साइड एडजार्ब्ड (U. S. P.)।

मात्रा—तीन-तीन या चार-चार सप्ताह के अन्तर से ०·५ से १ सी० सी० मात्रा करके ३ मात्रायें अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा।

टॉक्सिनम् डिफ्थेरिकम् डायग्नोस्टिकम् Toxinum Diphthericum Diagnosticum (Toxin. Diphtheric. Diagnost.), I. P.—ले०; 'शिक' टेस्ट टॉक्सिन Schick Test Toxin, B. P.—अं०।

वर्णन—यह एक प्रतिक्रियाजनक द्रव्य (Reagent) है, जिसका उपयोग व्यक्ति विशेष में डिफ्थीरिया के प्रति संवेदनशीलता (Susceptibility) के परीक्षण के लिए किया जाता है। यह वर्द्धन किए गए डिफ्थीरिया के जीवाणुओं का विसंक्रमित निस्पंद (Sterile filtrate of broth Culture of C. diphtheriae) होता है। प्रयोगोपयुक्त बनाने के लिए इसमें लवणजल अथवा अन्य उपयुक्त द्रव मिलाकर पतला (डायल्यूट) कर लिया जाता है, ताकि ०·२ मि० लि० द्रव में परीक्षा के लिए अभीष्ट मात्रा होती है। विशुद्ध रूप (undiluted form) में यह पीले रंग का द्रव होता है, जो डायल्यूट कर देने पर स्वच्छ, रंगहीन द्रव के रूप में प्राप्त होता है। डायल्यूशन के लिए जो भी द्रव मिलाया जाता है, उसमें ध्यान रखा जाता है, कि इसके मिलाने पर प्राप्त विलयन सॉल्यूशन रक्त के साथ सम-बल (Isotonic with blood) रहे।

मात्रा--(B. P., I. P.) निदान के लिए (Diagnostic)—०·२ मि० लि० का त्वचान्तर्गत इंजेक्शन (Intracutaneous injection) ।

टॉक्सिनम् डिफ्थेरिकम् केलिफेक्टम् Toxinum Diphthericum Calefactum (Toxin. Diphtheric. Colefact.), I. P.—ले०; शिक-कन्ट्रोल Schick Control, B. P.—अं० ।

वर्णन--यह वास्तव में 'शिक परीक्षा' के लिए प्रयुक्त डिफ्थीरिया का निष्क्रिय विष (Schick test toxin) ही होता है, जो ७०° सें० से ८५° सें० के बीच तापक्रम पर ५ मिनट तक गरम किया गया हुआ होता है ।

मात्रा--निदान के लिए--०·२ मि० मि० त्वचान्तर्गत इंजेक्शन द्वारा ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग ।

'शिक' की परीक्षा के लिए अग्रबाहु के सम्मुख-तल पर त्वचा को अल्कोहल् के फोये से साफ करके ०·२ मि० लि० 'परीक्षा-विष Test-toxin' का त्वचान्तर्गत इन्जेक्शन कर दिया जाता है। साथ ही दूसरे बाहु पर 'शिक कन्ट्रोल' के ०·२ मि० लि० मात्रा का भी उसी विधि से इन्जेक्शन कर दिया जाता है। २४ से ४८ घंटे के बाद दोनों परीक्षाओं की प्रतिक्रिया का निरीक्षण किया जाता है। परीक्षा अस्त्यात्मक (पॉजिटिव् positive) होने का अर्थ यह होता है, कि व्यक्ति डिफ्थीरिया के प्रति सेन्सिटिव् (Sensitive) है। यदि परीक्षा-विष के स्थान पर लालिमा (१० से ४० मि० मि० व्यास का) मय चकत्ता प्रगट हो, किन्तु कन्ट्रोल के स्थान पर कोई परिवर्तन न हो, तो यह अस्त्यात्मक या पॉजिटिव् परीक्षाफल का द्योतक होता है। ६ माह से लेकर ८ वर्ष तक के वय के बालकों में यह परीक्षा प्रायः अस्त्यात्मक या पॉजिटिव् होती है। अतएव उनमें इस परीक्षा के प्रयोग की आवश्यकता नहीं है। ५-७ दिन के बाद पुनः उस स्थान के अस्त्यात्मक लक्षणों (Late positive reactions) का निरीक्षण किया जाता है। इस बीच परीक्षा पाजिटिव् होने पर उस स्थान का रंग और भी गाढ़ा होकर भूरे रंग का हो जाता है और बाद में उस स्थल की बाह्य त्वचा का निस्तरण भी (Pigmentation and Desquamation before fading) होता है। उस स्थान पर सूक्ष्म रेखायें (Fine linear striae) भी दिखलाई देती हैं। क्षमतोत्पत्ति के लिए इन्जेक्शन केवल उन्हीं व्यक्तियों में दिया जाता है, जिनमें 'शिक की परीक्षा' अस्त्यात्मक या पाजिटिव् होती है।

एन्टीटॉक्सीनम् टिटेनिकम् Antitoxinum Tetanicum (Antitox. Tetan.), I. P.—ले०; टिटेनस एन्टीटॉक्सिन Tetanus Antitoxin, I. P., B. P.—अं० । धनुर्वात का प्रतिविष—हिं० ।

वर्णन—यह सीरम का यौगिक होता है, जिसमें प्रतिविष-वर्तुलि (Antitoxic globulins) या उसके यौगिक होते हैं। इसमें धनुर्वात के जीवाणुओं (Clostridium tetani) के बहिर्विष को निष्क्रिय करने का विशिष्ट प्रभाव होता है।

मात्रा—(B. P., I. P. Dose)—(१) रोग-प्रतिषेध के लिए-कम से कम १५,०० युनिट; (२) चिकित्सा के लिए-कम से कम ५०,००० । प्रयोग विधि—इंजेक्शन द्वारा ।

वक्तव्य—यहाँ उल्लिखित युनिट से तात्पर्य १९५० के अन्तर्राष्ट्रीय युनिट (I. U.) से है, जिसका एक युनिट बराबर है १९२८ के २ अन्तर्राष्ट्रीय युनिट के।

टॉक्सिनम् टिटेनिकम् डिटॉक्सिकेटम् Toxinum Tetanicum Detoxicatum (Toxin. Tetanic. Detoxicat.), I. P.—ले०; टिटेनस टॉक्सायड Tetanus Toxoid, I. P., B. P—अं०। धनुर्वात का निर्वीर्यविष—हिं०।

वर्णन—यह धनुर्वात के जीवाणुओं का बहिर्विष (Tetanus toxin) या उसका द्रव-योग (Liquid preparation) होता है, जिसकी विषाक्तता को रासायनिक द्रव्य मिलाकर नष्ट कर दिया जाता है। किन्तु विषाक्तता नष्ट होने पर भी इसमें क्षमताजनक प्रतियोगी तत्वों के पैदा करने का प्रभाव (Properties as an immunising agent) बना रहता है। यह निम्न रूपों में उपलब्ध होता है:—

(१) टिटेनस टॉक्सायड इन सिम्पुल सॉल्यूशन (Tetanus Toxoid in simple solution)-यह स्वच्छ पीला या रंगहीन द्रव होता है, जिसमें किसी प्रकार के कण नहीं होते। इसमें फार्मेल्डिहाइड सॉल्यूशन मिलाया हुआ होता है।

(२) एलम् प्रेसिपिटेटेड टिटेनस टॉक्सायड Alum Precipitated Tetanus Toxoid (A. P. T. T.)—यह सफेद अथवा हल्के पीले या पीताभ-भूरे रंग के कणों के स्वच्छ द्रव में बनाये हुए निलम्बन के रूप में होता है। टिटेनस टाक्सायड में एलम् मिलाने से जो प्रक्षेप प्राप्त होता है, उसी को लवण-जल में निलम्बित करते हैं।

मात्रा—(१) प्रथम मात्रा—०.५ से १ मि० लि० (८ से १५ बूंद) तथा दूसरी मात्रा कम से कम ६ सप्ताह बाद १ मि० लि० (१५ बूंद) अधस्त्वक् या पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

वक्तव्य—यदि प्रकार का स्पष्ट उल्लेख न हो तो साधारणतया 'टिटेनस टॉक्सायड सिम्पुल सॉल्यूशन' ही देना चाहिए।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

टिटेनस एन्टीटॉक्सिन—टिटेनस एन्टिटॉक्सिन या धनुर्वात के प्रतिविष का उपयोग धनुर्वात के प्रतिषेध (Prophylaxis) एवं चिकित्सा दोनों ही कार्यों के लिए किया जाता है। एक बार धनुर्वात के विष द्वारा मस्तिष्क-सुषुम्ना के प्रभावित हो जाने पर रोगमुक्ति बहुत ही कठिन होती है। अतएव कहीं साधारण चोट-चपेट लग जाने पर रोग प्रतिषेध के लिए टिटेनस एन्टिटॉक्सिन का इंजेक्शन लगा देना श्रेयष्कर होता है। एतदर्थ १५०० से ३००० युनिट (१५६०) की एक मात्रा पर्याप्त होती है। चिकित्सा के लिए टिटेनस एन्टिटॉक्सिन से उसी समय सफलता की आशा रहती है, जब इसका प्रयोग व्याधि प्रारम्भ होते ही किया जाता है। क्योंकि एक बार केन्द्रिक नाड़ी संस्थान के धातुओं में विष के स्थिर हो जाने पर धनुर्वात के प्रतिविष का उस पर कोई असर नहीं पड़ता। चिकित्सा के लिए प्रारम्भ में ही अधिक मात्रा देना अच्छा होता है। यथा ५०,००० युनिट शिरागत इन्जेक्शन द्वारा और यदि पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त करना हो तो मात्रा दुगनी (१००,००० युनिट) लेनी चाहिए। इसके बाद प्रतिदिन ५,००० से ४०,००० युनिट (I. U. 1950) देते रहना चाहिए जब तक कि व्याधि के सब लक्षणों का शमन न हो जाय। इसका प्रयोग सुषुम्नान्तर्गत इन्जेक्शन द्वारा नहीं करना चाहिए।

चिकित्सार्थ प्रयुक्त प्रतिविष-वर्तुलि (Antitoxic globulins) के द्रव-योग में १ मि० लि० में कम से कम ३००० युनिट की शक्ति तथा शुष्क योग (Dried preparation) में प्रति-ग्राम १५,००० युनिट की शक्ति अवश्य होनी चाहिए।

टिटेनस टॉक्सायड—माली, बढ़ई आदि ऐसे व्यक्तियों में जिनमें चोट-चपेट लगने की आशंका रहती है, टिटेनस टॉक्सायड का प्रयोग सक्रिय क्षमता उत्पन्न करने के लिए (Active immunisation) किया जाता है। इस प्रकार उत्पन्न क्षमता लगभग १ वर्ष तक रहती है। चूंकि रोग प्रतिषेध के लिए इंजेक्शन का क्रम १ माह में पूरा होता है, अतएव पूर्णतः क्षमता पैदा होने में भी यही समय अपेक्षित होता है। प्रयोग के लिए साधारणतः सिम्पुल सॉल्यूशन अधिक उपयुक्त होता है। टी० ए० बी० टी० (T. A. B. T.)—टिटेनस टॉक्सायड एवं टायफायड वैक्सीन में मिश्रित योग है। इसके प्रयोग से दोनों व्याधियों के प्रति रोगक्षमता एक ही प्रयोग से उत्पन्न हो सकती है।

एन्टिटॉक्सिनम् ईडिमेटिएन्स Antitoxinum Oedematiens (Antitox. Oedemat.) I. P.—ले०; गैसगेंग्रीन—एन्टीटॉक्सिन Gas-gangrene Anti-toxin. (Oedimatiens) B. P.—अं०। वातकर्दमनाशक प्रतिविष—हिं०।

पर्याय—Anti-gas-gangrene (Oedematiens) Serum (Ph. Int.)—I. P.

वर्णन—यह सीरम (Native Serum) या सीरम-यौगिक होता है। जिसमें प्रतिविष-वर्तुली (Antitoxic globulins) या उनके यौगिक (Derivatives) होते हैं। इनमें वातकर्दम के जीवाणुओं (Clostridium oedematiens) के बहिर्विष (alpha-toxin) को निष्क्रिय करने का विशिष्ट प्रभाव होता है। इसका उपयोग मिश्रित गैस-गेंग्रीन एन्टीटॉक्सिन (Mixed gas-gan-grene Antitoxin) के निर्माण में किया जाता है।

सक्रियता (Potency)—(१) एन्टीटॉक्सिक सीरम के द्रव-योग में प्रति मि० लि० में १००० युनिट (I. U.) की तथा शुष्क-योग (Dried native antitoxic serum) में प्रति ग्राम १०,००० युनिट की सक्रियता होता है। (२) एन्टीटॉक्सिक ग्लोब्युलिन्स के द्रव-योग में प्रति मि० लि० में ५००० युनिट तथा शुष्क-योग के प्रति ग्राम में २०,००० युनिट की शक्ति होती है।

मात्रा—(I. P., B. P.)—(१) रोग प्रतिषेध के लिए १०,००० युनिट तथा (२) चिकित्सार्थ कम से कम २०,००० युनिट। प्रयोग-विधि—इन्जेक्शन द्वारा।

एन्टीटॉक्सिनम् वेल्चिकम् Antitoxinum Welchicum (Antitox. Welchic.), I. P.—ले०; गैस-गेंग्रीन एन्टीटॉक्सिन (वेल्चियाइ) Gas-gangrene Antitoxin (Welchii), B. P. गैस-गैंग्रीन एन्टीटॉक्सिन (परफ्रिजेन्स Perfrin-gens)—अं०।

पर्याय—Anti-gas-gangrene (Perfringens) Serum (Ph. Int.), I. P.

वर्णन—इसमें क्लास्ट्रिडियम् वेल्चियाइ (Clostridium welchii) नामक वातकर्दम जीवाणु के बहिर्विष (Alpha-toxin) को निष्क्रिय करने का प्रभाव होता है।

शक्ति (Potency)—(१) सीरम—प्रति मि० लि० में ३०० युनिट तथा प्रति ग्राम में ३००० युनिट; (२) एन्टीटॉक्सिक ग्लोबुलिन्स—प्रति मि० लि० में १५०० युनिट तथा प्रति ग्राम में ६००० युनिट।

वक्तव्य—यह 'मिक्सड गैस-गेंग्रीन एन्टीटॉक्सिन' में पड़ता है।

मात्रा—(I. P., B. P.)—(१) रोग प्रतिषेधार्थ—१०,००० युनिट तथा रोगचिकित्सार्थ—कम से कम ३०,००० युनिट इंजेक्शन द्वारा।

एन्टीटॉक्सिनम् सेप्टिकम् Antitoxinum Septicum (Antitox. Septic.), I. P.—ले०; गैस-गेंग्रीन एन्टीटॉक्सिन (सेप्टिकम्) Gas-gangrene Antitoxin (Septicum), B. P.—अं०।

पर्याय—Gas-gangrene Antitoxin (Vibrion Septiq); Anti-gas-gangrene (Septicum) Serum (Ph. Int.)—I. P.

वर्णन—इसमें क्लास्ट्रिडियम् सेप्टिकम् (Colostridium septicum) या बिब्रिओन सेप्टिक (Viberion Septique) मूषकघातक बहिर्विष के निष्क्रिय करने का प्रभाव होता है।

शक्ति (Potency)—(१) सीरम के योग—प्रति मि० लि० में ३०० युनिट तथा प्रतिग्राम ३,००० युनिट; (२) ग्लोब्युलिन के योग—प्रति मि० लि० में १५०० युनिट की तथा प्रतिग्राम में कम से कम ६००० युनिट की।

वक्तव्य—यह भी 'मिक्स्ड गैस-गेंग्रीन एन्टीटॉक्सिन Mixed Gas-gangrene Antitoxin' में पड़ता है। मात्रा (I. P., B. P.)—(१) रोग-प्रतिषेधात्मक—५००० युनिटि, तथा (२) चिकित्सार्थ कम से कम १५,००० युनिट सूचिकाभरण द्वारा।

मिक्सड गैस-गेंग्रीन एन्टी टॉक्सिन Mixed Gas-gangrene Antitoxin, B. P.—अं०; एन्टिटॉक्सिनम् गैस-गेंग्रेनियोजम् कम्पाजिटम् Antitoxinum Gas-gangraneosum Compositum—ले०। वातकर्दम का सम्मिश्रित प्रतिविष—हिं०।

वर्णन—यह उपर्युक्त तीनों प्रकार के वातकर्दमजनक जीवाणुओं के प्रतिविष (Antitoxins) को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है।

शक्ति (Potency)—एन्टिटॉक्सिक सीरम एवं ग्लोब्युलिन्स तथा उनके व्युत्पन्नयौगिकों के द्रव-योग—प्रति मि० लि० में (१) वेल्चियाइ का १००० युनिट प्रति मि० लि०; (२) ईडेमेटियन्स का १००० युनिट (प्रति मि० लि०) तथा सेप्टिकम् का ५०० युनिट प्रति मि० लि० होता है।

(२) सीरम एवं ग्लोब्युलिन्स के शुष्क-योगों में—प्रतिग्राम में वेल्चियाइ की ५००० युनिट, ईडिमेटिएन्स की ५००० युनिट तथा सेप्टिकम् की २५०० युनिट की शक्ति होती है।

मात्रा (B. P. Dose)—(१) रोग प्रतिषेधार्थ; वेल्चियाई एवं ईडिमेटिएन्स प्रकार के एन्टीटॉक्सिन की प्रत्येक की १०,००० युनिट तथा सेप्टिकम् प्रकार के एन्टीटॉक्सिन की ५००० युनिटि।

(२) चिकित्सार्थ—वेल्चियाई एवं ईडिमेटिएन्स प्रकारों के एन्टीटॉक्सिन की प्रत्येक की ३०,००० युनिट तथा सेप्टिकम् प्रकार की १५,००० युनिट।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

चिकित्सा-व्यवहार की दृष्टि से वातकर्दम का मिश्रित प्रतिविष (Mixed Gas-gangrene antitoxin) विशेष महत्त्व का है। क्योंकि प्रायः इनका मिश्रित उपसर्ग ज्यादा मिलता है। दूसरे जीवाणु विशेष का विनिश्चय भी मुश्किल होता है। ऐसी स्थिति में मिश्रित-प्रतिविष का ही प्रयोग अधिक सुरक्षित है। इसका प्रयोग रोग-प्रतिषेध (Prophylaxis) एवं रोग हो जाने पर उसके शमन हेतु (Therapeutic purposes) दोनों ही उद्देश्यों से होता है। साधारण अवस्थाओं में औषधि पेशीगत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त की जाती है, किन्तु आत्ययिक अवस्थाओं में इसका प्रयोग शिरामार्ग से भी किया जाता है।

उक्त गैस-गैंग्रीनजनक तीनों प्रकार के जीवाणुओं में क्लास्ट्रिडियम् वेल्चियाइ प्रकार मनुष्य की आँतों में भी पाया जाता है। अतएव उदर पर शस्त्रकर्म करने के पश्चात् ये उदर्या-कला-शोथ (peritonitis) तथा आंतों का क्रियाघात (Intestinal paralysis) आदि घातक उपद्रव कर सकता है। अतएव उग्र आन्त्रावरोध (Acute Intestinal obstruction), आन्त्रपुच्छशोथ (Appendicitis) एवं उग्र उदर्याकलाशोथ (Acute peritonitis) आदि व्याधियों में शस्त्रकर्म के पूर्व अनागतबाधा-प्रतिषेध (prophylaxis) के लिए १०,००० युनिट का शिरागत इन्जेक्शन कर दिया जाता है। इसके बाद अपेक्षाकृत कम मात्रा पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा दिया जाता है। चिकित्सा के हेतु अधिक मात्राओं (४०,००० युनिट) की आवश्यकता पड़ती है।

एन्टीटॉक्सिनम् स्कारलेटिनम् Antitoxinum Scarlatinum (Anti-tox. Scarlat.)—ले०; स्कारलेट फीवर एन्टीटॉक्सिन Scarlet fever antitoxin, B. P.—अं०। लोहितज्वर का प्रतिविष।

वर्णन—इसमें स्ट्रेप्टोकोकस पायोजेनीज (Streptococcus pyogenes) जन्य लोहितज्वर (Scarlet fever) में जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न रक्तकणनाशक विष (Erythrogenic toxin : Scarlet fever toxin) को निष्क्रिय करने का प्रभाव होता है।

मात्रा (B. P.)—(१) रोग-प्रतिषेधात्मक—१'५०० से २००० युनिट; चिकित्सार्थ—२००० से ४०,००० युनिट इन्जेक्शन द्वारा।

टॉक्सिनम् स्कारलेटिनम् डिटॉक्सिकेटम् Toxinum Scarlatinum Ditoxicatum—ले०; स्कारलेट फीवर प्रोफाइलेक्टिक Scarlet fever Prophy-lactic, B. P.—अं०। लोहितज्वर प्रतिषेधक निष्क्रिय विष।

मात्रा (B. P.)—२५० से १००,००० त्वचीय प्रतिक्रिया मात्राओं (Skintest doses : STD) में प्रति सप्ताह एक बार करके त्वचाधः या पेशीगत कई (४-५ सप्ताह तक) इन्जेक्शन दिये जाते हैं।

प्रयोग।

लोहित ज्वर प्रायः भारतवर्ष में नहीं होता। अतएव इस देश की दृष्टि से यह प्रतिविष विशेष महत्व का नहीं है। वैसे चिकित्सा में इसके ३ मुख्य उपयोग हैं—(१) लोहितज्वर की चिकित्सा के लिए; (२) निष्क्रिय क्षमतोत्पादन के लिए (Passively immunising suscepti-

ble individuals) तथा (३) सूज चार्ल्टन प्रतिक्रिया (Schultz-charlton reaction) द्वारा अन्य विस्फोटक ज्वरों से लोहितज्वर के सापेक्ष निदान के लिए।

टॉक्सिनम् स्टेफिलोकोकिकम डिटॉक्सिकेटम् Toxinum Staphylococcicum Detoxicatum (Toxin. Staphylococc. Detoxicat.), I. P.—ले; स्टेफिलोकोकस टॉक्सायड Staphylococcus Toxoid—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह गोलदण्डाणुओं अर्थात् स्टेफिलोकोकस का विष (टॉक्सिन) या उसका यौगिक होता है, जिसकी विषाक्तता उपयुक्त रासायनिक द्रव्यों को मिलाकर नष्ट कर दी जाती है। किन्तु विषाक्तता (Toxicity) नष्ट होने पर भी क्षमताजनक प्रतियोगी पदार्थ (Immunising-antigen) उत्पन्न करने की क्षमता इसमें रहती है। इसमें लवणजल (Injection of sodium Chloride) मिलाकर डायल्यूट कर लिया जाता (Diluted form) है अथवा बिना डायल्यूट किए (Undiluted form) भी प्रयुक्त किया जाता है।

वर्णन—बिना डायल्यूट किया हुआ स्टेफिलोकोकस टॉक्सायड हल्के पीले रंग का द्रव होता है, जिसमें कण बिल्कुल नहीं पाये जाते (Free from particles); लवणजल मिलाकर डायल्यूट किया हुआ टॉक्सायड स्वच्छ, रंगहीन द्रव के रूप में होता है। संरक्षण—इसका संग्रह खूब ठंढी जगह में होना चाहिए (किन्तु तापक्रम इतना निम्न नहीं होना चाहिए कि यह जम जाए)। २०° तापक्रम से कम तापक्रम पर रखने से इसकी सक्रियता २ वर्ष तक बनी रह सकती है।

मात्रा—०·०५ मि० लि०, उत्तरोत्तर बढ़ाकर १ मि० लि० तक पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा।

प्रयोग

स्टेफिलोकोकस टॉक्सायड का प्रयोग करने से रोगी के रक्त में प्रतिविष (Antitoxin) की उत्पत्ति होकर स्टेफिलोकोकस उपसर्ग के प्रति सक्रिय क्षमता की उत्पत्ति होती है। चिकित्सा में इस कार्य के लिए इसका उपयोग स्टेफिलोकोकस के उपसर्ग से होनेवाली दुराग्रही स्वरूप की व्याधियों में क्षमता उत्पन्न करने के लिए किया गया है। अतः जिन लोगों में बार-बार फोड़ा-फुन्सी निकलता हो और दूसरे चिकित्सा से लाभ न मिलता हो तो इसका व्यवहार कर सकते हैं। इसी प्रकार मधुमेहपिड़िका (Carbuncle) एवं लोम-मूलपाक (Sycosis) आदि में भी प्रयुक्त हो सकता है। एतदर्थ अल्पमात्रा (०·०५ मि० लि०) से प्रारम्भ कर प्रति सप्ताह इतनी ही मात्रा बढ़ाते जायँ, जिससे ८ वाँ इन्जेक्शन ०·५ मि० लि० (या ½ सी० सी०) का होगा। यदि चिकित्साक्रम दुहराने की आवश्यकता हो, तो १–२ माह का अन्तर देकर ही पुनः प्रारम्भ करना चाहिए।

ट्युबरक्युलिनम् प्रिस्टिनम् Tuberculinum Pristinum (Tuberculin. Prist.), I. P.—ले०; ओल्ड ट्युबरक्युलिन Old Tuberculin, B. P.—अं०।

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—यह चिपचिपा, गाढ़ा (Viscous) किन्तु पारदर्शक द्रव के रूप में होता है, जो रंग में पीले से लेकर भूरे रंग का होता है और इसमें मधु (शहद) जैसी गंध आती है। ओल्ड ट्युबरक्युलिन मानवीय एवं गव्य यक्ष्मा के कीटाणुओं (Mycobacterium tuberculosis var hominis or bovis) के द्रव माध्यम (Liquid medium) में किये गए संवर्द्धन के निस्यंद (Giltrate) से बनाया जाता है। संरक्षण—इसका संरक्षण ठंढी जगह में करना चाहिए।

मात्रा—प्रति मि० लि० में १०,१०० एवं १००० युनिट शक्ति के विलयन की ०.१ मि० लि० मात्रा त्वचान्तर्गत इंजेक्शन (Intracutaneous injection) द्वारा।

वक्तव्य—यदि व्यवस्था में 'Old tuberculin' के सामने 'T' वर्ण लगा हो तो मानवीय यक्ष्माकीटाणुओं से प्राप्त ओल्ड ट्यु बरक्युलिन देना चाहिए। और यदि 'T' के स्थान में 'PT' लगा हो तो गव्यजातीय यक्ष्मा-कीटाणु द्वारा निर्मित 'Old tuberculin' देना चाहिए।

ट्यु बरक्युलिन पी० पी० डी० (Tuberculin, P. P. D.), I. P., B. P.।

पर्याय—ट्युबरक्युलिनाइ डेरिवेटिवम् प्रोटीनिकम् प्योरिफिकेटम् Tuberculini Derivativum Proteinicum Purificatum ले०;—प्योरिफाइड प्रोटीन डेरिवेटिव ऑव ट्यु बरक्युलिन—अं०।

प्राप्ति-साधन—यह मानवीय यक्ष्मा-जीवाणुओं से बनाया जाता है, जो प्रयोग के लिए दो स्वरूपों में प्राप्त होता है—(१) चूर्ण के रूप में तथा (२) कन्सन्ट्रेटेड सॉल्यूशन के रूप में (१ मि० लि० में १००,००० युनिट ओल्ड ट्यु बरक्युलिन की शक्ति होती है)। इसको प्रयोग के समय डायल्यूट कर लिया जाता है।

वर्णन—यह मलाई के रंग का शुष्क चूर्ण अथवा भूरे रंग के द्रव्य के रूप में होता है। चूर्ण क्षारों (Alkalies) के मन्दबल जलीय विलयन में घुलनशील होता है।

मात्रा—ओल्ड ट्यु बरक्युलिन की भाँति।

गुण-कर्म तथा प्रयोग

ट्युबरक्युलिन का प्रयोग निदान के लिए किया जाता है। यक्ष्मा कीटाणुओं से उपसृष्ट व्यक्तियों के धातुओं (Tissues) के सम्पर्क में आने पर इससे एक विशिष्ट प्रकार की प्रतिक्रिया होती है। ओल्ड ट्युबरक्युलिन (O.T.) की अपेक्षा पी० पी० डी० टी० से परीक्षण करने पर परिणाम अधिक निश्चित स्वरूप का मिलता है। एतदर्थ निम्न विधियों में से किसी एक का अवलम्बन किया जा सकता है।

(१) त्वचान्तर्गतपरीक्षण-विधि या मेन्टोक्स की पद्धति (Intradermal or Mantoux Test)—इसमें बायें अग्रबाहु के सम्मुखतल के मध्य में १०,००० में १ के बल के ट्यु बरक्युलिन (O. T,) अथवा पी० पी० डी० टी० के विलयन की ०.१ मि० लि० मात्रा का त्वचान्तर्गत इंजेक्शन कर दिया जाता है। परीक्षा अस्त्यात्मक (पॉजिटिव) होने पर ३-४ दिन के बाद इंजेक्शन के स्थान पर ७–८ मि० मि० के व्यास में थोड़ी सूजन तथा लालिमा होती है। यह परीक्षा बहुत सूक्ष्म ग्राही है।

(२) वानपर्केट की विधि—(Von Pirquet or Scarification Test)—त्वचा को साफ करके १ बूंद ट्यु बरक्युलिन रख दिया जाता है और उस पर यंत्र विशेष से हल्का खरोंच लगा दिया जाता है। परीक्षा अस्त्यात्मक (Postive) होने पर २-३ दिन बाद कम से कम १ सेंटीमीटर के क्षेत्र में लालिमा एवं उत्कर्णिक सूजन (Papular Swelling) होती है।

(३) मोरो-पैच-टेस्ट (Moro-patch-test)—इसके लिये ट्यु बरक्युलिन आयण्टमेंट प्रयुक्त किया जाता है। एडहीसिव टेप (Adhesive tap) पर एक बूँद मरहम रखकर छाती के सामने के तल पर बायीं ओर चूचकी के किंचित् नीचे चिपका दिया जाता है। २४ घंटे के बाद

प्लास्टर को हटा दिया जाता है और परीक्षा का परिणाम तीसरे चौथे दिन देखा जाता है। परीक्षा फल अस्त्यात्मक होने पर विशिष्ट प्रकार के ३ उत्कर्णिक विस्फोट (Three typical papules) निकलते हैं।

(४) ट्युबरक्युलिन जेली टेस्ट (Tuberculin Jelly Test)—यह ट्युबरक्युलिन के ९५% बल का जेली (Jelly) होता है, जो टिन की पिचकनेवाली नलिकाओं (Collapsible tubes) में आती है। त्वचा पर अल्प मात्रा में जेली लगाकर एडहीसिव प्लास्टर से ढक दिया जाता है। ४८ घंटे के बाद प्लास्टर को हटा दिया जाता है। परिणाम अस्त्यात्मक होने पर उस स्थान में रक्तिमा तथा आगे चल कर २ दिन से १ सप्ताह बाद उद्भविक विस्फोट उत्पन्न होता है।

सर्प-विष एवं प्रतिविष

(Snake Venoms and Antivenom Sera)

सर्प-विष एक तीव्र घातक विष है, जो विभिन्न विषैले सर्पों की विष-ग्रंथियों में पाया जाता है। इसमें अनेक विषैले घटक होते हैं, जो ताप-साही (Thermostable) होते हैं। ताप-द्रावी (Thermolabile) प्रोटीन इनके सम्पर्क में आने पर जम जाते हैं। सर्प-विष में प्रधानतः निम्न (विषाक्त) घटक पाये जाते हैं —(१) नाड़ी-विष या न्युरो टॉक्सिन (Neurotoxin)—यह तत्व अन्य सर्पों की अपेक्षा नाग विष (Cobra venom) में अधिक पाया जाता है; (२) रक्त-स्रावी-विष या हीमोरेजिन (Haemorrhagin)—यह वाइपर (Viper) प्रजाति के सर्पों के विष में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में पाया जाता है; (३) रक्तकण-द्रावी विष या साइटोलाइसिन (Cytolysin)—इसके प्रभाव से वाहिनीगत रक्त जम जाता है। इन विषाक्त घटकों के अतिरिक्त कतिपय अन्य घटक भी पाये जाते हैं, यथा प्रोभुजिनांशिक किण्व (Proteolytic ferment), तन्त्विपाचक किण्व (Fibrin ferment) आदि आदि।

जिस प्रकार विभिन्न दण्डाणुओं के विषों (Bacterial toxins) से प्रतिविष (Anti-toxins) बनाये जाते हैं, जो तत् तत् जीवाणुजन्य उपसर्ग में चिकित्सार्थ व्यवहृत होते हैं, उसी प्रकार सर्प-विष से भी प्रतिविष बनाया जाता है जिसे एन्टीवेनम् सीरम (Anti-venom Serum) कहते हैं। भारतवर्ष तथा विदेशों में भी इसकी विशिष्ट निर्माणशालायें हैं। एक बात ध्यान देने योग्य है—इन एन्टीवीनम सीरम से सर्पदंशजन्य मृत्यु के रोक-थाम में बहुत सफलता नहीं मिली है। इसका कारण यह है कि एक तो सर्पों की प्रजातियाँ बहुत हैं, दूसरे विशिष्ट सर्प-विष का प्रतिविष उस प्रजाति के सर्पदष्ट व्यक्ति में प्रयुक्त करने से लाभ होता है। अतएव एक तो इसका निदान प्रायः अभी तक असम्भव-सा ही है। दूसरे सर्वत्र मौके से यह सीरम उपलब्ध भी नहीं होता।

(सर्प-विष एवं उनके योग)

वेनम् नाजो (कोबरा वेनम्), I. P. Venum Najae (Ven. Naj.)—ले०; Cobra Venom—अं०।

(नागविष)

Family : Colubridae

प्राप्ति साधन—नाग-विष या कोबरा वेनम्, नाजा-नाजा (**Naja Naja**) तथा नाजा की अन्य उपजातियों के सर्पों के विषग्रंथि (**Poison Glands**) से प्राप्त किया जाता है।

वर्णन--नाग-विष (कोबरा वेनम्) सफेद या हल्के सुनहले रंग का शुष्क चूर्ण के रूप में उपलब्ध होता है। विलेयता--जल में यह घुलनशील होता है और इसका स्वच्छ विलयन प्राप्त होता है। किन्तु मेथिल अल्कोहल् में यह नहीं घुलता। प्रयोग के लिए कोबरा वेनम् (१) चूर्ण के रूप में तथा (२) सॉल्यूशन के रूप में प्राप्त होता है। यह एक-मात्रिक एम्पूल्स में बन्द आता है। चूर्ण को प्रयोग के समय १ मि० लि० (१ सी० सी०) 'वाटर फॉर इन्जेक्शन' में विलीन करके प्रयुक्त किया जाता है। नागविष के १ मि० ग्रा० शुष्क चूर्ण में कम से कम ५० मूषक-युनिट (50 mouse-units) की शक्ति होती है।

संरक्षण (Storage)--शुष्क नागविष को अच्छी तरह मुँह बन्द १ मात्रिक शीशियों में रखकर अन्धेरे में संग्रह करना चाहिए। कोबरा-वेनम् सॉल्यूशन के एक-मात्रिक पात्रों (Single dose containers) को अन्धेरी जगह में तथा २.५° तापक्रम पर रखना चाहिए। निर्माण-तिथि से ३ मास के अन्दर ही यह प्रयोग के योग्य होता है।

मात्रा (I. P.)--प्रारम्भिक १ से ३ मूषक-युनिट जो उत्तरोत्तर ५ से २५ मूषक-युनिट तक (Gradually increasing doses) तथा आवश्यकतानुसार और भी अधिक हो सकती है।

प्रयोग विधि--पेशीगत इंजेक्शन द्वारा।

प्रयोग

कोबरा-वेनम् अपने न्युरोटॉक्सिन घटक के कारण संज्ञावह नाड्यग्रों पर अवसादक प्रभाव (Depressant action) करता है। अतएव चिकित्सा में इसका उपयोग वेदनास्थापक (Analgesic) के रूप में विभिन्न वेदनायुक्त व्याधियों यथा गृध्रसी (Sciatica), चिरकालज संधिशूल (Chronic arthritis), त्रिधारा-नाड़ीशूल (Trigeminal neuralgia), टेब्स डार्सेलिस (Tabes Dorsalis) एवं घातक अर्बुद (Malignant Tumours) आदि में किया जाता है। एतदर्थ यह पेशीगत इन्जेक्शन द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। लेकिन इस रूप में इसका प्रयोग बहुत सफल एवं व्यावहारिक नहीं सिद्ध हुआ है। इसकी अपेक्षा अपस्मार (Epilepsy) में यह अधिक उपयोगी पाया जाता है। किन्तु इस रूप में इसका प्रयोग अमीमांस्य (Emperical) ही है।

वक्तव्य--मात्राधिक्य के कारण तथा जिन लोगों में इसके प्रति असह्यता होती है, उनमें इंजेक्शन देने पर मिचली (Nausea), कै (Vomiting) तथा अतिसार एवं इन्जेक्शन के स्थान पर दर्द आदि उपद्रव होते हैं, जिनका चिकित्सक को ध्यान रखना चाहिए।

वेनिनम् वाइपरी (वाइपर वेनम्) I. P. Venenum Viperae (Ven. Viper.)—ले०; Viper Venom—अं०।

Family : Viperidae

पर्याय--डबोया वेनम् Daboia Venum.

प्राप्तिसाधन--यह वाइपर रसेली (Viper russelli) तथा वाइपर की अन्य प्रजातियों के विषैले सर्पों के विषग्रंथियों से प्राप्त किया जाता है। १ मि० ग्रा० शुष्क वाइपरवेनम् में ३० मूषक युनिट की शक्ति होती है।

वर्णन—यह सफेद या बहुत हल्के सुनहले रंग का चूर्ण होता है, जो जल में तो घुलनशील होता है, किन्तु मेथिल अल्कोहल् में अविलेय होता है। व्यवहार के लिए यह भी चूर्ण एवं सॉल्यूशन दोनों रूपों में उपलब्ध होता है, जो एक-मात्रिक शीशियों में आते हैं। साइट्रेटेड मानव रक्त-रस Citrated human plasma) में वाइपर वेनम् का सॉल्यूशन मिलाने से जम जाता है। यह विशेषता कोबरा-वेनम् में नहीं पायी जाती। यही वाइपर वेनम् तथा कोबरा वेनम् में विभेदक लक्षण है।

संरक्षण—कोबरा वेनम् की भाँति।

मात्रा (I. P.)—(१) पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा मात्रा कोबरा वेनम् की भाँति। (२) इसका १०,००० में १ के बल का सॉल्यूशन स्थानिक रक्तस्तम्भक (Local haemostatic) के रूप में भी व्यवहृत होता है।

प्रयोग

मुख्यतः इसका उपयोग स्थानिक रक्त-स्तम्भक के रूप में टांसिल-छेदन (Tonsillectomy), दांत उखाड़ने के बाद खून रोकने के लिए, स्कर्वी, नकसीर तथा शोणितप्रियता (Haemophilia) आदि में स्थानिक रक्तस्राव के रोकने के लिए किया जाता है।

वेनीन (Venene)—यह विभिन्न प्रजाति के विषैले सर्पों के विषों का मिश्रण होता है। अपस्मार (*Epilepsy*) तथा अन्य मानसिक रोगों में उपयोगी बताया जाता है।

मात्रा—प्रथम मात्रा ५ बूंद (मिनम्) की अधस्त्वक् सूचिकाभरण द्वारा दी जाती है, जो २-२ या ३-३ अथवा ४-४ सप्ताह के अन्तर से उत्तरोत्तर बढ़ा कर ४० मिनम् तक लाई जाती है।

स्टिपवेन (Stypven)—यह रसेल वाइपर का विष होता है, जिसका व्यवहार रक्तस्राव रोकने के लिए स्थानिक रूपसे (Local application) प्रयुक्त किया जाता है प्रयोग के समय सॉल्यूशन ताजा बनाना चाहिए। इस प्रकार बना सॉल्यूशन ७ दिन तक सक्रिय रहता है। ७ दिन के बाद व्यवहार के योग्य नहीं रहता।

मोकासिन वेनम् (Moccasin Venom)—यह मोकासिन साँप का विष होता है, जो अनेक रक्तस्रावी रोगों में रक्तस्राव रोकने के लिए अधस्त्वक् सूचिकाभरण (Subcutaneously) या त्वचान्तर्गत इंजेक्शन (Intradermally) प्रयुक्त किया जाता है। शोणितप्रियता (हिमोफिलिआ (Haemophilia) रोग में इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए।

कसौली एण्टिवेनिन (Kasauli Antivenene)—

यह सर्प-विष का प्रतिविष होता है जो सर्पदष्ट व्यक्ति में चिकित्सार्थ प्रयुक्त किया जाता है। उक्त सर्प-विष प्रतिविष विशेषतः भारतीय कोबरा (**India Cobra : Naja tripudians**) तथा भारतीय वाइपर (**Dabira : Vipera russellii**) के काटे हुए रोगियों में उपयोगी सिद्ध होता है। एन्टीवेनिन की १० सी० सी० की शीशियाँ (**Phials**) आती हैं। यह २ मि० ग्रा० कोबरा-विष तथा ४ मि० ग्रा० वाइपर-विष को निष्क्रिय कर सकता है। ऐन्टीवेनम् सीरम का प्रयोग शिरागत इन्जेक्शन द्वारा ही करना चाहिए। वाइपर-दंश में साधारणतया १० से २० सी० सी० (१ से २ शीशी दवा) तथा कोबरा-दंश में २० से ४० सी० सी० सीरम की मात्रा देनी चाहिए। यदि इससे काम न चले तो पुनः मात्रा दुहराई जा सकती है। किन्तु एन्टीवेनम् सीरम का प्रयोग दंश से १ घण्टे के अन्दर ही करने से लाभ की आशा की जा

सकती है। इसके अतिरिक्त दंश के स्थान पर भी २-३ सी० सी० मात्रा दे दी जाती है। इससे वहाँ कोथ (Gangrene) बनने का डर नहीं रहता। वाइपर के दंश में इस उपद्रव का विशेष भय होता है।

वक्तव्य—एन्टीटॉक्सिन सीरम के प्रकरण में बतलाया गया है कि जिस जीवाणु के विष से प्रतिविष बनाया जाता है, उसी जीवाणु के उपसर्ग में उसकी उपयोगिता होती है। यही स्थिति एन्टीवेनम् सीरम् के साथ भी होती है। कसौली एन्टीवेनिन का प्रयोग केवल उपरोक्त भारतीय नाग एवं रसेल वाइपर के दंश में ही किया जा सकता है। इसके लिए मोटे हिसाब से जिन रोगियों में नाड़ी संस्थान की विकृतियाँ अधिक प्रबल हों उन्हें नागदष्ट समझा जा सकता है। ऐसे रोगी में सर्वप्रथम जिह्वा का संज्ञानाश होता है, जिससे नीम की पत्ती आदि तीती वस्तुयें खिलाने पर भी वह तिताई का अनुभव नहीं करता। जिनमें रक्तस्कन्दन काल लम्बा हो उन्हें वाइपर-दष्ट समझ सकते हैं। वैसे भारतवर्ष में सर्पों की इतनी जातियाँ पाई जाती हैं, कि इस बात का निर्णय अभी तक तो सम्भव नहीं हो सकता है। वैसे संदेह की स्थिति में बहूद्भव सर्पविष-प्रतिविष (Polyvalent antivenom Serum) का प्रयोग कर सकते हैं।

अध्याय १४

परिच्छेद १

क्ष-किरण चित्रण (x'ray examination) के लिए प्रयुक्त द्रव्य--

(१) महास्रोतस् (Alimentary Canal) के क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

बेरियम् सल्फेट (Barium Sulphate), बिस्मथ सबनाइट्रेट (Bismuth Sub-nitrate) ।

(२) पित्ताशय (Gall. bladder) के क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

आयडोफ्थेलीन (Iodophthalein), फेनियोडोल (Pheniodol), आयोपेनोइक एसिड, बिलिग्रेफिन आदि ।

(३) हृदय एवं रक्तवाहिनियों के क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त द्रव्य ।

डायोडोन (Diodone), बेरियम् ।

(४) फुफ्फुस एवं श्वासप्रणालिकाओं (Lungs and Bronchioles) के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

लिपियोडोल (Lipiodol) या ओलियम् आयोडिजेटम्, प्रोपिलियोडोनम् (डायनोसिल) ।

(५) वृक्क एवं मूत्रप्रणाली के क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

आयोडॉक्सिल (Iodoxyl) तथा डायोडोन (Diodone) ।

ब—रक्तराशि के विनिश्चय (Determination of blood-volume) के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

एजोवन ब्लू (Azovan blue)

स—रक्तसंवहन-काल (Circulation-time) के विनिश्चय के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

ईथर, सेक्करीन (Saccharine), डिकोलिन (Decholin), केल्सियम् ग्लूकोनेट Calcium gluconate) एवं एमिलनाइट्राइड तथा सोडियम् डिहाइड्रोकोलेट (Sodium Dehydrocholate) आदि ।

द—यकृत के गुण-कर्मीय परीक्षण (For testing liver-function) के लिए प्रयुक्त द्रव्य—

लिव्यूलोज (Laevulose), ब्रोम सल्फेलीन सोडियम् (Brom Sulphalein Sodium) आदि ।

य—वृक्कों की कार्य-क्षमता (Renal efficiency) के परीक्षण के लिए प्रयुक्त द्रव्य :—

यूरिया (Urea), मेथिलिन ब्ल्यू (Methylene blue), इन्डिगोकार्मीन (Indigo Carmine), फिनोल-रेड (Phenol-red) एवं मेनिटोल (Mannitol) आदि।

ओलियम् आयोडिजेटम् (I. P., B. P.)

नाम—ओलियम् आयोडिजेटम् Oleum Iodisatum (Ol. Iodisat.)—लै०; आयोडाइज्ड ऑयल Iodised oil, इंजेक्शन ऑव आयाडाइज्ड आयल—अं०।

पर्याय—लिपिओडोल (Lipiodol); आयडोपिन (Iodipin)।

प्राप्तिसाधन—यह आयोडिन युक्त पोस्ते के दाने का तेल (Iodine addition product of poppy-seed oil) होता है, जो पोस्ते के तेल एवं हाइड्रायोडिक एसिड (Hydriodic acid) को परस्पर मिलाकर बनाया जाता है। इसमें ३९ प्रतिशत से लेकर ४१ प्रतिशत तक संयुक्तरूप में आयोडीन (Combined iodine) होता है।

वर्णन—लिपिओडोल रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का स्वच्छ एवं चिपचिपा तैलीय द्रव (Viscous oily liquid) होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में मीठे तेल की (Taste bland oily) भांति होता है। कभी-कभी इसमें लहसुन जैसी (Alliaceous) हल्की गंध आती है। विलेयता—जल में तो अविलेय (Insoluble) होता है; किन्तु साल्वेंट ईथर, क्लोरोफार्म तथा लाइट पेट्रोलियम् में घुल जाता है।

संरक्षण (Storage) एवं वितरण—आयोडाइज्ड ऑयल को खूब अच्छी तरह विशोधित एवं विकसंक्रमित (Sterilised) पात्रों में खूब अच्छी तरह भरकर (Filled as completely as possible) पात्र का मुख अच्छी तरह बन्द कर दिया जाता है, ताकि उसमें विकारी-जीवाणुओं (Micro-organisms) का प्रवेश न हो सके। इसको प्रकाश से बचाना चाहिए अन्यथा प्रकाश के प्रभाव से वियोजित होकर गाढ़े, भूरे, रंग का हो जाता है।

मात्रा—आवश्यकतानुसार।

प्रयोग।

आयोडाइज्ड ऑयल या लिपिओडोल एक क्ष-किरण-अपारदर्शी द्रव (Radio paque or contrast medium) है। चिकित्सा में इसका उपयोग श्वास-प्रणालिकाओं एवं उनकी शाखा-प्रशाखागत विकृतियों के क्ष-किरण चित्रण (Radiography) के लिए किया जाता है। क्षेत्र के न्यूनाधिक्य के आधार पर ५ से ४० मि० लि० (सी० सी०) द्रव की आवश्यकता पड़ती है। औसतन २० c. c. से काम चल जाता है। उक्त द्रव को ट्रेकिया (Trachea) या कण्ठनलिका में प्रविष्ठ किया जाता है और वहाँ से औषधि ब्रोंकस की शाखा-प्रशाखाओं में पहुँच जाती है। एतदर्थ केनुला (Cannula) के द्वारा गल-विल (Glottis) से होकर सीधे ट्रेकिया में औषधि प्रविष्टि की जाती है। अथवा दूसरा मार्ग क्रिको-थायरायड मेम्ब्रेन है। इस मार्ग द्वारा द्रव एक विशिष्ट प्रकार की टेढ़ी सूई (Curved needle) द्वारा प्रविष्ट की जाती है। जिस स्थान पर सूई प्रविष्ट करनी हो, उसे पहले कोकेन या अन्य उपयुक्त संज्ञाहर

संज्ञाहर औषधि के द्वारा सुन्न कर लेते हैं। श्वास प्रणालिकाओं की शाखा-प्रशाखा एवं अनुशाखाओं (Bronchial tree) के रेखा चित्रण (Outlining) के लिए अपेक्षाकृत अल्प मात्रा (५ से १० सी० सी०) की आवश्यकता पड़ती है। शरीर द्वारा इसका निस्सरण प्रायः नैसर्गिक रूप से खांसी (Expectoration) के साथ ही हो जाता है। जो मात्रा शोषित हो जाती है, उसका उत्सर्ग मूत्र एवं लालास्राव के साथ होता है।

श्वासमार्ग के अतिरिक्त लिपिओडोल का प्रयोग सुषुम्नागत विकृति के चित्रण (Myelography) के लिए तथा मूत्र-प्रजनन संस्थान के विभिन्न अंगों यथा गर्भाशय (Uterus), बीजवाहिनी (Fallopian tube) एवं मूत्रप्रसेक (urethera) आदि के लिये भी किया जाता है।

प्रयोग-निषेध—फुफ्फुसगत यक्ष्मा (Pulmonary tuberculosis) के रोगियों में तथा तीव्र ज्वरावस्था। तथा विकारी जीवाणुओं की उपसर्गावस्था (Septie condition) में इसका प्रयोग निषिद्ध (Contraindicated) है। आयोडीन घटित यौगिक होने के कारण जिन व्यक्तियों में स्वभाववैशिष्ट्य के कारण आयोडीन के प्रति असह्यता हो, उनमें भी इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रोपिलिओडोनम् Propyliodonum (Propyliodon.) B. P. C.—ले०; प्रोपिलिओडोन Propyliodone—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{१०}H_{११}O_3N_{१२}$.

पर्याय—डायनोसिल (Dionosil)।

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह propyl 1 : 4-dihydro-3 : 5-di-iod-4-oxo-1-pyridylacetate या n-propyl 3 : 5-di-iod-4-pyridone-N-acetate होता है। यह सफेद या प्रायः सफेद रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय होता है, किन्तु अल्कोहल्, ईथर एवं एसिटोन में घुल जाता है।

मात्रा— प्रति वर्ष आयु के लिए ०.३ से ०.५ ग्राम (५ से ८ ग्रेन), अधिकतम मात्रा ६ ग्राम (९१५ ग्रेन) तक।

प्रयोग।

डायनोसिल भी एक क्ष-किरण-अपारदर्शी द्रव्य (Contrast medium) है, जिसका उपयोग श्वास प्रणालिकाओं के चित्रण (Bronchography) के लिए किया जाता है। एतदर्थ इसका जलीय या तैलीय निलम्बन (Aqueous or oily suspension) प्रयुक्त किया जाता है। प्रयोग विधि आयोडाइज्ड ऑयल की ही भांति है। आयोडाइज्ड ऑयल की अपेक्षा इसमें यह विशेषता है, कि प्रयोग के बाद फुफ्फुसों द्वारा इसका निस्सरण या उत्सर्ग लिपिओडोल की अपेक्षा जल्दी होता है, तथा दूसरी विशेषता यह भी है कि यह उसकी अपेक्षा कम विषैला होता है, किन्तु इसके जलीय निलम्बन के प्रयोग में खांसी का उपद्रव बुरी तरह से होता है। अतएव इसके प्रयोग के पूर्व स्थानिक संज्ञाहर औषधियों (Local anaesthetics) द्वारा श्वासपथ को सुन्न कर देना चाहिए। इससे उक्त उपद्रव का निवारण हो जाता है।

न्यावसायिक योग :—

(१) डायनोसिल (जलीय विलयन) Dionosil Aqueous (Glaxo) एवं डायनोसिल (तैलीय विलयन) Dionosil oily (Glaxo)—२० सी० सी० एम्पूल्स।

आयोडॉक्सिलम् (आयोडॉक्सिल), I. P., B. P. Iodoxylum (Iodoxyl.)—ले०; Iodoxyl—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_8H_3O_5NI_2Na_2$.

रासायनिक नाम—Disodium N-methyl-3, 5—diiodo Chelidamate।

पर्याय—यूरोपेक Uropac; पाइलेक्टन Pyelectan; यूरोसेलेक्टन-बी Uroselectan-B.

वर्णन—यह सफेद रंग के गन्धहीन चूर्ण के रूप में होता है, जिसमें ५० प्रतिशत से ५२.५ प्रतिशत तक आयोडीन (I.) तथा ९.२ प्रतिशत से ९.४ प्रतिशत तक सोडियम् (Na.) होता है।

विलेयता—१ भाग जल तथा १०० भाग अल्कोहल् में तो घुल जाता है, किन्तु सालवेन्ट ईथर तथा क्लोरोफार्म में अविलेय (Insoluble) होता है।

प्रयोग

आयोडॉक्सिल का प्रयोग मूत्रमार्ग (Urinary tract) के क्ष-किरण चित्रण के लिए किया जाता है। एतदर्थ इसका प्रयोग शिरामार्ग द्वारा (Intravenously) किया जाता है। युवा व्यक्ति के लिए ७५% बल के साल्यूशन की २० मि० लि० (सी० सी०) मात्रा देनी पड़ती है। बालकों में प्रत्येक वर्ष आयु के लिए १ सी० सी० (१५ बूँद) मात्रा दें। इस नियम से अपेक्षा कृत यदि कम मात्रा देनी हो तो भी कम से कम ३ सी० सी० देना पड़ता है। इंजेक्शन बहुत धीरे-धीरे लगाना चाहिए। एक इंजेक्शन में कम से कम ५ मिनट समय लगना चाहिए और ध्यान रहे कि इन्जेक्शन देते समय दवा इधर-उधर शिरा के बाहर नहीं गिरनी चाहिए। प्रयोग के २० मिनट बाद ही औषधि का उत्सर्ग वृक्कों द्वारा होने लगता है। उत्सर्ग की अधिकतम मात्रा प्रयोगोपरान्त २० से ३० मिनट के बीच होती है। अतः फोटो लेने के लिए यही समय उपयुक्त होता है। किन्तु यह नियम उसी समय लागू होगा, जब वृक्क स्वस्थ हों। वृक्कों की क्रिया विकृत होने पर उत्सर्ग भी धीरे-धीरे होता है, जिससे फोटो लेने का समय २०-३० मिनट के बजाय ३-४ घण्टे का हो सकता है और यदि वृक्क ज्यादे खराब हों तो यह भी सम्भव है कि फोटो लेने के लिए उपयुक्त मात्रा में औषधि का उत्सर्ग होवे ही नहीं। इस प्रकार औषधि के उत्सर्गगति के निरीक्षण द्वारा वृक्कों की क्रियाशीलता का परीक्षण भी किया जा सकता है। कभी-कभी वृक्क एवं गवीनी (Ureter) का चित्रण करने के लिए साल्यूशन उत्तरवस्ति अर्थात् युरेथ्रा के मार्ग से प्रविष्ट किया (Retrograde pyelography) जाता है। इसके लिए आयोडॉक्सिल के २०% बल के जलीय विलयन की १० सी० सी० मात्रा पर्याप्त होती है। इस विधि द्वारा मूत्राशय का चित्रण (Cystography) भी किया जा सकता है।

प्रयोग-निषेध—यकृत्-विकार, मूत्रविषमयता (Uraemia), उग्र वृक्कशोफ (Acute nephritis) राजयक्ष्मा तथा परमावटुकमयता (Hyperthyroidism) के रोगियों में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

(ऑफिशल योग)

१—इन्जेक्शिओ आयोडॉक्सिलाइ Injectio Iodoxyli (Inj. Iodoxyl.), I. P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव आयोडॉक्सिल—अं० । यूरोपेक की सुई—हिं० ।

यह विशोधित जल में बनाया हुआ आयोडॉक्सिल का विसंक्रमित सॉल्यूशन (Sterile Solution) होता है, जिसमें ९३ प्रतिशत से १०७% तक आयोडॉक्सिल होता है ।

मात्रा—७५% (w/v) बल का विलयन (१) युवा के लिए २० सी० सी०; बालक (Child) के लिए ५ से १० सी० सी०; (३) शिशु (Infant) के लिए २ से ५ सी० सी० ।

व्यावसायिक योग

(१) पाइलेक्टन Pyelectan (Glaxo)—२० सी० सी० एम्पूल्स ।

(२) पाइलेक्टन (उत्तरस्वस्ति रूप से प्रयुक्त होने के लिए) Pyelectan (retrograda) Glaxo—१० सी० सी० एम्पूल्स ।

इन्जेक्शिओ डायोडोनाइ Injectio Diodoni (Inj. Diodon.), I.P., B. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव डायोडोन Injection of Diodone—अं०; डायोडोन की सूई—हिं० ।

पर्याय—लाइकर डायोडोनाइ Liquor Diodoni; सॉल्यूशन ऑव डायोडोट्रास्ट (Diodotrast); पेराब्रोडिल (Perabrodil); यूरिओडोन (Uriodone); पायलोसिल Pyelosil ।

वर्णन—यह diethanolamine salt-of 3 : 5—di—iodo—4—pyridone—N—acetic acid का विशोधित जलीय विलयन या सॉल्यूशन (Sterile aqueous Solution) होता है, जो स्वच्छ एवं रंगहीन अथवा घास या तृण के रंग का (Straw-coloured) द्रव होता है । यह तीन प्रकार (Three strength) का बनाया जाता है:—(१) ३५ प्रतिशत बल का सॉल्यूशन—इसमें १६'६ से १८'४ प्रतिशत (w/v) तक आयोडीन (I.) होता है; (२) ५०% बल का इंजेक्शन ऑव डायोडोन—२३'७ से २६'३ प्रतिशत (w/v) तक आयोडीन की मात्रा होती है । (३) ७०% बल का विलयन—इसमें ३३'२ से ३६'८% (w/v) तक आयोडीन होती है । यह औषधि एम्पूल्स में प्राप्त होती है ।

मात्रा—आवश्यकतानुसार ।

(नॉट-ऑफिशल)

इन्जेक्शिओ डायोडोनाइ विस्कोजा Injectio Diodoni Viscosa (Inj. Diodon. Viscos.), B. P. C.—ले०; विसकस इन्जेक्शन ऑव डायोडोन Viscous Injection of Diodone—अं० ।

वर्णन—यह विशोधित जलीय विलयन या सॉल्यूशन होता है, जिसमें ५०% (w/v) डायोडोन एवं ६ प्रतिशत पोलिविनिल अल्कोहल् (Polyvinyl alcohol) होता है ।

मात्रा—आवश्यकता नुसार ।

प्रयोग

डायोडोन के ३५% बल के सॉल्यूशन का उपयोग आयडोक्सिल के इंजेक्शन की भांति क्ष-किरण चित्रण के लिए किया जाता है । आयडोक्सिल की अपेक्षा शरीर-धातुओं पर यह

क्षोभक क्रिया अपेक्षाकृत कम करता है। हृदय पर भी यह उतना अवसादक प्रभाव नहीं करता। इसका उपयोग वृक्क (Kidneys), गवीनी(Ureters) तथा मूत्रमार्ग के अन्य अंगों के क्ष-किरण चित्रण के लिए किया जाता है। एतदर्थ औषधि शिरागत इन्जेक्शन द्वारा दी जाती है। यदि शिरामार्ग द्वारा इंजेक्शन सम्भव न हो तो इसको ४ गुना समबल लवणजल (Normal Saline) के साथ मिला कर अधस्त्वग्मार्ग द्वारा (Subcutaneously) भी दे सकते हैं। शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर ५ से ३० मिनट बाद फोटो ले सकते हैं। अधस्त्वग्मार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर यह अवधि बढ़कर ½ से १ घंटा हो जाती है। इसके लिए ३५% बल का सॉल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है।

मात्रा—युवा व्यक्ति के लिए २० सी सी०; बालकों (Child) के लिए ८ से १० सी० सी० तथा शिशुओं (Infants) के लिए २ या ३ सी० सी० मात्रा पर्याप्त होती है। मोटे रोगियों में इस कार्य के लिए ५०% बल का विलयन देना पड़ता है। यदि मूत्रमार्ग के चित्रण के लिए औषधि शिश्नमार्ग से प्रविष्ट करना हो (Retrograde pyelography) तो भी ५० % बल का सॉल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है।

डायोडोन के ७०% बल के सोल्यूशन का प्रयोग रक्तवह संस्थान के चित्रण (Angio-cardiography) के लिए किया जाता है। इस रूप में मस्तिष्कगत एवं शाखा की धमनियों के चित्रण के लिए तथा महाधमनी-चित्रण (Aortography), प्लैहिक शिराओं के चित्रण (Splenic venography) के लिए तथा इसी प्रकार अन्य शिरा एवं धमनी के लिए प्रयुक्त होता है। रक्तवाहिनियों के चित्रण (Angiography) के लिए युवा पुरुष में ४० से ५० सी० सी० सोल्यूशन का शिरागत इंजेक्शन किया जाता है। कभी-कभी इसके इंजेक्शन से हृल्लास, वमन, शिरोभ्रम, शिरःशूल, श्वासकृच्छ्र (Dyspnoea) तथा श्यामोत्कर्ष (Cyanosis) आदि का उपद्रव होता है। इसके अतिरिक्त डायोडोन का उपयोग पित्ताशय एवं पित्तनलिका के चित्रण (Cholangiography) के लिए भी करते हैं। इसके लिए औषधि सीधे साधारणी पित्तनलिका (Common bile-duct) में प्रविष्ट की जाती है। वमन आदि उपद्रवों के निवारण के लिए इंजेक्शन खाली पेट पर किया जाता है तथा पहले ३ सी० सी० मात्रा में औषधि का एक शिरागत इंजेक्शन देकर रक्तपरिभ्रमण काल, वृक्कों की हालत तथा आयोडीन के प्रति रोगी की सह्यता आदि बातों का परीक्षण करके ही इसका पूरा इंजेक्शन देना चाहिए।

प्रयोग-निषेध—आयोडॉक्सिल की भाँति।

विस्कस् इन्जेक्शन ऑव डायोडोन—इसका प्रयोग विशेषतः गर्भाशय एवं बीजवाहिनी के चित्रण (Hystero-salpingography) के लिए किया जाता है। प्रयोग-विधि आयोडाइज्ड ऑयल की भाँति है। इसकी विशेषता यह है, कि गाढ़ा होने के कारण औषधि जल्दी से निकल नहीं आती, अपितु परीक्षण क्षेत्र में स्थिर रहती है। प्रयोग के समय देख लेना चाहिए कि द्रव्य में कोई घन पदार्थ तलस्थित तो नहीं हुआ है। यदि ऐसा हो तो उसे गरम करके विलीन (Dissolve) कर लेना चाहिए।

आयडोफ्थेलीनम् (आयडोफ्थेलीन) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_{20} H_8 O_4 I_4 Na_2, 3H_2 O$.

नाम—आयडोफ्थेलीनम् Iodophthaleinum (Iodophthal.)—ले०; आयडोफ्थेलीन Iodophthalein, आयडोफ्थेलीन सोडियम् Iodophthalein Sodium—अं०।

पर्याय—आयडो-रे (Iodo-ray); ओपेसिन Opacin ।

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह tetraiodophenolphthalein का di-sodium लवण या साल्ट होता है, जो फिनोलेफ्थलीन (Phenolphthalein) के जम्बुकीकरण या आयोडिनेशन (Iodination) के द्वारा प्राप्त किया जाता है। इसमें कम से कम ८७ प्रतिशत फ्थेलीन (Phthalein) होता है, जिसमें जम्बुकी (आयोडीन) की मात्रा ६० प्रतिशत से लेकर ६३ प्रतिशत तक होती है।

वर्णन—यह नीले रंग का या नीलापन लिए बैंगनी (Bluish-violet) रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्राय गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन एवं कषैला (Saline and astringent) होता है। विलेयता—७ भाग जल में तो विलेय (Soluble) होता है, किन्तु अल्कोहल् (९५%) में थोड़ा-थोड़ा घुलता (Slightly soluble) है।

मात्रा—प्रति किलोग्राम शरीर-भार के लिए ४० से ६० मि० ग्रा० और इस प्रकार अधिकतम मात्रा ५ ग्राम तक (अथवा प्रति पौंड शरीर-भार के लिए $\frac{1}{3}$ से $\frac{1}{2}$ ग्रेन के हिसाब से अधिकतम मात्रा ७५ ग्रेन तक)।

प्रयोग।

मुख द्वारा अथवा शिरामार्ग द्वारा प्रयुक्त होने पर इसका निस्सरण यकृत द्वारा पित्ताशय में होता है, जहाँ इसका संकेन्द्रण क्ष-किरण चित्रण के लिए पर्याप्त मात्रा में हो जाता है। अतएव पित्ताशय-चित्रण (Cholecystography) के लिए यह एक उपयुक्त द्रव्य है। सामान्यतया इसका सेवन मुखमार्ग द्वारा ही किया जाता है। यदि सम्भव हो तो खाली पेट दवा लेना अधिक श्रेयष्कर है। ५-५ ग्रेन की दो जिलेटिन कैप्स्यूला १५–१५ मिनट के अन्तर से काफी जल के साथ निगल ली जाती हैं। इस प्रकार १० कैप्स्यूल तक लेने पड़ते हैं। १२ घंटे के बाद फोटो लिया जाता है।

यदि मुख द्वारा औषधि का सेवन सम्भव न हो तो इसका प्रयोग शिरागत इन्जेक्शन के द्वारा भी किया जा सकता है। इसके लिए ४५ ग्रेन औषधि ४० सी० सी० त्रिवार-परिस्रुत जल (Triple-distilled water) में घोलकर, उक्त सॉल्यूशन का व्यवहार किया जाता है। उक्त मात्रा को $\frac{1}{2}$ घंटे के अन्तर से २ बार में इन्जेक्ट करते हैं। एक इन्जेक्शन प्रातः खाली पेट पर देते हैं और दूसरा इन्जेक्शन $\frac{1}{2}$ घंटे बाद दिया जाता है। इन्जेक्शन खूब धीरे-धीरे (५ से ७ मिनट में) देना चाहिए। यदि रोगी को बहुत भूख मालूम पड़ती हो तो थोड़ा दूध दे सकते हैं। सॉल्यूशन ताजा बनाकर ही व्यवहृत करना चाहिए इन्जेक्शन के ३-६ घंटे बाद फोटो लिया जाता है।

विषाक्तता एवं प्रयोग-निषेध—इस क्रिया में चिकित्सक को बराबर सावधान रहना चाहिए, क्योंकि इसके मौखिक एवं शिरागत दोनों ही प्रकार के प्रयोग में मृत्यु तक हो चुकी है। मूत्र विष-

मयता (Uraemia) एवं हृत्पेशीदौर्बल्य (Myocardial failure) तथा कामला आदि के रोगियों में इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए। कभी-कभी वमन, हृल्लास होकर रक्तभार गिर जाता है। ऐसी स्थिति में १० बूंद एड्रिनेलीन क्लोराइड सॉल्यूशन का इन्जेक्शन कर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त १-२ घंटे पर रोगी को जल के साथ सोडियम्-बाइ-कार्बोनेट (१०-४० ग्रेन) मुख द्वारा देना चाहिए।

फेनियोडोल (Pheniodol), B. P.

रासायनिक संकेत : $C_{15} H_{12} O_3 I_2$.

पर्याय—पेरिओडेक्स (Periodex); बिलिसेलेक्टन Biliselectan।

वर्णन—यह मलाई के रंग का चूर्ण (Creamy-white powder) होता है, जिसमें हल्की गंध एवं स्वाद होता है। जिह्वा पर रखने से मुंह में थोड़ी देर बाद चुनचुनाहट (Tingling sensation) मालूम होता है। इसका क्षारीय सोल्यूशन या विलयन स्वाद में उत्क्लेशकारी (Nauseous) एवं तिक्त होता है। विलेयता—जल में तो प्रायः अविलेय (Almost insoluble) होता है, किन्तु जल में बनाये हुए क्षारीय विलयन (Aqueous alkaline solutions) में घुल जाता है। इसके अतिरिक्त फेनियोडोल अल्कोहल (९५%) में भी घुलनशील होता है।

मात्रा—४५ से ६० ग्रेन या ३ से ६ ग्राम की एक मात्रा (Single Dose)।

प्रयोग।

फेनियोडोल का भी प्रयोग आयोडोफ्थेलीन की भांति पित्ताशय के चित्रण के लिए किया जाता है। यह आयोडोफ्थेलीन की अपेक्षा कम विषैला होता है। एतदर्थ इसका सेवन मुख द्वारा किया जाता है। प्रातःकाल तड़के औषधि पानी या दूध में मिलाकर ले ली जाती है और चित्रण अगले दिन प्रातःकाल (प्रयोग के १६ घंटे बाद) किया जाता है।

विशेष—चूंकि शरीर से इसका निस्सरण वृक्कों द्वारा होता है, अतएव तीव्र वृक्क शोथ, मूत्रविषमयता आदि व्याधियों में नहीं करना चाहिए। मुख द्वारा सेवन किए जाने के कारण, आमाशयान्त्र-प्रदाह की स्थिति में भी नहीं प्रयुक्त किया जाता। इसका शिरागत इंजेक्शन नहीं करना चाहिये।

व्यावसायिक योगः—

(१) फेनियोडोल Pheniodol (Glaxo)—इसकी (१) ग्रेन्यूल्स (Granules) तथा (२) टॅबलेट्स (Tablets) आती हैं। ६ ग्राम ग्रेन्यूल्स की एकमात्रिक ट्यूब आती है। ६ टॅबलेट्स के ट्यूब आते हैं।

एसिडम आयोपेनोइकम (आयोपेनोइक एसिड), B. P. Add.

Acidum Iopanoicum (Iopan. Acid.)—ले०; Iopanoic Acid—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{11}H_{12}O_2NI_3$.

पर्याय—टेलिपेक Telepaque।

वर्णन—यह सफेद रंग का या मलाई के रंग (Cream coloured) चूर्ण होता है, जो गंधहीन तथा प्रायः स्वाद रहित होता है। विलेयता— जल में तो अविलेय (Insoluble) होता है;

किन्तु २५ भाग अल्कोहल् (९५%), तथा एसिटोन एवं क्षारीय हाइड्रॉक्साइड के जलीय विलयन (Aqueous solutions of alkali hydroxides) में घुल जाता है। संरक्षण—इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

मात्रा—३० से ९० ग्रेन या २ से ६ ग्राम की एक मात्रा (As a Single dose) फोटो लेने के समय से १० से १५ घंटे पूर्व देना चाहिए।

प्रयोग

मुख द्वारा सेवन किए जाने पर आयोपेनोइक एसिड का शोषण आमाशयान्त्र प्रणाली द्वारा होता है। शोषणोपरान्त यह पित्त के साथ उत्सर्गित होता है, जिससे शरीर से इसका निस्सरण प्रधानतः मल के साथ होता है। कुछ अंश मूत्र के साथ भी उत्सर्गित होता है। इसका भी प्रयोग पित्ताशय-चित्रण (Cholecystography) के लिए किया जाता है। एतदर्थ ३ ग्राम (४५ ग्रेन) की एक मात्रा काफी जल के साथ अगली रात्रि को (चित्रण के १०–१५ घंटे पूर्व) मुख द्वारा ले ली जाती है। औषधि सेवन के पूर्व रोगी को हल्का आहार दिया जा सकता है, किन्तु उसमें चर्बी या वसा जातीय पदार्थ बिल्कुल नहीं देने चाहिए। फोटो लेने के पूर्व रोगी को सोडा-बाई-कार्ब० की वस्ति दे दी जाती है। फेनियोडोल की अपेक्षा यह औषधि बहुत कम विषैली है।

प्रयोग-निषेध—तीव्र वृक्कशोथ (Acute nephritis), मूत्र विषमयता एवं तीव्र आमाशयान्त्र-प्रदाह (Acute gastro-enteritis) की अवस्थाओं में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(ऑफिशल योग)

१—टॅबेली एसिडाइ आयोपेनोइसाइ Tabellae Acidi Iopanoici (Tab. Acid. Iopan.) B. P. Add.—ले०; टॅबलेट्स ऑव आयोपेनोइक एसिड Tablets of Iopanoic Acid—अं०; आयोपेनोइक एसिड की टिकिया—हिं०।

मात्रा—देखो आयोपेनोइक एसिड। यदि मात्रा का उल्लेख न हो तो ८ ग्रेन या ०·५ ग्राम की टॅबलेट्स देनी चाहिए।

(नॉट-ऑफिशल)

बिलिग्रेफिन (Biligrafin)।

वर्णन—यह सूक्ष्म-क्रिस्टलाइन (Micro-crystalline) चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में अविलेय होता है।

मात्रा—(१) युवा व्यक्ति के लिए (Adult dose)—३० प्रतिशत बल का सोल्यूशन २० सी० सी० की मात्रा में अथवा ५०% बल का सॉल्यूशन २० सी० सी० की मात्रा में। मोटे व्यक्तियों में अपेक्षाकृत अधिक बल के सोल्यूशन की आवश्यकता होती है।

(२) बालकों (children) के लिए—प्रतिकिलोग्राम शरीर भार के लिए (३०% बल के सोल्यूशन की) १ से १½ सी० सी० के हिसाब से। मार्ग—शिरागत इंजेक्शन द्वारा (शनैः शनैः देना चाहिए)।

प्रयोग।

इसका मुख्य उपयोग पित्ताशय एवं पित्तनलिका के चित्रण के लिए किया जाता है। एतदर्थ इसका प्रयोग शिरागत इन्जेक्शन द्वारा करते हैं। इन्जेक्शन बहुत धीरे-धीरे देना चाहिए। याकृतिक एवं साधारणी पित्तनलिका का चित्रण तो १५-२५ मिनट बाद किया जा सकता है; किन्तु पित्ताशय के लिए २-३ घंटे का समय अपेक्षित होता है। अनूर्जिक प्रकृति वालों (Allergic patients) तथा जिनमें आयोडीन के प्रति असह्यता हो, उन रोगियों में इसका प्रयोग यथासम्भव नहीं करना चाहिए। यदि करना भी हो तो सावधानी पूर्वक करें।

(नॉट-ऑफिशल)

एथिल आयडोफेनिलअन्डेसिलेट (Ethyl Iodophenylundecylate) B. P. C.।

पर्याय—एथिलिस आयडोफेनिलअन्डेकेनोआस Aethylis Iodophenylundecanoas (Aethyl. Iodophenylundecan.)—ले०; एथिल आयडोफेनिलअन्डेकेनोएट—अं०।

वर्णन एवं प्रयोग—यह रंगहीन अथवा हल्के पीले रंग का गाढ़ा द्रव (Viscous liquid) होता है, जो ज्यादा दिन रखा रहने से रंग के विकृत होने से गाढ़े रंग का हो जाता है। इसका प्रयोग सुषुम्ना की विकृतियों के चित्रण (Myelography) के लिए किया जाता है।

मात्रा एवं प्रयोगविधि—२ से ५ मि० लि० (सी० सी०) या ३० से ७५ बूँद सुषुम्नान्तरगत इन्जेक्शन (Intrathecal injection) द्वारा।

बेरियाइ सल्फास (बेरियम सल्फेट), I. P., B. P. Barii Sulphas (Barii Sulphas)—ले०; Barium Sulphate—अं०।

रासायनिक संकेत : $BaSO_4$.

प्राप्ति-साधन एवं वर्णन—किसी जल-विलेय बेरियम्-लवण (Soluble barium Salt) एवं किसी जल-विलेय सल्फेट (Soluble Sulphate) की परस्पर रासायनिक क्रिया (Interaction) द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह सफेद रंग के गुरु (Heavy) चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वादहीन होता है।

विलेयता—जल में तो यह अविलेय (Insoluble) होता है। किन्तु हाइड्रोक्लोरिक एसिड, नाइट्रिक एसिड एवं कतिपय लवणों के सोल्यूशन में केवल अंशतः घुल जाता (Very slightly soluble) है।

प्रयोग—मुख द्वारा सेवन किए जाने पर बेरियम् सल्फेट का शोषण आमाशयान्त्र प्रणाली से नहीं होता और यह ज्यों का त्यों उत्सर्गित हो जाता है। अतएव क्ष-किरणों के प्रति अपारदर्शक (Opaque to x-rays) होने के कारण महास्रोतस् (Alimentary Canal) के क्ष-किरण चित्रण के लिए इसका व्यवहार क्ष-किरण-अपारदर्शी आहार (Contrast meal) के रूप में किया जाता है। एतदर्थ २ से ५ औंस की मात्रा अपेक्षित

होती है। बेरियम् सल्फेट की जो मात्रा देनी हो एक ही मात्रा में, पिष्टमय आहार द्रव्यों (Farinaceous food) यथा आटा (Coruflour) अथवा केओलिन या यन्त्रित दुग्ध (माल्टेड मिल्क Malted milk) के साथ मिलाकर दे दी जाती है। इसके लिए ब्रिटिश फार्मास्युटिकल कोडेक्स (B. P. C.) में उल्लिखित 'कम्पाउण्ड पाउडर ऑव बेरियम् सल्फेट' भी उत्तम योग है। आन्त्रपुच्छ के चित्रण के लिए 'बेरियम् मील' देने के एक घंटे पूर्व एनिमा द्वारा $\frac{1}{60}$ ग्रेन (१ मि० ग्रा०) अट्रोपीन दे दिया जाता है। बृहदन्त्र (Colon) के चित्रण के लिए बेरियम् का प्रयोग एनिमा (वस्ति) द्वारा किया जाता है। इसके लिए १० औंस (३२० ग्राम) की मात्रा जल में निलम्बित करके इस विलयन को एनिमा के रूप में प्रयुक्त करते हैं।

वक्तव्य—कभी-कभी बेरियम् सल्फेट के बजाय इसके विषैले यौगिकों, यथा बेरियम् सल्फाइड या बेरियम् कार्बोनेट आदि का सेवन हो जाने से रोगियों की मृत्यु तक हो गई है। अतएव एक तो चिकित्सक जब बेरियम् सल्फेट के लिए लिखे तो इसका पूरा-पूरा नाम लिखना चाहिए। संक्षिप्त नाम (Abbreviation) नहीं लिखे। दूसरे श्रेयष्कर मार्ग तो यह है, कि बेरियम् सल्फेट के बजाय, क्ष-किरण के निमित्त प्रयुक्त होने वाले इसके विशिष्ट यौगिकों का ही व्यवहार किया जाय।

(नॉट-ऑफिशल)

१—पल्विस् बेरियाइ सल्फेटिस् कम्पोजिटस् Pulvis Barii Sulphatis Compositus, B.P.C.—ले०।

पर्याय—बेरियम मील Barium Meal; शैडोमील Shadow Meal। इसमें बेरियम् सल्फेट १० औंस, सेकेरीन (Saccharin) १ ग्रेन वेनिलिन (Vanillin) २ ग्रेन।

मात्रा—४ से ८ औंस (१२० से २४० ग्राम)। जब प्रयोग करना हो जल में मिलाकर दिया जाता है।

२—हॉस्टस् बेरियाइ सल्फेटिस् Haustus Barii Sulphatis (Haust. Barii Sulphat) B. P. C.—ले०; बेरियम् सल्फेट ड्रॉफ (Draught)—अं०। बेरियम् सल्फेट ५ औंस, जल १० औंस। परस्पर मिलायें और चाहें तो कोई रुचिकारक द्रव्य भी मिला दें।

मात्रा—१० से २० फ्लुइड औंस १ ही मात्रा में।

वक्तव्य—उपर्युक्त दोनों योग आमाशयान्त्र प्रणाली के क्ष-किरण चित्रण के लिए प्रयुक्त होते हैं।

सल्फोब्रोमोफ्थेलीनम् सोडियम् (I. P.)

रासायनिक संकेत : $C_{20} H_{8} Br_{4} Na_{2} O_{10} S_{2}$.

नाम—सल्फोब्रोमोफ्थेलीनम् सोडियम् Sulphobromophthaleinum Sodium (Sulphobromophthal. Sod.)—ले०; सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडियम् Sulphobromophthalein Sodium—अं०।

अभि-ज्ञापन एवं वर्णन—रासायनिक दृष्टि से यह disodiumphenol—tetrabromophthalein Sulphonate होता है। इसमें ७·४ से ८·२ प्रतिशत गंधक या सल्फर (Sulphur) तथा ३६ से ३९ प्रतिशततक ब्रोमीन होता है। सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडियम्, सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में तिक्त होता है। आर्द्रता में खुला रहने से इसमें नमी सोखने की प्रवृत्ति (Hygroscopic) पाई जाती है। जल में घुलनशील (Soluble) होता है, किन्तु अल्कोहल् तथा एसिटोन में अविलेय (Insoluble) होता है।

इन्जेक्शिओ सल्फोब्रोमोफ्थेलिनियाइ सोडियाइ Injectio Sulphobromophthaleini Sodii (Inj. Sulphobromphal. Sod.), I. P.—ले०; इन्जेक्शन ऑव सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडियम्—अं०।

यह 'वाटरफॉर इन्जेक्शन' में बनाया हुआ सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडियम् का विसंक्रमित या निर्जीवित (Sterile) विलयन होता है। इसमें ९४ से १०६ प्रतिशत तक सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडियम् होता है। उक्त सोल्यूशन प्रायः स्वच्छ रंगहीन विलयन होता है। वितरण—यह अच्छी तरह सुनबन्द (Hermetically sealed) एक-मात्रिक पात्रों (Single-dose containers) में वितरित किया जाता है।

मात्रा—५ मि० ग्रा० ($\frac{1}{12}$ ग्रेन) प्रति किलोग्राम शरीर-भार के हिसाब से शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

प्रयोग—इसका प्रयोग यकृत की क्रियाक्षमता (Liver function) के परीक्षण के लिए किया जाता है। एतदर्थ उपयुक्त मात्रा (५ मि० ग्रा० प्रतिकिलोग्राम शरीर-भार के लिए) को ५% दव के सोल्यूशन के रूप में शिरागतमार्ग द्वारा इन्जेक्शन किया जाता है। आधा घंटे के बाद रोगी के शरीर से रक्त खींचकर उसमें उक्त रंजक द्रव्य की मात्रा का परीक्षण किया जाता है। स्वस्थावस्था में आधे घंटा के अन्दर लगभग सब औषधि यकृत द्वारा उत्सर्गित हो जाती है।

व्यावसायिक योग :—

(१) साइटोबेरियम् Citobarjum (E. Merck.) १५० मि० ग्रा० एवं २ किलोग्राम की शीशियाँ (Bottles) आती हैं। मुख द्वारा सेवन किया जाता है। एक परीक्षा के लिए प्रायः १५० ग्राम की शीशी पर्याप्त है।

(२) एलुबर Alubar (Wander)—एलुमिनियम् तथा बेरियम् का यौगिक है, जो आमाशयान्त्रप्रणाली के क्ष-किरण चित्रण के लिए उपयुक्त है। १२५ ग्राम के बक्स आते हैं।

एजोवन ब्ल्यू (Azovan Blue), B. P. C. (अं०)।

रासायनिक संकेत : $C_{34}H_{24}O_{14}N_6S_4Na_4$

नाम—एजोवेनम् सेरुलियम् Azovanum Caeruleum (Azovan. Caerul.)—ले०।

पर्याय—इवेन्स ब्ल्यू (Evans Blue)।

वर्णन—यह नीले रंग का अथवा नीलापन लिए हरे रंग का या भूरे रंग का उन्दचूष (Hygroscopic) चूर्ण होता है जो जल में तो अच्छी तरह घुल जाता है, किन्तु अल्कोहल् में थोड़ा-थोड़ा ही घुलता है।

मात्रा—२० से ४० मि० ग्रा० ($\frac{1}{3}$ से $\frac{3}{5}$ ग्रेन) शिरागत इन्जेक्शन द्वारा।

गुण-कर्म तथा प्रयोग—निकट भविष्य में सम्भावी स्तब्धता (Impending shock) आदि अवस्थाओं में रक्त राशि का विनिश्चय बहुत सहायक होता है। इसके अतिरिक्त जब शिरागत मार्ग द्वारा काफी परिमाण में रक्त, प्लाज्मा या अन्य द्रव प्रविष्ट करने की आवश्यकता होती है, तो कितने परिमाण में इन द्रव्यों का अन्तः संक्रमण करना चाहिए इसके निर्णय के लिए पहले शरीरगत रक्तराशि का परीक्षण कर लेना पड़ता है। अतएव इन अवस्थाओं में रक्तराशि के विनिश्चय के लिए अजोवन ब्ल्यू का उपयोग किया जाता है। इसके लिए ०.५% का जलीय विलयन (२५ मि० ग्रा० अजोवन ब्ल्यू) ५ सी० सी० की मात्रा में शिरामार्ग द्वारा इंजेक्ट किया जाता है। इन्जेक्शन देने के पहले १० सी० सी० रक्त निकाल लिया जाता है। १५ मिनट बाद १० सी० सी० रक्त लेकर विकेन्द्रीकरण यंत्र (Plasma—dye—haematocrit method) द्वारा रंग-द्रव को पृथक कर रक्त के परिमाण (Volume) का विनिश्चय किया जाता है।

इन्डिकारमिनम् Indicarminum (Indicarmin.) I. P., B. P.

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_8O_8N_2S_2Na_2$.

नाम—इन्डिगो कारमीन (Indigo Carmine)—अं०।

पर्याय—Sodium Indigotindisulphonate.

वर्णन—नीले रंग का चूर्ण होता है, अथवा नीले रंग के दाने (Granules) होते हैं, जिनमें ताम्र जैसी आभा आती है। इसमें कोई गन्ध नहीं होती तथा स्वाद में नमकीन (saline) होता है। विलेयता—१०० भाग ठंढे जल में घुलता है। गरम पानी में फौरन घुल जाता है।

मात्रा—०.०५ से ०.१ ग्राम ($\frac{3}{4}$ से $1\frac{1}{2}$ ग्रेन) अधस्त्वक् तथा पेशीगत सूचिकाभरण द्वारा; ८ से १६ मि० ग्रा० ($\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{4}$ ग्रेन) शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

प्रयोग—इन्डिगोकारमीन का उपयोग वृक्कों की कार्यक्षमता (Function) के परीक्षण के लिए किया जाता है। एतदर्थ ०.४% बल का सोल्यूशन प्रयुक्त किया जाता है। ४ से १० मि० लि० या सी० सी० (६० से १५० मिनम् या बूँद) मात्रा अधस्त्वक्, पेशीगत या शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त करते हैं। स्वस्थावस्था में ७—१० मिनट में मूत्र में इसका रंग आ जाता है। तर-तम का भेद रंग की गम्भीरता से किया जाता है।

फिनोलसल्फोनफ्थेलीनम् Phenol sulphonphthaleinum (Phenolsulphonphthal.), I. P., B. P.—ले०; फिनोल सल्फोनेफ्थेलीन—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{19}H_{14}O_5S$.

पर्याय—फिनोल रेड (Phenol Red)।

वर्णन—फिनोल रेड चमकीले या गाढ़े लाल रंग का क्रिस्टलाइन चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है। विलेयता—१२०० भाग जल तथा २५० भाग अल्कोहल (९५%) में घुल जाता है। अल्कली हाइड्रॉक्साइड्स तथा कार्बोनेट्स के विलयन में फौरन घुल जाता है।

मात्रा—६ मि० ग्रा० ($\frac{1}{10}$ ग्रेन) पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा।

प्रयोग—फिनोल रेड का प्रयोग वृक्क के गुणकर्मीय परीक्षण (to test the renal function) के लिये तथा मूत्र में उद्जन्-अयन-संकेन्द्रण (hydrogen

ion-concentration of the urine) के ज्ञान के लिए किया जाता है। $\frac{1}{10}$ ग्रेन औषधि १ सी० सी० (१५ मिनम् या १ मि० लि०) लवण जल (Injection of sodium chloride) में मिलाकर पेशीगत या शिरागत इंजेक्शन द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। वृक्कों के स्वस्थ होने पर कम से कम ५०% औषधि प्रथम घंटे में तथा पहले एवं दूसरे घंटे में कम से कम ७५% औषधि उत्सर्गित हो जाती है।

मेनिटोल Mannitol (नॉट्-ऑफिशल)।

यह सफेद रंग का क्रिस्टलाइन पदार्थ होता है, जो स्वाद में मीठा होता है तथा जल में घुलनशील होता है। रासायनिक दृष्टि से यह हेक्साहाइड्रिक अल्कोहल् (Hexahydric alcohol) होता है। इसका उपयोग वृक्कीय गुच्छकों के निस्स्यंदनशक्ति (glomerular filtration) के परीक्षण के लिए किया जाता है। एतदर्थ ५० से १०० ग्राम औषधि २५% सोल्यूशन के रूप में शिरागत मार्ग द्वारा प्रयुक्त होता है।

———

परिच्छेद २

प्रकरण १

औषधियों को सुस्वादु बनाने के लिए प्रयुक्त द्रव्य (Sweetening agents):—

सेकेरिनम् (सेकेरिन), B. P. Saccharinum (Saccharin.)—ले०; Saccharin—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_7H_5O_3NS$

पर्याय—ग्लुसाइड Gluside; बेंजोसल्फिमाइड Benzosulphimide ।

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह O—benzoicsulphimide होता है, और toluene —O—Sulphonamide के ऑक्सिडेशन (Oxidation) द्वारा प्राप्त किया जाता है । इसमें कम से कम ९३% सेकेरिन होता है ।

वर्णन—यह सफेद क्रिस्टल्स या सफेद रंग के क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन होता है । कभी-कभी इससे एक हल्की सुगन्धि आती है । स्वाद में अत्यन्त मधुर होता है । विलेयता—२०° तापक्रम पर २६० भाग जल, ३० भाग अल्कोहल् (९५%) तथा १२ भाग एसिटोन में घुलता है । उबलते जल में अपेक्षाकृत अधिक घुलनशील (२५ भाग में ही) है । क्लोरोफॉर्म तथा सालवेंट ईथर में भी अंशतः विलेय (Partly Soluble) होता है । किन्तु डायल्यूट सॉल्यूशन ऑव अमोनिया तथा क्षारीय हाइड्रॉक्साइड्स् एवं कार्बोनेट्स् के विलयन में फौरन घुल जाता (Readily Soluble) है और विलयन से कार्बन-डाइ ऑक्साइड गैस निकलती है ।

सेकेरिनम् सोडियम् Sccharinum Sodium (Saccharin. Sodium), I. P., B. P.—ले०; सेकेरिन सोडियम् Saccharin Sodium—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_7H_4O_3NS\ Na, 2\ H_2O$.

पर्याय - सॉल्युबुल सेकेरिन (Soluble Saccharin); ग्लुसिडम् सॉल्युबुल (Glusidum Soluble) ।

प्राप्तिसाधन—यह रासायनिक दृष्टि से O—benzoicsulphimide का सोडियम् यौगिक (Sodium derivative) होता है; और O—benzoic sulphimide तथा सोडियम् हाइड्राक्साइड या सोडियम् कार्बोनेट की परस्पर क्रिया द्वारा प्राप्त किया जाता है । इसमें कम से कम ९८% सॉल्युबुल सेकेरिन होता है ।

वर्णन—यह सफेद क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में होता है, जो प्रायः गंधहीन या एक हल्की सुगंधि-युक्त होता है । स्वाद में अत्यन्त मधुर होता है । विलेयता—१'५ (१½) भाग जल तथा ५० भाग अल्कोहल् (९५%) में घुलनशील है ।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

जिन अवस्थाओं में शर्करा का प्रयोग निषिद्ध होता है, उन अवस्थाओं में (यथा मधुमेह एवं मेदोरोग Obesity आदि) औषधियों को मधुर बनाने के लिए शर्करा के स्थान में इसका प्रयोग किया जाता है। प्रयोग की दृष्टि से सेकेरिन की अपेक्षा सॉल्युबुल सेकेरिन अधिक उपयुक्त है। सेकेरिन के यौगिकों में पोषक तत्व (Nutritional value) बिल्कुल नहीं होता और सेवनोपरान्त मूत्र के साथ ज्यों का त्यों उत्सर्गित हो जाता है। अल्प मात्रा में लगातार अधिक समय तक भी इसके प्रयोग से कोई हानि की सम्भावना नहीं रहती। द्रव औषधियों को मधुर या सुस्वादु बनाने के लिए सेकेरिन के १% बल का सॉल्युशन प्रयुक्त कर सकते हैं।

सेकेरिन का उपयोग शाखाओं से जिह्वा तक के रक्त परिभ्रमण काल (Arm to tongue circulation time) के विनिश्चय के लिए भी किया जाता है। एतदर्थ ४ सी० सी० परिस्रुत-जल (Water for injection) में २½ ग्राम सोडियम् सेकेरिन का विलयन शिरागत इन्जेक्शन द्वारा दिया जाता है और देखा जाता है, कि कितनी देर में मधुर स्वाद आ जाता है। सामान्यतः स्वाभाविक अवस्था में इस कार्य में १० से १६ सेकंड समय लगता है। हृत्कार्य-भेद (Cardiac failure) में यह काल बढ़ सकता है।

(नॉन्-ऑफिशल योग)

१—लाइकर सेकेरिनाइ Liquor Saccharini (Liq. Saccharin.), B. P. C. सॉल्यूशन ऑव सेकेरिन (solution of saccharin), सेकेरिन सॉल्यूशन—अं०।

पर्याय—इलिक्जिर ऑव सेकेरिन Elixir of saccharin; इलिक्जिर ग्लुसिडाइ।

निर्माण विधि—सेकेरिन सोडियम् ३२० ग्रेन, अल्कोहल् (९०%) १½ फ्लुइड औंस, जल आवश्यकतानुसार १० औंस तैयार औषधि के लिए। पहले ८ औंस पानी में सेकेरिन को घोल लें, बाद में अल्कोहल् तथा इतना पानी मिलावें कि तैयार औषधि १० औंस हो जाय। इसमें ७·३१% सेकेरिन सोडियम् होता है।

२—टैबेली सेकेरिनाइ Tabellae saccharini (Tab. saccharin.), B. P. C.—ले०; टैबलेट्स ऑव सेकेरिन, सेकेरिन टैबलेट्स—अं०। यदि मात्रा का निर्देश न हो तो ½ ग्रेन सेकेरिन की टैबलेट्स देनी चाहिए।

(नॉट्-ऑफिशल)

साइक्लामेट केल्सियम् Cyclamate Calcium।

पर्याय—सुकेरिल केल्सियम् Sucaryl Calcium।

वर्णन एवं प्रयोग—सुकेरिल केल्सियम् का निर्माण रासायनिक संश्लेषण पद्धति द्वारा कृत्रिम रूप से किया जाता है। रासायनिक दृष्टि से यह केल्सियम् साइक्लोहेक्सिल सल्फामेट डाइहाइड्रेट (Calcium cyclohexyl—sulphamate dihydrate) होता है, जो सफेद रंग के गंधहीन

क्रिस्टलाइन चूर्ण के रूप में प्राप्त होता है। स्वाद में यह अत्यंत मधुर होता है और जल में अच्छी तरह घुलनशील होता है, किन्तु अल्कोहल् में नहीं घुलता।

सुकेरिन केल्सियम् भी एक सुस्वादुजनक द्रव्य है, किन्तु पोषक तत्व इसमें भी नहीं है। मधुमेह (Diabetes) तथा मेदोरोग (Obesity) के रोगियों में जिनमें शर्करा का प्रयोग निषिद्ध होता है, इसका प्रयोग मुख द्वारा सेवन की जाने वाली औषधियों को मीठा बनाने के लिए किया जाता है। यह प्रायः बिल्कुल विषैला नहीं होता तथा इसके सेवन के बाद मुँह तीता भी नहीं होता। मुख द्वारा अधिक मात्रा में प्रयुक्त किए जाने पर कुछ सारक (Laxative) प्रभाव कर सकता है। १५% बल के सॉल्यूशन के रूप में इसका व्यवहार आहार द्रव्यों एवं पान को मीठा बनाने लिए किया जा सकता है।

प्रकरण २

रुचिकारक द्रव्य (Flavouring agents)

वेनिलिनम् (वेनिलिन), I. P., B. P. Vanillinum (Vanillin.)—ले०; Vanillin —अं० ।

Family : Orchidaceae (मालाकन्द-कुल) ।

रासायनिक संकेत : $C_8H_8O_3$.

प्राप्तिसाधन—रासायनिक दृष्टि से यह 4—hydroxy--3—methoxy benzaldehyde होता है, जो (१) नैसर्गिक रूप से आर्किडेसिई-कुल की कतिपय आरोही स्वभाव की क्षुद्र वनस्पतियों से अथवा (२) कृत्रिम रूप से रासायनिक संश्लेषण-पद्धति द्वारा (Synthetically) प्राप्त किया जाता है। वनस्पतियों में यह मालाकन्द-कुल की वेनिला जाति की विभिन्न प्रजातियों (species) से प्राप्त होता है, जिनमें वेनिला प्लेनिफोलिया प्रजाति Vanilla planifolia Andrews मुख्य है।

वर्णन—वेनिला सफेद रंग अथवा मलाई के रंग (Cream-coloured) की क्रिस्टलाइन सुइयों (Crystalline needles) अथवा चूर्ण के रूप में होता है। इसमें वेनिला वनस्पति का विशिष्ट गंध एवं स्वाद पाया जाता है। विलेयता—१०० भाग ठंडे पानी (अपेक्षाकृत उबलते पानी में अधिक) में घुलता है; किन्तु अल्कोहल (९५%) तथा स्थिर एवं उड़नशील तेलों (Fixed and Volatile oils) में सुविलेय या अच्छी तरह घुलनशील (Freely soluble) होता है। इसके अतिरिक्त २० भाग ग्लिसरोल तथा क्षारीय हाइड्राक्साइड्स के सोल्यूशन में भी घुल जाता है। संरक्षण—इसको प्रकाश से बचाना चाहिए।

प्रयोग

व्यवहार में वेनिला का उपयोग इत्रसाजी (Perfumery) में तथा चिकित्सा-व्यवहार में इसको औषधीय आयण्टमेंट, क्रीम, लोशन एवं लिनिमेंट्स को सुगन्धित बनाने के लिए मिलाते हैं।

प्रकरण ३

दवाइयों को रंगीन एवं आकर्षक बनाने के लिए प्रयुक्त द्रव्य :—

(Colouring agents) :—

अमरेन्थम् (अमरेन्थ), I. P., B. P. C. Amaranthum (Amaranth.)—ले०; Amaranth—अं० ।

रासायनिक संकेत : $C_{20} H_{11} N_2 O_{10} Na_3 S_3$.

पर्याय—बोर्डो एस० Bordeaux S; रेड नं० २ Red No. 2 (Colour Index no. 184; Society of Dyers and Colourists, U. K.); F. D. & C. Red No. 2.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह 1—(4—Sulpho—1—naphthylazo)—2—naphthol—3 : 6—disulphonic acid का ट्राइसोडियम् साल्ट (Trisodium Salt) होता है। इसमें कम से कम ७०% अमरेन्थ होता है।

वर्णन—यह लाली लिए गाढ़े भूरे रंग का चूर्ण होता है, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में किंचित् नमकीन होता है। विलेयता—जल में घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल् (९५%) में केवल अत्यल्प मात्रा में घुलता (Very slightly Soluble) है। संरक्षण—अमरेन्थ को अच्छी तरह डाट-बन्द पात्रों में रखना चाहिए।

प्रयोग—

अमरेन्थ का उपयोग औषधियों एवं आहार-द्रव्य को रंगीन बनाने के लिए किया जाता है। १ औंस द्रव्य को रंगीन बनाने के लिए 'सॉल्यूशन ऑव अमरेन्थ B. P. C. का ५ बूँद पर्याप्त है।

(नॉट-ऑफिशल)

१—द्रावकर अमरेन्थाः Liquor Amaranthi (Liq. Amaranth.) B. P. C.—ले० ; सॉल्यूशन ऑव अमरेन्थ, अमरेन्थ सॉल्यूशन—अं० ।

निर्माण-विधि—अमरेन्थ ४३३ ग्रेन, क्लोरोफार्म वाटर १० फ्लुइड औंस में घोलें। इसमें १% अमरेन्थ होता है।

कोकस (कोचिनील), I. P., B. P. Coccus (Coco.)—ले०; Cochineal—अं० ।

Family : Coccidae.

पर्याय—कोकस केक्टी Coccus cacti; कृमिदाना—हिं० ।

प्राप्तिसाधन—कोचिनील वास्तव में डेक्टिलोपियस् कोकस् (Dactylopius coccus Costa.) प्रजाति की अंडे एवं लार्वा (Larvae) युक्त मादा कृमि (Female insect) होती है, जिसको सुखाकर रख लिया जाता है।

उत्पत्ति-स्थान—उत्तरी अमरीका का मेक्सिको प्रान्त एवं कनारी द्वीप समूह (Canary Islands)।

वर्णन—मेक्सिको प्रान्त में नागफनी के पौधों पर यह कृमि पाली जाती है। जब मादा कृमि की वृद्धि पूर्णतः हो जाती है और वह अंडे देने लगती है, तो अंडे एवं लार्वे सहित उनको संग्रहीत कर लिया जाता है। फिर उनको गंधक की आँच में अथवा कोयले की आँच में मार कर धूप में सुखा कर रख लेते हैं। कोचिनील में एक विशिष्ट प्रकार की गंध पाई जाती है। उक्त कृमि ३·५ से ५·५ मि० मि० तक लम्बी तथा ३ से ४·५ मि० मि० तक चौड़ी एवं रंग में नीललोहित-श्याम (Purplish-black) अथवा नीललोहित-खाकस्तरी (Purplish-grey) रंग की होती है। रूपरेखा (Outline) में अंडाकार होती है, जिसका पृष्ठ-तल (dorsal surface) उमड़ा हुआ या उन्नतोदर (Convex) होता है, जिस पर अनुप्रस्थ दिशा में झुर्रियाँ तथा लगभग ११ रेखायें दीखती हैं। उदर-तल (Ventral surface) चपटा तथा किंचित खातोदर (Concave) होता है। कोचिनील का आसानी से चूर्ण बन जाता है, जो गाढ़े लाल रंग का होता है।

रासायनिक संगठन—(१) १०% कारमिनिक एसिड (Carminic Acid), जो लाल रंग के छोटे प्रिज़ारिंयक क्रिस्टल्स (Red prismatic crystals) के रूप में प्राप्त होता है, तथा जल, एल्कोहल् एवं क्षारीय सोल्युशन में घुलनशील होता है। (२) १०% वसा (Fat) एवं २% मोमजातीय पदार्थ (wax)। कारमिनिक एसिड से सल्फ्यूरिक एसिड आदि द्रव्यों की क्रिया से कारमीन (Carmine) पृथक प्राप्त किया जाता है। (व्यवसाय में इसका व्यवहार बहुत होता है)।

प्रयोग—चिकित्सा-व्यवहार में कोचीनील का प्रयोग मिक्सचर आदि को रंगीन बनाने के लिए किया जाता है। एतदर्थ इसका टिंक्चर या सॉल्यूशन व्यवहार होता है।

(योग)

१—टिंक्चुरा कोक्सी Tinctura cocci (Tinct. Cocc.) I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव कोचिनील Tincture of Cochineal—अं०। कृमिदाना या वीरबहूटी का टिंक्चर, १० भाग में १ भाग कोचिनील होता है।

मात्रा—५ से १५ बूंद।

२—कारमिनम् Carminum (Carmin.), B. P. C.—ले०; कारमीन (Carmine)—अं०।

वर्णन—कारमीन, कृमिदाना या कोचिनील का रंजक तत्व (Aluminium lake of the Colouring matter of Cochineal), जो कोचिनील के जलीय फाण्ट (Aqueous infusion) में स्फटिका (Alum) मिलाकर प्राप्त किया जाता है। इसमें ५०% तक कारमिनिक एसिड होता है। इसको जलाने पर जले हुए पंख (Burnt feather) की बू आती है। यह चमकीले हल्के लाल रंग के टुकड़ों में होता है, जिसका आसानी से चूर्ण बनाया जा सकता है। संरक्षण—इसको अच्छी तरह डाट-बंद पात्रों (well-closed containers) में रखना चाहिए।

विलेयता—जल तथा डायल्यूट एसिड्स में तो अविलेय होता है, किन्तु डायल्यूट सॉल्यूशन ऑव अमोनिया तथा अन्य डायल्यूट क्षारीय द्रवों (Dilute alkaline liquid) में तुरंत घुल जाता (Readily soluble) है। इसके घुलने से गाढ़े लाल रंग का विलयन प्राप्त होता है।

प्रयोग—चिकित्सा-व्यवहार में कारमीन का उपयोग मलहम (Ointments) दंतमंजन चूर्ण (Tooth powders), मुखधावन द्रव (Mouth-washes), डस्टिंग पाउडर तथा अनेक अन्य कल्पों को रंगने के लिए किया जाता है। औषधि में अच्छी तरह रंग लाने के लिए पहले कारमीन को थोड़ी मात्रा 'स्ट्रांग सोल्यूशन ऑव अमोनिया' में घोल लिया जाता है, और फिर इस घोल को औषधि के साथ खरल में रगड़कर (Trituration) मिलाया जाता है। पोटासियम् साइट्रेट, ग्लिसरिन एवं जल के साथ अमोनिया सॉल्यूशन में बनाया हुआ कारमीन का ६% बल का सॉल्यूशन मिक्सचर तथा मुखधावन द्रवों में मिलाने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस कार्य के लिए १ औंस द्रव को रंगने के लिए उक्त सॉल्यूशन की ३-४ बूँद मात्रा पर्याप्त होती है। किन्तु कारमीन सॉल्यूशन का उपयोग क्लीव एवं क्षारीय प्रतिक्रिया वाले द्रवों में ही मिलाने के लिए कर सकते हैं। आम्लिक प्रतिक्रिया (Acid solution) वाले साल्यूशन में इसको मिलाने से कारमीन पृथक होकर नीचे बैठ जाता है।

केरामेल (I. P.) (जली हुई चीनी) Caramel (Caram.) Caramel.

पर्याय—Burnt Sugar Colouring, I. P.; सेकेरम् युस्टम् Saccharum Ustum (Sacch. Ust.)—ले०; बर्न्ट सूगर Burnt Sugar, B. P. C.

प्राप्ति-साधन—केरामेल को प्राप्त करने के लिए पहले चीनी या ग्लूकोज में थोड़ा-सा क्षार (Alkali) या क्षारीय कार्बोनेट मिलाकर गरम किया जाता है, यहाँ तक कि इसका मीठा स्वाद बिल्कुल नष्ट होकर अवशिष्ट पदार्थ गाढ़े भूरे रंग के पिण्ड के रूप में (Uniform dark brown mass) प्राप्त होता है। केरामेल इसी का संकेन्द्रित जलीय विलयन (Concentrated aqueous Solution) होता है।

वर्णन—गाढ़े भूरे रंग (Dark brown) का गाढ़ा (Thick) द्रव होता है, जिसमें जली चीनी का विशिष्ट गंध पाया जाता है। स्वाद में रुचिकारक तिक्त होता है। विलेयता—जल में तो सभी मात्राओं में मिल जाता (Miscible in all proportions) है; किन्तु डायल्यूट अल्कोहल् में केवल ५५% (55 percent by Volume) में ही मिलता है। इसके अतिरिक्त ईथर, क्लोरोफॉर्म, एसिटोन, बेंजीन, पेट्रोलियम् बेंजीन तथा तारपीन के तेल में भी मिल जाता (Miscible) है। संरक्षण—अच्छी तरह डाट-बन्द पात्रों में होना चाहिए।

प्रयोग

इसका प्रयोग भी औषधियों एवं विभिन्न कल्पों को रंगने के लिए किया जाता है। प्रायः १ फ्लुइ औंस द्रव को रंगने के लिए 'सोल्यूशन ऑव बर्न्ट शुगर' का १० बूँद पर्याप्त होता है।

(नॉट-ऑफिशल)

१—लाइकर सेकेराइ युस्टाइ Liquor Sacchari Usti (Liq. Sacch. Ust.), B. P. C.—ले०; सॉल्यूशन ऑव बर्न्ट शूगर Solution of Burnt Sugar—अं०। जली हुई चीनी ५ फ्लुइड औंस, क्लोरोफार्म वाटर ५ फ्लुइड औंस में मिलावें। ५०% जली चीनी का द्रव होता है।

क्रोकस् Crocus (Croc.), I. P. (ले०, अं०) ।

Family : Iridaceae (इरिडेसिई: केशर-कुल) ।

प्राप्ति साधन—यह क्रोकस् सेटाइवस् (Crocus sativus Linn) नामक क्षुद्र वनस्पति के पुष्पों की सुखाई हुई कुक्षियाँ (Dried stigma) होती हैं। इसमें कुक्षिवृन्त (Yellow styles of the plant) की अधिकतम मिश्रण १०% तक होता है।

नाम—केशर, कुङ्कुम, रुधिर, संकोच—सं०; केसर—हिं०, म०, गु०; जाफरान—अ०; सैफ्रन Saffron—अं०।

उत्पत्ति-स्थान—केशर दक्षिणी यूरप का आदिवासी पौधा है। स्पेन, फ्रांस, इटली तथा यूनान आदि यूरोपीय देशों में तथा तुर्की, फारस एवं चीन में इसकी खेती भी की जाती है। भारतवर्ष में भी काश्मीर तथा जम्मू के कई स्थानों में बड़े परिमाण में केसर की खेती की जाती है।

वर्णन—केशर में एक विशिष्ट प्रकार की उग्र सुगन्धि पाई जाती है। केसर को भिगोने या गरम करने से यह सुगन्धि और भी बढ़ जाती है। स्वाद में किंचित् तिक्त (तीता होता है)।

प्रयोग—पाश्चात्य वैद्यक में केशर का उपयोग प्रधानतः रंजक द्रव्य (Colouring agent) के रूप में ही किया जाता है, किन्तु आयुर्वेद एवं यूनानी पद्धति की यह एक प्रधान औषधि है।

(योग)

१—टिंक्चुरा क्रोसाइ Tinctura Croci (Tinct. Croc.) I. P.—ले०; टिंक्चर ऑव क्रोकस (Tincture of Crocus)—अं०।

ऑरेन्ज जी० Orange G, B. P. C.—अं०; नोवारेन्शिआ Novaurantia (Novaurant.)—ले०।

रासायनिक संकेत : $C_{16}H_{10}O_7N_2S_2Na_2$.

पर्याय—D. & C. Orange No. 3. (B. P. C.); Colour Index No. 27.

वर्णन—ऑरेन्ज जी० पीताभ-लाल रंग के चूर्ण के रूप में होता है, अथवा इसके क्रिस्टलाइन छोटे-छोटे पत्रमय टुकड़े (Crystalline leaflets) आते हैं, जो प्रायः गंधहीन तथा स्वाद में नमकीन होते हैं। रासायनिक दृष्टि से इसमें प्रधानतः (*disodium 1—benzene—azo—2—hydr*-oxynaphthalene—6 : 8—disulphonate होता है। विलेयता—जल में अच्छी तरह घुलनशील होता है; किन्तु अल्कोहल् में थोड़ा-थोड़ा ही घुलता है।

प्रयोग

ऑरेन्ज जी० भी औषधीय द्रव्यों एवं कल्पों को रंगने के लिए एक उत्तम यौगिक (Colouring agent for medicines) है। *टार्ट्राजीन के साथ मिलाने से* (i. e. Compound Solution of Tartrazine) यह बिल्कुल केसर जैसा रंग देता है। एतदर्थ १ औंस द्रव को रंगने के लिए उपर्युक्त सॉल्यूशन की ५ बूँद मात्रा पर्याप्त है। इसका प्रयोग आम्लिक एवं क्षारीय दोनों ही प्रकार की प्रतिक्रियावाले द्रव्यों के लिए समान रूप से किया जा सकता है।

टार्ट्राजीन Tartrazine, B. P. C.—अं०; टार्ट्राजिना Tartrazina (Tartrazin.)—ले०।

रासायनिक संकेत : $C_{१६}H_{९}O_{९}N_{४}S_{२}Na_{३}$.

पर्याय—F. D. & C. Yellow No. 5. (B. P. C.); Colour Index No. 640.

वर्णन—रासायनिक दृष्टि से टार्ट्राजीन में प्रधानतः trisodium 5—hydroxy—4—(p—Sulphobenzeneazo)—1—(p—Sulphophenyl) pyrazole—3—Carboxylate होता है। टार्ट्राजीन का नारंग-पीत वर्ण (Orange-yellow) का चूर्ण होता है, जो जल में घुल जाता है। अल्कोहल् में भी थोड़ा-थोड़ा घुलनशील है।

प्रयोग—ऑरेन्ज जी० की भाँति।

(योग)

१—लाइकर टार्ट्राजिनी कम्पोजिटस् Liquor Tartrazinae Compositus (Liq. Tartrazin. Co.), B. P. C.—ले०; कम्पाउण्ड सॉल्यूशन ऑव टार्ट्राजीन—अं०।

पर्याय—लाइकर फ्लेवस् Liquor Flavus।

निर्माण-विधि—टार्ट्राजीन ३३ ग्रेन, आरेन्ज जी ११ ग्रेन, ग्लिसरिन २½ फ्लुइड औंस, क्लोरोफार्म वाटर १० फ्लुइड औंस तैयार औषधि के लिए। पहले ७ औंस क्लोरोफार्म वाटर में टार्ट्राजीन तथा आरेन्ज जी को घोल लें। अब इसमें ग्लिसरिन तथा इतना क्लोरोफार्म मिलायें कि तैयार औषधि की मात्रा १० फ्लुइड औंस हो जाय।

ट्राइपेनम् सिरुलियम् Trypanum Caeruleum (Trypan. Caerul.)—ले०; ट्राइपन ब्ल्यू Trypan Blue, B. P. C.—अं०।

रासायनिक संकेत : $C_{३४}H_{२४}O_{१४}N_{६}S_{४}Na_{४}$.

पर्याय—Colour Index No. 477.

प्राप्ति-साधन—रासायनिक दृष्टि से यह tetrasodium 4 : 4'—bis (8—amino—1—hydroxy—3 : 6—disulpho—2—naphthaleneazo)—3 : 3'—dimethyldiphenyl होता है।

वर्णन—यह नीलापन लिए खाकस्तरी रंग का (Bluish-grey) चूर्ण होता है, जो जल में तो घुल जाता है; किन्तु अल्कोहल् में अविलेय (Insoluble) होता है।

प्रयोग—इसका प्रयोग प्रधानतः स्थानिक क्रिया के लिए प्रयुक्त रंगहीन घोलों (Solutions) को रंगने के लिए किया जाता है। एतदर्थ ब्रिटिश फॉर्माकोपिअल कोडेक्स में उल्लिखित योग 'सॉल्यूशन ऑव ट्राइपन ब्ल्यू' बहुत उपयुक्त है। एक औंस द्रव को रंगने के लिए उपर्युक्त सॉल्यूशन की ५ बूँद मात्रा पर्याप्त है।

(नॉट-ऑफिशल)

१—लाइकर ट्राइपेनाइसिरुलियाइ Liquor Trypani Caerulei (Liq. Trypan. Caerul.)—ले०; सॉल्यूशन ऑव ट्राइपन ब्ल्यू Solution of Trypan Blue, B. P. C.—अं०। ट्राइपन ब्ल्यू १५ ग्रेन, जल १० औंस में घोल बनावें। इसमें ०·३४% ट्राइपन ब्ल्यू होता है।

अध्याय १५

विकिरण–चिकित्सा (Radiation Therapy)

क्ष–किरण (X'rays)

क्ष-किरण की क्रिया भी रेडियम् से प्राप्त गम्मा-किरणों (Gamma radiation) की ही भाँति होती है। विद्युत्-चुम्बकीय पट्ट में क्ष-किरणों का स्थान लोहितातीत किरणों (Ultra-violet rays) तथा गम्मा-किरणों के मध्य में होता है। किरणें जितनी ही अल्पतरंग दैर्घ्य की होती हैं, उतनी ही कोशाओं में प्रविष्ट होती तथा क्रियाशील होती हैं। क्ष-किरणें विशेष प्रकार से निर्मित शून्य नलिकाओं (Vacuum tubes) में निर्मित की जाती हैं और उच्च वोल्टेज की विद्युत्धारा उसमें होकर प्रवाहित की जाती है। जब वोल्टेज हल्का होता है तो मृदु किरणें उत्पन्न होती हैं, जो कम गहराई तक प्रविष्ट होती हैं और वोल्टेज अधिक तीव्र होने पर कठोर क्ष-किरणें उत्पन्न होती हैं, जिनमें अधिक गम्भीरता तक प्रविष्ट होने की शक्ति होती है। क्ष-किरणों का माप रेंटजेन युनिट्स् ("Roentgen" or "r" units) में किया जाता है। चिकित्साव्यवहार में अब क्ष-किरणों का प्रयोग एवं महत्त्व बहुत बढ़ गया है। अस्थियों एवं गम्भीर अंगों की विकृति के चित्रण के लिए क्ष-किरणों का उपयोग किया जाता है जिससे शल्यकर्म में बड़ी सहायता हो गई है। उक्त नैदानकीय उपयोगिता के अतिरिक्त चिकित्सार्थ भी इसका उपयोग प्रचुरता से किया जाता है। चिकित्सा शास्त्र की इस शाखा की अब इतनी उन्नति हो गई है कि यह एक स्वतंत्र विषय हो गया है। विभिन्न संस्थानों का चित्रण करने के लिए पहले क्ष-किरण अप्रवेश्य या अपारदर्शी द्रव्यों (contrast media) का प्रयोग किया जाता है, तदनु निश्चित समय के बाद चित्रण किया जाता है।

क्ष-किरणों का प्रयोग अघातक-अर्बुदों (Benign tumours) तथा अनेक घातक अर्बुदों (Malignant tumours) के विलयन के लिए बहुत उपयोगी होता है। चर्मकील या किलोयड (Keloid), पेपिलोमा या अपस्तरीय-अर्बुदों (Papilloma or Epithe lial tumours) तथा ऑस्टियोक्लेस्टोमा (Osteoclastoma) में बहुत उपकारी होता है। एंकिलोजिंग स्पांडिलाइटिस (Ankylosing spondylitis) तथा संध्यस्थि शोथ (Osteo-arthritis) की प्रारम्भिक अवस्थाओं में क्ष-किरणों का प्रयोग करने से उपद्रवों की शान्ति होती है। इसके अतिरिक्त अनेक चिरकालीन एवं दुराग्रही स्वरूप के चर्मरोगों में भी यह चिकित्सा बहुत उपयोगी है।

घातक-अर्बुदों में रोग के प्रारम्भ में ही क्ष-किरणों का प्रयोग करने से स्थायी लाभ तक की आशा रहती है। विकृति बहुत बढ़ जाने पर प्रायः तात्कालिक आराम (Palliative therapy) के लिए इसका व्यवहार किया जाता है।

नीललोहितातीत किरणें (Ultra-violet rays)

सूर्य की दृश्य किरणों में सात मौलिक रंगों की किरणों का मिश्रण होता है, जिसके एक सिरे पर लाल किरणें (Red rays) तथा दूसरे सिरे पर नीललोहित (Violet rays) होती हैं। इन दृश्य किरणों के दोनों सिरों पर अदृश्य किरणें भी होती हैं, जिनको रक्तिम पूर्व किरणें (Infra-red rays) तथा नीललोहितातीत किरणें (Ultra-violet rays) कहते हैं। इस प्रकार न्यूनाधिक मात्रा में सूर्यप्रकाश के द्वारा ये किरणें नैसर्गिक रूप से भी हम लोगों को मिलती रहती हैं। यही कारण है, कि जीव संसार (वानस्पतिक एवं जान्तव दोनों ही) की स्थिति के लिए सूर्य प्रकाश बहुत आवश्यक है और जिन देशों में यह सुलभ है, वहाँ अनेक रोगों से मुक्ति इस नैसर्गिक व्यवस्था के कारण ही होती है। सूर्य किरणों के संघटन में ऊँचाई (altitude) तथा वायुमण्डल की स्वच्छता का भी प्रभाव पड़ता है। वायुमण्डलगत आर्द्रता, धूल-धक्कड़ एवं अन्य केन्द्रिय गंदगियों के कारण नीललोहितातीत किरणें नष्ट हो जाती हैं। यही कारण है, कि अधिक ऊँचाई पर जहाँ इन गंदियों की सम्भावना कम होती है, सूर्य की किरणों में नीललोहितातीत किरणें अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती हैं। प्रकाश वर्णपट्ट में नीललोहित किरणों के पश्चात् जो अदृश्य किरणें होती हैं, उनको नीललोहितातीत किरणें कहते हैं। विद्युतचुम्बकीय पट्ट में इन किरणों का स्थान प्रकाश-किरण तथा क्ष-किरणों के मध्य में होता है। त्वचा पर इन किरणों के प्रभाव से रक्तवाहिनियाँ विस्फारित होती हैं तथा प्रतिक्षोभक (Counter irrant) प्रभाव होता है, जिससे गम्भीर शोथ का उपशम या विलयन होता है। दूसरा प्रभाव यह होता है, कि त्वचा का विसंक्रमण (Sterilisation) होता है। दूषित क्षेत्र पर किरणों के प्रभाव से विकारी जीवाणुओं की वृद्धि का निरोध होता है। नीललोहितातीत किरणों का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य यह होता है, कि इनके प्रभाव से बनस्पतियों में पाये जाने वाले अर्गोस्टेरोल (Ergosterol) का रूपान्तर विटामिन डी$_2$ में तथा त्वचागत 7—dehydrocholesterol का रूपान्तर विटामिन डी$_3$ में होता है। इस प्रकार भारतवर्ष जैसे गरीब देश के लिए विटामिन डी की नैसर्गिक उपलब्धि के लिए सूर्य प्रकाश प्रकृति की देन है। केल्सियम् के शोषण एवं समवर्त (Calcium Metabolism) में विटामिन डी का मुख्य स्थान है। इसके अभाव में केल्सियम् के अभावज रोग होते हैं। यही कारण है, कि भारतवर्ष में निम्नतम कोटि का आहार मिलने पर भी अस्थिवक्रता (Rickets) एवं अस्थिमृदुता (Osteo-malacia) आदि केल्सियम् एवं विटामिन डी के अभावज रोग अपेक्षाकृत बहुत कम होते हैं। इसी प्रकार जिन जन्तुओं की उपग्रैवेयक ग्रंथियाँ निकाल दी गई हैं, उनमें नीललोहितातीत किरणों का प्रयोग करने से लासक (Tetany) रोग का नियंत्रण होता है। इसके अतिरिक्त त्वचा पर नीललोहितातीत किरणें उत्तेजक प्रभाव करती हैं, जिससे शरीर में सहनशक्ति (body resistance) बढ़ती है, भूख में सुधार होता है तथा निद्रा ठीक ढंग से आती है और मस्तिष्क पर भी बल्य प्रभाव होता है। यही कारण है, कि सूर्य रश्मिचिकित्सा (Heliotherapy) से भी अनेक व्याधियों में बहुत लाभ होता है।

दुष्प्रभाव (Untoward effects)—उपर्युक्त वर्णन से यह न समझना चाहिए कि नीललोहितातीत किरणों में इतने गुण हैं, तो यह सदैव तथा हर अवस्था में लाभ ही लाभ करती है। युक्तियुक्त प्रयोग न होने से लाभ के स्थान में अनेक हानियाँ तथा दुष्प्रभाव भी हो सकते हैं। मात्राधिक्य से त्वचागत स्थानिक विकृतियों के अतिरिक्त निद्रानाश, बेचैनी, आलस्य तथा मिचली आदि उपद्रव भी होते हैं। शरीर का वजन कम हो जाता है। त्वचा के अधिक क्षेत्र पर प्रभाव पड़ने से बालों की घनता कम हो जाती है। यदि पहले से त्वचा में विचर्चिका या छाजन (Eczema) आदि रोग हों तो और भी उग्र हो जाते हैं। यदि चश्मे आदि से नेत्रों की सुरक्षा न की जाय तो जराजन्य मोतियाबिन्द (Senile cataract) जल्दी होने की आशंका रहती है।

चिकित्सोपयोग—नीललोहितातीत किरणों का चिकित्सा में प्रचुरता से प्रयोग किया जाता है। अस्थिवक्रता (Rickets) तथा केल्सियम् एवं विटामिन 'डी' के अभाव से होनेवाली विकृतियों में इससे बहुत लाभ होता है। अस्थि एवं संधि-क्षय (Bone and joint tuberculosis) तथा त्वचागत एवं उदर्याकला की क्षयज विकृतियों में भी नीललोहितावकरण बहुत लाभप्रद सिद्ध होता है। बच्चों के दुस्वास्थ्य में भी यह उपयोगी होता है। चिरकालीन छाजन (Chronic psoriasis), पिटिरिएसिस् (Pityriasis) तथा मुखदूषिका (Acne volgaris) में इन किरणों के प्रयोग से दूषित क्षेत्र सूख कर, वहाँ का छिलका उतर जाता है और स्वस्थ त्वचा का रोपण होता है। शिर का बाल झड़ने पर (Alopecia areata) भी विकरण करने से वहाँ लालिमा होकर बाल उगने में उत्तेजना मिलती है। जिन लोगों को फोड़ा-फुन्सी (Furun culosis and boils) अधिक निकलते हों तथा मुखदूषिका (Acne) एवं साइकोसिस (Sycosis) तथा (Impetigo) आदि में भी विकरण द्वारा जीवाणुनाशक प्रभाव होकर लाभ होता है। चर्मगत यक्ष्मा (Lupus), विपादिका (Chilblain) तथा कारखानों में काम करनेवालों को होनेवाले त्वचा-शोथ (Industrial dermatitis) में भी यह उपयोगी है। दूषित घाव (Septic wounds), नाड़ीव्रण (Sinuses) तथा पुराने दुराग्रहीव्रण (Chronic ulcer) में विकरण करने से व्रणरोपण में उत्तेजना मिलती है। संधिगत आमवात, पेशीशूल, आमवाताभ संधिशोथ (Rheumatoid arthritis) तथा पेशी एवं कण्डरा-आवरणशोथ (Fibrositis) में विकरण से प्रतिक्षोभक प्रभाव होकर शोथ का विलयन होता है। दुःस्वास्थ्य एवं नाड़ी-दौर्बल्य में साधारण मात्रा में विकरण करने से बल्य प्रभाव होता है।

प्रयोग-निषेध—निम्नावस्थाओं में विकरण चिकित्सा निषिद्ध है, अथवा इन अवस्थाओं में सतर्कता के साथ तथा अपेक्षाकृत कम मात्रा में होना चाहिए।—(१) नाड़ीदौर्बल्य एवं वातज प्रकृतिवालों में (Neurotic persons), (२) जिन रोगियों में विकरण-चिकित्सा के प्रति संवेदनशीलता अधिक होती है। (३) धमनी-दार्ढ्य (Arterio-sclerosis) तथा हृत्कपाट रोगों (Valvulardisease of the heart); फुफ्फुस-यक्ष्मा (Pulmonary tuberculosis) के रोगियों में। जिन व्यक्तियों में यक्ष्मज दूषित क्षेत्र हो, उनमें विकरण-चिकित्सा से व्याधि में उग्रता होने की आशंका रहती है; (४) रक्तपित्त के रोगियों में, रक्तष्ठीवन तथा शोणितप्रियता (haemophilia) के रोगियों में इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए। (५) चिरकालज वृक्कशोथ (Chronic nephritis)। (६) तरुण या उग्र त्वचाशोथ या अन्य त्वचारोग में।

सेवन-विधि—सूर्य रश्मियों द्वारा चिकित्सा के लिए उपयुक्त मात्रा में लोहितातीत किरणों की उपलब्धि न होने से चिकित्साव्यवहार में इनका उत्पादन कृत्रिम साधनों द्वारा किया जाता है। एतदर्थ कार्बन आर्क लैम्प (Carbon arc lamp), मरकरी वेपर लैम्प (Mercury vapour lamp) या इलेक्ट्रिक लाइट अथवा इन्केन्डिसेन्ट लैम्प (Incandescent lamp) आदि का प्रयोग किया जाता है। मरकरी वेपर लैम्प के लिए "क्रोमेयर लैम्प Kromayer lamp" अधिक उपयुक्त होता है।

रेडियम् Radium (Ra.)

रेडियम् एक दुष्प्राप्य धात्वीयतत्व (Metallic element) है, जो सर्वप्रथम सन् १८९९ में पिश्बलेंड (Petchblende) नामक खनिज मिश्रण से प्राप्त किया गया था। युरेनियम् घटित अन्य खनिजों (Uranium containinn ores) से भी प्राप्त किया जाता है। रेडियम् सफेद रंग का होता है, जो हवा में खुला रहने से काला पड़ जाता है। रेडियम् की एक विशेषता यह है, कि सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप से यह बराबर वियोजित होता रहता (Constantly undergoing atomic disintegration) है जो अन्ततः रेडन (radon : a colourless gaseous radio active element) के रूप में प्राप्त होता है। इस शक्ति का रूपान्तर विभिन्न प्रकार के किरणों में होता है जिनमें अल्फा (Alpha), बिटा (Beta) तथा गम्मा (Gamma) किरणें विशेष महत्त्व की हैं। इनमें ९२% अल्फा किरणें होती हैं, जिनका वेग १२,००० से १८,००० हजार मील प्रति सेकण्ड होती है। चिकित्सा की दृष्टि से इनका विशेष महत्त्व नहीं है। बिटा किरणें ३१० होती हैं और इनका वेग ६०,००० से १८०,००० मील प्रति सेकण्ड होता है। इनमें प्रविष्ट होने की शक्ति अल्फा किरणों की अपेक्षा अधिक होती है। गम्मा किरणें केवल १८% ही होती हैं। इनमें प्रविष्ट होने की शक्ति अपेक्षाकृत सबसे अधिक होती है। इनकी क्रिया क्ष-किरणों (X'rays) की भाँति होती है। चिकित्साव्यवहार की दृष्टि से बिटा तथा गम्मा दोनों ही किरणें महत्त्व की हैं।

गुण-कर्म तथा प्रयोग।

रेडन या रेडियम् इमेनेशन (Radium emanation) अधिक मात्रा या अधिक कालतक प्रयुक्त किए जाने पर जीवित कोषाओं पर घातक प्रभाव करता है। यह क्रिया प्रयोग के १–२ दिन बाद से लेकर ३ सप्ताह बाद तक प्रगट हो सकती है। इस क्रिया-सरणी के बारे में अनेक वाद (theories) प्रचलित हैं। अल्प मात्रा में यह प्रभाव अल्पकालिक होता है। किन्तु अधिक मात्रा में प्रयुक्त किए जाने पर कोषायें सदा के लिए नष्ट हो जाती हैं। प्रयोग के समय तथा प्रभाव लक्षित होने के बीच के काल को गुप्त-काल (Latent persod) कहते हैं। इस काल की मर्यादा प्रयुक्त मात्रा एवं व्यवधान के विधियों पर निर्भर करती हैं। अल्प मात्रा में प्रयुक्त होने पर जीवित कोषाओं पर उत्तेजक प्रभाव होता है। वैकृतिक घातक कोषाओं (Malignant cells) पर रेडियम् का प्रभाव स्वस्थ सजीव कोषाओं की अपेक्षा अधिक पड़ता है। रेडियम् के इस गुण का उपयोग चिकित्सा में किया जाता है। किन्तु रेडियम्-चिकित्सा (Radium-therapy) में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इसका प्रयोग इतनी मात्रा में होना चाहिए कि वैकृतिक कोषायें तो नष्ट हो सकें, किन्तु स्वस्थ कोषाओं पर उसका घातक प्रभाव न पड़े।

घातक अर्बुदों (Malignant tumours) के विलयन एवं प्रशमन के लिए रेडियम् चिकित्सा बहुत उपयोगी पायी गयी है, जिससे चिकित्साव्यवहार में रेडियम् अपना विशिष्ट स्थान रखता है। जिह्वा एवं मुखगत कर्कटार्बुद (Cancer) तथा घातकार्बुदजन्यव्रण (Rodent ulcer) तथा चर्मगत अपस्तरीयघातकार्बुद (Epithelioma) एवं किलायेड (Keloid) में रेडियम्-चिकित्सा विशिष्टरूपेण उपयोगी होती है इसके अतिरिक्त मलाशय के कर्कटार्बुद (Cancer of the Rectum) तथा स्तनमण्डलके कर्कटार्बुद (Carcinoma of the Breast) में बिना शस्त्रकर्म किए केवल रेडियम्-चिकित्सा से उपशम हो जाता है। गुद के आस-पास के चर्मगत घातकार्बुदों (Epithelioma of the anus) में भी इसकी उपयोगिता बहुत है। गर्भाशयग्रीवा के कर्कटार्बुद (Carcinoma of the Cervix uteri)में थोड़ा-थोड़ा कई बार करके रेडियम् का प्रयोग करने से आशाप्रद लाभ होता है। गर्भाशयगात्रगत रक्तगुल्म (Fibroma and fibromyomata of the uterus) में भी रेडियम्-चिकित्सा उपयोगी बतलाई जाती है। उग्रस्वरूप के घातक-अर्बुदों का उच्छेद रेडियम् से होता है या नहीं यह विषय तो संदेहास्पद अवश्य है, किन्तु इसमें संदेह नहीं कि रेडियम्-चिकित्सा से आगे इनकी वृद्धि अवश्य रुक जाती है, तथा रक्तस्राव, अत्यधिक पीड़ा तथा दुर्गन्धित स्रावों आदि उपद्रव का तात्कालिक (Palliative) शमन अवश्य हो जाता है।

सेवन-विधि एवं मात्रा—रेडियम्-चिकित्सा में प्रथम महत्व की बात है, मात्रा का निर्धारण तथा विकिरण की अवधि, क्योंकि इस चिकित्सा की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है, कि रेडियम् का प्रयोग इतनी मात्रा में तथा केवल उस अवधि तक ही होना चाहिए, जिससे वैकृतिक कोषाओं पर तो घातक प्रभाव पड़े, किन्तु स्वस्थ कोषायें सुरक्षित रहें। मात्राधिक्य होने पर वैकृतिक कोषाओं के साथ-साथ स्वस्थ कोषायें भी नष्ट हो जाती हैं तथा मात्रा की कमी से वैकृतिक कोषाओं को और भी उत्तेजना मिलती है, जिससे स्थिति सुधरने के बजाय हालत और भी गम्भीर हो जाती है। मात्रा के माप में विकिरण की अवधि, विकीर्य रेडियो तत्व (radio-active element), व्यवधान (filtration), दूरी, रोगी का बलाबल एवं त्वचा की सह्यता आदि बातों को ध्यान में रखा जाता है। रेडियम् की मात्रा का उल्लेख 'रोन्टजन युनिट्स Rontgen units or "r" units' में किया जाता है। विकृत क्षेत्र त्वचागत या उत्तान धातुओं (Superficial) में होने पर गम्भीरस्थ (deep-seated) विकृत क्षेत्रों की अपेक्षा कम मात्रा देनी पड़ती है। मात्रा निर्धारण में निम्नबातों को ध्यान में रख सकते हैं—(१) इसकी क्रियाशीलता एवं प्रभाव विकिरणकाल (length of exposure) पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अल्पकालिक विकिरण से धातुओं को उत्तेजना मिलती है; इससे अधिक समय तक विकिरण करने से उस स्थान में शोथ उत्पन्न होता है। और भी दीर्घकाल तक प्रयोग करने से कोषायें नष्ट होने लगती हैं। (२) तेजी से बढ़ने वाले घातक अर्बुदों की कोषायें स्वस्थ धातुओं के कोशाओं की अपेक्षा जल्दी एवं अधिक प्रभावित होती हैं। (३) स्वस्थ कोशाओं में जिनकी वृद्धि तेजी से होती है, उनपर रेडियम्-विकरण का भी प्रभाव तेजी से होता है। लसीकाओं, लोम, त्वचाग्रंथियाँ तथा अंडकोष एवं डिम्बग्रंथि की कोषायें जल्दी प्रभावित होती तथा नष्ट होती हैं, तथा तरुणास्थि, अस्थि, पेशी एवं संयोजक एवं नाड़ीधातुओं को विकरण अधिक सह्य होता है।

चिकित्साव्यवहार में रेडियम् का प्रयोग निम्न विधियों द्वारा किया जाता है :—

(१) प्लेटिनम् सूचिका (Platinum needles)—इस विधि में प्लेटिनम् की छोटी-छोटी सुइयों में रेडियम् भरकर इन सुइयों को दूषित क्षेत्र में एक क्रम से प्रविष्ट कर ६ से १० दिन तक पड़ा रहने देते हैं। प्रत्येक सूई में २ से ३ मि० ग्रा० रेडियम् होती है। सुइयों का एक सिरा नुकीला होता है तथा इसका मुख वन्द होता है। इस प्रकार प्लेटिनम् व्यवधान का कार्य करता है, जिससे अल्फा, विटा तथा हल्की गम्मा किरण रुक जाती हैं केवल तीव्र गम्मा किरणें ही निकल पाती हैं। ये सुइयाँ प्रायः १ सेन्टीमीटर की दूरी पर लगाई जाती हैं। अधिक करीव होने से स्थान विशेष में मात्राधिक्य होने की तथा अधिक दूर रहने से अपर्याप्त होने की आशंका रहती है।

(२) प्लेटिनम्-नलिकायें (Platinum tubes)—यह प्लेटिनम् की नलिकायें होती हैं, जिनका एक शिरा वन्द होता है। प्रत्येक में ५ से २५ मि० ग्रा० रेडियम् भरा जाता है। त्वचागत विकृत क्षेत्र में लगाने के लिए पहले एक पेस्ट लगा दिया जाता है फिर ट्यूब्स उसमें लगा दी जाती हैं। योनि एवं गर्भाशय आदि गुहाओं में प्रयुक्त करने के लिए इनको रवर की उपयुक्त नलिकाओं में रख कर इन नलिकाओं को अभीष्ट गुहा में स्थापित कर दिया जाता है।

(३) रेडन की सूक्ष्म सुइयाँ (Radon Seeds)—रेडियम् इमनेशन या रेडन गैसीय रूप का तत्व है, जो जल में घुलनशील है। इसको सोने तथा प्लेटिनम् की छोटी-छोटी सुइयों में सुरक्षित किया जाता है। इन सुइयों में रेडन की शीशे की नलिकायें रख दी जाती हैं। इन्हीं सुइयों को विकृत क्षेत्र में विशेष प्रकार के नलिकाकार यंत्र (Cannula) द्वारा स्थापित कर दिया जाता है। आन्तरिक अंगों के लिए ये विशेष उपयोगी हैं।

(४) रेडियम् बीम थेरापि (Radium beam therapy)—इसमें रोगी से दूर एक रेडियम् का गोला रखा होता है। उसी से तीव्र गम्भीर किरणें प्राप्त की जाती हैं।

उपद्रव एवं विषाक्तता—कभी-कभी रेडियम् चिकित्सा में अनेक उपद्रव भी लक्षित होते हैं, जिन्हें चिकित्सक को ध्यान में रखना चाहिए। ये लक्षण या उपद्रव स्थानिक तथा सार्वदैहिक (Local and General or Constitutional) दो प्रकार के होते हैं। स्थानिक प्रतिक्रियायें प्रायः रेडियम् में काम करनेवाले व्यक्तियों को होती हैं। यह प्रायः अल्फा एवं विटा किरणों के द्वारा होते हैं। इसमें अंगुलियों के सिरों पर संज्ञानाश तक संज्ञापरिवर्तन होता है। त्वचा मोटी पड़ जाती है तथा चिरकालीन स्वरूप का त्वचा पर शोथ (Chronic dermatitis) हो जाता है। कभी-कभी वहाँ व्रण भी वन जाते हैं। सामान्यकायिक लक्षणों में शिरःशूल, मिचली, वमन, अतिसार तथा कभी-कभी पाण्डु, अकणिकाकायाणूत्कर्ष, एवं रक्तचक्रिकाओं की संख्या में ह्रास (Thrombocytopenia) की शिकायत भी हो जाती है।

रेडियो-एक्टिव आइसोटोप्स

(Radio-active isotopes)

आजकल अनेक तत्वों के रेडियो-एक्टिव आइसोटोप्स का उपयोग प्रयोगशालाओं में उनके गुण-कर्मीय परीक्षण (Experimental purposes) के लिए तथा चिकित्सा में नैदानिकीय (Diagnostic purposes) एवं चिकित्सा सम्बन्धी (Therapeutic application) प्रयोग के लिए किया जाता है। रेडियो-सोडियम् ($Na_{२४}$) का प्रयोग

रक्तसंवहन सम्बन्धी विकृतियों तथा धमनी-रोगों के निदान के लिए किया जाता है। इसी प्रकार रेडियो-एक्टिव-आयोडीन $I^{१३१}$ का उपयोग ग्रैवेयक ग्रंथि या अवटुकाग्रंथि के गुणकर्मीय परीक्षण के लिए तथा डाइ-आयडोफ्लोरेसिन (Radio-active di-iodofluorescein) मस्तिष्कगत अर्बुद के स्थाननिनिश्चय के लिए किया जाता है।

इसी प्रकार आजकल चिकित्सा में भी रेडियो-एक्टिवतत्वों का उपयोग होने लगा है। जो रेडियो-एक्टिव आइसोटोप्स शरीर के विशिष्ट धातुओं द्वारा ग्रहण किए जाते हैं तथा जिनसे प्रधानतः बिटाकिरणों का विकिरण होता है, वे सांस्थानिक प्रभाव के लिए बहुत उपयुक्त होती हैं, क्योंकि इनके सेवन से केवल संस्थान विशेष की विकृत धातुयें ही प्रभावित होती हैं और स्वस्थ कोशाओं पर कोई अनिष्टकर प्रभाव नहीं होने पाता। जिन आइसोटोप्स से गम्मा-किरणों का विकिरण होता है, उनका उपयोग क्ष-किरण की भांति बाह्य-विकिरण के लिए किया जा सकता है। रेडियो-एक्टिव आयोडीन का प्रयोग परमावटुकाग्रंथिता (Hyperthyroidism) तथा अवटुकाग्रंथि के कर्कटार्बुद (Thyroid Cancer) में किया जाता है। इसी प्रकार रेडियो-एक्टिव फास्फोरस श्वेतमयता (Leukaemia) तथा रक्तकणमयता (Polycythaemia) में किया जाता है। रेडियो-एक्टिह कोबाल्ट ($Co^{६०}$) का प्रयोग रेडियम् के स्थान में किया जा सकता है। इससे बिटा तथा गम्मा दोनों ही प्रकार का विकिरण होता है। एतदर्थ इसकी सूइयाँ (needles) व्यवहृत हो सकती हैं। गुहाओं में प्रयुक्त करने के लिए अधिक उपयुक्त हैं। रेडियो-एक्टिव स्वर्ण ($Au.^{१९८}$) से भी बिटा तथा गम्मा दोनों ही प्रकार का विकिरण होता है। रसिक गुहाओं (Serous cavities) में कर्कटार्बुद कोशाओं का आक्रमण (Cancerous infiltration) होने पर स्थानिक क्रिया के लिए बहुत उपयुक्त होता है।

॥ इति ॥

पाश्चात्य-द्रव्यगुणविज्ञान

उत्तरार्ध भाग २ में

आये हुए विषयों तथा द्रव्य के नामों की हिन्दी वर्णानुक्रमणिका :—

(अ)

अंकुरित बीज ५८
अंकुशमुखकृमि (हुकवर्म) नाशक औषधियाँ १३३
अंकेरिया गेम्बीर १५१
अंगूजद ५५३
अंगुरुगंदः ५५३
अंगोजः ५५३
अंग्वएटम् अमोनिएटाइ ६७८
,, अल्कोहोलिकम् लेनी ५३०
,, (अग्वएटा) अल्कोहोलियम् लेनी ५२४-५२५
,, आयोडाइ कम मेथिलिस सेलिसिलेट ८०५
,, आयोडाइ डेनिग्रिसेन्स ८०५
,, इक्थियोलिस ८२८
,, इमल्सिफिकन्स ५२४, ५२५
,, एक्वोजम् ५३०
,, एक्वोसम् ४३१
,, एड्रिनेलीनी एट कोकेनी ३४६
,, एमिनोक्लोराइडाइ ६७८
,, एसिडाइ बैंजोइसाइ कम्पोजिटम् २६४
,, एसिडाइ बोरिसाइ ८७६
,, एसिडाइ सेलिसिलिसाइ २८६
,, ,, ,, एट सल्फ्युरिस् ८२५
,, ओलिएटाइ ६७८
,, ओलियाइ कोकोइस ५१४
,, क्राइसेरोबिनाइ ८३०
अंग्वएटम् जिंसाइ अन्डेसिनोएटिस ८३२
,, जिंसाइ ओलिएटिस ५०६, ५२४
,, ट्राइनाइट्रोफिनोलिस ७६१
,, डाय (इ) थ्रेनोलिस ५२५, ८३१
,, पाराफिनाई ५२४, ५२५, ५२६
,, पिसिस लिक्विडी ७६३
,, पेनिसिलिनाइ ७२६
,, फिनोलिस ५२८, ७८६
,, मेथिलिससेलिसिलेटिस कम्पोजिटम् २६०
,, युकेलिप्टाइ ५४३
,, रिसॉर्सिनोलिस कम्पोजिटम् ७६०
,, सल्फुरिस ८२५
,, सिम्प्लेक्स ५२४, ५२५
,, हाइड्रार्जिराइ ६७६, ५२४
,, ,, अमोनिएटाइ एमिनो ६७८
,, ,, एमिनो क्लोराइडाइ ६७८
,, ,, ओलिएटाई ६७८
,, ,, कम्पोजिटम् ६७७
,, ,, डायल्यूटम् ६७६
,, ,, नाइट्रेटिस डायलूटम् ५२५, ६७७
,, ,, ,, फोर्ट० ६७७
,, हेमामेलिडिस ५५५
अंजुदान ५५३
अंडेसिनोइक एसिड ८३१

अंडेसिलेनिक एसिड ८३१
अकरकरा ८३८
अकूनीतून ३३३
अ (ए) केसिआ (या) ५१६
अकेसिआ (या) अरेबिका ५१७
,, इंडियन ५१६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५१८
,, सॅ (से) नेगल ५१७
अकेसिई गम्माइ ५१६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग
अगर ७१-७२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७३
अगर-अगर ७१, ७२
अगर के प्राप्तिसाधन ७१
अगर पल्विस ७३
अगोटन २४२
अग्निवर्धक तिक्तौषधियाँ ३०
अग्युरिन ४३३
अग्रिम पीयूषग्रंथि के अन्तःस्राव की भाँति क्रिया करनेवाले अन्तःस्राव या, तत्व ३६४
अचोकम् ४८२
अजवाइन का फूल ५८६
अजवाय(इ)न ५६०
अजाजी ५६४
अटरूषक ४२०
अटेब्रिन ६२२
,, ,, म्युसोनेट ६२२
अटाफन २४२
ॲटोफेनिल २४४
अडुलसा ४२०
अडूसा ४२०
अडूसा (वासा) का प्रवाही घनसत्व ४२१
अण्डकोष के अन्तःस्राव के यौगिक (Androgens) ४६६
अतिच्छत्रा ५६५
अदरक ५८१
अदरक का तीव्रबल निष्कर्ष ५८२
,, या सोंठ का निष्कर्ष ५८२
,, सुखाया हुआ ५८१
अधिवृक्क बहिस्तरीय अन्तःस्राव २६५
अधिवृक्कबहिस्तरीय सत्व के गुणकर्म तथा प्रयोग २६६-२६७
अधिशोषक द्रव्य ६४
अनार १३२
अनुलोमन ७१
अन्य (नान्-ऑफिशल) सिम्पैथोमाइमेटिक औषधियाँ ३६४
अन्युरिनी हाइड्रोक्लोराइडम् १६५
अन्युरीन हाइड्रोक्लोराइड १६५
अफ्स १४६
अफ्सुल् बुलूत १४६
अबूहल ४४५
अभिनव नारंगवल्कल ३२
ॲमिनोफिलीन की टिकिया दे० "एमिनोफिलीन" ४३६
अमोबिक प्रवाहिका या आमप्रवाहिका में कार्य करनेवाली औषधियाँ ६८५
अमेरिकन पोडोफिलम् ११३
अमेरिकन पोडोफिलम् राइज़ोम ११५
अमेरिकन भाँग ३३१
अमेरिकन मे-एपुल १११
,, मेंड्रेक १११
,, वर्मसीड-ऑयल १३४
ॲमोनियम् आयोडाइड ६८२
ॲमोनियम् क्लोराइड ४५८
,, ,, मिक्सचर ४५८
ॲमोनियम् मेंडेलेट ४५७, ४५८
ॲमोनियाइ आयोडाइडम् ६८२
,, इक्थोसल्फोनेट ८२८
ॲमोनियाइ मेंडेलास ४५८
ॲमोनिएटेड टिंक्चर ऑव क्विनीन ६१८
,, ,, ,, वॅलेरिअन ५५२

अमोनिएटेड मरकरी ६७०
अमोनिएटेड मरकरी के ऑफिशल योग ६७८
,, लिनिमेंट ऑव कॅम्फर ५८६
,, सॉल्यूशन ऑव क्विनीन ६१८
अम्लपर्णी ८५
अम्लवेतस ८६
अयन–एक्सचेंज रेजिन्स ६५
[illegible] १६५
अरंडखरबूजा ५५
[illegible] ४२०
अरलेन ६२५
,, की टिकिया ६२८
अर्क कपूर ५८५
,, जीरा ५६५
,, तज ५७७
,, बादियान ५७०
,, लवंग ५५८
,, सोआ ५६६
,, सौंफ ५७०
अर्गट ४६४
,, ऑव राई ४६४
अर्गट का प्रवाही घनसत्व ४६७
अर्गट की टिकिया ४६७
अर्गट के उपयोगी नुस्खे ४७३
,, चूर्ण ४६७
अर्गटजन्य विषमयता ४७१
अर्गटा प्रिपरेटा ४६७
अर्गस्टेरॉल २५७
अर्गोक्रिस्टीन ४६६
अर्गोटा ४६४
अर्गोटाक्सिनी ईथेनेसल्फोनास ४६८
अर्गोटॉक्सीन ४६४, ४६६, ४६६
,, इथेनोसल्फोनेट ४६८
अर्गोटामिनी टारट्रास ४६८
अर्गोटामीन ४६६, ४६६, ४७०, ४७२
,, टारट्रेट ४६८
अर्गोनोवीन मेलिएट ४६७
,, ,, इन्जेक्शन ४६८
अर्गोमेट्रिनी मेलियास ४६७
अर्गोमेट्रीन ४६४, ४६६, ४६६, ४७०
,, मेलिएट ४६७
अर्गोसीन ४६६
अर्गोसील ४७३
अर्जिनिन ३३१
अर्जिनिया ३२७
अर्जिनि (नी) या इण्डिका (भारतीय वन पलाण्डु अर्थात् कन्दरी) ३२५,३२७,३२८
अर्जिनि (नी) या इण्डिका के योग ३२६
,, मेरिटिमा ३२५, ३२६
,, सिल्ला (विलायती वनपलाण्डु) ३२५, ३२६, ३२८
,, ,, के योग ३२६
अर्जुन ३३२
,, का प्रवाही घनसत्व ३३३
,, के आयुर्वेदीय योग ३३३
,, ,, योग ३३२
,, क्वाथ ३३२
,, घृत ३३३
,, त्वक् चूर्ण ३३३
,, वृक्ष ३३२
,, सादडा ३३२
अर्जुना ३३२
अर्जुनारिष्ट ३३३
अर्जुनीन ३३२
अर्जुनेटीन ३३२
अर्ध घनस्वरूप का वलसम् ५४८
अलसी ५०६
अलसी का तेल ५०६
अल् अफस १४६
अल्कलाइन नेजल वॉश ८२१
,, माउथ वॉश ऑव फिनोल ७८६
अल्कोहल् एण्ड एल्डिहाइड्स ८१३

अल्कोहल् सेटोस्टियरिलिकम् ५२६
अल्कोहोलिया लेनी ५२६
अल्फा टोकोफेरॉल २२१
अवटुका ग्रन्थि दे० 'थायरॉयड' २४६
„ „ क्रियारोधक द्रव्य २४६–२५०
(एन्टी थायरॉयड प्रॉडक्ट्स)
„ सत्व दे० 'थायरायड' २४६
„ „ शुष्क २४८
अवल्गुजा ७७८
अशुपल ४८२
अशोक ४८२–४८४
अशोकघृत ४८२
अशोकम् ४८२
अशोकाबिन „
अशोकारिष्ट „
अशोग(घ)म् „
अशोपल्व ४८२
अश्वकर्ण बीज ७७
असमानी बूटी ३५४
असित कुटज ६६१
असेफिटिडा (हींग) ५५३
„ के गुणकर्म तथा प्रयोग ५५४–५५५
„ „ योग ५५५
असोक ४८२
अस्पगोल ७७, ७८

(आ)

आँखका पीला मलहम ६७७
आँख का बोरिक मलहम ८२१
आइ–ऑयण्टमेंट ऑव ॲट्रोपीन विद्-
मर्क्युरिक ऑक्साइड ६७७
„ „ „ पेनिसिलिन ७२८
„ „ „ मर्क्युरिक
ऑक्साइड ६७७
„ „ „ सल्फासिटेमाइड ७१०
आइ–ड्राप्स ऑव फ्लोरेसीन ८१०
आइपोमिआ ९९
„ ऑरिजाबेंसिस ९९
„ कान्वाल्व्युलस पर्गा (पर्जा) १०२
„ हेडरेसिआ १०४
आइपोमिई पाल्विस् ९९
„ रेजिना ११०
„ रेडिक्स ९९
आइसोनिएजाइड ७६२
आइसोनिएजिड टॅब्लेट्स ७६३
आइसोनिकोटिनिक एसिड हाइड्रेजाइड ७६२
आइसोनेजाइड „
„ की टिकिया ७६३
„ के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६२
„ „ योग ७६३
„ „ व्यावसायिक योग „
आइसोनोरिन ३४९
आइसोप्रल ३४९
आइसोप्रिनेलिनी सल्फास (सल्फेटिस) ३६२
आइसो प्रिनेलीन कम्पाउण्ड स्प्रे ३६३
आइसोप्रिनेलीन सल्फेट ३६२
„ „ की टिकिया ३६३
„ „ के गुणकर्म तथा प्रयोग
३६२–३६३
„ „ योग ३६३
„ „ स्प्रे ३६३
आइसोफेन इन्सुलिन २६३
„ „ के गुणकर्म तथा प्रयोग २६४
आइसोरेनिन ३४९
आक्टिल नाइट्राइट ३७१
„ „ के गुणकर्म तथा प्रयोग ३७१
आक्टिलिस नाइट्रिस ३७१
आक्टेनोइक एसिड ८३२
आक्टोइक „ „
आक्युलेटम् एट्रोपिनी कम् हाइड्रार्जिराइ
आक्साइडो ६७७

,, एसिडाइ बोरिसाई ८२१
,, पेनिसिलिनाई ७२८
,, सल्फासिटेमाइडाइ ७१०
आक्सिटोसिन ४७७
आक्सिम(क्सी)मेल १७८
,, आर्जिनिई ३३०
,, ऑव इण्डियन स्क्विल्ल ३३०
,, ,, स्क्विल्स ३२९
,, सिल्ली ३२९
आक्सिसान १४५
आक्सीजन ४०४
,, की क्रिया एवं प्रयोग ४०४, ४०५
आक्सीजिनम् ४०४
आक्सीटेट्राासाइक्लीन डाइहाइड्रेट ७४०
,, ,, हाइड्रोक्लोराइड ७४०
ऑक्सीडाइज्ड सेल्युलोस १७८
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १७९
ऑक्सीडायजिंग एजेन्ट्स ७९६
आक्सैमाईसिन ७६६
आक्सोफेनार्सीन हाइड्रोक्लोराइड ६५१, ६५७
आक्सोफेनार्सिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ६५१
,, टाट्रास ६५२
ऑक्सोफेनार्सीन टारट्रेट ६५२
ओटिस फ्लाक्स फॉर्म २३५
आनुलोमिक ७१
ऑप्लिसमेनस कम्पोजिटस् ४६५
ऑब्स्टेट्रिक क्रीम ८०८
आमंड ऑयल ५१०
,, बिटर ५०८
,, ,, , ऑयल ऑव ५१०
,, ,, , ,, , , प्योरिफाइड-वोलेटाइल ५१०
,, स्वीट ५०८
आमाशय शुष्क दे० "वेन्ट्रिकुलस डेसिकेटस"।
,, सत्व दे० "आमाशय शुष्क"।
आयडोक्लोर हाइड्रॉक्सीक्विनोलीन ६९०
आयडोथायरोसिल् सोडियम् २५२
आयडोपिन ८८५
आयडोफॉर्म ८०५
,, के गुण-कर्म तथा प्रयोग ८०६
,, के नाट-ऑफिशल योग ८०६
आयडोफॉर्मम् दे० 'आयडोफॉर्म'।
आयएटमेन्ट ऑव अमोनिएटेड मर्करी ६७८
आयएटमेन्ट ऑव इक्थेमोल ८२८
आयएटमेन्ट ऑव ऊल अल्कोहल्स ५३०
,, ,, एमिनोक्लोराइड ऑव मर्करी ६७८
,, ,, ओलिएटेड मर्करी ६७८
,, ,, क्राइसेरोबिन ८३०
,, ,, जिंक अन्डेसेनोएट ८३२
,, ,, डाइथ्रेनॉल ८३१
,, ऑव पिक्रिक एसिड ७९१
,, ,, पेनिसिलिन ७२८
,, ,, बोरिक एसिड ८१९
,, ,, मरकरी ६७६
,, ,, सल्फर ८२५
,, ,, सेलिसिलिक एसिड २८९
,, ,, सेलिसिलिक एसिड एण्ड सल्फर ८२५
,, स्ट्रांग ऑव ,, ८३१
,, ,, स्माल माइरोबॅलान ५२६
,, ,, हेमामेलिस १५५
,, इमल्सिफाइंग ५३०
,, पाराफिन ५३०
,, सिम्पुल ५३०
आयडोफ्थेलीन ८९०
आयडोफ्थेलीनम् ८९०
आयडोफ्थेलीन सोडियम् ८९०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८९०
आयडो-रे ८९०

आयरन दे० "आयर्न"
,, आर्सिनेट ६४७
आयरिडिन ११६,१२०
आयरिस की जड़ ११६
,, जर्मेनिका ११६
,, वर्सिकलर ११६
आयर्न एण्ड अमोनियम् साइट्रेट १६७
,, ,, क्विनीन साइट्रेट १६७
,, एसिटेट १७१
,, कार्बोनेट सेकेरेटेड १६६
,, पिल १७२
आॅयल
,, आॅफ (व) आॅरेञ्ज फ्लावर ५७१
,, ,, एनिस ५६७
,, ,, एनिसीड ५६७
,, ,, कॅजुपुट ५४३
,, ,, करावे ५६३
,, ,, कॅसिआ ५७६
,, ,, कोरिएन्डर ५५६
,, ,, क्युमिन ५६४
,, ,, क्लोव ५५७
,, ,, गाॅ (गु) लथिरिया २८६
,, ,, चेनोपोडियम् १३४, १३५
,, ,, जुनिपर ४४५, ४४७
,, ,, डिल ५६६
,, ,, निरोली ५७१
,, ,, पेपरमिंट ५७२
,, ,, फेनेल ५६६
,, ,, युकेलिप्टस ५४०
,, ,, ,, के गुण-कर्म तथा प्रयोग ५४२
,, ,, रोजमरी ५४४
,, ,, लेमनग्रास ५४४
,, ,, विंटरग्रीन २८६, २६०
,, ,, सेन्डलवुड ४६१
आॅयल आॅलिह दे० "आॅलिह आॅयल"
,, ,, सेन्टलवुड ४६१
आयोडम् ८०२
आयोडाइज्ड आॅयल ८८५
,, ,, के प्रयोग ८८५
आयोडाइज्ड फिनोल ७८६
आयोडाइड आॅफ आयर्न १७१
आयोडाइड्स के गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग ६८२-६८४
आयोडाॅक्सिल ८८७
,, के प्रयोग ८८७
,, ,, व्यावसायिक योग ८८७
आयोडाॅक्सिलम् ८८७
आयोडीन ८०२
,, एण्ड एकोनाइट पेंट ३३६
,, कम्पाउण्ड पेंट ८०५
,, का कण्ठलेप ८०५
,, के गुण-कर्म तथा प्रयोग ८०२-८०३
,, के योग ८०४, ८०५
आयोडोफ्थेलीन ६८
आयोपेनोइक एसिड ८६१
आर० एस० ५
आर-थाॅक्सीन हाइड्रोक्लोराइड ३६८
आरन्शियाइ काॅरटेक्स रिसेन्स ३६
,, ,, सिक्केटम् ३६
,, डल्सिस् काॅर्टेक्स ३६
आॅरिज्वा ६६
,, जालपरूट ६६
आरियाइ एट सोडियाइ थायोसल्फास ७६७
आरियोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड ७३४
,, ,, के गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग७३४,७३६
,, ,, के व्यावसायिक योग ७३६-७४०
,, ,, (क्रिस्टलाइन) ७३६-७४०
,, टेरामाइसिन, टेट्रासाइक्लीन (एक्रोमाइसिन) तीनों के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४२

ऑरियोमाइसिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ७३४
देo 'ऑरियोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड'
ऑरिसल्ट ११६
ऑरिस्टिडी एसिडाइ योरिसाइ ८२०
,, फिनोलिस ७८१
,, रिसॉर्सिनोलिस् ७६०
,, हाइड्रोजेनाइ परॉक्साइडाइ ७६६
ऑरेन्ज 'जी' ६०५
ऑरेन्जफ्लॉवर वॉटर ४०
ऑरिग्युटन ४६५
ऑर्गेनिक आर्सेनिक कम्पाउण्ड (त्रिवन्धीय यौगिक) ६५१
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६५३–६५८
आर्नी ८६
आर्टिमिसिया की सेन्टोनीनजनक भारतीय प्रजातियाँ १२४
आर्टिमिसिया मेरिटिमा १२४
,, सिना १२३
आर्तवजनन, आर्तवप्रवर्त्तक ३६२
आर्थोबोरिक एसिड ८१८
आर्सफिनोल ६६३
,, के प्रयोग एवं सेवनविधि ६६३
आर्सफेनामिना (६०६) ६५६
,, आर्जेन्टिका ६५६
आर्सफेनामीन, सिल्वर ६५६
आर्सामिन ६६०
आर्सिनेट ऑव आयरन ६४७
आर्सेनिएट ऑव आयरन ६४७
आर्सेनिक ६४७
,, के ऑफिशल-नॉट ऑफिशल योग ६५०-६५१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४८-६५०
,, के ट्राइवेलेन्ट यौगिक ६५६
,, के निरिन्द्रिय त्रिवन्धीय यौगिक ६४७, ६५१
,, ,, पेंटावलेंट कम्पाउन्ड्स ६५३
,, ,, ,, नान-ऑफिशल यौगिक ६६०
,, ,, व्यावसायिक योग ६६२
,, घटित कतिपय अन्य यौगिक ६६३
,, ट्राइऑक्साइड ६४७
,, सफेद (ह्वाइट) ६४७
आर्सेनिकल सोल्यूशन ६५०
आर्सेनियस आयोडाइड ६५१
,, एसिड ६४७
आर्सेनियाइ ट्राइ ऑक्साइडम् ६४७
,, आयोडाइडम् ६५१
,, ट्राइ आयोडाइडम् ६५१
आर्सेनाबेंजोल ६५२
ऑलियम् देo 'ओलियम्'
ऑलिह ऑयल ५०४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५०४–५०६
आल्फा डेटालिन २२१
ऑसिमम् किलिमन ५८३
ऑस्केरिकम् ....
ऑस्ट्रियन डिजिटेलिस ३१०
,, फॉक्स ग्लव ३१०
आइन १६५

(इ)

इक्थिओल ८२८
इक्थेमोल ८२८
इंगु ५५३
इच्छाभेदी रस १११
इट्रुमिल सोडियम् २५२
इनवेनोल २६४

इनारुन १०६
इन्जेक्शन
,, ऑव (फ) अन्युरीन हाइड्रोक्लो-
क्लोराइड १६८
इन्जेक्शन ऑव अर्गोटामीन टारट्रेट ४६८–४६६
,, ,, अर्गोमेट्रीन मेलिएट ५१९
,, ,, ऑक्सिटोसिन ४७७
,, ,, आयोडाइज्ड ऑयल ८८५
,, ,, आयोडॉक्सिल ८८८
,, ,, इन्सुलिन् २५७
,, ,, इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड ४०
,, ,, एड्रिनेलीन ३४६
,, ,, ,, टारट्रेट ३४६
,, ,, एण्टीमनी पोटासियम् टारट्रेट ६३८
,, ,, एथिल ईस्टर्स ऑव
हिड्नोकार्पस ऑयल ७७७
,, ,, एपोमार्फीन हाइड्रोक्लोराइड ४१५
,, ,, एमिनेफ्रीन ३४६
,, ,, ,, सोडियम् थायोग्लाइको-
लेट ६३८
,, ,, एमिनोफिलीन ४३६
,, ,, ओएवेन ३२४
,, ,, ओनेट ४६६
,, ,, ओस्ट्रेडिओल मानोबेंजोएट
४६२, ५२७
,, ,, ओस्ट्रोडिऑल डाइप्रोपिओ-
नेट ४६२
,, ,, कॅफीन एण्ड सोडियम्
बेंजोएट ४३५
,, ,, कॉर्टिकोट्राफिन २६८
,, ,, कार्टिसोन एसिटेट २७१
,, ,, कोरिऑनिक गोनेडोट्राफिन ४८८
,, ,, क्विनी एण्ड यूरिथेन ६१७
,, ,, ,, डाइहाइड्रोक्लोराइड ६१७
,, ,, टेस्टास्टरान प्रोपिओनेट ४६६
,, ,, टेस्टोस्टेरॉन ५२७
इन्जेक्शन ऑव ट्रिपार्समाइड ६५८
,, ,, डाइमर्केप्रॉल ६८०
,, ,, डायोडोन ८८८
,, ,, डिऑक्सीकार्टोन एसिटेट २७०
,, ,, डिजॉक्सिन ३१८
,, ,, डिजॉक्सीकार्टोन एसिटेट २७०
,, ,, डिजिटॉक्सिन ३१८
,, ,, डी-ऑक्सीकार्टोन एसिटेट ५२७
,, ,, डेक्स्ट्रन सल्फेट १८६
,, ,, डेक्स्ट्रोज २३१
,, ,, डेप्सोन ७७२
,, ,, थियामीन हाइड्रोक्लोराइड १६८
,, ,, थियोफिलीन विथ एथिलीन
डायमीन ४३६
,, ,, निकोटिनेमाइड २०४
,, ,, नियो आर्सफेनामीन ६५८
इन्जेक्शन ऑव पेनिसिलिन ७२६
,, ,, पैराथायरॉयड २५६
,, ,, पोटासियम् एन्टिमानिल
टारट्रेट ६३८
,, ,, ,, पेनिसिलिन इन ऑयल ७२६
,, ,, प्रोकेन पेनिसिलिन 'जी' ७२६
,, ,, ,, ,, फॉर्टिफाइड ,,
,, ,, प्रोकेन बेंजिल पेनिसिलिन ७२६
,, ,, ,, ,, ,, विदबेंजिल
पेनिसिलिन ७२६
,, ,, प्रोजेस्टेरान ४६६, ५२७
,, ,, प्रोटामीन जिंक इन्सुलिन २६१
,, ,, प्रोटान हाइड्रोलाइसेट २३३
,, ,, फेनिलेफ्रान हाइड्रोक्लो-
राइड ३६६
,, ,, बर्बेरीन सल्फेट ६४४
,, ,, बाऽऽल (बाल) ६८०
,, ,, बिस्मथ ६६७
,, ,, बिस्मथ ऑक्सीक्लोराइड ६६८
,, ,, ,, सेलिसिलेट ६६६

इन्जेक्शन ऑव बिस्मथ सोडियम् टारट्रेट ६६८
,, ,, मरसालिल ४४२
,, ,, ,, एण्ड थियोफिलीन ४४२
,, ,, मर्क्युरोफिलीन ४४३
,, ,, मिनेडिओन २२६
,, ,, मिनेफ्थोन २२६
,, ,, मेथिलेम्फिटामीन हाइड्रो-
क्लोराइड ३६४
,, ,, मेनाढिओन सोडियम् बाइ-
सल्फाइट २२६–२२७
,, ,, मेनाफ्थोन ५२७
,, ,, मेपाक्रीन मिथेन सल्फोनेट ६२४
,, ,, राइबोफ्लेविन २०२
,, ,, लेक्टोफ्लेविन २०२
,, ,, लोबिलीन हाइड्रोक्लोराइड४२३
,, ,, वासोप्रेसिन ४७७
,, ,, विटामिन बी १ १६८
,, ,, ,, बी १२ १६५
,, ,, सल्फाडाइमाइडीनसोडियम् ७०६
,, ,, सल्फाडायजीन सोडियम् ७०६
,, ,, सल्फाथायजाल सोडियम् ७०८
,, ,, सल्फास फेनामीन ६५८
,, ,, सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडि-
यम् ८६५
,, ,, सायनो कोबालामिन १६५
,, ,, सीरम गोनेडोट्राफिन ४८८
,, ,, सुप्रारिनल कॉर्टेक्स २६५
,, ,, सुरामिन ६४६
,, ,, सोडियम् एन्टिमनी टारट्रेट ६३८
,, ,, ,, एन्टिमोनिल ,, ,,
,, ,, सोडियम् एसकोर्बेट २१०
,, ,, सोडियम् क्लोराइड एण्ड
अकेशिया ५१६
,, ,, सोडियम् थायोसल्फेट ६८१
,, ,, ,, बिस्मथिल टारट्रेट ६६८
,, ,, ,, साइट्रेट विद डेक्स्ट्रोज २३१

इन्जेक्शन ऑव सोलेप्थोन (स्ट्रांग) ७७३
,, ,, स्टिबोफेन ६४०
,, ,, स्ट्रेप्टोमाइसिन केल्सियम्
क्लोराइड ७६०
,, ,, ,, हाइड्रोक्लोराइड ,,
,, ,, ,, सल्फेट ,,
,, ,, डाइहाइड्रो स्ट्रेप्टोमाइसिन७६०
,, ,, हिड्नोकार्पस ऑयल ७७४,७७७
,, ,, हिपेरिन १८१
,, ,, हिस्टामीन एसिड फॉस्फेट ४८२
,, का पानी ४२६
,, स्ट्रांग, ऑव डेक्स्ट्रोज २३१
इन्जेक्शनों के नाम जिनके बनाने के लिये ओलिक एसिड या एथिल ओलिएट प्रयुक्त होता है।...
इन्जेक्शिओ
,, अन्युरिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ १६८
,, अर्गोटामिनी टारट्रेटिस ४६८
,, अर्गोमेट्रीनी मेलिएटिस ४६८
,, ऑक्सिटोसिनाइ ४७७
,, आयोडॉक्सिलाइ ८८८
,, ऑरोथायोमलेटिस ७६६
,, इन्सुलिनाइ २५७
,, ,, प्रोटामिनेटीकम् जिंको २६१
,, इमेटिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ ४०८
,, ईथेनोलेमिनी ओलिएटिस ५२७
,, एड्रिनेलिनी ३४६
इन्जेक्शिओ एन्टिमोनियाइ एट पोटासियाइ टारट्रेटिस ६३८
,, ,, ,, सोडियाइ ,, ६३८
,, एन्टिमोनियाइ सोडियाइ थायोग्लाइकोलेटिस ६३८
,, एपिनेफ्रिनी ३४६
,, एपोमॉर्फिनी हाइड्रोक्लोराइडाई ४१५
,, ओएवेनियाइ ३२४

इन्फ्युजम् चाइनेन्सिस ४१८
,, ,, कन्सन्ट्रेटम् ४१८
,, ,, रिसेन्स ४१८
,, चिरेटी कन्सन्ट्रेटम् ४२
,, ,, कम्पोजिटम् कन्सन्ट्रेटम् ४१
,, ,, रिसेन्स ४१
,, जें (जं) शिआनी कम्पोजिटम् ३७, ३८
,, ,, ,, कन्सन्ट्रेटम् ३७, ३८
,, फिनिक्युलाइ ५७०
,, बुकु कन्सन्ट्रेटम् ४६०
,, ,, रिसेन्स ,,
,, वॅलेरिआ(या)नी कन्सन्ट्रेटम् ५५२
,, ,, रिसेन्स ५५३
,, सॅनेगी कन्सन्ट्रेटम् ४१७
,, सेन्नी ६४
,, ,, कन्सन्ट्रेटम् ६४
,, स्कोपेराइ रिसेन्स ४५०
इन्सुलिन २५७
,, के अन्य (अविलेय) योग २६१, २६२
,, ,, अविलेय योगों के गुणकर्म तथा प्रयोग २६१-२६२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २५८-२६०
,, जिंक सस्पेंशन (एमॉर्फस) २६३
,, ,, ,, (क्रिस्टलाइन) २६३, २६२
,, ,, ,, यौगिकों के गुणकर्म तथा प्रयोग २६३
इन्सुलिनम् २५७
इन्सुलिन लेन्टे २६३
,, सॅाल्युबुल (विलेय) २६१
,, हाइड्रोक्लोराइड २५७
इन्हेलेशन ऑव मेंथाल एण्ड बेंजोइन ५८८
इन्हेलेशिओ आयोडाइ को० ४२८
इपेकाक ४०५
इपेकाक्वॉना ४०५
,, के व्यावसायिक योग ४१३
,, चूर्ण ४०८
इपेकाक्वॉना जड़ ४०६
,, तथा उसके योगों एवं क्षाराभ तत्वों (इमेटीन) आदि के गुणकर्म तथा प्रयोग ४०९-४१२
,, पनामा ४०६
,, पल्वरेटा ४०८
,, पाउडर्ड ४०८
,, ,, के योग ४१२
,, प्रिपरेटा ४०८
,, प्रिपेयर्ड के योग ४१२
,, ब्रेजिलियन ४०५
,, रूट ४०५
,, रायो ४०५
इपेकाक्वानिक एसिड ४०७
इपेकाक्वानिन ४०७
इपेकाक्वानी
,, पल्विस ४०८
,, प्रिपरेटा ,,
,, रेडिक्स ४०५
इफेड्रा दे० "एफेड्रा"।
,, का प्रवाही घन सत्व ३५६
इफेड्री दे० "एफेड्री"।
इफेड्रीन दे० "एफेड्रीन"।
,, कफसिरप दे० "जेफ्रॉल"।
,, हाइड्रोक्लोराइड की टिकिया ३५६
,, ,, टॅबलेट ३५६
इमल्सन ऑव कॉडलिवर ऑयल २१६
,, ,, पिपरमिंट ५७३
,, ,, प्रोफ्लेविन ८०८
,, ,, लिक्विड पाराफिन ५२६
इमल्सिओ
,, ओलियाइ मॉरही २१६
,, पाराफिनाई लिक्विडाइ ५२६
,, मेन्थी पिपरिटी ५७३
इमल्सिफाइंग वैक्स ५३२
इमेटामीन ४०७

इमेटिनी एट बिस्मथ आयोडाइडम् ४०८
,, पर आयोडाइडम् ४०६
,, हाइड्रोक्लोराइडम् ४०८
इमेटीन
,, एण्ड बिस्मथ (इमेटीन बिस्मथ) आयोडाइड ४०८
इमेटीन की सुई ४०८
,, पर आयोडाइड ४०६
,, हाइड्रोक्लोराइड ४०८, ४१३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४०६–४१२
इमोटीन ८३
इम्पीरिअल ड्रिंक ६७
इम्प्लान्ट्स ऑव टेस्टॉस्टरान ४६८–४६६
,, ,, डिऑक्सीकोर्टिन एसिटेट २७०
इंडान २२१
इर्गोमयरीन २६०
इर्गोफिन ७५८
इलाची ५६०
इलायची ५६०
,, खुर्द ५६०
,, गुजराती ५६०
,, छोटी ५६०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६१
,, बड़ी ५६१

इलायची मलाबारी ५६०
,, सफेद ५६०
इलिक्जिर दे० “एलिक्जिर” ।
इलिसियम् वेरम् ५६७
इलेक्ट्रोकोर्टिन २७२
इलोटाइसिन ७४३
इवाटमीन ३५०
इवेटमीन ४८०
इवेन्स ब्ल्यू ८६५
इसपगुला ७७
इसफगुल ७७
,, हस्क ७७
इसबगोल ७७
इसबगोल की भूसी ७६
,, के बीज और भूसी के गुण—कर्म तथा प्रयोग ७६–८०
इसरगोल ७७
इसरमूल ४६
इसरौल ४६
इसेंस ऑफ जिंजर ५८२
,, ,, पिपरमिंट ५७३
इस्कील ३२५
इस्कीले हिंदी ३२७
इस्ट्रेडिओल डाइप्रोपिओनेट ४८६
इस्ट्रेडिऑ(ओ)ल बेंजोएट ४८६
इस्पगुली टेस्टा ७६

(ई)

ईगल मार्मेलोस ७६
ईथर सोप ५२३
ईथेरियल टिंक्चर ऑव लोबेलिआ ४२२
,, सोल्यूशन ऑफ सोप ५२३
ईथेलिस ओलिआस ५२७
ईयरड्रॉप्स ऑव फिनोल ७८६
ईरखा ११६
ईरखाए कजहिय्य: ,,

ईरोसल १६५
ईश्वरमूल ४६
ईश्वरी ४६
ईषद्गोल ७७
ईसबगोल ७७
ईस्टन्स सिरप १७३, ६१८
ईस्ट्रोमेनीन ४६३

(उ, ऊ ऋ)

उ(बु) टार ७६२
उयमुजीरु ७७
उन्नाज पेस्ट २३३
उन्सुल ३२५
उन्सुले हिन्दी ३२७
उप-अवटुका ग्रन्थि २५५
,, ,, ,, की कार्यहीनता २५५
,, ,, ,, सत्व २५६
उपमधुमयता २६७
उपवृक्क सत्व ३४४
उलटकंबल ४८५
,, का स्वरस ४८६
उसंगिद ४८२
ऊन की चर्बी ५२८
ऊर्णा वसा ५२८
ऊर्ध्वपातित गंधक के फूल ८२४
ऊल फैट ५२८
,, अल्कोहल्स ५२६–५३०
,, ,, के ऑफिशल योग ५३०
ऋषिपित्ता ११३

(ए)

एकेसिया ५१६
एकेसिई पल्विस ५१८
एकोकेन्थरा शिम्पेराइ ३२३
एकोनाइटम् ३३३
,, चेस्मेन्थम् ३३४–३३६
,, नेपिलस ३३३
,, फेरोक्स ३३४
एकोनाइट ३३३–३३४
,, रूट ३३३–३३४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३३६–३३८
,, ,, कतिपय उपयोगी नुस्खे ३३८–३३६
,, ,, नुस्खे ३४०
,, ,, योग ३३६–३४०
एकोनाइटिक एसिड ३३६
एकोनाइटीन ३३६
एकोनीन ३३६
एक्जेलजीन २७८
एक्टिवेटेड वुड-चारकोल ६४
एक्रिफ्लेविन ८०७
,, , प्रोफ्लेवीन और (एमिनाक्रीन) के गुणकर्म तथा प्रयोग ८०८
एक्रिफ्लेविना ८०७
एक्रोमाइसिन हाइड्रोक्लोराइड ७४१
एक्वा अमेन्शियाई फ्लोरिस ४०
,, ऑरेन्शाइ (-न्शियाई) फ्लोरिस ५७२, ४०
,, एनिथाइ कन्सन्ट्रेटा ५६६
,, ,, डेस्टिलेटा ,,
,, एनिसाई कन्सन्ट्रेटा ५६८
,, ,, डेस्टिलेटा ,,
,, कराई कन्सन्ट्रेटा ५७७
,, ,, डेस्टिलेटा ,,
,, कारी कन्सन्ट्रेटा ५६३
,, ,, डेस्टिलेटा ,,
,, केरियोफिलाई कन्सन्ट्रेटा ५५८
,, ,, डेस्टिलेटा ,,
,, क्युमिनाई ५६५
,, डेस्टिलेटा ४२६
,, प्रो इन्जेक्शिओन ४२६
,, फिनिक्युलाइ कन्सन्ट्रेटा ५७०
,, ,, डेस्टिलेटा ,,
,, मेन्थी-पिपरेटी कन्सन्ट्रेटा ५७३
,, सिन्नेमोमाइ ,, ५७५
एक्वियस् सॉल्यूशन ऑव आयोडीन ८०४
एक्सहेपा १७५
एक्सिकेटेड फेरससल्फेट, फेरसग्लूकोनेट एवं सकेरेटेड फेरसकार्बोनेट के योग १७२
एक्स्ट्रक्ट ऑव (फ) कॅस्करा सॅगरेडा ६७

एक्स्ट्राक्ट ऑव कमेरिया १५३
" " माल्ट ५८
" " टॅरेक्सेकम् ४६
" " " विद् कॉडलिवर-ऑयल २१९
" " " " शार्कलिवर-ऑयल २२०
" " मेलफर्न १३१
" " यूर्श्रॉनिमस ११८
" " राइस पॉलिशिंग्स १६६
" " राइस-ब्रेन १६६
" " वॅलेरिअन ५५२
" " सिंकोना ६१६
" " " लिक्विड ६१६
" " टुमारिनल कॉर्टेक्स २६५
" " हेमामेलिस १५४
एक्स्ट्रक्टम् अर्गोटी लिक्विडम् ४६७
" आयरिडिन ११६
" अर्जिनिई लिक्विडम् ३३०
" अर्जुनी लिक्विडम् ३३३
" " सिक्कम् २४१
" अशोकी लिक्विडम् ४८४
" इपेकाक्वानी लिक्विडम् ४१२
" ए (इ) फेड्री लिक्विडम् ३५६
" एक्नोमी " ४८६
" एल्स्टोनिई " ४७
" कॅस्करी सॅगरेडी " ६७
" " " सिक्कम् ६७
" कालमेघी लिक्विडम् ४३
" कॉलिन्साइ " २४०
" " सिक्कम् २४१
" कुर्ची लिक्विडम् ६६३
" कोलोसिन्थिडिस कम्पोजिटम् १०८, ५२२
" क्युबेबी लिक्विडम् ४६३
" ग्रिंडेलिई " ४२५
" गोखरू " ४५४
" चाइनेन्सिस " ४१८
एक्स्ट्रक्टम् जंशिआनी इन्डिकी ३८
" जुनिपराई लिक्विडम् ४४८
" टॅरेक्सेसाई ४६
" " " ४६
" ट्राएन्थेमा " ४५२
" ट्रिबुलस " ४५५
" परपोलिशिओनम् ओगाइजी १६६
" पिक्रोरहाइजी लिक्विडम् ४६
" पिच्युटेराइ लिक्विडम् ४७६
" पुनर्नवी " ४५२
" फिलिसिस १३१
" फि (फे) लिसिस बोवाइनी १२१
" बेलीफ्रक्टस् लिक्विडम् ७७
" माल्टी (यव्य सत्व) ५८
" " कम् ओलिओ (यॉ) मॉरहूी २१६
" " " " सिलकायडियाइ २२०
" " के गुण-कर्म तथा प्रयोग ५६
" यूर्ऑनिमाई ११८
" रॉओल्फिई लिक्विडम् ३७६
" " सिक्कम् ३७६
" वॅलेरिआनी ५५२
" " लिक्विडम् ५५२
" वसाकी " ४२१
" वाइबरनाइ " ५००
" सॅनेगी " ४१७
" सिंकोनी ६१६
" " लिक्विडम् "
" सेन्नी " ६४
" हाइड्रेस्टिस " ४७५
" हिपेटिस " १५६
" हेमामेलिस " १५५
" " सिक्कम् १५५
एक्स्ट्रालिन १६०
एक्स्ट्रैक्ट ऑव इन्डियन जंशन ३८

एक्स्पेक्टॉरेन्स ३८१
एक्सिके (वके) टेड ग्लॉबर्स साल्ट ६८
" फेरससल्फेट, फेरसग्लूकोनेट एवं सकेरेटेड फेरसकार्वोनेट के योग १७२
" सोडियम् सल्फेट ६८
एक्सहेमा १७५
एग-लेसिथिन २३४
एग्यूरिन ४३६
एज़ोक्लोरामिड ८०१
एज़ोवन ब्ल्यू ८६५
एज़ोवेनम् सेरुलियम् ८६५
एटॉक्सिना ६६०
एटिसाइक्लिन ४६०, ४६४
एटोक्विनोल २४४
एडनेफ्रीन ३४४
एडिक्सोलिन २१४
एडेप्स ५२८
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५२८–२६
" के योग ५२६
" प्रिपरेटस ५२८
" लेनी ५२८
" " के योग ५२६
एडेप्स वेंजोइनेटस ५२६
" लेनी हाइड्रोसस् ५२६
एड्रिनेलिन, एड्रिनेलिना २६५, ३४४
एड्रिनेलीन ३४४
एड्रिनेलीन इन्हेलेन्ट ३५०
" एसिड टारट्रेट ३४४
" के आइसोप्रोपिल योग ३५०
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ३४५–३४६
" के योग ३४६–३५०
" जन्य अश्वसनावस्था (Adrenaline Apnaea) ३४६
" वाइटारट्रेट ३४४
एड्रिनो-एफेड्रीन ३५६
एड्रिनोकॉर्टिकोट्राफिकहार्मोन (ACTH) २६७
एड्रिनो पिच्युटरी (इवेटमीन) ४८०
एढाटोडा वैसिका ४२०
एथिडॉल ४६०
एथिनि(नी)ल इस्ट्रेडिऑल ४६०
एथिनिल टेस्टोस्टेरोन ४६५
एथिनीस्ट्रील ४६०
एथिल आयडोफेनिल अन्डेकेनोएट ८६३
" " अन्डेसिलेट ८६३
एथिल ईस्टर्स ऑव हिड्नोकार्पस ऑयल ७७४
एथिल ओलिएट ५२७
एथिल विस्कोमेसिटेट १८३
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग १८३–१८४
" " " व्यावसायिक योग १८५
एथिलस्टिबामीन ६३३
एथिलिस आयडोफेनिल अन्डेकेनोआस ८६३
एथिलिस विस्कोमेसिटास १८३
एथिलीन डायमीन ४३७
एथिस्टरॉन ४६६
एथिस्टेरॉन ४६५
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ४६५
एथिस्टेरॉनम् ४६५
एनाकोविन १६३
एनाटॉक्सिन ८७०
एनाफोलिन १७४
एनावीन ६६२
एनालजेसिक वल्सम् २६०
एनाशिनम् ८५४
एनासारांसिन ३३०
एनिथम् ५६५
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६६–७०
" ग्रेविओलन्स ५६५
" सोआ ५६५
एनिथाइ पल्विस् ५६६
" फ्रक्टस ५६५

एनिमा ऑव टर्पेन्टीन ५२४
" " सोप ५२४
" टेरिबिन्थीन ५४०
" सेपोनिस ५२४
एनिस् ५६८-५६९
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६९-५७०
एनिसफ्रूट ५६९
एनिसम् ५६९
एनिसीट ५६
एनिसाइ ५६८
एनोमिन्टान १७५
एनोटल २४४
एन्टरोविवनोल ६६०
एन्टरोवायोफॉर्म "
" के गुण-कर्म तथा प्रयोग "
एन्टासिल १४५
एन्टि (न्टी) ...
एन्टिगैसगैंग्रीन सीरम् दे० 'एन्टीगैसगैंग्रीन'।
एन्टिटॉक्सिनम् दे० 'एन्टीटॉक्सिनम्'।
एन्टिपाइ (य) रिन २०, ४३५
" एसेटिल सेलिसिलास २७८
" सेलिसिलेट २७८
एन्टिफेब्रिन २७५
एन्टिमनी (एन्टिमोनियम्) ...
" के ऑफिशल योग ६२८
" " त्रिवल्वीय यौगिक ६३२
" " पेन्टावेलेंट " ६३३
" " यौगिकों का सबसे महत्वपूर्ण उपयोग ६३६
" " लवणों या यौगिकों के गुण-कर्म तथा आमयिक प्रयोग ६३४-६३८
" " व्यावसायिक योग ६३८-६३९
" पोटासियम् टारट्रेट ६३२
" सोडियम् " "
" " थायोग्लाइकोलेट ६३३, ६३७
एन्टिमोनियम् दे० "एन्टिगनी"।
एन्टिमोनियाई एट पोटासियाइ टारट्रास ६३२
" " सोडियाइ " ६३२-६३३
" सोडियाइ थायोग्लाइकोलास ६३३
एन्टिस्टिन ८५३
" का क्रीम "
" की टिकिया ८५४
एन्टिहिस्टामिनिक यौगिक ८५२
एन्टीएन्डुट्रिनम् ४८६
एन्टीगैस आयएटमेन्ट नं० १ ८०१
" " नं० २ ८०१
" गैंग्रेनियोजम् कम्पोजिटम् ८७६
" गैंग्रीन (ईडीमेटिएन्स) सीरम ८७५
" " (परफ्रिंजेन्स) " "
" " (सेप्टिकम्) " ८७६
एन्टी (न्टि) टॉक्सिन या प्रतिविष
" गैसगैं ग्रीन ८७५
" " (ईडिमेटिएन्स) ८७५
" " (परफ्रिंजेन्स) "
" " (मिक्स्ड) ८७६-८७७
" " (सेप्टिकम्) ८७६
" टिटेनस ८७२
" डिफ्थीरिया ८६८-८६९
" स्कारलेट-फीवर ८७७
एन्टीटॉक्सिनम् (एन्टीटॉक्सिन या प्रतिविष)
" ईडिमेटिएन्स ८७५
" गैस-गैंग्रीनियोजम् कम्पोजिटम् ८७६-८७७
" टिटेनिकम् ८७३
" डिफ्थेरिकम् ८६८-८६९
" वेल्चिकम् ८७५
" सेप्टिकम् ८७६-८७७
" स्कारलेटिनम् ८७७
" " टॉक्सिकेटम् ८७४
एन्टीडिफ्थीरिया सीरम् ८६८
एन्टीपार १४०
" सिरप १४५

एन्टीबायोटिक समुदाय की अन्य कतिपय नान् ऑफिशल औषधियाँ ७४३
एन्टी (एन्टि) बायोटिक्स ६६६, ६६७, ७१८
एन्टीस्कॉर्ब्युटिक फैक्टर २०८
एन्टीस्टेफिलोकोकिकम् डिकॉक्टिकम् ८७८
एन्टेजोलिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ५३
एन्टेजोलीन हाइड्रोक्लोराइड ८५३
एन्टोस्टेव ४८७
एन्ट्रिपोल ६४५
एन्ड्रीन ३६०
एन्ड्रोग्रेफिस ४२
,, पेनिक्युलेटा ,,
एन्ड्रोजन्स ३६६
एन्थिओमेलीन १४४, ६३३, ६३७, ६३४
एन्थिसन ८५२
,, की टिकिया ,,
एन्थासिन ८३०
एन्थासीन वर्ग की रेचक औषधियाँ ८०
एन्० पी० एच्० (५०) २६३
एन्हाइड्रस डेक्स्ट्रोज २२६
एन्हाइड्रस यूसेरिन ५३०
,, लेनोलीन ५२८
,, सोडियम् सल्फेट ६८
एन्हाइड्रो हाइड्रॉक्सी प्रोजेस्टरॉन ४६५
एपिनेफ्रिना ३४४
एपिनेफ्रिनी बाइटारट्रास ३४४
एपिनेफ्रीन ३४४
एपिनेफ्रीन बाइ टारट्रेट ३४४
एपिस मेलिफिका ५३१
ए० पी० सी० टैबलेट्स् २८७
एपेरिओन ६७
एपोमॉर्फिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ४१३
एपोमॉर्फीन हाइड्रोक्लोराइड ४१३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४१३-४१४
एपोसाइनम् ३३१
एपोसाइनम् के गुणकर्म तथा प्रयोग ३३१
,, केनाबिनम् ,,
,, के नुस्खे ३३१-३३२
,, के योग ३३१
एप्रेसोलीन ३७७
एप्लिकेशन ऑव डेरिस ८४२
एप्लिकेशन ऑव बेंजिल-बेंजोएट ८२७
,, ,, सोरेलिया ७४८
,, डी० डी० टी० (D. D. T. application) ८३५
एप्लिकेशिओ डेरिडिस ८४२
,, बेंजिलिस बेंजोआस ८२७
,, सोरेलिइ ७७८
,, ,, के व्यावसायिक योग ७७६
ए (इ) प्सम साल्ट ६६
एफाजोन ३६०
एफेड्रा ३५३-३५६
एफेड्रा इन्डियन (भारतीय) ३५४, ३५५
,, एक्विसेटिना ३५३, ३५४, ३५५
,, चीनी ३५३
,, जिरेर्डिआना ३५३, ३५४, ३५५
,, नेब्रोडेन्सिस ,, ,, ,,
,, वल्गेरिस ३५३
,, सिनिका ३५३, ३५४, ३५५
एफेड्रिना ३५३, ३५६
एफेड्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ३५६
एफेड्रीन ३५३, ३५५, ३५६
,, हाइड्रोक्लोराइड ३५५, ३५६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३५६-३५६
,, ,, योग ३५६
,, ,, नुस्खे ३६०
ए० बी० सी० लिनिमेंट ३४०
एब्रोमा ४८५-४८६
,, ऑगस्टा ४८५
एब्लोचिन ६८८
एब्सॉर्बेन्ट्स ६४

एगाइलम् ५२१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३१
एगाइलेज ५९
एमिजन २३३
एमिडोपायरिना ३७५
एमिडोपायरीन २७८
एमिथिश्रोजोन ७६४
एमिनाक्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ८०८
एमिनाक्रीन ८०८
एमिनाक्रीन एवं प्रोफ्लेवीन के कतिपय योग ८०८–८०९
,, क्रीम ८०८
,, हाइड्रोक्लोराइड ८०८
एमिनासिल (कैल्शियम् पास) ७६१
,, (,, ,, ग्रेन्यूल्स) ७६१
,, (सोडियम् पास—P. A. S.) ७६१
एमिनोक्लोराइड ऑव मरकरी ६७०
एमिनोसल (पास सोडियम्) ७६२
एमिनोपाइरीन २७५
एमिनोप्टेरिन १९०
एमिनोफॉर्म ४५५
एमिनोफिलीन ४३७
एमिलनाइट्राइट ३६९
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३६९–३७१
एमिलिस नाइट्रिस ३६९
एमेटियाक्विनी हाइड्रोक्लोराइडम् ६२८
एमेटियाक्वीन हाइड्रोक्लोराइड ,,
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६२८
,, ,, व्यावसायिक योग ६२९
,, टैबलेट्स्म् ६२९
एम् एण्ड बी (७८२) ६४३
एम्प्लास्ट्रम् कैंथेरिडिनाइ मास्सा ५०२
एम्फिटामिना ३६०
एम्फिटामिनी सल्फास ३६०
एम्फिटामीन ,,
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३६१–३६२
एम्फिटामीन सल्फेट ३६०
एम्बिक्विन ३८८
एम्० बी० (६९३) ७२४
,, ,, (,,) की टिकिया ७२४
,, ,, (,,) के गुणकर्म तथा प्रयोग ७२४
,, ,, (,,) के नॉट ऑफिशल योग ७२४
एम्ब्रोडिल ८५५
एम्मुनिनिल्लगा ३७८
दे० "खेलिन" ।
एरण्डकर्कटी ५५
एरण्ड तैल (दे० "कॅस्टर ऑयल") ७३
एरवादोस ५६७
एरिथजेन लिवर एक्स्ट्रक्ट १७५
एरिथ्रासिन ७४३
एरिथ्रोमाइसिन ७४३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४३–७४५
एरिथ्रोल टेट्रानाइट्रेट ३७२
एरिफोल १७४
एरिस्टोचीन ६१८
,, क्विनीन ,,
एरिस्टोल ८०७
एरिस्टोलोकिआ (या) ४६
,, इंडिका ,,
एरिस्टोलोकीन ४६
एरेक्सि ऑयल ६२८
एरोमेटिक टिंक्चर ऑव कार्डेमम् ५६२
,, डाइएमाइडीन (न्स) ६४०
,, डाइएमिडीन्स ६४५
एरोमेटिक पाउडर ऑव चॉक ५७५
,, ,, ,, ,, विद् ओपियम् ,,
एरोल ६६८
एरोसोरिन सल्फेट ७५१
एलम् प्रेसिपिटेटेड
एला ५६०
ए (इ) लिक्जिर ऑव कॅस्करा सॅगरेडा ९७
,, ,, टर्पिन हाइड्रेट ५४०

ए (इ) लिक्जिर डायामार्फीन एण्ड टर्पिन ५४०
,, ,, सेकेरिन ८६६
,, एनिस ५६८
,, एनिसाइ ,,
,, एन्टीपार १४१
,, एफेड्रिनी हाइड्राक्लोराइडाइ ३५६
,, कस्क (का) रा स (से) गरेडो ६७
,, टर्पिनी हाइड्रेटिस ५४०
,, डायामॉर्फीन एण्ड टर्पिन ,,
,, पपेनी ५७
,, वाइनरनाइ एट हाइड्रास्टिस ५००
एलिपोल ७७७
एलुआ (वा) ८०,८१
,, का चूर्ण ८२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८३
,, या एलो के योग ८४
एलुवर ८६५
एलो ८०,८१,८२,८३
,, इंडिका ८१
एलोइन ८२
एलो एण्ड असेफीटिडा पिल ५५५
एलोघटित आयुर्वेदीय योग ८५
,, नुस्खे ८४
एलोज ८०
,, एण्ड नक्सवॉमिका पिल्ज ८४
,, पल्विस ८२
एलो पेरेइ ८१
,, फेरोक्स ,,
,, वारवेडेंसिस ,,
,, वारवेडोज ,,
,, वेरा ८१,८२
,, स्कोत्रा ८१
ए(अ)ल्केवरविर ३७८
एल्कोसिन ७१६
एल्ट्रॉक्सिन २४६
एल्डार्सन ६६१–६६२
एल्डोकोर्टिन २७२
एल्डास्टेरोन २७२
'एल्'—थाइरॉक्सिनम् सोडियम् २४६
'एल्'—थाइरॉक्सीन सोडियम् २४६
एल्वेसिपिडिन १३०
एल्युटैनिन १५१
एल्युमिनाइ टैनास ,,
एल्युसिड ७०६
एल्युड्रिन ३५०,३६२
एल्युड्रीन ३५०
एल्सटोनिआ ४७
,, कॉर्टेक्स ,,
,, स्कॉ (को) लेरिस ,,
एविअन २२४
एवोलिथम् २१५
एव्लोसल्फोन ७७२
एसकोरबिक एसिड २०८
देo "विटामिन 'सी' "।
,, ,, के योग २०६
,, ,, या विटामिन 'सी' के व्यावसायिक योग २१०
एसकोरवेल २१०
एसिटम् आर्जिनिई ३३०
,, सिल्ली ३२६
एसिटानिलाइड २७५
एसिटार्सोन ६८५
एसिटार्सोल ,,
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६८५–६८६
,, ,, व्यावसायिक योग ,,
एसिटेजोलेमाइड ४४४
देo "डायमॉक्स"।
एसिटैनिन १५१
एसिटोफेनिटिडिन २७४
एसिटोमिनेडिओन २२५
एसिटोमिनेफ्थोनम् २२५
एसीटोमेनेप्थोन २२७

एसिड प्रोपिओनिक ८३३
,, मेगिल एसेटिक ,,
एसिडम् अन्डेसिनोइकम् ८३१
,, आक्टोइकम् ८३२
,, आर्सेनिओसम् ६४७
,, एसकोरबिकम् २०८
,, एसेटिल टैनिकम् १५१
,, ,, सेलिसिलिकम् २८१
,, ओलिकम् ५२६
,, कार्बोलिकम् लिक्वेफेक्टम् ७८५
,, फ़ेसिलिकम् ७८८
,, टैनिकम् १४८
,, निकोटिनिकम् २०२
,, पारा-एमिनोबेंजोइकम् २०७
,, प्रोपिओनिकम् ८३३
,, फोलिकम् १६०
,, बेंजोइकम् २६१
,, बोरिकम् ८१८
,, मेंडेलिकम ४५७
(दे० 'मेंडेलिक एसिड')।
,, रिसिनोलिकम् ७८८
,, सेलिसिलिकम् २८०
दे० "सेलिसिलिक एसिड"।
,, हाइड्रोसायनिकम् डायल्यूटम् ६०
एसिड सोडियम् फॉस्फेट ६६
एसिड्स एवं क्षार ८१८

ए० सी० टी० एच् इंजेक्शन २६८
एसेटफेनिटिडिन २७४
एसेटार्सोल वेजाइनल कम्पाउंड या एस्० वी० सी० ६६२
एसेटिलफेनिल हाइड्रेजीन १६२
दे० "पाइरोडिना हाइड्रेसेटिन"।
एसेटिल सेलिसिलिक एसिड (एस्प्रिन) २८१
,, ,, ,, के योग २८६-२८८
एसेटिलार्सन ६६१, ६६२
,, का वर्णन तथा प्रयोग ६६१
एस्कोर्बिक एसिड २०८
दे० 'विटामिन 'सी'।
एस्टिजिन ४६०
एस्ट्रगॅलस गम्मिफर ५१६
,, स्ट्रोबिलिफेरस ५१६
एस्ट्रेडिऑल ४८६
एस्ट्रोन ४८८
एस्पर्जिलस फ्युमिगेटस् ६६५
एस्पिडियम् १२८
,, अमेरिकन १२८
,, ओलियोरेजिन १३
,, यूरोपियन १२८
एस्प्रिन दे० "एसेटिल सेलिसिलिक एसिड"।
एस्प्रिन एण्ड फिनासेटिन टबलेट्स २८७
,, को टिकिया २८६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २८२–२८६

(ऐ)

ऐनुल् हयात ६६६
ऐलेयक ८०

(ओ)

ओएवेन ३२२, ३२५
,, की सूई ३२४
ओएवेनम् ३२२
ओक १४७
,, डायर्स १४७
ओपिएट लिंक्टस ऑव स्क्विल्ल ३८६
,, ,, फॉर इन्फैन्ट्स ३८६
ओपेसिन ८६०
ओवेन ३२५
ओरार्सन ६८६

ओरा (रे) टियन ४८०
ओरेटन ४६६
ओरेविरॉन ४६६
ओलटकम्बल ४८५
ओलिएटेड मरकरी ६७१
,, ,, के ऑफिशल योग ६७८
ओलिक एसिड ५२६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५२७
,, ,, निम्न योगों का उपादान ५२७
ओलियम् अ (ए) मिग्डेली ५१०
,, ,, एक्सप्रेसम् ५१०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५११
,, ,, वोलेटाइल प्योरिफिकेटम् ५१०
,, आयोडिजेटम् ८८५
,, ऑ (अ) रन्शिआइ (आरन्शाइ) फ्लोरिस ५७१
,, ऑलिह्वी ५०३, ५०४
,, एनिथाइ ५६६
,, एनिसाइ ५६७
,, एरेकिस ५११
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५१२
,, कजुपुटाइ ५४३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४३
,, कसिई ५७६
,, कारी (का (के) रुई) ५६३
,, केडिनम् ७६५
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६५
,, केरियोफिलाइ ५५७
,, कोकोइस ५१३
,, कोरिएन्ड्राइ ५५६
,, क्युमिनाइ ५६४-६५
,, क्रोटोनिस् १०८-१०६
,, गार्सिनी ५३३
,, गॉसिपाइ सेमिनिस् ५०६
ओलियम् गॉसिपाइ सेमिनस् के प्रयोग ५०६
,, ग्रेमिनिस् साइट्रेटाइ ५४४
,, गो (गॉ) लथिरिई २८६
,, चॉलमूग्री ७७४
,, चेनोपोडिआइ १३४
,, जुनिपराइ ४४५
,, जेकोरिस एसेलाइ २१७
,, टिग्लिआई १०६
,, टेरिबिन्थिनी ५३७
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३८-३६
,, ,, रेक्टिफिकेटम् ५३७
,, थिओब्रोमेटिस ५३२
,, निरोली ५७१
,, फिनिक्युलाई ५६६
,, मॉरह्वी (दे० 'कॉडलिवर ऑयल') २१७
,, मिरिस्टिकी ५८०
,, मेन्थीपिपरेटी ५७१
,, यूकेलिप्टाइ ५४०
,, रिसिनाई ७३
,, रिसिनाइ सल्फेटम् ५३४
,, रोजमेरिनी ५४४
,, लवेंडुली ५७७
,, लाइनी ५०६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५०७
,, लाइमोनिस् ५७१
,, वेजिटेबिलम् हाइड्रोजिनेटम् ५३३
,, सिन्नेमोमाइ फोलियाई ५७७
,, सिलेकायडियाइ २२०
(दे० 'शार्क-लिह्वर ऑयल')
,, ,, एट विटामिन 'डी' २२०
,, सिसेमाई ५१२, ५१३
,, सेन्टेलाइ ५६१
,, हाइपोग्लॉसाइ २१६
(दे० 'हेलिबट लिवर ऑयल')
,, हिड्नोकार्पाई ७७३

ओलियम् हिडनोकार्पाई ईथिलिकम् ७७४
ओलिया यूरोपिया ५०४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५०४, ५०६
ओलियो-रेजिन ऑव क्युबेब ४६४
ओलियो-रेजिन ऑव जिंजर ५८२
ओलियो-रेजिना क्युबेबी ४६४
ओलियो-रेजिना जिंजिबरिस ५८२
ओल्ड ट्युबरक्युलिन ८७८
ओवल्टीन ...
ओवोलेसिथिन २३४
ओवोग्लाइक्लिन ४८६, ४६४
,, 'बी' ४८६
,, 'पी' ४६०
ओवोको ४८२
ओस्ट्रीन यौगिक ४८८
ओस्ट्रीन यौगिक नैसर्गिक ४८८
ओस्ट्रीन वर्ग की औषधियों के गुणकर्म तथा प्रयोग ४६१, ४६२
,, के व्यावसायिक यौगिक ४६३
ओस्ट्रीनजनक अन्तःस्राव या तत्व ३६५
,, पदार्थ, कृत्रिम ३६६
,, ,, , नैसर्गिक ३६६
ओस्ट्रेडिऑ(ओ)ल ४८६
,, डाइप्रोपिओनेट ४८६
,, मानोबेंजोएट ४८६
ओस्ट्रेडिओलिस डाइप्रोपिओनास ४८६
,, मानोबेंजोआस ४८८
ओस्ट्रोन ४८८
ओस्ट्रोनम् ४८७
ओस्ट्रोफार्म ४६३
,, एक्विअस ४६३

(औ)

औषधियाँ, अंकुशमुखकृमिनाशक १२३
,, , अकणिक कायाणूत्कर्ष में प्रयुक्त १८७
,, , अमीबिक उपसर्ग में प्रयुक्त ६०३
,, , अम्लग्राही जीवाणुओं पर कार्यकर ७५३
,, , आन्त्र पर कार्यकर ६७
,, , आन्त्र पर कार्य करनेवाली ६-१२
,, , आमवातनाशक एवं ज्वरहर तथा एन्टिसेप्टिक २७३-२७४
,, , आमाशयरस-परिवर्तक ५
,, , आमाशयगतिरूपान्तरक ६
,, , आमाशय पर कार्य करनेवाली ४
,, , आमाशयरसापनयन १
,, , आमाशयरसवर्धक ५
,, , एन्थ्रासीनवर्ग की रेचक ८०
,, , कतिपय विशिष्ट रक्तरोगों पर कार्यकर १८७
,, , कृमिघ्न १, १२३
औषधियाँ, गण्डूपदकृमि या केचुए की १२३
,, , गर्भाशय पर संशामक प्रभाव करनेवाली ४६६
,, , गुरुधातुजन्य विषाक्ततानिवारक ६७६
,, , त्वचा पर मार्दवकर एवं स्नेहन प्रभाव करनेवाली ५०२
,, , पित्तजनक या पित्तल १११
,, , पित्तविरेचक १११
,, , पित्तस्राव पर कार्य करनेवाली १७
,, , पित्ताश्मरीघ्न १८
,, , फिरंगनाशक ६०१-६०२, ६४७
,, , बहुलालकायाणुमयता में प्रयुक्त १८८
,, , बृहत्कायाणिवक परमवर्णिक रक्तक्षय पर कार्यकर १५
,, , मूतघ्न ६६७
,, , मलेरिया या विषमज्वर नाशक ५६७-५६८, ६०४
,, , मिहिकाम्लप्रवृत्ति में कार्यकर २३५

औषधियाँ, मुखद्वारा सेवनोपयुक्त मधुमेह-
नाशक २६४
" , मूत्र-प्रजनन संस्थान पर कार्य
करनेवाली ३७६
" , मृदुविरेचक ७१
" , यकृत पर कार्य करनेवाली १, १५
" , यक्ष्मानाशक ७५३
" , रक्त पर कार्य करनेवाली १, २२
" , रक्तवर्द्धक २३
" , रक्तराशि में परिवर्तन करनेवाली २६
" , " को कम करनेवाली २६
" , " में वृद्धि करनेवाली २७
" , रक्तवाहिनियों पर कार्यकर २६५
" , रक्तसंस्थान पर कार्य करनेवाली २६५
" , रस ५६३
" , रामबाण "
" , रेचन १२, १५
" , लालाप्रसेकजनन ३
" , लालाप्रसेकापनयन "
" , लीशमनीयतानाशक ५६६-६००, ६३२
" , वानस्पतिक कुष्ठहर ७७३
" , " तिक्त ३०
" , वामक ७–८
" , विशिष्ठ, कुष्ठ में प्रयुक्त ६६६, ७७३
" , " निद्राज्वर में प्रयुक्त ६४५
" , " राजयक्ष्मा में प्रयुक्त ६६६, ७५३
" , वेदनास्थापक (Analgesics) २७३
" , शरीरसमवर्तक्रिया पर कार्य
करनेवाली २४६
" , शीतग्राही १४६
" , शोणितक या शोणितवर्द्धक २३
" , श्लीपदकृमिहर १४१–१४२
" , श्वसन-संस्थान पर कार्य करने-
वाली ३७६
" , श्वेतमयता में प्रयुक्त १८७
औषधियाँ, संतापहर या ज्वरनाशक (Antipyretics) २७३–२७४
" , सफल ५९३
" , सारक ७१
" , सिस्टोसोमा-उपसर्गनाशक १४३
(Schistosomiasis or bilharziasis)
" , सूक्ष्म उपवर्णिक रक्तक्षय में प्रयुक्त १६५
" , सूत्रकृमिहर १२८
" , स्फीतकृमिहर १२८
" , हृदय पर कार्यकर २६५–२६६
कंकोल ४६२
कंदरी ३२७
ककुभ ३३२
ककुभादि चूर्ण ३३०
ककुमिना स्कोपेरियाइ ४४८
कटुककोल ४६२
कटुका ४८
कटुकी "
कटुपौष्टिक औषधियों के गुणकर्म तथा आम-
यिक प्रयोग ४६
कॅटेक्यु दे० "कैटेक्यु"।
कटकी ४८
कड़वी नारंगी ५७२
कड़वी नारंगी का ताजा सुखाया हुआ
छिलका ३६
कड़वी नारंगी का सुखाया हुआ छिलका ३६
कड़वी नारंगी के योग ३६, ४०
कड़वे कुटज (कुडे) की छाल ६६०
कडू ४८
कतीरा ५७६
कनाडियन हेम्प ३३१
कन्तेरेलीस ५०१
कन्टिनाजिन ३६२
कन्ने का प्रवाही घन सत्व १६६
कन्वॉलव्युलिन १०३

कफोत्सारि ३८१
,, औषधियाँ, संशामक ३८३
,, औषधियों का चिकित्सा की दृष्टि से किया हुआ समुदायीकरण ३८२
,, , केंद्रिक ३८२
,, द्रव्य, उत्तेजक ३८२
,, ,, , प्रत्याक्षिप्त ,,
,, (कफनिस्सारक) द्रव्योंका क्रिया की दृष्टिसे किया हुआ वर्गीकरण ३८२
कबाब २६२
कबाबचीनी ,,
,, का निष्कर्ष ४५४
,, ,, प्रवाही घन सत्व ,,
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४५३
,, (क्युबेब) के योग ४६३
,, फल ४६२
कबावचीनी ४६२
कमून ५६४
कमूने अरमनी ,,
कमूने रूमी ,,
कमेलिया साइनेन्सिस ४३२,४३६
कम्पाउंड ऑयण्टमेन्ट ऑव बेंजोइक एसिड २६४
,, ,, ,, मर्करी ५७७
,, ,, ,, मेथिल सेलिसिलेट २६३
,, ,, ,, रिसॉर्सिनॉल ७६०
,, इन्फ्युजन जेन्शन ३७,३६
,, ,, २७०
,, एकोनाइट पेंट ३४०
,, एक्स्ट्रक्ट ऑव कोलोसिन्थ १०८
,, कालाडाना पाउडर १०५
,, ग्लिसरिन ऑव थायमोल ५६१
,, टॅबलेट ऑव एसेटिल सेलिसिलिक एसिड २८७
,, ,, ,, कोडीन १७८,२८६
कम्पाउंड टॅबलेट ऑव जिंजर ५८२
,, टिंक्चर ऑव एलोज ८४
,, ,, ,, कार्डेमम् ५६१
,, ,, ,, चिरेटा १३६,१४१
,, ,, ,, जेन्शन ३७
,, ,, ,, पिक्रोर्‌हाइजा ४६
,, ,, ,, बेंजोइन २६३,५४६
,, ,, ,, र्‌हुबर्ब ८८
,, ,, ,, लवेंडर ५७८
,, ,, ,, सिंकोना ६१६
,, ,, ,, सिन्नेमन ५७५
,, डस्टिंग पाउडर ऑव सेलिसिलिक एसिड ८२०
,, पाउडर ऑव इपेकाक्वाना ४९८
,, ,, ,, जलप १०४
,, ,, ,, ट्रॅगाकान्थ ५१७,५२०
,, ,, ,, बिस्मथ ६६६
,, ,, ,, न्युटिआ १२७
,, ,, ,, र्‌हुबर्ब ७६
,, ,, ,, लिकरिस ६४
,, ,, ,, स्केमोनी १०२
कम्पाउंड पिल्स ऑव आयडोफॉर्म ८०६
,, ,, ,, आयोडीन ८०५
,, ,, ,, डिजिटेलिस ३२६
,, पेंट ऑव क्रिस्टल वॉयोलेट ७०६
,, मिक्स्चर ऑव बिस्मथ एण्ड पेप्सिन ५२
,, ,, ,, सेन्ना ६४
,, लॉजेन्ज ऑव बिस्मथ ६६६
,, सॉल्यूशन टॅबलेट्स ऑव थायमोल ५६१
,, सिरप ऑव फेरस फॉस्फेट १७१
,, स्प्रे ऑव मेंथाल एण्ड थायमॉल ४६१
कम्पोसिलिन ७३१
कम्फर ५८३

कम्फर वॉटर ५८५
कम्फरा ५८३
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५८३-५८५
कम्फीन ४४८
कम्फोरी मानोब्रोमेटा ५८६
कम्फोरेटेड ऑयल ५८९
" टिंक्चर ऑव ओपियम् ५८६
कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव क्लोव ५५८
कन्सन्ट्रेटेड इन्फ्युजन ऑव क्वसि (शि) या ३३, ३४
" " " चाइनेन्सिस ४१८
" " " चिरेटा ४१, ४२
" " " बुकु ४६०
" " " वॅलेरिअन ५५२, ५५३
" " " सॅनेगा ४१७
" " " सेन्ना ६४
" एनिस वॉटर ५६८
कन्सन्ट्रेटेड कम्पाउंड इन्फ्युजन ऑव जंशिअन (जन्शन) ३७, ३६
" कॅसिया वॉटर ५७७
" कारावे वॉटर ५६३
" क्लोव वॉटर ५५८
" डिल वॉटर ५६६
" पिपरमिंट वाँटर ५७३
" फेनेल वॉटर ५७०
" सिनेमन वॉटर ५७५
" सोल्यूशन ऑव विटामिन 'ए' एट 'डी' २१७
" " " " डी २१७
कपास ५०६
कपूर (दे० 'कर्पूर') ५८३
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५८३-५८५
कपूरिया तुलसी ५८३
कफनिस्सारक,उद्वेष्ठहर ३८३
" द्रव्य ४०५
क (का) फीआ अरेबिका ४३१
कफीन ४३१, ४३२
" (नी) आयोडाइडम् ४३६
कफीन(नी)एट सोडियाइ सेलिसिलास ४३२,४३५
" " " आयोडाइडम् ४३६
" एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट ४३२
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ४३२
" के योग ४३५
" के साधन ४३१
" साइट्रास ४३५
" साइट्रिकम् ४३५
क (का) फीना ४३१
" एट सोडियाइ सेलिसिलास ४३२
क़फीनी साइट्रास ४३५
कम्मिफरा मिर्रहा ५४६
" मालमोल ५४६
करन्फुल ५५६
करयापु ५५३
करामानिया गम ५१६
कराम्बु ५५३
करायड ५६
करावे पाउडर ५६३
कॅरिओफिलाइ फ्लॉस ५५७
करियातु ४०
करूह ३३
" फ्रक्टस ५६२
करोया ५६२
कर्णफूल ४३
कर्पूर ५८३
कर्पूरघटित उपयोगी नुस्खे ५८६, ५८७
कर्पूरजल ५८५
कर्पूरादिनासाविंदु ५८६
कलम्ब ३१
कलम्बक ३२ (क)
कलम्बा ३०, ३२ (क)
" अमेरिकन ३२ (क)
" का अभिनव फाण्ट ३२ (क)

कलम्बा का चित्र ३१
" का सांद्र फाण्ट ३२ (क)
" की जड़ ३०
", पाउडर्ड ३२ (क)
", प्रतिनिधि द्रव्य एवं मिलावट ३२ (क)
" रूट ३०
", सिलोन ३२ (क)
कलम्बामीन ३२ (क)
कलम्बिन ३२ (क)
कलम्बी पल्विस ३२ (क)
" रैडिक्स ३०
कलर इन्डेक्स ३७०, १७७
कलस्तारियून ३१
कलनाथ दे० 'कालमेघ'।
कलमा ५७६
कलमी दालचीनी ५७४
कवाका तेल ७७३
कशी (सी) स (दे० 'फेरस सल्फेट'।) १६५
कश्कारह् ९५
कषायिन १४८
कसक (कस्क) रा सेगरेडा
दे० 'कस्करा' तथा 'कस्कारा'।
" का चूर्ण ९६
" की छाल (वल्कल) ९६
कॅसिया अंगस्टिफोलिआ ९०
" अॅक्यूटिफोलिया ९०
" सिन्नेमन ५७५, ५७६
कसौली एण्टिवेनिन ८८२
कस्करा घनसत्व ९७
" फ्लुइड एक्स्ट्रक्ट ९७
" सगरेडा ९७
कस्कारा (कसकरा, कस्करा)
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ९६
" घटित नुस्खे ९६
कॅस्टर ऑयल (एरण्डतैल) ७४
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४, ७६
" " घटित नुस्खे ७६
कहवा ४३१
कहवा सत्व ४३१
कहवीन ४३१
कहुआ, कहू ३३२
कांगोरेड १७७
" के गुणकर्म तथा प्रयोग १७७
काँदा ३२७
काकुलः
" सिगार ५६०
कॉटन-सीड ऑयल ५०६
काड मछली २७
कॉडलिवर ऑयल २१७
" का मुख्य उपादान २१८
" का संघटन २१८
" के गुणकर्म तथा प्रयोग २१८
" के नुस्खे २२१
" के योग २१९
कानफूल ४३
कान्टेवेन ७६४
कान्डूस क्रिसमस ७१
कान्वॉलव्युलस स्कैमोनियम् १००
कान्स्पर्सस एसिडाइ बोरिसाइ एट
एमाइलाइ ८२०
" " सेलिसिलिसाइ कम्पोजिटस् २८७-८२६
" जिंसाइ ऑक्साइडाइ एट एसिडाइ
बोरिसाइ ८२०
" जिंसाइ ऑक्साइडाइ एट एसिडाइ
सेलिसिलिसाइ ८२०
" टॉकी बोरिसाइ ८२०
कॉमन इन्डियन एलो ८१
कापूर, काफूर (दे० 'कपूर') ५८३
कॉप्टिस टीटा ६४३
कामोक्विन ६२८
कायपुटी का तेल ५४३

,, का तेल के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४३-५४४
कारव्ररथोन ६८६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६८६-६८७
,, के व्यावसायिक योग ६८७
कारव्ररसोनम् ६८६
कारविनोक्सेमीन मेलिएट ८५५
कारविनेजोल २५३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २५३
,, के योग २५३
कारवेक्लिलेमीन रेजिन्स ४४३
कारवोमाइसिन ७४५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४५
कारव्युटामाइड ६४
दे० "वीजेड ५५"।
कारम् ५६२
कारम कारुई ५६३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६६-५७०
कारावे ५६२
कारी पल्विस ५६३
कार्कोकिल ७७८
कॉर्टिकोट्रॉफिन २६७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २६७-२६८
कार्टिकोस्टेरोन २६६
कॉर्टिसोन (ACTH) २६६-७६८
,, एसिटेट २७०
,, (ACTH) के गुणजर्म तथा प्रयोग २७१
कोर्टिसोनाइ एसिटास २७०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २७१-२७२
कार्टजिना ४०५
कार्डियाजोल एफेड्रीन ३६०
कार्डमम् फ्रूट ५६०
कार्डेमोमाइ फ्रक्टस ५६०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६१
कार्डोफिलीन ४३७
कॉर्नपेंट २८७
कार्नसिरप २३०
कार्वन टेट्राक्लोराइड १३३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १३३-१३४
,, डाइऑक्साइड ४०२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४०२-४०४
कार्बन डाइऑक्साइड स्नो ४०४
कार्वनिआ (या) ई टेट्राक्लोराइडम् १३३
,, डाइऑक्साइडम् ४०२
कार्वेमाइड दे० "यूरिआ"। ४४०
कार्वोजजातीय पदार्थों के पाचक किण्व ५८
कार्वोरेजिन ४४४
कार्वोलिक एसिड ७८४
दे० "फिनोल"।
,, ,, का घोल या विलयन ७८५
,, ,, का गण्डूष या गरगरा ७८६
,, ,, का मलहम ७८६
,, ,, गार्गिल ७८६
कार्वोलिग्नाइ एक्टिवेटस ६३
दे० "निक्रिय काष्ठांगार"।
कार्वोस्टिवेकामड ६३६
कार्मिनेटिव टिंक्चर ५६२
कार्वोने ५६३
कालमेघ ४२-५०
,, का प्रवाही घनसत्व ४३
कालमेघीन १०४
कालाडानी रेजिना १०५
कालादाना १२३-१०५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १०५
कालाव्रोल ८०
कालीयक ३२ (क)
क्लोरियम् एसिडाइ वोरिसाई ८२१
,, वोरेसिस कम्पोजिटम् ८२१

कॉलेरेटिक्स १११
कालोकुंपो १०४
कालोसिन्थि(न्थी)न १०७
  दे० "कोलोसिन्थ"।
कॉल्चिकम् २३५, २३६, २३७, २३९, २४०
  दे० 'सूरंजान'।
,, ऑटम्नेल २३५, २३६, २३८, २४१
,, इन्डियन २३८
,, एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट
  मिक्स्चर २४१
,, कॉर्म २३५
,, के कतिपय उपयोगी योग २४१
,, रूट २३५
,, ल्यूटियम् ,, २
,, सीड्स २३५, २३७
कॉल्चिसाइ कॉर्मस २३५
,, सी (से) मेन ,, ,, २३७
,, सेमिना पल्विस २३८
कॉल्चिसिना २३८
कॉ (को) ल्चिसीना २३७, २३८
,, आयण्टमेन्ट २३८
,, की टिकिया २४१
,, टॅबलेट्स २४१
कॉल्युटोरियम् फिनोलिस ॲल्कलाइनम् ७८६
कॉल्युनेरियम् अल्केलाइनम् ८२१
कॉल्युनेरियम् ऑरोयायोमलेट ७६७
काल्युलेनाइड ६६८
कासीश १६५
काश्मीर हर्मोडॅक्टिल २२८
कॉ (को) सीनियम् फेनिस्ट्रेटम् ३२ (क)
कासीस १६५
,, जलांशरहित १६५
किटोन ५८३
किटोस्ट्रिन ४८८
किटो हाइड्रोक्सीओस्ट्रोन ४८८
किमोथेरापि दे० 'केमोथेरापि'। ५९१
किरताना ८४०
किरमाणी अजमो १२५
,, ओंवा ,,
,, यवानी १२४, १२५
किरमान १२५
किरमानी अजवायन १२४
किरमाला १२४, १२५
किराईत ,,
किरात ४०
,, तिक्त ,,
किराबु ५५३
किर्फतुद्दारसीनी ५७६
किर्फा ,,
कीकरका गोंद ५१७
कुँवार ८१
कुङ्कुम ६०५
कुटकी ४८, ५०
कुटजत्वक् ६६०
कुड़ा, काला ,,
,, , सफेद ,,
कुड़े की छाल ६६०
कुनैन (दे० "क्विनीन"।) ६६०
,, हाइड्रोक्लोराइड की टिकिया ६१७
कुमारिकावटी ८५
कुमारी
कुमारीरससार ८०
कुमार्यासव ८०
कुरची ६६०
,, का प्रवाही घनसत्व ६६३
,, के अलकलॉयड (कोनेसीन) और
  यौगिकोंके गुणकर्म तथा प्रयोग ६६३
,, के ऑफिशल योग ६६३
,, ,, व्यावसायिक ,, ६६३
कुरूया ५६२
कुरैया की छाल ६६०
कुर्चिन बिसमथ आयोडाइड ६६२

कुर्चिन विस्मथाइ आयोडाइडम् ६६२
कुर्चिसीन ५६१
कुतुंम हिन्दी १०४
कुल्लीका लासा या गोंद ५७६
कुष्ठमें प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ ६६६, ७७३
कुस्तुम्बुरु ५५८
कृमिघ्न या कृमिहर औषधियाँ १६, २१, १२, ३, १४४
कृष्णजीरक विलायती ५६२
,, के गुण-कर्म तथा प्रयोग ५६६-५७०
कृष्णबीज १०४, १०५
कृष्णबीजादि चूर्ण १०५
कृष्णबोल ८०
केओलिन पुल्टिस ५७३, ५६१
केटन-अयन एक्सचेंज रेजिन्सका प्रयोग ६६
केटाप्लाज्मा केओलिनाइ ५७३
केटिओनिक वर्गके विशोधन एवं पूतिनाशक द्रव्य ८१७
,, समुदाय ८१५
केटिक्यू का चूर्ण ७५२
,, पल्विस ७५२
केड ऑयल ७६५
केडिनीन ४४८
केनसूगर २२८
केन्टन २१०
केपिलॉन २२५
केपिलोन ओरलग २२५
केपेलिन २२७
केप्रिलिक एसिड ८३२
केप्रोकाल ४५६
केप्रोकोल १३७
केप्सिकम् ५४६
,, एनम् ५४६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४६
,, फ्रूटीसेन्स ५४६
केप्सेसीन ५४६
केप्स्युल विटामिनाइ 'ए' २१४
,, विटामिनोरम् २१४
केप्स्यु (यू) ली 'ए' एट 'डी' २१४
,, ,, के योग २१७
केप्स्युल्स ऑव विटामिन्स २१४
केप्स्यूल ऑव विटामिन 'ए' २१४
केप्स्यूल्स ,, ,, 'ए' एण्ड 'डी' २१४
,, ,, हेलिबट लिवर ऑयल २१६
केल्क्स क्लोरिनेट ७६६
,, सल्फ्युरेटा ८२६
केल्सिफेरॉल २१५
केल्सिफेरोलिस २१५
केल्सियम् ग्लूकोनेट ७६९
केल्सियम् डायुरेटिना ४३६
केल्सियम् परमैंगनेट ७६८
,, मेंडलेट ४५७
,, सल्फाइड ८२६
केफर्गट ४७२
केमिकल फूड १७२
केमोथेराप्युटिक एजेन्ट्स ५६३-६४
,, औषधियों या सामान्य-कायिक उपसर्गनाशक औषधियों का वर्गीकरण ५६४-६
केमोफॉर्म ६६४-५
केरम् कॉप्टिकम् ५६०
,, केरवी ५६२
केरावे ५६२
,, फ्रूट ५६२
,, सीड्स ५६२
केरिओ (यो) फाइलम् (स्) ५५५
,, के योग ५५८
केरिका पपाया ५५
केलोमेल ११५, ६७१
केल्सियाइ परमैंगेनास ७६८
,, मेंडलास ४५७
केश (स) र ६०५

केशरी १८१
केशिका-अन्तःप्रवेश्यतानिरोधक जीवतिक्ति २१०
केस्करी सेगरेडी पल्विस ६६०
केस्ट्रोफेनिथिन ३२२
केस्ट्रोफेन्थोसाइड ३२५
कैंथेरिडिन ५०१, ५०२
कैंथेरिडिनम् ५०१
कैं (कें) थेरिडीज ५०१
कैंथेरिस ५०१
कैटेकिन १५०
कै (के) टेक्यु (कत्था) १५१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १५२
,, ,, योग १५२
कैटेक्यू टैनिक एसिड १५२
,, रेड १५२
कैप्स्यूली फिलिसिस १३१
कैप्सूल्स ऑव एक्स्ट्रक्ट ऑव मेलफर्न १३१
,, ,, कार्बन टेट्राक्लोराइड १३३
,, ,, क्लोरैम्फेनिकॉल ७३१
कैरम् ५६२
कैलिफोर्निआ वर्कथॉर्न ६५
कैस्टर ऑयल (दे० "कैस्टर ऑयल") ७३
कोकम फैट ५३३
कोकम बटर ५३३
कोकाओ बटर ५३२, ५३३
कोकोआ बटर ५३२
कोकोनट ऑयल ५१३
,, ,, ऑयण्टमेंट ५१४
कोको बटर ५३२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३३
कोकोस न्युसिफेरा ५१३
कोडीनयुक्त एस्प्रिन-फेनासेटिन की टिकिया २७८
कोडोपाइरिन २७६
कोनेसियाइ बार्क ६६०
कोनेसीन ६६१
कोबरा वेनम् ८८०
,, ,, के प्रयोग ८८१
कोबास्टेब १७४
कोबेफ्रीन हाइड्रोक्लोराइडम् ३६८
कोम्बे सीड्स ३२१
कोरफड ८१
कोरया ३६०
कोरामीन-इफेड्रीन ३६०
कोरिआनिक गोनेड्रोट्रॉफिन ४२६
कोरोसिव सब्लिमेट ६७१
कोरिएन्डर ५५८
,, फ्रूट ५५८
कोरिएन्ड्रम् ५५८
,, सेटाइवम् ५५८
कोरिएन्ड्राइ पल्विस ५५६
,, फ्रक्टस ५५८
कोरिएण्ड्रोल ५५६
कोर्टिन २६५, २६६
कोर्टेनिल २७०
कोलिस्टेटिन ७११
कोलीन २०८
कोलकन्द ३२७
कोलकांदा ३२७
कोलटार, कोलतार ७६२
कोलतारञ्जक यौगिक ८०७
कोलेगॉग पर्गेटिव्ज १११
कोलोकिन्थिस १०६
कोलोडिन ऑव सेलिसिलिक एसिड २८७
कोलोडियम् एसिडाइ सेलिसिलिसाइ २८७
कोलोसिन्थ १०५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १०७
,, (इन्द्रायन) के उपयोगी नुस्खे १०८
,, एण्ड पोडोफिलम् पिल्स १०८
,, के योग १०८
,, पल्प १०५
,, पाउडर्ड १०७
कोलोसिन्थिडिस पल्पा १०५

कोलोसिन्थिडिस पल्विस १०७
कोलोसिन्थिस् १०५
कोस्ट्रोफेन्थिन ३२३
को (कॉ) लोसिन्थि (न्थी) न १०७
कोल्सेमिड २४१
कोह, कौह ३३१
कौढ़ ४८
क्युवेब ४६२
क्युवेबा ४६२
क्युवेबिन एसिड ४६३
क्युवेबिन ४६३
क्युवेबी फ्रक्टस ४६२
क्युवेब्स ४६२
क्युमिन ५६४
क्युमिनम् ५६४
,, साइमिनम् ५६४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६६–५७०
क्युमिन वॉटर ५६५
क्युमोपाइरन १८५
क्युरी २५३–२५४
क्रमेरिई पल्विस १५३
क्रमेरिया १५२
,, आर्जेन्टिआ १५३
,, एट कोकेन लॉजेन्जेज १५४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १५३
,, के योग १५३–१५४
,, घनसत्व १५३
,, टैनिक एसिड १५३
,, ट्राइएण्ड्रा १५२
,, मुखचक्रिका १५४
,, रुट १५२
,, रेड १५३
,, लौजेन्जेज १५४
क्राइसेन्थमम् मिनेटिफोलिअम् ८३८
क्राइसेरोबिन ८२६
क्राइसेरोबिनम् ८२६
क्राइसोपोगोन प्रजाति ४६५
क्रामर १५२
क्रायेजेनोन २६४
क्रायोसल्फोन ७७२
क्रिमोर एन्टेजोलिनी ८५३
,, एमिनाक्रिनी ८०८
,, जिंसाइ ऑक्साइडाइ इक्थेमोलिस ८२८
,, पेनिसिलिनाइ ७२६
,, प्रोफ्लोविनी ८०८
क्रियाजोट ४२६
,, का वाष्पाघ्राण योग ४२८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४२७
,, के योग ४२८
क्रियाजोटम् ४२६
क्रियाजोटाइ कार्बोनास ४२८
क्रियाजोल ४२६
क्रियेट ४२
क्रिसोल ७८६
,, के ऑफिशल योग ७८७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७८७
क्रिस्टल वॉयोलेट ८१०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१०–८१२
,, ,, के नान-ऑफिशल योग ८११–८१२
क्रिस्टलाइन फिनोल ५८६
क्रिस्टॉयड १४४
क्रीम ऑव एन्टेजोलीन ८५३
क्रीम ऑव एमिनाक्रीन ८०८
क्रीम ऑव पेनिसिलिन ७२६
,, ,, प्रोफ्लेवीन ८०८
,, जिंक ऑक्साइड एण्ड इक्थेमोल ८२८
,, डेरिस ८४२
क्रेसिल हाइड्रेट ७८६
क्रोकस ६०५
,, सेटाइवस ६०५
क्रोटन १०६

क्रोटन आयल	१०८	क्लोरोमाइसेटिन के कैप्स्यूल्स	
,, टिग्लिअम्	१०८	,, के गुणकर्म तथा प्रयोग	७३२–७३३
,, सीड्स	१०६	क्लोव ऑयल	५५८
क्लोरब्युटाल एण्ड मेंथाल नेजल		,, ,, के योग	५५८
ड्रॉप्स	५८८	क्लोव्स	५५३–५५७
क्लिस्टिन मेलिएट	८५५	क्वर्कस इन्फेक्टोरिया	१४७
क्लेविसेप्स पर्प्यूरिया	४६४	क्वाशि(षि)ई पल्विस	३३
क्लोपेन हाइड्रोक्लोराइड	६२६	,, लिग्नम्	३२ (क)
क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड	६२	क्वाशि(सि)या	३२ (क)
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग	६२	,, (अमारा)	३२ (क)
क्लोरसाइक्लिजिनी हाइड्रोक्लोराइडम्	६३	क्वाशि(सि)या का अभिनव फाण्ट	३२ (क)
क्लोरसाइक्लिजीन हाइड्रोक्लोराइड	८५४	,, ,, चूर्ण	३३
क्लोरोडिग्लेनोल	७८८	,, जमेका	३२ (ख)
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग	,,	,, पाउडर	३२
,, ,, योग	,,	,, फाण्ट	३३
क्लोरामिना	७६६	,, वुड	३२ (क)
क्लोरामीन	,,	,, सुरीनम्	३२ (ख)
क्लोरामीन 'टी'	,,	क्वाशी	३२ (ख)
,, सॉल्यूबुल्	,,	क्विकसिल्वर	६६६
क्लोरिनेटेड लाइम्	७६६	क्विनाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड	६२२
,, ,, एण्ड बोरिक-		क्विना-क्विना	६०४
एसिड सॉल्यूशन	८००	क्विनायडोक्लोर	६८६
क्लोरिफेनिकॉल	७३१	क्विनायडोक्लोरम्	६८६
क्लोरेथियम्	८२२	क्विनिक	६०६
क्लोरो-एजोडिन	८०१	क्विनिडिनी सल्फास	३४०
क्लोरोक्विन के यौगिकों के गुणकर्म तथा		क्विनिडीन	३४०
प्रयोग	६२६–६२७	क्विनीन (कुनैन)	६०४
क्लोरोक्विनी फॉस्फास	६२५	,, एथिल कार्बोनेट	६०८
,, सल्फास	६२५	,, एसिड सल्फेट	६०७
क्लोरोक्वीन के ऑफिशल योग	६२८	,, ,, हाइड्रोक्लोराइड	६०८
,, फास्फेट	६२५–६२८	,, का फेनायमान मिश्रण	६१८
,, सल्फेट	६३५	,, के आमयिक प्रयोग	६१२–६१६
क्लोरोप्रोकेन पेनिसिलिन 'ओ'	६३०	,, के उपयोगी नुस्खे	६१८–६१६
क्लोरोफॉर्म ऑव एकोनाइट	३३६	,, के गुणकर्म	६०६–६१२
क्लोरोफार्मम् एकोनाइटी	३३६	,, के नाट-ऑफिशल योग	६१८
क्लोरोमाइसेटिन	७२१	,, के योग	६१६–६१८

क्वीनीन टैनेट ६१८
,, डाइहाइड्रोक्लोराइड ६०८
,, बाइसल्फेट ६०७
,, ,, हाइड्रोक्लोराइड एवं डाइहाइड्रोक्लोराइड ६१७
,, वॅलेरिएनेट ६१८
,, सल्फेट ६०७
क्विनीन सेलिसिलेट ६१८
,, हाइड्रोक्लोराइड ६०८
,, हाइड्रोब्रोमाइड ६१८
क्विनीनी एट एथिलिस कार्बोनास ६०८
" " यूरिया हाइड्रोक्लोराइडम् ४४१
" टैनास ६१८
" डाइहाइड्रोक्लोराइडम् ६०८
" बाइसल्फास ६०७
क्वीनीनी वेलेरिआनेस ६१८
" सल्फास ६०७
" सेलिसिलास ६१८
" हाइड्रोक्लोराइडम् ६०८
" हाइड्रोब्रोमाइडम् ६१८
क्विनोफन २४२
क्विनोलिस ६८७
क्विनोविक ६०६
क्विनोविन ६०६
" सल्फेट ३४०
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ३४१-३४३
क्वीनोडीन (दे० "क्विनिडीन" ।) ६०६
क्वीनीनी दे० "क्विनीनी" ।

(ख)

खण्डशर्करा २२८
खमीर सूखा हुआ १६८
" " " के गुणकर्म तथा प्रयोग १६६
" " " के योग १६६
खरबके हिन्दी ४८
खश्बुलमुर्र ३२ (क)
खानिकुज्जीब ३३३
खानिकुन्नमिर ३३३
खारेखसक ४५३
खारेसेहगोशा ४५३
खेलिन ३७८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३७८

(ग)

गंडूपदकृमि (केंचुए) की औषधियाँ १२३
गंधक ८२३
गंधक के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२४
गंधपुरा का तेल २८६
गंधरस ५४६
गंधाविरोजे का तेल ५३७
गट्टी फ्लोरेसिनाइ ८१०
गट्टी सल्फासिटेमाइडाइ फोर्टिस ७१०
" " " मिटिस ७१०
गडू ४८
गण्डूपद दे० "गंडूपद" ।
गदहपू (रना) ना ४५०
गम ॲकेसिया ५१७
गम अरेबिक ५१६
गम ट्रॅगाका(क)न्थ ५१६
गमप्लांट ४२४
गम बेंजामिन २६०
गम सेनेगल ५१७
गमेक्सेन ८३६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८३६
,, के व्यावसायिक योग ८३६
गम्मा बेंजीन हेक्साक्लोराइड ८३६

गरीका तेल ५१३
गर्भधारक औषधियाँ ३६६
गर्भपातक, गर्भशातक, गर्भस्रावी औष-धियाँ ३६२
गलो ४८
गाइनोकार्डिआ ऑयल ७७४
गायनिस्ट्रिल ४८६
गायनोकार्डिआ ओडोरेटा ७७५
गारगरिज्मा फिनोलिस ७८६
,, फेराइ परक्लोराइडाइ १७३
गार्धिनिअर इन्डिका ५३४
गॉल, गॉल्स (ज) १४६, १४७
गॉल नट १४६
गॉल्स (ज) ओक, अलियो, ब्ल्यू, टर्की या सीरियन १४६, १४७
,, व्हाइट १४८
गाला गाली सेवलीई १४६
गाली १४७
गॉसीपियम् हर्बेसियम् ५०६
गिरिपर्पट १११, ११३
,, विदेशीय १११
गिलोइन ४८
गिलोय ४८
गिलोर ४८
गीज लिक्टस् ३२६
गुड़त्वक् ५७४
गुडूची ४७-५०
गुनखिआकराई ४८५
गुरुधात्वीय यौगिक ६३२
गुर्च ४७
गुलंच ४८
गुलखुर ४५३
गु(गॉ)लथीरियाका तेल २८६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २६०
,, के योग २६०
गुलथीरिया फ्रेग्रेन्टिसिमा २८६
गुलवेल ४८
गेडस मॉरहा २१७
गेम्बीर १५१
गेहूँ ५२१-५८
,, का तेल २२३
गै(गा)लिक एसिड १४८
गैलो-टैनिक एसिड १४८
गैस्टर सिक्का १६०
गैस-गैंग्रीन एन्टि(एन्टी)टॉक्सिन (इडिमेटिएन्स) ८७५
,, ,, ,, परफ्रिंजेन्स ८७५
,, ,, ,, मिश्रित (मिक्स्ड) ८७५
,, ,, ,, (विब्रियन सेप्टिक) ८७६
,, ,, ,, वेल्चियाइ ८७५
,, ,, ,, सेप्टिकम् ८७६
गैस-गैंग्रीन (सेप्टिकम्) सीरम् ८७६
गोंद कतीरा ५१६
गोआ पाउडर ८२६
गोआ बटर ५३३
गोक्षुर बड़ा ४५४
गोक्षुर लघु ४५३
गोखरि ४५३
गोखरू ४५३
गोखरू का प्रवाहीघनसत्व ४५५
,, के फल ४५४
गोखरू के गुणकर्म तथा प्रयोग ४५४
,, के योग ४५४
,, , छोटा ४५४-४५३
,, , बड़ा ४५४-४५३
गोखुरे कलाँ ४५४
गोनान ४८६
गोनेडिल ४८७
गोनेडोट्राफिनम् कोरिऑनिकम् ४८६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४८७
,, सेरिकम् ४८७
,, ,, के व्यावसायिक योग ४८८

गोन्ट्रिसिन ७१६
ग्रिडे(डी)लिया ४२४–४२५
,, कम्पोरम् ४२४
,, का प्रदाही घनसत्व ४२५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४२४-४२५
,, के योग ४२५
ग्रीगरीज पाउडर ८८
ग्रेप सूगर २२६
ग्रे पाउडर ६७७
,, ,, की टिकिया ६७७
ग्रेसिलेरिया कन्फर्वायडिज ७१
ग्रैवेयक ग्रंथिसत्व २४६
ग्लाबर्स साल्ट एक्सिकेटेड ६८
ग्लासोस्ट्राडिल की टिकिया ४६६
ग्लिस(सि)रि(री)न ५१४
ग्लिसरिन ऑव इकथेमोल ८२८
ग्लिसरिन के गुणकर्म तथा प्रयोग ५१५–१६
,, ऑव स्टार्च ५२१
,, ,, थायमोल कम्पाउण्ड ५६१
,, ,, पेप्सिन ५२, ७८५
,, ,, फिनोल ७८५
,, ऑव बोरिक एसिड ८१६
,, ,, बोरेक्स ८२०
,, ,, टैनिक एसिड १५०
,, की गुदवर्ति या बत्ती ५१६
,, सपोजिटरी ५१६
ग्लिसेरिनम् ५१४
,, इक्थेमोलिस ८२२
,, एमिलाई ५२१
,, एसिडाइ बोरिसाइ ८१६
,, ,, टैनिसाइ १५०
,, थायमोलिस कम्पोजिटम् ५६१
,, ,, अल्कलेनिकम् ५६१
,, पपेनी ५७
ग्लिसेरिनम् पेप्सिनाइ ५२
,, फिनोलिस ७८५
ग्लिसेरोल ५१४
ग्लुसाइड ८६८
ग्लुसिडम् सॉल्युबुल ८६८
दे० 'द्राक्षशर्करा'।
ग्लूकोज के गुणकर्म तथा प्रयोग २३०–२३१
,, के योग २३१
ग्लूकोजम् लिक्विडम् २३०
ग्लूकोज लिक्विड २३०
,, सॉल्यूशन २३१
ग्लोबिन इन्सुलिन २६१
ग्लोबिन जिंक इन्सुलिन २६१
ग्वाइज पिल ३२८
ग्वानिडीन २६४
,, के प्रयोग २६४–२६५
ग्वायकम्फोल ४२८
ग्वायकोल ४२६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४२७
ग्वायकोल कम्फोरेटा ४२८
ग्वायकोल कार्बोनास् ४५८
ग्वायकोल सिन्नेमेट ४२८
ग्वायकोलिस बेंजोआस ४२८
ग्वारनीन ४३१
ग्वारपाठा ८१
ग्वाराना ४३१

(घ)

घनस्वरूप का बलसम ५४८
घीकुआर ८१
घृतकुमारी ८०, ८१

(च)

चणपत्रक ४५३
चन्दन का तेल ४६१
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४६१
,, ,, बुरादा ४६०
,, ,, हृत्काष्ठ ४६१
चन्दन, रक्त ४६१
चन्दन, सफेद ४६१
चलापा १०२
चरमन्थिन ३२ (क)
चाइना सिन्नेमन ५७५
चाइनेन्सिस ४१७
,, रूट ४१७
चाय ४३१, ४३२, ४३६
चायनीज कॅसिया ५७५
चालमु(मो)गरा का तेल ७७३
चालमूगरा ऑयल ७७४
चालमोगरे का तेल ७७३, ७७४, ७७५
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग ७२५–७७७
चावल ५२१
,, का कत्रा १६८
चित्(त्त)मचार्क ६५
चिट्टा ५६४
चिन्नल गम ५१६
चिनियोफोनम् सोडियम् ६८७
चिनियोफोन सोडियम् ६८७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६८८
,, के व्यावसायिक योग ६८८
चिराटा ४०
चिराता ४०, ५०
चिरायता ४०
,, का गाढ़ा फाण्ट ४१
चिरायता फाण्ट ४१
चिरायते का अभिनव फाण्ट ४१
चिरायते के योग ४१
चिरेता ४०
चीड़ ५३७
चीनी २२८
चीड़टार ७६२, ७६३
,, वृक्ष ५७६
चीरकम् ५६४
चुकन्दर मीठा २२८
चेनोपोडियम् १३५
चेनोपोडियम् ऑयल १३४
,, एन्थेल्मिन्टिकम् १३५
,, एम्ब्रोसिऑयडीज १३५
चेनोपोडियम् का तेल १३४
चेनोपोडियम् का तेल के गुणकर्म एवं प्रयोग १३५–३६
चोबे काशिया ३२ (क)

(छ)

छुनिवन ४७
छुआ ५५८
छातिम ४७
छिक्काजनक ४०७
छुहारी जवाइन १२४
छोटी इलायची ५६०

(ज)

जंगली कांदा ३२७
जंगली कासनी ४३
जंगली प्याज ३२७
जंशन दे० 'जन्शन'।

जज्र् वूलीगाली ४१५
जज्र् सॅनिगा ४१५
जन्शन ३५, ३६, ३७
जन्शन की जड़ ३५
जन्शन के ऑफिशल योग ३७
जन्शन चूर्ण ३६
जन्शन फर्मेन्टेड ३६
जन्शन मूल ३५
जन्शन (जन्शिश्रन) रूट ३५
जन्शिश्रन लाल ३६
जन्शिश्राना ३५
जन्शिश्राना लूटिया ३५
जन्शिश्राना लूटिया की भारतीय प्रतिनिधि श्रौषधियाँ ३८
जन्शिश्रानी इन्डिकी राइजोमा ३८
जन्शिश्रानी पल्विस ३७
जमालगोटा १०६
जमालगोटे का तेल १०८, १०६
जमालगोटे का बीज १०६
जमालगोटे के गुणकर्म तथा श्रामयिक प्रयोग ११०
जम्बीरतृण तैल ५४४
जयपाल १०६
जयपालघटित श्रायुर्वेदीय योग ११०, १११
जयपाल तैल १०८, १०६
जयफल ५७८, ५७६
जरण ५६४
जरारीहीन ५०१
जर्मेनिन ६४५
जलप १०२
जलप रेजिन १०४
जलब १०२
जलब रेजिन १०३
जलब चूर्ण १०४
जलब का गोंद या रेजिन (उद्यास) १०४
जलब के योग १०४
जलब पल्वरेटा १०४
जलापा (ब्रा) १०२
जलापा का गोंद या रेजिन १०४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १०३
,, के योग १०४
,, चूर्ण १०४
,, पल्वरेटा १०४
,, रेजिन १०३
,, रेजिना १०३
जलापर्जिन १०३
जलापादि चूर्ण १०४
जलापिन १०३
जलोदरारि रस १११
जल्लाबा १०२
जाइगर्टिना स्टिलेटा ७१
जाइगीना ट्युड २२०
जाज श्रख्जर १६५
,, सब्ज १६५
जातीफल ५७८
जातीफल चूर्ण ५८०
जाफरान ६०५
जायफल (र) ५७८
जायफल भारतीय ५८०
,, ,, , चूर्ण ५८०
,, का तेल ५८०
जावित्री ५७६
जिंक श्रन्डेसेनोएट (श्रन्डेसेलिनेट) ८३१
जिंक ऑक्साइड एण्ड बोरिक एसिड डस्टिंग पाउडर ८२०
जिंक ऑक्साइड एण्ड सेलिसिलिक डस्टिंग पाउडर २८७
जिंक इन्सुलिन क्रिस्टल्स २६४
,, ,, ,, ऑफिशल योग २६४
जिंक परमैंगेनेट ७६८
जिंकपरॉक्साइड ७६६
जिंक वॅलेरिएनेट ५५२

जिंक वॅलेरिएनेट के गुणकर्म तथा प्रयोग ५८०
जिजर ५८१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५८२
जिजरमिंट टब्लेट्स ५८२
जिंजिबर ५८१
जिंजिबर ऑफिशिनेल ५८१
जिंजियरिस् पल्विस् ५८१
जिंजेरिन ५८२
जिंजेली ऑयल ५१२
जिसाई अन्डेसेनो आस ८३१
जिसाई परॉक्साइडम् ७९६
जिसाइ वलेरिआनस ५५२
जिटॉक्सिन ३१०
जिन्तिआना ३६
जिन्तियाना ३५
जिरे ५६४
जिलेकम् ५२१
जिलेटिन २३२
,, के उपयोग २३२
,, कैप्स्यूल्स २३२
जिलेटिनम् २३२
जिलेटिनम् जिसाई २३३
जीरए अरमनी ५६२
जीरए रूमी ५६२
,, सुफेद ५६२
जीरक ५६४
जीरक के गुणकर्म तथा प्रयोग ७९७
जीरा ५६४
जीरा विलायती ५६२
जीरिगे ५६४
जीरु ५६४
जीरे ५६४
,, का तेल ५६४–५६५
,, का योग ५६५
जीरो अच्छो ५६४
जीलकरी ५६४
जीव ६६९
जी (जै) वृक ६६९
जीवतिक्ति (दे० "विटामिन।")
जीवतिक्ति 'ई' २२१
जीवतिक्ति, उद्वर्धक २१२
जीवतिक्ति 'ए' २१२
जीवतिक्ति 'डी' २१५
जीवतिक्ति 'डी$_1$', 'डी$_2$', 'डी$_3$' २१५
जीवतिक्ति 'के' २२४
जीवतिक्ति 'ख' ११२, ११३
जीवतिक्ति 'ख' जटिल १९२, १९३
जीवतिक्ति, बन्ध्यतानिवारक २२१
जीवतिक्तियाँ १९३
जीवतिक्तियाँ, जलविलेय १९३, १९४, १९५
जीवतिक्तियाँ, वसाविलेय २११
जीवतिक्ति, रक्तस्कन्दन २२४
जीवतिक्ति, रिप्रोडक्टिव (सन्तानोत्पादक) २२१
जीवतिक्ति विरोधी द्रव्य (एन्टी-विटामिन्स) १९४–१९५
जीवतिक्ति, संक्रमणनिवारक (तत्व) २१२
जीवतिक्त्युत्कर्षजन्य विषमयता २१६
जीवाण्डभक्ष या बैक्टीरियोफेज चिकित्सा ८५८
जीवाण्डवृद्धिरोधक (Antiseptio), जीवाणुनाशक एवं पराश्रयी कीटनाशक द्रव्य ७८०
,, स्थानिक ७८२
,, वर्गीकरण ७८२
(दे० अध्याय १२।)
जु (ज्यु) निपर ४४५, ४४६
,, ऑयल ४४५, ४४७
,, कॅम्फर ४४८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४४८
जुनिपराइ फ्रक्टस ४४५
जुनिपेरस् ४४५
,, कम्युनिस ४४७,४४५

जुनिपेरस् मेक्रोपोडा ४४५, ४४७
जुमरा ३३२
जुजु ४५६
जूस ऑव ओलटकम्बल ४८६
जूस ऑव टरेक्सेकम् ४३
जेंटिसिक एसिड २८२
जेंथीन समुदाय की मूत्रल औषधियाँ ४३१
जेटिओरहाइजा पामेटा ३१
जेटियोरहाइजीन ३२ (क)
जेन्शिआना कुरो ३८
जेन्शियन वॉयलेट १३६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १३६
,, ,, के व्यावसायिक योग १३६
जेपाल १०६
जेफ्रॉल ३६०
जेरोफॉर्म ६६८
जेल (ला) प १०२
जेल पाउडर १०४
जेलिडियम् एमेंसाइ ७१
,, कार्टिलेजिनियम् ७१
,, प्रिस्टवायडीज ७१, ७२
जेल्सीमस अल्फालिन २१५
जेल्सीमस एप्रोलिन २२३
जेसुट्स बार्क ६०४–६०५
जेस्टिल ४८७
जेस्टोन ४६४
जैत ५०४
जैतून का तेल ५०४
जोफिरन ८१६
जौजबुया (वा) ५७८–५७६
ज्युनिपर टार ऑयल ७६५
,, के योग ४४८
ज्यु(जु)निपर वेरीज (फाम) ४४५, ४४७
ज्यूनिपेरस ऑक्सीसेड्रन ७६५

(झ)

झाड़ की हल्दी ३२ (क)
झोरा ४४५

(ट)

टंकण ८१८
टंकणाम्ल ८१८
टॅबलेट या टॅबलेट्स
,, ऑव अन्युरीन हाइड्रोक्लोराइड १६८
,, ,, अर्गोटामिन टारट्रेट ४६६
,, ,, अर्गोनोवीन मेलिएट ४६८
,, ,, अर्गोमेट्रीन ,, ४६८
,, ,, आइसोनिएजिड ७६३
,, ,, आइसोप्रिनेलीन सल्फेड ३६३
,, ,, ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन ७४१
,, ,, इपेकाक्वाना एण्ड ओपियम् ४१३
,, ,, एक्सिकेटेड फेरस सल्फेट १७२
,, ,, एथिनिलिस्ट्रेडिऑल ४६२
,, ,, एथिस्टरॉन ४६६
टॅबलेट ऑव एन्टीपायरीन २७८
,, ,, एन्टोजोलीन ८५४
,, ,, एमिनोफिलीन ४३६
,, ,, एलोज एण्ड नक्सवॉमिका ८४
,, ,, एसिटोफेनेटिडिन २७८
,, ,, एसिटोमेनेडिऑन २२६
,, ,, एसिटोमेनेफ्थोन २२६
,, ,, एसेटिल सेलिसिलिक एसिड ४१३
,, ,, एसकोरबिक एसिड २०६
,, ,, एस्प्रिन ४१३
,, ,, ,, एण्ड डोवर्स पाउडर ४१३
,, ,, ,, ,, फेनासेटिन २७८
,, ,, ओस्ट्रोन ४६२
,, ,, कत्था १५२

टॅबलेट ऑव कस्करा सगरेडा ६७
,, ,, कारबरसोन ६८७
,, ,, कारबिमेजोल २५३
,, ,, कार्टिसोन एसिटेट २७१
,, ,, फेलोमेल ६७८
,, ,, कोल्चिसीन २४१
,, ,, क्लोरोक्वीन फॉस्फेट ६२८
,, ,, ,, सल्फेट ६२८
,, ,, क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड ६१७
,, ,, क्वीनीन एसिड सल्फेट ६१७
,, ,, ,, बाइसल्फेट ६१७
,, ,, ग्रे पाउडर ६७७
,, ,, ग्लिसेरिल ट्राइनाइट्रेट ३७२
,, ,, डाइ आयडोहाइड्रॉक्सी-क्विनोलीन ६८६
,, ,, डाइएथिल कारबामेजीन साइट्रेट १४३
,, ,, ,, स्टिलविस्ट्रॉल ४६३
,, ,, डायनिस्ट्रॉल ४९३
,, ,, डिजॉक्सिन ३१८
,, ,, डिजिटॉक्सिन ३१८
,, ,, डिजिटेलिस ३१६
,, ,, डेप्सोन ७७१
,, ,, डोवर्स पाउडर ४१३
,, ,, थायरॉयड २४८
,, ,, थिआसिटेजोन ७६५
,, ,, थियामीन हाइड्रोक्लोराइड १६८
,, ,, थियोफिलीन विथ एथीलीन डायमीन ४३९
,, ,, निकोटिनिक एसिड २०४
,, ,, ,, ,, एमाइड २०४
,, ,, निकोटिनेमाइड २०४
,, ,, नियोसिंकोफेन ६४४
,, ,, पामाक्विन ६२१
,, ,, पेनिसिलिन ७२६
,, ,, प्रिपेयर्ड अर्गट ४६७
टॅबलेट ऑव प्रिपेयर्ड डिजिटेलिस ३१८
,, ,, प्रोगुआनिल हाइड्रोक्लोराइड ६३०
,, ,, प्रोमेथाजीन ,, ८५२
,, ,, प्रोलिल थायरोसिल २५२
,, ,, फि (फे) नासेटिन २७७
,, ,, ,, एण्ड कोडीन २७८
,, ,, फिनोलफ्थेलीन ६८
,, ,, फेनिन्डिओन १८६
,, ,, फेरसग्लुकोनेट १७२
,, ,, फोलिक एसिड १६२
,, ,, फ्थेलिल सल्फाथाएजोल ७१३
,, ,, मरकरी विद् चॉक ६७७
,, ,, मरक्युरस क्लोराइड ६७८
,, ,, मेथिल टेस्टॉस्टरान ६७८
,, ,, ,, थायरोसिल २५२
,, ,, मेथिलेम्फिटामीन ३६४
,, ,, मेपाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड ६२४
,, ,, मेपिरामीन मेलिएट ८५२
,, ,, यूश्रॉनिमस ११८
,, ,, राइबोफ्लेविन २०८
,, ,, ल्युकेन्थोन हाइड्रोक्लोराइड १४४
,, ,, विटामिन "बी१" १६८
, ,, ,, "डी२" २१७
,, ,, ,, "सी" २१०
,, ,, सक्सिनिल सल्फाथाएजोल ७१३
,, ,, सल्फाग्वानीडीन ७१३
,, ,, ,, डाइमाइडीन ७०६
,, ,, सल्फाथाएजॉल ७७७
,, ,, सल्फाइरिडीन ७१४
,, ,, सल्फामेराजीन ७१६
,, ,, सल्फोनिलेमाइड ६६८
,, ,, सोडियम् सेलिसिलेट २८६
,, ,, सोलेप्सीन ७७३
,, ,, स्टिलविस्ट्रॉल ४६३
,, ,, हेक्सास्ट्रॉल ४६२
टॅबेली अन्युरिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ १६८

टॅबेली आर्गोटामिनी टारट्रेटिस ४६६
,, अर्गोटी प्रिपरेटी ४६७
,, अर्गोमेट्रिनी मेलिएटिस ४६८
,, आइसोनिएजिडाइ ७६३
,, आइसोप्रिनेलिनी सल्फेटिस ३६२
,, इपेकाक्वानी एट ओपियाई ४१३
,, एथिनिलो स्ट्रेडिओलिस ४६६
,, एथिसटेरानाइ ४६६
,, एन्टेजोलिनी ८५४
,, एफेड्रिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ ३५६
,, 'एल' थायरॉक्सिनी सोडियाइ २४६
,, एलो एट न्युक्सिवामिकी ८४
,, एसिटो मिनेडिग्रानाइ २२६
,, एसिटो मिनेफथोनाइ २२६
,, एसिडाइ आयोपेनोइसाइ ८६२
,, ,, एसिकोरबिसियाइ २०६
,, ,, एसेटिल सेलिसिलिसाइ २८६
,, ,, ,, ,, एट फेनासिटिनी (–सेटिनाइ) २८७, २७८
,, ,, ,, ,, कम्पोजिटी २८७
,, ,, निकोटिनिमाइडाइ २०४
,, एसिडाइ निकोटिनिसाइ २०४
,, ,, फोलिसाइ १६२
,, ओस्ट्रोनाइ ४६२
,, कारबिमेजोली २५३
,, कार्टिसोनाइ एसिटेटिस २७१
,, केटिक्यू १५२
,, केल्सिफेरोलिस २१७
,, कोडिनी कम्पोजिटी २७१
,, कोल्चिसिनी २४१
,, क्वीनीनी बाइसल्फेटिस ६१७
,, ,, हाइड्रोक्लोराइडाइ ६१७
,, ग्लिसेरिलिस ट्राइनाइट्रेटिस ३७२
,, जिजिबरिस कम्पोजिटा ५८२
,, डाइएथिल कारबामोजिनाइ साइट्रेटिस १४२
टॅबेली डायनिस्ट्रॉलिस ४६३
,, डिजॉक्सिनाई ३१८
,, डिजिटॉक्सिनाई ३१८
,, डिजिटेलिस ३१८
,, ,, प्रिपरेटी ३१८
,, डेप्सोनाइ ७७१
,, थॉयरॉयडियाइ १४६
,, थिआसिटेजोलाइ ७६५
,, थियामिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ १६८
,, थियोफिलीनी कम् एथिलीनडायमिना ४३६
,, नियोसिकोफेनाई २४४
,, पामाक्विनी ६२१
,, प्रोगुआनिलाइ हाइड्रोक्लोराइडाइ ६३०
,, प्रोमिल थायरोसिलाइ ८५२
,, प्रोमेथाजिनी हाईड्रोक्लोराइडाइ ८५२
,, फिनोल फथेलिनाइ ६८
,, फेनाजोनाइ २७८
,, फेनासेटिनाइ २७८
,, ,, एट एसिडाइ एसेटिल सेलिसिलिसाइ २७८
,, फेनिन्डिओनी १८६
टॅबेली फेराइ ग्लुकोनेटिस १७२
,, ,, सल्फेटिस एक्सिकेट १७२
,, फथैलिल सल्फाथाएजोलाइ ७१३
,, मेथिल टेस्टास्टरानाइ ४६६
,, ,, थायरोसिलाइ २५२
,, मेथिलेम्फिटामिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ ३६४
,, मेपाक्रिनी हाइड्रोक्लोराइडाइ ६२४
,, मेपिरामिनी मेलिएटिस ८५२
,, यूऑनिमाइ ११८
,, राइबोफ्लेविनाइ २०२
,, ल्युकेन्थोनाइ हाइड्रोक्लोराइडाइ १४४
,, सक्सिनिल सल्फाथाएजोलाइ ७१३
,, सल्फाग्वानीडीनी ७१३
,, सल्फाडाइआजीनी ७०६
,, सल्फाडाइमाइडिनी ७०६

टॅवेली सल्फाथाएजोलाइ ७०७
„ सल्फापाइरिडीनी ७१४
टॉक्सामीन १६४ (पा० टि०)
टॉक्सामीन्स १६४
टॉक्सायड या निर्वीर्य विष
„ एन्टीटॉक्सिन फ्लॉक्युलस (T. A. F.) ८७०
„ एलम् प्रेसिपिटेटेड (A.P.T.) ८७०
„ टिटेनस ८७४
„ „ इन सिम्पुल सॉल्यूशन ८७४
„ „ एलम् प्रेसिपिटेटेड ८७४
„ नेचुरल एडजुवेंट फैक्टर ८७१, ८७२
„ प्योरिफायड एल्युमिनम् फॉस्फेट (P. T. A. P.) ८७०
टॉक्सिनम् टिटेनिकम् डिटॉक्सिकेटम् ८७४
„ डिफ्थेरिकम् केलिफेक्टम् ८७३
„ „ डायग्नोस्टिकम् ८७२
„ „ डिटॉक्सिकेटम् ८६६
„ स्कारलेटिनम् „ ८७७
„ „ „ के प्रयोग ८७७
„ स्टेफिलोकोकिकम् डिटॉक्सिकेटम् ८७८
टार ७६२
टारटार इमेटिक ६३२
„ „ की सूई ६३८
टारवीड ४२४
टार्ज़िना ६०५
टार्ज़ीन ६०५
टिंक्चर ऑव अर्जिनिया ३२६
„ „ ॲमोनिएटेड वॅलेरिअन ५७१
„ „ ॲसेफीटिडा ५५५
„ „ आयोडीन ८०४
„ „ इपेकाक्वाना ४१२
„ „ ऑरेन्ज ३६७
„ „ एकोनाइट ३२६
„ „ एपोसाइनम् ३३१
„ „ एरिस्टोलोकिआ ४६
टिंक्चर ऑव एलोज ८४
„ „ एल्सटोनिआ ४७
„ „ कलम्बा ३२ (क)
„ „ कॉल्चिकम् २४०
„ „ केप्सिकम् ५४६
„ „ क्युबेब ४६४
„ „ क्रोकस ६०५
„ „ क्वाशिया ३४
„ „ क्विल्लाया ४२०
„ „ चाइनेन्सिस ४१८
„ „ जिंजर ५८२
„ „ टिनोस्पोरा ४८
„ „ टोलू ५४६
„ „ डिजिटेलिस ३१८
„ „ बलसम ऑव टोलू ५४६
„ „ बुकु ४६०
„ „ बोल ५४८
„ „ मिर्ह ५४८
„ „ रॉओल्फिया ३७६
„ „ लेमन ५७१, ३६७
„ „ लोबेलिया ४२२
टिंक्चर ऑव सिंकोना ६१६
„ „ सिन्नेमन ५७५
„ „ स्क्विल्ल ३२८, ३२६
„ „ स्ट्रोफेन्थस ३२४
„ आयोडीन ८०४
„ इपेकाक ४७३
„ कार्ड को० ५६१, ५६३
„ वॅलेरिअन ५५२
„ वेरेट्रिन ३७८
„ सॅनेगा ४१७
„ सिंकोना ६१६
टिंक्चुरा अर्जिनिई ३२६
„ ॲसेफिटिडी ५५५
„ अयोडाइ फोर्टिस् ८०४
„ ऑरन्शिआ (या) इ ३६

टिंक्चुरा इपेकाक्वानी ४१२
,, एकोनाइटी ३३६
,, ,, फोर्टिस ३३६
,, एपोसाइनाइ ३३१
,, एरिस्टोलोकिई ४६
,, एलस्टोनिई ४७
,, एलोज ८४
,, ,, कम्पोजिटी ८४
,, ओपियाइ कम्फोरेटा ५८६
,, कॅटेक्यु ५७५
,, कॅम्फोरी कम्पोजिटा ५८६
,, कॅलम्बी ३२ (क)
,, कार्डेमोमाइ एरोमेटिका ५६२
,, ,, कम्पोजिटस् ५७५
,, ,, कम्पोजिटा ५६१
,, कॉल्चिसाइ २४०
,, केप्सिकाई ५४६
,, क्युबेबी ५६४
,, क्रोसाइ ६०५
,, क्वाशिई ३४
,, क्विनीनी ॲमोनिएटा ६१८
,, क्विल्लाइ लिक्विडम् ४२०
,, चाइनेन्सिस ४१८
,, चिरेटी ४१
,, ,, कम्पोजिटा ४१
,, जिंजिबरिस फॉर्टिस ५८२
,, ,, मिटिस ५८२
,, जेंशिआनी ३७
,, ,, कम्पोजिटा ३६
,, टिनॉस्पोरा ४८
,, टोलूटेना ५४६
,, डिजिटेलिस ३१८
,, पिक्रोर्‌हाइजी कम्पोजिटा ४६
,, बुकु ४६०
,, बेंजोइनी कम्पोजिटा २६३
,, मिर्‌ही ५४८
टिंक्चुरा रॉओल्फिई ३७६
,, र्‌हियाइ कम्पोजिटा ८८
,, लाइमोनिस ३६, ५७१
,, लेवेंडुली कम्पोजिटस् ५७८
,, लोबेलिई ४२२
,, ,, ईथेरिया ४२२
,, वॅलेरिआनी ॲमोनिएटा ५५२
,, ,, सिम्प्लेक्स ५५२
,, सॅनेगी ४१७
,, सिंकोनी ६१६
,, ,, कम्पोजिटा ६१६
,, सिन्नेमोमाइ ५७५
,, ,, कम्पोजिटा ५७५
,, सिल्ली ३२६
,, स्ट्रोफेन्थियाई ३२४
टिंक्चुरी वॅलेरिआनी ५५२
टिटेनस एन्टिटॉक्सिन ८७३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८७४
,, टॉक्सायड ८७४, ८७५
,, ,, इन् सिम्पुल सॉल्यूशन ८७४
टिनोस्पोरा ४७, ५०
टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिआ ४७
,, बेकिस ३२ (क)
टिबिओन ७६४
टी० सी० एफ० फोलिक एसिड कम्पाउंड विथ लिवर एक्स्ट्रक्ट १७५
टुआमीन ३६८
टुआमेनोहेप्टेन ३६८
टुलास्ने ४६५
टूटगंठा ३५४
टेट्राकैप १४४
टेट्राक्लोरेथीलिनम् १३६
टेट्राक्लोरेथीलीन १३६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १३६
टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड ७४१
टेट्रासिन ,, ७४२

टेपोजोल २५३
टेरामाइसिन ७३६
,, की टिकिया ७४१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४१
,, ,, योग ७४१
,, डाइहाइड्रेट ७४०
,, हाइड्रोक्लोराइड ७४०
टेरिवीन ५१८, ५३६
टेरिवीनम् ५१८, ५३६
टेर्गिसन्टोल ४६१
टेरेक्टोननस कुर्जियाइ ७७४
टेरेक्साइ रैडिक्स ४३
टेरोकार्पस सेन्टेलिनस् ४६१
टेरोक्लेडिया केपिलेसिया ७१
,, ल्युसिडा ७१
टेलिनी फ्लाइ ५०१
टेलिपेक ८६१
टेस्टलेस पर्जिंग साल्ट ६८
टेस्टास्टेरोन ४६६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४६७-४६८
टेस्टास्टेरोन के व्यावसायिक योग ४६६
,, ,, मेलेट्स ४६८
,, प्रोपिओनेट ४६६, ४६६
टेस्टॉस्टेरोनम् ३६६
टेस्टॉस्टेरोनाइ प्रोपिओनास ४६७
टेस्टोविरॉन ४६७
टैनिक एसिड १४८-१४६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १४६-१५०
,, ,, ऑफिशल-नॉट ऑफिशल योग १५०-१५१
,, ,, जेली १५०
,, ,, सपोजिटरीज १५०
टैनिजन १५१
टैनिन १४८, १४६
टैनोफॉर्म २२३
टोकोफेरिल एसिटेट २२३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २२३
टोकोफेरिलिस एसिटास २२३
टोकोफरोलिस जेलेट २२४
टोटाक्वीन ६०७
,, के गुण-प्रयोग ६०९
टोटाक्वीना ६०७
टोनेफिन ४८०
टोरुला युटिलिस १६८
टोलू बलसम् ५४८
टोलू ब्यूटामाइड २६४
,, शर्बत ५४६
टोलोनियम् क्लोराइड १७६
दे० "ब्लूटीन क्लोराइड।"
ट्युबरक्युलिन जेली टेस्ट ८८०
ट्युबरक्युलिन पी. पी. डी. ८७६
,, का गुणकर्म तथा प्रयोग ८७६
,, वैक्टेस्ट ८७६
ट्युबरक्युलिनम् प्रिस्टिनम् ८७८
ट्युबरक्युलिनाइ डेरिवेटिवम् प्रोटीनिकम् प्योरिफिकेटम् ८७६
ट्रेगाकान्थ ५१९
,, का चूर्ण ५२०
,, के गुणकर्म एवं प्रयोग ५२०
ट्र(ट्रॉ)गाकान्था (दे० "ट्रेगाकान्थ"।) ५१९
ट्रेगाकान्थी पल्विस ५२०
ट्राइ-इथेनोलामीन ऑव नियासिन २०५
ट्राइ-इथेनोलेमिना ५३५
ट्राइ-इथेनोलेमीन ५३५
,, ,, के प्रयोग ५३५
ट्राइ-ईथिलीन मेलामीन १८९
ट्राइ-नाइट्रिन टेबलेट्स ३७२
ट्राइ नाइट्रोफिनोल ७९१
ट्राइपन ब्ल्यू ९०६

ट्राइपेनम् सिरुलियम् ९०६
ट्राइपेलिनेमीन हाइड्रोक्लोराइड ८५३
ट्राएन्थेमा पोर्टुलेकेस्ट्रम् ४५०, ४५१
,, मोनोगाइना ४५१
ट्रॉकिस्काइ क्रमेरिई १५३-१५४
,, ,, एट कोकेनी १५३-१५४
,, पेनिसिलिनाइ ७२९
,, विस्मथाइ कम्पोजिटी ६६९
ट्रिटिकम् सॅटाइवम् ५८
ट्रिपार्समाइड
ट्रिपार्समाइडम् ६५३
ट्रिपुलडाइ ८०६
ट्रिप्सिन ५५
ट्रिबुलस् अॅलेटा ४५४
,, टेरेस्ट्रिस ४५३
ट्रिबुलस् फ्रक्टस ४५३
ट्रेकिस्परमम् एमिआइ ५८९
ट्रेटामीन १८९
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १८९
ट्रोमेक्शन १८३

(ड)

डंडेलिअन् ४३
डंजेनन ७१४
डवोया वेनम् ८८१
डर्मॅटाल ६६४
डस्टिंग पाउडर ऑव जिंक अन्डेसेनोएट ८३२
,, ,, ,, ,, ऑक्साइड
एण्ड बोरिक एसिड ८२०
,, ,, ,, बोरिक एसिड
एण्ड स्टार्च ८२०
,, ,, ,, बोरिक टॉक ८२०
डाइ-आयडो-हाइड्राक्सीक्विनोलिनम् ६८९
,, ,, ,, -लीन ६८९
डाइ-एथिल कारबामेजिनाइ साइट्रस १४२
,, ,, कारबामेजीन साइट्रेट १४२
,, ,, स्टिल बिस्ट्रॉल ४९०
डाइ-एथिलामीन एसेटार्सोल ६६१
डाइ-एमिनो डाइफेनिल सल्फोन ५७०
डाइएसेटिल टैनिन १५१
डाइकोफेन ८३४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८३५
डाइकोफेनम् ८३४
डाइकोमेरिन १८३
डाइकोमेरोल १८३, १८४, १८५
,, के प्रयोग १८४
डाइकोमेरोल के व्यावसायिक योग १८५
डाइक्लोरॉक्सिलेनोल ७८८
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७८६
डाइक्लोरॉक्सिलेनोलिस ७८८
डाइक्लोरामि(मी)ना ८०१
डाइक्लोरामीन 'टी' ८०१
डाइक्लोरोफेनार्सिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ६५९
डाइक्लोरोमेटाक्सिलेनोल ७८८
डाइगैलिक एसिड १४८
डाइडोक्विन ६८९
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६८९
डाइनेस्ट्रॉल ४९१
डाइप्रेनाल ८३०
,, के व्यावसायिक योग ८३१
डाइफिनेनम् १४०
डाइफेनी हाइड्रामिनी हाइड्रौक्लोराइडम् ८५२
,, हाइड्रामीन हाइड्रोक्लोराइड ८५३
डाइब्युटिल फथैलेट ८३६
डाइब्युटिलिस फथैलास ८३६
डाइब्रोमोप्रोपेमिडिनी आइसेथिओनास ८२३
डाइब्रोमोप्रोपेमिडोन आइसेथिओनेट ८२३
डाइमर्केप्रॉल ६७९
,, की टिकिया ६८९
डाइमर्केप्रॉलम् ६७९

डाइमॉर्फीन एण्ड टर्पीन एलिक्जिर ५४०
डाइमेथिल जैंथीन ४३९
डाइमेथिल फ्थैलेट ८१७
डाइमेथिलिस फ्थैलास ८३७
डाइमेन हाइड्रिनेट ८५४
डाइसोडियम् हैड्रोजन फॉस्फेट ६६८
डाइहाइड्रॉक्सीफ्थैलोफिनीन ९७
डाइहाइड्रॉक्सीस्ट्रीन डाइप्रोपिओनेट ४९०
डाइहाइड्रॉक्सीस्ट्रीन मॉनोबेंजोएट ४८६
डाइहाइड्रोटेकिस्टेरॉल २५७
डाइहाइड्रोथीलिन ४८९
डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिन ७५४
डाइहाइड्रोस्ट्रेप्टोमाइसिनम् ७५४
डाएट्रीन हाइड्रोक्लोराइड ८५५
डाएमोन ७६९
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ७७०
डाएमोन सोडियम् ७६९
डॉग्मवेन ३३१
डायनेस्ट्रोल ४९१
डायनेस्ट्रो(निस्ट्रो)ल टैबलेट्स ४९३
डायनोसिल (दे० 'प्रोपिलिओडोन') ८८६–८८७
" के प्रयोग ८८६
डायनोसिल के व्यावसायिक योग ८८७
डायमॉक्स ४४४
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ४४४–४४५
डायलोफार्म टैबलेट्स एवं डायलोफार्म एलिक्जिर ४९३
डाय(इ)ल्यूट आयण्टमेन्ट ऑव मर्करी ६७६
डायल्यूट आयण्टमेंट ऑव मरक्युरिक नाइट्रेट ६७७–६७८
डायल्यूट प्रूसिक एसिड ६०–६२
" हाइड्रोसायनिक एसिड ६०
" " " के गुणकर्म तथा प्रयोग ६०–६२
डायल्यूटेड मरक्यूरिक नाइट्रेट आयण्टमेंट ६७८
डायल्यूटेड हाइड्रोजैन सायनाइड ६०
डायस्टेज ५९
डायाप्रीन क्लोराइड ८१७
डायुरेटिन ४३३–४३७, ४३९
डायोज्मा ४५९
डायोडोन के प्रयोग ८८८
डिऑक्सीकॉर्टिकोस्टेरोन एसिटेट २६८
डिऑक्सीकॉर्टोन २७०
" के गुणकर्म तथा प्रयोग २७०
" एसिटेट २६८
डिऑक्सीकॉर्टोनाइ एसिटास २६८
डिकॉक्टम् अर्जुनी ३३२, ३०९, ३१०
" अशोकी ४८४
डिकॉक्टम् टॅरेक्सेसाइ ४५
डिकॉक्शन ऑव अर्जुन ३३२
" " अशोका ४८४
" " टॅरेक्सेकम् ४५
डिकोलिन १२२
डिजॉक्सिन ३११, ३१९
" के योग ३१८
डिजॉक्सिनम् ३११
डिजालेन ३२०
डिजिग्लुसिन ३२०
डिजिटॉक्सिन ३०९, ३१०
" के योग ३१८
" टैबलेट्स ३१९
डिजिटॉक्सिनम् ३१०
डिजिटाक्सीन ३०६
डिजिटेलिन नैटिवेल्ली ३१९
डिजिटेलिस ३०७–३०९
" के अन्य व्यावसायिक योग ३२०–३२१
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ३११–३१८
" " नुस्खे ३१९
" " योग ३१८–३१९

डिजिटेलिस के विभिन्न योगों की
क्रियाशीलता में
टिंक्चर डिजिटेलिस
की बराबर मात्रायें ३२०, ३२१
डिजिटेलिस (पत्र) के व्यावसायिक
योग ३१९–३२०
,, टबलेट्स ३१८
,, परपूरिआ ३०७, ३०८
,, पल्वरेटा ३०९
,, प्रिपरेटा ३०९
,, फोलियम् ३०७
,, लनाटा ३१०, ३११
,, लनाटा लीव्ज ३१०
,, लनाटी फोलियम् ३१०
डिजिटेलीन क्रिस्टिलेनी ३१०
डिजिप्यूरारम् ३२०
डिजिफॉर्टिस टबलेट्स ३१९, ३२०
डिजिलेनिड ३१९–३२०
डिजिस्टन लिक्विड ३२०
डिटावार्क ४७
डिटामीन ४७
डिन्डेवेन १८६
डिपेक्सिन १८६
डिवेंसिल ७३०
डिमेकोल्सोन २४१
डिल ५६५
,, फ्रूट ५६५
डिसॉक्सि-इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड ३६३
डिसॉक्सिकर्टिकोस्टेरोन (डोका) २६६–२६७
डिस्टिल्ड एनिस ५६८
डिस्टिल्ड कॅसिआ वॉटर ५७७
,, करावे वॉटर ५६३
,, क्लोव वॉटर ५५८
,, डिल वॉटर ५६६
,, फेनेल वॉटर ५७०
,, वॉटर ४२६
डिहाइड्रॉस्टिल बस्टरॉल ४९१
डिहाइड्रोकोलिन १२२
डिहाइड्रोक्लोरिक एसिड १२२
,, ,, के गुणकर्म एवं प्रयोग १२२
डी० डी० एस० ७७०
डी० डी० टी० (D. D. T.) ८३५
डी० डी० टी० एप्लिकेशन ८३५
डेंडिलाइन ४३
डेकाप्रिन सक्सिनेट ८५५
डेकिन सॉल्यूशन ८००, ८०१
डेक्सेड्रीन ३६४
डेक्सेम्फिटामिनी सल्फास ३६४
डेक्सेम्फिटामीन सल्फेट ३६४
,, के गुणकर्म एवं प्रयोग ३६४
डेक्स्ट्रन सल्फेट १८५
,, ,, के प्रयोग १८६
,, ,, सोडियम् १८६
डेक्स्ट्रेनाइ सल्फास १८५
डेक्स्ट्रोज २२६
,, मानोहाइड्रेट २२६
,, के ऑफिशल योग २३१
डेक्स्ट्रोजम् (द्राक्षशर्करा) २२६
डेक्स्ट्रोजम् हाइड्रेटम् २२६
डेजॉक्सीकॉर्टिकोस्टेरोन एसिटेट २६८
डेजॉक्सीकार्टोनाइ एसिटास २०६
डेजॉक्सीकार्टोन एसिटेट २०५
डेप्सोन ७७०
,, की टिकिया ७७१–७७२
,, ,, सूई ७७२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७७१
,, ,, व्यावसायिक योग ७७२
,, टबलेट्स ७७१
डेप्सोनम् (दे० "डेप्सोन") ७७०
डेराप्रिम ६३१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६३१
,, टबलेट्स ६३१

डेरिस ८४०
,, इन्वाल्युरा ८४०
,, एलिप्टिका ८४०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८४१
,, ,, योग ८४१
,, फेरुजिनिया ८४०
,, युलिजिनोसा ८४०
,, रॉबस्टा ८४०
,, स्केन्डेन्स ८४०
डेरोविन ग्रायएटमेन्ट ८३१
,, पाउडर ८३१
डेल्टकार्टोन २७२
डेल्टाकॉर्टिल २७२
डेविल्स कॉटन ४८५
डेसिकेटेड स्टमक (शुष्क ग्रामाशय) १६०
डेसएसेटिल मेथिल कॉल्चिसीन २४१
डेसिकेटेड थायरॉय ग्लैंड २४६
ढोका २६८, २६६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २६९–२७०
डोक्सिलेमीन सक्सिनेट ८५५
डोवर पाउडर की टिकिया ४१३
डोवर्स ,, ४१२
डोनोवान सॉल्यूशन ६५१
डोमिफेन ब्रोमाइड ८१६
डोमिफेनिस ब्रोमाइडम् ८१६
ड्युटॉल ४२८
ड्युमेरोल १८५
ड्राइ ऑप्टेरिस फिलिक्समास १२८
ड्राइ ऑप्टेरिस मार्जिनालिस १२८
ड्राइ एक्स्ट्रक्ट ऑव कॅस्कारा ९७
ड्राइ एक्स्ट्रक्ट ऑव कॉल्चिकम् २४१
ड्राइ एक्स्ट्रक्ट ऑव रॉग्रोल्फिया ३७६
,, ,, ,, हेमामेलिस १५५
ड्राइड ऑरेन्जपील ३६
ड्राइड यीस्ट १६८
ड्राइ थॉयरायड २४६
,, लेमन ,, ३६
ड्रास्टिक पर्गेटिह्ज् ९६
ड्रास्टिग पर्गेटिह्न ६६
ड्रेमेमीन ८५४

(त)

तगर ५५०
तगर का अभिनव फांट ५५३
तगर का सत ५५२
तगर, भारतीय ५५०
तगर, विदेशीय ५५०
तज ५७५-५७६
तरखश्कून ४३
तर्ख १२५
तारपीन का तेल ५३७
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३–८५३६
तार्पिन ५३७
तिक्त ग्रौषधियाँ, साधारण ३०
तिक्त ग्रौषधियों के गुणकर्म तथा ग्रामयिक प्रयोग ४६
तिक्तवल्य ग्रौषधियों के उपयोगी नुस्खे ५०–५१
तिथाई ३३
तिल ऑयल ५१२
तिल तैल ५१२
तिलपुष्पी ५१२
तीव्रबल टिंचरग्रायोडीन ८०४
तीव्र (तीक्ष्ण) विरेचन द्रव्य ६६
तीसी ५०६
तीसी का तेल ५०६
तीसी का पुलटिस ५०६

तुख्महब्बुस्सलातीन १०६
तुख्मे कब्कू १०४
तुख्मे नील १०४
तुवरक ७७३, ७७५
" , उत्तर भारतीय ७७५
" तेल ७७३
" , दक्षिण भारतीय ७७५
तेलनी ५०१
तेलनीमक्खी ५०१
तेलिन ५०१
तेलिनीमक्खी का सत ५०१
त्रायमाण ३८
त्रिकंटक ४५३
त्वक् ५७४, ५७६
त्वग्ग्राहनिवारक तत्व या जीवतिक्ति २०३
त्वग्ग्राहविरोधी तत्व २११
त्वचा पर कार्य करनेवाली औषधियाँ ३७६, ३६७
त्वचाविशोधक यौगिक ८१५

(थ)

थंथार ६५
थाइमोलिस आयोडाइडम् ८०६
थाइरॉक्सीन २४६
थाइरॉक्सीन सोडियम् २४७
थान्जिलेमीन हाइड्रोक्लोराइड ८५५
थायमल (दे० "थायमोल") ५६०
थायमस ५६०
" के गुणकर्म तथा प्रयोग २५१–२५२
" के योग २५२
" के व्यावसायिक योग २५२
थायमस वल्गेरिस ५८६–५६०
थायमोल ५८६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६०–५६१
" के योग ५६१
" या सतअजवायन के अन्य नुस्खे ५६२
" केटाप्लाज्मा केओलिनाई ५६१
थायरॉयड २४६
" एक्स्ट्रैक्ट २४६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग २४६–२४६
" के नुस्खे २४६
" के योग २४६
" के व्यावसायिक योग २४६
थायरॉयडियम् २४६
थायरॉयडियम् सिक्कम् २४६
थाय (इ) रोसिल २५०
थाय (इ) रोसिलम् २५०
थायरोसिल सोडियम् टॅबलेट २४६
" " की टिकिया २४६
थायोडाइफेनिलामीन १४१
थायोकारबरसोन ६६४
थायोमेरिनसोडियम् ४४३
थिआ (या) सिटेजोन ७६४
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६४–७६५
थिआ (या) सिटेजोन के योग ७६५
" " की टिकिया ७६५
" टॅबलेट्स ७६५
थिआसिटेजोनम् ७६४
थिओसेमिकार्बेजोन ७६४
थियाजेमाइड ७०६
थियामिनी हाइड्रोक्लोराइडम् १६५ (दे० विटामिन 'बी')।
थियामीन हाइड्रोक्लोराइड १६५
थियोकोल ४२८ (दे० 'पोटासियम् ग्वायकोल सल्फोनेट)।
थियोकेल्सीन ४३६
थियोफिलिनम् ४३६

थियोफिलो (लि) न ४३३, ४३६, ४३७
थियोफिलीन एण्ड सोडियम् एसिटेट ४३६
,, विथ एथिलीन डायमीन ४३७
थियोफिलीना एट सोडियाइ एसिटास ४३६
थियोफिलीना कम् एथिलीन डायमिना ४३७
थियोफोरिन ८५४
थियोब्रोमा ऑयल ५३२
,, कोकाओ ५३२
थियोब्रोमीन ४३९
थियोब्रोमीन एण्ड सोडियम् सेलिसिलेट ४३७
थियोब्रोमीन केल्सियम् सेलिसिलेट ४३६
थियोब्रोमीना ४३६
थियोब्रोमीना एट सोडियाइ एसिटास ४३६
थियोब्रोमीना एट सोडियाई सेलिसिलास ४३७
थियोब्रोमीन, थियोफिलिन तथा अन्य प्यूरिन यौगिकों के गुणकर्म तथा प्रयोग ४३७-४३८
थियोब्रोमीन एण्ड थियोफिलीन तथा प्यूरिन समुदाय की अन्य औषधियो के यौगिक ४३६
थियोसिन ४३६
थियोसिन सोडियम् एसिटेट ४३६
थीईन ४३१
थीलिन ४२८
थेलिस्टेटिल ७१२
थैलामिड ७१२
थैलेजॉल ७१२

(द)

दन्तमंजन १, २
दंद १०६
दंदचीनी १०९
दंदहिन्दी (दन्ती) १०६
दंदुस्सीनी १०६
दमूअलुल्उश्शाक १०४
दरख्त बुलूबुल्अफ्स १४७
दरख्ते सिन्न ८१
दारचीनी ५७४, ५७६
दारसीनी ५७४, ५७६
दारुचीनी ५७४, ५७६
दारुहरिद्रा ६४३
दारुहरिद्रिन ६४३
दारुहलदी का सत ६४३
दारुहलदीका सत की सूई ६४४
दालचीनी ५७३, ५७४, ५७६
,, का अल्कोहलघटित योग ५७५
,, का चूर्ण ५७४
,, का तेल ५७४
,, का निष्कर्ष ५७५
,, की छाल ५७४
दालचीनी के गुणकर्म तथा प्रयोग ५७५
दिर्मनः १२५
दीपन तिक्तऔषधियाँ ३०
दुग्धफेनी ४३, ५०
,, क्वाथ ४५
,, घनसत्व ४६
,, प्रवाही घनसत्व ४६
,, स्वरस ४६
दुग्धशर्करा २२६
दुधल (ली) ४३
दुमकीमिर्ची ४६२
दुमदार मिर्च ४६२
दूदल (ली) ४३
दूधवत्थल ४३
देवकुसुम ५५५
देशी गाफिस ३८
,, का घनसत्व ३८
,, पित्तपापड़ा ११३
,, कांदा ३२
द्राक्षशर्करा(डेक्स्ट्रोज, ग्लूकोज) २२६
द्राक्षशर्करा के गुणकर्म तथा प्रयोग २३०

(ध)

धंरो ५५८
धनियाँ ५५८–५५६
धनियाँ का गुणकर्म तथा प्रयोग ५६०
धनिये का चूर्ण ५५८
,, ,, तेल ५५६
धने ५५८
धनेल ५५८
धनुर्वात का प्रतिविष ८७३
धनुर्वात का निर्वीर्यविष ८७४
धाणा ५५८
धान्यक ५५८

(न)

नटमेग ५७८
,, ऑयल ५८०
नबातुस्सिन्न ८१
नाइट्रोग्लिसरिन टॅबलेट्स ३७२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३७२
नाइट्रोजन मस्टर्ड १८८
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १८८–१८६
नाइट्रोफ्युरन्टोइन ४६४
,, ,, के गुणकर्म एवं प्रयोग ४६४
नाइट्रोफुराजोन ८२१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२३
नाइड्रेजाइड ७६२
नाकुली ४६
नागविष ८८०, ८८१
नाजा-नाजा ८८०, ८८१
नानंगोखरू ४५३
नान्-स्टेनिंग आयरटमेंट ऑव आयोडीन ८०५
,, ,, ,, ,, विद् मेथिल सेलिसिलेट ८०५
नारंगी का शर्बत ४०
नारंगी के पुष्प के योग ४०
नाराचरस १११
नारिकेल तैल ५७३
नारियल का तैल ५७३
निएसिन २०२
निओ-एन्टिमोसन ६३६
निकागुआ ४०५
निकोटिनिक एसिड २०२
,, ,, एमाइड २०३
,, ,, एवं निकोटिनेमाइड के यौगिक २०५
,, ,, की टिकिया २०४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २०३–२०४
,, ,, के योग २०४
निकोटिनेमाइड २०३, २०५
,, की टिकिया २०४
निकोटिनेमाइडम् २०३
निक्सोलन १४५
निढोनिकुंड (सिंध) ४५४
निद्राज्वर में प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ ६४५
नियोआर्सफेनामिना ६५२
नियोआर्सफेनामीन ६५२
नियोएन्टरजन ८५२
नियोएन्टिमोसन ६३६
नियोएपिनीन ३६२
नियोक्रिल ६६१
नियोगाइनर्जेन ४७२
नियोड्रिनल ३६२
नियोफेमर्जिन ४७२
नियोफ्रिन ३६५

नियोमर्केजोल २५३
नियोमाइसिन ७४६
नियोमाइसिन सल्फेट ७४६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४६–७४८
नियोसाल्वर्सन (६१४) ६५२, ६५७
नियोसाल्वर्सन का इंजेक्शन ६५८
नियोसिकोफेन (दे० सिंकोफेन)। २४२
नियोसिंकोफेनम् २४२
नियोसिनफ्रीन (दे० "फेनिलेफ्रीन हाइड्रोक्लोराइड")। ३६५
नियोस्टम स्टिबामीन ग्लूकोसाइड ६३४
नियोस्टिबोसन ६३३, ६३७, ६३८
नियोहॉम्ब्रिओल ४६७
नियोहेट्रामीन हाइड्रोक्लोराइड ८५५
निरासिनेमाइड २०३
निरासिनेमाइड इंजेक्शन (सूई) २०४
निलोडिन १४३
निवाक्वीन ६२५
निवाक्वीन की टिकिया ६२८
निशास्ता ५२१
निसल्फेजोल ७१८
निस्टेटिन ७५२
,, के गुणकर्म-प्रयोग ७५२
नीबू का अर्क ५७२
,, का टिंक्चर (निष्कर्ष) ५७१
,, का ताजा छिलका ५७०
,, का तेल ५७१
,, का शर्बत ५७१
,, का सूखा छिलका ५७०
,, तथा नारंगी के छिलके के गुणकर्म तथा प्रयोग ५७१
नीललोहितातीत किरणें ६०६
,, ,, चिकित्सोपयोग आदि ६०६
नेगाली ४१७
नेजल ड्राप्स ऑव क्लारव्यूटॉल विद् मेन्थॉल ५८८
नेजल ड्राप्स ऑव मेंथॉल एण्ड थायमॉल ५९१
नेटिवेलिस डिजिटेलिन ग्रेन्यूल ३२०
नेपालो १०६
नेप्रिलेट ८३३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८३३
नेफाजोलिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ३६४
नेफाजोलीन हाइड्रोक्लोराइड ३६४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३६५
नेफ्थोल ७६४
नेबुला आइसोप्रिनेलीनी सल्फेटिस ३६३
,, ,, ,, ,, कम्पोजिटा ३६३
,, एड्रिनेलिनी एट कोकेनी ३५०
नेबुला ,, एरोमेटिका ३५०
,, मेन्थालिस एट थायमोलिस कम्पोजिटा ५८८, ५९१
नेबुला युकेलिप्टाइ ५४३
,, युकेलिप्टोलिस कम्पोजिटा ५४२
नेरिस्टिली क्लोरब्यूटोलिस ५८६
,, मेंथालिस एट थायमोलिस ५९१
,, मेंथाली ५८८
नेविटोल २२१
नोरिसोड्रीन ३५०
नोरेड्रिनेलीन ३५०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३५१
नोरेड्रिनेलीन बाइटारट्रेट ३५१
नोवारेन्शिआ ६०५
नोवार्सेनोबेंजॉल ६५२
नोवार्सेनोबेंजीन ६५२
नोवाल्जिन २६०
नोवास्केबिअल ८२७
न्युक्लियोटाइड्स के गुणकर्म तथा प्रयोग १६२
न्युट्रा एक्रिफ्लेवीन ८०६
,, प्रोफ्लेवीन सल्फेट ८०७
न्युट्रिएण्ट्स १६३

(प)

पंचसकार चूर्ण ६५
पथरी ४५०
पद्मचालन ८५
पनामा बार्क ४१८
पपय्या ५५
पपाया ५५
पपा(पे)योटिन ५६
पपाव(या)ट्री ५५
पपीता ५५
पपेन ५६
" के ऑफिशल योग ५७
" के आमयिक प्रयोग ५७
" के उपयोगी नुस्खे ५७
पपेनम् ५६
पपैया (पपय्या) ५५
" ऑयल ५६
पप्वायड ५६
परकोरटन २६८
परकोर्टेन २७
परक्लोराइड ऑफ मरकरी ६७१
परक्लोरेथिलीन १३६
परपोलिशिओनीज ओराइजी १६६
" ट्रैगाकान्थी कम्पोजिटस् ५१८-५२०
परमिएबिलिटी विटामिन २१०
परिस्रुत (विशोधित) जल ४२६
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ४२६-४३१
" " के योग ४३१
परीक्षा-विष ८७३
पर्गन ६७
पर्लेन ९७
पर्निडन २११
पर्विटिन ३६३
पर्सियन ट्रगाकन्थ ५१९
पलसाची बीज १२७
पलाश बीज १२७
" " के योग १२७-१२८
" " चूर्ण १२७
पलाशबीजादि चूर्ण १२८
पलास के बीज १२७
पलास (ढाक) पापड़ा १२७
पलासपापड़ो १२७
पलासबीजचूर्ण १२८
पॅलीटिएरीन के गुणकर्म तथा प्रयोग १३२
" टेनेट १३२
पलीटिएरीनी टॅनास १३२
पल्व ग्लिसर्‌हाइजी को० ५६९
पल्विस इपेकाक्वानी एट ओपियाई ४१२
" " कम्पोजिटस ४१२-४१३
पल्विस क्रेटी एरोमेटिकस ५५७-५७५
" " " कम् ओपिओ ५७५
" एफरवेसेन्स कम्पोजिटस् ६८
" कालाडानी कम्पोजिटा १०५
" ग्लिसर्‌हाइजी कम्पोजिटस् ९४-५६९
" जालापी कम्पोजिटम् १०४
" ट्रगाकान्थी कम्पोजिटस ५१८, ५२०
" पॅक्रियाटिनाई कम्पोजिटस् ५५
" प्रोपेडिक्स २८७-८१०
" बिस्मथाइ कम्पोजिटस् ६६६
" बेरियाइ सल्फेटिस कम्पोजिटस् २६४
" ब्युटीई कम्पोजिटस् १२७
" " सेमिनम् १२८
" मिरिस्टिकी ५८०
" र्‌हियाइ कम्पोजिटस् ८९
" सोडी टारट्रेट एफरवेसेन्स ६८
" स्केमोनियाइ कम्पोजिटा १०२
पश्चिमपीयूषग्रन्थि सत्व ४७६
" " का इंजेक्शन ४७६

पश्चिमपीयूषग्रन्थि सत्व के गुणकर्म तथा प्रयोग ४७८
पसदामा १२७
पहाड़ी पुदीना ५६०
पाइनस एक्सेल्सा ५३७
" खसिया ५३७
" लांगिफोलिआ ५३७, ७९२–७९३
पाइनीन ४४८
पाइनोसाइट सिरप १४५
पाइपर क्युवेबा ४८२
पाइपराजिन २४४
पाइरिडॉक्सिन २०७
पाइरिडॉक्सिन या विटामिन बी६ के गुणकर्म तथा प्रयोग २०६
पाइरिडॉक्सिनी हाइड्रोक्लोराइडम् २०५
पाइरिडॉक्सीन हाइड्रोक्लोराइड २०५
" के व्यावसायिक योग २०६
पाइरिडियम् ४५६
पाइरिबेंजामीन ८५३
पाइरिमिथामिना (दे० 'डेराप्रिम') ६३१
पाइरिमिथामीन ६३१
पाइरेथ्रम् ८३८–८३९
पाइरेमिडॉन २७५
पाइरोडिन हाइटेसेटिन १६२
पाइलेक्टन ८८८, ९८
पाउडर ऑव इपेकाक्वाना एण्ड ओपियम् ४१२
" " न्युटिआ सीड्स १२८
पाउडर्ड अकेशिया ५१८
" अगर ७३
" आइपोमिआ ९६
" इण्डियन पोडोफिलम् ११४
" कॉल्चिकम् सीड २३८
" एलोज ८२
" करावे ५६३
" केस्कारा सेगरेडा ९६
" कोरिएन्डर ५५९
पाउडर्ड कोलोसिन्थ १०७
" क्रमेरिया १५३
" क्लोव ५५७
" क्वासिया ३३
" क्विल्लाया ४१९
" ग्रीन हेलेबोर ३७८
" जॅन्शिअन ३७
" जिंजर ५८१
" ट्रॅगाकान्थ ५२०
" डिजिटेलिस ३०६
" " के योग ३१८
" डिल ५६६
" नटमेग ५८७
" पोडोफिलम् ११३
" फेनेल ५६६
" मेलफर्न १३०
" रुबर्ब ८८
" वॅलेरियन ५५२
" सॅनेगा ४१६
" स्ट्रोफेन्थस ३२२
" सेन्ना लीव ९६२
" हेमामेलिस १५४
पाचक किण्व ५२
पाणकन्दी ३२७
पानलता ८४०
पान-हिपर १७५
पाप्युलस २८८
पारा २०७
पामाक्वि (-क्वी) न ६१९, ६२०
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ६२०
" के योग ६२१
" टवलेट्स ६२१
" नेफ्थोएट ६१९
पामाक्विनम् ६१९
पायलोसिल ८८८
पारद ६६६

,, एवं इसके लवणों (यौगिकों) के गुणकर्म तथा प्रयोग ६७२–६७६
" के (नॉन-आफिशल) अन्यउपयोगी यौगिक ६७८
पारद के मूत्रल यौगिक ६७३, ६७६, ४४१-४४३
पारदजन्य विषाक्तता एवं उसकी चिकित्सा ६७३–६७४
पारद या मर्करी के ऑफिशल योग ६७६–६७७
" " " " नॉट " " ६७६
पारा ६६६
पारा-आर्सेनोफेनिल ब्युट्रिक एसिड ६६०
पारा-एमिनो-बेंजोइक एसिड २०७
" " " " के गुणकर्म तथा प्रयोग २०८
पारा क्लोरोमेटाक्रिसोल ७८७
पारा क्लोरोमेटॉक्सिलेनॉल ७८७
पारा नाइट्रोसल्फाथाएजोल ७८८
पाराफॉर्म ८१४
पाराफॉर्मेल्डिहाइड ८१४
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१४–८१५
" " के योग ८१५
पाराफॉर्मेल्डिहाइडम् ८१४
पाराफिन ५२४
" ऑयण्टमेन्ट ५२६
" " जिन ऑफिशल योगों में पड़ता है। ५२६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५२५–५२६
" पीत मृदु ५२४
" यलो सॉफ्ट ५२४
" , लघु ५२५
" लिक्विड ५२५
" " लाइट ५२५
" सफेद मृदु ५२४
पाराफिन हार्ड ५२४
" ह्वाइट सॉफ्ट ५२४
पाराफिनम् ड्युरम् ५२४
पाराफिनम् मोली एल्बम् ५२४
" " फ्लेवम् ५२४
" लिक्विडम् ५२५
" " लीवि ५२५
पाराहैटनी १५३
पारे का पीला ऑक्साइड ६७०
" " नीला मलहम ६७६
पारो ६६६
पार्थ ३३२
पॉलिमाइक्सिन ७५१
" 'अ', 'ब', 'स', 'द', 'य' ७५१
" 'बी' सल्फेट ७५१
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ७५१–७५२
पा(पो)लीगाला चाइनेन्सिस ४१७
" सॅने(नि)गा (सॅनीगा) ४१५–४१७
पॉलीगैलिक एसिड ४१६
पॉलीवेलेंट एन्टिवेनम् सीरम् ८८३
पालेकिराईत ४२
पाश्चर ट्रीटमेन्ट ८६८
पिक्र एकोनाइटीन ३३६
पिक्रिक एसिड ७६१
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६१
,, ,, ,, नान ऑफिशल योग ७६१
पिक्रीना एक्सेल्सा ३२ (ख)
पिक्रोना क्वाशिवायडिस ११
पिक्रोरहाइजा ४८
,, कुरो ४८
,, के ऑफिशल योग ४८–४६
पिक्रोरहाइजिन ४८

पिक्स कार्बोनिस प्रिपरेटा ७६३
,, पाइनी ७६२
,, लिक्विडा ७६२
पिगमेन्टम् आयडोफोर्माइ कम्पोजिटम् ८०६
पिगमेन्टम् आयोडाइ एट एकोनाइटी ३३६
,, ,, कम्पोजिटम् ८०५
,, एकोनाइटी कम्पोजिटम् ३४०
,, ट्राइप्लेक्स ८०६
,, वॉयोली क्रिस्टलाइनी कम्पोजिटम् ८०६
पिच्युटरी (पोस्टीरियर लोब) एक्सट्रक्ट ४७६
,, के व्यावसायिक योग ४८०
पिच्युट्रोन ४८०, ४७६
पिटोसिन ४७७, ४८०
पिट्रेसिन ४७७, ४८०
पिडेलियम् म्युरेक्स ४५४
पित्तजनक या पित्तल औषधियाँ १२१
पित्तपापड़ा १११
,, अमेरिकन १११
,, देशी ११३
,, भारतीय ११३
,, विलायती १११
पित्तविरेचक औषधियाँ १११
पिपरमिंट ऑयल ५७२
,, का तेल ५७२
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५७३
पिपराजीन साइट्रेट १४०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १४०–१४१
पिप्रेजीन हाइड्रेट १४५
पिम्पिनेल्ला एनिसम् ५६६
पियाज सहराई ३२७
पिराजिना ४५६
पिल ऑव एलोज एण्ड आयरन ८४
,, ,, ,, ,, एसाफेटिडा ८४
पिल-मॉस ऑव मरकरी ६७७
पिल र्‌हुवर्ब कम्पाउन्ड ८८
पिल्युला असेफीटिडी ५५५
,, एलोज ८४
,, ,, एट असेफीटिडी (एसाफॅटिडी) ८४, ५५५
,, ,, ,, न्युकिस वॉमिकी ८४
,, ,, ,, फेराइ ८४
,, कोलोसिन्थिडिस एट हायोसायमाई १०८
,, ,, ,, पोडोफिलाई ,,
,, फेराइ कार्बोनेटिस १७२
,, र्‌हयाइकम्पोजिटा ८८
,, हाइड्रार्जिराइ (इन मास्सा) ६७७
,, ,, कम् क्रेटा एट ओपियाई ६७७
,, हेक्सिलरिसॉर्सिनोलिस १३८
पिल्युली डिजिटेलिस कम्पोजिटी ३२६
पिल्स ऑव असेफिटिडा ५५५
,, ,, आयर्न कार्बोनेट १७२
,, ,, एलोज एण्ड असेफिटिडा ५५५
,, ,, कोलोसिन्थ एण्ड हायोसायमस १०८
,, ,, हेक्सिलरिसॉर्सिनोल १३८
पीतखदिर १५१
पीतज्वर मसूरी ८६७
पीतमधूच्छिष्ट ५३१
पीतमूला ८५
पी० पी० फैक्टर २०२
पीयूषग्रन्थिके पश्चिमखण्डमें पाये जाने-वाले सत्व (तत्व) और उनके इंजेक्शन ४७७
पीली वैसेलिन ५२४
पीवरी ४८५
पुनर्नवा ४५०
,, (या वर्षाभू) का प्रवाही घनसत्व ४५२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४५१–४५२
,, के योग ४५२
,, घटित मूत्रल मिक्स्चर ४५२

पुनर्नवा घटित आयुर्वेदीय योग ४५३
,, रक्त ४५०
,, सफेद ४५१
पुनर्नवादि तैल ४५३
पुनर्नवादि मण्डूर ४५३
,, लोह ४५३
पुनर्नवाद्यघृत ४५३
पुनर्नवाद्यरिष्ट ४५३
पुनर्नवाष्टक क्वाथ ४५३
पुनर्नवासव ४५३
पुनर्नवीन ४५१
पेंक्रियाटिन ५४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४–५५
,, ,, योग ५५
पेंक्रियाटिनम् ५४
पेंट ऑव क्रिस्टल वॉयोलेट कम्पाउंड ...
पेंटाक्वीन ६२१
पेंटावलेंट आर्सेनिक कम्पाउंड्स ६४५
पेंटोस्टम् ६३२
पॅथोलीन २०५
पेंपे ५५
पेक्टिन ६५
,, के प्रयोग ६५
पेक्टिनम् ६५
पेट्रोलियम् जेली ...
पेनिड्युरल ७३०
पेनिथामेट हाइड्रायोडाइड ७२९–७३०
पेनिथामेटिस हाइड्रायोडाइडम् ७२६
पेनिसिलिन ७१८
,, अ (ए) मॉरफस ७१८
,, ,, के तीन भेद ७१८
,, आयण्टमेन्ट ७२८
,, का आँख का मलहम ७२८
,, का मलहम ७२८
,, क्रीम ७२८
,, की टिकिया या टॅबलेट्स ७२६
पेनिसिलिन की मुँह में रखनेकी टिकिया ७२६
,, की मुखचक्रिका ७२६
,, की सूई या इंजेक्शन ७२६
,, (बेंजिल) केऑफिशल योग ७२८–७२६
,, के आमयिक प्रयोग ७२२–७२८
,, के गुणकर्म ७२०–७२२
,, के विभिन्न व्यावसायिक योग ७३१
,, क्रिस्टलाइन 'जी' ७१६
,, 'जी' ७१६
,, ,, प्रोकेन ७२०
पेनिसिलिनम् ७१८
,, नोटेटम् ७१८
पेनेडोल २७८
पेन्टामिडिन ६४२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४२–६४३
पेन्टामिडि(डी) न आइसेथिओनेट ६४२
पेन्टामिडिनी आइसेथियोनास ६४२
पेपरमिंट ऑयल ५८७
,, तेल ५७२
पेप्टोन ५३, ५४
पेप्टोन सोल्यूशन २३३
पेप्टोनाइजिंग पाउडर ५५, ५८
पेप्सिन ५२, ५४
,, के योग ५२, ५३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३–५४
पेप्सिनम् ५२
पेरागोरिक ५८६
,, एलिक्सिर ५८६
पेरान्ड्रेन ४६७, ४६६
पेराब्रोडिल ८८८
पेरिओडेक्स ८६१
पेरिश सिरप या फूड १७२
पेरिसग्रीन ८३७
पेरुविअन बार्क ६०४
पेरेड्रीन (दे० "हाइड्रॉक्सि-एम्फिटामीन हाइड्रोब्रोमाइड") ३६६

पेरेन्ड्रिन की सूई या इंजेक्शन ४६६
पेल कॅटेक्यु १५१
पेलेजाइड ७६३
पेलेटी डेजॉक्सी कार्टोनाइएसिटेटिस २७०
,, टेस्टॉस्टेरानाइ ४६८
पेल्युड्रिन ६२६
,, एण्ड पामाक्विन टॅबलेट्स ६३१
,, की टिकिया ६३०
,, के ऑफिशल योग ६३०–६३१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३२६–६३०
,, के० यावसायिक योग ६३०–६३१
,, टॅबलेट्स ६३०
,, लेक्टेट एम्पूल्स ६३०
पेस्ट ऑव जिंक ऑक्साइड एण्ड सेलिसिलिक एसिड २८६
पेस्ट ऑव विस्मथ सबनाइट्रेट एण्ड आयडोफार्म ६६८
पेस्टा जिंसाइ ऑक्साइडाइ कम्पोजिटस ५२१
,, ,, ,, कम् एसिडो सेलिसिलिसो २८६
पेस्टा एसिडाइ टैनिसाइ १५०
,, विस्मथाइ एट आयडोफॉर्माइ ६६८
,, ,, सबनाइट्रेटिस एट आयडोफॉर्माइ ६६८
,, मैग्नीसियाइ ग्लिसेरिनाइ ५१६
,, रिसॉर्सिनोलिस एट सल्फ्युरिस ७६०
,, ,, कम्पोजिटस ७६०
पैण्टोथेनिक एसिड २०५
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २०५
,, ,, के व्यावसायिक योग २०५
पैराथायरॉयड एक्स्ट्रक्ट २५६
,, ग्लैंडस २५५
,, सत्व के गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग २५६, २५७
पैराथारमोन २५६
पैराफिन (दे० "पाराफिन")
,, इमल्सन ५२६
,, का मलहम ५२६
पैरायडिन २५६
पोटस इम्पीरिआलिस ६७
पोटाशा सल्युरेटा ८२५
पोटासियम् ऑक्सीक्विनोलीन सल्फेट ८२२
,, आयोडाइड ६८१
,, ऑलिएट ५२२
,, एन्टिमोनिल टारट्रेट ६३२
,, एसिड टारट्रेट ६७
,, ग्यायकोल सल्फोनेट ४२८
(दे० 'थियोकोल' ।)
,, नाइट्रेट ४५१
,, परमैंगनेट ७६७
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६७–७६८
,, ,, के नान्-ऑफिशल योग ७६८
,, वाइटारट्रेट ६७
,, ब्रोमाइड एण्ड वॅलेरिअन मिक्स्चर ५५३
पोटासियाइ आयोडाइडम् ६८१
,, ग्वयाकोल सल्फोनास ४२८
,, टारट्रास एसिडस् ६७
,, ,, के योग ६७
,, परमैंगेनास ७६७
(दे० "पोटासियम् परमैंगनेट" ।)
,, हाइड्राक्सीक्विनोलिनी सल्फास ८२२
,, हाइड्राक्सीक्विनोलीन सल्फास ८२२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२२, ८२३
पोडोफिल १११
पोडोफि (फाइ) लम् १११
,, इन्डिकम् ११३
,, इमोडी ११३
,, के उपयोगी योग ११६

पोडोफिलम् के गुणकर्म तथा प्रयोग ११५–११६
" पेल्टेटम् १११
" रूट १११
" राइजोम ११३
" रेजिना ११५
पोडोफिलाई इन्डिसाई ११३
" " पल्विस ११४
" " राइजोमा ११३
" पल्विस ११३
" राइजोमा १११
" रेजिना ११५, ११६
पोडोफिलिन ११५, १२०
पोडोफिलो टॉक्सिन १०३
" रेजिन ११३
पोपैंयु ५५
पो (पॉ) लीगाला ४१५
" सॅनिगा ४१५
पोलीगालून ४१५
पोषक द्रव्य १६३
पोस्टीरियर पिच्युटरी इन्जेक्शन ४७६
" " एक्स्ट्रक्ट के गुणकर्म तथा प्रयोग ४७८
प्याज जंगली ३२७
प्युरिनेथोल १६०
प्युनिका ग्रेनेटम् १३२
प्योरिफाइड ऑक्स बाइल १२१
" क्रीम ऑव टारटार ६७
" डेक्स्ट्रोस (ज) २२६
" प्रोटीन डेरिवेटिव ऑव ट्युवर-क्युलिन ८७६
" बोरेक्स ८१८
प्रजननग्रन्थिपोष यौगिक ४८६
प्रजनन संस्थान पर काम करनेवाली औषधियाँ ३७६
प्रजननावयवों पर कार्य करनेवाली औषधियाँ ३६१–३६२
प्रतिक्षोभक औषधियाँ ३६६
प्रतिजैविक द्रव्य ६६७
प्रतिपराश्रयी द्रव्य एवं छत्राणुनाशक द्रव्य ८२३
प्रतिशीताद जीवतिक्ति २०८
प्रांटोसिल एल्बम् ६६८
प्राइवीन ३६५
(दे० "नेफाजोलीन हाइड्रोक्लोराइड।")
प्राणवायु (दे० "ऑक्सीजन।")
प्रान्टिलिन ६६८
प्रामलक एसिड २०८
प्रामिजोल ७७०
" के प्रयोग ७७०
प्रिपेयर्ड अर्गट ४६७
" कोलटार ७६३
" डिजिटेलिस ३०२
" सुएट ५३१
प्रिपेलिन १०४
प्रिमाक्वीन ६२१–६२२
प्रूनस एमिग्डेलस अमारा ५०८
" डल्सिस ५०८
" सिरोटिन ४२५
" " के योग ४२६
प्रूनिआइ वर्जिनिएनी कॉर्टेक्स ४२५
(दे० "वाइल्डचेरी"।)
प्रूनेज ४२५
प्रूनेसिन ४२५
प्रेगनील ४८६
प्रेग्नेनिनोलोन ४६५
प्रेग्नेनेडिओन ४६४
प्रेडनिसोलोन २७२
प्रेसिपिटेटेड बिस्मथ ६६२
" सल्फर ८२३
प्रोकेन पेनिसिलिन 'जी' ७२०
" " का इन्जेक्शन ७२६
" " के योग ७२६, ७३१

प्रोकेन बेंजिलपेनिसिलिन ७२०
प्रोकेनी बेंजिल पेनिसिलिनम् ७२०
प्रोकेनेमाइड हाइड्रोक्लोराइड ३४३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३४३–३४४
प्रोकेनेमाइडाइ हाइड्रोक्लोराइडम् ३४३
प्रोकेविट २२५, २२७
प्रोगुआनिल हाइड्रोक्लोराइड ६२९
प्रोगुआ (ग्वा) निलाइ हाइड्रोक्लोराइडम् ६२९
प्रोजिनोल बी ओलिओजम् ४९६
प्रोजेस्टरल ४९५
प्रोजेस्टिन ४९४
प्रोजेस्टीन पदार्थ ३९६
प्रोजेस्टेरान ४९४
,, एवं तत्सम कार्यकर व्यावसायिक यौगिक ४९६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४९५
प्रोजेस्टेरोनम् ४९४
प्रोटामीन जिंक इन्सुलीन २६१, २६२
प्रोटिनियाइ हाइड्रोलिसेटी २३३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २३४
प्रोटियोलाइज्ड लिवर १५९
प्रोटीन २३३
,, हाइड्रोलाइसेट २३४
प्रोटोवेरेट्रीन्स 'ए' एवं 'बी' ३७८
प्रोनेस्टिल हाइड्रोक्लोराइड ३४३
प्रोन्युट्रिन २३३
प्रोविओनजेल ८३३
,, कम्पाउंड ८३३
प्रोविल थायरोसिल २५०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २५१
,, थायरोसिलम् २५०
प्रोपिलिओडोन ८८६
प्रोपिलिओडोनम् ८८६
प्रोपेड्रीन ३६७
प्रोपेमिडिन आइसेथियोनेट ६४३
प्रोपेसिल २५०
प्रोफोलिओल ४९२
प्रोफ्लेविन ८०७
प्रोफ्लेविनी हेमीसल्फास ८०७
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८०७
प्रोफ्लेवीन ८०७
,, क्रीम ८०८
,, लोशन ८०९
,, हेमी सल्फेट ८०७
प्रोबेनेसिड २४४
प्रोभुजिन् २३३
प्रोभुजिनल्पता २३३
प्रोभुजिनांशिक किण्व ५२
प्रोमिन ७६६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६६
प्रोमेनाइड ७६६
प्रोलान ४८६
प्रोलुटन ४९४
प्रोलेक्स १७५
प्लॅन्टेगो १७५
,, इन्डिका ७७
,, एरीनेरिया ७७, ७८
,, ओवेटा ७७, ७८
,, ,, बीज ७८
,, शब्द की व्युत्पत्ति आदि ७८
,, साइ (सि)लियम् ७७, ७८
,, ,, बीज ७९
,, सीड ७७
प्लन्टेन सीड ७७
प्लाज्मोक्वीन ६१९
,, की टिकिया ६२०
प्लाज्मोचीन ६१९, ६२१
प्लेश्न्यूल्स १७५

(फ)

फरसोलेट टॅबलेट्स १७३
फाइटोनेडिओन २२७
फाइटोफेरोल केप्स्यूल्स २२४
फाइसोस्टेब ......
फाउलर सॉल्यूशन ६५१
फॉक्सग्लव-लीव्ज ३०७
फान्यूँ ६४५
फार्बिटिस् निल १०४
फार्बिट्सिन १०५
फॉर्मिन ४५५
फॉर्मेमोल ४५६
फॉर्मेलिन ८१३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१४
फॉर्मोल टॉक्सायड ८७०
फॉलिक्युलिन ४८८
फॉल्यूटीन ४२६
फिनिक्युलम् ५६८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६६-५७०
,, वॅल्गेरी ५६८
फिनिक्युलाइ फ्रक्टस ५६८
,, पल्विस ५६६
फिनोक्सिथेनोल ७६२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६२
फिनोक्सेटोल ७६२
फिनोल ७८४
फिनोल आयोडाइजेटम् ७८६
,, का कर्णबिंदु ७८६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७८४-७८५
,, गार्गिल ७८६
,, फेनिल मरक्युरिक नाइट्रेट ६७२
फिनोलफ्थेलीन ६८
फिनोलफ्थेलीन की टिकिया ६८
फिनोलफ्थेलीनम् ६७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६८
फिनोल रेड ८६१
,, लिक्वेफेक्टम् ७८५
,, लोशन ७८६
,, सल्फोनेफ्थेलीन ८६६
,, सल्फोनेफ्थेलीनम् ८६६
फिलमेरोन १३०
फिलिक्समास १२८
फिलिसिस पल्विस १३०
फुरासिन ८२१
फेनर्जन ८५२
,, की टिकिया ८५२
फेनाजोन २७४, २७६
" के नान्-ऑफिशल योग २७८
" के व्यावसायिक योग २७९
फेनाजोनम् २७४
फेनाजोनाइ एसेटिल सेलिसिलास २७८
फेनाजोनाइ सेलिसिलेट २७८
फेनाजोनाइ सेलिसिलास २७८
फेनासे (सि)टिन २७४
" आदि के गुणकर्म तथा प्रयोग २७५, २७६
" की टिकिया २७८
" के ऑफिशल योग २७८
" के नान्-ऑफिशल योग २७८
फेनासेटिनम् २७४
फेनार्सोन सल्फाक्सिलेट ६६१
फेनिकारबेजाइड २६४
फेनिकारबेजाइडम् २६४
फेनिन्डामिनी टारट्रास ८५४
फेनिमूडामीन एसिड टारट्रेट ८५४
" टारट्रेट ८५४
फेनिन्डिआन १८६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग १८६
" के योग १८६

फेनिन्डिश्रोनम् १८६
फेनियोडॉल ८६१
" के प्रयोग ८६१
" के व्यावसायिक योग ८६१
फेनिल एसिटामाइड २७५
फेनिल ग्लाइकोलिक एसिड ४५७
" प्रोपिलमेथिलामीन ३६७
" प्रोपेनोलेमीन हाइड्रोक्लोराइड ३६७
" ब्युटाजोन २७६, २८०
" ब्युटाजोनम् २७९
" सेलिसिलेट २६४
" हाइड्रार्जिराइ नाइट्रास ६७२
" हाइड्रेजीन हाइड्रोक्लोराइड १६१-१६२
फेनिलिन्डेनेडिश्रोन १८६
फेनिलेफ्रिनी हाइड्रोक्लोराइड ३६५
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ३६४
फेनिलेफ्रिनी हाइड्रोक्लोराइड ३६५
फेनेल ५६८
" फ्रूट ५६८
फेनोथियाजीन १४१
फेनोबिस १४१
फेनोसाइक्लिन ४९४
फेमेराइट ८१६
फेमोरोल क्लोराइड ८१६
फेरम् दे० ("लौह"।) १६५
फेरस श्रायोडाइड सिरप १७३
" कार्बोनेट सेकेरेटेड १६६
" ग्लुकोनेट १६६
" सल्फेट १६५
" " इन्सील्स १६१
" " एक्सिकेटेड १६६
फेराइ श्रार्सेनास ६४७–६४८
" एट श्रमोनियाइ साइट्रास १६६
" एट क्विनीनी " १६७
" कार्बोनास सेकेरेटस १६६
" ग्लिसरो फॉस्फास १७३
फेराइ ग्लुकोनास १६६
" सल्फास १६५
" " एक्सिकेटस १६६
" हाइपोफॉस्फिस १७३
फेरिक श्रमोनियम् साइट्रेट १६७
" " " के योग १७३
" क्लोराइड १६७
" " गार्गिल १७३
" क्विनीन साइट्रेट २६७
" ग्लिसरोफॉस्फेट १७३
" हाइपोफॉस्फाइट १७३
फेरी कार्बोनास सेक्केरेटम् २३०
फेरुला नार्थेक्स ५५४
" फीटिडा ५५४
फेरोनिकम् १७३
फेलबोवाइनम् प्योरीफिकेटम् १२१
(दे० "वृषभपित्त"।)
फेलामीन ४५६
फोलवरॉन १७५
फोलवाइट १७५
फोलिश्रा डिजिटेलिस ३०७
" हेमामेलिडिस १५४
फोलिक एसिड (पालकाम्ल) १६०, १७४
" " एवं विटामिन बी १२
के व्यावसायिक योग १७४
(श्र) इन्जेव-शन्स १७५
(ब) मुखद्वारा सेवनीय १७५
(स) रक्तस्कन्दक १७५–१७६
फोलिक एसिड इन्जेक्शन १६२
" " के गुणकर्म तथा
प्रयोग १६१-१६२
" " के योग १६२
" " टबलेट्स १६२
" " प्रत्यनीक श्रौषधियाँ १६०
" " " श्रौषधियोंके गुणकर्म
तथा प्रयोग १६०–१६१

फोलिनिक एसिड १६१
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १६१–१६२
फोलिसिन्डान १७४
फोलेटोन ३६७
फोलेड्रीन ३६७
फोवाडिन ३६२
फ्थेलिक एसिड ६८
,, अनहाइड्राइड ६८
फ्थैलिल सल्फाथाएजोलम् ७१२
,, ,, सिटेमाइड ७१२
,, ,, सिटेमाइडम् ७१२
फ्युमेजिलिन ६६५
फ्युरेडेन्टिन ४६४
फ्रक्टोज २३२
फ्रेंकूवेल ३६८
फ्रेंचसाइलियम् सीड ७७
फ्रेश ऑरेञ्ज पील ३६
,, इन्फ्युजन ऑफ क्वासि(शि)या ३३–३४
फ्रेश इन्फ्युजन चाइनेन्सिस ४१८
,, ,, चिरेटा ४१
,, लेमनपील ३६, ५७०, ५७१
फ्रेसेराकेरोलिनेकिस ३२(क)
फ्लॉवर्स अजोवान ५८६
,, ऑव सल्फर ८२४
फ्लुड्रो कॉर्टोन २७२
फ्लुरो हाइड्रो कोरिसोन एसिटेट २७२
फ्लेक्सिबल जेलेटिन कैप्स्यूल्स १३३
फ्लेमिंग्स टिंक्चर ऑव एकोनाइट ३३६
फ्लेवोक्विन ६२८
फ्लोरेसीन सोडियम् ८०६
फ्लोरेसीनम् सोडियम् ८०९
फ्लोरेसीन आई-ड्राप्स ८१०
,, का नेत्रविंदु ८१०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८०६
,, के योग ८१०
,, पानीमें घुलनेवाला ८०६

(ब)

बकलए यहूदिया ४३
बकुची ७७८
बक्की गालबुली जुनिपराइ ४४५
बछनाग ३३३
बडीशेप ५६८
बनककड़ी ११३
बबूल ५१७
बबूल का गोंद ५१६
,, के ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५१८
,, के ,, का चूर्ण ५१८
बब्बूल निर्यास ५१६
बरबेरिन सल्फेट ६४३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४४
,, ,, के ऑफिशल योग ६४४
बरबेरिनी सल्फास ६४३
बरबेरिस एरिस्टेटा ६४३
बरबेरीन ६४३
बलबस् सिल्ली ३२५
बलसम ऑव टोल् ५४८, ५४६
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४६
,, ,, ,, के नुस्खे ५४६
बलसमम् टोलूटेनम् ५४८
बल्समिक रेजिन २४१
बसिंग ४२०
बसौंटा ४२०
बहेंकड ४२०
बाँस, बाँसा ४२०
बसर्जिन ४७२
बसल्फन १८६
बसोरिन पेस्ट ५२१

बाऽऽल (बाल B A L) ६७६
,, का इन्जेक्शन ६८०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६७६६–८०
बाकस ४२०
बाकुची या बावची बीज ७७८
,, आयण्टमेन्ट ७७६
,, का तेल ७७६
बाखरा ४५४
बाचंगसीड ४५४
बाजार में उपलब्ध अन्य कृमिघ्न औषधियाँ १४४, १४५
बाद्यान ५६८
बादाम ५०८–५१०
,, कड़ुआ ५०८
,, का तेल ५१०
,, का तेल के गुणकर्म तथा प्रयोग ५११
,, मीठा ५०८
बादियान ५६८
बायोटिन २०८
बाराग्स मिक्स्चर १७२
बालप्रोटीन चिकित्सा ८५७
बिर्चलीफलाइक ४५६
बिटर एपल १०६
,, गोर्ड १०६
,, हर्मोडकिल २३८
बिटालिन २००
बिना दागवाला आयोडीन मलहम ८०५
बिनौला का तेल ५७६
,, ,, के योग ५७६
बिरूटन २११
बिलिग्रेफिन ८६२
,, के प्रयोग ८६३
बिलिसेलेक्टन ८६१
बिल्वफल ७६५
बिसिलिन ७३०
बिसमथ आक्सीक्लोराइड ६६२
बिसमथ आक्सीक्लोराइड गैलेट ६६८
,, आक्सीनाइट्रेट ६६६
,, कम्पाउण्ड पाउडर ६६६
,, के यौगिक ६६२, ६६७–६६६
,, ,, ,, के गुणकर्म-प्रयोग ६६४-६६७
,, ,, व्यावसायिक योग ६६६-६७०
,, ग्लाइकोलिल आर्सेनिलेट ६६४
बिसमथम् प्रेसिपिटेटम् ६६४
बिसमथ सबक्लोराइड ६६२
,, सबनाइट्रेट ६६६
,, साल्ट्स ६६४
,, सेलिसिलेट इन्जेक्शन ६६१
बिसमथाइ ऑक्सी-आयडो-गैलास ६६८
,, ,, ,, ,, का वर्णन और प्रयोग ६६८
,, ,, कार्बोनेट ६६३
,, ,, क्लोराइडम् ६६४
,, एट सोडियाइटारट्रास ६६३
,, कार्बोनास ६६३
,, कार्बोनेट ६६३
,, ट्राइब्रोमोफेनास ६६८
,, सबकार्बोनेट ६६३
,, सबगैलास ६६३
,, सबनाइट्रास ६६६
,, सबसेलिसिलेट ६६३
,, सेलिसिलास ६६३
,, सेलिसिलेट ६६३
,, सोडियम् टारट्रेट ६६३
बीजकिणपुट अन्तःस्राव (पीतांग अन्तःस्राव) ३६६
,, (पीतांग) उत्तेजक अन्तः स्राव ३६४
बीजकोष उत्तेजक अन्तःस्राव ३६४
बीजग्रन्थिपोषक तत्व तथा स्राव एवं प्रजननावयव सम्बन्धी अन्तः स्राव ३६४–३६६
बीजग्रन्थियों के अन्तः स्राव ३६५
बीजाबोल ५४६

'ब्री जेड ५५' २६४
ब्रीफोलिन १७४
ब्रीश ३३३
बुकु ४५६
,, का संकेन्द्रित फाएट ४६०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४६०
,, के योग ४६०
,, ओवल ४५६
,, फोलिआ ४५९
,, लांग ४५६
,, लीह्व ज ४५६
बुक्कु लीव्ज ४५६
बुक्को ४५२
बुलूत १४७
बेंगाल क्विस ७६
बेंजथिओजोन ७६४
बेंजर्स फूड ५८
बेंजहाइड्रोल-हाइड्रोक्लोराइड ३६८
बेंजाथीन पेनिसिलिन ७३०
बेंजालकोनियम् क्लोराइड ८१६
देखें "एम्फिटामीन"
बेंजाल्डीहाइडग्रीन ८१२
बेंजिल पेनिसिलिनम् ७१६
,, पेनिसिलिन ७१६
बेंजिल बेंजोएट ८२६
बेंजिलिस बेंजोआस ८२६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२७
,, ,, के व्यावसायिक योग ८२७
बेंजेड्रीन ३६०
,, सल्फेट ३६०
बेंजेथोनियम् क्लोराइड ८१६
बेंजोइक एसिड २६१, २६२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २६२
बेंजोइन २६०, २६१, २६२
,, इन्हेलेशन २६४
,, के योग २६३–२६४
बेंजोइनेटेड लार्ड ५२६
बेंजोसल्फिमाइड ६६८
बेखे ईरसा ७१६
बेजिलियन कोकोआ ४३१
बेटा नेफ्थोल ७६४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६५
बेटाब्रिओन २००
बेडोम् २००
बेदअंजीरखताई १०९
बेनर्वा २००
बेनहेक्साक्लोर ८३६
बेनाडीन २०७
बेनाड्रिल ८५३
बेनापेन ७३०
बेनिथामीन पेनिसिलिन ७३०
बेनेमाइड २४४
बेनोसाइड १४४, १४२
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २४४–२४५
,, सिरप १४४
बेरिन २००
बेरियम् मील ८६४
,, सल्फास ८६३
,, ,, के प्रयोग ८६३
,, सल्फेट ८६३
बेरोज्मा क्रेनुलेटा ४५६
(दे० "बुकु")।
,, बेटुलिना ४५६
,, सिरेटिफोलिआ ४५६
बेल ७६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६
,, गिरी ७६
,, फ्रूट ७६
बेलगंल ४७२
बेलामिल १७५
बेलारसन ६६३
बेली फ्रक्टस ७६

वेसिक बिस्मथ गैलेट ६६४
वेसिट्रेसिन ७४८
,, 'ए' ७४८
,, 'एफ' ७४८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७४८
वेसिलस पॉलिमाइक्सा ७५१
,, सबटिलिस ७४८
वेह (विही) हिन्दी ७६
वैक्टीरियानाशक अन्य यौगिक ८२१
बोरिक ८१८
बोरिक एसिड ८१८
,, ,, आई आयएटमेंट ८२१
,, ,, आई लोशन ८२१
,, ,, आयएटमेंट ५२६
,, ,, एण्ड स्टार्च डस्टिंग पाउडर ८२०
,, ,, ईयर ड्रॉप्स ८२०
,, ,, घटित कतिपय डस्टिंग पाउडर के योग ८२०
,, ,, टॉक डस्टिंग पाउडर ८२०
,, ,, तथा निशास्तेका अवधूलन ८२०
,, ,, पाउडर ८२०
,, का कर्णबिंदु ८२०
,, का पानी ८२१
,, का मलहम ८१६
बोरेक्स ८१८
,, कम्पाउण्ड आईलोशन ८२१
,, तथा बोरिक एसिड के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१६
,, ,, ,, ,, के ऑफिशल योग ८१६–८२१
बोरेसिक एसिड ८१८
बोरोग्लिसरिन ग्लिसराइट ८१९
बोर्हेविया डिफ्युजा ४५०, ४५१
बोर्हेविया रिपेन्स ४५०, ४५१
बोल ५४६–५४७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४७, ५४८
बोल सियाह ८०
बौंकड ४२०
ब्युटलन १४५
ब्युटाजोलिनिडिन २७९
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २७९–२८०
ब्रिलिएण्ट ग्रीन ८१०
ब्रुलिडीन ८२३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२३
ब्युटार्सेन ६६०
ब्युटिआ सीड्स १२७
,, सेमिना १२७
ब्युटिई सिमेन १२७
ब्युटीलॉन १४०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १४०
ब्रूम टॉप्स ४४८
ब्रेजिल पाउडर ८२६
ब्रेडोसोल ८१६
ब्रोमेजीन हाईड्रोक्लोराइड ८५५
ब्रोमोरॉल्फिन ३७७
ब्लॉड्सपिल १७२
ब्लॉन्डसाइलियम् सीड ७८
ब्लीच आयएटमेंट ८०१
ब्लीचिंग पाउडर ७९९
,, के ऑफिशल योग ८०१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८००
,, के नॉट ऑफिशल योग ८००
ब्लूटीन क्लोराइड १७९
,, ,, के प्रयोग १७९
ब्लैक ड्राफ ६४

(भ)

भारंगी ३३
,, का अभिनव फाण्ट ३३
भारंगी का निष्कर्ष ३४
,, ,, फाण्ट ३४

भारतीय पित्तपापड़ा ११३
भायजि ७७८
भूतघ्न औषधियाँ ६६७
भूनिम्ब ४०
भेड़े की चर्बी ५३७

(म)

मज्जफल १४६
मक्का ५२
मछलीका तेल २१०
मधुकर्कटी ५५
मधुनिषूदनि २५७
मधुयष्टयादि चूर्ण ५२१
मधुरिका ५१८
मधुरी ५१४
ममीरा ६४३
मरकरी ६६९
,, पिल-मास ६७७
मरकेप्टोप्यूरीन १९०
,, के प्रयोग १९०
मरक्युरोक्रोम ८१३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१३
मरक्युरोक्रोमम् ८१३
मरक्रोमिन ८१३
मरसालिल एण्ड थियोफिलीन इन्जेक्शन ४४२
,, एसिड ४४१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४४१
,, के योग ४४२–४४३
मर्करी, मर्क्युरी ६६९
मर्करी विथ चॉक ६७७
मर्क्युरस क्लोराइड ६७१
मर्क्युरिक ऑक्सीसायनाइड ६७२
,, आयोडायड ६७८
,, क्लोराइड ६७१
,, नाइट्रेट आयएटमेन्ट ६७७
मलहम (मलहर) के आधार द्रव्य ५२२, ४००
मलाबार काइमम् ५६०
मलाबारी इलायची ५६०
मलाया 'टी' ७७८
मसूरी या टीका ८६७
,, तन्द्रिकज्वर ८६७
,, पीतज्वर ८६७
मस्टिनी हाइड्रोक्लोराइडम् १८८
मस्टीन हाइड्रोक्लोराइड १८८
दे० 'नॉइट्रोजन मस्टर्ड'।
महमूदा १००
मांसजातीय पदार्थ २३३
माइकोस्टेटिन ७५२
माइक्रोक्युरी २५३
माइग्रेनीन ४३५
माइबसन ७६२
माइरॉक्सिलान टोलुइफेरा ५४८
,, बल्सेमम् ५४८
माइलेब्रिस ५०१
,, शिकोरिआइ ५०१
माइलेरान १८९
,, के प्रयोग १८९–१९०
माइविजोन ७६४
माइसिफ्रडिन ७४६
माजू, माजूफल १४८
मॉनोसेटिल ईथर ५३५
मानोस्टियरिन इमलसिफिकेन्स ५३५
मॉन्कसहुड ३३३
मामूदा १००
माय (या) फल १४८
मायां फल १४८
,, कांटावाला १४८
मायोक्राइसिन ७६६

मायोक्राइसिन इंजेक्शन ७६६
,, सूई या ,, ७६६
मायोस्टिविन ६३६
मारकोमेर १८५
मार्कण्डी ६०
मार्जिनल फर्न १२८
मार्दवकर द्रव्य ४००
मॉर्निंग ग्लोरी १०४
मार्केनिल ७१७
माहूवांग ३५३
मिक्स्चर ऑव पोटासियम् ब्रोमाइड एण्ड वॅलेरिअन ५५३
,, ,, फेरिक ॲमोनियम् साइट्रेट ७१३
मिक्स्ड गैस-गॅंग्रीन एन्टी-टॉक्सिन ८७६
मिनेडिओन २२५
मिनेडिओनम् २२५
मिनेफ्योन २२५
मिनेफ्योनम् २२५
मिफेन्टरमीन ३६८
मिरिस्टिका ५७८
,, फ्रगरेन्स ५७८
,, मलाबारिका ५७६
मिरिस्टिका ऑयल ५८०
मिरिस्टिकी पल्विस ५८०
मिरेसिल 'डी' १४३
मिर्रह ५४६
मिर्रहा
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४७-५४८
मिलिव्रिस ६६४
मिशि ५६८
मिश्रेया ५६८
,, चूर्ण ५६६
मिल्क ऑफ सल्फर ८२३
,, सूगर २२६
मिसल्फेन ८२७
मिसल्फेनम् ८२७
मिस्चुरा कॉल्चिसाइ एट सोडियाइ सेलिसिलेटिस २४१
,, पोटासियाइ ब्रोमाइडाइ एट वॅलेरियानी ५५३
,, फेराइ एट ॲमोनियाइ साइट्रेटिस १७३
,, बिस्मथाइ कम्पोजिटा कम् पेप्सिनी ५२
,, ,, ,, ,, ,, एट मार्फीना ५३
,, सेन्नी कम्पोजिटा ६४
मिहिकाम्लप्रवृत्तिमें कार्यकर औषधियाँ २३५
मीठा क्विनीन ६०८
मीठा जहर ३३३
,, तेल ५०६
मीठे नारंगीका छिलका ३६
मुख द्वारा सेवनोपयुक्त मधुमेहनाशक औषधियाँ २६४
मुर, मुर्र ५४६
मुसब्बर ८०, ८२
मूँगफलीका तेल ५११
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५१२
मूत्रक्षारीय औषधियाँ ३८६
मूत्रमार्ग पर जीवाणुनाशक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ ४५५
मूत्रमार्गविशोधक औषधियाँ ३८६-३६०
मूत्रल औषधियाँ ३८७
मूत्रल औषधियों के आमयिक प्रयोग ३८६
मूत्रसंस्थानपर कार्य करनेवाली औषधियाँ ३७६
मूत्राम्लीयक ,, ३८८
मूत्रावरोधक ,, ३८६
मूषकशाखाशूलहर तत्व २०५
मृदुविरेचक औषधियाँ ७१
मॅंगास्टीन ऑयल ५३२
मॅंडेलामीन ४५६
मॅंडेलिक एसिड ४५७
,, ,, के गुणकर्मम तथा प्रयोग ४५७-४५८

मेंडेलिक एसिड के योग ४५८
मेंथा आर्वेन्सिस ५८७
" पिपरे (रि)टा ५७२, ५८७
मेंथाल ५८७
" एण्ड थायमाल कम्पाउंड-स्प्रे ५६१
" " " नेजल ड्रॉप्स ५६१
" " बेंज़ोइन इन्हेलेशन ५८८
" " युकेलिप्टस " ५८८
" के उपयोगी नुस्खे ५८९
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५८७–५८८
" घटित योग ५८८
मेक्राविन १७४
मेक्सिकन स्कैमोनी-रूट २६६
मेग्ने माइसिन ७४५
मेटिकोर्टिन प्रेडनिसोन २७२
मेटोक्विन ६२५
मेडिसिनल जेन्शन (निशअन) वॉयोलेट १३६, ८१०
मेडिसिनल डेक्स्ट्रोज २२६
मेडोसैफ्रन २३५
" कॉर्म २३५
मेथॉक्सिफेनामीन हाइड्रोक्लोराइड ३६८
मेथाफेनिलीन हाइड्रोक्लोराइड ८५५
मेथिडाइ टैनिन १५१
मेथिनामीन ४५५
मेथिमेजोल २५३
मेथिल एसिटेनिलाइड २७८
" एम्फिटामिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ३६३
" एम्फिटामीन हाइड्रोक्लोराइड ३६३
" " " के गुणकर्म तथा प्रयोग ३६४
" " " योग ३६४
मेथिल टेस्टॉस्टेरानम् ४६७
" टेस्टॉस्टेरान ४६६
" थाइ (य)रोसिलम् ८५०
" थाइ (य)रोसिल ८५०
मेथिल थाइरोसिल के गुणकर्म तथा प्रयोग २५१
" थायोनीनी क्लोराइडम् ८१२
" बेंजेयोनियम् क्लोराइड ८१६
" रोसेनिलीन ८१०
" " क्लोराइड १३६
" सेलिसिलेट २८६, २६०
" " के गुणकर्म २६०
" " के वेदनास्थापक एवं ज्वरहर तथा आमवातनाशक प्रभाव करनेवाले व्यावसायिक योग २६०
मेथिल सेलुलोस ७३
मेथिलिस सेलिसिलास २८६
मेथिलीन ब्ल्यू ८१२
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१२
मेथेड्रीन ३६३
मेथोक्सामीन हाइड्रोक्लोराइडम् ३६७
मेथोट्रेक्सेट १६०
मेनाडिओन सोडियम् बाइसल्फाइट २२५
मेनाडिओनाइ सोडियाइ बाइसल्फिस २२५
मेनाडिओल सोडियम् डाइफॉस्फेट २२७
मेनिटोल ८६७
मेंडलका कण्ठलेप ८०५
मेंडल्स पेंट ८०५
मपाक्रिनीमिथेनो सल्फोनास ६२२
मेपाक्रिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ६२२
मेपाक्रीन
" की टिकिया ६२४
" के ऑफिशल योग ६२४–२२५
" " गुणकर्म तथा प्रयोग ६२३–६२४
" टब्लेट्स ६२५
" मिथेन सल्फोनेट ६२२
" " " की सूई या इन्जेक्शन ६२४
" मिथेनो सल्फोनेट ६२५

मेथाक्वीन हाइड्रोक्लोराइड ६२२
मेपिरामिनी मेलिएटास ८५१
मेपिरामीन मेलिएट ८५२
मेफार्साइड ६५१
मेफार्सेन ६५१
मेफिटोन २१७
मेफेनाइड ७१७
मेराजीन ८५५
मेराड्रन ३६८
मेरॉक्सिल १४५ (नार्मल)
मेरॉक्सिलन १३६
,, फोर्ट १३६
मेल जॅलप ९९
मेलन ट्री ५५
मेलफर्न १२८
,, का प्रवाही घनसत्व १३१
,, के अन्य योग १३२
,, ,, ऑफिशल योग १३१–१३२
,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग १३०–१३१
,, चूर्ण १३०
,, राइजोम १२८
मेलाकाइट ग्रीन ८१२
मेलार्सेन ऑक्साइड ६५६
मेलोसाइड ६३१
मेबुडिन ७१७
मैगसल्फ ६६
मैग्नीसियम् सल्फेट ६६
,, ,, पेस्ट ५१६
मैग्नीसियाइ सल्फास ६६
,, ,, एक्सिक्केटस् ६६
मोकासिन वेनम् ८८२
मोनारडा पंक्टेटा ५८६
मोम पीला ५३१
,, सफेद ५३१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३२
मोरानिल ६४५
मोरिसन्स पेस्ट ५१६
मोशव्वर ८०
मोहरी ३३६
,, श्याम ३३६
मौरी ५६८
म्युसिलेज ऑव गम ऑकेसिया ५१८
,, ,, ,, ट्रैगाकान्थ ५२०
म्युसिलेजो अकेसिई ५१८
,, ट्रैगाकान्थी ५२०

(य)

यकृत का प्रयोग १५६
यकृत का प्रवाही घनसत्व १५८
यकृत-सत्व १५६
,, ,, के योग १५६
,, ,, एवं यकृत के गुणकर्म तथा प्रयोग १५६–१५६
,, चिकित्सा १५७
यकृति (दे०.'हिपेरिन') १८१
यकृतिवृश्चिकाभरण १८१
यक्ष्मानाशक स्वर्णयौगिक ७६६
यमानी ५६०
यमानीसत्वादि नासाबिंदु ५६१
यलो ऑक्साइड ऑव मरकरी ६७०
,, ,, ,, के ऑफिशल योग ६७७
,, फीवर वैक्सीन ८६७
यलो बीज-वैक्स ५३१
,, मर्क्युरिक ऑक्साइड ६७०
यलो रूट ४७४
यव ५८
यवतिक्ता ४२
यव्यसत्व ५८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५८

याड्रिन ६८७
यीस्ट ड्राइड (दे० 'खमीर') १६८
युकेलिप्टस आयएटमेंट ५४३
युकेलिप्टस का तेल ५४०
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४२
,, ग्लोब्युलस ५४०
युकेलिप्टस के तेल का सीकर ५४३
युकेलिप्टस स्प्रे ५४३
युनिट्राइस्टेरोन ४६६
युनिस्टिविन ६३६
युरोट्रोपीन ४५५
यूआँनिमस ११७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ११८
,, ,, योग, उपयोगी योग ११८–११९
,, एट्रोपरप्यूरियस् ११७
,, टिन्जेंस ११८
,, बार्क ११७
यूआँनिमाई कॉर्टेक्स ११७
यूऑनिमिन १२०
यूऑनिमोल ११८
यूक्विनीन ६०८
यूकोरटोन २६५
यूजिनिआ केरिओफाइलम् ५५५
यूफिलीन ४३७
यूफ्लेवीना ८०७
यूरिओडोन ८८२
यूरिक एसिड डायथिसिस २३५
यूरिया ४४०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४४०
,, के योग ४४१
यूरियाक्विनीन ४४१
यूरियास्टिबामिनम् ६३३
यूरियास्टिबामीन ६३३, ६३७, ६३८
यूरापेक ८८७
यूरोसेलेक्टस 'बी' ८८७
यूसा(सो)ल ८००, ८०१
योग जिनमें अल्कोहल् सेटोस्टियरिलिकम् पड़ता है ५२६
योग जिनमें ऑयल ऑव लवेंडर पड़ता है ५७८
,, ,, ,, ,, पिपरमिंट ,, ,, ५७३
,, ,, एलुआ पड़ता है ८२
,, ,, एनिस का तेल पड़ता है ५६८
,, ,, कड़वी नारंगी का छिलका पड़ता है–
,, ,, जायफल का चूर्ण (पाउडर्ड नटमेग) पड़ता है ५८०
,, ,, जायफल का तेल पड़ता है ,,
,, ,, जिंजर (सोंठ) पड़ता है ५८२
,, ,, छोटी इलायची के बीज पड़ते हैं– ५६१
,, ,, दालचीनी का चूर्ण पड़ता है ५७५
,, ,, दालचीनी त्वक् ,, ,,
,, ,, धनिया का तेल पड़ता है ५६०
,, ,, नींबू का तेल पड़ता है ५७१
,, ,, ,, ,, सुखाया हुआ छिलका पड़ता है ५७०
,, ,, लार्ड पड़ता है ५२८
योग जिनमें पाउडर्ड क्लोव पड़ता है ५५७
,, ,, सिन्नेमन पाउडर पड़ता है ५७५
,, ,, सोडियाइ एट लॉरिलिस सल्फास पड़ता है ५३०
,, ,, सौंफ का चूर्ण पड़ता है ५६२

(र)

रंग उड़ाने की बुकनी ७६६
रक्त का प्रयोग निम्न रूपों में २८
रक्त के स्थानापन्न द्रव्य ३०
रक्तचापवर्धक औषधियाँ ३४४

रक्तचापह्रासक ,, ३६६
रक्तचाप या रक्तनिपीड़ को बढ़ानेवाली
औषधियाँ एवं प्रक्रियायें २६५, ३०३
रक्तचाप (रक्तभार) को कम करनेवाली
औषधियाँ २६५, ३०५
रक्तराशि को बढ़ानेवाली औषधियाँ
एवं उपाय २६५
रक्तराशि को कम करनेवाली औषधियाँ
एवं उपाय २६५
रक्तचापह्रासक अन्य औषधियाँ ३०७
रक्तवहसंस्थान पर कार्य करनेवाली
औषधियाँ २६५
रक्तवाहिनियों पर कार्य करनेवाली
औषधियाँ ३०१
रक्तवाहिनियों पर स्थानिक प्रभाव
करनेवाली औषधियाँ ३०४
रक्तस्कन्दक औषधियाँ १७५–१७७
रक्तस्कन्दन या रक्तसंहति-निरोधी
द्रव्य १७६–१८०
रक्तस्तम्भक अन्य यौगिक १७७
रजः प्रवर्त्तिनी वटी ८५
रस ६६९
रसकपूर ६७१
राइआ ८७
राइजोमा फिलिसिस मेरिस १२८
राइटिआ टिक्टोरिया ६६१
,, टोमेन्टोसा ,,
राइबोफ्लेविन २०१
राइबोफ्लेविन टेबलेट्स २०२
,, की टिकिया ,,
राइबोफ्लेविन के योग २०२
,, के व्यावसायिक योग २०२
राइबोफ्लेविना २०१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २०१
राइसपालिशिंग्स १९९
राइसब्रेन ,,
राई ४६४
राउण्ड बुक ४५९
रौवोल्फिआ (दे० 'सर्पगन्धा') ३७३, ३७४
,, के योग ३७६
,, या सर्पगन्धा के व्यावसायिक
योग ३७६–३७७
,, कैनेसेन्स
(धनबरुआ, पागलकी बूटी—
बनारस, मिर्जापुर आदि) ३७५
,, वामिटोरिआ ३७५
,, सर्पेन्टिना ३७३–३७५
,, सिंटेटिवा ३७६
,, हेटेरोफाइला ३७५
राजयक्ष्मा में प्रयुक्त विशिष्ट औषधियाँ ६६६
राजिकानः ५६७, ५६८, ५६९
राजिकानज ,, ,, ,,
रॉडिक्सिन ३७७
रातीसाटोडी ४५०
रानफोंदा ३२७
रामपत्री ५७९
रामफल ,,
रायुलइमाम ३०, ३१
रायून ८७
रॉलिन्सीड ऑयल ५०६
रालमाल ३७६
रॉल्फिन ३७७
रॉल्फेन ,,
रावंद ८५, ८७
रॉशेलसाल्ट ६७
रिंगवर्म पाउडर ८२६
रिख (स)पित्ता ११३
रिडॉक्सिन २०८, २१०
रिपॉजिटरी कार्टिकोट्राफिन इन्जेक्शन
(यू० एस० पी०) २६८
रिफाइंड सूगर २२८
रिसर्पीन ३७५

रिसॉर्सिन ७८६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ७८९–७९०
" " रासायनिक यौगिक ५६३
रिसॉर्सिनॉल ७८६
" के उपयोगी नुस्खे ७६०
" के नाट-ऑफिशल योग ७६०
रिसॉर्सिनोल एण्ड सल्फर पेस्ट ७६०
" का कर्णबिंदु ७६०
रिसिनस् कम्युनिस् ७३
रिसिनोलीक एसिड ७८८
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ७८६
रिहा ८०
रीवास ८७
रुब(वा)र्व ८५, ८७, ८८, ८९
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ८८
" के अन्य उपयोगी योग ८६–६०
रुवर्व केन्टन ८५
" चीनी या रूसी ८५
" शेन्सी ८५
" हाई-ड्राइड ८५
रुवामीन ७६३
रुब्रम्–कांगो–एन्सिस् १७७
रुब्रम् स्कारलेटिनम् ८११
रुब्राटन १७४
रूटिन २११
रेंड खरबूजा ५५
रेंडी का तेल ७४
रेक्टिफायड ऑयल ऑव टर्पेन्टीन ५३७
रेचन १२
रेड मरक्युरिक आयोडाइड ६७८
रेड सिंकोना बार्क ६०४
रेड सेन्डलवुड ४६१
रेडिक्स एकोनाइटी ३३३
रेडिक्स कॉल्चिसाई २३५
" कामेरिई १५२
रेडिक्स सिल्लो ३२५
रेडियम् ६१०
" की सेवनविधि आदि ६११–६१२
" के गुणकर्म-प्रयोगादि ६१०
रेडिओ–एक्टिव्ह आइसोटोप्स ६१२
रेडियो-एक्टिव्ह आयोडीन सॉल्यूशन २५३
" " " " के गुणकर्म तथा प्रयोग २५४-२५५
रेडियो–सक्रिय फॉस्फोरस १६१
रेडियो (ओ)स्टेरिन २२१
रेडियो (ओ)स्टोल २२१
रेनिन ५३
रेनेट ५३
रेबास ८७
रेवंचीनी ८५
रेवतचीनी ८५, ८७
रेवन्द ८५, ८७
रेवन्दचीनी ८५, ८७
" उसारा ८६
" चूर्ण ८८
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ८८
रेवनचीनी ८५, ८७
रेशए ईरसा ११२
रैट-एक्रोडाइनिया फैक्टर २०५
रोइनी ११८
रोक्कल ८१६
रोक्सेनोल ७८६
रोगन जैतून ५०४
" बरजद ५३७
" बादाम ५१०
" संदल ४६१
" इब्बुस्सलातीन १०६
रोजमरी का तेल ५४४, ५४५
" " " के गुण एवं प्रयोग ५४५
" " पौधा ५४५
रोजमेरिनस् ऑफिशिनेलिस ५४४–५४५

रोडन केल्शियम् डायुरेटिन ४३६
र्योदन्तीनो ६५
र्हानियाइ पुरशियानी कॉर्टेक्स ६५
र्हाइजोमा र्हिआइ ८५
र्हिआइ रेडिक्स ८५
,, पल्विस् ८८
र्हिओन ८७
र्हियम् ८५, ८७
,, ऑफिशिनेल ८५
,, इमोडी ८६
,, नोवाइल ८६
,, वेवियानम् ८६
र्हुवार्व ८५
,, रूट ८५
,, र्हाइजोम ८५
र्ह्यूम ८५, ८७
र्हैटनी रॅ (रे)डिक्स १५२
,, रूट १५२
र्हैमनस् पुर्शिआनस ६५
,, बाइटियाइ ६५
,, विर्गेटा ६५

(ल)

लवंग, लवंगम् ५५५
लक्सटिव्ज ७१
लटक ४५४
लनाटोसाइड 'सी' ३११
,, ,, इंजेक्शन ३१९
,, ,, के योग ३१६
,, ,, टॅबलेट्स ३१६
लरोस्टिडीन ४८२
लवङ्ग ५५५
लवणक्रिया के द्वारा मूत्रल प्रभाव करनेवाली औषधियाँ ४४०
लवण विरेचन ६७
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६९–७१
लवेंडर ऑयल ५७७–५७८
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५७८
लवेंडर ऑयल अन्यदेशीय ५७७
,, ,, इंगलिश ५७७
लवेंडर का तेल ५७७–५७८
लवेंडुला ५७७
,, ऑफिशिनेलिस ५७७
,, इन्टरमीडिया ५७७
लहानगोखुर ४५३
लाइकर आयोडाइ एक्वोसस ८०४
,, ,, कम्पोजिटस ८०४
,, ,, क्विनीनी ॲमोनिएटिस ६१८
,, ,, फोर्टिस ८०४
,, ,, मिटिस ८०४
लाइकर आर्सेनाइ एट हाइड्रार्जिराई आयडाइडाइ ६५१
लाइकर आर्सेनिकालिस ६५०
लाइकर एड्रिनेलिनी हाइड्रोक्लोराइडाई ३४६
लाइकर एपिस्पेस्टिकस ५०२
लाइकर केल्सिस क्लोरिनेटीकम् एसिडो बोरिको ८००
लाइकर क्रिसोलिस सेपोनेटस ७८८
लाइकर क्विनीनी अमोनिएटस ६१८
,, ,, सल्फ्युरेटी ८२६
लाइकर ग्लिसेरिलिस ट्राइनाइट्रेटिस ३७१
,, टार्ट्राजिनी कम्पोजिटस् ६०६
,, ,, ट्राइनाइट्रिनी ३७१
,, ट्राइपेनाइ सिरुलियाइ ६०६
,, डायोडोनाइ ८८८
लाइकर पिसिसकार्बोनिस ४२१
,, पॅक्रियाटिनाइ ५५

,, पैंक्रियाटिस ५५
,, पैराथायरायडियाइ २५६
लाइकर पोटासियाइ परमैंगेनेटिस ७६८
लाइकर प्रोफ्लेविनी ८०६
लाइकर फार्मेल्डिहाइडी ८१३
लाइकर फेराइ अमोनियाइ एसिटेटिस १७२
लाइकर फेराइपरक्लोराइडाइ १६७, १७०
" " के योग १७२–१७३
" फ्लेवस ६०६
" बिस्मथाइ एट अमोनियाइ साइट्रेटिस ६६६
" बेंजालकोनियाइ क्लोराइडाइ ८१६
लाइकर विटामिनाइ डीरे कन्सन्ट्रेटम् २१७
" विटामिनोरम् 'ए' एट 'डी' २१७
" सेकेरिनाइ ८६६
लाइकर सैपोनिस ईथेरियस ५२३
" सेपोनिस ओलियाइ कोकोइस ५१४
" सोडी क्लोरिनेटी चिरर्गिकालिस ८०१
लाइकर हाइड्रार्जिराइ परक्लोराइडाई ६७८
लाइकर हिपेटिस १५२
लाइकर हाइड्रोजनाइ परॉक्साइडाइ ७६६
लाइनम् कन्स्युजम् ५०७
लाइनम् युसिटेटिसिमम् ५०६
लाइनी सेमिना कन्स्युजा ५०७
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५०७
लाइमवॉटर एण्ड ऑयल ५०८
लाइपोल्युटिन ४६४
लाइमोनिस कॉर्टेक्स सिक्केटस ५७०, ३६
,, ,, रिसेन्स ,, ३६
लाइसोल ७८८
लाची ५६०
लॉजेन्जेज ऑव पाराफार्मेल्डिहाइड ८१५
,, ,, पेनिसिलिन ७२६
लार्ड ५२८
,, प्रिपेयर्ड ५२८
लिकर यूरॉनिमाइ एट आइरिडिन ११८
लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव पिक्रोर्हाइजा ४८
,, ,, ,, पुनर्नवा ४५२
,, ,, ,, वेलफ्रूट ७७
,, ,, ,, रॉल्ग्रोल्फिया ३७५
,, ,, ,, वॅलेरिअन ५५२
,, ,, ,, वाइबरनम् ५००
,, ,, ,, लिवर १५६
,, ,, ,, वासक ४२१
,, ,, ,, सॅनेगा ४१७
,, ,, ,, सिंकोना ६१६
,, ,, ,, सेन्ना ६४
,, ,, ,, हेमामेलिस १५५
,, ग्लूकोज २३०
लिथियम् थायोमलेट ६३३
लिनसीड ऑयल ५०६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५०७
,, मील ५०७
,, ,, के गुणकर्म प्रयोग ५०७
लिनिमेंटम् एकोनाइटी ३३६
,, एक्सिकेन्स ५२१
,, एल्बम् ५४०
,, बेलाडोनी एट क्लोरोफार्माई ३४०
,, कर्म्फ(म्फो)री ५८५
,, कर्म्फरी ऑमोनिएटम् ५७८, ५८५
,, कम्फोरी कम्पोजिटस् ५८६
लिनिमेंटम् केल्सिस् ५१२
" केल्सियाइ हाइड्राक्साइडम् कम् ओलियो लाइनो ५०२
" केल्सियाइ हाइड्राक्साइडाइ ५१२
" क्लोरोफार्माई ५८६
" टेरिबिन्थिनी ५३९
लारगेकिल ६२
लालमिर्च ५४६
" का टिंचर ५४६
लालाप्रसेकजनक (न) ३
लालाप्रसेकापनयन ३

लिक्टस आर्जिनिडई ३३०
,, ऑव इन्डियन स्क्विल्ल ३३०
,, ओपियाइ कम्फोरेटम को० ५८६
,, सिल्ली ओगिएटस प्रोइन्फेन्टिवस ३२६
,, ,, ,, ३२९
लिक्विड एक्स्ट्रैक्ट ऑव अर्गट ४६७
,, ,, ,, अर्जुना ३३३
,, ,, ,, अशोका ४८४
,, ,, ,, इण्डियन स्क्विल्ल ३३०
,, ,, ,, इपेकाक्वाना ४१२
,, ,, ,, इफेड्रा ३५६
,, ,, ,, एग्नोमा ४६६
,, ,, ,, एल्सटोनिआ ४७
,, ,, ,, कस्करा सगरेडा ६७
,, ,, ,, कालमेघ ४३
,, ,, ,, कॉल्चिकम् २४४
,, ,, ,, कुर्ची ६६३
,, ,, ,, क्युवेव ४२१
,, ,, ,, क्विल्लाया ४२०
,, ,, ,, चाइनेन्सिस ४१८
,, ,, ,, गोखरु ४५४
,, ,, ,, ग्लूकोज २३०
,, ,, ,, ग्रिडेलिया ४२५
,, ,, ,, जुनिपर ४४८
,, ,, ,, टैरेक्सेकम् ४६
,, ,, ,, ट्राएन्थेमा ४५२
,, ,, ,, पिक्रोरहाइजा ४८
,, ,, ,, वेलफ्रूट ५७
,, ,, ,, सेन्ना
लिक्वेफायड फिनोल ७८५, ७८६
लिनिमेंटम् मेथिलिस सेलिसिलेटिस २९०
,, ,, ,, एट युके-लिप्टाइ २६०
लिनिमेंटम् सेपोनिस ५२४, ५४५, ५८६
,, सोरेलिई ७७८
लिनिमेंट ऑव एकोनाइट ३३९
लिनिमेंट ऑव कम्फर ५८५
,, ,, क्लोरोफॉर्म ५८६
,, ,, केल्सियम् हाइड्राक्साइड ५१२
,, ,, टर्पेन्टीन (न्टाइन) ५३६, ५८६
,, ,, मेथिल सेलिसिलेट २९०
,, ,, मेथिलसेलिसिलेट एण्ड युकेलिप्टस २६०
,, ,, लाइम ५१२
,, ,, सोप ५२३, ५६६
लिपिओडोलदे० "आयोडाइज्ड ऑयल"। ८८५
लिवर ऑव सल्फर ८२५
लिवर इंजेक्शन १५६
,, ,, क्रूड १५६
लिवर एक्स्ट्रैक्ट १२६
,, ,, का इंजेक्शन १५७
,, ,, के गुणकर्म-प्रयोग १५६-१५९
,, ट्रेनोल वाइटार ट्रेट (दे० "नोरेड्रिनेलीन") ३५०
लिवर ट्रेनोलाइ वाइटारट्रास ३५०
,, विद स्टमक १६०
,, सोल्यूशन १५६
लिवाड्रेक्स १७५
लिवोजन १७५
लीटा ५०१
लीलु करियातुं ४६
लीव्यु(व्यू)लोज २३३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २३२
लीव्यूलोजम् २६२
लेक्जिओन २७
लेक्टोस (ज) २२६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २२९
लेक्टोजम् २२६
लेक्टोफ्लेविन २०१
लेक्स्ट्रन फेरस १७३
लेनाटासाइड 'सी' ३२०
लेनाटोसाइड 'सी' ३११

लेनोलिन ५२६
लेमनग्रास ऑयल ५४४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५४४
लेमन ऑयल ५७१
लेमिक सॉल्यूशन ८२६
लेसर कार्डेमम् ५६०
लेसर्स पेस्ट २८६
लेसिथिन २३४
लैनेट वैक्स ५३२
लोखन्ड १६५
लोड़ं १६५
लोबान २९०, २९१
लोबानाम्ल २९१, २९२
(दे० "बेंजोइक एसिड")।
लोबेलिआ (या) ४२१
,, के उपयोगी नुस्खे ४२४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४२३–४२४
,, ,, योग ४२२, ४२३
,, निकोटिएनिफोलिआ ४२१
,, इर्बा ४२१
लोबेलिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ४२२
लोबेलीन हाइड्रोक्लोराइड ४२२–४२३
लोबेलीन ४२१
लोमशातक औषधियाँ ३९९
लोरेक्सेन ८३६
लोशिओ केल्सियाइ हाइड्राक्साइडाइ ५०८
,, ,, ,, ओलिओसा ५०८
लोशिओ केल्सिस सल्फ्युरेटा ८२६
,, फिनोलिस ७८६
लोह(हा) १६५
लोहितज्वरका प्रतिविष ८७७
,, प्रतिषेधक निष्क्रिय विष ८७७
लौंग ५५५–५५७
,, का अर्क ५५८
,, का चूर्ण ५५७
,, का तेल ५५७
,, का तेल के गुणकर्म तथा प्रयोग ५५८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५५७–५५८
,, के योग ५५८
लौह १६५
,, एवं लौह-लवणोंके विभिन्न योग १७२–१७५
,, के अभावसे होनेवाला अथवा उपवर्णिक रक्ताल्पतामें उपयोगी अन्य द्रव्य १७१–१७२
,, के अन्य योग एवं लौहघटित यौगिक १७३
,, के लवणों के तीन वर्ग १६५
,, ,, ,, –यौगिकों के गुणकर्म तथा प्रयोग १६८–१७२
,, ,, व्यावसायिक योग १७३
ल्युकेन्थोन टॅबलेट्स १४४
ल्युकेन्थोन हाइड्रोक्लोराइड १४३
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १४३–१४४
,, ,, ,, योग १४४
ल्युकेन्थोनाइ हाइड्रोक्लोराइडम् १४३
ल्युकोडर्मा ७७८
ल्युटिओस्टेब ४६६
ल्युटोट्रॉफिन ३६४
ल्युटोसाइक्लिन ४६६
ल्युडरमोल ७७६
ल्यूकार्सोन ६८७
ल्यूगालकी आयोडीन ८०४
ल्यूगॉल्स सॉल्यूशन ८०४
ल्लोवन १७५

(व)

वडफ ५६८
वनपलाण्ड ३२७
वनपलाण्डु भारतीय (दे० अर्जिनिया इन्डिका)। ३२५, ३२७

वनपलाण्डु विदेशीय ('दे० अर्जिनिया सिल्ला')। ३२५
वनस्पति घी ५३३
वनवृन्ताक ११३
वर्मसीड १२३, १२५
वमनघ्न द्रव्य ६०
वमननिवारक द्रव्य ६०
वरियाली ५६८
वर्जिन ऑयल ५०३
,, स्कैमोनी १००
वर्मसीड १२३, १२५
वॅलेरिअन ५५०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५५२
,, का अभिनव फाण्ट ५५३
,, के नुस्खे ५५३
,, का प्रवाहीघनसत्व ५५२
,, राइजोम ५५०
,, रूट ५५०
वलेरिआ(या)ना ५५०
,, ऑफिशिनेलिस ५५०, ५५१
,, वालिचिआइ ५५०
वॅलेरिआ(या)नी पल्विस ५५२
वॅलेरिआनी राइजोमा ५५०
,, इन्डिकी राइजोमा ५५०
वत्सनाभ (दे० 'एकोनाइट') ३३४
वसा ५२८
वसाका ४२१
वसाविलेय 'ए' २१२
वसाविलेय जीवतिक्तियाँ २११
वसोक्सीन ३६७
वाइ-एटल २२४
वाइपरवेनम् ८८१
,, के प्रयोग ८८१
वाइबरनम् ४९६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५००
,, के योग ५००
वाइबरनम् प्रूनिफोलियम् ४९९
वाइल्ड चेरी ४२५
,, के गुणकर्म-प्रयोग ४२५-४२६
,, टॅवेको ४२१
वाइल्ड मॅंड्रेक १११
वागेन २२१
वातकर्दमका सम्मिश्रित प्रतिविष ८७६
,, ,, ,, के गुण-प्रयोग ८७७
वातकर्दमनाशक प्रतिविष ८७५
वातानुलोमन द्रव्य ७
वॉटर फॉर इन्जेक्शन ४२२
(दे० 'परिस्रुतजल')।
वानस्पतिक कुष्ठहर औषधियाँ ७७३
,, तिक्त ,, ३०
,, मूत्रल ,, ४४५
वामधु २३२
वायामीन ३८६
वायोमाइसिन के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६५-७६६
,, सल्फेट ७६५
वायोला क्रिस्टेलिना ८१०, १३६
(दे० 'खेलिन' ।)
वायोसिन सल्फेट ७६५
वायोस्टेरा(रो)ल २२१, २१५
वासक ४२०
वासा (दे० 'अडूसा')। ४२०
,, का प्रवाही घनसत्व ४२१
,, के आयुर्वेदीय योग ४२१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४२०
,, के योग ४२१
वासास्वरस ४२१
वासाशर्बत या सिरप ४२१
वासाटिंचर ४२१
वासाचन्दनादि तैल ४२१
वासापानक ४२१
वासारिष्ट ४२१

वासावलेह ४२१
वासिसीन ४२०
वाह्लीक ५५३
वासोप्रेसिन ४७७
वाहिनीविस्फारक २६५
वाहिनीसंकोचक २६५
वाहू वार्क ११७
विंटरग्रीन २६०
,, ऑयल २९०
विकिरण चिकित्सा ६०७
विगॅटोल २२१
विच–हेजल ली०ज १५४
विटामिन १६३
विटामिन 'ए' २१२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २१२–२१४
,, ,, के योग २१४
,, ,, व्यावसायिक योग २१४
,, केप्स्यूल्स २१४
,, 'डी' २१५
विटामिन डी१, डी२, डी३, २१५
,, की टिकिया २१७
,, के गुणकर्म-प्रयोग २१६
,, मात्रातियोगजन्य विषमयता २१६
,, 'ए' एवं 'डी' २१८
,, ,, ,, ,, के अन्य व्यावसायिक योग २२१
विटामिन डी२ २५७
,, 'ई' २२१
,, 'ई' के गुणकर्म तथा प्रयोग २२२-२२३
,, वन्ध्यतानिवारक २२१
,, रिप्रोडक्टिव (सन्तानोत्पादक) २२१
,, 'ई' के व्यावसायिक योग २२३-२२४
,, 'के' २२४, २२७
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २२६
विटामिन 'के' के व्यावसायिक योग २२७
,, कोआगुलेशन २२४
,, 'सी' २०८
,, 'बी' कम्प्लेक्स (जटिल जीवतिक्ति 'ख') १६५
,, 'बी १' १६५
,, ,, का इन्जेक्शन या सूई १६८
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १६६
,, ,, के योग १६८
,, ,, के व्यावसायिक योग २००
,, 'बी २' जटिल (कम्प्लेक्स) २००
,, ,, का इन्जेक्शन या सूई २०२
,, ,, की टिकिया २०२
,, ,, के दो भाग २००
,, 'बी ३' दे० "पैण्टोथेनिक एसिड"। २०५
,, 'बी ६' (दे०"पाइरिडाक्सिन"।) २०५
,, बी १२ (दे० "सायनो कोबालामिनम्")। १६३
विटामिन 'सी' २०८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २०८
विटामिन 'जी' २०१
विटामिन 'पी' २१०
,, ,, के व्यावसायिक योग २११
विटामिन्डान २२४
विटामिन्डान 'बी १' मीडियम् २००
,, ,, कन्सन्ट्रेटेड २००
,, ,, स्ट्रांग २००
,, 'बी २' २०२
विटामिन्स (दे० "जीवतिक्तियाँ।") १६३
विटावेल 'ए' २१५
विटिओलिन २२४
वितुन्नक ५५८
विदेशीय गिरिपर्पट १११
विनाकटेन सल्फेट ७६५
विनेगर ऑव अर्जिनिया ३३०

विनेगर ऑव स्क्विल्ल ३२६
विरञ्जक चूर्ण ७६६
विरिडेनिटेन्स ८१०
,, मेलाकाइटम् ८१२
विलायती कृष्णजीरक ५६२
विलायती जंगली कांदा ३२५
विलायती जीरा ५६२
विलायती पित्तपापड़ा ११६
विशुद्ध जल ४२६
विष ३३३
विषखपरा ४५०
विसेमिन ३७८
विस्कस इन्जेक्शन ऑव डायोडोन ८८८
वीक आइ-ड्रॉप्स ऑव सल्फासिटेमाइड ७१०–७११
वीक टिंक्चर ऑव जिंजर ५८२
वीक सॉल्यूशन ऑव आयोडीन ८०४
वुडटार ७६२
वूल्फ्स वेन ३३३
वृक्कोंपर कार्य करनेवाली औषधियाँ ३८६
वृषपित्त शुद्ध १२१
,, ,, के कतिपय उपयोगी योग १२२
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १२१
वृहत्कायाश्विक परमवर्णिक रक्तक्षयपर कार्यकर औषधियाँ १५०
वेजिटेब(बि)ल ऑयल ५३३
,, कैलोमेल ११५
,, डायुरेटिक्स ४४५
,, मरकरी १११
वेतसीन ८८८
वेनम् नाजी ८८०
वेनिनम् वाइपरी ८८१
वेनीन ८८२
वेनोड्रीन ३६७
वेन्ट्रिकुलस डेसिकेटस (शुष्क आमाशय या आमाशय सत्व) १६०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १६०
वेन्ट्रिक्युलिन १६०
वेपर क्रियाजोटाइ को० ४२८
,, बेंजोइनी २६४
वेपर मेंथॉलिस एट बेंजोइनी ५८८, २६३
वेपर मेंथोलिस एट युकेलिप्टाइ ५४२, ५४३, ५८८
वेराट्रोसीन ३७७
वेराल्बा ३७८
वेरिटेन ३६७
वेरिलॉयड ३७८
वेरेट्रम् विरिडे ३७६, ३७८
,, अमेरिकन ३७७
,, युरोपीय (दे० "सफेद हेलेबोर।") ३७७
वेरेट्राइ विरिडिस पल्विस
वेरेट्रिडीन ३७७
वेसिलोक्स ३६७
वैक्सिनम् एन्टिवेरिओलम् ८६४
,, कॉलेरेकम् ८६१
,, केलमेट-ग्वेरिन वेसिलस् ८६२
,, टायफाइ इक्सेन्थिमेटिसाइ ८६७
,, टायफो-पाराटायफोसम् 'ए' एट 'बी' ८५६
,, ,, ,, 'बी' एट 'सी' ८५६
,, स्युबरक्युलिनम् ८६४
,, पर्टसिस ८६२
,, पेस्टिस फॉर्मेलिजेटम् ८६१
,, फेब्रिस फ्लेवी ८६७
,, रेबीज कार्बोलिजेटम् ८६८
,, वैक्सिनिइ ८६४–८६६
,, स्टेफिलोकोकिकम् ८६४

वैक्सीन या मसूरी या टीका
,, एन्टीटायफायड-पाराटायफायड ८५६
,, कार्बोलाइज्ड एन्टी-रेबिक ८६८
,, ,, रेबीज ८६८
,, कालरा ८६१
,, का वर्गीकरण ८४६
,, चिकित्सा ८४१
,, टायफस ८६७
,, टायफॉयड-पाराटायफायड 'ए' एण्ड 'बी' ८५६
,, ,, ,, 'ए' एण्ड 'बी' एण्ड कॉलरा ८६०
,, ,, ,, 'ए','बी' एण्ड 'सी' ८५६
वैक्सीन टी० ए० बी० सी० (T. A. B. C.) ८५
,, तृणाण्वीय उपसर्ग-प्रतिरोधक ८५६
,, निर्माण-विधि ८४७
,, प्रकार ८४६
,, प्लेग ८६१
,, यलो फीवर ८६७
,, सेम्पलीज ८६८
,, हॉफ्किन प्लेग ८६१
,, हूपिंग कफ (कुकुरखाँसी की मसूरी) ८६२
वैप्रक ४२०
वैसाका ४२०

(श)

शतपुष्पा ५६५
शबयार ८०
शरीरसमवर्तक्रिया (मेटाबोलिज्म) पर कार्य करनेवाली औषधियाँ २४६
शरीर से लवण (सोडियम् क्लोराइड) का अपहरण करनेवाली औषधियाँ ४४३
शर्करा २२८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २२८
शर्बत अडूसा ४२१
,, चेरी ४२६
शर्बत जंजबील ५८२
,, जंबीर ५७१
,, टोलू ५४६
,, नारंगी ४०
,, सनाय ६४
शलुफा ५६५
शार्क मछली का तेल २२०
शार्क लिह्वर ऑयल २२०
,, ,, ,, विद विटामिन 'डी' २२०
शार्टब्रुक ४५६
शाह्जीरा ५६२
'शिक' कन्ट्रोल ८७३
शिक की परीक्षा ८७३
'शिक' टेस्ट टॉक्सिन ८७२
शिवित्त ५६५
शीतग्राही औषधियाँ (Astringents) १४६
शीतहरितका तैल २८६
शील्ड फर्न ७३०
शीह ७२५
शुक्रकीटनाशक द्रव्य ८४२
शुक्रग्रंथि-अन्तः स्राव ३६६
शुण्ठि चूर्ण ५८१
शुल्बौषधियाँ ६६६
,, आमाशयान्त्रप्रणाली पर जीवाणुनाशक प्रभाव करनेवाली ७११
शुल्बौषधियों के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१२-७१३
शुष्कजम्बीर त्वक् ५७०
शूकरवसा ५२८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५२८–२६

शूकरवसा के योग ५२८
शूद(त) ५६५
शृङ्गगीर ५६०
शृङ्गी विष ३३६
,, ,, निष्कर्ष ३३६
,, ,, ,, तीव्रबलवाला ३३६
शोथघ्नी ४५०
श्याम बीज १०४
श्याम बेंजोइन २६०, २६१
श्याम मोहरी ३३६
श्रीफल ७६
श्लीपदकृमिनाशक अन्य व्यावसायिक योग १४४
श्लीपदकृमिहर औषधियाँ १४१
श्लेष्मनिरोधक ३८३
श्वसनकेन्द्रको अवसादितकरनेवाली औषधियाँ ३८१
,, ,, उत्तेजित ,, ,, ३८१
श्वसनपर प्रभाव करनेवाली औषधियाँ ४०२
श्वसनसंस्थानपर कार्य करनेवाली औषधियाँ ३७६-३८१
,, ,, ,, औषधियोंका शीर्षक वर्णन ३८१
श्वासनलिका स्रावपर प्रभाव डालनेवाली औषधियाँ ३८१
,, ग्रन्थियोंको उत्तेजित करके कफनि- स्सारक प्रभाव करनेवाले द्रव्य ३८२
श्वासनलिकाओंपर संशामक प्रभाव करने वाली औषधियाँ ४२५
श्वासनलिकोद्वेष्टहर औषधियाँ ३८४-३८५, ४२१
श्वासप्रणालियोंपर जीवाणुनाशक प्रभाव करनेवाली औषधियाँ ४२३
श्वासहर औषधियाँ ३८४-३८५
श्वेत जीरा ५२१
श्वेत या विरञ्जित मधूच्छिष्ट ५३१
श्वेत सार ५२१

(ष)

षट्सकार चूर्ण ६२

(स)

संकेन्द्रित अर्क लवंग ५५८
संखिया ६४७
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४८-६५०
" खनिज ६४७
संश्लिष्ट कृत्रिम रञ्जक यौगिक ८०७
सकमुनिया १००, १०१
" की जड़ ६६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग १०१
सकमुनियादि चूर्ण १०१, १०२
सकमुनिया निर्यास १०२
सकमूनिया ६६, १००
सक्करेटम् प्योरिफिकेटम् २२८
सक्कस एब्रोमी ४८६
सक्कस टॅरेक्सेसाइ ४६
सक्केरम् लेक्टिस २२६
सक्रिय काष्ठांगार ६४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४-६५
,, ,, ,, व्यावसायिक योग ६५
सक्सिनिल सल्फाथाएजौलम् ७११
,, ,, ,, -जोल ७११
,, ,, ,, ,, की टिकिया ७१३
सत अजवायन ५८६
सत पिपरमिंट ५८७
,, ,, का प्रधान आभाएन ५८८
सत पुदीना ५८७
सत वॅलेरिअन ५५२

सतौना ४७
सनाय ६०, ६२
,, का चूर्ण ६२
,, ,, प्रवाही घनसत्व ६४
,, ,, फाण्ट ६४
,, ,, सफूफ ६२
,, कीपत्ती ६२
,, ,, फली (शिम्बी, सेम) ६३
,, ,, ,, मिस्री एवं भारतीय ६३
,, के उपयोगी नुसखे ६३, ६४, ६५
,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग ६३
,, घटित आयुर्वेदीय रेचक चूर्ण योग ६३
,, भारतीय ६२
,, मकी (क्की) ६०
,, मिस्री ६२, ६३
सॅनिगा ४१५
,, की जड़ ४१५
सॅनिगामूल ४१५
सॅनिगी रेडिक्स ४१५
सॅनेगा ४१५
,, अमरीकी ४१७
,, इन्डियन ४१७
,, का प्रवाही घनसत्व ४१७
,, ,, संकेन्द्रित फाण्ट या हिम ४१७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४१६
,, ,, योग ४१७
,, चूर्ण ४१६
,, देशी ४१७
,, ,, का अभिनव फाण्ट ४१६
,, ,, के गुण-प्रयोग ४१८
,, ,, ,, योग ४१८
,, रूट ४१५
सनेगिन (तत्व) ४१६
सनेगी पल्विस ४१६
सन्टलम् अल्बम् ४६१
सपोजिटरी
सपोजिटरीज ऑव ग्लिसरि
,, ,, टैनिक एसिड
सपो (पॉ) जिटोरियम् एड्रिने
सपो (पॉ) जिटोरिया एसिडाः
,, ग्लिसेरिनाइ
,, बिस्मथाइ सबगैलेटिस
,, हेमामेलिडिस
सॅ (सॅ) पोर्टॉक्सिन
सपोनीन दे० 'सेपोनीन'
सप्तपर्ण
सफेद जीरा
,, ,, का तेल
,, मृदु पाराफिन
,, वैसेलिन
सबक्लोराइड ऑव मर्करी
,, ,, ,, के ऑफिशल यो
सब्बारत
सब्लाइम्डसल्फर
सरल
सराका इन्डिका
सर्जिकल सॉल्यूशन ऑव क्लोरिनेटे
सोडा
सर्पगन्धा
,, का प्रवाही घन सत्व
,, ,, सत
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग
सर्पविष एवं उनके योग
,, ,, प्रतिविष
सर्पाक्षि ३९
सर्पिना
सर्पोगन्धा
सलीखा
सल्फर
,, के नुस्खे
सल्फर प्रेसिपिटेटम्
सल्फर सब्लिमेटम्

सल्फर सब्लिमेटम् के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२४
सल्फॉक्सोन सोडियम् ७६९
सल्फाग्वानिडीन ७११
,, आदि के ऑफिशल योग ७१३
,, ,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग ७१२-७१३
,, ,, ,, व्यावसायिक योग ७१३
,, की टिकिया ७१३
सल्फाट्रायड ७१७-७१८
सल्फा डाइआजीन ७०५
,, ,, सोडियम् ७०५
सल्फा डाइआजीना ७०४
,, ,, सोडियम् ७०४
,, डाइमाइडिना ७०८
,, ,, सोडियम् ७०८
,, डाइमाइडीन ७०८
,, ,, सोडियम् ७०८
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७०८-७०९
,, का इंजेक्शन ७०९
,, की टिकिया ७०९
,, के ऑफिशल योग ७०९
सल्फाडाइमेटीन ७१६
सल्फाडायजीन जलमें घुलनेवाला ७०५
,, ,, की टिकिया ७०६
,, ,, की सूई ७०६
,, ,, के ऑफिशल योग ७०६, ७०७
,, ,, के व्यावसायिक योग ७०८
सल्फाथाएजॉल सोडियम् ७०६
सल्फाथाएजोलम् सोडियम् ७०६
सल्फाथायजॉ(जो)ल ७०६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७०६
सल्फाथायजोलम् ७०६
सल्फाथियाजॉल
सल्फाथेलिडीन ७१२
सल्फाथोलिडीन ७१३
सल्फानिल ६६८
सल्फा(ल्फे) निलेमाइड ६६८
,, की टिकिया ६६८
सल्फा (ल्फे) निलेमाइडम् ६६८
सल्फानेमाइड वर्ग की अन्य औषधियाँ ७१३-७१५
,, ,, ,, औषधियों के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१३
सल्फा पाइरिडीन ७१४
,, ,, टब्लेट्स ७१४
सल्फापाइरिडीना ७१४
सल्फाफ्युरेजोल ७१६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१६
सल्फाफ्युरेजोलम् ७१६
सल्फामाइलन ७१७
,, के प्रयोग ७१७
सल्फामेजाथीन ७०८
सल्फामेथाजीन ७०८
सल्फामेराजिना ७१४
,, सोडियम् ७१५
सल्फामेराजीन ७१४
,, की टिकिया ७१६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१४
,, के नॉट ऑफिशल योग ७१६
,, जलमें घुलनेवाला ७१५
,, टब्लेट्स ७१६
,, सोडियम् ७१५
सल्फार्सफेनामिना ६५२
सल्फार्सफेनामीन ६५२
सल्फार्सेनाल ६६३, ६५७
,, का इंजेक्शन या सूई ६५८
सल्फार्से बेंजीन ६५३
सल्फासक्सीडीन ७११, ७१३
सल्फासिटेमाइड ७०९
,, पानी में घुलनेवाला ७१०
,, का आँख का मलहम ७१०
,, के ऑफिशल योग ७१०

सतौना ४७
सनाय ६०, ६२
,, का चूर्ण ६२
,, ,, प्रवाही घनसत्व ६४
,, ,, फाण्ट ६४
,, ,, सफूफ ६२
,, कीरत्ती ६२
,, ,, फली (शिम्बी, सेम) ६३
,, ,, ,, मिस्री एवं भारतीय ६३
,, के उपयोगी नुसखे ६३, ६४, ६५
,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग ६३
,, घटित आयुर्वेदीय रेचक चूर्ण योग ६३
,, भारतीय ६२
,, मकी (क्की) ६०
,, मिस्री ६२, ६३
सॅनिगा ४१५
,, की जड़ ४१५
सॅनिगामूल ४१५
सॅनिगी रेडिक्स ४१५
सॅनेगा ४१५
,, अमरीकी ४१७
,, इन्डियन ४१७
,, का प्रवाही घनसत्व ४१७
,, ,, संकेन्द्रित फाण्ट या हिम ४१७
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४१६
,, ,, योग ४१७
,, चूर्ण ४१६
,, देशी ४१७
,, ,, का अभिनव फाण्ट ४१६
,, ,, के गुण-प्रयोग ४१८
,, ,, ,, योग ४१८
,, रूट ४१५
सनेगिन (तत्व) ४१६
सनेगी पल्विस ४१६
सन्टलम् अल्बम् ४६१
सपोजिटरी
सपोजिटरीज ऑव ग्लिसरिन ५१६
,, ,, टैनिक एसिड १५०
सपो (पॉ) जिटोरियम् एड्रिनेलिनी ३५०
सपो (पॉ) जिटोरिया एसिडाइ टैनिसाइ १५०
,, ग्लिसेरिनाइ ५१६
,, बिस्मथाइ सबगैलेटिस ७०६
,, हेमामेलिडिस १५५
सॅ (सॅ) पोटॉक्सिन ४१६
सपोनीन दे० 'सेपोनीन'
सप्तपर्ण ४७
सफेद जीरा ५६४
,, ,, का तेल ५६४
,, मृदु पाराफिन ५२४
,, वैसेलिन ५२४
सबक्लोराइड ऑव मर्करी ६७१
,, ,, ,, के ऑफिशल योग ६७८
सब्बारत ८१
सब्लाइम्डसल्फर ८२४
सरल ५३७
सराका इन्डिका ४८२
सर्जिकल सॉल्यूशन ऑव क्लोरिनेटेड सोडा ८०१
सर्पगन्धा ३७३, ३७४
,, का प्रवाही घन सत्व ३७६
,, ,, सत ३७६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ३७५-३७६
सर्पविष एवं उनके योग ८८०
,, ,, प्रतिविष ८८०
सर्पासिल ३७५, ३७६
सर्पिना ३७७
सर्पोगन्धा ३७३
सलीखा ५७५
सल्फर ५७५
,, के नुस्खे ८२५
सल्फर प्रेसिपिटेटम् ८२३
सल्फर सब्लिमेटम् ८२४

सल्फर सब्लिमेटम् के गुणकर्म तथा प्रयोग ८२४
सल्फॉक्सोन सोडियम् ७६९
सल्फाग्वानिडीन ७११
,, आदि के ऑफिशल योग ७१३
,, ,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग ७१२-७१३
,, ,, ,, व्यावसायिक योग ७१३
,, की टिकिया ७१३
सल्फाट्रायड ७१७-७१८
सल्फा डाइआजीन ७०५
,, ,, सोडियम् ७०५
सल्फा डाइआजीना ७०४
,, ,, सोडियम् ७०४
,, डाइमाइडिना ७०८
,, ,, सोडियम् ७०८
,, डाइमाइडीन ७०८
,, ,, सोडियम् ७०८
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७०८-७०९
,, का इंजेक्शन ७०९
,, की टिकिया ७०९
,, के ऑफिशल योग ७०९
सल्फाडाइमेटीन ७१६
सल्फाडायजीन जलमें घुलनेवाला ७०५
,, ,, की टिकिया ७०६
,, ,, की सूई ७०६
,, ,, के आफिशल योग ७०६, ७०७
,, ,, के व्यावसायिक योग ७०८
सल्फाथाएज़ॉल सोडियम् ७०६
सल्फाथाएजोलम् सोडियम् ७०६
सल्फाथायजॉ(जो)ल ७०६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७०६
सल्फाथायजोलम् ७०६
सल्फाथियाजॉल
सल्फायेलिडीन ७१२
सल्फाथोलिडीन ७१३
सल्फानिल ६६८
सल्फा(ल्फे) निलेमाइड ६६८
,, की टिकिया ६६८
सल्फा (ल्फे) निलेमाइडम् ६६८
सल्फानेमाइड वर्ग की अन्य औषधियाँ ७१३-७१५
,, ,, ,, औषधियों के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१३
सल्फा पाइरिडीन ७१४
,, ,, टब्लेट्स ७१४
सल्फापाइरिडीना ७१४
सल्फाफ्युरेजोल ७१६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१६
सल्फाफ्युरेजोलम् ७१६
सल्फामाइलन ७१७
,, के प्रयोग ७१७
सल्फामेजाथीन ७०८
सल्फामेथाजीन ७०८
सल्फामेराजिना ७१४
,, सोडियम् ७१५
सल्फामेराजीन ७१४
,, की टिकिया ७१६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१४
,, के नॉट ऑफिशल योग ७१६
,, जलमें घुलनेवाला ७१५
,, टब्लेट्स ७१६
,, सोडियम् ७१५
सल्फार्सफेनामिना ६५२
सल्फार्सफेनामीन ६५२
सल्फार्सेनाल ६६३, ६५७
,, का इंजेक्शन या सूई ६५८
सल्फार्से वेंजीन ६५३
सल्फासक्सीडीन ७११, ७१२
सल्फासिटेमाइड ७०९
,, पानी में घुलनेवाला ७१०
,, का आँख का मलहम ७१०
,, के ऑफिशल योग ७१०

सल्फासिटेमाइड के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१०
,, के नान्आफिशल योग ७१०–७११
,, ,, व्यावसायिक योग ७११
,, सोडियम् ७०६
सल्फासिटेमाइडम् ७०६
सल्फासोडियम् ७०६
सल्फासोमाइडिना ७१६
सल्फासोमाइडीन ७१६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७१७
,, डाइमेटीन ७१६
सल्फेटेड कॅस्टर ऑयल ४३४
सल्फेनिलेमाइड दे० 'सल्फानिलेमाइड'
सल्फोन समुदायकी औषधियाँ ७७१
सल्फोनामाइड समुदाय की औषधियों के गुणकर्म ६९८–७००
सल्फोनामाइड्स की विषाक्तता ७०१–७०२
,, के आमयिक प्रयोग ७०२–७०४
सल्फोनामाइड पी ६९८
सल्फोनेटेड कॅस्टर ऑयल ५३४
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५३४
सल्फोब्रोमोफ्थेलीन सोडियम् ८९४
सल्फोब्रोमोफ्थेलीनम् ,, ८९४
सल्फ्युरेटेड पोटास ८२५
साइकोट्रीन ४०७
साइक्लामेट केल्शियम् ८९९
साइक्लोपेन्टामीन हाइड्रोक्लोराइड ३६७
साइक्लिजीन हाइड्रोक्लोराइड ८५५
साइक्लोकोमेरोल १८५
,, के प्रयोग १८५
साइक्लोसेरीन ७६६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६६
साइटोविग्रन १७४
साइटोवेरियम् ७९५
साइट्रस ऑरन्शिअ(य)म् ३९, ५७२
,, लाइमन ३९, ५७१
साइट्रस क्राइसोकार्पा ३६
साइट्रिन २१०–२११
साइट्रीन ऑयण्टमेंन्ट ६६७
साइट्रोवोरम् फैक्टर १६१
साइट्रयुलस् कोलोसिन्थिस् १०६
सातवण ४७
सातवीण ४७
सातर ५६०
सापसण ४६
सायनो कोबालामिन १६३
,, के गुणकर्म·प्रयोग १६३–१६५
,, के योग १६५
सायनो को बालामिनम् १६३
सॉल्गेनॉल ७६७
,, 'बी' ७६७
,, ,, ओलियोसम् ७६७
साल्युबुल सल्फा डाइआजीन ७०५
,, ,, मेराजीन ७१५
,, ,, सिटेमाइड ७०६–७१०
सा(सो)ल्यू(लू)शन ऑव एड्रिनेलीन हाइड्रोक्लोराइड ३४६
,, ,, एमिनेफ्रीन हाइड्रोक्लोराइड ३४६
,, ,, केल्सिफेरोल (विटामिन डी$_2$) २१७
,, ,, कोलटार ७९३
,, ,, क्रिसोल ७८७
,, ,, क्लोराक्सिलेनोल ७८६
,, ,, क्लोरिनेटेड लाइम् विद् बोरिक एसिड ८००
,, ,, ग्लिसेरिल ट्राइनाइट्रेट ३७१
,, ,, ट्राइपन ब्ल्यू ९०६
,, ,, डायोडोट्रास्ट ८८८
,, ,, नाइट्रोग्लिसरिन ३७१
,, ,, पाइरेथ्रम् ८४०
,, ,, फार्मेल्डिहाइड ८१३

स(सो)ल्यू(लू)शन ऑव फेनिलेफ्रीन
हाइड्रोक्लोराइड ३६६
,, ,, फ़ेरिक परक्लोराइड १६७
,, ,, बेंजालकोनियम्
क्लोराइड ८१६
साल्यूशन ऑव मर्क्युरिक कलोराइड ६७८
,, ,, सल्फाथायजॉल ७०६
,, ,, हाइड्रोजन परॉक्साइड ७९६
,, कम्पाउण्ड ऑव टार्ट्राजीन ९०६
,, पाइरेथ्रम ८४०
,, व्लेमिंक (Vleminck's Solution)
सॉ (सो) ल्यू (लू)शिओ
,, आयोडाइ एक्वोजा ८०४
,, ,, स्पिरिटुओसस् फोर्टिस ८०४
,, ,, ,, मिटिस ८०४
,, आर्सेनिकलिस ६५०
,, एमिनेफ्रिनी हाइड्रो-क्लोराइडाइ ३४९
,, क्रिसोलिस सेपिनेटस् ५०८
,, क्रिसोलिस सेपोनेटस् ७८७
,, क्लोराक्सिलेनोलिस ७८६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७९३
,, पिसिस कार्बोनिस ७८३
,, पाइरेथ्राइ ८३९
,, फार्मेल्डिहाइडी ८१३
,, फेराइ परक्लोराइड १६७
,, सोडी क्लोरिनेटी ८०१
,, हाइड्रार्जिराइ बाइक्लोराइडाई ६७८
,, हाइड्रोजनाइ परॉक्साइडाइ ७९६
साल्वर्सन ६५७, ६५९
साल्वेल्ली थायमोलिस कम्पोजिटी ५६१
सिकामेन २२७
सिंकोना ६०४–६१७
,, ऑफिशिनेलिस ६०४, ६०५, ६०६
सिंकोना का घनसत्व ६१६
,, ,, चूर्ण ६०७
,, की छाल ६०४, ६०६
,, तथा क्वीनीन के गुणकर्म तथा प्रयोग ६०९
,, के योग ६१६–६१९
,, केलिसेया ६०४, ६०५
,, फेब्रिफ्यूज ६०६
,, ,, के गुण-प्रयोग ६०९
,, रुब्रीकार्टेक्स ६०४, ६०६
,, रोबस्टा ६०७
,, लिक्विड एक्स्ट्रक्ट ६१६
,, लेजेरिआना ६०४, ६०५
,, सक्सिरुब्रा ६०४, ६०७
सिंकोनिडिनी सल्फास ६१७
सिंकोनिडीन ६०४, ६०६, ६०७
,, का चूर्ण ६०७
सिंकोनिडीन सल्फेट ६१७
सिंकोनिनी सल्फास ६१७
सिंकोनीन ६०७
,, सल्फेट ६१७
सिंकोफेन २४२
,, के अन्य उपयोगी योग २४४
,, ,, ऑफिशल योग २४४
,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग २४३
सिंकोफेनम् २४२
सिंगिया ३३३
,, विष ३३३
सिंहपर्णी ४२०
सिंहमुखी ४२०
सिंहली दालचीनी ५७४
सिकेल कॉर्न्यूटम् ४०६
,, सिरिआले ४०६
सिग्नेट्स साल्ट ६७
सिटिसस् स्कोपेरियस ४४८
सित कुटज ६६०

सिनकेविट सोडियम् डाइफॉस्फेट २२७
सिनिओल ५४१, ५४२
सिनिप्स गॉली टिंक्टोरिया १४७
सिन्थेटिक कॅम्फर ५८३
सिन्थेलिन 'बी' २६४
सिन्थोवो ४६१
सिन्नेमन ५७३
,, बार्क ५७३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५७४
,, लीफ ऑयल ५७७
सिन्नेमोमम् ५७३
,, कॅम्फोरा ५८३
,, कॅसिया ५७५
,, जेलानिकम् ५७४
,, जेलानिका ५७६
सिन्नेमोमाइ कॉर्टेक्स ५७३
सिपरिन क्लोराइड ८१७
सिफेलिस ४०६
,, इपीकेक्वाना ४०५
,, एक्युमिनेटा ४०५
सिबाजॉल ७०६
,, जल में घुलनेवाला ७०५, ७०६
,, आयण्टमेन्ट ७०८
,, एम्पूल्स ७०८
,, की टिकिया ७०७
,, नेत्रमलहर ७०८
,, टबलेट्स ७०८
,, पाउडर ७०८
सिब्र ८०
सिमेन कन्ट्रा १२३
,, ,, वर्मिस १२३
सिमेनजिना १२३
सिमेन सिनी १२३
सिमेन्जा १२३
सिमेरिन ३३१
सिमेरोस ३३१
सिम्पुल आयण्टमेन्ट ५२८, ५२९
,, टिंक्चर ऑव वॅलेरिअन् ५५२
सिम्पैथोमाइमेटिक ड्रग्स ३५१–३५३
सिम्बोपोगन फ्लेक्सुओसस् ५४४
,, साइट्रेटस ५४४
सिरप २२८
सिरप ऑव अकेसिया ५१९
,, ,, अर्जिनिआ ३२९
,, ,, ऑरेन्ज ४०
,, ,, ग्लूकोज २३१
,, ,, जिंजर ५८२
,, ,, टार ७९३
,, ,, टोलू ५४९
,, ,, लिक्विड ग्लूकोज २३१
,, ,, लेमन ४०, ५७१
,, ,, वाइल्ड चेरी ४२६
,, ,, वासक ४२१
,, ,, सेन्ना ९४
,, ,, स्क्विल ३२९
सिरपस २२८
सिरपस अकेसिई ५१८
" अर्जिनिई ३२९
" ऑरन्शिआई ४०
" ग्लूकोजाइ लिक्विडाइ २३१
" जिंजिबरिस ५८२
" टोलूटेनस ५४९
" प्रूनियाइ वर्जिनिओनी ४२६
" प्रूनियाइ सिरोटिनी ४२६
" पिसिस लिक्विडो ७९३
" फेराइ आयोडाइडाइ १७३
" फेराइ फॉस्फेटिस कम् क्विनीन एट स्ट्रिक्नीना १७३
" फेरीफॉस्फेटिस कम्पोजिटस् १७२
" फेरीफॉस्फेटिसकम् क्विनीन एट स्ट्रिक्नीना ६१८
" लाइमोनिस ५७१, ४०

सिरपस वसाकी ४२१
,, सिल्ली ३२६
,, सेत्ती ९४
सिलाविश्रोस ३२७
सिलारिडिन ३२५
सिलारिन 'ए' एवं 'बी' ३२७
सिलियम् ७८
,, सीड-हस्क ७८
सिलेलीन ४०७
सिलोन सिन्नेमन ५७४
सिल्लरिन ३३१
सिल्ला ३२५
,, इन्डिका ३२७
,, के योग (नुस्खे) ३३०
,, ,, व्यावसायिक योग ३३०–३३१
,, या स्क्विल्ल के गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग ३२८–३२९
सिल्वर-आर्सफेनामीन ६५६
,, साल्वर्सन ६५६
सिनेलिन २१०
सिसेम ऑयल ५१२
सिसेमम् इन्डिकम् ५१२
सिस्टोडिजिन ३१६
सिस्टो-सोमा-उपसर्गनाशक औषधियाँ १४३
सी-ऑनिश्रन ३२६
सीडलिज-पाउडर ६८
सीमाव ६६६
सीरम्-एन्टी-डिफ्थीरिया ८६८
,, की सेवन-विधि ८४८–८४६
सीरम् या क्षम-लसीका ८४८
,, गोनेड्रोट्रोफिन ४८७
सीलिन २१०
सुकेरिल केल्शियम् ८६६
सुक्रोजम् २२८
सुगन्धवास्तुक १३५
,, तैल १३४
सुप्रारेनिन ३४४
सुमात्रा बेंजोइन २६०, २६१
सुरामिन ६४५
,, सोडियम् ६४५
सुरामिनम् ६४५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४५–६४६
सुवा ५६५
सूअर की चर्बी ५२८
,, ,, ,, के गुणकर्म-प्रयोग ५२८–५२६
सूक्ष्मकायाणिवक उपवर्णिक रक्तक्षय में प्रयुक्त औषधियाँ १६५
सूक्ष्मैला ५६०
सूगरकेन २२८
,, जूस (ईख का रस) २२८
सूचीवेधोपयुक्त विशुद्ध जल ४२६
सूत्रकृमिहर औषधियाँ १३८
सूरंजान (दे० "कॉल्चिकम्") २३८, २३६
,, कड़वा २३५
,, कन्द २४०
,, का घनसत्व २४१
,, ,, टिंक्चर (निष्कर्ष) २४०
,, ,, प्रवाही घनसत्व २४०
,, के बीज २३५, २३७
,, ,, योग २४०–२४१
,, भारतीय २३८
,, मीठा २३४
,, विदेशी (विलायती) २३५ २३६, २३८
,, ,, कड़वा २३५
सूरिंजान २३८
सूरिंजाने तल्ख २३८
सेकेरिन ८६८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८६६
,, सॉल्युबुल ८६८
,, सॉल्यूशन ८६६

सेकेरिन सोडियम् ८९८
सेकेरिनम् ८९८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १२५-१२६
,, घटित नुस्खे १२६-१२७
,, सोडियम् ८९८
सेकेरोमाइसीज सिक्कम् १९८
,, सेरिविसी १९८
सेटावलन ८१५
सेटिल पाइरिडिनियम् क्लोराइडम् ८१७
सेटोमेक्रोगोल ५३५
,, के प्रयोग ५३६
सेटोस्टियरिल अल्कोहल ५२९
सेट्रिमाइड ८१५
,, कन्सन्ट्रेट ८१८
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ८१५
,, टिंक्चर ८१८
,, वर्गकी अन्य औषधियाँ ८१६
सेट्रिमाइडम् ८१५
सेडिलेनिड ३२०
सेनेगिन सेनोकाइसिन ७६७
सेन्टीन ४६१
सेन्टेनोन ४६१
सेन्टेलल ४६१
सेन्टेलीन ४६१
सेन्टेलोन ४६१
सेन्टेलोल ४६१
सेन्टोनिक एसिड १२४
सेन्टोनिका १२३, १२४, १२५
सन्टोनि (नी) न १२३, १२४, १२६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १२५-१२६
,, घटित नुस्खे १२६-१२७
सेन्टोनिनम् १२३
सेन्ना ९०
,, अलिक्जेंड्रियन ९०
,, इन्डियन ९०
सेन्ना टिन्नेवली ९०
,, पॉड ९२
,, फ्रूट ९३
,, लीफ ९२
सेन्नी फोलियम् ,,
,, फोलियाइ पल्विस
सेन्नी फ्रक्टस
सेपो एनिमेलिस ५२२
,, डयुरस ५२२
,, मोलिस ५२२
सेपोनिन्स ४१६
सेपोनीन ४१६
सेफ्रन ६०५
सेविओन २१०
सेमिना स्ट्रोफेन्थाइ ३२१
सेरा ऑल्बा ५३१
,, इमल्सिफिकेन्स ५३२
,, फ्लेवम् ५३१
,, सेटोमेक्रोगोलिस ५३६
सेरिपेरियम् ५३
सेरिविसी १९८
सेरिविसी फर्मेन्टम् १९८
सेरोथेम्नाइ हर्बा ४४८
सेरोमाइसिन ७६६
सेलिक्स परप्यूरिया २८८
,, फ्रेजिलिस २८८
सेलिन २०८
सेलिपिरिन २७८
सेलिरगन ४४३
सेलिसिन २८६, २८८
,, के प्रयोग २८८
सेलिसिनम् २८८
सेलिसिलिक एसिड २९०
,, ,, एण्ड सल्फर आयण्टमेन्ट ८२५
,, ,, कम्पाउंड डस्टिंग पाउडर २८७

सेलिसिलिक एसिड का मलहम २८६
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग २८२–२८६
" " के योग २८६
" " कोलोडिअन २८७
" कम्पाउंड डस्टिंग पाउडर ८२०
सेलिसिलेट्स २८२–२८६
सेलिसिलेनिलाइडम् ८३४
सेलिसिल निलाइड ८३४
सेलिसिलेमाइड २८७
सेलुलोस
" के सारक यौगिक (नॉट आफिशल) ७३
सेलोल ७६४
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६४
सेल्फइमल्सिफाइंग-मानो-स्टियरिन ५३५
" " के प्रयोग ५३६
सेल्युलोसम् ऑक्सिकेटम् १७८
(दे० "आक्सीडाइज्ड सेल्युलोस")।
सेवम् प्रिपेरेटम् ५३१
सेविटामिक एसिड २०८
सैफरेड बार्क ६५
सोंठ ५८१
" का चूर्ण ५८१
सोआ (या) ५६५
" का चूर्ण ५६६
" का तेल ५६६
" का फाएट या चाय ५६६
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६६–५७०
" का फल (बीज) ५६५
सोआमिन ६६०
" के प्रयोग ६६०
सोडा टारट्रेटा ६७
" सल्फ ६८
सोडियम् आक्टो आस ८३२
" आक्टोएट ८३२
सोडियम् आयोडाइड ६८१
" ऑरोथायोमलेट ७६६
" " सल्फेट ७६७
" एन्टिमनी ग्लूकोनेट ६३४
" एन्टिमोनिल टारट्रेट ६३२
" एमिनो सेलिसिलेट ७६०
" एल्गिनेट १७८
" " के गु० क० प्र० १७८
" एसिटेट ४३६
" ओलिएट ५२२
" कॅफीन आयोडाइड ४३६
" कार्बोक्सी-मेथिल-सेलुलोस ७३
" केकोडिलेट ६६०
" केप्रिलेट ८३२
" जॉटसेट २८८–२८६
" टेट्राबोरेट ८१८
" टेरोइलग्लुटामेट १६२
" डाइमेथिल आर्सोनेट ६६०–६६१
" डाइहाइड्रोजन फॉस्फेट ६९
" थायोसल्फेट ६८०, ७६६
" थियोफिलीन ४२६
" नाइट्राइट ३७२
" " के गुणकर्म-प्रयोग ३७२-३७३
" परबोरेट ७६६
" " के गुणकर्म तथा प्रयोग ७९९
" पायरो-सल्फाइट ८२१
" पारा-एमिनो बेंजोएट २०७
" पास ७६०, ७६२
" " के गुणकर्म-प्रयोग ७६१
" " के व्यावसायिक योग ७६१
" पोटासियम् टारट्रेट ६७
" प्रोपिओनेट ८३३
" फॉस्फेट ६८
" फोलेट १६२
" बिस्मथिल टारट्रेट ६१३
" बेंजोएट २६२

सोडियम् बोरेट ८१८
" मेंडलेट ४५८
" मेंडेल ४५८
" " मिक्स्चर ४५८
" मेटाबाइसल्फाइट ८२१
" मोरहुएट २२१
" रेडियो आयोडाइड सॉल्यूशन २५३
" लॉरिल सल्फेट ५२०
" सल्फेट ६८
" सॉल्युबुल ८०६
" सेलिसिलेट २८१, २८५
" " के गुणकर्म-प्रयोग २८२—२८६
" " के योग २८६
" " टब्लेट २८६
" स्टिबोग्लूकोनेट ६३४
" स्टियरेट ६३४
सोडियाइ आयोडाइडम् ६८१
,, ऑरोथायोमलास ७६६
,, आर्सेनास एसूहाइड्रस ६५१
,, एक्सिकूकेटम् ६८
,, एट पोटासियाइ टारट्रास ६७
,, एट लॉरिलिस सल्फास ५३०
,, एमिनार्सोनास ६६०
,, एल्गिनास १७८
(दे० "सोडियम् एल्गिनेट") ।
,, केकोडिलास ६६०
,, थायोसल्फास ६८०
,, ,, के गुणकर्म-प्रयोग ६८०
,, नाइट्रिस ३७२
,, परबोरास ७६९
,, पारा-एमिनो बेंजोआस २०७
,, ,, सेलिसिलास ७६०
,, प्रोपिओनास ८३३
,, फॉस्फॉस ६८
,, ,, एक्सिकेटस ६८
सोडियाइ फॉस्फॉस एसिडस् ६६
,, बेंजोआस २९२
,, मेंडेलास ४५८
,, मेटाबाइसल्फिस ८२१
,, ,, के प्रयोग ८२१
,, सल्फास ६८
,, ,, एक्सिकेटस ६८
,, सेलिसिलास २८१
,, स्टिबोग्लूकोनास ६३४
,, हिड्नोकार्पेस ७७७
सोडिलानिड २१०
सोनमकी (-की,-मुखी) ६०
सोप ५२२—५२३
" ऑलिव ऑयल ५२२
" ईथर ५२३
" एनिमा ५२४
" एनिस ५२४
" कर्ड ५२२
" के गुणकर्म तथा प्रयोग ५२३
" केस्टाइल ५२२
" ग्रीन ५२२
" बॉर्क ४१८
" सॉफ्ट ५२२
" हार्ड ५२२
सोबिटा ६६३
सोम ३५४, ३५६
सोमराजी ७७८
सोमल ६४७
सोरेलिआ (या) फ्रूट ७७८
" लिनिमेन्ट ७७८
" सीड्स ७७८
सोरेलिई फ्रक्टस ७७८
,, सेमिना ७७८—७७९
सोलू (ल्यू) शिओ (दे० सॉल्यूशिओ) ।
सो (सॉ) लूस्टिबोसन ६३४, ६३८, ६३६
सोलेप्सोन ७७२

सोलेप्सोन की टिकिया ७७३
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७७२
,, के योग ७७३
,, टॅबलेट्स् ७७३
सोलेप्सोनम् ७७२
सोल्यूथाइसिन ७५०
सो (सौ) सन ११६
,, आस्मानगूनी ११६
,, आसमानजूनी (अजरक) ११६
सौंफ ५६८
,, का अभिनव फाण्ट ५७०
,, का अर्क ५७०
,, का चूर्ण ५६६
,, का तेल ५६६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५६६–५७०
स्कॉट्स आयण्टमेन्ट या ड्रेसिंग ६७७
स्कारलेट-फीवर एन्टीटॉक्सिन ८७७
,, ,, प्रोफाइलेक्टिक ८७७
स्कारलेट रेड ८११
,, आयन्टमेन्ट ८१२
स्किल्ला ३२५
स्केमोनी १००
,, रूट ६६
,, रेजिन १००
स्कोपेरियम् ४४८
,, का अभिनव फाण्ट ४५०
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४५०
,, ,, योग ४५०
स्कोपेरीन ४४६
स्क्लिरोशिअम् (अर्गट) ४६६
स्क्विल्ल ३२५
,, लाल (फ्रेन्च) ३२६
,, ह्वाइट (इटेलियन्) ३२५, ३२६
स्टर्क्युलिया गम ५१६
,, युरेन्स ५१६
स्टाइरेक्स बेंजोइन २६१
स्टाइरेक्स टोंकिनेन्सिस २६१
,, पेरलेलोन्युरस २६१
स्टॉक-होम टार ७६२
स्टार-एनिस ५६७
स्टार्च ५२१
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५२१
स्टिपवेन ८८२
स्टिया (वे ;टिन ६३४, ६३८, ६३६
स्टियामीनग्लूकोसाइड ६३४
स्टिविनाल ६३८
स्टिवोग्लूकोनास ६३४
स्टिवोफेन ६३६
,, के ऑफिशल योग ६४०
,, ,, गुणकर्म तथा प्रयोग ६३६-६४०
स्टिवोफेनम् ६३६
स्टिव्यूरिया ६३३
स्टियरिक एसिड ५३४
स्टिरॉयड यौगिक २६६
स्टिलविडॉन ४६४
स्टिल वामेडिन आइसोथिओनेट ६४०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ६४०–६४२
स्टिलविस्ट्रॉल ४९०
,, वी० डी० एच्० ४६३
स्टेफिलोकोकस टॉक्सायड ८७८
,, ,, का प्रयोग ८७८
स्टेरागन ७१३
स्टेरामाइड आइ-आयण्टमेन्ट ७७१
,, सोडियम् (पाउडर) ७७१
स्टोवार्सो (सं)ल ६६२, ६८५
स्ट्रांग आइ-ड्रॉप्स ऑव सल्फासिटेमाइड ७१०
,, ऑयण्टमेन्ट ऑव मर्क्युरिक नाइट्रेट ६७७
,, इंजेक्शन ऑव सोलोसोन ७७३
,, टबलेट् ऑव केल्सिफेरोल २१७
,, ,, ऑफ एकोनाइट ३३६
,, टिंक्चर ऑव आयोडीन ८०४

स्ट्रांग टिंक्चर ऑव जिंजर ५८२
,, सॉल्यूशन ऑव आयोडीन ८०४
स्ट्रिक्नोस इग्नेशियाई ५५
स्ट्रेप्टोमाइसिनम् ७५३
स्ट्रेप्टोमाइसिन के ऑफिशल योग ७६०
,, ,, गुणकर्म तथा आमयिक प्रयोग ७५४–७६०
,, केल्सियम् क्लोराइड ७५३
,, सल्फेट ७५३
,, हाइड्रोक्लोराइड ७५३
,, ,, का इंजेक्शन या सूई ७६०
स्ट्रेप्टोमाइसिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ७५३
,, सल्फास ७५३
,, एट केल्सियाइ क्लोराइड ७५३
स्ट्रेप्टोमाइसीज आरकिडेसियस् ७६६
,, ऑरियोफेसिएन्स ७३४
,, एरिथ्रियस ७४३
,, गेरिफेलस ७६६
,, ग्रिसियस ७५३
,, प्युनियस ७६५
,, फ्रेडिई ७४६
,, राइमोसस् ७४०
,, लेवेंडुली ७६६
,, हेल्सटेडियाइ ७४५
स्ट्रेप्टोसाइड ६६८
स्ट्रोफेन्थस ३२१
,, एवं स्ट्रोफेन्थिन के गुणकर्म-प्रयोग ३२०–३२४
स्ट्रोफेन्थस पल्विस ३२२
,, का चूर्ण ३२२
,, ,, सत ३२२
,, के नुस्खे ३२४–३२५
,, ,, योग ३२४
,, कोम्बे ३२१
,, ग्रेटस ३२२–३२३
स्ट्रोफेन्थस सीड्स ३२१
,, सेमिना ३२१
स्ट्रोफेन्थिडिन ३३१
स्ट्रोफेन्थिन ३२२, ३२५
,, 'जी' ३२२
,, 'के' ३२३
स्ट्रोफेन्थिनम् ३२३
स्ट्रोफोसिड ३२५
स्तन्यजनक या दुग्धजनक औषधियाँ ३६३
स्तन्यजनन ३६३
स्तन्यावरोधक (स्तन्यापनयन) ३६३
स्नेहनद्रव्य ४००
स्पाइरोसिड ६८६
स्पारटीन ४४६
स्पेनिश फ्लाई ५०१
,, साइलीयम् सीड ७०
स्पिरिट ऑव जुनिपर ४४८
,, ,, नटमेग ५८१
,, ,, नाइट्रस ईथर ४४१
,, ,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४४१
स्पिरिटस ईथेरिस नाइट्रोसाई ४४१
,, जुनिपराइ ४४८
स्प्रिट ऑव एनिस ५६८
,, ,, पिपरमिंट ५७३
,, ,, सोप ५४५
,, अमोनिया एरोमेटिक ५७१
स्प्रिटस एनिसाई ५७१
,, ग्लिसेरिलिस नाइट्रेटिस ३०१
,, मिरिस्टिकी ५८१
,, मेन्थी पिपरिटी ५७३
,, रोजमेरिनी ५४५
,, सेपोनिस ५२४
स्प्रे ऑव मेंथोल एण्ड थायमोल कम्पाउंड ५८८
स्प्रेडिंग डॉगवीड ४५०
स्फीतकृमिहर औषधियाँ १२८

स्माज़ कल्टोप्स ४५३
स्याहजीरा ५६२
" के मिलावट एवं प्रतिनिधि द्रव्य ५६२–५६३
" का तेल ५६३
" का अर्क ५६३
" के योग ५६३
स्यूडो-इफेड्रीन ३५६
स्वर्ण के यौगिकों के गुणकर्म–प्रयोग ७६८
स्वर्णपत्री ६०, ६२
स्वर्शिश्रा चिरेटा ४०
स्वीट ऑरेन्जपील ३६
स्वीट स्पिरिट ऑव नाइटर ४४१
स्वेदल औषधियाँ ३६८
स्वेदावरोधक औषधियाँ ३६८

(ह)

हंज़ल १०६
हचिसन्सपिल ६७७
हर्दाद १६५
हन्दकूकी ४५०
हपु (बु) षा ४४५
,, का प्रवाही घनसत्व ४४८
,, तैल ४४५, ४४७
हर्वा ग्रिंडोलिया ४२४
हर्बादोसी ५६७
हब्बुर्नील १०४
हब्बुल् अरअर ४४५
हब्बुल उरूस ४६२
हब्बुस्सलातीन १०६
हशीशतुस्सुआल ४२०
हसक ४५४
हाइकिनोन २२६
हाइड्रस आयएटमेंट ४३१
हाइड्रस ऊलफैट ५२६
,, ,, आयएटमेंट ५३०
,, यूसेरिन ५३०
हाइड्रोक्सि-एम्फिटामीन
हाइड्रार्ज० परक्लोर के ऑफिशल योग ६७८
,, सबक्लोर ,, ,, ,, ६७८
हाइड्रा (ड्रे) जिरम् ६६९
,, अमोनिएटम् ६७०
,, एमिनो क्लोराइडम् ६७०
हाइड्रा ओलिएटम् ६७१, ५२७
,, कम् क्रेटा ६७७
हाइड्रेजिरम ओलिएटम् ५२७
हाइड्रार्जिराइ क्लोराइडम् ६७१
हाइड्रार्जिराइ ऑक्साइडम् फ्लेवम ६७०
,, ऑक्सीसायनाइडम ६७२
,, आयोडाइडम् रुब्रम् ६७८
,, परक्लोराइडम् ६७१
,, बाइ ,, ६७१
,, सबक्लोराइडम् ६७२
हाइड्रे बेंजीन पेनिसिलिन ७३१
हाइड्रे बेमोन पेनिसिलिन ७३१
हाईड्रलेजीन हाइड्रोक्लोराइड ३७७
,, ,, के प्रयोग ३७७
हाइड्रेस्टिनी हाइड्रोक्लोराइडम् ४५५
हाइड्रेस्टिनीन हाइड्रोक्लोराइड ४७६
हाइड्रेस्टिनीनी हाइड्रोक्लोराइडम् ४७६
हाइड्रेस्टिस ४७४
हाइड्रेस्टिस के उपयोगी योग ४७६
,, केनाडेन्सिस ४७४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४७५
,, राइजोमा ४७४
हाइड्रेस्टीन ४७५
,, हाइड्रोक्लोराड ४७५
हाइड्रोकॉर्टिसोन २७१
हाइड्रोकॉर्टोन २७१

हाइड्रोजन ओलिएट ५२६
हाइड्रोजन परॉक्साइड ७६६
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ७६६
,, ,, के नान्-ऑफिशल योग ७६६
,, ,, के ईयर-ड्रॉप ७६६
हाइड्रोजिनेटेड वेजिटेबिल ऑयल ५३३
हाइड्रोब्रोमाइड ३६६
हाइड्रोलाइज्ड प्रोटीन २३३
हाइड्रोसायनिक एसिड ५११
हाइपोप्रोटीनिमिआ २३४
हाऊबेर ४४५, ४४६
हाकुच ७७८
हॉग गम ५१६
,, ट्रैगाकान्थ ५१६
हार्टोलिन वैक्स ५२६
हार्ड पाराफिन ५२४
हॉलेरीना ६६०
हाशा ५६०
हॉर्स्टस वेरियाइ सल्फेटिस ८६४
हास्टेसिलिन ७३१
हिंग ५५३
हिंगु ५५३
हिंद्याऽवरी ४३
हिड्नोकार्पस ऑयल ७७३-७७५
,, ऑयल के गुणकर्म तथा प्रयोग ७७५-७७७
,, कुर्जियाइ ७७४
,, क्रिसोल ७७८
,, तैल ७७३
,, लॉरिफोलिआ ७७३
,, वाइटिआना ७७३-७७५
,, सोप ७७७
हिपरप्रोटियोलाइजेटम् १५६
,, के प्रयोग १५९
हिपेरिन १८१, १८६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १८१, १८२
,, के योग १८२
,, पिट्किन मेंस्ट्रुअम् (Warner) १८२
,, रिटार्ड १८२
,, बी० डी० एच० १८२
,, बूट्स १८२
हिपेरिनम् (यकृति) १८१
हिराकस १६५
हि (ही)राबोल ५४६
हिरुडिन (जोंक का सत) १८३
हिल्तीत ५५३
हिस्टाडीन-हाइड्रोक्लोराइड ४८२
हिस्टामिनी-फॉस्फॉस एसिडस् ४८०
हिस्टामीन-एसिड फॉस्फेट ४८०
हिस्टामीन-प्रतियोगी गुणकर्म ८५५
,, प्रतियोगी द्रव्य या औषधियाँ
,, ,, द्रव्यों के गुणकर्म ८५५
,, ,, ,, आमयिक प्रयोग ८५६
हिस्टामीन प्रतियोगी द्रव्य या औषधियाँ ८५०-८५७
हिस्टामीन फॉस्फेट ४८०
,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४८१
हिस्टेनिन ८५४
हिस्टोस्टेब ८५३
हींग ५५३
हींग का टिंचर ५५५
हींग की गोलियाँ ५५५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ५५४-५५५
,, के योग ५५५
हीराकसी (शी)स १६५
हील उन्सा ५६०
हीलबवा ५६०
हृत् ५०
हृत्तन्त्री ३०७

हृदय ५०
हृदय की क्रियात्मता एवं अलिन्द
अराजकतामें भी उपयोगी योग ३१६
हृदय पर कार्य करनेवाली औषधियाँ २६६
हृदयावसादक औषधियाँ २६५, ३०१, ३३३
हृदयोत्तेजक द्रव्य ३००
हृद्य औषधियाँ २९५, ३००-३०७
हैक्साक्लोरोफीन ७९२
हैक्सामीना ४५५
हैक्सा (कजा)मीन ४५५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग ४५५-४५६
,, के योग ४५६
हैक्साग्लाइकोलेट ४५६
हैक्सामेथिलीन टेट्रामीन ४५५
हैक्साविटालिन २०६
हैक्सॉस्ट्राल ४६१
हैक्सिल रिसॉर्सिनाल १३७, ४५६
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १३७, ४५७
,, की गोली १३८
हेट्राजन १४२, १४४
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १४२
,, टॅबलेट्स १४३
,, सिरप १४३
हेनट्रिआकान्टेन ४२४
हेपररफोर्ट १७५
हेपोल इन्जेक्शन १७५
हेमामेलिटैनिन १५४
हेमामेलिडिस पत्रिस १५४
हेमामेलिस १५४
,, का घनसत्व १५५
,, का प्रवाही घनसत्व १६५
,, का मलहम १५५
,, की गुदवर्ति १५५
,, की बत्ती १५५
,, के गुणकर्म तथा प्रयोग १५४-१५५
,, के योग १५५
हेमामेलिस लीव्ज १५४
,, वॅर्जियाना १५४
,, सपॉजिटरी १५५
हेमारेक्स १७५
हेमोलान १७५
हेरोजन १४४
हेलिबट मछली २१६
हेलिबट लिवर ऑयल २१६
,, ,, ,, के गुणकर्म तथा प्रयोग २१६
,, ,, ,, के योग २१९
,, ऑयल के व्यावसायिक योग २२१
हेलिव्युटॉल २२१
हेलियम् ४०५
,, के गुणकर्म-प्रयोग ४०५
हेलेबोर अमेरिकन ३७७
,, ग्रीन ३७८
,, का चूर्ण ३७७
,, के प्रयोग ३७७, ३७८
,, व्हाइट ३७८
हेलोजन्स तथा उनके यौगिक ८०१
हेलोजोन ८०१
हेलोजोनम् ८०१
हेस्पेरिडिन २११
,, मेथिल केल्कोन २११
हेस्पेरेडिन २१०
हैजेकाटीका ८६१
होचेस्ट ७३१
होम ३५४
होर्डिअम् डिस्टिकन(म्) ५८
,, वल्गेर ५८
होलिवेरॉल २२१
होलेरीन ६६१
होलेरीना एन्टिडिसेन्टेरिका ६६४
होलेरिनीन ६६१
ह्यूमन थ्रांबिन (मानवीय घनास्रि) १७६

ह्युमन फाइब्रिनफोम १७६
,, फाइब्रिनोजन (मानवीय तन्त्वि-जन) १७६
इनके गुणकर्म तथा प्रयोग १७७
ह्वाइट एम्ब्रोकेशन ५४०
ह्वाइट प्रेसिपिटेट ६७०
,, ,, आयण्टमेंट ६७८
ह्वाइट फील्ड्स आयण्टमेंट २६४
,, बीजवैक्स ५३१
,, लिनिमेंट ५४०
,, हेडस वार्निस ८०६
,, हेलेबोर ३७८
,, साँफ्ट पाराफिन ५२४
हीटजर्म ऑयल २२३

(क्ष)

क्ष-किरण ९०७
क्ष-किरण चित्रण (X' ray examination) के लिये प्रयुक्त द्रव्य ८८४-८८५
क्षारीय नासाधावन ८२१
क्षुद्रैला ५६०
क्षोभक औषधियाँ ३१६

———— :o: ————

इस ग्रन्थ के लेखक तथा उनके वरिष्ठ भ्राता वैद्यराज हकीम श्री दलजीत सिंहजी लिखित अन्य ग्रन्थों की मूल्यसहित नामावली एवं मिलनेके पते—

(१)	सर्प-विष-विज्ञान	मूल्य १।)
(२)	आयुर्वेदीय विश्व-कोष तीन खण्ड जिनमें से इस समय केवल द्वितीय खण्ड प्राप्य है। चतुर्थ खण्ड हिन्दी-साहित्य सम्मेलन द्वारा प्रकाशित हो रहा है। इसके बाद शेष अन्य सभी खण्ड वे प्रकाशित करेंगे।	१५)
(३)	यूनानी सिद्धयोग-संग्रह	२॥)
(४)	यूनानी चिकित्सासार	४॥)
(५)	यूनानी द्रव्य-गुणविज्ञान अर्थात् यूनानी-निघंटु सम्पूर्ण	२२)
(६)	यूनानी वैद्यक के आधारभूत सिद्धान्त (कुल्लियात)	१।)
(७)	रोगनामावली-कोष तथा वैद्यकीय मान-तौल	३॥)
(८)	वात्स्यायन कामसूत्र (हिन्दी टीका)	५)
(९)	पाश्चात्य द्रव्य-गुण विज्ञान (मेटीरिया मेडिका हिंदी प्रथम व द्वितीय भाग) प्रथम भाग का मूल्य	१२)
	द्वितीय भाग का मूल्य	३०)
(१०)	यूनानी चिकित्सा-विज्ञान पूर्वार्ध भाग प्रथम	८॥)

प्रकाशनार्थ प्रस्तुत ग्रन्थ

(११) यूनानी द्रव्यगुणादर्श—प्रकाशित यूनानी द्रव्य-गुणविज्ञान ग्रन्थके द्रव्य-वर्णनीय विभाग का पूरक भाग, जिसमें उसमें आये द्रव्यों का अधिक विस्तार-युक्त एवं शेष द्रव्यों—कुल लगभग १००० द्रव्यों का वर्णन दिया गया है।

(१२) आयुर्वेदीय यूनानी फार्माकोपिआ उत्तरप्रदेशीय सरकार द्वारा लिखवाया हुआ ग्रन्थ।

(१३) भावप्रकाश निघंटु

(१४) पुरुषरोगविज्ञान

(१५) फिरंगोपदंश-विज्ञान

(१६) हुम्मयात कानून (हिन्दी भाषानुवाद)

(१७) आयुर्वेदीय द्रव्य-गुण-विज्ञान अर्थात् आयुर्वेदीय निघण्टु।

(१८) आयुर्वेदीय विश्वकोष (संक्षिप्त संस्करण) इत्यादि।

मिलने के पते—

(१) मोतीलाल बनारसीदास

पो० बॉक्स नं० ७५, नैपाली खपड़ा, वाराणसी।

बैंग्लोरोड जवाहरनगर, दिल्ली।

(२) श्री चुनार आयुर्वेदीय यूनानी-औषधालय तथा आयुर्वेदानुसंधान कार्यालय,

चुनार, जिला—मीरजापुर (उ० प्र०), भारत।